October to December 2024
E-Journal
Volume I, Issue XLVIII

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Scientific Journal Impact Factor- 8.054
ISO 9001:2015 - E2024049304
(Quality Management System)

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

Index

01. Index 02
02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 08/09
03. Referee Board 10
04. Spokesperson 12
05. Organic Farming: A Sustainable Option for Farmers and Natural Resources (Dr. Amita Rana) 14
06. The Role of Startup Ecosystems in Driving Economic Growth and Innovation: A Focus on Transforming the Indian Economy (Dr. Preeti Anand Udaipure) 18
07. Medecinal Plant Pippali Found in Bhopal Division (Dr. Sushama Singh Majhi) 23
08. Psychological Initiative on Mental Health of Tribal Society: in the Context of Bastar (Dr. Dinesh Kumar Lahari, Mr. Shailesh Kumar Chandrakar) 25
09. Yaksha: From Folk Beliefs to The Royal Art (Dr. Ashish Kumar Chachondia) 28
10. Identify Various Religious Practices which Conflict with Human Rights in India (Dinesh Chaudhary, Dr. Rekha Mali) 31
11. Examining the Impact of Consumer Perception on the Demand for Organic Food Products in India (Dr. Preeti Anand Udaipure) 35
12. भारत में वित्तीय बाजार एवं वित्तीय कौशल (लखन लाल कलेशरिया) 40
13. केन्द्रीय विकास योजनाएँ: मध्यप्रदेश में क्रियान्वयन (डॉ. राजेश कुमार सिंह तिवारी) 45
14. सोशल मीडिया का छात्रों के शैक्षणिक स्तर एवं स्वास्थ्य पर प्रभाव का अध्ययन (खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में) (शिवराम हिरवे, डॉ. एम.एल. मोरे) 47
15. उपयोगितावाद की वर्तमान प्रांसगिकता (सीता नुवाल) 50
16. दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद का सिंहावलोकन (डॉ. लोकेश कुमार शर्मा) 52
17. चाइल्ड-फ्री-बाय-चॉइस अवधारणा एवं आधुनिक भारतीय परिवार-एक सिंहावलोकन (डॉ. कलिका डोलस) 55
18. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकओं की शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन (डॉ. अशोक कुमार) 57
19. निमाड़ का नामकरण एवं ऐतिहासिकता के संदर्भ में (डॉ. मोतीलाल अवाया) 62
20. मेघदूत में प्रयुक्त दार्शनिक तत्त्व (डॉ. गरिमा शर्मा) 64
21. तनाव प्रबंधन में महात्मा गाँधी के सिद्धान्तों का अनुपालन (मधु तेकाम, डॉ. मंजु शर्मा) 66
22. नगरीय विवाहित महिलाओं के विरूद्ध पारिवारिक हिंसा : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (डॉ. पूजा तिवारी) 68
23. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की सामाजिक चुनौतियां (बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में) (दिनेश भुगवाडे) 70
24. भारतीय ज्ञान परम्परा में ज्ञान और विज्ञान (डॉ. शिवाकान्त तिवारी) 73
25. सवाई माधोपुर जिले में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (MSMEs) की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाओं का अध्ययन (परीक्षित हाड़ा) 76
26. The Impact of Poor and Inadequate Nutrition on Children in Early Age (Jyoti Malviya, Dr. Renu Verma) 80
27. Correlation of Wiener indices with X–ray K–absorption parameters of some copper (II) mononuclear and binuclear complexes (R.D. Gupta, R.K. Vyas, S.K. Joshi, Umesh Palikundwar) 83
28. गर्भावस्था में एनीमिया: छिंदवाड़ा जिले के विशेष संदर्भ में (संध्या गजभिये) 86
29. लोकतंत्र एवं भारतीय लोकतंत्र में महिलाएं (डॉ. श्वेता तेवानी) 89
30. ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं का स्वास्थ्य एवं पोषण का स्तर: छिंदवाड़ा जिले के विशेष संदर्भ में (संध्या गजभिये) 92
31. अनुसूचित जाति के व्यावसायिक संरचना एवं साक्षरता का प्रभाव : शहडोल संभाग के विशेष संदर्भ में (डॉ. जिया लाल राठौर) 94

32. चुनावी रेवड़ी की राजनीति : एक अध्ययन (मनोज अहिरवार) 99
33. आपदा प्रबंधन का अवलोकन (डॉ. शोभाराम सोलंकी) 102
34. खरगोन जिले में प्रसिद्ध लोक पर्व संजा माता (डॉ. राकेश ठाकुर) 105
35. Government Initiatives For Women Entepreneurs (Rohit Soni, Dr. Jyoti Soni) 107
36. मध्यप्रदेश के नगरीय निकायों की कार्यप्रणाली: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (सोनेलाल लोधी) 110
37. Environmental Protection in Brick Industry- A Review of Policy Framework 113
(Pradeep Kumar Joshi, Prof. (Dr.) Sandeep Shandilya)
38. गोदान उपन्यास में कृषक–पीड़ा (जगदीश सिंह) 118
39. Coverage and Effectiveness of the Ayushman Bharat Scheme: A Comprehensive 121
Analysis of Fund Utilisation, Ayushman Card Registration, and Beneficiary Impact
(Mohammad Mehfooz, Dr. Poonam Singh)
40. श्रीलाल शुक्ल के कथा साहित्य में क्लासिसिज्म एवं रोमांटिसिज्म का सामंजस्य 127
(रमेश वसुनिया, डॉ. सी.एल.शर्मा, डॉ. जगदीशचंद्र शर्मा)
41. बीसवी शताब्दी में नारी : सुभद्रा कुमारी चौहान के साहित्य परिपेक्ष से (शोभा मेघवाल) 130
42. जनजातीय महिलाएं : प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य (डॉ. भूपेन्द्र मेघवाल) 132
43. महिला उपभोक्ताओं के क्रय व्यवहार पर सोशल मीडिया विज्ञापन के प्रभाव का अध्ययन 135
(सागर जिले के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. निलेश महाजन, दामोदर पटेल)
44. Agrarian Social Relations in A North Indian Village 139
(Dr. Arvind Sirohi, Mr. Pradeep Kumar, Dr. Alok Kumar)
45. सूक्ष्म एवं कुटीर उद्यमियों पर प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के आर्थिक प्रभाव का अध्ययन 144
(देवास जिले की विशेष संदर्भ में) (डॉ. जी. एल. खांगोडे, श्रीमती जया कुशवाह)
46. ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्रा–छात्राओं के सामाजिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन 148
(मीनाक्षी चन्द्रवंशी, डॉ. कृष्ण कुमार पाण्डेय)
47. Mixed Research Method in Assessment of Rural Sanitation 151
(Ashvanee Kumar, Rajkumar Nagwanshee)
48. The Rise and Decline of Universal Language Esperanto (Dr. Kiran Sitole) 157
49. निमाड़ी साहित्य की समृद्ध परंपरा (डॉ. श्रीमती बिन्दू परस्ते) 160
50. Indore Municipal Corporation Initiatives for Circular Economy in Reference With 3R 163
(Subhanshi Vishvakarma)
51. प्राचीन भारत में धर्म (डॉ.मधु वालिया) 168
52. Protection of Stored Grains from *Callosobruchus Chinensis* (Linn.) in Kota Region 170
(Rajasthan) (Dr. Neha Shrivastava, Dr. Surabhi Shrivastava, Dr. C.D. Khandekar)
53. Flame of the forest a beautiful and miraculous plant (Dr. Nirbhay Singh Solanki) 172
54. रूपकों का बादशाह तुलसीदास (शिवऔतार) 177
55. मुस्लिम विवाह और विधि–एक विश्लेषण (डॉ. ज़ाकिर खान) 180
56. आई. एम. शक्ति उड़ान योजना की जानकारी, प्रभाव एवं समस्या : महाविद्यालय स्तरीय बालिकाओं 182
का एक विश्लेषण (डॉ. अंजना जाटव)
57. आर्थिक विकास और सामाजिक समानता चुनौतियां और अवसर (डॉ. राजेश कुमार शुक्ला) 185
58. Artificial Intelligence and Its Impact on Labor Productivity and Employment 190
(Dr. Kapil Kumar Chandra, Dr. Sunil Kumar Kumeti)
59. Exploring Women's Consciousness and Challenges in the Literary Works of Arundhati Roy: 195
A Feminist Discourse on Modern Literature (Mr. Vipul Pandya)
60. भारत में भ्रष्टाचार की समस्या और समाधान (श्रीमती मिनाक्षी भार्गव) 197
61. भारत के राष्ट्रीय जागरण में स्वामी विवेकानंद की भूमिका का अध्ययन (ज्ञानेश शुक्ला) 200
62. जांजगीर का लोक महोत्सव मेला की प्रासंगिकता (डॉ. रामरतन साहू, दिनेश कुमार राठौर) 204

63. The Role of Traditional Training Methods in Wrestling: A Study of Wrestler Development in Rajasthan (Dr. Neelam Yadav, Shashank Gurjar) 206
64. Aryabhatta : Great Indian Mathematician and Astronomer (Dr. Meenakshi Rawal) 209
65. भारतीय न्याय पालिका में साक्षी की सुरक्षा (ऋचा अग्रवाल) 211
66. Study Comparing the Quality of Life of Elderly Living with Family and Old Age Homes (with special reference to Chhatarpur District) (Suyash Sagar Bajpai) 216
67. प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण के पंचायतीराज व्यवस्था का प्रभाव (झाबुआ जिले के अनुसूचित जनजाति के विशेष संदर्भ में) (मोहन डोडवे, डॉ. दीपक कारभारी) 219
68. नई शिक्षा नीति में सामाजिक विज्ञान (कैलाश चन्द्र वैष्णव) 222
69. भारतीय संस्कृति में मूल्यों का ह्रास (डॉ. सोनिका बघेल) 225
70. 2019 लोकसभा चुनाव के प्रचार में सोशल मीडिया की भूमिका (नवीन कुमार) 227
71. राजा राम मोहन राय आधुनिक युग के पुरोधा (हरीश) 229
72. Effect of Soil Biota on Physicochemical Properties of Soil (Harish Raghunath Khairanar, Dr. Pramod Pandit, Dr. Dhananjay Dwivedi) 231
73. Pros and Cons of FDI in Multi-Brand Retailing in India (Dr. Rupesh Pallav) 237
74. A Critical Analysis of Kalidasa's Poetic Vision of Nature (Sachin Sharma) 241
75. भारतीय अर्थव्यवस्था में एमएसएमई के प्रभाव की खोज (डॉ. जी. एल. खांगोडे,. शिवानी जायसवाल) 247
76. प्राचीन भारत में चिकित्सा व्यवस्था (शिवलाल) 250
77. ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसायों में संरचनात्मक परिवर्तन (एक समाजशास्त्रीय अवलोकन) (डॉ. ज्योति सिंह) 252
78. An Analytical Study of Impact of Modern Technology on Production of Sanchi Dugdh Sangh (Shruti Vidyarthi) 255
79. Artificial Intelligence in Libraries: Opportunities and Challenges (Chandra Chauhan) 258
80. Challenges and Opportunities for Women Entrepreneurs in Indore (Kapil Rahangdale, Dr. S.S. Mourya) 263
81. नीमच जिले में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के अंतर्गत जिला उपभोक्ता फोरम का योगदान (मनोज कुमार सोलंकी, डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा) 265
82. अष्टांग योग से आत्मनिष्ठ एवं मानसिक जगत का ज्ञान (डॉ. विनोद राय) 271
83. Artificial Intelligence in Research: Transformative Advances, Applications, and Ethical Implications (Mrs. Madhuri Khandelkar) 274
84. क्रीड़ा चिकित्सा का महत्व : वर्तमान खेलों के संदर्भ में (कु. भारती चंदेल) 277
85. ग्रामीण आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अध्ययन (डॉ. राकेश कुमार चौहान) 280
86. बाल लोक साहित्य और बाल विमर्श (डॉ. अनिता बिरला) 283
87. कौटिल्य के विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता (डॉ. माया रावत) 285
88. ऋतु परिवर्तन का वायु गुणवत्ता पर प्रभाव ग्वालियर नगर के विशेष संदर्भ में- एक भौगोलिक अध्ययन (2024) (अजय प्रताप) 288
89. Nature as Fate: Thomas Hardy's Exploration of Environmental Determinism in His Wessex Novels (Pr Minu Gidwani) 292
90. गोंड जनजाति के विशेष संदर्भ में (श्रीमती सोनाली ठाकुर) 296
91. Investigation of the insecticidal activities of *Carica papaya* Linn. and *Cassia tora* Linn. leaf extracts on *Callosobruchus chinensis Linn.* (Rita Mishra, Dr. Arti Saxena, Kransi Gautam) 299
92. Value of Fantasy and Imagination in Modern Trends (Dr. Ramashanker Mishra) 304
93. नागार्जुन का जीवन संघर्ष और काव्य के स्वर (मनोज कुमार) 306
94. Digital Humanities: Bridging the Gap Between Technology and Literary Studies (Aastha Jain) 309

95. अनुसूचित जाति एवं जनजातियों में रोजगार हेतु शहरी प्रवसन (छिंदवाड़ा जिले के जुन्नारदेव तहसील के विशेष संदर्भ में) (डॉ. शैलप्रभा कोष्टा) 311
96. काव्यमीमांसा में वर्णित कविचर्या की प्रासंगिकता (डॉ. रामेश्वर प्रसाद झारिया) 314
97. सिंध के बौद्ध राजाओं के समय का सामाजिक सांस्कृतिक वैभव, एक ऐतिहासिक अध्ययन (चचनामा के विशेष संदर्भ में) (डॉ. आकाश ताहिर) 317
98. माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई–लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना (डॉ. कृष्णकान्त शर्मा, राजेन्द्र कुमार वैष्णव) 319
99. एथलीटों के बहिर्मुखी व्यक्तित्व लक्षणों और खेल प्रदर्शन के स्तर का एक सहसंबंधनात्मक अध्ययन (योगेंद्र सिंह राजपूत) 323
100. अलग–अलग भोगोलिक क्षेत्र के विद्यार्थियों कि हिमेटोलॉजीकल चरों का एक तुलनात्मक अध्ययन (महेश कुमार शर्मा) 326
101. A Study of Emotional Intelligence Between the Male Athletes and Non-Athletes of Senior Secondary School of Jaipur (Saksham Hajela, Dr. H.C. Raval) 328
102. रघुवंशम् के आधार पर राजा रघु का शौर्य वर्णन (डॉ. पी.एस. बघेल) 331
103. Urban Transport Transformation: Evaluating the Role of Electric Vehicles in Indore (Saransh Ukey, Dr. Subhan Singh Baghel) 333
104. Assessing the Effectiveness of Indore Municipal Solid Waste Policies: A Legal Perspective (Priyanka Malviya) 338
105. भारत में संसदीय लोकतंत्र और चुनाव घोषणा पत्र का महत्त्व (सरोज कुमार) 344
106. महाराव सिरोही एवं मेवाड़ महाराणा मुगल बादशाह अकबर के विरुद्ध (भरत कुमार माली) 349
107. Exploring Practitioner Inquiry Among Health and Physical Education Teachers (Dr. Sonali Singh) 354
108. मेवाड़ में झाला ठिकानों के अधीन आर्थिक व्यवस्था (देवा राम) 357
109. Political Participation of Women in Panchayati Raj System (With Special Reference to Gram Panchayats of Rajnandgaon district) (Dr. (Mrs.) KiraniTigga) 360
110. अनुवाद के क्षेत्र में भारतीय परम्परा (डॉ. श्रीमती बिन्दू परस्ते) 365
111. जल अधिग्रहण या जलग्रहण क्षेत्र कार्यक्रमों की पर्यावरण प्रबंधन में भूमिका (नेहा शर्मा, डॉ. राजू शर्मा) 367
112. घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन (निशा यादव, डॉ. कल्पना शर्मा) 371
113. Impact of Ferric Chloride and Fenton Reagent on Photocatalytic Decoloration of Azure B dye. (Dr. David Swami) 374
114. वागड़ की संस्कृति और कला : ऐतिहासिक विकास और समकालीन परिप्रेक्ष्य (डॉ. नरेंद्र सिंह राणावत, रश्मि गुप्ता) 377
115. Ethnomedicinal Plants of Euphorbiaceae Family Used By Tribal's of Dhar District, Madhya Pradesh, India (Dr. Kamal Singh Alawa) 381
116. Artificial Intelligence as a Catalyst for Sustainable Development: Exploring the Synergy with CSR (Ritvik Roonwal) 384
117. भारत में महिला मानवाधिकार : दशा एवं दिशा (डॉ. जे.के.संत) 393
118. Fatty Liver is a Lifestyle Disorder (Dr. Rajesh Masatkar) 395
119. कृषि उत्पादन और कृषि यंत्रिकरण (एक अध्ययन) (डॉ. भावना भटनागर) 397
120. आचार्य विशुद्धसागर के साहित्य में समाजिक चेतना के विविध आयाम (डॉ. रचना तैलंग, दिलीप कुमार जैन) 400
121. Potential Benefits of Artificial Intelligence for the Legal Profession (Dr. Anoop Kailasia) 404
122. चित्रा मुद्गल के साहित्य में अभिव्यक्त जीवन–कथा (प्रकाश वास्कले) 407
123. भारत की भौगोलिक स्थिति और आर्थिक विकास (डॉ. विवेक कुमार पटेल, श्री अनबर खान) 410

124. वर्ष 2014 के पश्चात भारत इजरायल संबंधों का भारत की आंतरिक व बाह्य सुरक्षा पर प्रभाव 416
(डॉ. मुकेश कुमार वर्मा, संदीप कुमार)
125. उदयपुर जिले में निजी अथवा सरकारी भवनों का वास्तुसंगत अवलोकन (डॉ. नीता सीकलीगर) 419
126. Ecosystem Services Provided by Plants (Dr. Jitendra Singh Pachaya) 421
127. मोबलिंचिंग : मानवता के विरुद्ध अपराध (आनंद मिश्रा, डॉ. अनूप कुमार सिंह) 427
128. The Role of Teamwork and Communication in Volleyball Performance: A Study of Player Dynamics in Rajasthan (Dr. Santosh Lamba, Harish Chandra Patidar) 433
129. एक देश एक चुनाव (हेमलता जांगिड़) 436
130. ग्रामीण भारतीय परिवारों में लिंग भूमिकाओं पर प्रवास का प्रभाव (डॉ. योगेन्द्र जैन) 439
131. उत्तरी राजस्थान के हनुमानगढ़ जिले के मेघवाल समाज के बच्चों के आभूषण और उनकी मान्यताएं 441
(डॉ. डोली मोगरा, मंजुला)
132. Innocence in a Corrupt World: Prince Myshkin as a Christ Figure in The Idiot 443
(Dr. Rajkumari Sudhir)
133. Jurisdictional Issues in Cross-Border Cyber Crime (Dr. Surendra Singh Baghel) 445
134. An Analytical Study on the Rise in Juvenile Crime and the Impact of Drugs 448
(Vikram Singh Chandel, Dr. Mahesh Prasad)
135. Study of the Contribution of Freedom Fighter of Barwani District (Present) of Nimar Region Mr. Kashinath Trivedi (Dr. Madhusudan Choubey) 453
136. प्लेटो का न्याय सिद्धांत (रोहित) 456
137. भारत की विदेश नीति: एक व्यापक अध्ययन (विनोद कुमार विश्नोई) 458
138. Gupta Empire : A Powerful Ancient Indian Empire (Sandeep) 462
139. Physical Regions of India (Budhram) 464
140. मध्य प्रदेश के शासकीय गोदामों की अवस्थिति और भण्डारण व्यवस्था (उज्जैन संभाग के संदर्भ में एक अध्ययन) (डॉ. मनु गौतम, लवकुश पाटीदार) 467
141. The Effect of Yoga on Hormonal Balance in Women with Polycystic Ovary Syndrome (PCOS): An Experimental Study (Sakshi Nagru, Dr. Sanjeev Kumar) 469
142. Assessment of Social Status of Slums in Bilaspur City (Dr. Kajal Moitra, Soumen Maiti) 472
143. A Legal Aspect of Child in Juvenile Delinquency in Today's Senerio 478
(Dr. Jyoti Saran Saxena, Dr. Anushka Mishra Nayak)
144. भारतीय ज्ञान परंपरा में भूगोल का महत्व (डॉ. मोहन निमोले) 482
145. शैव परम्पराओं के माध्यम से सामाजिक एकता और धार्मिक सहिष्णुता का विकास (बिलासपुर जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. अंजू तिवारी, महेन्द्र कुमार दुबे) 484
146. Ethnomedicinal Uses of *Moringa oleifera* (Linn.) (Dinisha Malviya) 487
147. Financial Performance and Shareholder Wealth Post-Merger: Evidence from the State Bank of India Mega Merger (Ms. Sharda Sethia, Dr. George Thomas) 489
148. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 में योग का कार्यान्वयन एवं महत्त्व 492
(डॉ. नीता मौर्य, डॉ.अवधेश कुमार मौर्य)
149. भारतीय शिक्षा में आयुर्वेदिक ज्ञान का महत्व (डॉ. मंजुला निंगवाल) 495
150. भारतीय ज्ञान परंपरा और अर्थशास्त्र (डॉ. ममता पंवार) 497
151. जनजातीय समुदाय के विकास में संस्थागत बैंकों की भूमिका (अलीराजपुर जिले के जोबट विकासखण्ड के संदर्भ में) (डॉ. एच. डुडवे) 499
152. Potential of Solanum xanthocarpum as a Source of Natural Therapeutic Agents : A Review (Dr. Shalini Nema) 502
153. Voices of Resistance: Exploring Ecofeminist Concerns in Sara Joseph's Works Through Translation (Shema S Palathar, Dr. Anu Saxena) 506

154. Reflections of Modern Youth: A Study of the New Generation Indian in Chetan Bhagat's Novels (Jibi Joseph, Dr. Anu Saxena) 509
155. बौद्ध धर्म से हिन्दू धर्म को बचाए रखने में ब्राह्मणों की भूमिका (डॉ. श्री कान्त मिश्र) 512
156. भारतीय राजनीतिक चिंतन में विरोध और शासक पर नियंत्रण : परंपरा, विमर्श और समकालीन प्रासंगिकता (डॉ. शोभा गौतम) 514
157. Concept of Social Justice in the Bhartiya Nyaya Sanhita (BNS) and Manu Smriti: An Overview (Dr. Lok Narayan Mishra, Dr. Rakesh Prasad Pandey) 516
158. भारत में किशोर न्याय के संवैधानिक और मानवाधिकार आयाम (श्रीमती प्रीती बुंदेला, डॉ. राम सिंह पटेल)..... 521
157. ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यटन की समभावनाएं जवाई–लूनी बेसिन के विशेष संदर्भ में एक अध्ययन (डॉ. उम्मेद कुमार चौधरी) 527
158. Psychological Stress, Trauma and Epigenetic Changes in Fibromyalgia (Dr. Rajesh Yadav) 535
159. Women in Decision Making in India: Why It is Important (Dr. Saba Agwani) 542
160. नव विमर्शों के अंतर्विरोधी द्वंद्व और सामाजिक लोकतांत्रिकरण (डॉ. दत्तात्रय मुरुमकर) 545
161. Social Media Influencers' Function as Digital Brand Ambassadors for Destination Branding and Sustainable Tourism Promotion (Dr. Rajesh Kumar Verma) 557
162. भारतीय समाज पर वैश्वीकरण के प्रभाव का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (डॉ. हरिचरण मीना) 561
163. उदयपुर के आधुनिकीकरण में पर्यटन की भूमिका: सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक विरासत के संदर्भ में एक अध्ययन (मोनिका चौधरी, डॉ. नरेंद्र सिंह राणावत) 564

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
8. Prof. Dr. P.P. Pandey - Dean, Commerce, Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
9. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
10. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
11. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
12. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
13. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
14. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
15. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
16. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
17. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
18. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
19. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
20. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
21. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
22. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
23. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
24. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
25. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
26. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
27. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
28. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
29. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
31. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
32. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
33. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
34. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
35. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
36. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
37. Prof. Dr. Ravi Gaur - Asso. Professor, Mathematics, Gujarat University, Ahmedabad (Gujarat) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1. **Prof. Dr. Narendra Shrivastav** - **Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India**
2. **Prof. Dr. Aditya Lunawat** - **Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India**
3. **Prof. Dr. Sanjay Jain** - **O.S.D., Additional Director Office, Bhopal (M.P.) India**
4. **Prof. Dr S.K. Joshi** - **Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India**
5. **Prof. Dr. J.P.N. Pandey** - **Fr. Principal, Govt. Auto.Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.) India**
6. **Prof. Dr. Sumitra Waskel** - **Principal, Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India**
7. **Prof. Dr. P.R. Chandelkar** - **Principal, Govt. Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.) India**
8. **Prof. Dr. Mangal Mishra** - **Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India**
9. **Prof. Dr. R.K. Bhatt** - **Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India**
10. **Prof. Dr. Ashok Verma** - **Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India**
11. **Prof. Dr. Rakesh Dhand** - **HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India**
12. **Prof. Dr. Anil Shivani** - **HOD, Commerce /Management, Govt. Hamidiya Arts And Commerce Degree College, Bhopal (M.P.) India**
13. **Prof. Dr. PadamSingh Patel** - **HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India**
14. **Prof. Dr. Manju Dubey** - **HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India**
15. **Prof. Dr. A.K. Choudhary** - **Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India**
16. **Prof. Dr. T. M. Khan** - **Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India**
17. **Prof. Dr. Pradeep Singh Rao** - **Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India**
18. **Prof. Dr. K.K. Shrivastava** - **Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls P.G. College, Gwalior (M.P.) India**
19. **Prof. Dr. Kanta Alawa** - **Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. P.G. College, Badwani (M.P.) India**
20. **Prof. Dr. S.C. Jain** - **Professor, Commerce, Govt. P.G. College, Jhabua (M.P.) India**
21. **Prof. Dr. Kishan Yadav** - **Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India**
22. **Prof. Dr. B.R. Nalwaya** - **Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India**
23. **Prof. Dr. Purshottam Gautam** - **Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India**
24. **Prof. Dr. Natwarlal Gupta** - **HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India**
25. **Prof. Dr. S.C. Mehta** - **Former, Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh P.G. College, Jaora (M.P.) India**
26. **Prof. Dr. A. K. Pandey** - **HOD, Economics Deptt., Govt. Girls College, Satna (M.P.)**

Referee Board

Maths	-	(1)	Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics	-	(1)	Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science	-	(1)	Prof. Dr. Umesh Kr. Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry	-	(1)	Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany	-	(1)	Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
		(2)	Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Jolly Garg,HOD, D.A.K. P.G. College, Moradabad (U.P.)
Life Science	-	(1)	Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
	-	(2)	Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics	-	(1)	Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science	-	(1)	Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology	-	(1)	Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology	-	(1)	Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science	-	(1)	Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci.	-	(1)	Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)
			***** Commerce *****
Commerece	-	(1)	Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
		(4)	Prof. Naresh Kumar, NSCBM Govt. College, Hamirpur (H.P.)
			***** Management *****
Management	-	(1)	Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources	-	(1)	Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Admin.	-	(1)	Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
		(2)	Dr. Kuldeep Agnihotri, Modern Group of Institutions, Indore (M.P.)
			***** Law *****
Law	-	(1)	Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)
		(3)	Prof. Lok Narayan Mishra, Govt. Law College, Rewa (M.P.)
		(4)	Dr. Bijay Kumar Yadav, Om Sterling Global University, Hisar (Haryana)
			***** Arts *****
Economics	-	(1)	Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls P.G. College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
		(4)	Prof. Rakesh Kumar Gupta, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
Political Science	-	(1)	Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy	-	(1)	Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology	-	(1)	Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)

Hindi - (1) Prof. Dr. Vandana Agnihotri, Chairperson, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
(3) Prof. Dr. Chanda Talera Jain, M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.)
(4) Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
(5) Prof. Dr. Anchal Shrivastava, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)

English - (1) Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
(2) Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)

Sanskrit - (1) Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. P.G. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)

History - (1) Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)

Geography - (1) Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
(2) Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)

Psychology - (1) Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.)
(2) Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)

Drawing - (1) Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
(3) Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)

Music/Dance - (1) Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
(2) Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)

***** Home Science *****

Diet/Nutrition Science - (1) Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
(2) Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
(3) Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)

Human Development - (1) Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
(2) Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)

Family Resource Management - (1) Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)

***** Education *****

Education - (1) Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
(2) Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
(3) Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
(4) Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)
(5) Prof. Dr. Mahesh Kumar Muchhal, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.)

***** Architecture *****

Architecture - (1) Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)

***** Physical Education *****

Physical Education - (1) Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)
(2) Dr. Ramneek Jain, Associate Professor, Madhav University, Pindwara (Raj.)
(3) Dr. Seema Gurjar, Associate Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.)

***** Library Science *****

Library Science - (1) Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Spokesperson's

1.	Prof. Dr. Davendra Rathore	-	Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.)
2.	Prof. Smt. Vijaya Wadhwa	-	Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
3.	Dr. Surendra Shaktawat	-	Gyanodaya Institute of Management - Technology, Neemuch (M.P.)
4.	Prof. Dr. Devilal Ahir	-	Govt. College, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
5.	Shri Ashish Dwivedi	-	Govt. College, Manasa, Distt. Neemuch (M.P.)
6.	Prof. Manoj Mahajan	-	Govt. College, Sonkach, Distt. Dewas (M.P.)
7.	Shri Umesh Sharma	-	Shree Sarvodaya Institute Of Professional Studies, Sarwaniya Maharaj, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
8.	Prof. Dr. S.P. Panwar	-	Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
9.	Prof. Dr. Puralal Patidar	-	Govt. Girls College, Mandsaur (M.P.)
10.	Prof. Dr. Kshitij Purohit	-	Jain Arts, Commerce & Science College, Mandsaur (M.P.)
11.	Prof. Dr. N.K. Patidar	-	Govt. College, Pipliyamandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
12.	Prof. Dr. Y.K. Mishra	-	Govt. Arts & Commerce College, Ratlam (M.P.)
13.	Prof. Dr. Suresh Kataria	-	Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
14.	Prof. Dr. Abhay Pathak	-	Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
15.	Prof. Dr. Malsingh Chouhan	-	Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.)
16.	Prof. Dr. Gendalal Chouhan	-	Govt. Vikram College, Khachrod, Distt. Ujjain (M.P.)
17.	Prof. Dr. Prabhakar Mishra	-	Govt. College, Mahidpur, Distt. Ujjain (M.P.)
18.	Prof. Dr. Prakash Kumar Jain	-	Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
19.	Prof. Dr. Kamla Chauhan	-	Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
20.	Prof. Abha Dixit	-	Govt. Girls P.G. College, Ujjain (M.P.)
21.	Prof. Dr. Pankaj Maheshwari	-	Govt. College, Tarana, Distt. Ujjain (M.P.)
22.	Prof. Dr. D.C. Rathi	-	Swami Vivekanand Career Gudiance Deptt., Higher Education Deptt., M.P. Govt., Indore (M.P.)
23.	Prof. Dr. Anita Gagrade	-	Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
24.	Prof. Dr. Sanjay Pandit	-	Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
25.	Prof.Dr. Rambabu Gupta	-	Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
26.	Prof. Dr. Anjana Saxena	-	Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
27.	Prof. Dr. Sonali Nargunde	-	Journalism & Mass Comm .Research Centre, D.A.V.V., Indore (M.P.)
28.	Prof. Dr. Bharti Joshi	-	Life Education Department, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
29.	Prof. Dr. M.D. Somani	-	Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
30.	Prof. Dr. Priti Bhatt	-	Govt. N.S.P. Science College, Indore (M.P.)
31.	Prof. Dr. Sanjay Prasad	-	Govt. College, Sanwer, Distt. Indore (M.P.)
32.	Prof. Dr. Meena Matkar	-	Suganidevi Girls College, Indore (M.P.)
33.	Prof. Dr. Mohan Waskel	-	Govt. College, Thandla Distt. Jhabua (M.P.)
34.	Prof. Dr. Nitin Sahariya	-	Govt. College, Kotma Distt. Anooppur (M.P.)
35.	Prof. Dr. Manju Rajoriya	-	Govt. Girls College, Dewas (M.P.)
36.	Prof. Dr. Shahjad Qureshi	-	Govt. New Arts & Science College, Mundi, Distt. Khandwa (M.P.)
37.	Prof. Dr. Shail Bala Sanghi	-	Maharani Lakshmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
38.	Prof. Dr. Praveen Ojha	-	Shri Bhagwat Sahay Govt. P.G. College, Gwalior (M.P.)
39.	Prof. Dr. Omprakash Sharma	-	Govt. P.G. College, Sheopur (M.P.)
40.	Prof. Dr. S.K. Shrivastava	-	Govt. Vijayaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
41.	Prof. Dr. Anoop Moghe	-	Govt. Kamlaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
42.	Prof. Dr. Hemlata Chouhan	-	Govt. College, Badnagar (M.P.)
43.	Prof. Dr. Maheshchandra Gupta	-	Govt. P.G. College, Khargone (M.P.)
44.	Prof. Dr. Mangla Thakur	-	Govt. P.G. College, Badhwah, Distt. Khargone (M.P.)
45.	Prof. Dr. K.R. Kumhekar	-	Govt College, Sanawad, Distt. Khargone(M.P.)

46.	Prof. Dr. R.K. Yadav	-	Govt. Girls College, Khargone (M.P.)
47.	Prof. Dr. Asha Sakhi Gupta	-	Govt. P.G. College, Badwani (M.P.)
48.	Prof. Dr. Hemsingh Mandloi	-	Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
49.	Prof. Dr. Prabha Pandey	-	Govt. P.G. College, Mehar, Distt. Satna (M.P.)
50.	Prof. Dr. Rajesh Kumar	-	Govt. College, Amarpatan, Distt. Satna (M.P.)
51.	Prof. Dr. Ravendra singh Patel	-	Govt. P.G. College, Satna (M.P.)
52.	Prof. Dr. Manoharlal Gupta	-	Govt. P.G. College, Rajgarh, Biora (M.P.)
53.	Prof. Dr. Madhusudan Prakash	-	Govt. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
54.	Prof. Dr. Yuwraj Shirvatava	-	Dr. C.V. Raman Univeristy, Bilaspur (C.G.)
55.	Prof. Dr. Sunil Vajpai	-	Govt. Tilak P.G. College, Katni (M.P.)
56.	Prof. Dr. B.S. Sisodiya	-	Govt. P.G. College, Dhar (M.P
57.	Prof. Dr. Shashi Prabha Jain	-	Govt. P.G. College, Agar-Malwa (M.P.)
58.	Prof. Dr. Niyaz Ansari	-	Govt. College, Sinhaval, Distt. Sidhi (M.P.)
59.	Prof. Dr. ArjunSingh Baghel	-	Govt. College, Harda (M.P.)
60.	Dr. Suresh Kumar Vimal	-	Govt. College, Bansadehi, Distt. Betul (M.P.)
61.	Prof. Dr. Amar Chand Jain	-	Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
62.	Prof. Dr. Rashmi Dubey	-	Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
63.	Prof. Dr. A.K. Jain	-	Govt. P.G. College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
64.	Prof. Dr. Sandhya Tikekar	-	Govt. Girls College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
65.	Prof. Dr. Rajiv Sharma	-	Govt. Narmada P.G. College, Hoshangabad (M.P.)
66.	Prof. Dr. Rashmi Srivastava	-	Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
67.	Prof. Dr. Laxmikant Chandela	-	Govt. Autonomus P.G. College, Chhindwara (M.P.)
68.	Prof. Dr. Balram Singotiya	-	Govt. College, Saunsar, Distt. Chhindwara (M.P.)
69.	Prof. Dr. Vimmi Bahel	-	Govt. College, Kalapipal, Distt. Shajapur (M.P.)
70.	Dr. Aprajita Bhargava	-	R.D.Public School, Betul (M.P)
71.	Prof. Dr. Meenu Gajala Khan	-	Govt. College, Maksi, Distt. Shajapaur (M.P.)
72.	Prof. Dr. Pallavi Mishra	-	Govt. College, Mauganj Distt. Rewa (M.P.)
73.	Prof. Dr. N.P. Sharma	-	Govt. College, Datia (M.P.)
74.	Prof. Dr. Jaya Sharma	-	Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
75.	Prof. Dr. Sunil Somwanshi	-	Govt. College, Nepanagar, Distt. Burhanpur (M.P.)
76.	Prof. Dr. Ishrat Khan	-	Govt. College, Raisen (M.P.)
77.	Prof. Dr. Kamlesh Singh Negi	-	Govt. P.G. College, Sehore (M.P.)
78.	Prof. Dr. Bhawana Thakur	-	Govt. College, Rehati, Distt. Sehore (M.P.)
79.	Prof. Dr. Keshavmani Sharma	-	Pandit Balkrishan Sharma New Govt. College, Shajapur (M.P.)
80.	Prof. Dr. Renu Rajesh	-	Govt. Nehru Leading College ,Ashok Nagar (M.P.)
81.	Prof. Dr. Avinash Dubey	-	Govt. P.G. College, Khandwa (M.P.)
82.	Prof. Dr. V.K. Dixit	-	Chhatrasal Govt. P.G. College, Panna (M.P.)
83.	Prof. Dr. Ram Awdesh Sharma	-	M.J.S. Govt. P.G. College, Bhind (M.P.)
84.	Prof. Dr. Manoj Kr. Agnihotri	-	Sarojini Naidu Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
85.	Prof. Dr. Sameer Kr. Shukla	-	Govt. Chandra Vijay College, Dhindori (M.P.)
86.	Prof. Dr. Anoop Parsai	-	Govt. J. Yoganand Chattisgarh P.G. College, Raipur (Chattisgarh)
87.	Prof. Dr. Anil Kumar Jain	-	Vardhaman Mahavir Open University, Kota (Rajasthan)
88.	Prof. Dr. Kavita Bhadiriya	-	Govt. Girls College, Barwani (M.P.)
89.	Prof. Dr. Archana Vishith	-	Govt. Rajrishi College, Alwar (Rajasthan)
90.	Prof. Dr. Kalpana Parikh	-	S.S.G. Parikh P.G. College, Udaipur (Rajasthan)
91.	Prof. Dr. Gajendra Siroha	-	Pacific University, Udaipur (Rajasthan)
92.	Prof. Dr. Krishna Pensia	-	Harish Anjana College, Chhotisadri, Distt. Pratapgarh (Rajasthan)
93.	Prof. Dr. Pradeep Singh	-	Central University Haryana, Mahendragarh (Haryana)
94.	Prof. Dr. Smriti Agarwal	-	Research Consultant, New Delhi

Organic Farming: A Sustainable Option for Farmers and Natural Resources

Dr. Amita Rana*

***Associate Professor (Economics) CIS Kanya Mahavidyalaya, Fatehpur Pundri (Kaithal) (Haryana) INDIA**

Abstract : The Green revolution in Haryana that started in the 1960s reached to maturity during the 1990s and since then has been exhibiting signs of unsustainable practices in agriculture. The high use of synthetic inputs like chemical fertilisers, pesticides, HYV seeds, etc. not only caused the degradation of the soil health and nutrition but adversely affected the health of the consumers as well. There is a growing concern of the ill-effects of the current agriculture practices and a solution had always been on the active agenda of the statesman, environmentalists and the researchers. The search for solution ends with the advent of the organic farming that avoids or largely excludes the use of synthetic inputs and relies upon crop rotations, crop residues, animal manures, off-farm wastes etc. that restores the soil health.

The option of organic farming is equally beneficial for the farmers in terms of commercial value of his produce. Worldwide, including India, the demand of organic food has been on the rise and Haryana, for being close to the national capital of India, has immense opportunities to capitalise the situation for increasing the income of the farmers. Besides, the organic farming shall be requiring minimum use of chemical fertilisers and pesticides etc. that will prevent the high cost of inputs which, again, shall reduce the financial burden on the farmers. So, in terms of income and expenditure, the organic farming can prove a highly beneficial option for the farmers.

The present paper shall look into existing agriculture practices, the policy framework in Haryana for the growth of organic farming along with the evaluation of the current market conditions prevalent in the state.
Keywords: Green revolution, organic farming, sustainability, commercial agriculture.

Introduction - During the twentieth century, agriculture along with other key areas of human development has made long strides, achieving remarkable feats resulting into dispelling the fears of food insecurity. All this was made possible by the industry-based modernization of agriculture that provided a wider range of modern inputs from fertilizers to pesticides to mechanical implements. More production from less area was the major consideration behind modernization of agriculture that received a favourable response the governments, non-government agencies and the farmers. To derive maximum benefits from modern agriculture, the state extended heavy subsidies on the use of modern inputs by the farmers. The green revolution in Indian agriculture is manifestation and outcome of the coordinated efforts of the government, industry and the farmers.

In the long run, the agricultural practices under green revolution proved disadvantageous mainly due to overuse of modern inputs that inflicted mainly the negative ecological consequences. The task of attaining the goal of food security to feed the growing population was accomplished to greater satisfaction in India but it fell heavily on the soil health. A number of adverse ecological consequences cropped up to embarrass not only the environmentalists, the governments and the farmers but the land and soil health as well beyond the level of recovery.

Methodology: The paper aims to look into evaluating the current agricultural practices in Haryana and its ecological implications. This evaluation becomes essential in order to understand the side-effects of green revolution and the growing incidence of unsustainable character of the state agriculture. The paper further examines the scope of organic farming in the state along with falling farm income of the farmers from agriculture. It has been observed in developed countries that organic farming can be beneficial for the soil health and it can push up the economic profits from agriculture also which is a highly beneficial situation for the farmers of the state.

This framework requires the use of secondary data available in the form of statistical abstracts of Haryana, agriculture department Reports and other secondary materials in the form of articles in the journals and books.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

For proper understanding of the ecological implications of wheat-rice cultivation, certain areas are identified on the basis of area and production of rice and wheat which can be described as the concentration zone of wheat-rice cultivation in the state. The ecological impacts in these areas are the subject of investigation. There appears a direct correlation between the increase in production and consumption of agricultural inputs. There exist negative ecological complications in the area which consume higher degree of modern inputs.

Agricultural practices in Haryana: It is now established that the green revolution in the state which, at one time, led to the economic prosperity of the rural areas now demands a serious review of the ongoing agricultural practices in the state. The agriculture development in Haryana see the establishment of a cropping pattern, which shows dominance of food crops over the non-food crops and that too of the rice-wheat combination (Amita, 2001). The trend that marks its beginning in the 1960s becomes stabilized by the 1990s and occupies a serious concern for its negative impacts during the early part of 21st century. In the entire discussion on ecological implications of green revolution in Haryana, the focus is primarily on the rice-wheat cultivation – the combination which exhibits greater consumption of modern inputs in comparison to other crops. Due to the food security factor and market considerations, the duo of rice and wheat receives favour from the government as well as the farmers.

Table – 1: Trends In Rice Cultivation In Haryana

Year	Area (in '000 hectares)	Production) ('000 tons)	Yield/Hectares (in Kgms.)
1970-71	269.2	460	1697
1975-76	303.5	625	2063
1980-81	483.9	1259	2606
1985-86	584.0	1633	2797
1990-91	661.2	1834	2775
1995-96	830.0	1847	2225
2000-01	1054.3	2695	2557
2005-06	1046.6	3194	3051
2010-11	1243.3	3465	2788
2017-18	1422.0	4880	3432

Compiled from Statistical Abstract of Haryana

The trends indicate the increase in the area under rice cultivation showing an increase of 428 per cent in 2017-18 over 1970-71. Likewise, the production increases by 960.8 per cent during the same period. One of the major reasons for this is the increase in the yield per hectare that can mainly be attributed to modern agricultural inputs.

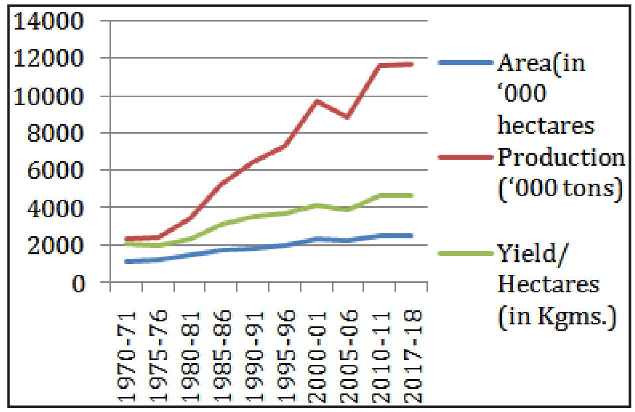

Fig. 1: Trends in Rice Cultivation in Haryana

The cropping pattern, besides rice cultivation during the Kharif season, sees the presence of Wheat during the rabi season that holds the dominating edge over other crops. Both the crops are preferred over other crops by the government because of their profit potential. The trends in the wheat cultivation are shown in the Table – 2.

Year	Area (in '000 hectares)	Production) ('000 tons)	Yield/Hectares (in Kgms.)
1970-71	1129.3	2342	2074
1975-76	1226.0	2428	1980
1980-81	1479.0	3490	2360
1985-86	1701.3	5260	3094
1990-91	1850.1	6436	3479
1995-96	1972.1	7291	3697
2000-01	2354.8	9669	4106
2005-06	2302.7	8853	3844
2010-11	2504.0	11578	4624
2017-18	2526.0	11680	4624

Compiled from Statistical Abstract of Haryana

The wheat cultivation shows an increase of 123.7 per cent in terms of area between the period from 1970-71 to 2017-18. The increase in the wheat production for the same period is 398.7 per cent which can be attributed to the increase in the yield per hectare. Again, as in the case of rice, the high consumption of modern inputs can be seen as responsible for high yield per hectare and overall wheat production. The trend can be better observed in the figure 2.

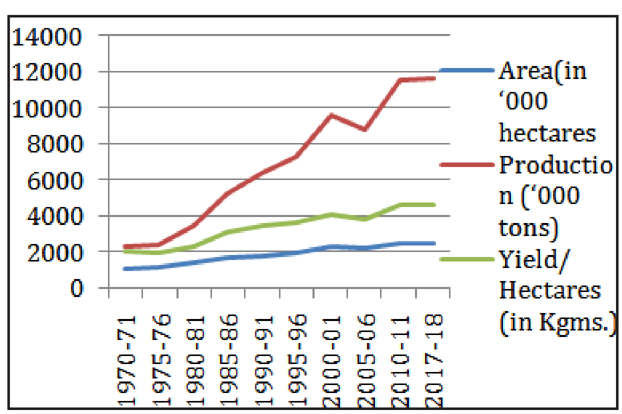

Fig. 2 : Trends in the Wheat cultivation

The presentation of data on trends in rice and wheat cultivation demonstrates the larger share of both the crops and which continues to grow. For example, the combined share of wheat-rice combine of the total cropped area was 28.21per cent in 1970-71 which increased to 63.26 per cent in 2017-18. This increase in the share can be described as the marking of a pattern where other crops – other than wheat and rice, are not showing impressive upward trends. The areas that emerge as intensive rice-wheat cultivation areas are the districts of Ambala, Yamunanagar, Kurukshetra, Kaithal, Karnal, Sonepat, Jind, Hisar and Fatehabad which provides for nearly 75 per cent of the total Rice area. Similarly, these areas account for more than 60 per cent of the total wheat areas. These are the areas which consume larger share of the modern inputs like High Yield varieties of seeds, chemical fertilizers, pesticides, high water consumption, tractorization, machination etc. And it is in these areas mainly where the negative environmental impacts are discernible.

Ecological Implications

i) Increasing demand of Water: The increasing use of HYV seeds necessitated the high need of water. There is a tremendous pressure on the state's sources of irrigation mainly the canals and tube wells. The wheat intensive areas like Hisar, Sirsa, Fatehabad and Jind meet their water needs mainly through the canal system formed by the Ghaggar basin whereas the rice-intensive area meet their water needs mainly from the tube wells. The fall in the ground water table in Haryana is more noticeable in these areas.

ii) Depleting Soil Nutrition: The soil nutrition signifies the presence of nutrients in the soil mainly the nitrogen, phosphorous, potash, manganese, copper, zinc, iron, sulphur etc. Due to over cultivation, the soil has become so deficient in nutrition that it all the time needs chemical fertilizers to supplement the loss. The over use of chemical fertilizers is causing increase in the incidence of acidity in the soil that adversely affects the fertility of the soil.

iii) Soil Bacteria falling Prey to pesticides: The bacteria in the soil constitute the natural agents responsible for the fertility of the soil. The heavy use of pesticides to refrain the weeds and alike from damaging the crops is proving very costly for the land fertility. The bacteria which are found in the upper layer of the soil are the direct victims of the killing pesticides.

iv) Contamination of ground water: The high use of chemical fertilizers and pesticides seeps deep into soil and ends up in the contamination of the ground water. Even the human beings are not free from the ill-effects of this contaminated water and cause a number of serious ailments like cancer etc.

Organic Farming as Ecologically Sustainable Option : Organic farming rests on the traditional agricultural practices and is practised in number of villages in India. Organic farming enhances ago-ecosystem health, including biodiversity, biological cycles, and soil biological activity. It emphasizes the use of management practices in preference to the use of off-farm inputs, taking into account that regional conditions require locally adapted system. India is endowed with various types of naturally available organic form of nutrients in different parts of the country and it will help for organic cultivation of crops substantially (Deshmukh, Babar, 2015).

Organic farming was practiced in India since thousands of years and had been an integral part of the rural economy particularly agriculture. The Indian society from very early times grew on organic farming and was acknowledged worldwide for such practices. In traditional India, the entire agriculture was practiced using organic techniques, where the fertilizers, pesticides, etc., were obtained from plant and animal products. Organic agriculture in India was initiated in 1900 by Albert Howard, a British agronomist in North India. The traditional farming system was characterized mainly by small and marginal farmers producing food and basic animal products for their families and local village communities. After this qualification was drastically changed during the green revolution period but organic farming is seen today as the best option to attain sustainability in the crop production. Therefore organic farming appears to be one of the options for sustainability.

The demand for organic food products is growing in the world markets mainly in the developed countries. This is mainly due to high purchasing power and huge presence of health conscious consumers. The organic food consumption in India is very low as compared to western markets. Organic food market in India is highly unorganized and fragmented, which offers immense growth opportunities for domestic as well as international players. India mainly exports organic processed food products, organic rice, beverages and other cereals and millets to US, Canada, Europe, and South East Asian countries (Deshmukh, Babar, 2015).

Organic farming has attracted considerable attention in Haryana in the recent years. In their search for a more sustainable agriculture, producers, consumers and policymakers attempt to rediscover organic farming. Haryana government believes that producer concerns to organic products and therefore market development should be stimulated. Currently, the greater part of the agricultural budget for stimulating organic farming is allocated to research, education and information dissemination. An Agricultural and Processed Food Products Export Development Authority (APEDA) approved internationally reputed organic certification agency, OneCert, has been appointed for certification purpose in the state. It pays the certification fee of the fields being organic (Ohlan. 2016). According to the information available on the official website of the Haryana State Co-operative Supply and Marketing Federation Limited (HAFED), an area of around 1,000 acres has been earmarked for organic farming of basmati rice in

three districts of Kaithal, Kurukshetra and Karnal. The desi wheat would be cultivated in an area of around 805 acres in Mewat and Jhajjar region. Apart from these two crops, Sirsa district has been shortlisted for the cultivation of gram crop (Ohlan. 2016).

Conclusion: The organic farming is the need of the hour and needs policy support for the benefit of the soil health, the farmers and the consumers as well. Haryana, being a leader in the agriculture production in the country cannot afford to ignore the multiple adverse ecological consequences of green revolution. The state needs to awake this harsh reality and requires mending its approach towards agriculture and agriculture practices in the state. The present agricultural practices in the state not only falls heavily on the soil health but, at the same time, growing as an uneconomic pursuit. The cost of production is increasing more and more and the returns are shrinking making agriculture in the state economically non-viable. So, the organic farming offers a sustainable option to the state agriculture and at the same time, fills the empty coffers of the farmers who, at the moment, is under immense distress.

References:-

1. Amita, 2001, **Economics and Ecology of Alternative Cropping Pattern in Haryana**, unpublished Ph.D. thesis submitted to Department of Economics, Kurukshetra University, Kurukshetra (Haryana)
2. Deshmukh M.S., Babar, Nitin - Present Status and Prospects of Organic Farming in India **EUROPEAN ACADEMIC RESEARCH -** Vol. III, Issue 4 / July 2015
3. Ohlan, Ramphul, 2016 “Economic Viability of Organic Farming in Haryana”, **Research Report, ICSSR,** New Delhi, India
4. **Statistical Abstract of Haryana**, Planning Department, Haryana

****

The Role of Startup Ecosystems in Driving Economic Growth and Innovation: A Focus on Transforming the Indian Economy

Dr. Preeti Anand Udaipure*

***Assistant Professor, Govt. Narmada College, Narmadapuram (M.P.) INDIA**

Abstract : This paper examines the role of startup ecosystems in the economic development and innovation of India, with special emphasis on the impact they have on job creation, technological advancements, market competitiveness, and overall economic transformation. An analysis of the professional and demographic characteristics of a large sample in this study demonstrates the considerable prevalence of young, educated people, especially students and entrepreneurs, in the country's emerging startup culture. With their innovative business plan and disruptive technology, entrepreneurs create sectoral shifts and contribute to the growth of productivity across a wide range of sectors. With an immense and diversely skilled talent pool and its growing domestic market, India represents a unique opportunity for the success of any business, combined with government programs and policies such as "Startup India," which cultivate an entrepreneurship-friendly environment. The study, therefore, emphasizes the importance of creating these ecosystems because, besides serving as key drivers for the future success of India's economy, it addresses vital concerns such as employment, technological gaps, and regional disparities in addition to its role in economic development.

Keywords: Startup, Ecosystems, Economic Growth, Innovation, Indian Economy,Job Creation, Technological Advancements, Market Competition,Startup India, Economic Development.

Introduction - India, a developing country with a diversified economy, is focusing on using startups to boost its economy. The government is establishing startup ventures to support companies in the technological, medical, and educational fields. Studies have shown that startups are vital in creating the over 100 million jobs that India needs every year. More income from additional jobs boosts the economy. There is an emerging entrepreneurial culture in India, which focuses on delivery speed and quality to attract customers. Startups have disrupted or created new markets through technology and creativity for the goods and services provided to meet consumer demand. To help people launch and grow their enterprises, "Startup India" has been brought to the country under the Narendra Modi administration. Strong demographics and an open, commercial culture are driving the formation of new companies, and startups are revolutionizing India's economy as a result of increased entrepreneurship. Almost 1,300 Indian executives were surveyed by Oxford Economics and the IBM Institute for Business Value to gain insights into how the economy is affecting this rapidly changing startup landscape. Startups can challenge the current business paradigms of India's corporate ecosystems and proliferate innovation and cooperation for the distribution of advantages by using India's gigantic home market, a well-developed skilled workforce, and economic openness.

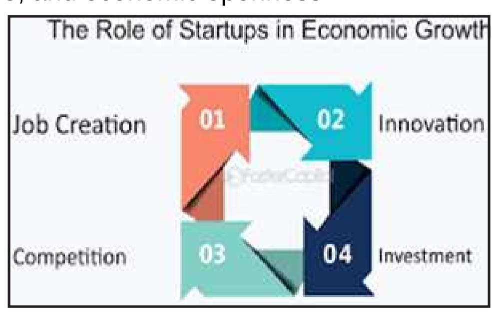

Figure 1:Startups' Contribution to Economic Growth

India is the greatest youth population in the world and is a source of talent, creativity, labor, and future leaders. Some of the issues India is facing include infrastructure, health, education, and the growing divide between India and Bharat. This gives the startups an opportunity to address many problems. India is seeing growth in its middle class and consumer base with 1.3 billion people. Diverse people supporting a strong economy on services and products is what India has. Banks must be one of the options for start-

ups; our financial sector has been well utilized by our citizens.

Startup Ecosystems: Catalysts for Economic Growth and Innovation: Startup ecosystems have proven to be important drivers in innovation and economic growth because they provide the venue for new ideas, business concepts, and disruptive technologies. The startup ecosystem provides several important advantages:

1. **Employment Generation:** Start-ups contribute significantly in creating jobs, mainly in new industries such as biotechnology, green energy, and technology. They reduce unemployment rates and provide employment opportunities through entrepreneurship.
2. **Innovation and Technology Innovation:** Startups very often are at the innovation frontier and often lead the way into breaking up existing corporate processes and technologies. They can implement novel solutions with the potential to shake an entire industry and generate a productivity boost due to their flexibility and willingness to take risks.
3. **Capital Attraction:** A healthy startup ecosystem attracts venture capital and angel investors, which further supports technology developments and business expansion. The investment in startups enhances the economy by benefiting not only the businesses but also other industries such as professional services, real estate, and education.
4. **Rivalry and Market Efficiency:** The more startups in a market, the greater is the rivalry, which positively influences the quality of the products and services offered. This also results in effective use of resources, thus causing an innovation and reducing the consumers' cost.
5. **Spillover Effect of Knowledge:** Startups tend to pass best practices and knowledge to well-established firms. These interactions have the potential to spur innovation and lead to breakthroughs in different industries.
6. **Global Impact and Export Potential:** Many firms operate in a global environment, creating products and services that are competitive on an international level. These businesses increase a country's economic strength in the global economy and facilitate the export industry by expanding internationally.
7. **Government and Policy Influence:** Successful startup environments can be promoted through proactive government policies. Governments, through tax breaks, funding initiatives, and regulatory frameworks, stimulate innovation. This may eventually result in sustained economic growth.

Literature Review

Bhagavatula et al. (2019)provided an all-round analysis of the ecosystem that supports innovation and entrepreneurship in India, identifying how it has evolved with time because of institutional, historical, and socioeconomic factors. The authors have underscored how economic liberalization in the 1990s reduced restrictions, fostered private sector growth, and enabled tech-driven companies to find a footing in cities such as Hyderabad and Bengaluru. They analyzed institutional support and found that, though the issues were persistent-inefficient bureaucracy, inappropriate infrastructure, etc. - the government programs, like "Startup India" and the changes in the intellectual property law, did make the entrepreneurial environment more conducive. They researched the sociocultural factor and found attitudinal change among the generations towards entrepreneurship as a career. The study also highlighted differences in entrepreneurship prospects between urban and rural areas, underlining the need for targeted initiatives to remove structural obstacles and promote inclusive, innovation-driven economic growth.

MungilaHillemane (2020)examined Bangalore's technology start-up entrepreneurial ecosystem, particularly focusing on its composition and inadequacies. It zeroes in on the basic elements of the ecosystem, such as infrastructure, policy support, mentorship, and availability of finance, all of which have established the city as a significant hub for tech start-ups. The paper focuses on how the city's vibrant networks of investors, incubators, and accelerators support innovation and expansion of startups. It further pointed out crucial shortcomings in relation to incoherent policies, improper allocation of resources to early-stage start-ups, and scale-related issues since infrastructure support is not up to the mark. Taking all these into consideration through analysis of the systemic and structural reasons responsible for its defeat, it called for well-targeted measures to reduce the deficiencies but not sacrificing the lead in an innovation hub like Bangalore. It provided educational feedback as well about the advantages and disadvantages of entrepreneurial ecosystem in the city.

Garg and Gupta (2021)explored how the growth of startups and the entrepreneurial ecosystem evolved, stressing the interdependent factors that helped it gain momentum. In their study, they concluded that opening access to venture finance, technological change, and favorable government policies play important roles in stimulating entrepreneurship. It highlights the fact that despite rural areas facing some problems, such as resource limitation and poor access to market, the density of talented people, good infrastructure, and investment networks pushed the startups to emerge in cities. Accelerators, incubators, and mentorship programs are vital for early-stage businesses with Garg and Gupta. They noted that although this was a development, old impediments such as complicated regulation and social antipathy toward risk were still frustrating the potential of this ecosystem. Their findings greatly shed light on the functioning of startup ecosystems as well as what needed to be done to maintain their access and growth.

Khuan et al. (2023)explored the role that technology plays in supporting innovation and growth in start-up companies and unveiled how it could totally change the nature of

product development, expansion into new markets, and even operational effectiveness. The study showed how technological advancement made it possible for start-ups to overcome conventional constraints that include scarce resources and a limited market reach to set up a more competitive and agile entrepreneurial setting. They talked about how technology tools such as automation, cloud computing, and data analytics will enable a firm to make better decisions and facilitate business procedures. The authors also looked into how the adoption of technology can help small companies scale their businesses in an efficient manner by easily making it easier for start-ups to gain finance and networking opportunities through digital tools. Despite these advantages, the authors found some disadvantages like high implementation costs and continuous upskilling of technology to be further competitive. The authors outlined very urgent necessities in their conclusion for strategic technological integration into long-term innovation and growth in start-up ecosystems.

Research Methodology : The study observes the demographical and professional characteristics of an assorted sample from India, by using a descriptive study design and collects online/offline surveys through statistical descriptive analysis to identify trends in sex, age, occupation, and education.

Research Design: The study adopted the descriptive type of research design aimed at ascertaining professional and demographic characteristics of a sample population. It involved cross-sectional collection of data from the respondents of a certain time point. It examines some sociodemographic variables such as sex, age, education, and occupation and aims at ascertaining the sample's distribution about professionals and educational backgrounds.

Research Area: The study was conducted in India, focusing on a heterogeneous sample selected from different parts of the nation. The diverse socioeconomic backgrounds of the people make India an ideal place for studying demographic trends and professional participation. Although the sample is not region-specific, wide geographic coverage provides insight into overall patterns across the Indian population.

Sample Size: The sample size of the study is 100 respondents chosen with care to ensure a fair representation of all different demographic groups. Males and ladies of all ages and educational backgrounds are included in this sample. The main goal is to capture a wide range of viewpoints, with special attention to the high percentage of students and entrepreneurs in the sample. Data was collected during the non-random selection procedure in order to represent the most prevalent professional and demographic trends.

Data Collection: An online and offline distributed survey was used to collect the data. The survey had categorical questions on profession, age, sex, and level of education. The respondents were asked to provide their demographic details and current employment status. The data collection process was conducted over two months to ensure adequate response rates. The study subjects consisted of participants selected to represent diverse occupational backgrounds, drawn from various academic institutions, business communities, and the general public.

Data Analysis: Statistical techniques of descriptive analysis were used to analyze the collected data. The demographic and professional sections calculated the frequency and percentage for each category. Thus, the most significant trends in sex, age, occupation, and qualification could be established. Data was also presented in tabular and graphical forms for depicting the distribution of every variable. The objective of the study was to bring attention to the heterogeneity of the sample and to spot important trends such as the predominance of students and the presence of businessmen in the professional distribution. Insights into the sample population were derived by interpreting the findings in the context of the demographic trends of India.

Data Analysis: The demographic distribution of the sample population indicates that all the important qualities are fairly represented.

Table 1: Distribution of the Sample Population's Demographics

Category	Value	Frequency	Percentage
Sex	Female	62	62.00%
	Male	38	38.00%
Age	18-25	20	20.00%
	26-30	36	36.00%
	31-40	36	36.00%
	Above 40	8	8.00%
Qualification	10th	8	8.00%
	12th	9	9.00%
	Graduate	41	41.00%
	Post Graduate	30	30.00%
	Studying	5	5.00%
	Under Graduate	5	5.00%
	Others	2	2.00%

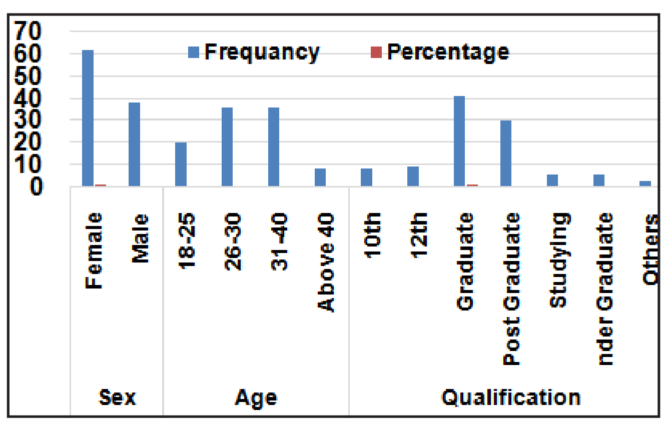

Figure 2: Graphical representation of Distribution of

the Sample Population's Demographics

Interpretation: Male respondents represent 38% of the sample, while female respondents represent 62%. As far as age is concerned, the largest groups were between the ages of 26 and 40 at 36%, followed by those in the 18 to 25 age brackets at 17%, and those above 40 at 8%. Graduates are the most represented in the qualification aspect with 38%, followed by postgraduates with 26%. The categories of study, 10th and 12th have almost negligible representations at 1% each, which gives an idea that the sample is basically well-educated. These findings indicate a diversified but education-oriented sample of respondents, and it constitutes a significant proportion of youth and middle-aged people.

Table 2: Distribution of Respondents by Professional

Profession	Frequency
Student	75
Businessman	14
Housewife	5
Homemaker	4
Job	2

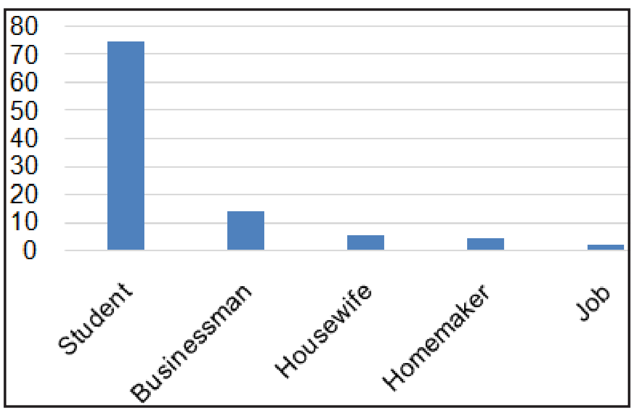

Figure 3: Graphical representation of Distribution of Respondents by Professional

Interpretation: The occupational representation of the respondents, 70% of the students would indicate a predominantly young population. Businessmen ranked second with 13%, which means that there must also be entrepreneurial people. The percentage count of other occupations is significantly small, such as housewives at 4%, homemakers at 2%, and 2% of people with no occupation, thereby stating that there is hardly any variation of profession in the sample in relation to their participation. Few participants from other vocational work backgrounds exist, suggesting an emphasis on those who are working in academic and entrepreneurial jobs.

Conclusion: This study concludes by throwing emphasis on the crucial role of startup ecosystems in pushing the growth of innovation and economies in India. Professional and demographic trends have been in focus, and the result reveals a high proportion of young educated people, especially students and entrepreneurs, which reflects the nation's growing culture of startups. Being seen as a key player of India's economic development as well as job creation through technological innovation, the various potential of the country lies with the startups, the largest and most significant talent pools available in the market through an entrepreneurial spirit. Emphasis will be given on both these factors by the Indian economy in its current trend of development.

References:-

1. Ashraf, S. N., & Singh, A. K. (2019). Does entrepreneurship ecosystem have a long-term relationship with economic growth in selected economies? A statistical investigation. In Proceedings of the 13th Biennial Conference on Entrepreneurship Organized by EDII Ahmedabad (Vol. 1, pp. 176-187).
2. Bala Subrahmanya, M. H. (2022). Competitiveness of high-tech start-ups and entrepreneurial ecosystems: An overview. International Journal of Global Business and Competitiveness, 17(1), 1-10.
3. Bhagavatula, S., Mudambi, R., & Murmann, J. P. (2019). Innovation and entrepreneurship in India: An overview. Management and Organization Review, 15(3), 467-493.
4. David, D., Gopalan, S., & Ramachandran, S. (2021). The startup environment and funding activity in India. In Investment in startups and small business financing (pp. 193-232).
5. Garg, M., & Gupta, S. (2021). Startups and the growing entrepreneurial ecosystem.
6. Khuan, H., Andriani, E., &Rukmana, A. Y. (2023). The Role of Technology in Fostering Innovation and Growth in Start-up Businesses. West Science Journal Economic and Entrepreneurship, 1(08), 348-357.
7. Korreck, S. (2019). The Indian startup ecosystem: Drivers, challenges and pillars of support. ORF Occasional Paper, 210, 193-211.
8. Mitra, S., Kumar, H., Gupta, M. P., & Bhattacharya, J. (2023). Entrepreneurship in smart cities: elements of start-up ecosystem. Journal of Science and Technology Policy Management, 14(3), 592-611.
9. MungilaHillemane, B. S. (2020). Entrepreneurial ecosystem for tech start-ups in Bangalore: an exploration of structure and gap. Journal of Small Business and Enterprise Development, 27(7), 1167-1185.
10. Nuthalapati, C. S., Srinivas, K., Pandey, N., & Sharma, R. (2020). Startups with open innovation: accelerating technological change and food value chain flows in India. Indian Journal of Agricultural Economics, 75(4), 415-437.
11. Opute, A. P., Kalu, K. I., Adeola, O., & Iwu, C. G. (2021). Steering sustainable economic growth: entrepreneurial ecosystem approach. Journal of Entrepreneurship and Innovation in Emerging Economies, 7(2), 216-245.
12. Pustovrh, A., Rangus, K., & Drnovšek, M. (2020). The

role of open innovation in developing an entrepreneurial support ecosystem. Technological forecasting and social change, 152, 119892.

13. Singh, S., Chauhan, A., & Dhir, S. (2020). Analyzing the startup ecosystem of India: a Twitter analytics perspective. Journal of Advances in Management Research, 17(2), 262-281.
14. Singh, V. K. (2021). Policy and regulatory changes for a successful startup revolution: Experiences from the startup action plan in India. In Investment in Startups and Small Business Financing (pp. 33-67).
15. Tripathi, N., Seppänen, P., Boominathan, G., Oivo, M., & Liukkunen, K. (2019). Insights into startup ecosystems through exploration of multi-vocal literature. Information and Software technology, 105, 56-77.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Medecinal Plant Pippali Found in Bhopal Division

Dr. Sushama Singh Majhi*

***Assistant Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA**

Abstract : Herbal remedies have become popular, due in part to the lower risk of adverse reactions. Thousands of plants have been used traditionally to treat various diseases. Among them, species of the genus Piper are important medicinal plants used in various systems of medicine. The Piper Longum fruit has been used in traditional medicine, including the Ayurvedic system of medicine. Although there are numerous indications for its use, controlled trials are needed to determine its efficacy. The primary constituents isolated from various parts of P. Longum are piperine, piperlongumine, sylvatin, sesamin, diaeudesmin piperlongumine, pipermonaline, and piperundecalidine. It is most commonly used to treat chronic bronchitis, asthma, constipation, gonorrhoea, paralysis of the tongue, diarrhoea, cholera, chronic malaria, viral hepatitis, respiratory infections, stomachache, bronchitis, diseases of the spleen, cough, and tumours. This study provides detailed information about the P. Longum fruit, including phytochemistry, pharmacological profile and safety profile. In view of the commercial, economic, and medicinal importance of the P. Longum plant, it is useful for researchers to study the plant in detail.
Keywords: adverse reactions, various diseases, important medicinal plants, traditional medicine, pharmacological profile.

Geographical Distribution: The plant grows in evergreen forests of India and is cultivated in Assam, Tamil Nadu, and Andhra Pradesh. Long pepper is cultivated on a large scale in limestone soil and in heavy rainfall areas where relative humidity is label broad.

Synonyms of Pippali: Piper longum, Long Pepper, Pipal, Pipli, Lendi Peepar, Dantakapha, Gonamika, Granthika, Granthikam, Kagophale, Kanamula, Pipoli, Pimpli, Piplee, Videhee, Modi, Argadi.

Piper longum, commonly known as “long-pepper” or “Pippali” grows as a perennial shrub or as an herbaceous vine. It is native to the Indo-Malaya region and widely distributed in the tropical and subtropical world including the Indian subcontinent, Sri Lanka, Middle-East, and America. The fruits are mostly used as culinary spice and preservatives and are also a potent remedy in various traditional medicinal systems against bronchitis, cough, cold, snakebite, and scorpion-sting and are also used as a contraceptive. Various bioactive-phytochemicals including alkaloids, flavonoids, esters, and steroids were identified from the plant extracts and essential oils from the roots and fruits were reported as antimicrobial, antiparasitic, anthelminthic, mosquito-larvicidal, antiinflammatory, analgesic, antioxidant, anticancer, neuro-pharmacological, antihyperglycaemic, hepato-protective, antihyperlipidemic, antiangiogenic, immunomodulatory, antiarthritic, antiulcer, antiasthma tic, cardioprotective, and anti-snake-venom agents. Many of its pharmacological properties were attributed to its antioxidative and antiinflammatory effects and its ability to modulate a number of signalling pathways and enzymes. This review comprehensively encompasses information on habit, distribution, ethnobotany, phytochemistry, and pharmacology of P. longum in relation to its medicinal importance and health benefits to validate the traditional claims supported by specific scientific experiments. In addition, it also discusses the safety and toxicity studies, application of green synthesis and nanotechnology as well as clinical trials performed with the plant also elucidating research gaps and future perspectives of its multifaceted uses.

Piper Longum Medicinal Uses: Long pepper finds a wide range of applications in Ayurveda. It is used as a “Rasayana” in the treatment of respiratory disorders and also as an important constituent in digestive formulations. Ayurveda uses it as an ingredient of Trikatu (three pungent herbs). Individually long pepper is used in correcting digestive disturbances and minor respiratory ailments. Trikatu is an important constituent in many Ayurvedic formulations. Experimental studies suggest that Trikatu increases bioavailability of the substances administered along with them.

Historical The earliest known documentation of plant

treatments in Indian literature is found in Vedas, the sacred literature of Hindus, 'Pippali' the drug taken for the study is one among them. In Vedic period there is a reference that-

1. Pippali was originated during the time of Samudra Manthan.

2. When Vasisthamuni's son was ceased, he was depressed so he wished to have more progeny and he consumed Pippali fruit by which he had more progeny. So the name Pippali came to that fruit. Jaimini Brahmana.

3. Various Synonyms have been used for Pippali viz. Atividdhabhaishaja, Kshipta bhaishaja. The use of Pippali was more extensive in Purana period in comparison to Vedic period.

4. Pippali was one of the plants, which was growing in forest, has antitoxic drug, grouped under Katurasa Varga, is having Sleshmahara property.

5. decoction form is good for Amavata Patients, reported as aphrodisiacs. Agni Purana mentions Trikatu in many places. This Trikatu includes pippali as an Ingredient, useful for the patients of Rajayakshma, Trikatu was used in medoroga, tarunya pidaka and Gulma.

6. The treatment of Dhanurvata, Akshepaka. Samhita kala: the exhaustive information of pippali in this period is seen. In Charka Samhita Acharya Charka in Vimanasthana has elucidated Yogavahi karma of pippali due to this special property it is used in various formulations as a medicine and adjuvant. In Sushrut Samhita Ch.26 where Davys of Virudha Virya are mentioned, Katu Rasa dravyas are described as Avrishya Dravyas but Pippali and Sunthi are exception to them.

Conditions of Use and Important Information: This information is meant to supplement, not replace advice from your doctor or healthcare provider and is not meant to cover all possible uses, precautions, interactions or adverse effects. This information may not fit your specific health circumstances. Never delay or disregard seeking professional medical advice from your doctor or other qualified health care provider because of something you have read on WebMD. You should always speak with your doctor or health care professional before you start, stop, or change any prescribed part of your health care plan or treatment and to determine what course of therapy is right for you.

This copyrighted material is provided by Natural Medicines Comprehensive Database Consumer Version. Information from this source is evidence-based and objective, and without commercial influence. For professional medical information on natural medicines, see Natural Medicines Comprehensive Database Professional Version.

Special Precautions and Warnings

When taken by mouth: Indian long pepper fruit is commonly consumed in foods. But there isn't enough reliable information to know if Indian long pepper is safe or what the side effects might be when used in larger amounts as medicine.

Pregnancy and breast-feeding: Indian long pepper fruit is commonly consumed in foods. But there isn't enough reliable information to know if Indian long pepper is safe to use as medicine when pregnant or breast-feeding. Stay on the safe side and avoid use.

Bleeding conditions: Indian long pepper might slow blood clotting. Taking Indian long pepper in amounts greater than those found in foods might increase the risk of bleeding in people with bleeding disorders.

Surgery: Indian long pepper might slow blood clotting and affect blood sugar levels. Taking Indian long pepper in amounts greater than those found in foods might cause bleeding complications or affect blood sugar levels during surgery. Stop taking Indian long pepper at least 2 weeks before surgery.

Side Effects

When taken by mouth: Indian long pepper fruit is commonly consumed in foods. But there isn't enough reliable information to know if Indian long pepper is safe or what the side effects might be when used in larger amounts as medicine.

References:-

1. KR Kirtikar, BD Basu Indian Medicinal Plants, Orients Longman, Mumbai, India (1980), pp. 21-28
2. Rastogi RP, Malhotra BN. Compendium of Indian Medicinal Plants. CDRI, Lucknow and New Delhi, India: Nisc 1993: 504-857.
3. ScienceDirect [Date accessed: April 24, 2011]
4. National Institutes of Health National Centre for Biotechnology Information. PubMed
[Date accessed: April 24, 2011]
5. Sciurus search engine [Date accessed: April 24, 2011]
6. Ayushveda health and lifestyle portal [Date accessed: March 03, 2010]
7. Multilingual multiscript plant name database [Date accessed: March 03, 2010]
8. SW Lee, MC Rho, HR Park, JH Choi, JY Kang, JW Lee, et al. Inhibition of diacylglycerol acyltransferase by alkamides isolated from the fruits of Piper longum and Piper nigrum J Agric Food Chem, 54 (2006), pp. 9759-9763
9. RC Tiwari, LX Clegg, Z Zou Efficient interval estimation for age-adjusted cancer rates Stat Methods Med Res, 15 (2006), pp. 547-569
10. KS Kim, JA Kim, SY Eom, SH Lee, KR Min, Y Kim Inhibitory effect of piperlonguminine on melanin production in melanoma B16 cell line by downregulation of tyrosinase expression Pigment Cell Res, 19 (2006), pp. 90-98
11. SS Hong, XX Han, GJ Oh, KS Lee, MK Lee, BY Hwang, et al. Piperine from the fruits of Piper longum with inhibitory effect on monoamine oxidase and antidepressant-like activity Chem Pharm Bull (Tokyo), 53 (2005), pp. 832-835
12. XX Sun, JJ Hodge, Y Zhou, M Nguyen, LC Griffith.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Psychological Initiative on Mental Health of Tribal Society: in the Context of Bastar

Dr. Dinesh Kumar Lahari* Mr. Shailesh Kumar Chandrakar**

*Assistant Professor (Psychology) Govt. Danteshwari P.G. College, Dantewada (C.G.) INDIA
** Research Scholar, School of Studies Department of Psychology, Pt.Ravishanakar Shukla University, Raipur (C.G.) INDIA

Abstract : The mental health of tribal societies, particularly in regions like Bastar, is a critical yet underexplored domain that warrants targeted psychological initiatives. Bastar, a tribal-dominated district in India, faces unique socio-cultural, economic, and political challenges that significantly impact the psychological well-being of its inhabitants. These challenges include displacement, marginalization, cultural disintegration, poverty, and exposure to conflict situations. Despite these adversities, traditional tribal communities have developed unique resilience mechanisms deeply rooted in their cultural practices, belief systems, and communal lifestyles.
Keywords - Mental Health, well-being, awareness programme, Social- Cultural.

Introduction - Mental health is a critical yet often overlooked aspect of holistic well-being, particularly within indigenous and tribal societies. In regions like Bastar, located in the heart of Chhattisgarh, India, the challenges related to mental health are deeply intertwined with socio-cultural, economic, and environmental factors. Bastar's tribal communities are characterized by their unique traditions, cultural practices, and close connection to nature. However, they also face significant challenges, including poverty, displacement, conflict, and limited access to healthcare.

This initiative aims to explore the mental health needs of Bastar's tribal society through a culturally sensitive and community-driven approach. Unlike conventional frameworks, which often fail to resonate with the cultural nuances of tribal populations, this initiative emphasizes the importance of integrating traditional practices, community resources, and modern psychological tools to address mental health challenges effectively.

Review Of Literature

Prevalence of Mental Health Issues: Studies highlight higher rates of depression, anxiety, and substance abuse among tribal populations compared to the general population, often linked to historical oppression, displacement, and socioeconomic disadvantages (Kirmayer et al., 2009).

Cultural Stigma: Cultural stigma surrounding mental health often prevents individuals in tribal communities from seeking professional help (Gone, 2013). Instead, they may rely on traditional healing practices.

Connection to Land and Identity: The relationship to land is integral to tribal identity. Displacement or environmental changes can contribute to mental health issues such as depression and loss of purpose (Whitbeck et al., 2004).

Cultural Resilience: Despite challenges, tribal communities often exhibit strong resilience, grounded in cultural practices, rituals, and community support systems (Wexler, 2006).

Community-Based Interventions: Community-led initiatives are effective in addressing mental health needs. Programs integrating local leaders and traditional practices with modern psychological methods show promising results (Mohatt et al., 2004).

Culturally Tailored Therapies: Culturally sensitive mental health services, such as narrative therapy or adaptations of cognitive-behavioral therapy (CBT), have been effective in tribal settings (Gone, 2011).

Training Indigenous Counselors: Initiatives to train local individuals as mental health counselors help bridge the gap between modern psychological services and traditional healing (Rasmussen et al., 2014).

Integration with Modern Medicine: Collaboration between traditional healers and clinical psychologists can provide holistic mental health care (Hunter & Milroy, 2006). This approach respects cultural values while addressing mental health scientifically.

Traditional Practices: Practices such as rituals, storytelling, and herbal medicine remain central to mental well-being in tribal cultures and are often more accessible than formal mental health services.

Geographic Isolation: Remote locations of many tribal communities limit access to mental health services (Browne et al., 2016).

Resource Limitations: Tribal areas often lack adequate

mental health infrastructure, including trained professionals and facilities.

Mistrust of Formal Institutions: Historical exploitation has fostered mistrust towards government and healthcare systems among some tribal populations.

The Navajo Native Healing Model: Combining traditional healing ceremonies with Western psychiatric practices has shown significant success in addressing trauma and grief among Navajo communities (Bassett et al., 2012).

The Sundarban Tribal Project in India: This project focused on integrating modern psychological interventions with the tribal community's social structure, improving mental health outcomes (Gupta et al., 2017).

Key Components Of The Initiative Include:

1. **Understanding Cultural Contexts**: Recognizing the role of tribal beliefs, rituals, and social systems in shaping mental health perceptions and coping mechanisms.
2. **Building Community Awareness**: Promoting mental health literacy to reduce stigma and encourage open discussions about emotional well-being.
3. **Access to Services**: Bridging the gap between traditional healing practices and modern psychological interventions to create a hybrid model of care.
4. **Conflict and Trauma Support**: Addressing the psychological impacts of socio-political issues, such as conflict and displacement, which are prevalent in Bastar.
5. **Empowering Local Resources**: Training local healers, teachers, and community leaders in basic mental health care to ensure sustainability and cultural alignment.

Through this initiative, the goal is to enhance the mental well-being of Bastar's tribal population by fostering resilience, reducing stigma, and providing accessible and culturally appropriate care. This effort not only seeks to improve individual lives but also aims to contribute to the overall socio-economic development of the region.

The mental health of tribal societies, particularly in regions like **Bastar** (in Chhattisgarh, India), presents unique challenges and opportunities for intervention. Bastar, known for its rich tribal heritage, diverse cultural practices, and natural beauty, is also marked by socio-economic challenges, limited healthcare infrastructure, and, in some areas, conflict and displacement. A psychological initiative focused on the mental health of tribal communities in Bastar should consider the following:

Understanding Cultural Context:

1. **Tribal Beliefs and Practices:** The tribals of Bastar have distinct cultural beliefs about health and illness, often rooted in traditional practices and spiritual systems. Psychological interventions must align with their worldview and respect indigenous practices.
2. **Language and Communication:** Use local languages (like Gondi, Halbi, or Dhurwa) to ensure accessibility and acceptance of mental health services.
3. **Stigma and Awareness:** Address the stigma around mental health in tribal communities by integrating awareness campaigns with culturally relevant storytelling, songs, and folk art.

Addressing Specific Mental Health Challenges:

1. **Impact of Conflict:** The region has experienced unrest due to Naxal insurgency and counterinsurgency operations, leading to trauma, anxiety, and depression.
2. **Displacement and Loss:** Development projects and conflict have displaced many tribal families, causing emotional distress and social disconnection.
3. **Substance Abuse:** Alcoholism is a common issue in some tribal societies, necessitating substance abuse interventions.

Developing Culturally Sensitive Programs:

1. **Community Engagement:** Work with tribal leaders, healers, and community groups to co-create programs that integrate traditional practices with modern mental health care.
2. **Mental Health Camps:** Conduct periodic health camps in remote villages, offering services like counselling, stress management workshops, and psychiatric consultations.
3. **Peer Support Groups:** Train community members to serve as peer counsellors or mental health ambassadors.

Building Capacity Of Local Resources:

1. **Training of Local Health Workers:** Equip *Mitanins* (community health workers in Chhattisgarh) with basic psychological first aid and mental health training.
2. **Involving Schools:** Educate teachers about identifying mental health issues in children and provide support programs in schools.
3. **Tele-Mental Health Services:** Leverage technology to connect tribal populations with mental health professionals, especially in inaccessible areas.

1. **Collaboration With Government And Ngos:**
2. **Government Schemes:** Utilize existing schemes like the National Mental Health Program (NMHP) and integrate mental health services into tribal welfare programs.
3. **NGO Partnerships:** Collaborate with organizations working in Bastar to scale efforts, such as those promoting women's empowerment, education, or healthcare.

Research And Monitoring:

1. **Baseline Studies:** Conduct studies to understand the prevalence of mental health issues and identify stressors unique to tribal populations in Bastar.
2. **Feedback Mechanisms:** Continuously evaluate the effectiveness of initiatives and adapt interventions based on community feedback.

Promoting Holistic Well-Being:

1. **Focus on Livelihood and Education:** Economic empowerment and education can significantly reduce stress and improve mental health.
2. **Community Cohesion Activities:** Organize events that foster social bonding and celebrate cultural identity, helping reduce alienation and enhance mental resilience.

Future Directions:

1. **Policy Support:** Advocating for policies that prioritize

mental health care in tribal areas is critical. This includes funding for culturally appropriate mental health programs.

2. Research Needs: More qualitative and longitudinal studies are needed to understand the long-term effectiveness of interventions.

3. Empowerment and Self-Reliance: Promoting education and economic empowerment among tribal populations can indirectly improve mental health by reducing stressors.

Conclusion :

1. The psychological initiative on the mental health of tribal societies has provided valuable insights into the unique challenges and strengths of these communities. Through culturally sensitive approaches, the initiative fostered trust, enhanced awareness, and provided accessible mental health resources tailored to their traditions and lifestyles.
2. This endeavour highlighted the critical role of community participation in addressing stigma and promoting resilience. Traditional healing practices, when integrated with modern psychological interventions, proved to be effective in ensuring holistic well-being.
3. While significant progress was made in reducing barriers to mental health care, challenges such as systemic inequalities, resource limitations, and cultural misunderstandings persist. These underscore the need for continued collaboration with tribal leaders, policymakers, and healthcare professionals to build sustainable support systems.
4. Moving forward, the initiative recommends prioritizing education, enhancing outreach programs, and investing in training for culturally competent mental health professionals. Empowering tribal societies to lead their mental health efforts will ensure that solutions remain rooted in their cultural heritage, promoting long-term mental and emotional well-being.

References:-

1. Bassett, D., Tsosie, U., &Nannauck, S. (2012). "Native Transformations in the Context of Culture." *American Indian and Alaska Native Mental Health Research.*
2. Gone, J. P. (2013). "Redressing First Nations historical trauma: Theorizing mechanisms for indigenous culture as mental health treatment." *Transcultural Psychiatry.*
3. Gupta, M., et al. (2017). "Mental health interventions in tribal India: Lessons learned." *Indian Journal of Psychiatry.*
4. Kirmayer, L. J., et al. (2009). "Cultural dimensions of depression and its treatment." *Psychiatric Clinics of North America.*
5. Mohatt, G. V., Thompson, A. B., Thai, N. D., &Tebes, J. K. (2014). Historical trauma as public narrative: A conceptual review of how history impacts present-day health. *Social Science & Medicine, 106*, 128–136.
6. Gone, J. P., & Calf Looking, P. E. (2011). American Indian therapeutic traditions in contemporary practice. *The Counseling Psychologist, 39*(5), 656–692.
7. Kirmayer, L. J., Brass, G. M., & Tait, C. L. (2000). The mental health of Aboriginal peoples: Transformations of identity and community. *Canadian Journal of Psychiatry, 45*(7),607–616. [Analyzes the role of identity and community in mental health outcomes.
8. Wexler, L. (2011). Intergenerational dialogue exchange and action: Introducing a community-based participatory approach to connect youth, adults, and elders in an Alaskan Native community. *International Journal of Qualitative Methods, 10*(3), 248–264.
9. Hiratsuka, V. Y., Rasmus, S. M., &Kanayurak, N. (2020). Participatory research approaches to enhance mental health services in rural Alaska Native settings. *American Journal of Community Psychology, 66*(1-2), 149–159.

****

Yaksha: From Folk Beliefs to The Royal Art

Dr. Ashish Kumar Chachondia*

***Assistant Professor (History) Institute for Excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.) INDIA**

Abstract : Throughout history, humans have created folk deities or demigods through their imagination to satisfy religious sentiments and fulfil wishes. These demigods have played an essential role in folk religion, revered for protection and prosperity. In Indian literature, these demigods are referred to as **Vyantardeva** or **Ardhadeva**. The **Shilpashastras** (scriptures) outline the rules for depicting these Vyantardevas in various parts of the temple. They were likely included in architecture based on prevalent beliefs among the people. These deities include **Yaksha-Yakshi**, **Navgrahas**, **Dikpalas**, **Gandharvas**, **and Kinnaras**. It's notable that other demigods, considered attendants of the main deity, also find a place in architecture. In Jainism, the concept of **Shasan-Devtas** (attendants) of the Tirthankara significantly increased the number of these demigods. In Indian art, the idols of all these semi-deities are engraved on various parts of temples according to scriptural guidelines. Indian artists often refer to these statues as human symbols for convenience. This article discusses the vivid forms of Yaksha depictions, with a special focus on Khajuraho art.

Keywords- Shilpa shastras, Itarjana, Vyantardeva, Brahmamaha, Shasandevs, Dikpalas.

Introduction - The mention of Yaksha-Yakshis is found in literature from the Vedic era, although the Vedic Aryans did not recognise the Yaksha gods. In Vedic literature, Yakshas have been named *'Itarjana'* or *'Punyajna'*.[1]There are some references to Yaksha worship in the Rigveda. Mitra and Varun have been prayed to remain free from the influence of Yakshas.[2]At one place in Rigveda, Agni has been forbidden from going where people who worship Yakshas live.[3]It is clear that the worshippers of Yakshas must have been those who did not believe in the Vedic religion and tradition. By the time of the post-Vedic period, the importance and influence of Yakshas had increased. The Atharva Veda mentions that all the prominent persons of the state went to pay their respects to the Yaksha-devas.[4]In this way the Yaksha beliefs and idols must have gradually found their place in the ancient society.

In the last phase of the Vedic period and the beginning of the Sutra period, there seems to be an increase in Yaksha beliefs and imaginations. Detailed descriptions of Yaksha worship in the Mahabharata and theAshtadhyayi are also proof of this. At this time folk beliefs and literature were establishing Yakshas in different forms, and festivals related to them had also started. In the Gita, Yakshas have been described as the deities worshipped by people of royal nature.[5] In the Mahabharata, a festival called *Brahmamaha* has been mentioned which was related to Yaksha worship and in which people of all four *varnas* participated.[6] There is also a mention of pilgrimage places like Rajgriha where Yakshas were worshipped daily. In theAshtadhyayi, Yaksha names like *Sheval*, *Supari* and *Vishal* have been enumerated while mentioning the naming of a son.[7] In the Ramayana, there is a reference to the boon 'YakshatvaAmartvach' given by the gods.[8] It is clear from this that Yakshatva and immortality were considered the same. According to Zimmer, in this era, Yakshas were considered representatives of underground mineral reserves, precious metals and the great powers of the earth.[9] The social status of Yakshas kept increasing and in the Puranic era, Yakshas were recognized as semi-gods who punished the sinners and fulfilled the wishes of religious people.[10]

The worship of Yakshas in literature had been present in society since the Vedic era, and Yaksha sculpture found a place in art only from the Maurya-Sunga period. Two forms of art can be seen during this period - royal and folk art. The folk artists of the Maurya period started making huge, bulky Yaksha-Yakshi sculptures to fulfil the religious sentiments of the common people, examples of which are the Parkham Yaksha, the Yakshi of Didarganj and other Yaksha-Yakshi artefacts found from Besnagar. The portrayal of Yaksha significantly increased in the Buddhist art of the Sung period.There is an abundance of Yakshaon the stupas of Bharhut and Sanchi. Yakshas have also been found in large numbers in Mathura art during the first and second centuries. Thus, Yakshas continued to have a place in folk and royal art till the Gupta period.

From the post-Gupta period, Yakshas were given a classical form, their iconographic characteristics were determined and from the sixth century AD, they started being depicted as *Shasandevs* (attendants) with the images of the Jaina Tirthankaras. In the early medieval period, Yakshas had attained their ultimate importance in temple architecture, they were given place in temples in various forms, such as *BharvaahiKeechak*(load bearers), *Kuber Dikpal*(the guardian of the north), *Jain Shasan Devas* (attendants of the Tirthankaras) etc. But at this time, Yakshas were not recognised as the main deity anywhere, they were always depicted as *Vyantar Devas* (demigods) only. Independent idols of Yakshas have been found very rarely under the art of Brahmin religion. Mainly the depiction of *YaksharajKuber* is found, who is usually depicted as a *Dikpal*. Some independent *Madhupayi Kuber*images have also been made. Here this subject has been explained mainly in the context of the art of Khajuraho.

In Jain texts, Sarvanubhuti and Ambika are first mentioned as a Yaksha-Yakshi couple in around the sixth century AD. These pairs were the most popular everywhere in depictions. In the texts of the eighth-ninth century, a list of twenty-four Yakshas and twenty-four Yakshis of twenty-four Tirthankaras is found. The independent characteristics of these Yakshas and Yakshis have been determined by the eleventh-twelfth century AD. Statues of Tirthankaras with Yaksha-Yakshi pairs are found in sufficient numbers in the art of Devgarh and Khajuraho.

Yakshas and Yakshis have been given special importance in the early medieval Jain art. They are mainly depicted in the entourage of the Tirthankara under the *ShasanDev*. In independent statues, they are usually shown sitting in *Lalitasana,* and with a small Tirthankara figure at the top. The characteristic features are depicted as per the instructions of the Digambara scriptures.[11]Some statues with independent features are also found, for example, *Matanga* and *Siddhayaikaa*of Tirthankara Mahavira have been carved with independent features.

In Jain art, the *ShasanDev*as(Yaksha-Yakshi) have been placed on the right and left sides of the throne of the Tirthankara respectively. These Yaksha-Yakshi are generally two-armed or four-armed and are seated in Lalita Mudra. Among the Tirthankara idols with which the Yaksha-Yakshi couple is depicted, the most popular is Rishabhdeva, the first Tirthankara.The Shasan-Devas of Rishabhdeva are Gomukh Yaksha and Chakraeshwari (Apratichakra) Yakshi.[12]Chakraeshwari and Gomukh have been depicted as four-armed. Along with Gomukh Yaksha, a bull vehicle is also displayed. Gomukh has a mace and a fruit in its two hands. Chakraeshwari has Varada mudra, mace and conch in her three hands. Only two idols of Tirthankara Abhinandannath have been found in Khajuraho. Their Yaksha-Yakshi are Yakshaeshwar (or Ishwar) and Kalika (or Vajrashrikhala). In one example, the two-armed Yaksha-Yakshi has Abhaya mudra and fruit in his hands.[13] In another example, the Yaksha-Yakshi are two-armed and equipped with Abhaya mudra and fruit.

The Yaksha-Yakshi of Tirthankara Chandraprabha are Vijay (or Shyam) and Bhrikuti (or Jwala). In the Chandraprabha idol obtained from Parshvanath temple, the two-armed Yaksha-Yakshi has Abhaya mudra and fruit in his hands.[13] In another example, the Yaksha is two-armed and the Yakshi is four-armed. The Yaksha has fruit and a money bag in his hands and the Yakshi has Varada mudra, book and Kamandalu in her three undistinguished hands.[14]

The sixteenth Tirthankara is Shantinath, his Yaksha-Yakshi are Garuda (or Varah) and Nirvani (or Mahamanasi). The Yaksha-Yakshi statues on both sides of the huge statue of Shantinath in Kayotsarga Mudra installed in the Shantinath temple were probably installed later.[15]These Yaksha-Yakshi statues with common characteristics do not have any classical specialities.

The Yaksha-Yakshi of Tirthankara Neminath are Gomedh and Ambika (or Kushmandi). In the Neminathimages obtained from Khajuraho, Ambika is always depicted as the Yakshi, but the Yaksha Sarvanubhuti (Kuber) has been depicted. The Yaksha-Yakshi of Tirthankara Parshvanath is Dharnendra and Padmavati. Dharnendra and Padmavati have been shown on the ends of the throne in some Tirthankara images and other examples, they have been depicted nearby in Sthanaka Mudra (standing position) with a snake hood.

The Yaksha-Yakshi of the last Tirthankara Mahavira are *Matang* and *Siddhayaika*. Yaksha-Yakshi couples have been depicted only in a few examples. In the Mahavira sculpture in the sanctum of the Parshvanath temple, the Yaksha-Yakshi are two-armed. In another example, the Yaksha-Yakshi are four-armed. The vehicle of the Yaksha is a lion and a bag of money, a spear, a lotus and a stick are depicted in his hands. Yakshi is also riding a lion and has a chakra, lotus and conch in her hands.

Apart from the combined Yaksha-Yakshi statues described above, independent Yaksha-Yakshi statues have also been shaped in the art of Khajuraho. The prominent ones among these are *Manovega*, *Ambika*, *Padmavati* and *Siddhayaika*. A brief description of these independent Yaksha-Yakshi statues is as follows-

Sarvanubhuti Yaksha - This Yaksha must have been the most popular in Khajuraho. Its clear influence is visible in other Yaksha depictions as well. Sarvanubhuti Yaksha is the Jain form of *YaksharajKuber*. In two of its hands, lotus and the other two hands, *Kalash* and a bag of money are displayed. The other two statues are engraved on the pillars near the Shantinath temple. Out of these two statues, one has *Abhaya*mudra, a lotus and a bag of treasure in its three remaining hands. Two treasure pots (*Nidhi-Kalash)* are also engraved near his feet.

Chakraeshwari Yakshi - This is the Yakshi of Tirthankara Rishabhdeva. The Chakraeshwari found in Khajuraho are generally adorned with crowns. In Khajuraho,

Chakraeshwari has been depicted in various forms such as *Dwibhuja, Chaturbhuja, Shatbhuja, Ashtabhuja,* and *Dashbhuja* etc. The depiction of *Garudvahan* and *Chakra* is according to tradition, but the depiction of conch and mace in hands shows Vaishnava's influence.[16]Thirteen independent idols of Chakraeshwari are available in Khajuraho, out of which nine are depicted on the door parts.

Manovega - Animage of Manovega Yakshi is preserved in the Archaeological Museum of Khajuraho.[17] Her vehicle, a horse, has also been depicted. Three hands of the four-armed Yakshi standing in a T*ribhanga* posture have been broken, and one remaining hand holds a lotus in a circular shape. Attendants are carved on both sides.

Ambika - Ambika is the Yakshi of TirthankarNeminath. Jain texts mention her vehicle as a lion and a child in her left hand.[18] In Khajuraho, more independent images of Ambika have been found than those of other Yaksha-Yakshi.

Padmavati - Only three independent images of Padmavati, the Yakshi of the twenty-third Tirthankara Parshvanath, have been found. In the sculpture obtained from the Adinath temple,Padmavati, in *Lalitasan*pose, has Abhaya mudra, and lotus in her hands, and *KukkutaVahana* is also depicted.

Kichaka - Apart from the Jain *Shasandeva* Yaksha idols, a special class of Yakshas is seen on the pillars of the temple, which appear to be supporting the roof of the temple with their arms. Mention of this load-bearing form of Yakshas is found in the Ramayana period.[19] As load-bearing, Yakshas indicate labour, devotion, patience and courage. According to Kumaraswamy, dwarf Yakshas are related to the earth. Yakshas are meant to bear the weight of the earth. The initial form of their depiction in art is found in the architecture of the Sanchi Stupa of the Shunga period, where these Yakshas bear the weight of the door arches on their strong shoulders. In art, these load-bearing Kichakas are presented with the facility of four-sided viewing. This is the form of these load-bearing Kichakas shown in Khajuraho. In temples, these load-bearing Kichakas have been carved on the top of pillars supporting the roof with their arms. The main feature of these Yaksha figures is their various forms. They are shown as two-armed, four-armed and six-armed. In all the depictions the upper arms have been used to support the roof but the postures of the remaining arms are different. Usually conch, sword, mace, fruit, garland, snake etc. are shown in their free hands. In most depictions, they are blowing the conch by holding the conch in two hands. Most examples of snake depictions in hands are found in Vishwanath temple. In some depictions, the namaskar posture is also shown. The depiction of figures in special attractive postures is found in the Parshvanath temple. There, in the Chaturbhuj (four-armed) idols, Abhaya mudra and fruit are shown in two free hands. These are the postures of flying Kichaka. On one of the pillars of the Parshvanath temple, there is also a figure of a six-armed female Kichaka. A conch is shown in its hands. In almost all places, the symbol of Shrivatsa is marked on the chest of these bearers. Strange expressions are also shown on their faces. Mostly all of them are shown smiling. But in some places, they can also be seen in a fierce form and deformed or ugly.

Thus, various auspicious forms of Yakshas are depicted in art. According to Kumaraswamy[20], Yakshas, in all their forms, create an auspicious atmosphere and directly provide prosperity and happiness to their worshippers. By the time art began adopting multiple forms to depict demigods like Yakshas, folk traditions had gradually abandoned the belief in these deities.

References:-

1. Atharva Veda 8.10.28
2. Rig Veda 7.6.1.5
3. Same 4.3.13
4. Atharva Veda10.18.15
5. Geeta 17. 4
6. Mahabharata, Adiparva, 152.18, Vanparva 83. 9. 84. 104
7. Ashtadhyayi 5. 3. 84
8. Ramayana 3. 11. 94
9. Zimmer, Heinrich "Myths and Symbols", p. 59
10. Vamana Purana 34. 44. 35-38
11. Tiwari, Maruti Nandan Prasad "*Khajuraho Ka Jain Puratatva*" Pg. 36
12. Tiwari, Marutinandan Prasad "*Khajuraho Ka Jain Puratatva*" Appendix 1 p. 264
13. Parshvanath Temple, Garbhagriha, Western Wall
14. Temple 1/13
15. Tiwari, Marutinandan Prasad "*Khajuraho Ka Jain Puratatva*" p. 47
16. Tiwari, Marutinandan Prasad "*Khajuraho Ka Jain Puratatva*" page 58
17. Archaeological Museum Khajuraho No. 940
18. Pratishthaasarasangraha5.64.66. Pratishtha asaroddhar 3. 176
19. Ramayana 5.8.7
20. Kumaraswamy "Yakshas" Part 2, page. 13

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Identify Various Religious Practices which Conflict with Human Rights in India

Dinesh Chaudhary* Dr. Rekha Mali**

***Research Scholar, Pacific Academy of Higher Education and Research University, Udaipur (Raj.) INDIA**
**** Department of Political Science, Pacific College of Social Science and Humanities, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

Abstract : Religious practices play a central role in shaping cultural identities and values worldwide. However, certain practices can sometimes conflict with internationally recognized human rights principles. This paper explores various religious practices across different faiths that have raised concerns regarding human rights violations. Examples include gender discrimination, such as restrictions on women's participation in religious activities or leadership, and practices like child marriage and female genital mutilation, which are often justified through religious customs.

By identifying these conflicts, the paper highlights the need for a careful balance between respecting religious freedom and upholding fundamental human rights. It calls for ongoing dialogue between religious leaders, policymakers, and human rights advocates to reconcile these tensions, ensuring that religious traditions evolve in ways that align with modern human rights frameworks, while preserving cultural diversity.

Introduction - India is a diverse and pluralistic nation, home to multiple religions and a rich cultural heritage. Religious freedom is enshrined in the Indian Constitution, reflecting the country's commitment to upholding the rights of individuals to practice and propagate their faith. However, in a nation as religiously diverse as India, conflicts between religious practices and the principles of human rights often emerge. While religion plays an important role in shaping societal norms, some religious customs and traditions may contradict the universal principles of human rights, which guarantee equality, non-discrimination, and personal freedoms for all individuals(Deniz, 2023; Trigg, 2012).

This research paper seeks to explore the intricate balance between religious practices and human rights in India. Specifically, it aims to identify religious practices that, while rooted in longstanding cultural and religious traditions, can conflict with modern human rights standards. Examples include restrictions based on gender, caste, or sexual orientation, practices involving minors, and constraints on personal freedoms such as conversion or freedom of expression(Karst, 1990; Ojha, 2024).

The focus of this study is on analyzing these points of conflict, questioning how such practices align with human rights as defined by national and international legal frameworks. India's legal system has often been tasked with reconciling these differences, and numerous landmark cases have set precedents in this regard. By understanding these areas of tension, this research aims to shed light on how religious freedoms can be preserved while ensuring that fundamental human rights are not undermined.

Objective: The primary objective of this research is to critically analyze the intersection between religious practices and human rights in India, focusing on identifying where these two important aspects of society come into conflict. India, as a secular nation with deep-rooted religious traditions, guarantees the right to religious freedom under its Constitution. At the same time, it is committed to upholding human rights, including equality, freedom from discrimination, and personal dignity, as defined by both national and international standards(Sangiovanni, 2017; Steinmann, 2016).

This research aims to:

Identify Specific Religious Practices: Examine various religious customs and practices prevalent in India that have raised human rights concerns. These may include gender-based restrictions, caste-based discrimination, child-related religious rites, and religious opposition to LGBTQ+ rights.

Highlight Areas of Conflict: Explore how these practices conflict with universally recognized human rights principles, such as gender equality, freedom of expression, and the right to personal freedom and dignity.

Analyze Legal and Social Implications: Investigate how Indian courts, legal frameworks,and societal norms have responded to these conflicts, focusing on case laws and legal precedents that illustrate the struggle to balance religious freedom and human rights.

Propose Solutions for Reconciliation: Suggest potential legal and policy solutions to harmonize religious freedom with the need to protect individual rights, ensuring that both religious diversity and fundamental human rights are

respected.

Through this study, the research will contribute to a deeper understanding of the challenges and potential solutions for ensuring that religious freedom and human rights coexist harmoniously in India's complex social landscape.

Importance of Study: The topic of identifying conflicts between religious practices and human rights is of paramount importance in India's socio-political and legal landscape(Grewal, 2016). India is one of the most religiously diverse nations in the world, with a population that practices a wide variety of faiths, including Hinduism, Islam, Christianity, Sikhism, Buddhism, Jainism, and others. In this pluralistic society, religion significantly influences culture, law, and daily life. However, the co-existence of religious traditions and modern human rights principles often leads to tension, especially when age-old religious customs are seen to conflict with the rights of individuals guaranteed by both national laws and international human rights standards(Edmunds, 2023).

Key Reasons Why This Study is Crucial:

Religious Diversity and Secularism: India's Constitution grants the right to religious freedom under Articles 25-28, allowing individuals to freely profess, practice, and propagate their religion. At the same time, India's commitment to secularism requires the state to remain neutral in matters of religion, ensuring that no particular faith is given preference. In practice, balancing religious freedom with the protection of human rights can be complex. This study helps illuminate how such balance is negotiated and where the challenges lie, especially in maintaining secularism while respecting deeply held religious beliefs.

Tensions Between Tradition and Modernity: Many religious practices in India have roots that date back centuries, yet some of these practices may now appear to conflict with modern human rights principles. Practices that involve gender discrimination, caste-based exclusions, or opposition to LGBTQ+ rights often clash with ideals of equality and personal freedoms. This study is vital to understanding how India's legal and social systems address these conflicts, helping to modernize religious traditions without undermining their cultural significance.

Legal and Constitutional Challenges: India's legal framework is frequently called upon to resolve conflicts between religious practices and human rights. Landmark court cases, such as the Sabarimala verdict (2018) on women's entry into temples, the decriminalization of homosexuality (2018), and the abolition of Triple Talaq (2017), have highlighted the judiciary's role in balancing religious beliefs with fundamental rights. Understanding these legal challenges is critical to proposing policies that protect both individual rights and religious freedoms.

Human Rights in a Global Context: India, as a signatory to international human rights conventions like the Universal Declaration of Human Rights (UDHR) and the International Covenant on Civil and Political Rights (ICCPR), is obligated to uphold universal human rights standards. This study is crucial in evaluating how India fulfills its international obligations while maintaining its commitment to religious pluralism. It also adds to the global discourse on how countries with diverse religious practices can reconcile these with human rights.

Social Cohesion and Inclusive Development: Addressing conflicts between religious practices and human rights is vital for promoting social harmony and inclusive development. Religious conflicts that infringe on the rights of women, marginalized castes, or minorities can exacerbate social inequalities and divisions. This research is essential in identifying ways to bridge these gaps, ensuring that religious traditions do not become a source of social injustice.

Policy Formulation and Reform: The findings from this study will be valuable for policymakers who must navigate the delicate balance between protecting religious freedom and ensuring the enforcement of human rights. Recommendations for legal and policy reforms can emerge from this research, providing a framework for addressing conflicts while respecting India's rich religious diversity.

Research Questions:

A. What are the main religious practices under scrutiny? The research will focus on identifying specific religious practices that have raised concerns regarding potential conflicts with human rights principles. Some of the key practices under scrutiny include:

Gender-Based Restrictions: Religious traditions that impose restrictions on women, such as barring them from entering places of worship (e.g., Sabarimala Temple) or prescribing dress codes that are seen as discriminatory.

Caste-Based Practices: Practices justified by religion that perpetuate caste-based discrimination, such as exclusion from religious ceremonies or segregation in temples.

Opposition to LGBTQ+ Rights: Religious objections to the rights of LGBTQ+ individuals, including same-sex relationships and gender identity, which often conflict with the movement for equal rights.

Religious Rites Involving Minors: Practices such as early marriage or initiation rites for children that may infringe on the rights of the child, particularly in terms of education, health, and freedom from exploitation.

Restrictions on Freedom of Expression and Conversion: Religious norms that limit individuals' ability to freely express their beliefs or convert to other religions, sometimes resulting in social ostracization or legal challenges.

B. Which human rights do these practices potentially conflict with? The religious practices identified above may potentially conflict with various human rights as outlined by national laws and international agreements. The specific human rights at risk include:

Right to Equality (Article 14 of the Indian Constitution,

UDHR Article 1): Practices that discriminate based on gender, caste, or sexual orientation may violate the fundamental right to equality.

Right to Non-Discrimination (ICCPR Article 26, CEDAW): Practices that result in discrimination, especially against women, caste minorities, or LGBTQ+ individuals, conflict with the right to be free from discrimination.

Right to Freedom of Religion (Article 25 of the Indian Constitution, UDHR Article 18): While religious freedom is protected, the practice of one's religion should not infringe on the rights of others, such as the right to personal autonomy or the rights of minors.

Right to Freedom from Harm (CRC Article 19): Practices that may endanger children's physical or mental health, such as early marriage, initiation rites, or forced religious education, violate the rights of the child to be free from harm.

Right to Freedom of Expression and Thought (UDHR Articles 18 and 19): Restrictions on religious conversions or penalties for leaving a particular religion conflict with the fundamental right to freedom of expression and belief.

Right to Dignity (UDHR Preamble, ICCPR Article 10): Practices that undermine individual dignity, such as untouchability or forced seclusion of menstruating women, violate the human right to dignity and respect.

Religious Freedom in India

Brief History of Religious Freedom in India:

India's history of religious freedom spans millennia, shaped by its rich and diverse cultural and religious landscape. Here is an overview:

1. **Ancient India:** India has long been home to major world religions, including Hinduism, Buddhism, Jainism, andlater, Sikhism. Ancient texts like the Vedas and Upanishads reflect a spirit of inclusivity, although the caste system introduced social stratification(Myrvold et al., 2024). Buddhism (6th century BCE): With leaders like Emperor Ashoka, who promoted religious tolerance after his conversion to Buddhism, India saw the official encouragement of non-violence and respect for different religious traditions.

2. **Medieval India:** The arrival of Islam (from the 7th century onward) through trade, and later with the establishment of Islamic empires, marked a significant phase(Lailatun&Mawardi, 2023). The Mughal Empire (1526-1857), particularly under Emperor Akbar, embraced policies of religious tolerance, known as Sulh-e-kul (peace for all), promoting dialogue and harmony among different faiths. While some later Mughal rulers, like Aurangzeb, reversed these policies, the coexistence of Hinduism, Islam, Sikhism, and other faiths continued to shape the Indian social fabric.

3. **Colonial Era (British Rule):** The British East India Company, which started as a trade entity in the 17th century, increasingly controlled large parts of India by the 18th and 19th centuries.

The British adopted a policy of religious neutrality, largely to prevent rebellion in the deeply religious Indian society. However, British missionary activities sometimes caused tensions.

The Indian Rebellion of 1857 saw religious freedom become a rallying cry, as British policies affecting religious customs were cited as reasons for the revolt.

4. **Indian Independence Movement:** During the 19th and 20th centuries, leaders like Mahatma Gandhi emphasized religious harmony, coining the term Sarva Dharma Sambhava (equal respect for all religions).

The Indian National Congress, under leaders like Gandhi and Jawaharlal Nehru, promoted religious freedom as a cornerstone of the fight for independence from the British(Ambekar, 2023).

5. **Post-Independence India:** The Indian Constitution of 1950 enshrined religious freedom as a fundamental right. Article 25 guarantees the freedom to profess, practice, and propagate religion, while Article 15 prohibits discrimination based on religion.

India was declared a secular state, with no official religion, ensuring equality for all religions in law(Manhas, 2023).

6. **Modern Challenges:** Despite constitutional guarantees, religious freedom has faced challenges in post-independence India, including communal tensions and riots, particularly between Hindu and Muslim communities. In recent decades, debates about religious conversion, cow slaughter laws, and interfaith marriages have stirred discussions around the limits and practice of religious freedom.

The rise of Hindu nationalism has led to concerns about growing intolerance towards minority faiths, sparking debates about India's secularism and its future.

Conclusion: The evolution of religious freedom in India reveals a complex history of tolerance, coexistence, and at times, conflict. From ancient traditions promoting inclusivity, through the religiously diverse rule of the Mughal Empire and the colonial period's balancing act, to the establishment of religious freedom as a constitutional right in independent India, the nation's journey underscores the significance of protecting this freedom.

While India's Constitution guarantees religious equality, modern challenges such as communal tensions, political influences, and rising nationalism pose threats to this ideal. This history highlights that religious freedom in India, though constitutionally protected, remains a dynamic and evolving issue. To ensure a harmonious balance, ongoing dialogue between religious institutions, legal frameworks, and human rights bodies is essential. Such dialogue can foster mutual respect, uphold constitutional values, and ensure that religious freedom thrives in a way that respects the diversity and pluralism integral to India's identity. This cooperation is crucial to sustaining peace and protecting the rights of all citizens, regardless of faith.

References:-

1. Ambekar, S. (2023). *Historical Development of the Indian Constitution: A Comprehensive Analysis*.
2. Deniz, O. M. (2023). Universal Human Values and Religious Beliefs in a Globalizing World. *Dialogo*, *9*(2), 91–99.
3. Edmunds, A. J. (2023). *Human Rights, Security Politics and Embodiment*. Anthem Press.
4. Grewal, K. K. (2016). *The socio-political practice of human rights: Between the universal and the particular*. Routledge.
5. Karst, K. L. (1990). Boundaries and reasons: Freedom of expression and the subordination of groups. *U. Ill. L. Rev.*, 95.
6. Lailatun, N., &Mawardi, K. (2023). Islamization of The Archipelago: A Study of The Arrival and Spread of Islam in Indonesia and Malaysia. *Al-Munqidz: Jurnal Kajian Keislaman*, *11*(1), 10–30.
7. Manhas, A. (2023). Religious Freedom in Indian Society: Challenges and Solutions. *Indian J. Integrated Rsch. L.*, *3*, 1.
8. Myrvold, K., Plank, K., & Sardella, F. (2024). Indian Religions. In *The Study of Religions in Sweden: Past, Present, and Future* (pp. 95–111). Bloomsbury Publishing.
9. Ojha, A. (2024). *Sexual Minorities and the Right to Family: Constitutional and Legal Rights*.
10. Sangiovanni, A. (2017). *Humanity without dignity: Moral equality, respect, and human rights*. Harvard University Press.
11. Steinmann, R. (2016). The core meaning of human dignity. *Potchefstroom Electronic Law Journal/ PotchefstroomseElektronieseRegsblad*, *19*(1).
12. Trigg, R. (2012). *Equality, freedom, and religion*. Oxford University Press.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Examining the Impact of Consumer Perception on the Demand for Organic Food Products in India

Dr. Preeti Anand Udaipure*

***Assistant Professor, Govt. Narmada College, Narmadapuram (M.P.) INDIA**

Abstract : This study examines how consumer perception affects the demand for organic food items in India, with a particular emphasis on the variables that affect consumer knowledge and buying patterns. According to the study, 56.7% of respondents said social media was their main source of information, demonstrating the critical role it plays in spreading knowledge about organic products. 64% of respondents say they only seldom buy organic food, and 12% say they never buy it at all, indicating a substantial disconnect between knowledge and actual shopping behavior despite high awareness. This disparity is ascribed to obstacles including the increased price of organic goods, their restricted availability, and doubts over their genuineness. The results indicate the need for a multifaceted strategy to increase demand for organic food, which includes making organic products more affordable, making sure that labels are transparent to ensure authenticity, and launching awareness campaigns that emphasize the long-term health and environmental advantages of eating organic food. By tackling these issues, India's organic food business will be in a better position to meet consumer demand and see long-term growth.
Keywords: Consumer Perception, Organic Food Products, India, Consumer Awareness, Purchasing Behavior, Organic Products, Health, Environmental Benefits, Organic Food Market.

Introduction - Compared to modern and conventional food, consumers believe that organic food is far healthier. According to their beliefs, "Eat healthily and stay fresh." Positive consumer perceptions influence the market and affect how much demand there is for the product. Because of their nutrients, little processing, natural flavor, lack of fertilizers, and lack of preservatives, consumers are growing more interested in organic foods. Because organic foods are grown without the use of chemicals or synthetic materials, consumers believe that eating organic food is natural and healthful. Regardless of their age or financial status, the marketers have also made the initiative to increase its popularity across all age groups and industries. In the current organic environment, some eateries also serve organic cuisine. The Indian food sector was estimated to be worth Rs. 2,500 crores in 2015, and it is still expanding quickly, according to certain data. According to data, the market for organic foods has enormous potential in the years to come.

There are many gatherings of customers who like to buy natural food. Contrasted with men, ladies are bound to buy natural food since they care more about their families' wellbeing. Major league salaries purchase natural food in light of the fact that the medical advantages of the item offset the extra cost. Since they are wellness aficionados and continually open to recent fads, youthful grown-ups and moderately aged individuals are the most well-known age bunches who likewise pick natural food. Individuals with more elevated levels of instruction are very much aware of the meaning of ecological maintainability and wellbeing. They are aware that using chemical fertilizers continuously can have negative consequences in a number of ways. It can reduce the fertility of crops and soil that have been cultivated using harmful chemicals, herbicides, and fertilizers. This can lead to several chronic conditions. For long-term advantages, consumers are eager to purchase organic food items. Customers are aware of the advantages of organic goods. On occasion, people are prepared to pay the higher price because of the long-term advantages they offer. They do not, however, defend the product's quality or benefits when they purchase it. The key query is: how can people determine whether the item they purchased is organic? Therefore, it might be said that the customer is in a difficult situation. This is where the government and marketers step in. Organic food is becoming more and more popular worldwide. Due to growing health consciousness, there is a growing demand for organic food. But consuming organic food by itself won't keep you healthy and fit. It's just one method of staying in shape. To increase demand, they must focus on a few key elements. Boost the amount of organic food produced. Campaigns to educate consumers on the advantages of eating organic food, price

control, and the significance of environmental sustainability should be launched. Organic food is being promoted by its producers and marketers in an effort to increase consumer demand. The study comes to the conclusion that the organic food business may generate a lot of buzz due to consumers' favorable opinions. The consumer group determines everything. The producers will have to make more organic food items if the demand for organic food rises, which will boost the demand for organic food goods. However, the producers won't meet their sales goals if there is no demand for organic food goods.

Importance of consumer perception in shaping demand for organic food: Because it directly affects consumer behavior, purchasing decisions, and market trends, consumer perception is a key factor in determining the demand for organic food products. Because organic food is frequently seen as healthier, more natural, and environmentally friendly than conventional food, consumers are more likely to choose it despite its higher price.

1. **Health and Safety Concerns**: Many customers regard organic food as healthier due to the absence of synthetic pesticides, fertilizers, and preservatives. This view motivates many, particularly those with health-conscious lives, to favor organic products, believing they are better for overall well-being and free from dangerous chemicals.
2. **Environmental Impact**: Organic food is now seen as more environmentally friendly due to increased knowledge of environmental sustainability. Because they feel that organic products improve soil health, lessen environmental pollution, and foster biodiversity, consumers are more likely to buy them.
3. **Trust and Authenticity**: Purchase decisions are influenced by consumers' perceptions of the authenticity of organic products. Customers are more likely to buy products if they believe they are authentically organic and not misled. Transparent labeling, certifications, and marketing initiatives frequently help to build this trust.
4. **Social Influence**: Customer opinions are greatly influenced by recommendations from peers, family, and social media. Demand can be increased by bolstering customer conviction in the advantages of organic food through positive reviews, testimonials, and awareness initiatives. If consumers witness others in their neighborhood or social circle adopting organic products, they are more inclined to try them themselves.
5. **Price Sensitivity and Perceived Value**: Although organic food is frequently thought of as being more costly, customers are prepared to pay extra for organic products because they believe they have long-term health and environmental benefits. However, some groups of people, especially those who are price conscious, may be deterred by unfavorable opinions about how affordable organic food is.
6. **Marketing and Education**: Good marketing techniques and awareness-raising initiatives that emphasize the advantages of organic food items can further influence consumer attitudes and increase the accessibility and appeal of organic foods to a wider range of people. Customers' perceptions change favorably when they are informed about the actual advantages of eating organic food, which raises demand.

Literature Review

Nagaraj (2021)sought to examine how health consciousness (HCN) affected organic food items' purchasing intention (PIN) in India, a growing market for organic food consumption. The study included the serial mediation of consumer attitude (ATT), which is based on the Theory of Planned Behavior, and food safety concern (FSC) as important constructs for the indirect effect of health consciousness on the purchase intention. The mediating function of FSC in the effect of HCN on ATT or their PIN is not well supported by empirical data. Furthermore, there isn't a thorough study that takes into account all four of the aforementioned aspects regarding the consumption of organic food in a developing nation like India. Using the mall intercept method, 438 useful replies were gathered from customers who frequently visited five upscale organic food stores in a major Indian metropolis. Underlying condition demonstrating (SEM) was utilized to explore the speculations in regards to the immediate and roundabout impacts of HCN on PIN as well as the sequential intervention of FSC and ATT. Subsequent to deciding the decency of-spasm of the reasonable model, CFA/SEM examination showed that FSC meaningfully affected ATT and PIN straightforwardly or as a middle person of the impact of HCN on ATT. Additionally, HCN had no discernible effect on FSC. Additionally, ATT did not significantly mediate the effect of FSC on PIN. However, as serial mediators, FSC and ATT work together to greatly affect how HCN affects PIN. Based on the study's findings, retailers and marketing experts should develop tactics that highlight the specific health benefits and enhancements that consumers would experience after ingesting their organic products. Discussions are held regarding theoretical contributions and practical implications.

Kushwah et al. (2019)investigated the relationship between various consumer obstacles and purchasing decisions (intentions to buy, intentions to consume ethically, and choosing behavior) at varying degrees of environmental concern and buying involvement. Even though there is an increasing demand for organic food worldwide, much less organic food is consumed by the general public. Utilizing the hypothetical system of development opposition hypothesis (IRT), the ongoing review expects to fathom the central reasons for buyer hesitance toward eating natural food. An underlying condition displaying approach was utilized to look at the 452 purchasers of information. The findings demonstrated that both purchasing intentions and intentions for ethical consumption were negatively correlated with value barriers. Purchase intention and ethical

consumption were revealed to directly affect decision-making behavior. Furthermore, buy intention acts as a mediator in the link between ethical consumption intention and decision behavior. On the basis of environmental concerns and the degree of purchasing activity, no notable distinctions have surfaced. The results of the study improve the present knowledge of the purchasing habits of the expanding organic food community, which benefits public policymakers, marketers, suppliers, and consumer associations.

Dangi et al. (2020)inspected the natural food class' buyer dynamic styles (CDMS). The Purchaser Styles Stock (CSI) apparatus created by Sproles and Kendall in 1986 was adjusted and utilized with regards to natural food items. Also, two different develops — natural cognizance and wellbeing awareness — that were found in the writing were incorporated. Comfort inspecting was utilized to assemble reactions from 527 youthful purchasers, and underlying condition demonstrating and exploratory component investigation were utilized for examination. Five of the eight CDMS styles—recreational (hedonistic shopping awareness), brand consciousness, price consciousness, brand loyalty, and perfectionism (high quality consciousness)—reported substantial influences on consumers' desire to purchase organic food. Additionally, it was determined that both of the other constructs—environmental consciousness and health consciousness—were significant. The study's conclusions will assist organic food marketers in determining the elements that are crucial for consumers to buy organic food.

Sadiq et al. (2020)investigated how customer optimism and pessimism, two dispositional qualities, affected the uptake of organic food. Moreover, it surveys how ecological concern intervenes the connection between dispositional characteristics and the admission of natural food. Amazon Mechanical Turk was utilized to regulate an internet based review. The discoveries demonstrate that customers who are more hopeful eat more natural food than the individuals who are more critical. The discoveries likewise show that individuals' utilization designs are emphatically affected by ecological worries, in this way even critical buyers might begin eating natural food whenever they are made to think often about the climate. The principal finishes of this study show that natural concern is a critical indicator of food utilization conduct and that changing clients' negative viewpoint to a positive one might be capable.

Kushwah et al. (2019) Global demand for food grown organically has been continuously increasing over the past few decades. As a result, there is now more scholarly interest in comprehending the various incentives and obstacles that underlie the use of organic food. However, many published investigations have a wide and dispersed scope. There is a dearth of research that thoroughly reviews and analyzes the many barriers and motivations and how they relate to purchasing decisions. The ongoing review presents a careful assessment of the writing on different motivations and deterrents and how they connect with choices to purchase natural food. The audit considered 89 experimental examination altogether. The found inspirations and obstructions were classified utilizing two notable hypothetical systems: the hypothesis of utilization values and the advancement opposition hypothesis. Clear measurements on the picked examinations, a careful rundown of the inspirations and boundaries referenced in the picked examinations utilizing the hypothesis of utilization values and development obstruction hypothesis, an order of the inspirations and hindrances in light of customer contribution, research plan, and nation status, a structure on the connection between thought processes, boundaries, and buy choices, and suggestions for scholastics, chiefs, and policymakers keen on better comprehension issues connected with natural food utilization are the fundamental consequences of this deliberate writing survey.

Wang et al. (2020)inspected the interceding impacts of seen food quality and cost awareness on the connection between natural cognizance and the affinity to buy natural food. Buyers dynamically request more secure and better things as their buying power and utilization information rise. Besides, clients are focusing closer on natural food. The objective is to give new understanding into how clients view and plan to act with regards to natural food. Exact discoveries, in view of test information from 518 clients in different Chinese food dealers, show that purchasers' goals to purchase natural food are emphatically affected by ecological concern. The connection between natural awareness and the goal to buy natural food is intervened by apparent food quality. The relationship between the expectation to buy natural food and saw food quality is directed by cost responsiveness. Also, through saw food quality, cost awareness mitigates the circuitous effect of ecological cognizance on the expectation to buy natural food.

Research Methodology:

a. Research Design: The study uses a descriptive research approach to investigate where Indian consumers obtain information about organic products and how frequently they buy them. A thorough examination of customer awareness, preferences, and behavior with regard to organic products is made possible by this design.

b. Data Collection: Data was collected from respondents using a standardized questionnaire. Sections on the sources of information about organic products and the frequency of purchases were included in the questionnaire. To guarantee varied participation, the poll was disseminated via both online and physical media. 125 responders in all gave thorough and accurate answers.

c. Research Area: In order to record a range of consumer viewpoints and purchasing patterns, the study was carried out in both metropolitan and semi-urban areas of India.

d. Sampling Technique: Convenience sampling was

used in the study to choose participants, with an emphasis on people who might have come into contact with organic products through various media outlets or customer networks.

e. Data Analysis: To compile and explain the results, descriptive statistics were used to examine the gathered data. To determine the main information sources and the frequency of purchases of organic products, percentages were computed. To improve understanding, the data was visualized using graphical representations including pie charts and bar charts.

Policymakers, marketers, and other stakeholders in the organic product business can benefit greatly from this methodology's thorough grasp of the elements impacting consumer awareness and purchasing behavior surrounding organic products.

Data Analysis : Social media's dominance as the main source of knowledge on organic products—56.7%—is demonstrated by the data in Table 1 and Figure 1, which also demonstrate the platform's broad reach and effect. With a second-place ranking of 22.2%, television ads demonstrate their importance but lack the impact of digital media. A moderate reliance on personal networks for knowledge is indicated by the 11.0% contribution from family recommendations. The relatively small roles of educational events (6.7%) and newspaper and magazine ads (9.4%) indicate the need for more engagement through these channels in order to successfully reach a variety of groups. This distribution highlights how social media is becoming an increasingly significant factor in influencing customer knowledge and decisions about organic products.

Table 1:Source of Information on Organic Products

Source of Information	Percentage (%)
Social media	56.7
Television Advertisements	22.2
Family	11.0
Newspapers/Magazine	9.4
Advertisements	
Educational Events	6.9

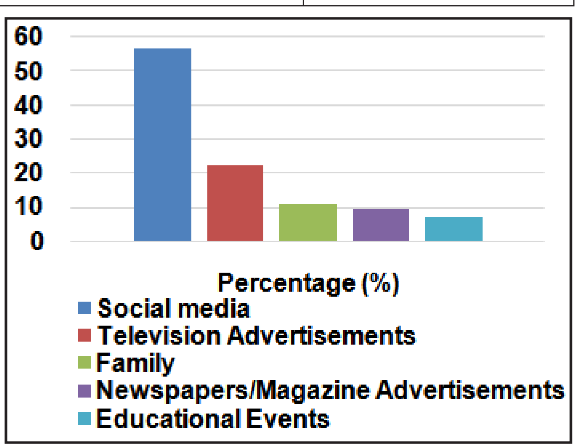

Figure 1: Graphical representation of Source of Information on Organic Products

The information in Table 2 and Figure 2 shows the respondents' organic product buying habits. Eighty respondents, or the majority, say they only infrequently buy organic items, suggesting either little uptake or sporadic interest. A smaller sample of 30 respondents regularly buy organic products, indicating steady consumer involvement. However, 15 respondents said they have never bought organic items, citing obstacles like price, accessibility, or ignorance.

Table 2:Frequency Of Organic Product Purchases

Frequency of Purchase	Number of Respondents
Rarely	80
Frequently	30
Never	15

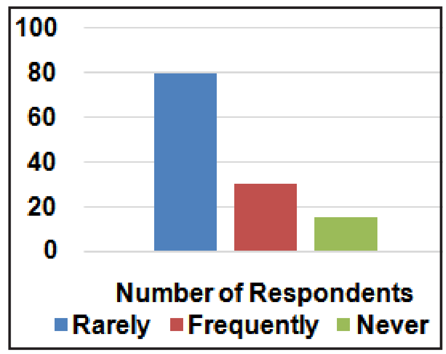

Figure 2: Graphical representation of Frequency of Organic product purchases

This distribution reveals a sizable discrepancy between awareness and consistent buying patterns, indicating a possible market for tactics meant to boost frequent purchases via enhanced affordability, accessibility, and consumer education.

Conclusion : This reveals a significant discrepancy between awareness and regular buying behavior, which could be caused by obstacles including price, accessibility, and doubts about genuineness. Producers, marketers, and legislators must work together to improve pricing, guarantee product label transparency, and launch awareness campaigns highlighting the long-term environmental and health advantages of organic products in order to address this. The Indian organic food sector can realize its full potential and see steady growth by closing this gap.

References :-

1. Dangi, N., Gupta, S. K., & Narula, S. A. (2020). Consumer buying behaviour and purchase intention of organic food: a conceptual framework. Management of Environmental Quality: An International Journal, 31(6), 1515-1530.
2. Feil, A. A., da Silva Cyrne, C. C., Sindelar, F. C. W., Barden, J. E., & Dalmoro, M. (2020). Profiles of sustainable food consumption: Consumer behavior toward organic food in southern region of Brazil. Journal of Cleaner Production, 258, 120690.

3. Kaur, J., Lavuri, R., Thaichon, P., & Martin, B. (2023). Purchase intention of organic foods: are lifestyles of health and sustainability the reason for my purchase decision? Asia Pacific Journal of Marketing and Logistics, 35(6), 1532-1551.
4. Kushwah, S., Dhir, A., & Sagar, M. (2019). Ethical consumption intentions and choice behavior towards organic food. Moderation role of buying and environmental concerns. Journal of Cleaner Production , 236, 117519.
5. Kushwah, S., Dhir, A., & Sagar, M. (2019). Understanding consumer resistance to the consumption of organic food. A study of ethical consumption, purchasing, and choice behaviour. Food Quality and Preference, 77, 1-14.
6. Kushwah, S., Dhir, A., Sagar, M., & Gupta, B. (2019). Determinants of organic food consumption. A systematic literature review on motives and barriers. Appetite, 143, 104402.
7. Nagaraj, S. (2021). Role of consumer health consciousness, food safety & attitude on organic food purchase in emerging market: A serial mediation model. Journal of Retailing and Consumer Services, 59, 102423.
8. Nguyen, H. V., Nguyen, N., Nguyen, B. K., Lobo, A., & Vu, P. A. (2019). Organic food purchases in an emerging market: The influence of consumers' personal factors and green marketing practices of food stores. International journal of environmental research and public health, 16(6), 1037.
9. Prakash, G., Singh, P. K., & Yadav, R. (2018). Application of consumer style inventory (CSI) to predict young Indian consumer's intention to purchase organic food products. Food quality and preference, 68, 90-97.
10. Sadiq, M., Paul, J., & Bharti, K. (2020). Dispositional traits and organic food consumption. Journal of Cleaner Production, 266, 121961.
11. Saleki, R., Quoquab, F., & Mohammad, J. (2019). What drives Malaysian consumers' organic food purchase intention? The role of moral norm, self-identity, environmental concern and price consciousness. Journal of Agribusiness in Developing and Emerging Economies, 9(5), 584-603.
12. Tandon, A., Dhir, A., Kaur, P., Kushwah, S., & Salo, J. (2020). Why do people buy organic food? The moderating role of environmental concerns and trust. Journal of Retailing and Consumer Services, 57, 102247.
13. Testa, F., Sarti, S., & Frey, M. (2019). Are green consumers really green? Exploring the factors behind the actual consumption of organic food products. Business Strategy and the Environment, 28(2), 327-338.
14. Wang, J., Pham, T. L., & Dang, V. T. (2020). Environmental consciousness and organic food purchase intention: a moderated mediation model of perceived food quality and price sensitivity. International journal of environmental research and public health, 17(3), 850.
15. Watanabe, E. A. D. M., Alfinito, S., Curvelo, I. C. G., & Hamza, K. M. (2020). Perceived value, trust and purchase intention of organic food: a study with Brazilian consumers. British Food Journal, 122(4), 1070-1184.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत में वित्तीय बाजार एवं वित्तीय कौशल

लखन लाल कलेशरिया*

* सहायक प्राधयापक (वाणिज्य) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सिहोर (म.प्र.) भारत

वित्तीय कौशल – मजबूत वित्तीय ज्ञान और निर्णय लेने का कौशल लोगों को विकल्पों पर विचार करने और उनकी वित्तीय स्थितियों के लिए सूचित विकल्प बनाने में मदद करता है जैसे कि कैसे और कब बचत और खर्च करना है, यह तय करना, बड़ी खरीदारी से पहले लागत की तुलना करना, और सेवानिवृत्ति या अन्य दीर्घकालिक बचत की योजना बनाना।इसी आधार उसको वित्तीय प्रणाली (financial system) का ज्ञान होना भी बहुत अवश्यक है

वित्तीय लक्ष्य क्या हैं?

वित्तीय लक्ष्य आपके द्वारा निर्धारित व्यक्तिगत, बड़े-चित्र वाले उद्देश्य हैं कि आप पैसे कैसे बचाएंगे और खर्च करेंगे। ये ऐसी चीजें हो सकती हैं जिन्हें आप अल्पावधि में या भविष्य में हासिल करने की उम्मीद करते हैं। किसी भी तरह से, यदि आप अपने लक्ष्यों को पहले से पहचान लें तो उन तक पहुंचना अक्सर आसान होता है। (यदि आपको कुछ कदम पीछे जाने की आवश्यकता है, तो वित्त की परिभाषा देखें ।)

वित्तीय लक्ष्यों के उदाहरण – जब आप लक्ष्य निर्धारित करना शुरू करें तो इस बारे में सोचें कि आपके लिए क्या महत्वपूर्ण है। कई लक्ष्य रखना और समय के साथ उनमें बदलाव होना सामान्य बात है।

वित्तीय लक्ष्यों के उदाहरणों में शामिल हैं:

1. कर्ज चुकाना।
2. सेवानिवृत्ति के लिए बचत।
3. एक आपातकालीन निधि का निर्माण।
4. घर ख़रीदना।
5. छुट्टियों के लिए बचत।
6. कोई कारोबार शुरू करना।
7. आर्थिक रूप से सुरक्षित महसूस कर रहे हैं।

आपके लक्ष्य इस बात से प्रभावित होंगे कि आप अकेले व्यक्ति के रूप में धन का प्रबंधन कर रहे हैं या किसी भागीदार के साथ मील के पत्थर की दिशा में काम कर रहे हैं।

वित्तीय लक्ष्य रखने से आपके आज के कार्यों को प्रभावित करके आपके भविष्य को आकार देने में मदद मिल सकती है। उदाहरण के लिए, मान लें कि आपका लक्ष्य भारी भरकम क्रेडिट कार्ड बिल का भुगतान करना है । आप टेकआउट डिनर में कटौती कर सकते हैं और इसके बदले अतिरिक्त भुगतान करने के लिए जो पैसा बचाते हैं उसका उपयोग कर सकते हैं। उस लक्ष्य को स्थापित किए बिना, जब तक आपका कर्ज़ बढ़ता रहेगा तब तक आपके सामान्य रूप से खर्च जारी रखने की अधिक संभावना है।

सभी खर्चों की तरह, वित्तीय लक्ष्यों को भी आपके बजट में शामिल किया जाना चाहिए । इस तरह, आप अन्य लागतों के लिए जगह छोड़ते हुए उन तक पहुंचने की दिशा में ठोस कदम उठा सकते हैं। योजना बनाएं कि प्रत्येक लक्ष्य तक पहुंचने में कितना समय लगेगा और उस अवधि के भीतर आपको कितने पैसे का योगदान करने की आवश्यकता होगी।

लक्ष्यों की पहचान करना और उनके लिए एक यथार्थवादी योजना बनाना आपको प्रगति को ट्रैक करने की अनुमति देता है और आपको आगे बढ़ने के लिए प्रेरित कर सकता है। भले ही आप कम पड़ें, आप रास्ते में कुछ स्वस्थ पैसे की आदतें विकसित कर सकते हैं।

वित्तीय प्रणाली – वित्तीय प्रणाली वह प्रणाली है जो जमाकर्ताओं, निवेशकर्ताओं तथा मांगकर्ताओं के बीच फंड का आवागमन कराती है। वित्तीय प्रणालियाँ वैश्विक स्तर पर, राष्ट्रीय स्तर पर और फर्म के स्तर पर काम करने वाली हो सकतीं हैं।

किसी भी देश की वित्तीय प्रणाली वित्तीय बाजार, वित्तीय मध्यस्थता और वित्तीय साधनों या वित्तीय उत्पादों के होते हैं। यह पत्र वित्त और भारतीय वित्तीय प्रणाली और वित्तीय बाजार, वित्तीय मध्यस्थों और वित्तीय साधनों पर ध्यान केंद्रित का अर्थ पर चर्चा करता है। विभिन्न मुद्रा बाजारलिखतों पर संक्षिप्त समीक्षा भी इस अध्ययन में शामिल रहे हैं।

शब्द 'वित्त' हमारी साधारण समझ में यह समकक्ष 'मनी' के रूप में माना जाता है। हम पैसे और अर्थशास्त्र में बैंकिंग के बारे में, मौद्रिक सिद्धांत और व्यवहार के बारे में और 'सार्वजनिक वित्त' के बारे में पढ़ें। लेकिन वित्त बिल्कुल पैसे नहीं है, यह एक विशेष गतिविधि के लिए धन उपलब्ध कराने का स्रोत है। इस प्रकार सार्वजनिक वित्त सरकार के साथ पैसे मतलब यह नहीं है, लेकिन यह एक सरकार के कार्यों और गतिविधियों के लिए राजस्व बढ़ाने के स्रोतों को संदर्भित करता है। यहाँ कुछ शब्द की परिभाषा का दोनों एक स्रोत के रूप में और के रूप में एक गतिविधि के एक संज्ञा और एक क्रिया के रूप में यानी वित्त'।

वित्तीय प्रणाली

वित्तीय बाजार दो प्रकार के होते है।

1. मुद्रा बाजार 2. पूंजी बाजार

शब्द 'सिस्टम', 'वित्तीय प्रणाली', शब्द में जटिल और बारीकी से कनेक्टेड रहने या संस्थानों, एजेंटों, प्रथाओं, बाजार, लेन-देन, दावों और अर्थव्यवस्था में दायित्वों का एक सेट निकलता है। वित्तीय प्रणाली पैसे के बारे में चिंतित है, क्रेडिट और वित्त-तीन शर्तें अच्छी तरह संबंधित हैं अभी तक एक-दूसरे से अलग हो सकते हैं। भारतीय वित्तीय प्रणाली वित्तीय बाजार, वित्तीय

साधनोंऔर वित्तीय मध्यस्थता के होते हैं। ये संक्षेप में नीचे चर्चा कर रहे हैं-

वित्तीय बाजार – एक वित्तीय बाजार में जो वित्तीय आस्तियों बनाया स्थानांतरित किया या कर रहे हैं बाजार के रूपमें परिभाषित किया जा सकता। असली माल या सेवाओं के लिए पैसे का आदान-प्रदान शामिल हैकि एक वास्तविक लेन-देन हुई, एक वित्तीय लेनदेन के निर्माण या एक वित्तीय परिसंपत्ति का अंतरण शामिल है। वित्तीय संपत्ति या वित्तीय साधनों धन की राशि का भुगतान भविष्य में कुछ समय और ब्याज या लाभांश के रूप में या आवधिक भुगतान के लिए एक दावे का प्रतिनिधित्वकरता है।

मुद्रा बाजार क्या है – संतुलित तथा कुशलतापूर्वक संगठित साख पद्धति का विकास बिना एक अच्छे प्रकार से विकसित मुद्रा बाजार में नहीं हो सकता। मुद्रा बाजार एक संस्था अथवा वह संगठन है जिसका कार्य एवं मुद्रा साख या मुद्रा के प्रयोग करने के अधिकारों का क्रय-विक्रय करना है। मुद्रा बाजार Banking institutions का एक समूह है जो Currency तथा Credit में व्यापार करता है।

दूसरे शब्दों में, मुद्रा बाजार से अभिप्राय उस क्षेत्र से होता है जिसमें मुद्रा का क्रय-विक्रय एक निश्चित मुल्य पर होता है। इस मूल्य का अर्थ उस दर से होता है जिस पर मुद्रा उधार दी जाती या ली जाती है अर्थात् मुद्रा को भविष्य में लौटा देने के बदले में जो कुछ रकम दी जाती है वही मुद्रा का मूल्य होता है। इस प्रकार मुद्रा बाजार के अन्तर्गत वे सभी क्रियायें आ जाती हैं जिनका संबंध मुद्रा के उधार देने व लेने से होता है।

जब बाजार में साख का अल्पकालीन लेन-देन होता है तो उसे मुद्रा बाजार कहते हैं। बैंकों का संबंध अधिकतर मुद्रा बाजार से ही होता है, क्योंकि वे अल्पकालीन ऋणों में ही अपना धन लगाना अधिक पसंद करते हैं। इसलिये मुद्रा-बाजार वस्तुत: अल्पकालीन ऋणों का बाजार होता है।

मुद्रा बाजार में भी दो पक्ष होते हैं:

Buyer (ऋण लेनेवाला) और Seller(देनेवाला) – विक्रेता से अभिप्राय उन ऋणदाताओं तथा ऋण देनेवाली संस्थाओं से है जो ऋण उधार देती है। क्रेता से आशय उन व्यापारियों या उद्योगपतियों से है, जो मुद्रा बाजार से रुपया उधार लेते हैं। बैंकों का सम्बन्धा प्रधनत: मुद्रा बाजार से ही रहता है।

मुद्रा बाजार के कितने अंग है?

मुद्रा बाजार के अंगों को पाँच भागों में बाँटा गया हैं:

(1) केन्द्रीय बैंक – मुद्रा बाजार से Central bank का बहुमत महत्वपूर्ण स्थान रहता है। समस्त मुद्रा बाजार पर इसका नियंत्रण रहता है। Central bank के आदेशानुसार ही व्यावसायिक बैंक तथा अन्य Monetary institutions काम करती है। Central bank मूल्य स्तर में स्थिरता स्थापित करने के लिए Credit control policy अपनाता है। Central bank की नीति का प्रभाव मुद्रा बाजार पर पड़ता है।

(2) कॉल ऋण बाजार – इस बाजार के द्वारा अति अल्पकालीन ऋण दिये जाते हैं। Commercial Banks अपने साधनों का कुछ तो अतिअल्पकालीन ऋणों में लगाते हैं। अति अल्पकालीन ऋणों के क्रेता अधिकतर दलाल या सट्टेबाज़ (bill broker and speculators) होते हैं। इस प्रकार के ऋण बैंकों द्वारा प्राप्त होते हैं अथवा बड़ी मिश्रित पूँजी की कंपनियों के द्वारा भी लिये जाते हैं।

(3) अल्पावधि बाजार – इस प्रकार के बाजार में ऋणों की अवधिा कुछ लंबी होती है। Commercial Banks अग्रिम तथा बिलों पर बट्टा काटकर (discount of bill) अपनी जमा राशि को व्यवहार में लाते हैं। इस प्रकार के बाजार के मुख्य क्रेता व्यवसायी और उद्योगपति है। ट्रेजरी-बिल के माधयम द्वारा सरकार भी इस प्रकार के ऋण लेती है। इस प्रकार के बाजार का संचालन Commercial Banks द्वारा होता है।

(4) दीर्घावधि बाजार

इस प्रकार के बाजार के दो अंग होते हैं– Commercial Banks Securities Letter of credit तथा कंपनियों के शेयर खरीदे जाने के लिए उन्हें बाजार में जारी करते हैं। Stock change हस्तांतरण की सुविधा प्रदान की जाती है और इसके द्वारा पुराने Share और Bond खरीदे तथा बेचे जाते हैं।

(5) अन्य संस्थाएँ: इन संस्थाओं के अलावा भी कुछ विशिष्ट संस्थाएँ हैं, जो साख देती हैं, जैसे: Savings Bank,Land Mortgage Bank आदि।

मुद्रा बाजार के मुख्य कार्य

मुद्रा बाजार के निम्नलिखित मुख्य कार्य हैं:-

(1) व्यापार, वाणिज्य तथा उद्योग-धंधो और कृषि में पूँजी लगाने के लिए रुपये की पूर्ति करना।

(2) रुपया उधार देने वालों तथा लेने वालों के बीच एक कड़ी का काम करना।

(3) जिन लोगों के पास बेचने को तथा विनियोग करने को फ़ालतू धन होता है किंतु वह अपने लिए उचित विनियोगों को ढूँढ़ने योग्य नहीं होते तथा जिन लोगों को उद्योग-धन्धों तथा वाणिज्य व्यवसायों को शुरू करने के लिये पूँजी की आवश्यकता है वे सब मुद्रा बाजार के द्वारा एक दूसरे से सम्पर्क में आते हैं।

(4) जन साधारण की छोटी-छोटी बचतों को एक बड़ी उत्पादक धन राशि के रूप में एकत्र करके, उसको उत्पादक स्रोतों में लगाना।

(5) चालू मुद्रा, साख मुद्रा तथा साख पद्धति पर एक Central bank द्वारा प्रभाव पूर्ण नियंत्रण करके चालू मुद्रा तथा विनिमय को स्थिर रखना एवं विनिमय के माधयमों की माँग और पूर्ति बराबर करके बट्टे की दर तथा ब्याज की दरों को नियमित करना। अत: किसी देश की आर्थिक एवं वित्तीय व्यवस्था में उसके मुद्रा बाजार का बहुत महत्व होता है। विशेषत: अल्पकालीन कोष के लेन-देन के लिये एक सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित मुद्रा बाजार की नितांत आवश्यकता होती है।

अत: हम यह कह सकते हैं कि किसी भी देश में बिना मुद्रा बाजार के पूँजी-बाजार का कार्य सुचारु रूप से नहीं चल सकता। इतना ही नहीं, सरकार की आर्थिक एवं वित्तीय नीति पर मुद्रा बाजार के व्यवहारों का प्रभाव पड़ता है। इसलिए प्रत्येक देश में मुद्रा बाजार की व्यवस्था आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है।

भारतीय मुद्रा बाजार के अंग कौन-कौन से हैं?

भारतीय मुद्रा बाजार के दो प्रमुख अंग है:

(1) ऋण दाता: भारतीय द्रव्य बाजार के ऋणदाताओं को निम्नलिखित दो भागों में बाँटा जा सकता है:

(क) यूरोपीय तथा केन्द्रीय भाग: इस भाग के अंग Reserve Bank of India, State Bank of India rFkk eÛchange bank हैं।

(ख) भारतीय तथा स्वदेशी भाग: इस भाग में Moneylender, indigenous banker, loan office, chit fund fund, business bank, savings bank आदि सम्मिलित किये जाते हैं।

(2) ऋण लेने वाले: भारतीय मुद्रा बाजार में उधार में लेने वालों के अंतर्गत निम्न व्यक्ति अथवा संस्थाएँ आती हैं:- (i) केन्द्रीय, प्रान्तीय तथा स्थानीय सरकारी संस्थायें (ii) उद्योगी एवं व्यापारी वर्ग (iii) कृषक वर्ग (iv) साधारण जनता।

भारतीय मुद्रा बाजार के दोष अर्थात् विशेषताएँ – भारतीय मुद्रा बाजार की निम्नलिखित कठिनाइयाँ, दोष अथवा विशेषतायें हैं:

(1) द्रव्य बाजार में धन की कमी – भारतीय मुद्रा बाजार में आवश्यकता के अनुसार धन राशि नहीं है जिससे सभी की माँग पूरी की जा सके धन के अभाव के तीन मुख्य कारण हैं: पर्याप्त विनियोग के साधनों की कमी, बैंक प्रणाली का अपर्याप्त विकास, बैंकों के टूटते रहने के कारण जनता का उसके प्रति अविश्वास। इसके अतिरिक्त देश में आय तथा बचत की कमी, बचतों को गाड़ कर रखने की प्रवृत्ति, आय के वितरण की असमानता, जन-साधारण की अशिक्षा आदि बैंकों के पास धन की कमी उत्पन्न कर देती है।

(2) व्यवस्थित बिल बाजार की कमी– अन्य देशों के मुद्रा बाजारों की भाँति हमारे यहाँ बिलों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में नहीं होता। यहाँ बैंक बिलों का लेन-देन करते तो हैं परन्तु केवल ऐसे बिलों की कटौती जो मान्य व्यवसाय के तथा उसके द्वारा निर्धारित शर्तों के अनुसार हो। इस प्रकार से बिलों का प्रयोग बहुत सीमित रहा है, दूसरे मुद्रा बाजार में बिलों की कटौती की पूर्ण सुविधायें भी उपलब्धा नहीं हैं।

(3) ब्याज की दरों में विभिन्नता – Bank rate, interest rate तथा Discount rate में बहुत अंतर रहता है। interest rate में न केवल विभिन्न स्थानों में विभिन्नता पाई जाती है बल्कि उनमें प्राय: ऊँची रहने की प्रवृत्ति तक पायी जाती है। बैंक दर की असफलता का मुख्य कारण यही है और इसी के कारण रिजर्व बैंक को नियंत्रण कार्य में भारी कठिनाई होती है।

(4) मुद्रा बाजार के विभिन्न अंगों में घनिष्ट सम्बन्धा का अभाव – वास्तव में भारत में अभी तक मुद्रा बाजार का न तो कोई उचित संगठन है और न ही इसमें पारस्परिक सहयोग की भावना ही है। भारतीय मुद्रा बाजार में ऐसे स्वतंत्र भाग हैं जिनमें पारस्परिक सहयोग तो दूर रहा बल्कि इसके स्थान पर पारस्परिक प्रतियोगिता पायी जाती है।

(5) विशिष्ट साख संस्थाओं का अभाव– भारतीय मुद्रा बाजार में कृषि और उद्योग तथा व्यापार की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये वहाँ पर काफी भूमि बंधक बैंक तथा बट्टा गृह भी नहीं हैं। इन संस्थाओं का विकास होना परम आवश्यक है।

(6) साहूकार तथा बैंकों का प्रभाव – आधुनिक बैंकिंग का विकास भी इनके प्रभाव को कम नहीं कर पाया है। कृषि वित्त तथा आंतरिक व्यापार में भी साहूकारों तथा देशी Bankers का बोल-बाला है।

(7) ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का अभाव – Second World war तक हमारे बैंकों की शाखाएँ बहुत कम थीं और ग्रामीण क्षेत्रों में तो बैंकिंग सुविधाओं का पर्याप्त अभाव था परिणामस्वरूप ग्रामीण बैंकिंग से बिल्कुल अनभिज्ञ थे। जिसके कारण उन्हें न तो बचत करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था और न वे साख सुविधाओं का उपयोग ही कर सकते थे।

(8) शाखा बैंकिंग के विकास का अभाव – द्वितीय महायुद्ध तक हमारे देश में बैंकों की शाखायें बहुत कम थी और ये शाखायें भी बड़े-बड़े व्यापारिक केंद्रों तक ही सीमित थी जबकि इनकी आवश्यकता ग्रामीण क्षेत्रों में भी है। परिणामत: देश में बैंकिंग सुविधाओं की सामान्य कमी के कारण न तो बचत को ही प्रोत्साहन मिलता है और न पर्याप्त मात्रा में धन ही एकत्रित होने पाता है।

(9) मुद्रा बाजार में लोच तथा स्थायित्व का अभाव – Reserve Bank of India की स्थापना से पूर्व भारतीय मुद्रा बाजार में लोच तथा स्थायित्व का अभाव रहा है क्योंकि साख पर नियंत्रण का कार्य इम्पीरियल बैंक द्वारा और मुद्रा पर नियंत्रण का कार्य सरकार द्वारा सम्पन्न किया जाता था। परन्तु Reserve Bank of India की स्थापना के पश्चात् ये दोनों कार्य बैंक के हाथ में आ गये हैं और Reserve Bank of India ने बहुत अंश तक मुद्रा बाजार के उक्त दोषों को दूर कर दिया है। परन्तु भारतीय बैंकों के सीमित साधन होने के कारण तथा देश में बैंकिंग आदत न होने के कारण आज भी बैंक देश की बढ़ती हुई पूँजी की माँग की पूर्ति नहीं कर पा रहे हैं।

(10) ब्याज में मौसमी परिवर्तन – भारत एक कृषि प्रधन देश है और कृषि प्रधन होने के कारण देश में विभिन्न मौसम में ब्याज की दरों में भारी अंतर होते हैं। नम्बर से जून तक के मौसम में धन की आवश्यकता अधिक रहती है और ब्याज की करें ऊपर चढ़ जाती हैं शेष काल में वे नीची ही रहती है। यह परिस्थिति अभी तक ठीक नहीं हो पाई है।

पूंजी बाजार का अर्थ – पूंजी बाजार वह प्रबंधा व्यवस्था है जहां व्यवसाय और उद्योगों के लिए एक लम्बे समय के लिए ऋणों की व्यवस्था होती है।

पूंजी बाजार के प्रकार

;भारत में पूंजी बाजार के दो प्रकार हैं

1. संगठित पूंजी बाजार (FORMAL OR ORGANISED CAPITAL MARKET)- संगठित पूंजी बाजार के अंतर्गत वित्त संबंधी कार्य पंजीबद्ध विभिन्न वित्तीय संस्थाएं करती हैं, जो विभिन्न सार्वजनिक क्षेत्रों से निजी वस्तुओं को एकत्र कर दीर्घकालीन पूंजी की व्यवस्था करती है जैसे-
भारतीय यूनिट ट्रस्ट (UTI), जीवन बीमा निगम (LIC), भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक(SIDBI), वाणिज्य बैंक, उद्योग वित्त निगम (IFC), भारतीय उद्योग साख एवं विनियोग निगम (ICICI, भारतीय उद्योग विकास बैंक (IDBI), राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम (NIDC), भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक (IRBI), सामान्य बीमा निगम (GIC), राज्य वित्तीय संस्थाएं (SFCs) आवासीय वित बैंक (RFB) आदि प्रमुख है। इन सभी का नियंत्रण भारतीय विनियम बोर्ड (SEBI) द्वारा किया जाता है।

2. असंगठित या गैर संगठित बाजार (INTERNAL OR UNORGANISED MARKET)- इसे अनौपचारिक बाजार भी कहा जाता है, इसमें देसी बैंकर्स, साहूकार, महाजन आदि प्रमुख होते हैं। काले धन का बहुत बड़ा भाग गए असंगठित क्षेत्र में वित्त व्यवस्था करता है। यह उद्योग व्यापार तथा कृषि क्षेत्रों में पूंजी का विनियोजन करते हैं। इनकी ब्याज दरें और वित्तीय नीति कभी भी एक समान नहीं होती है। जिसके परिणाम स्वरुप यह साहूकार कभी-कभी ऊंची दर पर ऋण देकर अधिक लाभ कमाने का प्रयास करते हैं। भारतीय रिजर्व बैंक इन पर नियंत्रण करने के लिए प्रयास करता है।

प्राथमिक पूंजी बाजार क्या है – प्राथमिक पूंजी बाजार का आशय उस बाजार से है, जिसमें नए ब्रांड का निर्माण किया जाता है, इसे नवीन निर्गम बाजार भी कहा जाता है। जिस बाजार में कंपनियों द्वारा प्रथम बार कोई नई चीज बेची जाती है, उसे प्राथमिक बाजार कहा जाता है।

प्राथमिक पूंजी बाजार की पांच विशेषताएं।

1. प्राथमिक बाजार में नवीन प्रतिभूतियों के व्यवहार का निर्गम होता है।

2. कीमत का निर्धारण– प्रतिभूतियों की कीमत कंपनी के प्रबंधकों द्वारा निर्धारित की जाती है।

3. प्रत्यक्ष निर्माण– प्राथमिक बाजार में कंपनी सीधो बिचौलियों के माध्यम से नियोजकों को प्रतिभूतियों का निर्गम कराती है।

4. स्थान– प्राथमिक बाजार के लिए कोई विशेष स्थान नहीं होता है।

5. पूंजी निर्माण– प्राथमिक बाजार प्रत्यक्ष रूप से पूंजी निर्माण में वृद्धि करता है, और उससे नए यंत्र, मशीनरी भवन आदि के लिए उनका उपयोग करते हैं।

पूंजी बाजार के महत्व :

1. पूंजी बाजार पूंजी निवेशकों और बचत करने वालों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

2. अपनी समस्त आय खर्च ना करने वाले बचत कर्ताओं के लिए सरल साधन पूंजी बाजार होता है।

पूंजी संरचना को प्रभावित करने वाले तत्व – पूंजी संरचना को प्रभावित करने वाले तत्व इस प्रकार है:

आन्तरिक तत्व

1. व्यवसाय का आकार– पूँजी संरचना का निर्धारण करते समय व्यवसाय के आकार का भी ध्यान रखना पड़ता है। छोटे आकार की व्यावसायिक संस्थाओ की धन एकत्रित करने की क्षमता कम होती है। साख कम होने से इन्हें ऋण नही मिल पाता। इनकी कुल पूँजी में अंशपूँजी का भाग अधिक होता है । बडें आकार को संस्थाओ के ऋणपत्र भी बिक जाते है और उन्हें ऋण भी मिल जाता है।

2. व्यवसाय का स्वभाव – पूँजी संरचना के निर्धारण में व्यवसाय के स्वभाव का भी प्रभाव पड़ता है । कुछ व्यवसायों का स्वभाव इस प्रकार का होता है कि उनमें चल सम्पत्तियों की तुलना में स्थायी समपित्तयों की आवश्यकता अधिक होती है इन व्यवसायो के पूँजी ढांचे में समता अंशपूंजी के साथ–साथ ऋण पूँजी को भी उचित स्थान दिया जा सकता है ।

3. आय की नियमितता एंव निश्चितता – आय की निश्चितता एवं नियमितता भी पूँजी ढ़ांचे को प्रभावित करती है। जिस संस्था की आय में उक्त गुण होते है, उनके पूँजी ढांचे में पूर्वाधिकार अंशो एंव ऋणपत्रो की प्रधनता रहती है

4. व्यावसायिक सम्पत्तियों का ढांचा – जिन संस्थाओ के सम्पत्ति ढांचे में स्थायी सम्पत्तियों के ढांचे में स्थायी सम्पत्तियो की मात्रा अधिक होती है । उनकी पूँजी सरंचना में दीर्घकालीन ऋणों अथवा ऋणपत्रो का भाग अधिक होता है, जबकि अंशपूँजी का कम। इसके विपरीत जिन संस्थाओ के सम्पत्ति ढांचे मे चालू सम्पत्तियां अधिक होती है उनके पूँजी ढांचे में दीर्घकालीन ऋण कम होते है।

5. व्यापार पर नियन्त्रण की इच्छा – संरचना व्यापार पर नियन्त्रण की इच्छा से भी प्रभावित होती है अगर कम्पनी के प्रवर्तक कम्पनी का नियन्त्रण कुछ ही व्यक्तियों के हाथो मे रखना चाहते है तो समता अंशो का निर्गमन किया जाता है जिसका एक बड़ा भाग कुछ लोगो के पास केन्द्रित रखा जाता है तथा शेष भाग छोटे–छोटे अंशधारियो कें बाँट दिया जाता है।

बाह्य तत्व – पूंजी संरचना को प्रभावित करने वाले बाहरी तत्व इस प्रकार है:

1. पूंजी बाजार – पूंजी बाजार के वातावरण का भी प्रभाव पूंजी संरचना पर पड़ता है। तेजी काल में अंश तथा मन्दी काल में ऋण–पत्र अधिक लोकप्रिय होते हे ।

2. विनियोक्ताओ की मनोवैज्ञानिक दशा– विनियोक्ताओ की मनोवैज्ञानिक दशा तथा जोखिम के प्रति उनके विश्वास का भी पूँजी ढांचे पर प्रभाव पड़ता है। कुछ विनियोक्ता साहसी होते है। इन्ही स्थितियों को देखते हुए विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियो का निर्गमन किया जाना चाहिए।

3. सरकारी नियन्त्रण – सरकारी नियन्त्रणो, नियमन एंव कानूनो का भी पूँजी ढांचे पर प्रभाव पड़ता हैं। विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियों के निर्गमन व उन पर प्राप्त आय के सम्लणधा में अनेक कानून देश के अन्दर बनाये गये है जिनकी पूँजी ढांचे के निर्धारण के महत्वपूर्ण भूमिका होती है ।

4. विनियोजको की रूचि – पूंजी विनियोजक की रूचि का भी प्रभाव पूंजी संरचना पर पड़ता है।

5. न्यूनतम जोखिम – एक अनुकुलतम पूँजी ढांचा इस प्रकार होना चाहिए कि उस पर अनेक प्रकार के जोखिमों का कम से कम प्रभाव पड सके। इस प्रकार की जोखिमो के कुछ प्रमुख उदाहरण है व्यावसायिक प्रतिस्पर्द्धा, क्रयशक्ति में ह्रास, ब्याज दर में वृद्धि, प्राकृतिक प्रकोप आदि। इसके लिए पूंजी ढांचे में उच्चे श्रेणी की प्रतिभूतियों को शामिल किया जाता है

6. सरलता – पूँजी संरचना अधिक जटिल नही होना चाहिए। सरलता के लिए शुरू मे केवल समता अंश एंव पूर्वाधिाकार अंश ही जारी किये जाना चाहिए। तथा ऋणपत्र बाद मे निर्गमित करना चाहिए पूंजी सरचना को सरल रखने के साथ–साथ यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि उसमे आवश्यकता से अधिक सस्तापन नही आना चाहिए।

विदेशी मुद्रा बाजार – विदेशी मुद्रा बाजार बहु मुद्रा आवश्यकताओं, जो मुद्राओं के विनिमय से मुलाकात कर रहे हैं के साथ सौदों। विनिमय दर के आधार पर लागू होता है, धन के हस्तांतरण इस बाजार में जगह लेता है। यह दुनिया भर में सबसे अधिक विकसित और एकीकृत बाजार में से एक है।

क्रेडिट बाजार – क्रेडिट बाजार जहां बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और एन बी एफ सी प्रबंध करना लघु, मध्यम और कॉर्पोरेट के लिए दीर्घकालीन ऋण और व्यक्तियों एक जगह है।

वित्तीय प्रणाली के संघटक

वित्तीय मध्यस्थता – लिखत डिजाइन करने के बाद, जारीकर्ता तो यह सुनिश्चित करना चाहिए कि इन वित्तीय आस्तियों के क्रम में आवश्यक राशि जुटाने में परम निवेशक तक पहुँचने। फंडों की ऋण लेने वाले वित्तीय बाजार धन जुटाने के लिए दृष्टिकोण, प्रतिभूतियों के मात्र मुद्दा पर्याप्त नहीं होगा। मुद्दा, जारीकर्ता और सुरक्षा की पर्याप्त जानकारी जगह लेने के लिए पर पारित किया जाना चाहिए। वहाँ वित्तीय प्रणाली के भीतर एक उचित चैनल इस तरह के हस्तांतरण सुनिश्चित करने के लिए होना चाहिए। इस उद्देश्य की सेवा करने के लिए, वित्तीय मध्यस्थों अस्तित्व में आया। संगठित क्षेत्र में वित्तीय मध्यस्थता भारतीय रिजर्व बैंक के समग्र निगरानी के तहत कार्य कर संस्थानों की एक widerange द्वारा आयोजित किया जाता है। प्रारंभिक दौर में, मध्यस्थ की भूमिका ज्यादातर ऋणदाता से ऋण लेने के लिए धन के हस्तांतरण सुनिश्चित करने के लिए संबंधित था। इस सेवा के बैंकों, वित्तीय संस्थाओं, दलालों, और डीलरों द्वारा की पेशकश की थी। हालांकि, के रूप में वित्तीय प्रणाली के घटनाक्रम वित्तीय बाजारों में जगह लेने के साथ–साथ चौड़ी हो, अपने परिचालन का दायरा भी चौड़ी हो। ऑपरेटिंग स्याही वित्तीय बाजारों में शामिल महत्वपूर्ण बिचौलियों से कुछ; निवेश बैंकरों, शेयर बाजारों, रजिस्ट्रार, डिपॉजिटरी, संरक्षक, पोर्टफोलियो

प्रबंधकों, म्युचुअल फंड, वित्तीय विज्ञापनदाताओं वित्तीय सलाहकार, प्राथमिक डीलरों, उपग्रह डीलरों, आत्म नियामक संगठनों, आदि हालांकि बाजारों में अलग कर रहे हैं, वहाँ एक जैसे बाजार की तुलना में इस कदम में अपनी सेवाएं दे कुछ बिचौलियों हो सकता है हामीदार। हालांकि, उनके द्वारा की पेशकश की सेवाओं एक बाजार से दूसरे बदलती हैं।

वित्तीय प्रपत्र – मुद्रा बाजार के अल्पकालिक पैसे और वित्तीय आस्तियों है कि पैसे के लिए पास विकल्प हैं के लिए एक बाजार के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। अवधि अल्पकालिक तक एक वर्ष और पैसे के लिए पास के विकल्प के किसी भी वित्तीय परिसंपत्ति है जो जल्दी न्यूनतम लेन–देन लागत के साथ पैसे में परिवर्तित किया जा सकता निरूपित करने के लिए प्रयोग किया जाता है आम तौर पर एक अवधिा का मतलब है।

पूंजी बाजार इंस्ट्रूमेंट्स – पूंजी बाजार में आम तौर पर निम्नलिखित दीर्घकालिक अवधि अर्थात, एक वर्ष से अधिक अवधि, वित्तीय साधनों के होते हैं; इक्विटी खंड इक्विटी शेयर, तरजीही शेयरों, परिवर्तनीय तरजीही शेयरों, गैर–परिवर्तनीय तरजीही शेयरों आदि और ऋण खंड डिबेंचरों में, जीरो कूपन बांड, गहरी डिस्काउंट बांड आदि।

हाइब्रिड उपकरण – हाइब्रिड उपकरणों दोनों इक्विटी और डिबेंचर की विशेषताएं हैं। उपकरणों की इस तरह की संकर के साधन के रूप में कहा जाता है। उदाहरण परिवर्तनीय डिबेंचर, वारंट आदि कर रहे हैं।

निष्कर्ष – भारत में मुद्रा बाजार में भारत के भारत और प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड रिजर्व बैंक द्वारा विनियमित है पूंजी बाजार को नियंत्रित करता है। पूंजी बाजार प्राथमिक बाजार और द्वितीयक बाजार के होते हैं। सभी इनीशियल पब्लिक ऑफरिंग प्राथमिक बाजार के तहत आता है और सभी द्वितीयक बाजार लेनदेन द्वितीयक बाजार में सौदों।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. एफ.सी शर्मा: वित्तीय बाजार परिचालन, एस.बी.पी.डी, आगरा।
2. प्रो.आई.वी.त्रिवेदी: मुद्रा एवं वित्तीय प्रणाली, रमेश बुक डिपो, जयपुर।
3 शैलेन्द्र कुमार: वित्तीय बाजार परिचालन, रामप्रसाद एण्ड सन्स, भोपाल।
4. वष्णेय जी.सी: मुद्रा बैंकिंग एवं विदेशी विनिमय।
5. इंटरनेट
6. समाचार पत्र

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

केन्द्रीय विकास योजनाएँ: मध्यप्रदेश में क्रियान्वयन

डॉ. राजेश कुमार सिंह तिवारी*

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) राजभानु सिंह स्मारक महाविद्यालय, मनिकवार, जिला रीवा (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – भारत को विकसित राष्ट्र बनाने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार द्वारा अनेक जनकल्याण विकास योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है, तथा उम्मीद की जाती है कि भारत एक विकसित राष्ट्र बनने में सक्षम होगा। यद्यपि आजादी के पश्चात् सरकार द्वारा अन्य योजनाएँ बनाई गईं उनका सफल क्रियान्वयन भी हुआ किन्तु बहुआयामी उद्देश्य प्राप्त नही की जा सके। देश की नागरिकों की आवश्यकता एवं बदलते परिवेश में नई योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्वयन की आवश्यकता समय-समय पर महसूस भी जाती रही है। नवीन सरकार की देश के विकास की जो गंगा प्रवाहित हो रही है उसमें मध्यप्रदेश भी विकास की ओर तेजी से अग्रसर हो रहा है। योजनाओं के क्रियान्वनय में सुधार लाने एवं पात्र लाभार्थियों को लाभ दिलाने में मध्यप्रदेश आगे रहा है। इन योजनाओं के सफल क्रियान्वयन के लिए मध्यप्रदेश को कई पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं। आशा की जाती है कि वर्तमान योजनाओं के साथ-साथ भविष्य में आने वाली योजनाओं का लाभ प्राप्त करने में मध्यप्रदेश आगे रहेगा।

शोध प्रविधि: इस शोध के लिए दोनो प्रकार के समंको का सहारा लिया गया है। प्राथमिक समंक हितग्राही नागरिकों से सम्पर्क कर जानकारी प्राप्त की गई है, वहीं द्वितीयक समंक समय-समय पर प्रकासित समाचार पत्रों सरकारी रिर्पोटरों से संमंक जुटाये गये है।

विषय विश्लेषण: भारत सरकार द्वारा संचालित योजनाएँ जिनका क्रियान्वयन सम्पूर्ण राष्ट्र में किया जा रहा है मध्यप्रदेश इन योजनाओं के क्रियान्वयन में प्रदेश अग्रणी है प्रधान मंत्री स्वनिधि योजना, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, पी0एम0 आवास योजना, कृषि अधो संरचना निधि, प्रधानमंत्री मातृ वन्दना योजना, पी0एम0 स्वामित्व योजना, नशा मुक्त भारत अभियान, आयुष्मान भारत योजना, मछुआ क्रेडिट कार्ड योजना, राष्ट्रीय पशुरोग नियंत्रण कार्यक्रम, प्रधानमंत्री आदर्श ग्राम योजना, राष्ट्रीय आजीविका मिशन और स्वच्छ भारत मिशन आदि हैं। इस प्रकार एक दर्जन से अधिक योजनाएँ जिनका संचालन केन्द्र सरकार द्वारा लक्ष्य निर्माण कर किया जा रहा है तथा क्रियान्वयन राज्य सरकार द्वारा समाज के हित में किया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 1:मध्यप्रदेश की प्रगति एवं उपलब्धियाँ

क्र.	योजना का नाम	संख्या	धनराशि
1	प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी)	575	8,20,000
2.	प्रधानमंत्री आवस योजना (ग्रामीण)	20	36,25,000
3.	जन जीवन मिशन	228	72,89,000
4.	अमृत सरोवर योजना	5839	....
5.	मध्यप्रदेश ग्राम सड़क योजना	72965 कि.मी. निर्माण कार्य पूरा	....

स्त्रोत:- रोजगार निर्माण, भोपाल 21.10.2024 से 27.10.2024 तक

उपरोक्त सरणी से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश में केन्द्रीय विकास योजनाओ की प्रगति उल्लेखनीय है तथा प्राप्त लक्ष्यों को पूरा करने के लिए सरकार निरन्तर प्रयत्नशील है। इन योजनाओं का सीधा लाभ प्रदेश के नागरिकों को प्राप्त हो रहा है तथा समाज का कायाकल्प तेजी से बदल रहा है। इसका कारण यह है कि केन्द्र व राज्य में एक ही दल की सरकार है, तथा प्रगतिशील बिचारधारा के क्रियान्वयन में विश्वास रखती है।

समस्याएँ एवं कठिनाइयाँ- केन्द्रीय विकास योजनाएँ जनकल्याण की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है इनका क्रियान्वयन समग्र रूप से करने पर आम नागरिकों को भरपूर लाभ मिल सकता है किन्तु अनेक समस्याओं एवं कठिनाईयों के कारण इन योजनाओं के क्रियान्वयन में व्यापकता की कमी देखी गई है, कहीं सकफ क्रियान्वयन हुआ है तो कही आधा-अधूरा तथा कही पर बिल्कुल नही। इनका कारण पर्याप्त धन की कमी, सरकारी मशीनरी की उदासीनता, सतत् निरीक्षण एवं मूल्यांकन लापरवाह सरकारी मशीनरी पर ज्यादा अंकुश एवं लाल फीताशाही व शासकीय धन हड़पने की कोशिशें आदि रही है। जिस तत्परता से योजनाओं का क्रियान्वयन करने की कार्यवाही की जाती है मैदानी क्षेत्र में उतनी दिखाई नहीं देती यही कारण है कि नई-नई योजनाएँ निर्मित की जा कर मैदान में उतारी जाती है।

सुझाव:

1. नगरिकों भी आवश्यकता के अनुसार सकफ सिद्ध होने वाली योजनाएँ ही तैयार की जाए।
2. योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए पर्याप्त धन राशि की व्यवस्था की जानी चाहिए।
3. शासकीय मशीनरी कों योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए प्रेरित व नियंत्रित की जानी चाहिए।
4. योजनाओं के क्रियान्वयन की मनीटरिंग की व्यवस्था की जानी चाहिए।
5. क्रियान्वयन में कमी होने पर तत्काल सुधार की कार्यवाही की जानी चाहिए।
6. योजनाओं के क्रियान्वयन में जन समुदाय के प्रतिनिधियों का भी

सहयोग लिया जाना चहिए।

7. लापरवाह निष्क्रिय व टाल–टूल करने वाले अधिकारियों कर्मचारियों पर कड़ी कार्यवाही करनी चाहिए।
8. यदि योजनाओ में कही कमियॉं है तो उनमे सुधार किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष –जन कल्याण की दिशा में शासन द्वारा संचालित विकास योजनाऍं मध्यप्रदेश के विकास मे काफी हद तक सहायक सिद्ध हुई है तथा आम नागरिकों को सहूलियतें एवं लाभ प्राप्त हुए है, अगर प्रस्तुत सुझावों को ध्यान में रखकर योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्वयन किया जाय तो निश्चित ही मध्यप्रदेश के सभी नागरिकों को लाभ प्राप्त होगा तथा विकास की दिशा में प्रदेश आगे बढ़ेगा तथा विकसित राज्यों की तुलना में मध्यप्रदेश राज्य अग्रणी रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रोजगार और निर्माण भोपाल दिनांक 21.10.2024 से 27.10.2024 तक
2. मध्यप्रदेश प्रगति प्रतिवेदन 2023–24

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सोशल मीडिया का छात्रों के शैक्षणिक स्तर एवं स्वास्थ्य पर प्रभाव का अध्ययन (खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में)

शिवराम हिरवे* डॉ. एम.एल. मोरे**

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) डॉ. बी. आर. अंबेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, डॉ. अंबेडकर नगर, महू (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राधयापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, भीकनगांव, खरगोन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – आज सोशल मीडिया बहुत ही तेजी से प्रसारित हो रहा हैं। आज हमने वास्तविक दुनिया के समक्ष एक आभासी दुनिया खड़ी कर ली है, जहां लोग आपस में संबंध बनाते हैं, अपने सुख-दुख की बातों को सांझा करते हैं। लेकिन इसी के साथ ही सोशल मीडिया के कारण हम अपने सगे-संबंधियों से दूर होते जा रहे हैं। जहां एक ओर सोशल मीडिया ने कई लोगों की जिंदगी में खुशहाली लाने का काम किया है, वहीं दूसरी ओर कई लोगो की आत्महत्या का कारण भी बना हैं। वैज्ञानिकों ने पाया है कि किशोरों द्वारा सोशल मीडिया का अति प्रयोग उसी प्रकार के उत्तेजना पैटर्न का सृजन करता है जैसा अन्य एडिक्शन व्यवहारों से उत्पन्न होता है।

प्रस्तावना – अनेक शोधकर्ताओं ने फेसबुक, ट्विटर और इंस्टाग्राम जैसी साइटों के उपयोग से जुड़े अनेक हानिकारक प्रभावों की जानकारी दी है। इनमे से चिंता, अवसाद, परेशान किया जाना, आत्महत्या के लिए उकसाने वाले विचार, साइबर स्टॉकिंग, अपराध, ईर्ष्या, सूचना अधिभार और ऑनलाइन सुरक्षा की कमी आदि शामिल हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार कुल मिलाकर सोशल मीडिया शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए तो समस्या पैदा करने वाला है ही, साथ ही यह नौकरी और शैक्षणिक प्रदर्शन पर भी नकारात्मक प्रभाव डालता है। इसके अलावा सोशल मीडिया के कारण लोग सुरक्षा अनुसंधानकर्ताओं का मानना है कि सोशल मीडिया का बहुत ज्यादा इस्तेमाल करने वाले लोग मानसिक रूप से बीमार हो रहे हैं। अध्ययनों के अनुसार सोशल मीडिया का ज्यादा प्रयोग नींद में कमी या चिढ़चिडेपन का कारण बन सकता है। लगातार ऐसा रहने से डिप्रेशन, याददाश्त में कमी, मानसिक क्षमता का घटना जैसी समस्या के होने की भी पूरी-पूरी संभावना रहती है। इसके अलावा एक्सपर्ट्स ने पेट की प्रॉब्लम्स, सिरदर्द, आंख दर्द, जी मिचलाना, मांसपेशियों में तनाव जैसी समस्याओं के प्रति भी चेतावनी दी।

अध्ययन का क्षेत्र– मध्यप्रदेश के खरगोन जिले को अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयनित किया गया है।

अध्ययन का समग्र – मध्य प्रदेश के खरगोन जिले के समस्त महाविद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थी अध्ययन का समग्र है।

अध्ययन की इकाई – मध्य प्रदेश के खरगोन जिले के समस्त महाविद्यालयों में अध्ययनरत् चयनित विद्यार्थी अध्ययन की इकाई है।

निदर्शन विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के खरगोन जिले के पांच महाविद्यालयों में अध्ययनरत कुल 220 छात्र एवं छात्राओं को उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि का प्रयोग कर चयन किया गया है।

आँकड़ो का संकलन:

1. **प्राथमिक स्त्रोत–**साक्षात्कार अनुसूची, प्रश्नोत्तरी एवं व्यक्तिगत उपस्थित होकर संबंधित व्यक्तियों से समक्ष में चर्चा कर आकडें एकत्रित किये गये एवं विश्लेषण व अवलोकन द्वारा प्राथमिक आँकड़ो का संकलन किया गया।
2. **द्वितीय स्त्रोत–** शासकीय दस्तावेजों, पुस्तकों, जनगणना रिपोर्ट, समाचार-पत्र, शोधपत्र-पत्रिकाएँ, प्रकाषित एवं अप्रकाषित अभिलेख तथा तकनीकी के माध्यम से आधुनिक दृष्य-श्रव्य, कम्प्यूटर, मोबाईल, टी. व्ही., इण्टरनेट इत्यादि से जुड़कर अध्ययन किया गया है।

यंत्र एवं तकनीक –शैक्षणिक प्रदर्शन स्केल (Academic Performance Scale), सोशल मीडिया स्केल (Social Media Addiction Scale), साक्षात्कार अनुसूची, समूह चर्चा, अवलोकन, कैमरा एवं इंटरनेट आदि यंत्र एवं तकनीक का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकीय विश्लेषण– शैक्षणिक प्रदर्शन स्केल (Academic Performance Scale) एवं सोशल मीडिया स्केल (Social Media Addiction Scale) के माध्यम से एकत्र किए गए आंकडों का विश्लेषण के माध्यम से सहसंबंध विधि, X^2 (काई-वर्ग) परीक्षण द्वारा के विश्लेषण किया गया है।

खरगोन जिले के महाविद्यालय में अध्ययनरत छात्रों का सोशल मीडिया के उपयोग से स्वास्थ्य पर प्रभाव निम्न प्रकार से पडता है–

सारिणी क्रं.-1: उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से छात्र मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्रभावित होने के बारे मे जानने का वर्गीकरण

उत्तरदाता	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	132	60 प्रतिशत
नहीं	88	40 प्रतिशत
योग	220	100

आरेख क्रं. -1

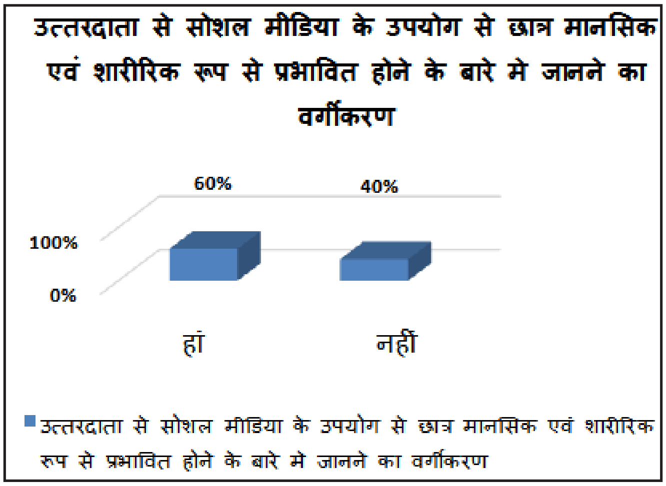

उपरोक्त सारिणी में उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से छात्र मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्रभावित होने के बारे मे जानने का वर्गीकरण करने पर 220 उत्तरदाताओं में से 132 उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया जिसका 60 प्रतिशत है जो कि सर्वाधिक हे जबकि 88 उत्तरदाताओं से अस्वीकार किया है जिसका 40 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाताओं ने सोशल मीडिया के उपयोग से छात्र मानसिक एवं शारीरिक रूप से प्रभावित होने को स्वीकार किया है।

सारिणी क्रं.-2: उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से छात्रों के शैक्षणिक स्तर पर गिरावट पडने के बारे मे जानने का वर्गीकरण

उत्तरदाता	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	167	75.9 प्रतिशत
नहीं	53	24.1 प्रतिशत
योग	220	100.0

आरेख क्रं. -2

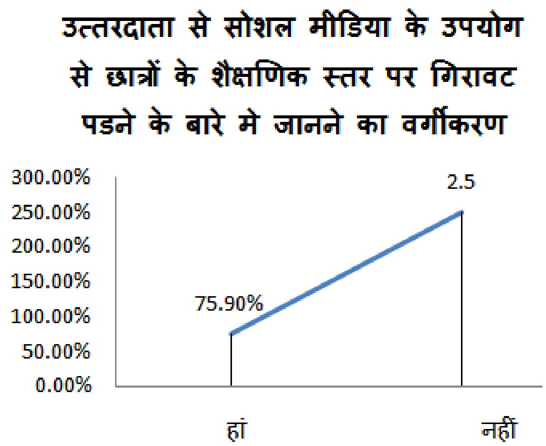

उपरोक्त सारिणी में उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से छात्रों के शैक्षणिक स्तर पर गिरावट पडने के बारे मे जानने का वर्गीकरण करने पर 220 उत्तरदाताओं ने यह बात स्वीकार की है कि सोशल मीडिया के उपयोग से छात्रों के शैक्षणिक स्तर पर गिरावट आई है जिसका 75.9 प्रतिशत है जो कि सबसे अधिक है जबकि 53 उत्तरदाताओं ने इस बात को अस्वीकार किया है जिसका 24.1 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाताओं का मानना है कि सोशल मीडिया के उपयोग से छात्रों के शैक्षणिक स्तर पर गिरावट आई है।

सारिणी क्रं.-3: उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से आपको स्वास्थ्य संबंधी कोई परेशानियां आई है, के बारे मे जानने का वर्गीकरण

उत्तरदाता	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	138	62.7 प्रतिशत
नहीं	82	37.3 प्रतिशत
योग	220	100.0

आरेख क्रं. -3

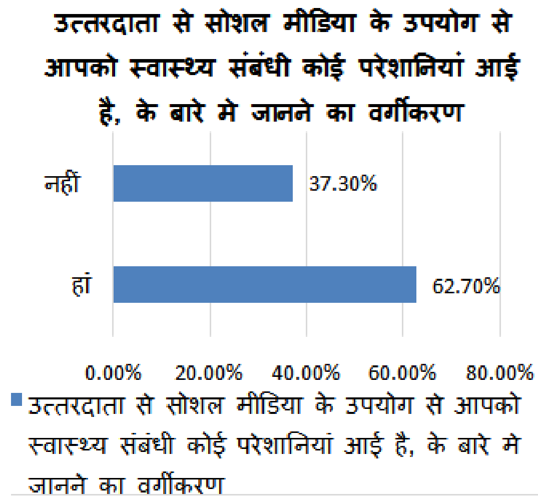

उपरोक्त सारिणी में उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से आपको स्वास्थ्य संबंधी कोई परेशानियां आई है, के बारे मे जानने का वर्गीकरण करने पर 220 उत्तरदाताओं में से पर 138 उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया है कि उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से आपको स्वास्थ्य संबंधी कोई परेशानियां आई है, जिसका 62.7 प्रतिशत है जबकि 82 उत्तरदाताओं ने अस्वीकार किया है जिसका 37.3 प्रतिशत है जो कि सबसे कम है। इससे स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाताओं का कहना है कि उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से आपको स्वास्थ्य संबंधी कोई परेशानियां आती है।

सारिणी क्रं.-4: उत्तरदाता से सोशल मीडिया के उपयोग से आपको स्वास्थ्य संबंधी कोई परेशानियां आई है, के बारे मे जानने का वर्गीकरण

उत्तरदाता	आवृत्ति	प्रतिशत
सिरदर्द	152	69.1 प्रतिशत
आंखों पर चश्मा	32	14.6 प्रतिशत
डिप्रेशन	26	11.8 प्रतिशत
घबराहट	10	4.5 प्रतिशत
योग	220	100.0

आरेख क्रं. -4

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

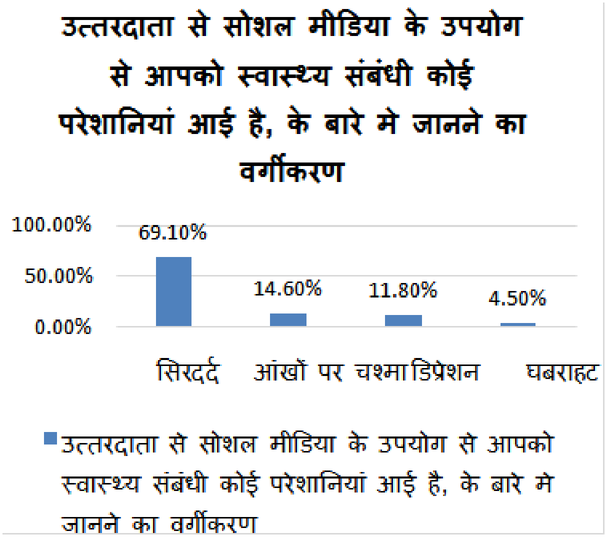

उपरोक्त सारिणी में उत्तरदाता से हां तो किस प्रकार की है, के बारे मे जानने का वर्गीकरण करने पर 220 उत्तरदाताओं में से 152 उत्तरदाताओं के सिर में दर्द होता है जिसका 69.1 प्रतिशत है जो कि सबसे अधिक है जबकि 32 उत्तरदाताओं को आंखों में चश्मा लगा हुआ है जिसका 14.6 प्रतिशत है। उसी प्रकार 26 उत्तरदाताओं को डिप्रेशन जैसी बीमारी है जिसका 11.8 प्रतिशत है जबकि 10 उत्तरदाताओं को घबराहट होती है जिसका 4.5 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाताओं को सिरदर्द की परेशानी होती है।

निष्कर्ष :

1. खरगोन जिले के महाविद्यालयीन अध्ययनरत छात्रों में सोशल मीडिया अर्थात मोबाइल, लेपटॉप आदि के अधिक उपयोग से मानसिक एवं शारीरिक परेशानियों का सामना करना पड रहा है, जिसमें 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि उनके स्वास्थ्य पर प्रभाव पड रहा है जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि सोशल मीडिया के अधिक उपयोग से स्वास्थ्य पर कोई प्रभाव नहीं पड रहा है।
2. खरगोन जिले के महाविद्यालयीन अध्ययनरत उत्तरदाता छात्रों में से 75.9 प्रतिशत उत्तरदाता छात्रों के अनुसार सोशल मीडिया के अधिक उपयोग से छात्रों के शैक्षणिक स्तर में भी गिरावट आ रही है जबकि 24.9 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार सोशल मीडिया के अधिक उपयोग करने के बावजूद छात्रों के शैक्षणिक स्तर में कोई गिरावट नहीं आ रही है।
3. उत्तरदाता छात्रों में से 62.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार उनके स्वास्थ्य में कई प्रकार की परेशानियां आयी है, जबकि 37.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार उनके स्वास्थ्य पर किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं आयी है।
4. खरगोन जिले के अधिकांश 69.1 प्रतिशत उत्तरदाताओं को सोशल मीडिया के अधिक उपयोग से सिरदर्द की परेशानी हो रही है। इसके साथ ही साथ 14.6 प्रतिशत लोगों को आंखों में चश्मा भी लग गया है एवं 11.8 प्रतिशत लोग डिप्रेशन जैसी बीमारी से भी ग्रसित हो गये है। इसके अलावा 4.5 प्रतिशत लोगों को घबराहट भी महसूस होती है।

सुझाव :

1. सोशल मीडिया अर्थात मोबाइल, लेपटॉप आदि अधिक उपयोग करने से उससे निकेलने वाली उच्च रेडिऐशन के कारण स्वास्थ्य पर प्रभाव पडता है इसके अलावा आज की युवापीढी मोबाइल फोन के अधिक उपयोग से पढाई और अन्य गतिविधियों से दूर होते जा रहे है।
2. युवावर्ग से लेकर सभी वर्ग के लोग आजकल सोशल मीडिया के आदि हो गये है, इसमें लोग लंबे समय तक इससे जुडे रहते है, जिससे युवा छात्रवर्ग पर अपनी शिक्षा एवं सामाजिक संबंधों से प्रभावित हो रहे है एवं छोटे से लेकर बडे उम्र तक के लोगों के स्वास्थ्य पर भी प्रभाव पड रहा है।

अतः इससे बचने के लिये उचित सीमा तक और सावधानीपूर्वक तथा संतुलित तरीके के साथ ही आवश्यकतानुसार उपयोग करना चाहिये। जिससे इसके नकारात्मक प्रभाव से बचा जा सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दीपाली आर. मिस्त्री, युवाओं में सोशल नेटवर्किंग और उनके संचार, उनके मतभेद समाधान कौशल, 4 दिसम्बर 2014,
2. गीतांजलि नायडू और सुनील अग्रवाल, सोशल नेटवर्किंग साइट्स का चेन्नई एवं कोयम्बटूर के कॉलेज और छात्रों अन्तः व्यैक्तिक सम्बंधो पर प्रभाव का 2013
3. कोठारी गुलाब, ***'मीडिया और संस्कृति'***, अगस्त 4, 2009, गुलाब कोठारीज ब्लॉग
4. 'मीडिया का जनजीवन पर सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव':- रामसुमेटप्रत्याशा जैन, सोशल नेटवर्किंग साइट्स का भारत के युवाओं पर प्रभाव 2011
5. शबनम एस. माहत, सोशल नेटवर्किंग साइट्स का युवाओं पर प्रभाव 2014

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उपयोगितावाद की वर्तमान प्रांसगिकता

सीता नुवाल*

* एम.ए. (राजनीति विज्ञान)महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.) भारत

प्रस्तावना - उपयोगितावाद एक आचार सिद्धांत है, जिसकी मान्यता है कि कोई भी आचरण तभी नैतिक है, जब वह अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख की अभिवृद्धि करता है। जब सामाजिक राजनीतिक निर्माण में उपयोगितावादी नैतिकता का प्रयोग किया जाता है, तो इसका उद्देश्य समग्र रूप से समाज की बेहतरी होता है। उपयोगितावाद सही और गलत का निर्धारण करने के लिए एक तर्क आधारित दृष्टिकोण है।

यद्यपि उपयोगितावाद के निशान प्राचीन यूनानी दर्शन में भी पाए जाते थे, पर जेरेमी बेंथम और जे.एस. मिल द्वारा किए गये योगदान के कारण इसे लोकप्रिय बनाया गया था। इस अवधारणा ने 19वीं सदी के पहले भाग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। उपयोगितावाद के संदर्भ में उसकी वर्तमान प्रांसगिकता को देखते हुए प्रत्येक सरकार ऐसी नीतियां बनाने के लिए बाध्य है। जो अधिकतम संख्या के लिए अधिकतम लाभ दे सके। जो सरकार कुछ लोगो के लाभ के लिए काम करती है। वह सरकार बिलकुल भी अच्छी सरकार नहीं कहीं जाती है एवं ना हीं वह सरकार ज्यादा समय तक स्थिर रह पाती है। क्यों कि भारत एक लोकतांत्रिक देश है। जहां बहुमत द्वारा सरकार बनाई जाती है और अगर सरकार को लंबे समय तक स्थिर रहना है तो उनको बहुमत का हित तो सोचना हि पड़ेगा। और अगर अधिकतम व्यक्ति किसी सरकार की नीतियों से लाभांन्वित होते है। तो वह सरकार अधिकतम समय तक अपना कार्यकाल पूर्ण कर पाती है। और वह सरकार हि न्यायपूर्ण एवं परोपकारी कहलाती है।

भारत में करीब 70प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है। यानी भारत की दो तिहाई से ज्यादा आबादी गांवों में हि निवास करती है। और जहां ज्यादा कल्याण की जरूरत है, एवं सरकार की नीतियों एवं योजनाओं को जमीनी स्तर पर लाने पर सर्वाधिक कल्याण होगा एवं अधिकतम व्यक्तियों का अधिकतम हित भी हो जायेगा। जिससे देश के ग्रामीण परिवेश में भी लोगो को लाभ मिलेगा।

राजनीतिक दर्शन में, उपयोगितावाद सरकार के अधिकार एवं व्यक्तिगत अधिकारों की पवित्रता को उनकी उपयोगिता पर आधारित करता है, इस प्रकार प्राकृतिक कानून , प्राकृतिक अधिकार या सामाजिक अनुबंध के सिद्धांत के लिए एक विकल्प प्रदान करता है, इस प्रकार किस तरह की सरकार सबसे अच्छी है, यह सवाल बन जाता है, की किस तरह कि सरकार के सबसे अच्छे परिणाम होते है। इससे यह निष्कर्ष निकलता हैं कि लोकतांत्रिक सरकार के परिणाम दीर्घकालिक एवं सर्वोत्तम होते है। एक ऐसा आकलन जिसके लिए मानव स्वभाव और व्यवहार के बारे में तथ्यात्मक आधार की आवश्यकता होती है। आम तौर पर उपयोगितावादीयों ने इसका समर्थन किया है, लोकतंत्र को सरकार के हित को सामान्य हित के साथ जोड़ने का एक तरीका माना गया है। उन्होंने इस आधार पर दूसरों के लिए समान स्वतंत्रता के साथ संगत अधिकतम व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए तर्क दिया है, कि व्यक्ति आम तौर पर अपने कल्याण के लिए सबसे अच्छे न्यायाधिश होते है और उन्होंने शांति पूर्ण राजनीतिक प्रकियाओं के माध्यम से प्रगतिशील सामाजिक परिवर्तन की संभावनाओं और वांछनीयता में विश्वास किया है।

आज व्यवयायिक नैतिकता कि औपचारिक संहिता का होना पहले से कही अधिक महत्वपूर्ण है। किसी व्यवसाय को बढ़ने बढ़ाने के लिए उसे न केवल अपनी निचली रेखा को बढ़ाने की आवश्यकता होती है बल्कि उसें सामाजिक रूप से जिम्मेदार होने की प्रतिष्ठा भी बनानी चाहिएं। जो समाज के लिए उपयोगी है, वह शुभ है, और शुभ वहीं है जो समाज को सुख प्रदान करता है। उपयोगितावाद के सुखवाद के सिंद्धात में बेंथम ने सुखों के केवल मात्रात्मक भेद को माना है, वहीं मिल ने मात्राात्मक के साथ साथ गुणात्मक भेद भी माना है।

नैतिक मापदण्डों के अनुसार देखे तो समानता व स्वतंत्रता को पूर्णत: लागू किया जाना चाहिए। वर्तमान संदर्भ में देखे तो महिलाओं की भूमिका को बहूत हासिये पर रखी गयी। उन्हें पूर्णत: समानता एवं स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है एवं महिलाऐ अभी भी पुरूषों के अधिन है, एवं स्वयं के अधिकारों के लिए लड़ना या आवाज उठाना नहीं जानती है। सरकार की नीतियों को जमीनी स्तर पर लागू करवा कर महिलाओं को अपने हित एवं कल्याण के लिए जागरूक करके अधिकतम व्यक्तियों को सुख मिलेगा एवं इससे सरकार की प्रासंगिकता और ज्यादा बढ़ेगी।

उपयोगितावादी मानते है, कि वहीं कर्म शुभ है, जो सिर्फ व्यक्ति विशेष के हित में न होकर व्यापक सामाजिक हित के पक्ष में होता है।

उपयोगितावाद का मुख्य संदर्भ लोकतंत्र में माना जाता है, लोकतंत्रों का उदाहरण प्राचीन यूनान और रोम में मिलते है, जहॉ प्रभुसत्ता संपूर्ण जन-समुदाय के हाथों में रहती थी, इसके गुण है, देश-प्रेम, समानता में विश्वास और सर्व-हित के लिए व्यक्तिगत सुख के त्याग की भावना लोगो में निहित होती हैं।

उपयोगितावाद जैसा सिद्धांत कई तरह की शासन पद्धति में प्रांसगिक हो सकता है, प्रथम विश्व के देशों में उपयोगितावाद कई वर्षो से चला आ रहा है। यह सिद्धांत किसी भी शासन पद्धति में भी पाया जा सकता है, बशर्ते

वहां भी अधिकतम लोगो का हित देखा जाता हों। यह किसी एक शासन पद्धति की विशेषता नहीं है, बल्कि अनेक शासन पद्धतियों में प्रांसगिक बनाया जा सकता है।

तृतिय दुनिया के देश एशिया, लैटिन अमेरिका, और कैरिबियन के सभी देश और ओशिनिया के कुछ राज्य और क्षेत्र शामिल है। जो की 20वीं सदी के आखिरी आधे हिस्से में देशों के रूप में वर्गिकृत किये गये है। जो की आर्थिक रूप से अविकसित थे और जिनका प्रमुख विश्व देशो कि शक्तियों से बहूत कम या कोई संबंध नहीं था। इन देशों में उपयोगितावाद धिरे-धिरे अपने पॉव मतबूत कर रहा है। क्यों कि इन देशों में लोगो को स्वतंत्रता, समानता और मताधिकार जैसे अधिकार भी कई वर्षो बाद दिये गये है। पहले ये देश उपनिवेशों के शिकार थे और फिर इनसे आजाद होने के बाद अलग-अलग देशों ने अपने सामाजिक परिपेक्ष्य के अनुरूप शासन पद्धतियॉ अपनाई और लोगो को अधिकार दिये।

उपयोगितावाद का सिद्धांत जीवन के अधिकतम लोगो द्धारा यथासंभव पीड़ामुक्त बनाने पर केंद्रित है। सामान्यत: यह एक प्रशंसा योग्य लक्ष्य की भॉति लगता है। परंतु यदि सभी इस जीवन में अधिकतम सुख की प्राप्ति के लिये ही जीवन का व्यापक दृष्टिकोण संकीर्ण /धुंधला हो जाएगा।

राजनीतिक दायित्व के लिए उपयोगितावादी दृष्टिकोण ने दैवीय अधिकारों, प्राकृतिक अधिकारों और सामाजिक अनुबंध के सिद्धांतों को ध्वस्त कर दिया। इस अवधारणा ने व्यक्ति को राज्य से पहले रखा। यह परोपकारी है, लेकिन अहंकारी नहीं है। वर्तमान में उपयोगितावाद की अवधारणा सभी कानूनों की मूल अवधारणा बन गई है। वास्तव में वर्तमान लोकतांत्रिक सरकार सबसे बड़े सदस्य को सबसे अधिक खुशी के सिद्धांत पर आधारित है, हांलाकि अवधारणा खामियों से मुक्त नहीं है, लेकिन सिद्धांतो के कार्यान्वयन में उन्हें कम किया जा सकता है। सुखवाद एक विचारधारा है जो तर्क देती है, कि सुख की खोज करना और दुख से बचना ही कल्याण का एकमात्र धटक है।

मानव जाति दो संप्रभु स्वामियों के बीच में है, बेंथम के अनुसार प्रकृति ने ही मानव जाति के दो संप्रभु स्वामियों, अर्थात दर्द और खुशी के शासन में रखा है, इसलिए उन्होने कहा कि यह राज्य का कर्त्तव्य है या राज्य व्यक्ति के लिए आवश्यक है कि वह अपने सुख को अधिकतम करे और दर्द को कम से कम करें। इसके अलावा उनके अनुसार उपयोगिता किसी भी वस्तु में वह गुण है, जिसके द्धारा वह लाभ, फायदा, खुशी, पैदा करती है या शरारत, दर्द बुराई को होने से रोकती है।

सरकार का काम समाज की खुशी को बढ़ावा देना है। अगर कोई गड़बड़ी होती है, तो राज्य के पास दोषियों को दंडित करने का भी पूरा अधिकार है। वर्तमान संदर्भ में देखे तो दण्ड देने के लिये कई तरह के कानून बनाये गये है। जो कि विभिन्न देशों के संविधान के अनुसार अपनी अपनी दंड संहिता के तहत दण्डित किया जाता है। उपयोगितावाद के मुताबिक, सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक फैसलों में समाज की भलाई को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

उपयोगितावाद के मुताबिक, अगर कोई काम, कानुन या नीति से मानव सुख बढ़ाता है या मानव पीड़ा कम होती है। तो वह नैतिक रूप से अच्छा है। उपयोगितावादी मानते है कि वही कर्म शुभ है जो सिर्फ व्यक्ति विशेष के हित में न होकर व्यापक सामाजिक हित के पक्ष में होता है। यदि यह संभव नहीं तो वह कार्य शुभ है, जो अधिकतम व्यक्तियों को अधिकतम सुख प्रदान करने में सहायक है।

निष्कर्षत-भारत जैसे देश के लिए लोक कल्याणकारी राज्य की धारणा को फलीभूत करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को गरिमापूर्ण जीवन प्रदान करना है, एवं समाज के निचले स्तर पर स्थित व्यक्ति के जीवन स्तर में सुधार करना है, यह सिद्धांत न केवल भारत बल्कि अन्य विकासशील देशों में भी सदैव उपयोगी साबित होगा।

उपयोगितावाद परिणामवाद का एक संस्करण है, जो कहता है कि किसी भी कार्य के परिणाम ही सही और गलत का एकमात्र मानक है। कोई सरकार अगर लंबे समय तक सत्ता पर काबिज रहती है। तो इसका तात्पर्य यही है कि उसके कार्य और प्रणालियां इतनी अच्छी एवं लाभदायक साबित हुई जिसके परिणामस्वरूप वह सरकार वापस सत्ता में आ पाती है, इसलिए उपयोगितावाद या तो पूरी मानवता या सभी संवेदनशील प्राणियों के हितों को समान रूप से मानता है। उपयोगितावाद को सामाजिक कल्याण अर्थशास्त्र, न्याय के सवालों, वैश्विक गरीबी के के संकट, और मानवता के लिए अस्तित्वगत जोखिमों से बचने के महत्व पर लागू किया गया है। अंतत: वही कर्म शुभ है जो सिर्फ व्यक्ति विशेष के हित में न होकर व्यापक सामाजिक हित के पक्ष में होता है, एवं अधिकतम व्यक्तियों को सुख प्रदान किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपयोगितावाद- ओ.पी. गाबा
2. www.wikipedia.org

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद का सिंहावलोकन

डॉ. लोकेश कुमार शर्मा*

* एसोशिएट प्रोफेसर, मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत

शोध सारांश – दीनदयाल उपाध्याय भारतीय राजनीति के एक प्रमुख विचारक, संगठनकर्ता और भारतीय जनसंघ के संस्थापक थे। उनकी विचारधारा 'एकात्म मानववाद' ने भारतीय समाज और राजनीति पर गहरा प्रभाव डाला। उपाध्याय का दृष्टिकोण था कि भारत की विकास यात्रा को पश्चिमी मॉडल के अनुरूप नहीं होना चाहिए, बल्कि इसे भारतीय सांस्कृतिक और आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित होना चाहिए। उनका 'एकात्म मानववाद' एक ऐसी विचारधारा है जो व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक जीवन के समन्वय की बात करती है। यह विचारधारा भारत के पारंपरिक और आधुनिक तत्वों के बीच एक संतुलन स्थापित करने का प्रयास करती है।

एकात्म मानववाद का सिद्धांत – 'एकात्म मानववाद' का अर्थ है मानव का एकीकृत दृष्टिकोण, जिसमें व्यक्ति, समाज, और प्रकृति का सामंजस्यपूर्ण संबंधा होता है। यह विचारधारा मानव को एक जीवित इकाई के रूप में देखती है, जो अपने सामाजिक, आर्थिक, और आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक संतुलित जीवन जीने की कोशिश करता है। उपाध्याय ने इस सिद्धांत के माध्यम से एक ऐसी समाज व्यवस्था की कल्पना की, जिसमें न केवल आर्थिक विकास हो, बल्कि सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विकास भी हो।

एकात्म मानववाद के चार प्रमुख तत्व हैं

1. **व्यक्ति**: उपाध्याय का मानना था कि व्यक्ति किसी समाज की मूल इकाई है। व्यक्ति का सर्वांगीण विकास, जो शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, और आध्यात्मिक स्तर पर होता है, समाज के विकास का आधार होना चाहिए। इस दृष्टिकोण में व्यक्ति का केवल भौतिक विकास नहीं, बल्कि उसकी आध्यात्मिक और नैतिक उन्नति भी महत्वपूर्ण है।

2. **समाज:** समाज को व्यक्तियों का एक संगठित समूह माना जाता है, जो अपने सदस्यों के व्यक्तिगत और सामूहिक हितों के संरक्षण और उन्नति के लिए काम करता है। उपाध्याय ने समाज को एक 'जीवित इकाई' के रूप में देखा, जिसमें विभिन्न अंगों के बीच एक प्राकृतिक संतुलन होना चाहिए। उन्होंने समाज के प्रत्येक अंग को एक–दूसरे पर निर्भर और सह–अस्तित्व में मान्यता दी।

3. **राष्ट्र:** उपाध्याय का मानना था कि राष्ट्र केवल भूगोल और राजनीति की एक इकाई नहीं है, बल्कि यह एक जीवित इकाई है, जिसमें एक विशेष सांस्कृतिक, धार्मिक, और ऐतिहासिक अनुभवों का समावेश होता है। उनका मानना था कि भारत का राष्ट्रवाद उसकी सांस्कृतिक एकता और नैतिक मूल्यों पर आधारित होना चाहिए। एकात्म मानववाद के अनुसार, राष्ट्र के हितों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए और विकास के सभी प्रयासों को राष्ट्र की सेवा में लगाया जाना चाहिए।

4. **धर्म:** उपाध्याय ने धर्म को व्यक्ति और समाज की आत्मा के रूप में देखा। उनके अनुसार, धर्म केवल पूजा–पाठ नहीं है, बल्कि यह जीवन का एक मार्गदर्शक सिद्धांत है, जो व्यक्ति के कार्यों, विचारों और व्यवहारों को नियंत्रित करता है। धर्म के इस व्यापक दृष्टिकोण में नैतिकता, सत्य, और न्याय का महत्व होता है। उन्होंने कहा कि धर्म के बिना कोई भी समाज या राष्ट्र अपनी दिशा और उद्देश्य को खो देता है।

पश्चिमी विचारधारा के प्रति उपाध्याय की आलोचना – दीनदयाल उपाध्याय ने पश्चिमी विचारधाराओं की तीखी आलोचना की, विशेष रूप से व्यक्तिवाद और साम्यवाद के संदर्भ में। उनका मानना था कि पश्चिमी विचारधाराओं ने मानव जीवन के केवल भौतिक पहलुओं पर जोर दिया और आध्यात्मिक और नैतिक तत्वों की उपेक्षा की।

1. **व्यक्तिवाद की आलोचना:** उपाध्याय के अनुसार, व्यक्तिवाद ने समाज के सामूहिक हितों की उपेक्षा की और इसे स्वार्थ और प्रतिस्पर्धा के आधार पर संचालित किया। इस दृष्टिकोण में व्यक्ति की स्वतंत्रता को इतना अधिक महत्व दिया गया कि इससे समाज में असमानता और असंतोष बढ़ा। उन्होंने कहा कि व्यक्तिवाद ने समाज को विभाजित किया और इसका संतुलन बिगाड़ा।

2. **साम्यवाद की आलोचना:** साम्यवाद के बारे में उपाध्याय का कहना था कि इस विचारधारा ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता और अधिकारों का दमन किया और राज्य को सर्वोच्च सत्ता बना दिया। उन्होंने साम्यवाद को मानव स्वाभाविकता के खिलाफ बताया, क्योंकि यह विचारधारा केवल आर्थिक समानता पर ध्यान केंद्रित करती है और आध्यात्मिक और नैतिक विकास की उपेक्षा करती है।

उपाध्याय का मानना था कि इन दोनों विचारधाराओं ने मानवता को उसके वास्तविक उद्देश्य से भटका दिया और उसे केवल भौतिक संपन्नता की ओर प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि एकात्म मानववाद इन पश्चिमी विचारधाराओं का एक सशक्त विकल्प है, जो मानव जीवन के सभी पहलुओं को संतुलित करता है और व्यक्ति, समाज, और राष्ट्र के बीच एक संतुलन स्थापित करता है।

आर्थिक दृष्टिकोण – दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद का आर्थिक दृष्टिकोण भी अद्वितीय था। उनका मानना था कि आर्थिक विकास का उद्देश्य केवल भौतिक समृद्धि नहीं होना चाहिए, बल्कि इसका उद्देश्य समाज के सभी वर्गों का सर्वांगीण विकास होना चाहिए।

1. **स्वदेशी:** उपाध्याय ने 'स्वदेशी' की अवधारणा को महत्वपूर्ण स्थान दिया। उनका मानना था कि भारत जैसे देश के लिए आत्मनिर्भरता महत्वपूर्ण है। स्वदेशी के माध्यम से उन्होंने यह सुझाव दिया कि भारत को अपने आर्थिक विकास के लिए अपने संसाधनों, उद्योगों और कृषि पर निर्भर रहना चाहिए। उन्होंने विदेशी आयात और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रभाव के खिलाफ आवाज उठाई और कहा कि स्वदेशी के माध्यम से ही भारतीय अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाया जा सकता है।

2. **न्यायमूलक अर्थव्यवस्था:** उपाध्याय का मानना था कि आर्थिक विकास का लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुंचना चाहिए। उन्होंने कहा कि विकास की नीतियाँ ऐसी होनी चाहिए, जो समाज के गरीब और कमजोर वर्गों को लाभान्वित करें। उनका दृष्टिकोण था कि समाज में किसी भी प्रकार की असमानता और शोषण को समाप्त किया जाना चाहिए।

3. **धर्म और अर्थ:** उपाध्याय ने धर्म और अर्थ (आर्थिक जीवन) के बीच एक समन्वय की बात की। उनका मानना था कि आर्थिक जीवन को धर्म के मार्गदर्शन में संचालित होना चाहिए। उन्होंने कहा कि धर्म का पालन करते हुए व्यक्ति को अपने आर्थिक गतिविधियों का संचालन करना चाहिए, जिससे वह न केवल व्यक्तिगत लाभ कमा सके, बल्कि समाज और राष्ट्र के लिए भी उपयोगी हो सके।

राजनीतिक दृष्टिकोण – दीनदयाल उपाध्याय का राजनीतिक दृष्टिकोण भारतीय राजनीतिक परंपराओं और मूल्यों पर आधारित था। उन्होंने कहा कि भारतीय राजनीति को विदेशी मॉडल्स पर आधारित नहीं होना चाहिए, बल्कि इसे भारतीय सांस्कृतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के अनुरूप विकसित किया जाना चाहिए।

1. **राज्य और धर्म:** उपाध्याय का मानना था कि राज्य को धर्म के सिद्धांतों का पालन करना चाहिए, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि राज्य धार्मिक गतिविधियों में हस्तक्षेप करे। उन्होंने धर्म को राजनीति से अलग नहीं माना, बल्कि कहा कि धर्म राजनीति का मार्गदर्शन कर सकता है। धर्म का पालन करने वाले राज्य को न्याय, सत्य, और नैतिकता के सिद्धांतों पर चलना चाहिए।

2. **राज्य की भूमिका:** उपाध्याय का मानना था कि राज्य का मुख्य उद्देश्य नागरिकों की सेवा करना और उनके जीवन की गुणवत्ताा को सुधारना होना चाहिए। उन्होंने राज्य को एक 'सेवक' के रूप में देखा, जो नागरिकों की भलाई के लिए काम करता है। उनका मानना था कि राज्य को न तो अत्यधिक केंद्रीकृत होना चाहिए और न ही अत्यधिक विकेंद्रित। इसके बजाय, उन्होंने एक संतुलित और सेवा–प्रधान राज्य की वकालत की।

3. **ग्राम स्वराज:** उपाध्याय का मानना था कि भारत की राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था का आधार ग्राम होना चाहिए। उन्होंने महात्मा गांधी के 'ग्राम स्वराज' के सिद्धांत का समर्थन किया और कहा कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था और ग्राम पंचायतों को सशक्त बनाने से ही देश का समग्र विकास संभव है। उन्होंने कहा कि ग्राम स्वराज के माध्यम से ही भारतीय समाज के सभी वर्गों का समन्वय और विकास हो सकता है।

भारतीय संस्कृति के महत्व की वकालत – दीनदयाल उपाध्याय का 'एकात्म मानववाद' भारतीय संस्कृति के मूल्यों पर आधारित है। उन्होंने भारतीय संस्कृति को मानवता की महान धारोहर माना, जो सहिष्णुता, सह–अस्तित्व, और सार्वभौमिक भाईचारे की भावना पर आधारित है। उनका मानना था कि भारतीय संस्कृति में निहित मूल्य किसी भी विदेशी विचारधारा से कहीं अधिक श्रेष्ठ और व्यापक हैं।

उपाध्याय ने भारतीय संस्कृति को केवल धार्मिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि एक संपूर्ण जीवन–दर्शन के रूप में देखा। उनके अनुसार, भारतीय संस्कृति का उद्देश्य व्यक्ति और समाज के सभी स्तरों पर संतुलन और समन्वय स्थापित करना है। उन्होंने भारतीय समाज की विविधता को स्वीकार करते हुए कहा कि इस विविधता में ही एकता की भावना छिपी हुई है।

1. **धर्म और संस्कृति का समन्वय:** उपाध्याय का मानना था कि धर्म और संस्कृति एक–दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। भारतीय संस्कृति की मूलभूत अवधारणाएँ धर्म से उत्पन्न हुई हैं, जो जीवन के हर पहलू में समाहित हैं। उन्होंने कहा कि भारतीय समाज में धर्म का मतलब केवल धार्मिक अनुष्ठान या पूजा नहीं है, बल्कि यह जीवन की नैतिक और आध्यात्मिक दिशा को निर्धारित करता है।

2. **संस्कृति का संरक्षण:** उपाध्याय ने भारतीय संस्कृति के संरक्षण और पुनरुद्धार की आवश्यकता पर जोर दिया। उनका मानना था कि आधुनिकता और पश्चिमीकरण के प्रभाव के कारण भारतीय समाज अपनी सांस्कृतिक जड़ों से दूर होता जा रहा है। उन्होंने कहा कि हमें अपनी सांस्कृतिक धरोहर को संजोकर रखना चाहिए और उसे आने वाली पीढ़ियों के लिए संरक्षित करना चाहिए।

3. **समन्वित जीवन का विचार:** एकात्म मानववाद का मुख्य उद्देश्य एक समन्वित जीवन की स्थापना करना है, जिसमें व्यक्ति, समाज, और राष्ट्र के बीच संतुलन हो। उपाध्याय ने इस समन्वय को भारतीय संस्कृति की विशेषता के रूप में देखा। उनके अनुसार, भारतीय संस्कृति में जीवन के हर क्षेत्र में संतुलन और समन्वय की भावना निहित है, जो व्यक्ति को एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती है।

आधुनिक संदर्भ में एकात्म मानववाद – दीनदयाल उपाध्याय के 'एकात्म मानववाद' के सिद्धांतों का आधुनिक समय में भी विशेष महत्व है। यह विचारधारा केवल एक ऐतिहासिक या सांस्कृतिक दृष्टिकोण तक सीमित नहीं है, बल्कि यह आज के समय में भी प्रासंगिक है, जब समाज विभिन्न चुनौतियों और परिवर्तनों का सामना कर रहा है।

1. **सामाजिक और आर्थिक न्याय:** एकात्म मानववाद के सिद्धांत आधुनिक समाज में सामाजिक और आर्थिक न्याय की स्थापना में सहायक हो सकते हैं। उपाध्याय का मानना था कि समाज के सभी वर्गों को विकास के लाभों का समान रूप से लाभ मिलना चाहिए। आज के समय में, जब असमानता और गरीबी जैसी समस्याएँ व्याप्त हैं, एकात्म मानववाद का दृष्टिकोण एक ऐसा मार्ग दिखा सकता है, जिससे इन चुनौतियों का समाधान किया जा सके।

2. **पर्यावरण और सतत विकास:** उपाध्याय के विचारों में प्रकृति और मानव के बीच एक संतुलन की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। आधुनिक समय में, जब पर्यावरणीय संकट बढ़ रहे हैं, एकात्म मानववाद का दृष्टिकोण सतत विकास की दिशा में मार्गदर्शन कर सकता है। यह दृष्टिकोण विकास के उन मॉडलों को प्रोत्साहित करता है, जो पर्यावरण की सुरक्षा और संतुलन को बनाए रखते हुए समाज की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।

3. भारतीयता और वैश्वीकरण: एकात्म मानववाद भारतीयता के सिद्धांतों पर आधारित है, लेकिन यह वैश्विक संदर्भ में भी अपनी प्रासंगिकता रखता है। उपाध्याय ने भारतीय संस्कृति और मूल्य को वैश्विक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण माना। उनका मानना था कि भारतीय संस्कृति का संदेश केवल भारत तक सीमित नहीं है, बल्कि यह विश्व मानवता के लिए भी उपयोगी है। आधुनिक समय में, जब वैश्वीकरण के चलते सांस्कृतिक एकरूपता का खतरा है, एकात्म मानववाद भारतीय पहचान को संरक्षित करने में सहायक हो सकता है।

4. मानवता का एकीकृत दृष्टिकोण: एकात्म मानववाद का सबसे महत्वपूर्ण संदेश है मानवता का एकीकृत दृष्टिकोण। यह विचारधारा बताती है कि व्यक्ति का विकास समाज और राष्ट्र के विकास के साथ जुड़ा हुआ है। उपाध्याय का मानना था कि जब तक समाज और राष्ट्र के हितों को प्राथमिकता नहीं दी जाएगी, तब तक व्यक्ति का वास्तविक विकास संभव नहीं है। यह दृष्टिकोण आज के समय में भी प्रासंगिक है, जब व्यक्तिगत स्वार्थ और प्रतिस्पर्धा के चलते सामाजिक समरसता में कमी आ रही है।

निष्कर्ष – दीनदयाल उपाध्याय का 'एकात्म मानववाद' भारतीय समाज और राजनीति के लिए एक महत्वपूर्ण विचारधारा है, जिसने समाज के समग्र विकास के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। यह विचारधारा केवल भारतीय संस्कृति और परंपराओं पर आधारित नहीं है, बल्कि यह आधुनिक समय की चुनौतियों और आवश्यकताओं का भी समाधान प्रदान करती है। एकात्म मानववाद का मुख्य उद्देश्य मानवता के हर पहलू में संतुलन और समन्वय स्थापित करना है। यह विचारधारा व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के बीच के संबंधों को नए सिरे से परिभाषित करती है और उन्हें एक-दूसरे के पूरक के रूप में देखती है।

आज के समय में, जब समाज विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, और पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना कर रहा है, एकात्म मानववाद का दृष्टिकोण एक सशक्त समाधान प्रस्तुत करता है। यह न केवल भारतीय समाज के लिए, बल्कि वैश्विक मानवता के लिए भी एक मार्गदर्शक सिद्धांत हो सकता है।

दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानववाद एक ऐसा विचार है, जो व्यक्ति और समाज के बीच के संबंधों को संतुलित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह विचारधारा हमें यह सिखाती है कि कैसे एक सशक्त और संतुलित समाज की स्थापना की जा सकती है, जो न केवल भौतिक समृद्धि पर आधारित हो, बल्कि नैतिकता, आध्यात्मिकता और सामाजिक न्याय पर भी केंद्रित हो।

इस प्रकार, एकात्म मानववाद न केवल उपाध्याय के समय में, बल्कि आज के समाज में भी अत्यधिक प्रासंगिक है। यह हमें एक ऐसा मार्गदर्शन प्रदान करता है, जो मानवता के समग्र विकास और समाज के समन्वित प्रगति की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Upadhyay, D. (1965). Ekatma Manavavad [Integral Humanism]. Bharatiya Jana Sangh Publications.
2. Sharma, R. (2013). Integral Humanism: Philosophy of Deendayal Upadhyay. Macmillan Publishers India.
3. Goel, B. (1992). Deendayal Upadhyay: A Life Dedicated to Nation and Culture. Prabhat Prakashan.
4. Rao, V. (2005). The Political Philosophy of Deendayal Upadhyay: A Critical Analysis. SAGE Publications.
5. Tiwari, S. (2002). Deendayal Upadhyay: Vichar Evam Darshan [Thought and Philosophy]. Rajkamal Prakashan.
6. Kaur, M. (2017). Indian Political Thought: Themes and Thinkers. Pearson Education India.
7. Jaffrelot, C. (1996). The Hindu Nationalist Movement and Indian Politics: 1925 to the 1990s. Penguin Books.
8. Bhatt, S. C. (2001). Indian Political Thinkers: Modern Indian Political Thought. Indus Publishing Company.
9. Pandey, R. K. (2018). Philosophy of Integral Humanism and its Contemporary Relevance. Concept Publishing Company.
10. Das, G. (2010). India Unbound: The Social and Economic Revolution from Independence to the Global Information Age. Anchor Books.

****

चाइल्ड-फ्री-बाय-चॉइस अवधारणा एवं आधुनिक भारतीय परिवार-एक सिंहावलोकन

डॉ. कलिका डोलस*

* प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

शब्द कुंजी - भारतीय परिवार, आधुनिकता,चाइल्ड, बायचॉइस।

प्रस्तावना - आधुनिक भारतीय परिवारों की संरचना अत्यंत तेजी से परिवर्तित हो रही है। ये परिवार सामान्यत: आधुनिक पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित है एवं स्वयं को तथाकथित आधुनिक कहलाना पसंद करते है। भारतीय परम्परागत सांस्कृतिक मूल्यों एवं इन परिवारों में एक अजीब सा विभेद हर क्षेत्र में देखने को मिलता है।

भारतीय संस्कृति में मानव की औसत आयु 100 वर्ष मानकर मानव जीवन को सोद्देश्य बिताने के लिए चार आश्रम की व्यवस्था की गई थी - ब्रम्हचर्य, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम एवं सन्यास आश्रम -

ब्रम्हाचर्य - 25 वर्ष की आयु तक - विद्या अर्जन का समय
गृहस्थाश्रम - 25 से 50 वर्ष तक - परिवार निर्माण एवं संतानोत्पत्ति
वानप्रस्थाश्रम - 50 से 75 वर्ष - पारिवारिक जिम्मेदारियो से मुक्ति का समय
सन्याश्रम - 75 से 100 वर्ष - सांसारिक माया से निवृत्ति, वनगमन एवं प्रभुस्मरण में जीवन व्यतीत करने का समय

मानव जीवन की संपूर्णता के लिये सभी चारों आश्रम महत्वपूर्ण है। यहॉ केवल गृहस्थ आश्रम की चर्चा करेंगे क्योंकि हमारे शीर्षक का संबंध इसी आश्रम से है। जैसा कि पूर्व में स्पष्ट किया गया है कि गृहस्थाश्रम का मुख्य प्रयोजन परिवार बनाना एवं संतानोत्पत्ति मात्र था जिससे परिवार एवं देश को आगे बढ़ाया जा सके। यही आयु युवावस्था कहलाती है एवं युवावस्था ही संतानोत्पत्ति के लिए आदर्श अवस्था है इस आयु में जन्में बच्चे शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ होते है। इस आयु के पूर्व अथवा बाद में जन्में बच्चे किसी प्रकार विकृति के साथ जन्म ले सकते है 20-21 वर्ष आयु के पूर्व लड़की स्वयं ही अपरिपक्व होती है अत: इस आयु में यदि वह संतान को जन्म देती है तो वह किसी विकार का शिकार हो सकती है एवं इसी प्रकार 50 वर्ष के बाद यदि महिला किसी बच्चे को जन्म देती है तो वह भी किसी विकृति के साथ जन्म ले सकता है अत: संतानोत्पत्ति की सही एवं आदर्श आयु 25 से 50 वर्ष तक योग्य है।

भारत में इसी आयु में विवाह हो जाते थे एवं प्राचीन समय में हर परिवार में 10 से 15 बच्चे तक होते थे परंतु जनसंख्या वृद्धि के प्रति जागरूकता को देखते हुए बच्चों की संख्या कम हो गई एवं विगत 50-60 के दशक में हर परिवार में 5-6 संताने हो गई। इस समय तक परिवार की महिलाऍ घर में रहती थी वें कामकाज के सिलसिले में बाहर नही जाती थी परंतु कालान्तर में महिला शिक्षा के प्रति जागरूकता को देखते हुए महिला काफी पढ़ी लिखी होने लगी। साथ ही बढ़ती हुई मंहगाई एवं महिला शिक्षा के उन्नत स्तर के कारण परिवार की महिलाओं ने रोजगार के क्षेत्र में कदम रखा, यहॉ से आधुनिक परिवार की महिलाओं ने नौकरी करना प्रारंभ किया परिणाम स्वरूप जीवनशैली बदली एवं बच्चों की संख्या भी। उस पर से एकल परिवार ने समस्या को और बढ़ा दिया। बच्चों की देखभाल की समस्या खड़ी हुई अत: बच्चों की संख्या सिमटकर 2 पर आ गई। 'हम दो हमारे दो' का नारा दिया गया। लगभग 90 के दशक तक यही कल्चर आधुनिक परिवारों में देखने को मिला। सन् 2000 से इस कल्चर में और परिवर्तन आया। अब दोनो पति पत्नि कामकाजी हो गए, परिवार एकल हो गए, काम के घंटे बढ़ गए, इन सबकी गाज गिरी परिवार में बच्चों की संख्या पर कि उन्हें कौन देखेगा अत: बच्चों की संख्या सिमटकर एक हो गई है।

अब वर्तमान में इससे भी आगे बढ़कर एक नई अवधारणा ने जन्म लिया है जिसे चाइल्ड फ्री नाम दिया गया, जिसमें लड़का-लड़की विवाह तो करते है परंतु वे पहले ही तय कर लेते है (परिस्थितियों को देखते हुए) कि वे बच्चे को जन्म नहीं देंगे। और चाइल्ड फ्री-बाय-चॉइस आंदोलन ने जन्म लिया।

अब सवाल उठता है कि यह आंदोलन क्या है एवं इसके क्या सुपरिणाम अथवा दुष्परिणाम है।

चाइल्ड फ्री बाय च्वाइस - वर्तमान में प्रचलित यह एक ऐसा टर्म है जो उन लोगों को परिभाषित करने के लिए उपयोग की जाती है जो बच्चों को जन्म देना नही चाहते है इसमें वे लोग भी आते है जो बच्चों को जन्म देने में असमर्थ है अथवा क्षमता होने के बाद भी जन्म नहीं देना चाहते।

इस अवधारणा ने अमेरिका में जन्म लिया। परंतु शनै: शनै यह विचारधारा पूरे विश्व के युवाओं में बहुत तेजी से बढ़ रही है। 1970 के दशक में अमेरिका में यह प्रारंभ हुआ परंतु आज भी यह आंदोलन गति पकड़ रहा है जिसके कारको एवं परिणामों से हमें अवगत होना है। मेनेजमेंट गुरू श्री एन.रघुराजन ने अपने एक लेख के माध्यम से लिखा है 'हालांकि हर दशक में हमेशा ही कुछ लोग ऐसे रहे है जिन्होंने माता-पिता बनने की जिम्मेदारी यानी पैरेंटहुड से बाहर रहने का विकल्प चुना, लेकिन लग रहा है कि 1970 के दशक के 'चाइल्ड-फ्री-बाय-चॉइस' आंदोलन की अब दूसरी सबसे बड़ी लहर आ रही है और यह न केवल अमेरिका में हो रहा है, जहॉ से आंदोलन शुरू हुआ था, बल्कि वहां रहने वाले युवा भारतीय जोड़ो के बीच और उन लोगों में भी हो रहा है, जो उच्च शिक्षित है, या जिन्होंने पश्चिमी सभ्यता में कुछ साल बिताए है।

सेंटर फॉर डिजीज कंट्रोल की हालिया रिपोर्ट में पाया गया कि कम शिक्षित अमेरिकियों के उच्च शिक्षित अमेरिकियों की तुलना में ज्यादा बच्चे होने की संभावना थी। आंकड़े बताते हैं कि धनी अमेरिकी अपना पहला

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बच्चा बहुत बाद में करते हैं। और जो लोग इन दोनों सवालों का जवाब स्पष्ट 'ना' में देते हैं, वे पैरेंटहुड से बाहर आना ही बेहतर समझते हैं। और सवाल ये हैं- 1. क्या हम रिश्तों में उतना ही समय दे पाएंगे जितना हम पहले देते थे। 2. और हमारा बच्चा होगा, तो क्या हम तब भी उसी शहर में आराम से रह सकेंगे, जिससे हम प्यार करते हैं और रिटायरमेंट व यात्रा के लिए पर्याप्त पैसा बचा पाएंगे?

संक्षेप में, यही वो हिसाब-किताब है, जो अमेरिका में अधिकांश युवा जोड़ों के दिमाग में चल रहा है, जो कि 35-40 साल की उम्र में पहुंचने से पहले अपनी सालाना आमदनी का कम से कम पांच गुना बचाना चाहते हैं। इस हिसाब-किताब का सीधा नतीजा ये हुआ कि 2012 की तुलना में 2022 में अमेरिका में ढाई लाख से थोड़े से ज्यादा बच्चे कम जन्मे। और ये आर्थिक रूप से बुद्धिमान जोड़े युवाओं की बढ़ती आबादी का हिस्सा हैं और पैरेंटहुड से बाहर निकल रहे हैं और जो खुद को अपनी पसंद से चाइल्ड फ्री माता-पिता के रूप में बताते हैं। कैलिफोर्निया के गवर्नर गेविन न्यूज़ॉम ने यह कहते हुए प्रजनन दर में गिरावट को राज्य के बजट में संरचनात्मक जोखिम के रूप में प्रकाश डाला कि आने वाले वर्षों में इसके सामाजिक और श्रम बल दोनों नतीजे हो सकते हैं। गिरती जन्म दर का वैश्विक अर्थव्यवस्था पर व्यापक प्रभाव पड़ा है, जिससे ताइवान जैसे देश को बच्चों के पालन-पोषण संबंधी पहल में 3 अरब डॉलर से ज्यादा खर्च करने पड़ रहे हैं और कई देश बेबी-बोनस देने की भी तैयारी कर रहे हैं। इस डर को यह कहकर खारिज न करें कि भारत इस समस्या का सामना कभी नहीं करेगा। ज्यों-ज्यों ज्यादा पढ़े-लिखे बच्चे अवसरों की तलाश में विकसित देशों में बसने की कोशिश कर रहे हैं, जन्मदर भी उनकी क्लास के हिसाब से शिफ्ट होगी- मेरा मतलब है कि अमीर, मध्यवर्ग और गरीब वर्ग खासकर अगर महामारी के बाद आर्थिक रूप से स्टेबल नवविवाहितों की मानसिकता को देखें तो।

विदेश में बसी पीढ़ी, पिछली पीढ़ी द्वारा बनाई संपत्ति-जमीन की तुलना में हाथ में नकदी के बारे में ज्यादा चिंतित है और माता-पिता के बाद अपने नाम पर ट्रांसफर कराने का इंतजार भी नहीं कर रही है। विचित्र कारणों से उन्हें अचल संपत्ति में दिक्कत दिखती है। कई उत्तर भारतीय राज्यों में लोग जमीन-संपत्ति बेचकर बच्चों के साथ स्थाई रूप से कनाडा या अमेरिका में बस रहे हैं। जैसे कुछ फिल्में वक्त से आगे होती हैं, ये जानकारी भी वैसी ही है क्योंकि आकड़े चौकाने वाले नहीं है। पर अगर इस उठा-पटक को नजरअंदाज किया तो जितना भी पैसा इकट्ठा कर लें, इसका उस पर नकारात्मक असर पड़ेगा।

यू.के. जनरेशन एंड जेंडर सर्वे के अनुसार यू.के. में 18-59 वर्ष की आयु के 7000 लोगों पर किए सर्वेक्षण में पाया कि पिछले एक दशक से ब्रिटेन में जन्म दर में गिरावट आ रही है उन्होंने यह भी पाया कि -

1. जनरेशन जेड (18 से 25 वर्ष की आयु) के 15 प्रतिशत लोगों का कहना है कि वे निश्चित रूप से संतान पैदा करने का इराद नही रखते इसकी तुलना 200 से 2000 में इसी आयु वर्ग में यह प्रतिशत 10-15 था। निश्चित ही इस सोच में वृद्धि हो रही है।
2. इसी प्रकार वृद्ध मिलोनियलस (35 से 41 वर्ष) में से भी लगभग एक तिहाई का कहना है कि वे निश्चित रूप से संतान को जन्म देना नही चाहते।

चाइल्ड फ्री रहने के कारण - समाज में तेजी से बढ़ते यह बदलाव अभी माइक्रो लेवल पर है परंतु यदि तुरंत इस सोच एवं प्रवृत्ति पर विचार विमर्श नही किया गया तो दुष्परिणाम हो सकते है।

1. अत्यधिक जनसंख्या या जनसंख्या में कमी लाने के लिए
2. पर्यावरण की स्थिति को देखते हुए
3. समयाभाव
4. युद्ध की विभीषिका
5. अभिभावकों का कामकाजी होना
6. अत्यधिक मंहगाई का होना
7. व्यक्तिगत स्वतंत्रता को महत्व देना
8. जिम्मेदारियों से बचना
9. लाइफ एनजॉय करना
10. अनेक लड़कियों में टोकोफोबिया (गर्भावस्था) का डर है
11. सपनों अथवा महत्वाकांशा में बाधक
12. वित्तीय मुद्दे
13. स्वास्थ्य संबंधी मुद्दे
14. जन्म विरोधी धारणा (यह विश्वास की मानव जीवन कष्टों से भरा है और बच्चों को दुनिया में लाना इसमें वृद्धि करना है।)

पिछले कुछ वर्षो में चाइल्ड फ्री या संतानहीनता के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण से भी काफी बदलाव आया है। प्राचीन समय में यदि किसी महिला, पुरूष या विवाहित दंपति को संतान नही हुई तो समाज उन्हें अच्छी नजर से नही देखता था तथा बिना सोचे समझे यह निष्कर्ष निकाल लिया जाता था कि इस दंपति में कोई कमी है। अर्थात यह माना जाता था कि विवाह का मतलब मातृत्व है। श्रीपर्णा कहते है कि 'समाज में ऐसे लोग अधिक है जो विवाह को प्रजनन संस्था के रूप में देखते है।'

परंतु अब समाज के दृष्टिकोण में थोड़ा ही सही परिवर्तन देखने को मिल रहा है। इस संदर्भ में लेखिका अंबरदार कहती है कि समाज में यह विचारधारा भी देखने को मिल रही है कि 'बच्चे पैदा करने की इच्छा का अभाव किसी दोष का संकेत नही है। यह पूरी तरह से सामान्य है कि कुछ लोग पुरूष और महिला दोनो अपने जीवनकाल में बच्चे नहीं चाहते। मै उन सभी लोगों को विनम्रतापूर्वक सलाह देना चाहुँगा जो बच्चे न चाहने के कारण अपराधबोध या शर्म महसूस करते है वे अपने दिल की सुने और अपने आंतरिक अंर्तज्ञान को सुने' हो सकता है आपके मन में अपने जीवन के लिए और कोई दृष्टिकोण हो अपनी इच्छाओं का पालन न करना अपने आपके साथ अन्याय होगा।

उपसंहार -हांलाकि इस विकल्प को आज भी समाज में अपरम्परागत माना जाता है परंतु यह बदलाव अभी बड़ी मात्रा में आधुनिक भारतीय परिवारों में देखा जाने लगा है एवं पीढ़ियों के बीच कलह या विवाद का यह एक बड़ा कारण है। नवदंपति संतान नही चाहते है एवं पिछली पीढ़ी (दादा-दादी, नाना-नानी) संतान चाहते है। एवं इस हेतु अपने बच्चों पर दबाव बनाते है जिससे कलहपूर्ण स्थिति निर्मित होती है। उनके दृष्टिकोण को न समझते हुए माता पिता कहते है कि ये सारी समस्याएँ हमने भी झेली है लेकिन क्या हमने तुम्हें जनम नही दिया, कौन सी कमी रखी तुम्हें पालने में। जन्म होगा तो बच्चा कैसे भी करके पल ही जाएगा आदि आदि। फंडा यह है कि माता-पिता बनने से बचना अभी आसान लग सकता है, पर इसकी गारंटी नहीं कि यह व्यक्तिगत जीवन में नई समस्याओं की तरफ नही ले जाएगा, चाहे अकेलापन हो या दुनियाभर में बढ़ रहा कामगारों का संकट। अत: इस मुद्दे पर चिंतन करने की महती आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अहा जिंदगी - अप्रैल 2020.
2. इंडिया टुडे सेप्टेम्बर 2019.
3. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

अशासकीय माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकओं की शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन

डॉ. अशोक कुमार*

* सहायक प्राध्यापक, पैरामाउंट इंस्टीट्यूट आफ एजुकेशन एंड टेक्नोलॉजी, टटीरी, बागपत (उ.प्र.) भारत

प्रस्तावना – वर्तमान तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी के युग में मूल्य संकट हमारे सामने एक चुनौती के रूप में खड़ा है। मानव जीवन में मूल्यों का विशिष्ट महत्व है, जो उसके व्यक्तित्व, उपलब्धि, रूचि, अभिव्यक्ति आदि को प्रभावित करते हैं। उन्हीं के अनुरूप वह अपने व्यवहार को प्रस्तुत करता है। कुछ व्यक्तिगत मूल्य होते हैं, जिनका जन्म अनुभव के साथ-साथ होता है क्योंकि अनुभव के आधार पर ही कुछ सामान्य सिद्धांतों का निर्माणा करता है, जो धीरे-धीरे जीवन दर्शन का रूप ले लेते हैं।

शिक्षकों में मूल्य उनके व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण पहलू तथा जीवन के पथ प्रदर्शक होते हैं प्रत्येक मानव जीवन में कुछ ना कुछ अनुभव प्राप्त करता है यह अनुभव समय की गति के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं इन्हीं अनुभवों में से सिद्धांत जन्म लेते हैं जो मानव व्यवहार को निर्देशित करते हैं जिन शाश्वत मूल्यों में व्यक्ति का जीवन परमसुख कर और आनंदमई हो सकता है वह व्यक्ति स्वता ही प्राप्त कर सकता है और उसके ज्ञान बोध और प्रतिबद्धता में निहित होता है व्यक्ति अपने अपने उत्कर्ष के लिए स्वयं उत्तरदाई होता है और यह संभावना भी उसमें निहित होती है समस्त शैक्षिक प्रयास इसी सत्यता की प्राप्ति की ओर अग्रसर होते हैं आदर्श मानव की संकल्पना मूल्यों के साथ जुड़ी होती है मूल्यों का स्वरूप अंतिम रूप से गत्यात्मक ताकि अवधारणा को जन्म देता है जिस के अनुरूप मानव जीवन को अनुवादित करना जीवन का लक्ष्य हो जाता है।

हमारे अध्यापक जितने मूल्यवान होंगें, ठीक वैसे ही मूल्यवान हमारे बालक अर्थात् विद्यार्थी होंगें। मनुष्य के जीवन में मूल्य एक ऐसी आचार संहिता है अथवा सद्गुणों का समूह है, जिसे अपनाकर व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है।

भारतीय धर्म ग्रन्थों में मूल्यों के लिये यशील शब्द अनेक स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। यह शब्द मूल्य का पर्याय नहीं वरन् समीपी शब्द है। शील 'सर्वत्रभूषणं' का कार्य करता है। कहीं-कहीं शील शब्द चरित्र के लिये प्रयुक्त हुआ है। मूल्य मानव अस्तित्व में किसी महत्वपूर्ण वस्तुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। मूल्य जीवन को दिशा प्रदान करते हैं। अत: शिक्षकों में मूल्यों का होना अति आवश्यक है। मूल्य मानव अस्तित्व में किसी महत्वपूर्ण वस्तुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। मनुष्य जीवन पर्यन्त सीखता जाता है तथा परिपक्व होता है। वह ऐसे अनुबन्ध प्राप्त करता है, जो उसके व्यवहार को निर्देशित करते हैं। ये निर्देशक जीवन को दिशा प्रदान करते हैं। उन्हें मूल्य कहा जा सकता है।

अध्यापक के हाथों में बच्चों का भविष्य छिपा होता है। वह जैसे चाहे, बच्चों को बना सकता है क्योंकि अध्यापक ही बालकों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखता है। अत: अध्यापक को प्रभावशाली होना चाहिए। अध्यापक की प्रभावशीलता का प्रभाव बच्चों पर प्रत्यक्ष व परोक्ष दोनों रूपों में पड़ता है। एक बालक के सर्वांगीण विकास में अध्यापक की अहम् भूमिका होती है।

एक अध्यापक की प्रभावशीलता उसके अकादमिक ज्ञान एवं व्यवसायिक ज्ञान पर भी निर्भर करती है। अध्यापक स्वयं को आदर्श रूप में प्रस्तुत कर सकता है। एक बालक के सर्वांगीण विकास में अध्यापक द्वारा दी गई प्रेरणा और दण्ड का बहुत बड़ा योगदान होता है। अभिप्रेरणा बालक को बहुत ज्यादा प्रभावित करती है। एक बालक विद्यालय में सबसे ज्यादा अध्यापक के सम्पर्क में रहता है और सबसे ज्यादा अध्यापक से ही प्रभावित होता है। अत: शिक्षक प्रभावशीलता का बालक पर गहरा असर ;प्रभावद्ध पड़ता है। अध्यापक के हाव-भाव-परिणामों का पृष्ठपोषण एवं उसका किसी के प्रति दृष्टिकोण विद्यार्थी को अधिक प्रभावित करता है। अध्यापक की प्रभावशीलता में उसके व्यक्तिगत गुण भी शामिल हैं। साथ ही साथ पाठ योजना की तैयारी, प्रस्तुतीकरण एवं कक्षा-कक्ष प्रबन्धन भी अध्यापक की प्रभावशीलता है।

शिक्षक प्रभावशीलता एक स्कूल प्रणाली शिक्षा नीति पहल है जो छात्र सीखने में सुधार के संदर्भ में एक शिक्षक के प्रदर्शन की गुणवत्ता को मापती है। यह कई तरह के तरीकों का वर्णन करता है, जैसे कि अवलोकन, छात्र मूल्यांकन, छात्र कार्य के नमूने और शिक्षक कार्य के उदाहरण, जिनका उपयोग शिक्षा नेता शिक्षक की प्रभावशीलता को निर्धारित करने के लिए करते हैं।

शिक्षक प्रभावशीलता कार्यक्रमों के लिए अभियान दौड़ से लेकर शीर्ष तक है जहां राज्यों को शिक्षक की प्रभावशीलता के आधार पर शैक्षिक नीतियों को पूरा करने के लिए अंक दिए गए थे। यह नीति राज्यव्यापी शिक्षक प्रभावशीलता कार्यक्रमों के उद्भव का आधार थी।

शिक्षक प्रभावशीलता कार्यक्रम अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग होते हैं। आमतौर पर, एक शिक्षक प्रभावशीलता कार्यक्रम अवलोकन और आकलन के एक चक्र का वर्णन करता है जो एक शैक्षणिक वर्ष के दौरान शिक्षकों के विभिन्न समूहों पर लागू होता है। नए शिक्षकों का मूल्यांकन अधिक बार किया जाता है और अनुभवी शिक्षकों का मूल्यांकन कई वर्षों के चक्रों में किया जाता है। मूल्यांकन किए गए शिक्षकों के पास अघोषित कक्षा

टिप्पणियों के अलावा मूल्यांकनकर्ता के साथ कई अनुसूचित कक्षा अवलोकन और सम्मेलन होते हैं। मूल्यांकन के उद्देश्य का एक विवादास्पद पहलू शिक्षकों को यह निर्धारित करने में मदद करना है कि उनकी प्रथाओं में क्या प्रभावी है और शिक्षकों को अधिक प्रभावी बनने में मदद करने के लिए उन्हें प्रतिबिंबित करने और अपने अभ्यास को बदलने का माध्यम प्रदान करता है।

शिक्षक प्रभावशीलता के –स्कूल प्रणाली में उपयोग की जाने वाली एक विधि है जो कक्षा के अवलोकन, छात्र कार्य नमूने, मूल्यांकन स्कोर और शिक्षक कलाकृतियों सहित आकलन के कई उपायों का उपयोग करती है, ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि किसी विशेष शिक्षक का छात्र के सीखने के परिणामों पर प्रभाव पड़ता है। जबकि स्कूलों ने कई वर्षों से शिक्षक मूल्यांकन प्रथाओं और नीतियों का उपयोग किया है, शिक्षक प्रभावशीलता नीतियों का उद्भव इन मौजूदा प्रथाओं को रूब्रिक और परीक्षण स्कोर के साथ जोड़ता है ताकि शिक्षकों के काम पर अधिक मजबूत दृष्टिकोण प्रदान किया जा सके।

शिक्षक प्रभावशीलता से संबंधित अध्ययन

अवस्थी (2013) ने माध्यमिक विद्यालय में कार्यरत शिक्षकों और शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता एवं कार्य सन्तुष्टि का उनके शैक्षिक अनुभव के सन्दर्भ में अध्ययन किया और निष्कर्ष में माध्यमिक स्तर के सरकारी विद्यालयों में कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर पाया है। माध्यमिक स्तर के सरकारी विद्यालयों मे ं कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर होता है। माध्यमिक स्तर के गैर–सरकारी विद्यालय में कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर होता है। माध्यमिक स्तर के गैर–सरकारी विद्यालय में कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर होता है। माध्यमिक स्तर केसरकारी विद्यालय में कार्यरत उच्च अनुभवी एवं अल्प अनुभवी शिक्षकों की व्यावसायिक सन्तुष्टि में सार्थक अन्तर नहीं पाया है।

गोयल (2014) ने प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत् नियमित शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों की कार्यसन्तुष्टि का उनकी शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत् शिक्षकों की कार्यसन्तुष्टि में सार्थक अन्तर नहीं है। नियमित शिक्षकों एवं शिक्षामित्र शिक्षको की शिक्षक प्रभावशीलता में अधिक अन्तर नहीं है पर नियमित शिक्षकों का शैक्षिक स्तर उच्च होने के कारण शिक्षामित्र शिक्षकों से नियमित शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता थोड़ी अधिक है। प्राथमिक विद्यालय मे अध्यापनरत् नियमित शिक्षिकाओं एवं शिक्षामित्र शिक्षिकाओं की कार्यसन्तुष्टि में सार्थक अन्तर नहीं है। प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत् नियमित शिक्षक–शिक्षिकाओं की शिक्षक प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है अर्थात् शिक्षक प्रभावशीलता अधिकतर समान है। उच्च कार्यसन्तुष्टि एवं निम्न कार्यसन्तुष्टि वाले नियमित शिक्षकों की कार्यसन्तुष्टि का उनकी शिक्षक प्रभावशीलता पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उच्च कार्य सन्तुष्टि वाले नियमित शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता एवं निम्न कार्यसन्तुष्टि वाले शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता लगभग समान है।

कुमार(2015) ने शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र केउच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक एवं शिक्षिकाओं में आत्मविश्वास एवं शिक्षक प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन किया और पाया कि शहरी क्षेत्र के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों का आत्मविश्वास स्तर ग्रामीण क्षेत्र केशिक्षकों केआत्मविश्वास स्तर से अधिक है व शहरी क्षेत्र की शिक्षिकाओं का आत्मविश्वास स्तर ग्रामीण स्तर की शिक्षिकाओं से अधिक पाया गया। शहरी क्षेत्र के शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता भी अपेक्षाकृत अधिक पायी गयी। शहरी क्षेत्र की शिक्षिकाओं की शिक्षक प्रभावशीलता भी अपेक्षाकृत कम पायी गयी।

यादव (2015) ने माध्यमिक स्तर पर शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं मे ं शिक्षक प्रभावशीलता एवं आकांक्षा स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया व पाया कि शिक्षकों व शिक्षिकाओं की शिक्षक प्रभावशीलता में विभिन्नता नहीं पायी जाती है और शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की शिक्षक प्रभावशीलता स्वतन्त्र वितरित नहीं पायी गयी है।

तिवारी (2017) ने वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक–शिक्षिकाओं तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता सम्बन्ध का अध्ययन किया व पाया कि वित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता में अत्यन्त निम्न ऋणात्मक सह–सम्बन्ध है तथा स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों की शिक्षिकाओं के तनाव तथा शिक्षकप्रभावशीलता में निम्न धनात्मक सह–सम्बन्ध है, अर्थात् वित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों का व्यक्तिगत तनाव बढ ने के साथ उनकी शिक्षक प्रभावशीलता घट रही है तथा स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों का व्यक्तिगत तनाव बढ़ने पर उनकी शिक्षक प्रभावशीलता भी बढ़ रही है एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालय की शिक्षिकाओं के तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता में सामान्य ऋणात्मक सह–सम्बन्ध है, अर्थात् शिक्षिकाओं का व्यक्तिगत तनाव बढ़ने के साथ उनकी शिक्षक प्रभावशीलता घट रही है।

राव एवं सिंह(2020) ने माध्यमिक स्तर पर अध्यापनरत् शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता का अध्ययन किया गया है जिसमें सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। इस शोध हेतु कानपुर नगर में स्थित माध्यमिक स्तर के समस्त विद्यालयों के समस्त शिक्षकों की जनसंख्या से 50 महिला एवं 50 पुरूष शिक्षकों को स्तरीकृत यादच्छिक न्यादर्शन विधि द्वारा न्यादर्श के रुप में चयनित किया गया हैं। सांख्यिकीय टी–परीक्षण द्वारा मध्यमानों की सार्थकता द्वारा प्रदत्तों का विश्लेषण कर परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया तथा 1. माध्यमिक स्तर पर अध्यापनरत् पुरूष तथा महिला शिक्षकों की प्रभावशीलता का स्तर असमान है तथा पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा महिला शिक्षकों की प्रभावशीलता सार्थकत: अधिक है। 2. माध्यमिक स्तर पर अध्यापनरत् सरकारी एवं गैर–सरकारी शिक्षकों की प्रभावशीलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। 3. माध्यमिक स्तर पर अध्यापनरत् प्रशिक्षित स्नातक शिक्षकों व प्रशिक्षित परास्नातक शिक्षकों की प्रभावशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है।

अध्ययन का औचित्य– प्रस्तुत शोध अध्ययन में संदर्भ साहित्य की समीक्षा के पश्चात शोध में यह पाया गया कि अभी तक जो अध्ययन हुए हैं अवस्थी (2013) ने माध्यमिक विद्यालय में कार्यरत शिक्षकों और शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता एवं कार्य सन्तुष्टि का उनके शैक्षिक अनुभव के सन्दर्भ में अध्ययन किया गोयल (2014) ने प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत् नियमित शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों की कार्यसन्तुष्टि का उनकी

शिक्षक प्रभावशीलता पर प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत् शिक्षकों की कार्यसन्तुष्टि में सार्थक अन्तर नहीं है। कुमार (2015) ने शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र केउच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक एवं शिक्षिकाओं में आत्मविश्वास एवं शिक्षक प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन किया यादव (2015) ने माध्यमिक स्तर पर शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं में शिक्षक प्रभावशीलता एवं आकांक्षा स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया तिवारी (2017) ने वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता सम्बन्ध का अध्ययन किया राव एवं सिंह(2020) ने माध्यमिक स्तर पर अध्यापनरत् शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता का अध्ययन किया गया है लेकिन अशासकीय स्तर के विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता पर शोध कार्य नहीं हुआ है। इसलिए प्रस्तुत शोध की आवश्यकता प्रतिपादित होती है।

शोध का शीर्षक- अशासकीय माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकओं की शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन

अध्ययन के उद्देश्य:

1. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
2. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
3. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
4. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
5. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता का अध्ययन करना।

परिकल्पना:

1. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
3. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
4. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
5. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध विधि : प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श : प्रस्तुत शोध अध्ययन में मेरठ मंडल के समस्त अशासकीय माध्यमिक विद्यालयो में कार्यरत समस्त अध्यापक शोध की जनसंख्या है। प्रस्तुत शोध में बागपत जनपद से 300 अध्यापकों को न्यादर्श चयन हेतु याद्दच्छिक प्रतिचयन की लाटरी विधि का प्रयोग किया गया ग्रामीण एवं नगरीय परिवेश मे कार्यरत 150-150 अध्यापकों एवं अध्यापिकाओ को न्यादर्श हेतु चयनित किया गया।

उपकरण - प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा शोध उपकरण प्रस्तुत अध्ययन हेतु तथ्यो के एकत्रीकरण हेतु डा0 प्रमोद कुमार व डा0 डी0 एन0 मुथा द्वारा निर्मित मापनीकृत शिक्षण प्रभावशीलता मापनी उपकरण का प्रयोग किया किया गया है।

सांख्यिकी विश्लेषण एवं व्याख्या :

1. अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्यमान,मानक विचलन,टी मान को दर्शाने वाली तालिका-1

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	सार्थकता
	N	M	SD	T value	df 298
कार्यरत अध्यापकों	150	287.7	17.21	**1.455**	असार्थक
कार्यरत अध्यापिकाओं	150	290.5	16.1		

(0.05 सार्थकता स्तर)

उपरोक्त तालिका 1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों के 150 कार्यरत अध्यापकों एवं 150 कार्यरत अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमश: 287.7 तथा 290.5 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 17.21 तथा 16.1 प्राप्त हुआ। 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चातपरिगणित t परीक्षण का मान 1.455पाया गया। जो कि मुक्तांश 298 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अर्थात 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी'।

2 अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है

अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्यमान,मानक विचलन,टी मान को दर्शाने वाली तालिका-2

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	सार्थकता
	N	M	SD	T value	df 148
कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों	75	284.2	14.96	1.446	असार्थक
कार्यरत ग्रामीण अध्यापिकाओं	75	287.85	15.92		

(0.05 सार्थकता स्तर)

उपरोक्त तालिका 2 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों के 75 कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं 75 कार्यरत ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमशः 284.2 तथा 287.85 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमशः 14.96 तथा 15.92 प्राप्त हुआ। 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 1.446पाया गया। जो कि मुक्तांश 148 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अर्थात 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी'।

3 अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलताके मध्यमान,मानक विचलन, टी मान को दर्शाने वाली तालिका– 3

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	सार्थकता
	N	M	SD	T value	df 148
कार्यरत शहरी अध्यापकों	75	295	13.85	1.141	असार्थक
कार्यरत शहरी अध्यापिकाओं	75	292.24	15.71		

(0.05 सार्थकता स्तर)

उपरोक्त तालिका 3 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों के 75 कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं 75 कार्यरत शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमशः 295 तथा 292.24 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमशः 13.85 तथा 15.71प्राप्त हुआ। 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 1.141पाया गया। जो कि मुक्तांश 148 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से कम है। अर्थात 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी'।

4 अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलताके मध्यमान,मानक विचलन, टी मान को दर्शाने वाली तालिका–4

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	सार्थकता
	N	M	SD	T value	df 148
कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों	75	284.2	14.96	3.209	सार्थक
कार्यरत शहरी अध्यापिकाओं	75	289.43	15.71		

(0.05 सार्थकता स्तर)

उपरोक्त तालिका 4 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों के 75 कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं 75 कार्यरत शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमशः 284.2 तथा 289.43 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमशः 14.96 तथा 15.71 प्राप्त हुआ। 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 3.209पाया गया। जो कि मुक्तांश 148 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से अधिक है। अर्थात 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरतग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे असमानता पायी गयी'।

5 अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलताके मध्यमान,मानक विचलन, टी मान को दर्शाने वाली तालिका–5

समूह	अध्यापकों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	मानक विचलन	टी का मान	सार्थकता
	N	M	SD	T value	df 148
कार्यरत शहरी अध्यापकों	75	295	13.85	2.934	सार्थक
कार्यरत ग्रामीण अध्यापिकाओं	75	287.85	15.92		

(0.05 सार्थकता स्तर)

उपरोक्त तालिका 5 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों के 75 कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं 75 कार्यरत ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता संबंधी फलांकों का मध्यमान क्रमशः 295 तथा 287.85 एवं प्रमाणिक विचलन क्रमशः 13.85 तथा 15.92 प्राप्त हुआ। 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता के मध्य सार्थक अन्तर की जाँच के लिए t परीक्षण का प्रयोग किया गया गणना के पश्चात परिगणित t परीक्षण का मान 2.934पाया गया। जो कि मुक्तांश

148 पर 0.05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 1.96 से अधिक है। अर्थात 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे असमानता पायी गयी'।

निष्कर्ष:

1. निष्कर्ष के रूप में अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है' को स्वीकृत किया जाता है। अत:निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों एवं अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी।

2. निष्कर्ष के रूप में अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना' 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता है। अत:निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी'।

3. निष्कर्ष के रूप में अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को स्वीकृत किया जाता' है। अत:निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे समानता पायी गयी।

4. निष्कर्ष के रूप में अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अंतर पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को अस्वीकृत किया जाता' है। अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत ग्रामीण अध्यापकों एवं शहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे असमानता पायी गयी तथाग्रामीण अध्यापकों की अपेक्षाशहरी अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलताअधिकपायी गयीं।

5. निष्कर्ष के रूप में अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में सार्थक अंतर पाया गया। अत: इससे सम्बन्धित शून्य परिकल्पना 'अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है को अस्वीकृत किया जाता' है। अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अशासकीय माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरतशहरी अध्यापकों एवं ग्रामीण अध्यापिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता में मे असमानता पायी गयी तथा ग्रामीण अध्यापिकाओं की अपेक्षा शहरी अध्यापकों की शिक्षण प्रभावशीलता अधिक पायी गयीं

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. अवस्थी, डी. (2013) . केन्द्रीय, नवोदय तथा उ0 प्र0 बोर्ड संचालित विद्यालयों के शिक्षक-शिक्षिकाओं की प्रभावशीलता तथा प्रतिबद्धता का तुलनात्मक अध्ययन (अप्रकाशित). (एम. एड. की उपाधि हेतु लघु शोध-प्रबन्ध). शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
2. अवस्थी, यू. (2013) . माध्यमिक विद्यालय में कार्यरत शिक्षकों और शिक्षिकाओं की शिक्षण प्रभावशीलता एवं कार्य सन्तुष्टि का उनके शैक्षिक अनुभव के सन्दर्भ में अध्ययन (अप्रकाशित). (एम. फिल . की उपाधि हेतु लघु शोध-प्रबन्ध). शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
3. गोयल, एस. (2014) प्राथमिक विद्यालय में अध्यापनरत नियमित शिक्षकों एवं शिक्षामित्रों की कार्यसन्तुष्टि का उनकी शिक्षण प्रभावशीलता पर प्रभाव का अध्ययन (अप्रकाशित). (एम. फिल . की उपाधि हेतु लघु शोध-प्रबन्ध).शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
4. कुमार, एस. (2015) शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक एवं शिक्षिकाओं मे आत्मविश्वास एवं शिक्षक प्रभावशीलता (अप्रकाशित). (एम. एड. की उपाधि हेतु लघु शोध-प्रबन्ध).शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
5. तिवारी, एस. (2017) . वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक शिक्षिकाओं के तनाव एवं शिक्षक प्रभावशीलता के सम्बन्ध का अध्ययन (अप्रकाशित). . (एम. एड. की उपाधि हेतु लघु शोध-प्रबन्ध). शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
6. यादव, वी. (2015) माध्यमिक स्तर पर शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं में शिक्षक प्रभावशीलता एवं आकांक्षा स्तर का तुलनात्मक अध्ययन. (अप्रकाशित). (एम. एड. की उपाधि हेतु लघु शोध-प्रबन्ध). शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहू जी महाराज वि0वि0, कानपुर, भारत।
7. राव गौरव एवं सिंह सृष्टि(2020) माध्यमिक स्तर पर अध्यापनरत् शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता का अध्ययन शिक्षा शोध मंथन Shiksha Shodh Manthan A Half Yearly International Refereed Journal of Education Vol.4, No.1(A), April 2020 ISSN : 2395–728X

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

निमाड़ का नामकरण एवं ऐतिहासिकता के संदर्भ में

डॉ. मोतीलाल अवाया*

* सहा. प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला बड़वानी (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – भारत के मध्य में स्थित होने के कारण मध्यप्रदेश अपने नाम को चरितार्थ करता है इसकी भौगोलिक स्थिति 18°–26°.30 उ. अक्षांश 74°–84°.30 उ.पू. देशांतर के मध्य है। देश के 7 राज्यों उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा और बिहार से इसकी सीमा मिली हुई है। वर्तमान मध्य प्रदेश स्वातन्त्र्योत्तर भारत की देन है। ब्रिटिश शासन काल में सेंट्रल प्राविंसेज और बरार एक प्रांत आवश्य था, किंतु उसकी सीमाएं आज के मध्यप्रदेश से नितांत भिन्न थी। महाकौशल तथा बरार के जिले इसके अंतर्गत थे। इसके बीच–बीच में बघेलखंड और छत्तीसगढ़ की रियासतें थी। उत्तर तथा पश्चिम में अन्य छोटी–छोटी रियासतें थी, जो सम्मिलित रूप से सेंट्रल इंडिया के नाम से जानी जाती थी। सन् 1947 में सेंट्रल प्राविंस और बरार में बघेलखंड, छत्तीसगढ़, की रियासतों को मिलाकर मध्यप्रदेश का राज्य बना जो एक पार्ट 'ए' स्टेट थी। इसकी राजधानी नागपुर थी। उसी समय उत्तर में स्थित रियासतों को मिलाकर विंध्य प्रदेश पार्ट 'सी' स्टेट तथा पश्चिम की रियासतों को जोड़कर मध्य भारत नामक पार्ट 'बी' स्टेट बनी। भोपाल पृथक राज्य था जो पार्ट 'सी' स्टेट थी भारत के मध्य में अवस्थित मध्यप्रदेश सतपुड़ा और विंध्याचल पर्वतमालाओं के मध्य स्थित है। नर्मदा सबसे प्रमुख नदी है। मध्यप्रदेश भारत का प्रमुख राज्य है यह प्रदेश 6 सांस्कृतिक क्षेत्र मालवा, निमाड़, बुंदेलखंड, बघेलखंड, महाकौशल एवं चंबल में विभक्त है।

नर्मदा तट पर स्थित माहिष्मती के परवर्ती प्रदेश या 'निमाड़' का प्राचीन नाम अनुप था इसे गौतमीबलश्री के नासिक अभिलेख में अनूप देश के सातवाहन नरेश गौतमी(द्वितीय शती ई.) के विशाल राज्य का एक अंग बताया गया है। कालिदास ने इंदुमती के स्वयंवर के प्रसंग में माहिष्मती नरेश प्रतीत को अनूपराज कहा है।

'तामग्रतस्तामरसान्तराभामनूराजस्यगुणैरनूनाम् विधायसृष्टिं ललितां
विधातुर्जगाद भूयः
सुदतीं सुनन्दा।'

रघुवंश में इस प्रकार माहिष्मति का वर्णन है। गिरनार स्थित रूद्रदामन् के प्रसिद्ध अभिलेख में इस प्रदेश को रूद्रदामन् द्वारा विजित बताया गया है –

'स्ववीर्यार्जितानाममनुरक्त प्रकृतिनां आनर्त सुराष्ट्र श्वभ्रभरूकच्छ
सिंधुसौबीर
कुकुरापरान्त निषादादीनाम्'

अनुप या अनूप का शाब्दिक अर्थ 'जल के समीप' स्थित देश है।

मध्यप्रदेश के पश्चिमी अंचल में स्थित एक हिस्सा 'निमाड़' कहलाता है। पौराणिक काल में अनूपदेश कहलाने वाला यह एक भाग था। जिसका प्रागैतिहासिक काल से वर्तमान तक का इतिहास महत्वपूर्ण एवं प्रेरणादायी रहा है।

निमाड़ नाम का इतिहास भी अत्यंत विवाद पूर्ण है। पद्मश्री राम नारायण उपाध्याय के अनुसार 'निमाड' नाम का अनुमान है कि उत्तर भारत और दक्षिण भारत का का संधि स्थल होने से आर्य, अनार्यो की मिश्रित भूमि रहा होगा और इसी नाते इसका नाम 'निमार्य' (नीम आर्य) पड़ा होगा। नीम का अर्थ भी निमाड़ी में 'आधा' होता है इसी 'निमार्य' का नाम बदलते बदलते 'निमार' और 'निमाड' हो जाना स्वाभाविक है।

दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि निमाड़ मालवा से नीचे की ओर 'बसा' है। मालवा से निमाड़ की और आने में निरंतर नीचे की ओर उतरना होता है। इस तरह 'निम्न–गामी' होने से इसका नाम 'निमानी' और उससे बदल कर 'निमारी' और 'निमाडी' हो गया होगा।

मेरे विचार अनुसार इसके हिंदू शब्द होने में तनिक भी संदेह नहीं है निमाड़ में प्रवेश करने वाला प्रथम मुसलमान शासक सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी था। जो 1291 ईस्वी में यहां आया यदि 'निमाड' मुसलमानी नाम होता, तो इस भाग का नाम सन 1291 के पश्चात ही पढ़ना चाहिए था। जबकि 11वीं शताब्दी में आने वाले अरब यात्री अलबरूनी ने भी अपने यात्रा वर्णन में इस प्रदेश का नाम 'निमाड़' प्रांत लिखा है।

कुछ लोग इसका पूर्व नाम 'नीमवाड़' प्रांत बतलाते हैं। जिसका अर्थ है नीम (एक वृक्ष) का प्रदेश इस प्रदेश में नीम के अधिक वृक्ष देखकर इसके नामकरण के संबंध में यह अनुमान लगाया जाता है।

यद्यपि यह तर्क अधिक पुष्ट है। फिर भी संतोषजनक नहीं जान पड़ता। इस संबंध में 'भवतीकृत' उत्तररामचरितम की कुछ पंक्तियां भी विचारणीय है। विंध्य के समीप जाने पर लक्ष्मण ने सीता से कहा–

'एष विघ्नयाटवीमुखे विरोधसरोधः।'

अर्थात धरती माता के निम्नांचल में बसा होने से ही इसका नाम यनिमाड़ पड़ा होगा।

कुछ लोग फारसी के 'नीम' शब्द से 'निमाड़' बनाना बताते हैं उनके मताअनुसार फारसी में 'नीम' का अर्थ 'आधा' होता है। इस भूभाग ने नर्मदा नदी का 'आधा' भाग अपने आंचल में छुपा रखा है। इसलिए इसे 'निमाड़' कहते हैं।

दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि 'निमाड़' मालवा राज्य का दक्षिणी

भाग है। जिसे हम 'निम्न भाग' भी कह सकते हैं 'वाड़' का अर्थ 'स्थान' है। जैसा कि हम भारवाड, काठियावाड़ आदि नाम से देखते हैं। अत: इसके पूर्व का नाम 'निम्नवाड़' होना चाहिए जो लोकवाणी में 'निमाड़' हो गया है।

निमाड़ की भूमि एक ऐसे स्थान पर है। जहां कई जातियों और जनजातियों की संस्कृतियाँ आयी और गयी। आर्य, अनार्य, शक, शीथियन, सातवाहन, राजपूत, मुगल, मराठा आदि संस्कृतियों के इस स्मृति चिन्ह यहां के जनजीवन कला और वाचिक परंपरा के अवशेष के रूप में आज भी देखे जा सकते हैं।

प्रांत निमाड़ के संबंध में निश्चित रूप से कुछ ज्ञात नहीं है। किंतु यह अनुमान लगाया जा सकता है, कि पुराने प्रांत 'निमाड़' का यह नाम ऐसा इसलिए पड़ा था कि नर्मदा नदी पर स्थित 'नेमावर' नामक स्थान (जो अब देवास जिले में है) प्रांत निमाड़ की राजधानी था। प्रसिद्ध अरबी लेखक अलबरूनी ने भी 'नेमावर' का उल्लेख 'नामावर' के नाम से किया है। 'निमाड' नाम कतिपय पुस्तकों में 'निमाउड़' के रूप में भी लिखा गया है। कालांतर में तथा कई अवस्थाओं से गुजरने के बाद 'नीमाउड़', 'नेमावड़' या 'निमाड़' नाम सरल रूप में निमाड़ हो गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विजयैन्द्र कुमार माथुर : ऐतेहासिक स्थानावली
2. ई.सी. सचौ : अलबरूनी इण्डिया
3. सी.पी. एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट
4. रामनारायण उपाध्याय : निमाड़ का सांस्कृति इतिहास
5. ज्ञान सम्पदा : म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी
6. डॉ. प्रमिला कुमार : म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन
7. रघुवंश

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मेघदूत में प्रयुक्त दार्शनिक तत्त्व

डॉ. गरिमा शर्मा *

* सहायक आचार्य (विद्या संबल योजना के तहत), राजकीय कन्या महाविद्यालय, राजसमन्द (राज.) भारत

प्रस्तावना - देववाणी के सनातन शृंगार महाकवि कालिदास संस्कृत वाङ्मय के रससिद्ध कवीश्वर हैं। उनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति का प्रधान संवाहक होता है, अतएव साहित्य में किसी भी देश की संस्कृति का प्रतिबिम्ब होना नितान्त स्वाभाविक है। संस्कृति के समुचित प्रसार एवं प्रचार के दृष्टिकोण से महाकवि का समग्र काव्य अखण्ड शिव सन्देश है। लोक कल्याण एवं राष्ट्रमंगल की मधुमय पयस्विनी प्रवाहित करने वाले ऐसे महान क्रान्तदर्शी मनीषी कवि की कृतियों में संस्कृति के प्राणभूत आध्यात्मिक तत्त्वों का सागर है। 'दर्शन' भारतीय मनीषियों की आत्मनिधि है, महामनीषी कालिदास का काव्य भी तत्त्वपर्येषणा से युक्त है।

'काव्य' और 'दर्शन' दोनों ही जीवन के चरमलक्ष्य आनन्दानुभूति की प्रतिपत्ति में पर्यवसित दृष्टिगोचर होते हैं, क्योंकि जीवन में दु:ख-सुख का अबाध नेमिचक्र और विश्व की अत्यन्त विषमता मनुष्यमात्र को विश्व के मूल सत्य की पर्येषणा के लिए अभिप्रेरित करती है।

'कविर्मनीषीपरिभू: स्वयम्भू:'[1] की चरितार्थता भी इसी में निहित है कि क्रान्तदर्शी कवि न होकर केवल सहृदयजनों के रंजनार्थ, प्रत्युत लोककल्याण की मंगलभावना से भावित होकर भी काव्य की सृष्टि करे और उसकी यह मंगलकामना ऐहिक - अभ्युदय एवं आमुष्मिक नि:श्रेयस् का मूलाधार बने।

यद्यपि महाकवि कालिदास की कृतियों में समुपलब्ध दार्शनिक तत्त्वों का विश्लेषणात्मक विवरण सर्वाधिक रघुवंशम् व कुमारसम्भवम् में ही किया गया है तथापि 'मेघदूतम्' खण्डकाव्य में भी दर्शनशास्त्र की कतिपय अवधारणाओं / अंगों का विवेचन किया गया है।

मेघदूत में आए दार्शनिक तत्त्वों का विवरण इस प्रकार है-

प्रमाण मीमांसा → अनुमान प्रमाण

महाकवि कालिदास ने अनुमान प्रमाण के सम्बन्ध में 'मेघदूत' खण्डकाव्य के 'उत्तरमेघ' में अनुमान शब्द का प्रयोग किया है। अनुमान शब्द का प्रयोग करते समय 'तर्क' व 'शङ्के'पद का व्यवहार किया है। शास्त्रों में अनुमान विद्या के लिए 'तर्क' शब्द का प्रयोग किया जाता है। यतर्क' शब्द का प्रयोग पर्याप्त प्राचीन है।[2]

महाकवि कालिदास को स्वार्थानुमान तथा परार्थानुमान के भेद से अनुमान प्रमाण का द्वैविध्य मान्य है। अपने ज्ञान का निमित्त जो अनुमान है, वह स्वार्थानुमान है तथा जब कोई स्वयं धूम से अग्नि का अनुमान करके दूसरे को उसका बोध कराने के लिए पंचावयवसम्पन्न अनुमान का प्रयोग करता है, वह परार्थानुमान है।

कवि ने 'उत्तरमेघ' में शाप के कारण विरहि नायिका की तुलना पाले की मारी कमलिनी की तरह की है।[3]

कविकृत इस श्लोक में पंचावयव सम्पन्न परार्थानुमान का स्पष्ट रूप से निर्धारण एवंविधा किया जा सकता है।

नायक (साध्य)
शाप के दुर्वह दिवस (हेतु)
जब-जब सूर्य की किरणों से विकसित
होना- अर्थात् कमलिनी (अन्वयव्याप्ति)
जब-जब पाले की मार पड़ने से
कमलिनी का मुर्झा जाना (व्यतिरेकव्याप्ति)
नायकी नायक का प्राण है। (उपनय)
नायकी नायक का प्राण नहीं है। (निगमन)

इसी प्रकार महाकवि कालिदास ने उत्तारमेघ में नायक (यक्ष) के माधयम से नायिका(यक्षिणी) की मनोव्यथा को अनुमान प्रमाण के द्वारा ही ज्ञात किया है।[4] अनुमान प्रमाण के लिए 'शङ्के' पद का प्रयोग दृष्टिगत है।

श्लोक में नायक (यक्ष) के द्वारा अभूतपूर्व वियोग के कारण यक्षिणी की दीन-दशादि का मेघ के समक्ष अनुमान किया गया है।

प्रत्यक्ष प्रमाण का स्वरूप - कालिदास ने प्रमाण के रूप में अन्त:करण की वृत्ति का उल्लेख किया है। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार-इन चार वृत्तिरूपों में विभाजित मन को ही 'अन्त:करण' संज्ञा दी जाती है। अन्त:करण अज्ञानजन्य होने के कारण जड़ - स्वभाव है, इसलिए, चिदात्मा के प्रतिबिम्ब के कारण उसमें क्रियाशीलता आती है। चिति का यह प्रतिबिम्ब जब सत्त्वबहुला (प्रसन्न) बुद्धि में पड़ता है। तभी बुद्धि चितिच्छायापन्न होकर सचेष्ट हुआ करती है।

'गम्भीराया: पर्यासं सरितश्चेतसीव प्रसन्ने।
छायात्माडिप प्रकृतिसुभगो लप्स्येते ते प्रवेशम्॥'

अन्त:करण की शुद्धता - हे सज्जन। बान्धव - स्नेह के कारण युद्ध से विरत बलराम ने अपनी इच्छित स्वादवाली अपनी प्रिया के नेत्रों के प्रतिबिम्ब से चिह्नत मदिरा को छोड़कर जिस सरस्वती के जल का सेवन किया था। तुम भी उस जल का सेवन (पान) करके निर्मल अन्त:करण वाले होकर केवल रूप से (न कि हृदय से भी) श्यामरंग के हो जाओगे पवित्र स्थलों और पवित्र नदियों के सम्पर्क से भी अन्त:करण की पवित्रता आती है।

'हित्वा हालामभिमतरसां रेवतीलोचनाङ् कां
बन्धुप्रीत्या समर-विमुखो लाङ्गली या: सिषेवे।
कृत्वा तासामनिगममपां सौम्य सारस्वतीना-

मन्त: शुद्धस्त्वमपि भविता वर्णमात्रेण कृष्ण:।।'[6]

परमतत्त्व की संधारणा

'पुण्यं यायस्त्रिभुवनगुरोधचण्डीश्वरस्य।'

(शिव ही त्रिभुवन के गुरू हैं)

परतत्त्व विवेचन के संदर्भ में उल्लेखनीय है कि कालिदास को अद्वैत अभीष्ट है। महेश्वर (शिव) के रूप में इस अद्वय तत्त्व का ग्रहण उन्होंने किया है।

वेदान्त श्रुति में जिसे एकमेवाद्वितीयम् के रूप में कहा गया है जो द्यावा पृथ्वी को व्याप्त किए हैं वह जिस एक मात्र को लक्ष्य करके प्रवर्तित ईश्वर शब्द सार्थक है वही तत्त्व ही शिव शब्द से अभिहित है।

मोक्ष तत्त्व – अपने-अपने पुण्य फल से जीव आनन्दमय मोक्षप्राप्त होता है। पुण्यों की अवस्था के अनुसार मार्ग के अनेक लोकों की कल्पना भारतीय दार्शनिक एवं पौराणिक परम्परा में है। इसी दृष्टि से पुण्य-क्षय से पृथ्वी लौट आना भी मान्य रहा है।

'स्वल्पीभूतं सुचरि स्वर्गिणां गां गतानां ।

शैषै: पुण्यै हृतमिव दिव: कान्तिमत्खण्डमेकम्'[7]

पवित्र स्थलों और पवित्र नदियों के सम्पर्क से भी अन्त:करण की पवित्रता आती है।

'हित्वा................................ .कृष्णा'[8]

पाप से मुक्ति तस्माद्........................... .र्मिहस्ता।[9]

कर्म-मीमांसा : कालिदास ने 'मेघदूत' खण्डकाव्य में जीवन में सुख-दु:ख दोनों प्रकार के भोगों का अवश्यसम्भावित्व प्रतिपादन करते हुए कर्मविपाक सिद्धान्त की इस धारणा को सुस्पष्ट करने की चेष्टा की है कि सभी प्रकार के कर्म काम, क्रोध, लोभ, मोह की भावना से ही किए जाते हैं। किसी प्राणी के प्रति किया गया उपकार अन्य किसी के प्रति अपकार रूप हो सकता है, इसलिए एक ही कर्म से शुभ तथा अशुभ दो संस्कार बनते हैं। प्रत्येक प्राणी को कर्मजन्य शुभाशुभ संस्कारों के कारण ही सुख-दु:ख दोनों ही प्रकार के भोग भोगने पड़ते हैं। मेघदूत में यह संकेत प्राप्त होता है कि सारे कर्म अविद्यादि पंचक्लेशपूर्वक किए जाने के कारण ही कर्माशयों को उत्पन्न करते हैं और उन कर्माशयों का फल जन्म, जीवनावंधि तथा सुख-दु:ख भोग रूप ही होता है।

कस्यैकान्तं..........चक्रेनेमिक्रमेण ।।[10]

निष्कर्ष : निष्कर्षतया कहा जा सकता है कि काव्य के आत्मभूत रसानुभूति को अबाध रखते हुए भी दार्शनिक विचारों की स्फुट अभिव्यक्ति करना महाकवि की ही विलक्षण काव्य प्रतिभा का नैसर्गिक वैशिष्ट्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ईशा. उ. 8
2. 'नैषा तर्केण मतिरापनेया। कठ. उ. 1/2/9 यस्तर्केण अनुसन्धत्तो स धर्म वेद नेतर:। मनु. 12 / 106 तर्काप्रतिष्ठानात्।सू.2/1/11
3. तां जानीथा: परिमितकथां जीवितं में द्वितीयं । दूरीभूते मयि सहचरे चक्रवाकी मिवैकाम्। उत्तरमेघ 2.0 गाढोत्कण्ठां गुरूषु दिवसेष्वेषु गच्छत्सु बालां । जातां मन्ये शिशिरमथितां पद्मिनीं वान्यरूपाम्।
4. सव्यापारामहनि न तथा पीडयेन्मद्वियोग: शङ्के रात्रौ गुरूतरशुचं निविनोदां सखीं ते। मत्सन्देशै: सुखयितुमलं पश्य साधवीं निशीथे। तामुन्निद्रामवनिशयनां सौधवातायनस्थ: । उत्तरमेघ श्लोक - 25
5. पूर्वमेघ श्लोक - 40
6. पूर्वमेघ श्लोक - 49
7. पूर्वमेघ श्लोक - 36
8. (मे. दू. पूर्व 30)
9. (पूर्व मेघ 49)
10. (पूर्व मेघ 50)
11. उत्तरमेघ श्लोक - 44

****

तनाव प्रबंधन में महात्मा गाँधी के सिद्धान्तों का अनुपालन

मधु तेकाम* डॉ. मंजु शर्मा **

* शोधाथी, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृह विज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना - वर्तमान में शैक्षणिक स्पर्धा के कारण सफलता और विफलता यह स्थिति अधिक समय रहने पर तनाव का रूप ले लेती है। उसके बारे में सोचकर विद्यार्थी मानसिक रूप से विचलित रहते हैं, तनाव उन घटनाओं के प्रति एक सामान्य शारीरिक मानसिक और मनोविज्ञान प्रतिक्रिया है जो खतरा महसूस कराती हैं या किसी तरह से व्यक्तित्व को असंतुलित करती हैं। है, तब तंत्रिका तंत्र की हार्मोन की प्रतिक्रिया बढ़ती है। एक निश्चित बिंदू से उपर तनाव की स्थिति स्वास्थ्य एवं जीवन की गुणवत्ता में बड़ा नुकसान पहुँचना प्रारंभ करने लगती हैं।

तनाव उत्पन्न करने वाली स्थितियों और दबावों को तनाव कारक अथवा स्त्रोत के रूप में जाना जाता है। सामान्यत पर तनाव को नकारात्मक माना जाता है, किन्तु शिक्षा के क्षेत्र में कार्य से संबंधित तनाव को अत्यधिक प्रासंगिक माना जाता हैं। वर्तमान में तकनीकी ज्ञान संचार कौशल, सहानुभूति, शिक्षा प्रद संसाधन-भावनात्मक और पारस्पारिक संबंधो का विकास भी शैक्षणिक गतिविधियों में सम्मिलित है। फिर भी उच्च शिक्षा में तनाव वातावरण में कार्य-संबंधी तनाव के लिए शरीर चेतना दृष्टिकोण लागू किया जा सकता हैं। महात्मा गाँधी द्वारा बताया गया चिंतन मुक्त विचार का पालन करने से तनाव प्रबंध कर जीवन को खुशहाल बनाया जा सकता हैं। महात्मा गाँधी जी ने सत्य, अंहिसा, प्रेम, व्यापक सहानुभूति क्षमा कर्त्तव्य परायणता जागरूकता एवं उत्तम चरित्र जैसे गुणों को तनावमुक्त जीवन की आवष्यकता माना हैं।

तनाव को अर्थ- तनाव प्रकृति का एक तथ्य है, जिसमें विभिन्न क्षेत्रो से आने वाले दबाव ताकतें व्यक्ति को प्रभावित करती हैं। या तो उसके भावनात्मक या शारीरिक दोनों। व्यक्ति तनाव के प्रति विभिन्न से प्रतिक्रिया व्यक्त करता हैं। जो उस व्यक्ति के साथ-साथ पर्यावरण को भी प्रभावित करता है। हमारे आधुनिक जीवन में तनाव को अधिकता के कारण आमतौर पर तनाव के पहलू को अधिक देखा जा रहा है नकारात्मक अनुभव के रूप में सोचते है, किन्तु जैविक दृष्टिकोण से, तनाव एक नकारात्मक या सकारात्मक अनुभव भी हो सकता हैं।

मनोवैज्ञानिक के अनुसार:-

दो प्रकार के तनावों की संकल्पना की गई है।

(क) इयू स्ट्रेस (eustress) जिसका सामान्य अर्थ है, एक प्रकार से चुनौतीपूर्ण कार्य को करना अर्थात अपनी ईच्छा से किसी कार्य को चुनना जैसे-कि प्रतियोगी खेल खेलते समय तनाव में होता है। ये सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।

(ख) विपत्ति, (distress) किसी कार्य को करते समय अधिक दबाव महसूस होना या अनियंत्रित हो जाना जो एक नकारात्मक रूप से प्रभावित होती है।

तनाव के कारक:

1. **जीवन की विशेष घटनाएँ और परिवर्तन-** इस श्रेणी में किसी व्यक्ति की जिंदगी से जुड़ी कई महत्वपूर्ण घटनाएँ सम्मिलित है, जो उसके जीवन पर चिरस्थायी समय तक प्रभाव डालती है, मुख्य घटनाएँ एवं बदलाव से व्यक्ति अत्यधिक रूप से प्रभावित होता हैं।
2. **दैनिक जीवन की परेशानियाँ-** ये वह परेशान करने वाली-निराशापूर्ण व दुख-दर्द परिस्थिति होती है, जिन का कई व्यक्ति प्रतिदिन सामना करता है। जैसे-वस्तुओं को गलत जगह पर रख देना या उनकी वस्तुएँ गुम हो जाना रख कर भूल जाना।
3. **लम्बे समय तक चिंता-** दीर्घकालिक भूमिका से तनाव जैसे-वैवाहिक जीवन में मुश्किलों का सामना करना, गरीबी में रहना, रोजगार की समस्या घरेलू हिंसा से परेशान, आर्थिक समस्या, आदि।
4. **अशांत कर देनी वाली घटनाएँ-** अभिघात से अपेक्षित, भयंकर, अत्यन्त अशांत कर देने वाली घटनाएँ होती है, जो जीवन पर गहरा प्रभाव छोड़ जाती हैं। जैसे-प्रिय व्यक्ति की मृत्यु होना वियोग होना घर से जाकर अलग रहना आदि।

तनाव के प्रति साधारण प्रतिक्रियाएँ:

व्यवहारात्मक प्रतिक्रियाएँ:

1. बार-बार रोना
2. चिड़चिड़ा पन होना
3. अशांत निद्रा का होना
4. बैचेनी होना
5. भय

भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ:

1. ईर्ष्या करना
2. क्रोध करना
3. लज्जित होना
4. आत्माघाती विचार करना
5. दोषी महसूस करना

संज्ञानात्मक प्रतिक्रियाएँ:

1. नकारात्मक आत्म संकल्पना
2. आत्म-आश्वासन

3. निराशावादी कथन
4. स्वयं और दूसरों के प्रति निराषावादी सोचना
5. मानसिक विकृति

अंतरवैयक्तिक प्रतिक्रियाएँ:

1. निष्क्रियता
2. झूठ बोलना
3. प्रति योगितात्मकता
4. अलग होना
5. दिखावा करना

जैविक प्रतिक्रियाएँ:

1. हमेशा थकावट रहना
2. शुष्क त्वचा होना
3. भूख न लगना
4. गलत लत लगना
5. उच्च रक्तचाप का बढ़ना या अन्य रोग होना

तनाव के लक्षण:

तनाव के भावात्मक लक्षण:

1. असानी से उत्तेजित हो जाना, बेचैनी, निराश और मूड़ी होना
2. नियंत्रण खोना या दूसरो को नियंत्रित करने की आवश्यक महसूस होना
3. मन को शांत रखने में कठिनाई होना
4. छोटी-छोटी बातों में चिंता करना या परेशान होना
5. विचारों का जल्दी-जल्दी बदलना या ध्यान केन्द्रित करने में परेशानी होना
6. जल्दी भूल जाना या याद रखने में दिक्कत होना
7. फैसले लेने में परेशानी होना
8. निराशावदी होना या केवल नकारात्मक पक्ष को सोचना
9. अपने बारे में बुरा (कम आत्मसम्मान) सोचना अकेला-बेकार और उदास होना
10. दूसरों से बचना
11. जिम्मेदारी से भागना

तनाव के शारीरिक लक्षण:

1. थकान महसूस करना
2. सिरदर्द होना
3. दस्त-कब्ज और मतली या पेट की खराबी होना
4. भूख में परिवर्तन, काम या अधिक होना
5. शरीर में दर्द और माँसपेशियों में तनाव होना
6 सीने में दर्द और दिल की धडकन तेज होना
7. अनिद्रा या सोने में मुश्किल होना
8. घबराहट, शरीर में कम्पन का होना

तनाव प्रबंधन-उपचार

1. समय प्रबंधन- कार्यो की एक सूची बनाकर उन्हे प्राथमिकता देना तथा कम महत्वपूर्ण कार्यो की अपेक्षा अत्यावश्यक कार्यो को प्राथमिकता देना।

2. नियमित व्यायाम- व्यायाम से कई लाभ मिलते है। यह रक्त संचार को बढाता हैं, मांसपेशियों को मजबूत करता है, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करता है संगीत नृत्य खेलकूद एवं अन्य मनोरंजनात्मक गतिविधि में संलग्नता।

3. परिवार के साथ समय बिताना- अपने प्रियजनों को गुणवत्तापूर्ण समय देकर अपने परिवारिक रिश्तों को मजबूत करें एक साथ गतिविधियों में शामिल होने से परिवार में एकता बढ़ती है, जो चुनौति पूर्ण समय के दौरान भावनात्मक समर्थन का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं।

4. आराम करना और आत्म-देखभाल करना- अपने पसंदीदा शौक जैसे सैर पर जाना या फिल्म देखना आदि करके तनाव मुक्त होना

5. दोस्तो के साथ रहना- दोस्तो को बढ़ावा देना क्योंकि वे भलाई के लिए आवश्यक हैं। चुनौतियों का सामना भरोसेमंद दोस्तो पर भरोसा करना जो सहायता करते हैं।

6. आध्यत्मिक गतिविधिंयों में संलग्नता - यदि आप धार्मिक है, तो अपनी आध्यात्मिक भलाई को मजबूत करने के लिए प्रार्थना और धर्मग्रंथ पढ़ने के लिए समय व्यतीत करना।

7. खाने-पीने के आदत पर ध्यान देना- चाय-शराब और धूर्मपान का अत्यधिक सेवन से चिंता और भावना का बढ़ना आरामदायक नींद के लिए शाम को इन पदार्थो को पीने से बचना चाहिए।

महात्मा गाँधी जी के अनूपालन में तनाव प्रबंधन के सिद्धान्त- गाँधी जी ने मानव ह्रदय में परिवर्तन करने और उसे आध्यात्मिक दिशा में जोड़ने के लिए प्रार्थना का महत्व स्वीकार किया है। अचूक मनोविज्ञानिक संस्कार हैं। उनका मत है कि मनुष्यों के बीच ऐकता की भाव पैदा करने लिए ही आध्यात्मिक शांति जैसा दूसरा कोई सुन्दर और सबल साधना नहीं हैं।

1. जन शिक्षा के तहत गाँधी जी ने विधार्थियों एवं समस्त सेवको को क्षमताओं के अनुकूल शिक्षित करने और समुचित शिक्षा देने की सलाह दी थी।
2. मनावैज्ञानिक धारणाएं भारतीय संस्कृति के शाश्वत तत्वों पर आधारित हैं, सामान्य ज्ञान की जानकारी , पढ़ने की योग्यता को दबाना ठीक नहीं।
3. अपनी मनोवैज्ञानिक धारणाओं जैसे-त्याग, तपस्या संतोष आदि धारणाओं को कभी निषेधात्मक नहीं माना।
4. मनुष्य विश्वात्मा के साथ एकता स्थापित करता है उसे अपने अनुक्रम मारना होगा।
5. अहिंसा, सत्य और संयम का पालन करते समय सरल जीवन व्यतीत करना चाहिए।

महात्मा गाँधी ने तनाव के सकारात्मक पहलुओं पर ध्यान आकर्षण किया हैं। उनके अनुसार तनाव कारण देखे तो यह हमें कठिनाईयों से भरे जीवन से निकालने में साहसपूर्ण कार्यो पर जीत दिलानें में सहायक हैं।

उपसंहार- यदि विद्यार्थी महात्मा गाँधी के इन सिद्धान्तों का अनुपालन करे तो उन्हें तनाव की दूर करने में प्रेरणा मिलेगी

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. https://hi.vikspedia.in/health/mental-health
2. महात्मा गाँधी - विद्यार्थियों के शैक्षिक संतुष्टि एवं तनाव
3. https://www.swastikmedicalcenter
4. https://www.singhealth.com.sg/patient-
5. गाँधी जी के मनोवैज्ञानिक-शैक्षणिक विचार की उपादेयता
6. Research methology-CR.kothari&Gourav Garg, publication New AgInter-national(p)LTD Publishers.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

नगरीय विवाहित महिलाओं के विरूद्ध पारिवारिक हिंसा : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. पूजा तिवारी*

* सह प्राध्यापक एवम विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – प्रत्येक समाज चाहे वह कितना ही सभ्य कहलाने लगे ,परन्तु अपराध एवम हिंसा का अस्तित्व किसी न किसी रूप में वह अवश्य होता है ,किसी भी समाज की सामाजिक संस्थओं में परिवार नामक संस्था का विशेष महत्व है ,जब परिवार की परिधि में पुरूष महिलाओं के प्रति असामाजिक और कानून विरोधी व्यवहार करता है तो उसे 'दुर्व्यवहार' कहा जाता है ,किन्तु जब यह दुर्व्यवहार बढ़ जाता है तो यह अपराध की श्रेणी में आता है।भारतीय समाज परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है और इस परिवर्तन का सबसे ज्यादा प्रभाव सामाजिक संस्थाओं पर पीडीए है ,महिलाओं के विरूद्ध पारिवारिक हिंसा एक गंभीर समस्या है ,घरेलू हिंसा कानून 2005 पारित एवम लागू होने के बाद भी पारिवारिक हिंसा के प्रकरणों में निरंतर बढ़ोतरी हो रही है पति-पत्नी में तनाव की स्थिति का खामियाजा पत्नी को महंगा पड़ता हैं और यह स्थिति घरेलू हिंसा को जन्म देती है ,पारिवारिक हिंसा को परिवार का निजी मामला मानते हुए लगभग पूर्ण रूपेण छिपा कर रखा जाता रहा है किन्तु महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार होने एवम शिक्षा के कारण एवम महिलाओं के सहस के कारण पारिवारिक हिंसा के मामले बाहर तक आ रहें हैं जिससे पता लगता है की यह हिंसा बहुत व्यापक है ,पारिवारिक हिंसा महिलाओं के विरूद्ध होने वाली हिंसा का प्रमुख रूप है।

शब्द कुंजी – महिला, हिंसा, नगरीय, घरेलू , उत्पीडन।

प्रस्तावना – पारिवारिक हिंसा से आशय एक परिवार के सदस्य या सदस्यों द्वारा परिवार के ही किसी सदस्य के विरूद्ध हिंसात्मक व्यवहार करना या उसे शारिरिक, मानसिक कष्ट पहुचाना है, यह हिंसा धमकी, भयभीत करना, गली देना, लात घूंसों से पिटाई करना उत्पीडन करना, प्रताड़ित करना, जबरदस्ती यौन सम्बन्ध बनाना, हत्या करना या हत्या की कोशिश करना किसी भी रूप में संभव हैं यह अक्सर महिलाओं के विरूद्ध ही की जाती है।

शोध प्रारूप – प्रस्तुत शोध पात्र में छिन्दवाड़ा नगर के कुल 50 नगरीय विवाहित महिला सुचना दात्रियों के साक्षात्कार,अनौपचारिक बातचीत, अनुसूची द्वारा प्राथमिक आकड़ों का का संकलन करके व्याख्यात्मक शोध अभिकल्प अपना कर विश्लेषण करने का प्रयास किया गया हैं, अन्य स्त्रोत के अंतर्गत विभिन्न पुस्तकें, लेख, समाचार पात्र, इन्टरनेट को रखा गया है।

उद्देश्य:

1. नगरीय विवाहित महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक स्थिति की जानकारी ज्ञात करना।
2. हिंसा के स्वरूपों की जानकारी लेना।
3. परिवार के अन्य सदस्यों के द्रष्टिकोण को जानना।
4. पारिवारिक हिंसा के कारणों को जानना और हिंसा रोकने में सहायक बिन्दुओं पर विचार करना।

तालिका 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 से स्पष्ट होता है की नगरीय विवाहित महिलाओं में 82 प्रतिशत महिलाएं किसी न किसी प्रकार से पारिवारिक हिंसा का सामना करती हैं जबकि 18 प्रतिशत महिलाये इससे मुक्त हैं।यदि आर्थिक वर्ग की बात करें तो निम्न वर्ग की महिलाएं सर्वाधिक हिंसा से पीड़ित हैं अर्थात हिंसा का मूल कारण गरीबी है।

अनपढ़ या कम पढ़े लिखे पति ज्यादा हिंसा करते है इसी प्रकार 21 से 42 वर्ष उत्पीडक वर्ग के रूप में उभर कर सामने आया।नसे के सन्दर्भ में पाया गया की पुरे होशोहवास में रहने वाले ज्यादा हिंसा करते हैं ,नगरीय सन्दर्भ में प्रथम प्राथमिकी दर्ज करवाने हेतु 60 प्रतिशत महिलाएं इसे स्वीकार करती हैं जबकि 40 प्रतिशत महिलाएं ऐसा नही चाहती हैं।इस तालिका से साफ पता चलता है की उत्पीडन का स्वरुप सर्वाधिक शारीरिक ही होता है जो 70 प्रतिशत महिलाओं ने स्वीकार किया हैं। इस प्रकार से कहा जा सकता हैं की घरेलू हिंसा में पति के साथ साथ सास ,जेठानी ,नन्द ,देवर सभी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से शामिल रहतें हैं।

हिंसा के प्रमुख कारणों में दहेज की मांग, बाँझपन, शक करना ,चरित्र हननं, अहंकार, गरीबी और पारिवारिक दबाव तथा रूप रंग भी शामिल होता हैं।

इस समस्या के समाधान हेतु आवश्यक है की नगरीय क्षेत्रों में संचालित परिवार परामर्श केंद्र ,पुलिस थाने ,एन .जी .ओ .एवम वन स्टॉप सेंटर अपना कर्तव्य गंभीरता से और मुस्तैदी से करें ,इसके अलावा शिक्षा ,और पुरूष मानसिकता में परिवर्तन हेतु प्रयास ,काउंसलर सेंटर में वृद्धि करना जरूरी है ,स्वयम महिलाओं को भी मुखर होना पड़ेगा क्योकि खुद की लड़ाई स्वयम लड़ना होगा ,अपने अधिकारों के प्रति सजग रहना होगा, समस्त कानून की जानकारी रखना होगा, महिलाओं को हमेशा सतर्क और सावधान रहना पड़ेगा, अपने निर्णय स्वयम लेना होगा और सबसे पहले आर्थिक रूप से

सशक्त बनना होगा तभी सामाजिक सशक्तिकरण भी होगा अब समय की मांग है की महिलाये किसी भी प्रकार की हिंसा को सहन न करे ,उसके विरूद्ध आवाज उठाएं क्योकि आज के समय में भी महिलाये घरेलू हिंसा का शिकार बनती रहे, यह किसी भी सभ्य समाज ,समुदाय के लिए स्वीकार्य नही होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आहूजा ,राम ,भारतीय सामाजिक व्यवस्था ,रावत पब्लिकेशन्स दिल्ली।
2. आहूजा,राम, Crime Against Women,रावत पब्लिकेशंस ,जयपुर।
3. अग्रवाल ,अमित ,भारत में नगरीय समाज , विवेक प्रकाशन ,दिल्ली।
4. दैनिक भास्कर, मधुरिमा।
5. इन्टरनेट, द्रष्टि आई .ए .एस .घरेलू हिंसा यकारण और समाधान, मार्च 2020.

तालिका 1: सूचना दात्रियों की सामाजिक ,आर्थिक ,आयु ,शिक्षा ,उत्पीडन ,व्यसन सम्बन्धी जानकारी

क्र	सम्बन्धित परिवर्त्य	आवार्तियाँ / प्रतिशत	आवार्तियाँ /प्रतिशत		समस्त प्रतिशत
1	पारिवारिक हिंसा की स्थिति	पारिवारिक हिंसा से पीड़ित महिलाये 41 (82 %)	पारिवारिक हिंसा से मुक्त महिलाएं 09(18 %)	-	योग 50 (100%)
2	आर्थिक वर्ग	उच्च 09 (18%)	मध्यम 18 (36%)	निम्न 23 (46%)	50 (100 %)
3	उत्पीड़क आयु वर्ग	18-21 वर्ष =11 (22 %)	22 -42 वर्ष =37 (74%)	43 से अधिक =2 (4 %)	50 (100%)
4	पति का शैक्षणिक स्तर	प्राथमिक =26(52 %)	माध्यमिक /इंटर =20(40%)	उच्च शिक्षित =4 (8 %)	50 (100 %)
5	मध् व्यसनी	उच्च नशा 2 (4 %)	मध्यम नशा 17 (34 %)	होशोहवास (कोई नशा नहीं ,31 (62 %)	50 (100 %)
6	प्रथम प्राथमिकी दर्ज करवाना	हाँ =30 (60 %)	नही 20 (40 %)	-	50 (100 %)
7	उत्पीडन का स्वरुप/प्रकार	शारिरिक35 (70 %)	मानसिक 15 (30 %)	-	50 (100 %)

****

अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की सामाजिक चुनौतियां (बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में)

दिनेश भुगवाडे*

* शोधार्थी, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – किसी भी समाज में महिलाओं का विकास महत्वपूर्ण है शिक्षित महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होती है एवं किसी भी शासकीय योजनाओं का लाभ उठाने में सफल होती है महिलाओं के विकास के लिए विश्वव्यापी राष्ट्रीय प्रचार और जागरूकता कार्यक्रम चलाना अति आवश्यक है जिसमें समाज और राष्ट्र के स्वरूप एवं संतुलित विकास में महिलाओं की भूमिका और उसकी उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता है क्योंकि एक महिला अपने बच्चो के व्यक्तित्व एवं चरित्र को जिस रूप में ढालती हैं जैसा आकार प्रदान करती है वैसा ही राष्ट्र के चरित्र का निर्माण होता है देश में महिलाएं लगभग 50 करोड़ जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है जो कि समाज का बहुमूल्य अंग मानी जाती है कोई समाज महिलाओ में विद्यमान संभावना को अनदेखा कर सकता है जब महिलाएं शिक्षित एवं जागरूक नहीं होती है।

अरस्तू के अनुसार मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है सामाजिक प्राणी होने के नाते वह सामाजिक संबंधों की स्थापना हेतु व्यक्ति को अन्य व्यक्तियों से संपर्क करना होता है तथा साथ ही वह अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए समूह के अन्य व्यक्तियों से संपर्क करना होता है साथ ही अन्य व्यक्तियों से क्रिया तथा अन्य क्रियाएं करता है इन सब के बावजूद भी इसे कुछ अभाव बना ही रहता है जिसे विभिन्न समस्याएं जीवन में उभर कर सामने आती है।

शब्द कुंजी–अनुसूचित जनजाति, महिलाओं/महिलाएं, जीवन, शिक्षित, जागरूकता।

प्रस्तावना – एक परिवार, समाज और देश के विकास ने महिलाओं का बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है लेकिन आज स्वतंत्रता के 78 वर्ष बाद भी अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की कुछ समस्याएं अभी भी विद्यमान है हम इसके जीवन में कुछ परिवर्तन जरूर दिखने लगा है अभी भी कुछ अनुसूचित जनजाति ग्रामीण में निवास करती है अनुसूचित जनजाति तो नहीं पर जंगलों, पहाड़ों, बिहडो में निवास करने वाली अनुसूचित जनजाति अभी भी आधुनिक सभ्यता संस्कृति राजनैतिक जीवन आदि से अछूती है।

लेकिन फिर भी आज हमारे देश में सबसे ज्यादा पतन महिला का ही हो रहा है। हम सभी जानते हैं कि भारत देश पुरुष प्रधान है यहां समाज में पुरुषों का बोलबाला है यहां पुरुषों को हर क्षेत्र में प्राथमिकता दी जाती है फिर चाहे वह शिक्षा हो या घर के बाहर निकाल कर उत्पादन करने की आजादी हो इन सभी क्षेत्रों में पुरुषों को प्राथमिकता दी जाती है जबकि महिलाओं को इन क्षेत्रों में रोक-टोक का सामना करना पड़ता है शिक्षा से भी महिलाओं को वंचित रखा जाता है घर से बाहर निकाल कर उत्पादन करने की भी स्वतंत्रता नहीं दी जाती है वर्तमान में महिलाओं की स्थिति में थोडा सुधार हुआ है। लेकिन पूर्णत: नहीं।

मेकाइवर और पेज से अपनी कृति 'समाज' में लिखा है कि समाज सामाजिक संबंधों का जाल है वस्तुतरूसमाज सामाजिक समस्याओं का भी जाल है। सामाजिक आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन में विभिन्न समस्याएं विद्यमान रहने के कारण ही इनके समाधान में व्यक्ति अपने के निरंतर लगाए रखना है खासतौर से अन्य समस्याओं तो की जा सकती है किंतु सामाजिक समस्याएं अपने आप में कठिन और जटिल हुआ करती है मनुष्य कभी भी सामाजिक समस्याओं में पूर्णत: मुक्त नहीं रहा है।

ए. एम. रोज ने लिखा है कि सामाजिक समस्या एक ऐसी परिस्थिति है जो किसी समूह के द्वारा अपने सदस्यों के एक स्रोत के रूप में देखी जाती है इसे सामाजिक समस्या प्रमुख इसलिए माना जाता है क्योंकि यह सामाजिक वातावरण में ही पायी जाती हैं और उत्तरदायी कारणो को इस रूप में देखा जाता है कि वह पर्यावरण में ही मौजूद है। वर्ण व्यवस्था हिंदू समाज की एक विशेषता रही है। इसके आधार पर हिंदू समाज वर्णों, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णों में विभक्त था। प्रारंभिक अवस्था में वर्ण के आधार पर ही जातियों का निर्धारण होने लगा पहले से ही समाज के प्रथम तीन वर्ग संपन्न रहे हैं। किंतुचौ वर्ग प्रारंभ से ही शोषित, दलित, पिछड़ा एवं कमजोर रहा है। अनुसूचित जनजातियों को अस्पृश्यता मानने वाले लोगों को शासन ने कानूनी रूप से अपराधी लोगों को शासन ने कानूनी रूप से अपराधी घोषित किया है। अनुसूचित जनजाति के महिलाओं स्वास्थ्य संबंधी, आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक उन्नति के लिए शासन ने अनेक विकास योजनाएं प्रारंभ की है। शासकीय नौकरियों में उनके लिए स्थान सुरक्षित दिए गए हैं शिक्षा के प्रचार प्रसार के लिए अनुसूचित जनजाति को बाहुल्य क्षेत्र को एक विशेष परियोजना के अंतर्गत लाकर जगह-जगह स्कूल खोले गए जो की महिलाओं की सुरक्षा के लिए रात के समयमें भी चलाए जाते हैं। अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को सरकार की ओर से कई तरह के सुविधा दी जाती है। इन महिलाओं को अनेक उनके स्वास्थ्य तथा स्वच्छता संबंधी जानकारी देने के लिए भारत सरकार द्वारा महिला एवं बाल विकास परियोजना को विकास किया गया है। इसके तहत महिलाओं को स्वास्थ्य

एवं स्वच्छता एवं पौष्टिक पोषक आहार संबंधित जानकारी प्रदान करने के लिए आंगनबाड़ी जैसे अनेक शासकीय केंद्र खोले गए हैं।

अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के संस्कारों रीति-रिवाज रहन-सहन एवं कर्मकांड विश्वास आदि को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। इन महिलाओं के जीवन संबंधी विभिन्न समस्याओं को अध्ययन का प्रमुख अंग बनाया गया है तथा अध्ययन में पूर्णत: निष्पक्षता एवं सतर्कता बढ़ती गई है।

शोध का उद्देश्य:

1. अनुसूचित जनजाति में होने वाले उत्पीड़न में महिलाओं के विचारों का अध्ययन करना।
2. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की पारिवारिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करना।
3. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की आवास व्यवस्था की जानकारी प्राप्त करना।
4. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में शैक्षणिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करना।
5. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में निर्धनता एवं पिछड़ेपन के कारणो की जानकारी प्राप्त करना।
6. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन का अध्ययन करना।
7. अनुसूचितजनजाति की महिलाओं की सामाजिक सजकता एवं अभिरुचि का मूल्यांकन करना।

शोध परिकल्पना :

1. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में सामाजिक गतिशीलता बढ़ी है।
2. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के स्वास्थ्य एवं शिक्षा संबंधी चुनौतियों है।
3. प्रौद्योगिकी के प्रभाव स्वरूप अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में परिवर्तन हो रहा है।

शोध महत्व

सैद्धांतिक महत्व - बड़वानी जिले की वरला तहसील के अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की समस्याओं का सामाजिक स्थिति का अध्ययन निम्नलिखित उपयोगिता पर आधारित है।

1. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के परिवारों में व्याप्त निर्धनता रूढ़िवादिता जैसे रहन-सहन के निम्न स्तर आदि समस्याओं के कारणों की खोज की गई है।
2. अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की सामाजिक आर्थिक पहलुओं का अध्ययन किया गया है।
3. प्रस्तुत शोध कार्य में अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में व्याप्त समस्याओं को दूर करने के लिए उपाय खोजे गए हैं।
4. इस शोध कार्य में अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के पारिवारिक संरचना विवाह धार्मिक विश्वास आदि विषयों पर भी अध्ययन किया गया है।

व्यावहारिक महत्व :

1. इस शोध कार्य में अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त समस्याओं की जानकारी प्राप्त करना।
2. इस शोध कार्य से प्राप्त जानकारी के आधार पर इन्हें दूर करने के प्रयास में सहायता करना।
3. धार्मिक सामाजिक तथा राजनीतिक सहभागिता की जानकारी सें इनसे संबंधित समस्याओं के निराकरण में सहयोग प्राप्त होता है।

शोध पद्धति - प्रस्तुत शोध कार्य में शोध रखते हुए निम्नलिखित पद्धतियों का उपयोग किया है।

निदर्शन पद्धति :

1. अध्ययन को स्वरूप देने के लिए उद्देश्य परक निर्देशन के अंतर्गत बड़वानी जिले का चयन किया गया है।
2. बड़वानी जिले में रह रहे अनुसूचित जनजाति की महिलाओं का चयन प्रतिदर्शन के माध्यम से किया गया है।

शोध उपकरण

प्रश्नावली - अध्ययन को स्वरूप प्रदान करने के लिए बड़वानी जिले के क्षेत्र में निवास कर रहे हैं अनुसूचित जनजाति की महिलाओं से प्रश्नावली के माध्यम से उनकी राय और विचारों को जाने के प्रयास किए गए हैं तथ्य संकलन के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया गया है प्रश्नावली के अंतिम प्रश्न पत्र के रूप में खुला प्रश्न दिया गया जिसके माध्यम से प्रतिभागियों के विचारों को भी शोध में शामिल किया गया है।

अनुसूची - कुछ प्रतिभागियों को प्रश्नावली समझने में समस्या होने के कारण उनसे राय और विचार जानने के लिए प्रश्नावली का उपयोग यहां अनुसूची के रूप में किया गया है।

तथ्य विश्लेषण एवं आंकड़ों का प्रस्तुतीकरण - प्रस्तुत शोध में अध्ययन के माध्यम से यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति की लोकप्रियता और कार्य पद्धति को केंद्र में रखकर यह शोध कार्य किया गया है तथ्यों और आंकड़ों को प्रश्नावली अनुसूची के माध्यम से एकत्रित कर उनका विश्लेषण किया गया है प्रस्तुत शोध बड़वानी जिले में रहने वाले अनुसूचित जनजाति की महिलाओं पर विशेष रूप से केंद्रित है अध्ययन में जिनमें विषय से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई तथ्य संकलन हेतु 50 से अधिक प्रश्नावली अनुसूची को भरवाया गया है। लेकिन तथ्य विश्लेषण में 50प्रतिभागियों के मतों को शामिल किया गया है तथ्य संकलन का कार्य अक्टूबर 2024 में किया गया है। साक्षात्कार अनुसूची में कुल 3 प्रश्नों को शामिल किया गया है साक्षात्कार अनुसूची में बहुविकल्पीय प्रश्नों के माध्यम से प्राप्त तथ्यों का अध्ययन हेतु केन्द्र में रखा गया है साक्षात्कार अनुसूची में विकल्प के रूप में हां, नहीं और पता नहींको तथ्य संकलन हेतु आधार बनाया गया है जो इस प्रकार है।

तालिका क्रमांक - 1

1 क्या अनुसूचित जनजाति की महिलाएं शासकीय योजनाओं के प्रति जागरुक है?

क्र.	न्यादर्श का चयन	संख्या	प्रतिशत
1	हा	20	40%
2	नहीं	25	50%
3	पता नही	5	10%
	योग	50	100%

विश्लेषण- तालिका क्रमांक 1 के आंकड़ों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अनुसूचित जनजातिकी महिलाएं शासकीय योजनाओं के प्रति जागरुक है कुल 50 उत्तरदाताओं के चुनाव में से 20 (40प्रतिशत) उत्तरदाताओ ने नकहा है कि हा जागरूकता है जबकि 25 (50प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने

कहा जागरूक नहीं है तथा 5 (10प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने कहा ज्ञात नहीं है।

तालिका क्रमांक -2

अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के प्रति समाज का दृष्टिकोण कैसा है?

क्र.	न्यादर्श का चयन	संख्या	प्रतिशत
1	अच्छा	22	44%
2	सहयोगात्मक	15	30%
3	उपेक्षित	13	26%
	योग	50	100%

विश्लेषण- तालिका क्रमांक 2 के आंकड़ों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के प्रति समाज का दृष्टिकोण कैसा है कुल 50 उत्तरदाताओं में से 22(44 प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने कहा कि समाज का दृष्टिकोण अच्छा है जबकि 15(30प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने कहा कि समाज का दृष्टिकोण सहयोगात्मक है तथा 13(26प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने कहा कि समाज के दृष्टिकोण अपेक्षित नहीं है।

तालिका क्रमांक-3

क्र.	न्यादर्श का चयन	संख्या	प्रतिशत
1	हा	24	48%
2	नहीं	22	44%
3	पता नहीं	4	8%
	योग	50	100%

विश्लेषण- तालिका क्रमांक 3 के आंकड़ों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के कार्य करने की दिशाओं के संबंध में नवीन जानकारी है कुल 50 उत्तरदाताओं में से 24(48प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने कहा कि कार्य करने की दशाओ के संबंध में नवीन जानकारी है जबकि 22(44प्रतिशत) ने कहा कि कार्य करने के संदर्भ में जानकारी नहीं है तथा 4(8प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने कहा कि उन्हें कोई जानकारी नहीं है।

निष्कर्ष - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं में शासकीय योजनाओं के प्रति जागरूकता है कल 50 उत्तरदाताओं में से 25% उत्तरदाताओं ने कहा कि समाज जागरूकता में अभी-अभी कमी है तथा अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के प्रति समाज का दृष्टिकोण कैसा है के संदर्भ में 50 सदस्यों में से 44 उत्तरदाताओं ने कहा कि समाज का दृष्टिकोण अच्छा है जबकि मनुष्य जनजाति के महिलाओं के कार्य करने के दशाओं के संबंध में नवीन जानकारी है के संदर्भ में कुल 50 सदस्यों में से 48% ने कहा कि कार्य करने की दशाओं के संबंध में नवीन जानकारीहै।

सुझाव - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं की सामाजिक चुनौतियों के लिए कुछ सुझाव निम्नलिखित हैं:

शिक्षा और जागरूकता

1. **शिक्षा के अवसर प्रदान करना** - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को शिक्षा के अवसर प्रदान करना चाहिए ताकि वे अपने अधिकारों के बारे में जान सकें और अपने जीवन में सुधार कर सकें।
2. **जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करना** - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए ताकि वे अपने अधिकारों के बारे में जान सकें और अपने जीवन में सुधार कर सकें।

आर्थिक सशक्तिकरण

1. **आर्थिक अवसर प्रदान करना** - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को आर्थिक अवसर प्रदान करना चाहिए ताकि वे अपने परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार कर सकें।
2. **स्वावलंबन कार्यक्रम आयोजित करना** - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए स्वावलंबन कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए ताकि वे अपने जीवन में सुधार कर सकें।

सामाजिक समर्थन

1. **सामाजिक समर्थन प्रदान करना** - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को सामाजिक समर्थन प्रदान करना चाहिए ताकि वे अपने जीवन में सुधार कर सकें।
2. **सामुदायिक कार्यक्रम आयोजित करना** - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए सामुदायिक कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए ताकि वे अपने जीवन में सुधार कर सकें।

कानूनी संरक्षण

1. **कानूनी संरक्षण प्रदान करना** - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं को कानूनी संरक्षण प्रदान करना चाहिए ताकि वे अपने अधिकारों के लिए लड़ सकें।
2. **कानूनी जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करना** - अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए कानूनी जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करना चाहिए ताकि वे अपने अधिकारों के बारे में जान सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. बघेल डी.एस.(1990) भारतीय सामाजिक समस्याएं पुस्तक पुष्पराज प्रकाशन, रीवा।
2. तिवारी शिव कुमार (1998) मध्यप्रदेश के आदिवासी, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
3. उव्रेती एज. सी.(1970) भारतीय जनजाति ओरिएंटल प्रकाशन।
4. पटेल जी.पी.(1991) बैगा जनजाति का मानव शास्त्रीय अध्ययन।
5. डेविस किंग्सले (1973) मानव समाज किताब महल, इलाहाबाद।
6. त्रिपाठी बालिका मधुसूदन (2006) शिक्षा विद्यावती प्रकाशन साहित्य, नई दिल्ली।
7. घोष मालिनी (2002) इकोनामिक एंड पॉलीटिकल वीकली साक्षरता योग्यता और सामर्थ्य शक्ति का प्रभाव पर शोध एवं कार्य समीक्षा ट्रस्ट पब्लिकेशन, मुंबई।
8. भट्टाचार्य ए.(2015) कैरियर कर्क कैपिलिस्ट स्ट्रक्चर एंड वाइलेंस अगेंस्ट वूमेन नेशनल कन्वेंशन आन एडवोकेसी फार कैयर वर्क दिल्ली में प्रस्तुत पेपर महिला स्वावलंबन।
9. घोष जे. (2015) केयर इन दे नियो लिबरल इकोनामिक मॉडल इंटरनेशनल पॉलिसीज एंड देयर इफेक्ट्स ऑन वूमेंस इन गर्ल्स अनपेड केयर नेशनल कन्वेंशन आन एडवोकेसी फॉर केयर वर्क ने दिल्ली में प्रस्तुत पेपर।
10. एल्विन बी. (1939) द बेगा जान मूरें लंदन।

****

भारतीय ज्ञान परम्परा में ज्ञान और विज्ञान

डॉ. शिवाकान्त तिवारी*

* प्रभारी प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, मोहन बड़ोदिया, शाजापुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारतीय ज्ञान परम्परा में प्राचीनकाल से ही स्व-कल्याण के साथ-साथ विश्व-कल्याण की भावना से कार्य किया जाता था। भारतीय वेद ज्ञान का अपार भण्डार हैं। भारतीय शिक्षा की गुरूकुल प्रणाली प्राचीनता के साथ उत्कृष्टता को भी अपने आप में समेटे हुए थी जिसमें विद्यार्थी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास का कार्य किया जाता था। नालन्दा जैसे विश्वविद्यालयों में हजारों विद्यार्थी और शिक्षक अध्ययन और अध्यापन के कार्य में संलग्न रहते थे। विद्यार्थी और शिक्षक का अनुपात उस समय के सभी विश्वविद्यालयों में उत्कृष्ट स्तर का था।

प्राचीनकाल में भारतीय सैन्य विज्ञान काफी उन्नत अवस्था में था। युद्ध में अनेक प्रकार के हथियारों के साथ-साथ दिव्यास्त्रों का भी प्रयोग किया जाता था। कई हथियार वर्तमान युग के परमाणु बमों से भी घातक और विनाशक थे। युद्ध में पूरी नैतिकता का पालन किया जाता था। खगोल विज्ञान के क्षेत्र में भारतीयों का अध्ययन उच्च स्तरीय और सटीक था। पृथ्वी की आकृति, सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण सम्बन्धी भारतीय गणनाऐं बिलकुल सटीक थीं। आर्यभट्ट, वाराहमिहिर जैसे विद्धानों के सिद्धान्त आज भी अचम्भित करते हैं। आचार्य चरक और सुश्रुत ने आयुर्वेद के क्षेत्र में भारत को शीर्ष स्थान पर पहुँचा दिया था। प्राचीन कालीन नाड़ी शोधन की क्रिया अद्धितीय थी। धातुकार्य में भारत ने ऐसी उत्कृष्टता प्राप्त कर ली थी जो आज भी लोगों को चकित करती है। महरोली का लौह स्तम्भ इसका जीता जागता प्रमाण है। लगभग सभी धातुओं का प्रयोग प्राचीन भारत में प्रचलन में था। गणित के क्षेत्र में भारत ने विश्व को शून्य और दशमलव प्रणाली देकर अध्ययन को एक नई दिशा दी। वैदिक गणित आज भी अधिक सटीक सिद्ध होता है। भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में महर्षि कणाद जैसे विद्धानों ने 600 ईसा पूर्व ही परमाणु की खोज कर ली थी। रसायन शास्त्र के क्षेत्र में तत्कालीन कीमियागार रसायनों के नये-नये यौगिक बनाने में महारत हासिल कर चुके थे। प्राचीन भारत की ज्ञान विज्ञान की इस धरोहर को वर्तमान में सहेजने और नये-नये शोधों के माध्यम से और अधिक समृद्ध करने की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – ज्ञान परम्परा, गुरूकुल, आयुर्वेद, खगोल विज्ञान, धातुकर्म, सैन्य विज्ञान, वैदिक काल।

प्रस्तावना – भारतीय ज्ञान परम्परा विश्व में प्राचीनतम् है। भारतीय ज्ञान का लक्ष्य मात्र सूचना प्राप्त करना नहीं है, अपितु ज्ञान के माध्यम से स्व कल्याण के साथ-साथ विश्व कल्याण इसका परम लक्ष्य है। ज्ञान के माध्यम से ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। भारतीय ज्ञान परम्परा कभी भी संकुचित नहीं रही। इसमें सदैव विश्व कल्याण की भावना निहित रही।

अयं निज: परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैवकुटुम्बकम्।।[1]

भारत में वैदिक काल के पूर्व से ही ज्ञान परम्परा प्रवाहमान थी। वेदों की रचना के द्धारा इसे एक व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया गया। वैदिक काल को ज्ञान परम्परा का अरुणोदय काल कहा जाता है। ऋग्वेद सहित चारों वेदों को विश्व में ज्ञान की पहली संहिता भी कहा जाता है। इसके पश्चात् उपनिषदों के माध्यम से यह धारा आगे बढ़ती है जो बुद्ध व जैन दर्शन में भी परिलक्षित होती है। इसी परम्परा में पाणिनि ने विश्व के पहले व्याकरण की रचना की। महर्षि पतंजलि ने योग के प्रमुख ग्रन्थ योगसूत्र की रचना की। कौटिल्य ने विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ अर्थशास्त्र लिखा। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र की रचना की और वात्स्यायन ने कामसूत्र लिखा। आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में चरक और सुश्रुत द्धारा रचनाएँ की गयीं। इन सभी रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में पूर्व के आचार्यों का उल्लेख करते हुए भारतीय ज्ञान परम्परा की प्राचीनता को रेखांकित किया है। शून्य की खोज भी वैदिक काल में की जा चुकी थी। प्राचीनकाल में भारतीय ज्ञान परम्परा ज्ञान के सभी क्षेत्रों में अपने उत्कर्ष पर पहुँच चुकी थी। जिसमें से प्रमुख निम्न प्रकार हैं:-

शिक्षा व्यवस्था – ज्ञान के क्षेत्र में शिक्षा का स्थान सर्वोपरि है। प्राचीन भारत में शिक्षा का व्यापक प्रचार प्रसार था। गुरूकुल प्रणाली से शिक्षा प्रदान की जाती थी जिसमें विद्यार्थी अपने घर को छोड़कर गुरू के आश्रम में निवास करता था और शिक्षा ग्रहण करता था। वैसे तो बालक की प्रथम शिक्षक उसकी माँ होती है जिससे वह सीखने की प्रक्रिया प्रारम्भ करता है। बाद में परिवार के अन्य सदस्यों व मित्र समूहों से अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त होती है। प्राचीन भारत में आठ वर्ष की आयु पूर्ण करने के पश्चात् विद्यार्थियों को गुरूकुल में भेज दिया जाता था जहाँ वह गुरू के सानिध्य में रहकर बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के सम्पूर्ण प्रकार की विद्या प्राप्त करता था और वहाँ से निकलने के उपरान्त वह इधर उधर भटकने के बजाए अपने पूर्व निर्धारित कार्य में संलग्न हो जाता था। रामायण काल में भगवान राम भी शिक्षा प्राप्त करने के लिए अपने गुरू वशिष्ठ के आश्रम में गये थे।

गुरू गृह गए पढ़न रघुराई।
अल्पकाल विद्या सब पाई।।[2]

गुरूकुल बस्ती से बाहर एकान्त में होते थे। जहाँ पर एकान्त एवं शान्त वातावरण में शिक्षा का आदान-प्रदान किया जाता था। गुरूकुल में रहते हुए विद्यार्थी

जीवन की सभी चुनौतियों का सामना करने का प्रशिक्षण प्राप्त करता था।

सामान्य गुरूकुल एवं आश्रमों के साथ-साथ प्राचीन भारत में कुछ अत्यन्त प्रसिद्ध शिक्षा के केन्द्र थे जिनकी ख्याति पूरे विश्व में व्याप्त थी। इनमें से उज्जयिनी, नालन्दा, तक्षशिला, विक्रमशिला, वल्लभी, उदांतपुरी, सोमपुरा, पुष्पगिरी, तेलहाड़ा, ओदंतपुर, शारदापीठ, जगददला, नागार्जुन कोंडा, वाराणसी, कांचीपुरम, मणिखेत आदि प्रमुख विश्वविद्यालय थे। द्वापर युग में उज्जयिनी (वर्तमान उज्जैन) शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था। यहाँ स्थित महर्षि सांदीपनि के आश्रम में भगवान श्रीकृष्ण एवं सुदामा के अध्ययन करने का वर्णन ग्रन्थों में मिलता है। नालन्दा विश्वविद्यालय प्राचीन भारत का सबसे विख्यात और महत्वपूर्ण शिक्षा का केन्द्र था। यह वर्तमान बिहार प्रदेश में पटना से लगभग 90 कि.मी. की दूरी पर स्थित था।

चीनी यात्री हवेनसांग के यात्रा विवरण से पता चलता है कि यहाँ पर 10,000 विद्यार्थी और 2000 शिक्षक थे। यहाँ पर सम्पूर्ण भारत के अलावा कोरिया, जापान, चीन सहित कई देशों के विद्यार्थी विद्याध्ययन करने आते थे। इस विश्वविद्यालय का पूरा परिसर विशाल दीवार से घिरा था और प्रवेश के लिए एक मुख्य द्वार था। इसमें 300 से अधिक कक्ष अध्ययन के लिए थे।

तक्षशिला विश्वविद्यालय वर्तमान पाकिस्तान के रावलपिंडी में स्थित था। उस समय यह गांधार राज्य की राजधानी थी। यहाँ पर 10,000 से अधिक विद्यार्थी अध्ययन करते थे जिनमें से कई विदेशी विद्यार्थी भी होते थे। अनुशासन अत्यन्त सख्त था तथा गलती करने पर राजकुमारों को भी सजा दी जाती थी। विक्रमशिला विश्वविद्यालय वर्तमान बिहार राज्य के भागलपुर शहर से 40 कि.मी. दूर पर स्थित था। यहाँ पर 1000 विद्यार्थी और 100 शिक्षक थे। वल्लभी विश्वविद्यालय गुजरात राज्य में था। यहाँ पर मुख्य रूप से धर्मनिरपेक्ष विषयों की शिक्षा प्रदान की जाती थी। उदांतपुरी विश्वविद्यालय वर्तमान बिहार राज्य में स्थित था। यहाँ लगभग 12000 विद्यार्थियों के अध्ययन की व्यवस्था थी। पुष्पगिरी विश्वविद्यालय वर्तमान उड़ीसा राज्य में स्थित था। यह बौद्ध शिक्षा का सबसे प्राचीन केन्द्र था। इसकी स्थापना कलिंग राजाओं ने की थी। काशी वर्तमान में वाराणसी के नाम से भी जाना जाता है। यह वैदिककाल से हिन्दू धर्म की शिक्षा के लिए प्रसिद्ध था।

प्राचीन भारत के सभी शिक्षण केन्द्रों में शिक्षक विद्यार्थी अनुपात अत्यन्त उच्च स्तर का देखने को मिलता है। उदाहरण के लिए नालन्दा विश्वविद्यालय में 10,000 विद्यार्थियों के अध्यापन के लिए 2000 शिक्षकों की व्यवस्था थी अर्थात् शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात 1:5 का था।

सैन्य विज्ञान – प्राचीन काल से ही भारत में सैन्य विज्ञान काफी विकसित अवस्था में था। सेना में मुख्य रूप से पैदल, अश्व, रथ और हाथी सहित चार भाग होते थे। रामायण और महाभारत काल में इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है। धनुष-बाण, तलवार, भाला, गदा आदि मुख्य हथियार होते थे। सामान्य अस्त्र शस्त्रों के साथ-साथ पाशुपतास्त्र, ब्रम्हास्त्र, नारायणास्त्र, आग्नेयास्त्र, पर्जन्य, वायव्य, पन्नग, गरुड़, बहमशिरा, एकाग्निन्न और अमोघास्त्र जैसे दिव्यास्त्रों का प्रयोग भी किया जाता था। आग्नेय अस्त्र से अग्नि वर्षा की जाती थी तो पर्जन्य अस्त्र से वर्षा करायी जाती थी। रावण के साथ युद्ध में भगवान राम के अग्निबाण का प्रयोग करने का प्रसंग आता है।

पावक सर छाडेउ रघुबीरा।
छन महुँ जरे निसाचर तीरा।।[3]

वायव्य अस्त्र से भयंकर आँधी तूफान पैदा किया जा सकता था। ब्रम्हास्त्र का प्रभाव वर्तमानकाल के परमाणु बमों से भी भयानक होता था। इनके द्वारा पूरी सृष्टि का विनाश किया जा सकता था। ये दिव्यास्त्र जितने शक्तिशाली थे उनको प्राप्त करना उतना ही मुश्किल था। इन्हें प्राप्त करने के लिए कठिन तपस्या एवं साधना करनी पड़ती थी। विरोधी सैनिकों से बचाव के लिए कई प्रकार के कवच एवं सुरक्षा उपकरणों का प्रयोग किया जाता था। सबसे अच्छे योद्धा तीव्रगामी रथों पर सवार रहते थे। युद्ध कौशल की दृष्टि से उन्हें भी रथी, अतिरथी और महारथी जैसे श्रेणियों में विभाजित किया जाता था। युद्ध करने के कई नियम होते थे जिनका पालन सभी सेनाएं करती थीं। जैसे युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व शंखनाद करके चेतावनी देना, सूर्यास्त होने के बाद युद्ध समाप्त कर देना, किसी निहत्थे पर वार नहीं करना आदि। सामान्य तौर पर सभी सेनायें उक्त नियमों का पालन करती थीं, लेकिन कई अवसरों पर इनके उल्लंघन के दृष्टांत भी पाये जाते हैं। वर्तमान समय के सैन्य विज्ञान की तुलना में प्राचीन काल में सैन्य विज्ञान कई क्षेत्रों में अधिक विकसित अवस्था में था।

खगोल विज्ञान – भारतीय खगोल विज्ञान का प्रारम्भ वैदिककाल में हो गया था। उस समय के ऋषि, मुनि कई तरह के यज्ञ और अनुष्ठान मुहुर्त देखकर किया करते थे। शुभ लग्न का ज्ञान उन्हें खगोल विज्ञान के माध्यम से ही होता था। सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, सूर्य के उत्तरायण एवं दक्षिणायन स्थिति का ज्ञान प्राचीन समय से भारतीय विद्वानों को था। वैदिक काल में ही 'वेदांग ज्योतिष' नामक खगोल विज्ञान के ग्रन्थ की रचना की गयी थी। आर्यभट्ट ने पाँचवी शताब्दी में सर्वप्रथम पृथ्वी के गोल होने एवं उसके अपनी धुरी पर घूमने की बात कही। इन्होंने सूर्यग्रहण एवं चन्द्रग्रहण के वास्तविक कारणों का पता लगाया और इससे सम्बन्धित कई वैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। 'आर्यभट्टीय' एवं 'आर्य सिद्धान्त' आर्यभट्ट के प्रमुख ग्रन्थ थे। वाराहमिहिर ने छठी शताब्दी में 'पंचसिद्धान्तिका', सूर्यसिद्धान्त, वृहत्संहिता और वृहत्जातक नामक ग्रन्थों की रचना की। वाराहमिहिर ने गुरूत्वाकर्षण शक्ति की ओर संकेत करते हुए कहा कि कोई ऐसी शक्ति है जो वस्तुओं को पृथ्वी के धरातल से बाँधकर रखती है। बाद में ब्रम्हगुप्त नामक विद्वान ने भी गुरूत्वाकर्षण शक्ति की ओर इशारा करते हुए कहा कि यवस्तुएँ पृथ्वी की ओर गिरती हैं क्योंकि पृथ्वी की प्रकृति है कि वह उन्हें अपनी ओर आकर्षित करे। 'ब्रहमस्फुट सिद्धान्त' एवं 'खण्ड खाद्यक' इनके प्रमुख ग्रन्थ हैं। ब्रहमगुप्त ने विभिन्न ग्रहों की गति और स्थिति तथा उनके उदय और अस्त होने की गणना करने की विधियाँ बतायी हैं। इनका जोर अध्ययन की प्रत्यक्ष वेध की तरफ अधिक था। इनके अनुसार यदि गणना और वेध में भिन्नता हो तो वेध को सही मानना चाहिए।

बारहवीं शताब्दी में भास्कराचार्य खगोल विज्ञान के प्रसिद्ध विद्वान हुए। इन्होंने 'सिद्धान्त शिरोमणि' एवं 'करण कुतूहल' नामक ग्रन्थों की रचना की। इनकी तात्कालिक गति की अवधारणा से विभिन्न ग्रहों की गति की सही गणना करना आसान हो गया। भारतीयों की खगोल विज्ञान सम्बन्धी जानकारी इतनी अधिक उन्नत थी कि प्राचीनकाल से भारतीय पूजा पद्धति में नौ ग्रहों की पूजा करने का विधान है जबकि नवें ग्रह की खोज पाश्चात्य विद्वानों द्वारा काफी बाद में की गयी।

आयुर्वेद – आयुर्वेद प्राचीनतम चिकित्सा पद्धति है। इस पद्धति में जटिल से जटिल रोगों का इलाज किया जा सकता है। आयुर्वेद में प्राकृतिक रूप से प्राप्त जड़ी बूटियों एवं वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता है। जिनका कोई दुष्प्रभाव शरीर पर नहीं पड़ता है जबकि एलोपैथी में बिना दुष्पप्रभाव की दवाईयाँ विरली ही हैं। आयुर्वेद का प्रारम्भ भारत में ही हुआ था। चरक संहिता,

सुश्रुत संहिता और अष्टांग हृदयम् नामक आयुर्वेद के प्राचीन ग्रंथ है जिनकी रचना आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व ही की जा चुकी थी। योग को भी आयुर्वेद का ही भाग माना जाता है। योग एवं आयुर्वेद का उपयोग करके असाध्य रोगों का उपचार किया जा सकता है। आयुर्वेद के अनुसार मानव शरीर का निर्माण पाँच तत्वों द्वारा हुआ है जो वायु, जल, आकाश, पृथ्वी और अग्नि हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी लिखा है।

'क्षिति जल पावक गगन समीरा।
पंच रचित अति अधम सरीरा।।'[4]

उक्त पांच तत्वों के असंतुलन से ही शरीर में रुग्णता पैदा होती है जिसका उपचार इन पंच महाभूतों में पुन: संतुलन करके किया जा सकता है। इसी प्रकार शरीर के तीन मूल द्रव्य वात, कफ, पित्त का असंतुलन भी शरीर को बीमार करता है और इनके संतुलन द्वारा बीमारी को दूर किया जा सकता है। आजकल किसी रोग के उपचार से पहले कई प्रकार के चिकित्सकीय परीक्षण कराने होते हैं जबकि आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के द्वारा मात्र नाड़ी परीक्षण से रोगों का निदान किया जा सकता है। आयुर्वेद चिकित्सा में पंच कर्म का भी प्रमुख स्थान है। महर्षि सुश्रुत द्वारा रचित 'सुश्रुत संहिता' को शल्य चिकित्सा का प्राचीनतम ग्रन्थ माना जाता है। आज से लगभग तीन हजार वर्ष पूर्व महर्षि सुश्रुत द्वारा नाक का उपचार ऐसी विधि से किया जाता था जिसे वर्तमान काल में प्लास्टिक सर्जरी के नाम से जाना जाता है। प्राचीन भारत के आयुर्वेद का इतिहास अत्यन्त गौरवपूर्ण एवं समृद्ध रहा है। वर्तमान में इस क्षेत्र में और अधिक अध्ययन और अनुसंधान की आवश्यकता है।

धातुकर्म – भारत के धातुकर्म का इतिहास अत्यन्त प्राचीन एवं गौरवशाली रहा है। यहाँ पर धातुओं को गलाने और मिश्रधातु बनाने का कार्य 3000 ईसा पूर्व से किया जाता रहा है। भारत के लोहे और इस्पात की माँग औजारों के निर्माण के लिए विदेशों में काफी अधिक थी। भूमध्यसागर के लोगों द्वारा भारत से इस्पात मॅगाने का प्रमाण कुछ पुस्तकों में मिलता है। भारत दूसरी शताब्दी से ही ईरान, अरब और दमिश्क आदि देशों को इस्पात का निर्यात करता था जहाँ पर उनसे हथियार बनाये जाते थे। इनमें से दमिश्क की तलवारें काफी प्रसिद्ध हुईं। दिल्ली में महरौली में स्थित लौह स्तम्भ भारतीय धातुकर्म की उन्नति का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं जिसमें 1600 वर्षों के पश्चात् भी जंग नहीं लगा है। जाँच से ज्ञात हुआ है कि इस स्तम्भ का स्टील अत्यन्त उच्च किस्म का है और इसमें कार्बन की मात्रा काफी कम है। इस पूरे स्तम्भ में एक भी जोड़ नहीं पाया जाना आश्चर्यचकित करता है।

इस्पात के निर्माण के अतिरिक्त अन्य धातुओं के उपयोग में भी भारत काफी अग्रणी था। पुरातात्विक खोजों में प्राप्त चाँदी की कलाकृतियाँ वैदिक संस्कृति की प्राचीनता को प्रमाणित करती है। ताँबे के शुद्धिकरण की क्रिया भी भारत में 3000 ईसा पूर्व से ही ज्ञात थी। सोने का उपयोग भी भारत में महाभारत काल के पूर्व से ही होता रहा है। युधिष्ठिर द्वारा किये गये राजसूय यज्ञ में यहाँ के कुछ राजाओं ने एक विशिष्ट प्रकार का स्वर्ण चूर्ण युधिष्ठिर को भेंट किया था जिसे पिपीलिका गोल्ड कहा जाता था। काँसे का उपयोग भी इस समय औजार, हथियार, घरेलू बर्तन और अन्य सौन्दर्य सामग्री बनाने में किया जाता था। काँच, चीनी मिट्टी, सीमेंट सहित कई यौगिक और मिश्र धातुओं के निर्माण का ज्ञान भी इस समय भारतीयों को था।

गणित – भारतीय गणित का इतिहास अत्यन्त प्राचीन और प्रतिष्ठापूर्ण रहा है। भारतीय गणित का प्रारम्भ हड़प्पाकाल (3300 – 1300 ईसा पूर्व) में हो गया था। इस दौरान भारतीयों ने संख्याओं के दशमलव पर आधारित प्रणाली की खोज कर ली थी। ज्यामिति और त्रिकोणमिति के मूल सिद्धान्त भी अस्तित्व में आ गये थे। वैदिककाल में गणित शब्द का प्रयोग तो नहीं मिलता है लेकिन गण, गणपति और गणया शब्द का उल्लेख ऋग्वेद में किया गया है। गणित शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम वेदांग ज्योतिष में सामने आता है जो निम्नलिखित श्लोक से स्पष्ट होता है।

यथा शिखा विहाय मयूराणां नागाणां मणयो यथा,
तद्द् वेदांगशास्त्राणां गणितं मूर्हिन वर्तने।[5]

वैदिककाल में आर्य जाति यज्ञ में संलग्न रहती थी। यज्ञ का सटीक अनुष्ठान काल ज्ञात करने के लिए गणित का प्रयोग किया जाता था। वेदों, उपनिषदों, संहिताओं आदि में गणित का उन्नत स्वरूप दिखाई देता है जो बाद में रामायण, महाभारत काल में भी दृष्टिगोचर होता है। गणित के विकास में आर्यभट्ट (476 ई.) का योगदान महत्वपूर्ण है जिन्होंने गणना को स्वर तथा व्यंजनों के साथ जोड़कर बड़ी संख्याओं को सूत्रों में कहने की प्रणाली का विकास किया। शून्य और दाशमिक अंक प्रणाली विश्व को भारत की सबसे अमूल्य देन है।

भौतिक विज्ञान और रसायन विज्ञान – प्राचीन भारत में भौतिकी और रसायन के प्रारम्भिक प्रयोग हुए लेकिन इसको सैद्धान्तिक स्वरूप अपेक्षाकृत कम दिया गया। लेकिन बाद में इस दिशा में भी अभूतपूर्व कार्य किये गये। महर्षि कणाद को परमाणुशास्त्र का जनक कहा जाता है। ईसा से 600 वर्ष पूर्व ही महर्षि कणाद ने परमाणु को तत्व की सबसे छोटी अविभाज्य इकाई बताया और परमाणु नाम का प्रयोग भी उन्हीं के द्वारा किया गया।

भारत में रसायन विज्ञान की भी एक उन्नत परम्परा रही है। आयुर्वेद में रसायन शब्द का प्रयोग खूब किया गया है। प्राचीनकाल में ही पारे को शोधित करके उससे विभिन्न प्रकार के भस्म, चूर्ण आदि का निर्माण औषधियों के लिए किया जाता था। प्राचीन समय में रसायन शास्त्रियों को कीमियागार कहा जाता था जो रसायनों के जोड़ तोड़ से नये योगिकों का निर्माण करते थे। दिल्ली में महरोली का बौद्ध स्तम्भ तत्कालीन रसायन विज्ञान की उन्नत अवस्था का प्रमाण है।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि प्राचीन समय में भारत ज्ञान और विज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी था और सही मायने में विश्वगुरू के पद पर आसीन था। बाद में कई कारणों से, विशेषकर विदेशी आक्रमणकारियों के कारण, भारत ज्ञान के क्षेत्र में पिछड़ता दिखायी दिया। लेकिन यहाँ प्रतिभाओं की कमी कभी नहीं रही। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत अपने स्वर्णिम इतिहास की ओर पुन: तीव्रता से बढ़ रहा है और कई क्षेत्रों में अपनी प्राचीन प्रतिष्ठा के अनुरूप विश्व गुरू के पद पर आसीन हो चुका है। आज भारत विश्व की पाँचवी अर्थव्यवस्था बन चुका है और विश्व की तीसरी अर्थव्यवस्था बनने की ओर बड़ी तीव्रता से अग्रसर है। यदि सभी भारतवासी पूरी ईमानदारी एवं लगन से प्रयास करें तो वह दिन दूर नहीं जब भारत सभी क्षेत्रों में विश्व में प्रथम स्थान प्राप्त कर लेगा और पुन: विश्व गुरू के पद पर आसीन हो जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महोपनिषद्, अध्याय 6, मंत्र 71
2. रामचरित मानस, बालकाण्ड
3. रामचरित मानस, लंकाकाण्ड
4. रामचरित मानस, किष्किन्धा काण्ड
5. वेदांग ज्योतिष, आचार्य लगध, श्लोक सं. 4

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सवाई माधोपुर जिले में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (MSMEs) की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाओं का अध्ययन

परीक्षित हाड़ा*

* शोधार्थी, आर्थिक प्रशासन एवं वित्तिय प्रबंध विभाग, राजकीय वाणिज्य कन्या महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

प्रस्तावना – औद्योगीकरण एवं सामाजिक–आर्थिक विकास की गति किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। सामाजिक–आर्थिक तथा राष्ट्रीय दृष्टिकोण से सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों (एमएसएमई) का महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना, उत्पादन स्तर, जनसंख्या वृद्धि दर, प्रति व्यक्ति आय इत्यादि इन उद्योगों की आधारशिला को निर्धारित करते हैं। एमएसएमई से तात्पर्य सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग है जो देश के सकल घरेलू उत्पादन में लगभग 29 प्रतिशत का योगदान करते हैं। भारत जैसे विकासशील देश में एमएसएमई सेक्टर रोजगार का सबसे बड़ा जरिया है। एमएसएमई उत्पादन करने वाली इकाई एवं सेवा देने वाली इकाई दो प्रकार के होते हैं।

सरकार द्वारा समय–समय पर सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों के लिए श्रेणी एवं सीमा का निर्धारण किया जाता रहा है। सूक्ष्म उद्योग के अंतर्गत वे उद्योग आते हैं जिनमें एक करोड़ रुपए के निवेश के साथ 5 करोड़ रुपए तक का टर्नओवर होता है। लघु उद्योग में उन उद्योगों को रखा गया है जिन उद्योगों में निवेश 10 करोड़ और टर्नओवर 50 करोड़ रुपए तक का हो। मध्यम उद्योग मैन्युफैक्चरिंग और सर्विस सेक्टर के ऐसे उद्योग हैं जिनमें 50 करोड़ के निवेश के साथ 250 करोड़ टर्नओवर होता है।

राष्ट्र के आर्थिक विकास, अर्थव्यवस्था, अल्प विकसित अर्थव्यवस्थाओं के संदर्भ में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। फोर्स फाउंडेशन की सिफारिश के आधार पर विकास आयुक्त सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उपक्रमों की स्थापना 1954 में लघु उद्योग विकास संगठन के रूप में हुई थी। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम उपक्रम विकास अधिनियम, 2006 के अधिनियमित होने पर संगठन का नामकरण सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विकास संगठन हो गया।

तालिका सं. 1: देश में लघु, सूक्ष्म और मध्यम उद्योगों के अनुमानित संख्या (कार्यकलाप वार लाख में)

कार्यकलाप श्रेणी	ग्रामीण	शहरी	कुल	हिस्सा प्रतिशत
विनिर्माण	114.14	82.50	196.65	31
इलेक्ट्रिसिटी	0.03	0.01	0.03	–
ट्रेड	108.71	121.64	230.35	36
अन्य सेवाएं	102.00	104.85	206.85	33
सभी	324.88	309.00	633.88	100

स्रोत :– एमएसएमई वार्षिक रिपोर्ट 2019–20

तालिका सं. 2: श्रेणीवार उद्यमों का वितरण (संख्या लाख में)

क्षेत्र	सूक्ष्म	लघु	मध्यम	कुल	हिस्सा प्रतिशत में
ग्रामीण	324.09	0.78	0.01	324.88	51
शहरी	306.43	2.53	0.04	309.00	49
सभी	630.52	3.31	0.05	633.88	100

स्रोत : – एमएसएमई वार्षिक रिपोर्ट 2019–20

एमएसएमई के केंद्रीय मंत्रालय में विकास आयुक्त के कार्यालय द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों के अनुसार अनुसूचित जाति के उद्यमियों द्वारा आयोजित सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों में महाराष्ट्र 96,805 उद्यमों के साथ भारत का शीर्ष नेतृत्वकर्ता राज्य है। दूसरे स्थान पर तमिलनाडु 42,997 व्यवसायों के साथ है, जबकि राजस्थान 38,517 इकाइयों के साथ तीसरे स्थान पर है। पंजाब 24,503 यूनिट, उत्तर प्रदेश 36,913 यूनिट, और कर्नाटक 28,803 यूनिट क्रमश: चौथे, पांचवें और छठे स्थान पर हैं। 23 जनवरी, 2022 तक पूरे भारत में 4,53,972 अनुसूचित जाति के स्वामित्व वाले व्यवसाय थे जिनमें से 4,50,835 सूक्ष्म, 3,004 लघु और 133 मध्यम आकार के व्यवसाय थे।

वास्तविक अर्थों में वर्तमान समय में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उपक्रमों का योगदान विनिर्माण क्षेत्र के कुल निर्गत के 50% से अधिक है और रोजगार में अवसर पैदा करने में वृहद उपक्रमों की तुलना में पांच गुना अधिक है। एमएसएमई रोजगार के अवसर पैदा करने के साथ ही स्थानीय संसाधनों का उपयोग भी सुनिश्चित करता है। यह संसाधनों का उपयोग करने के लिए भुगतान किया जाता है जिससे कि वहां के लोगों की क्रय शक्ति में बढ़ोतरी होती है। एमएसएमई तकनीकी सृजन को सशक्त करते हुए उद्यमिता का विकास करता है।

एमएसएमई श्रम गहन होते हैं इसीलिए अत्यधिक वृद्धि संभावना के अतिरिक्त रोजगार अवसरों के सृजन की स्थिति भी अधिक होती है। यह क्षेत्र अप्रशिक्षित और उपेक्षित प्रतिभाओं को प्रशिक्षित करता है एवं उन्हें नियोजित करने के अवसर भी प्रदान करता है। बड़े उद्योग एमएसएमई का उपयोग प्रशिक्षित मानव शक्ति के स्रोत के रूप में करते हैं। सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों (एमएसएमई) का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान है। ये उद्योग रोजगार सृजन, आर्थिक विकास और तकनीकी नवाचार के प्रमुख स्रोत हैं।

देश में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) के विकास को

प्रोत्साहित करने के लिए सरकार ने विभिन्न योजनाएं और कार्यक्रम लागू किए हैं। इनमें औपचारिकता, तकनीकी सहायता, बुनियादी ढांचे का विकास, ऋण सहायता, टिकाऊ प्रथाओं, कौशल विकास और बाजार सहायता शामिल हैं। कुछ प्रमुख योजनाओं में प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (पीएमईजीपी), एमएसएमई चैंपियंस योजना, क्रेडिट गारंटी योजना (सीजीटीएमएसई), उद्यमिता कौशल विकास कार्यक्रम (ईएसडीपी), क्लस्टर विकास कार्यक्रम (एमएसई-सीडीपी), और राष्ट्रीय एससी/एसटी हब (एनएसएसएच) सम्मिलित हैं। इन योजनाओं का उद्देश्य एमएसएमई को औपचारिक दायरे में लाना, उनकी वित्तीय जरूरतों को पूरा करना और उन्हें राष्ट्रीय और वैश्विक प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार करना है।

हाल के वर्षों में सरकार ने एमएसएमई क्षेत्र को प्रोत्साहित करने के लिए कई प्रमुख पहल की हैं। इसमें सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों के वर्गीकरण के लिए संशोधित मानदंड, उद्यम पंजीकरण, और उद्यम सहायता मंच (यूएपी) का शुभारंभ शामिल है। इसके अतिरिक्त, 6,000 करोड़ रुपये के परिव्यय के साथ एमएसएमई प्रदर्शन (आरएएमपी) कार्यक्रम को बढ़ावा देने के लिए भी कदम उठाए गए हैं। एमएसएमई चैंपियंस योजना का उद्देश्य एमएसएमई की विनिर्माण प्रक्रियाओं को आधुनिक बनाना, बर्बादी को कम करना, नवीनता को प्रोत्साहित करना और व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा को बढ़ाना है। इस योजना के अंतर्गत एमएसएमई-सस्टेनेबल (जेडईडी), एमएसएमई-प्रतिस्पर्धी (लीन) और एमएसएमई-इनोवेटिव घटक शामिल हैं, जो एमएसएमई को गुणवत्ता और स्थिरता की दिशा में सुधार करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

प्रौद्योगिकी केंद्र प्रणाली कार्यक्रम और नए प्रौद्योगिकी केंद्रोंध्विस्तार केंद्रों की स्थापना के माध्यम से, सरकार एमएसएमई को प्रौद्योगिकी सहायता, आयात प्रतिस्थापन, और उच्च-स्तरीय कौशल प्रदान कर रही है। जून 2020 में शुरू किए गए ऑनलाइन पोर्टल 'चैंपियंस' के माध्यम से शिकायतों के निवारण और ई-गवर्नेंस के विभिन्न पहलुओं को सम्मिलित किया गया है। एमएसएमई के लिए 5 लाख करोड़ रुपये की आपातकालीन क्रेडिट लाइन गारंटी योजना और आत्मनिर्भर भारत कोष के माध्यम से 50,000 करोड़ रुपये का इक्विटी निवेश, एमएसएमई को वित्तीय सहायता प्रदान करने के प्रमुख उपाय हैं।

इसके अतिरिक्त, खुदरा और थोक व्यापारियों को एमएसएमई के रूप में सम्मिलित करने, गैर-कर लाभों को 3 साल के लिए बढ़ाने, और एमएसएमई के लिए क्रेडिट गारंटी फंड ट्रस्ट (सीजीटीएमएसई) के कोष में 9,000 करोड़ रुपये का निवेश करके, एमएसएमई के विकास को गति दी जा रही है। इन पहलों के माध्यम से, सरकार एमएसएमई को 'विकसित भारत' के लक्ष्य की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए सशक्त बना रही है।

भारतीय एमएसएमई क्षेत्र के समक्ष कई प्रमुख चुनौतियाँ हैं जिनमें वित्तीय बाधा सबसे प्रमुख है। भारतीय अर्थव्यवस्था में छोटी फर्मों और व्यवसायों के लिए वित्त तक पहुँच हमेशा से समस्याग्रस्त रही है, और केवल 16% एसएमई को ही समय पर वित्त की सुविधा मिल पाती है, जिससे वे अपने स्वयं के संसाधनों पर निर्भर रहने को मजबूर होते हैं। नवाचार की कमी भी एक महत्वपूर्ण चुनौती है क्योंकि अधिकांश एमएसएमई पुरानी प्रौद्योगिकियों पर आधारित उत्पादों का उत्पादन करते हैं, जिससे उनकी उत्पादकता कम हो जाती है।

एमएसएमई में सूक्ष्म और लघु व्यवसायों की हिस्सेदारी 80% से अधिक है और संवाद एवं जागरूकता की कमी के कारण वे सरकार की विभिन्न वित्तीय सहायता योजनाओं का लाभ नहीं उठा पाते। इसके अलावा एमएसएमई में औपचारिकता का अभाव है जिससे क्रेडिट अंतराल बढ़ता है। देश में विनिर्माण क्षेत्र के लगभग 86% एमएसएमई पंजीकृत नहीं हैं, और केवल 1.1 करोड़ एमएसएमई ही वस्तु एवं सेवा कर (GST) के तहत पंजीकृत हैं।

बढ़ते घाटे और कर्ज, उचित वित्तीय सहायता की कमी और बैंकों से फंडिंग का प्रतिरोध एमएसएमई के विकास में बाधा डालते हैं। भारत में एमएसएमई अक्सर अपनी वित्त पोषण आवश्यकताओं के लिए एनबीएफसी की ओर रुख करते हैं, जो सितंबर 2018 से अपने आप में एक तरलता संकट का सामना कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त, एमएसएमई के एनपीए (गैर-निष्पादित परिसंपत्तियां) बढ़ रही हैं, जो उनके 17.33 लाख करोड़ रुपये के कुल एडवांस का 9.6% है। महामारी के दौरान सरकार द्वारा कठोर तालाबंदी की घोषणा के बाद हजारों एमएसएमई या तो बंद हो गए या बीमार पड़ गए और पुनर्गठन योजनाओं और पैकेजों से लाभान्वित नहीं हो सके।

एमएसएमई क्षेत्र में प्रौद्योगिकी और बुनियादी ढांचे की कमी भी एक बड़ी चुनौती है। अप्रत्याशित आउटेज, खराब सड़कों, अप्रभावी तूफानी जल निकासी, अपर्याप्त सीवेज उपचार सुविधाओं और अपर्याप्त सबस्टेशन के साथ खराब बिजली का परिणाम एमएसएमई के कार्यशीलता को प्रभावित करता है। भारत का अधिकांश एमएसएमई क्षेत्र पुरानी तकनीक का उपयोग करता है, जो इसके निर्माण की प्रभावशीलता को कम करता है।

औपचारिकता की कमी भी एक बड़ी समस्या है, जहां अधिकांश विनिर्माण एमएसएमई अपंजीकृत हैं, और केवल लगभग 1.1 करोड़ एमएसएमई ही माल और सेवा कर (जीएसटी) के तहत पंजीकृत हैं। इसके अलावा, लालफीताशाही, श्रमिकों की भारी कमी, और धीमी उत्पादकता जैसी समस्याएं भी एमएसएमई के विकास में बाधा डालती हैं। कोविड-19 महामारी और जीएसटी का कार्यान्वयन जैसी संरचनात्मक सुधारों ने भी एमएसएमई क्षेत्र को प्रभावित किया है, जिससे कच्चे माल की खोज और लॉकडाउन के कारण कम या कोई मांग नहीं रही।

वर्तमान इक्कीसवीं सदी में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम क्षेत्रीय असंतुलन को कम करके ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों को आत्मनिर्भरता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राजस्थान में एमएसएमई संगठन की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह विनिर्मित वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने में मदद करते हुए अर्थव्यवस्था में पूंजी निर्माण को प्रोत्साहित करते हैं। राजस्थान एमएसएमई स्थापना और संचालन की सुविधा अध्यादेश, 2019 का प्रमुख उद्देश्य राज्य में आजीविका, समावेशी आर्थिक विकास और उद्यमिता को बढ़ावा देना है। राजस्थान के सवाई माधोपुर सहित विभिन्न जिलों में एमएसएमई की स्थिति और संभावनाओं को समझने और उन्हें सशक्त बनाने के प्रयासों की आवश्यकता है ताकि राज्य की आर्थिक प्रगति में इनका अधिकतम योगदान हो सके।

राजस्थान राज्य के सामाजिक विकास में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों (एमएसएमई) का महत्वपूर्ण योगदान है। सरकार उद्योगों की क्षमता को सुधारने और एक सक्षम एवं अनुकूल परिवेश निर्माण के लिए निरंतर प्रयासरत है, जिससे नए उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहन मिल रहा है। राज्य में औद्योगिक विकास की अपार संभावनाएँ हैं, और यह क्षेत्र निरंतर प्रगति कर रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति से आज तक केंद्र और राज्य सरकारों ने औद्योगिक

विकास के लिए प्रभावी प्रयास किए हैं। भारत और राजस्थान सरकार द्वारा औद्योगिक विकास के लिए वित्तीय और औद्योगिक तंत्र की अनेक सार्वजनिक इकाइयों की स्थापना की गई है, जो राज्य के औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

राजस्थान में दिनांक 14 सितम्बर 2015 से सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों के विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा उद्योग आधार मेमोरेंडम प्रणाली आरंभ की गई है। इसके तहत उद्यम स्थापना से पूर्व पंजीयन की प्रक्रिया को समाप्त करते हुए उत्पादन पश्चात एक स्तरीय उद्योग आधार मेमोरेंडम ऑनलाइन जारी करने की प्रक्रिया आरंभ की गई है। राजस्थान में 18 सितंबर 2015 से भारत सरकार द्वारा उद्योग आधार अभिज्ञापन जारी करने की व्यवस्था ऑनलाइन की गई है जिससे संबंधित आंकड़े निम्नानुसार है-

तालिका सं 3 : राजस्थान में उद्योग आधारित ऑनलाइन संबंधित आंकड़े (2016-2021)

क्र.	वर्ष	ऑनलाइन जारी UAM संख्या	रोजगार के प्रस्ताव संख्या	नियोजन करोड रुपए
1	2016-17	99340	572210	15 051.00
2	2017-18	102515	439289	10 917.08
3	2018-19	104584	465445	11589.64
4	2019-20	105334	447326	11539.73
5	2020-21	29185	169395	6058.44

स्रोत :- इकोनामिक रिव्यू ऑफ राजस्थान (2020-21)

एमएमएसई को लेकर बनाई गई नीतियों ने भी प्रदेश के औद्योगिक वातावरण को संवारने का काम किया जिसमें सवाईमाधोपुर जिला भी सम्मिलित है। प्रस्तुत अध्याय में सामाजिक विकास की अवधारणा के साथ सवाई माधोपुर जिलें के सामाजिक विकास में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (एमएमएसई) का योगदान का विस्तृत विवेचन किया गया है। सवाई माधोपुर जिला राजस्थान राज्य के महत्वपूर्ण जिलों में से एक है, जो अपनी ऐतिहासिक धरोहर और पर्यटन के लिए प्रसिद्ध है। इसके साथ ही यह जिला सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (एमएमएसई) के विकास के लिए भी महत्वपूर्ण संभावनाएं प्रदान करता है।

जिले में वर्तमान में चल रहे सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों की संख्या और उनके प्रकारों का विश्लेषण किया गया है। इनमें प्रमुख रूप से कृषि आधारित उद्योग, हस्तशिल्प, वस्त्र उद्योग और खाद्य प्रसंस्करण उद्योग शामिल हैं।एमएमएसई के माध्यम से जिले में उत्पन्न होने वाले रोजगार के अवसरों का मूल्यांकन किया गया है। यह देखा गया है कि ये उद्योग स्थानीय युवाओं और महिलाओं को रोजगार प्रदान करते हैं। जिले की अर्थव्यवस्था में डैडम्े के योगदान का विश्लेषण किया गया है। यह पाया गया है कि ये उद्योग जिले की GDP में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सवाई माधोपुर में विभिन्न सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम (एमएमएसई) संचालित हैं जिनमें लकड़ी के खिलौनों और खसखस के पंखों का निर्माण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। ये उद्योग कुटीर उद्योग के रूप में प्रसिद्ध हैं और स्थानीय समुदाय के लिए रोजगार के अवसर भी प्रदान करते हैं। 2015 के आंकड़ों के अनुसार सवाई माधोपुर में 13 लघु उद्योग पंजीकृत थे, जिनमें से कोई भी बंद नहीं हुआ बल्कि एक लघु उद्योग की वृद्धि भी हुई।

तालिका सं. 4 : सवाई माधोपुर जिला में पंजीकृत उद्योग 2015

क्र.	उद्योगों के प्रकार	वर्ष के प्रारंभ में	वर्ष में बंद हुए	वर्ष के अंत तक कार्यरत उद्योग
1.	राइस मिल्स	0	0	0
2.	दाल मिल	0	0	0
3.	खाद्य तेल	0	0	2
4.	सेविंग एंड प्लानिंग ऑफ वुड अदर थन प्लाइवुड	0	0	1
5.	अल्प निर्माणिया	0	0	0
6.	मेन्यु ऑफ ह्यूम पाईप	1	0	1
7.	जनरेशन ट्रांसमिशन एंड इलेक्ट्रिक एनर्जी	2	0	3
8.	अन्य निर्माण	10	0	11
	योग	13	0	18

स्रोत:- कार्यालय जिला उद्योग केंद्र, सवाई माधोपुर व आर्थिक सांख्यिकी निदेशालय राजस्थान, जयपुर

वर्तमान समय में सवाई माधोपुर जिले में उद्योगों को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है जिससे जिले में रोजगार के साधन उपलब्ध हो सकें और अधिक आर्थिक विकास हो सके। जिले में उद्योग विभाग के अलावा खादी ग्रामोद्योग द्वारा भी हथकरघा एवं ग्रामोद्योग संचालित किए जाते हैं, जो ग्रामीण आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इन ग्रामोद्योगों में स्थानीय कच्चे माल से तेल घाणियाँ, हथकरघा वस्त्र, चर्म उद्योग, जूती बनाना, नमदा बनाना, गुड़ और खांडसारी, बीड़ी बनाना, कपड़ा रंगना और छापना जैसी वस्तुएँ उत्पादित की जाती हैं, जिनका मुख्य केंद्र सवाई माधोपुर है। जिले में कार्यरत इन ग्रामोद्योगों का संचालन मुख्यत: खादी ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा किया जाता है, जो इन उद्योगों को आवश्यक सहायता राशि प्रदान करता है।

सवाई माधोपुर जिले में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (एमएमएसई) के सामने आने वाली प्रमुख चुनौतियां वित्तीय संकट, तकनीकी ज्ञान की कमी, विपणन और वितरण की समस्याएं हैं। सबसे महत्वपूर्ण चुनौती वित्तीय संकट है जिसमें इन उद्यमों को समय पर और पर्याप्त वित्तीय सहायता प्राप्त नहीं हो पाती है। वित्तीय संस्थानों से ऋण प्राप्त करने में कठिनाई और उच्च ब्याज दरें भी उद्यमियों के लिए समस्याएँ उत्पन्न करती हैं। इसके परिणामस्वरूप कई एमएमएसई अपने संचालन के लिए आत्मनिर्भर बनने के लिए मजबूर होते हैं जिससे उनके विकास की संभावनाएँ सीमित हो जाती हैं।

इसके अलावा तकनीकी ज्ञान की कमी भी एक बड़ी चुनौती है। एमएमएसई में नवीनतम तकनीकों और साधनों का अभाव होता है, जिससे उनकी उत्पादकता और प्रतिस्पर्धात्मकता प्रभावित होती है। विपणन और वितरण की समस्याएँ भी एमएमएसई के विकास में बाधक होती हैं। उचित विपणन चौनलों की कमी और उत्पादों के वितरण में बाधाओं के कारण इन उद्यमों को अपने उत्पादों के लिए सही बाजार तक पहुँचने में कठिनाई होती है। यह समस्याएँ एमएमएसई के समग्र विकास और सवाई माधोपुर जिले के आर्थिक प्रगति को प्रभावित करती हैं।

सवाई माधोपुर जिले में एमएमएसई के विकास की कई संभावनाएं हैं जो निम्नलिखित हैं-

1. जिले के पर्यटन स्थल और हस्तशिल्प उद्योग को बढ़ावा देकर एमएमएसई को नई ऊंचाइयों पर पहुँचाया जा सकता है।
2. जिले की कृषि आधारित उद्योगों में नवाचार और तकनीकी सुधार लाकर उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।
3. स्थानीय युवाओं और महिलाओं को व्यवसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण प्रदान करके उन्हें स्वरोजगार के लिए प्रेरित किया जा सकता है।
4. एमएमएसई के उत्पादों के विपणन और वितरण के लिए बेहतर नेटवर्क और संसाधन उपलब्ध कराए जा सकते हैं।
5. राज्य और केंद्र सरकार द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न योजनाओं और सहयोग कार्यक्रमों का लाभ उठाकर एमएमएसई को मजबूती प्रदान की जा सकती है।
6. सवाई माधोपुर जिले में जिले की समृद्ध कुटीर उद्योग परंपरा, जैसे लकड़ी के खिलौने, खसखस के पंखे, और चर्म उद्योग, को प्रोत्साहित करके इन उद्योगों का विस्तार किया जा सकता है।
7. स्थानीय कच्चे माल का उपयोग करके उत्पादित वस्तुएँ, जैसे तेल घाणियाँ, हथकरघा वस्त्र, गुड़ और खांडसारी, बीड़ी, कपड़ा रंगना और छापना, आदि को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में पहुँचाया जा सकता
8. तकनीकी ज्ञान और प्रशिक्षण के माध्यम से एमएमएसई की उत्पादकता और गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है। इसके लिए, स्थानीय उद्यमियों को नवीनतम प्रौद्योगिकियों और व्यवसाय प्रथाओं के बारे में जागरूक करना आवश्यक है।
9. सरकार और गैर-सरकारी संगठनों द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम और कार्यशालाएँ इस दिशा में सहायक हो सकती हैं। इसके अलावा, डिजिटल मार्केटिंग और ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म्स का उपयोग करके, जिले के उत्पादों को व्यापक बाजार तक पहुँचाया जा सकता है, जिससे विपणन और वितरण की समस्याएँ कम हो सकती हैं।
10. वित्तीय सहायता और आसान ऋण उपलब्धता भी एमएमएसई के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। सरकार द्वारा वित्तीय योजनाओं और सब्सिडी कार्यक्रमों के माध्यम से उद्यमियों को आर्थिक मदद प्रदान की जा सकती है।
11. स्थानीय व्यापार मेलों और प्रदर्शनियों के माध्यम से एमएमएसई को अपने उत्पादों का प्रदर्शन करने और संभावित ग्राहकों और निवेशकों से जुड़ने का अवसर मिल सकता है।

सवाई माधोपुर जिले में एमएमएसई की वर्तमान स्थिति का अध्ययन और संभावनाओं का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट होता है कि जिले में इन उद्योगों के विकास की अपार संभावनाएं हैं। स्थानीय स्तर पर उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों के सहयोग से विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन किया जाना चाहिए इससे न केवल जिले की अर्थव्यवस्था में सुधार होगा बल्कि रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे। सवाई माधोपुर जिले में सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम स्थापित करने का उद्देश्य विनिर्माण क्षेत्र में मजबूती लाना, निर्यात को बढ़ावा देना, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करना, औद्योगिक उत्पादकता में सुधार और व्यापार करने के लिए बधाओं को कम करना है। इस प्रकार प्रस्तुत शोध पत्र सवाई माधोपुर जिले में एमएमएसई की वर्तमान स्थिति एवं इसके विकास की संभावनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अखिलेश कुमार : भारत में सूक्ष्म लघु व मध्यम उद्योगों की वर्तमान स्थिति एवं चुनौतियां एक अध्ययन, पृ. 37-39
2. एमएसएमई वार्षिक रिपोर्ट 2019-20, सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय, भारत सरकार।
3. आर्थिक समीक्षा 2020-21, राजस्थान सरकार, जयपुर।
4. विकास आयुक्त (सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम), एमएसएमई वार्षिक रिपोर्ट 2019-20
5. एमएसएमई क्षेत्र में वित्तीय चुनौतियाँ और समाधान, भारतीय आर्थिक सर्वेक्षण, 2020
6. राजस्थान में औद्योगिक विकास के प्रयास, इकोनामिक रिव्यू ऑफ राजस्थान, 2020-21
7. सवाई माधोपुर जिले में एमएसएमई का सामाजिक-आर्थिक प्रभाव, इंडियन जनरल ऑफ इंडस्ट्रियल रिलेशंस, 2021
8. सवाई माधोपुर जिले में कुटीर उद्योगों का योगदान, राजस्थान औद्योगिक सर्वेक्षण, 2019

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Impact of Poor and Inadequate Nutrition on Children in Early Age

Jyoti Malviya* Dr. Renu Verma**

*Research Scholar (Home Science) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Associate Professor (Home Science) Govt. MLB Girls Auto. College, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract : Poor and inadequate nutrition during early childhood is a major determinant of both immediate and long-term health outcomes. Early childhood is a critical period for growth and development, and nutrition plays a pivotal role in shaping physical, cognitive, and emotional well-being. Inadequate nutrition during this period can lead to a range of adverse effects, including stunted growth, developmental delays, weakened immune systems, and an increased susceptibility to chronic diseases later in life. This paper explores the various ways in which poor nutrition impacts young children, focusing on the effects of malnutrition, micronutrient deficiencies, and imbalanced diets. The long-term consequences, both for the individual child and for society, are also discussed. Finally, the paper highlights the importance of early intervention, proper dietary guidelines, and public health policies aimed at improving child nutrition worldwide.

Introduction - Nutrition is a major factor in bringing out the maximum potential that one is endowed with both physically and mentally. Good nutrition depends on an adequate food supply and this in turn on sound agricultural policy and a good system of food distribution. Widespread malnutrition is largely a result of dietary inadequacy and unhealthy lifestyles. Other contributing factors are faulty feeding habits, large family size, frequent infections, poor health care, inadequate sanitation and low agricultural production. The early years of a child's life are critical for physical, cognitive, and emotional development. During this time, nutrition plays an essential role in determining both short-term and long-term health outcomes. Adequate nutrition is necessary for proper growth, development of a healthy immune system, and cognitive function. Unfortunately, millions of children worldwide suffer from poor and inadequate nutrition, which has profound effects on their development and future health. The consequences of malnutrition, particularly in the first 1000 days—from conception to two years—are far-reaching, affecting children's survival rates, cognitive abilities, and overall well-being.

This paper aims to explore the impact of poor and inadequate nutrition on children in the early stages of life. It will review the effects of malnutrition, nutrient deficiencies, and imbalanced diets, as well as discuss the implications for long-term health. Additionally, the paper will examine strategies for addressing these issues and improving child nutrition globally.

Hypothesis:

1. Poor and inadequate nutrition is the main cause of malnutrition.

Objectives:

1. To study the prevalence of malnutrition in children of Maihar and Unchehara block of Satna district among.
2. To study the causes of malnutrition in selected areas.
3. To counsel the malnourished children and their parents.
4. To know the effect of counselling on nutritional status and knowledge of parents and children.

Research Methodology: In the initial step, two blocks of Satna district, namely **Maihar** and **Unchehra**, were selected. Within each of these blocks, all sectors were listed comprehensively. After selecting the sectors, Four Anganwadis in each sector were then randomly selected for the study. In each selected Anganwadi, a list of malnourished children was prepared. From this list, 20 malnourished children in each Anganwadi were randomly selected for inclusion in the study.

Result and discussions: This chapter presents the analysis and interpretation of the data collected to assess the differences in various dependent variables between the two groups: Maihar and Unchera.

Chi-Square test, were employed to evaluate whether significant associations or differences exist between these groups for each dependent variable.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

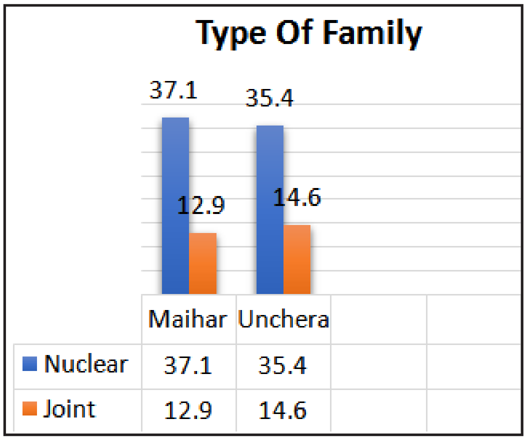

Figure-01

In Maihar, nuclear families dominate, comprising 74.2% of households, while joint families constitute 25.8%.

Conversely, Unchehra also shows a higher proportion of nuclear families (70.8%) compared to joint families (29.2%).

Across the two blocks, joint families are slightly more prevalent in Unchehra (53.0%) compared to Maihar (47.0%).

In contrast, nuclear families are more prevalent in Maihar (51.1%) than in Unchehra (48.9%).

Overall, joint families account for 27.5% of the total sample, with nuclear families representing a significantly higher share at 72.5%.

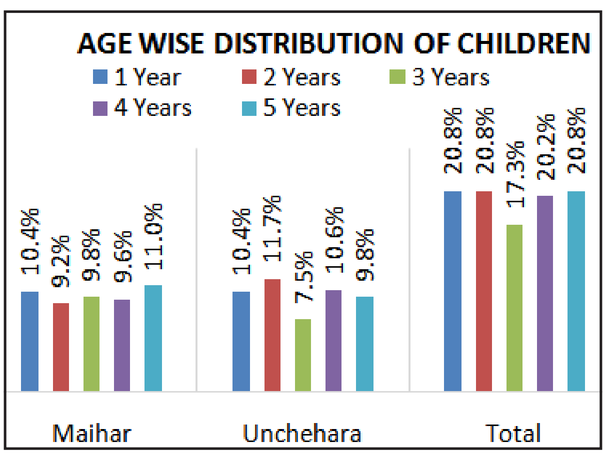

Figure-02

Maihar: The percentage of households with varying numbers of children (1 to 5) is relatively even, ranging from 18.3% (2 children) to 22.1% (5 children).

Households with 5 children (22.1%) are slightly more prevalent in Maihar compared to other categories.

Unchehra: Similar to Maihar, the distribution of households with 1 to 5 children is relatively balanced, with the highest percentage (23.3%) in the 2-children category and the lowest (15.0%) in the 3-children category.

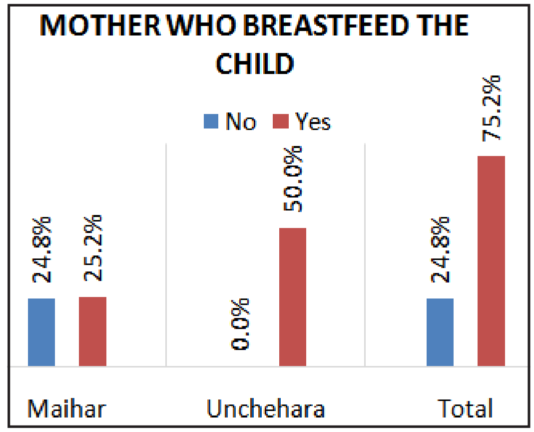

Figure-03

Out of the total 480 respondents, 361 mothers (75.2%) breastfeeding the child, while 119 mothers (24.8%) did not breastfeed the child. A closer look reveals a significant disparity between the two blocks, In Maihar, the responses are nearly evenly split, with 119 mothers (24.8% of the total) did not breastfeeding the child and 121 mothers (25.2% of the total) breastfeed the child. This indicates that awareness in Maihar is relatively balanced but leaves room for improvement.

In stark contrast, in Unchehara, all 240 respondents (50% of the total) reported breastfeeding the child, and none indicated a lack of knowledge. This suggests a notable focus on promoting breastfeeding awareness in Unchehara, leading to universal understanding among the mothers surveyed.

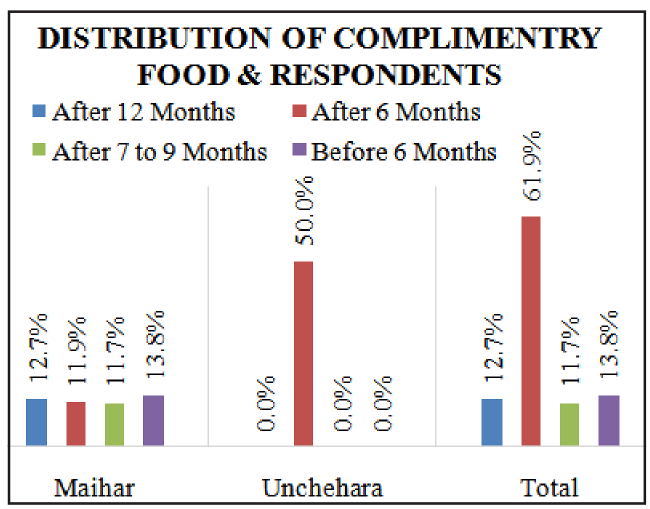

Figure-04

The analysis of the timing for introducing complementary foods reveals significant differences between the blocks of Maihar and Unchehara. Among the total 480 respondents, the majority (61.9%) reported introducing complementary foods "After 6 months," which aligns with recommended

guidelines. However, this practice is entirely concentrated in Unchehara, where all 240 mothers (50% of the total) introduced complementary foods exclusively at this recommended time. No mothers in Unchehara reported introducing complementary foods earlier or later than 6 months.

In contrast, practices in Maihar are widely varied. Out of the 240 respondents in Maihar, only 57 mothers (11.9% of the total) adhered to the recommended timing of "After 6 months." The remaining responses were distributed across other categories, with 66 mothers (13.8%) introducing complementary foods "Before 6 months," 61 mothers (12.7%) delaying introduction "After 12 months," and 56 mothers (11.7%) beginning "After 7 to 9 months."

References:-

1. Action against hunger, "Underlying causes of malnutrition". URL:https://actionagainsthunger.ca/what-is-acute-malnutrition/underlying-causes-of-malnutrition/
2. Ansuya, Naya Baby S., Guddattu Vasudev (2018), "Risk factor for malnutrition among preschool children in rural Karnataka: a case control study", BMC Public Health (18), Article Number : 283,
3. Bellamy carol, "The state of the world's children (1998)", Feeding, Support and cognitive stimulation for children: page no. 28, 29. URL:https://www.unicef.org/media/84766/file/SOWC-1998.pdf
4. Bhadoria A Singh, Kapil Umesh, et al. (Apr-June 2017), "Prevalence of severe acute malnutrition and associated sociodemographic factors among children aged 6 months–5 years in rural population of Northern India: A population-based survey"; Family Medicine and Primary Care V6(2): 380-385. DOI:10.4103/jfmpc.jfmpc_421_16; PMC5749090.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Correlation of Wiener indices with X-ray K-absorption parameters of some copper (II) mononuclear and binuclear complexes

R.D. Gupta* R.K. Vyas S.K. Joshi*** Umesh Palikundwar******

*Associate Professor (Physics) PMCOE Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.) INDIA
** Associate Professor (Physics) PMCOE Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.) INDIA
*** Retd. Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) INDIA
**** Professor (Physics) RSTM Nagpur University, Nagpur (Maharashtra) INDIA

Abstract : An application of Wiener indices in estimating X – ray K – absorption parameters is given. X- ray K-absorption parameters are correlated with Wiener indices of some copper II mononuclear/ copper II – copper II / copper II - nickel II, complexes of salicylglycine as one of the ligand. The chemical shift is positive, i.e., it is towards the high energy side of the metal edge. The results obtained in these studies with analysis of the data show that Wiener indices (W) can be successfully used for estimating parameters like chemical shift (ΔE), effective nuclear charge (Z_{eff}).

Introduction - XANES can be used to study the structural parameters of metal complexes and compounds[1]. The first topological index characterising the branching (tree) in aliphatic hydrocarbon was introduced by Wiener[2] in 1947. A linear correlation with various properties when plotted against Wiener indices can be used for the prediction of structure of molecules even before their synthesis.

Wiener indices (W) has been used for estimating chemical shift (ΔE_K) and effective nuclear charge (Z_{eff}) for a series of mixed ligand copper complexes as follows.

1. [(salgly)Cu(H_2O)]
2. [(salgly)Cu(ImH)]
3. [(salgly)Cu-Im-Cu(salgly)]Na
4. [(salgly)Cu-Im-Ni(slagly)]Na

Where salgly = salicylideneglycinate and ImH = imidazole.

Generation of Wiener indices –The procedure to calculate the Wiener indices for above series is described briefly below:

Chemical Graph - The K – absorption will depend on the structure of molecular graph described by topological indices of the ligand. The topological indices are usually obtained from the molecular graph of the ligands where in the atoms (vertices) are represented by a dot "**.**" and the bond (edges) by small lines " _ "[3,4,5].

The Wiener index (W) is the sum of all distances in graph G, where G is a connected graph whose vertices are labelled 1,2,3,4…, n. The distance d_{ij} between the vertices i and j is the length of the shortest path which connects i and j .

$$W = W(G) = \tfrac{1}{2} \sum_{i=1}^{n} \sum_{j=1}^{n} d_{ij} \quad ....1$$

The Wiener index (W) as defined above is half the sum of the off – diagonal elements of the distance matrix (D). The Wiener index (W) has been studied extensively[6,7].

Experimental – Copper(II) complexes of mixed ligands were prepared by copper perchlorate hexahydrate (Aldrich), nickel perchlorate hexahydrate (Aldrich) and imidazole (S.D.Fine chemicals) along with methanol / acetonitrile solutions of $Cu(ClO_4)_2 . 6H_2O$ and salgyl[8,9].

A Chirana sealed X– Ray tube with tungsten target having two beryllium windows operating at 20KV and 10mA was used as the source of continuous radiation. Tungsten WL_α, $K_{\beta1,3}$ emission lines were used as reference lines. A bent crystal spectrograph of diameter 0.4 m was used in this work to record the spectra using (100) reflection planes of mica on Agfa/Konica X-ray films. The data acquisition system adopted in the present work[10] consists of interfacing a microdensitometer with personal computer (P.C.) using a stepper motor controller unit. A proper software programme involving the data port and status port of the LPT (printer port) have been used in the present work.

Results and Discussion - Table 1 contains the molecular formula and molecular graph of ligands used. The Wiener

index (W) for these ligands are also given in this table, while the X-ray K- absorption parameters are reported in table 2

Table 1: Molecular Formulae, Molecular Graph & Wiener Index of Ligands used in the present work

Ligand	Molecular formula	Molecular Graph	Wiener Index(W)
I.	[(salgly)Cu(H_2O)]	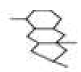	376
II.	[(salgly)Cu(ImH)]	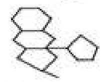	612
III.	[(salgly)Cu-Im-Cu(salgly)]Na	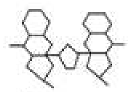	3335
IV.	[(salgly)Cu-Im-Ni(salgly)]Na	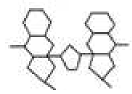	3335

Table 2 (see in next page)

It has been shown in table 2 that the K- edge of complexes is found to be shifted towards high energy side of copper K-Edge. The chemical shift ΔE_k is positive.

The edge width and the shift of the principal absorption maxima of copper complexes are also included in table 2. The shift of the X-ray absorption edge ΔE_k of an element in a compound / complex with respect to that of the pure element is written as:

$\Delta E_k = E_K$ (compound) – E_k(metal)

Extensive studies have been reported[11-13] on chemical shift of X-ray absorption edges. Two main factors contribute to the observed high energy shifts of X-ray absorption edges i.e.

(i) The tighter binding of the core level because of the change of the effective charge (or screening) of the nucleus caused by the participation of the valence electrons in the chemical bonds formation.

(ii) Appearance of the energy gap Eg when we go from a metal to a compound or complex.

In general, the chemical shift is towards the high energy side of the metal edge[14] increasing progressively with increase of valence of the cation. Of course the shift may also be suppressed by the covalent character of the bond or enhanced by the formation of metal-metal bonding. In the present work the K- absorption edges of all the copper complexes are found to be on the high energy side.

The shifts of the principal absorption maxima depend upon the type of overlap between metal atoms and ligand orbitals.

Earlier workers[15-17] have reported the chemical shifts values of various copper(II) complexes between 6.8 – 12.9eV. For the present studies complexes, the shift value lies in the range 8.1 to 9.3eV and hence on the basis of this comparison all our complexes under present investigation possess oxidation state 2^+. The observed changes in the chemical shifts values will depend on the relative ionic character of the complexes. The shifts of the principal absorption maxima depend upon the type of overlap between metal atoms and ligand orbitals. The results reported in this paper shows that the shifts of the principal absorption maxima are indicative of distorted tetrahedral geometry for these complexes. Further the higher values of chemical shifts as obtained for other complexes also support the hydroxylation of the copper centres. This implies that due to hydroxylation the effective charge on the central metal copper ion has increased resulting in the high energy values of chemical shifts.

Central metal copper ion is surrounded by the two oxygen and two nitrogen in complex II whereas three oxygen and one nitrogen in case of complex I, which results in increase of effective charge and hence the chemical shifts values for the binary complexes III and IV are less than those for mononuclear complexes which has also been confirmed with the experimental data given in table 2.

We have used Gianturco and Coulson[18] method for calculating effective nuclear charge.

The correlation assumed the general form

$\Delta E = AX + B$

Where A is the slope, while B is the intercept and X is the particular topological index. Based on this the following model is obtained for modelling ΔE and Z_{eff} for the complexes.

$\Delta E = -0.0003W + 9.2090$

It is evident from the plot Figure 1 and 2 that the observed (Y_{obs}) and calculated value with Wiener index (Y_{cal}) of chemical shift yield excellent straight lines for both chemical shift and effective nuclear charge. The results obtained in this study demonstrate that the correlating of ΔE and Z_{eff} with Wiener indices is very effective. We can say that the edge shift thus estimated indicates that topological indices of the organic molecules acting as ligands can be used for estimating edge shift theoretically.

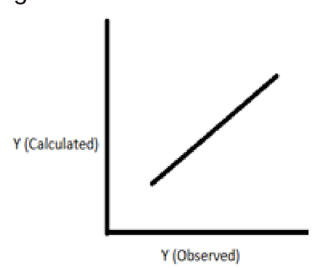

Figure 1
For Chemical shift ΔE_k

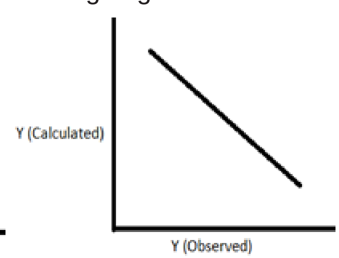

Figure 2
For Effective Nuclear Charge Z_{eff}

Conclusion: Topological indices (Wiener) contains valuable informations about molecular structure and molecular properties. The prediction of the properties of the molecules before their synthesis should be made by topological indices. The topological understanding of molecular properties can lead to the development of new areas of present and future interest i.e. designing of new drug tracking the effect of pollutants in the environment

and the prediction of carcinogenicity of a molecule.

References:-

1. Meisel A, Leonhardt G Land Szargan R, X-ray spectra and chemical binding (Springer-Verlag Berlin) 1989, p.64.
2. Weiner H.J. Am. Chem. Soc. 1947;69:17.
3. King R.B. & Rouvray D.H. (Eds) Graph theory and topology in chemistry, (Elsevier Amsterdam) vol 51, 1987, p.209.
4. Trinajstic N, chemical graph theory, (CRC press Boca Raton, Florida), Vol I & II, 1983.
5. Sakina Ashraf, Muhammad Imran, Syed Ahtsham Ul Haq Bokhary, Shehnaz Akhter Research article, Volume 8, issue 12, e12382, Dec. 2022.
6. Harry F. Graph Theory Addison Wesley: Reading, MA, 1979.
7. Zhenzhen Li, Baoyindureng Wu: Journal of Graph Theory/ volume 106, issue 3/ p. 556-580, March 2024.
8. R.N. Patel, Spectrochim. Actapart A 59 (2003)713.
9. S. Kumar, P.V. Khadikar, R.N. Patel and K.B. Pandeya, Proc.Ind.Acad.Sci.(Chem.Sci.)113 (2001) p21.
10. U.A. Palikundwar, V.B. Sapre and S.V. Moharil, Proc. of the NSJ30 (2006) 580.
11. S.K.Joshi, B.D. Shrivastava, Bhakta Darshan Shrivastava and A. Mishra, X-ray spectrum 33 (2004) 466.
12. R.K. Vyas, S.K. Joshi, B.D. Shrivastava, M.C. Shah and J. Prasad, Ind. J. of Pure & Appl. Phy. 43 (2005)509.
13. R. D. Gupta, S.K. Joshi, B.D. Shrivastava, M.C. Shah and J. Prasad, Natl.Acad. Sci. Lett.28 (1&2) (2005) 39.
14. B.K. Agrawal and L.P. Verma, J.Phys. C 3(1970) 535.
15. R.C. Kumavat, S.K. Joshi and B.D. Shrivastava, Jpn. J. Appl. Phys.32 (1993)567.
16. P.N. Koul and B.D. Padalia, X-ray Spectrom. 12(1983)128.
17. A.N. Nigam, O.P. Rajput and B.D. Shrivastava, X-ray Spectrom, 15(1986)111.
18. Giantures F.A. and Coulson C.A. Mol. Phy. 14, 223(1968).

Table 2: Chemical Shift and other X-ray Absorption Parameters for complexes used for correlation in present work

Ligands	Chemical shift ΔE_k meV			Effective nuclear charge (Zeff)			Principal absorption maxima (±0.3 eV)	Edge width (± 0.3$_{eV}$)
	Y_{ob}	Y_{cal}	E_{mV}	Y_{ob}	Y_{cal}	Error		
I.	9.3	9.1	-.2	0.97	0.97	0.00	25.5	16.2
II.	8.8	9.0	+.2	0.94	0.98	-0.04	25.3	16.5
III.	8.3	8.2	-.1	0.90	1.03	-0.13	25.2	16.9
IV.	8.1	8.2	+.1	0.89	1.03	-0.14	24.3	16.2

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

गर्भावस्था में एनीमिया: छिंदवाड़ा जिले के विशेष संदर्भ में

संध्या गजभिये*

* सहायक अध्यापक (गृहविज्ञान) राजमाता सिंधिया शासकीय स्नातक कन्या महाविद्यालय छिंदवाड़ा(म.प्र.) भारत

शोध सारांश – गर्भावस्था के दौरान हल्का एनीमिया होना सामान्य है लेकिन आयरन या विटामिन के काम स्टार या अन्य कर्म से आपको अधिक गंभीर समस्या हो सकता है। एनीमिया के कारण आपको थकान और कमजोरी महसूस हो सकती है अगर यहां गंभीर है और इसका इलाज नहीं किया जाता है तो इससे समय से पहले प्रसव जैसी गंभीर जटिल ताव का खतरा बढ़ सकता है। जब आप गर्भवती होती है तो आपको एनीमिया हो सकता है ऐसी स्थिति में आपके रक्त में आपके अतरो और आपके बच्चे तक ऑक्सीजन ले जाने के लिए पर्याप्त स्वास्थ्य लाल रक्त कोशिकाएं नहीं होती है। गर्भावस्था के दौरान आपका शरीर आपके बच्चे के विकास में सहायता के लिए अधिक रक्त का उत्पादन करता है यदि आपको पर्याप्त आयरन या कुछ अन्य पोषक तत्व नहीं मिल रहे तो हो सकता है कि आपका शरीर इस अतिरिक्त रक्त को बनाने के लिए आवश्यक मात्रा में लाल रक्त कोशिकाओं का उत्पादन करने में सक्षम न हो भारत वर्ष में आज भी एनीमिया की समस्या बनी है।

शब्द कुंजी – गर्भावस्था, एनीमिया, पोषक तत्व ,आयरन ,विटामिन।

प्रस्तावना – गर्भावस्था के दौरान एनीमिया होना आम बात है लेकिन गंभीर एनीमिया होना आम नहीं है। एनीमिया लाल रक्त कोशिकाओं की कम संख्या की स्थिति है यदि पूर्ण रक्त गणना सीबीसी से पता चलता है कि आपके शरीर में ऑक्सीजन ले जाने वाली रात रक्त कोशिकाएं काम है तो आपको गर्भावस्था के दौरान एनीमिया हो सकता है। गर्भावस्था में रक्त प्लाज्मा का आयतन 30% तक बढ़ता है। संपूर्ण रक्त का आयतन 45% तक तथा प्रभावित होने वाली लाल कोशिकाओं में 40% तक वृद्धि होती है कल हीमोग्लोबिन जो गर्भावस्था के प्रारंभ में 550 mg होता है। सातवें माह में 725 mg तक बढ़ जाता है परंतु हीमोग्लोबिन का स्तर 13.4 से गिरकर 11.6 mg प्रति 100 मि.ली रक्त हो जाता है यदि 28 वे सप्ताह या उसके बाद गभेनी का हीमोग्लोबिन स्तर 10 mg/ग्राम या 100 मि.ली से कम हो तो उसे रक्त हीनता से पीड़ित माना जाता है तथा बड़े हुए रक्त आयतन की तुलना में हीमोग्लोबिन स्तर न बढ़ने से रक्त न्यूनता के जो लक्षण प्रकट होते हैं। उन्हें गर्भकालीन स्वाभाविक जगतालाप पता के नाम से जाना जाता है लोहे तथा फोलिक एसिड की कमी के कारण कुछ गरम पानियों में रक्त लापता होती है। जिसका कारण इन तत्वों को कम सेवन करना है। उचित गर्भ पोषण ना होना या अधिक उत्सर्जन होना हो सकता है। रक्तहीनता की दशा में समय पूर्व प्रसार तथा मृत्यु शिशु जन्म की संभावना अधिक होती है। अत: लोग तत्व से पूर्ण आहार के साथ इसका अमल का प्रयोग तथा लोह तत्व की गोलियों का प्रयोग किया जाए भोजन के पश्चात पान खाने से लोहे के गर्भ पोषण में सहायता मिलती है। क्योंकि छूने का क्लोरीन कार्बोनेट पर्याप्त कैल्शियम प्रदान करता है। जिसकी न्यूनता भारतीय आहार में होती है। परंतु फास्फेट की अधिकता लोहे के अवशोषण में बाधा डालती छूने के प्रयोग से कैल्शियम फास्फेट के साथ आंतों में जुड़ जाता है और लोह तत्व और शोषण के लिए मिलने लगता है।

गर्भावस्था में एनीमिया के लक्षण :

1. थकान
2. कमजोरी
3. चक्कर आना
4. काम के दौरान हल्का सांस लेने में दिक्कत
5. पीलापन
6. गंभीर एनीमिया में तेज दिल की धड़कन या लो ब्लड प्रेशर
7. बेहोशी
8. चिड़चिड़ापन
9. ध्यान केंद्रित करने में दिक्कत
10. घबराहट

गर्भावस्था में एनीमिया होने पर रक्त में ऑक्सीजन ले जाने वाली लाल रक्त कोशिकाओं की संख्या कम हो जाती है। इससे बूंद को पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है। जिससे उसको सामान्य विकास और वृद्धि प्रभावित होती है। गर्भावस्था में एनीमिया के कुछ आम कारण यह है आयरन की कमी फोलिक एसिड की कमी विटामिन B 12 की कमी गर्भावस्था के दौरान ज्यादा रक्त स्त्राव गर्भावस्था में एनीमिया कि ज्यादातर मामलों में आहार में बदलाव करके इसे ठीक किया जा सकता है।

गर्भवती महिलाओं को प्रभावित करने वाले एनीमिया के प्रकार एनीमिया के 400 से ज्यादा प्रकार है, इनमें से कुछ गर्भावस्था के दौरान ज्यादा आम है जिनमें शामिल है :

1. अल्पताज्य एनीमिया – लौह की कमी से
2. फोलिक – एसिडि की कमी से होने वाला – फोलेट अल्पताज्य एनीमिया
3. विटामिन B 12 की कमी से होने वाला एनीमिया

गर्भावस्था के दौरान एनीमिया होने की सबसे अधिक संभावना कैसे

होती है।

गर्भावस्था के दौरान आपके शरीर में रक्त की मात्रा 20% से 30% तक बढ़ जाती है इसका मतलब है कि आपके शरीर को ज्यादा लाल रक्त कोशिकाओं के लिए ज्यादा आयरन की जरूरत होती है। गर्भावस्था के दौरान सीमा का खतरा ज्यादा हो सकता है अगर आप

1. एक से अधिक बच्चों के साथ गर्भवती हो।
2. पर्याप्त मात्रा में आयरन का सेवन न करना।
3. लगातार गर्भ धारण होना तथा उनके बीच बहुत कम समय का अंतराल होना।
4. गर्भावस्था से पहले भारी मासिक धर्म प्रवाह का अनुभव होना ।
5. सुबह की बीमारी के कारण अक्सर उल्टी होना।

गर्भावस्था में एनीमिया के जोखिम – गर्भावस्था के दौरान गंभीर या अनुपचारित को लौह अल्पता से होने वाला एनीमिया निम्नलिखित होने का जोखिम बढ़ा सकता है ।

1. समय से पहले जन्मे या कम वजन वाले बच्चे
2. रक्त आधान यदि प्रसव के दौरान आप काफी मात्रा में रक्त को देते हैं
3. प्रसवोत्तर अवसाद
4. एनीमिया से पीड़ित बच्चा
5. विकासत्मक देरी वाला बच्चा

फोलेट की कमी का उपचार न की जाने पर निम्नलिखित जोखिम बढ़ सकते हैं

1. समय से पहले जन्मे या कम वजन वाले बच्चे
2. रिड़ या मस्तिष्क में गंभीर जनजाति दोष से (न्यूरल ट्यूब दोष) से ग्रस्त शिशु विटामिन बी 12 की कमी का उपचार न किए जाने से अधिक बच्चों में न्यूरल ट्यूब दोष उत्पन्न होने का खतरा भी बढ़ सकता है।

एनीमिया के लिए परीक्षण – आपकी पहले प्रश्न पूर्ण नियुक्ति के दौरान आपका रक्त परीक्षण किया जाएगा ताकि आपका डॉक्टर यहां जा सके की आपको एनीमिया है या नहीं रक्त परीक्षणों में आमतौर पर यह शामिल होते हैं।

हीमोग्लोबिन परीक्षण – यहां हीमोग्लोबिन की मात्रा को मापता है –लाल रक्त कोशिकाओं में लोग युक्त प्रोटीन जो फेफड़ों से ऑक्सीजन को शरीर के उत्तकों तक पहुंचता हैं।

हेमेटोक्रिट परीक्षण – यह रक्त के नमूने में लाल रक्त कोशिकाओं के प्रतिशत को मापता है।

यदि आपके हीमोग्लोबिन या हेमेटोक्रिट का स्तर सामान्य से कम है तो आपको आयरन की कमी से होने वाला एनीमिया हो सकता है। आपका डॉक्टर या निर्धारित करने के लिए अन्य रक्त परीक्षण कर सकता है कि आपको आयरन की कमी है या आपकी एनीमिया का कोई और कारण है। भले ही आपको गर्भावस्था की शुरुआत में एनीमिया ना हो फिर भी आपका डॉक्टर संभवत आपको दूसरी या तीसरी तिमाही में एनीमिया की जांच के लिए एक और रक्त परीक्षण करने की सलाह देगा।

अध्ययन का उद्देश्य – योजना का उद्देश्य यह है कि गर्भवती महिलाओं में व्याप्त एनीमिया को रोकने और इससे बचाव के लिए गर्भवती महिलाओं में एनीमिया को काम करने के लिए प्रमुख सहयोगियों के साथ मिलकर एक सशक्त संरचना तैयार की जाए। इसके लिए समन्वित गंभीर प्रयास किए जाएंगे साथ ही साथ आंगनबाड़ी केंद्रों आदि में गर्भवती महिलाओं को पूरक पोषण आहार तथा फोलिक एसिड विटामिन आदि की दवाई देकर तथा शिक्षा के माध्यम से विभिन्न ग्रामीण अंचलों कस्बों तथा पिछड़े इलाकों में गर्भवती महिलाओं को जागरुक कर सके !

एनीमिया का उपचार – यदि आप अपनी गर्भावस्था के दौरान एनीमिया से पीड़ित है तो आपको अपने प्रसव पूर्व विटामिन के अलावा आयरन सप्लीमेंट और या फोलिक एसिड सप्लीमेंट लेना शुरू करना पड़ सकता है। आपका डॉक्टर यह भी सुझाव दे सकता है की आप अपने आहार में आयरन और फोलिक एसिड से भरपूर खाद्य पदार्थ शामिल करें।

इसके अलावा आपको एक निश्चित समय अवधि के बाद पुनः रक्त परीक्षण के लिए कहा जाएगा। ताकि आपका डॉक्टर यहां जा सके कि आपका हीमोग्लोबिन और हेमेटोक्रिट के स्तर में सुधार हो रहा है या नहीं विटामिन बी 12 की कमी का इलाज करने के लिए आपका डॉक्टर आपको विटामिन बी 12 अनु पूरक लेने की सलाह दे सकता है। डॉक्टर यह भी सलाह दे सकते हैं कि आप अपने आहार में अधिक पशु आधारित खाद्य पदार्थ शामिल करें जैसे: – मांस, अंडे , डेरी उत्पादन, आपका ओबी आपको एक हेमेटोलॉजिस्ट के पास भेज सकता है। जो एनीमिया रक्त संबंधी समस्याओं में माहिर डॉक्टर है विशेषज्ञ आपको पूरी गर्भावस्था के दौरान देख सकता है और आपके ओबी को एनीमिया का प्रबंध करने में मदद कर सकता है।

गर्भावस्था के दौरान आयरन की कमी से होने वाले एनीमिया को कैसे रूप का और इलाज किया जा सकता है – प्रसवपूर्व विटामिन में आमतौर पर आयरन होता है। आयरन युक्त प्रसवपूर्व विटामिन लेने से गर्भावस्था के दौरान आयरन की कमी से होने वाले एनीमिया को रोकने और उसका इलाज करने में मदद मिल सकती है। कुछ मामलों में आपका स्वास्थ्य सेवा प्रदाता अलग से आईरन सप्लीमेंट्स लेने की सलाह दे सकता है। गर्भावस्था के दौरान आपको प्रशिक्षित 27 मिलीग्राम आयरन की आवश्यकता होती है गर्भावस्था के दौरान अच्छे पोषण से आयरन की कमी से होने वाले एनीमिया को भी रोका जा सकता है। आयरन के आहार स्रोतों में उबला लाल मास मुर्गी और मछली शामिल है। उन विकल्पों में आयरन पानी फर्टिसाइड ब्रेकफास्ट अनाज गहरे हरे पत्तेदार सब्जियां सुख बींस और मटर शामिल है। मांस जैसे पशु उत्पादों से मिलने वाला आयरन सबसे आसानी से अवशोषित होता है। पौधों के स्रोतों और सप्लीमेंट्स से आयरन के अवशोषण को बढ़ाने के लिए उन्हें विटामिन बी से भरपूर भोजन या पे के साथ मिले जैसे सेंटर का जूस टमाटर का जूस या स्ट्रॉबेरी अगर आप सेंटर के जूस के साथ आईरन सप्लीमेंट्स लेते हैं तो कैल्शियम फोर्टीफाइड किम से बच्चे जबकि गर्भावस्था के दौरान कैल्शियम एक आवश्यक पोषक तत्व है लेकिन कैल्शियम आयरन के अवशोषण को कम कर देता है।

अध्ययन का क्षेत्र – छिंदवाड़ा जिले का परिचय छिंदवाड़ा भारतीय राज्य मध्यप्रदेश का एक जिला है इस क्षेत्र में छिंद (ताड़) के पेड़ बहुतायत में है। इसलिए इसका नाम छिंदवाड़ा पड़ा एक समय यहां शेरों की बहुत तादाद थी इसलिए इसे पहले सिहवाड़ा भी कहा जाता था यह तथ्य अधिक मनी नहीं कहा जा सकता किंतु देशी खजूर या ताड़ की बहुतायत क्षेत्र के नाम की सही व्याख्या कहीं जा सकती है।

गुरैया गांव का परिचय – गुरैया मध्य प्रदेश के छिंदवाड़ा जिले की छिंदवाड़ा तहसील में स्थित एक बड़ा गांव है जिसमें कुल 1321 परिवार रहते हैं 2011 की जनगणना के अनुसार गुरैया गांव की जनसंख्या 6137 है जिसमें 3136 पुरुष है जबकि 3001 महिला है गुरैया गांव में 0 – 6 आयु वर्ग के

बच्चों की संख्या 800 है जो गांव की कुल जनसंख्या का 13.04% है। गुरैया गांव का औसत लिंग अनुपात 957 है। जो मध्य प्रदेश राज्य के औसत 921 से अधिक है जनगणना के अनुसार गुरैया का बाल लिंगानुपात 970 है जो मध्यप्रदेश के औसत 918 से अधिक है। गुरैया गांव में साक्षरता दर मध्य प्रदेश की तुलना में 2011 में मध्य प्रदेश के 69.32% की तुलना में गुरैया गांव की साक्षरता दर 66.74% है। वहां तीन आंगनबाड़ी केंद्रों का भ्रमण मेरे द्वारा किया गया। जिसमें आंगनबाड़ी केंद्र क्रमांक 1 में लगभग 8 गर्भवती महिलाओं पर 1 महिला गर्भवती माध्यमिक एनीमिया से ग्रसित पाई गई तथा आंगनबाड़ी केंद्र में 5 गर्भवती महिलाओं पर 1 गर्भवती महिला माध्यमिक एनीमिया से ग्रसित पाई गई एवं आंगनबाड़ी केंद्र क्रमांक 1 जिसमें 14 गर्भवती महिलाओं पर 1 गर्भवती महिला माध्यमिक एनीमिया से ग्रसित पाई गई है।

तालिका 1 :

केंद्र आंगनवाड़ी क्र.	**नाम**	**पति का नाम**	
1	हंसा	शुभम कराडे	माध्यमिक एनीमिया
5	प्रीति	रविंद्र	माध्यमिक एनीमिया
2	बेबी	सुखलाल मरकाम	माध्यमिक एनीमिया

निष्कर्ष – महिलाएं किसी भी राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। महिलाएं पुरुषों के कंधों से कंधा मिलाकर चल रही है ऐसे में यह कहना सही होगा कि महिला और पुरुष एक गाड़ी के दो पहिए है ।अगर ऐसी स्थिति में महिलाओं का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होगा। तो उसे देश के विकास की गति धीमी हो जाती है। अत: राष्ट्र के विकास हेतु महिलाओं का स्वस्थ होना बहुत ही आवश्यक है। ऐसे में गर्भवती महिलाओं का स्वस्थ होना जरूरी है क्योंकि अगर गर्भवती महिला स्वस्थ होगी तो वह एक स्वस्थ शिशु को जन्म दे पाएगी। गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य में एक बड़ा रक्तताल्पता की है अत: रक्तताल्पता को दूर करने के लिए गर्भवती महिलाओं को पोषण से भरपूर आहार दिए जाएं। जिम 30 मिलीग्राम आयरन रोजाना मिट, लाल मास एंड मछली, सोयाबीन, चीज, लिवर, साबूत अनाज, गहरे हरे पत्तेदार सब्जियां तथा फोरहिफाईट अनाज दिए जाए जिससे गर्भवती महिलाओं में एनीमिया तथा और भी बीमारियों से बचाव किया जा सके एवं महिलाओं का स्वास्थ्य का स्तर ऊंचा उठ सके ।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. https://myclevelandelinic.org
2. https://www.webmd.com
3. सामान्य एवं उपचार आत्मक पोषण, डॉ. ज्योति कुलकर्णी, डॉक्टर अरुण पलटा (शिवा प्रशासन, इंदौर)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

लोकतंत्र एवं भारतीय लोकतंत्र में महिलाएं

डॉ. श्वेता तेवानी*

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) पीएमसीओई शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत शोध पत्र में ऐतिहासिक तुलनात्मक पर्यविक्षणआत्मक एवं विश्लेषणआत्मक एवं अनुभवात्मक अध्ययन पद्धति का उपयोग किया गया है।

शब्द कुंजी –भारतीय समाज,लोकतंत्र,आरक्षण,वर्ण व्यवस्था।

प्रस्तावना – भारतीय शासन व्यवस्था में लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था को स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय संविधान के निर्माण के समय अपनाया गया लेकिन भारतीय लोकतंत्र में कुछ बाधाएं थी जिनके कारण भारतीय लोकतंत्र को पूर्णत: सफल बनाने में परेशानी का सामना करना पड़ा। सामाजिक व्यवस्था मे वर्ण व्यवस्था और जाति प्रथा के आधार पर अत्यधिक भेदभाव विद्यमान था। जातिगत भेदभाव को दूर कर समाज में समानता लाने के लिए संविधान निर्माताओं ने आरक्षण संबंधी प्रावधान किए जिससे कि समाज में पूरी तरह से समानता स्थापित की जा सके। सामाजिक व्यवस्था मे महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए किसी भी प्रकार के विशिष्ट प्रावधान नहीं किए गए और इसीलिए आज भी भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं हो पाया है। महिलाओं कि इस स्थिति का कारण पुरुषों की मानसिकता है जो कि भारतीय महिलाओं को आगे बढ़ने से रोकती है और स्वयं को ऊपरी पायदान पर रखना और देखना चाहते है।

लोकतंत्र : शासन व्यवस्था या मानसिकता – वर्तमान समय में लोकतंत्र को सर्वश्रेष्ठ शासन प्रणाली माना जाता है लेकिन लोकतंत्र सदा से ही श्रेष्ठ प्रणाली नहीं माना गया है। प्लेटो एवं राजनीति विज्ञान के जनक अरस्तु के समय में लोकतंत्र को शासन का विकृत रूप माना गया था। तत्कालीन समय में राजतंत्र ही श्रेष्ठ शासन प्रणाली मानी गई थी। सत्ता ,प्रभाव एवं शक्ति की लालसा हमेशा ही व्यक्ति को इसके दुरुपयोग के लिए प्रेरित करती है।

लोकतंत्र से अभिप्राय – लोकतंत्र को सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही तरीकों से परिभाषित किया जाता है। जिस तरह प्राचीन समय में लोकतंत्र को विकृत या नकारात्मक रूप से परिभाषित किया गया था, उसी तरह आधुनिक युग में भी लोकतंत्र को एक नकारात्मक या बुरी व्यवस्था मानने वाले अनेक विद्वान हैं।

लोकतंत्र की सर्वाधिक प्रचलित परिभाषा अब्राहम लिंकन की है–'लोकतंत्र जनता का ,जनता के लिए और जनता द्वारा किया गया शासन है।'

सीले के अनुसार– 'लोकतंत्र वह शासन है जिसमें हर व्यक्ति भाग लेता है।'

डायसी के अनुसार–'लोकतंत्र सरकार का ऐसा स्वरूप है इसमें जनता का एक बड़ा भाग शासन करता है।'

लोकतंत्र के नकारात्मक पक्ष को प्रदर्शित करते हुए सारटोरी ने लोकतंत्र को 'आडंबरमय युक्त व्यवस्था'कहा है।

लोकतंत्र को वर्तमान समय में अनेक तरीकों से प्रदर्शित किया गया है:

1. लोकतंत्र शासन का एक प्रकार है
2. एक सामाजिक व्यवस्था है
3. जीवन जीने का एक ढंग है
4. लोकतंत्र विशिष्ट वर्ग का शासन है
5. आर्थिक व्यवस्था का एक प्रकार है
6. लोकतंत्र जीवन के प्रति एक विशिष्ट दृष्टिकोण है
7. लोकतंत्र एक मानसिकता है

लोकतंत्र में मताधिकार शासन में परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण साधन होता है , मताधिकार के बल पर जनता के प्रतिनिधियों में लगातार परिवर्तन होता रहता है जिससे जनता लोकप्रिय शासन व्यवस्था स्थापित होती है। किंतु अधिकांश लोकतांत्रिक राज्य में महिलाओं को मताधिकार से वंचित रखने की व्यवस्था की गई थी। राजनीति विज्ञान के जनक अरस्तु जैसे महत्वपूर्ण विचारक भी महिलाओं को मताधिकार देने के पक्षधर नहीं थे , किंतु इन आधारों पर उनकी आलोचना निरंतर होती रही है। संसदीय प्रजातंत्र के जनक इंग्लैंड में भी महिलाओं को मताधिकार बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में ही प्राप्त हुआ है।

भारत में लोकतंत्र – सामान्यत: भारत में सदा से ही राजतंत्र शासन के स्वरूप के रूप में प्रचलित रहा है हालांकि इसमें भी जनता का कल्याण करने वाला राजतंत्र एवं राजा लोकप्रिय की श्रेणी में रखा गया था। भारत में लोकतंत्र के विचार का उद्‌भव ब्रिटिश भारत के स्वतंत्रता के प्रयासों के समय विश्व के अन्य देशों के संपर्क में आने के साथ प्रारंभ हुआ।

19वीं शताब्दी में भारत में समाज सुधारको के माध्यम से नवीन विचारों का उद्‌भव हुआ। भारतीय पुनर्जागरण के प्रणेता एवं जनक राजा राममोहन राय इनमें से सर्व प्रमुख है राजा राममोहन राय ने भारतीय समाज में विद्यमान सामाजिक बुराइयों एवं कुरीतियों की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए उन्हें दूर करने हेतु दृढ़ संकल्प प्रदर्शित करते हुए उसके लिए विशेष प्रयास किए भारतीय लोकतंत्र की जड़ वहीं से स्थापित होती है । राजा राममोहन राय ने महिलाओं की दशा में सुधार लाने के लिए विशेष रूप से प्रयास किए विशेषकर उनके दृष्टिकोण सती प्रथा सबसे बड़ी कुरीति भारत की समाज में विद्यमान थी और इसी में सुधार लाने के लिए उनके द्वारा इस हेतु प्रतिबंधित करने के लिए 1828 में सती प्रथा के विरोध में कानून के माध्यम से उसे

प्रतिबंधित करने का प्रयास किया गया।

लोकतंत्र केवल एक शासन का स्वरूप नहीं है वरन जीवन के प्रति एक विशिष्ट दृष्टिकोण है और एक मानसिकता है , जो कि किसी भी देश की शासन व्यवस्था को सही रूप से संचालित करने के लिए आवश्यक है।

भारत में किसी प्रकार की व्यवस्था में सुधार के लिए उसे सही तरीके से लागू करने के लिए कानूनों की आवश्यकता पड़ती है , कानूनों के अस्तित्व के बिना व्यवस्था को सही रूप से संचालित नहीं किया जा सकता और ना ही दूषित व्यवस्था में सुधार लाया जा सकता है।

भारतीय लोकतंत्र में यही व्यवस्था 19वीं शताब्दी एवं बीसवीं शताब्दी में भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के समय और भारतीय संविधान के निर्माण के समय एवं उसके पश्चात भी लागू रही है भारतीय सामाजिक व्यवस्था में अनेक ऐसी कुरीतियां विद्यमान थी जिनको स्वतंत्रता प्राप्ति के समय कठोर कानूनों के माध्यम से दूर करने का प्रयास किया गया इन कानूनों के माध्यम से भारतीय समाज में समानता स्थापित करने का प्रयास भी किया गया। उदाहरण के लिए भारतीय समाज में विद्यमान वर्ण व्यवस्था जिसमें भारतीय समाज अलग-अलग वर्णों में बटॉ हुआ था एवं एक वर्ग के लोग पूरी तरह से वंचित और उपेक्षित माने गए थे और इनकी स्थिति में सुधार के लिए भारतीय संविधान में अनेक प्रावधान किए गए एवं इसी वर्ग के लिए समानता पर लाने के लिए आरक्षण जैसी विशिष्ट व्यवस्था भी की गई हालांकि भारतीय संविधान में यह व्यवस्था प्रारंभ में कुछ ही समय के लिए की गई थी लेकिन बाद में यह व्यवस्था आवश्यकता के अनुसार आगे के लिए भी बढ़ाई गई क्योंकि वर्ण व्यवस्था मानसिकता से संबंधित है इसीलिए आज भी इसे बनाए रखने की आवश्यकता है क्योंकि जब तक वर्ण व्यवस्था के संबंध में भारतीयों की मानसिकता पूरी तरह से परिवर्तित नहीं हो जाती तब तक यहां आरक्षण व्यवस्था को लागू रखा जाए, जिस तरह से वर्ण व्यवस्था पर आधारित सामाजिक भेदभाव व्यवस्था को कानूनों के माध्यम से समाप्त करने का प्रयास किया जा रहा है। उसी तरह से भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए भी कठोर कानूनों की आवश्यकता महसूस हो रही है।

भारतीय लोकतंत्र एवं महिलाएं – जिस तरह से भारतीय समाज में एक वर्ण पूरी तरह से वंचित और उपेक्षित था , उसी तरह महिलाएं प्रत्येक वर्ण में दोयम दर्जे का स्थान रखती थी एवं वंचित और उपेक्षित रही हैं। भारतीय समाज में ऋग्वेद काल के पश्चात महिलाओं की स्थिति कभी भी सामान्य नहीं रही। महिलाओं की स्थिति दिन प्रतिदिन बुरी से बदतर और दयनीय होती है महिलाएं अनेक प्रकार की बुराइयां एवं कुरीतियों का सामना कर रही थी इनमें से प्रमुख है:

1. सती प्रथा
2. बाल विवाह
3. महिलाओं की अशिक्षा
4. आर्थिक परनिर्भरता
5. विधवाओं की बुरी स्थिति
6. घुंघट या पर्दा प्रथा
7. दहेज प्रथा
8. महिला भ्रुण हत्या
9. महिलाओं का कार्यक्षेत्र केवल घर की चारदीवारी आदि

सती प्रथा में महिलाओं को उनके पति की मृत्यु के बाद पति की चिता के साथ जला दिया जाता था इस प्रथा को राजा राममोहन राय के विशेष प्रयासों से 1828 में कानूनी रूप से प्रतिबंधित किया गया।

बाल विवाह प्रथा के अंतर्गत बचपन में ही बालिकाओं का विवाह तय कर दिया जाता था या करवा दिया जाता था जिससे शारीरिक या मानसिक रूप से परिपक्व हुए बिना ही उनके ऊपर दायित्वों का बोझ डाल दिया जाता था इस कुप्रथा पर भी बालिका विवाह की आयु न्यूनतम 18 वर्ष तय की गई जिससे इस कुप्रथा को भी कानून के माध्यम से प्रतिबंधित किया गया।

बाद में समाज के अन्य वर्गों की तरह ही महिलाओं की आर्थिक परनिर्भरता उनकी दयनीय स्थिति का मुख्य कारण था यदि हम वास्तव में महिलाओं की स्थिति में किसी प्रकार का सुधार लाना चाहते है तो उन्हें आर्थिक रूप से सक्षम बनाने एवं सफल बनाने के लिए कठोर प्रयास करने चाहिए थे किंतु हमने किसी प्रकार का प्रयास नहीं किया। भारतीय संविधान मे महिलाओ को समान स्तर प्रदान करने की बात तो की गई किन्तु इसके लिए कोई ठोस प्रयास नही किए गए ।

महिलाओं के लिए इस संबंध में पर्याप्त एवं महत्वपूर्ण प्रयास 73 व 74 वें संविधान संशोधन के माध्यम से उन्हें स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाओं में एक तिहाई प्रतिनिधित्व प्रदान कर किया गया जिसे बाद में 50% तक बढ़ाया गया। महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए यही प्रयास सर्व प्रमुख था।

यदि महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए इस आरक्षण की व्यवस्था को संविधान लागू होते ही लागू कर दिया होता तो महिलाओं की स्थिति में पूर्व सुधार आ चुका होता और महिलाओं से संबंधित अनेक सारी बुराइयों से उन्हें निजात मिल चुका होता है जैसे बाल विवाह, महिलाओं की अशिक्षा , आर्थिक परनिर्भरता , विधवाओं की दुर्दशा , पर्दा प्रथा , दहेज प्रथा , महिला भ्रुण हत्या , उनका कार्य के चार दिवारी इत्यादि समस्याएं उनको आरक्षण मिलने से और उनके आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने से समाप्त हो गई होती। किंतु इस कार्य में सबसे बड़ा रोड़ा या बाधा पुरुषों की उनके प्रति मानसिकता रही है जो कि आज भी परिवर्तित नहीं हो रही है और वह महिलाओं को आगे बढ़ने या समाज स्तर पर लाने के लिए भी स्वीकार नहीं करती।

इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है एक तरफ तो हम जनगणना के समय स्त्री- पुरुष अनुपात को असंतुलित होने का गम बताते हैं किंतु साथ ही महिला आरक्षण प्रारंभ होने के बाद उन्हें 33 या 35% तक सीमित रखने का काम करते हैं क्योंकि स्त्री – पुरुष अनुपात बराबर होना चाहिए किंतु किसी भी क्षेत्र में उन्हें बराबरी का मौका देने के लिए तैयार नहीं है । न केवल 50 सदस्य बल्कि केवल 33 या 3% आरक्षण वह भी उर्ध्वाधर आरक्षण अर्थात महिलाओं को 35 या 35% से ज्यादा एक भी सीट ना मिले यही पुरुषों की दोगली मानसिकता को प्रदर्शित करता है।

उर्ध्वाधर आरक्षण के तहत यह व्यवस्था की गई है की निर्धारित आरक्षण के अतिरिक्त एक भी स्थान अतिरिक्त चाहे मेरिट में सर्वोच्च स्थान पर हो किंतु अतिरिक्त स्थान प्रदान नहीं किया जाएगा महिलाएं यदि आरक्षण प्राप्त करके भी आर्थिक रूप से सक्षम हुई तो उनकी अधिकांश समस्याओं के समाधान हो जाएगा- कन्या भ्रुण हत्या और और बाल विवाह बंद हो जाएंगे। महिला शिक्षा को बढ़ावा मिलेगा, महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता स्थापित होगी तथा समाज को सशक्त आधार प्राप्त होगा।

आरक्षण का नकारात्मक पक्ष – डॉक्टर अंबेडकर द्वारा भारतीय संविधान मे आरक्षण की व्यवस्था का प्रावधान करते समय इस व्यवस्था को प्रारंभिक 10 वर्षों के लिए स्थापित करने के लिए कहा गया था। किंतु यह व्यवस्था

बार–बार 10 वर्षो के लिए आगे बढ़ती गई और आज भी यह व्यवस्था लागू है भारत के बुद्धिजीवियों के द्वारा यह विचार प्रकट किया गया था कि कि सामाजिक व्यवस्था में सुधार लाने के लिए प्रारंभिक 10 वर्ष पिछड़े वर्गों को समर्थन और सहायता देने के लिए पर्याप्त है ताकि वे अपने खुद के दम पर खड़े हो सके उनके अनुसार अधिक समय तक सहायता प्रदान करना उन्हें अक्षम बना सकता है और उन्हें आवश्यकता से अधिक सहायता पंगु बना सकती है जिसे भी सामाजिक व्यवस्था में सशक्त आधार के रूप में खड़े होने के बजाय कमजोर और दूसरों पर आधारित एवं सदैव बैसाखी की सहायता से अपने विकास के लिए दूसरों पर निर्भर रहेंगे।

एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह भी है कि यदि हम आरक्षण के नकारात्मक पक्षों से भली–भांति अवगत हैं तो हम महिला आरक्षण के पक्ष में कैसे बात कर सकते हैं इसके प्रत्युत्तर में यह बताया जा सकता है कि जैसे एक सामाजिक ताने–बाने में 1 वर्ग या वर्ण की स्थिति दयनीय रही है। ठीक उसी तरह महिलाओं की स्थिति भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग या वर्ण में अर्थात चारों वर्णों में दयनीय रही है ऐसी स्थिति में सर्व प्रथम प्रयास महिलाओं की स्थिति में सुधार का ही होना चाहिए था जबकि इस संबंध में विचार नहीं किया गया।

महिला आरक्षण का एक विशिष्ट पहलू यह भी है की अधिकांश महिलाएं स्वयं समाज में अपनी स्थिति से असंतुष्ट नहीं थी भारतीय महिलाओं में महत्वाकांक्षा की अत्यधिक कमी रही है और इसी कारण वे अपनी स्थिति में अत्यधिक सुधार के लिए यह परिवर्तन लाने के लिए स्वयं ही पक्षधर नहीं रही है। किंतु आज स्थित समाज और अर्थव्यवस्था पर आधारित व्यवस्था में यह आवश्यक प्रतीत हो रहा है कि महिलाए आर्थिक आधार पर आत्मनिर्भर रहे। जिससे वे भारतीय समाज भारतीय अर्थव्यवस्था और भारतीय राष्ट्र के आधार स्तंभ के रूप में स्थापित हो और भारत को एक सशक्त राष्ट्र बनाने मैं अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर सकें।

निष्कर्ष– अंतत: यह सशक्त रूप से कहा जा सकता है कि यदि महिलाओं को कन्या भ्रुण हत्या जैसी समस्या से मुक्ति प्राप्त हो एवं महिला शिक्षा को बढ़ावा मिले तो निश्चित रूप से महिलाओं को अपनी योग्यता को सिद्ध करने में किसी भी प्रकार के आरक्षण की सहायता की आवश्यकता नहीं है और महिलाएं अपनी योग्यता के दम पर पुरुषों की मानसिकता और अपने प्रति उनके दृष्टिकोण को परिवर्तित करने में भी सक्षम होंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 Bakshi P.M. , " The Constitution of India , with selective comments."Universal Law Publishing Co. Pvt. Ltd. ,New Delhi 2001.
2 Basu Durga Das, " Introduction to the Constitution of India.",16th edition Prentice Hall Of India Pvt. Ltd., New Delhi 1994
3 फड़िया बीएल, फड़िया कुलदीप ,'राजनीति विज्ञान', कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल
4 Kashyap Subhash C., "Our Constitution : An Introduction to India's Constitution and Constitutional law." National Book Trust India New Delhi 2000
5 लक्ष्मीकांत एम. , 'भारत की राजव्यवस्था' पंचम संस्करण , McGraw Hill's Education (India) Pvt. Ltd. Chennai , 2017
6 Raja Ram Kalpana,"Indian Polity" edited 8th revised and enlarged edition, Spectrum Books Private Limited New Delhi 2001
7 श्याम सुंदर, जे .एवं शर्मा स्थिति सी पी 'यूनिफाइड राजनीति विज्ञान' ,बीए. प्रथम वर्ष, राम प्रसाद एंड संस भोपाल 2017

****

ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं का स्वास्थ्य एवं पोषण का स्तर: छिंदवाड़ा जिले के विशेष संदर्भ में

संध्या गजभिये*

* सहायक अध्यापक (गृहविज्ञान) राजमाता सिंधिया शासकीय स्नातक कन्या महाविद्यालय छिंदवाड़ा(म.प्र.) भारत

शोध सारांश – ग्रामीण महिलाओं को शहरी महिलाओं की तुलना में खराब स्वास्थ्य परिणाम मिलते हैं और स्वास्थ्य सेवा तक उनकी पहुंच कम होती है। कई ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं विशेष रूप से महिला स्वास्थ्य प्रदाताओं की संख्या सीमित है महिला और पुरुष एक सिक्के के दो पल है। ऐसे में अगर हम बात करें महिला स्वास्थ्य की तो ग्रामीण महिला किस प्रकार के स्वास्थ्य एवं पोषण जटिलताओं से जूझ रही है इसे यहां समझने में आसानी होगी कि स्वास्थ्य एवं पोषण को लेकर और क्या कुछ किए जाने की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – ग्रामीण महिलाओं, स्वास्थ्य, पोषण, ग्रामीण क्षेत्र।

प्रस्तावना – पिछले कुछ वर्षों में ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं का स्वास्थ्य एवं पोषण को लेकर व्यापक साक्षरत्मक बदलाव देखने को मिले हैं। फिर भी ऐसे कई संदर्भ बिंदु है जहां विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है तथा जिन ग्रामीण क्षेत्रों में भारत की लगभग दो तिहाई आबादी बसती है। वह कल स्वास्थ्य एवं पोषण अवसंरचना चिकित्सा अस्पताल व अन्य सुविधाओं की मात्रा एक तिहाई उपस्थित होती है जाहिर सी बात है कि यह संतुलन एक अस्वस्थ एवं कुपोषण की और इशारा करता है। लेकिन कुछ ऐसी स्वास्थ्य संस्थाएं भी है जो ग्रामीण महिलाओं में अधिक सघन है। इनमें डायरिया, टीवी ,टाइफाइड, खसरा और मलेरिया जैसे रोग शामिल है। जो अस्वच्छ पेयजल खराब रिहायशी स्थितियां तथा स्वास्थ्य एवं पोषण जागरूकता के अभाव में उत्पन्न होते हैं। संक्रामक रोगों के साथ-साथ कैंसर जैसी प्रतव घातक बीमारी और मधुमेह हाइपरटेंशन थायराइड मोटापा जैसी जीवन शैली से जुड़ी बीमारियां भी ग्रामीण महिलाओं में सघन होती जा रही है इसके अलावा ग्रामीण क्षेत्र में मासिक स्वास्थ्य से जुड़ा मुद्दा भी गौर करने लायक है। खाने का तात्पर्य है कि अब ग्रामीण क्षेत्र में स्वास्थ्य एवं पोषण संबंधी सेवाओं को भी इतना बहुआयामी होना होगा कि वह एकीकृत रूप से इन जटिलताओं को हल करने में सक्षम हो सके।

मानव जीवन के लिए ऑक्सीजन और पानी के साथ यदि कुछ और भी जरूरी है तो वह है भोजन। मानव ने प्रारंभिक काल से ही अपनी मूलभूत आवश्यकताओं भोजन, आवास एवं वस्त्र की ओर अपना ध्यान केंद्रित किया है। यद्यपि उसने प्रारंभिक काल में जीवन एक मांस भक्षी की तरह व्यतीत किया है। परंतु पाषाण काल के अंत तक उसने कृषि के विषय में जान लिया था तथा अपने आहार में मांस खाद्य पदार्थों के साथ-साथ वनस्पति खाद्य पदार्थ भी शामिल कर लिया था। मानव समाज के निर्माण में कृषि संबंधी ज्ञान ने अहम भूमिका निभाई और फिर मानव समुदाय कस्बे व शहरों का विकास प्रारंभ हुआ। जब खाद्य पदार्थों की उपलब्धता कृषि के द्वारा सुनिश्चित होने लगी तो निवास में भी स्थापितव आने लगा पौष्टिक भोजन लेना मनुष्य के शारीरिक का मानसिक विकास के लिए बहुत जरूरी है। पौष्टिक भोजन के अभाव से मानव शरीर कुपोषण रहित कई बीमारियों से ग्रसित हो जाता है। महिलाओं पर इसका प्रभाव ज्यादा होता है क्योंकि कुपोषित महिला यदि किसी बच्चे को जन्म देती है तो वह बच्चा भी जन्म से कमजोर होता है और अपनी जीवन संभवत कम होती है। इसलिए सही समय पर सही पोषण प्राप्त करना बहुत आवश्यक है अन्यथा कुपोषण का कभी ना खत्म होने वाला दुष्चक्र प्रारंभ हो सकता है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 5 पेज 2 (2019-2021) के अनुसार गृह क्षेत्र से जुड़े कुछ आंकड़े देखे तो 6 वर्ष या इससे अधिक उम्र वाली ग्रामीण महिला आबादी का मंत्र 66.8% हिस्सा ही ऐसा है। जो कभी स्कूल गया हो वहीं शहरी क्षेत्र के लिए यहां आंकड़ा 82.5% है इसके अलावा अगर उन्नत स्वच्छता सुविधाओं की बात करें तो मंत्र 66.9% ग्रामीण ग्रस्त जनसंख्या को यहां उपलब्ध है। जबकि शहरों में इसका प्रतिशत 81.5 है साथ ही भोजन के लिए स्वच्छ ईंधन के इस्तेमाल को देख तो यह शहरों में 89.7% ग्रह से जनसंख्या के पास यह उपलब्ध है। वहीं ग्रामीण आबादी में यहां लगभग घटकर 43.2% रह जाता है इसके अतिरिक्त अगर विवाह और प्रजनन दर को देख तो शहर के 1.6 की तुलना में ग्रामीण क्षेत्र में यहां 2.1 है इतना ही नहीं नवजात मृत्यु के आंकड़े देखे तो शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के लिए यह क्रमश: 18% और 27.5% है तथा शिशु मृत्यु दर के संबंध में यहां आंकड़ा इसी क्रम में 26.6:% और 38.4% है। इन आंकड़ों को प्रस्तुत करने का उद्देश्य यही है कि ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं का स्वास्थ्य एवं पोषण की चुनौतियों का सही अनुमान होता है।

स्वास्थ्य एवं पोषण क्या है पोषण एक स्वस्थ संतुलित जीवन जीने के लिए मौलिक है यह बीमारी की अनुपस्थिति है और वह आधार है। जिस पर हम संपूर्ण शारीरिक मानसिक और सामाजिक कल्याण की स्थिति का निर्माण कर सकते हैं। यह व्यापक मार्गदर्शिका पोषण और स्वास्थ्य के बीच गहरे संबंधों की खोज करती है स्वास्थ्य को बनाए रखने और बीमारी को रोकने में पोषण की महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालते हैं।

ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं के पोषण के लिए सरकार की पहल पर कई

कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं :

1. पोषण अभियान
2. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन
3. एकीकृत बाल विकास सेवा मध्यान भोजन योजन
4. पी एम एम वी वाई
5. एन आर एल एम
6. जे एस वाई
7. मिशन सक्षम आंगनबाड़ी एवं पोषण 2.0
8. पोषण ट्रैक्र ऐप
9. वृद्धि निगरानी उपकरण आदि

ग्रामीण महिलाओं के लिए स्वास्थ्य योजनाएं :

1. राष्ट्रीय निशुल्क औषधि पहल
2. निशुल्क निदान पहल (एफ डी आई)
3. राष्ट्रीय एंबुलेंस सेवा (एन ए एस)
4. मोबाइल मेडिकल यूनिटी (एम एम यू)
5. जननी सुरक्षा योजना
6. प्रधानमंत्री सुरक्षित मातृत्व अभियान
7. आउटरीच शिविर
8. वन स्टॉप सेंटर आदि

अध्ययन का उद्देश्य– ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के समग्र विकास को सुनिश्चित करना महिलाओं की स्वास्थ्य एवं पोषण की स्थिति में सुधार लाना तथा आहार एवं पोषण को बढ़ावा देना ग्रामीण महिलाओं को शहरी महिलाओं की तुलना में खराब स्वास्थ्य परिणाम मिलते हैं और स्वास्थ्य सेवाओं तक उनकी पहुंच कम होती है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के स्वास्थ्य और पोषण के लिए विशेष योजना की जरूरत है।

अध्ययन का क्षेत्र

छिंदवाड़ा जिले का परिचय – छिंदवाड़ा भारतीय राज्य मध्यप्रदेश का एक जिला है इस क्षेत्र में छिंद (ताड़) की पेड़ बहुयात में है इसलिए इसका छिंदवाड़ा नाम पड़ा एक समय यह शेरों की बहुत आयात थी इसलिए इसे पहले सिहवाड़ा भी कहा जाता था। यह तथ्य तथा अधिक मनी नहीं कहा जा सकता किंतु देसी खजूर या ताड़ की बहुतायत तायत क्षेत्र के नाम ही सही व्याख्या कहीं जा सकती है।

रोहना कला गांव का परिचय– यह ग्रामीण क्षेत्र में स्थित है यह मध्य प्रदेश के छिंदवाड़ा जिले के छिंदवाड़ा ब्लॉक में स्थित है। इस गांव में कुल आबादी 3363 है और घरों की संख्या 562 है जिसके अंतर्गत आंगनबाड़ी केंद्र क्रमांक का भ्रमण मेरे द्वारा किया गया। जिसमें 12 गर्भवती महिलाओं पर 1 गर्भवती महिला में पोषण और स्वास्थ्य का स्तर कम पाया गया तथा 11 धात्री माता में 1 धात्री माता में पोषण और स्वास्थ्य का स्तर कम पाया गया।

तालिका

नाम	**पति का नाम**	
प्रियंका	सत्यम विश्वकर्मा	थायराइड
दुर्गावती	मोनो बिंदुवारी	हाईट क्रम

निष्कर्ष – किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए महिलाओं का स्वास्थ्य एवं पोषण का स्तर उच्च होना नितांत आवश्यक है ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी महिलाओं की तुलना में खराब परिणाम मिलते हैं। ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं का स्वास्थ्य स्तर ऊंचा उठने के लिए विभिन्न स्वास्थ्य से संबंधित योजनाएं एवं पोषण से संबंधित योजनाएं चलाई जा रही है साथी इन्हें शिक्षा के माध्यम से जागरूक करके एवं आहार के महत्व के बारे में आबादी को शिक्षित करने की जरूरत है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन एनएफएसएम चावल गेहूं डालो और मोटे अनाजों का उत्पादन बढ़ाकर भोजन की उपयोगिता बढ़ता है इससे महिलाओं और उनके परिवारों के लिए बेहतर पोषण में मदद मिलती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. http://www.weljii.com
2. सोनी कुमारी सिंह: ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं का शोधार्थी गृह विज्ञान स्वास्थ्य एवं पोषण विभाग, ल ना मि विश्वविद्यालय दरभंगा बिहार
3. https://hi.wikipedia.org

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अनुसूचित जाति के व्यावसायिक संरचना एवं साक्षरता का प्रभाव : शहडोल संभाग के विशेष संदर्भ में

डॉ. जिया लाल राठौर*

* भूगोल विभाग, शासकीय महाविद्यालय, जैतपुर, शहडोल (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – सामाजिक क्रांति के रूप में उभरे कुछ नये मानकों ने समाज में रह रहे विभिन्न प्रकार के वृत्ति से जुड़े लोगों को उनके आर्थिक, सामाजिक जीवन को आधार बनाते हुए विभिन्न वर्ग, उपवर्ग में विभाजित कर उनके जीवनशैली को नवीन आयाम दिया। समाज के पिछड़े और साधन विहीन तथा आर्थिक, शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े लोगों के लिए उनके जीवन को स्वाभाविक और सुखमय बनाने की आकांक्षा शुरू से ही किसी न किसी रूप में रहीं आई। पर इस्लामिक सत्ता काल पश्चात आई ब्रिटिश सत्ता काल में समाज के कुछ लोगों के श्रममूलक कार्यो और अपने जीवन को सुखम तथा स्वाभाविक बनाने के लिए ऐसे कार्यो से जोड़ा गया कि वे शेष समाज से कट कर रहने लगे। सांस्कृतिक परिवर्तन की इस नई पेशकश से भारत के पारंपरिक समाज को समाज के कुछ समुदायों को धीरे-धीरे अलग कर दिया जिस कारण एक लम्बा अंतराल दिखने लगा। इस अंतराल के पीछे श्रममूलक सेवा कार्यो की नई प्रतिबद्धता रही।

शब्द कुंजी – जनसंख्या, व्यावसायिक संरचना, साक्षरता।

प्रस्तावना – अनुसूचित जाति समुदाय के लोगों की जीवनशैली और कार्य संरचना कुछ ऐसी थी की वे जनजातीय क्षेत्रों की अपेक्षा नगरीय एवं विकसित परिक्षेत्रों में ही अपना आवास बनाएं इस कारण अध्ययन क्षेत्र शहडोल संभाग जो मूलतः वनप्रान्तीय क्षेत्र है में अनुसूचित जाति समुदाय की जनसंख्या अनुसूचित जनजाति के अपेक्षा कम है। शहडोल संभाग के जनांकिकीय रिपोर्ट पर गौर करें तो संभाग में अनुसूचित जाति की जनसंख्या का औसत प्रतिशत 12.6 है। इस प्रकार स्पष्ट है कि मध्य प्रदेश के अन्य संभागों की आपेक्षा शहडोल संभाग में अनुसूचित जाति समुदाय संख्यात्मक दृष्टि से कम हैं।

अध्ययन क्षेत्र– मध्यप्रदेश के शहडोल संभाग प्रायद्वीपीय भारत के उत्तर-पूर्वी भाग में विन्ध्य एवं सतपुड़ा पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य स्थित मूलतः पर्वतीय, पठारी एवं जनजातीय प्रधान क्षेत्र है। जिसकी भौगोलिक स्थिति भू-मध्य रेखा से स्थिति 23°35 से उत्तरी अंक्षाश 24 °20' उत्तरी अंक्षाश तथा 80°28' पूर्वी देशान्तर से 82°45' पूर्वी देशान्तर के मध्य है।[4] 23°30' उत्तरी अंक्षाश के (कर्क रेखा) इस संभाग को उत्तर व दक्षिण लगभग दो समान भागों में विभाजित करती है।

शहडोल संभाग की लम्बाई एवं चौड़ाई में अन्तराल न्यूनतम है, उत्तर में सोन घाटी से दक्षिण में नर्मदा घाटी तक कुल लम्बाई 181 किलोमीटर एवं पूर्व-पश्चिम चौड़ाई 172 किलोमीटर है। शहडोल संभाग की लम्बाई एवं चौड़ाई में न्यूनतम अन्तराल होते हुए भी इसका आकार आयताकार एवं वर्गाकार नहीं है इसका कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 13966 वर्ग किलोमीटर है।5 यह भारत के कुल भू-भाग का 0.40 प्रतिशत (भारत का क्षेत्रफल 3287782 वर्ग किलोमीटर) है। शहडोल संभाग के अन्तर्गत कुल 03 जिले उमरिया, अनूपपुर एवं शहडोल शामिल है। प्रशासनिक दृष्टि अध्ययन क्षेत्र में तीन जिले क्रमश शहडोल 5671 वर्ग किलोमीटर, उमरिया 4548 वर्ग किलोमीटर एवं अनूपपुर का 3747 वर्ग किलोमीटर है तथा इस शहडोल संभाग में 12 विकासखण्ड क्रमशः ब्यौहारी, जयसिंहनगर, गोहपारू, सोहागपुर, बुढ़ार, कोतमा, अनूपपुर, पुष्पराजगढ़, जैतहरी, करकेली (उमरिया), मानपुर एवं पाली है। इसी प्रकार दूसरी प्रशासनिक इकाई में कुल 16 तहसीले अस्तित्व में है, ये तहसीलें क्रमशः ब्यौहारी, जयसिंहनगर, गोहपारू, सोहागपुर, बुढ़ार, जैतपुर, बांधवगढ़, मानपुर, पाली, चदिया, नौरोजाबाद, करकेली, जैतहरी, कोतमा, पुष्पराजगढ़ एवं अनुपपुर तहसील स्थित है।

अध्ययन उद्देश्य:

1. अनुसूचित जाति के लोगों की व्यावसायिक संरचना का विश्लेषण करना।
2. अनुसूचित जाति के लोगों की सारक्षता दर का विश्लेषण करना।
3. सरकार द्वारा चलाए जा रहे योजनाओं और कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना।

विधि तंत्र– अध्ययन क्षेत्र में शहडोल संभाग में अनुसूचित जाति के लोगों की व्यावसायिक संरचना और साक्षरता दर का विश्लेषण किया गया। इस अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का उपयोग करके आंकड़े संग्रहित किए।

1. **प्राथमिक आंकड़े –**इस अध्ययन करने के लिए सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया।

2. **द्वितीयक आंकड़े –**इस अध्ययन में द्वितीयक आंकड़े संग्रहित करने के लिए सरकारी रिपार्ट शोध पत्र और अन्य स्त्रोतों का उपयोग किया।

सारणी क्र.–1.1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

काश्तकार कृषक – कृषक का काश्तकार से आशय ऐसे श्रमिक पुरूष–महिला से है जो स्वयं अथवा जो अपनी खुद की जमीन सरकार से पट्टे पर जमीन या किसी दूसरे व्यक्ति या संख्या से नगद या जिस या जिस बटाई पर ली जमीन पर खेती करता है। काश्तकारी के अन्तर्गत अपनी प्रभावी देखरेख अथवा निर्देशन में खेती करवाना भी शामिल है। काश्तकार जिसने अपनी जमीन किसी एक दूसरे व्यक्तियों या संख्या को खेती करने के लिए नगदी फसल के हिस्से के बदले में दे दी है और इस जमीन में खेती के काम में देखरेक और निर्देशन काम शामिल है।(भारतीय जनगणना, 2011)

अध्ययन क्षेत्र में कुल मुख्य कार्यशील जनसंख्या 32.41 प्रतिशत भाग काश्तकार के अन्तर्गत शामिल है। उच्च भूमि में काश्तकार का उच्चतम प्रतिशत पुष्पराजगढ़ विकासखण्ड (56.09 प्रतिशत) में प्राप्त हुआ है जो क्षेत्र के औसत प्रतिशत से अधिक है, जबकि न्यूनतम प्रतिशत ब्यौहारी विकासखण्ड (16.48) प्रतिशत में प्रदर्शित हुआ जो क्षेत्र के औसत 32.41 प्रतिशत से अधिक है। उल्लेख है कि जैतहरी विकासखण्ड में काश्तकारो की संख्या में कमी का मुख्य कारण कृषि भूमि का बंटवारा, नगर का विस्तार हुआ।

खेतिहर मजदूर – खेतिहर मजदूर के अन्तर्गत वे व्यक्ति आते है जो व्यक्ति अपने रूपये या अनाज के रूप में मजदूरी या पैदावार हिस्सा लेकर एक दूसरे के यहाँ जाकर काम करते है। खेतिहर मजदूर कहा जाता है। खेतिहर मजदूर को पट्टे या जमीन ठेके पर किसी प्रकार की मांग नही करते है। वे जमीदार के यहाँ कार्य करते है और जीवनयापन व्यतीत करते है।

अध्ययन क्षेत्र की मुख्य कार्यशील जनसंख्या का केवल 40.37 प्रतिशत भाग खेतिहर मजदूर के अन्तर्गत शामिल है। या उच्चतम प्रतिशत ब्यौहारी, विकासखण्ड 57.55 प्रतिशत प्राप्त है। जो क्षेत्र के औसत से अधिक हे। इसके विपरीत खेतिहर मजदूर का न्यूनतम प्रतिशत पाली विकासखण्ड 20.53 प्रतिशत है जो क्षेत्र के औसत से लगभग कम है।

पारिवारिक उद्योग – पारिवारिक उद्योग वह उद्योग है जो परिवार के सभी सदस्य द्वारा घर में मिलजुल कर काम को करते है। ग्रामीण क्षेत्रों में गांव की सीमा के अन्तर्गत व नगरीय क्षेत्रों में उस मकान के अन्दर या अहाते में जिसमें परिवार रहता है। पारिवारिक उद्योग में काम करने वाले व्यक्तियों की अधिकांश संख्या मुखिया के सदस्यों की होती है। सभी परिवार के लोग प्राथमिक क्रिया के अन्तर्गत बीड़ी बनाना, टोकरी बनाना, सिलाई, बुनाई कताई आदि कार्य उनके हाथो द्वारा किये जाते है।

अध्ययन क्षेत्र की मुख्य कार्यशील जनसंख्या केवल 7.14 प्रतिशत भाग पारिवारिक उद्योग के अन्तर्गत शामिल है। उल्लेखनीय है कि क्षेत्र में उच्चतम प्रतिशत मानपुर विकासखण्ड (13.01 प्रतिशत) में प्राप्त हुआ जो औसत क्षेत्र (7.14 प्रतिशत) से अधिक है। इस प्रकार न्यूनतम प्रतिशत पुष्पराजगढ़ विकासखण्ड (1.33 प्रतिशत) प्राप्त हुआ है। जो औसत क्षेत्र से बहुत कम है।

अन्य कर्मी– इस वर्ग के अन्तर्गत उन सभी कार्य करने वाले व्यक्तियों को रखा जाता हैं इसमे काश्तकार, खेतिहर मजदूर, पारिविरिक उद्योग में कार्यरत व्यक्ति शामिल है। अन्य इस श्रेणी के अन्तर्गत सरकारी, कर्मचारी, नगरपालिका, शिक्षक, कारखाने में कार्य करने वाले वाणिज्य, व्यवसाय, खनन, पुजारी, मनोरंजन कलाकार भी आदि आते है।

अध्ययन क्षेत्र की मुख्य कार्यशील जनसंख्या का केवल 19.69 प्रतिशत भाग इस वर्ग के अन्तर्गत शामिल है। कार्यशील व्यक्तियों की दृष्टि से क्षेत्र उच्चतम प्रतिशत पाली विकासखण्ड 51.14 प्रतिशत अंकित किया गया है। जो औसत से अधिक है। इसके विपरीत अन्य कर्मी न्यूनतम प्रतिशत पुष्पराजगढ़ विकासखण्ड 6.18 प्रतिशत प्राप्त हुआ है। जो क्षेत्र के औसत 19.69 प्रतिशत से कम है गौर किया जाए तो खेतिहर मजदूरों की संख्या अधिक है। इस कारण अन्य कर्मी की संख्या अपेक्षाकृत कम है।

सारणी 1.2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

क्षेत्रीय वैविध्य परिवर्तन– क्षेत्रीय ग्रामीण साक्षरता जनसंख्या की विविधता को तीन प्रमुख श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है–

1. **उच्च ग्रामीण अनुसूचित जाति साक्षरता वाले क्षेत्र–**अध्ययन क्षेत्र में उच्च ग्रामीण साक्षरता अनुसूचित जाति जनसंख्या की भागीदारी दर में ऐसे विकासखण्ड जिनमें भागीदारी दर उच्च पायी गई है, जैसे विकासखण्ड गोहपारू 57.07 प्रतिशत पाली 56.41 प्रतिशत, करकेली 55.54 प्रतिशत, कोतमा 54.70 प्रतिशत सोहगपुर 54.05, मानपुर 53.53, पुष्पराजगढ़ 53.10 हैं। यहां उच्च साक्षरता दर होने का प्रमुख कारण इस क्षेत्र में शिक्षा के एवं रोजगार के प्रचुर अवसर परिवहन संचार, व्यापार, श्रमशक्ति की अधिकता आदि प्रमुख है। संपूर्ण अध्ययन क्षेत्र एवं प्रदेश की तुलना में यहां प्रतिशत काफी उच्च है।

2. **मध्यम ग्रामीण अनुसूचित जाति साक्षरता वाले क्षेत्र–** ग्रामीण साक्षरता अनुसूचित जाति जनसंख्या की मध्यम भागीदार दर के लिए अनेक सास्कृतिक परिस्थितियां उत्तरदायी हो सकती है। अध्ययन क्षेत्र में मध्य भागीदार दर विकासखण्ड ब्यौहारी 49.25 प्रतिशत, जयसिंहनगर 49.03 प्रतिशत, बुढ़ार 45.38 प्रतिशत पायी गई है। ग्रामीण क्षेत्र में अनुसूचित जाति की साक्षरता की भागीदारी संपूर्ण शहडोल संभाग एवं प्रदेश की अपेक्षा मध्यम पायी गई है।

3. **निम्न ग्रामीण अनुसूचित जाति साक्षरता वाले क्षेत्र–** ग्रामीण साक्षरता अनुसूचित जाति जनसंख्या की निम्न भागीदारी दर के अंतर्गत ऐसे क्षेत्र जहां की जनसंख्या उससे अधिक प्रतिशत है, उसे निम्न ग्रामीण साक्षरता अनुसूचित जाति जनसंख्या की श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है। इसमें जैतहरी 38.74 प्रतिशत, अनूपपुर 38.54 प्रतिशत निम्न भागीदारी दर में भी क्षेत्रीय अंतराल विकासखण्डों में काफी भिन्नता पाई गई है।

अनुसूचित जाति साक्षरता का प्रभाव – शिक्षा किसी समाज, क्षेत्र और प्रदेश को एक नया आत्मविश्वास और आत्मबल देती है शिक्षा के अभाव से व्यक्ति समय सापेक्ष मानदण्डों से तादात्मय नहीं बना पाता और तेजी से आगे बढ़ते मानकों की ओर आशाभरी निगाहों से तो देखता है लेकिन

सहभागी न हो पाने के कारण उनके लाभ से वंचित रह जाता है। यह समस्या ग्रामीण और वनांचली क्षेत्रों में अन्य क्षेत्रों के मुकाबले ज्यादा दिखती है। अध्ययन क्षेत्र शहडोल संभाग मूलत: वनप्रान्तीय क्षेत्र है यहाँ की जीवनशैली और भौगोलिक संरचना अन्य क्षेत्रों से हटकर के है। समय के साथ आये उतार चढ़ावों ने शहडोल संभाग को औद्योगिक क्रांति की ओर उन्मुख तो किया पर संभाग में सक्रिय होने वाली एजेंसियां मशीनी तकनीक के माध्यम से अपने कार्यो को गति देती रही जिस कारण विभिन्न स्थानीय समुदाय के लोगों को कार्य के अवसर नहीं मिल पाते हैं। कार्यो से दूरी का सबसे महत्वपूर्ण कारण शिक्षा ही देखा गया है। शिक्षा के प्रति अनुसूचित जाति समुदाय लोगों का प्रारंभिक रूझान तो दिखता है पर सामान्य प्राथमिक शिक्षा के बाद इस समुदाय के लोग धीरे-धीरे शिक्षा से दूर होने लगते हैं इस कारण अन्य विभिन्न क्षेत्रों में आपेक्षित अवसर नहीं मिल पाता है। आजादी बाद शासन स्तर पर अनुसूचित जाति समुदाय के लोगों के भरण पोषण और समय सापेक्ष समस्याओं पर ध्यान गया।

अनुसूचित जाति की साक्षरता के लिए संचालित योजनाएँ- भारत के सभी राज्यों को मिलाकर अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 6.76 करोड (वर्ष 2011) है जबकि अध्ययन क्षेत्र में कुल अनुसूचित जातीय जनसंख्या 164858 पायी गई है। अनुसूचित जातियों के सामाजिक आर्थिक विकास हेतु केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा शिक्षा के विकास के लिए संचालित विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। अत: शिक्षा के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के लिए संचालित योजनाएँ निम्नानुसार है-

1. लाडली लक्ष्मी योजना।
2. नि:शुल्क साइकिल प्रदाय योजना।
3. नि:शुल्क पाठ्य पुस्तक प्रदाय योजना।
4. गॉव की बेटी योजना।
5. अनुसूचित जाति के लिए मैट्रिककोत्तर छात्रवृत्ति योजना।
6. जनजातीय कल्याण छात्रवृत्ति योजना।
7. अनुसूचित जनजाति राहत योजना।

निष्कर्ष-उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में सरकारी योजनाओं में अनुसूचित जातियों की समस्याओं के प्रत्येक पक्ष का विश्लेषण करते हुए उन समस्याओं के निदान हेतु योजनाबद्ध कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुत होनी चाहिए जिनका सुचारू संचालन के परिणामस्वरूप अनुसूचित जातियों के सामाजिक आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त हो सके तथा आदिवासी विकास कार्यक्रमों का प्रभाव परिलक्षित सम्भव हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीवास्तव, रजनीश (1985), शहडोल जिले के आदिवासियों का आर्थिक अध्ययन, अप्रकाशित लघु शोध प्रबंध, अवधेश प्रताप विश्वविद्यालय, रीवा, पृ.क्र. 45
2. दीक्षित, डी.के. (2001) 'जनजातीय विकास के लिए क्षेत्रीय सन्तुलन एवं जनभागीदारी की आवश्यकता' द्वारा शुक्ल (सम्पा.) क्षेत्रीय विषमता और सामाजिक आर्थिक विकास, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृ.स. 120-130
3. वर्मा, रूपचन्द्र (2003) भारतीय जनजातियाँ, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
4. सलीम, मोहम्मद (2016): भारत में उच्च शैक्षिक और व्यवस्थित रोजगार क्षेत्र में महिलाओं की हिस्सेदारी का अध्ययन, यूनिर्वसिटी न्यूज, पृ.सं. 54
5. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, शहडोल, उमरिया, अनूपपुर, 2011

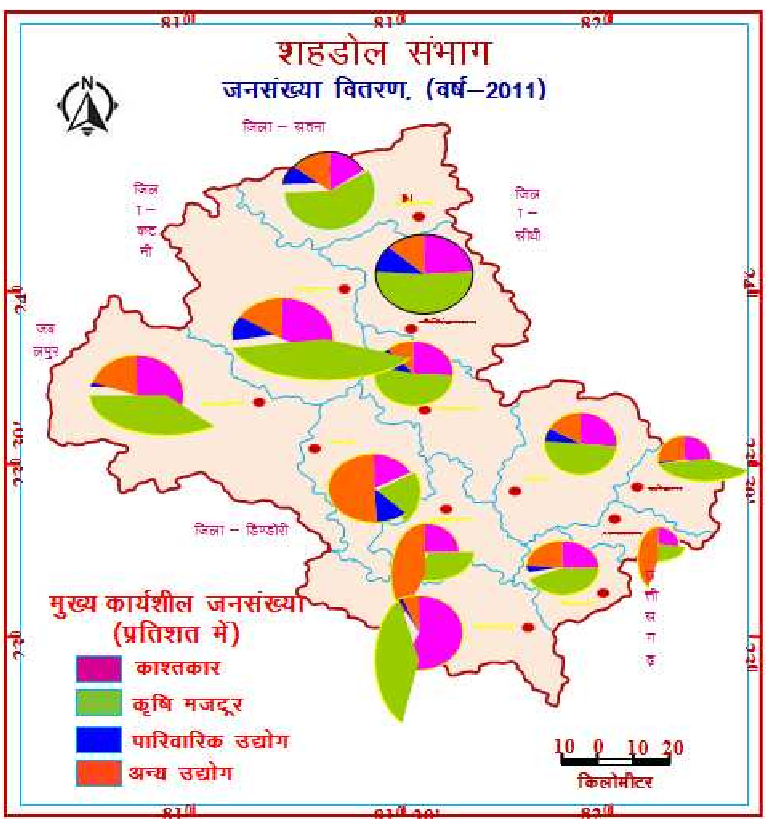

सारणी क्र.-1.1: शहडोल संभाग : अनुसूचित जाति की व्यावसायिक कार्यो में संलग्न व्यक्तियों का विवरण जनगणना वर्ष-2011

क्र.	विकासखण्ड	मुख्य कार्यशील	योग प्रति	काश्तकार		कृषि मजदूर		पारिवारिक उद्योग		अन्य उद्योग	
				संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	ब्यौहारी	3470	21.92	572	16.48	1997	57.55	399	11.49	502	14.46
2	जयसिंहनगर	2383	15.18	574	24.08	1235	51.82	266	11.16	308	12.92
3	गोहपारू	2208	27.36	578	26.17	1159	52.49	221	10.00	250	11.32
4	सोहगपुर	2541	24.11	644	25.34	758	29.83	139	5.47	1000	39.35
5	बुढ़ार	3527	15.93	937	26.56	1749	49.58	246	06.97	595	16.86
6	कोतमा	1625	21.58	544	33.47	608	37.41	43	02.46	430	26.46
7	पुष्पराजगढ़	6346	39.59	3560	56.09	2310	36.40	85	1.33	391	6.16
8	अनूपपुर	2625	13.11	735	27.61	693	26.40	99	3.77	1098	41.82
9	जैतहरी	3315	18.96	826	24.91	1433	43.22	266	8.02	790	23.83
10	मानपुर	4511	19.57	1473	32.65	1442	38.61	587	13.01	709	15.71
11	करकेली	3889	21.05	1526	39.28	1374	35.33	215	5.52	774	19.90
12	पाली	2052	29.20	184	17.49	216	20.53	114	10.83	538	51.14
	शहडोल संभाग	**37492**	**21.01**	**12153**	**32.41**	**15274**	**40.37**	**2680**	**7.14**	**7385**	**19.69**
	मध्यप्रदेश	**3407270**	**30.04**	**677802**	**19.90**	**1454983**	**42.71**	**154490**	**45.34**	**1119995**	**32.88**

Source : Census of India, 2011, District Census Hand Book, Distirict Shahdol, Umariya & Anuppur

सारणी 1.2: शहडोल संभाग : ग्रामीण अनुसूचित जाति विकासखण्डवार साक्षरता वितरण जनगणना वर्ष-2011

क्र.	विकासखण्ड	कुल साक्षर व्यक्ति	योग प्रतिशत	रैक	पुरूष	%	महिला	%
1	ब्यौहारी	7797	49.25	8	4655	59.70	3142	40.29
2	जयसिंहनगर	7696	49.03	9	4559	59.23	3137	40.76
3	गोहपारू	4606	57.07	1	2638	57.27	1968	42.72
4	सोहगपुर	5695	54.05	5	3369	59.15	2326	40.84
5	बुढ़ार	10047	45.38	10	6018	59.89	4029	40.10
6	कोतमा	4118	54.70	4	2436	59.15	1682	40.84
7	पुष्पराजगढ़	8513	53.10	7	5180	60.84	3333	39.15
8	अनूपपुर	7717	38.54	12	4466	57.87	3251	42.12
9	जैतहरी	6773	38.74	11	4097	60.49	2676	39.50
10	मानपुर	12336	53.53	6	7343	59.52	4993	40.47
11	करकेली	10262	55.54	3	6257	60.97	4005	38.02
12	पाली	2032	56.41	2	1190	58.56	842	41.43
	शहडोल संभाग	**87592**	**49.08**		**52208**	**59.60**	**35384**	**40.39**
	मध्यप्रदेश	**4344701**	**38.30**		**2674001**	**61.54**	**1670700**	**38.45**

Source : Census of India, 2011, District Census Hand Book, Distirict Shahdol, Umariya & Anuppur

शहडोलसंभाग
ग्रामीण अनुसूचित जाति साक्षरता (वर्ष 2011)
10 0 10 20

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

चुनावी रेवड़ी की राजनीति : एक अध्ययन

मनोज अहिरवार*

* शोधार्थी, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय ,उज्जैन (म.प्र.) भारत

शब्द कुंजी –चुनाव, रेवड़ी, फ्रीबीज, राजनीतिक दल, योजनाएं, जनकल्याण, मतदाता आदि।

प्रस्तावना – चुनावी रेवड़ी या फ्रीबीज यह शब्द वर्तमान राजनीति में प्रमुख रूप से देखने को मिल रहे हैं। रेवड़ी एक प्रकार की भारतीय मिठाई है।रेवड़ी मुख्यतौर पर तिल को चीनी या गुड़ में मिलाकर बनाया जाता है। रेवड़ी का नाम आते ही मुंह में एक मिठास और मन में लोहड़ी जैसी मस्ती घुल जाती है। तिल की वजह से रेवड़ी स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक मानी जाती है। हालांकि राजनीतिक रेवड़ी का स्वाद इसके ठीक विपरीत होता है। चुनावी वादों के तौर पर वोटरों के बीच बंटने वाली ज्यादातर रेवड़ी, उन्हें कभी नहीं मिलती। सत्ता में आने के बाद वोटरों को लुभाने के लिए जो रेवड़ी बांटी जाती है, उससे सरकारी खजाना खाली होता है। दीर्घकाल में इसका सीधा दुष्प्रभाव बड़ी परियोजनाओं और राज्य के विकास पर पड़ता है।भारत में चुनाव एक तरफ जहां मूलभूत सुविधाओं तथा जनकल्याण के मुद्दों पर लड़े जाते थे, वहीं कुछ समय से एक नया तरीका सामने आया है, जिसे चुनावी रेवड़ी अथवा फ्रीबीज कहते हैं। फ्रीबीज शब्द सबसे पहले 1920 के दशक में अमेरिकी राजनीति में इस्तेमाल हुआ था। फ्रीबी शब्द का मतलब होता है, कोई ऐसी चीज जो आपको मुफ्त में दी जाती है। भारत के चुनाव आयोग के अनुसार, फ्रीबीज की कोई स्पष्ट कानूनी परिभाषा नहीं है। प्राकृतिक आपदा या महामारी के दौरान जीवन रक्षक दवाएं, खाना या पैसा मुहैया कराने से लोगों की जान बच सकती है, लेकिन आम दिनों में अगर ये दिए जाएं तो इन्हें फ्रीबीज कहा जाएगा। इसमें विभिन्न राजनीतिक दल वोट अपने पक्ष में प्राप्त करने के लिए तरह–तरह की फ्री योजनाएं और लोक लुभावन वादे करते हैं । चुनाव के कुछ दिन पहले ही ऐसी योजनाओं को जनता के बीच में लाया जाता है, और उन्हें अपने पक्ष में वोट करने के लिए आकर्षित किया जाता है। वैसे तो इसकी कोई एक निश्चित परिभाषा नहीं है, लेकिन चुनाव के कुछ समय पहले राजनीतिक दलों द्वारा जो घोषणाएं की जाती हैं, उनमें से कुछ विशेष प्रकार की योजनाएं होती हैं । जैसे फ्री बिजली, फ्री पानी, फ्री बस यात्रा, कर्जमाफी, बेरोजगारी भत्ता, फ्री मोबाइल, टीवी ,वाशिंग मशीन इत्यादि। जो जनता को दी जाती हैं। इसके अलावा नगद राशि जो किसी योजना के रूप में जनता को दी जाती है। यह सभी रेवड़ी की श्रेणी में आती हैं। लोकसभा चुनाव हो या विधानसभा या अन्य कोई चुनाव सभी में अब इसका प्रभाव देखने को मिलने लगा है।

'गरीब की थाली में पुलाव आ गया, लगता है शहर में चुनाव आ गया।'

इन योजनाओं को सभी अपने–अपने ढंग से परिभाषित करते हैं। जो राजनीतिक दल इसकी घोषणा करता है, वह इसे लोक कल्याणकारी योजना कहता है। तथा विपक्ष इसे रेवड़ी या मुफ्तखोरी कहता है। लेकिन इस तरह की योजनाएं लगभग सभी प्रमुख दलों द्वारा चलाई जा चुकी हैं। जो राजनीतिक दल सत्ता में रहते हैं, वह चुनाव के पूर्व राजकोष से इन योजनाओं की घोषणा करते हैं, तथा अन्य दल सरकार बनने के बाद इस तरह की योजनाओं को शुरू करने की गारंटी देते हैं। लेकिन दोनों ही सरकारी धन के बल पर यह करते हैं।

जैसे दिल्ली में आम आदमी पार्टी ने फ्री बिजली, फ्री पानी तथा महिलाओं के लिए फ्री बस यात्रा शुरू की। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा इस तरह की चुनावी रेवड़ी का विरोध किया गया था। वर्ष 2022 में भाजपा ने ही इस प्रकार की योजनाओं को रोकने के लिए सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर की थी। लेकिन उनकी ही भारतीय जनता पार्टी ने मध्यप्रदेश 2023 विधानसभा चुनाव के ठीक पहले लाडली बहन योजना प्रारंभ की। महाराष्ट्र चुनाव में भाजपा की अगुवाई वाले महायुति गठबंधन ने भी माझी लाडकी बहन योजना शुरू की। कर्नाटक चुनाव में कांग्रेस ने महिलाओं के लिए फ्री बस यात्रा प्रारंभ की। तेलंगाना में रायतू बंधु योजना। इस प्रकार लगभग अधिकांश राज्यों के चुनाव से पहले राजनीतिक दलों द्वारा इस तरह की योजनाएं जिनका जनता को प्रत्यक्ष लाभ जो फ्री में उपलब्ध कराया जाता है चुनावी रेवाड़ी या फ्रीबीज है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं विकास – चुनावी रेवड़ी की संकल्पना नई नहीं है, यह तो दुनिया भर में राजनीतिक पार्टियों द्वारा मतदाताओं को रिझाने के लिए मुफ्त की योजनाओं या फ्रीबीज का ऐलान करती रहीं हैं।भारत में इसकी शुरुआत दक्षिण के राज्यों से हुई और धीरे–धीरे यह पूरे भारत में फैल गई ।इस प्रकार की योजनाएं कैसे और कहां शुरू हुई इसके विकास को देखते हैं जैसे

मद्रास स्टेट के सीएम के कामराज ने 1954 से 1963 के दौरान मुफ्त शिक्षा और स्कूली छात्रों के लिए मुक्त भजन जैसी स्कीम शुरू की।

1967 में DMK के संस्थापक कम अन्नादुरई ने तमिलनाडु चुनाव में एक रुपए में 4.5 किलो चावल देने जैसे वादे किए थे।

1982 में एमजी रामचंद्र ने कामराज की तरह ही तमिलनाडु में स्कूली बच्चों को मुफ्त भोजन की योजना लागू की थी।

1980 के दशक में आंध्र प्रदेश के एम एंटी रामाराव ने रू 2 किलो चावल देने की योजना शुरू की थी।

1990 के दशक में तमिलनाडु ।प्।क्ड्ड नेता जे जयललिता ने मुफ्त

साड़ी, प्रेशर कुकर, टेलीविजन और वाशिंग मशीन देने जैसे वादे किए थे। 1990 के दशक में ही पंजाब में अकाली दल सरकार ने सबसे पहले मुफ्त बिजली देना शुरू किया था।

2006 विधानसभा चुनाव में तमिलनाडु में डीएमके ने वोटर्स को कलर टीवी देने का वादा किया था।

तमिलनाडु के चुनाव में गैस स्टोव, कैश, जमीन और मैटरनिटी सहायता तक देने का वादा करती रही है।

2015 में आम आदमी पार्टी दिल्ली में लोगों को मुफ्त बिजली और पानी देने के साथ ही सत्ता में आई।

2022 में पंजाब में सत्ता में आई आप सरकार ने जुलाई से हर घर को 300 यूनिट बिजली मुफ्त देने की योजना शुरू कर दी थी।

2022 में हिमाचल प्रदेश में बीजेपी सरकार ने फ्री बिजली और फ्री पानी योजना शुरू की थी।

गुजरात में बीजेपी सरकार ने 4000 गांव के लिए मुक्त वाई-फाई और गाय संरक्षण के लिए 500 करोड़ देने का वादा किया था।

आमआदमी पार्टी ने गुजरात विधानसभा चुनाव में जीतने पर 300 यूनिट बिजली फ्री और हर माह महिलाओं को रू 1000 देने का वादा किया था।

मध्य प्रदेश में बीजेपी ने 2023 विधानसभा चुनाव के पहले लाडली बहन योजना के माध्यम से रू1000 महीना महिलाओं को देना शुरू किया। 2024 के महाराष्ट्र विधानसभा चुनाव में भाजपा समर्थित महायुति गठबंधन सरकार ने महिलाओं माझी लड़की बहन योजना के माध्यम से उनको रू 1500 महीना देना प्रारंभ किया।इस तरह लगभग सभी राज्यों में सभी राजनीतिक दल चुनाव से पहले मुफ्त की योजनाएं देते आ रहे हैं।

उद्देश्य:

1. चुनावी रेवड़ी या फ्रीबीज क्या है और इसकी शुरुआत कैसे हुई इसका विश्लेषण करना।
2. रेवड़ीयाफ्रीबीज कल्चर के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. फ्रीबीज को कैसे बंद किया जा सकता है, इसका अध्ययन करना।

शोध पद्धति – प्रस्तुत शोध आलेख में विश्लेषणात्मक विधि का प्रयोग कर अध्ययन किया गया है। तथ्यों के संकलन में द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से तथ्य संग्रहित किए गए हैं। जिसमें विषय से संबंधित पत्र पत्रिकाएं, शोधपत्र, चुनावी घोषणा पत्र, समाचार पत्र, इंटरनेट आदि को शामिल किया गया है।

प्रभाव:

राजनीतिक प्रभाव– चुनावी रेवड़ी का प्रभाव सबसे ज्यादा राजनीतिक दलों पर देखने को मिल रहा है। कुछ दल इसका प्रयोग चुनाव में बड़े पैमाने पर कर रहे हैं। और उसका फायदा उनको चुनावी नतीजे में स्पष्ट तरीके से देखने को मिल रहा है। जिन चुनावों में उनका मत प्रतिशत बहुत कम रहता था, रेवड़ी/फ्रीबीज के माध्यम से मत प्रतिशत भी बड़ा और उनकी जीत भी हुई, एवं सरकार भी बनी। इसको देखते हुए अन्य दल भी ना चाहते हुए भी फ्री में योजनाओं की घोषणा कर देते हैं, ताकि उनको भी जीत मिल सके।

सामाजिक प्रभाव– इससे मतदाताओं में लालच उत्पन्न हो जाता है, और वह इससे भी ज्यादा फ्री की योजनाओं की आशा रखने लगते हैं। मुफ्तखोरी से पानी और बिजली जैसे प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग हो सकता है। इससे प्रदूषण भी बढ़ सकता है मुफ्त की चीजें सरकार पर निर्भरता की संस्कृति को बढ़ावा दे सकती हैं।

आर्थिक प्रभाव– आरबीआई ने हाल ही में एक अध्ययन किया है। राज्य वित्त एक जोखिम विश्लेषण ।इस अध्ययन के अनुसार भारतीय राज्यों के लिए हाल के वर्षों में सब्सिडी पर सरकारी ब्याज 11 से 12% की दर से बड़ा है। आरबीआई के अनुसार कई राज्य सरकारें सब्सिडी से मुफ्त की योजनाओं पर स्विच कर रही हैं। 2023-24 में सरकार को राजकोषीय घाटा जीएसडीपी का 3% रहने का अनुमान था। इसके 5.02 प्रतिशत से 5.4% तक जाने की उम्मीद है। राज्यों को 3.5% राजकोषीय घाटे की अनुमति है, जिसमें 0.5% बिजली सुधार के लिए है।

मुफ्त की रेवड़ियां बांटने से सार्वजनिक वित्त पर बोझ काफी बढ़ता है। जिसकी लागत कई राज्यों में सकल घरेलू उत्पाद जीएसडीपी के 0.1% से 2.7% तक होती है। कुछ राज्य जैसे आंध्र प्रदेश और पंजाब अपने राजस्व का 10% से अधिक सब्सिडी के लिए आवंटन करते हैं। ऐसे में राजकोषीय हालात पर असर पड़ता है।

रेवड़ी/ फ्रीबीज का वैश्विक परिदृश्य – चुनावी रेवड़ी को वैश्विक संदर्भ में देखें तो ज्ञात होता है, कि यह एक वैश्विक समस्या है। कई देशों में राजनीतिक दल और उम्मीदवार मतदाताओं को आकर्षित करने के लिए मुफ्त सुविधाएं और उपहार देते हैं। यह समस्या केवल भारत में नहीं बल्कि अन्य देशों में भी है। जहां रेवड़ी फ्रीबीज के नाम पर चुनाव लड़े जाते हैं। इनमें श्रीलंका, अर्जेंटीना, अमेरिका जैसे देश शामिल है।

श्रीलंका की अर्थव्यवस्था की हालत बहुत खराब हो गई। और उसे दिवालिया घोषित कर दिया गया। क्योंकि वहां की सरकार ने फ्रीबीज को बहुत बढ़ावा दिया जिसमें जनता की बहुत सारे कर माफ कर दिए और सब्सिडी बहुत अधिक दी जिससे देश पर बहुत बड़ा आर्थिक संकट उत्पन्न हुआ। ऐसा ही अर्जेंटीना में भी रेवड़ी कल्चर का प्रभाव देखने को मिलता है। विश्व के बहुत से देशों में फ्रीबीज कल्चर का प्रचलन देखने को मिल रहा है। इसे रोकने के लिए वैश्विक स्तर पर भी प्रावधान किया जाना आवश्यक है।

सुझाव –चुनाव में इस तरह के रेवड़ीकल्चर को रोकने के लिए प्रयास करना बहुत जरूरी है। अगर ऐसा ही चलता रहा तो धीरे-धीरे पूरी चुनावी प्रक्रिया केवल इन्ही योजनाओं पर संचालित होने लगेगी। और आवश्यक एवं मूलभूत सुविधाओं से वंचित होना पड़ेगा। चुनाव आयोग और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रेवड़ी या फ्रीबीज को परिभाषित किया जाए तथा साथ ही लोक कल्याणकारी योजनाओं और फ्रीबीज के मध्य अंतर को स्पष्ट किया जाए। जनता को जागरूक करने के लिए कार्यक्रम किए जाएं, और उन्हें समझाया जाए कि ऐसी योजनाओं के नाम पर मतदान न करें। मतदान करते वक्त एक सशक्त और जनकल्याण वाली सरकार का चुनाव करें। रेवड़ी कल्चर को रोकने के लिए भारत की संसद द्वारा कानून बनाया जाए। जिसकी वजह से कोई भी राजनीतिक दल इस रेवड़ी कल्चर को ना अपना सके।

निष्कर्ष – पिछले दशक से भारत के लगभग आधे से अधिक राज्यों में रेवड़ी कल्चर एक बड़े पैमाने पर देखने को मिल रहा है। राजनीतिक दल चुनाव में जीत हासिल करने के लिए इसको ही प्राथमिकता देने लगे हैं। मतदाता भी प्रत्यक्ष लाभ के कारण उन्हीं के पक्ष में मतदान करते हैं। तथा उनको ही सत्ता में ला रहे हैं। वर्तमान राजनीति में देखा जाए तो प्रत्येक राजनितिक दल ने चुनावो में जीतने के लिए सबसे आसान तरीका ढूंढ लिया है। और वह है फ्री की योजनाएं जैसे फ्री बिजली, फ्री पानी, फ्री बस यात्रा, और भी कई योजनाएं हैं जिनको चुनावी रेवड़ी या मुफ्तखोरी कहा जा सकता है। जो राजनीतिक दल सत्ता में है वह मनमाने ढंग से इस तरह की योजनाएं

चालू कर देते हैं ताकि उनको आगामी चुनाव में जीत हासिल हो सके। इसी को देखते हुए अन्य दल भी सत्ता में आने के लिए मुफ्त योजनाओं की घोषणा करने लगते हैं। इस प्रकार सत्तारूढ़ दल और विपक्ष दोनों ही रेवड़ी कल्चर को बढ़ावा देते हैं। और साथ ही एक दूसरे की योजनाओं को फ्रीबीज या रेवड़ी बोलते हैं और अपनी योजनाओं को कल्याणकारी बताते हैं। रेवड़ी कल्चर को रोकना बहुत आवश्यक हो गया है, क्योंकि इससे राज्यों की अर्थव्यवस्था बिगड़ती जा रही है। और लगातार कई राज्य कर्ज के बोझ तले दबते जा रहे हैं। चुनाव आयोग, सर्वोच्च न्यायालय, संसद इन सभी को मिलकर यह प्रयास करना चाहिए, कि इस कल्चर को जल्दी ही बंद कराया जा सके। सभी राजनीतिक दलों को भी चुनावी रेवड़ी जैसी योजनाओं को बंद करना चाहिए। तथा मूलभूत और आवश्यक सुविधाओं के आधार पर चुनाव लड़ना चाहिए। मतदाताओं को भी यह सोचना होगा कि यह जो फ्री की योजनाएं हैं, वह उनके विकास में बाधक हैं, उनके आधार पर मतदान नहीं करना चाहिए। जब यह योजनाएं फेल होने लगेंगी और इनके माध्यम से चुनाव में जीत नहीं मिलेगी तो धीरे-धीरे ये स्वत: ही समाप्त होने लगेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आजतक 17/08/2022,https://youtu.be/7-TL3sTQZnU?si=gAJUvd9jjUgCqbNh
2. दीपिका पल 9(11/2024, https://navbharatlive.com/special-coverage/formula-of-throwing-sweets-and-winning-the-election-is-in-vogue-in-electoral-democracy-1053412.html
3. सुनीलकुमार 03/12/2024, https://www.jagran.com/business/biz-freebies-will-reduce-gdp-growth-in-fy-202425-23841416.html
4. NDTV Profit desk 14/10/2023, https://hindi.ndtvprofit.com/politics/india/who-is-benefiting-from-freebies-in-election-assembly-election-in-five-states
5. विजय कुमार 4/12/2024, https://hindi.oneindia.com/news/features/what-is-freebies-what-is-the-difference-from-subsidy-735085.html
6. दिनेश मिश्र 10/12/2024, https://navbharattimes.indiatimes.com/india/will-free-electricity-water-and-ration-stop-why-did-supreme-court-get-upset-over-distributing-freebies/articleshow/116168531.cms
7. शादाब नज्मी 01/04/2024, https://www.bbc.com/hindi/articles/crgdlep95l5o
8. योगेश यादव 08/12/2024, https://4pm.co.in/the-economy-of-the-states-has-collapsed-due-to-distribution-of-free-revadi-the-country-is-drowning-in-debt/114221
9. आलोक जोशी 10/11/2024, https://www.livehindustan.com/ blog/editorial-news/hindustan-editorial-column-11-november-2024-story-201731262486299.html
10. अभिषेक पांडे 23/08/2022, https://www.bhaskar.com/db-original/explainer/news/freebies-controversy-history-explained-arvind-kejriwal-modi-government-supreme-court-130218673.html

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

आपदा प्रबंधन का अवलोकन

डॉ. शोभाराम सोलंकी*

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, कसरावद, जिला खरगोन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह आलेख इस बात का दायरा निर्धारित करता है कि आपदा प्रबंधन में क्या शामिल है। एक परिचयात्मक पाठ्यक्रम के रूप में, सामग्री शब्दावली की परिभाषाओं और विवरणों पर केंद्रित है, आपदा प्रबंधन की अवधारणा को स्पष्ट करना, आपातकालीन और आपदा स्थितियों के बीच अंतर करना, प्राकृतिक और मानव-जनित आपदाओं के प्रकारों की पहचान करना और उनका वर्णन करना, उन मुख्य खतरों को सूचीबद्ध करना और उनका वर्णन करना जिनसे आपका देश असुरक्षित है और आपदाओं के लोगों और पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों की पहचान करना और उनका संक्षेप में वर्णन करना।

प्रस्तावना – यह आलेख परिभाषाओं, शब्दावली और संभावित खतरों के प्रकारों (प्राकृतिक और गैर-प्राकृतिक आपदाओं सहित) पर गौर करती हैय आपदाओं, उनके कारणों और निहितार्थों को समझनाय और एक प्रभावी आपदा प्रबंधन योजना की सामग्री। इस लेख के पूरा होने पर आप निम्न में सक्षम होंगेरू आपदा प्रबंधन, खतरा, आपातकाल, आपदा, भेद्यता और जोखिम को परिभाषित, आपातकालीन स्थिति और आपदा स्थिति के बीच अंतर, प्राकृतिक और गैर-प्राकृतिक आपदाओं के प्रकारों को पहचानें और उनका वर्णन, उन मुख्य खतरों की सूची और उनका वर्णन जिनके प्रति आपका क्षेत्र संवेदनशील है या हो सकता है, अपने क्षेत्र और पर्यावरण पर आपदाओं के प्रभावों को पहचानें और संक्षेप में चर्चा।

आपदा प्रबंधन– यह केवल प्रतिक्रिया और राहत से कहीं अधिक है (अर्थात, यह अधिक सक्रिय दृष्टिकोण अपनाता है एक व्यवस्थित प्रक्रिया है (अर्थात, योजना, आयोजन और नेतृत्व के प्रमुख प्रबंधन सिद्धांतों पर आधारित है जिसमें समन्वय और नियंत्रण शामिल है) इसका उद्देश्य प्रतिकूल घटनाओं के नकारात्मक प्रभाव या परिणामों को कम करना है (अर्थात, आपदाओं को हमेशा रोका नहीं जा सकता है, लेकिन प्रतिकूल प्रभावों को कम किया जा सकता है) यह कई घटकों वाली एक प्रणाली है।

खतरा–'क्या किसी प्राकृतिक या मानव-जनित घटना के नकारात्मक परिणामों के साथ घटित होने की संभावना है' कोई खतरा आपातकाल बन सकता हैय जब आपातकाल जनसंख्या के नियंत्रण से परे चला जाता है, तो यह एक आपदा बन जाता है।

आपातकाल– 'किसी घटना की वास्तविक या आसन्न घटना से उत्पन्न स्थिति है जिस पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है।'

आपदा–'एक प्राकृतिक या मानव-जनित घटना है जो कारण बनती है लोगों, वस्तुओं, सेवाओं औरध्या पर्यावरण पर गहन नकारात्मक प्रभाव, प्रभावित समुदाय की प्रतिक्रिया देने की क्षमता से अधिक।'

जोखिम– 'खतरे और भेद्यता को देखते हुए, क्या संभावना है कि किसी प्रतिकूल घटना के परिणामस्वरूप नुकसान होगा' जोखिम (आर) को खतरे के उत्पाद के रूप में निर्धारित किया जा सकता है (एच) और भेद्यता (वी)। यानी आर = एच xवी

भेद्यता– 'यह वह सीमा है जिस तक किसी समुदाय की संरचना, किसी खतरे के प्रभाव से सेवाओं या पर्यावरण के क्षतिग्रस्त या बाधित होने की संभावना है।'

आपातकालीन स्थिति और आपदा स्थिति के बीच अंतर करना– आपातकाल और आपदा दो अलग-अलग स्थितियाँ हैं:

आपातकाल एक ऐसी स्थिति है जिसमें समुदाय मुकाबला करने में सक्षम है। यह किसी घटना की वास्तविक या आसन्न घटना से उत्पन्न स्थिति है जिस पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता होती है और आपातकालीन संसाधनों पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

आपदा एक ऐसी स्थिति है जिसमें समुदाय मुकाबला करने में असमर्थ होता है। यह एक प्राकृतिक या मानव-जनित घटना है जो लोगों, वस्तुओं, सेवाओं औरध्या पर्यावरण पर तीव्र नकारात्मक प्रभाव डालती है, जो प्रभावित समुदाय की प्रतिक्रिया देने की क्षमता से अधिक हो जाती हैय इसलिए समुदाय सरकार और अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों की सहायता चाहता है।

प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक आपदाओं के प्रकार – आपदाओं को अक्सर उनके अनुसार वर्गीकृत किया जाता है:

कारण – प्राकृतिक बनाम मानव

बी शुरुआत की गति – अचानक बनाम धीमी

अ. कारण

1 **प्राकृतिक आपदाएँ –** इस प्रकार की आपदाएँ स्वाभाविक रूप से लोगों, संरचनाओं या आर्थिक संपत्तियों के निकट होती हैं और उनके लिए खतरा पैदा करती हैं। वे प्राकृतिक वातावरण में जैविक, भूवैज्ञानिक, भूकंपीय, जल विज्ञान, या मौसम संबंधी स्थितियों या प्रक्रियाओं (जैसे, चक्रवात, भूकंप, सुनामी, बाढ़, भूस्खलन और ज्वालामुखी विस्फोट) के कारण होते हैं।

चक्रवात, तूफान या टाइफून – चक्रवात तब विकसित होते हैं जब गर्म महासागर गर्म हवा को जन्म देता है, जो बदले में संवहनीय वायु धाराओं का निर्माण करता है। चक्रवात तब घटित होते हैं जब ये पारंपरिक वायु धाराएँ

विस्थापित हो रही होती हैं। तूफान/टाइफून शब्द 'उष्णकटिबंधीय चक्रवात' के लिए एक क्षेत्रीय विशिष्ट नाम है। एशिया में इन्हें 'टाइफून' कहा जाता है हिन्द और प्रशांत महासागरों में इन्हें 'चक्रवात' कहा जाता है और उत्तारी अटलांटिक और कैरेबियन बेसिन पर, उन्हें 'तूफान' कहा जाता है।

उष्णकटिबंधीय चेतावनी प्रक्रियाएँ:

1. **छोटे शिल्प और मछली पकड़ने वाली नावें:** लगभग 25-35 मील प्रति घंटे की रफ्तार से हवाएँ।
2. **जनता के लिए पवन संबंधी सलाह:** लगभग 25-35 मील प्रति घंटे की हवाएँ।
3. **आंधी निगरानी:** जब एक परिपक्व उष्णकटिबंधीय चक्रवात से 48 घंटों के भीतर देश के एक हिस्से को खतरे में डालने की महत्वपूर्ण संभावना होती है।
4. **आंधी बल की चेतावनी:** तब जारी की जाती है जब हवा की गति अगले 24 घंटों के भीतर तूफानी बल की तीव्रता (34-47 समुद्री मील) तक पहुंचने की उम्मीद होती है।
5. **तूफान पर नजर:** यदि 24 से 48 घंटे की समय सीमा के भीतर किसी क्षेत्र या पूरे देश के लिए उत्तार उष्णकटिबंधीय चक्रवात की गड़बड़ी उल्लेखनीय है, तो तूफान की चेतावनी के साथ एक तूफान निगरानी विवरण भी शामिल किया जाएगा।
6. **तूफान की चेतावनी:** हर तीन (3) घंटे में जारी की जाती है जब औसत हवा की गति अगले 12 से 24 घंटों के भीतर तूफान की तीव्रता 48-63 समुद्री मील तक पहुंचने की उम्मीद होती है।
7. **चक्रवात निगरानी:** तब जारी की जाती है जब उष्णकटिबंधीय चक्रवाती हवाओं के 24 से 48 घंटों में 63 समुद्री मील (या 70 मील प्रति घंटे) से ऊपर की चक्रवाती बल वाली हवाओं तक पहुंचने की उम्मीद होती है।
8. **चक्रवात चेतावनी:** हर तीन (3) घंटे में जारी की जाती है, जब अगले 12 से 24 घंटों के भीतर हवा की गति 63 समुद्री मील से अधिक होने की उम्मीद होती है।

ब. भूकंप – भूकंप पृथ्वी की सतह का कांपना या हिलाने वाली हलचल है, जो फॉल्ट-प्लेन के साथ प्लेटों की गति या ज्वालामुखीय गतिविधि के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है। भूकंप दिन या रात के किसी भी समय अचानक, तीव्र और बिना किसी चेतावनी के आ सकते हैं। निम्नलिखित शब्दावली भूकंप से जुड़ी हैं: भूकंप का केंद्र, दोष, परिमाण और भूकंपीय तरंगें।

व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए, भूकंप को आमतौर पर उनके परिमाण (या जारी मात्रात्मक ऊर्जा) द्वारा परिभाषित किया जाता है जिसे 1 - 10 के लघुगणक पैमाने का उपयोग करके मापा जाता है। इस लघुगणक पैमाने को रिक्टर स्केल के रूप में जाना जाता है। तीव्रता का निर्धारण सिस्मोमीटर से प्राप्त भूकंपीय आंकड़ों का विश्लेषण करके किया जाता है।

भूकंप की तीव्रता को संशोधित मर्कल्ली तीव्रता (एमएमआई) स्केल का उपयोग करके मापा जाता है, जो भूकंप के प्रभाव की भौतिक टिप्पणियों द्वारा गुणात्मक रूप से निर्धारित किया जाता है।

स. सुनामी – सुनामी एक समुद्री लहर है जो पनडुब्बी भूकंप, ज्वालामुखी या भूस्खलन से उत्पन्न होती है। इसे भूकंपीय समुद्री लहर के रूप में भी जाना जाता है, और गलत तरीके से इसे ज्वारीय लहर के रूप में भी जाना जाता है। तूफान की लहरें (या गैलू लोलो) तेज हवाओं 1 के कारण उत्पन्न होने वाली लहरें हैं।

समोआ में सबसे बड़ा भूकंप 26 जून 1917 को दर्ज किया गया था, जिसकी तीव्रता रिक्टर पैमाने पर 8.3 मापी गई थी। यह घटना टोंगा (एपिया से लगभग 200 किमी दक्षिण में) में उत्पन्न हुई और इसने सतुपैतिया, सवाई में चार से आठ (4-8) मीटर की सुनामी उत्पन्न कर दी। सुनामी अपने उद्गम स्थल से दस (10) मिनट से भी कम समय में पहुँची, जिसका अर्थ है कि उसने यात्रा की।

1 सुनामी को समोआ में गालू अफी के नाम से जाना जाता था लेकिन राष्ट्रीय आपदा सलाहकार समिति (डीएसी) ने अब सुनामी को इसके समोअन अनुवाद के रूप में अपनाया है।

1,000 किमी/घंटा से अधिक की गति। इसलिए, जब भूकंप आता है, तो आपको सुनामी की चेतावनी पर ध्यान देना चाहिए, उदाहरण के लिए, निचले तटीय क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को तुरंत ऊंचे और सुरक्षित स्थानों पर चले जाना चाहिए।

द. बाढ़ – यह घटना तब घटित होती है जब पानी पहले सूखे क्षेत्रों को कवर कर लेता है, यानी, जब नदी या टूटे हुए पाइप जैसे स्रोत से बड़ी मात्रा में पानी पहले सूखे क्षेत्र में बहता है, या जब पानी बैंकों या बाधाओं से होकर बह जाता है।

स्थानीय पारिस्थितिक तंत्र के लिए बाढ़ पर्यावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो सकती है। उदाहरण के लिए, कुछ नदियों की बाढ़ मिट्टी में पोषक तत्व लाती है जैसे कि मिस्र में जहां नील नदी की वार्षिक बाढ़ पोषक तत्वों को अन्यथा शुष्क भूमि में ले जाती है। बाढ़ का लोगों पर आर्थिक और भावनात्मक प्रभाव भी पड़ सकता है, खासकर अगर उनकी संपत्ति सीधे तौर पर प्रभावित हो। बाढ़ के कारणों की बेहतर समझ होने से लोगों को बेहतर ढंग से तैयार होने और संभवत: बाढ़ से होने वाले नुकसान को कम करने या रोकने में मदद मिल सकती है।

ई. भूस्खलन – भूस्खलन शब्द का तात्पर्य चट्टान और मिट्टी के द्रव्यमान के नीचे की ओर खिसकने से है। भूस्खलन निम्नलिखित कारकों में से एक या उनके संयोजन के कारण होता हैरू ढलान ढाल में परिवर्तन, भूमि द्वारा सहन किए जाने वाले भार में वृद्धि, झटके और कंपन, पानी की मात्रा में परिवर्तन, भूजल आंदोलन, ठंढ की कार्रवाई, झटके का मौसम, निष्कासन या, या ढलानों को कवर करने वाली वनस्पति के प्रकार को बदलना।

भूस्खलन के खतरे वाले क्षेत्र वहां होते हैं जहां भूमि में कुछ विशेषताएं होती हैं जो सामग्री के नीचे की ओर जाने के जोखिम में योगदान करती हैं। इन विशेषताओं में शामिल हैं:

1. 15 प्रतिशत से अधिक ढलान।
2. पिछले 10,000 वर्षों के दौरान भूस्खलन गतिविधि या हलचल हुई।
3. धारा या तरंग गतिविधि जिसके कारण कटाव हुआ है, किसी तट को काटा गया है या किसी तट को काटा गया है जिससे आसपास की भूमि अस्थिर हो गई है।
4. हिमस्खलन की उपस्थिति या संभावना।
5. एक जलोढ़ पंखे की उपस्थिति जो मलबे या तलछट के प्रवाह के प्रति संवेदनशीलता को इंगित करती है।
6. अभेद्य मिट्टी, जैसे गाद या मिट्टी की उपस्थिति, जो रेत और बजरी जैसी दानेदार मिट्टी के साथ मिश्रित होती है।

भूस्खलन अन्य प्राकृतिक खतरों जैसे बारिश, बाढ़, भूकंप के साथ-साथ मानव निर्मित कारणों जैसे ग्रेडिंग, भू-भाग को काटना और भरना, अत्यधिक विकास आदि से भी हो सकता है। क्योंकि भूस्खलन को प्रभावित करने वाले कारक भूभौतिकीय या मानव हो सकते हैं। निर्मित, वे विकसित क्षेत्रों, अविकसित क्षेत्रों, या किसी भी क्षेत्र में हो सकते हैं जहां सड़कों, घरों, उपयोगिताओं, इमारतों आदि के लिए इलाके को बदल दिया गया है।

2. **मानव निर्मित आपदाएँ –** ये आपदाएँ या आपातकालीन स्थितियाँ हैं जिनके प्रमुख, प्रत्यक्ष कारण पहचाने जाने योग्य मानवीय कार्य हैं, जानबूझकर या अन्यथा। 'तकनीकी आपदाओं' के अलावा इसमें मुख्य रूप से वे स्थितियाँ शामिल हैं जिनमें युद्ध, नागरिक संघर्ष या अन्य संघर्षों या नीति कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप नागरिक आबादी हताहत होती है, संपत्ति, बुनियादी सेवाओं और आजीविका के साधनों की हानि होती है। कई मामलों में, लोगों को अपने घर छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ता है, जिससे नागरिक संघर्ष, हवाई जहाज दुर्घटना, बड़ी आग, तेल रिसाव, महामारी, आतंकवाद आदि के परिणामस्वरूप शरणार्थियों या बाहरी औरध्या आंतरिक रूप से विस्थापित व्यक्तियों की भीड़ उमड़ती है।

ब. शुरुआत की गति

1. **अचानक शुरुआत:** बहुत कम या कोई चेतावनी नहीं, तैयारी के लिए न्यूनतम समय। उदाहरण के लिए, भूकंप, सुनामी, चक्रवात, ज्वालामुखी आदि।

2. **धीमी शुरुआत:** प्रतिकूल घटना का विकास धीमी गति से होनाय पहले स्थिति विकसित होती हैय दूसरा स्तर आपातकालीन स्थिति हैय तीसरा स्तर एक आपदा है. उदाहरणार्थ, सूखा, गृह-संघर्ष, महामारी आदि।

किसी क्षेत्र के मुख्य खतरे, या उनके प्रति संवेदनशील होना, देश की भौगोलिक स्थिति पर निर्भर करेगा। उदाहरण के लिए, समोआ में, मुख्य खतरे जो आपदाओं में बदल सकते हैं वे हैं:

1. चक्रवात
2. भूकंप
3. सुनामी
4. बाढ़
5. भूस्खलन
6. महामारी

आपके क्षेत्र और पर्यावरण पर आपदाओं का प्रभाव – पिछले एक दशक से समोआ में चक्रवात अक्सर होने वाली आपदा रही हैय प्रत्येक घटना का प्रभाव विनाशकारी रहा है। निम्नलिखित सूची कुछ अप्रिय प्रभावों की पहचान करती है:

1. बुनियादी ढांचे को नुकसान
2. दूरसंचार हानि
3. बाढ़
4. भूस्खलन
5. बिजली व्यवधान
6. पानी की समस्या
7. कृषि क्षति
8. आवास को हानि/क्षति
9. अंतर्देशीय और तटीय पर्यावरण को नुकसान
10. जीवन स्तर, जीवनशैली आदि में व्यवधान।

निष्कर्ष – यह आलेख परिचयात्मक पाठ्यक्रम के रूप में, सामग्री शब्दावली की परिभाषाओं और विवरणों पर केंद्रित हैय आपदा प्रबंधन की अवधारणा को स्पष्ट करनाय आपातकालीन और आपदा स्थितियों के बीच अंतर करनाय प्राकृतिक और मानव-जनित आपदाओं के प्रकारों की पहचान करना और उनका वर्णन करनाय उन मुख्य खतरों को सूचीबद्ध करना और उनका वर्णन करना जिनसे आपका देश असुरक्षित हैय और आपदाओं के लोगों और पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों की पहचान करना और उनका संक्षेप में वर्णन करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Srinivas, H. (2005) Disasters: a quick FAQ- Accessed on 24/01/08 at: http://www.gdrc.org/uem/disasters/1-what_is-html
2. Tsunami was known in Samoa as a Galu Afi but the National Disaster Advisory Committee (DAC) has now adopted SÛNAMI as Samoan translation.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

खरगोन जिले में प्रसिद्ध लोक पर्व संजा माता

डॉ. राकेश ठाकुर*

* सहायक प्राध्यापक (हिंदी) शासकीय महाविद्यालय, कसरावद, जिला खरगोन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – इस शोध पत्र में खरगोन जिले में मनाए जाने वाले संजा माता के लोक पर्व पर विस्तार से चर्चा की गई है। संजा माता का पर्व इस क्षेत्र की समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर का प्रतीक है, जो धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व को दर्शाता है। इस पर्व की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, धार्मिक महत्व, इसे मनाने की विधियाँ, और इससे जुड़े लोक गीतों व कथाओं का विश्लेषण किया गया है। पर्व के सामाजिक प्रभावों पर विशेष ध्यान दिया गया है, जिसमें महिला सशक्तीकरण, सामुदायिक एकता और परंपराओं का संरक्षण शामिल है। इसके साथ ही, वर्तमान समय में इस पर्व की स्थिति और इसे संरक्षित करने की चुनौतियों पर भी चर्चा की गई है। आधुनिकीकरण और शहरीकरण के प्रभाव के बावजूद, संजा माता का पर्व खरगोन जिले में एक महत्वपूर्ण धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन बना हुआ है। इस शोध में पर्व के विभिन्न चरणों का विश्लेषण तालिकाओं और विवरण के साथ प्रस्तुत किया गया है, ताकि इस महत्वपूर्ण लोक परंपरा का व्यापक अध्ययन किया जा सके।

प्रस्तावना – खरगोन जिला मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग में स्थित है और यह क्षेत्र अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और लोक परंपराओं के लिए प्रसिद्ध है। यहां की संस्कृति में लोक पर्वों का विशेष महत्व है, जिनमें से एक प्रमुख पर्व है संजा माता। संजा माता का लोक पर्व मुख्य रूप से महिलाओं द्वारा मनाया जाता है और इसे बड़े उत्साह, आस्था और श्रद्धा के साथ मनाया जाता है। यह पर्व धार्मिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है और खरगोन की पहचान में एक खास स्थान रखता है।

इस विस्तृत अध्ययन में, हम संजा माता के पर्व के विभिन्न पहलुओं को समझने का प्रयास करेंगे। इसमें इसके ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, धार्मिक महत्व, पर्व मनाने की विधियां, सामाजिक प्रभाव, और वर्तमान स्थिति को प्रमुखता दी जाएगी। साथ ही, संजा माता के पर्व से जुड़ी लोक कथाएं, गीत, और परंपराओं का विश्लेषण भी किया जाएगा।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि– संजा माता का पर्व खरगोन क्षेत्र की प्राचीन परंपराओं में से एक है। इसकी उत्पत्ति को लेकर कई किंवदंतियां प्रचलित हैं। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि यह पर्व भील और भिलाला जनजातियों की परंपराओं से प्रेरित है।

एक लोकप्रिय लोककथा के अनुसार, संजा एक साधारण ग्रामीण युवती थी, जिसने अपने गांव और परिवार को महामारी से बचाने के लिए अपने प्राण त्याग दिए। उसके बलिदान की स्मृति में यह पर्व मनाया जाता है। वहीं दूसरी कथा के अनुसार, संजा देवी को पार्वती का रूप माना जाता है जो फसलों और समृद्धि की रक्षा करती हैं। कृषि समाज के साथ इस पर्व की उत्पत्ति मानी जाती है, और यह खरीफ की फसल के दौरान कटाई के बाद उत्सव के रूप में मनाया जाता है।

धार्मिक महत्व– संजा माता को फसलों और समृद्धि की देवी माना जाता है। किसानों के बीच उनकी पूजा से अच्छी फसल और परिवार की समृद्धि की कामना की जाती है। कार्तिक मास में मनाया जाने वाला यह पर्व धार्मिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस अवधि में महिलाएं संजा माता की पूजा करती हैं और उन्हें विभिन्न वस्त्र, फूल, और प्रसाद अर्पित करती हैं। ऐसा माना जाता है कि इस पूजा के परिणामस्वरूप देवी प्रसन्न होती हैं और परिवार को समृद्धि का आशीर्वाद देती हैं।

मनाने का तरीका– संजा माता के पर्व को मनाने के लिए खरगोन के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में खास तैयारियां की जाती हैं। पर्व मनाने का तरीका मुख्य रूप से निम्नलिखित चरणों में बांटा जा सकता है:

1. **संजा स्थापना:** पर्व के पहले दिन घर के आंगन या सार्वजनिक स्थान पर संजा माता की स्थापना की जाती है। संजा माता की आकृति गोबर से बनाई जाती है और इसे रंगीन फूलों और पत्तियों से सजाया जाता है।
2. **दैनिक पूजा:** प्रतिदिन संध्या समय महिलाएं संजा माता की पूजा करती हैं। पूजा में अगरबत्ती, दीप, नारियल, कुमकुम, और फूल अर्पित किए जाते हैं।
3. **गीत और नृत्य:** पूजा के दौरान महिलाएं पारंपरिक गीत गाती हैं और नृत्य करती हैं। संजा माता के गीत विशेष रूप से ग्रामीण जीवन और कृषि से संबंधित होते हैं।
4. **व्रत:** कुछ महिलाएं इस अवधि में व्रत रखती हैं और कठोर नियमों का पालन करती हैं।
5. **समापन उत्सव:** पर्व के अंतिम दिन एक विशाल उत्सव का आयोजन किया जाता है, जिसमें संजा माता की मूर्ति को जलाशय या नदी में विसर्जित किया जाता है। यह समापन पूरे समुदाय के लिए एक महोत्सव की तरह होता है।

सामाजिक प्रभाव– संजा माता का पर्व सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी बेहद महत्वपूर्ण है। यह पर्व समुदाय में सामूहिकता, महिला सशक्तिकरण और पारंपरिक मूल्यों के संरक्षण का संदेश देता है।

1. **महिला सशक्तिकरण:** इस पर्व में महिलाओं की प्रमुख भूमिका होती

है। महिलाएं इसकी समस्त तैयारियों और पूजाओं का नेतृत्व करती हैं, जिससे उनके सामाजिक योगदान और नेतृत्व क्षमता का विकास होता है।

2. **सामुदायिक एकता:** संजा माता का पर्व पूरे समुदाय को एक साथ लाता है। इसमें सभी वर्गों के लोग एक साथ आते हैं और अपने पारंपरिक रीति-रिवाजों का पालन करते हैं।

3. **आर्थिक गतिविधियां:** इस पर्व के दौरान लोक व्यापार में भी वृद्धि होती है। लोग सजावट की सामग्री, कपड़े, पूजा की वस्तुएं आदि खरीदते हैं, जिससे स्थानीय अर्थव्यवस्था को लाभ होता है।

लोक कथाएं और गीत- संजा माता के पर्व से जुड़ी कई लोक कथाएं और गीत हैं, जिनमें देवी की महिमा और ग्रामीण जीवन की वास्तविकता का चित्रण होता है। ये गीत और कथाएं न केवल मनोरंजन के साधन होते हैं, बल्कि इनमें नैतिक और सांस्कृतिक शिक्षाएं भी समाहित होती हैं।

एक प्रसिद्ध कथा के अनुसार, संजा देवी ने एक बार एक सूखे की समस्या से जूझ रहे गांव को अपनी शक्ति से बचाया। गीतों में संजा माता की स्तुति के साथ-साथ किसानों के जीवन और उनके संघर्षों को भी स्थान दिया जाता है।

उदाहरण के लिए, एक लोकप्रिय गीत की पंक्तियां हैं:

'संजा आई, खेत में हरियाली लाई,
धान की बालियों में आई ममता,
किसान के दिल में उम्मीद जगाई।'

तालिका 1: संजा माता पर्व का समय सारणी

दिन	**गतिविधि**
1	संजा स्थापना
2-28	दैनिक पूजा और गीत
29	विशेष अनुष्ठान
30	समापन उत्सव

तालिका 2: संजा माता पूजा में प्रयुक्त सामग्री

सामग्री	**उपयोग**
फूल	अर्पण के लिए
दीप	आरती के लिए
अगरबत्ती	सुगंध के लिए
नारियल	प्रसाद के रूप में
कुमकुम	तिलक के लिए

तालिका 3: संजा माता के प्रमुख गीत

गीत का नाम	**विषय**
संजा री आई	देवी का आगमन
धरती मैया	फसलों की रक्षा
बरसो इंदर	वर्षा के लिए प्रार्थना
गाँव री शोभा	ग्रामीण जीवन

तालिका 4: खरगोन जिले में संजा माता के प्रमुख मंदिर

मंदिर का नाम	**स्थान**
संजा माता मंदिर	भीकनगांव
ग्राम देवी मंदिर	बड़वाह
शक्ति पीठ	सेगांव
कृषि देवी मंदिर	कसरावद

वर्तमान स्थिति और चुनौतियां- आज के समय में संजा माता का पर्व खरगोन जिले में अभी भी प्रमुखता से मनाया जाता है, लेकिन आधुनिकता और शहरीकरण के चलते इसकी पुरानी धरोहर में कुछ बदलाव भी आए हैं।

1. **युवा पीढ़ी की कम रुचि:** शहरों में बसने वाले युवाओं में इस पर्व के प्रति रुचि कम होती जा रही है।

2. **समय की कमी:** लोगों के पास अपने व्यस्त जीवन के कारण इस पर्व को मनाने के लिए समय की कमी हो गई है।

3. **व्यावसायीकरण:** कुछ स्थानों पर पर्व का व्यावसायीकरण हो रहा है, जिससे इसकी पारंपरिक आत्मा को नुकसान हो सकता है।

इन चुनौतियों के बावजूद, स्थानीय लोग और सरकार इस पर्व के संरक्षण के लिए प्रयासरत हैं। विद्यालयों में इसके महत्व पर जागरूकता फैलाने के साथ ही, पर्यटन विभाग भी इसे एक सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्रचारित कर रहा है।

निष्कर्ष- संजा माता का लोक पर्व खरगोन जिले की समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह न केवल एक धार्मिक उत्सव है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक एकता का प्रतीक भी है। इस पर्व के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाने के साथ-साथ पारंपरिक रीति-रिवाजों का संरक्षण भी होता है।

हालांकि आधुनिकता और शहरीकरण के कारण इस पर्व के कुछ पहलुओं में बदलाव आए हैं, फिर भी यह पर्व आज भी अपनी पहचान बनाए हुए है। इस पर्व की परंपराओं को संरक्षित रखने की आवश्यकता है ताकि आने वाली पीढ़ियां भी इसे अपनी सांस्कृतिक धरोहर के रूप में जानें और समझें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यादव, एस. (2018). मध्यप्रदेश की लोक परंपराएँ. भोपाल: साहित्य प्रकाशन।
2. तिवारी, ए. (2020). भारतीय लोक पर्व और उनकी सांस्कृतिक धरोहर. दिल्ली: भारत पुस्तक भवन।
3. शुक्ला, आर. (2015). भील जनजाति और उनके लोक उत्सव. इंदौर: मध्यप्रदेश सांस्कृतिक अध्ययन केंद्र।
4. शर्मा, पी. (2017). भारतीय लोकगीत और लोककथाएँ. जयपुर: राजस्थानी प्रकाशन।
5. वर्मा, के. (2019). मध्यप्रदेश के धार्मिक पर्व और उनके सामाजिक प्रभाव, सांस्कृतिक शोध पत्रिका, 15(2), 45-60.
6. मिश्रा, एम. (2021). भारत के प्रमुख देवी-देवता और उनकी आराधना विधियाँ. वाराणसी: संस्कृत विद्या निकेतन।
7. सिंह, एन. (2016). खरगोन जिले की सांस्कृतिक धरोहर, मध्यप्रदेश इतिहास एवं संस्कृति पत्रिका, 22(3), 90-102.
8. पटेल, डी. (2018). कृषि समाज और उनके लोक उत्सव. उज्जैन: कृषि विद्या प्रकाशन।
9. जोशी, आर. (2020). संजा माता का पर्व: एक अध्ययन, भारतीय लोक संस्कृति शोध जर्नल, 10(4), 32-48.
10. चौहान, एस. (2019). मध्यप्रदेश के लोक पर्व: इतिहास और परंपरा. ग्वालियर: विश्वविद्यालय प्रकाशन।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Government Initiatives For Women Entepreneurs

Rohit Soni* Dr. Jyoti Soni**

***Research Scholar (Commerce) Atal Bihari Vajpayee University, Bilaspur (C.G.) INDIA**
**** Assistant Professor (Commerce) Govt. P.D. Commerce and Arts College, Raigarh (C.G.) INDIA**

Abstract : This article focuses specifically on Government schemes related to women empowerment and entrepreneurship specifically for reducing the challenge of finance and creditin entrepreneur ecosystem.In India, women- ledentreprises are fundamentally changing the entrepreneurial landscape of nation. Government provide an interface for women to empower through training and capacity building.

Introduction - "Empowering women is a pre-requisite for creating a good nation, when women are empowered, society with stability is assured. Empowerment of women is essential as their thoughts and their value systems lead to the development of a good family, good society and ultimately a good nation." -President APJ Abdul Kalam

Entrepreneurship is one such a field where women's participation is very low, although there is a lot of improvement. In 1971, the women constituted only 2% of total entrepreneurs. Now it has increased nearly 10% in the present modern world. The transition from a housewife to a businesswoman is not easy. However, this situation is slowly changing. In present scenario, women in India are showing interest in financial independence and participating in entrepreneurial activity.

In the beginning, area of women activities was considered as 3 K's—Kids, Kitchen and Knitting. After that, as an extension of Kitchen activities 3K's slowly shifted by 3P'swhich were pickle, papad and pan. In the globalization era transformation of 3Ps to modern 3Es energy electronics and engineering with spread of education. But in present scenario, the increase in literacy rate and awareness about government initiatives, industries and trade motivated them to 4E's i.e. Entrepreneur, Energy, Electronics and Engineering. The educated women do not want to limit their lives in the four walls of the house. They demand equal respect from their partners.

Government of India has defined "Women entrepreneurs" as an enterprise owned and controlled by a woman having a minimum financial interest of 51% of the capital and giving at least 51% of the employment generated in the enterprise to woman.

Objective of the study :

1. To understand about Government initiatives for women empowerment and entrepreneurship.
2. To understand schemesrelated to training of women to become self-employed.

Research Methodology- The secondary data used in this study was gathered from websites, journals and other published sources. Focus on various schemes for enhancing women entrepreneurship by Indian government.

Initiatives by Government to support women business owners: Women owned business enterprises are playing a prominent role in society by generating employment opportunities in the country and support next generation female founders and other working professionals.

1. **Startup India**– A flagship program for entrepreneurs, launched by the Government of India on 16th January, 2016 committed towards strengtheningnetworks and communities & activating healthy relation among stakeholders in startup ecosystem. The Government through this initiative aims to empower startups to grow through innovation and design. to facilitate bank loans from Scheduled Commercial Banks (SCBs) between Rs.10 lakh to Rs.1 Crore to at least one Scheduled Caste (SC) or Scheduled Tribe (ST) and one woman per bank branch for setting up a greenfield enterprise in trading, services or manufacturing sector.

Startup India, Department For Promotion of Industry and Internal Trade (DPIIT), conducted the 'Women For Startups: State Workshops' for aspiring and existing women entrepreneurs between November 2022 and November 2023. The initiative was launched with the objective of increasing and enabling women-led startups across the country, through their capacity building and providing them with pitching and fundraising opportunities.

These initiatives provide insights into Government's sensitivity and responsibility towards positioning of women entrepreneur in India.

2. **Mahila shakti Kendra (MSK),** a scheme by Ministry of Women and Child Development was approved in November 2017 as a centrally sponsored scheme to

empower rural women through community participation. It also provides an interface for rural women to approach the government for employment through training and capacity building.

3. **Women entrepreneurship platform scheme** by NITI Aayog for existing and aspiring women entrepreneurs. This platform enables key partnerships to bring useful content,workshops, campaigns for learning and growth of women entrepreneurs.SixMain focus areas decided in decided in this scheme are-

i. Entrepreneur skilling and mentorship
ii. Marketing Assistance
iii. Community and Networking
iv. Funding and financial assistance
v. Incubation and Acceleration
vi. Compliance and Tax assistance

4. **Mahila Udyam Nidhi Programme-** Punjab National Bank introduced this scheme to help women working in small scale industries.

5. **Self-employment lending schemes** developed for self-help groups with different credit lines in it for helping self-help group in work.

6. **Udyogini scheme** is a scheme to support women entrepreneurs in training and development with respect to business planning and move ahead in the career.Government offers a 30% subsidy on loans to make repayment affordable under this scheme. Ministry of Micro Small and Medium Enterprises (MSME) monitoring this initiative.

7. **Mudra Yojana**- Government of India flagship scheme for providing finance to MSME sector employees. It was launched on 8 April 2015 with the aim to create an ecosystem for growth in the micro enterprise sector. Its full form is 'Micro Units Developments and Refinance Agency'. Before applying for a Mudra loan, it is important to have an Udyam Registration Number. The age limit is 18-65 years for women who can avail loan facility under MUDRA Yojana.The interventions under this scheme have been named 'Shishu', 'Kishore' , 'Tarun' and 'Tarun Plus' to signify the stage of growth / development and funding needs of the beneficiary micro unit / entrepreneur and also provide a reference point for the next phase of graduation / growth to look forward to :

Shishu: covering loans upto 50,000/-
Kishor: covering loans above 50,000/- and upto 5 lakh
Tarun: covering loans above 5 lakh and upto 10 lakh
Tarun Plus: covering loans above 10 lakh and upto 20 lakh

With an objective to promote entrepreneuship enthusiam among young and aspiring youth it is ensured that more focus shishu loan and then Kishor tarun and tarun plus categories. On 23rd July 2024, finance Minister of India announced that the existing limit for Mudra loan under PMMY (Pradhan Mantri Mudra Yojana) has been increased from 10 lacs to 20 lacs under a new category Tarun Plus.

- **Skill Upgradation and Mahila Coir Yojana -** A Scheme by Ministry of MSME, Coir Board Department specifically for rural women artisans in regions producing coir fibre. Provide 2 months training in coir spinning for skill development of women artisans engaged in coir industry. Monthly stipend of 3000 rs. available for work.Government also encourage trained women to setup coir units under Prime Minister Employment Generation Programme (PMEGP).
- **Mahila Samridhi yojana**- Run by Ministry of Social Justice and Empowerment. A micro finance scheme for women with rebate in interest. Financial assistance upto the cost of 140000 Rs. is provided.
- **Cent Kalyani Scheme**- to encourage women entrepreneurs to start a new project or upgrade the existing unit. Maximum Finance available under this scheme is 100 Lacs. Women entrepreneurs engaged in manufacturing and service activity for eg.- handloom weaving handicraft, food processing etc. Professionals and small business owners like tailoring, typing etc. are also eligible under this scheme.
- **Annapurna Scheme**- This loan is provided to women in the food catering industry, still establishing their small-scale businesses. The loan allows these women entrepreneurs to avail it as capital requirements like buying equipment and utensils, setting up trucks, etc.Under this funding for female entrepreneurs in India to start business, women can sell packed food items and snacks which is one of the most common businesses that women entrepreneurs scope out and excel in since it is something that housewives have been managing all their lives and are accustomed to.This boosts their sales since they have a chance at better capital and new products to kickstart their business than they could otherwise afford. The loan limit is Rs. 50,000 under the scheme.
- **Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana**Government has set up the PradhanMantri Kaushal Kendras under the Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana across the country. Emphasis has been laid on creating additional infrastructure both for training and apprenticeship for women, flexible training delivery mechanisms such as mobile training units, flexible afternoon batches along with local needbased training to accommodate women and ensuring safe and gender sensitive training environment of women trainers, equity in remuneration and complaint redressal mechanism.
- **Pradhan Mantri Janjati Adivasi Nyaya Maha Abhiyan (PM-JANMAN)** – NIESBUD* and IIE* are implementing the capacity building and entrepreneurship component of the PM-JANMAN Scheme for Particularly Vulnerable Tribal Groups (PVTGs). The Institutes are implementing the scheme in collaboration with the Ministry of Tribal Affairs. During 2023-24, NIESBUD and IIE have trained 36,016 participants, out of which 28,786 are women.
- **Pradhan Mantri Rojgar Yojana (PMRY)-** One of the best schemes socially and financially for entrepreneurs. The focus of this scheme is on creating skill-based, self-employment through women entrepreneurs and smart

minds at work being utilized for monetary independence.This scheme covers both urban and rural areas and was developed through several amendments in cost, eligibility, and subsidy limits. The loan subsidy amount is up to 15% of the project cost with an upper limit of Rs. 12,500 per borrower as a restriction.The scheme applies to all types of ventures in industries, trade, and services. The loan limit for business sector activity is upto ¹ 1 Lac,10 Lac for Joint Ventures, and upto 2 Lac for other activities.

1. The age limit for the Pradhan Mantri Rozgar Yojana (PMRY) is 18–35 years for the general category, and 18–45 years for women, SC/STs, ex-servicemen, and physically handicapped individuals. The applicant must have passed at least 8th grade.
2. The applicant's family income, including the applicant's spouse and parents, must not exceed Rs. 40,000 per year
3. The applicant must have been a permanent resident of the area for at least three years
4. The applicant must not be a defaulter to any bank.

- **Standup India**- Government of India launched the Stand-Up India scheme on 5 April 2016 to promote entrepreneurship amongst women, SC and ST categories, i.e., those section of population facing significant hurdles due to lack of mentorship as well as inadequate and delayed credit. The Scheme facilitates bank loans between Rs. 10 lakhs to Rs. 1 crore to at least one scheduled Caste/ Scheduled Tribe borrower and at least one-woman borrower per bank branch of Scheduled Commercial Banks for setting up Greenfield enterprises in trading, manufacturing and services sector.
- **Dena Shakti Scheme**- Term minimum one year to maximum 3years. This scheme is a combination of term loan and the working capital. Women entrepreneurs are eligible for 25% concessional rates in the loan. The loan limit is 20 lakhs.Any woman involved in retail services, manufacturing, self employed also eligible for finance under this scheme. Fill specified application form and complete procedural requirements.
- **Stree Shakti Package**Under this scheme, women entrepreneurs qualify for a 0.05% concession on loan amounts exceeding 2 lakhs, accompanied by additional benefits. This opportunity is open to all ambitious women business proprietors aspiring to launch their ventures. A key prerequisite is the enrollment of these women entrepreneurs in the Entrepreneurship Development Program (EDP).

Conclusion: The government spread awareness on a regular basis at large scale about various initiatives about women entrepreneur in both urban as well as rural area. TrainingProgrammes, workshops & dedicated platform for women led business ideas addressing needs of entrepreneurs and immensely help them by skills and knowledge required for consistency in work. Still, regular programmes on awareness of schemes and policy initiatives requires huge attention. Because women participation is equally important in economic development. Participation surely gives positive results for the nation's entrepreneurial landscape.

Full forms

NIESBUD- National Institute for Entrepreneurship and Small Business Development is a premier organization of the Ministry of Skill Development and Entrepreneurship

IIE- Indian Institute of Entrepreneurship, an organization that focuses on entrepreneurship development, research, and training for Small and Micro Enterprises (SMEs).

References:-

1. Gupta, N. (2024). Empowering Women, Transforming India: The Ripple Effect of Women-Led Startups. BHARTIYAM INTERNATIONAL JOURNAL OF EDUCATION & RESEARCH, 13(II).
2. Garg, S., & Agarwal, P. (2017). Problems and Prospects of Woman Entrepreneurship – A Review of Literature. IOSR Journal of Business and Management, 19(01), 55–60.https://doi.org/10.9790/487x-1901065560
3. Prof. Usha I & Prof. Pushpalatha R (July, 2021) "Impact of Government Schemes to promote women entrepreneurs and its sustainability", JETIR, July 2021, Vol. 8, Issue 7, ISSN-2349-5162
4. Women for startups. (n.d.). startupindia.gov.in. Retrieved December 25, 2024, from https://www.startupindia.gov.in/content/sih/en/women-for-Startups.html
5. Startup India. (n.d.-b). pib.gov.in. Retrieved December 24, 2024, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=147661
6. SCHEMES FOR WELFARE OF WOMEN. (2022, July 22). [Press release]. Retrieved December 24, 2024, from https://pib.gov.in/Press Relese Detailm.aspx ?PRID=1843808®=3&lang=1
7. Women Entrepreneurship Platform. (n.d.). Retrieved December 22, 2024, from https://wep.gov.in/
8. Ministry of Skill Development and Entrepreneurship. (n.d.). Government Initiatives to Encourage Women Entrepreneurship in India [Press release]. Press Information Bureau. https://pib.gov.in/Press Release IframePage.aspx?PRID=2042546
9. Women Entrepreneurship. (n.d.). https://www.startup india.gov.in/. Retrieved December 21, 2024, from https://www.startupindia.gov.in/content/sih/en/women_entrepreneurs.html
10. indifi. (2024). Top 9 Government Schemes For Women/ Female Entrepreneurs In India. https://www.indifi.com/blog/9-government-schemes-for-women-entrepreneurs-in-india/

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मध्यप्रदेश के नगरीय निकायों की कार्यप्रणाली : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

सोनेलाल लोधी*

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) लोकप्रशासन एवं मानवाधिकार अध्ययन शाला विक्रम विश्विद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – मध्य प्रदेश में नगरीय निकायों की महत्वपूर्ण भूमिका है, जो शहरी क्षेत्रों में स्थानीय स्तर पर सेवाएं प्रदान करते हैं और विकास कार्यों को पूरा करते हैं। मध्य प्रदेश में नगरीय निकायों का गठन मध्य प्रदेश नगर पालिका अधिनियम, 1956 के तहत किया गया है। इन निकायों का मुख्य उद्देश्य शहरी क्षेत्रों में स्वच्छता, जल आपूर्ति, सड़कें बनाना, और सार्वजनिक स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सेवाएं प्रदान करना है। लेकिन, मध्य प्रदेश के नगरीय निकायों को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें सीमित वित्तीय संसाधन, प्रशासनिक अक्षमता, और भ्रष्टाचार शामिल हैं। इन चुनौतियों के कारण, नगरीय निकायों की कार्यक्षमता और प्रभावशीलता प्रभावित होती है।

इसलिए, मध्य प्रदेश के नगरीय निकायों की कार्यप्रणाली का अध्ययन करना आवश्यक है, ताकि उनकी मजबूतियों और कमजोरियों की पहचान की जा सके और उनकी कार्यक्षमता में सुधार लाया जा सके। इस अध्ययन के माध्यम से,मध्य प्रदेश के नगरीय निकायों की कार्यप्रणाली का विश्लेषण करना और उनकी कार्यक्षमता में सुधार करने के लिए सुझाव देना।

शब्द कुंजी – नगरीय निकाय , कार्यप्रणाली , मध्य प्रदेश , नगरीय प्रशासन , विकास ,सार्वजनिक सेवाएं , वित्तीय प्रबंधन , सुशासन।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. मध्यप्रदेश के नगरीय निकायों की संगठनात्मक संरचना का विश्लेषण करना।
2. नगरीय निकायों के कार्यों और जिम्मेदारियों का मूल्यांकन करना।
3. नगरीय निकायों के वित्तीय प्रबंधन का विश्लेषण करना।
4. नगरीय निकायों की कार्यक्षमता और प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।
5. नगरीय निकायों की कार्यप्रणाली में सुधार करने के लिए सिफारिशें देना।
6. मध्यप्रदेश के नगरीय निकायों की तुलना अन्य राज्यों के नगरीय निकायों से करना।
7. मध्यप्रदेश के नगरीय निकायों की कार्यक्षमता में सुधार करने के लिए नवाचारी तरीकों का सुझाव देना।
8. मध्यप्रदेश के नगरीय निकायों के सामने आने वाली चुनौतियों की पहचान करना और उनके समाधान के लिए सिफारिशें देना।

नगरीय निकाय की कार्य प्रणाली

संगठनात्मक संरचना:

1. मेयर: मेयर नगरीय निकाय का मुखिया होता है और उसकी जिम्मेदारी होती है कि वह नगरीय निकाय के कार्यों का संचालन करे और निर्णय ले।

2. पार्षद: पार्षद नगरीय निकाय के सदस्य होते हैं और उनकी जिम्मेदारी होती है कि वह अपने क्षेत्र के नागरिकों की समस्याओं का समाधान करें और नगरीय निकाय के कार्यों में भाग लें।

3. आयुक्त: आयुक्त नगरीय निकाय का प्रशासनिक अधिकारी होता है और उसकी जिम्मेदारी होती है कि वह नगरीय निकाय के कार्यों का संचालन करे और निर्णय ले।

4. विभागीय अधिकारी: विभागीय अधिकारी नगरीय निकाय के विभिन्न विभागों में कार्यरत होते हैं और उनकी जिम्मेदारी होती है कि वह अपने विभाग के कार्यों का संचालन करें।

5. कर्मचारी: कर्मचारी नगरीय निकाय के विभिन्न विभागों में कार्यरत होते हैं और उनकी जिम्मेदारी होती है कि वह अपने विभाग के कार्यों का संचालन करें।

कार्य और जिम्मदारियाँ:

1. स्वच्छता और सार्वजनिक स्वास्थ्य का ध्यान रखना।
2. जल आपूर्ति और सीवरेज व्यवस्था का प्रबंधन करना।
3. सड़कें बनाना और उनकी देखभाल करना।
4. उद्यान और पर्यावरण का संरक्षण करना।
5. सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों का संचालन करना।
6. वित्तीय प्रबंधन करना।
7. निर्णय लेने की प्रक्रिया में नागरिकों की भागीदारी सुनिश्चित करना।
8. पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करना।
9. नागरिकों की शिकायतों का समाधान करना।
10. शहरी क्षेत्रों में विकास को बढ़ावा देना।
11. नागरिकों को बेहतर सेवाएं प्रदान करना।
12. शहरी क्षेत्रों में विकास को बढ़ावा देना।
13. सार्वजनिक सुरक्षा और कानून व्यवस्था का ध्यान रखना।
14. स्वच्छता और सार्वजनिक स्वास्थ्य का ध्यान रखना।

15. जल आपूर्ति और सीवरेज व्यवस्था का प्रबंधन करना।
16. सड़कें और निर्माण कार्य करना।
17. उद्यान और पर्यावरण का संरक्षण करना।
18. सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों का संचालन करना।

वित्तीय प्रबंधन करना:

1. **बजट तैयार करना:** नगरीय निकाय अपने कार्यों के लिए बजट तैयार करता है।
2. **राजस्व संग्रह**: नगरीय निकाय विभिन्न स्रोतों से राजस्व संग्रह करता है, जैसे कि कर, शुल्क, और अनुदान।
3. **व्यय प्रबंधन:** नगरीय निकाय अपने बजट के अनुसार व्यय करता है।
4. **लेखा और ऑडिट:** नगरीय निकाय अपने वित्तीय लेनदेन का लेखा रखता है और ऑडिट करवाता है।
5. **निवेश और बचत:** नगरीय निकाय अपने वित्ता का निवेश और बचत करता है।
6. **ऋण प्रबंधन:** नगरीय निकाय अपने ऋणों का प्रबंधन करता है।
7. **वित्तीय नियोजन:** नगरीय निकाय अपने वित्ता का नियोजन करता है और भविष्य के लिए योजनाएं बनाता है।
8. **वित्तीय प्रतिवेदन:** नगरीय निकाय अपने वित्तीय प्रतिवेदन तैयार करता है और उन्हें सार्वजनिक करता है।

वित्तीय प्रबंधन के माध्यम से, नगरीय निकाय अपने कार्यों को प्रभावी ढंग से करने में मदद करता है और नागरिकों को बेहतर सेवाएं प्रदान करने में सहायक होता है।

निर्णय लेने की प्रक्रिया– नगरीय निकायों में निम्नलिखित चरणों में होती है: 1. समस्या

1. **पहचान:** नगरीय निकाय समस्या की पहचान करता है।
2. **विकल्पों का विश्लेषण:** नगरीय निकाय विभिन्न विकल्पों का विश्लेषण करता है।
3. **निर्णय लेना:** नगरीय निकाय निर्णय लेता है।
4. **कार्यान्वयन:** नगरीय निकाय निर्णय का कार्यान्वयन करता है।
5. **मूल्यांकन:** नगरीय निकाय निर्णय का मूल्यांकन करता है।

निर्णय लेने की प्रक्रिया में निम्नलिखित लोग शामिल होते हैं:

- मेय
- पार्षद
- आयुक्त
- विभागीय अधिकारी
- विशेषज्ञ

निर्णय लेने की प्रक्रिया में निम्नलिखित तरीके अपनाए जाते हैं:

- बैठकें
- चर्चाएं
- मतदान
- सर्वेक्षण
- विशेषज्ञों की राय

निर्णय लेने की प्रक्रिया के लिए निम्नलिखित मानदंड होते हैं:

- पारदर्शिता
- जवाबदेही
- न्याय
- समानता
- सामाजिक हित।

सेवाएं प्रदान करना:

1. जल आपूर्ति सेवा
2. सीवरेज और मल–निकास सेवा
3. सड़कें और निर्माण सेवा
4. सार्वजनिक परिवहन सेवा
5. स्वच्छता और कूड़ा–कचरा प्रबंधन सेवा
6. सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा
7. उद्यान और पर्यावरण सेवा
8. सामाजिक कल्याण सेवा
9. विद्युत और ऊर्जा सेवा
10. अग्निशमन और आपातकालीन सेवा
11. सार्वजनिक सुरक्षा और कानून व्यवस्था सेवा
12. सांस्कृतिक और मनोरंजन सेवाएं।

विकास कार्यों का क्रियान्वयन– नगरीय निकायों द्वारा विकास कार्यों का क्रियान्वयन निम्न चरणों में होता है:

1. **योजना बनाना:** नगरीय निकाय विकास कार्यों के लिए योजना बनाता है।
2. **बजट तैयार करना:** नगरीय निकाय विकास कार्यों के लिए बजट तैयार करता है।
3. **टेंडर और निविदाएं:** नगरीय निकाय विकास कार्यों के लिए टेंडर और निविदाएं जारी करता है।
4. **ठेकेदारों का चयन:** नगरीय निकाय विकास कार्यों के लिए ठेकेदारों का चयन करता है।
5. **कार्यों का क्रियान्वयन:** ठेकेदार विकास कार्यों का क्रियान्वयन करता है।
6. **निरीक्षण और मूल्यांकन:** नगरीय निकाय विकास कार्यों का निरीक्षण और मूल्यांकन करता है।
7. **संशोधन और रखरखाव:** नगरीय निकाय विकास कार्यों का संशोधन और रखरखाव करता है।

विकास कार्यों के क्रियान्वयन में निम्न विभाग शामिल होते हैं: 1. इंजीनियरिंग विभाग 2. वित्त विभाग 3. योजना विभाग 4. ठेकेदारी विभाग 5. निरीक्षण विभाग।

नागरिकों के साथ संवाद –नागरिकों के साथ संवाद नगरीय निकायों के लिए एक महत्वपूर्ण कार्य है, जिसके माध्यम से वे नागरिकों की समस्याओं और जरूरतों को समझते हैं और उन्हें हल करने के लिए कार्य करते हैं।

नागरिकों के साथ संवाद के तरीके:

1. जनसुनवाई
2. सार्वजनिक बैठकें
3. नागरिक संवाद केंद्र
4. फोन और ईमेल के माध्यम से
5. सोशल मीडिया के माध्यम से
6. सर्वेक्षण और फीडबैक फॉर्म
7. नागरिक समूहों और संगठनों के साथ संवाद

नागरिकों के साथ संवाद के लाभ:

1. नागरिकों की समस्याओं को समझने में मदद मिलती है।
2. नागरिकों की जरूरतों को पूरा करने में मदद मिलती है।
3. नागरिकों का विश्वास और सहयोग प्राप्त होता है।
4. निर्णय लेने की प्रक्रिया में नागरिकों की भागीदारी बढ़ती है।
5. नगरीय निकायों की पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ती है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – नगरीय निकायों की भूमिका शहरी क्षेत्रों में विकास को बढ़ावा देने और नागरिकों को बेहतर सेवाएं प्रदान करने में अत्यंत महत्वपूर्ण है। नगरीय निकायों को अपने क्षेत्र में विकास कार्यों का क्रियान्वयन करने, नागरिकों की समस्याओं को हल करने, और सामाजिक कल्याण में सुधार करने के लिए कार्य करना आवश्यक है। इसके लिए नगरीय निकायों को प्रभावी ढंग से कार्य करना आवश्यक है, जिसमें वित्तीय प्रबंधन, निर्णय लेने की प्रक्रिया, सेवाएं प्रदान करना, विकास कार्यों का क्रियान्वयन, और नागरिकों के साथ संवाद शामिल हैं। इन सभी कार्यों को पूरा करने के लिए नगरीय निकायों को उक्त बातों पर ध्यान देना आवश्यक है:

1. पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देना।
2. नागरिकों की भागीदारी को बढ़ावा देना।
3. वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था करना।
4. तकनीकी और प्रशासनिक क्षमता में सुधार करना।
5. नागरिकों की समस्याओं को हल करने के लिए त्वरित और प्रभावी कार्रवाई करना।
6. पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक कल्याण में सुधार करना।
7. नागरिकों को शिक्षित करने और उन्हें जागरूक करने के लिए कार्यक्रम आयोजित करना।

निम्न सुझावो को अपनाकर नगरीय निकाय नागरिकों को बेहतर सेवाएं प्रदान कर सकते हैं और शहरी क्षेत्रों में विकास को बढ़ावा दे सकते हैं। इसके लिए नगरीय निकायों को निरंतर प्रयास करना आवश्यक है और नागरिकों की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए कार्य करना आवश्यक है।

नगरीय निकायों की भूमिका शहरी क्षेत्रों में विकास को बढ़ावा देने और नागरिकों को बेहतर सेवाएं प्रदान करने में अत्यंत महत्वपूर्ण है। नगरीय निकायों को अपने क्षेत्र में विकास कार्यों का क्रियान्वयन करने, नागरिकों की समस्याओं को हल करने, और सामाजिक कल्याण में सुधार करने के लिए कार्य करना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1. 'नगरीय प्रशासन': डॉ. आर. के. शर्मा (हिंदी पुस्तक एजेंसी, 2010)
2. 'नगरीय निकायों का कार्य और दायित्व': डॉ. एम. के. गुप्ता (राजकमल प्रकाशन, 2012)
3. 'नगरीय विकास और प्रशासन': डॉ. एस. के. जैन (अटलांटिक पब्लिशर्स, 2015)
4. 'नगरीय स्थानीय स्वशासन': डॉ. के. सी. सिवारामकृष्णन (राजकमल प्रकाशन, 2013)
5. 'नगरीय योजना और विकास':डॉ. ए. के. दत्ता (अटलांटिक पब्लिशर्स, 2016)
6. 'नगरीय वित्ता और लेखा': डॉ. एस. के. गोयल (राजकमल प्रकाशन, 2014)
7. 'नगरीय आधारभूत संरचना विकास': डॉ. पी. के. सरकार (अटलांटिक पब्लिशर्स, 2017)
8. 'नगरीय पर्यावरण प्रबंधन': डॉ. आर. के. त्रिवेदी (राजकमल प्रकाशन, 2015)

****

Environmental Protection in Brick Industry- A Review of Policy Framework

Pradeep Kumar Joshi* Prof. (Dr.) Sandeep Shandilya**

***Research Scholar, Shri Khushal Das University, Hanumangarh (Raj.) INDIA**
**** Professor (Commerce & Management) Shri Khushal Das University, Hanumangarh (Raj.) INDIA**

Abstract : The brick industry, a vital sector for construction, significantly contributes to environmental degradation through high energy consumption, emissions, and the unsustainable use of natural resources. This paper presents a comprehensive review of the existing **policy framework** aimed at promoting **environmental protection** within the brick industry. It explores key **regulations**, **guidelines**, and strategies implemented globally and regionally to mitigate the industry's environmental impact. By analyzing the effectiveness of these policies, the paper identifies gaps and challenges in their enforcement and offers recommendations for strengthening regulatory measures. The review emphasizes the role of **technology**, **innovation**, and **sustainable practices** in reducing the **carbon footprint** of brick manufacturing. Ultimately, this paper aims to inform **policy-makers**, **industry stakeholders**, and **environmental advocates** on best practices to balance the growth of the brick industry with **environmental sustainability**.
Keywords: Brick industry, environmental protection, policy framework, sustainability, regulations, emissions, energy consumption, carbon footprint, technology, innovation, sustainable practices.

Introduction - India is the second largest manufacturer of bricks in the world after China. The yearly bricks production of the country stands at around 250 million bricks. The approximate number of brick kilns operating in India is around 140,000. This huge number in itself speaks volumes of the mammoth nature of the brick industry of India. India contributes to the 10% of the total bricks production of the world. Mostly these brick kilns are located in the rural and peri- urban areas. These brick kilns are usually found located in clusters around the towns and cities and some times these clusters comprise of hundreds of the brick kilns. As far as the manufacturing process is concerned mostly these Indian kilns follow traditional processes which are manual and non- mechanised in general. The raw material for these brick kilns comprises of the surface soil which is excavated from the agricultural fields and the silt deposited at rivers and tanks. These bricks are given the shape mostly by hand moulding method. These green bricks are then dried in the open areas by keeping them exposed to sun light to get them dried. Thereafter these green bricks are burnt in the kiln making use of the coal, biomass and other waste material like tyre. (Ref: Guidance Document on Environmental Technologies for Brick Kilns in India).

Above features of brick industry of India speaks of the huge dimensions of the brick kiln industry of India. This industry is labour intensive in nature. It is pointed above that mostly, the brick kilns in India are based on the traditional process of production and generally these are non- mechanized in nature and the process of molding them to shape is also mostly manual in nature. It means that this industry provides employment to a large number of persons. According to some estimates around 10 million workers are employed in this gigantic industry. However, considering the fact that India is a highly populated nation and the problem of employment is a big problem which India constantly faces, this labour-intensive nature of the industry helps in addressing this problem to some extent. With this one positive aspect, there is one big issue related with the brick industry of India and it is the amount of population, these brick kilns generate. If an estimate form the United States Environmental Protection agency is to believe, industrial sector accounts for around 15% of the total black carbon emissions in India and out of these emissions, approximately two- third is contributed by the brick kilns alone. The present paper by authors attempts to look into the aspect of environmental protection and energy efficiency in brick industry through the lenses of policy framework.

Review of Literature: In this section of the paper, the review of past studies is being presented.

Null et al., (2024) in their study revealed that the brick industry sector is constantly in the pursuit of making it more sustainable in natureby experimenting with the innovative Novel Organic Brick (NOB) developed from the recycled construction sand and red clay.

Remigioet al., (2024) in their study they focused on the environmental impact of the traditional brick making in the

Goma division. The findings revealed significant degradation of the environment resulting in the wetland and deforestation (100%), landscape deformation (85%) along with the increase in air and water pollution.

Moh.Nanang et al., (2023) in their study they highlighted the potential of red brick industry in improving the welfare of the local community. Further their study revealed about the resilience which the brick industry offers to the economic shocks and contributes to the welfare of the local community.

Sumit, (2023)in his study raised the issue of improvement of kiln efficiency by switch over to the modern "High Draft Brick Kiln," from traditional "Bull Trench Kiln" technology, however other characteristics of the bricks kiln of olden times like labour intensive processes of moulding, drying, staking, firing and cooling continue unabated hence adding to the pollution as usual.

Akim (2022)in his study focused on how the increased demand of bricks in Bangladesh as a result of growing urbanisation has resulted in the increase in the pollution. Tye study revealed that the marginal costs associated with the CO_2 emissions from brick kilns supersede the marginal private costs indicating that the benefits of the brick industry are at the cost of the environment and the society.

Kanika et al., (2022)in their study focused on the traditional wooden house at Munshigani, Bangladesh and how these houses display more sustainable character in comparison to the masonry houses made of brick and cement.

Mai Mohamed et al., (2022) in their study focused on the rapid construction technologies which are characterised by a brick-based unitwhich can self- assemble and install with the help of mechanical assembly. Moreover, these innovative designs and means have a huge potential for sustainable green construction by resorting to the reduction of the use of polluting materials in construction.

Pratibha et al., (2022)in their study focused on the growing trend towards the renewable alternatives in place of traditional fossil- fuel based sources of energy in the construction industry. The study suggested that more and more adoption of such techniques will help in the reduction of the pollution caused by traditional brick industry.

Aditya et al., (2021) in their study pointed that lack of information about recycling technologies acts as a major reason behind waste remaining uncycled in the construction industry.

Rajesh et al., (2021) in their study considered the ruralbrick kiln industry of Western Uttar Pradesh which though is very significant from the economic point of view, adds to the pollution also**.**

Tolulopeet al., (2021)in their study focused on the brick industry of Vhamble district of South Africa. The study considered the polluting character of this industry in the context of the production phases of this traditional brick making industry. The study suggested for adopting the vertical shaft kiln to reduce harm to environment as well as the sustainability of the brick industry.

Gopinath (2018) in this study he focused on the environmental concerns associated with the traditional burnt clay brick manufacturing and its adverse impact on the fertility of the agricultural land.At the same time study suggests to adoptalternative brick manufacturing process based on the industrial by-products comprising of the foundry sand and eco sand along with the cement.

Research Gap: It can be seen from the above review of literature that many studies covering diverse facets and angles associated with the brick kiln industry have been covered in it including certain studies from abroad. The study has covered the aspects like environment conservation, pollution, sustainability, alternative production technologies, labour intensive nature of the brick kiln industry etc. However, almost negligible studies have focused on the regulations in place and the policy efforts to combat the problem of pollution associated with the brick kiln industry so that it can be transformed into a sustainable industry.

Objectives of the Study: Toreview the policy framework with respect to the brick kiln industry of Indiain the context of making these more environment friendly and sustainable in character.

Hypotheses of the Study: The policy framework on national level is well in place, however, the approach and degree of implementation of these regulations vary from state to state in the country.

Research methodology Adopted: The study is conducted with the help of the secondary data obtained from the state and the central government publications particularly related to the policy frame work with respect to the brick industry in the country. The inputs drawn from these secondary data sources are analysed and an attempt has been made to test the hypothesis of the study. The nature of the hypothesis formulated for the purpose of conducting this study is declarative.

Observations and Discussions: In this section of the paper, certain observations are being drawn from the secondary sources and the discussion on them is being presented in the context of the subject matter of the study. Here are certain observations taken from the **Brick Manufacturing and Kiln Establishment (Control) Act, 2013 (Act No. LIX of 2013).**This act came into being on Nov 20, 2013. It is an act to repeal and re-enact the existing law with some modifications for controlling the activities relating to brick manufacturing and kiln establishment. Here are certain excerpts from the Form B related to the License of brick manufacturing reproduced form the Brick Manufacturing and Kiln Establishment (Control) Act, 2013 (Act No. LIX of 2013).

Pont 4.Conditions:

(a) Nofuel wood shall beused in thebrick kilns under anycircumstances.

(b) The Deputy Commissioner himself or UpazilaNirbahi

Officer or any officer fromthe concerned district office of the Department of Environment or concerned Divisional Forest Officer or any officer nominated by him (not below the rank of Forester), may enter into any brick kiln and inspect thereof without notice at any time, interrogate any person or summon any document for inspection of violation or observance of any conditions of license or of any offence punishable under this Act has been committed oris being committed.

(c) Without approval of the Deputy Commissioner, soil shall not be excavated or collected from dead pond or canal or swampland or creek or deep tank or rivers or haorbaor orchar land or fallow land for the purpose of brick manufacturing.

(d) Coal containing sulfur, ash, mercury or similar material shall not be used as fuel, beyond the prescribed standards, in the brick kilns for burning bricks.

(e) Nobrickkiln shall be established within the boundaries ofthe following areas-

(1) Residential, reserved or commercial areas;

(2) City Corporation,Paura savaor Upazila Sadars;

(3) Agricultural lands;

(4) Ecologically Critical Area;

(5) DegradedAirShed.

(f) Nobrickkiln shall be established in the following distances or places, namely:

(1) within minimum 1 (one) kilometer distance, from the boundaries of areas referred to in clause (e);

(2) within 2 (two) kilometers distance from boundaries of public forest;

(3) incaseofbrick kiln establishment on the to porslopeor the surrounding ground surface of any hill or hillock, within minimum ½ (half) kilometer distance from the foot of the said hill or hillock;

(4) in case of brick kiln establishment in hill districts, in any other place other than the place determined by the Hill Districts Environment Development Committee;

(5) within minimum 1 (one) kilometer distance, from any special structure, railways, educational institutions, hospitals and clinics, research institution, or any other similar place or institution.

(g) A register shall be kept regarding counting of burned bricks and sale of bricks.

(h) The conditions of the positional certificate issued by the Department of Environment shall be followed properly and brick kiln shall not be introduced without taking environmental certificate.

(i) Land, more than the size mentioned in the application, shall by no means used for brickkiln.

(j) No activities shall be taken which violates the Actor rules made there under and all provisions of the Act shall be observed.

(k) If there is any violation of any provisions of the license and the Environmental Clearance Certificate the Authority may, at any time, cancel the license.

It can be amply seen from the above regulations of the government with regards to the operation of the brick kiln that there are clear cut directives in place to see to it that the pollution generated by these brick kilns be minimised and the general public has not to face the hardships as a result of such pollution coming out of the brick kilns. Hower, despite these directives in place, the pollution from brick kilns is going on unabated and it forms around 4 to 5% of total industrial pollution in the country as per certain estimates. Various states governments have also taken steps in this direction to check the pollution generated by these brick kilns but still a lot needs to be done. There is an urgent need to switch to modern technologies which are more eco- friendly and sustainable in character. At the same time, it must also have to be kept in mind that switching over to newer technologies and more mechanisation does not result in an adverse impact on the employment generating capacity of this industry as it is a labour-intensive industry and provides the employment to a large number of persons in the country.

In the same continuation, it is worth mentioning the Environment (Protection) Sixth Amendment Rules, 2023. This amendment came into force since Dec 15, 2023. Here, the relevant excerpts are being reproduced from the same document.

In the Environment (Protection) Rules, 1986, in the SCHEDULE-I, in entry at Sl.No.74, for note no.2, the following entry shall be substituted, namely:-

2. The existing brick kilns which are not following zig-zag technology or vertical shaft or use piped natural gasas fuel in brick making shall be converted to zig-zag technology or vertical shaft or use piped natural gas as fuel inbrickmakingwithinaperiodof:

(a) one-year w.e.f. 23.02.2023 in case of kilns located within ten kilometres radius of non-attainment cities; except those located in million plus population cities, NCR districts,and critically & severally polluted areas as categorized by CPCB;

(b) one-year w.e.f.23.02.2024 in case of other kilns. Provided that in case where Commission for Air Quality Management / Central Pollution Control Board /State Pollution Control Board/Pollution Control Committee has separately issued more stringent Norms/time lines, such orders shall prevail.'

This is one of the most recent developments in the context of the tightening of regulations with regard to the brick kilns in India. The pollution generated by these brick kilns is a great challenge and it is the biggest hurdle in bringing the sustainable character to this very important industry in India from the socio-economic point of view. This sixth amendment to the Environment (Protection) Act, 1986 clearly indicates towards the significance of the shift of brick kilns in the country towards the zigzag technology, vertical shaft or use piped natural gas as fuel in brick making process. This initiative was much in need to curb the

pollution generated by the brick kilns in the country. So, we can see that the proper regulations regarding the functioning of the bricks and the brick manufacturing process are well in place but still remains to be seen that how effectively these regulations are implemented.

Here one more important notification from the Ministry of Environment, Forest and Climate Change is being cited to further highlight the government regulations and policies on brick kiln in India. Here are certain excerpts from the notification dated Feb 22, 2022 by the same ministry.

In the Environment (Protection) Rules, 1986, in the SCHEDULE-I, for entry at Sl. No.74, the following entry shall be substituted, namely: -

"74	Brick Kilns	Particulate matter in stack Emission	250 mg/Nm³
		Minimum stack height (Vertical Shaft Brick Kilns) - Kiln capacity less than 30,000 bricks per day - Kiln capacity equal or more than 30,000 bricks per day	14 m (at least7.5m from loading platform) 16 m (at least8.5m from loading platform)
		Minimum stack height (Other than Vertical Shaft BrickKilns) - Kiln capacity less than 30,000 bricks per day - Kiln capacity equal or more than 30,000 bricks per day	24 m 27m

1. All new brick kilns shall be allowed only with zig-zag technology or vertical shaft or use of Piped Natural Gas as fuel in brick making and shall comply to these standards as stipulated in this notification.
2. The existing brick kilns which are not following zig-zag technology or vertical shaft or use Piped Natural Gas as fuel in brick making shall be converted to zig-zag technology or vertical shaft or use Piped Natural Gas as fuel in brick making within a period of (a) one year in case of kilns located within ten-kilometre radius of non-attainment cities as defined by Central Pollution Control Board (b) two years for other areas. Further, in cases where Central Pollution Control Board/State Pollution Control Boards/Pollution Control Committees has separately laid down timelines for conversion, such orders shall prevail.
3. All brick kilns shall use only approved fuel such as Piped Natural Gas, coal, fire wood and/or agricultural residues. Use of pet coke, tyres, plastic, hazardous waste shall not be allowed in brick kilns.
4. Brick kilns shall construct permanent facility (port hole and platform) as per the norms or design laid down by the Central Pollution Control Board for monitoring of emissions.
5. Particulate Matter (PM) results shall be normalized at 4% CO_2 as below:
   PM (normalized) = (PM (measured)x 4%)/ (% of CO, measured in stack), no normalization in case CO_2 measured > 4%. Stack height (in metre) shall also be calculated by formula H=14Q03 (whereQ is SO_2 emission rate in kg/hr), and the maximum of two shall apply.
6. Brick kilns should be established at a minimum distance of 0.8 kilometre from habitation and fruit orchards. State Pollution Control Boards/Pollution Control Committees may make siting criteria stringent considering proximity to habitation, population density, water bodies, sensitive receptors, etc.
7. Brick kilns should be established at a minimum distance of one kilometre from an existing brick kiln to avoid clustering of kilns in an area.
8. Brick kilns shall follow process emission/fugitive dust emission control guidelines as prescribed by concerned State Pollution Control Boards/Pollution Control Committees.
9. The ash generated in the brick kilns shall be fully utilized in-house in brick making.
10. All necessary approvals from the concerned authorities including mining department of the concerned State or Union Territory shall be obtained for extracting the soil to be used for brick making in the brick kiln.
11. The brick kiln owners shall ensure that the road utilized for transporting raw materials or bricks are paved roads.
12. Vehicles shall be covered during transportation of raw material/bricks".

Above excerpt from the Environment (Protection) Sixth Amendment Rules, 2023 clearly present the strict rules and regulations in place for the protection of environment from the pollution generated by the brick kilns in India. The minimum stack height with respect to the kiln capacity are mentioned in these rules. There is emphasis on zig-zag technology or vertical shaft or use of Piped Natural Gas as fuel in brick making. There are guidelines for establishing these brick kilns at a stipulated distance from the human habitation. Moreover, to avoid clustering of the kilns, the new brick kiln is prohibited to be established within area of one kilometre from the existing brick kiln.

Conclusion: It can thus be seen that brick industry is an extremely vital industry particularly in the context of a leading developing country like India where a lot of construction work for different developmental and other general purposes is always in need. However, the pollution generated form these brick kilns is also a serious threat from the brock industry. It contributes significantly to the overall industrial pollution in India. The brick industry is a huge employment generator as it is predominantly a labour-intensive industry. The estimates of the number of people employed by various agencies vary from 10 million and above. This industry needs to flourish as it is closely related with the socio-economic development of our country but not at the cost of the environment and harm to the environment. The paper has tried to develop certain insights to the policy frameworks

with regards to the brick kilns in the country. It is interesting to note that very recently within a span of one decade central government has issued certain rules and regulations to check the pollution caused by these brick kilns. There are guidelines to stick to the specifications so as to minimise the pollution. In this paper a particular mention of the two such regulations have been made.Thes are Brick Manufacturing and Kiln Establishment (Control) Act, 2013 (Act No. LIX of 2013) and Environment (Protection) Sixth Amendment Rules, 2023. Though there are rules and regulations in place regarding the functioning of these brock kilns and the Brick Manufacturing and Kiln Establishment (Control) Act came into existence around one decade before but on the execution and implementation fronts, various irregularities from state to state can be noticed. These all-lacklustre developments have made it necessary for the government to introduce Environment (Protection) Sixth Amendment Rules, 2023. Now it remains to be seen that how successful these amendments come out to be in combating the serious challenge of pollution generating brick kilns in India. There is an urgent need to restructure the brick making process which is mostly carried out through the traditional ways and means in the country. The alternative and improved methods of production must be introduced and developed with the feature of sustainability in their core.

References:-

1. Guidance Document on Environmental Technologies for Brick Kilns in India, Enzen Global Solutions, 2023.
2. Null, A. I., Null, A. I., &Madhumathi, A. (2024). Developing a low carbon brick for residential building construction. *Proceedings of the Institution of Civil Engineers*, 1-9. doi:10.1680/jensu.23.00065
3. Remigio, T., Edward, A., Andrew, M., & Alice, N. (2024). Understanding the nexus between traditional brick-making, biophysical and socio-economic environment of Goma Division, Mukono Municipality, Central Uganda. *Journal of Degraded and Mining Lands Management, 11*(4), 6367-6378. doi:10.15243/jdmlm.2024.114.6367
4. Moh. Nanang, S., &FenscaFenolisa, L. (2023). Prospek Perkembangan Usaha Batu Bata Merah: Peluang Dan Analisis (StudiKasusPada Usaha Batu Bata Merah Kelurahan MajenerKatapop 1). *JurnalJendelaIlmu*. Retrieved from https://jurnal.lpmiunvic.ac.id/index.php/ji/article/download/156/118doi:10.34124/ji.v4i2.156
5. Sumit, A. (2023). Technology used in Clay Brick Making Process in India on Brick Kiln Investment and Business Feasibility and Sustainability in View of Environment Condition. *International Journal for Research in Applied Science and Engineering Technology*. doi:10.22214/ijraset.2023.57647
6. Akim, M. R. (2022). CO2 Emission from Brickfields in Bangladesh: Can Ethical Responsibility byDoing Reduce Level of Emission? *Athens journal of social sciences, 9*(3), 255-272. Retrieved from https://doi.org/10.30958/ajss.9-3-3 doi:10.30958/ajss.9-3
7. Kanika, B., & Sheikh Muhammad, R. (2022). Comparing Social Sustainability: Traditional Practices in Wooden Houses with Contemporary Practices in Masonry Houses in Munshiganj. *ECS transactions, 107*(1), 6371-6380. doi: 10.1149/10701.6371ecst
8. Mai Mohamed, M., & Mohammed El-Sayed, H. (2022). Self-Bricks in the Field of Rapid Construction. *IOP Conference Series: Earth and Environmental Science,1056*(1),012016-012016.doi:10.1088/1755-1315/1056/1/012016
9. Pratibha, S., Sharma, V., Sandeep, K. S. G., Savitha, H. S., Ashank, U., &Srivastava, N. (2022). Green Energy Bricks: A Step Towards Smart and Sustainable Structures. *Ecology, Environment and Conservation*, 275-278. doi:10.53550/eec. 2022.v28i02s.045
10. Aditya, K., Manoj Kumar, S., Naresh Kumar, S., & Shreyance,S.(2021). A Comparisonon Modern Construction Techniques for Different Components of Building Structure.*InternationalJournalofAdvance Research and Innovative Ideasin Education, 7*(2), 1499-1502. Retrievedfrom https://ijariie.com/Admin UploadPdf/A_Comparison_on_Modern_ Construction_ Techniques_for_Different_Components_of_ Building_Structure_ija riie14071.pdf
11. Rajesh, K., &Amit, S. (2021). An Empirical Study on Brick Industry of India: A Perspective of Cost Analysis. *Asian Journal of Management, 12*(3),279-285.doi: 10.52711/2321-5763.2021.00042
12. Tolulope, E. A., Joshua, N. E., John, O. O., & Stuart, J. P. (2021). Traditional Brick Making, Environmental and Socio-Economic Impacts: A Case Study of Vhembe District, South Africa. *Sustainability, 13*(19), 10659. doi:10.3390/SU131910659
13. Gopinath, R. (2018). Manufacturing of Bricks using Eco Sand and Foundry Sand. *International journal of engineering research and technology, 7*(4). Retrieved from https://www.ijert.org/research/manufacturing-of-bricks-using-eco-sand-and-foundry-sand-IJERTV7IS040031.pdf
14. Brick Manufacturing and Kiln Establishment (Control) Act, 2013 (Act No. LIX of 2013)
15. Environment (Protection) Sixth Amendment Rules, 2023.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

गोदान उपन्यास में कृषक-पीड़ा

जगदीश सिंह*

* सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, खानपुर, झालावाड (राज.) भारत

शोध सारांश – स्वातंत्र्योत्तर पूर्व हिन्दी उपन्यास की विकास यात्रा में प्रेमचन्द का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा है। साहित्य के व्यापक उद्देश्य में लोकमंगल की कामना रहती है और साहित्य की विकास प्रक्रिया में मनुष्य का महत्त्व होता है। जिसके अन्तर्गत समाज के ऊँचे-नीचे सभी वर्ग आ जाते हैं। मनुष्य चाहे किसी भी वर्ग या सम्प्रदाय काहो उसके जीवन जीने की प्रक्रिया एक जैसी होती है। इसी प्रक्रिया से प्रेमचन्द भी प्रभावित थे। प्रेमचन्द गाँधीवादी आदर्श जीवन प्रणाली तथा सत्य-अहिंसा के प्रबल समर्थक होते हुए भारतीय संस्कृति के मूलभूत आधारों-त्याग, संयम, उदारता, आदर्श, सेवा, परोपकार आदि जीवन-दर्शन के प्रेरक तत्त्वों में विश्वास करते थे। इन्हीं प्रेरक तत्त्वों का पूर्ण विकास भारतीय कृषक में मानते हुए प्रेमचन्द ने 1936 ई. में गोदान उपन्यास की रचना की। गोदान उपन्यास प्रेमचन्द की परिपक्वजीवन-दृष्टि का परिणाम है। जो कृषक पीड़ा बनकर उभरी है। ग्रामीण जीवन का ऐसा यथार्थ एवं प्रामाणिक चित्रण गोदान उपन्यास में हुआ कि इसे सर्वत्र सराहना प्राप्त हुई है।

प्रस्तावना – सामाजिक स्तरीकरण और भारतीय कृषक के बीच सम्बन्ध बहुत जटिल है। इसे प्राय: बहुत ही सरल भाषा में व्यक्त किया जा सकता है। भारतीय किसान से ही भारत की अर्थव्यवस्था का ढांचा सुचारू रूप से चलता रहा है और चलता रहेगा। आर्थिक विषमता समाज का एक आवश्यक पक्ष बन गया है। इस पक्ष के आधार पर ग्रामीण समाज मजदूर और जमींदार दो वर्गो में विभाजित हो गया है। किसी भी क्षेत्र की सम्पत्ति उच्चवर्ग के मुट्ठीभर लोगों के हाथो में सिमट कर रह गई है जो इसी सम्पत्ति के बल पर गरीब किसान का शोषण करने से नहीं थकते हैं। आर्थिक विषमता ने समाज को एक ऐसे कटघरे पर खडा कर दिया है कि किसानवर्ग न चाहते हुए भी शोषण का शिकार होता है।

प्रेमचन्द ने गोदान उपन्यास में कृषक वर्ग की आर्थिक विषमता, भुखमरी, जमींदार वर्ग के अत्याचारों का बहुत ही सटीक चित्रण किया है। ग्रामीण जीवन यापन करने वाला किसान पूर्णत: खेती पर निर्भर रहता है लेकिन वर्ष भर कार्य करने के बाद उसको रोटी, कपडा भी उपलब्ध नहीं हो पाता तो उसकी थकान की कराह एक पीड़ा के रूप में बाहर निकलती है। गोदान उपन्यास तो कृषक जीवन की महागाथा है जिसमें किसान के जीवन की विशद् व्याख्या की गई है। किसान के जीवन के प्रत्येक पक्ष को बारीकी से उकेरा गया है। प्रेमचन्द के गोदान उपन्यास का फलक ग्रामीण होते हुए विराट है। इसमें आंचलिकता के साथ चेतनागत बौद्धिकता का समावेश है। जिसके माध्यम से गाँव की गरीबी, गुलामी, पीड़ा, उत्पीडन जनता में व्याप्त भय, सामाजिक विषमताओं तथा गाँव में होने वाले क्रिया-कलापों का जीवन्त एवं विश्वसनीय चित्रण हुआ है। गोदान उपन्यास ग्राम्य जीवन के किसी कल्पित आदर्श को नहीं बल्कि व्यक्ति के भोगे हुए यथार्थ को प्रकट करता है।

गोदान में कृषक पीड़ा – प्रेमचन्द ने साहित्य को जीवन की व्यापक अनुभूति के साथ सम्बद्ध करके देखा था। उन्होंने उसे सुरूचि जागृत करने वाला, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति देने वाला, सौन्दर्यबोध का उन्मेष करने वाला तथा शक्ति और गति उत्पन्न करने वाला माना था। इसलिए उनके उपन्यासों में व्यक्ति चेतना, समाज-मंगल, यथार्थ की अनुभूति, आदर्श की कल्पना आदि विशेषताओं का समावेश हुआ है। इन्हीं विशेषताओं का उद्घाटन करने वाला उनका सबसे अन्तिम उपन्यास गोदान है जिसमें उन्होंने कृषक वर्ग के जीवन के उतार चढ़ाव, मान-मर्यादा, सामाजिकता तथा भावनात्मक सम्बन्धों को प्रकट किया है। गोदान कृषक जीवन की गाथा है जिसमें मुख्य पात्र किसान होरी है जिसके इर्द-गिर्द सारा वातावरण घटित होता है। प्रत्येक घटना का जुड़ाव मूल पात्र होरी से होता है। कृषक के जीवन की प्रत्येक पीड़ा को तथा विपन्नता की विवशता को होरी के माध्यम से प्रकट करते हुए प्रेमचन्द ने होरी के माध्यम से किसान की धैर्यशीलता को प्रकट किया है। जमींदार रायसाहब अमरपाल सिंह बेलारी गाँवके किसानों से लगान वसूल करते हैं। जमींदार का किसी से भी भावनात्मक सम्बन्ध नहीं होता, किसान के द्वारा मेल-जोल रखने पर भी वह लगान में छूट नही देता, होरी भी यह जानता है परन्तु अपनी गरीबी की विवशता के कारण यह सब करना पड़ता है। जमींदार से अधिक मेल-जोल बढ़ाने का होरी की पत्नी धनियां के द्वारा विरोध करने परवह अपनी विवशता को प्रकट करता हुआ कहता है – 'तू जो बात नहीं समझती उसमें टांग क्यों अड़ाती है भाई। मेरी लाठी दे दे और अपना काम देख। यह इसी मिलते-जुलते रहने का परसाद है कि अब तक जान बची हुई है, नहीं कहीं पता न लगता कि किधर गये। गाँव में इतने आदमी तो हैं, किस पर बेदखली नहीं आयी किस पर कुडकी नहीं आयी ? जब दूसरे के पाँवो-तले अपनी गर्दन दबी हुई है, तो उन पाँवों को सहलाने में ही कुशल है।'[1]

धनियां को अपने जीवन में अच्छी तरह अनुभव हो जाता है कि जमींदार की कितनी ही खुशामद की जाये, कितनी ही कतर-ब्योंत की जाये, कितना ही पेट-तन काटा जाये लेकिन लगान बेवाक होना मुश्किल है इसलिए वह होरी को भी आगाह करती रहती है। स्वतंत्रता पूर्व किसान सिर्फ जमीन का मालिक नहीं एक मजदूर था जो पूरी साल खेतों में काम करता और वर्ष के

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अन्त में उसको रोटी-कपड़ा भी नहीं मिल पाता। रोटी-कपड़ा के अलावा किसान को और अभावों की पूर्ति की अभिलाषा करना एक शाप से कम नहीं होता था। भारतीय संस्कृति की प्रतीक गाय किसान के घर की शोभा को बढाने के लिए होती है। होरी के दिल में यह इच्छा जाग्रत होती है। होरी सोचता है – 'गऊ से ही तो द्वार की शोभा है। सबेरे-सबेरे गऊ के दर्शन हो जायें तो क्या कहना ! न जाने कब यह साध पूरी होगी, कब वह शुभ दिन आयेगा।'[2] लेकिन होरी की यह इच्छा उसके जीवन के अन्तिम चरण तक भी पूरी नहीं होती है। वह एक-एक पैसा बचाता है। कमर-तोड़ मेहनत करता है। उस गाय की इच्छापूर्ति के लिए अपनी शरीर की भी परवाह नहीं करता है और वह उम्र से पहले ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। प्राण निकलते समय भी उसकी यही इच्छा उभर कर पाठक वर्ग के सामने आती है। जब होरी का पुत्र गोबर होरी के पास आता है तब होरी कहता है – 'तुम आ गये गोबर ? मैने मंगल के लिए गाय ले ली है। वह खड़ी है, देखो।'[3]

होरी के जीवन में इस इच्छा की पूर्ति नहीं हुई और अन्त समय पर भी नहीं हुई। भारतीय परम्परा में मनुष्य के अन्त समय में गो-दान किया जाता है जिससे व्यक्ति के द्वारा किये गये समस्त पाप कट जायें लेकिन होरी की गरीबी की विवशता देखो- 'धनिया यन्त्र की भांति उठी, आज जो सुतली बेची, उसके बीस आने लायी और पति के ठण्डे हाथ में रखकर सामने खडे दातादीन से बोली- 'महाराज घर में गाय है, न बछिया, न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गो-दान है।'[4]

भारतीय किसान मेहनत करने पर भी कर्ज में डूबा रहता है। इसका जिम्मेदार जमींदार वर्ग होता है। जमींदार वर्ग की मानसिकता इतनी विकृत हो गई है कि किसान का शोषण करते हुए नहीं थकती। इस शोषण का परिणाम भी उसको पता होता है लेकिन अपने भोग-विलास का आदि होने के कारण उस परिणाम की चिन्ता नहीं करता। जमींदार रायसाहब अमरपाल सिंह किसान की आह और पीड़ा के कारण जमींदार वर्ग के पतन का अनुमान करते हुए कहता है- लक्षण कह रहे हैं कि बहुत जल्द हमारे वर्ग की हस्ती मिट जाने वाली है। मैं उस दिन का स्वागत करने के लिए तैयार बैठा हूँ। ईश्वर वह दिन जल्दी लाये। वह हमारे उद्धार का दिन होगा।'[5]

किसान वर्ग भाग्यवादी होता है। वह कर्म तो करता है लेकिन भाग्य पर अधिक विश्वास करता है। भारतीय मान्यता रही है कि मानव को अपने पूर्वजन्म के कर्मो से वर्तमान का भाग्य संचालित होता है। और वर्ग चाहे इसकी परवाह न करे लेकिन किसान की इस मान्यता में पक्की आस्था होती है। सुख-दु:ख, गरीबी-अमीरी, स्वास्थ्य-रोग आदि को भाग्य की देन मानता है। वह किसी भी परिस्थिति में इसका प्रतिवाद नहीं करना चाहता और न ही किसी को प्रतिवाद करने देता है। गोदान का पात्र होरी भी पूर्णत: भाग्यवादी है जो अपने पुत्र गोबर द्वारा भाग्य का प्रतिवाद करने पर उसे रोकते हुए कहता है –'यह बात नहीं है बेटा, छोटे-बडे भगवान के घर से बनकर आते हैं। सम्पत्ति बड़ी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्व जन्म में जैसे कर्म किये हैं, उनका आनन्द भोग रहे हैं। हमने कुछ नहीं संचा तो भोगें क्या ?'[6]

पूँजीपति वर्ग के ऊपर कुछ भी मर्यादा मान्य नहीं होती है वह सब भी गरीब किसान पर ही लागू होती है। किसान के सभी कार्यो को एक मर्यादाहीन समझा जाता है। प्रथम तो कृषक को जमींदार कर्जे से ही राहत नहीं मिलती उसके बाद समाज के कुछ सम्पन्न लोग भी गरीब हो आकर दबाने लगते है। और वह ऐसा करते है कि गरीब अपनी पीड़ा की आह को बाहर निकलने से रोक नहीं पाता है। होरी का बेटा गोबर झुनिया को अपनी जीवन संगिनी चुनता है तो गाँव के लोगों को बडा आघात लगता है। बिरादरी वाले होरी पर सौ रूपये और तीस मन अनाज का डाँड लगाते है। इस डाँड को सुनकर धनिया बहुत पीड़ित होती है और वह पंचायत में अपनी पीड़ा व्यक्त करते हुए कहती है- 'पंचो, गरीब को सताकर सुख न पाओगे, इतना समझ लेना। हम तो मिट जायेंगे, कौन जाने इस गाँव मे रहें या न रहें लेकिन मेरा सराप तुमको भी जरूर लगेगा। मुझसे इतना कड़ा जरीवाना इसलिए लिया जा रहा है कि मैंने अपनी बहू को क्यों अपने घर में रखा। क्यों उसे घर से निकालकर सड़क की भिखारिन नहीं बना दिया। यही न्याय है- ऐं ?'[7]

भारतीय किसान प्रत्येक अर्थदण्ड सहन करने को तैयार रहता है लेकिन अपनी बिरादरी से बेदखली नहीं चाहता। सब का पालन करना भारतीय किसान के जिम्मे होता है। पूँजीपतियों के लिए कुछ भी मान्य नहीं होता। किसान तिल-तिल मरता है लेकिन समाज को कभी भी विखरने नहीं देता। अपने अन्तर्मन की पीड़ा का दमन करके वह समाज हित का कार्य करता है। बिरादरी द्वारा डाँड़ लगाने पर होरी की मन:स्थिति भी ऐसी होती है – 'बिरादरी का वह आतंक था कि अपने सिर पर लादकर अनाज ढो रहा था, मानो अपने हाथों अपनी कब्र खोद रहा हो। जमींदार, सरकार, साहूकार किसका इतना रोब था ? कल बाल-बच्चे क्या खायेंगे, इसकी चिन्ता प्राणों को सोखे लेती थी, पर बिरादरी का भय पिशाच की भांति सिर पर सवार आँकुस दिये जा रहा था। बिरादरी से पृथक जीवन की वह कल्पना ही न कर सकता था।'[8]

गरीब किसान की गृहस्थी में कोई काम भी अच्छा और समय से नहीं होता। जीवन भर वह अपमान और निराशा के गर्त में धँसता चला जाता है। उसको ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है किवह स्वयं भी जिसको करना अपमान समझता है। होरी की छोटी बेटी रूपा शादी लायक है। होरी के पास पैसा नहीं है। कर्ज में डूबा हुआ है। उसके सामने अपने खेत बेचने के आलावा दूसरा रास्ता नजर नहीं आता। इसी निराशा को भांपकर पण्डित दातादीन होरी को अपनी बेटी को बेचने की सलाह देता है। वह भी उस अधेड़ रामसेवक को जो होरी से दो चार साल ही छोटा होता है। लेकिन होरी की विवशता यह करने को मजबूर होती है। यह सब करते हुए वह स्वयं भी पीड़ित है। होरी अपनी स्थिति का आंकलन करते हुए कहता है – 'ऐसे आदमी से रूपा के ब्याह करने का प्रस्ताव ही अपमान जनक था। कहाँ फूल सी रूपा और कहाँ वह बूढ़ा ठूँठ! जीवन में होरी ने बड़ी-बड़ी चोट सही थी, मगर यह चोट सबसे गहरी थी। आज उसके ऐसे दिन आ गये कि उससे लडकी बेचने की बात कही जाती है और उसमें इनकार करने का साहस नहीं है। ग्लानि से उसका सिर झुक गया।'[9] होरी अपनी पीड़ा को दबाते हुए यह काम भी करता है। किसान के जीवन में जो कार्य त्याज्य होने चाहिए वह भी करने पड़ते हैं। गोदान उपन्यास में शुरू से लेकर अन्त तक प्रेमचन्द ने होरी के माध्यम से कृषक-पीड़ा को बखूबी चित्रित किया है। जिससे सम्पूर्ण कृषक-वर्ग को गुजरना पड़ता है।

निष्कर्ष – प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास गोदान में कृषक मन के द्वन्द्व, पीड़ाओ और विद्रोह के भावों को बडी ही गहनता से उकेरा है। कृषक-जीवन की प्रत्येक समस्या को पाठक के सामने यथार्थ रूप में रखा है। लेकिन समस्याओं का कोई भी समाधान उन्होंने प्रकट नहीं किया है। यह विषय प्रेमचन्द ने पाठक वर्ग को छोड़ा है कि इस भारतीय कृषक जीवन से कितना संतुष्ट होता है और कितना उसका विरोध करने की क्षमता विकसित कर पाता है। गोदान में कृषक के तीव्र विक्षोभ के साथ उसके संघर्षशील जीवन की सच्चाई को अभिव्यक्त किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 5
2. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 6
3. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 319
4. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 320
5. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 14
6. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 17
7. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 111
8. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 112
9. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 308

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Coverage and Effectiveness of the Ayushman Bharat Scheme: A Comprehensive Analysis of Fund Utilisation, Ayushman Card Registration, and Beneficiary Impact

Mohammad Mehfooz* Dr. Poonam Singh**

*Research Scholar, S.R.S. Post Graduate College, Bareilly (U.P.) INDIA
** Professor (Economics) S.R.S. Post Graduate College, Bareilly (U.P.) INDIA

Abstract : Ayushman Bharat- PradhanMantri Jan Arogya Yojana (AB-PMJAY) is a major healthcare initiative by the Government of India, designed to provide financial support for secondary and tertiary healthcare services to vulnerable populations. Launched in 2018, Ayushman Bharat is one of the world's largest health insurance schemes, aimed at making healthcare accessible and affordable for economically disadvantaged groups in India.

This research paper looks at how the scheme has covered people, how funds have been allocated, the creation of Ayushman cards, and its impact on beneficiaries from 2018 to 2024. By analysing government spending, fund distribution across states and union territories (UTs), the number of Ayushman cards issued, and data from specific districts, this paper provides a detailed evaluation of the scheme's effectiveness. The study also focuses on how well funds have been utilised, the performance of different states, and differences in healthcare access between regions.

The paper uses a combination of secondary data (from government sources) and primary data (from field surveys) to draw conclusions. The findings suggest that while Ayushman Bharat has made significant progress in improving healthcare access, there are still important areas for improvement. These include strengthening healthcare infrastructure, raising awareness about the scheme, and better allocation of resources to ensure the scheme reaches all those in need and functions at its full potential.

Keywords: Ayushman Bharat, AB-PMJAY, healthcare, fund utilisation, beneficiary coverage.

Introduction - India's healthcare system has long been characterized by disparities in access, affordability, and quality, particularly for rural and economically disadvantaged populations. The Ayushman Bharat PradhanMantri Jan Arogya Yojana (AB-PMJAY) was introduced to address these gaps by providing health insurance coverage to over 50 crores individuals from low-income families. This ambitious scheme offers a financial safety net, covering hospitalisation costs up to Rs5 lakh per family annually, and focuses on ensuring universal health coverage (UHC) through secondary and tertiary care services.

This research paper delves into various dimensions of the Ayushman Bharat scheme, focusing on financial allocations, state-level variations, and Ayushman card registrations. Additionally, it examines the utilisation of funds, efficiency in claims processing, and the real-world impact of the scheme on beneficiaries, particularly in districts like Shahjahanpur, Uttar Pradesh. The data from the Ministry of Health and Family Welfare, Government of India, serves as the foundation for this analysis.

Background of Ayushman Bharat Scheme: Ayushman Bharat is designed to provide free healthcare services to over 10 crores families, representing approximately 40% of India's population. The scheme has two primary components:

1. PradhanMantri Jan Arogya Yojana (PMJAY): It provides health coverage of up to Rs5 lakh per family per year for secondary and tertiary care hospitalisation.
2. Health and Wellness Centres (HWCs): Aiming to provide comprehensive primary healthcare, the government intends to establish 1.5 lakh HWCs across the country to ensure access to essential healthcare services.

The success of PMJAY largely depends on efficient fund distribution, the creation of Ayushman cards, awareness campaigns, and infrastructure capacity at the local and state levels.

Methodology: The analysis in this paper is based on secondary data collected from the Ministry of Health and Family Welfare, Government of India, and supplemented by primary survey data collected from of 300 respondents from Shahjahanpur, a district in Uttar Pradesh. The data sets under review include:

1. Government expenditure in the Ayushman Bharat

Scheme (fund utilisation, state-wise distribution, etc.)
2. Ayushman card registrations (state-wise, financial year-wise)
3. District-level implementation data, focusing on Shahjahanpur, including beneficiary verification, hospital capacity, claims processing, and healthcare access.

Government Expenditure and Fund Utilisation: The table 1.1 presents the data on government expenditure, reveals the varying levels of fund releases and utilisation rates across different financial years. The fund release from the central government has fluctuated, with a sharp increase in 2022-23, when the allocated budget was Rs6412 crores, and utilisation rate of 94.31%. However, the utilization rates in the initial years (2018-2021) were comparatively lower, highlighting issues of fund absorption and administrative challenges.

Table1.1 - Government Expenditure in India (AB-PMJAY) (in crores of Rupees)

Financial Year	Budget Estimate	Revised Estimate	Funds released as part of Central share	Utilization Rate (Funds Released / Budget Estimate)*100
2018-19	2400.00	2160.00	1849.55	77.06%
2019-20	6400.00	3200.00	2992.94	46.41%
2020-21	6400.00	3100.00	2544.12	39.06%
2021-22	6400.00	3199.00	2940.65	45.63%
2022-23	6412.00	6412.00	6048.63	94.31%
2023-24	7200.00	7200.00	4553.41(ason 14.01.2024)	63.51%

Source- Government of India, Ministry of Health and Family Welfare Dataasof14.01.2024

The table 1.1 shows that in 2018-19, the budget estimate for Ayushman Bharat was Rs2400 crores, but it was reduced to Rs2160 crores in the revised estimate. The central government released Rs1849.55 crores, resulting in a 77.06% utilisation rate. From 2019-20 to 2021-22, there was a noticeable decline in fund utilisation, with the rate dropping to as low as 39% in 2020-21. This suggests that there were challenges in implementing the scheme effectively at the state and district levels. In 2022-23, the utilisation rate improved significantly to 94.31%, indicating better management and infrastructure. However, in 2023-24, by January 2024, the utilisation rate had decreased to 63.51%, raising concerns about how well resources are being distributed and used in the current year.

This variability in fund utilisation is crucial for understanding how effectively the scheme has been rolled out in different regions. States with better healthcare infrastructure and administrative capacity tend to utilise the funds more efficiently.

State/UT-wise Fund Distribution and Performance: The state-wise distribution of funds under the scheme shows considerable variation in table 1.2, reflecting regional disparities in healthcare infrastructure, beneficiary population size, and state government priorities.

Table1.2 (see in last page)

The data in table 1.2 shows how much money was allocated to different Indian states and union territories (UTs) from 2018-19 to 2023-24. Overall, the total funds released grew significantly from Rs1,849.55 crores in 2018-19 to Rs6,048.63 crores in 2022-23, before falling to Rs4,553.41 crores in 2023-24. This suggests a large increase in spending up to 2022-23, followed by a decline in 2023-24, possibly due to the completion of major projects or policy changes.

Maharashtra consistently received high allocations, reaching Rs466.42 crores in 2023-24, after peaking at Rs388.03 crores in 2022-23. Andhra Pradesh also saw a sharp increase from Rs182.85 crores in 2018-19 to Rs480.89 crores in 2022-23, though it dropped to Rs349.82 crores in 2023-24. Madhya Pradesh experienced massive growth, from Rs72.57 crores in 2018-19 to Rs714.07 crores in 2023-24, becoming one of the highest-funded states. Tamil Nadu also showed strong growth in 2022-23 (Rs578.67 crores), but it fell to Rs263.20 crores in 2023-24.

Uttar Pradesh's funding grew from Rs85.01 crores in 2018-19 to Rs445.25 crores in 2023-24, though it declined slightly from Rs501.78 crores in 2022-23. West Bengal, on the other hand, showed a sharp drop after 2018-19, with no data for later years, which may indicate a change in policy or data reporting. Jharkhand's funding increased until 2019-20 but dropped significantly after 2020-21, possibly due to economic or fiscal issues. Assam saw a sharp rise from Rs21.08 crores in 2018-19 to Rs288.00 crores in 2023-24, indicating more government spending, likely for development projects.

Rajasthan showed a big increase from Rs200.07 crores in 2019-20 to Rs501.30 crores in 2023-24, suggesting major fiscal shifts. Smaller regions like Lakshadweep and Ladakh received relatively low amounts, reflecting their smaller populations. Goa showed modest growth, peaking at Rs1.19 crores in 2023-24. Kerala, however, experienced steady growth from Rs25 crores in 2018-19 to Rs155.48 crores in 2023-24, while Karnataka peaked at Rs647.74 crores in 2022-23 but saw a decrease to Rs278.28 crores in 2023-24. Chhattisgarh, after reaching Rs352.94 crores in 2022-23, fell to Rs138.25 crores in 2023-24. Telangana saw an increase in 2022-23 (Rs173.54 crores), but this dropped to Rs114.31 crores in 2023-24.

In general, 2022-23 was a peak year for many states, followed by a decline in 2023-24. This may reflect a correction after a period of increased spending. Some states like Jharkhand and West Bengal had low or zero allocations in certain years, which may need further investigation. Larger states like Madhya Pradesh, Maharashtra, and Uttar Pradesh received the highest funds, likely due to their larger populations and higher healthcare demands.

The differences in fund distribution highlight that states with higher populations or more robust health systems receive more funds, but there are concerns regarding the equitable distribution of resources and the ability of smaller states and UTs to implement the scheme effectively.

Ayushman Card Registrations: The creation of Ayushman cards is a critical step in the scheme's implementation. The table 1.3 shows state-wise Ayushman card registrations shows the increasing number of cards created over time.

Table-1.3 (see in last page)

The table 1.3 shows the number of Ayushman Bharat cards created across various Indian states and Union Territories (UTs) from FY 2018-19 to FY 2023-24. In the first few years, the growth was slow due to initial challenges like setting up infrastructure and raising awareness. However, the number of cards issued grew significantly in FY 2022-23 and FY 2023-24, especially in larger states like Uttar Pradesh, Maharashtra, and Rajasthan, which saw a massive increase in card creation.

Uttar Pradesh was the largest contributor, with 4.89 crores cards created, particularly in FY 2023-24, when 2.18 crores cards were issued. Madhya Pradesh also showed strong growth, creating 3.85 crores cards, with a notable dip in FY 2023-24. Maharashtra issued 2.51 crores cards, including 1.60 crores in FY 2023-24. Rajasthan and Gujarat showed significant growth in the last two years, with Rajasthan creating 1.02 crores cards in FY 2022-23 and 92.33 lakh cards in FY 2023-24. Chhattisgarh, Assam, Telangana, and Tamil Nadu also saw notable progress, especially after FY 2022-23.

Smaller states and UTs like Andaman & Nicobar Islands, Chandigarh, and Ladakh showed slower growth, which could be due to their smaller populations and localized healthcare needs. The COVID-19 pandemic also slowed progress in 2020-21 and 2021-22. Overall, larger states like Uttar Pradesh and Maharashtra led the way in card creation, while smaller states may need more focused outreach to boost participation.

District-level Insights: Shahjahanpur

Shahjahanpur presents a unique case study of how Ayushman Bharat is implemented at the district level. While the beneficiary verification process is robust, the district's healthcare infrastructure shows signs of strain. The district has 29 approved hospitals, but with a large number of beneficiaries, the resource allocation might not be sufficient to meet the growing demand for healthcare services.

There is a claims approval rate of 76.6% in Shahjahanpur is a positive sign, indicating that the district's healthcare system is processing claims efficiently. However, expanding the number of hospitals and increasing awareness about the scheme could further improve its reach and effectiveness.

Demographic Breakdown of Ayushman Bharat Beneficiaries in district Shahjahanpur

A survey was conducted with 300 respondents from both rural and urban areas of Shahjahanpur district. The survey looked at people who are registered and not registered under the Ayushman Bharat Yojana. The findings of this survey show important demographic trends, such as differences based on gender, locality, income, and occupation. These trends are clearly shown in Table 1.4. The data highlights how various groups, like rural and urban residents, have different registration rates under the scheme. The survey helps to understand which groups have better access to the benefits of Ayushman Bharat Scheme and where there may be gaps in outreach or awareness.

Table 1.4- Status of Registered/Non Registered respondent under Ayushman Bharat Yojana

Variables	Registered with Ayushman Bharat Yojana		
	Registered	Not Registered	Total
Gender			
Male	104	98	202
Female	51	47	98
Locality			
Rural	138	69	207
Urban	17	76	93
Category			
APL	84	109	193
BPL	71	36	107
Age Group			
18-25	25	19	44
25-30	37	18	55
30-40	46	55	101
40-50	29	34	63
Above 50	18	19	37
Education			
Illiterate	24	19	43
Below 9th	63	33	96
10th Passed	32	8	40
12th Passed	20	10	30
Graduation	11	49	60
Post-Gradu-ation &Above	5	26	31
Religion			
Hindu	112	97	209
Muslim	41	38	79
Christian	1	6	7
Sikh	1	4	5
Class			
General	56	62	118
OBC	72	61	133
SC/ST	27	22	49
Occupation			
Govt. Servant	11	28	39
Private Employee	29	51	80
Entrepreneur	9	9	18
Farmer/Labourer	62	16	78

Other (student, housewife)	44	41	85
Income			
Less than 2000	40	24	64
2000-5000	57	23	80
5000-10000	27	19	46
10000-20000	18	31	49
20000 & above	13	48	61
Block			
Block Tilhar	79	21	100
Block Madnapur	58	42	100
District HQ (3 km from district hospital)	5	45	50
District HQ (10 km from district hospital)	13	37	50

Source- Computed by researcher from primary data

The data from the table 1.4 shows how registration under the Ayushman Bharat Yojana varies based on different socio-economic factors. In terms of gender, the registration rates are almost equal, with a slight edge for females (52.04%) compared to males (51.49%). When we look at locality, registration is much higher in rural areas (66.67%) than in urban areas (18.28%), showing that the scheme has been more successful in rural outreach. Among economic categories, people below the poverty line (BPL) have a higher registration rate (66.36%) compared to those above the poverty line (APL) at 43.52%. Age-wise, younger people, especially those between 25-30 years (67.27%), are more likely to register, while older age groups show lower registration rates. In terms of education, people with lower education levels, like the illiterate (55.81%), have higher registration rates, while those with higher education, such as graduates and postgraduates, have much lower rates (18.33% and 16.13%, respectively). Religion-wise, Hindus (53.59%) and Muslims (51.90%) have similar registration rates, but Christians (14.29%) and Sikhs (20.00%) have much lower participation. Among different castes, OBCs (54.14%) and SC/STs (55.10%) have higher registration rates than the General category (47.46%). Looking at occupation, farmers and laborers have the highest registration rates (79.49%), while government employees (28.21%) and private workers (36.25%) have lower rates. Income-wise, people with lower incomes (under Rs2,000 per month) have higher registration (62.50%), while those earning more than Rs20,000 a month have much lower registration (21.31%). Finally, area-wise, Block Tilhar has the highest registration rate at 79%, while areas near district centers show lower rates, indicating that more awareness and outreach efforts are needed in these urbanized regions. Overall, the scheme has done well in targeting rural, lower-income, and disadvantaged groups, but improvements are needed in urban areas, among educated people, and higher-income groups.

Conclusion: In conclusion, the Ayushman Bharat PradhanMantri Jan Arogya Yojana (AB-PMJAY) has made significant strides in addressing healthcare disparities in India, particularly for economically disadvantaged populations. However, its implementation has faced varying degrees of success across different states and districts, highlighted by fluctuations in fund utilization and Ayushman card registrations.

While the scheme's funding has grown substantially, with higher allocations for states like Uttar Pradesh, Madhya Pradesh, and Maharashtra, disparities in fund distribution remain a concern. States with stronger healthcare infrastructure tend to use funds more efficiently, while others face challenges in implementing the scheme effectively. Notably, in 2022-23, many states saw peak fund utilization, but a subsequent decline in 2023-24 raises questions about the sustainability of resource allocation.

Ayushman card registrations show notable variation across regions, with rural areas and lower-income groups exhibiting higher participation rates. The survey in Shahjahanpur district revealed that rural populations, the BPL category, and lower-income groups were more likely to register for the scheme, whereas urban, educated, and higher-income individuals showed lower participation. This suggests that while the scheme has been successful in reaching its intended beneficiaries, further efforts are needed to increase awareness and outreach in urban and economically better-off areas.

In summary, while AB-PMJAY has improved access to healthcare for millions, state-level disparities in fund utilization, infrastructure, and outreach remain critical challenges. Addressing these gaps, especially in urban areas and among higher-income groups, will be key to achieving universal health coverage and ensuring the scheme's long-term success.

References:-

1. Ayushman Bharat- PMJAY [Internet] New Delhi: Ministry of Health and Family Welfare, Government of India; 2020. Available from: https://www.pmjay.gov.in .
2. Chellaiyan VG, Taneja N. PradhanMantri Jan Arogya Yojana-Ayushman Bharat.Indian J CommHealth. 2020;32:337–40.
3. Debnath DJ, Kakkar R. Modified BG Prasad socio-economic classification, Updated – 2020.Indian J Comm Health. 2020;32:124–5
4. Dhaka R, Verma R, Agrawal G, Kumar G. Ayushman Bharat Yojana: A memorable health initiative for Indians. Int J Community Med Public Health. 2018;5: 31523.
5. Ghosh A. Health Cover Scheme: Who, how [Internet] New Delhi: The Indian Express; 2018. Available from: https://indianexpress.com/article/explainedational-healthmission-ayushman-bharat-health-mission-jp-nada-healthbudget-5216382/

6. Government of India, Ministry of Health and Family, 2024
7. Keshri VR, Ghosh S. Health Insurance for Universal Health Coverage in India: A Critical Examination [Internet] Patna: ADRI; 2019. p. 40. Available from: https://www.adriindia.org/images/paper/1557397831Health Insurance for Universal Health Coverage in India.pdf.
8. Merwin R. Awareness of Ayushman Bharat scheme still low in TN [Internet] Chennai: The Hindu Business lines; 2019. Available from: https://www.thehindubusinessline.com/economy/awareness-of- ayushman-bharat-scheme-still-lowin-tn/article26390255.ece .
9. Netra G, Rao BAV, Kengnal P. Utilization, satisfaction, out of pocket expenditure and health seeking behaviour among the insured residents of rural field area: A cross sectional study. Int J Community Med Public Health. 2020;7:1047–50.
10. Sharma N. New Delhi: The Economic Times; 2019. Ayushman Bharat Awareness 80% in TN, Barely 20% in Bihar and Haryana [Internet] Available from: https://economictimes.indiatimes.com/industry/healthcare/biotech/healthcare/ayushman-bharat-awareness-80-in-tn-barely-20-inbihar-and-haryana/articleshow/70953467.cms?utm_source=contentofinterest&utm_medium=text&utm_campaign=cppst .

Table1.2- State/UT-wisefundsreleasedunderthescheme (AB-PMJAY) (in croreRupees)

State/UT	FY2018-19	FY2019-20	FY2020-21	FY2021-22	FY2022-23	FY2023-24
A& Nicobar Islands	0.15	0.41	0.27	0.76	1.00	0.59
AndhraPradesh	182.85	374.07	261.23	223.95	480.89	349.82
Arunachal Pradesh	2.31	0	0.67	0	3.80	3.22
Assam	21.08	133.23	12.1	87.91	209.33	288.00
Bihar	88.27	82.49	0	59.77	145.51	172.50
Chandigarh	0.68	3.82	1.84	2.49	6.41	4.13
Chhattisgarh	217.43	280.37	112.62	66	352.94	138.25
DNHand DD	4.27	2.02	4.24	1.76	2.93	2.25
Goa	0.64	0.06	0.49	0.6	0.53	1.19
Gujarat	77.5	212.33	99.84	330.55	660.15	267.48
Haryana	26.81	58.69	71.92	89.95	143.50	88.67
HimachalPradesh	17.18	19.12	32.93	33.71	64.32	34.33
JammuandKashmir	20.64	33.44	22.7	75.12	85.62	35.87
Jharkhand	170.17	126.5	100.32	7.98	0.00	0.00
Karnataka	159.31	254.13	160.85	414.11	647.74	278.28
Kerala	25	97.56	145.61	138.9	151.34	155.48
Ladakh	0	0	1.62	0.51	1.92	1.28
Lakshadweep	0	0	0	0.31	0.15	0.07
MadhyaPradesh	72.57	118.46	164.8	355.25	665.73	714.07
Maharashtra	266.32	241.88	376.65	324.75	388.03	466.42
Manipur	7.18	17.1	11.45	22.5	38.55	21.87
Meghalaya	15.57	18.07	49.52	22.28	47.31	30.1
Mizoram	17.48	12.41	14.97	16.58	26.30	23.35
Nagaland	4.72	10.89	12.27	14.09	21.69	25.79
Puducherry	1.52	0	1.23	0.11	7.98	4.96
Punjab	2.24	55.55	46.85	80.5	111.38	35.84
Rajasthan	0	200.07	258.31	96.39	416.96	501.30
Sikkim	1.03	0.09	1.85	1.04	2.30	4.41
TamilNadu	304.98	441.77	359.81	75.14	578.67	263.20
Telangana	0	0	0	150.26	173.54	114.31
Tripura	12.81	20.18	8.98	35.6	45.25	36.96
UttarPradesh	85.01	147.49	167.63	157.56	501.78	445.25
Uttarakhand	12.54	30.73	40.52	54.23	65.11	44.22
WestBengal	31.28	0	0	0	0.00	0.00
Total	**1849.55**	**2992.94**	**2544.12**	**2940.65**	**6048.63**	**4553.41**

Source- Government of India, Ministry of Health and Family Welfare Dataasof14.01.2024

Table-1.3State/UT-wiseandFinancialyear-wisedetailsofAyushmancardscreatedunderthescheme

State/UT	FY2018-19	FY2019-20	FY2020-21	FY2021-22	FY2022-23	FY2023-24
A&N Islands	3,408	11,518	18,795	6,095	813	25,974
AndhraPradesh	-	5	14	49	1,22,22,747	30,39,616
ArunachalPradesh	105	1,493	13,603	32,165	37,235	36,981
Assam	86	908	1,45,776	2,17,930	1,00,12,289	62,68,370
Bihar	11,39,675	41,41,614	14,66,320	7,22,838	3,29,017	9,56,922
Chandigarh	25,036	24,813	11,893	7,401	80,751	24,925
Chhattisgarh	6,73,311	21,16,614	88,88,867	37,34,793	19,43,322	37,57,720
DNH&DD	3,08,752	81,422	13,349	11,367	15,939	4,031
Goa	7,570	13,965	317	263	5,139	47,016
Gujarat	44,01,689	28,27,816	97,553	39,83,093	51,21,824	70,19,404
Haryana	8,92,365	12,98,633	3,37,429	3,01,914	53,70,225	27,12,885
HimachalPradesh	5,09,337	3,19,610	2,14,554	69,743	18,274	1,46,048
J. & Kashmir	10,47,033	50,279	34,16,489	21,11,017	15,28,399	2,63,416
Jharkhand	30,71,641	56,36,121	2,54,567	4,08,213	13,53,286	11,69,551
Karnataka	-	336	6,58,869	48	1,28,96,440	20,05,555
Kerala	113	63,63,179	1,76,165	2,80,265	3,27,534	3,94,525
Ladakh	32,384	509	58,025	16,512	23,055	55,848
Lakshadweep	8	1,559	93	16,593	7,793	4,360
MadhyaPradesh	90,64,211	48,62,322	91,29,333	37,12,957	93,32,470	25,04,899
Maharashtra	4,97,621	62,97,711	2,70,786	3,72,001	17,67,038	1,60,55,734
Manipur	80,640	1,45,702	70,143	1,02,620	84,730	64,090
Meghalaya	2,33,650	12,82,954	41,380	1,45,279	78,438	1,04,016
Mizoram	1,31,670	2,09,925	11,033	3,934	78,405	75,030
Nagaland	19,380	2,06,756	16,648	21,681	1,90,844	2,12,124
Puducherry	7	1,13,996	15,791	2,56,508	23,457	77,801
Punjab	-	36,84,680	22,62,735	15,79,586	1,99,050	7,06,077
Rajasthan	-	-	-	-	1,02,78,849	92,32,797
Sikkim	4,222	27,207	2,701	10,791	7,925	16,394
TamilNadu	-	188	179	373	32,44,708	30,19,414
Telangana	-	-	-	-	69,49,447	12,98,621
Tripura	3,50,010	7,68,202	1,17,879	37,517	41,308	82,271
UttarPradesh	28,28,422	65,28,640	44,29,547	41,53,600	92,01,753	2,17,95,847
Uttarakhand	28,65,125	8,57,669	5,50,073	3,53,466	3,76,978	4,73,144

Source- Government of India, Ministry of Health and Family Welfare Dataasof14.01.2024

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

श्रीलाल शुक्ल के कथा साहित्य में क्लासिसिज्म एवं रोमांटिसिज्म का सामंजस्य

रमेश वसुनिया* डॉ. सी.एल.शर्मा ** डॉ. जगदीशचंद्र शर्मा ***

* शोधार्थी (हिन्दी) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (हिंदी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
*** आचार्य एवं सह-निर्देशक (हिंदी) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना - आधुनिक हिंदी के साहित्यिक क्षेत्र में श्रीलाल शुक्ल एक प्रतिष्ठित व्यक्तित्व हैं, जो अपनी कुशाग्र एवं तीव्र बुद्धि से व्यंग्यात्मक शैली और सामाजिक मुद्दों को प्रमुखता से उठाकर उस पर आलोचना के लिए प्रसिद्ध हैं। उनकी रचनाएँ मुख्य रूप से समकालीन मुद्दों से जुड़ी होती हैं लेकिन उनके साहित्य में एक अद्‌भुत क्लासिसिज्म (शास्त्रियतावाद) एवं रोमांटिसिज्म (स्वच्छंदतावाद) का प्रवाह भी देखा जा सकता है। शुक्ल अपने कथानकों में शास्त्रीय परंपराओं, आदर्शों और रूपों के तत्वों को कुशलता से पिरोते हैं, जो प्राचीन और आधुनिक भारत की समस्याओं को एक साथ जोड़ते हैं। इस लेख में श्रीलाल शुक्ल की कहानियों में क्लासिसिज्म और रोमांटिसिज्म के प्रयोग पर चर्चा कर यह विश्लेषित किया गया है कि किस प्रकार शास्त्रीय तत्व और स्वच्छंदतावाद उनकी सामाजिक टिप्पणियों और कथा संरचना में योगदान करते हैं। यद्यपि उनका लेखन आम तौर पर व्यंग्य, यथार्थवाद और सामाजिक टिप्पणी से जुड़ा हुआ है, लेकिन उनकी कहानियों में स्वच्छंदतावाद के सूक्ष्म लेकिन महत्वपूर्ण निशानों को नजरअंदाज करना सहीं नहीं होगा। कठोर यथार्थवाद के साथ रोमांटिक तत्वों का उनका सम्मिश्रण सामाजिक संरचनाओं की उनकी आलोचना में गहराई जोड़ता है और स्वतंत्रता बाद के भारत में ग्रामीण और राजनीतिक जीवन के उनके कठोर चित्रण के लिए एक सूक्ष्म सुंदरता लाता है। शुक्ल की कहानियों में क्लासिसिज्म को समझने से पहले यह जानना जरूरी है कि साहित्य में क्लासिसिज्म का क्या अर्थ है। क्लासिसिज्म जो मुख्य रूप से ग्रीक-रोमन परंपरा से उत्पन्न हुआ है, जो सौंदर्य, संतुलन, स्पष्टता, और परंपरा के सम्मान पर जोर देता है। यह तर्कसंगतता, संयम, और व्यवस्था जैसे मूल्यों को प्रतिबिंबित करता है, जो कि व्यक्तिगत अनुभवों की अपेक्षा सार्वभौमिक सत्य को प्राथमिकता देता है। भारतीय साहित्यिक परंपरा में क्लासिसिज्म संस्कृत काव्यशास्त्र से जुड़ा हुआ है, विशेष रूप से नाट्यशास्त्र और काव्य मीमांसा जैसे ग्रंथों में निर्धारित सिद्धांतों के माध्यम से ये सिद्धांत साहित्य में औचित्य, भावनात्मक संयम और सौंदर्यानुभूति की महत्ता को बढ़ावा देते हैं। जब हम भारतीय परिप्रेक्ष्य में शास्त्रीयतावाद पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि संस्कृति और प्राचीन भारतीय साहित्य में इसका उज्ज्वलतम रूप दिखलाई पड़ता है। इनमें वैदिक ग्रंथ रामायण, महाभारत के अलावा, कालिदास, बाणभट्ट, भवभूति, जायसी, सूर, तुलसी, गालिब, रवीन्द्रनाथ, जयशंकर प्रसाद, निराला आदि प्रतिष्ठित साहित्यकारों की रचनाएँ सम्मिलित है जिन्होंने कि अपने लेखन कार्य द्वारा मां भारती के भंडार को भरने में कोई कमी नहीं छोड़ी है। ये अत्यंत ही प्रतिभासम्पन्न कवि हैं। इनकी शैली भव्य एवं उदात्त है तथा इनकी कृतियाँ विश्व साहित्य की अमर निधियाँ हैं। वैसे तो भारतीय साहित्य शास्त्रवादी पश्चिमी साहित्य से काफी पुराना है इसलिए दोनों की तुलना करना सही नहीं होगा। भारतीय साहित्य में शास्त्रवाद का आग्रह उस रूप में नहीं हुआ जिस रूप में यूनानी या लैटिन साहित्य में रहा, क्योंकि यह भारतवर्ष की गतिशील लोकोन्मुख परम्परा से सदैव प्रभावित रहा है, भारतीय साहित्य लोक और शास्त्र तथा बुद्धि और हृदय के बीच समन्वय से रचित साहित्य है जो जीवन और जगत की विविधतायुक्त छवियों से सुरक्षित है।

शुक्ल की रचनाओं के संदर्भ में क्लासिसिज्म को भारत के सांस्कृतिक अतीत, उसके दार्शनिक आदर्शों और प्राचीन साहित्यिक रूपों के संदर्भ रूप में देखा जा सकता है। शुक्ल की रचनाएँ भारतीयता माटी की महक लिए हुए गहराई से जुड़ी हुई हैं, और जहाँ वे समकालीन समाज की आलोचना करती हैं वहीं वे शास्त्रीय ग्रंथों में पाए जाने वाले व्यवस्था और नैतिक स्पष्टता के लिए एक तड़प भी प्रकट करती हैं। साहित्य को रूमानी मूर्खताओं से मुक्त कराने में शुक्ल की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

श्रीलाल शुक्ल की कहानियों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वे स्वतंत्रता के बाद के भारत में सामाजिक, राजनीतिक भ्रष्टाचार, अक्षमता और नैतिक पतन की आलोचना करने के लिए व्यंग्य का प्रयोग करते हैं। उनकी कृतियों में क्लासिसिज्म अक्सर इस भ्रष्टाचार के विपरीत रूप में उभरता है। शुक्ल शास्त्रीय आदर्शों जैसे कि सदाचार, न्याय और व्यवस्था को प्रकट करते हुए समकालीन समाज की अव्यवस्था को उजागर कर उस पर जोर देते हैं, जिससे प्राचीन और आधुनिक भारत के बीच अंतर को स्पष्ट किया जा सके।

श्रीलाल शुक्ल का व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण और ग्रामीण जीवन - शुक्ल के व्यंग्य में ग्रामीण समाज के उस परिवर्तन की स्पष्ट झलक मिलती है, जहाँ नैतिक मूल्यों और शास्त्रीय आदर्शों का स्थान भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद और धोखे ने ले लिया है। उनकी रचनाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि आधुनिक ग्रामीण समाज में सत्य, न्याय और नागरिक सदाचार जैसे

शास्त्रीय आदर्श अप्रासंगिक हो चुके हैं। शुक्ल इस पतनशीलता को न केवल प्रकट करते हैं, बल्कि इसके पीछे छिपे तंत्र को भी उजागर करते हैं, जो कि चालाकी और स्वार्थ पर आधारित है। उनके व्यंग्य की शक्ति उनकी दृष्टि की स्पष्टता और व्यावहारिकता में निहित है। वे अतीत के शास्त्रीय मूल्यों का उल्लेख करते हुए यह दिखाते हैं कि आधुनिक समाज ने इन आदर्शों को या तो भुला दिया है या अपने स्वार्थ के लिए विकृत कर दिया है। उदाहरण के लिए श्राग दरबारीश में वे गाँव के शिक्षण संस्थान, पंचायत और स्वास्थ्य केंद्रों को केंद्र में रखते हुए यह दिखाते हैं कि ये संस्थाएँ किस तरह से अपने मूल उद्देश्य से भटक चुकी हैं। इन संस्थानों में सत्य और न्याय की जगह स्वार्थ और भ्रष्टाचार ने ले ली है।

शुक्ल का व्यंग्य मात्र हास्य पर आधारित न होकर उपहास तक सीमित नहीं है बल्कि यह पाठक को आत्ममंथन करने के लिए प्रेरित करता है। वे अपने पात्रों और स्थितियों के माध्यम से शास्त्रीय भारतीय मूल्यों की सूक्ष्म याद दिलाते हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि आधुनिकता की अंधी दौड़ ने समाज को किस हद तक क्षति पहुँचाई है। उनका लेखन हमें यह सोचने पर मजबूर करता है कि क्या यह पतनशीलता अपरिहार्य है? या इसे रोकने के लिए समाज को फिर से अपनी जड़ों की ओर लौटने की आवश्यकता है।

श्रीलाल शुक्ल का यह दृष्टिकोण समाज को न केवल उसकी कमजोरियों का आईना दिखाता है, बल्कि यह भी इंगित करता है कि समाज के पुनर्निर्माण के लिए शास्त्रीय आदर्शों को फिर से अपनाना कितना आवश्यक है। उनका व्यंग्य आधुनिक समाज और परंपरागत मूल्यों के बीच एक पुल की तरह कार्य करता है, जो दोनों के बीच सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता पर बल देता है।

वहीं दूसरी और शुक्ल गांवों के माध्यम से अपने लेखन की रोमांटिक प्रवृत्ति जीवंत करते है। शुक्ल जानते हैं की उनका चित्रण सद्भाव और सादगी की एक आदर्श तस्वीर से बहुत दूर है, बल्कि यह राजनीतिक भ्रष्टाचार, सामाजिक असमानताओं और सत्ता संघर्षों का एक जटिल स्थल है। फिर भी इस यथार्थवादी ढांचे के भीतर शुक्ल स्वच्छंदतावाद के क्षणों को बुनता है, अक्सर ग्रामीण जीवन के विवरणों के माध्यम से जो खोए हुए अतीत या भूमि और उसके लोगों के साथ एक आदर्श संबंध के लिए उदासीनता की भावना पैदा करता है। उदाहरण के लिए 'राग दरबारी' में मानसून के मौसम के बारे में शुक्ल का वर्णन प्रकृति के लिए लगभग एक रोमांटिक स्रोत है। बारिश न केवल भूमि के लिए बल्कि पात्रों की आत्माओं के लिए एक नवीनीकरण लाती है, क्षण भर में उनकी परेशानियों का भार उठाती है। इन अंशों में प्रकृति सांत्वना का स्रोत बन जाती है, गाँव की राजनीति की कठोर वास्तविकताओं से राहत देती है। प्रकृति की सुंदरता और सामाजिक संरचनाओं की कुरूपता के बीच यह परस्पर क्रिया मानवीय असफलताओं को ठीक करने और पार करने के लिए प्रकृति की शक्ति के साथ रोमांटिक साहित्य के आकर्षण को याद करती है।

शास्त्रीय प्रतिमानों और विषयों की भूमिका – श्रीलाल शुक्ल अक्सर शास्त्रीय प्रतिमानों और विषयों को आधुनिक संदर्भ में पुनर्व्याख्या करते हैं। उनके पात्र अक्सर शास्त्रीय आकृतियों के गुणों को धारण करते हैं, लेकिन वे ऐसी परिस्थितियों में रखे जाते हैं जो समकालीन जीवन की हास्यास्पदता को उजागर करते हैं। यह तुलना शुक्ल को वर्तमान और अतीत की आदर्शवादी कल्पना दोनों की आलोचना करने की अनुमति देती है।

उदाहरण के लिए, शुक्ल की कहानियों में अक्सर ऐसे पात्र होते हैं जो भारतीय महाकाव्यों और शास्त्रीय साहित्य के नेता या नायक के रूप में दिखाई देते हैं। हालांकि उनकी रचनाओं में ये पात्र अक्सर गहरे दोषपूर्ण या भ्रष्ट होते हैं, जो आधुनिक भारत में नेतृत्व के पतन पर व्यंग्य करते हैं। राग दरबारी में गाँव का मुखिया वैद्यजी, इस प्रतिभा का उदाहरण है। वह अधिकार की स्थिति में होते हुए भी उसकी नेतृत्व क्षमता में चालाकी, स्वार्थ और नैतिक गुणों की पूर्ण कमी है, जो एक शास्त्रीय नायक से अपेक्षित होती है। इस पात्र के माध्यम से शुक्ल ने शास्त्रीय आदर्शवादी नायक और स्वतंत्रता के बाद भारत के भ्रष्ट राजनीतिक नेताओं के बीच की तुलनात्मक आलोचना करते हैं। इसके अतिरिक्त कर्तव्य, धर्म और नैतिक व्यवस्था जैसे शास्त्रीय भारतीय साहित्य के केंद्रीय विषयों को शुक्ल की रचनाओं में उपेक्षित किया गया है। महाभारत या रामायण जैसे शास्त्रीय ग्रंथों में, धर्म की अवधारणा सर्वोपरि है, जहाँ पात्र ऐसे नैतिक दुविधाओं का सामना करते हैं जो उन्हें व्यक्तिगत इच्छाओं और सामाजिक दायित्वों के बीच संतुलन बनाना सिखाती हैं। शुक्ल अपनी कहानियों में इन दुविधाओं की पुनर्कल्पना करते हैं, लेकिन उनके पात्र अक्सर इन्हें सुलझाने के लिए नैतिक स्पष्टता की कमी दिखाते हैं। धर्म की रक्षा करने के बजाय वे आत्म-हित के कार्य करते हैं, जो अक्सर हास्य या त्रासदीपूर्ण परिणाम उत्पन्न करते है। शास्त्रीय विषयों का यह उलटफेर आधुनिक भारत के नैतिक पतन की आलोचना के रूप में कार्य करता है तथा यह दर्शाता है कि कर्तव्य और धर्म के शास्त्रीय मूल्य अब निंदकता और अवसरवाद से प्रतिस्थापित हो गए हैं।

रोमांटिसिज्म (स्वच्छंदतावाद) साहित्य की पहचान में से एक व्यक्ति का उत्थान है, जिसे अक्सर सामाजिक मानदंडों के खिलाफ संघर्ष करने वाले विद्रोही या दूरदर्शी के रूप में चित्रित किया जाता है। शुक्ल की कहानियों में उनके नायक अक्सर खुद को अपने आसपास के भ्रष्ट और खस्ताहाल संस्थानों के साथ बाधाओं में पाते हैं। ये पात्र, पारंपरिक अर्थों में हमेशा वीर नहीं होते हैं, उनके व्यक्तित्व की भावना, उनकी भावनात्मक गहराई और समाज द्वारा मांगे गए नैतिक समझौतों के प्रतिरोध के माध्यम से एक रोमांटिक भावना का प्रतीक हैं। शुक्ल की कहानी 'अपनी पहचान' सामाजिक और मानवीय संवेदनाओं को बारीकी से दर्शाती है। यह कहानी एक साधारण व्यक्ति के जीवन और समाज में उसकी पहचान के संघर्ष पर केंद्रित है। मुख्य पात्र अपनी गरीबी, सीमित संसाधनों, और जीवन के कठोर यथार्थों के बावजूद अपनी अस्मिता को बनाए रखने की कौशिस करता है।

शुक्ल जी ने इस कहानी में समाज के वर्गभेद और आर्थिक विषमता को उजागर किया है। कहानी का नायक अपने आत्मसम्मान को खोए बिना, अपनी पहचान स्थापित करने का प्रयास करता है। इसकी भाषा सरल लेकिन प्रभावशाली है, और प्रतीकों का उपयोग पाठकों को गहराई से सोचने पर मजबूर करता है। आलोचनात्मक दृष्टि से यह कहानी मानवीय संघर्षों और सामाजिक अन्याय का मार्मिक चित्रण है। यह हमें अपनी परिस्थितियों से लड़ने और आत्मसम्मान बनाए रखने की प्रेरणा देती है। श्रीलाल शुक्ल का यथार्थवादी दृष्टिकोण इसे पाठकों के लिए और अधिक बोधगम्य और प्रासंगिक बनाता है।

इनके पात्र ग्रामीण जीवन के साथ जुड़ने के प्रयास में अर्थ और उद्देश्य खोजने के लिए भारी सामाजिक दबाव के सामने अपने मूल्यों के प्रति सच्चे रहने के लिए रोमांटिक नायक के संघर्ष को दशाते हैं। उनकी आंतरिक उथल-पुथल और अलगाव की भावना उन्हें रोमांटिक दोषपूर्ण, आदर्शवादी और अंततः दुखद नायक की परंपरा के भीतर रखती है।

श्रीलाल शुक्ल की कहानियों में क्लासिसिज्म का एक और महत्वपूर्ण पहलू भाषा और शैलीगत तत्वों का प्रयोग है, जो शास्त्रीय रूपों की याद दिलाते हैं। शुक्ल की गद्य शैली सामयिक और सुलभ है, अक्सर एक औपचारिक संरचना और संयम की भावना से परिपूर्ण होती है जो शास्त्रीय आदर्शों को दर्शाती है। उनकी लेखन शैली स्पष्टता और सटीकता से भरी होती है, जो भावनात्मकता या अतिशयोक्ति से बचती है। यह शैलीगत संयम शास्त्रीय सिद्धांतों के औचित्य और संतुलन के साथ मेल खाता है, भले ही शुक्ल आधुनिक जीवन के अराजक और हास्यास्पद पहलुओं की खोज करते हों। इसके अलावा शुक्ल अक्सर विडंबना, सांकेतिकता, और प्रतीकात्मकता जैसे शास्त्रीय अलंकारिक उपकरणों का प्रयोग करते हैं। ये उपकरण उन्हें समकालीन मुद्दों की अप्रत्यक्ष आलोचना करने की अनुमति देते हैं तथा वर्तमान और शास्त्रीय अतीत के बीच संबंध स्थापित करते हैं। ऐसा करते हुए शुक्ल की कहानियाँ अक्सर एक कालातीत गुण धारण करती हैं, क्योंकि वे नैतिकता, न्याय और मानव मूर्खता जैसे सार्वभौमिक विषयों के साथ भी जुड़ी होती हैं।

शुक्ल के कथा साहित्य में रोमांटिक उदात्ता की अवधारणा एक विशिष्ट और सूक्ष्म दृष्टिकोण से प्रकट होती है। जहां रोमांटिक साहित्य में उदात्तता का संबंध सामान्यतः प्रकृति के भव्य दृश्य या असाधारण घटनाओं से होता है, वहीं शुक्ल इसे साधारण जीवन के क्षणों में खोजते हैं। उनका लेखन मानवीय अनुभव की गहराइयों को उजागर करता है, जो भय, विस्मय और मानवीय कमजोरियों के साथ सहजता से जुड़ा होता है। उनकी कहानियों में उदात्ता का अनुभव पाठक को छोटे–छोटे सामाजिक घटनाक्रमों और मानवीय रिश्तों की जटिलताओं के माध्यम से होता है। उदाहरणस्वरूप उनकी कहानियों में हास्य और व्यंग्य के पीछे छिपा दर्द और सामाजिक यथार्थ पाठकों को गहन आत्ममंथन के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार शुक्ल ने उदात्ता को न केवल रोमांटिक आदर्शों के रूप में प्रस्तुत किया है बल्कि उसे आम जनजीवन के रोजमर्रा संघर्षों और संवेदनाओं से भी जोड़ा है।

उनकी औपन्यासिक कृति 'राग दरबारी' में प्राकृतिक दुनिया के विवरणों में उदात्तता का तत्व पाया जाता है, जहां पर परिदृश्य की सुंदरता और महिमा, मानव मामलों की क्षुद्रता के विपरीत है। खेतों की विशालता, अंतहीन आकाश और प्रकृति की चक्रीय लय विस्मय की भावना पैदा करती है जो गांव की सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं से परे है। उदात्तता के ये लक्षण पात्रों और पाठकों को मानव दुनिया पर हावी होने वाले भ्रष्टाचार और क्षय से एक संक्षिप्त पलायन प्रदान करते हुए उन्हें खेल में बड़ी अधिक स्थायी ताकतों की याद दिलाते हैं। इसी तरह शुक्ल की लघुकथाओं में भावनात्मक तीव्रता के क्षण अक्सर उदात्तता की भावना रखते हैं।

कहानियों में रूमानियत और ग्रामीण सौंदर्य – श्रीलाल शुक्ल की कहानियों में रूमानियत और ग्रामीण सौंदर्य का अनूठा समन्वय देखने को मिलता है। उनकी कहानियों में ग्रामीण जीवन की कठिनाइयों और व्यावहारिक समस्याओं को गहराई से चित्रित किया गया है, लेकिन इसके साथ ही उनमें एक आदर्शवादी दृष्टिकोण भी मौजूद है। यह दृष्टिकोण रूमानियत का परिचायक है, जो मानवीय संवेदनाओं और प्रकृति की सौम्यता को उजागर करता है। शुक्ल ग्रामीण सौंदर्य को न केवल दृश्यात्मक रूप से प्रस्तुत करते हैं, बल्कि उनके पात्रों के अनुभवों और संघर्षों में भी यह सौंदर्य झलकता है। उनकी भाषा सरल, लेकिन प्रभावशाली है, जो पाठक को ग्रामीण जीवन की वास्तविकता से जोड़ देती है। उदाहरणस्वरूप उनकी सुप्रसिद्ध रचना शराग दरबारीश में व्यंग्य और रूमानियत के माध्यम से ग्राम्य जीवन की विडंबनाओं को उभारा गया है।

उनकी कहानियां एक ओर यथार्थवादी हैं, तो दूसरी ओर वे मानवीयता और संवेदनशीलता का संदेश देती हैं। क्योंकि रोमांटिक साहित्य में प्रकृति अक्सर पात्रों की भावनाओं के लिए एक दर्पण के रूप में कार्य करती है, उनकी आंतरिक स्थिति को दर्शाती है और उनकी भावनात्मक यात्रा के प्रतीक रूप में कार्य करती है। शुक्ल अक्सर अपनी कहानियों में इस तकनीक का उपयोग करते हैंय प्राकृतिक दुनिया का उपयोग न केवल पृष्ठभूमि के रूप में बल्कि अपने पात्रों के भावनात्मक परिदृश्य में एक भागीदार के रूप में करते हैं।

श्रीलाल शुक्ल की कहानियाँ वास्तव में रोमांटिसिज्म और क्लासिसिज्म का एक अद्भुत समन्वय प्रदर्शित करती हैं, जो ग्रामीण और अर्ध–शहरी भारत के सामाजिक–राजनीतिक परिदृश्य में मानव अनुभवों की जटिलता को प्रतिबिंबित करती है। अपनी क्लासिसिस्ट दृष्टि से, शुक्ल सामाजिक मानदंडों की एक संरचित आलोचना प्रस्तुत करते हैं जिससे उनकी कथाओं में नैतिक और दार्शनिक अंतर्दृष्टियाँ समाहित होती हैं जो व्यक्तिगत और सामूहिक चेतना को चुनौती देती हैं। वहीं उनकी रोमांटिक प्रवृत्तियाँ इन पात्रों को गहराई प्रदान करती हैं जो कि उनकी व्यक्तिगत इच्छाओं, भावनाओं और संघर्षों को उजागर करती हैं तथा उनके परिवेश की कठोर सीमाओं के विपरीत होती हैं।

यह समन्वय शुक्ल के पात्रों को सजीव और बहुआयामी बनाता है, जहाँ वे अपनी कमजोरियों में सहज हैं, फिर भी अपनी सामाजिक आलोचना में प्रभावी हैं।

अंततः शुक्ल के कार्य केवल सामाजिक–राजनीतिक टिप्पणी से परे जाकर न्याय, मानव गरिमा और अर्थ की खोज जैसे सार्वभौमिक विषयों से जुड़ते हुए कालातीत प्रासंगिकता प्राप्त करते हैं। इन साहित्यिक परंपराओं के उनके कुशल संयोजन से न केवल उनकी कहानियों की सौंदर्यात्मक गुणवत्ता में वृद्धि होती है बल्कि वे भारतीय साहित्य में एक महत्वपूर्ण सशक्त आवाज के रूप में स्थापित होते हैं। जो कि पारंपरिक मूल्यों और संवेदनाओं के मध्य एक सेतु का कार्य करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शुक्ल, श्रीलाल, राग दरबारी, दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1968
2. त्रिगुण, नामवर सिंह, कहानी: नवजागरण से प्रेमचंद तक, दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 1989
3. मिश्र, रमेशचंद्र, श्रीलाल शुक्ल के कथा साहित्य में समाज और व्यवस्था का चित्रण, साहित्य वार्ता खंड 34, अंक 2 (2003): 45–60
4. शर्मा, सुनीता, आधुनिक हिन्दी साहित्य में सामाजिक यथार्थ, बनारस: भारतीय ज्ञानपीठ, 2018
5. फ्रोस्ट, जेम्स, क्लासिसिज्म और रोमांटिसिज्म के सिद्धांत, लंदन: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1976
6. अरोड़ा, शिवकुमार, आधुनिक आलोचना के सिद्धांत, दिल्ली: ओमेगा प्रकाशन, 2011
7. शुक्ल, रघुनंदन, भारतीय साहित्य के नये आयाम, जयपुर: यूनिवर्सिटी बुक हाउस 2008

बीसवी शताब्दी में नारी : सुभद्रा कुमारी चौहान के साहित्य परिपेक्ष से

शोभा मेघवाल*

* व्याख्याता, राजकीय कन्या महाविद्यालय, फलासिया, जिला उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – ईश्वर की श्रेष्ठ संरचना है पृथ्वीलोक, और इसके निर्माण में दो शक्तियों का अपना महत्वपूर्ण स्थान है प्रथम नर और दूसरी नारी। इन दोनों के बिना जीव और जगत की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। निर्माण की प्रारंभिक अवस्था में दोनों शक्तियों का समान स्वरूप था, परन्तु जैसे-जैसे मानवीय संस्कृति का विस्तार होता गया वैसे-वैसे सृष्टि के इन दोनों स्वरूपों में दृष्टि भेद बढ़ता गया, और स्त्री और पुरूष के मध्य यह भेद बीसवीं शताब्दी में अत्यधिक दिखाई देता है।

साहित्य सदैव समाज की सच्चाई को प्रकट करता रहा है। 20वीं शताब्दी में सभी साहित्यकार अपनी अपनी कलम के माध्यम से समाज की सच्चाई लिख रहे थे, उनमें प्रमुख नाम आता है- राष्ट्रीय कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान। सुभद्रा जी ने अपनी कविताओं और कहानियों के द्वारा अपने समय की वास्तविकता को उजागर किया है। कहा जाता है कि एक नारी ही नारी की पीड़ा को समझ सकती है, अत: 20वीं शताब्दी में नारी की दशा को देखना हो तो सुभद्रा जी का साहित्य महत्वपूर्ण हो जाता है। इनकी कविताएं दो काव्य संग्रह 1 मुकुल (1930) तथा 2 त्रिधारा (1925) में संग्रहित है। कहानी साहित्य में इनके तीन संकलन 1. बिखरे मोती 2. उन्मादिनी व 3. सीधे सादे चित्र प्रकाशित है।

गोस्वामी कवि ने रामायण के बाल काण्ड में नारी की दशा को लेकर कहा है –

'कत विधि सृजी नारी जग माहि
पराधिन सपनेहु सुख नाहि ।।'

सुभद्रा जी नारी के रूप में स्वयं अपने समय एवं समाज की दशा से पीड़ित थी, और उन्होने जैसा जीवन जीया और अनुभव किया उसे काल्पनिक पात्रों के माध्यम से पूर्ण सच्चाई के साथ अपनी कहानीयों में व्यक्त किया। सुभद्रा कुमारी चौहान के साहित्य में नारी एवं नारी दशा का चित्रण अधिक हुआ है। वैदिक युग से उन्नीस वीं शताब्दी तक समाज में नारी की स्थिति में बड़ा ही क्रांतिकारी परिवर्तन दिखाई देता है, जिसका वर्णन युगानुरूप साहित्य ने बखूबी किया है। सुभद्रा जी नें 20वीं शताब्दी की नारी का विश्लेषण करते हुए उसकी सामाजिक स्थिति पर विस्तृत प्रकाश डाला है। उनके द्वारा प्रकट विचारों से भारतीय समाज में नारी उतरोत्तर ह्रास को प्राप्त हुई है। नारी जो कि वैदिक युग में दैवीय पद पर प्रतिष्ठित थी वही 19 वीं शताब्दी के समय दासता को प्राप्त हो गई। उस समय में पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था थी जिसमें नारी केवल उसकी भोग्या मात्र थी। समाज और परिवार में पुरुषों की तुलना में उसको अल्प अधिकार प्राप्त थे, तथा कई तरह की यातनाएं, प्रताड़नाएं, और दु:ख भोगने पर मजबूर थी। लेखिका नें अपनी काव्य रचनाओं में इस विषय को मुख्य रूप से उकेरा है। सामाजिक परिप्रेक्ष्य में नारी के द्वंद्व को बताते हुए उसे अपने पुरूष के प्रति समर्पित बताया गया है। पुरुष चाहे कितना ही निर्दयी और व्यसनी रहा हो परन्तु नारी उसकी एकनिष्ठ सेविका ही रही है।

बहुत दिनों तक हुई परीक्षा,
अब रूखा व्यवहार न हो।
अजी, बोल तो लिया करो तुम,
चाहे मुझ पर प्यार न हो।।
जरा जरा सी बातों पर
मत रूठो मेरे अभिमानी ।
लो प्रसन्न हो जाओ,
गलती मैंने अपनी मानी।।

सु.कु.चौ., प्रियतम से सुभद्रा समग्र, पृ. 35

एक और तथ्य सामने आता है कि, उस समय नारी ही नारी की दुश्मन बनी हुई थी। समाज में उसे उपेक्षित समझा जाने लगा। कदम-कदम पर उसे ताने, लांछना, चरित्र पर आक्षेप और साथ ही मार सहन करनी पड़ती थी। इतना कुछ होते हुए भी सुभद्रा कुमारी चौहान के काव्य की नारी स्वाभिमान, कर्तव्य त्याग की प्रतिमूर्ति बनी हुई है। उसने संघर्षो से लड़ना सीखा है, हारना नहीं। भारतीय ऐतिहासिक विरांगनाओं से प्रेरणा लेकर अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए सदा तत्पर दिखाई देती है। लेखिका के काव्य में पुरुषों की तुलना में नारी को लोक मर्यादा की सच्ची निर्वाहिका बताया गया है, और इसके लिए पुरातन परम्पराओं को अपनाती हुई चित्रित हुई है। उसके लिए भारतीय समाज एवं समाज के महान पात्र अनुकरणीय हैं। उसके अनुसार पुरूष उसके लिए देवता है और देवता कभी कोई गलती नहीं करता है उससे उनको जो भी प्राप्त होता है वह प्रसाद है और उसे वह हँसते हुए स्वीकार करें। वे लिखती है-

आज उन्हें मुझ पर क्रोध आया उन्होंने तिरस्कार के साथ मुझे झिड़क दिया। इसमें उनका कोइ कसूर नहीं है। पत्थर के पाट पर भी रस्सी के रोज-रोज घिसने से निशान पड़ जाते हैं। वे तो देवतुल्य पुरुष है। उनका ह्रदय तो कोमल है, इन अपवादों का असर कैसे न पड़ता ? रामचन्द्र जी सरीखे महापुरुष ने भी जरा सी बात पर गर्भवती

सीता को वनवास दे दिया था, फिर ये तो साधारण मनुष्य ही है। सु.कु.चौ. ग्रामीणा सीधे-सादे चित्र सुभद्र समग्र पृ.सं. 104

सुभद्रा जी ने अपने साहित्य में नारी जीवन की समस्त पीड़ाओं को व्यक्त किया है। विधवा की दशा, पुनर्विवाह, अन्तरजातीय विवाह, बेमेल विवाह, महिला उत्पीडन, महिला शिक्षा आदि कई समस्याओं को उजागर किया है। 20वीं शताब्दी की महिला आदर्श नारी बनकर सभी से अकेली लड़ती हुई चित्रित हुई है, और उसने कभी हार नहीं मानी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सुभद्रा समग्रः सुभद्रा कुमारी चौहान, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. देवराज पथिक, हिन्दी कविता में राष्ट्रीय चेतना, कादम्बरी प्रकाशन नई दिल्ली, 1973
3. डॉ. राहुल, हिन्दी कविता के विविध संदर्भ, हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली।
4. बच्चन सिंह हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006
5. मैनेजर पाण्डेय, साहित्य और इतिहास दृष्टि, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005
6. नन्द दुलारे वाजपेयी हिन्दी साहित्य बीसवी शताब्दी, लोक भारती प्रेस, इलाहबाद 1985
7. बाबू गुलाब राय, हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2001
8. नामवर सिंह, आधुनिकतम साहित्य की प्रवृत्तियाँ, लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001
9. गोपेश्वर सिंह, साहित्य में संवाद, मेधा बुक्स, नई दिल्ली 2005
10. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिन्दी साहित्य का इतिहास सामान्य परिचय, राष्ट्रिय शैक्षणिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2003
11. अनामिका, कहती औरतें, इतिहास बोध प्रकाशन, इलाहाबाद, 2003
12. अनामिका स्त्रीत्व का मानचित्र, सारांश प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000
13. सुशीला नेयर, कर्मठ महिलाएं, नेशनल बुक्स ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2005
14. रीतु मेनन, भारतीय पुनर्जागरण में अग्रणी महिलाएं, नेशनल बुक्स ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2005

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जनजातीय महिलाएं : प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य

डॉ. भूपेन्द्र मेघवाल*

* व्याख्याता, जे.आर. शर्मा स्नातकोत्तार महाविद्यालय, झाड़ोल(फ.), जिला उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – भारतीय संविधान के नीति निर्देशक सिद्धान्तों में कहा गया कि राज्य अपने लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा करने तथा जन स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्य में मानेगा। विभिन्न अर्न्तराष्ट्रीय संगठनों में यह प्रमाणित किया गया है कि स्वास्थ्य पर प्रत्येक प्राणी का अधिाकार होना चाहिए। क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा एवं मन निवास करता है। किसी भी समाज की समृद्धि एवं विकास के लिए स्वास्थ्य स्तर का बेहतर होना आवश्यक है। जनजातीय समाज में अशिक्षा, अज्ञानता एवं अन्धाविश्वास के कारण महिलाओं के स्वास्थ्य देखरेख पर कोई विशेष धयान नहीं दिया जाता है जबकि महिलाएँ किसी भी राष्ट्र की भावी पीढ़ी को जन्म देती है। स्वास्थ्य व्यक्ति का मूलभूत अधिकार है लेकिन जब तक निर्णय निर्माण में प्रत्येक स्तर पर पुरूष एवं महिला की समान सहभागिता न हो तब तक इसकी रक्षा असम्भव है। स्वतन्त्रता के बाद आधुनिक चिकित्सा के विस्तार हेतु सरकार ने काफी प्रयास किय लेकिन अभी भी स्वास्थ्य स्तर को उन्नत बनाने का लक्ष्य अधुरा है। आज भी स्वास्थ्य विभाग के लिए ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में गर्भवती महिला की देखरेख, प्रसव पूर्व सेवा उपलब्ध कराना, सुरक्षित प्रसव सम्पन्न कराना, कुपोषण, बाल मृत्युदर पर नियंत्रण, परिवार नियोजन के रूप में नसबन्दी, गर्भ निरोधक दवाईयों को सुलभ कराना चुनौती बना हुआ है। जनजातीय क्षेत्रों में अधिकांश गर्भवती महिलाए आयरन की कमी के कारण एनिमिया रोग से पीड़ित है। नवजात शिशुओं में टिटनेस, खसरे से होने वाली मृत्यु, बच्चो में डिप्थीरिया, काली खाँसी, पोलियो, तपेदिक आदि रोगों की प्रतिरक्षण टीके की सुविधा उपलब्ध होते हुए भी पूर्ण निराकरण नहीं हो पाया है।

प्रस्तुत आलेख में जनजातीय महिलाओं की शिशु एवं प्रजनन स्थितियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है। जनजातीय महिलाओं की प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रमुख चर जैसे परिवार नियोजन, गर्भावस्था देखरेख, प्रसव माध्यम, मातृ एवं शिशु मृत्यु दर, प्रजननता दर, लिंग अनुपात, मध्यपान की प्रवृत्ति एवं चिकित्सा पद्धति आदि का विश्लेषण किया गया है।

परिवार नियोजन – परिवार नियोजन कार्यक्रम महिला प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर को बेहतर बनाने हेतु परिवार नियोजन आवश्यक है। दो बच्चों के बीच उचित अन्तराल महिला एवं शिशु स्वास्थ्य की दृष्टि से आवश्यक है लेकिन जनजातीय समाज में परिवार नियोजन के प्रति उपेक्षा एवं नकारात्मक दृष्टिकोण रहा हैं। ये बच्चों को भगवान की देन मानते है। परिवार नियोजन के विभिन्न साधनों को लेकर अन्धविश्वास एवं संदेह व्याप्त है। जनजातीय क्षेत्रों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि जनजातीय महिलाओं को न तो परिवार नियोजन की जानकारी है और न हीं वे जानकारी के अभाव के कारण परिवार नियोजन के किसी भी साधन का उपयोग कर पाती है। परिवार नियोजन के अभाव के कारण महिलाओं के बार-बार गर्भवती होने से शारीरिक रूप से दुर्बल हो जाती है जिसके कारण उनकी स्वास्थ्य प्रस्थिति निम्न बनी हुई है।

गर्भावस्था में स्वास्थ्य देखरेख – जनजातीय समाज में गर्भ धारण एवं शिशु जन्म एक दैवीय प्रघटना माना जाता है। जनजातीय महिलाओं द्वारा गर्भ धारण करना एवं बच्चे को जन्म देना सामान्य स्थिति के रूप में देखा जाता है जिसके लिए किसी विशेष सुरक्षा एवं उपचार की आवश्यकता नहीं है। जनजातीय समाज में स्थित विभिन्न अन्धविश्वासों एवं मान्यताओं के कारण कई बार शिशुओं को जन्म देने वाली माताओं की प्रसव के दौरान मृत्यु हो जाती है इस कारण गर्भावस्था से ही महिलाओं के स्वास्थ्य की उचित देखरेख आवश्यक है। चिकित्सकों के अनुसार गर्भवती महिलाओं को प्रारम्भ में प्रतिमाह एक बार और पांच माह के पश्चात प्रति दूसरे महिने डॉक्टर को दिखाकर उचित परामर्श लेनी चाहिए। गर्भावस्था में महिलाओं के लिए पोष्टिक तत्वों एवं विटामिन युक्त भोजन की आवश्यकता होती है लेकिन जनजातीय महिलाओं को दो वक्त भरपेट भोजन भी सुलभ नहीं हो पाता है। हरी सब्जियों, फल, दूध आदि के लिए आर्थिक रूप से असक्षम होने के कारण महिलाए उपयोग नहीं कर पाती है। स्वास्थ्य केन्द्रों पर जाँच नहीं करवाने से आयरन फोलिक एसिड की गोलियों का उपयोग भी नहीं कर पाती है। गर्भावस्था में एएनएम एवं चिकित्सक की सलाह की अपेक्षा सुरक्षा हेतु लोक चिकित्सकों एवं भौपाओं की सलाह लेती है। जनजातीय महिलाओं द्वारा गर्भावस्था में अप्राकृतिक शक्तियों से सुरक्षा एवं कुदृष्टि से बचाने हेतु तन्त्र मन्त्र एवं जादू टोना का सहारा लिया जाता है जिसका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है।

प्रसव माध्यम – जनजातीय क्षेत्रों में अधिकांश प्रसव परम्परागत प्रसव माध्यमों से ही कराया जाता है। प्रशिक्षित दाइयों एवं चिकित्सकों की उपलब्धता में भी अधिकांश प्रसव परम्परागत प्रसव कार्यकर्ताओं से ही प्रसव कराना उपयुक्त समझते है क्योंकि आधुनिक चिकित्सकों से परम्परागत प्रसव कार्यकर्ता कम खर्चीले होते है। स्वास्थ्य केन्द्रों की बजाय घर पर प्रसव कराने से महिलाओं में संक्रामक बीमारियों अथवा छुआछूत के रोगी के होने की सम्भावना अधिक रहती है। प्रसव के पश्चात महिलाओं को अधिक कैलोरी, प्रोटीन, आयरन एवं अन्य स्वास्थ्यवर्धक पदार्थों की आवश्यकता

होती है। लेकिन निर्धनता के कारण परम्परागत खाद्य पदार्थ जैसे हल्दी गुड एवं गेहूँ का हलवा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं दे पाते है जिससे महिलाओं में कुपोषण, आयरन की कमी, विटामिन बी की कमी तथा विटामिन डी की कमी के कारण भिन्न भिन्न रोग होते है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक सर्वेक्षण के अनुसार विकासशील देशों में गर्भधारण करने वाली महिलाओं का दो तिहाई मात्रा आयरन की कमी से पीड़ित है और एशिया में यह स्थिति और भी दयनीय है।

जनजातीय महिलाओं के प्रसव परम्परागत माध्यमों द्वारा घर पर ही सम्पादित किये जाते है। जनजातीय क्षेत्रों में आज भी प्रसव हेतु महिलाएं सरकारी स्वास्थ्य केन्द्रों का उपयोग नहीं करती है। जनजातीय क्षेत्रों में प्रसव हेतु महिलाओं को स्वास्थ्य केन्द्र ले जाने हेतु साधानों का अभाव के कारण अधिकांश प्रसव घर पर ही सम्पन्न कराये जाते है जिसे घर या गाँव की वृद्ध महिलाओं की देखरेख में सम्पन्न कराये जाते है।

प्रजननता दर – प्रजननता दर का महिला स्वास्थ्य स्तर से गहरा सम्बन्ध है। भारत में प्रजननता दर 3–6 वहीं राजस्थान में प्रजननता दर 4–6 से अधिाक रही है। राजस्थान में प्रजननता दर की अधिकता का कारण जनजाति क्षेत्र में प्रजननता दर अधिक होना एवं परिवार नियोजन के तरिकों को नहीं अपनाना है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार राजस्थान में केवल 40 प्रतिशत दम्पती परिवार नियोजन के तरिकों को अपना रही है उसमें से महिला नसबन्दी 31 प्रतिशत ही है जबकि 9 प्रतिशत अस्थाई विधियों को अपना रहे है। जबकि राज्य के दक्षिणी भाग जहां जनजाति बाहुल्य क्षेत्र है वहां परिवार नियोजन की विधियों की उपयोग मात्र 25 प्रतिशत से भी कम है।

मद्यपान – जनजातीय समुदाय में सामाजिक, सांस्कृतिक स्तर पर मद्यपान का सेवन, प्रचलित हैं। स्त्री व पुरुष दोनो सम्मिलित रूप से शराब का सेवन करते हैं शराब के अतिरिक्त तम्बाकु, बीडी, गुटखा, आदि का प्रयोग स्त्री व पुरूष दोनों करते हैं। कई जनजातीय परिवारों के घरो में शराब बनाई जाती हैं तथा मेहमान नवाजी में शराब पिलाने की प्रथा प्रचलित है। मद्यपान स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हैं मद्यपान के कारण स्त्री, पुरूष में झगडे, अत्यधिक होते हैं जनजातीयों में आर्थिक विपन्नता का प्रमुख कारण मद्यपान हैं। जनजातीय समाज की मद्यपान करने वाली महिलाओं का मत है कि शराब पीने से थकावट दूर होती है तथा शारीरिक स्फुर्ति के लिए शराब का सेवन आवश्यक हैं स्वास्थ्य पर मद्यपान के प्रभावों की जानकारी होते हुए भी पुरूष एंव महिलाएं सम्मिलित रूप से शराब का सेवन करते हैं।

रोग एवं उपचार – प्राय: जनजातीय क्षेत्रों में सामान्य बीमारियां एवं मौसमी बीमारियों के रोगी अधिक पाये जाते है। जनजातीय क्षेत्रों में सामान्य बीमारी में सर्दी जुकाम, खाँसी, उल्टी दस्त, पेट दर्द, सिर दर्द एवं मलेरिया रोगी पाये जाते है। जनजातीय क्षेत्रों में मौसमी बीमारियों का प्रकोप अत्यधिक होता है। सामान्यतया वर्षा ऋतु मंट पेयजल के कारण, गर्मी में उल्टी दस्त, पेट दर्द के रोगी अधिक पाये जाते है। जनजातीय लोग अपने निवास स्थान के पास ही कृषि कार्य करते है। पशुओं एवं मवेशियों के मल मूत्र गन्दगी के कारण मलेरिया के रोगी होने की सम्भावना अधिाक रहती है। भोजन में पोषक तत्वों जैसे विटामिन, प्रोटीन, केल्शियम वसा की कमी के कारण महिलाए शारीरिक रूप से दुर्बल एवं कमजोर प्रतीत होती है। जनजातीय महिलाए रूखा सुखा भोजन कर कठोर परिश्रम करती है।

चिकित्सा पद्धति – जनजातीय महिला स्वास्थ्य स्तर को प्रभावित करने में परम्परागत चिकित्सा पद्धति की प्रमुख भूमिका रही है। जनजातीय क्षेत्रों में आधुनिक चिकित्सा पद्धति के रूप में उपलब्ध सरकारी स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थिति दयनीय है। महिला चिकित्सकों का कमी, दवाईयों एवं उपकरणों के अभाव के कारण जनजातीय समुदाय को आधुनिक चिकित्सा पद्धति आकर्षिक नहीं कर पाई। आज भी अशिक्षा व निर्धानता के कारण जनजातीय लोगों को परम्परागत चिकित्सा माध्यमों से उपचार करवाना मजबूरी हो गया है। परम्परागत चिकित्सा पद्धति सामुदायिक स्तर पर उपयोग किये जाने के कारण महिलाओं को भी विभिन्न रोगों का उपचार इसी माध्यम से कराना होता है।

जनजातीय महिलाएँ परम्परागत चिकित्सा पद्धति के रूप में जादू टोना, देवी देवताओं से मनौती, जड़ी बूटियों, भोपा या लोक चिकित्सक की सलाह एवं उपचार लेती है। जनजातीय क्षेत्रों में सरकारी स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति दयनीय है। इसी कारण जनजातीय लोग निजी दवाखानों में नीम हकीमों से उपचार कराते है। जनजातीय क्षेत्रों में सरकारी स्वास्थ्य सुविधाएं अधुरी है। जनजातीय क्षेत्रों में महिला चिकित्सको की कमी के कारण महिलाएँ अपने विभिन्न रोगों एवं बीमारियों के बारे में पुरूष चिकित्सको को बताने में संकोच करती है इसके अतिरिक्त चिकित्साकर्मियों का उपेक्षित व्यवहार, महंगा उपचार एवं स्वास्थ्य केन्द्रो पर चिकित्सकों की अनियमितता के कारण आधुनिक चिकित्सा पद्धति का लाभ जनजातीय समाज को नहीं मिल पाया है जिससे महिला स्वास्थ्य की स्थिति दयनीय बनी हुई है।

लिंग अनुपात – स्वस्थ्य समाज के निर्माण में पुरूष एवं महिला के अनुपात में समानता आवश्यक है। भारत में 2021 की जनगणना के अनुसार प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की संख्या 1020 है जबकि अनुसूचित जनजाति में प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की संख्या केवल 990 ही है। अनुसूचित जनजाति में शिशु मृत्यु दर एवं कन्या वध की प्रथा के कारण लैंगिक असमानता बनी हुई है। राजस्थान में प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की संख्या 1009 है। अनुसूचित जनजातीयों में एक हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 948 है।

मातृ एवं शिशु मृत्यु दर – भारत में मातृ एवं शिशु मृत्यु दर विश्व की सर्वाधिक ऊँची दरों में एक है। राष्ट्रीय पारिवारिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार भारत में प्रति वर्ष 1,10,000 (एक लाख दस हजार) महिलाए गर्भ सम्बन्धी समस्याओं के कारण मर जाती है। 15 से 24 वर्ष उम्र की ग्रामीण महिलाओं की मृत्यु का 15 प्रतिशत गर्भ एवं शिशु जन्म सम्बन्धी कारणों से होता है। भारत में चिकित्सा प्रणाली में सुधार के कारण मातृ एवं शिशु मृत्यु दर में गिरावट आई है। 1951 तक शिशु मृत्यु दर 29 प्रति हजार थी जो 2021 में घटकर 3–61 रह गई है फिर भी जनजातीय क्षेत्रों में शिशु मृत्यु दर सामान्य से अधिाक है।

भारत में जनजातीय क्षेत्रों में मातृ एवं शिशु मृत्यु दर सर्वाधिक हैं। प्राय: गर्भवती महिलाओं को प्रसव के समय गम्भीर स्थिति में स्वास्थ्य केन्द्र पर ले जाने तक ही जच्चा बच्चा की मृत्यु हो जाती है। जन्म के पश्चात नवजात शिशुओं में पौष्टिक आहार की कमी, दस्त, तपेदिक, पोलियों, डिपिथरिया, टिटनेस और काली खाँसी आदि के कारण मृत्यु दर अधिक है। जनजातीय क्षेत्रों में एक वर्ष से कम आयु के प्रति एक हजार बच्चों पर 122 बच्चों की मृत्यु हो जाती है तथा 2 से 5 वर्ष की आयु के प्रति हजार 5 शिशुओं की मृत्यु हो जाती है। जनजातीय क्षेत्रों में मातृ एवं शिशु मृत्यु दर का प्रमुख कारण टीकाकरण का अभाव एवं कुपोषण है।

जनजातीय समाज में महिला प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य से जुड़ी विभिन्न समस्याऐं के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि जनजातीय महिलाओं में स्वास्थ्य चेतना एंव जागरूकता का अभाव हैं कुपोषण परिवार नियोजन के अभाव, किशोरावस्था में विवाह, शीघ्र गर्भधारण एंव मातृत्व, गर्भावस्था में उचित देखरेख का अभाव, सुरक्षित प्रसव का अभाव, प्रजनन दर की अधिकता के कारण जनजातीय महिलाओं की स्थिति दयनीय बनी हुई है। आधुनिक चिकित्सा पद्धति महंगी, तकनीकी जटीलता एवं चिकित्सक व रोगी के मध्य असामान्य व्यवहार होने के ही कारण जनजातीय समाज इसका लाभ नहीं ले पाया है। जनजातीय क्षेत्रों में स्थित सरकारी स्वास्थ्य सेवाऐं अधूरी है। अशिक्षा, निर्धनता एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के कारण परम्परागत चिकित्सा पद्धति को अपनाना इनकी मजबूरी बन गया है। जनजातीय समाज में महिलाओं की स्वास्थ्य समस्याओं में सुधार हेतु यह आवश्यक है कि उनमें वर्तमान विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक सुधारों में तेजी लाकर मुफ्त स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवाऐं सुलभ करवाई जाये। जनजातीय क्षेत्रों में महिला चिकित्सकों की नियुक्ति की जावे जिससे महिलाएँ बिना संकोच के अपनी बीमारियों पर सलाह एवं उपचार ले सके। जनजातीय क्षेत्रों में वर्ष में कम से कम एक या दो निशुल्क कैम्प लगाये जाये जिसमें महिला एवं शिशु स्वास्थ्य की सुविधा उपलब्ध कराई जाए। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य केन्द्रों, आंगनवाड़ी केन्द्रों पर महिलाओं को नि:शुल्क दवाईयां एवं जाँच सुविधा उपलब्ध कराई जाए। जनजातीय महिलाओं में स्वास्थ्य चेतना एवं जागृति के विकास हेतु आंगनवाड़ी कार्यकर्ता, आशा सहयोगी एवं ए.एन.एम. द्वारा टीकाकरण, प्रसव सुरक्षा, परिवार नियोजन, मातृ एवं शिशु देखरेख सम्बन्धी जानकारी क्षेत्रीय भ्रमण द्वारा समय-समय पर देते रहे। जनजातीय क्षेत्रों में स्थित लोक चिकित्सकों, औझाओं एवं दाईयों को प्रशिक्षित कर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों से जोड़ा जाये जिससे महिलाओं एवं शिशु स्वास्थ्य को उच्च बनाया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह, वीणा, पाणि 1998 'ग्रामीण स्वास्थ्य संरक्षण' क्लालीकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली
2. यादव, मारकण्डेल सिंह 1994 'आदिवासी समुदाय के स्वास्थ्य के पक्ष में', रावत पब्लिकेशन, जयपुर
3. जैन एम.के. 2002 जनजातीय महिलाओं की प्रस्थिति एवं स्वास्थ्य, पीएचडी शोध समाजशास्त्र विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर पेज नं. 123-183
4. आदिवासी स्वास्थ्य पत्रिका, क्षेत्रीय जनजाति आयुर्विज्ञान केन्द्र गठा, जबलपुर, मध्यप्रदेश 2002 पेज नं. 11-13

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महिला उपभोक्ताओं के क्रय व्यवहार पर सोशल मीडिया विज्ञापन के प्रभाव का अध्ययन (सागर जिले के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. निलेश महाजन* दामोदर पटेल**

* सहा. प्राध्यापक (वाणिज्य) बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' शासकीय महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी, वाणिज्य अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – सोशल मीडिया विज्ञापनों ने उपभोक्ताओं क्रय एवं उपभोग आदतों को प्रभावित किया है। आधुनिक एवं तकनीकी विकास के कारण परिवार एवं व्यक्तिगत आवश्यकताओं में परिवर्तनके कारण वस्तु एवं सेवाओं की मांग एवं उपभोग में वृद्धि करने में सोशल मीडिया विज्ञापनों के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए सागर जिले से 200 महिला उत्तरदाताओं को अध्ययन किया गया है। महिलाओं द्वारा सोशल मीडिया पर विज्ञापन से प्रभावित होकर क्रय निर्णय में वस्तु का मूल्य, गुणवत्ता, वास्तविकता एवं उपयोगिता का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। उच्च उपभोक्ता सन्तुष्टि के साथ सकारात्मक कारक के रूप में वस्तु विशिष्टता, आनन्द, विश्वास एवं वास्तविकता महत्वपूर्ण रूप से सम्बन्धित है।

शब्द कुंजी – उपभोक्ता, बाजार, क्रय व्यवहार, विज्ञापन।

प्रस्तावना – पिछले दो दशक में डिजिटल क्रांति ने दुनिया के प्रत्येक देश, राज्य एवं क्षेत्र में एक ऐसे संचार माध्यम का विस्तार किया जो न केवल पुराने माध्यमों से भिन्न है, बल्कि सार्वभौमिक एवं विश्वव्यापी है। कम्प्यूटर एवं स्मार्टफोन आधारित इस माध्यम को साइबर मीडिया, वेब मीडिया, इंटरनेट मीडिया एवं सोशल मीडिया के नाम से जाना जाता है।[1] विश्व के लगभग 44 प्रतिशत लोग इंटरनेट का प्रयोग कर रहे है इंटरनेट उपयोगकर्ताओं का 70 प्रतिशत सोशल नेटवर्किंग साइटों से जुडें है। भारत की जनसंख्या में 35 करोड़ से अधिक इंटरनेट का उपयोग करते है जो कुल आबादी का 28 प्रतिशत है। इनमें 80 प्रतिशत व्यक्ति सोशल मीडिया से जुडे है तथा सोशल मीडिया के उपयोगकर्ताओं की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है।[2]सोशल मीडीया इंटरनेट पर तुलनात्मक खरीदारी के लिए एक उपयोगी उपकरण के रूप में उभरा है। उपयोगकर्ता अक्सर उत्पादों को देखने और उनकी तुलना करने के लिए विभिन्न साइट्स पर क्लिक करते हैं। ग्राहकों को ऑनलाइन वस्तु की सुचना, क्रय तथा उपयोग सम्बन्धी जानकारी का विस्त्रत विवरण प्रस्तुत कर भुगतान सम्बन्धी सुविधानुसार क्रय के लिए प्रेरित किया जाता है। ऑनलाइन क्रय सम्बन्धी अनेक समस्याऐं विद्यमान है जिनमें ऑनलाइन धोखाधड़ी, बैंक विवरण तथा खातों की हैकिंग आदि समस्याऐं विद्यमान है।[3]

सोशल मिडीया का अस्तित्व इंटरनेट के कारण है। इंटरनेट पर विश्व प्रसिद्ध वेबसाइट की सुविधा का उपयोग सोशल मिडीया कहलाता है। जिनमें प्रमुख ऐप्लीकेशन फेसबुक, ट्विटर, व्हाट्सएप, यूट्यूब, इन्स्टाग्राम, स्नेपचैट जैसी अनेक सोशल वेबसाइट का उपयोग सम्मिलित है।4 आज सोशल मिडीया ऐसा उपकरण है जो उपयोगकर्ता को अनेक व्यक्तियों से सम्पर्क, जानकारी एवं सामग्री प्रचार–प्रसार एवं उपयोग की जानकारी के लिए किया जा रहा है। सोशल मिडीया के प्रयोग ने उपभोक्ता व्यवहार में एक बड़ा बदलाव आया है जो खुदरा बिक्री और उनकी रणनीतियों के तरीकों को प्रभावीत कर रहा है। उपभोक्ताओं की धारणाओं, विकल्पों और विचारों और पसन्द के सन्दर्भ में बदलाव आया है बल्कि क्रेताओं के क्रय व्यवहार तथा तरीकों में बदलाव आया है।[5]वर्तमान में इंटरनेट एवं स्मार्टफोन दैनिक जीवन का अनिवार्य हिस्सा बन गया है। प्रत्येक वर्ग एवं आयु का व्यक्ति स्मार्टफोन का उपयोग करने लगा है। स्मार्ट फोन एवं इंटरनेटसंचार उपकरण के रूप में सामाजिक उपकरण, मनोरंजन, भुगतान, ज्ञान एवं जानकारी विभिन्न ऐप्लीकेशन का उपयोग करके लेन–देन एवं भुगतान करने के लिए कर रहे है। सुरक्षित एवं आसान भुगतान के अतिरिक्त क्रय रसीदें, कूपन, बिजनेस कार्ड, बिल का संकलन आदि सुविधाओं को प्राप्त कर सकते है।[6]

सोशल मिडीया के बढ़ते उपयोग ने उपभोक्ता क्रय व्यवहार में परिवर्तन लाकर ऑनलाइन शॉपिंग ओरिएंटेशन, उत्पाद प्रकार और शॉपिंग विज्ञापन के प्रभाव से उपभोक्ता ऑनलाइन क्रय व्यवहार को विशिष्ट क्रय व्यवहार में परिवर्तीत किया है। ऑनलाइन उत्पाद गुणवत्ता ग्यारन्टी, विक्रय सहायक क्रियाओं का संचालन, भुगतान प्रक्रिया तथा घर पँहुच सेवा सुविधाओं ने उपभोक्ता क्रय निर्णय पर महत्वपूर्ण प्रभाव स्थापित किया है।[7] उक्त अध्ययन मूल रूप से महिला उपभोक्ताओं द्वारा सोशल मीडियाके उपयोग एवं विज्ञापन से प्रभावित होकर ऑनलाईन क्रय, वस्तु एवं सेवा क्रय एवं उपभोग निर्णय पर आधारित है। सोशल मीडिया के प्रयोग से उत्पाद एवं सेवा की पंसद, व्यवहार, गुणवत्ता, कीमतों और उपभोक्ताओं को संतुष्टि पर केन्द्रीत है।

साहित्य समीक्षा :

खांडेला, मानचन्द (2002)[8] ने अपनी पुस्तक 'उपभोक्ता संरक्षण कानून एवं व्यवहार' में में व्यवहारिक पक्षों जैसे– टेलीफोन विभाग की सामान्य अनियमितताऐं, चिकित्सा नीति और उपभोक्ता हित, उपभोक्ता आंदोलनों में संगठनों की भूमिका, मिलावट की बढ़ती समस्या में स्पष्ट किया है कि मिलावट के माध्यम से माप–तोल की जाँच के सहज तरीकों की जानकारी दी है।

पाटीदार सोहन, शर्मा, कु. सुनील (अगस्त–2009)[9] में अपने शोध–पत्र में ग्रामीण एवं शहरी उपभोक्ताओं के क्रय व्यवहार का अध्ययन में स्पष्ट किया कि ग्रामीण एवं शहरी उपभोक्ताओं की क्रय व्यवहार में अंतर पाया

जाता है उन्होंने बताया कि ग्रामीण उपभोक्ता की तुलना में शहरी उपभोक्ता की क्रय शक्ति, सौदेबाजी तथा वस्तु की गुणवत्ता परखने कि प्रवृत्ति अधिक सटीक होती है। अत: ग्रामीण उपभोक्ता की अपेक्षा शहरी उपभोक्ता में जागरूकता अधिक होती है।

शर्मा, विजय कुमार (2011)[10] ने अपने अध्ययन में बताया की सूचना प्राद्यौगिकी से बाजार के स्वरूप में तीव्र परिवर्तन हुआ है तथा रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है। सरकार ने सूचना प्राद्योगिकी से सम्बन्धीत उत्पादन गतिविधियों की ईकाई, जॉबवर्क, सेवा, अथवा प्रशिक्षण के लिए ऋण स्वीकृत योजनाओं का विकास किया है। समाचार, नेटवर्किंग, चिकित्सा, मनोरंजन, कृषि सम्बन्धीत जानकारी प्राप्त हो रही है, जिससे रोजगार एवं उपभोक्ता बाजार में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है।

श्रीवास्तव निषा (2011)[11] विज्ञापन ने उपभोक्तावादी विचारधारा एवं मनोवृत्ति का विकास किया है। बाजार परिस्थितियों में प्रत्येक व्यक्ति उपभोक्ता होता है। प्राय: सभी उत्पादक अपने उत्पाद की जानकारी प्रदान करने के साथ विक्रय में वृद्धि करने के लिए विज्ञापन का प्रयोग करते है। उचित मूल्यों पर उपयोगी एव गुणवत्ता वाली वस्तुओं का क्रय करना उपभोक्ता का अधिकार है। विज्ञापनों के प्रभाव से उपभोक्ता इतना प्रभावित है कि अनावश्यक वस्तुएँ एवं सेवाएँ पर व्यय में वृद्धि हुई है। विज्ञापनों के प्रभाव से उपभोक्ता वर्ग पर अनावश्यक व्यय भार एवं शोषण का शिकार हो रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. महिला उपभोक्ताओं के क्रय निर्णय पर सोशल मीडिया के प्रयोग की स्थिति का अध्ययन करना।
2. महिला उपभोक्ताओं के सोशल मीडिया से प्रभावित होकर क्रय सन्तुष्टि का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

H_0: महिला उपभोक्ताओं के क्रय निर्णय एवं सोशल मीडिया के प्रयोग के मध्य सम्बन्ध नहीं है।

शोध प्रविधि : तकनीकी विकास के परिणाम स्वरूप उपभोक्ताओं के व्यवहार में परिवर्तन की जांच करने के लिए सागर जिले से 200 महिला उत्तरदाताओं को अध्ययन का आधार बनाया गया है जिनमें विभिन्न आयु सामाजिक वर्ग, के अन्तर्गत छात्र, पेशेवर तथा गृहणियों केक्रय व्यवहार का अध्ययन साक्षात्कार अनुसूची से प्राप्त तथ्यों के आधार पर किया गया है। साक्षात्कार अनुसूची में महिला उपभोक्ताओं द्वारा क्रय निर्णय को सोशल मीडिया पर वस्तु मूल्य, गुणवत्ता, तकनीक तथा विपणन रीति के अन्तर्गत क्रय निर्णय पर सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

शोध योजना :–

समंक स्त्रोत	प्राथमिक एवं द्वितीयक समंक
शोध उपागम	सर्वेक्षण विधि
प्रतिदर्श क्षेत्र	सागर जिला
सर्वेक्षित ईकाई	महिला उपभोक्ता
प्रतिदर्श प्रकार	दैव निदर्शन
प्रतिदर्श आकार	200 महिला उपभोक्ता
शोध उपकरण	विषय आधारित निर्मित साक्षात्कार अनुसूची

तथ्य विश्लेषण – विभिन्न स्तर के महिला उपभोक्ताओं का चयन (छात्र, पेशेवर तथा महिलाओं) क्रय व्यवहार पर वैश्विक स्तर की वस्तुओं के क्रय व्यवहार को जानने के लिए दैव निदर्शन विधि से चयनित 200 महिला उत्तरदाताओं की व्यक्तिगत जानकारी का वर्णन तालिका क्रमांक 1 में किया गया है –

तालिका क्रमांक – 1

क्र.	विवरण	वर्गीकरण	प्रतिशत
1	आयु	18 वर्ष से कम	19%
		18 से 35 वर्ष	47%
		35 वर्ष से अधिक	34%
2	शिक्षा	12वी अथवा कम	11%
		स्नातक	57%
		स्नातक से अधिक	32%
3	व्यवसाय	विद्यार्थी	36%
		गृहणी	23%
		नौकरी/व्यवसाय	41%
4	परिवार की मासिक आय	15000 रू. अथवा कम	5%
		15000 रू. से 25000	34%
		25000 रू. से अधिक	61%

स्रोत :–प्राथमिक समंक विश्लेषण।

उपभोक्ता क्रय निर्णय को प्रभावित करते है जैसे आयु, आय, लिंग, व्यवसाय और शिक्षा आदि महत्वपूर्ण कारक है जिनका सोशल मीडिया के उपयोग एवं क्रय शक्ति पर प्रभाव पडता है। तालिका 1 के अनुसार सोशल मीडिया उपयोगकर्ता महिला उपभोक्ताओं उत्तरदाताओं की आयु के अन्तर्गत 19 प्रतिशत 18 वर्ष से कम है। 47 प्रतिशत उत्तरदाताओं की आयु 18 से 35 वर्ष के मध्य एवं 34 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं की आयु 35 वर्ष से अधिक है। सोशल मीडिया के उपयोगकर्ताओं महिलाओं की शिक्षा का स्तर 11 प्रतिशत 12 वीं अथवा कम, 57 प्रतिशत स्नातक एवं 32 प्रतिशत स्नातक से अधिक शिक्षित है। व्यवसाय की प्रकृति के अन्तर्गत 36 प्रतिशत विद्यार्थी, 23 प्रतिशत गृहणी एवं 41 प्रतिशत महिलाएँ नौकरी अथवा व्यवसाय से सम्बन्धीत है। पारिवारिक आय के अनुसार 5 प्रतिशत महिलाओं की मासिक आय 15000 रू. अथवा कम, 34 प्रतिशत 15000 रू. से 25000 रू. के मध्य जबकि 61 प्रतिशत की मासिक आय 25000 रू. से अधिक है। सोशल मीडिया के उपयोग के अतिरिक्त उपभोक्ता व्यवहार को प्रभावित करने वाले कई कारक है। क्रय निर्णय तथा उक्त कारकों के मध्य महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। उत्पाद के मूल्य, आकार और गुणवत्ता के आधार पर ग्राहक धारणा बदल रही है तथा ग्राहक कम कीमत पर श्रेष्ठ वस्तु की मांग करते है।

तालिका क्रमांक – 2

क्र.	वर्गीकरण	विश्लेषण	विशेषता
1	सोशल मीडिया उपयोग की अवधी	3.43 Year	Mean
2	प्रतिदिन इंटरनेट उपयोग की अवधी	2.32 Hour	Mean
3	सोशल मीडिया पर विभिन्न सामग्री अथवा सेवा सम्बन्धी विज्ञापन देखने की स्थिति	94%	Agree
4	सोशल मीडिया पर विज्ञापन का क्रय निर्णय पर प्रभाव	84%	Agree
5	सोशल मीडिया पर उपलब्ध सामग्री सम्बन्धी जानकारी सत्य व विश्वसनीय होती है।	64%	Agree

6	सोशल मीडिया पर उपलब्ध जानकारी वस्तु क्रय निर्णय को आसान बनाती है।	58%	Agree
7	सोशल मीडिया उपयोग भुगतान को आसान व सुक्षित है?	73%	Agree
8	सोशल मीडिया द्वारा क्रय निर्णय लिए जाने पर आनन्द की अनुभूति	62%	Agree
9	सोशल मीडिया से क्रय निर्णय पश्चात् वस्तु गुणवत्ता सम्बन्धी भय की अनुभूति	74%	Agree
10	सोशल मीडिया माध्यम द्वारा क्रय निर्णय पर अन्य लोगों की राय का प्रभाव	58%	Agree
11	सोशल मीडिया माध्यम द्वारा क्रय निर्णय में परिवार अथवा दोस्तों की सहमती का प्रभाव	23%	Agree
12	सोशल मीडिया माध्यम द्वारा क्रय द्वारा सन्तुष्टि की स्थिति	47%	Agree

स्रोत :- प्राथमिक समंक विश्लेषण।

सोशल मीडिया के अन्तर्गत महिला उपभोक्ताओं द्वारा विभिन्न सोशल साईट जिनमें फेसबुक, इन्टाग्राम, ट्विटर, व्हाट्एप आदि का उपयोग करने की अवधि के अन्तर्ग औसत रूप से 3.43 वर्ष किया जा रहा है। प्रतिदन सोशल मीडिया पर औसत रूप से 2.32 घण्टे उपयोग किया जाता है। 94 प्रतिशत महिला उपभोक्ताओं द्वारा अपने पारिवारिक, व्यवसायिक कार्यो के अतिरिक्त स्मार्ट फोन अथवा कम्प्यूटर पर सोशल मीडिया पर चेटींग, जानकारी की प्राप्ति, वस्तुओं की खेज एवं मूल्यों की जानकारी प्राप्त करने पर समय व्यतित किया जाता है। सोशल मीडिया पर वस्तु सम्बन्धी जानकारी एवं विज्ञापन से प्रभावित होकर 84 प्रतिशत महिला उपभोक्ता द्वारा क्रय निर्णय लिया जाता है। किन्तु इसमें स्वयं अथवा परिवार की आवश्यकता एवं उपयोगिता का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। सोशल मीडिया पर उपलब्ध वस्तु सम्बन्धी जानकारी एवं वस्तु की वास्तविकता के अन्तर्गत 64 प्रतिशत महिला उपभोक्ताओं के अनुसार सत्य एवं विश्वसनिय है जबकि 36 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं के अनुसार सोशल मीडिया पर उपलब्ध वस्तु सम्बन्धी जानकारी गलत एवं भ्रमक होती है। वस्तु क्रय निर्णय के अन्तर्गत विभिन्न उत्पादों के मूल्य, गुणवत्ता, आकार आदि के सम्बन्ध में जानकारी के द्वारा 58 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं के वस्तु क्रय निर्णय में सहायता मिलती है जबकि 42 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं के अनुसार वस्तु की विशाल श्रृंखला एवं विविधता वस्तु क्रय निर्णय में कठिनाई उत्पन्न करता है। सोशल मीडिया द्वारा क्रय 73 प्रतिशत महिला उपभोक्ताओं के अनुसार भुगतान आसान व सुरक्षित है जबकि 27 प्रतिशत महिलाओं के अनुसार ऑनलाइन क्रय में भुगतान से सम्बन्धीत अनेक जोखिम उपस्थित होते है। 62 प्रतिशत महिलाओं के अनुसार सोशल मीडिया के द्वारा क्रय करने में आनन्द एवं गर्व की अनुभूति होती है जबकि 38 प्रतिशत महिला उपभोक्ताओं के अनुसार वस्तु की भौतिक प्राप्ति तक संदेह की स्थिति बनी रहती है।74 प्रतिशत महिला उपभोक्ताओं के अनुसार सोशल मीडिया के माध्यम से क्रय निर्णय के अन्तर्गत वस्तु गुणवत्ता के सम्बन्ध भय की स्थिति बनी रहती है। 58 प्रतिशत महिला उपभोक्ताओं द्वारा सोशल मीडिया के माध्यम से वस्तु क्रय सम्बधी जानकारी का प्रयोग किया जाता है। जबकि 42 प्रतिशत महिलाएँ स्वयं के विवेक आधारित होता है। मात्र 23 प्रतिशत महिला क्रेताओं द्वारा परिवार के सदस्यों, मित्रों से वस्तु क्रय सम्बन्धी सलाह का उपयोग किया जाता है। सम्पूर्ण निदर्श में 47 प्रतिशत महिला उपभोक्ता सोशल मीडिया के माध्यम से क्रय निर्णय से सन्तुष्ट है जबकि 53 प्रतिशत महिला उपभोक्ता असन्तुष्ट है। सोशल मीडिया के प्रयोग द्वारा वस्तु विज्ञापन, उत्पाद गुणवत्ता, ग्राहक की धारणाओं, सेवा गुणवत्ता तथा मूल्य, ग्राहक सन्तुष्टी और व्यवहारवादी मनोवृत्ती का सेवा और ग्राहक अभिविन्यास व्यवहार सकारात्मक रूप से सेवा सुविधा गुणवत्ता तथा उत्पाद गुणवत्ता से सम्बन्धीत है। उपभोक्ता सन्तुष्टि मूल्य से सम्बन्धीत है तथा ग्राहक सन्तुष्टि वस्तु की गुणवत्ता, वास्तविकता से सम्बन्धीत है।

परिकल्पना परीक्षण :-

H_0: महिला उपभोक्ताओं के क्रय निर्णय एवं सोशल मीडिया के प्रयोग के मध्य सम्बन्ध नहीं है।

H_a: महिला उपभोक्ताओं के क्रय निर्णय एवं सोशल मीडिया के प्रयोग के मध्य महत्वपूर्ण सम्बन्धहै।

उक्त शुन्य परिकल्पना का परीक्षण काई-वर्ग विधि द्वारा किया गया है। काई-वर्ग परीक्षण से प्राप्त परिणामों को तालिका में दर्षाया गया है-

Chi-Square Tests

	Value	df	Asymp. Sig. (2-sided)
Pearson Chi-Square	169.329a	3	.000
N of Valid Cases	**200**		

उपर्युक्त परिकल्पना के सम्बन्ध में 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर 3 स्वातन्त्र संख्या के लिये X^2 का सारणी मुल्य X^2_t= 7.815है तथा X^2 का परिमाणित मूल्य X^2_c = 169.329(0.00 प्रतिशत सार्थकता स्तर) प्राप्त है।

अर्थात7.815<169.329अर्थात $X^2_t < X^2_c$स्पष्ट है कि काई-वर्ग तालिका मूल्य से परिगणित मूल्य अधिक है। दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं है बल्कि दोनो गुणों में घनिष्ट सम्बन्ध है। अत: शुन्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती हैएवं वैकल्पिक परिकल्पना 'H_a: **महिला उपभोक्ताओं के क्रय निर्णय एवं सोशल मीडिया के प्रयोग के मध्य महत्वपूर्ण सम्बन्ध है।**' स्वीकृत होती है।

अत: कहा जा सकता है कि वस्तु क्रय निर्णय परसोशल मीडिया के प्रभाव ने लिंग आधारित विश्वास के स्तर को प्रभावित नहीं किया है। सोशल मीडिया के प्रति विश्वास को तीन तत्वों से जोड़ा जा सकता है जिसमें पहला सुरक्षा सम्बन्धीत, दूसरा अभिलेखों की सुरक्षा तथा गोपनियता, तिसरा भुगतान की सुविधा और सुरक्षा की सुविधा का विकास है।सोशल मीडिया के विकास ने ऑनलाईन व्यवसाय के माध्यम से वस्तु वितरण व्यवस्था तथा भुगतान प्रणाली को सुविधाजनक बनाकर व्यवसाय के क्षेत्र में नये युग का प्रारम्भ किया है।

निष्कर्ष - आधुनिक तकनीकी युग में क्रय निर्णय प्रक्रिया में डिजिटल एवं सोशल मीडिया के उपयोग का महत्वपूर्ण प्रभाव है। महिला उपभोक्ता सोशल मीडिया द्वारा क्रय निर्णय में पारिवारिक आवश्यकता एवं सहमति का सर्वाधिक प्रभाव होता है। महिलाओं द्वारा सोशल मीडिया पर विज्ञापन से प्रभावित होकर क्रय निर्णय में वस्तु का मूल्य, गुणवत्ता, वास्तविकता एवं उपयोगिता का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। उच्च उपभोक्ता सन्तुष्टि के साथ सकारात्मक कारक के रूप में वस्तु विशिष्टता, आनन्द, विश्वास एवं

वास्तविकता महत्वपूर्ण रूप से सम्बन्धीत है। सोशल मीडिया के उपयोग ने महिला उपभोक्ताओं के क्रय निर्णय को आसान बनाने के साथ सूचना स्रोतों में वृद्धि हुई है। महिला उपभोक्ताओं द्वारा सोशल मीडिया पर उपलब्ध सूचनाओं से प्रभावित होकर क्रय निर्णय के द्वारा वस्तु की गुणवत्ता के प्रति विश्वास में वृद्धि के परिणामस्वरूप वस्तु एवं सोशल मीडिया के प्रति सन्तुष्टि में वृद्धि हुई है। सोशल मीडिया के उपयोग ने वस्तु सम्बन्धी जानकारी की खोज और वैकल्पिक मूल्यांकन के प्रारम्भिक चरणों के दौरान महिला उपभोक्ताओं की सन्तुष्टि में वृद्धि की है किन्तु सटिक एवं ठोस क्रय निर्णय को प्रभावित करने में लिंग, शिक्षा, परिवार की प्रकृति, स्थानीय फुटकर एवं खुदरा बाजार की प्रकृति आदि कारकों के प्रभाव में कमी नहीं हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Malik, M. (2012), “A study on Customer’s satisfaction towards service quality of Oranised retail stores in Haryana” Indian Journal of Marketing, Vol.42, No.2 pp.51-60.
2. Chaubey,D.S. and Zafar,SMT (2010)“Consumer Buying Motives and Perceptions about Mobile Phone Services : A Study of Consumers of Uttarakhand”, Pragyaan, 8(1),22-32.
3. Anand,Sandip and Khare,Arpita (2010)“Television Advertisement Avoidance : An Assertion for Consumer Justice”,Pragyaan ,8(1),59-64.
4. Shih, H. (2004), “An empirical study on predicting user acceptance of shopping on the Web”, Information & Management, Vol.41, No. 3, pp 351-368.
5. Gupta, Stewart (1996) “Customer Satisfaction and Customer Behavior: The Differential Role of Brand and Category Expectations”. Marketing Letters, Vol. 7 (No. 3), pp. 258-261.
6. Dahiya,Richa (2010) “Factors Impacting Behaviour of Consumers towards On Line Shopping in India : A Factor Analysis Approach”, South Asian Journal of Management,17(2),29-46.
7. Constantinides, E. (2014) “Foundations of social media marketing”, Procedia – Social and Behavioral Sciences, Vol. 148, pp.40–57.
8. खंडेला मानचंद ,(2002): ‘उपभोक्ता संरक्षण कानून एवं व्यवहार’ आविश्कार पब्लिशर्स, जयपुर।
9. पाटीदार, सोहन एवं शर्मा, कुमार सुनील (अगस्त 2009)‘ग्रामीण एवं शहरी उपभोक्ताओं के क्रय व्यवहार का अध्ययन’ पत्रिका शोध समीक्षा और मूल्यांकन, अंक 7
10. शर्मा, विजय कुमार (2011): ‘गाँवों में समृद्धि की राह दिखाता सूचना प्रौद्योगिकी ऋण’ कुरूक्षेत्र, जून 2011, वर्ष 57, अंक 8, पृ. 15-19
11. निशा, श्रीवास्तव (2011):‘विज्ञापन का उपभोक्ता पर प्रभाव एवं उपभोक्ताओं की वैद्यानिक स्थिति एक अध्ययन’ Research Zone, vol 3, No. 3, June 2011

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Agrarian Social Relations in A North Indian Village

Dr. Arvind Sirohi* Mr. Pradeep Kumar Dr. Alok Kumar*****

*Assistant Professor (Sociology) C.C.S.University, Meerut (U.P.) INDIA
** Research Scholar (Sociology) C.C.S. University, Meerut (U.P.) INDIA
*** Professor & Head (Sociology) C.C.S. University, Meerut (U.P.) INDIA

Abstract : India means rural India. The village is the unit of the rural society. It is the theatre where the quantum of rural life unfolds itself and functions.The present research is helpful to know the gaps of knowledge in changing patterns of agrarian society in the emerging scenario. It also helps to understand the changing patterns of agrarian social relations in the socio-economic and political spheres of rural society in a northern Indian village of Western Uttar Pradesh.

Keywords: Peasant, Rural Society, Agrarian Relation, Caste.

Introduction - India means rural India. The village is the unit of the rural society. It is the theatre where the quantum of rural life unfolds itself and functions. Like every social phenomenon, the village is a historical category. The emergence of the village at a certain stage in the evaluation of the life of a man (Sharma, 2014). Agrarian societies are those which combine horticulture and animal husbandry in system of farming. This paradigmatic shift opened up many new areas of research, for example regarding the peculiar nature of land as a factor of production, the role of differing patterns of land-ownership, and the study of rural power structures and social stratification (Marshall:574).

It was the census of1901 that about 89.2 percent of Indians live in villages. Historically we all know India as an agricultural country. However the shift of rural population to urban areas was started since 1901. In the first census of 1951 the rural population sharp shifted towards urban life reducing with 82.7 percent of the population. According to 1991census the three- fourth of Indian population 74.3 percent lives in villages (Doshi: 12). Land is the hope and glory of village India. A villager is tied to land for his sustenance. He survives on land and, therefore, he is emotionally attached to it (Joshi, 2014:114). In agrarian societies land is the pre-eminent form of wealth. Agriculture continues to be the principal economic activity in India even though the country has experienced significant industrial and urban development in recent years. In India, agriculture is not merely an occupation or a business; it is a way of life which for centuries has shaped the thoughts and outlook of the rural people. All these facts more than justify the continued interest of social scientists on Indian rural life in general and agrarian social structure in particular (Bernstein, 2010).

Agriculture still plays a key role in the economy of India. Nearly one - third of the gross domestic product is accounted by agricultural sector. About two – third of the work force is engaged in agriculture. Agricultural inputs account for an important part of the raw material base of Indian industries. Agricultural exports contribute significantly to the total exports of country (Vyas, 2003: 41). The nature of agrarian change in India has been a subject of much debate. In the 21st century agrarian change coupled with livelihood issues have stirred significant debates in India's rural economy, while there has been a transformation in the agrarian economy of the country. There has not been much change in terms of the nature of its relationships (Das, 2017:219-232).

Doshi, (2014) suggested that the subject matter of rural sociology during the colonial period in India remained confined to the study of hill and forest people—the tribal, the villages and a few of the traditional institutions such as family and caste which were pervasive in small places. It was unhistorical for India to prepare a constitutional agenda for the development of more than five lakh villages. We are the country of more than Five Lakh villages. These villages are not homogeneous. They are diverse in ethnicity, quality of land, hills and plains and even diversified by geography. Bailey (1957) studied of two villages in Orissa brings out the problem of caste and class formation. Bailey argues that at the local level economic formulations run across the caste ranking. Bailey employs structural-functional method and analyses the rural life in the context of changing agrarian structure.

S.C. Dube (1955) Indian village is a traditional account of Shamirpeth, which is located in the Telangana region of Andhra Pradesh. Author founds in his early studies that,

"Agriculture is the main stay of the rural economy of India, the crafts and occupation of the country side and generally integrated with it". Dube finally finds a brief analysis of different castes that would be giving us a clear idea of the village economy in the context of rural development. The nature of study is holistic.

Beteille (1974) holds a wide conception by recognizing the inter- relatedness of the structural elements in agriculture such as technology work in organization of production and agrarian hierarchy. Social relations overflow the boundary of the village easily and extensively.The economy of the village is primarily based upon agriculture, and hence the relations of production consist essentially of relations between categories of persons contributing in different ways to the process of agriculture. Agrarian social structure can be comprehended on the basis of ownership, control on land and use of labour in the process of production of agricultural produces. This is seen in their choice of categories: feudal, landlord, bourgeois landlord, rich peasants, ruined peasantry, agricultural proletariat.

Singh, (2006) finds that the agrarian relations are largely determined by land tenure means ownership, tenancy and labour relations while agrarian structure means by covering all the structural conditions for production in agriculture and for livelihood and social situation of rural population. Both these aspects are greatly inter-related. The agrarian relations existing at a point of time reflect the influence of historical, political, social and economic factors. Therefore, the discussion on agrarian relations in this work takes a broader view comprising important aspects of both agrarian structure and land tenure in rural areas.The agrarian relations existing at a point of time reflect the influence of historical, political, social and economic factors. The social relations that underpin the organisation of livelihoods are pivotal in the processes and outcomes of agrarian change

Doshi, (2014) Describes thatLand is the hope and glory of village India. A villager is tied to land for sustenance. He survives on land and therefore, he is emotionally attached to it. Gandhi ji very rightly observed that if villages live who can perish India; and if villages perish, who can save India. As a matter of fact, the agrarian social structure is linked with the survival of the nation when the teachers and students are concerned with the development of villages; they are obliged to discuss the land problem of village India. Patel (1952) chiefly explained that the nature of agrarian crisis almost over India by the end of First World War. He quotes that, "With the end of the First World War, the beginning of an agrarian crisis was accompanied by the entry of peasants into the political arena, as exemplified during the Champaran and Keira campaigns led by Gandhi ji. As a result, the cultivator of the soil began to attract considerable attention from the students of Indian Society". Patnaik, (1986) the emerging capitalism is a major trend but still does not everywhere dominate the structure of agrarian production. The transformation process has occurred at varying rates in different parts of the country. Regional disparities have increased in a way that makes one aspect that more is at stake than a mere difference in stages of the same growth pattern. Uneven development is very much a feature of the general trend toward capitalism.

Joshi (1974) chiefly studied agrarian social structure that is primarily the study of groups connected with land. The differentiation of right over land leads to the formation of different group. Thus, the property structure constitutes the chief basis of productive activity in rural society. The property structure is further related to productive activity through an application of labour and land. Thus, agrarian social structure is basically in terms of relationship existing between the owner of land and the actual producers.

Thorner (1956) chiefly considers the agrarian relations as the nature of relations among the various groups of persons who draw their livelihood from the soil. Thus, he concludes that agrarian structure is the sum total of agrarian relation in which each group operates in relations to other groups and finds that in agrarian societies, land is the primary production asset of economic status and hence political power. It forms the basis of a relation between network productions and brings socio – economic framework within which production is carried on.

Statement of the Problem: In this context, some specific issues related to changing patterns of agrarian social relations in terms of rural economy, caste, caste hierarchy are studied in depth. Thus, the present study focuses upon the following specific questions:

1. What is the socio-economic background of the respondents in a rural setting?
2. What is the nature of agrarian relations in a rural setting?

The first questiontakes note of the socio-economic background of respondents in a rural setting in terms of age, sex, religion, caste, education, occupation, size of land holdings and type of family, etc.

The second question elucidates of the nature of agrarian relations in a rural setting in terms of formal, informal and both.

Area of Study

Geographical Area : The area of the study was conducted in Bulandshahr district of western Uttar Pradesh. Bulandshahr district lies in western part of Uttar Pradesh, which is located between the Yamuna and Ganga Doab. This district extends between 77^o-78^o longitudes and 28^o-28.4^o latitude, which is 237.44 meters above sea level. It is administratively divided into 7 tehsils; 16 blocks and 1244 villages. The village Firojpur is situated in the Khurja Block, which is situated at 15 kms from the Block and 35 kms from district headquarter in the Northeast. The main source of income of the villagers is depending on agriculture and related work.

Methodology: The methods of structural- functional, structural, structural-historical and historical-materialist or constitute the logic of enquiry. The methodology of rural sociology studies the rural communities primarily from social anthropology and sociology. It also draws heavily from economics and political science so far the village economy and Panchayati Raj are concerned.

Respondents and Sample Design : The respondents were select by purposive sampling method, because agrarian society is stratified in various occupational groups of persons as farmer, peasant, tenants, sharecroppers and landless agricultural labourers etc. Number of respondents was depended on availability, sources, suggestion of supervisor and circumstances.

Technique of Data Collection : The study was based on primary and secondary data. Primary data was collected from the respondents with the help of structured interview schedule, observation, and group discussion through a field survey in the village. Secondary data was collected from Govt. census, statistical records, published and unpublished material etc. The information from the respondent was collected by using the schedule/interview guide in the quantitative phase of data collection. The schedule/interview guide contains both close-ended and open-ended questions. The intensive case study method was also be used for data collection in the qualitative phase of data collection. The observation technique was also used for collection of data.

Methods of Data Analysis : Data collected with the help of interview and schedule/interview guide technique form respondents was analyzed quantitatively by using SPSS (Statistical Package for Social Science Data Analysis). Simple statistical techniques and also associations and co-relations were also looked into to indicate the degree of relationship between socio-economic profiles of the respondents. A qualitative analysis was also under taken of facts collected through observation and case studies.

Perspectives /Approaches : This village study was made through structural-functional methodology. This study was conducted by the method of positivism. On the one hand, researcher tries to understand the reality of society andresearcher himself works as a variable. The present research has made use of comparative and weberian perspective to study the changing patterns of agrarian social relations in terms of rural economy, caste, caste hierarchy, power structure and emerging caste class nexus in order to understand the socio-economic and political spheres of rural society.

Findings

Socio-Economic Background of the Respondents:

1. **Age-** Large number 48% of the respondents are (41-50) years old while small number 11% of the respondents are (51 & above) years old by age.
2. **Gender-** Large majority 82% of the respondents are male, while small number 18% of the respondents are female.
3. **Age and Gender-** The majority of the respondents in both male and female category are from (41-50) years age group, while the small number of the respondent in both male and female category belongs to the age group of (20-30) years.
4. **Caste-** Large number 63.5% of the respondents are from other backward class caste category and the small number 07% of the respondents are from general caste category.
5. **Gender and Caste-**The male of OBC caste category and the female of SC caste category are much more engaged in agricultural works.
6. **Religion-** All most all 93.5% of the respondents are Hindu, while a very few 06.5% of the respondents are Muslim by their religion.
7. **Education-**Large number 41.5% of the respondents were educated up to high school while small number 17% of the respondents were educated up to primary level.
8. **Education and Caste-** SC castes had low educational status, while OBC castes had high school education level because caste and land plays an important role in shaping educational opportunities.
9. **Occupation-**Large number 46% of the respondents were engage in daily wage labour/manual worker by occupation and a very few number 6.5% of the respondents were engage in non-working/ house wife as their occupation.
10. **Gender and Occupation-**164 male respondents are dominating in occupational category in comparison to the female respondents. Male respondents are the main source of income in their family..
11. **Caste and Occupation-** OBC caste category respondents are much more dominant in occupation and income than other caste categories. So, the study reveals that caste plays an important role in selection of their occupation.
12. **Income/month-** Large majority 68.5% of the respondents belongs to the income group of upto (Rs. 10,000/- to Rs. 20000/- and the small number 05.5% of the respondents exceed in the income group of Rs. 30,000/- and above. Thus mostly respondents belong to lower middle class families.
13. **Income and Caste-** OBC caste category respondents had higher income levels while sc caste category respondents had lower income levels. Thus, it can be said that there is a strong relation between caste and income.
14. **Religion and Income-** Religion plays an important role in income because it affects our source of income. The income of respondents of Hindu religion is slightly more than other religious groups.
15. **Residential Area-** All of the respondents lived in rural area.
16. **Types of Family-** Large majority 77.5% of the respondents lives in nuclear family and a very few number

02% of the respondents lives alone/ single types of family category.

17. Types of House- All 100% of the respondents live in pakka house and NIL of the respondents live in kachha house.

18. Marital Status- Large majority 77.5% of the respondents are married and a very few number 01% of the respondents are separated.

19. House Ownership- All 100% of the respondents have their own house.

Nature of Agrarian Relations in a Rural Setting :

1. Relations of labourer with their owner- Large number (55.44%) of the labourer have formal relations with their owner and the small number (5.43%) of the labourer has any other type of relations with their owner.

2. Types of works engagement- Large majority 81.53% of the respondents are engage in agricultural work as a labourer, while a very few 2.17% of the respondents are engage in any other type of agricultural work as a labourer.

3. Types of wages- Large majority 83.70% of the respondents are getting their wage in cash form, while a very small number 5.43% of the respondents are getting their wage in the form of goods.

4. Participation in Ceremonial Functions-Large majority 91.30% of the respondents are participating in ceremonial functions organized by their owner while small number 8.70% of the respondents are not participating in ceremonial functions organized by their owner.

5. Pattern of Participation in Ceremonial Functions- Large majority 79.76% of the respondents are participating without family in ceremonial functions organized by their owner while small number 20.24% of the respondents are participating with family in ceremonial functions organized by their owner.

6. Data information about the wages of female labourer in comparison with male labourer-All 100% of the respondents have responded that female labourer are not getting equal wage as male labourer.

7. Reason behind the difference of wages-Majority of the respondents have responded that female labourer is not able to do heavy work as male labourer, female labourer is not able to take risk as male labourer at work place and female labourer works at work place for very specific and limited time. However, the small number of the respondents does not support the fact that female labourer is not able to do heavy work as male labourer, female labourer is not able to take risk as male labourer at work place and female labourer works at work place for very specific and limited time.

8. Relations of cultivator/owner with their labourer- Large majority (63.88%) of the respondents have formal relations with their labourer and the small number (04.62%) of the respondents has any other type of relations with their labourer.

9. Types of works engagement-Large number (67.59%) of the respondents are engage in agricultural work as a cultivator/owner, and the small number (12.04%) of the respondents are engage in any other type of work as a cultivator/owner.

10. Types of wages-Large majority 85.18% of the respondents are giving the wage to their labourers in cash form, while a very small number 6.48% of the respondents are giving the wage to their labourers in the form of goods.

11. Participation in Ceremonial Functions-Large majority 87.04% of the respondents are participating in ceremonial functions organized by their labourer, while small number 12.96% of the respondents are not participating in ceremonial functions organized by their labourer.

12. Pattern of Participation in Ceremonial Functions- Large majority 90.74% of the respondents are participating without family in ceremonial functions organized by their labourer, while small number 9.26% of the respondents are participating with family in ceremonial functions organized by their labourer.

13. Place of hired labourers-Majority 72.22% of the respondents hired labourers from own village, while small number 2.78% of the respondents hired labourers from the town/city.

14. Types of Employment-Majority 72.22% of the respondents hired the labourers as casual type employment, while small number very few 5.56% of the respondents hired the labourers as other type of employment.

References:-

1. Bailey, F.G. 1958:"Caste and the Economic Frontier: A Village in Highland Orrisa", Bombay: Oxford University Press.
2. Bernstein, H. 2010:"Class Dynamics of Agrarian Change". Black point, Nova Scotia: Fernwood Publishing.
3. Beteille, Andre 1969:"Caste, Class and Power: Changing Patterns of Stratification in a Tanjore Village", Bombay, Oxford University Press
4. Beteille, Andre 1974:"Studies in Agrarian Social Structure", Delhi, Oxford University Press
5. Das, Sarmistha2017: "Agrarian Change and Women: Explorations from the Field", The Eastern Anthropologist, Vol.-70, No.-3-4, pp: 219-232
6. Doshi, S.L. and P.C. Jain, 2014:"Rural Sociology", New Delhi, Rawat Publications, pp:225
7. Dube,S.C. 1955:"Indian Villages", London, Routledge and Regan Paul.
8. Dube, S.C. 1960: "Ranking of Caste in Telangana Village", in D.N. Majumdar (ed.). Rural Profiles, Lucknow, Ethnographic and Folk Culture Society
9. Joshi, V. H.1974:"Some Observations on Changing Agrarian Relation in Two Villages of Gujarat". Paper presented in Seminar on Changing Agrarian Relations in India, held at National Institute Community Development, Hyderabad.

10. Mishra, G.P. 1977: "Some Aspect of Change in Agrarian Structure". New Delhi: Sterling Publishers.
11. Patel, Ramya Ranjan2018:"Political Economy of Agrarian Distress in India", Social Action Vol.-68, No. 3, pp: 250-264
12. Patnaik, Utsa1971:"Development of Capitalism in Agriculture", Social Scientist,1(2-3):15-31
13. Patnaik, Utsa. 1986:"The Agrarian Question and the Development of Capitalism in India: First Daniel Thorner Memorial Lecture". Delhi: Oxford University Press.
14. Redfield, Robert 1956:"The Little Community and Peasant Society and Culture", Chicago, University of Chicago Press
15. Sharma, K.L. 1986:"Caste, Class and Social Movements", Jaipur, Rawat Publication.
16. Sharma, K.L. 2010:"Perspectives on Social Stratification", New Delhi, Rawat Publication
17. Singh, J.P.2006: "Changing Agrarian Relationship in Rural India", Indian Journal of Agricultural Economics, Vol.-61, No. -1, pp: 36-64
18. Singh, J.P.2006: "Changing Agrarian Relationship in Rural India", Indian Journal of Agricultural Economics, Vol.-61, No. -1, pp: 36-64
19. Singh, Yogendra 1974: "Concepts and Theories of Social Change: A Trend Report", A Survey of Sociology and Social Anthropology, Vol.-I, Bombay, Popular Prakashan

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सूक्ष्म एवं कुटीर उद्यमियों पर प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के आर्थिक प्रभाव का अध्ययन (देवास जिले की विशेष संदर्भ में)

डॉ. जी. एल. खांगोडे* श्रीमती जया कुशवाह**

* सह प्राध्यापक, माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – मुद्रा (MUDRA), जिसका अर्थ है 'माइक्रो यूनिट्स डेवलपमेंट एंड रिफाइनेंस एजेंसी लिमिटेड', भारत सरकार द्वारा सूक्ष्म इकाइयों के उद्यमों के विकास और पुनर्वित्त के लिए स्थापित की जा रही एक वित्तीय संस्था है, जिसकी घोषणा माननीय वित्त मंत्री ने वित्त वर्ष 2016 के लिए केंद्रीय बजट पेश करते हुए गैर-कॉर्पोरेट लघु व्यवसाय क्षेत्र को धन उपलब्ध कराने के उद्देश्य से की थी। । परियोजना का उद्देश्य अध्ययन, माप और पहचान करना है कि क्या 'प्रधानमंत्री मुद्रा योजना' (पीएमएमवाई) एक समावेशी, टिकाऊ और मूल्य आधारित उद्यमशीलता संस्कृति बनाकर सतत विकास प्राप्त करने के लिए पिरामिड के लक्षित तल की सहायता करने आर्थिक सफलता और वित्तीय सुरक्षा प्राप्त करने में सक्षम है।

शब्द कुंजी – प्रधानमंत्री मुद्रा योजना, कॉर्पोरेट।

प्रस्तावना–भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान है। उद्योगों को विश्वभर में विकास के इंजन के रूप में जाना जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में भी यह उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं रोजगार सृजन, निर्यात, सकल घरेलू उत्पाद एवं राष्ट्रीय आय आदि में औद्योगिक क्रियाकलापों का महत्वपूर्ण स्थान है सूक्ष्म लघु और मध्यम उद्यम (माइक्रो स्मॉल एंड मीडियम एंटरप्राइजेज MSME) देश के विकास में अत्यंत ही सहायक सिद्ध हो रहे हैं। वर्तमान में एमएसएमई भारत की अर्थव्यवस्था में रोजगार का 45%, निर्यात का 50%, उद्योगों का 90%, सकल घरेलू उत्पाद का 10% योगदान देते हैं। वित्तीय वर्ष 2020 की औद्योगिक अनुसंधान रिपोर्ट के अनुसार भारत में 7 मिलियन से अधिक उद्यम ग्रामीण क्षेत्रों से है। भारतीय जनसंख्या का लगभग 70% ग्रामीण जनसंख्या का है और भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि कार्य एवं कृषि उपज का महत्वपूर्ण स्थान है एक महत्वपूर्ण लघु और मध्यम विकास अधिनियम 2006 भी नियमित किया है जिसका उद्देश्य सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम के संवर्धन एवं विकास को सरल व सुविधाजनक बनाना और प्रतिस्पर्धा को बढ़ाना है।वर्ष 2006 से लागू इस अधिनियम ने क्षेत्र की दीर्घावधि मांग को पूरा कर दिया है लेकिन 21 मई 2020 में इसमें संशोधन हुआ और इस संशोधन के अनुसार भारत के सभी राज्यों में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों को विनिमय एवं सेवा के क्षेत्र में विभाजित नहीं किया गया है बल्कि दोनों क्षेत्रों के लिए निवेश एवं वार्षिक टर्नओवर तय किए गए हैं।

राष्ट्रीय सर्वांगीण विकास तभी संभव है जब समाज की सभी निम्न आय वर्ग तथा साधन हीन वर्गों विशेषकर निर्धनों, सीमांत कृषको, भूमिहीन मजदूरों, दस्तकारों, महिलाओं आदि का समाज की मुख्यधारा के साथ विकास हो इसके लिए उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार की आवश्यकता है जो तभी संभव है जब उनके पास नियमित आय के स्रोत हो इसके लिए उन्हें स्वरोजगार व्यापार एवं अन्य आर्थिक क्रियाकलापों के लिए आवश्यक प्रशिक्षण दिया जाए और इन आर्थिक गतिविधियों के संचालन के लिए जरूरी पूंजी हेतु कम ब्याज दर पर आसानी से तथा समय पर पर्याप्त ऋण उपलब्ध कराने की प्रणाली का विकास किया जाए। सरकार द्वारा इन वर्गों के विकास और उत्थान के लिए अनेकों शासकीय योजनाओं एवं विशेष कार्यक्रमों को संचालित किया जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्र में संख्यावार बैंक शाखाओं का अत्यधिक विस्तार होने के बावजूद अनेक ग्रामीण निर्धन, गैर संस्थागत ऋण स्रोतों पर निर्भर करते हैं।इनकी बचत शुन्य अथवा नगण्य होती है जबकि अल्प अंतराल पर इन्हें सूक्ष्म वित्त ऋण बचत सहायता की आवश्यकता रहती है। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना इसी आवश्यकता को पूरा करने का सार्थक सफल प्रयास है। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना सूक्ष्म वित्तीय संस्थाओं एवं लघु व कुटीर उद्योगों को विनिर्माण व्यापार एवं सेवा गतिविधियों के लिए छोटी आसान प्रक्रिया के माध्यम से ऋण उपलब्ध करवाती है।

परियोजना का उद्देश्य:

1. पिरामिड के निचले भाग की पहचान करना है जिन्होंने म.प्र. राज्य के देवास जिले से 'मुद्रा ऋण' धारकों के रूप में पीएमएमवाई का लाभ उठाया है।
2. सामान्य उद्यमिता के विकास के लिए अग्रणी कारकों का अध्ययन करना।
3. पीएमएमवाई लाभार्थियों के कवरेज के रूप में मुद्रा ऋण धारकों के बीच सामान्य और महिला उद्यमिता के विकास को मापने के लिए।
4. भारत के गैर-कॉर्पोरेट लघु व्यवसाय खंड (एनसीएसबी) लाभार्थी उद्यमी जिन्होंने ऋण लिया है।

सैंपलिंग फ्रेम नमूना म.प्र. राज्य के देवास जिले में स्थित पीएमएमवाई लाभार्थियों में से चुना गया है।

नमूना आकार जिन 150 लाभार्थियों तक हम पहुंचे हैं, उनमें से हमें मुद्रा ऋण धारकों का पूरा डेटा प्राप्त हुआ है, जो पीएमएमवाई की 'शिशु, किशोर और तरुण' योजनाओं के लाभार्थी हैं।

सूक्ष्म, लघु और मध्यम एवं कुटीर उद्यमों का अर्थव्यवस्था में योगदान इस प्रकार है:

1. इस समय भारत में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम क्षेत्र की लगभग 36.1 मिलियन इकाइयाँ लगी हुई हैं।
2. वर्तमान में MSMEs ने भारत में 120 मिलियन लोगों को रोजगार दिलाया हुआ है।
3. MSMEs, भारत के कुल निर्यात में करीब 45% योगदान देते हैं।
4. MSMEs, भारत के विनिर्माण-सकल घरेलू उत्पाद में 6.11% का योगदान देते हैं, सेवा क्षेत्र से मिलने वाली GDP में 25% का योगदान देते हैं।
5. इस क्षेत्र ने लगातार 10% से अधिक की वार्षिक वृद्धि दर को बनाए रखा है.
6. देश के सकल घरेलू उत्पाद में इस क्षेत्र का योगदान लगभग 8% का है।
7. MSMEs की बहुत सी इकाइयाँ ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्थित है जिसके कारण गावों से शहरों की ओर पलायन रुका है।

उम्मीद है कि इस एक्ट में किये गए नए परिवर्तन आगे चलकर उद्योग क्षेत्र के विकास को और गति प्रदान करेंगे।

प्रधानमंत्री मुद्रा योजना का योगदान – भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी, ने भारतीय सरकार में आते ही भारत को विकास की ओर उन्मुख करने के लिए अनेक योजनाएं लागू की है, जिनमें से कुछ प्रमुख योजनाएंय जन-धन योजना, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना, स्वच्छ भारत अभियान, कौशल विकास योजना आदि हैं। भारत में स्वरोजगार को बढ़ाने के उद्देश्य से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदीजी ने, 8 अप्रैल 2015 को प्रधानमंत्री मुद्रा योजना की घोषणा की जिसके अन्तर्गत गरीबों को अपना कारोबार चलाने के लिए ऋण प्रदान किया जाएगा। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य कुटीर उद्योगों को और अधिक विकसित करके रोजगार के स्तर को बढ़ाना है।

कोविड-19 महामारी के कारण वित्त वर्ष 2020-21 को छोड़कर, योजना के तहत राष्ट्रीय स्तर के सभी लक्ष्यों को इसकी स्थापना के बाद से लगातार पूरा किया गया है।

यह योजना बैंकों, गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (NBFCs) और सूक्ष्म वित्त संस्थानों (MFIs) जैसे विभिन्न वित्तीय संस्थानों के माध्यम से गैर-कॉर्पोरेट लघु व्यवसाय क्षेत्र को वित्तपोषण प्रदान करती है।

भारत जैसे विकासशील अर्थव्यवस्था में लघु एवं कुटीर उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान हैं, ये उद्योग बड़े उद्योगों की तुलना में न्यूनतम लागत पर अधिक रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में न केवल अहम भूमिका निभाते है बल्कि ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्र के औद्योगिकीकरण में भी सहायता करते है. जिससे क्षेत्रीय असंतुलन में कमी होती है और राष्ट्रीय आय व धन का समान वितरण सुनिश्चित होता हैं।

Table no -01

S.	Financial Year	Distributed loan (In Lac Crore Rupees)	Percentile Increase in loan amount
1	2015-16	1.32	-
2	2016-17	1.75	0.32 %
3	2017-18	2.46	0.40 %
4	2018-19	3.11	0.26 %
5	2019-20	3.29	0.06 %

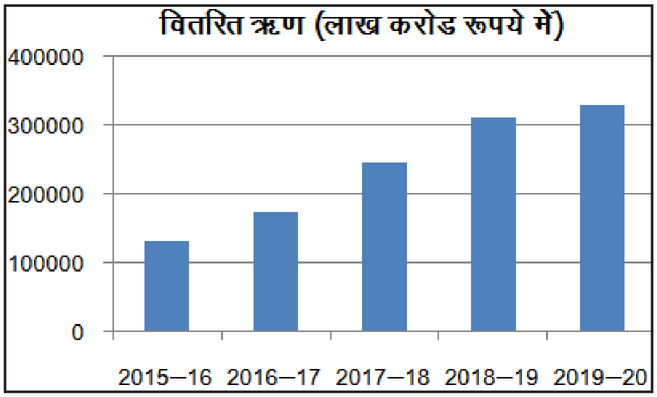

साहित्य समीक्षा – विगत कुछ वर्षों में सूक्ष्म एवं छोटे व्यवसाय पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। वर्तमान साहित्य समीक्षा में विभिन्न सिद्धांत और अवधारणा शामिल है जो प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के सकारात्मक एवं नकारात्मक तरीके से विश्लेषण करती हैं-

योगेश महाजन (2020) ने अपने शोध पत्र महाराष्ट्र राज्य में प्रधानमंत्री मुद्रा योजना (पीएमएवाई)का एक अध्ययन और समीक्षा में उल्लेख किया है कि भारत जैसे विकासशील एवं तेजी से बढ़ती जनसंख्या वाले देश में रोजगार के अवसर सृजित करने के लिए सूक्ष्म, लघु और कुटीर उद्योगों पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। इन उद्यमों को स्थापना में सहायता, ऋण सुविधा, प्रशिक्षण, जोखिम से सुरक्षा एवं समर्थन के रूप में सरकारी सहायता प्रदान की जाने की आवश्यकता है।उन्होंने अपने शोध पत्र में छोटे व्यवसायों एवं सूक्ष्म उद्यमो द्वारा सामना की जाने वाली प्रमुख समस्याओं जैसे प्रवेश स्तर की नीतियां वित्तीय निरक्षरता, जानकारी का अभाव, उच्च लागत, बुनियादी ढांचागत सुविधाओं की कमी, वित्तीय पहुंच की कमी और प्रौद्योगिकी बाधाओं आदि का विस्तार से विश्लेषण किया है। इन्होंने अपने शोध पत्र के माध्यम से बताया कि भारत सरकार द्वारा वर्ष 2015 में लागू की गई प्रधानमंत्री मुद्रा योजना महाराष्ट्र राज्य में काफी सफल रही है, परंतु सभी श्रेणियों के लोगों के वित्तीय समावेशन के लिए और अधिक प्रयास की आवश्यकता है।

अंजेश एच एल (2021) ने अपने शोध पत्र शिवमोग्गा (कर्नाटक) जिले में प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के जागरूकता स्तर पर एक अध्ययन में निष्कर्ष निकाला कि सूक्ष्म उद्यमियों के सामने आने वाली वित्तीय कठिनाइयों को समाप्त करने के लिए केंद्र सरकार ने मुद्रा नामक योजना को वित्त पोषित करने के लिए प्रारंभ किया है। उनका शोध कार्य अपने लाभार्थियों के बीच पीएमएवाई योजना के बारे में वर्तमान ज्ञान, जागरूकता और जागरूकता के स्त्रोत का अध्ययन करने के लिए किया गया है।आवृत्ति,प्रतिशत और टी

टेस्ट जैसे सांख्यिकी उपकरणों का उपयोग करके एवं परिकल्पना का परीक्षण करने के लिए एसपीएसएस के माध्यम से आंकड़ों का विश्लेषण किया गया था अध्ययन का निष्कर्ष निकाला गया की इसके लाभार्थियों के बीच पीएमएवाई योजना के बारे में जागरूकता का निम्न स्तर था और 36% उत्तर दाताओं की जागरूकता का स्त्रोत रिश्तेदारों और दोस्तों से है। उपरोक्त अध्ययन के माध्यम से शासकीय नीतियों एवं योजनाओं का उपयुक्त प्रचार प्रसार एवं क्रियान्वयन गुणवत्ता पूर्ण तरीके से किया जाना आवश्यक है यह बताने का प्रयास किया गया है।

शोध का क्षेत्र– भारत के करीब 638 345 गांवो में 24 करोड़ से अधिक निम्न वर्ग के लोग निवास करते हैं। मध्यम तथा लघु उद्योग मंत्रालय (MSME) की वर्ष 2012–13 की एक रिपोर्ट के अनुसार 361.76 लघु उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं स जिनके लिए वित्तपोषण तथा अन्य सुविधाओं की आवश्यकता होती है स इन्हें यह सुविधाएं देने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में सुविधाओं की कमी है क्योंकि उनके पास इतने छोटे स्तर पर सेवाएं देने के लिए मानव संसाधन की भी कमी है स देश के लिए एक बड़ी चुनौती के रूप में आजादी के बाद असंगठित क्षेत्र के लोगों का विकास की समस्या सामने आई क्योंकि देश का भी लक्ष्य सभी वर्गों का विकास है तथा इस समस्या को काफी समय पहले ही सरकारों तथा नाबार्ड ने समझ लिया था और इसलिए उद्यमों को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न ऋण योजनाओं को लागू किया जिसमें काफी हद तक सफलता मिली भी है और काफी तीव्र गति से भी काम हो रहा है।

शोध प्रविधि– प्रस्तावित शोध कार्य को पूर्ण करने में प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको का प्रयोग किया जाएगा।

प्राथमिक समंक – सूक्ष्म व कुटीर उद्योगों के सामने आने वाली समस्याओं को जानने के लिए उद्यमियों के साक्षात्कार और प्रश्नावली के माध्यम से प्राथमिक समंक एकत्र किए जाएंगे। क्योंकि उद्यमियों की समस्याओं को स्वयं उद्यमियों से ही जाना जा सकता है।प्राथमिक समंको के लिए प्रश्नावली को संरक्षित रूप में तैयार किया जाएगा। यह ज्यादातर द्विविकल्पीय हां या नहीं या बहुविकल्पीय होगी ताकि उत्तर दाताओं को प्रश्न का उत्तर देने में कोई कठिनाई महसूस ना हो संबंधित संघो, संस्थानों और सरकारी एजेंसियों से भी जानकारी एकत्रित की जाएगी। वर्तमान अध्ययन में देश के विभिन्न प्रकार के उद्योगों को शामिल किया जाएगा ताकि विश्लेषण तर्कसंगत तरीके से किया जा सके।

द्वितीयक समंक – द्वितीयक समंको को एकत्र करने के लिए संबंधित विभिन्न समाचार पत्रों, व्यावसायिक पत्रिकाओं, थीसिस, उद्योग संघ, जिला औद्योगिक केंद्र, जिला सांख्यिकी कार्यालय और मध्य प्रदेश सूक्ष्म लघु एवं मध्यम उद्योग निगम जैसे विभिन्न विभागों से भी समंक एकत्र किए जाएंगे।

अध्ययन का क्षेत्र– यह अध्ययन 2015 से 2021 तक सीमित रहेगा अध्ययन के लिए उद्योगों को छह श्रेणियों में विभाजित किया जाएगा देवास में मौजूद प्रमुख लघु एवं कुटीर उद्योग निम्नलिखित क्षेत्र कवर करते हैं–

1. कृषि आधारित
2. भवन और सामग्री आधारित
3. इंजीनियरिंग आधारित
4. कपड़ा उद्योग आधारवन आधारित
5. अन्य

निदर्शन – निदर्शन लेने की बहुत सारी तकनीकी उपलब्ध है, लेकिन वर्तमान अध्ययन में सबसे उपयुक्त निदर्शन तकनीक दैव निर्देशन है देवास जिले के 150 लघु एवं कुटीर उद्योगों को प्रतिनिधि नमूने के रूप में सर्वेक्षण किया जाएगा।

उपलब्धियाँ:

1. अप्रैल 2015 में इसकी स्थापना के बाद से पीएमएमवाई (PMMY) के तहत 32.53 करोड़ रुपए से अधिक के ऋण दिये गए हैं।
2. मुद्रा योजना में समाज के वंचित वर्गों जैसे– महिला उद्यमी, एससी/एसटी/ओबीसी एवं अल्पसंख्यक समुदाय के उधारकर्त्ताओं आदि को ऋण दिया गया है। साथ ही इसके तहत नए उद्यमियों पर भी ध्यान केंद्रित किया गया है।
3. श्रम और रोजगार मंत्रालय द्वारा किये गए सर्वेक्षण के अनुसार, PMMY ने वर्ष 2015 से वर्ष 2018 तक 1.12 करोड़ कुल अतिरिक्त रोजगार सृजन में सहायता की है।
4. रोजगार में हुई अनुमानित वृद्धि के अनुसार, 1.12 करोड़ में 69 लाख महिलाएँ (62 प्रतिशत) शामिल हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

पुस्तकें:–

1. प्रो.शर्मा, विरेंद्र प्रकाश रिसर्च मेथाडोलॉजी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004.
2. डॉ.चतुर्भुज मंमोरिया भारत की आर्थिक समस्याएं, साहित्य भवन पब्लिशर्स एंड डिसटीब्यूटर्स, आगरा, 2007–2008
3. माइकल वी. पी. रिसर्च मेथाडोलॉजी इन मैनेजमेंट, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, मुंबई, 1985
4. कोठारी सी. आर रिसर्च मेथाडोलॉजी, न्यू एज इंटरनेशनल पब्लिशर्स, 2022

Journals & Periodicals:-

1. Dr. C. Vijay, " a study on the performance of mudra Yojana in Tamilnadu", general of banking finance insurance management, (2018)
2. S. Girish, NK, "MUDRA performance in Karnataka" international Journal of Research and Analytical reviews, (2016)
3. Mahammed Shahid and Mahammad Irshad, , "A descriptive study on Pradhanmantri mudra Yojana (PMMY)", International Journal of latest trends in engineering and technology. Special issue SACAIM, PP. 121-125, e- ISSN: 2278-62IX, (2016)
4. Seema, " MUDRA - micro units development and refinance agency", International journal in commerce, IT and social science volume 2 , issue 10 PP. 23 to 27 (2015)
5. Royal Kumar," Mudra Yojana strateg tune for small business financing", International Journal of advanced research in computer science and management studies, volume 4, issue 1 ,PP. 68 to 72, (2016)
6. Jain, Vineet,." Mudra Bank : A Step towards financial inclusion review of research International multi disciplinary general, volume -5, issue 4, PP. 1-4 (2016)

समाचार पत्र/पत्रिकाएं:-

1. दैनिक भास्कर डेली न्यूज पेपर देवास वेरियस एडिशन
2. नई दुनिया डेली न्यूजपेपर देवास वेरियस एडिशन
3. योजना मासिक पत्रिका 2022 पृष्ठ संख्या
4. कुरुक्षेत्र मासिक पत्रिका 2022 पृष्ठ संख्या
5. उद्यमिता समाचार पत्र
6. मध्य प्रदेश संदेश
7. जिला उद्योग केंद्र द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट देवास मध्य प्रदेश इंदौर

Webliography:-

1. www.mudra.org.in
2. www.msme.gov.in
3. www.nsic.co.in
4. www.rbi.org
5. www.smallindustrialdevelopment.com
6. www.worldbank.or
7. www.mpindustry.org
8. www.mpakvnbhopal.nic.in
9. www.dcmsme.gov.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्रा-छात्राओं के सामाजिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन

मीनाक्षी चन्द्रवंशी* डॉ. कृष्ण कुमार पाण्डेय**

* असिस्टेण्ट प्रोफेसर (शिक्षा) डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** असिस्टेण्ट प्रोफेसर (शिक्षा) डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – शिक्षा बालक की अर्तनिहित शक्तियों को उभारकर उन्हें पूर्ण विकिसित करती है। शिक्षा पर शिक्षक की प्रभावशीलता का अनुकूल एवं प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार शिक्षण का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार से राष्ट्र समाज ही नहीं वरन् सारे संसार पर प्रभाव पड़ता है। प्रस्तुत शोध में ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्रा-छात्राओं के सामाजिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। न्यादर्श के रुप में 120 विद्यार्थियों का चयन किया है। ऑकड़ों के संकलन हेतु प्रस्तुत शोध अध्ययन में डॉ. आर. सी. देवा द्वारा निर्मित सामाजिक समायोजन प्रश्नावली उपकरण का प्रयोग किया जाएगा, जिसमें प्रश्नों की संख्या 100 है। परिकल्पनाओं के प्रकलन के पश्चात् यह पाया गया कि अत: ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन में कोई अन्तर नही है।

प्रस्तावना – शिक्षा मानव को एक सभ्य एवं आदर्श जीवन प्रदान करती है। शिक्षा के द्वारा ही वह अपने अन्दर अच्छे गुणों का विकास करते है। शिक्षा के द्वारा ही मानव में धैर्य, सहानशीलता, सभ्यता, सहानुभूति, दया, प्रेम आदि की भावना उत्पन्न होती है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए की बालक अपने को वातावरण में समायोजन कर सकें जिससे कि उन्हें नये नाम की पारित सरलता से हो सके शिक्षा का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। शिक्षक व शिक्षार्थी इसके महत्वपूर्ण अंग है। शिशु का व्यक्तिव सामाजिक पर्यावरण में विकसित होता है। वंशानुक्रम से जो योग्यतायें उसे प्राप्त होते है, उनको जागृत करके सही दिशा देना समाज का ही कार्य है। किशोरावस्था मानवीय जीवन की अनोखी अवस्था होती है। अत: सामाजिक विकास पर भी असका प्रभाव पड़ता है। किशोर एवं किशोरी व्यक्ति-व्यक्ति के लिए व्यक्ति समूह के लिए और अन्य समूहों के लिए होने वाली अंत-क्रियाओं के माध्यम से सामाजिक सम्बन्धों के विकसित करते है। अत: किशोरावस्था में सामाजिक विकास के फलस्वरूप सामाजिक उत्तरदायित्व को समझने लग जाता है और नियमों के अनुकूल ढलने का प्रयास करते हैं।

अध्ययन का औचित्य – स्वामी विवेकानन्द जी कहते है कि अच्छी शिक्षा पाना आज बालक का हक है। आज हम देखते है कि शिक्षा पर कोई भी अभिभावक इस लिए व्यय करता है, क्योंकि उसके बदले में जो शैक्षिक उपलब्धि बालक को प्राप्त होती है वह व्यय पूंजी से बहुत अधिक होती है। किशोरो में होने वाली शारीरिक, मानसिक परिवर्तन का ज्ञान देते हुए उनकी समस्याओं का निराकरण करना तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि का विकास करना आवश्यक है।

प्रस्तुत अध्ययन एक अभिप्रेरणात्मक अध्ययन है। इस अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष से किशोर छात्र एवं छात्राओं का समाजिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन संभव है और संभावित सुझाव प्रस्तुत किये जा सकते है।

समस्या कथन – ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्रा-छात्राओं के सामाजिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन।

प्रस्तुत पदों की क्रियात्मक परिभाषा

शोध अध्ययन में प्रयुक्त कठिन पदों की परिभाषायें निम्न लिखित है-

1. **किशोर छात्र एवं छात्राएँ –** प्रस्तुत शोध में किशोर छात्र एवं छात्राओं से तात्पर्य 13 से 18 वर्ष के छात्र एवं छात्राओं से है। सुधार गृह स्तर पर 13 से 18 वर्ष के छात्र एवं छात्राओं को शोध के प्रयोज्य के रूप में स्वीकृत किया गया है।
2. **सामाजिक समायोजन –** मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समायोजन का अर्थ अंत समय तक समाज में ही रहना लगाता है। वह उसी समय अधिक प्रसन्न रहता है। जबकि वह स्वयं की रूचि पसंद और अभिवृत्तियों वाले समूह को प्राप्त कर लेता है। इस व्यवहारिक गतिशीलता का नाम ही समायोजन है।
3. **ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं का सामाजिक समायोजन –** समाज में तथा अन्य व्यक्तियों के बीच संबंध स्थापित करना, माता-पिता एवं परिजनों के व्यवहार का किशोर बालक एवं बालिका अनुकरण करते है। इस अवस्था में उनकी शिक्षा की महत्व पूर्ण भूमिका होती है। विद्यालय में रहकर बालक एवं बालिकायें सामाजिक कार्यो की ओर अग्रसर रहते है। यदि ग्रामीण एवं किशोर छात्र एवं छात्राओं को समाज में उचित स्थान नही दिया जाता है तो वे नैतिक नियमों का उल्लंधन करते है। अगर ऐसी स्थिति में उन्हें समाज में स्थान दिया जाता है तो उनके आचरण में परिवर्तन व सुधार लाया जा सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं की सामाजिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. ग्रामीण किशोर छात्र तथा शहरी किशोर छात्र के सामाजिक समायोजन का अध्ययन करना।
3. ग्रामीण किशोर छात्रा तथा शहरी किशोर छात्रा के सामाजिक

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

समायोजन का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ –:

H0$_1$: ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं की सामाजिक समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन करना।

H0$_2$: ग्रामीण किशोर छात्र तथा शहरी किशोर छात्र के सामाजिक समायोजन का अध्ययन करना।

H0$_3$:ग्रामीण किशोर छात्रा तथा शहरी किशोर छात्रा के सामाजिक समायोजन का अध्ययन करना।

अध्ययन का परिसीमन – प्रस्तुत शोध का अध्ययन क्षेत्र रॉची जिले के ग्रामीण एवं शहरी किशोर बालक एवं बालिका सामाजिक समायोजन तक सीमित है। ये निम्न है–

क्षेत्र – प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता द्धारा रॉची जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र को लिया गया है।

स्तर – प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता द्धारा कक्षा 9वीं से 12वीं के छात्रों को लिया गया है।

आयु – प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता द्धारा 15 से 18 वर्ष की आयु के ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं को सम्मिलित किया गया है।

अनुसंधान प्रविधि

शोध विधि– अध्ययन विधि अनुसंधान को परिचालित करने का ढंग है। जो चयनित की गई समस्या के प्रकृति के अनुरूप निर्धारित की जाती है। प्रस्तुत शोधकर्ता द्धारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन में बिलासपुर जिले के शहरी एवं ग्रामीण बालक एवं बालिकाओं को अध्ययन हेतु न्यादर्श के रूप में लिया गया है। जिसमें 120 किशोर छात्र एवं छात्राओं में से 60 शहरी किशोर बालक एवं बालिकाओं एवं 60 ग्रामीण छात्र एवं छात्राओं को न्यादर्श के रूप में लिया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में **डॉ. आर. सी. देवा** द्वारा निर्मित सामाजिक समायोजन प्रश्नावली उपकरण का प्रयोग किया जाएगा, जिसमें प्रश्नों की संख्या 100 है।

अध्ययन के चर – प्रस्तुत शोध अध्ययन में निम्नलिखित चर है :

स्वतंत्र चर – किशोर छात्र एवं छात्राओं।

आश्रित चर – सामाजिक समायोजन ।

प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियॉ :–

1. Mean (माध्य)
2. Standard Deviation (मानक विचलन)
3. Standard Error Deviation (मानक त्रुटि विचलन)
4. CR (सी.आर.–परीक्षण)

आंकड़ो का विश्लेषण एवं व्याख्या –

परिकल्पना– 1

H0$_1$:शहरी एवं ग्रामीण किशोर छात्र एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सर्व प्रथम परिकल्पना क्रमांक– 1 जिसके परीक्षण के लिए 60 शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं तथा 60 ग्रामीण किशोर छात्र एवं छात्राओं को लिया गया हैं। उनका सामाजिक समायोजन मापा गया है, दोनों ही समूह के पृथक–पृथक मध्यमान तथा प्रमाणिक विचलन प्राप्त किया गया, इसकी सहायता से गणना का मध्यमान में अंतर की सार्थकता ज्ञात करने के लिए टी–मूल्य परीक्षण किया गया।

सारणी क्रमांक – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या एवं निष्कर्ष – तालिका 1 से ज्ञात होता है कि ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन माप के प्राप्तांको के आधार पर प्राप्त किए गए मध्यमान क्रमश: 136.5 तथा 130.5 है वहीं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 111.32 तथा 123.4 है। मध्यमानों में अंतर की सार्थकता जॉचने के लिए टी–मूल्य परीक्षण किया गया, जिसकी गणना से प्राप्त टी का मान 0.03 है। 118 के सार्थकता के लिए टी का आवश्यक सारणीगत मान 0.05 के सार्थकता स्तर पर 1.98 है, 0.01 के सार्थकता स्तर पर 2.59 है।

अत: गणना से प्राप्त मान के कम है अत: हमारी परिकल्पना क्रमांक–1 ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा। अत: हमारी शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है।

परिकल्पना– 2

H0$_2$: ग्रामीण किशोर बालक तथा शहरी किशोर छात्र के सामाजिक समायोजन में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सर्व प्रथम परिकल्पना क्रमांक–2 जिसके परीक्षण के लिए 30 किशोर ग्रामीण छात्र तथा 30 किशोर शहरी छात्र का सामाजिक समायोजन मापा गया हैं। दोनों ही समूहों के पृथक–पृथक मध्यमान तथा प्रमाणिक विचलन प्राप्त किया गया, इसकी सहायता से गणना का मध्यमान में अंतर की सार्थकता ज्ञात करने के लिए टी–मूल्य परीक्षण किया गया।

सारणी क्रमांक – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या एवं निष्कर्ष – तालिका 2 से ज्ञात होता है कि ग्रामीण किशोर छात्र व शहरी किशोर छात्र के सामाजिक समायोजन माप के प्राप्तांको के आधार पर प्राप्त किए गए मध्यमान क्रमश: 136.5 तथा 138.5 है वहीं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 25.16 तथा 34.2 है। मध्यमानों में अंतर की सार्थकता जॉचने के लिए टी–मूल्य परीक्षण किया गया, जिसकी गणना से प्राप्त टी का मान 6.77 है। 58 के सार्थकता के लिए टी का आवश्यक सारणगत मान 0.05 के सार्थकता स्तरपर 2.01 है, 0.01 के सार्थकता स्तर पर 2.59 है।

अत: गणना से प्राप्त मान के अधिक है अत: हमारी परिकल्पना क्रमांक–2 ग्रामीण किशोर छात्र तथा शहरी किशोर छात्र के सामाजिक समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा। अत: यह परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

परिकल्पना– 3

H0$_3$: ग्रामीण किशोर छात्राओं तथा शहरी किशोर छात्राओं के बीच सामाजिक समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाएगा।

सर्व प्रथम परिकल्पना क्रमांक–3 जिसके परीक्षण के लिए 30 ग्रामीण किशोर छात्राओं तथा 30 शहरी किशोर छात्राओं के सामाजिक समायोजन मापा गया है, दोनों ही समूह के पृथक–पृथक मध्यमान तथा प्रमाणिक विचलन प्राप्त किया गया, इसकी सहायता से गणना का मध्यमान में अंतर की सार्थकता ज्ञात करने के लिए टी–मूल्य परीक्षण किया गया।

सारणी क्रमांक – 3 (अगले पृष्ठ पर देखे)

व्याख्या एवं निष्कर्ष – तालिका 3 से ज्ञात होता है कि ग्रामीण किशोर छात्राओं तथा शहरी किशोर छात्राओं के सामाजिक समायोजन माप के

प्राप्तांको के आधार पर प्राप्त किए गए मध्यमान क्रमश: 126.67 तथा 123.67 है वहीं प्रमाणिक विचलन क्रमश: 57.64 तथा 46.40 है। मध्यमानों में अतंर की सार्थकता जॉचने के लिए टी–मूल्य परीक्षण किया गया, जिसकी गणना से प्राप्त टी का मान 1.35 है। 58 के सार्थकता के लिए टी का आवश्यक सारणगत मान 0.05 के सार्थकता स्तरपर 2.01 है, 0.01 के सार्थकता स्तर पर 2.59 है।

अत: गणना से प्राप्त मान के कम है। अत: हमारी परिकल्पना क्रमांक–3 ग्रामीण किशोर छात्राओं तथा शहरी किशोर छात्राओं के सामाजिक समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा। अत: यह परिकल्पना स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष – शिक्षा मानव को एक सभ्य एवं आदर्श जीवन प्रदान करती है। शिक्षा के द्धारा ही वह अपने अन्दर अच्छे गुणों का विकास करते है। शिक्षा के द्धारा ही मानव में धैर्य, सहानशीलता, सभ्यता, सहानुभूति, दया, प्रेम आदि की भावना उत्पन्न होती है। ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा। अत: हमारी शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है। अत: ग्रामीण एवं शहरी किशोर छात्र एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन में कोई अन्तर नही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. कपिल, एच. के. (1995)– *'सांख्यिकीय के मूल तत्व'* विनोद पुस्तक मंदिर आगरा –2 पृष्ठ – 628.
2. भटनागर, सुरेश (1996) – *'शिक्षा मनोविज्ञान'* कायल बुक डिपो, ईश बुक इंटरनेशनल, मेरठ पृष्ठ –249.
3. सिंह, एच. पी. (1998) – *'सांख्यिकीय सिद्धान्त एवं व्यवहार'* एस, चन्द्र एण्ड कम्पनी, दिल्ली।
4. हार लॉक एलिजाबेथ बी –'विकासात्मक मनोविज्ञान'
5. लाल एवं जोशी –'शिक्षा मनोविज्ञान' अग्रवाल पब्लिकेशन।
6. डॉ. मंगल अंशु, डॉ. बिरेलिया एं. – 'शैक्षिक अनुसंधान की विधियां।'
7. पाण्डेय, आर.पी. –'शैक्षिक मनोविज्ञान' राधा प्रकाशन आगरा।
8. हार लॉक एलिजाबेथ बी विकासात्मक मनोविज्ञान
9. लाल एवं जोशी शिक्षा मनेविज्ञान अग्रवाल पब्लिकेशन
10. डॉ. मंगल अंशु डॉ. बिरोलिया एं. शैक्षिक अनुसंधान की विधियॉ।
11. पाण्डेय आर. पी. शैक्षिक मनोविज्ञान राधा प्रकाशन आगरा
12. Adler (1930) individual Psychology. (Chap. XXI. Page) in C Murchison (Ed.) Psychologists 1930 Clark University Press.

सारणी क्रमांक – 1: शहरी एवं ग्रामीण किशोर छात्र एवं छात्राओं के सामाजिक समायोजन की तालिका

क्र.	छात्र एवं छात्राओं	N	M	SD	SED	t-test	df	सार्थकता स्तर	परिणाम
1.	ग्रामीण	60	136.5	111.32	0.03	0.03	118	0.05=1.98	स्वीकृत हुई
2.	शहरी	60	130.5	123.4				0.01=2.59	

सारणी क्रमांक – 2: ग्रामीण किशोर छात्र तथा शहरी किशोर छात्र के सामाजिक समायोजन

क्र.	किशोर बालक	N	M	SD	SED	t-test	df	सार्थकता स्तर	परिणाम
1.	ग्रामीण	30	136.5	25.16	6.77	0.03	58	0.05=2.01	अस्वीकृत हुई
2.	शहरी	30	138.5	34.2				0.01=2.68	

सारणी क्रमांक – 3: ग्रामीण किशोर छात्राओं तथा शहरी किशोर छात्राओं के बीच सामाजिक समायोजन

क्र.	किशोर बालिका	N	M	SD	SED	t-test	df	सार्थकता स्तर	परिणाम
1.	ग्रामीण	30	126.67	57.64	1.35	1.35	58	0.05=2.01	स्वीकृत हुई
2.	शहरी	30	123.67	46.40				0.01=2.68	

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Mixed Research Method in Assessment of Rural Sanitation

Ashvanee Kumar* Rajkumar Nagwanshee**

*Research Scholar (Economics) Indira Gandhi National Tribal University, Amarkantak (M.P.) INDIA
** Associate Professor (Economics) Guru Ghasidas Central University, Bilaspur (C.G.) INDIA

Abstract : Cleanliness and Sanitation are crucial for both the nation and its citizens. From a health perspective, Sanitation has been given a special importance in India. Mahatma Gandhi, the father of the nation, also stated that "political freedom is not as important as sanitation." The bulk of people in India reside in rural areas, where they face numerous challenges like unemployment, poverty, a lack of access to healthcare, education, and structural amenities like roads and homes. Among these issues, one of the main ones in India is the absence of sanitation coverage and practice. There are a number of issues in rural regions following the Clean India mission Gramin and other initiatives. A mixed research approach is followed to find out the real reason and consequences of poor sanitation coverage. This study analyses the advantages and limitations of the two-research approach research e.g., Qualitative Research and Quantitative Research. Quantitative research involves collecting and transforming data into mathematical form and concluding inferences. However, qualitative research involves the factors to be analyzed in deep. Based on some published research papers, the study finds out that in assessing the rural area, one single approach cannot help. The mixed research approach is appropriate for recognizing the real rural problems. The study states that the rural sanitation coverage in India is satisfactory based on quantitative evaluation, but if we take the mixed research method to assess pictures of the real rural sanitation coverage, there only partial coverage is done. There is still a lot to do which we can't see in numbers only.
Keywords: Research Method, Qualitative Research, Quantitative Research, Sanitation Coverage, Clean India Mission-Gramin, Rural Development.

Introduction - "Cleanliness is next to Godliness, We can no more gain God's blessing with an unclean body than with an unclean mind" (Mahatma Gandhi). "Sanitation and cleanliness are very important for every individual and country as well." Nation father Mahatma Gandhi also said, that Sanitation is more important than political freedom (Kumar, A., & Singh, R., 2024). Sanitation is a crucial issue that needs to be discussed in the present to increase awareness among rural people to fight against various diseases again (Kumar, A., & Singh, R., 2024).

Non-sanitation does harm not only human health but also generates environmental losses and economic burdens. Many waterborne diseases are growing due to non-sanitation and unhygienic activities, such as diarrhea and malaria, which ultimately increase the economic expenditure of families and the state as well. Stunting is also one of the major issues arising due to the non-sanitation environment around the house, in which a child's height does not grow as it should increase according to their age. For example, generally, it has been seen that the average height in a slum area is less than the average height of an environmentally clean area. Clean and hygienic activities also make the individual's personality attractive. Many times, some unexpected cases such as women rape and female child assaults happen with rural women in rural areas during open defecation. Therefore, cleanliness and hygiene activities are linked with human self-respect and dignity.

Covid-19 become the most dangerous virus due to non-sanitation activities and unhygienic conditions. This virus has already vibrated the world's economies and health systems. However, Sanitation has played a vital role in protecting us from the challenging COVID-19 virus. the unavailability of good sanitation and hygiene practices was increasing the rate of spreading covid-19. On the other side, the people were being instructed to follow personal hygiene and sanitation to break the path of spreading this virus. Thus, awareness of good sanitation and hygiene practices and the availability of basic sanitation can stop the path of spreading any kind of virus. This is what was done during the covid-19 pandemic in developing countries.

The availability of basic facilities such as safe drinking water and sanitation is not only an important measure of the socioeconomic status of the household but also a

fundamental element for the people's health (Tiwari, R., & Nayak, S., 2017). Sanitation generally means the provision of facilities and services for the safe disposal of human urine and feces (Van Minh, H., & Hung, N. V. 2011). Good sanitation generally involves closer toilet and bathroom facilities, less waiting time, and safely disposing of excreta (Van Minh, H., & Hung, N. V. (2011). According to WHO 2018 report, 2.3 billion people were not accessing adequate basic sanitation throughout the world. And, approximately 4.5 billion people were not having proper access to safely managed sanitation services, i.e., a toilet connected to a sewer or pit or septic tank that manages human waste and prevents us from exposure to disease. Due to the lack of toilets and poor hygiene, the Indian economy suffers an estimated yearly total loss of US$ 54 billion (in terms of health, education access, time lost, and tourism) and over US$ 38 billion in treatment costs for diseases caused by poor hygiene. India has recognized that sanitation is very essential. Many sanitation improvement programs have been introduced in India to improve the sanitation condition such as Total Sanitation Campaign (TSC) 1999, Nirmal Bharat Abhiyan (NBH)1999, Swachh Bharat Abhiyan Urban, and Rural (SBA, U&R) 2014, and others on the local level. Swachh Bharat Abhiyan-Gramin (Rural) was one of the nationwide programs which were launched on 2nd October 2014 to make rural India free from non-sanitation and non-cleanliness conditions by 2nd October 2019. To improve the rural area's sanitation coverage, these were also implemented these programs to eliminate open defecation and improve sanitation infrastructure. Central rural sanitation program 1986 was the first effort to provide safe sanitation in rural areas, total sanitation campaign, Nirmal Gram Puraskar, and Clean India Mission-Gramin 2014. The environmental hygiene committee was established by the union government of India between 1948 and 1949, and it made a comprehensive plan for the public's access to clean water and sanitary facilities. In order to provide safe water and suitable sanitary facilities in rural areas, the National Water Supply and Sanitation Program was started in 1954. After that, the United Nations declared 1981 to 1990 the "International Drinking Water Supply and Sanitation Decade". In 1981 only 1 percent of rural households had toilets. There was no focused program for rural sanitation in India.

According to the Ministry of Jal Shakti, as of March 2021, more than 10.5 crore individual household toilets have been constructed across rural India under the SBM-G program, resulting in an increase in sanitation coverage from 39% in 2014 to 100% in 2021. This has resulted in the achievement of ODF status for all rural areas in India (Simplified UPSC, 2021).

Research is the most popular tool to enhance and brush up on the existing knowledge about any subject and about any person. In the field of economics, information & technology, science and social science, sociology, business, and health, etc. there are two most common methods of carrying out the research, namely Qualitative Research and Quantitative Research. Qualitative research is all about verbal narratives like spoken or written data, however, quantitative research focuses on logical or mathematical observations to narrate the conclusions.

The issue of the study: For a long period, different governments and social institutions have been focused on various plans and policies to identify the real reason for poor sanitation coverage in rural areas in India. But due to a lack of real observation and a lack of real research methodology, they could not find the right way of observation. Thus, this study tries to focus on which observation method would be appropriate to see the basic problem of the rural area's sanitation coverage. Can sanitation coverage and the behavior of people towards sanitation and hygiene in rural areas understand by the absolute qualitative research approach? or should we have to follow the qualitative research approach to understand the real picture of the problem of rural sanitation coverage?

The Objectives of The Study: There are two following main objectives, the study tries to explain in detail:

1. To study the different dimensions of qualitative vs quantitative research approach.
2. To study the mixed research method concerning the rural sanitation assessment.

Review of literature

Kumar, A. (2019) assessed rural areas of Uttar Pradesh by taking a hundred households survey. This study evaluated a famous government program of sanitation coverage, i.e., the Clean India Mission Gramin. The quantitative search approach was adopted to observe the program's contribution change, such as how many toilets are built in the village and how many people or households are using that toilet to defecate. Based on quantitative search observation, the study says that the study area of Auraiya district in Uttar Pradesh is not completely open-defecation-free. The study recognized that only a quantitative research method is not enough, which is why the study also surveyed with the help of qualitative variables such as what are the reasons people not using the toilet and what is the human pattern of adopting sanitation activities in their daily life. Thus, the study is based on mixed research methods in which basis the study says that the village of Uttar Pradesh is not open-defecation-free, though the government of India has declared the entire country open-defecation-free.

Doyle, L., et al. (2009) stated in their article titled "an overview of mixed method research" that mixed method research is an evolution of social science research. This has been emergence due to the limitations of two other approaches, quantitative and qualitative research methods. This method provides researchers with a variety of ways to answer the research question that cannot be answered by applying a singular method. For solving healthcare-related

problems of the masses, this is the most appropriate method of research.

Whitehead, D., & Schneider, Z. (2007) explain how mixed-method research can help in the field of nursing and midwifery research. They also explain the types of mixed-method research or triangulation methods of analysis. According to the study, Mixed-methods research provides a way of making research more meaningful, purposeful, and complete, which can be achieved by using neither a singular qualitative research method nor a singular quantitative research method in social science. The study helps us understand the problem and the fundamentals of using mixed methods in research. For instance, mixed methods offer a toolbox to capture the true purpose of the study as well as the chance to combine various research traditions and provide the researcher with additional perspectives and insights that go beyond those provided by any one technique. The paper also demonstrates how mixed-method research has limitations.

Strijker, D. et al. (2020) state in their study that there has been an increased application of mixed-method research in the contact of rural area research. The scope of the mixed research method has increased in rural journals. The Journals of Rural Studies were traditionally oriented toward qualitative research. In last few years, Mixed-Method research approaches have played a visible role in the journals of rural studies (around 20% in 2016). The mixed methods approach has been proven to present more insight into a real-world problem. And even more than average Ph.D. projects have been written with mixed-method research.

Quantitative Research: Quantitative research is expressed in numbers, graphs, and tables. It is used to validate theories and perceptions. This kind of study establishes the facts to generalize the conclusion regarding things and people. The most common example of this method is experiment and observations which are quantifiable and can be served with close-ended questions. In other words, a quantitative study is predicated on quantifying some characteristics. It applies to events that can be described by numbers or quantities. (C R Kothari, 2014). Numerous numerical data are gathered during the quantitative study. It involves techniques like experiments, structured observations, and questionnaires. Quantitative research targets to produce information and a better understanding of society. The scholars of social science including communication and commerce use quantitative study to understand the phenomena and to influence the people with conducted results.

Why should we Collect Quantitative Data?

In the process of collecting information related to the sanitation behavior of rural people, such as why you prefer to go outside for defecation and why the people are not willing to build their toilets? these qualitative questions can have the risk of being too vague. This is why we go for the quantitative survey to avoid confusion among our respondents. They can easily respond to how many times they clean their hand in a day to prevent diseases. How many people have a toilet in the village and using? Also, how many schools are having separate toilets for girls' students? This information can be taken in only the form of numbers.

Qualitative questions take a long time to answer, such as why and what are the reasons for not cleaning the toilet and outlet by yourself? When the respondent starts to answer, they take a longer time to complete their answer. In this situation, both respondents, as well as the interviewer have to wait longer and sometimes get bored, which can impact the quality of the answer. On the other hand, using quantitative questions helps us to include more questions in our survey and we receive more responses out of it in minimum time. In the quantitative method of the questionnaire, we can even provide the options to reduce the time of answering. The quantitative method helps the interviewer to approach the maximum number of households and respondents in their study. In the case of sanitation coverage in the village, the interviewer can meet many women and men in a day. Which can reduce their time and money as well.

Quantitative questions are more quantifiable and easier to ask and write it down. With these kinds of questions, we can assign the numerical value to a word response or categorical variable and then can convert it into indicators and graphs. An example can be the Likert scale. It means that the overall quality of the data is better and easy to understand and makes others understand by presenting with the tables and graphs. For example (Kumar, A. 2019) exposed the toilet built in a randomly selected village that only 72 percent of households were having a toilet in the village of Uttar Pradesh, while the data from the Ministry of Jal Shakti was saying that there is 100 percent of households with a toilet in the village.

With the quantitative research approach, we can reach the maximum information related to sanitation coverage, such as how many members of the family are open defecating and how many are not. (Kumar, A. 2019) was able to collect how much expenditure the household did to build their toilet in the house? how many persons are getting sick due to unclean areas around the house? Therefore, the quantitative research approach covers the maximum information from the rural area with the limited time and expenditure of responders.

Qualitative research: Qualitative research expresses the results in words. It is used to understand concepts, thoughts, or experiences. This type of research makes the researcher find the knowledge or facts from depth insights of topics that are not well understood or some time to cheque the fact of the existing phenomena. In general, these techniques include a verbal explanation of observed facts, and the inquiry fetched from open-ended interviews. These

techniques also include literature reviews that examine ideas and theories. In qualitative research, narratives are gathered and analyzed using techniques like focus groups discussion, interviews, and ethnographies. Thus, qualitative research can be described as a process of naturalistic inquiry in which we aim to gain knowledge of social phenomena in their original setting. It is only done through the direct experiences of the research issue and concentrating on the logic of "why" rather than what of the social phenomena. To investigate human phenomena with this type of research method, the researcher uses a variety of techniques such as case study, historical analysis of any events, biography of the legends, discourse analysis, esophagogoraphy, phenomenology, and grounded theory.

To understand the basic sanitation problem of rural area, a qualitative research approach must be followed because the developmental change in numbers cannot shows exactly what changes is happening in the village. Under the Swachh Bharat Abhiyaan-Gramin, a toilet is provided to every household, but why a member of the family is not using the toilet, we have to know. Qualitative research helps us to know why and how the changes have been taking place in the form of development in rural areas. As (Kumar, A. 2019) surveyed 100 households in a randomly selected village in Uttar Pradesh and found that people are not using toilet facilities because they think going outside in the morning is better for the health and soil of the field, even they can look after their field when they go outside to defecate.

In rural areas, there happen many cases in which severalty cannot be captured only by the quantitate method because the impact of these cases is very different such as rape and women molestation during their open defecation. (Sweta Khandelwal et. all 2020) states in their research paper that there have been happening many cases of rape and sexual assault in rural areas but after implementation, these cases have been reduced. It is happed due to the availability of sanitation infrastructure information on independent household latrines. This has resulted that in 2016, sexual assaults have downsized to 65 percent and by the year 2018 the percentage dip in the reduction of violence against women is more than 90 percent. this kind of research can be only done with the help of qualitative research (Kumar, A., & Singh, R., 2024).

Mixed Research Method: After understanding the quantitative and qualitative research methods, there is also a third way of answering the questions with the use of mixed-method research. Mixed method research is a procedure for collecting, analyzing, and "mixing" quantitative and qualitative methods in a single study or a series of studies to understand a research problem (Creswell & Plano Clark, 2011).

The purpose of this form of research method is to providing the better understanding of a research problem and answer it with maximum perfection of facts. Because one method has its own limitation and other one its own. Thus, mixed method research combines the techniques of both Research methods and provide the researcher a most appropriate way of conducting research. Mixed methods research is a worldwide accepted methodological approach to social science nowadays.

Mixed methods are also more prevalent today than they were in recent past years in rural area research. One might anticipate that mixed methods approaches would predominate in the methodological realm since the goal of rural studies is to contribute to the solution of practical issues. Even though this strategy is becoming more popular, this is still not followed by the majority. One explanation could be that mixed-methods research requires more effort and requires the scholar to become proficient in more research methods. Another reason might be that the traditional line between qualitative and quantitative still governs the journal output from big projects that aim to provide answers to societal questions. Furthermore, given the increased acceptance of mixed methods and the tendency for rural studies to analyze complex (rural) world problems, where mixed methods have an obvious advantage, one could anticipate that these methodologies will eventually receive recognition in the top journals (Kumar, A., & Singh, R., 2024).

The mixed-method research approach can be particularly valuable in assessing rural sanitation, as it can provide a more comprehensive understanding of the challenges and opportunities related to sanitation in rural areas. There are several benefits of using mixed-method research to find the researchable facet of rural India:

1. By using a mixed-method research approach, researchers gain more comprehensive understanding of the rural sanitation behavior of people. Because one (quantitative research) provides numerical data and statistical analysis of physical facilities in rural areas while the other one (qualitative research) provides a deeper understanding of the people's perspective and why and how much they are giving importance to sanitation issues.
2. Mixed method research allows researchers to use multiple sources of data to corroborate or confirm their findings, increasing the validity and reliability of the study. By combining quantitative data, such as surveys or water quality tests, with qualitative data, such as focus groups or key informant interviews, researchers do cross-validation of their findings and gain a deeper understanding of the issues related to rural sanitation.
3. The use of both methods in a single study help to overcome from the limitations of each method and provide a more complete understanding of the topic. This method enhances the generalizability of the findings.
4. Mixed method research provides flexibility to research design of the study, which allow researchers to adapt the research tool based on the needs of the study and the research questions.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

5. Mixed method research can be particularly useful in applied settings, such as program evaluation or policy research, where the integration of quantitative and qualitative methods can provide more useful information for decision-making.

6. Qualitative research approach helps to identify contextual factors that may impact sanitation practices in rural areas, such as cultural beliefs, social norms, or economic constraints.

7. Understanding the motivations and barriers to behavior change is critical to designing effective sanitation interventions. Mixed method research helps researchers explore the factors that influence behavior change in rural communities, which can then be used to develop targeted interventions.

8. Mixed method research is used to evaluate the effectiveness of sanitation interventions in rural areas. Quantitative data provide information on changes in sanitation practices or health outcomes; however, qualitative data provide insights into the acceptability and feasibility of the intervention.

Quantitative Versus Qualitative Approaches: Quantitative research focuses on testing hypotheses or theories through numerical data analysis. It is often used to measure or quantify phenomena, such as the prevalence of a particular disease or the effectiveness of an intervention. Qualitative research, on the other hand, is focused on exploring phenomena in depth, often through open-ended interviews or observations. It is used to gain an understanding of complex social or cultural issues, such as the experience of living with a chronic illness or the impact of a particular policy on a community.

Quantitative research is based on structured data collection methods, such as surveys or experiments, that produce numerical data that can be analyzed statistically. While Qualitative research is based on unstructured information-collecting methods, such as observation or interview, that produce textual or narrative data that must be analyzed using qualitative methods.

Quantitative research uses statistical methods to analyze numerical data and test hypotheses. While, Qualitative research uses a range of techniques to analyze textual or narrative data, such as content analysis or grounded theory.

Quantitative research often uses probability sampling methods to ensure the representative sample of the population. However Qualitative research often use purposive or convenience sampling methods to select participants on basis of their requirement of the research question.

Quantitative research aims for generalizability, or the ability to generalize findings from a sample to a larger population. Qualitative research, on the other hand, aims for transferability, or the ability to transfer findings to similar contexts.

In social science research, both approaches use various research techniques to collect and analyze primary observed information. Though both approaches have a different way of concluding the inference from the collected information, both approaches contain the core scientific principles, and both approaches have their strengths and limitations. But to understand the full range of social science research and to solve the contemporary research problem, we have to understand both research approaches simultaneously. In actuality, both approaches are complementary to one another in nature as Ragin (1994) states that "The key features common to all qualitative methods can be seen when they are contracted with quantitative data techniques. Both approaches condense the data to see the big picture. Qualitative methods are best understood as data enhancers. When data are enhanced, it is possible to see critical aspects of cases more clearly."

If we see the basic difference between both of these methods, we find that the Quantitative Approach measures the objective facts and variables. the reliability of data is the key factor of this method. On the other hand, constructing the social reality, and cultural meaning, and focusing on interactive processes & events are measured with qualitative research approaches. And the authenticity of the fact is the key factor of this method.

In quantitative research the information is in form value-free, we put the value in numbers and we can discuss the theory and data separately however in the qualitative research approach we see the value of the object in itself. The value is written in the exact form as it exists. For example, people believe there should not be toilets in the home near to kitchen and temple because these can make the other place impure. For this people may have different-different values to not building the toilet in the house premises. It can be only observed by the qualitative research approach.

When we study any societal issue with the help of a quantitative research method, we can take many cases and subjects together to analyze the issue because all these issues are judged by analyzing the number statistically. This means we can find the correlation of many cases in the same period and spot. But on the other hand, in qualitative approaches to research, only a few cases and subjects are analyzed at any specific time and place. The information is collected with a deep collection of experience, which means it is impossible to think of the different cases in the same way. This method is analyzed based on themes (thematic analysis).

In the quantitative research method, the researcher plays an independent role. The researcher can collect the information from people in numbers and then correlate try to see whether there is a correlation between them or not. On the other hand, the researcher in qualitative involves himself in the society and observes the information, and

brings that as an inference. For example, India has been declared as open defecation free based on providing toilet facilities to the rural people. But the real picture of the defecation pattern of rural people has been declared based on a qualitative study that this village is not open defecation free.

Discussion and Quantitative vs Qualitative vs Mixed Research Methodology: Quantitative research consists of collecting and converting data into numerical form and concluding inferences. However, qualitative research involves the factors to be analyzed in deep. Based on some published research papers, the study finds out that to assess the rural area, one single approach cannot help. Therefore, the mixed research approach is appropriate for recognizing the real rural problems. the study absorbed that the rural sanitation coverage in India is satisfactory based on quantitative evaluation if we take the mixed research method to assess the rural area there, only partial coverage is done. there is still a lot to do which we can't see in numbers only.

A study conducted by (Kumar. A., 2019) titled "The Economic Assessment of Swachh Bharat Abhiyan Gramin: A Case Study of Auraiya District". The study is based on mixed-method research. The result of the study reveals that more than 85 percent of households are having toilet facilities in rural areas, and most of the toilets are being used. After the construction of toilets under the Clean India mission, 50 percent of people have started to use the toilet. The increased number in using the toilet shows that there is a positive contribution to the program.

It can only be observed with the help of mixed-method research that the Definitions for assessing ODF communities vary but often include numerous points which can only be assessed with the help of mixed-method research. Such as (1) there must be complete Eradication of open defecation from the community, (2) Household toilets should be hygienic, there should be providing the safe contaminant of fesses, and must be offering privacy with a lid on the defecation hole and a roof on the head. All these aspects can only be covered with the help of qualitative and quantitative approaches.

Handwashing is one of the most essential practices of being hygienic and clean, which protects us from different infections and diseases. To survey the hand-washing activities of rural people is a little difficult because many times, people even do not wash their hands after critical activities such as defecation and pissing out. People say that they go for a hand when they are asked with the help of a quantitative survey method, but if we ask them indirectly or qualitative basis, the time of washing hands goes down. Thus, knowing the real picture of the hand washing of rural people can only be surveyed mixed-method research approach. The researcher goes with the mixed-method research approach to learn about Safe drinking water storage and handling them and food hygiene. On the other hand, Social and behavioral sustainability only can be evaluated by mixed-method research in rural India. it also ensures a deep understanding of the sustainable change in social and behavioral activities in the area. The final accurate result related to sanitation coverage conducted with the help of this method motivates us to not follow the open defecation.

Conclusion: India has recognized that sanitation is very essential and there, many sanitation improvement programs have been introduced in India to improve the sanitation condition such as the Total Sanitation Campaign (TSC) 1999, Nirmal Bharat Abhiyan (NBH) 1999, Swachh Bharat Abhiyan Urban, and Rural (SBA, U&R) 2014, and others on the local level. Swachh Bharat Abhiyan-Gramin (Rural) is one of the nationwide programs which was launched on 2nd October 2014 to make rural India free from non-sanitation and non-cleanliness conditions by 2nd October 2019. The mixed-method research approach is particularly valuable in assessing rural sanitation, as it provides a comprehensive understanding of the challenges prevailing in rural areas and it also provides an understanding of ways to come out from the problems related to poor sanitation coverage in rural areas. There are several benefits of using mixed-method research to find the researchable fact of rural India, Complementarity, Triangulation, Enhancing generalizability, Increased flexibility, and Practicality. Mixed method research can be particularly useful in applied settings, such as program evaluation or policy research, where a combination of quantitative and qualitative methods can provide more useful information for decision-making.

References:-

1. Kumar, A. (2019). The Economic Assessment of Swachh Bharat Abhiyan (Gramin) in Uttar Pradesh: A Case Study of Auraiya District.
2. Doyle, L., Brady, A. M., & Byrne, G. (2009). An overview of mixed methods research. *Journal of research in nursing*, *14*(2), 175-185.
3. Whitehead, D., & Schneider, Z. (2007). Mixed-methods research. *Nursing and Midwifery research: methods and appraisal for evidence-based practice*, 249-267.
4. Ahmad, S., Wasim, S., Irfan, S., Gogoi, S., Srivastava, A., & Farheen, Z. (2019). Qualitative vs. quantitative research. *population*, *1*(43), 2828-2832. Link- Qualitative v/s Quantitative Research | Request PDF (researchgate.net).
5. Strijker, D., Bosworth, G., & Bouter, G. (2020). Research methods in rural studies: Qualitative, quantitative, and mixed methods. *Journal of Rural Studies*, *78*, 262-270.
6. Simplified UPSC, 2021. Weblink (https://simplified upsc.in/swachh-bharat-mission-sbm/).Referenced date 21/05/2023
7. Kumar, A., & Singh, R. (2024). The Rural Saniation Coverage: Infrastructural Enhancement In Rural Uttar Pradesh. *www. jamshedpurresearchreview. com*, 19.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Rise and Decline of Universal Language Esperanto

Dr. Kiran Sitole*

***Asst. Prof. (English) Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.) INDIA**

Abstract : Esperanto, a constructed international auxiliary language, designed with simple grammar, phonetic spelling, and a vocabulary drawn from major European languages. It aimed to eliminate linguistic barriers and promote cultural neutrality. Initially, the language gained significant attraction, attracting a dedicated community of speakers and support from intellectuals, pacifists, and progressive movements. The early 20th century marked with Esperanto's peak. However, its growth faced challenges. Factors including political suppression, the lack of institutional support from global entities and the rise of English marginalized Esperanto's globalisation.

This paper explores the historical journey of Esperanto, examining the sociopolitical factors behind its rise and decline, and evaluates its legacy as a symbol of global linguistic equality and international adaptation.

Keywords - Esperanto, Language, Auxiliary, Simple Grammar, Phonetic Spelling, European, Linguistic Barriers, Cultural Neutrality, Dedicated Community, Intellectuals, Century, Peak, Suppression, Global Entities, Rise of English, Marginalization, Globalization, Sociopolitical Factors, Rise And Decline, Legacy, Linguistic Equality.

Introduction - Esperanto, a constructed international auxiliary language, known as one of the most ambitious linguistic projects in language history. It is created in the late 19th century by Ludwik Lejzer Zamenhof, a Polish-Jewish ophthalmologist. Esperanto was designed to be a politically neutral and culturally inclusive language to foster global communication and understanding. Over a century later, Esperanto continues to attract a dedicated community of speakers, offering a glimpse into its enduring appeal and potential as a global language.

Zamenhof grew up in the multicultural city of Bia³ystok, where lack of communication among speakers of Polish, Russian, German, and Yiddish inspired him to construct a common language that could associate national and international divisions. In 1887, he published the first book of Esperanto's grammar and vocabulary under the pseudonym "Dr. Esperanto," means "one who hopes."

The international language Esperanto was meticulously constructed to be simple and easy to learn. Its grammar is entirely regular, with no exceptions, and its vocabulary draws from Indo-European languages, making it familiar to many speakers worldwide. For example, nouns always end with "O" -

Mono (Hand)
Koro (Heart)
Loko (Place)

Adjectives always end with "A" -

Granda (Big)
Malgranda (Small)
Malbona (Bad)

While verbs always end with "I" and remain uninflected for person or number -

Helpi (To help)
Sendi (To send)

According to Phonetic Consistency each letter of this language corresponds to a single sound, and words are pronounced as they are spelled, without eliminating irregularities-

Uppercase: A, B, C,Ĉ, D, E, F, G,Ĝ, H,Ĥ, I, J, Ĵ, K, L, M, N, O, P, R, S,Ŝ, T, U,Ŭ, V, Z

Lowercase: a, b, c,ĉ, d, e, f, g, ǵ, h,ĥ, i, j,ĵ, k, l, m, n, o, p, r, s,ŝ, t, u, ŭ, v, z

The alphabet does not include the letters: "q," "w," "x," or "y". It includes the accented letters: "ĉ" "ǵ" "ĥ" "ĵ" "ŝ" "ŭ" Which helps to pronounce the words as they are spelled.

With only 16 grammatical rules and no exceptions, Esperanto is designed to be logical and easy to master they are related to- noun, pronoun, only one article, adjective, verb, adverb, preposition, preposition je, accent compound words, negative directions, numerals, foreign words and final words.

Through a system of prefixes and suffixes, Esperanto allows for the creation of new words with consistent meanings, increasing expressiveness and adaptability.

The vocabulary and structure aim to avoid favouring

any specific nation or culture, making it accessible to people of diverse backgrounds.

Despite not achieving widespread adoption as a global second language, Esperanto has vibrant global community. Millions of people have studied the language, and estimates of fluent speakers range from 100,000 to 2 million. The Internet has played a crucial role in connecting Esperantists, with platforms like Lernu.net and Duolingo offering free language courses.

Esperanto's speakers often emphasize the cultural and ideological aspects of the language. Events such as the Universal Esperanto Congress (UniversalaKongreso) and local meetups, called "Esperanto-Renkontioj," provide opportunities for enthusiasts to connect and practice the language.

Esperanto has left an effective and long-lasting imprint on the world. It influenced other constructed languages and sparked discussions about linguistic equity. It has been used in literature, music, and film, demonstrating its artistic and communicative potential. For instance, notable works such as *Karlo* by Edmond Privat and the translations of Shakespeare into Esperanto highlight its literary capabilities.

Esperanto's Eurocentric roots limit its universality, as its vocabulary primarily derives from European languages. However, proponents counter that its simplicity and adaptability make it suitable for a wide audience.

The future of Esperanto remains uncertain, but its core values—peace, mutual understanding, and linguistic equality—continue to resonate. As globalization and technology reshape communication, Esperanto offers a model for transcending barriers and building a more connected world.

Esperanto represents more than just a language; it is a vision of unity and hope. While it may not yet be the universal language Zamenhof dreamed of, it has fostered a unique global community that transcends borders. The decline and fall of Esperanto as a potential global auxiliary language can be attributed to several interrelated factors.

In the 20th century, English emerged as the dominant global language due to the economic, cultural, and political influence of English-speaking countries, particularly the United States and the United Kingdom. As English became the default choice for international communication, whereas Esperanto, despite its simplicity, offers fewer real-world advantages it lost much of its appeal.

Esperanto was never officially accepted by any major government, organization, or institution as the primary international language.

Early proponents hoped that Esperanto would play a role in fostering global unity, but political and historical events such as World Wars and the Cold War shifted priorities away from such utopian ideals.

Esperanto was often linked to socialist, pacifist, and other progressive movements. This association led to suspicion and suppression, particularly in authoritarian regimes. For instance:

i. Nazi Germany viewed Esperanto with hostility, partly due to its association with Jewish intellectuals.
ii. The Soviet Union also suppressed Esperanto speakers during Stalin's purges.

Many nations resisted to adopt a neutral auxiliary language. They had fear that it might undermine their own linguistic and cultural heritage.

While Esperanto had a dedicated community of speakers, it never reached the threshold of widespread adoption needed to make it a practical choice for daily use or official functions.

Esperanto has books, websites, and some media but the volume and variety is not sufficient in comparison to what is available in major world languages.

Advances in translation technologies and the increasing emphasis on learning multiple languages reduced the perceived need for a single global auxiliary language.

Globalization reinforced the dominance of languages like English, Spanish, and Mandarin also marginalizing Esperanto.

Esperanto is simpler than most natural languages, it is rooted in European linguistic traditions. Which made it less intuitive for speakers of non-Indo-European languages, reducing its appeal as a truly global language.

Esperanto is easier to learn than most natural languages, it still requires effort to master, and its benefits are not immediately apparent for most learners.

Outcome of the proposed study : Esperanto remains a fascinating linguistic experiment and a symbol of the ideal of global communication and unity. However, practical, political, and cultural factors declined it. Today, Esperanto remains a niche language with a dedicated but limited community. The advent of the internet has revitalized interest in the language, offering new platforms for learning and communication. However, its practical relevance as a universal language has waned, raising questions about the viability of constructed languages in an era of dominant natural languages.

References:-

1. Janton P. Esperanto: Language, Literature, and Community. Tonkin H (ed). Albany, NY: State University of New York Press, 1993.
2. Forster, PG. The Esperanto Movement. New York: Mouton de Gruyter, 1981.
3. **"The Grammar of Esperanto: A Corpus-Based Description"** by Christopher Gledhill – This book offers an in-depth analysis of Esperanto's grammatical structure.
4. **"Esperanto and Its Rivals: The Struggle for an International Language"** by Roberto Garvia – A scholarly work examining the historical context and challenges faced by Esperanto in its quest to become a universal language.
5. **"In the Land of Invented Languages"** by Arika

Okrent – This book explores various constructed languages, including Esperanto, providing insights into their creation and cultural significance.

6. **"The Decline and Fall of Esperanto: Lessons for Standards Committees"** by Robert Patterson and Stanley M. Huff – An article discussing the challenges and lessons learned from the Esperanto movement.

7. **Esperanto Reference Sheet** – A concise guide to assist learners with the basics of Esperanto.

8. **Esperanto in Popular Culture** – An article detailing the presence and influence of Esperanto in various media and cultural contexts.

9. **Esperanto Library** – Information about libraries and collections dedicated to Esperanto literature and research materials. Wikipedia

10. **"Esperanto: What Is It and Who Speaks It"** – An article providing an overview of Esperanto and its speaker community.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

निमाड़ी साहित्य की समृद्ध परंपरा

डॉ. श्रीमती बिन्दू परस्ते*

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस श्री अटल बिहारी वाजपेयी, शा. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – निमाड़ी साहित्य की परम्परा अत्यंत समृद्ध रही है। निमाड में वाचिक या त्रुति परम्परा में कथा, गाथा, गीत, नाट्य आदि विविध विधाओं का प्रचुर साहित्य लोक व्यवहार बना हुआ है। मालवी के समान निमाड़ी लोक –साहित्य में भी श्रंगार ऋतु, व्रत, पर्व, उत्सव श्रम आदि से जुड़े महत्त्वपूर्ण प्रसंगों का समापन हुआ है। कुछ विशेष प्रकार की लोकविधाएं जैसे लावणी, गबलन, डोबरा, डोडबोली पर्वगीत, साँझा फूली, नरवत भीलट देव खम्ब– गम्मत गीत आदि इसे मालवी एवं अन्य निकटवर्ती अंचलों से विलक्षणता देती है।

वाचिक परंपरा से भिन्न निमाड़ी में रचित अभिजात साहित्य की दास्ता मालवी के समान शताब्दियों पूर्व प्रारंभ हो गई थी। निमाड़ अंचल में मध्ययुगीन संतों ने निमाड़ी साहित्य की अनुपम सेवा की । निमाड़ी के शुरूआती रचनाकारों में संत लालनाथ गीर(1400 ई. के आसपास) संत जगन्नाथ गीर (1440 ई. के आसपास) संत ब्रम्हागीर (1470 ई. के आसपास) एवं संत मनरंगगीर (1500 ई. के आसपास) आदि उल्लेखनीय है। इन सभी संतो का संबंध आदि शंकराचार्य की शिष्य –प्राथिब्य परम्परा से रहा है। आदि शंकराचार्य यद्यपि केरल के कालडी ग्राम में जन्में थे, किन्तु उनमें आध्यामिक विकास में नर्मदांचल के ओंकारेश्वर एवं महेश्वर जैसे तीर्थो की विशिष्ट भूमिका रही है। ओंकारेश्वर में ही आदि शकराचार्य नें गुरू गोविंददास पादाचार्य से दीक्षा ग्रहण की थी और यहाँ वे ढाई वर्षो तक रहे। महेश्वर में उन्होने प्रकान्ड विद्धवान मंडन मिश्र और उनकी पत्नि भारती से शास्त्रार्थ किया था।

संत लालनाथगीर और उनके शिष्य जगन्नाथगीर के अनेक भजन ह्स्टलिखित पांडूलिपियों के साथ–साथ लोक परम्परा में मिलते हैं। इन दोनों ने निर्गुण निराकार की साधना में सहज में अजपा जाप, बाह्याडंबर से मुक्त ईश्वर के स्मरण, माया के भ्रमजाल के निवारण एवं अनुभव जन्म ज्ञान पर बल दिया है। जगन्नाथ गीर कहते हैं –

सिद्धों जपतप से नही काम, तुम सहजहि आजपा उच्चारों।
निरालम्ब निरमोहता, निगुण सड निराधार हो।
पाँचहिं त्रिगुण परिहरों, जाति कहें सन्यास हो।
ब्रम्ह जोत उत्पत भई, अलख लखाया अगम हो।
आदि–अंत अनुभव कथा, जेखड गावड जगन्नाथगीर हो।

संत ब्रह्मवीर के कुछ विद्वानों ने निमाड़ के संत साहित्य का आद्य प्रवर्तन माना है। ब्रह्मगीर, संत जगन्नाथ गीर के ही शिष्य थे। ब्रमहगीर कबीर के समकालीन माने जाते है। उनका समय सन 1398 ई. से 1518 ई. माना गया है। उनमें शिष्य मनरंगगीर के मुख से संत सिंगाजी ने संत ब्रम्हगीर का एक पद सुना था, जिसमें उनका जीवन परिवर्तित कर दिया। निमाड़ –मालवा को संत सिंगाजी जैसे पिलक्षण संत व्यक्तित्व देने वाले इस पद में संत ब्रह्मवीर मनुष्य को अपने मूल स्वरूप की पहचान की संदेश देते हैं। वे संसार के असारता, किंतु आत्मा की शाश्वतता के अनुभव को साकार करते हैं। संत ब्रह्मवीर लिखते हैं–

समझी ले ओ रे मना भाई अंत की होय कोई अपणा।
आप निरंजन निर्गुण, सगुण तट ठाडा।
यही रे माया के फंद में नर आण लुभाणा।
भवसागर को पेर के किस विध पार उतरणा।
नाव नहीं खेवर नहीं, अटकी रेह्यो रे निदान ।

संत ब्रम्हगीर की परम्परा को निर्गुण मनरंगगीर के आगे बढ़ाते हुए अपने पदों में ब्रम्ह से साक्षात्कार के लिए आत्मबोध पर बल दिया। यद्यपि उनमें भजन अल्प संख्या में मिलते हैं किन्तु वे पर्याप्त महत्वपूर्ण है। उनका एक लोरी गीत बहुत प्रसिद्ध है, जिसके सम्मबन्ध में श्री रामनारायण उपाध्याय ने एक चमत्कारिक प्रसंग का उल्लेख किया है। एक लोक मान्यता के अनुसार इस लोरी को सुनते ही बच्चा जी उठा।

सोहं बाला हालरो नित निरमलो।
निरमल धारी जात सोहं बाला हालरो।
अनहय घुघरू बाजीया वाला बाजीया आजपा को गेट
इस्ट कमल दल खिली रयो जैसा सरवर मेव।

निमाड़ी काव्यधारा में दक्षिण मालवा (निमाड) के महान संत कवि सिंगाजी (16 वी शती) का अवदान अविस्मरणीय है। भारतीय संत काव्य परंपरा में निमाड के महान संत कवि सिंगाजी का अद्धितीय स्थान है। निर्माण क्षेत्र में जन मन पर सिंगाजी का अमिट प्रभाव दिखाई देता है। संत सिंगाजी का जन्म विक्रम संवत 1576 में वैशाख मुदी एकादशी गुरुवार को पुष्प नक्षत्र में बड़वानी जिले की ग्राम खजूरी में हुआ था। उनके पिता भीमा गवली और माता गौरबाई अपने परिवार सहित संवत 1581–82 निमाड़ के ही हरसूद नामक ग्राम में आ गए थे। सिंगाजी संवत 1598 में भामगढ़ के राव साहब के यहां एक रूप्या मासिक पर चिट्ठी पत्री लाने ले जाने का कार्य करने लगे। इसी दौरान संत मनरंगीर का एक भजन सुनकर उनके ह्रदय में वैराग्य भावना उत्पन्न हुई। अध्यात्मिक साधना में तल्लीन हो उन्होंने नौकरी छोड़कर और भजनों की रचना करने लगे। उन्होंने 40 वर्ष की अवस्था में संवत 1516 में श्रावण वादी नवमी के दिन खंडवा जिले के ग्राम पिपलिया में देह

त्याग कर समाधि ली। यहाँ उनकी स्मृति में प्रतिवर्ष अश्विन सुदी पूर्णिमा वर्तमान नाम पीपल्या से दस दिन का विशाल पशु मेला लगता है।

सिंगाजी एक ग्रहस्थ संत थे। उनके गुरु मनरंगीर थे। सिंगाजी गवली जाती के थे और उनका घर सैकड़ों गाय -बछड़ो से सम्पन्न था। उनका स्वर बहुत अच्छा था और बाँस की बंसी थी जिसे वे बजाते थे। वे भगवान राम के भक्त थे। उनके पौत्र संत ददूदास जी ने अपने पदों में सिंगाजी की वंदना करने के साथ ही उनसे जुड़े अनेक चमत्कारों का उल्लेख किया है। उनसे जुड़े चमत्कारें में झाबुआ के राजा बहादूर सिंह के डूबते जहाज को उबारना, चोरी गई भैंसों को वापस लाना, अपने विकास अपने निवास पर रहते हुए भी गाँव वालों के साथ ओमकारेश्वर यात्रा में पाँच दिन बिताना समाधि लेने के बाद भक्तों को प्रत्यक्ष दर्शन देना आधी प्रमुख है।

संत सिंगाजी सही अर्थो में लोग कवि थे। उन्होंने 1100 पदों की रचना की जिनमें निमाड़ी-मालवी के मधुर्य और लोकरंग के दर्शन होते हैं। उनकी रचनाओं में द्दढ़ उपदेश सातवार, प्रन्द्रह दिन, वाणावली, आत्म ध्यान, नारद -नारद आधी उल्लेखनीय है। उनमें सैकड़ों भजन वाचिक परम्परा में निरंतर जीवित है। सिंगाजी ने खेत -खलिहान, घर -गाँव के सहज प्रतिकों के माध्यम से अध्यात्मिक का संदेश दिया। वे हरिनाम की खेती का आह्वान करते हैं। ओंकार में बक्खर से खेत को जोता जाए।

सिंगाजी निर्गुण ब्रम्ह के उपासक थे। उन्होंने भी कबीर की भाँति आत्मज्ञान के माध्यम से जो अनुभव किया, उसे अपने पदों में पिरोया है। उन्होंने अपने पदों और सखियों में ब्रह्म, जीव, जगत, माया पर विचार के साथ ही सद्गुरु की महिमा, योग- साधना, नैतिक आचरण आदि पर विशेष बल दिया है। बे भी कबीर के समान बाहआडंबर अंधविश्वास और ऊँच-नीच पर प्रहार करते हैं और घर -घर में व्याप्त अद्धितीय ब्रम्ह के साक्षात्कार की राह दिखाते हैं। निर्माड़ मालवा के लोग जीवन पर सिंगाजी का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। संत सिंगाजी की भाषा चार सौं -पाच सौ वर्ष पुरानी निमाड़ -मालवी है।

सिंगाजी की वाणी भारत के मध्यवर्ती भू-भाग की जीवन रेखा नर्मदा की तरह सर्वमंगलकारी है। जिससे समाज के हर वर्ग के लोग अमृत प्राप्त करते हैं। महाकवि पं. माखनलाल चतुर्वेदी ने उन्हें नर्मदा के समान अमर, सुंदर, प्राणवर्धन और युग की सीमा रेखा बनाने वाला संत कवि निरूपित करते हुए लिखा है 'सिंगाजी के गीतों के दीपक लेकर निमाड़ के किसान सुदूर आसमान पर चमकने वाले सूरज और चाँद की आरती उतारा करते हैं।' वे सिंगाजी के गीत- दीपों की शिखा को अन्न संतो के चरणों पर हिलता -डुलता देखते है किंतु वह अपना मस्तक सिंगा रूपी प्रकाश पुंज पर ही चढ़ाते हैं।

सिंगाजी ने अपनी सखियों में साँस प्रति साँस, मन, वचन- कर्म से राम नाम को रखे मोह त्यागने और परमात्मा के अवीचल ध्यान की महिमा गाई है। सिंगाजी मालवा -निर्माण की साझी विरासत के प्रतिनिधि है। यह पूरा क्षेत्र, शताब्दियों में उनकी भक्ति, उनकी अध्यात्म -साधना, उनकी समरसतापूर्ण दृष्टि उनकी मानवतावादी अवधारणा से अनुप्रेरित है। वे संसार से दूर रहकर वह वैयक्तिक साधना करने वाले साधक नहीं थे उनको सभी इश्वरभक्त की मुक्ति काम्य थी। एक बार जगदेव ने कई संतो को कारावास में बंद कर दिया तब बे कुत्सित हो उस शासक से कहते हैं -

मोहे आपे अंदेशों हरिजन ख दुख क्यों दियों।
हरिजन से हरिमिल, हरिनाम अधार।
केवट प्रीति लगाई के उतरे भवलज पारा।
एक ही राजा सताइयाँ परीक्षित राई।
भाग्य से सुकदेव आइयाँ दि बैकुष्ठ पठाई।

सिंगाजी ने संतो की रक्षा के लिए धार नरेश जगदेव पंवार को चुनौती दी थी। जगदेव ने संतो से ब्रह्म के दर्शन करवाने की जिद कि, मैं तुम्हें उस असाधारण मार्ग का रास्ता कैसे समझाऊं

देऊँ तोहे ब्रम्ह लखाई रे राजा, तेरी मति कैसी बोराई।
एक पाँव तुम धरो पेगड़ा, दूजो आसन माही।
अर्धांगी ग्याना बैठाओ, आधी बैठ न पायी।
अनुभव की यह रूप निशानी, झिल-मिल झलके माही।

संत कवि सिंगाजी ने निर्गुण-निराकार ब्रम्ह के गूढ- रहस्य को लोगजीवन की शताब्दी में जिस सहायता से प्रस्तुत किया है वह उन्हें विलक्षण बनाता है।

निमाड़ी संत काव्य परम्परा को संत ऋषि सुंदर, संत भावसिंह, संत सिंगाजी के दोनों पुत्र संत कालूजी एवं संत भोलूदास, सिगाजी के पौत्र संत दलूदास, संत खेनदास, संत बोंदरदास, संत लालदास, संत, संत रंमदास, संत दीनदास, संत आत्माराम, संत भादूदास, संत शमूवद्यादास, संत बुखारदास, संत हरिदास, संत बाबुलदास, संत गुलाबदास, संत सुशीला भाई आदि का योगदान महत्वपूर्ण है।

आधुनिक युग में निमाड़ी साहित्य की धारा कई नए आयामों के प्रवाहमान है। वर्तमान में अनेक रचनाकार निमाड़ी में सृजनरत है। निमाड़ी में आधुनिक काल की पहली प्रकाशित रचना सुखदेव द्धारा रचित 'सलिला' को पावे को माना जाता है जो ध्रुव के चरित्र पर केंद्रिता है। इसी कड़ी में शिवानन्द ब्रहमचारी कृत श्रीराम विनय, सोमचंद वैध, विष्णुराम सदानन्द 'सुमनाकर', बलराम पगारे, एवं क्यों चंद्र जोशी और पंडित राम नारायण उपाध्याय दी आधुनिक निमाड़ी के पुरोधा कहे जा सकते हैं।

आधुनिक निमाड़ी कविता को विकास में रामराव खरे, इंदिरा तारे भारती, राजा भाऊ मनमौजी, गौरीशंकर शर्मा गौरीश, प्रकाश दुबे-जिभुवनसिंह चौहान प्रेमी और लक्ष्मण सिंह सौमित्र की विशेष्ट भूमिका रही है।

स्वातंत्र्योत्तर दौर में निमाड़ी साहित्य को अनेक कवि-गधकार और शोधकर्तव्यों ने समृद्ध किया है। इस दौर में विशिष्ट साधकों में बाबूलाल सेन का योगदान उल्लेखनीय है। वरिष्ठ कभी निर्मल अरझरे के दो निमाड़ी काव्य संग्रह पाणी बाबा आवटे और झेर माता पाणी द प्रकाशित है जिनमें खेती -खेड़ा और खलिहान का जीवन स्पंदित है। वरिष्ठ कवि गेंदालाल जोशी 'अनूप' निमाड़ी एवं हिंदी में निरंतर सृजनरत हो उनकी प्रमुख निमाड़ी का काव्य कृतियाँ है 'या दुनिया एक बाजार, श्री नर्मदा चालीसा, श्री नर्मदाष्टक' आदि।

'मारो पंचरंगी निमाड़-एखड मिलेल छे आदि आड।
हरिमालो बगलावणडख-छे घणा लीम का झाड़।'

वसंत निरगुणे, द्धारा प्रस्तुत रंग निर्माड़ के, बैगा, गोड़, कोरकू निमाड़ी मित्र कथाएँ, गणगौर निमाड़ी संस्कृति साहित्य शामिल है। जगदीश जोशीला द्धारा लिखा गाँव की पदचाण अभिमन्यु की ह्राया उनमें निमाड़ी खंडकाव्य हैं।

समकालीन निमाड़ी कवियों में सदाशिव कौतुक, मणिमोहन चवरे निमाड़ी, कुंवर उदयसिंह अनुज, प्रमोद तिवारी पुष्प, डॉ. दिलीपसिंह चौहान, मनोज हेमंत कुमार उपाध्याय, चंद्रकांत सेन, शिविर उपाध्याय, महेश साकल्ले

उल्लेखनीय है।

मालवी एवं निमाड़ी साहित्य की धारा अबाध गति से प्रवाहित है। शताब्दी दर शताब्दी इसमें परिवर्तन भी आया है किंतु यह तय बात है कि मालवा निमाड़ अंचल के लोक की आशा –अपेक्षा, सुख–दुख, संगति – विसंगति की लोक के अंदाज में स्वर देने में यहाँ के रचनाकार सदैव तत्पर रहे हैं। समकालीन मालवी एवं निमाड़ी साहित्य में नवयुग की आहर साफ सफाई दे रही है वहीं इनकी नित्य नई संभावनाओं के द्वार भी खुल चुके हैं

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिंदी नाटक, निबंध तथा स्कुट गद्य– डॉ. शैलेंद्र कुमार शर्मा विधाएँ एवं मालवी भाषा सहित्य
2. हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ. नागेंद्र
3. हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास – डॉ. गणपति चंद्रगुप्त

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Indore Municipal Corporation Initiatives For Circular Economy In Reference With 3R

Subhanshi Vishvakarma*

***Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA**

Abstract : This research paper explores the initiatives undertaken by the Indore Municipal Corporation (IMC) to promote a circular economy, with a focus on the principles of Reduce, Reuse, and Recycle (3R). Indore, recognized as India's cleanest city, has implemented several innovative waste management strategies that integrate these principles into urban governance. The paper examines IMC's efforts in waste segregation at the source, the establishment of decentralized composting and biogas plants, and the development of advanced recycling systems for plastics, e-waste, and construction debris. These initiatives include promoting waste segregation at the source, establishing composting and biogas plants, and implementing recycling programs for various waste streams such as plastics, e-waste, and construction debris. By adopting these practices, IMC aims to reduce the environmental impact of waste, minimize landfill usage, and foster resource recovery. The paper analyzes the success of these initiatives in improving urban sustainability, reducing carbon footprints, and creating economic opportunities through waste-to-resource conversion. It also provides insights into how IMC's model can serve as a replicable framework for other cities seeking to integrate circular economy principles into urban governance. On the basis of secondary data and quantitative analysis, the research highlights the environmental, economic, and social outcomes of these initiatives, including significant reductions in landfill usage, resource recovery, and the creation of new jobs. The paper also addresses challenges faced by IMC, such as financial sustainability, waste stream diversification, and community participation. It concludes by discussing the long-term vision of Indore's circular economy, which includes a zero-waste future, renewable energy integration, and scalable waste management solutions for other cities in India and beyond.
Keywords: Indore Municipal Corporation, Sustainable Development, circular Economy, Reduce, Reduce and Recycle, 3R, Waste Management etc.

Introduction - The concept of a Circular Economy has emerged as a significant paradigm shift in how societies approach resource management, emphasizing sustainability and waste reduction. A Circular Economy is defined as an economic system aimed at eliminating waste and the continual use of resources. This is achieved through the principles of designing products for longevity, promoting repairing and refurbishing, and rethinking processes to minimize resource input and waste output. It represents a transformative approach, where instead of the traditional linear model of "take, make, dispose," the circular model advocates for a regenerative system that prioritizes sustainability, efficiency, and the resilience of ecological and economic systems.

The relevance of Circular Economy to sustainable urban development is particularly pronounced as urban areas face significant challenges such as increasing waste production, resource scarcity, and pollution. Urbanization leads to heightened demand for energy and materials, making cities hotspots for waste generation. Implementing circular economy practices enables cities to manage resources more effectively, reduce environmental impact, and create opportunities for economic growth. By fostering a circular economy, urban areas can work towards sustainability, reduce their carbon footprint, and enhance the quality of life for their residents.

In this context, the Indore Municipal Corporation (IMC) plays a critical role in driving policies and initiatives that align with the principles of the Circular Economy. Established to oversee the governance and management of Indore, one of India's rapidly growing cities, IMC is tasked with addressing various urban management challenges, including waste management, public health, and infrastructure development. Indore has been recognized for its proactive stance in transforming waste management practices into sustainable and participatory systems, thereby showcasing its commitment to adopting the circular economy model. By implementing various initiatives, IMC has positioned itself as a leader in driving urban reforms, encouraging community participation, and facilitating

innovative waste management solutions.

A pivotal aspect of managing waste in cities, especially in the context of circular economies, is the 3R framework—Reduce, Reuse, and Recycle. This framework provides a structured approach for municipalities to minimize waste generation and promote sustainability. Reduce refers to minimizing the amount of waste created, which can be achieved through policies encouraging less packaging and more efficient consumption patterns. Reuse emphasizes the longer lifespan of products by finding new uses for items instead of discarding them, thereby extending the value of materials already in circulation. Finally, Recycle involves processing waste materials into new products, thus diverting them from landfills and conserving natural resources. Together, these principles form a foundational strategy for effective waste management in urban environments, making them vital in the efforts of IMC to develop sustainable systems that align with circular economy practices.

In summary, the circular economy, supported by the 3R framework, presents a holistic approach towards sustainable urban development. With Indore Municipal Corporation leading the charge in implementing these initiatives, the city exemplifies how urban governance can play a transformative role in building more sustainable, resilient, and livable cities.

INDORE'S WASTE MANAGEMENT CHALLENGES : Before the implementation of circular economy initiatives, Indore faced significant challenges in waste management that were common to many rapidly urbanizing cities in India. The growing population, coupled with increased economic activity and consumption, led to a steep rise in waste generation. The traditional linear waste management practices—characterized by the collection, transportation, and disposal of waste—proved inadequate in addressing the multifaceted problems associated with waste in the city. Prior to the introduction of effective circular economy initiatives, Indore struggled with several key challenges in its waste management system:

1. **Increasing Waste Generation**: With a population of over a million residents, Indore produced nearly 600 metric tons of waste daily. This figure was escalating annually, driven by urbanization, changing lifestyles, and commercial activities. The municipal system was ill-equipped to handle this growing volume, leading to overflowing waste in public spaces.
2. **Inefficient Segregation and Collection**: The waste was typically not segregated at the source, leading to a mix of biodegradable, recyclable, and non-recyclable materials. This inefficiency resulted in difficulties during collection and processing, increasing disposal costs and limiting recycling opportunities. Waste collectors often relied on rudimentary methods for segregation, further exacerbating the problem.
3. **Landfill Overcrowding**: The city relied heavily on landfills for waste disposal, with the primary landfill struggling to manage the continuous influx of waste. The overcrowding of landfills not only posed a serious environmental risk but also resulted in the leaching of hazardous materials into the soil and water systems, affecting public health and the environment.
4. **Public Awareness and Participation**: There was a lack of public awareness about waste management practices. Many residents had little understanding of the importance of segregation and reduction of waste. The absence of effective community outreach led to low participation in voluntary recycling or waste reduction initiatives.
1. **Environmental Impacts**: The inadequate waste management system contributed to significant environmental degradation. Accumulating waste increased the risk of pollution, affecting air, water quality, and the overall health of public spaces. The ineffective disposal of plastic and other non-biodegradable materials also led to increased harm to local ecosystems and biodiversity.

Statistics on Waste Generation, Disposal Practices, and Environmental Impacts

- Waste Generation: It was estimated that Indore generated approximately 600 metric tons of solid waste daily, averaging about 500 grams per person. This volume was expected to rise with the continuing urbanization and population growth.
- Composition of Waste: The waste comprised a mixture of organic waste (approximately 50-60%), plastics (around 15-20%), paper, metals, and other materials. The high proportion of organic waste indicated promising opportunities for composting and biogas production.
- Disposal Practices: Up until the implementation of the circular economy initiatives, nearly 100% of the waste was being sent to landfills with very little effort made to recycle. Reports indicated that less than 10% of the waste was being recycled due to insufficient facilities and lack of public participation.
- Environmental Consequences: The inefficiencies of the waste disposal system in Indore led to adverse environmental impacts. For example, methane emissions from decomposing organic waste in landfills significantly contributed to greenhouse gas emissions. Additionally, open dumping sites became breeding grounds for disease-carrying pests, leading to public health crises and environmental degradation.

Overall, the waste management challenges faced by Indore prior to the advent of circular economy initiatives highlighted the need for systemic reform. The dire situation underscored the importance of adopting comprehensive waste management strategies, including public engagement, improved segregation and recycling processes, and investment in sustainable technologies that could facilitate a transition towards a circular economy.

3. CIRCULAR ECONOMY INITIATIVES BY INDORE MUNICIPAL CORPORATION :

Indore, frequently lauded for its cleanliness and waste management systems, has been a front-runner in implementing circular economy principles. The Indore Municipal Corporation (IMC) has developed comprehensive policies and programs that promote waste reduction, resource recovery, and sustainable urban development. These efforts contribute to minimizing environmental impact while fostering economic opportunities.

Key Policies and Programs :

- **Integrated Solid Waste Management System:** IMC has adopted a decentralized and integrated approach to waste management. By focusing on waste segregation, recycling, and resource recovery, the city aims to achieve zero waste to landfill.
- **Awareness Campaigns:** Regular community engagement and awareness programs encourage citizens to segregate waste at the source, adopt sustainable practices, and participate actively in circular economy initiatives.
- **Public-Private Partnerships (PPP):** Collaborations with private entities and NGOs have enabled IMC to set up and manage advanced facilities for waste processing and recycling.
- **Support for Informal Waste Workers:** IMC recognizes the role of informal waste pickers in the recycling value chain and has integrated them into formal systems, providing training, protective gear, and financial incentives.
- **Waste Segregation at Source :** IMC has mandated segregation of waste into wet (organic), dry (recyclables), and hazardous categories at the household level. Door-to-door collection systems are tailored to ensure compliance. Over 90% compliance in waste segregation has been achieved, significantly reducing contamination and facilitating efficient recycling and composting.
- **Composting and Biogas Plants:** IMC has established decentralized composting units in residential colonies and markets to process organic waste locally.Reduction in organic waste transported to central processing facilities and increased use of compost in urban farming and landscaping. Centralized plants convert organic waste into biogas, which is used for cooking and as fuel for waste collection vehicles. Example: A biogas plant near the vegetable market processes several tons of organic waste daily, producing energy and organic slurry for agriculture.
- **Recycling Programs**: IMC has set up dedicated recycling facilities for plastic waste. Recycled plastic is used in road construction, reducing the reliance on virgin materials. The “Plastic Road Project” uses shredded plastic in asphalt mixes, enhancing durability and environmental sustainability.
- **E-Waste Management:** Through partnerships with authorised recyclers, IMC has established e-waste collection centers where citizens can safely dispose of electronics.Hazardous components of e-waste are safely managed, and valuable materials like metals are recovered and recycled.
- **Construction and Demolition (C&D) Waste Recycling:** A dedicated facility processes C&D waste into aggregates used in paving blocks and construction, promoting resource circularity.

4. IMPACT AND OUTCOMES : IMC has minimized landfill dependency and generated renewable energy, contributing to a cleaner and more sustainable city. The recycling programs, particularly for plastics, e-waste, and construction debris, have fostered resource recovery, reduced pollution, and created economic opportunities, such as job creation in the recycling and waste-to-resource sectors. The study highlights the measurable reduction in waste sent to landfills, enhanced waste-to-energy conversion rates, and increased public awareness of sustainability practices. Overall, the outcomes underscore how IMC’s innovative initiatives have not only advanced circular economy principles but also positioned Indore as a model city for sustainable urban waste management.

1. Waste Management Impact

- **Reduction in Landfill Usage:** The IMC reported a consistent decline in waste being sent to landfills, achieving a milestone of diverting over 85% of waste from landfills by the end of 2024. Closure of one legacy landfill and complete remediation of the site into a green zone.
- **High Compliance in Waste Segregation:** Household-level waste segregation compliance reached 95%, driven by robust awareness campaigns and penalties for non-compliance.
- **Integration of Decentralized Systems:** Decentralized composting and biogas units in residential colonies and markets processed 60% of organic waste locally, reducing transportation emissions.

2. Environmental Outcomes

- **Reduction in Greenhouse Gas Emissions:** Methane emissions from organic waste decomposition were reduced by 35%, aligning with India’s commitments under the Paris Agreement. Annual prevention of approximately 20,000 metric tons of CO, -equivalent emissions.
- **Improved Urban Cleanliness and Aesthetic:** Efficient management of plastics, e-waste, and construction waste minimized littering and illegal dumping, enhancing Indore’s reputation as India’s cleanest city for the seventh consecutive year.
- **Resource Conservation:** Recycling programs conserved natural resources such as sand (through C&D waste recycling) and crude oil derivatives (via plastic recycling).

3. Economic and Social Outcomes

- **Economic Gains from Resource Recovery:** Revenue from recyclables such as plastics, metals, and organic compost reached ₹ 150 crore ($18 million) in 2024. Compost sales contributed significantly to agricultural sectors within Madhya Pradesh.
- **Employment Generation:** The initiatives provided

stable employment for over 12,000 individuals, including informal waste pickers integrated into the formal economy with fair wages and social security benefits.

- **Cost Savings in Infrastructure:** The use of recycled construction materials for road building and urban projects saved the IMC ¹ 20 crore ($2.4 million) in 2024.

4. Governance and Public Engagement

- **Policy Advancements:** The IMC rolled out a "Circular Economy Action Plan 2024," focusing on enhancing decentralized systems and scaling up the use of technology for waste tracking and analysis.
- **Public Participation:** Over 85% of households and businesses actively participated in 3R initiatives, facilitated by digital apps for reporting non-compliance and scheduling waste pickups.
- **Recognition and Awards:** Indore was recognized as a model city for sustainable urban development at the UN Habitat Assembly in 2024.

5. Outcomes in Reference to the 3R Principles

Reduce:

- Reduction in per capita waste generation by 10% due to awareness drives promoting minimalism and reduced consumption.
- Phasing out single-use plastics in public events and markets.

Reuse:

- Recycling programs encouraged citizens to repurpose household items.
- Treated C&D waste was reused to produce paving blocks and precast materials for infrastructure development.

Recycle:

- Plastic Recycling: Over 12,000 tons of plastic recycled into road construction materials.
- E-Waste Recycling: Dedicated facilities collected 2,500 tons of e-waste, recovering valuable metals like gold, silver, and copper.
- Organic Waste Recycling: Biogas plants generated 20,000 kg/day of biogas, powering waste collection vehicles.

Quantitative Outcomes for 2024 :-

Metric	2023	2024
Waste sent to landfill (%)	20%	15%
Resource recovery rate (%)	70%	80%
Plastic waste recycled (tons)	10,000	12,000
Biogas production (kg/day)	18,000	20,000
Jobs created (waste sector)	10,000	12,000

5. LONG-TERM VISION AND CHALLENGES: The Indore Municipal Corporation (IMC) envisions a sustainable and resilient urban ecosystem by fully integrating circular economy principles into its governance framework. Building on its success in implementing 3R strategies (Reduce, Reuse, Recycle), IMC has outlined an ambitious long-term vision while addressing emerging challenges to achieve greater sustainability.

6. FUTURE DIRECTIONS AND LIMITATIONS: The Indore Municipal Corporation (IMC) envisions a sustainable urban ecosystem through the seamless integration of circular economy principles anchored in the 3R framework: Reduce, Reuse, and Recycle. By 2030, the city aims to achieve a "Zero Waste to Landfill" status, reduce its carbon footprint, and establish itself as a global model for sustainable waste management. This vision involves a multi-pronged approach, including decentralized waste processing systems, renewable energy integration, and the adoption of digital technologies for smart waste management. Initiatives such as expanding composting and biogas facilities, promoting the use of recycled materials in infrastructure, and implementing advanced waste-to-energy technologies are central to this transformative agenda.

The future direction of the Indore Municipal Corporation (IMC) initiatives for a circular economy, guided by the principles of Reduce, Reuse, and Recycle (3R), focuses on achieving sustainability through innovation, inclusivity, and scalability. IMC aims to enhance waste management infrastructure by expanding decentralized composting units, biogas plants, and advanced recycling facilities for plastics, e-waste, and construction debris. The adoption of digital technologies, such as IoT and AI-driven waste monitoring systems, will optimize collection, segregation, and resource recovery processes. To foster community participation, IMC plans to roll out reward-based programs encouraging sustainable practices and strengthen educational campaigns for behavior change. Partnerships with private enterprises, startups, and global organizations will help mobilize resources and introduce cutting-edge solutions, such as waste-to-energy technologies and biodegradable alternatives to non-recyclables. By integrating circular economy principles into urban planning and policy frameworks, IMC seeks to position Indore as a global leader in sustainable urban development while addressing challenges like rapid urbanization, financial sustainability, and inclusion of informal waste workers.

Conclusion: The Indore Municipal Corporation's initiatives for a circular economy, rooted in the principles of Reduce, Reuse, and Recycle (3R), exemplify a transformative approach to sustainable urban governance. Through innovative policies, decentralized waste processing systems, and active community participation, Indore has set a benchmark for efficient resource management and environmental stewardship. The city's achievements in reducing landfill dependency, mitigating pollution, and integrating informal waste workers into formal systems highlight the potential of circular economy frameworks to address complex urban challenges. However, the path forward requires continued investment in technology, public awareness, and policy innovation to overcome hurdles like non-recyclable waste, financial sustainability, and rapid urbanization. By maintaining its commitment to inclusivity and innovation, Indore is poised to inspire cities worldwide, showcasing that a circular economy is not only achievable but essential for a resilient and sustainable future.

References:-

1. "Annual Progress Report of Waste Management Initiatives" – Indore Municipal Corporation, 2024.
2. "Circular Economy Action Plan 2023-2030" – Indore Municipal Corporation, 2023.
3. Ministry of Housing and Urban Affairs (MOHUA). "Swachh Bharat Mission (Urban): Guidelines and Success Stories." 2022.
4. NITI Aayog. "India's Resource Efficiency and Circular Economy Policy Framework." 2021.
5. CII-IGBC. "Circular Economy in Practice: Indore's Zero-Waste Initiatives." Confederation of Indian Industry, 2023.
6. Banerjee, S., & Joshi, P. "Indore's Journey to Becoming India's Cleanest City: Lessons in Waste Management." *Journal of Urban Sustainability,* 2022.
7. Shah, R. et al. "Innovations in Urban Waste Management: The Case of Indore." *Environmental Management Review,* 2023.
8. Gupta, P., & Kumar, A. "Waste-to-Energy Systems in India: A Case Study of Indore." *Renewable Energy and Circular Economy Journal,* 2022.
9. Singh, T., & Mishra, R. "Assessing the Impact of Decentralized Composting in Indian Cities: Evidence from Indore." *Urban Ecology Journal,* 2023.
10. The Hindu. "Indore: Leading the Way in Recycling and Waste Management." February 2023.
11. The Times of India. "From Plastic Roads to Biogas Plants: Indore's Clean India Success Story." July 2024.
12. Swachh Survekshan Portal. "Indore: India's Cleanest City for Seven Years in a Row." Accessed 2024. https://swachhsurvekshan2024.org
13. Indore Municipal Corporation Official Website. "Waste Management and Circular Economy Initiatives." Accessed 2024. http://imcindore.org

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्राचीन भारत में धर्म

डॉ. मधु वालिया*

* प्राचार्य, अमरनाथ भगत जयराम कन्या महाविद्यालय, सेरधा, जिला कैथल (हरियाणा) भारत

शोध सारांश –भारतीयों का जीवन प्राचीन काल से धर्मगत उत्कंठा से अनुप्राणित रहा है। जिसमें नैतिक मूल्यों, आधारगत अभिव्यक्तियों तथा जग निनयंता के प्रतिसमर्पण भावना का सन्निवेश था, जिसके माध्यम से व्यक्ति लौकिक उत्कर्ष के साथ–साथ अध्यात्मिक उत्कर्ष करता था। सम्पूर्ण समाज का वर्ण के आधार पर समुचित और सुनिश्चित विभाजन नैतिक मूल्यों और धर्म से प्रभावित होकर किया गया था। विभिन्न वर्गो के कर्मो का निरुपण भी सदाचार और धर्म से प्रेरित तथा अनुप्राणित था। अत एवं इसे वर्ण धर्म की संज्ञा दी गई थी। धर्म का व्यावहारिक महत्व कर्तव्य का समुचित पालन था इसी प्रकार आश्रम व्यवस्था की भी नियोजिना की गई जिसके अन्तर्गत मनुष्य के सर्म्पूण जीवन का चार भागों में विमक्त कर उसके आश्रमगत कर्तव्यों एवं दायित्वों का आंकलन किया गया था। छान्दोग्य उपनिषद्ध में धर्म के तीन सकंधों की चर्चा है। जहां निवास करने वाला ब्रहाचारी ब्रहा का ज्ञान प्राप्त करने में अपने को क्षीण कर देता है। इनका अनुगमन करने वाले सभी पूण्य लोक को प्राप्त करते है।

प्रस्तावना – हडप्पा सभ्यता को वैदिक से भिन्न सिद्ध करने के लिए जो तर्क दिये जाते है वो धर्म और विश्वास पर आधरित रहा है। इस काल से ही हिन्दू धर्म को प्राचीन धर्म माना जाता है। जिसकी उत्पति प्रागैतिहासिक काल से मानी जाती है। भारतीय उपमहाद्वीप मे प्रागैतिहासिक धर्म की मौजूगी के साक्ष्यों को बिखरी हुई मीजोलथिक रॉक पेंटिग्स (पत्थर पर बनाये गये चित्र) पर देखा जा सकता है । जिनमें कई प्रकार नृत्यों तथा रस्मों को दर्शाया गया है। सिन्धु नदी में घाटी में बसने वाले नीयोलिथिक पुरोहितगण अपने मृतजनों को धार्मिक रीति रिवाजों के अनुसार दफनाने थे जिससे यहां जादुई आस्थाओं में उनके विश्वास के बारे मं पता चलता है। इस समय में उनके विश्वास के बारे में पता चलता है। इस समय मे वैदिक समाज पितृ प्रधान था और उसके देवता मुख्यत: पुरुष थें। जबकि हडप्पा सभ्यता मातृ प्रधान थी इसमें मात्र देवियों का प्राधन्य था। हडप्पा सभ्यता का एक प्रधान देवता रुद्र था। जबकि वैदिक परम्परा में इसकों भय और उपेक्षा का भाव दिखाई देता है।

धर्म के उद्देश्य– धर्म का उद्देश्य सभी धर्मो में एक जैसा होता है। धर्म से जुडे कुछ मुख्य उद्देश्य ये है।

1. सभी का सम्मान और सत्कार करना।
2. अन्तर जातीय भेदभाव को खत्म करना।
3. धर्म का मकसद मनुष्य को अपनी सत्य प्रकृति की पहचान कराकर मोक्ष प्राप्त करना था।
4. धर्म ब्रहांडीय कानून था, जो अराजकता से ब्राहाण्ड का निर्माण करता था।
5. धर्म कर्तत्य, अधिकार चरित्र और व्यवसाय से जुडा था।
6. धर्म प्रकृति की स्तुति और प्रार्थना के मन्त्रों से जुडा था।

प्राचीन भारत में धर्म – वेदों में सृष्टि प्रकृति और सर्जगकर्ता से सम्बन्धित विषयों का विवेचन है। सृष्टि विधा और विश्व दर्शन इसमें समाहित है। जगत के सृष्टा के रुप मे दिव्य शक्ति को स्वीकार किया गया है तथा उसे सृष्टि का नियंता माना गया। इस प्रकार सृष्टा, सृष्टि प्रकृति और मानव एक ही अनुशासन से निष्पन्न होकर तथा एक ही अनुशासन से ग्रथित होकर समबिन्धत है।

देवमंडल – ऋग्वेद में देवताओं को आत स्लिवांस (स्थिर रहने वाले) अनतास: (अनंत), विश्वतरचरि (संसार से उपर रहने वाले) कहा गया है। वैदिक चिंतन में मानव की श्रेष्ठता और महता स्वीकार की गई। उसे विश्वात्मा से अत्याधिक समीप माना गया है। वैदिक धर्म में सूर्य, वरुण, सविता, विष्णु, मित्र, अश्विन और उषा प्रधान देवता है। इन्द्र, अपानपात, पर्जन्य और रुद्र मुख्य है। ये अतरिक्ष देवता माने गये है। स्थानीय देवताओं में पृथ्वी,अग्नि , बृहस्पति और सोम विख्यात है। वैदिक साहित्य से विदित होता है कि आर्यो ने देवताओं को मानवीय आधार पर वकल्पित किया है। इस काल में सत की अभिवयना की गई जीवन दर्शन, बौद्धि प्रधानता, स्तूति, यज्ञ आदि की प्रधानता की।

औपनिषदिक धर्म और ज्ञान – उपनिषद्क साहित्य का विकास वेदों के मंथन करके किया गया है। इसमें ईशावास्य केन कंठ, प्रश्न , मुंडक, मांडक्य, तैतरीय, ऐतरेय, छान्दोगय, वृहदारण्यक आदि उपनिषद्ध अधिक प्रसिद्ध है। उपनिष्दों में बह्रां और जीव के पारस्परिक संबन्ध और उनकी समीपता पर तर्क किया गया है। अंनत होने के कारण परमात्मा या ब्रह्रां अमृत है तथा सीमाबद्ध होने के कारण जीवात्मा या मनुष्य जन्म–मरण के बंधन में जकडा हुआ मृत है। जन्म–जश–मरण के इस बंधन से मुक्ति तभी संभव मानी गई है। जब मनुष्य सीमा को तोडकर, संकुचन को समाप्त कर तथा स्वार्थ को ध्यान कर आगे बढता है। कंठ और ईश उपनिषदों में कहा गया है कि मनुष्य के अंतस की स्वार्थी प्रवृतियां जब समाप्त हो जाती है, तब वह अमृत बनकर ब्रह्रां पद को प्राप्त होती है। जो मनुष्य ब्रह्रत को जान लेता है वह स्वंय ब्रह्रा हो जाता है। मनुष्य इसी संसार में और इसी जीवन में मुक्ति प्राप्त करता है। उपनिषद युग में ओंकार की उपासना का विशेष स्थान था। आत्मा की प्रत्यक्ष अनुभूति करने वाला जीव अपनी आत्मा से प्रेम करता था। उपनिषदों में

आन्नंद का वर्णन सांसारिक आधार पर लौकिक संस्कार के प्रिया-प्रियतम के सम्मिलन से किया , केवल शिव ही रहा जाता है। अकति शिव केवलोदहम की उपलब्धि होती थी।

ब्राह्मण धर्म या हिन्दू धर्म – ब्राह्मण धर्म अथवा हिन्दू धर्म का उद्गम स्थान वैदिक धर्म है। हिन्दू धर्म की समस्त व्यवस्थाओं में ब्राह्मणों का आधिपत्य और निर्देशन रहा है। इसलिए इसे ब्राह्मण धर्म के नाम से भी जाना गया। ब्राह्मण धर्म का मुख्य आधार वर्ण व्यवस्था और आश्रम व्यवस्था थी जो वर्ण धर्म और आश्रम धर्म के नाम से समाज में स्थित हुई। ज्ञान और सत्य की प्राप्ति के निमित भ्रमण करने वाले तपस्वी और साधु अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न सम्प्रदायों में संगठित होते है। इस धर्म में एक देवता की दूसरे देवता से श्रेष्ठता और प्रधानता भी यज्ञ से ही सिद्ध होती थी। इस युग में पुरोहित उत्कृष्ट अभिलाषा रखता था। ब्राह्मण धर्म में गीता हिन्दू धर्म का प्रधान स्तम्भ है। गीता में जीवन और मृत्यु की चर्चा करते हुए कहा गया है कि मृत्यु को अद्वितीय वस्तु नही है, कोई मरता नही है। आत्मा अजर, अमर, सत्य, नित्य, अचिंत्य और व्यापक है। हिन्दू धर्म में ज्ञान की अभित्यक्ति के अर्न्तगत अवतार बाद का महत्वपूर्ण स्थान है। इसका प्रधान प्रयोजन धर्म स्थापन और अर्धम विनाशन था तथा वैदिक काल से ही अवतारवाद का प्रारम्भ हुआ था।

वैष्णव धर्म –भगवान विष्णु को अपना पावन प्रधान इष्टदेव और परमात्मा के रुप में मानने वाले वैष्णव भक्त कहलाये। वैष्णव धर्म में विष्णु के दस अवतार बतायें गये है। इन अवतारों में कृष्ण का नाम नही है। क्योंकि स्वयं भगवान विष्णु ही कृष्ण के साक्षात स्वरुप थे। महाभारत में वासुदेव का नाम अनेक बार आया है। वासुदेव पूजन मोर्य युग में भी प्रचलित था। ऐसा प्रतीत होता है कि भागवत धर्म का उदय मोर्य युग के पहले हो चुका था। महाभारत के समय भागवत धर्म एक प्रमुख धर्म बन गया था। पॉचारत मत का विकास तीसरी सदी ई0पू0 के लगभग हुआ था, जो वैष्णव धर्म का प्रधान मत था। कांलातर में रामानन्द सम्प्रदाय का विकास हुआ जिसमें कबीर, रैदास, मूलकदास, दादू आदि प्रमुख अनुयायी हुए।

शैव धर्म – शिव से सम्बन्धित धर्म को शैव धम कहा गया। पाषाण युग भी अनेक जातियों में भूमि की उर्वरता के लिए लिंग की पूजा की जाती । सूत्र ग्रन्थों में भी रुद्र की अपनी विशिष्टता है तथा उनके विवरण से यह प्रमाणित होता है कि उनका अनार्य तत्वों पर प्रभाव था। उनको प्रसन्न करने के लिए पशुबलि की व्यवस्था की गई थी। पुराणों के अनुसार शिव को त्रंयबक, भव, शर्व, महादेव, इशान , शूलपाणि, शंकर, नीलग्रीव, वृषध्वज, पशुपति आदि विभिन्न नामों से अभिहित किया गया है। इस सम्प्रदाय का गुप्त काल में काफी विकास हुआ। कायाल्कि सम्प्रदाय के ईष्ट देव भैरव है जो शंकर के अवतार माने जाते है। दक्षिण भारत में शैव सम्प्रदाय का प्रचार प्रसार हुआ है। पूर्व मध्य युग में शैव धर्म नए और नए आयाम में विकसित हो रहा था। जिसे कालांतर में नाथ सम्प्रदाय या हठ योग और सहजयान सिद्धि कहा गया। संयम और सदाचार को उन्होने प्रधान आधार माना, साथ ही सहज जीवन पद्धति को अपनाने के लिए निर्देश दिया।

शाक्य सम्प्रदाय – हिन्दू धर्म में शक्ति (देवी) की पूजा अत्यंत प्राचीन काल से प्रचलित है। शक्ति को नारी के रुप में अभिवयक्त किया गया है। सृष्टि की प्रक्रिया में नारी का योगदान स्पष्टत: अभूतपूर्व है। शक्ति देवी का रुप प्रागैतिहासिक काल से निखरने लगा था। ऋग्वेद के दश्म मंडल में ऐ पूरा सूक्त ही शक्ति की उपासना में विवृत है जिसें तांत्रिक (देवी सूत) कहते है। मार्कडेय पुराण में शक्ति की व्यापकता और महता विहत है। शक्ति पूजा का ज्ञान तक शैव सिद्धान्त से प्रभावित है। किन्तु शक्ति की दार्शनिकता सता और व्यवहारिक सत्ता स्वंतन्त्र और उन्मूक्त सत्ता है। जो उन्हे सर्वोच्च स्थान प्रदान करती है। दार्शनिक सत्ता में शिव और शक्ति आद्य तत्व है जो देश काल और तर्क से परे है।

धर्म की आलोचना – हडप्पा संस्कृति के किसी भी स्थल से किसी मन्दिर था प्रमाण में देखकर और इसे अवैदिक सीमा में ही कहीं न कहीं खपाने के लिए चिन्तित कुछ नए अध्येताओं ने यह सुझाया कि उनका कोई धर्म नही था। यह समस्या उनके विचारणीय है। जो वैदिक उपासना पद्धति से हडप्पा का अलगाव दिखाने के लिए ही जलशुद्धि आदि के सुझाव देते है। पर यह भूल जाते है कि पूरे भारतीय समाज में जलशुद्धि की यह परम्परा वैदिक जनों तक क्यों पाई जाती है। हिन्दू धर्म की आलोचना में हिन्दू और गैर हिन्दू विचारकों के द्वारा की गई। हिन्दू सुधारकों ने भी भेद-भाव व कुरीतियों के खिलाफ आवाज उठाई तथा कई हिन्दू समाज सुधारक आन्दोलन भी चलाए गए। आलोचना के रुप में धर्म आधुनिकता धर्म और परिर्वतन के लिए नए सैद्धान्तिक दृष्टिकोणों के लिए जगह देता है। दूसरों की आलोचना के लिए शक्तिशाली प्रणालियां और तरीके अतंनिर्हित है। वास्तव में आलोचना इसके मूल सिद्धान्तों और प्रथाओं का अभिन्न अंग है। परन्तु यह समस्या उनके लिए विचारणीय है। जो वैदिक उपासना पद्धति से हडप्पा का अलगाव दिखाने के लिए ही जलशुद्धि के सुझाव देते है। पर यह भूल जाते है कि पूरे भारतीय समाज में जलशुद्धि की यह परम्परा वैदिक जनों में ही आराम्भ से आज तक क्यों पाई जाती है।

निष्कर्ष–यह कहा जा सकता है कि वैदिक धर्म का प्रसार भारत में भक्ति और ज्ञान के मार्ग को प्रशस्त करने के उद्देश्य से ही हुआ था। पूर्ववर्ती काल में वासुदेव कृष्ण के पूजन का अधिक विस्तार हुआ किंतू मध्ययुग में कृष्णोपासक और रामोपासक दोनो सम्प्रदायों का समांनातर गति से प्रसार हुआ। पंजाब में सिक्ख धर्म का प्रवर्तन कर आशा और विश्वास का नया दीप जलाया। परवर्ती उपासकों एंव चिन्तकों ने जनभाषा को अभिव्यक्ति का प्रधान आधार मानकर अपने विचारों को जन-जन तक पहुंचाया। इस काल में संयम और सदाचार को उन्होने प्रधान आधार माना तथा सहज जीवन पद्धति को अपनाने के लिए निर्देश दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Keith, A.B. Religion and Philosophy of the Veda and Upanishads 2Vols (1970)
2. Jaiwal, Suvira: The origin and development of Vaishnavism (1981)
3. Majumdar, R.C.A New History of the Indian People (1940) : The History and culture of the Indian People Vol.III. The classical Age (1970)
4. A Pte, V.M. Vedic Rituals, CHI, I, (1958)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Protection of Stored Grains from *Callosobruchus Chinensis* (Linn.) in Kota Region (Rajasthan)

Dr. Neha Shrivastava*   Dr. Surabhi Shrivastava   Dr. C.D. Khandekar*****

*Associate Professor (Zoology) Govt. College, Kota (Raj.) INDIA
** Associate Professor (Zoology) Govt. College, Kota (Raj.) INDIA
*** Associate Professor (Zoology) Govt. College, Kota (Raj.) INDIA

Abstract : Pulse beetle, Callosobruchus *chinensis* is serious pest of stored grains, it can damage pulses and grains in godowns in Kota region (Rajasthan). It's grub and adult both are harmful and cause infestation in pulses particularly, chickpea, beans, lentil, gram, soya bean etc. Pulses are cheapest source of protein. The study was focused on nature of damage caused by *Callosobruchus chinensis* on pulses, stored for seed purpose and its control methods. Physical as well as chemical control methods found to be effective to control *Callosobruchus chinensis*. Efficacy of permissible concentration of insecticide chlorpyriphos was monitored to control *Callosobruchus chinensis*. Other method of control was physical method that was also reported effective for the control of this beetle of pulses.
Keywords: *Callosobruch chinensis* (Linn), Chlorpyriphos, Kota region.

Introduction - *Callosobruchus chinensis* is one of the insects that destruct the stored grain and depreciate in storage. Pulse beetle is a major pest of pulses and other supplement. Pulses are stored for food and seed purpose but harm full insect pest *Callosobruchus chinensis* cause heavy infestation during storage of pulses. Pulses are difficult to storage and suffer great damage during storage due to attack by *Callosobruchus chinensis*. Both grub and adult cause damage to the grain, they bite holes in the grain to enter inside and feed on kernel damaging several grains in process. the infestation can start in the fields where the beetles deposit their eggs on the pod. Nutritive changes of the infested grain induced by *Callosobruchus chinensis* were reported. There are various method to control this pest. Chemicals can be used in minimum permissible concentration, chlorpyriphos in minimum permissible concentration found to be effective and cause residual effects. Activity caused by something that remains after a particular treatment is known as residual action. Chemical control is effective but chemicals may harm other animals and human and enter food cycle, so other methods of control like physical method and cultural method are also useful. Physical method is also effective method, both high and low temp have been used to destroy pest insects.

Material and method: Study was based on observations of Pulse beetle and the nature of damage caused by them, the experiment was carried out at laboratory in 2023 and 2024, from month of June to month of October in Kota region (Rajasthan).

1. Brownish grey beetle, *Callosobruchus chinensis*, measuring about 3mm in length with characteristic ivory spot near the middle of the dorsal side, it is small, short and active, elytra do not cover the abdomen completely. Adult and grub both feed on grain by marking small hole and cause nutritive changes of the infested grain. This beetle can actively fly.
2. The experiment was carried out at laboratory. Black chickpeas were used as host for culture of *Callosobruchus chinensis*. The stock culture was maintained on black chana by releasing 10 pairs of freshly emerged beetles in a plastic jar. Two dilutions of Chlorpyriphos were prepared from stock solution. Solutions of .0008% and .0006 % concentration were prepared for treatment. In covered petri dishes, groups of 20 and 40 insect pest *Callosobruchus chinensis* were induced and these groups of insects were exposed to insecticide chlorpyriphos. All the experiments which were maintained under laboratory conditions for purpose of seed storage, were observed.

Fig 1. Adult *Callosobruchus chinensis*

Fig 2. Infested Grain

3. Mortality level of *Callosobruchus chinensis* was

recorded after exposure and at the same time the dissipation of chlorpyriphos residues on treated surface was estimated at different time intervals of 1, 3, ,7, 15 and 30 days. Permissible limit and recommended concentration of chlorpyriphos for controlling *Callosobruchus chinensis* has been monitored. Chlorpyriphos, the stomach and contact poison with long residual life found to be effective against this store grain insect pest.

4. The exposure of infested stored grain to sun a. directly on cotton cloth b. use of polyethene bags for grains and c. use of cotton bags for grains on a cemented floor in May and June for 5 to 6 hours was reported to kill insect pest beetles, such sun exposure of grain, reduces the moister content of the grain and if it is less than 8% RH, the grain escape insect infestation.

Result and discussion: The effects of insecticide and insecticide residue against *Callosobruchs chinensis* were observed. Chlorpyriphos found effective at concentration of .0008% and .0006%. After treatment at .0008% concentration 70% mortality was registered on 1st day of treatment 55% mortality on 3rd day, 45% mortality on7th day 40% mortality on 15yh day 25% mortality and on 30th day of treatment has been registered. At .0006% concentration ,50% mortality was registered on 1st day, 45% mortality on 3rd day ,30% mortality on 7th day, 30% mortality on 15th day and 25% mortality on 30day was reported. Treatment of sun exposure on stored grain in month of May and June, found to be effective against *Callosobruchus chinensis* (Linn.) .

References:-

1. Augustine, N., Balikai, R.A. Biology of pulse beetle *Callosobruchus chinensis* (Linnaeus) on cowpea variety C-15.Journal Of Entomology and Zoology Studies 2019,7(1) :513-516.
2. Chaubey, M.K. Fumigant toxicity of essential oils from some common spices against Pulse beetle, *Callosobruchus chinensis* (Coleoptera:Bruchidae). J.Oleo. Sci. 57(3)171-179.
3. Revanasidda, K., Murali Mohan and Kodandaram, M.H. Diversity, abundance and infestation of Bruchids on stored pulses in Karnataka. Mysore.J.Agric.Sci. 56(2);293-307 (2022).
4. Samir, A.M., Abdelgaleil,Ayman ,A. Maha Hassan, A.Gad .Persistence and residual efficacy of abamectin and Spinosad for control of *Callosobruchus maculatus* and *C. chinensis* on stored cowpea seeds' .Stored product Research vol 103(sep 2023).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Flame of the forest a beautiful and miraculous plant

Dr. Nirbhay Singh Solanki*

***Assistant Professor (Botany) PMCoE Maharaj Bhoj Govt. P. G. College, Dhar (M.P.) INDIA**

Abstract : *Butea monosperma*, commonly known as khakra, kesudi, dhak, 'Palash' and 'Flame of the Forest', is medium sized deciduous tree widely distributed in South-east Asia. This plant is also found in Dhar. It encompasses both conventional and scientific importance as it has high medicinal, religious, economical, aesthetic and ornamental values. Each part of this tree, from flowers to leaves, bark, seed, stem and gum, are of use. Palash / *Butea Monosperma* is the state flower of Jharkhandand Uttar pradesh. Palash is considered a sacred tree and the Indian Postal Department also issued a postal stamp to celebrate the value the flower adds to the Indian landscape.
Keyword: *ButeaMonosperma ,* antifertility , antidiabetic activity,Apoptotic induction, Sunscreen Activity Anti-cancer activity.

Introduction - Butea monosperma,commonly known as the flame of the forest, palash, dhak, or tesu, is a medium-sized deciduous tree belonging to the family Fabaceae. It is renowned for its vibrant orange-red flowers that appear in the dry season, transforming the landscape into a visual spectacle. This tree is native to the Indian subcontinent and Southeast Asia, where it holds significant cultural, medicinal, and ecological importance.

Study aria: Dhar is situated between 21°57' to 23°15' N and 74°37' to 75°37' E. The city is bordered in the north by Ratlam, to the east by parts of Indore, in the south by Barwani, and to the west by Jhabua and Alirajpur. The town is located 34 miles (55 km) west of Mhow. It is located 559 m (1,834 ft) above sea level.

Research Methodology: went to the forest visit and studied from time to time .more information was obtained from local people received various types of information on the internet . took many photos with mobile camera.Searched and viewed various types of research papers on the internet studied. many research papers were studied in google scholar and research journal.

Scientific Classification of *ButeaMonosperma*

Kingdom Plantae – Plants
Sub-kingdom Tracheobionta – Vascular plants
Super-division Spermatophyta – Seed plants
Division Magnoliophyta – Flowering plants
Class Magnoliopsida – Dicotyledons
Subclass - Rosidae
Order Fabales
Family Fabaceae – Pea family
Genus Butea Roxb.ex Wild. – Butea
Species Monosperma (Lam.) Taubert – Bengal kino

***Butea monosperma* names in other languages:**

English : Flame of the forest, Bastard teakS, Parrot Tree
Hindi : Dhak, Palas, Chichra tesu, desukajhad, chalcha, kankrei
Marathi : Palas, Kakracha
Panjabi : Tesh
Kannada : Muttagamara, Muttulu
Malayalam : Plasu Camata, Muriku, Shamata
Sanskrit : Palasah, Kimsuka, Bramha Vrksa
Assamese : Palash
Oriya : Porasu, Kijuko
Tamil : Porasum, Parasu , Camata
Telugu : Modugu Puvvu
Gujrat : Khakhrao, Kesuda
Bangal : Palas, Polashi
Urdu : Palashpapra, Dhak (Tesu)Species: monosperma

BOTANIC DESCRIPTION : *Butea monosperma* is a small to medium-sized deciduous tree, 5-15 (max. 20) m tall, trunk usually crooked and tortuous, with rough greyish-brown, fibrous bark showing a reddish exudate; branchlets densely pubescent.

leaves: Leaves trifoliate; petiole 7.5-20 cm long with small stipules; leaflets more or less leathery, lateral ones obliquely

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ovate, terminal one rhomboidobovate, 12-27 x 10-26 cm, obtuse, rounded or emarginate at apex, rounded to cuneate at base, with 7-8 pairs of lateral veins, stipellate.

Flower: Flowers in racemes, 5-40 cm long, near the top on usually leafless branchlets; calyx with campanulate tube and 4 short lobes; corolla 5-7 cm long, standard, wings and keel recurved, all about the same length, bright orange-red, more rarely yellow, very densely pubescent.

Fruit : Fruit an indehiscent pod, (min. 9) 17-24 x (min. 3) 4-6 cm, stalked, covered with short brown hairs, pale yellowish-brown or grey when ripe, in the lower part flat, with a single seed near the apex. Seed ellipsoid, flattened, about 3 cm long.

Dr.Solanki in the forest during the survey

Buteamonosperma plant

Flower

Stamp

Dhak ke teen pat

Bowl (Dona)

Macking Paniya

Dianning plate(Pattal)

Native to India,

The hindi phrase ("Dhaak ke teen paat") comes from the prominent three leaflets of this tree. It is seen in all its ugliness in December and January when most of the leaves fall: but from January to March it truly becomes a tree of flame, a riot of orange and vermilion flowers covering the entire crown. These flowers, which are scentless, are massed along the ends of the stalks—dark velvety green like the cup-shaped calices—and the brilliance of the stiff, bright flowers is shown off to perfection by this deep, contrasting colour. Each flower consists of five petals comprising one standard, two smaller wings and a very curved beak-shaped keel. It is this keel which gives it the name of Parrot Tree. In olden days, the flowers of Tesu were used to make color for the festival of Holi.

In Manipur, there is an interesting cultural use of the wood of this tree with beautiful flowers - when a member of the Meitei community dies and, for some reasons, his body cannot be be found, the wood of this tree is cremated in place of the body.

Antitumor activity: The aqueous extract of flowers of *Butea monosperma* was

administered via intraperitonial route to the X-15-myc onco mice showed antitumorgenic activity by maintaining liver architecture and nuclear morphometry but also down regulated the serum VGEF levels. Immuno-histochemical staining of liver sections with anti-ribosomal protein S27a antibody showed post-treatment termination of this proliferation marker from the tumor tissue

antidiabetic activity : The single dose treatment of ethanolic extract of *Butea monosperma* flowers at the dose of 200mg/kg P.O. significantly improved glucose tolerance and cause reduction in blood glucose level in alloxan induced diabetic Rats .

Liver disorders : An extract from the flowers of *Butea monosperma* is used in India for the treatment of liver disorders and two anti hepatotoxic flavonoids, isobutrin and butrin have been isolated from the extract . The effect of pretreatment of methanolic *Butea monosperma* extract prior to TAA treatment at two doses and the results suggest that it may contribute to the chemo preventive effect.

Butea monosperma showed a significant recovery in the level of glutathione and its metabolizing enzyme in the liver induced the detoxifying enzyme system, which is shown by the elevated levels of other QR, SOD, GPx, and xanthine oxidase, which are important phase II enzymes.

Anti-diarrhoeal activity : The anti-diarrhoeal potential of the ethanolic extract of stem bark of *B. monosperma* (Lam) has been evaluated using several experimental models in Wister albino rats. The extract inhibited castor oil induced diarrhea and PGE2 induced enteropooling in rats; it also reduced gastrointestinal motility after charcoal meal administration. The results obtained establish the efficacy and substantiate the use of this herbal remedy as a non-specific treatment for diarrhea (Gunakkunru et al., 2005).

Anti-ulcer: Methanolic extract of BM bark at 500mg/kg showed 79.30 and 82.20% healing against ethanol and aspirin induced gastric ulcerations respectively signifying free radical scavenging properties of the extract for anti-ulcer effect .

Anti-cancer activity *Butea monosperma:* Several studies have investigated the anti-cancer properties of *Butea monosperma* extracts and compounds derived from it. Here are some key findings:

1. **Apoptotic induction:** Apoptosis, or programmed cell death, is an important mechanism for eliminating cancerous cells. Studies have shown that *Butea monosperma* extracts can induce apoptosis in cancer cells through various pathways, including the activation of caspases, modulation of Bcl-2 family proteins, and generation of reactive oxygen species(ROS).
2. **Anti-inflammatory effects:** Chronic inflammation plays a significant role in the development and progression of cancer. *Butea monosperma* extracts possess antiinflammatory properties due to the presence of flavonoids and other phytochemicals. Byreducing inflammation, these extracts may help inhibit cancer growth and metastasis.
3. **Anti-angiogenic activity:** Angiogenesis, the formation of new blood vessels, is essential for tumor growth and metastasis. Some studies have demonstrated that *Butea monosperma* extracts can inhibit angiogenesis by targeting key angiogenic factors such as vascular endothelial growth factor (VEGF), thereby suppressing tumor vascularization and growth.
4. **Cytotoxic activity:** *Butea monosperma* extracts have been found to exhibit cytotoxic activity against various cancer cell lines, including breast cancer, lung cancer, prostate cancer, and leukemia cells. This cytotoxicity is attributed to the presence of bioactive compounds such as flavonoids, alkaloids, and phenolics.
5. **Antioxidant effects:** Oxidative stress is implicated in cancer development by promoting DNA damage and mutations. *Butea monosperma* extracts have been shown to possess anti oxidant activity, scavenging free radicals and protecting cells from oxidative damage. While these findings suggest the potential of *Butea monosperma* as a source of anti-cancer agents, more preclinical and clinical studies are needed to evaluate its safety, efficacy, and optimal dosage for cancer treatment. Additionally, further research is required to identify and isolate the specific bioactive compounds responsible for its anti-cancer effects and to elucidate the underlying molecular mechanisms involved.

Sunscreen Activity: A concentrated cream, which has contents of BM leaves excerpts, can defend against UVA and UVB rays showing the presence of sunscreen activity. The concentration generated from the incorporation of several formulations of excerpts can be applied as per contrasting skin types according to sun protection factor value. The maximum protection shows against UVA and UVB with 1.5 % and minimum at 0.5 % formulation of cream.

Anti-fertility Activity : The hot alcoholic excerpt of Dhak seeds has been given to rats and rabbits. It shows significant antiovulatory and anti-implantation commotion. Butin was the active constituent . Methanol excerpt of Dhak stem (bark)is effective to kill sperms within 6.29 min at the concentration of 100 mg/ml, but the immobilizing activity is slow when compared to the spermicidal agent which shows complete immobilisation within 20 sec at 2 % concentration. Three-minute exposure of petroleum ether and chloroform excerpt of Dhak root showed complete immobilisation of sperm at the doses of 15mg mL-1 without any changes as compared to the control group show curling in the hypo-osmatic swelling test. Sperm activity declines in a dose-dependent manner.

Anthelmintic: The seeds and bark exhibit significant anthelmintic activity, validating their use in treating intestinal worm infections.

Anti-asthmatic: n-butanolic fraction of Butea monosperma inhibited the lipopolysaccharide induced increase in total cell count, nitratenitrite, total protein and albumin levels in bronchoalveolar fluids in rats (Shirole et al., 2013).

Other uses and information:

1. Tesu flowers are used to make natural colour during the festival of Holi.
2. The flowers are the perfect way to control and manage indoor pollutants.
3. In tribal areas, women use the flowers to adorn themselves.
4. Palash flowers are believed to have religious value and are used in havan or yagna ceremonies.
5. Palash is considered a sacred tree and the Indian Postal Department also issued a postal stamp to celebrate the value the flower adds to the Indian landscape.
6. Palash / *Butea Monosperma* is the state flower of Jharkhand and Uttar pradesh.
7. It is also believed that palash is the form of the God of life himself- Agni.
8. Each part of this tree, from flowers to leaves, bark, seed, stem and gum, are of use. The tree has been

used extensively in alternative medicines such as Unani, Homeopathy and Ayurveda medicines for its analgesic, aphrodisiac and antifertility properties.

9. Palash bark is applied externally to treat wounds and cuts.
10. Palash seeds are often used to treat worm infestation. The seeds are also laxative in nature.
11. The gum can be used to treat dysentery and diarrhoea.
12. Dried flowers are used as colour and in bathing to cure skin rashes and infection in summers. The flowers are rich in sulphur, which makes them a perfect treatment for skin ailments. The flowers purify and cleanse the bloodstream of free radicals. The paste of flowers is also applied externally to cure joint pains, swelling, sprains, injury and arthritis. The bark of the tree also has blood purifying properties.
13. Fruits and seeds of the plant are used to treat skin ulcers, piles and disorders related to eyes such as cataract.
14. Roots of a palash tree are used as an analgesic. They are also used to cure night blindness.
15. The twing of palash plant is used as a tooth brush.
16. Fresh leaves are used for making dinning plates and bowls.
17. Fiber: Bark fibers are obtained from stem for making cordage .
18. Fish-Poison: Stem bark powder is used to stupefy fishes .
19. Fodder: Green leaves are good fodder for domestic animals .
20. Domestic utensil: Fresh leaves are used for making dinning plates and bowls .
21. Vegetables: Flowers and young fruit are used as vegetables by tribals .
22. Dye: Flowers are boiled in water and cooked to obtain a dye.
23. Dal Paniya' is very famous dish, usually made during festivals and on auspicious occasions. Paniya is a bread prepared from corn flour and is roasted after sandwiching it between the leaves of Palash tree.
24. in the rular areas brushes are made by crushing the stem of the palash plant and it is used to paint the walls with lime.
25. The gum found in small, brittle glistening pieces, reddish-black in color. Is odorless with a very astringent taste sticking to teeth when chewed making the saliva bright red. It is almost entirely soluble in alcohol and entirely soluble in ether and partly in water.
26. Orally it is used in diarrhoea, dysentery, and as gargle in throat infection.
27. Locally called Kamarkas meaning thereby fortification of back muscles, the gum is used to strengthen these muscles that are delicate and more elastic. Since females usually experience tiredness and back-ache during menstruation, pregnancy and post delivery, the gum taken orally acts as tonic to pelvic and back muscles, in these conditions. It is used by almost all females in India to recover from problems of weakness, supple delicate muscles and loose skins, and to reshape the body after delivery and to get rid of menstrual problems.

Conclusion: This plant is very important.it is of great medicinal importance.blooming of flowers in the month of spring.The whole forest look so beautiful This provides honey for lots bees .This plant also provides wood for cooking food to people living in rurar areas.

This is a plant of great medicinal importance. This plant show antitumor activity ,antidiabitic activivities antidiarrhrea activities antiulcer activities anticancer activities antifertility activities .

It prevents soil erosion. Provides nesting sites for birds. this is very important plant to make mother earth beautiful .Lets come together and protect this plant.

Acknowledgement:I want to show my heartfelt gratitude to my friends and my family for their help and support during my research writing.

References:-

1. https://prebooks.in/shop/35-india-flame-of-the-forest-used-stamp/
2. https://www.mapsofindia.com/maps/madhyapradesh/roads/dhar.htm
3. https://www.missouribotanicalgarden.org/PlantFinder/PlantFinderDetails.aspx?taxonid=280658
4. https://www.indraprasthahorticulturesociety.com/tesu-flowers-butea-monosperma-and-their-uses/
5. https://en.wikipedia.org/wiki/Dhar#:~:text=Dhar%20is%20situated%20between%2021,1%2C834%20ft)%20above%20sea%20level.
6. https://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Flame%20of%20the%20Forest.html
7. https://jhabua.nic.in/en/tourism/
8. https://apps.worldagroforestry.org/treedb/AFTPDFS/Butea_monosperma.PDF
9. More, B. H., Sakharwade, S. N., Tembhurne, S. V., & Sakarkar, D. M. (2012). Ethnobotany and Ethanopharmacology of Butea Monosperma (Lam) Kuntze-A Compressive Review. Am J PharmTech Res, 2(5), 138-159.
10. More, S., Jadhav, V. M., & Kadam, V. J. (2018). A comprehensive review on Butea monosperma: A valuable traditional plant. *International Journal of Botany Studies*, *3*(1), 65-71.
11. Sutariya, B. K., & Saraf, M. N. (2015). A comprehensive review on pharmacological profile of Butea monosperma (Lam.) Taub. Journal of Applied Pharmaceutical Science, 5(9), 159-166.
12. Punjani Bhaskar L 1998. Plants used as tooth brush by tribes of District Sabarkantha (North Gujarat). Ethnobotany. 10: 133-135.
13. The wealth of India: A dictionary of Indian Raw mate-

rial and Industrial product-Raw material Series, Volume-I-XI (Publication and Information Directorate, CSIR, New Delhi, India), 1948; 251-252.

14. Jain SK. Dictionary of Indian Folk Medicine and Ethanobotany, Deep Publication, New Delhi, India, 1991.
15. Bhattacharjee SK, Handbook of Medicinal Plants. Pointer Publishers, Jaipur, India, 1995.
16. Punjani, B. L. (1998). Plants used as toothbrush by tribes of district Sabarkantha (North Gujarat). Ethnobotany, 10, 133-135.
17. Somani, R., Kasture, S., & Singhai, A. K. (2006). Antidiabetic potential of Butea monosperma in rats. Fitoterapia, 77(2), 86-90.
18. Sehrawat, A., Khan, T. H., Prasad, L., & Sultana, S. (2006). Butea monosperma and chemomodulation: protective role against thioacetamide-mediated hepatic alterations in Wistar rats. *Phytomedicine*, *13*(3), 157-163.
19. Wagner, H., Geyer, B., Fiebig, M., Kiso, Y., & Hikino, H. (1986). Isoputrin and butrin, the antihepatotoxic principles of Butea monosperma flowers1. *Planta medica*, *52*(02), 77-79.
20. Punjani Bhaskar L 1998. Plants used as tooth brush by tribes of District Sabarkantha (North Gujarat). Ethnobotany. 10: 133-135.
21. Sindhia, V. R., & Bairwa, R. (2010). Plant review: Butea monosperma. *International journal of pharmaceutical and clinical research*, *2*(2), 90-94.
22. Gunakkunru, A., Padmanaban, K., Thirumal, P., Pritila, J., Parimala, G., Vengatesan, N., & Pillai, K. K. (2005). Anti-diarrhoeal activity of Butea monosperma in experimental animals. *Journal of ethnopharmacology*, *98*(3), 241-244.
23. Akram, M., Akhtar, N., Asif, H. M., Shah, P. A., Saeed, T., Mahmood, A., & Malik, N. S. (2011). Butea moKumar, A., Gupta, M., Singh, S., Goel, N., Tiwari, P. S., & Gupta, S. P. (2023). A SYSTEMIC REVIEW ON PALASH (BUTEA MONOSPERMA). Journal of primary healthcare, 9(2), 871-899.nosperma Lam.: A review. *J. Med. Plants Res*, *5*, 3994-3996.
24. Neupane, A., & Aryal, P. (2022). Medicinal Values of Butea monosperma: A. *Asian Journal of Pharmacognosy*, *6*(2), 6-13.
25. Kumar, A., Gupta, M., Singh, S., Goel, N., Tiwari, P. S., & Gupta, S. P. (2023). A SYSTEMIC REVIEW ON PALASH (BUTEA MONOSPERMA). Journal of primary healthcare, 9(2), 871-899.
26. Surin, W. R., &Ananthaswamy, K. (2011). Recent advances on the pharmacological profile of Butea monosperma. GERF Bull Biosci, 2(1), 33-40.
27. Pooja singh ,vasusingh,R.C. Tiwari and deeptinegiwjpls 2023. AREVIEW ON BRAMHA VRIKSHA: PLASH (BUTEA MONOSPERMA) vol (9) issue (4),100
28. Ambastha, S., & Sharan, L. (2023). Review on Medicinal Importance of Butea monosperma Lam.(Taub). *Defense Life Science Journal*, *8*(1), 83-92.
29. Dharti Methaniya, Riddhi Rathore, Hitesh Solanki, IABCD,2023, VOL(2), ISSUE(1),227
30. Tiwari, P., Jena, S., & Sahu, P. K. (2019). Butea monosperma: phytochemistry and pharmacology. *Acta Scietific Pharmaceutical Science*, *3*(4), 19-26.
31. Aditya Gupta, Shubham Singh, Khushboo Gaur, Abhishek Singh, Lalit Kumar, IJRAP8(2) 2017, 197
32. Somayaji, A., & Hegde, K. (2016). A review on pharmacological profile of Butea monosperma. International Journal of Phytopharmacology, 7(4), 237-249.
33. Kiruba, M. 2024. Butea monosperma - Botanical, Pharmacological, and Conservation: An Overview. Vigyan Varta 5(8): 197-202.
34. More, B. H., Sakharwade, S. N., Tembhurne, S. V., & Sakarkar, D. M. (2013). Evaluation of Sunscreen activity of Cream containing Leaves Extract of Butea monosperma for Topical application. *International Journal of Research in Cosmetic Science*, *3*(1), 1-6.
35. Bhargava, S. K. (1986). Estrogenic and postcoital anticonceptive activity in rats of butin isolated from Butea monosperma seed. Journal of ethnopharmacology, 18(1), 95-101.
36. Udiwal, S., Jain, N. K., Gupta, M. K., & Goyal, S. (2014). Anti-fertility activity of Butea Monosperma Linn in albino rats. *Curr Res Biol Pharm Sci*, *3*(4), 6-11.
37. Neeru Vasudeva, N. V., Geeta Rai, G. R., & Sharma, S. K. (2011). Anti-spermatogenic activity of Butea monosperma (Lam.) Kuntze root Asian J. Biolo. Sci. 4(8), 591-600.
38. Shirole, R. L., Kshatriya, A. A., Sutariya, B. K., & Saraf, M. N. (2013). Mechanistic evaluation of Butea monosperma using in vitro and in vivo murine models of bronchial asthma.
39. Jain, A., Dubey, S., Sahu, J., Gupta, A., Tyagi, A. K., & Kaushik, A. (2010). Butea monosperma: The Palash-A Versatile Tree Full of Virtues. Research Journal of Pharmacognosy and Phytochemistry, 2(1), 7-11.

****

रूपकों का बादशाह तुलसीदास

शिवऔतार*

* प्राध्यापक (हिन्दी) भगवान आदिनाथ कॉलेज ऑफ एजुकेशन, महर्रा ललितपुर (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – रूपकों का बादशाह तुलसीदास इस शोध पत्र का वर्ण्य विषय है। इसकी शोध परक विवेचना करने के पूर्व इसके सार रूप पर संक्षिप्त प्रकाश डालना उचित प्रतीत होता है। रूपकों का बादशाह तुलसी की यथार्थ परक झांकी देखी जा सकती है। इस शोध लेख में रूपकों का बादशाह तुलसी की शोधात्मक विवेचना की गई है। तुलसीदास ने अपने समय तक और अपने समकालीन प्राय: सभी प्रमुख काव्य–रूपों का न सिर्फ उपयोग किया, बल्कि सब में अपनी तरह का प्रयोग कर उनमें एक नई ऊर्जा का संचार भी किया है। इन सभी काव्य–रूपों को वे लोकप्रियता के वास्तविक निर्धारक तथा साहित्य के लक्ष्य, जनता तक ले जाने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार उक्त शोधपत्र की शोधात्मक विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि रूपकों का बादशाह तुलसी की चेतनाएँ विद्यमान हैं।

प्रस्तावना – तुलसी ने सामाजिक, पारिवारिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि सभी क्षेत्रों को अपनाया और इन सभी क्षेत्रों में समन्वय स्थापित करके सामाजिक विषमता को दूर किया। सत्य तो यह है कि भक्त, दार्शनिक, कवि, नीतिज्ञ, समाज–सुधारक और विचारक के रूप में तुलसी का महान व्यक्तित्व सम्पूर्ण वैचारिक धरातल पर छाया हुआ है। तुलसीदास के साहित्य का उद्देश्य स्वांत:सुखाय था, किसी राज्याश्रय में रहकर रचना करना नहीं। उन्होंने अपने निजी जीवन से उदाहरण देते हुए बताया कि रामचरितमानस जैसे ग्रन्थों में जीवन का संबल मिलता है। संत परंपरा के महान भक्त साधक ने भक्ति के माध्यम से शक्ति साधना की।

डॉ. उदयभान सिंह ने कहा कि तुलसीदास उत्प्रेक्षा के बादशाह हैं। आचार्य शुक्ल ने कहा कि तुलसीदास अनुप्रास के बादशाह हैं पर बच्चन सिंह ने कहा कि तुलसीदास रूपक के बादशाह हैं उत्प्रेक्षा करना कठिन काम है, लेकिन रूपक बाँधना वह भी सॉन्ग रूपक बहुत कठिन काम है। अनुप्रास की छटा तो प्राय: सामान्य कवियों के यहां भी देखने को मिलती है।

गोस्वामी जी ने रामचरितमानस के अतिरिक्त विनय पत्रिका, गीतावली, कवितावली, जानकी मंगल, पार्वती मंगल सब जगह रूपक बाँधे हैं लेकिन हनुमान बाहुक में जो रूपक बाँधे उसे देखकर बड़े–बड़े साहित्य मर्मज्ञ भी सिर खुजलाने लगते हैं।

उनके रूपक की छटा सर्वत्र देखते बनती है। हनुमान बाहुक में, बाहु पीड़ा पूतना पिशाचिनी कहते हैं और भी हनुमान जी को श्री कृष्ण कहते हैं– यहां पर हनुमान जी के व्यक्तित्व से भी श्री कृष्ण जी की बहुत सी बातों में साम्य स्थापित करते हैं–

'पूतना, पिशाचिनी, ज्यों कपिकांह तुलसी को बाँह पीर, महावीर तेरे मारे मरैंगी।'[1]

एक रूपक गोस्वामी जी का और देखने लायक है ,वात ,व्याधि ,जनिता पीड़ा को वह केंवॉच की लता कहते हैं ,और वानरी खेल है एक क्षण में लताओं को छिन्न–भिन्न कर देना।

'वात तरु मूल वाहु सूल कपि कच्छु केलि ,
उपजी सकेलि कपि केलि ही उखारिए।'[2]

अपनी वानरी क्रीडा से उखाड़ डालिए गोस्वामी जी एक जगह तो बाहु को विशाल पोखरी कहते हैं, बाहुपीड़ा को जलचरी कहते हैं। पोखरी विशाल बाहु बलि, वारिचर पीर मकरी ज्यों पकरि के बदन विडारिये। गोस्वामी जी की गीतावली का बड़ा ही मनोहारी पद उनकी बाल लीला का चित्रण करते हुए तुलसी रूपक बांधते हैं।

खेलन चलिए आनंद कंद
तृषित तुम्हारे दरस कारन, चतुर चातक दास
वषुष वारिद वरषि छविजल, हरहु लोचन प्यास

अर्थात कामदेव के शत्रु शिव जी के द्धारा सेवा किए जाने योग्य, भवि (संसार) के भव को हरने वाले कॉल रूपी मतवाले हाथी के लिए सिंह के समान।

मतवाले हाथी के लिए सिंह के समान का प्रयोग गोस्वामी जी को अति प्रिय है –

आज लंका में पहुंच गए हैं भगवान सागर पार करके, अत्यंत श्रमित होने के कारण सुग्रीव की गोद में शिर रखे पड़े हैं, अंगद और श्री हनुमान जी उनके पाँव दबा रहे हैं, लक्ष्मण पीछे बीरासन में बैठे हैं, संध्या का समय है,पूर्व में चंद्र देव का उदय हुआ, वहां भी गोस्वामी जी का उदय हुआ, वहां भी गोस्वामी जी की कल्पना ने रूपक बाँधा है –

पूरब दिशि गिरि गुहा निवासी
परम प्रताप तेज बल रासी
मत्त नांग तम कुंभ विदारी
शशि केसरी गगन वन चारी।

रूपक की एक अत्यंत मनोहारी छटा देखिए अंगद और रावण का संवाद है। लंका पति रावण आत्माश्लाघा में कह रहा है।

अंगद तूने सुना ही होगा आकाश रूपी तालाब में मेरी भुज रूपी कमल में बस कर शिवजी सहित कैलाश शोभा को प्राप्त हुआ।

'पुनि नभ सर मम कर निकर,

कमलन्हि पर कर वास।
शोभत भयउ मराल इव,
शंभु सहित कैलास।'[3]

इसी प्रसंग में रूपक और उत्प्रेक्षा की एक युक्ति देखिए अंगद ने रावण को खूब चिढ़ाया, गोस्वामी जी लिखते हैं –

वक्र उक्ति धनु वचन सर,
हृदय दहेउ रिपु कीस।
प्रति उत्तर सद सिंह मनहु,
काढ़त भट दससीस।

रथ रूपक वाचक शब्दों से भले ही रूपक न लग रहा हो किंतु एक सशक्त रूपक है विभीषण के संदेह का निवारण करते हुए भगवान कह रहे हैं कि जिस रथ से विजय मिलती है वह कोई और रथ है और वह रथ इस प्रकार का है–

सौरज धीरज तेहि रथ चाका
सत्य शील दृढ़ ध्वजा पताका
बल विवेक दम परहित घोरे
क्षमा कृपा समता रजु जोरे
ईस भजन सारथी सुजाना
विरत्ति चर्म सन्तोष कृपाना
दान परसु बुधि शक्ति प्रचंडा
वर विज्ञान कठिन को दन्डा
अमल अचल मन लोन समाना
सम जम नियम शिली मुख नाना
कवच अभेद विप्र गुरु पूजा
यह सम विजय उपाय न दूजा
शखा धर्ममय अस रथ जाके
जीतन कँह न कबहुँ रिपु ताके।

जिस तरह बादल स्थिर रहते हैं किंतु पानी की बूँदें वहाँ से यात्रा कर लोगों की तृषा शाँत करती हैं उसी तरह शरीर तो स्थिर रहता है किंतु शोभा आँखों तक यात्रा कर लोगों की सौंदर्य प्यास बुझाती है।

रामचरितमानस में तो रूपक की मनोहर छटा सर्वत्र देखने को मिलेगी उनका रथ रूपक बड़ा प्रसिद्ध सॉन्ग रूपक का उदाहरण है, ऐसी छटा अन्यत्र दुर्लभ है, उनका उत्तारकांड में जो दीपक कांड है वह भी देखने लायक है लंका कांड का यह प्रसंग यही पंक्ति में सॉन्ग रूपक बाँध दिया रावण के सर रूपी कमल वन में विचरण करने वाले श्री राम के बाण रुप भी भ्रमरों की पंक्ति चली।

गोस्वामी जी मंगलाचरण करते हुए कई बार सुंदर रूपक बाँधते हैं, लंका कांड के मंगलाचरण में कहते हैं।

रामम् कामारि सेव्यम् भवमय हरणं कालमन्तेभ सिंह।

श्री राम पूछते हैं–

सीता जी अशोक वाटिका में बैठी हुई हैं, बताओ हनुमान जी कैसे स्वयं की रक्षा करती हैं–

कहहु तात केहि भाति जानकी
रहति करति रक्षा स्वप्रान की।

श्री हनुमान जी उत्तार देते हैं रूपक देखिए–

'नाम पाहरू दिवस निशि, ध्यान तुम्हार कपाट ।
लोचन निज पद जेत्रित, जाहिं प्रान केहि बाट ।'[4]

सॉन्ग रूपक की कला में गोस्वामी जी का कोई जोड़ नहीं है स्वयंवर का यह दोहा प्राय: लोगों के मुख से सुना जाता है–

'उदित उदयगिरि मंच पर,रघुवर बाल पतंग
विकसे संत सरोज सब, हरषे लोचन भृंग।'5

लोचन भृंग जैसा प्रयोग साहित्य में दुर्लभ है। संत सरोज में कैसा स्वाभाविक साम्य है। दोनों के गुण धर्म कितने मिलते हैं।

ठंढे दिमाग से सोचने की बात बहुत कही सुनी जाती है,इसी बात को गोस्वामी जी कहते हैं–

बुद्धि सिरावे ज्ञान घृत।

पूरा दोहा इस प्रकार है –

जोग अगिन करि प्रकट तव, कर्म सुभा सम लाई।
बुद्धि सिरावै ज्ञान घृत, ममता मैल जरि जाइ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोस्वामी जी सर्वत्र रूपक बाँधने में सिद्ध हस्त हैं।

तेइ तृन हरित चरै अब गाई
भाव बच्छ शिशु पाइ पेन्हाई।

कितना सार्थक प्रयोग है कि भाव रूपी बछड़े को पाकर ही गाय पेन्हाएगी (दूध देने के लिए तैयार होगी) अर्थात भाव वह बछड़ा है जो सर्वथा निर्दोष है। तमाम कलुषऔर कल्मष रहित है भाव प्रधान लोग ही वहां तक यात्रा कर पाते हैं, ज्ञान प्रदान लोगों पर तो संदेह है।

इस प्रसंग में आगे लिखते हैं–

नोइ निवृत्ति पात्र विश्वासा
निर्मल मन अहीर निज दासा
परम् धर्ममय पहि दूहित भाई
अवतै अनलअकाम बनाई
तोष मरुत तव क्षमा जुड़ावै
घृति सम जावन देइ जमावै।

धैर्य को जामन बनाकर गोस्वामी जी ने कमाल ही कर दिया। धैर्य ही किसी चीज को जमाता है यह निश्चित है।

यद्यपि उत्तरकांड के ज्ञान का दीपक जलाने की जो बात है। वह सामान्य लोगों के गले नहीं उतरती कि इतनी कठिनाई से कोई दीपक जलाना है तो हम बिना जलाए ही रहेंगे। दीपक जलता है वह श्रमसाध्य जरूर है लेकिन जलाया जा सकता है पर यह दीपक कुछ और है।

गोस्वामी जी जैसे प्रतिभा संपन्न और साधना संपन्न व्यक्तित्व के अनुकूल हैं वह दीपक और कमाल उनका रूपक बाँधना देखें।

गाय जो होगी जिसके घर से ज्ञान का दीपक जला है वह सात्विकी श्रद्धा रूपी गाय हैं, किसी तरह से भगवान की कृपा से हृदय में आकर बस जाए तो आगे की प्रक्रिया प्रारंभ हो। गोस्वामी जी ने इसको लिखने में कलम तोड़ दी–

सात्विक श्रद्धा धेनु सुहाई
जौ करि कृपा हृदय बस आई
जप तप व्रत जब नियम अपारा
जे श्रुति कह शुभ धर्म अचारा।

शब्दों के साभिप्राय प्रयोग की कला कोई गोस्वामी जी से सीखे–

'रघुवर बाल पतंग' किशोर राम बाल सूर्य हैं।

गोस्वामी जी के यहाँ प्राय: कमल और भ्रमर का साहचर्य देखने को मिलता

ही है लेकिन कहीं–कहीं उसके विलक्षण प्रयोग हैं, उत्ताराखंड के मंगलाचरण में लिखते हैं–

जानकी कर खरोज ललितो , चिन्तकरस्यम् मनभ्रंगम्संगिनों।

गोस्वामी जी की बहुज्ञता और शब्द समर्थ्य के आगे दुनिया दंडवत है – एक और प्रसंग देखिए भगवान शंकर भगवान की वंदना कर रहे हैं–कैसा रूपक बांधा है–

मन जात किरात निपात किए,
मृग लोग कुभोग सरेन हिए।
हति नाथ अनाथनि पाहि हरे,
विषयावन पावर भूलि परे ।

कामदेव रुपी भील ने मृग रूपी लोगों के मन कामदेव रूपी बाण मार दिया है।

तुलसीदास की रचनाओं में रूपकों का प्रयोग किया गया है. तुलसीदास द्वारा प्रयुक्त रूपकों से उनकी भक्ति का पता चलता है।

निष्कर्ष – इस प्रकार निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि 'रूपकों का बादशाह तुलसीदास' अत्यंत विकसित है। पूर्व दिशारूपी पर्वत की गुफा में रहने वाला, अत्यंत प्रताप, तेज और बल की राशि यह चंद्रमा रूपी सिंह अंधकार रूपी मतवाले हाथी के मस्तक को विदीर्ण करके आकाश रूपी वन में निर्भय विचर रहा है।

'उदयगिरि' पर 'मंच' का, 'रघुवर' पर 'बाल–पतंग' (सूर्य) का, 'संतों' पर 'सरोज (कमल)' का एवं 'लोचनों' पर 'भृंगों' (भौंरों) का अभेद आरोप होने से रूपक अलंकार है। कामदेव रूपी भील ने मनुष्य रूपी हिरनों के हृदय में कुभोग रूपी बाण मारकर उन्हें गिरा दिया है। हे नाथ! हे (पाप–ताप का हरण करने वाले) हरे ! उसे मारकर विषय रूपी वन में भूल पड़े हुए इन पामर अनाथ जीवों की रक्षा कीजिए। इस प्रकार उक्त शोध पत्र की शोधात्मक विवेचना से स्पष्ट हो जाता है कि 'रूपकों का बादशाह तुलसीदास' की चेतनाएंविद्यमानहैं

संदर्भ ग्रंथ सूची: –

1. हनुमान बाहुक (रामचरित मानस) तुलसीदास, 1574, छंद 24 पृष्ठ संख्या 37
2. हनुमान बाहुक(रामचरितमानस) तुलसीदास, 1574 ,छंद संख्या 24 पृष्ठ संख्या 36
3. लंका कांड(रामचरितमानस) तुलसीदास, 1574,पृष्ठ संख्या 726 दोहा संख्या 22
4. सुंदरकांड(रामचरितमानस) तुलसीदास,1574 ,पृष्ठ संख्या 682
5. उत्तराखंड (रामचरितमानस) तुलसीदास, 1574,पृष्ठसंख्या82

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मुस्लिम विवाह और विधि-एक विश्लेषण

डॉ. ज़ाकिर खान*

* प्राचार्य, सांदीपनि विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना - मुस्लिम विवाह (निकाह) एक अनुबंध है जो धार्मिक, सामाजिक, और कानूनी महत्व रखता है। इसे इस्लामी कानून के तहत अनिवार्य बताया गया है, जिसका उद्देश्य केवल पति-पत्नी के बीच संबंध स्थापित करना नहीं है, बल्कि परिवार, समाज, और धर्म के प्रति उनकी जिम्मेदारियों को सुनिश्चित करना है। विवाह एक संस्था हैं। 'यह संस्था मानव सभ्यता का आधार हैं।' कुरान में लिखा हैं, कि 'हमने पुरूषो को स्त्रीयों पर हाकिम (अधिकारी) बनाकर भेजा हैं।' दूसरो शब्दो में मुस्लिम विधि में पत्नी की अधिनता स्वीकार की गई हैं। निकाह (विवाह) का शाब्दिक अर्थ हैं- स्त्री और पुरूष यौन-संयोग और विधि में इसका अर्थ हैं-'विवाह' बेली के सार-संग्रह में विवाह की परिभाषा स्त्री पुरूष के समागम को वैध बनाने और संतान उत्पन्न करने के प्रयोजन के लिये की गई संविदा के रूप में की गई हैं।

मुस्लिम विवाह के नियम निम्नलिखित स्रोतों पर आधारित हैं:

1. कुरान-यह इस्लामी कानून का प्राथमिक स्रोत है।
2. हदीस- पैगंबर मोहम्मद के कथन और क्रियाओं का संकलन।
3. इज्मा और क्यास-इस्लामी विद्धानों द्धारा सामूहिक निर्णय और तार्किक व्याख्या।
4. मुस्लिम पर्सनल लॉ तलाक से जुड़े कानून तहत आते हैं। मुस्लिम विवाह और नियम, 1937 के तहत आते हैं।

1. मुस्लिम विवाह की परिभाषा - मुस्लिम विवाह एक सिविल अनुबंध है, जो दो व्यक्तियों (पुरुष और महिला) को वैध रूप से पति-पत्नी के रूप में एक साथ रहने की अनुमति देता है। हेदाया के अनुसार-'विवाह एक विधिक प्रक्रिया हैं, जिसके द्धारा स्त्री और पुरूष के बीच समागम और बच्चो की उत्पत्ति तथा औरसीकरण पूर्णतय: वैध और मान्य होते हैं'। असहाबा का कथन हैं कि 'विवाह स्त्री और पुरूष की और से पारस्परिक अनुमति पर आधारित स्थाई संबंध में अंतर निहित संविदा हैं'।

डॉ. मोहम्मद उल्लाह एस जंग कहते हैं कि 'विवाह सारत: एक संविदा होते हुये भी एक श्रद्धात्मक कार्य हैं, जिनके उद्देश्य हैं-उपभोग और संतानोत्पति के अधिकार और समाज के हित में सामाजिक जीवन का नियमन'।

अब्दुल रहीम के अनुसार 'विवाह की प्रथा में इबादत, मुआमलात दोनो गुण पाये जाते हैं, अर्थात् मुस्लिम रिवाजो के अनुसार विवाह सारत: एक व्यवहारिक संविदा होते हुये भी श्रद्धात्मक कार्य हैं।'

विशेषताएं:

सामाजिक अनुबंध- यह एक कानूनी अनुबंध है, जिसमें सहमति अनिवार्य है। पक्षकार विवाह से पहले और बाद में अनुबंध को समाप्त करने के लिए स्वतंत्र हैं।

धार्मिक महत्व- विवाह को सुन्नत कहा गया है, जिसे पैगंबर मोहम्मद द्धारा अनुशंसित किया है। इसे नैतिकता, शांति और मानवता के विस्तार के लिए आवश्यक माना गया है।

धार्मिक और कानूनी अधिकार- पति और पत्नी दोनों को विवाह के दौरान और उसके बाद विशिष्ट अधिकार और कर्तव्य प्राप्त होते हैं।

मुस्लिम विवाह के प्रकार

सही विवाह -सभी कानूनी शर्तों का पालन करते हुए किया गया विवाह इसमें पति-पत्नी के कानूनी अधिकार और कर्तव्य पूरी तरह लागू होते हैं।

अवैध विवाह -निषिद्ध रिश्तों में किया गया विवाह ऐसा विवाह अवैध होता है और इसके कानूनी परिणाम नहीं होते।

अविरुद्ध विवाह - जब कुछ शर्तों का उल्लंघन होता है (जैसे गवाह की अनुपस्थिति) इसे बाद में नियमित किया जा सकता है।

4. विवाह का उद्देश्य - 'तिरमिजी' विवाह के पाँच उद्देश्यो का उल्लेख करता हैं-

1. कामवासना का नियमन।
2. गृहस्थ जीवन का नियमन।
3. वंश की वृद्धि।
4. पत्नी और बच्चों की देखभाल और जिम्मेदारी में आत्मसंयम,
5. सदाचारी बच्चो का पालन।

'हेदया' के अनुसार विवाह के उद्देश्य:

1. **समागम**
2. **संगति**
3. **समान हितेच्छा**

पैगम्बर ने कहा-पुरूष स्त्रियों से विवाह उनकी धर्मनिष्ठा, सम्पत्ति या उनके सौन्दर्य के लिये करते हैं, परन्तु उन्हें विवाह केवल धर्मनिष्ठा के लिये करना चाहिये। (तिरमीजी)

5. विवाह की वैधता के लिए आवश्यक शर्तें

सक्षम पक्षकार - पुरुष और महिला दोनों मानसिक रूप से स्वस्थ और बालिग (वयस्क) होने चाहिए। बालिग होने की उम्र आमतौर पर 15 वर्ष मानी जाती है।

प्रस्ताव और स्वीकृति - विवाह के लिए पुरुष और महिला के बीच एक पक्ष द्धारा प्रस्ताव (इजाब) और दूसरे पक्ष द्धारा स्वीकृति (कबूल) आवश्यक

है। यह क्रियाएं एक बैठक में होनी चाहिए।

गवाह – सुन्नी विधि के अंतर्गत प्रस्ताव और स्वीकृति दो ऐसे पुरूष या एक पुरूष और दो स्त्री साक्षीयों की उपस्थिति में होना जरूरी हैं। जो स्वस्थचित्त और व्यस्क मुसलमान हो। साक्षीयो की अनुपस्थिति को विवाह को शून्य नही बल्कि अनियमित बना देती हैं।

शिया विधि के अतंर्गत विवाह के समय नही बल्कि विवाह-विच्छेद की घोषणा के समय साक्षी आवयक होते हैं। अत: शिया विधि के अंतर्गत साक्षीयों की अनुपस्थिति में किया गया विवाह पूर्णत: वैध विवाह माना जाता हैं।

स्वतंत्र सहमति– किसी विवाह के पक्षकारो का अपनी स्वतंत्र इच्छा और सहमति से विवाह करना जरूरी हैं। उनकी सहमति का भय, अनुचित दबाव या कपट से मुक्त होना जरूरी हैं। ऐसे बालक अथवा बालिका के मामले में जिसमें व्यस्कता न प्राप्त की हो, विवाह वैध न होगा। जब तक कि विधिक संरक्षक ने उसके लिये अनुमति न दे दी हो। यदि विवाह के पक्षकार स्वस्थचित्त और व्यस्क हैं तो ऐसी दशा में स्वयं उनके द्धारा सहमति का दिया जाना जरूरी हैं।

मैहर – पति द्धारा पत्नी को दी जाने वाली वित्तीय संपत्ति। यह तुरंत (प्रॉम्प्ट महर) या बाद में (डेफर्ड महर) दिया जा सकता है।

निषिद्ध संबंध – रक्त संबंध माता, बहन, बेटी। दूध संबंध रजाई रिश्ते (दूध पीने से बनने वाले रिश्ते)। विवाह संबंध सौतेली माँ, बहू।

6. मुस्लिम विवाह के कानूनी प्रभाव – पति-पत्नी के अधिकार और कर्तव्य पत्नी को भरण-पोषण का अधिकार है। पति-पत्नी के बीच निष्ठ योग आवश्यक है।

संतान के अधिकार– विवाह से जन्मी संतान वैध मानी जाती है। उन्हें संपत्ति में अधिकार प्राप्त होता है।

तलाक – तलाक तीन प्रकार के होते हैं। तलाक-ए-अहसन शांतिपूर्ण प्रक्रिया तलाक-ए-हसन तीन बार घोषणा। तलाक-ए-बिद्दत एक बार में तीन बार तलाक (जिसे अब अवैध घोषित किया गया है)।

7. मुस्लिम विवाह से संबंधित प्रमुख मामले :

1. शाह बानो केस (1985) सुप्रीम कोर्ट ने तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को भरण-पोषण का अधिकार दिया हैं। इससे मुस्लिम पर्सनल लॉ में सुधार के लिये एक नई बहस शुरू हुई हैं।
2. शमीम आरा बनाम स्टेट ऑफ यूपी (2002) तलाक को वैध मानने के लिए पति को उचित कारण और प्रक्रिया का पालन करना अनिवार्य बताया गया।
3. सरला मुद्गल बनाम भारत संघ (1995) मुस्लिम धर्म स्वीकार कर दूसरी शादी करने के प्रकरण में सुप्रीम कोर्ट ने इसे धोखा करार दिया।
4. दानियाल लतीफ बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (2001) शाह बानो मामले से संबंधित इस मामले ने तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के अधिकारो की पुनरू पुष्टि की।
5. विभिन्न विद्धानों के विचार डॉ. असगर अली इंजीनियर कुरान में पुरुष और महिला के समान अधिकार हैं।उन्होंने महिलाओं के प्रति भेदभाव को समाप्त करने की वकालत की। प्रो. आफ़ज़ल काज़ी विवाह को एक कानूनी अनुबंध मानते हुए उन्होंने इसमें सुधार की आवश्यकता पर जोर दिया। डॉ. फिरोज अहमद: मुस्लिम विवाह को परिवार और समाज की स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण बताया।

8. मुस्लिम विवाह में सुधार की आवश्यकता चुनौतियां:

1. बहुविवाह का दुरुपयोग।
2. तलाक प्रक्रिया में पारदर्शिता की कमी।
3. महिलाओं के अधिकारों की उपेक्षा।

सुझाव:

1. तलाक-ए-बिद्दत पर रोक लगाना।
2. महिलाओं को समान अधिकार प्रदान करना।
3. विवाह और तलाक की प्रक्रिया को आधुनिक बनाना।

निष्कर्ष– मुस्लिम विवाह एक पवित्र अनुबंध है जो धार्मिक और कानूनी दोनों दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण है। हालांकि, बदलते समय के साथ इसमें सुधार की आवश्यकता है। महिलाओं के अधिकारों की रक्षा और समाज में समानता सुनिश्चित करने के लिए मुस्लिम विवाह कानून को संवेदनशील और न्यायसंगत बनाया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुरान और हदीस
2. मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) एप्लीकेशन एक्ट, 1937
3. शाह बानो बनाम मोहम्मद अहमद खान (AIR 1985 SC 945)
4. शमीम आरा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2002)
5. डॉ. असगर अली इंजीनियर, इस्लाम और जेंडर जस्टिस
6. प्रो. आफ़ज़ल काज़ी, मुस्लिम विवाह कानून का विश्लेषण
7. अकील अहमद मुस्लिम विधि

****

आई.एम. शक्ति उड़ान योजना की जानकारी, प्रभाव एवं समस्या : महाविद्यालय स्तरीय बालिकाओं का एक विश्लेषण

डॉ. अंजना जाटव*

* अतिथि संकाय, भूगोल (वि.सं.यो.) राजकीय महाविद्यालय, तालेड़ा (बून्दी) (राज.) भारत

शोध सारांश – राजस्थान सरकार द्वारा संचालित 'आई एम शक्ति उड़ान योजना' महिलाओं और किशोरियों के स्वास्थ्य, स्वच्छता, और गरिमा को सशक्त बनाने की एक महत्वपूर्ण पहल है। 19 दिसंबर 2021 को आरंभ की गई इस योजना का उद्देश्य मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन (MHM) को प्रोत्साहित करना, सामाजिक वर्जनाओं को तोड़ना, और मासिक धर्म के कारण शिक्षा में आने वाली बाधाओं को कम करना है। नि:शुल्क सैनिटरी नैपकिन की आपूर्ति आंगनबाड़ी केंद्रों, विद्यालयों और महाविद्यालयों में की जाती है, जिससे आर्थिक रूप से पिछड़े और ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं एवं बालिकाओं को लाभ मिल सके। इस शोध पत्र के माध्यम से योजना की प्रभावशीलता, जागरूकता के स्तर और इससे जुड़ी समस्याओं का विश्लेषण किया गया है। कोटा जिले के राजकीय महाविद्यालयों की 45 छात्राओं से साक्षात्कार और अन्य आधिकारिक स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों का वैज्ञानिक विधियों से अध्ययन कर निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है।

शब्द कुंजी – उड़ान, महाविद्यालय, सेनेटरी नेपकिन, स्वास्थ।

प्रस्तावना – राजस्थान में महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा राज्य में किशोरियों/महिलाओं के लिए स्वास्थ्य जागरूकता एवं नि:शुल्क सेनेटरी नैपकिन वितरण हेतु 'उड़ान' योजना संचालित की जा रही है। आई. एम. शक्ति उड़ान योजना, राजस्थान सरकार द्वारा शुरू की गई एक महत्वपूर्ण पहल है, ग्रामीण और आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन (MHM) की अत्यंत आवश्यकता को समझते हुए, यह योजना नि: शुल्क सैनिटरी नैपकिन प्रदान करती है। इस प्रयास का उद्देश्य महिलाओं के स्वास्थ्य और गरिमा की रक्षा करना है, साथ ही मासिक धर्म के कारण लड़कियों की शिक्षा में आने वाली बाधाओं को कम करना है। जागरूकता बढ़ाकर, सामाजिक वर्जनाओं को तोड़कर और आवश्यक संसाधन प्रदान करके, उड़ान योजना महिलाओं और किशोरियों को स्वास्थ और आत्मविश्वासपूर्ण जीवन जीने के लिए सशक्त बनाती है।योजना के अंतर्गत हुए महिलाओं एवं किशोरियों को नि:शुल्क सेनेटरी नैपकिन उपलब्ध करवाये जा रहे है। इसके लिए राजस्थान मेडिकल सर्विस कार्पोरेशन एवं राजीविका द्वारा मांग अनुसार सैनेटरी नैपकिन क्रय किये जाते हैं। आंगनबाडी केन्द्रों, विद्यालयों एवं महाविद्यालयों पर आपूर्ति की जाती है। योजना का प्रारम्भ दिनांक 19.12.2021 को किया गया।

उद्देश्य एवं शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र राजस्थान सरकार द्वारा संचालित आई.एम, शक्ति उड़ान योजना का विश्लेषण से सम्बन्धित है।इस शोध का मुख्य उद्देश्य राज्य सरकार द्वारा संचालित उड़ान योजना के प्रति महविद्याल स्तर पर पढने वाली बालिकाओं में जानकारी का स्तर, प्रभावों एवं समस्याओं का विश्लेषण करना है।प्रस्तुत शोध पत्र निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्राथमिक स्त्रोतों से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित है। इस हेतु कोटा जिले से राजकीय महाविद्यालयों में स्नातक स्तर पर अध्ययन करने वाली कुल 45 बालिकाओं से निर्धारित अनुसूची के द्वारा साक्षात्कार के माध्यम से सूचनाओं का संकलन किया गया है।इस हेतु प्रत्येक महाविद्यालय से 15-15 बालिकाओं का चयन सोद्देश्यपूर्ण पद्धति से किया गया। चयनित बालिकाओं से व्यक्तिगत साक्षात्कार से सूचनाओं का संकलन किया गया। इसके अतिरिक्त योजना से सम्बन्धित अन्य सूचनाओं का संकलन किया गया।इसके लिए महिला एवं बाल विकास विभाग की ऑफिसियल वैबसाइट सेवार्षिक प्रतिवेदनों से भी सूचनाओं का संकलन किया गया हैं।संकलित सूचनाओं को आवृति एवं प्रतिशतके माध्यम से विश्लेषित कर आरेख एवं तालिका द्वारा दर्शाया गया है।

विश्लेषण – कोटा जिले के राजकीय महाविद्यालयों में अध्ययनरत बालिकाओं से व्यक्तिगत साक्षात्कार के माध्यम से राज्य सरकार द्वारा संचालित आई.एम. शक्ति उड़ान योजना के बारे में जानकारी, योजना का प्रभाव एवं समस्याओं के विषय में संकलित सूचनाओं को निम्नांकित बिन्दुओं के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया है-

योजना की जानकारी – महाविद्यालय स्तर की बालिकाओं में उड़ान योजना के बारे में जानकारी एवं लाभ के स्तर को जानने के लिए सर्वेक्षित छात्राओं से जानकरी प्राप्त की गयी। प्राप्त सूचनाओं को विश्लेषण उपरांत तालिका में दर्शाया गया है।

सारणी 1 : छात्राओं में उड़ान योजना के बारे में जानकरी एवं लाभ प्राप्ति का स्तर

क्र.	योजना के सन्दर्भ में	संख्या	प्रतिशत
1	योजना के बारे में जानकारी	41	91.11
2	योजना से लाभ प्राप्त हुआ	38	84.44

स्रोत: व्यक्तिगत साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषण

सारणी में दर्शाए गये आंकड़ों के अवलोकन से स्पष्ट है कि छात्राओं पर उड़ान योजना का व्यापक प्रभाव पड़ा है। कुल सर्वेक्षित छात्राओं में से 91.11प्रतिशत छात्राएँ इस योजना के बारे में जानकारी रखती हैं जो यह दर्शाता है कि यह योजना प्रचार-प्रसार के स्तर पर सफल रही है। वहीं 84.44प्रतिशत छात्राएं इस योजना से प्रत्यक्ष रूप से लाभन्वित हुई है। योजना की जानकरी एवं लाभ के स्तर के विषय में यह आँकड़ा योजना की प्रभावशीलता को रेखांकित करता है। इसी प्रकार तालिका में महाविद्यालय स्तर की छात्राओं में उड़ान योजना के बारे में जानकरी के स्रोतों के विषय में आंकड़ों को दर्शाया गया है।

सारणी 2 : छात्राओं में उड़ान योजना के बारे में जानकरी के स्रोत

क्र.	जानकारी के स्रोत	संख्या	प्रतिशत
1	सहपाठी छात्राओं से	8	17.78
2	समाचार पत्रों से	5	11.11
3	सोशल मिडिया से	16	35.56
4	अन्य स्रोतों से	12	26.67

स्रोत: व्यक्तिगत साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषण

सारणी में आई.एम. शक्ति उड़ान योजना के विषय में जानकारी के स्रोतों का विश्लेषण किया गया है।तालिका में दर्शाए गये आंकड़ों के अवलोकन से स्पष्ट है कि17.78 प्रतिशत छात्राओं को अपने साथ पढ़ने वाली लड़कियों से ही जानकरी प्राप्त हुई है जबकि 11.11प्रतिशत बालिकाओं को समाचार पत्रों के माध्यम से उड़ान योजना की जानकारी मिली है।सोशल मीडिया के माध्यम से 35.56प्रतिशत छात्राओं को जानकारी प्राप्त हुई है।इसी प्रकार महाविद्यालय स्तर की 26.67प्रतिशत बालिकाओं को अन्य माध्यम से उड़ान योजना के बारे में जानकारी मिली है। इस प्रकार वर्तमान युग में सोशल मिडिया सरकारी योजनाओं की जानकारी पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है वहीं पारम्परिक माध्यम आज भी प्रासंगिक हैं, किंतु उनकी पहुँच सीमित है।

योजना का प्रभाव – उड़ान योजना के प्रभावों को जानने के लिए महाविद्यालीय बालिकाओं से इस विषय में जानकरी एकत्रित की गयी संकलित सूचनाओं को विश्लेषण उपरांत सारणी में दर्शाया गया है। आई एम शक्ति उड़ान योजना का कॉलेज स्तर की बालिकाओं पर प्रभावों को मुख्यत: आर्थिक, स्वास्थ्य, निजी स्वच्छता एवं आत्मनिर्भरता में वृद्धि के रूप चिन्हित किया गयाहै।

सारणी 3 : उड़ान योजना का महाविद्यालीय छात्राओं पर प्रभाव

क्र.	योजना के प्रभाव	संख्या	प्रतिशत
1	योजना से आर्थिक लाभ	36	80.00
2	योजना से स्वास्थ्यलाभ	28	62.22
3	निजी स्वच्छता मेंसहायक	27	60.00
4	मनोबल/ आत्मनिर्भरतामें वृद्धि	24	53.33

स्रोत: व्यक्तिगत साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषण

आरेख : 1

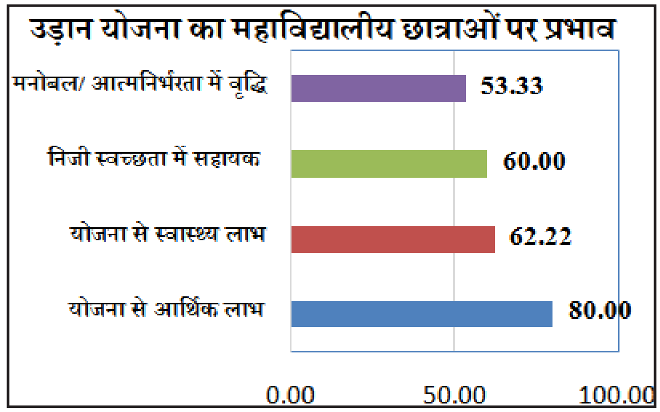

तालिका में दर्शाए गये आंकड़ो के अवलोकन से स्पष्ट है कि सर्वेक्षित छात्राओं में से 80.00प्रतिशत छात्राएँ इस योजना के कारण आर्थिक रूप से लाभान्वित हुई है इस योजना के कारण उन्हें नेपकिन क्रय में जो मासिक रूप से कम से कम 50-100 रूपये तक राशि खर्च करनी पडती थी अब उस खर्च से मुक्ति मिली है साथ ही यह यह राशि अन्य शैक्षिक खर्चों में कर पाती है। सर्वेक्षित छात्राओं में से 62.22प्रतिशत छात्राओं का मानना है कि योजना के कारण उनको स्वास्थ्य लाभ हुआ है, जबकि 60.00 प्रतिशत छात्राओं का मानना है कि इस योजना से उन्होंने अपनी निजी स्वच्छता में सुधार अनुभव किया। माहवारी के दौरान निजी स्वच्छता के लिए नि:शुल्क सेनेटरी नेपकिन की उपलब्धता के कारण बालिकाओं में आत्मनिर्भरता एवं मनोबल में वृद्धि भी देखी गयी है।महाविद्यालय स्तर की53.33प्रतिशत बालिकाओं का मानना है कि योजना के कारण उनमें आत्मनिर्भरता एवं मनोबल में वृद्धि हुई है। इस प्रकार उड़ान योजना के बहुआयामी प्रभाव हैं।

समस्याएँ – सर्वेक्षण के दौरान महाविद्यालीय बालिकाओं से उड़ान योजना से सम्बन्धित समस्याओं एवं कमियों के विषय में भी जानकारी प्राप्त की गयी।इस योजना के सन्दर्भ में मुख्यत: वितरण, गुणवता एवं मात्रा सम्बन्धी समयों को चिन्हित किया गया है बालिकाओं से प्राप्त जानकारी को विश्लेषण उपरांत तालिका में दर्शाया गया है।

सारणी 4: उड़ान योजना मेंछात्राओं द्वारा देखी गयी समस्याएँ

क्र.	समस्या के प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1	वितरण व्यवस्था सम्बन्धी	16	35.56
2	उत्पाद गुणवत्ता सम्बन्धी	12	26.67
3	उत्पाद मात्रा सम्बन्धी	5	11.11
4	अन्य	6	13.33

स्रोत: व्यक्तिगत साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषण

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

आरेख: 2

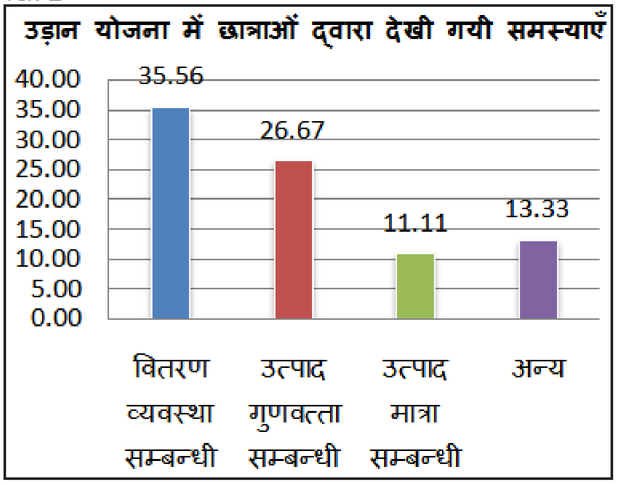

तालिका में दर्शाए गये आंकड़ों से अवलोकन से स्पष्ट है कि 35.56 प्रतिशत बालिकाओं का मानना है कि उड़ान योजना में सेनेटरी नेपकिन महाविद्यालय में वितरण की व्यवस्था सही है एवं सुचारू नहीं रहती है। बालिकाओं का कहना है कि जब महाविद्यालय में नेपकिन कि आवश्यकता होती है तब उन्हें उपलब्ध नहीं हो पाते है। इसी प्रकार 26.67 प्रतिशत बालिकाओं ने बताया कि योजना के अंतर्गत दिए जाने वाले उत्पाद उच्च गुणवता युक्त नहीं होते है जबकि 11.11 प्रतिशत छात्राओं का मानना है कि कई बार महविद्यालय में उपलब्धा स्टॉक खत्म हो जाता है जिस कारण भी उन्हें समस्या का समना करना पड़ता है। इसके आलावा 13.33 प्रतिशत छात्राओं ने अन्य समस्याओं के अंतर्गत तकनीकी समस्या, वितरण प्रभारी स्टाफ की अनुपस्थिति आदि समस्याओं को भी चिन्हित किया है।

निष्कर्ष – महिलाओं और बालिकाओं के स्वास्थ्य के विषय में राज्य सरकार की यह एक महत्वपूर्ण योजना है।उड़ान योजना ने छात्राओं के जीवन में उल्लेखनीय परिवर्तन लाने का कार्य किया है। योजना के विषय में अधिकांश बालिकाओं को इस विषय में जानकरी प्राप्त है। उड़ान योजना के कारण महिलाओं एवं कॉलेज स्तर पर पढने वाली बालिकाओं पर कई प्रभावदेखे जा सकते हैं। उड़ान योजना का सीधा सा प्रभाव बालिकाओं के निजी स्वच्छता एवं स्वास्थ्य पर पड़ा परन्तु इसके साथ–साथ इसको आत्मनिर्भरता में वृद्धि एवं आर्थिक सम्बल के रूप में भी देखा जा सकता है। हालाँकि, योजना के क्रियान्वयन में आज भी कुछ वितरण और गुणवत्ता संबंधी चुनौतियाँ है जोइसके प्रभाव को सीमित करती है। योजनाकारों को इन चुनौतियों का समाधान निकालकर इसे और अधिक प्रभावशाली एवं सशक्त बनाने के लिए प्रयास किये जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वार्षिक प्रतिवेदन (2023–24) महिला एवं बाल विकास विभाग, राजस्थान सरकार
2. https://jankalyanfile.rajasthan.gov.in//Content/UploadFolder/OrderEntry/W_CD/2024/Annual_Progress_Report/O_090724_9fbd951b-02ea-499e-b3a4-ba3641bb559e.pdf
3. https://hte.rajasthan.gov.in/dept/dce/maharaja_ganga_singh_university/m.j.d._government_college,_taranagar/uploads/doc/Udan%20Yogana.pdf
4. https://jankalyanfile.rajasthan.gov.in/Content/UploadFolder/DepartmentMaster/166/2023/Feb/30409/133142.pdf
5. https://www.patrika.com/jaipur-news/i-am-shakti-udan-scheme-will-be-launched-7222135

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

आर्थिक विकास और सामाजिक समानता चुनौतियां और अवसर

डॉ. राजेश कुमार शुक्ला*

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) श्री किशुन महाविद्यालय, खेजुरी बलिया (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – आर्थिक विकास और सामाजिक समानता किसी भी समाज के विकास के दो महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। आर्थिक विकास से देश की समृद्धि बढ़ती है, जबकि सामाजिक समानता यह सुनिश्चित करती है कि इस विकास का लाभ समाज के सभी वर्गों को समान रूप से मिले। हालांकि, इन दोनों को संतुलित करना एक बड़ी चुनौती है। आर्थिक विकास की प्रक्रिया में आय असमानता एक प्रमुख समस्या है, जहां समाज का संपन्न वर्ग तेजी से समृद्ध होता है, जबकि गरीब वर्ग हाशिये पर रह जाता है। शहरी–ग्रामीण विभाजन, जहां शहरी क्षेत्रों में बेहतर अवसर उपलब्ध हैं और ग्रामीण क्षेत्र संसाधनों की कमी से जूझते हैं, इस असमानता को और गहरा करते हैं। शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की अनुपलब्धता, विशेषकर गरीब और पिछड़े वर्गों के लिए, आर्थिक असमानता का एक और बड़ा कारण है। इसके अलावा, लैंगिक असमानता और नीतिगत कमजोरियां भी सामाजिक समानता को बाधित करती हैं।

इन चुनौतियों के बावजूद, सामाजिक समानता सुनिश्चित करने के कई अवसर उपलब्ध हैं। समावेशी नीतियां, जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार को प्राथमिकता देने वाली योजनाएं, समाज के कमजोर वर्गों को सशक्त कर सकती हैं। तकनीकी प्रगति, विशेषकर डिजिटलीकरण, शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच के अंतर को कम करने में मदद कर सकती है। कौशल विकास और रोजगार सृजन कार्यक्रम युवाओं को आत्मनिर्भर बनाकर आर्थिक समानता की दिशा में बड़ा कदम हो सकते हैं। महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त करने से लैंगिक समानता बढ़ेगी और समाज की प्रगति तेज होगी। आर्थिक विकास और सामाजिक समानता एक–दूसरे के पूरक हैं। यदि इन दोनों के बीच संतुलन स्थापित किया जाए, तो समाज में न केवल आर्थिक समृद्धि होगी, बल्कि सामाजिक स्थिरता और समरसता भी बनी रहेगी। इसके लिए समावेशी नीतियों, सामुदायिक भागीदारी और दूरदर्शी दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – आर्थिक विकास, सामाजिक समानता, आय असमानता, शहरी–ग्रामीण विभाजन, शिक्षा और स्वास्थ्य, तकनीकी प्रगति, महिला सशक्तिकरण।

प्रस्तावना – आर्थिक विकास और सामाजिक समानता एक समाज के समग्र और स्थायी विकास के लिए आवश्यक हैं। आर्थिक विकास का तात्पर्य है उत्पादन, आय और जीवन स्तर में वृद्धि, जबकि सामाजिक समानता का उद्देश्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर और संसाधनों तक पहुंच प्रदान करना है। हालांकि, इन दोनों पहलुओं को एक साथ प्राप्त करना एक जटिल प्रक्रिया है, क्योंकि आर्थिक विकास अक्सर असमानता को बढ़ावा देता है। आर्थिक विकास के बावजूद समाज में आय असमानता, लैंगिक भेदभाव और शहरी–ग्रामीण अंतर जैसी चुनौतियां मौजूद रहती हैं। गरीब और वंचित वर्गों को शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार में समान अवसर न मिलना सामाजिक समानता के लक्ष्य को बाधित करता है। साथ ही, भ्रष्टाचार और नीतिगत कमजोरियां इस समस्या को और बढ़ाती हैं। दूसरी ओर, समावेशी विकास, तकनीकी प्रगति, और महिला सशक्तिकरण जैसे उपाय इन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करते हैं। डिजिटल युग में ग्रामीण क्षेत्रों को मुख्यधारा से जोड़ना, कौशल विकास और रोजगार के नए अवसर प्रदान करना, और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं को प्रभावी बनाना, सामाजिक समानता को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक हैं। इस प्रकार, आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच संतुलन स्थापित करना एक चुनौतीपूर्ण लेकिन आवश्यक कदम है, जो एक समृद्ध, स्थिर और न्यायसंगत समाज का आधार बन सकता है।

आर्थिक विकास और सामाजिक समानता किसी भी समाज के समग्र विकास के दो महत्वपूर्ण पहलू हैं। एक ओर आर्थिक विकास से देश की समृद्धि और संसाधनों में वृद्धि होती है, तो दूसरी ओर सामाजिक समानता यह सुनिश्चित करती है कि इन संसाधनों का लाभ समाज के हर वर्ग तक पहुंचे। हालांकि, इन दोनों लक्ष्यों को एक साथ प्राप्त करना एक बड़ी चुनौती है।

चुनौतियां **अवसर**

आर्थिक विकास और सामाजिक समानता एक–दूसरे के पूरक हैं। यदि केवल आर्थिक विकास पर ध्यान दिया जाए और सामाजिक समानता की उपेक्षा

की जाए, तो समाज में असंतोष और अस्थिरता बढ़ सकती है। इसके विपरीत, यदि आर्थिक विकास के साथ-साथ समानता सुनिश्चित की जाए, तो एक मजबूत, समृद्ध और स्थिर समाज का निर्माण संभव है। इसके लिए नीतिगत दृढ़ता, समावेशी दृष्टिकोण और सामुदायिक सहयोग आवश्यक है। प्रस्तुत अध्ययन के शोध उद्देश्य अग्रलिखित है :-

- **आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच संबंध का अध्ययन -** यह समझना कि आर्थिक विकास कैसे आय वितरण, अवसरों और संसाधनों तक समान पहुंच को प्रभावित करता है और इसके लिए कौन-कौन सी चुनौतियां जिम्मेदार हैं।
- **चुनौतियों के समाधान और अवसरों की पहचान -** उन नीतियों, उपायों और प्रयासों की पहचान करना जो आर्थिक विकास को समावेशी बनाकर सामाजिक समानता को बढ़ावा दे सकते हैं।

प्रस्तुत अध्ययन के शोध परिकल्पना अग्रलिखित है :-

- आर्थिक विकास सामाजिक समानता को प्रभावित करता है यह परिकल्पना है कि आर्थिक विकास यदि समावेशी न हो, तो आय असमानता और संसाधनों के असमान वितरण को बढ़ावा देता है, जिससे सामाजिक असमानता गहराती है।
- समावेशी नीतियां आर्थिक विकास और सामाजिक समानता में संतुलन बना सकती हैं यह परिकल्पना है कि समावेशी विकास नीतियां, जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार के अवसर प्रदान करना, आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच सामंजस्य स्थापित कर सकती हैं।

पूर्व शोध साहित्य -

- साइमन कुजनेट्स (1955) ने अपने अध्ययन 'Economic Growth and Income Inequality' में कुजनेट्स वक्र का प्रस्ताव दिया। उन्होंने बताया कि आर्थिक विकास की प्रारंभिक अवस्था में आय असमानता बढ़ती है, लेकिन जैसे-जैसे विकास परिपक्व होता है, असमानता घटने लगती है। यह अध्ययन आर्थिक विकास और आय असमानता के बीच संबंध का आधारभूत कार्य माना जाता है।
- अमर्त्य सेन (1999) ने अपनी पुस्तक 'Development as Freedom' में विकास को केवल आर्थिक वृद्धि नहीं, बल्कि स्वतंत्रता और समान अवसरों के विस्तार के रूप में परिभाषित किया। उन्होंने सामाजिक समानता को विकास के लिए आवश्यक मानते हुए तर्क दिया कि शिक्षा, स्वास्थ्य, और सामाजिक सुरक्षा के बिना आर्थिक विकास अपूर्ण है।
- थॉमस पिकेटी (2014) ने अपनी पुस्तक 'Capital in the Twenty&First Century' में आर्थिक असमानता के ऐतिहासिक रुझानों का विश्लेषण किया। उन्होंने बताया कि पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओं में आर्थिक विकास अक्सर धन की असमानता को बढ़ाता है। पिकेटी ने असमानता को कम करने के लिए कर सुधार और सार्वजनिक नीतियों के महत्व पर जोर दिया।

शोध प्रविधि - सांख्यिकीय आंकड़ों का उपयोग कर आय असमानता, शिक्षा स्तर, स्वास्थ्य सेवाओं, और रोजगार के प्रभाव का अध्ययन किया गया है साथ ही आर्थिक विकास दर और सामाजिक संकेतकों (जैसे गरीबी, बेरोजगारी) के बीच संबंध का मूल्यांकन किया गया है। नीतियों, योजनाओं, और सामाजिक कार्यक्रमों के प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। केस स्टडी और साक्षात्कार का उपयोग कर समाज के विभिन्न वर्गों की समस्याओं और अनुभवों को समझ गया है। तुलनात्मक अध्ययन के अंतर्गत विभिन्न देशों या राज्यों के बीच आर्थिक विकास और सामाजिक समानता में अंतर का विश्लेषण व सफल और असफल नीतियों के परिणामों का तुलनात्मक मूल्यांकन किया गया है।

प्रदत्त संकलन

प्राथमिक स्त्रोत - साक्षात्कार, सर्वेक्षण, और फोकस ग्रुप डिस्कशन पर आधारित हैं।

द्वितीयक स्त्रोत - सरकारी रिपोर्ट, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों (जैसे विश्व बैंक, UNDP) के आंकड़े, और शोध लेख, ऐथ ग्रन्थ, इन्टरनेट से प्राप्त तथ्य आदि पर आधारित हैं।

तालिकाओं के माध्यम से प्रस्तुतीकरण और आंकड़ों का विश्लेषण - शोध प्रविधियों का उपयोग कर प्राप्त आंकड़ों और निष्कर्षों को तालिकाओं के माध्यम से स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है। यहां सर्वेक्षण और अन्य डाटा स्रोतों से प्राप्त तालिकाओं का विश्लेषण हैं :-

तालिका क्रमांक - 01: आय असमानता और आर्थिक विकास दर का तुलनात्मक विश्लेषण

क्रं.	वर्ष	देश/राज्य	आर्थिक विकास दर (%)	गिनी सूचकांक (आय असमानता)
1	2010	भारत	6.2	35.7
2	2015	भारत	7.5	37.8
3	2020	भारत	4.5	39.3

तालिका क्रमांक - 02: सामाजिक संकेतकों का विश्लेषण (शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार)

क्रं.	सामाजिक संकेतक	ग्रामीण क्षेत्र (%)	शहरी क्षेत्र (%)	राष्ट्रीय औसत (%)
1	साक्षरता दर	65.8	85.4	74.5
2	स्वास्थ्य सुविधाएं	45.2	82.1	63.7
3	बेरोजगारी दर	7.9	5.4	6.8

तालिका क्रमांक - 03: नीतियों और उनके प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन

क्रं.	नीति /कार्यक्रम	लक्ष्य समूह	प्रभाव का प्रतिशत (%)	सकारात्मक परिणाम
1	मनरेगा	ग्रामीण मजदूर	60	आय में सुधार
2	आयुष्मान भारत	गरीब परिवार	70	स्वास्थ्य खर्च में कमी
3	महिला सशक्तिकरण योजना	ग्रामीण महिलाएं	50	स्वरोजगार के अवसर बढ़े

तालिका क्रमांक - 04: क्षेत्रीय तुलना - विकास और समानता

क्रं.	राज्य/देश	एचडीआई (Human Development Index)	आर्थिक विकास दर (%)	लैंगिक समानता सूचकांक
1	महाराष्ट्र	0.752	8.1	0.78
2	बिहार	0.576	5.3	0.62
3	केरल	0.800	7.2	0.85

शोध विश्लेषण - उपरोक्त तालिकाओं के माध्यम से परिलक्षित होता है कि

आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच के संबंध का विश्लेषण इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है। इस विश्लेषण में दोनों के बीच की जटिलताओं और अवसरों को समझने की कोशिश की जाती है। शोध का उद्देश्य आर्थिक विकास की प्रक्रिया में उत्पन्न होने वाली सामाजिक असमानताओं की पहचान करना और समावेशी नीतियों के माध्यम से इन असमानताओं को दूर करने के अवसरों का विश्लेषण करना है।

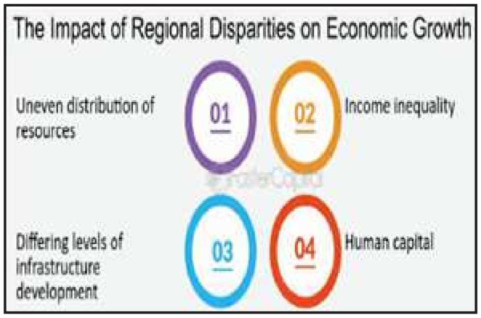

आर्थिक विकास और आय असमानता का संबंध – आर्थिक विकास के दौरान, शुरुआत में आय असमानता बढ़ने की प्रवृत्ति देखी जाती है। कुजनेट्स वक्र के सिद्धांत के अनुसार, विकास की प्रारंभिक अवस्था में आर्थिक वृद्धि मुख्य रूप से उच्च वर्ग के लाभ के रूप में होती है, जिससे आय असमानता बढ़ती है। हालांकि, जैसे–जैसे विकास परिपक्व होता है, असमानता घटने लगती है। इस परिकल्पना का विश्लेषण कर यह समझने का प्रयास किया गया है कि क्या यह सिद्धांत वास्तविकता से मेल खाता है, विशेष रूप से विकासशील देशों में।

सामाजिक संकेतकों का प्रभाव – आर्थिक विकास के साथ–साथ सामाजिक संकेतकों जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार के अवसरों का भी महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। शोध में यह पाया गया कि शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच विकास और सामाजिक समानता के बीच बड़ा अंतर है। उदाहरण के लिए, ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य और शिक्षा सेवाओं की कमी के कारण सामाजिक असमानता बनी रहती है, जबकि शहरी क्षेत्रों में ये सेवाएं बेहतर उपलब्ध होती हैं।

समावेशी नीतियों का प्रभाव – शोध में यह विश्लेषण किया गया कि समावेशी नीतियां, जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के अवसरों को समान रूप से वितरित करना, सामाजिक समानता को बढ़ावा देने में मदद कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, मनरेगा जैसी योजनाओं ने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाए, जिससे आय में वृद्धि हुई और सामाजिक समानता में कुछ हद तक सुधार हुआ। इसके साथ ही, आयुष्मान भारत योजना ने स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच को बढ़ाया, जिससे गरीब वर्ग के लोग स्वास्थ्य के लाभ उठा सके।

लैंगिक समानता का विश्लेषण – लैंगिक समानता का अध्ययन इस शोध में महत्वपूर्ण था। यह पाया गया कि आर्थिक विकास के साथ महिलाओं की स्थिति में सुधार होने की बजाय, कई जगहों पर उनकी सामाजिक स्थिति में कमी आई है। महिला सशक्तिकरण योजनाओं और कार्यक्रमों के बावजूद, महिलाएं अक्सर आर्थिक अवसरों से वंचित रहती हैं। यह विश्लेषण इस मुद्दे को हल करने के लिए विभिन्न नीतियों के प्रभाव का मूल्यांकन करता है।

क्षेत्रीय असमानताएं और नीति सुधार – शोध में विभिन्न क्षेत्रों (जैसे शहरी और ग्रामीण) के बीच असमानताओं का गहराई से अध्ययन किया गया। पाया गया कि कुछ राज्यों में बेहतर नीतियों और प्रशासन के कारण आर्थिक विकास और सामाजिक समानता में तेजी से सुधार हुआ, जबकि अन्य राज्यों में नीतियों की कमी और प्रशासनिक विफलता ने इन दोनों के बीच अंतर को और बढ़ाया।

प्रस्तुत शोध अध्ययन से प्राप्त परिणाम के आधार पर कह सकते है कि आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच एक जटिल संबंध है। केवल आर्थिक वृद्धि से सामाजिक समानता नहीं आ सकती, इसके लिए समावेशी नीतियां, सामाजिक सुरक्षा योजनाएं और शिक्षा तथा स्वास्थ्य की समान पहुंच आवश्यक हैं। इसके अलावा, लैंगिक और क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करने के लिए विशेष प्रयासों की आवश्यकता है। यदि इन पहलुओं को सही तरीके से संबोधित किया जाए, तो समाज में स्थिरता, समृद्धि और समानता सुनिश्चित की जा सकती है।

शोध परिणाम – इस शोध का मुख्य उद्देश्य आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच के रिश्ते को समझना और यह पहचानना था कि इनमें से कौन सी चुनौतियां मौजूद हैं और इनमें सुधार के कौन से अवसर उपलब्ध हैं। शोध परिणामों ने इस जटिल विषय पर कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष दिए हैं :–

आर्थिक विकास और आय असमानता – आर्थिक विकास के दौरान आय असमानता में वृद्धि होती है, खासकर तब जब विकास समावेशी नहीं होता। प्रारंभ में उच्च वर्गों को ज्यादा लाभ होने के कारण गरीबी और अमीरी के बीच अंतर बढ़ता है। हालांकि, जैसे–जैसे विकास प्रक्रिया परिपक्व होती है, विकास के लाभों का वितरण बेहतर होने लगता है, जिससे असमानता में कमी आ सकती है। उदाहरण के तौर पर, भारत में 2000 के दशक के पहले और बाद के वर्षों में विकास दर में वृद्धि हुई, लेकिन सामाजिक असमानता, जैसे गिनी सूचकांक, में मामूली बढ़ोतरी देखी गई।

समाज में शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार की असमानताएं – आर्थिक विकास के बावजूद समाज के विभिन्न वर्गों में शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के अवसरों में असमानता बनी रहती है। शहरी क्षेत्रों में बेहतर स्वास्थ्य और शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध हैं, जबकि ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में इनकी कमी है। इस असमानता को कम करने के लिए समावेशी नीतियों की आवश्यकता है। शोध में पाया गया कि गरीब और ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच और शिक्षा की गुणवत्तता बहुत खराब है, जिसके कारण सामाजिक असमानता बनी रहती है।

लैंगिक समानता की चुनौतियां – लैंगिक समानता की दिशा में भी आर्थिक विकास पर्याप्त बदलाव नहीं ला सका है। हालांकि, महिला सशक्तिकरण योजनाओं और शिक्षा कार्यक्रमों ने सकारात्मक बदलाव लाने की कोशिश की है, लेकिन महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक अवसरों में समान भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए और अधिक प्रयास किए जाने चाहिए। हालांकि महिला सशक्तिकरण योजनाओं ने ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की आय में वृद्धि की है, लेकिन लैंगिक असमानता अब भी शिक्षा और रोजगार क्षेत्रों में देखी जाती है।

समावेशी नीतियों और योजनाओं का प्रभाव – शोध ने यह दर्शाया कि समावेशी नीतियों और योजनाओं जैसे मनरेगा, आयुष्मान भारत और स्वच्छ भारत अभियान ने ग्रामीण और गरीब समुदायों में आय और स्वास्थ्य में सुधार किया है। इन योजनाओं ने सामाजिक समानता बढ़ाने में योगदान दिया है, लेकिन इनका प्रभाव अधिक स्थायी और व्यापक बनाने के लिए इनकी कार्यान्वयन में सुधार की आवश्यकता है। मनरेगा योजना ने ग्रामीण

क्षेत्रों में रोजगार का सृजन किया, जबकि आयुष्मान भारत योजना ने गरीबों को स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान की, जिससे सामाजिक समानता में सुधार हुआ।

क्षेत्रीय और शहरी-ग्रामीण असमानताएं – शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच आर्थिक विकास और सामाजिक समानता में बड़ा अंतर पाया गया। शहरी क्षेत्रों में बेहतर बुनियादी ढांचा और रोजगार के अवसर होने के कारण, वहां का विकास और जीवन स्तर ग्रामीण क्षेत्रों से कहीं बेहतर है। इसके लिए विशेष नीतियां और योजनाएं बनानी चाहिए जो ग्रामीण इलाकों में विकास को प्रोत्साहित करें। शहरी क्षेत्रों में साक्षरता दर और स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता बहुत बेहतर है, जबकि ग्रामीण इलाकों में यह स्थितियां बहुत खराब हैं।

शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच गहरे संबंध हैं, और इन दोनों को एक साथ बढ़ावा देने के लिए समावेशी नीतियां, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की बेहतर पहुंच, और लैंगिक समानता पर ध्यान देना आवश्यक है। विशेष रूप से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में सुधार के लिए योजनाओं की अधिक प्रभावी कार्यान्वयन की आवश्यकता है। यदि ये कदम सही दिशा में उठाए जाते हैं, तो आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच संतुलन स्थापित किया जा सकता है, जो समृद्ध और समान समाज की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा।

शोध परिकल्पना सत्यापन – इस शोध में दो प्रमुख परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया था, जो आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच के रिश्ते को समझने के लिए निर्धारित की गई थीं। निम्नलिखित परिकल्पनाओं का सत्यापन इस शोध के परिणामों से किया गया :-

आर्थिक विकास सामाजिक समानता को प्रभावित करता है

परिकल्पना – आर्थिक विकास यदि समावेशी न हो, तो आय असमानता और संसाधनों के असमान वितरण को बढ़ावा देता है, जिससे सामाजिक असमानता गहराती है।

सत्यापन – शोध के परिणामों ने यह दिखाया कि जब आर्थिक विकास समावेशी नहीं होता और केवल कुछ वर्गों या क्षेत्रों तक सीमित रहता है, तो आय असमानता बढ़ती है और इसके कारण सामाजिक असमानता भी गहरी होती है। उदाहरण के तौर पर, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच असमानताएं स्पष्ट रूप से देखी गईं। शहरी क्षेत्रों में उच्च शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के अवसर उपलब्ध थे, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी भारी कमी थी। इसके अलावा, अगर आर्थिक विकास के दौरान केवल उच्च वर्ग को लाभ होता है, तो इससे समाज के अन्य वर्गों में असंतोष और असमानता की भावना बढ़ सकती है। यह परिकल्पना सत्य है, क्योंकि असमान आर्थिक विकास सामाजिक समानता पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

समावेशी नीतियां आर्थिक विकास और सामाजिक समानता में संतुलन बना सकती हैं।

परिकल्पना – समावेशी विकास नीतियां, जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार के अवसर प्रदान करना, आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच सामंजस्य स्थापित कर सकती हैं।

सत्यापन – शोध ने यह दिखाया कि समावेशी नीतियां जैसे मनरेगा, आयुष्मान भारत योजना, और स्वच्छ भारत मिशन ने गरीब और ग्रामीण वर्गों को सीधे लाभ पहुँचाया, जिससे उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ। विशेष रूप से, मनरेगा ने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन किया और आय असमानता को कुछ हद तक कम किया। आयुष्मान भारत योजना ने गरीबों को स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराई, जिससे उनके जीवन स्तर में सुधार हुआ। इन नीतियों से स्पष्ट रूप से यह साबित हुआ कि समावेशी नीतियों के माध्यम से आर्थिक विकास और सामाजिक समानता में संतुलन स्थापित किया जा सकता है। यह परिकल्पना सत्य है, क्योंकि समावेशी नीतियां सामाजिक समानता को बढ़ावा देने और आर्थिक विकास को समावेशी बनाने में प्रभावी साबित होती हैं।

शोध ने दोनों परिकल्पनाओं का समर्थन किया है। आर्थिक विकास यदि समावेशी नहीं होता, तो यह सामाजिक समानता में कमी ला सकता है, और समावेशी नीतियों के माध्यम से आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच संतुलन संभव है। इसके परिणामस्वरूप, यह पुष्टि होती है कि सामाजिक समानता को बढ़ावा देने के लिए समावेशी विकास नीतियों का पालन करना अनिवार्य है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि आर्थिक विकास और सामाजिक समानता एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, और इन दोनों के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए समावेशी नीतियों और योजनाओं का कार्यान्वयन महत्वपूर्ण है। आर्थिक विकास केवल तभी स्थिर और समृद्ध हो सकता है जब समाज के सभी वर्गों को समान अवसर प्राप्त हों। इस शोध ने यह भी सुझाव दिया कि लैंगिक और क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करने के लिए विशेष नीतियों की आवश्यकता है। अगर इन नीतियों का सही तरीके से कार्यान्वयन किया जाए, तो सामाजिक समानता को बढ़ावा दिया जा सकता है और विकास के लाभ सभी वर्गों तक पहुंच सकते हैं।

सुझाव – आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच संतुलन स्थापित करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं :-

1. सरकारों और नीति निर्धारकों को समावेशी नीतियों को प्राथमिकता देनी चाहिए, जो सभी वर्गों और क्षेत्रों को समान अवसर प्रदान करें। यह सुनिश्चित करने के लिए कि विकास का लाभ समाज के हर वर्ग तक पहुंचे, शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार के अवसरों का समान वितरण आवश्यक है।
2. महिलाओं के आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण के लिए ठोस कदम उठाए जाने चाहिए। शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार के अवसरों में महिलाओं के लिए समान अधिकार सुनिश्चित करना आवश्यक है।
3. शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच अंतर को कम करने के लिए विशेष योजनाएं बनाई जानी चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे में सुधार, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच बढ़ाना, और रोजगार सृजन के अवसर प्रदान करना अत्यंत आवश्यक है।
4. शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में निवेश बढ़ाना चाहिए, ताकि सभी वर्गों को बेहतर शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाएं मिल सकें। शिक्षा के क्षेत्र में विशेष ध्यान गरीब और पिछड़े वर्गों की शिक्षा पर दिया जाना चाहिए।
5. कर नीति को अधिक प्रगतिशील बनाया जाना चाहिए ताकि उच्च आय वर्ग से अधिक कर लिया जा सके और इसे गरीब वर्ग की कल्याण योजनाओं में निवेश किया जा सके। इससे आय असमानता को कम करने में मदद मिल सकती है।
6. सरकार को एक मजबूत सामाजिक सुरक्षा नेटवर्क बनाना चाहिए, जो गरीब और जरूरतमंद वर्गों को आर्थिक संकट के दौरान मदद प्रदान करे। यह नेटवर्क न केवल गरीबी में कमी लाने में मदद करेगा, बल्कि सामाजिक असमानता को भी कम करेगा।
7. आर्थिक विकास को गति देने और समानता सुनिश्चित करने के लिए

नवाचार और तकनीकी विकास को बढ़ावा देना चाहिए। नई तकनीकों का उपयोग करके ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं, और शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच को सुधार सकते हैं।

8. सामाजिक समानता और विकास की दिशा में लोगों को जागरूक करने की आवश्यकता है। समुदायों और नागरिक समाज के संगठन को अधिक सक्रिय रूप से नीतियों के निर्माण और कार्यान्वयन में शामिल किया जाना चाहिए।

आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच संतुलन स्थापित करना चुनौतीपूर्ण है, लेकिन समावेशी नीतियों, लैंगिक समानता, और शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं की समान पहुंच सुनिश्चित करके इसे संभव बनाया जा सकता है। इन सुझावों का पालन करने से न केवल सामाजिक समानता में सुधार होगा, बल्कि आर्थिक विकास भी समावेशी और सशक्त होगा, जिससे समाज के सभी वर्गों को बेहतर जीवन जीने का अवसर मिलेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Amartya Sen (1999) ***आर्थिक विकास और स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय, असमानता,*** Development as Freedom, ISBN: 978-0198297581, Page No.: 432.
2. Dasgupta, Partha (1993) ***सामाजिक भलाई, गरीबी, असमानता, जीवन स्तर,*** Book: An Inquiry into Well-Being and Destitution ISBN: 978-0198287025, Page No.: 400.
3. Kuznets, Simon (1955) ***आर्थिक विकास और आय असमानता के बीच संबंध,*** Paper: Economic Growth and Income Inequality, Journal: The American Economic Review, 45(1), 1-28, ISBN: N/A (Journal Article), Page No.: 28.
4. Myrdal, Gunnar (1968) ***एशियाई देशों में गरीबी, आर्थिक असमानता और विकास,*** Book: Asian Drama: An Inquiry into the Poverty of Nations, ISBN: 978-0394709817, Page No.: 2,338.
5. Piketty, Thomas (2014) ***आय असमानता, पूंजी का संचय, और आर्थिक संरचनाएं,*** Book: Capital in the Twenty-First Century, ISBN: 978-0674430006, Page No.: 696.
6. Rawls, John (1971) ***न्याय, समानता, और सामाजिक अनुबंध,*** Book: A Theory of Justice, ISBN: 978-0674000780, Page No.: 624.
7. Sachs, Jeffrey D. (2005) ***गरीबी, विकास, और आर्थिक संभावनाएं,*** Book: The End of Poverty: Economic Possibilities for Our Time, ISBN: 978-0143036586, Page No.: 416.
8. Sen, Amartya (2000) ***सामाजिक बहिष्करण, विकास, और असमानता***, Book: Social Exclusion: Concept, Application, and Scrutiny, ISBN: 978-9715613836, Page No.: 106.
9. Stiglitz, Joseph E. (2002) ***वैश्वीकरण, असमानता, और आर्थिक नीति,*** Book: Globalization and Its Discontents, ISBN: 978-0393324393, Page No.: 296.
10. World Bank (2000) ***गरीबी, सामाजिक समानता, और विकास नीति***, Report: World Development Report 2000/2001: Attacking Poverty, ISBN: 978-0195215911, Page No.: 296.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Artificial Intelligence and Its Impact on Labor Productivity and Employment

Dr. Kapil Kumar Chandra* Dr. Sunil Kumar Kumeti**

*Assistant Professor (Guest) C.P.D. Govt. College, Pithora, Mahasamund (C.G.) INDIA
** Assistant Professor, School of Studies in Economics Pt. Ravishankar Shukla University, Raipur (C.G.) INDIA

Abstract : The dynamics of labour productivity and employment across sectors are being reshaped as a result of the emergence of artificial intelligence (AI), which has emerged as a disruptive force today. This study investigates the influence that artificial intelligence (AI) has had on the worldwide labour market, which has both positive and negative aspects. On the one hand, automation and intelligent systems that are driven by artificial intelligence may boost productivity by simplifying operations, lowering operating costs, and allowing new solutions in the areas of manufacturing, services, and logistics. The incorporation of artificial intelligence, on the other hand, raises worries about the displacement of jobs, gaps in skill sets, and pay heterogeneity. In spite of the fact that repetitive and regular work are becoming increasingly mechanised, which may result in possible joblessness in some industries, new job possibilities are emerging in the fields of artificial intelligence research, data analysis, and maintenance. On the other hand, these positions require more sophisticated abilities and ongoing training. Specifically, the report emphasizes the significance of proactive measures, such as labour reskilling, social safety nets, and ethical AI governance, in order to guarantee that everyone would benefit equally from breakthroughs in artificial intelligence. The ability of industries to achieve sustainable development, reduce the number of job losses, and improve economic resilience may be achieved via the promotion of a synergistic approach between human labour and artificial intelligence technology. This abstract highlights the fact that there is a crucial need for joint efforts across governments, industries, and educational institutions in order to harness the promise of artificial intelligence while reducing the issues that it poses for the labour market.
Keywords: Artificial intelligence, Employment, Labor market, Productivity.

Introduction - Artificial intelligence (AI) is becoming an essential factor in driving innovation, efficiency, and competitiveness, and it is currently undergoing a remarkable transformation in the global economic environment. The use of artificial intelligence technology has spread throughout many different industries, including healthcare, manufacturing, retail, and logistics. These technologies have the ability to automate repetitive processes and provide complex decision-making capabilities. These technological improvements have resulted in a huge increase in labour productivity, which has enabled organisations to optimise their operations, lower their expenses, and provide superior services. Nevertheless, the fast adoption of artificial intelligence has also spawned considerable arguments over the influence that technology would have on employment. At the same time as artificial intelligence (AI) presents potential for new work positions, notably in the fields of AI development, data science, and system maintenance, it concurrently undermines existing employment patterns by automating professions that were previously dependent on human labour. The existence of this duality gives rise to important problems concerning the future of labour, the distribution of money, and the readiness of the workforce. There is a need for a thorough investigation of the implications that artificial intelligence has on labour productivity and employment as it continues to develop. Among the most significant causes for worry are the displacement of workers with low levels of expertise, the formation of a polarizedlabour market, and the difficulties associated with providing the workforce with the skills essential for an economy driven by artificial intelligence. In this study, we will investigate the myriad ways in which artificial intelligence (AI) is affecting labour productivity and employment. The purpose of this study is to investigate the ways in which artificial intelligence (AI) boosts productivity across a variety of industries, evaluate the difficulties and possibilities that it provides to the workforce, and offer insights into policies and tactics that help reduce the disruptive impacts of AI. This research endeavours to contribute to a more well-rounded understanding of the role that artificial intelligence (AI) will play in influencing the future of work and its ability to create sustainable economic growth by addressing the problems that have been raised.

Literature Review

There have been a great number of studies that have investigated how artificial intelligence technology can improve worker productivity. Some people believe that artificial intelligence, which is a subset of the larger trend of digital technology, has the potential to significantly boost productivity by automating mundane jobs and enabling more effective utilisation of human resources. According to Chui et al. (2018), the capacity of artificial intelligence to handle enormous volumes of data at rapid rates leads to improvements in decision-making, acceleration of production cycles, and reduction of operating costs in industries such as manufacturing, logistics, and healthcare in particular. The implementation of artificial intelligence in industries such as retail and logistics may lead to productivity improvements of up to thirty percent, according to a research published by McKinsey (2017). Proposed the idea of "job polarisation," which suggests that artificial intelligence and automation technologies have a disproportionate impact on low- and middle-skill employment(MehdiAbid et al., 2024), In a similar vein, Bessen (2019) discovered that although automation may result in the loss of jobs in some industries, it may also result in the creation of new occupations that need a higher level of expertise and a more specialised knowledge base. According to the World Economic Forum (2020), there is anticipated to be a rise in the need for data scientists, software engineers, and machine learning specialists. On the other hand, the demand for positions such as manual labourers and clerks is anticipated to decrease.In the following portion of this paper, we will go deeper into these topics and will offer some suggestions for effectively managing the transition to a labour market driven by artificial intelligence.

Research Methodology: A mixed-methods approach is utilised in this research paper in order to investigate the influence that Artificial Intelligence (AI) has on the levels of labour productivity and employment. In order to give a full examination of the matter, the research incorporates both qualitative and quantitative research approaches. Secondary data analysis from academic sources, industry reports, and government publications are included in the approach. The technique also involves the collecting of data through the use of interviews, case studies, and surveys. A comparative case study methodology, in conjunction with statistical analysis is used in the research. .

Results and Discussion: In the next part, the findings that were obtained from the survey, interviews, and case study analyses are presented. In order to give insights into the influence that Artificial Intelligence (AI) has on labour productivity and employment, the data is summarised through the use of tables and figures. Following this, the findings are evaluated in the context of the study objectives, which include determining how artificial intelligence affects labour productivity, job displacement, skill transfers, and the overall economic impact on a variety of industries.

Survey Results: A total of 500 employees from five different industries (100 from each industry) participated in the study. These industries included manufacturing, healthcare, retail, finance, and technology. There were three primary categories that were the focus of the survey: perceived changes in labour productivity, job displacement, and skill needs as a result of the use of artificial intelligence.

Table 1 & Figure 1 (see in last page)

The use of artificial intelligence results in a considerable rise in labour productivity, notably in the technology and finance sectors, where sixty percent of respondents and fifty percent of respondents, respectively, indicated a significant boost in productivity. A considerable increase in productivity was also reported by a large number of respondents (40%) in the industrial sector. This increase was primarily attributed to the use of AI-driven automation in production lines. Generally speaking, artificial intelligence was utilised for administrative work, diagnoses, and customer service, which led to minor boosts in productivity in the retail and healthcare industries.

The next part of the survey examined job displacement due to AI, as well as new jobcategories that emerged in AI-adopting industries.

Table 2 & Figure 2 (see in last page)

It is most noticeable because artificial intelligence has caused a sixty percent loss of jobs in the manufacturing sector, along with large and moderate losses. The automation of repetitive operations, such as those performed on assembly lines, is becoming increasingly common, and this is consistent with. The healthcare and technology industries, on the other hand, show very low levels of displacement (10% and 5%, respectively). This suggests that artificial intelligence is more frequently utilised to aid and supplement human workers, particularly in domains that demand high levels of knowledge. It is interesting to note that the financial sector appears to be seeing both a moderate amount of displacement and a considerable creation of new positions in areas like as data analysis, the development of AI models, and compliance responsibilities relating to AI.

Shifts in Skill Requirements: In addition, the poll investigated the kinds of abilities that have grown more significant as a result of the use of AI.

Table 3 & Figure 3 (see in last page)

It is a well-established pattern that technological skills, particularly in the fields of artificial intelligence and data science, have grown increasingly crucial across all industries. The biggest percentages of respondents that reported a need for additional technical competence were found in the technology and finance industries, with fifty percent and forty-five percent, respectively. The healthcare and retail industries, on the other hand, place a greater emphasis on human-centric abilities such as leadership and communication. This is because AI is increasingly being used as a tool to supplement human contact rather than to

replace it. This is a reflection of a larger trend in which creative and interpersonal positions continue to flourish in industries where human empathy and decision-making play a vital role.

Table 4 (see in last page)

The roles that are most likely to be affected by job displacement as a result of advancements in artificial intelligence are highlighted in Table 4, along with the new roles that will replace those positions. Artificial intelligence is eliminating professions that need low levels of expertise in industries such as manufacturing, banking, and technology. However, it is also producing specialised high-skill employment that are focused on AI maintenance, data analysis, and system optimisation.

Table 5 & Figure 4 (see in last page)

The entire economic impact of artificial intelligence (AI) on labour productivity, job displacement, job creation, and skill changes is summarised in Table 5. This table reflects an optimistic perspective on productivity increases, but it also acknowledges the negative impact that AI will have on employment and the necessity of reskilling and upskilling the workforce.

Conclusion: The employment and productivity environment is being transformed by the integration of Artificial Intelligence (AI) into numerous industries, which is producing both good and negative consequences. Results show that data processing and AI-driven automation have increased efficiency, decreased mistakes, and decreased operating costs across a variety of industries, with manufacturing, technology, and finance seeing the most marked gains. On the other hand, there are concerns about job loss due to AI adoption that go hand in hand with these productivity increases. There are new prospects in fields including data analysis, machine learning research, and AI maintenance, in addition to the automation of regular work and the displacement of some manual employment. Changes to necessary skill sets are yet another important facet of AI implementation. There is a growing need for professionals with AI, data science, and associated technical skills as more and more sectors use AI technology. Communication, leadership, and problem-solving abilities, which centre on people, are still highly valued, especially in industries like retail and healthcare. While AI is changing the way people work, the findings highlight the need for programs to help people reskill and improve their existing abilities so they can adapt to the new job market. From an economic perspective, broad use of AI has the ability to spur innovation and prosperity, but it also brings up worries about inequality spreading and the possibility of employment polarisation. To make sure everyone has a fair shot at making it through the shift to an AI-driven economy, lawmakers should focus on reskilling programs, job creation efforts, and social safety nets. Finally, there are several ways in which AI will affect employment and labour productivity. Although AI presents great potential for boosting productivity and economic growth, it also presents some problems that need deliberate and anticipatory responses. It is critical to strike a balance between technical progress, worker protection, education, and inclusive policy-making if we want to reap the benefits of AI while minimising its negative impacts. This is the only way AI can help shape a workforce of the future that is inclusive of people from all walks of life and all kinds of industries.

References:-

1. Graetz, G. and G. Michaels (2018). Robots at Work, The Review of Economics and Statistics, 100(5), 753-768.
2. Aghion, P., C. Antonin, S. Bunel and X. Jaravel (2023). The Effects of Automation on Labor Demand. A Survey of the Recent Literature, in L. Y. Ing and G. M. Grossman (eds.), Robots and AI. A New Economic Era, Routledge.
3. Jurkat, A., R. Klump and F. Schneider (2023). Robots and Wages: A MetaAnalysis, Econstor Working Paper, ZBW – Leibniz Information Centre for Economics.
4. Czarnitzki, D., G. P.Fernández and C. Rammer (2023). Artificial intelligence and firm-level productivity, Journal of Economic Behavior and Organization, 211, 188-205.
5. Calvino, F. and L. Fontanelli (2023). A portrait of AI adopters across countries: Firm characteristics, assets' complementarities and productivity, OECD Science, Technology and Industry Working Papers, 2023/02.
6. Chui, M., Manyika, J., &Miremadi, M. (2018). Where machines could replace humans—and where they can't (yet). McKinsey Quarterly. This article explores how AI and automation are impacting different industries, with a focus on labor productivity and job displacement.
7. Frey, C. B., & Osborne, M. A. (2017). The future of employment: How susceptible are jobs to computerization? Technological Forecasting and Social Change, 114, 254-280. This paper analyzes the susceptibility of various occupations to automation and its potential impact on employment.
8. Brynjolfsson, E., & McAfee, A. (2017). Machine, Platform, Crowd: Harnessing Our Digital Future. W. W. Norton & Company. This book further explores the implications of AI, machine learning, and platforms for the future of work and productivity.
9. Arntz, M., Gregory, T., &Zierahn, U. (2016). The Risk of Automation for Jobs in OECD Countries: A Comparative Analysis. OECD Social, Employment and Migration Working Papers, No. 189. This report evaluates the potential job displacement due to automation and its impact on different countries.
10. Autor, D. H. (2015). Why Are There Still So Many Jobs? The History and Future of Workplace Automation. Journal of Economic Perspectives, 29(3), 3-30. This paper explores the ongoing relationship between technology, automation, and job creation, highlighting the dynamic nature of labor markets.

11. Chui, M., & George, M. (2017). The impact of AI on the workforce: How to navigate the future of work. McKinsey & Company. This McKinsey report examines the changing landscape of the workforce as AI and automation take hold, and the role of reskilling in maintaining employability.
12. World Economic Forum. (2020). The Future of Jobs Report 2020. Geneva: World Economic Forum. This report provides an in-depth analysis of how AI and other technologies are shaping the labor market, including the emergence of new job roles and skills needed for the future.
13. Bessen, J. E. (2019). AI and Jobs: The Role of Demand. Economics of Innovation and New Technology, 28(5), 503-521. This article examines how AI could influence labor demand and the creation of new job opportunities in the context of automation and productivity.

Table 1:Changes in perceptions of labour productivity as a result of the use of AI

Sector	Significant Increase in Productivity (%)	Moderate Increase in Productivity (%)	No Change (%)	Decrease in Productivity (%)
Manufacturing	40%	35%	20%	5%
Healthcare	25%	40%	30%	5%
Retail	45%	30%	20%	5%
Finance	50%	40%	5%	5%
Technology	60%	30%	10%	0%

Source: Authors Calculation using Primary Data.

Figure 1:Changes in perceptions of labour productivity as a result of the use of AI

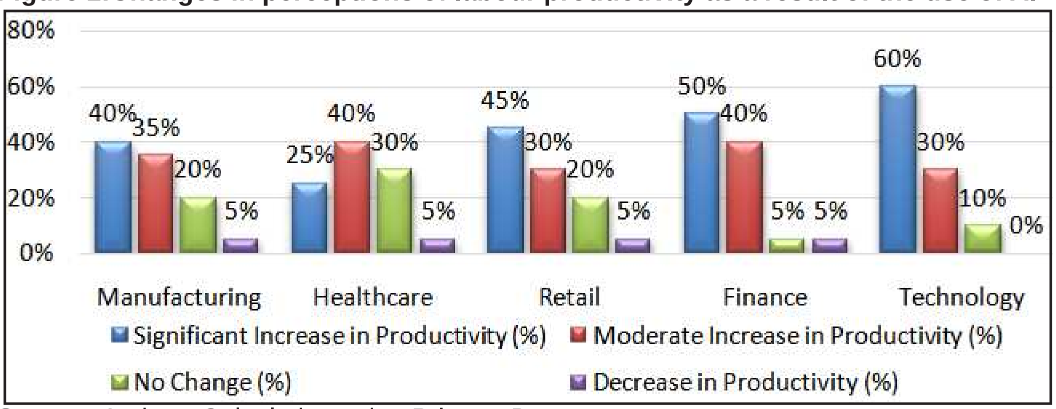

Source: Authors Calculation using Primary Data.

Table 2: Job Displacement Due to AI Adoption

Sector	Significant Job Losses (%)	Moderate Job Losses (%)	No Job Losses (%)	Creation of New Jobs (%)
Manufacturing	25%	35%	40%	30%
Healthcare	10%	15%	75%	20%
Retail	20%	25%	55%	25%
Finance	15%	20%	65%	40%
Technology	5%	10%	85%	50%

Source: Authors Calculation using Primary Data.

Figure 2: Job Displacement Due to AI Adoption

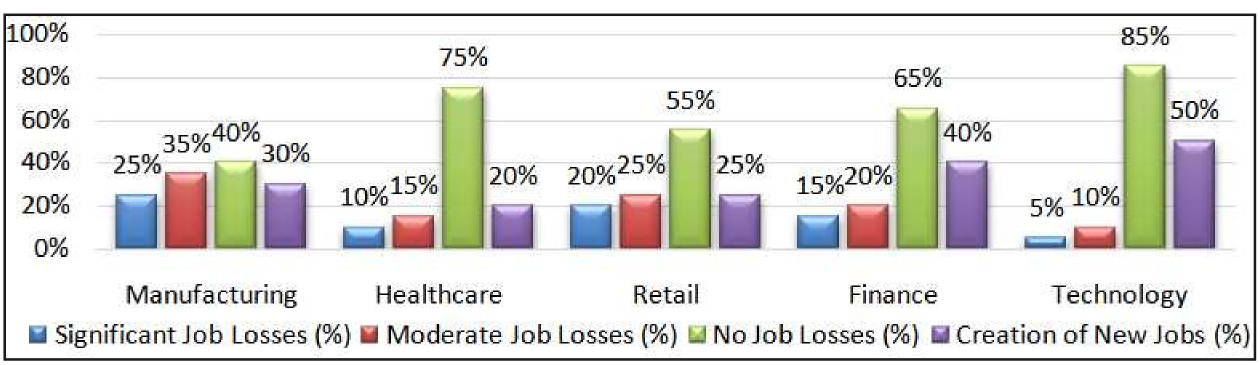

Source: Authors Calculation using Primary Data.

Table 3: Alteration in Skill Requirements as a Result of the Adoption of AI

Sector	Technical Skills (e.g., AI, Data Science)	Creative Skills (e.g., Problem-solving, Design)	Human-Centric Skills (e.g., Communication, Leadership)	No Change in Skills Needed
Manufacturing	30%	25%	15%	30%
Healthcare	25%	20%	30%	25%
Retail	35%	20%	25%	20%
Finance	45%	25%	20%	10%
Technology	50%	20%	15%	15%

Source: Authors Calculation using Primary Data.

Figure 3: Alteration in Skill Requirements as a Result of the Adoption of AI

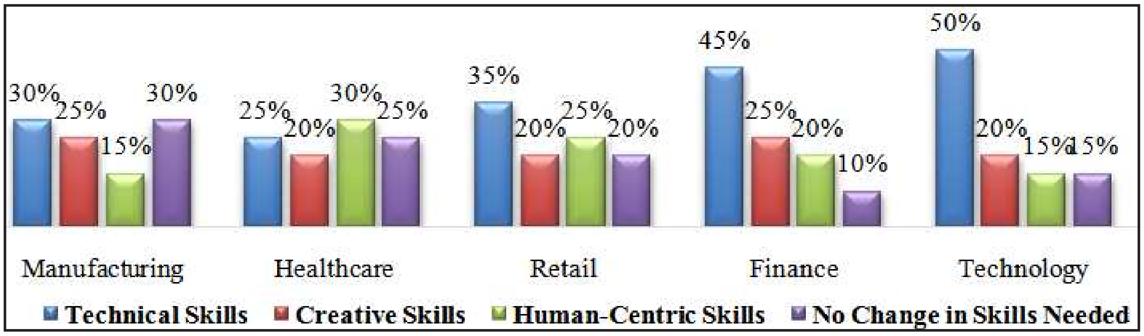

Source: Authors Calculation using Primary Data.

Table 4: Sector-Specific Insights into Job Creation and Displacement

Sector	Roles Most Affected by Displacement	Emerging Roles Due to AI
Manufacturing	Assembly line workers, packers	Robotics technicians, AI systems maintenance, data analysts
Healthcare	Administrative staff, medical coders	AI-assisted diagnostic specialists, telemedicine facilitators
Retail	Cashiers, customer service agents	AI-driven customer experience managers, data analysts
Finance	Bank tellers, data entry clerks	AI compliance officers, data scientists, AI model developers
Technology	None reported	AI trainers, algorithm auditors, AI solution architects

Source: Adapted from *World Economic Forum Future of Jobs Report 2023*, *McKinsey Global Institute Report on AI Workforce Dynamics*, or other sectoral AI studies.

Table 5: Overall Economic Impact of AI on Labor Productivity and Employment

Impact Area	Positive Impact (%)	Negative Impact (%)	Neutral Impact (%)
Labor Productivity	70%	10%	20%
Job Displacement	30%	40%	30%
Job Creation	50%	20%	30%
Skill Shifts	60%	10%	30%

Source: Authors Calculation using Primary Data.

Figure4: Overall Economic Impact of AI on Labor Productivity and Employment

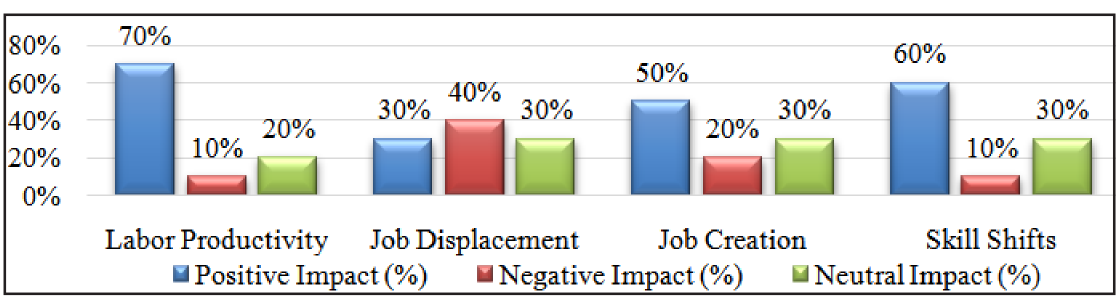

Source: Authors Calculation using Primary Data.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Exploring Women's Consciousness and Challenges in the Literary Works of Arundhati Roy: A Feminist Discourse on Modern Literature

Mr. Vipul Pandya*

***Research Scholar**, **NIMS University Rajasthan, Jaipur (Raj.) INDIA**

Abstract : This paper examines the portrayal of women's experiences and challenges in the works of Arundhati Roy, emphasizing her feminist perspectives. Through an analysis of *The God of Small Things* and *The Ministry of Utmost Happiness*, along with essays such as *The Algebra of Infinite Justice*, Roy's critique of systemic injustices like patriarchy and caste is brought to light. Her narratives present women as resilient and capable, even in the face of significant hardships, while addressing the compounded struggles arising from caste and class inequalities.

Roy's literature highlights the intersectionality of caste, class, and gender, offering a powerful critique of the social structures that perpetuate oppression. By addressing issues such as gender discrimination and societal expectations, her works contribute meaningfully to contemporary feminist discourse. The study underscores Roy's ability to portray women not merely as victims but as active agents of change, navigating personal and systemic challenges with strength and determination. Her contributions to feminist literature are both insightful and transformative, advocating for a more inclusive and equitable society.

Keywords - Women's Consciousness, Feminism, Intersectionality, Modern Literature, Caste, Patriarchy, Resistance, Socio-Political Critique.

Introduction - In modern literature the exploration of women's consciousness has emerged as a vital thematic thread, reflecting evolving perspectives on gender dynamics, identity and societal roles. Arundhati Roy an acclaimed Indian author and activist, exemplifies this trend through her works, which delve deeply into the lives and struggles of women in contemporary India. Her narratives, characterized by lyrical prose and incisive socio-political critique, foreground the challenges women face in patriarchal societies, while celebrating their resilience and agency. This paper explores how Roy's literature serves as a medium for feminist discourse, particularly focusing on the intersection of gender with caste, class and environmental concerns. By analyzing key themes in *The God of Small Things*, *The Ministry of Utmost Happiness* and her non-fiction collections, this study sheds light on the ways Arundhati Roy articulates the struggles and consciousness of women, providing a lens to critique and transform societal norms.

In *The God of Small Things* and her essays, Arundhati Roy highlights the struggles of women in a society that values men more and punishes women harshly for defying norms. The novel shows the unfair double standards women face, where their mistakes or choices are judged more harshly than men's. Roy's essays also focus on issues like domestic violence, sexual harassment, and the lack of economic rights for women, which she discusses with strong emotion and clarity. Her writing not only portrays the suffering of women but also their strength and courage in challenging these injustices. By examining Roy's works, we can understand the changing role of women in India and the connection between her stories and the real-world struggles they reflect. This chapter will explore these themes, beginning with how women are portrayed in Roy's literature and the challenges they face.

Objectives:-

1. To analyze the depiction of women's consciousness and struggles in Arundhati Roy's literature.
2. To explore the feminist themes and socio-political critiques embedded in Arundhati Roy's narratives.
3. To examine the intersectionality of gender, caste, and class in Roy's portrayal of women.
4. To highlight Arundhati Roy's contributions to feminist discourse and modern literature.

Arundhati Roy's works highlight the evolving consciousness of women, depicting their struggles for autonomy and identity within oppressive societal structures. In *The God of Small Things*, Ammu's resistance against societal norms, as a divorced woman and a mother, exemplifies the challenges women face when they deviate from traditional roles. Her forbidden love with Velutha, a Dalit man, underscores the intersectionality of gender and

caste, illustrating the compounded oppressions women endure. Similarly in *The Ministry of Utmost Happiness*, the protagonist Anjum, a hijra, challenges societal norms surrounding gender identity. Anjum's journey reflects the resilience and agency of marginalized individuals, expanding the discourse on women's consciousness to include transgender experiences.

Arundhati Roy's narratives are deeply feminist, critiquing patriarchal structures and advocating for gender equality. In *The God of Small Things*, Roy's portrayal of Ammu and Rahel reflects the societal constraints placed on women, while emphasizing their capacity for resistance and self-expression. Ammu's defiance against an abusive marriage and her subsequent ostracism highlight the double standards women face in patriarchal societies. In her non-fiction works, Roy critiques systemic oppressions that disproportionately affect women. Essays in *The Algebra of Infinite Justice* address issues such as globalization, environmental degradation, and militarization, revealing their gendered impacts. Roy's critique of neoliberal policies highlights how economic systems exploit women, particularly those from marginalized communities.

Arundhati Roy's literature provides a nuanced exploration of intersectionality, portraying how caste, class, and gender intersect to shape women's experiences. In *The God of Small Things*, the caste-based discrimination faced by Velutha and its impact on Ammu illustrates the inseparability of caste and gender oppression. Roy's focus on Dalit women in her essays further underscores this intersectionality, advocating for a more inclusive feminist discourse. In *The Ministry of Utmost Happiness*, Roy expands this exploration to include the struggles of hijras, Muslims, and other marginalized groups, portraying their resilience in the face of systemic oppression. Anjum's transformation of the Khwabgah into a sanctuary for the marginalized symbolizes the power of collective resistance and solidarity.

Arundhati Roy's female characters are not merely victims but agents of change. Ammu's choices, though met with severe consequences, represent a defiance of patriarchal norms. Anjum's establishment of the Jannat Guest House exemplifies how marginalized individuals can create spaces of acceptance and empowerment. Arundhati Roy's portrayal of grassroots movements, such as the Narmada Bachao Andolan in *The Cost of Living*, highlights women's leadership in resisting environmental exploitation and advocating for justice. Her feminist critique extends beyond individual struggles to systemic issues, urging readers to envision a more equitable society.

Conclusion: Arundhati Roy's literature offers a profound exploration of women's consciousness and challenges, blending personal narratives with socio-political critique. Her feminist discourse emphasizes the intersectionality of gender, caste, and class, portraying women as complex individuals navigating multifaceted oppressions. By foregrounding marginalized voices and advocating for systemic change, Roy contributes significantly to modern feminist literature, inspiring readers to critically engage with issues of gender and social justice. Her works serve as a powerful call to action, urging society to recognize and address the unique struggles faced by women and other marginalized groups.

References:-

1. Arundhati Roy : *The God of Small Things*. HarperCollins, 1997.
2. Arundhati Roy : *The Ministry of Utmost Happiness*. Penguin Books, 2017.
3. Arundhati Roy : *The Algebra of Infinite Justice*. Penguin Books, 2002.
4. Arundhati Roy : *The Cost of Living*. Modern Library, 1999.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत में भ्रष्टाचार की समस्या और समाधान

श्रीमती मिनाक्षी भार्गव*

* पीएचडी स्कॉलर, स्कूल ऑफ सोशल साइंस (समाजशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – भारत में भ्रष्टाचार की जड़े गहरी है। भ्रष्टाचार को मिटाने के लिए अनेक नेताओं ने बातें की लेकिन उसे मिटाने के लिए कोई सार्थक और सार्वजनीन उपाय नहीं खोजे जा रहे है। भ्रष्टाचार ये अनेक लोग लिप्त है। जिनमें नेताओं को लेकर अनेक पदाधिकारी संलग्न है। एक सरकारी दफ्तर में चपरासी से लेकर वरीष्ठ अधिकारी भ्रष्टाचार ने लगे रहते हैं। कई लोग जो इस कृत्य में पकड़ाये जाते है उन्हें दण्ड तो मिलता ही है। एक आयकर आयुक्त के निवास पर छापा मारते हुए सीबीआई अफसरों को लाखों रूपये अघोषित रूप से प्राप्त होते हैं। एक पुलिस इंस्पेक्टर के यहाँ 14 करोड़ से भी रूपये खर्च किये जाते हैं। ऐसे हजारों लोग भ्रष्टाचार की भेंट में निरन्तर जारी रहता आया है।

भ्रष्टाचार की अवधारणा – सरल शब्दों में भ्रष्टाचार शुद्ध रूप से रिश्वत का कार्य कहा जाता है। निजी लाभ के लिए सार्वजनिक शक्ति का इस प्रकार प्रयोग करना कानून तोड़ना हैं। मौरिस सैफेल (1983) ने कहा है कि भ्रष्टाचार वह व्यवहार है जो मानदण्डों और सार्वजनिक भूमिका निर्वाह के कर्तव्यों को संचालित करने या निजी लाभ के लिए पद के उचित उपयोग से विचलन होता है। जे नाय (1967:410) का कहना है कि भ्रष्टाचार निजी लाभों के लिए सार्वजनिक पद का दुरूपयोग दर्शाता है। अत: भ्रष्टाचार को इस प्रकार समझाया गया है कि 'यह आर्थिक या प्रतिष्ठा संबंधी लाभों की प्राप्ति के लिए सार्वजनिक भूमिका के प्रति औपचारिक कर्तव्यों से विचलन है।' इस प्रकार समाज में अनेक रूपों में फैला है।

नातेदारी भ्रष्टाचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आज नातेदारी व जातिगत निष्ठाएँ सार्वजनिक सेवकों के मस्तिष्क में पहले से रहती है। नातेदारी व जातियाँ ऐसे व्यवहार को, जो सार्वजनिक भूमिका के औरचारिक से विचलित होते हैं, जबकि भ्रष्ट लोग उसे पारिवारिक दायित्व मानते हैं।

भ्रष्टाचार का ऐतिहाविक परिप्रेक्ष्य – भ्रष्टाचार एक विश्वव्यापी तथ्य है। प्राचीन समय में मिस्र, बेबीलोनिया और हैव्यू समाजों में न्यायाधीश रिश्वत लेते थे रोम में सार्वजनिक पदों पर चुनाव के दौरान रिश्वत एक आम बात थी। फ्रांस में 15 वीं शताब्दी में इंग्लैंड को भ्रष्टाचार का गढ़ढा कहा जाता था। उन्नीसवीं शताब्दी में भी ब्रिटेन में भ्रष्टाचार इतना अधिक था कि गिब्बन ने संवैधानिक स्वतंत्रता का सबसे अचूक लक्षण कहा है।

भारत में कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में राज्य कोष के सरकारी कर्मचारियों द्वारा गबन किये जाने का सन्दर्भ दिया है। कर्मचारियों द्वारा अपनाये गये 50 प्रकार के गबन और अन्य भ्रष्ट तरीकों का वर्णन किया है। अशोक के शासन काल में भी भ्रष्टाचार के उल्लेख मिलते है।

मध्य युगीन समाज में भी भ्रष्टाचार कम नहीं था। कर वसूली में लगे अधिकारी जितनी ज्यादा वसूली कर धन संग्रह करते थे, उनकी प्रशंसा की जाती थी। ब्रिटिश शासनकाल में लिप्त थे। क्लाइव्ह और वारेन हेस्टिंगज तो इस कदर भ्रष्ट पाए गए कि उनके इंग्लैंड लौटने पर एक संसदीय समिति द्वारा उन पर मुकदमा चलाया गया और द्वितीय महायुद्ध के दौरान देश में भ्रष्टाचार के नए उत्पादनों को जन्म दिया।

युद्ध के दौरान लगाये गये प्रतिबंधों, नियंत्रणों और अभावों ने रिश्वत, भ्रष्टाचार और पक्षपात के पर्याप्त अवसर प्रदान किये गये। इसी प्रकार, 1962, 1967 में चुनावों के दौरान राजनैतिक व्यक्तियों ने रिश्वत लेकर अपनी जनता का विश्वास खो दिया था।

स्वतंत्र भारत में सबसे पहले 1949 में विध्य प्रदेश के कांग्रेसी नेता व तत्कालीन उद्योग मंत्री राव शिब बहादुर सिंह 25 हजार रूपये रिश्वत लेने के लिए जेल में गये। 1962 में कृष्णा मेनन पर 2000 जीपों की खरीदी के मामले में रिश्वत खाने का आरोप था। इंदिरा गांधी के शासनकाल में भी 20 करोड़ रूपयों आइत कंपनी के साथ विवादास्पद सौदे में 60 लाख रूपयों का नागर बाला मामला, मारुती उद्योग घोटाला, पनडुब्बी घोटाला आदि मामले प्रसिद्ध हुए। सन् 1980-90 के दशक में अनेक केन्द्रीय मंत्री और मुख्यमंत्री स्तर के राजनीतिज्ञों ने भी सत्ता के लालच में अनेक रिश्वत लेने के गंभीर अपराध उजागर हुए थे। मल्होत्रा: 1924/254-256 लोक सेवकों द्वारा किये गये भ्रष्टाचार के व्यवहार का उल्लेख किया गया है-

1. अधिकारिक हैसियत से किये गये कार्य के लिए पुरस्कार स्वरूप भेंट स्वीकार करना।
2. अवैध रूप से कोई भी वस्तु या आर्थिक लाभ प्राप्त करना।
3. सार्वजनिक सम्पत्ति का धोखाधड़ी से दुरूपयोग करना।
4. आय के ज्ञात संसाधनों से अधिक अनुपात में सम्पत्ति या आर्थिक संसाधनजुटाना।
5. अधिकारिक पद का दुरूपयोग करना।
6. सरकारी व्यवहार से संबंधित किसी व्यक्ति से कीमती वस्तु खरीदने के लिए धन उधार लेना यह मानते हुए कि उधार लिया धन वापस नहीं किया जाना है।
7. उच्च स्थिति या पद पर होने वाले व्यक्ति द्वारा ऐसे लोगों से भेंट या उपहार स्वीकार करना जिनके साथ उनके पद के नाते संबंध हों।
8. जानबूझकर नियमों की अनदेखी करते हुए देवकों या करो या आदि आर्थिक मामलों के भुगतान करने से बचने में नागरिकों की मदद करना।

9. किसी बहाने से किसी कर्तव्य को करने से इन्कार करना जिससे दूसरों का फाइदा होता हो जैसे अपराधी की मदद करने की नीयत से पुलिस अधिकारी को किसी मामले में पंजीकृत न करना आदि।

केन्द्र सरकार द्वारा प्रति वर्ष पेट्रोलियम ऊर्जा पर 30,000 से 40,000 करोड़, रूपये खर्च किये जाते है। प्राकृतिक गैस के आयात पर 40,00 करोड़ तथा 1998-99 में 24,000 करोड 1999-2000 में 54,000 करोड, 2000-2001 में 64,000 करोड़ रूपये खर्च किये जाते है। जिसमें मंत्रालय के उच्च पदस्थ अधिकारी दलाली के रूप में भारी मात्रा में भ्रष्टाचार करते हैं। सबसे अधिक भ्रष्ट व्यवहार पुलिस विभाग करता है। एक कान्स्टेबल से लेकर उच्च पदस्थ अधिकारी तक रिश्वत लेता है। भ्रष्टाचार केवल उच्च वर्ग तक ही सीमित नहीं हैं अपितु निम्न पदों पर कार्यरत अधिकारी भी भ्रष्टाचार में लिप्त पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए सहायक एवं कनिष्ट अभियंता, टेलिफोन, राज्य विद्युत परिषद के सदस्य, जल प्रदाय विभाग के अधिकारी, मध्यम और निम्नश्रेणी के अनेक मंत्रालय भ्रष्टाचार में संलम्न पाये जाते हैं। भेंट और उपहार भ्रष्टाचार का प्रमुख स्वरूप हैं। एक ठेकेदार किसी अभियंता को वा लेखा अधिकारी को बिल पास कराने के लिए तरह-तरह के उपहार, मिठाइयाँ और कीमती वस्तुएँ रिश्वत के रूप में भेंट चढ़ाई जाती है। रिश्वत और दलाली की दर प्रतिवर्ष चढ़ती जाती है।

भ्रष्टाचार के करण

1. **स्वहित वाले राजनैतिक वर्ग का अभ्युदय -** आजादी के बाद प्रथम दो दशकों में राजनैतिक अभिजात इस हद ईमानदारी, समर्पित और राष्ट्र बादी थे कि वे हमेशा देश की प्रगति के लिए कार्य करते थे। लेकिन चौथे आम चुनावों के बाद धींरे-धींरे भ्रष्टाचार में वृद्धि होती गई। ऐसेअभिजात वर्ग के लोगों ने नौकरशाही को भी अपने पदचिह्नों पर जाने के लिए प्रोत्साहित किया।

इस प्रकार राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों ने अपने पद और शक्ति दुरूपयोग अवैध लाभों के लिए प्रारंभ किया।

2. **सरकार की आर्थिक नीतियाँ -** काल में ही अधिकतर घोटाले उन क्षेत्रों में हुए है जहां क्रय नीति या मूल्य सरकार के नियंत्रण में हैं। चीनी, उर्वरक, तेल, सैन्य, अस्त्र शस्व खरीदी, विद्युत उपकरण जैसे कुछ उल्लेखनीय क्षेत्र है जहां खुलकर भ्रष्टाचार की गुंजाइश होती है।

3. **आवश्यक वस्तुओं की कमी-** जब आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति में कमी होती है, सत्ताधारी लोग उन बस्तुओं की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए कुछ अपेक्षा करते हैं जिससे उनकी कीमतों में वृद्धि की जाती है। तब जब माँग चहुत अधिक ज्यादा होती है लेकिन रोजाना की आवश्यकताओं की पूर्ति बहुत कम हो जाती है जैसे चीनी, सीमेंट, तेल आदि।

4. **व्यवस्था में परिवर्तन-** समाज में मूल्य व्यवस्था में परिवर्तन के साथ, पुराने आदर्श भी निरर्थक हो जाते है। और भेंट स्वीकार करना मूर्खता की अपेक्षा आवश्यक्ता के रूप में माना जाता है।

5. **अप्रभावी प्रशासनिक संगठन -** कभी-कभी भ्रष्टाचार प्रशासनिक कमी से भी पनप सकता है। प्रशासनिक कर्मचारियों को अत्यधिक शक्ति देना, गैर जिम्मेदारी, त्रुटिपूर्ण सूचना व्यवस्था आदि अधिकारियों को न केवल भ्रष्ट होने का अवसर प्रदान करते हैं बल्कि भ्रष्ट तरीके अपनाने के बाद भी वे अप्रभावित रहते हैं।

आर्थिक कारणों में उच्च जीवन शैली के प्रति अति मोह ग्रस्तता, मुद्रा प्रसार, लाइसेन्स प्रणाली तथा ज्यादा लाभ लेने की प्रवृत्ति आदि भ्रष्टाचार को प्रोत्साहित करने वाले कारक माने जाते हैं। इन्हीं कारकों में अधिकारी के हाथ में शक्ति का केन्द्रित होना पुलिस और न्यायपालिका में निहित कर्मचारी चरित्रवान नहीं होतें, इसके अत्तबा आर्थिक और सामाजिक पिछड़ापन आदि भ्रष्टाचार के प्रभावी कारक माने जाते हैं।

जो लोग श्रेणीक्रम का लाभ उठाते है और शक्तिशाली होते हैं वे जवाबदेही से कतराते हैं और भ्रष्ट ओनस्थ व्यक्तियों के खिलाफ कार्यवाही करने में ढीलापन दिखाते हैं। अंतिम कारक जनता की चीख-पुकार में कमी तथा जनमंच की कमी है जो भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज उठा सके। अक्सर यह पाया गया है जो भ्रष्ट व्यक्ति के विरुद्ध निष्क्रिय और गूंगे बन जाते है, वे समाज विरोधी व्यवहार को सहन करते हैं और शक्तिशाली जन-प्रचार करने में असफल रहते हैं।

भ्रष्टाचार का प्रभाव - ऐसे भ्रष्टाचारी लोक नैनिक जीवन में छाये रहते हैं और हमारे नैतिक ताने-बाने को कमजोर बनाते हैं। भ्रष्टाचार तभी घटित होता है तब कीमत चुकाई जाती है लेकिन उसके लिए कोई सेवा नहीं पाई गये।

परीक्षा में नकल करवाना, उपरपुस्तिका में परीक्षक द्वारा अंक बढाये जाना, किसी मित्र की सिफारिश पर सहयोगी के कहने पर आदि मामलों में भ्रष्टाचार होता है। भारत में वैध और अधिकारीक चीजों को प्राप्त करने के लिए पैसा देना पड़ता है। आम आदमी के दैनिक जीवन को यह सब बातें प्रभावित करती हैं।

भ्रष्टाचार प्रतिबंधित कानूनी प्रावधान - भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम सितम्बर 1988 में लागू हुआ। इसमें 1947 के भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम के प्रावधान समाहित थे। जिनमें आ.पी.सी. की कुछ धाराएँ अपराधी प्रक्रिया संहिता के प्रावधान भी समाहित है।

भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम भ्रष्टाचार संबंधी समस्याओं को जूझने के लिए पर्याप्त नहीं है।

1988 अधिनियम में लोकसेवक शब्द को व्यापक कर दिया गया और इसमें बड़ी संख्या में कर्मचारियों को शामिल किया गया। केन्द्रीय कर्मचारियों और केन्द्र प्रशासनिक राज्यों के कर्मचारियों के अलावा, सार्वजनिक उपक्रमों, राष्ट्रीयकृत बैंकों, केन्द्रीय व राज्यों से सहायता प्राप्त सहकारी समितियों के पदाधिकारी, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के कर्मचारी, कर्मचारी, उप कुलपति, केन्द्रीय व राज्यों सरकारों से आर्थिक सहायता प्राप्त करने वाली संस्थाओं में वैज्ञानिक और प्रोफेसर तथा स्थानीय प्रशासन से संबंधित संस्थाओं के कर्मचारी, सभी को लोकसेवक घोषित किया गया है।

प्रस्तुत अधिनियम संपूर्ण भारत के नागरिकों पर लागू किया गया है।

भ्रष्टाचार रोकने के अन्य उपाय - भ्रष्ट मंत्रियों तथा शीर्षस्थ अधिकारियों को दण्डित करने में सी.बी.आई. को लंबी अवधि के आधार पर न्यायालय को सीधे रिपोर्ट नहीं कर सकती, लोकपाल और लोकायुक्तों को मंत्रियों तथा उच्च पदस्थ राजनीतिज्ञों को भी दंडित करना होगा। समाज केवल पुलिस की निगरानी पर निर्भर नहीं रह सकता।

सतर्कता अधिकारियों को भ्रष्टाचार की शिकायतों की जाँच करने की स्वतंत्रा देना, कार्यकुशल अधिकारियों को प्रोन्नति करना, जाँच पड़ताल में अधिकारियों को सुरक्षा देने का आश्वासन देना आदि उपाय भी अपनाने पर बल देना चाहिए।

अन्त में कहा जा सकता है कि आजकल भ्रष्टाचार लोगों को कोई

आघात नहीं पहुंचाता। जब इस प्रकार के कृत्य पकड़े भी जाते है, तब भी मंत्री और बड़े अधिकारी तो आजाद घूमते हैं। ज्यादा से ज्यादा उनका स्थानान्तरण कर दिया गया है। जब तक प्रतिबंध नहीं लगाते तब तक इनकों समाप्त करना या कर करने की संभावना प्रतीत नहीं होती।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चौधरी पी.सी. भ्रष्टाचार, सेमीनार 421 सित. 1994
2. कोहली सुरेश-भारत में भ्रष्टाचार, 1975
3. मल्होत्रा के. एल-सतर्कता आयोग के तथ्य, मल्होत्रा पब्लि. दिल्ली 1988 और 1992
4. माथुर के. एम. प्रशासनिक भ्रष्टाचार, पोलिस सेमीनार, माउंट आबू में आयोजित, 12 अक्टू. 1992
5. नाथ जे-राजनैतिक भ्रष्टाचार, अमेरिकन पॉलिटिकल रिव्हू, 1967

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत के राष्ट्रीय जागरण में स्वामी विवेकानंद की भूमिका का अध्ययन

ज्ञानेश शुक्ला*

* सहायक प्राध्यापक, बद्री प्रसाद लोधी स्नातकोत्तर शासकीय महाविद्यालय, आरंग, जिला– रायपुर (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – भारतीय इतिहास में स्वामी विवेकानंद के योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनका प्रभाव न केवल दार्शनिक और धार्मिक क्षेत्र तक ही था, बल्कि उन्होंने भारत की राष्ट्रीय चेतना और स्वतंत्रता आंदोलन को भी अत्यंत गहराई से प्रभावित किया। स्वामी विवेकानंद ने भारतीय संस्कृति और परंपराओं का गौरव बढ़ाया साथ ही भारतीय समाज में व्याप्त पिछड़ेपन, गरीबी और अज्ञानता को दूर करने के लिए आत्मनिर्भरता और शिक्षा को महत्वपूर्ण माना। उनके विचारों ने युवा पीढ़ी को आत्मसम्मान और राष्ट्रभक्ति के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया। स्वामी विवेकानंद का यह विश्वास कि समाज के हर वर्ग को जागरूक और सशक्त बनाना आवश्यक है, स्वतंत्रता संग्राम के दौरान एक प्रमुख मार्गदर्शक सिद्धांत बन गया।

शब्द कुंजी –राष्ट्रवाद, राष्ट्रीय चेतना, स्वतंत्रता आंदोलन, भारतीय संस्कृति और परंपरा।

प्रस्तावना – सुभाष चंद्र बोस ने स्वामी विवेकानंद को भारतीय राष्ट्रवाद का आध्यात्मिक पिता कहा था। वे न केवल राष्ट्रीय चेतना को जागृत किया, बल्कि स्वतंत्रता संग्राम के मानसिक आधार को भी मजबूत किया। स्वामी विवेकानंद ने संगठन की शक्ति को पहचान कर भारत वासियों को संगठित होने प्रेरित किया। उनका प्रसिद्ध संदेश, 'उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्ति तक रुको नहीं' आज भी युवाओं को प्रेरित करता है। स्वामी विवेकानंद का भारतीय संस्कृति के प्रति समर्पण अत्यधिक गहरा था, साथ ही वे भारतीय आध्यात्मिक शक्ति से पश्चिमी विश्व को भी परिचित कराकर उसे दिशाहीन होने से बचाना चाहते थे। उनके विचारों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को मानसिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से प्रेरित किया और यह आज भी भारतीय समाज में एक मार्गदर्शक के रूप में जीवित है। उनके विचारों और कार्यों पर उस समय के सामाजिक और सांस्कृतिक आंदोलनों का गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने धर्म, आध्यात्मिकता और मानवता को भारत की ताकत बताया और राष्ट्रवाद को एक नई दिशा दी। उनका मानना था कि धर्म और आध्यात्मिकता भारतीय समाज को एकजुट कर सकती है और इसे विश्व में विशेष स्थान दिला सकती है।

शोध अध्ययन का उद्देश्य:

1. स्वामी विवेकानन्द के राष्ट्रवाद सम्बन्धी विचारों का नवीन दृष्टि से बिन्दुवार अध्ययन करना।
2. स्वामी विवेकानन्द के राष्ट्रवाद सम्बन्धी विचारों का भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन से संबद्धता का अध्ययन करना।

शोध विधि एव आंकड़ों का संग्रहण: प्रस्तुत शोध–पत्र में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक तथा ऐतिहासिक पद्धति का प्रयोग किया गया है। यह शोध कार्य पूर्णतय: द्वितीयक आंकडो पर आधारित है। इस अध्ययन के लिए यथा– प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं, पुस्तकों, दस्तावेजों, शोध लेखों एवं अन्य लेखों का उपयोग किया गया है।

1. **भारत भ्रमण और भारतीय समाज का अवलोकन –** स्वामी विवेकानंद ने 1892 में अपने भारत भ्रमण के दौरान यह देखा कि ब्रिटिश शासन की शोषणकारी नीतियों ने किसानों और व्यापारियों की स्थिति दयनीय बना दी थी। इसके अलावा, जाति व्यवस्था और सामाजिक असमानता ने भारतीय समाज को अंदर से खोखला कर दिया था। जब वे पश्चिमी देशों में गए, तो उन्होंने यह महसूस किया कि भारत को ही आध्यात्मिकता और नैतिक मूल्यों के आधार पर पश्चिम का मार्गदर्शन करना चाहिए। उन्होंने भारतीय समाज को संबोधित करते हुए कहा, 'भारत जागो! विश्व जगाओ!!'

2. **स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवाद संबंधी विचार –** स्वामी विवेकानंद मानवता के कल्याण के लिए वे एक शक्तिशाली और जागृत भारत का निर्माण करना चाहते थे। विकास की पहली शर्त स्वतंत्रता है, किन्तु भारत तो ब्रिटिश शासन में जकड़ा हुआ और सुप्त था। इसीलिए वापस लौटने पर उन्होंने इस महान राष्ट्र को जागृत करने के लिए सभी स्तरों पर कार्य किया। विवेकानंद ने राष्ट्रवाद के धार्मिक सिंद्धांत का प्रतिपादन किया, उनका विश्वास था कि धर्म ही भारत के राष्ट्रीय जीवन का प्रमुख आधार बनेगा, उनके विचार में किसी राष्ट्र को गौरवशाली, उसके अतीत कि महत्ता की नींव पर ही बनाया जा सकता है, अतीत की उपेक्षा करके राष्ट्र का विकास नहीं किया जा सकता, वे राष्ट्रीयता के अध्यात्मिक पक्ष में विश्वास करते थे उनका विचार था कि भारत में स्थायी राष्ट्रवाद का निर्माण धार्मिकता के आधार पर ही किया जा सकता है।

विवेकानंद का दृढ मत था कि आध्यात्मिकता के आधार पर ही भारत का कल्याण हो सकता है उन्होंने अपने एक व्याख्यान में स्पष्ट शब्दों में कहा था 'भारत में विदेशियों को आने दो, शस्त्रबल से जितने दो, किन्तु हम भारतीय अपनी आध्यात्मिकता से समस्त विश्व को जित लेंगे, प्रेम, घृणा पर विजय प्राप्त करेगा, हमारी अध्यात्मिक पश्चिम को जीतकर रहेगी।'

स्वामी विवेकानंद ने धर्म को भारत के राष्ट्रीय जीवन का स्थायी स्वर बताया। उनका कहना था, 'जिस प्रकार संगीत में एक प्रमुख स्वर होता है,

वैसे ही हर राष्ट्र का जीवन एक प्रधान तत्व पर आधारित होता है। भारत का तत्व धर्म है।' 'प्रत्येक राष्ट्र के जीवन की एक मुख्य–धारा होती हैय भारत में धर्म ही वह धारा है। इसे शक्तिशाली बनाइये और दोनों ओर का जल स्वत: ही इसके साथ प्रवाहित होने लगेगा।' उनका मत था कि भारत की स्थायी राष्ट्रीयता का निर्माण धार्मिकता के आधार पर ही हो सकता है।

स्वतंत्रता की मांग करने और इसकी प्राप्ति के लिए कार्य करने हेतु, इस बात का बोध होना आवश्यक है कि 'हम एक विशिष्ट सांस्कृतिक इकाई हैं।' स्वामी विवेकानंद ने हिन्दू धर्म मे व्याप्त विभिन्न भेदों के बावजूद हिन्दू चेतना को महान अद्वैत दर्शन के आधार पर संगठित करने की कोशिश की। उन्होंने पूरे विश्व में गर्व से यह घोषणा की कि वे एक हिन्दू हैं और इस प्रकार उन्होंने हिन्दुओं का आत्म–सम्मान बढ़ाया।

3. भारतवासियों की एकता पर बल– फरवरी 1897 को मद्रास में हजारों लोगों को सम्बोधित करते हुए अपने भाषण 'भारत का भविष्य' में स्वामी विवेकानंद संगठित होने का महत्व बताते है। वह चार करोड़ अंग्रेजो द्वारा तीस करोड़ भारतवासियों के ऊपर शासन करने का सबसे बड़ा कारण उनका संगठित होना और भारतवासियों का बिखराव मानते हैं। उनका सन्देश बिलकुल स्पष्ट था वो मानते थे कि यदि भारत का भविष्य उज्जवल, भारत को महान बनाना और स्वाधीनता के साथ जीना है तो संगठित होना अतिआवश्यक है जो एक संगठन द्वारा होगा। ताकि सभी बिखरी हुई शक्तियाँ एकत्रित की जा सके जिससे शक्ति –संग्रह होगी। स्वामीजी आगे आह्वान करते है – गुलाम बनना छोड़ो।

4. भारतभूमि के प्रति प्रेम – स्वामी विवेकानंद भारत को एक पवित्र तीर्थभूमि मानते थे। उन्होंने कहारू 'भारत भूमि पवित्र भूमि है, भारत मेरा तीर्थ है, भारत मेरा सर्वस्व है, भारत की पुण्य भूमि का अतीत गौरवमय है, यही वह भारतवर्ष है, जहाँ मानव प्रकृति एवं अन्तर्जगत् के रहस्यों की जिज्ञासाओं के अंकुर पनपे थे।' स्वामी विवेकानन्द के इन शब्दों से भारत, भारतीयता और भारतवासी के प्रति उनके प्रेम, समर्पण और भावनात्मक संबंध स्पष्ट परिलक्षित होते हैं. स्वामी विवेकानंद को युवा सोच का संन्यासी माना जाता है। विवेकानंद केवल आध्यात्मिक पुरूष नहीं थे वरन् वे विचारों और कार्यों से एक क्रांतिकारी संत थे, जिन्होंने अपने देश के युवकों का आह्वान किया था – उठो, जागो और महान बनो।

इस उद्धरण से यह स्पष्ट होता है कि भारत और भारतीयता के प्रति उनका प्रेम असीम था।

स्वामी विवेकानंद ने कहा 'भारत का कल्याण मेरा कर्तव्य है। भारत की भूमि मेरा परम स्वर्ग है।' उनकी देशभक्ति से प्रेरित होकर युवा वर्ग ने स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भागीदारी ली।

'भगिनी निवेदिता विवेकानद के बारे में उल्लेख करती थी 'भारत के प्रति स्वामीजी के मन में सर्वाधिक उत्कंठा थी। मानो भारत का ही विचार करने की एक धुन उन पर सवार थी। उनके ह्रदय में भारत ही धड़कता था। वे स्वयं भी भारत से एकाकार हो गए थे। वे मनुष्य के रूप में भारत का अवतार थे। वे भारत ही थे। वे भारत थे – उसकी आध्यात्मिकता, उसकी पवित्रता, उसकी बुद्धि, उसकी शक्ति, उसकी दृष्टि और उसके भाग्य के प्रतीक।'

5. भारत की स्वतंत्रता का महत्व बताना – स्वामी विवेकानंद जानते थे कि कोई भी राष्ट्र किसी गुलाम देश से शिक्षा ग्रहण नहीं करेगा। इसलिए नियति द्वारा भारत के लिए निर्धारित, मानवतावादी भूमिका को निभाने के लिए, 'भारत की स्वतंत्रता' एक आवश्यक चरण थी। उन्होंने कहा कि भारत का राष्ट्रवाद 'आध्यात्मिकता और सनातन धर्म' के मूल में निहित है।

छोटे–छोटे समूहों के साथ अनौपचारिक वार्तालाप के दौरान स्वामीजी ने राजनैतिक स्वतंत्रता का आदर्श अपने देशवासियों, विशेषत: युवाओं के सामने, उनके तात्कालिक लक्ष्य के रूप में रखा।

क्रांतिकारी ब्रह्मबांधव उपाध्याय के अनुसार 'सन 1901 में उनकी ढाका यात्रा के दौरान जब युवाओं का एक समूह उनसे मिला और परामर्श लिया, तो उन्होंने कहा, 'बंकिमचन्द्र को पढ़ो और देशभक्ति व सनातन धर्म का अनुकरण करो। सबसे पहले भारत को राजनैतिक रूप से स्वतंत्र कराया जाना चाहिए।'

6. हिंदू चेतना का पुनरुद्धार कर राष्ट्रीय बोध जागृत करना – ब्रिटिश शासन के समय हिंदू समाज में अनेक जातिगत और सांप्रदायिक विभाजन थे। स्वामी विवेकानंद ने हिंदू चेतना को नव वेदान्त दर्शन के आधार पर संगठित किया। उन्होंने गर्व के साथ अपनी हिंदू पहचान को स्वीकार किया और पूरे विश्व में हिंदुत्व का महत्व बताया।

सभी समकालीन स्रोतों से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत में राष्ट्रीय बोध जागृत करने में स्वामी विवेकानंद का प्रभाव सबसे शक्तिशाली था। प्राचीन इतिहास यह दर्शाता है कि, भारत में धार्मिक आन्दोलनो ने सदैव राष्ट्रीय पुनर्जागरण का नेतृत्व किया है। भारत में हिंदुत्व के पुनरुद्धार के बिना कोई राष्ट्रीय आंदोलन संभव नहीं था। स्वामी विवेकानंद ने ठीक यही किया, उन्होंने हिंदुत्व का पुनरुद्धार किया।

7. भारतीयों के आत्मसम्मान का पुनर्जागरण – स्वामी विवेकानंद ने भारतवासियों को आत्मसम्मान और राष्ट्रीय गर्व का बोध कराया। उन्होंने कहारू 'प्रत्येक राष्ट्र की मुख्य धारा होती है, और भारत की धारा धर्म है। इसे शक्तिशाली बनाइए, और अन्य सभी समस्याएँ स्वत: हल हो जाएँगी।' उन्होंने यह भी कहा कि राष्ट्र को अपने अतीत की महानता को समझना और उसे अपनाना होगा।

8. उपनिषदीय ज्ञान के आधार पर एकीकरण का प्रयास – 'मेरे मित्रों, आपके ही रक्त में से एक के रूप में, आपके साथ जीने और मरने वाले के रूप में, मैं आपको बता दूँ कि हमें शक्ति चाहिए और हर समय शक्ति चाहिए। और उपनिषद शक्ति के विशाल भंडार हैं। उनकी शक्ति संपूर्ण विश्व को बलशाली बनाने में सक्षम हैय उनके द्वारा संपूर्ण विश्व को पुनर्जीवित किया जा सकता है, शक्तिशाली बनाया जा सकता है, क्रियाशील किया जा सकता है। वे तूर्य–स्वर में सभी जातियों, सभी पन्थों व सभी संप्रदायों के कमजोर, दु:खी व शोषित मनुष्यों को अपने पैरों पर खड़ा होने और स्वतंत्र होने के लिए पुकारेंगे। स्वतंत्रता, शारीरिक स्वतंत्रता, मानसिक स्वतंत्रता और आध्यात्मिक स्वतंत्रता उपनिषदों के संकेत शब्द हैं।'

9. देश वासियों को शक्ति सृजन का संदेश – विवेकानंद की सबसे प्रमुख दें भारतियों को शक्ति सृजन और निर्भयता का सन्देश देना था, वे अत्यंत साहसी, निर्भीक और शक्तिशाली व्यक्ति थे, जब देश परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था और भारतीय जन मानस हीनता तथा भी की भावनाओं से पूर्णतया ग्रस्त था उस समय विवेकानंद ने सुप्त तथा पददलित भारतीय जनता को शक्ति के अभाव में न तो हम व्यक्तिगत अस्तित्व को स्थिर रख सकते है और न ही अपने अधिकारों की रक्षा कर सकते है ' उनके अनुसार 'शक्ति ही धर्म है' मेरे धर्म का सार शक्ति है, जो धर्म ह्दय में शक्ति का संचार नहीं करता वह मेरी दृष्टि में धर्म नहीं है, शक्ति धर्म से बड़ी वास्तु है और

शक्ति से बढ़कर कुछ नहीं ' स्वामीजी का कथन था की प्रत्येक भारतवासी को ज्ञान, चरित्र तथा नैतिकता की शक्तियों का सृजन करना चाहिए, किसी राष्ट्र का निर्माण शक्तियों से होता है अतरू व्यक्तियों को अपने पुरुशत्व, मानव गरिमा तथा स्वाभिमान आदि श्रेष्ठ गुणों का विकास करना चाहिए। स्वामी विवेकानंद ने देश के नागरिकों को सभी स्तरों पर स्वतंत्रता प्राप्त करने हेतु प्रोत्साहित करते हुये उन सभी चीजों को त्यागने का उपदेश दिया, जो उन्हें कमजोर बनाता हो।

10. **देश वासियों को निर्भीकता का संदेश –** स्वामी विवेकानंद ने भारतीय समाज को निर्भीक और साहसी बनने का आह्वान किया। उनका कहना थारू 'शक्ति ही धर्म है। जो धर्म हृदय में शक्ति का संचार नहीं करता, वह धर्म नहीं है।'

उन्होंने भारतीयों को अपने आत्मबल, साहस और पुरुषार्थ को पहचानने का संदेश दिया।

विवेकानंद ने शक्ति के सृजन के साथ भारतियों को निर्भय रहने का भी सन्देश दिया, उन्होंने निर्भयता के सिद्धांत को दार्शनिक आधार पर उचित ठहराया, उनकामत था कि आत्मा का लक्षण सिंह के समान है अतरू मनुष्य को भी सिंह के समान निर्भय होकर आचरण करना चाहिए उन्ह्योने भारतियों को संबोधित करते हुए कहा —'हे वीर, निर्भीक बनो, सहस धारण करों, इस बात पर गर्व करो कि तुम भारतीय हो और गर्व के साथ घोषणा करों, 'मैं भारतीय हूँ व् प्रत्येक भारतीय मेरा भी हैष उनके यह शब्द सोये हुए भारतवासियों को जगाने के लिए अत्यंत सामयिक और महतवपूर्ण थे, जिस समय देश कि जनता निराशा में डूबी दयनीय जीवन व्यतीत कर रही थी उस समय शक्ति और निर्भीकता का सन्देश देना उनकी प्रखर बुद्धि का एक उज्ज्लंत उदहारण है।

11. **भारत भूमि के प्रति विदेशों में सम्मान स्थापित करना –** जोसफाइन मैक्लीड के अनुसार – 'स्वामीजी का 'भारत' का उच्चारण कुछ इस प्रकार का था कि इससे उनके विदेशी शिष्यों के मन में भी गहराई तक इसकी गूंज निर्मित होती थी। स्वामी विवेकानंद के मुख से 'भारत' शब्द का उच्चारण सुनकर ही इन शिष्यों के मन में भारत के प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ। उनके मन में कितना अधिक आवेग, कितनी करुणा रही होगी जिससे ऐसा प्रभाव प्राप्त हो सका।' 1893 में शिकागो धर्म सभा में उनके व्याख्यान से पश्चिम जगत को भारतीय अध्यात्म, संस्कृति एवं उपनिषदीय ज्ञान से परिचित कराया।

12. **बलिदान का महत्तव स्थापित करना –** यदि किसी व्यक्ति को अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए कार्य करना हो, तो उसे बलिदान के लिए तैयार रहना होगा और व्यक्ति तब तक बलिदान नहीं दे सकता, जब तक उसके मन में मातृभूमि के लिए प्रेम न हो। जब तक असीम प्रेम न हो, तब तक बलिदान संभव नहीं है। अपने स्वयं के उदाहरण से स्वामी विवेकानंद ने अनेकों हृदयों में भारत के लिए गहन प्रेम के बीज बोये।

13. **युवाओं को मार्ग दर्शन देना –** स्वामी विवेकानंद का नेतृत्व केवल उनके प्रेरणादायक उपदेशों और वक्तव्यों तक सीमित नहीं था। उन्होंने अपने जीवन और कर्मों के माध्यम से एक ऐसा आदर्श प्रस्तुत किया, जो समाज और युवाओं के लिए मार्गदर्शक बन गया। स्वामी विवेकानंद ने अपने व्यक्तिगत सुखों और इच्छाओं को त्यागकर अपने जीवन को समाज और राष्ट्र की सेवा के लिए समर्पित कर दिया। उनका संदेश था कि अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर, मातृभूमि और मानवता की सेवा ही सच्चा धर्म है।

स्वामी विवेकानंद ने विशेष रूप से युवाओं को जागरूक और सशक्त बनाने पर जोर दिया। उन्होंने उन्हें अपने भीतर छिपी शक्तियों को पहचानने और उनका उपयोग समाज और देश की प्रगति के लिए करने का संदेश दिया। उनके शब्द, 'उठो, जागो और तब तक मत रुको, जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए,' युवाओं के लिए एक प्रेरक मंत्र बन गए।

14. **देश भक्ति की प्रेरणा –** स्वामी विवेकानंद में राष्ट्र भक्ति की भावना कूट–कूट कर भरी थी, वे भारतवासियों को भी मातृभूमि के लिए अपना सब कुछ लुटाने के लिए कहते है, उनका कहना था—'मेरे बंधू बोला' भारत की भूमि मेरा परम स्वर्ग है, भारत का कल्याण मेरा कर्त्तव्य है, और दिन रात जपो और प्रार्थना करो, हे गोरिश्वर, हे जगज्जनी, मुझे पुरुष्तव प्रदान करो' अन्य स्थल पर उन्होंने कहा की — 'अगले पचास वर्षों तक भारत माता को छोड़कर हमें और किसी का ध्यान नहीं करना है, डॉ. वर्मा के शब्दों में 'बंकिम की भांति विवेकानंद भी भारत माता को एक आराध्य देवी मानते थे, और उसकी देदीप्यमान प्रतिभा की कल्पना और स्मरण से उनकी आत्म जगमगा उठती थी, यह कल्पना कि भारत देवी कि माता की दृश्यमान विभति है, बंगाल के राष्ट्रवादियों और आतंकवादियों की रचनाओं तथा भाषणों के आधार्बुत धरना रही है उनके लिए देश भक्ति एक शुद्ध और पवित्र आदर्श था।'

15. **स्वतंत्रता हेतु जागरूकता का प्रयास –** विवेकानंद के स्वतन्त्रता विषयक सिद्धांत अत्यंत व्यापक थे, उनका मत था की समस्त विश्व अपनी अनवरत गति के माध्यम से मुख्यत स्वतंत्रता ही खोज रहा है, मनुष्य का विकास स्वतंत्रता के वातावरण में ही संभव है उनके शब्दों में – 'शारीरिक, मानसिक तथा अध्यात्मिक स्वतंत्रता की और अगसर होना तथा दूसरों को उसकी और अगसर होने में सहायता देना मनुष्य का सबसे बड़ा पुरुष्कार है, जो सामजिक नियम इस स्वतंत्रता के विकास में बाधा डालते है वे हानिकारक है, और उन्हें शीघ्र नष्ट करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए, उन संस्थाओं को प्रोत्साहन दिया जाए जिनके द्वारा मनुष्य स्वतंत्रता के मार्ग पर अग्रसर होता है।'

16. **विदेशी शासन के विरुद्ध दृष्टिकोण –** प्रो.शैलेन्द्रनाथ धर द्वारा लिखी 'स्वामी विवेकानंद समग्र जीवन दर्शन' के अनुसार वर्षा 1898 में जब स्वामी जी अल्मोड़ा यात्रा पर थे, उन दिनों अंग्रेज उनकी निगरानी करते थे। स्वामी जी द्वारा संप्रेषित पत्र डाकघरों में पढ़े जाते थे। स्वामीजी की अंग्रेजी सरकार द्वारा करवाई गई जासूसी हो या अन्य ऐसी किसी भी चुनौतियों से ना डरे और ना रुकेय वह निरंतर अपना कार्य करते रहे।

स्वामी विवेकानंद कहते थे– 'विश्व के भौतिक रूप से विकसित अन्य राष्ट्रों के समकक्ष आने के लिए–हे युवा बंगाल, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का अनेक प्रकार से अनुकरण करो, ...और फिर मनोबल और दक्षता का आधुनिक मानक प्राप्त करके, विदेशी आक्रमणकर्ताओं को, उन्हीं की भाषा में उत्तार देकर अपने देश को विदेशी पंजों से मुक्त करो– पूर्वी संस्कृति के गढ़ की शरण लो। किन्तु यह निश्चित रूप से जान लो य कि केवल नकल करके तुम कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकते।'

17. **भारत की स्वतन्त्रता की घोषणा –** विवेकानंद ने स्वतंत्रता आंदोलन की नींव रखी थी। 1897 में अमेरिका से लौटने के बाद स्वामी विवेकानंद ने भारतवासियों से अपने देवी–देवताओं के स्थान पर भारत माता की पूजा करने का मंत्र दिया। परिणाम स्वरूप 50 वर्ष बाद वर्ष, 1947 में देश को स्वतंत्रता प्राप्ति हुई।

'आगामी पचास वर्ष के लिए यह जननी जन्मभूमि भारतमाता ही मानो

आराध्य देवी बन जाए। तब तक के लिए हमारे मस्तिष्क से व्यर्थ के देवी – देवताओं के हट जाने में कुछ भी हानि नहीं है। अपना सारा ध्यान इसी एक ईश्वर पर लगाओ, हमारा देश ही हमारा जाग्रत देवता है।'

स्वामी विवेकानंद का मानना था कि भारत की पूजा से उनका अभिप्राय भारत की आजादी के लिए खुद को समर्पित करना है। वे मानते थे कि भारत स्वतंत्र होगा, तब ही अपनी संस्कृति और उपासना पद्धति का पालन कर पाएगा। स्वामी विवेकानंद ने कहा था – 'भारत की यह भूमि मेरा अपना शरीर है, गंगा, मेरे मस्तक से निकलती है सिन्धु और ब्रह्मपुत्र' विंध्याचल है मेरा कौपीन।' उन्होंने कहा था, 'जब मैं चलता हूँ, मानो भारत चलता है, जब मैं बोलता हूँ, भारत बोलता है' 'मैं श्वास लेता हूँ भारत श्वास लेता है' मैं ही भारत हूँ।'

निष्कर्ष: स्वामी विवेकानन्द के समय में भारत न केवल परतंत्र था, वरन सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से भी पतनोन्मुख था। समूचा भारतीय समाज, विशेषकर हिन्दू समाज, धार्मिक रूढ़िवाद एवं अन्धविश्वासों से ग्रसित था। उस समाज में चेतना जाग्रत करने का महती कार्य स्वामी जी ने किया।

स्वामी विवेकानंद के देह अवसान तक भारत में स्वतन्त्रता आंदोलन की शुरुआत नहीं हुई थी किन्तु उनके विचार, शिक्षा और आदर्श कथन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के लिए प्रेरक सिद्ध हुये। उन्होंने भारतीय समाज को आत्मबल, स्वाभिमान और सांस्कृतिक गौरव का महत्व समझाया। उनके उपदेशों ने युवाओं में जोश और ऊर्जा भरी। उन्होंने महसूस किया कि राजनीतिक स्वतंत्रता से पहले समाज को मानसिक और सांस्कृतिक रूप से जागृत करना जरूरी है। उनके आदर्शों ने भारतीय समाज में राष्ट्रवाद और आत्मनिर्भरता की भावना को प्रबल किया। उनके विचार अनेक क्रांतिकारियों यथा- ब्रह्म बांधव उपाध्याय, अश्विनी चंद्र दत्ता, गरम दल के नेताओं यथा- तिलक, अरबिंदो के अलावा गांधी, नेहरू एवं सुभाष के लिए भी प्रेरणास्रोत रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भूषण आर, चतुर्वेदी आर. स्वामी विवेकानंद: राष्ट्र के लिए उनका आह्वान. अद्वैत आश्रम. 2003.
2. चेतानंद एस. ईश्वर उनके साथ रहते थे: श्री रामकृष्ण के सोलह संन्यासी शिष्यों की जीवन कथाएँ. वेदांत सोसाइटी ऑफ सेंट लुईस. 2008.
3. धर एस. एन. उपनिषद और विवेकानंद का दर्शन. रामकृष्ण मिशन इंस्टीट्यूट ऑफ कल्चर. 1999.
4. कपूर डी. स्वामी विवेकानंद: भारत की भविष्यवाणी करने वाली आवाज. इंडस सोर्स बुक्स. 2001.
5. रंगनाथानंद एस. विवेकानंद का संदेश. भारतीय विद्या भवन. 1989.
6. रोलैंड आर. विवेकानंद का जीवन और सार्वभौमिक संदेश. अद्वैत आश्रम. 1929.
7. सिंह के. विवेकानंद और भारतीय पुनर्जागरण. रूपा पब्लिकेशन्स. 2003.
8. विवेकानंद स्वामी. कोलंबो से अल्मोड़ा तक के प्रवचन. अद्वैत आश्रम. 2009.
9. विवेकानंद स्वामी. भारत का भविष्य. अद्वैत आश्रम. 2011.
10. यादव एसके. आधुनिक भारत के जागरण में स्वामी विवेकानंद की भूमिका. भारतीय इतिहास पत्रिका. 2014.
11. प्रकाशन विभाग. कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी (खंड 22, पृ. 291). 1999.
12. पूर्णात्मानंद स्वामी. स्वामी विवेकानंद एवं भारतेर स्वाधीनता संग्राम (अर्पिता मित्रा द्वारा बांग्ला से आंशिक अनूदित, पृ. 78). कोलकातारू उद्बोधन. 1988.
13. विवेकानंद स्वामी. विवेकानंद राष्ट्र को आह्वान. 2013.
14. बोस एन. स्वामी विवेकानंद और भारतीय समाज का रूपांतरण. न्यू एज इंटरनेशनल. 1998.
15. साहय एम. स्वामी विवेकानंद और भारतीय राष्ट्रवाद. राष्ट्रीय पुस्तक ट्रस्ट. 2008.
16. सेनगुप्ता एस. स्वामी विवेकानंद: सशक्त भारत की परिकल्पना. विवेकानंद फाउंडेशन. 2009.
17. रॉय एम. स्वामी विवेकानंद: भारतीय आत्मशक्ति के प्रतीक. भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान. 2015.
18. लोहिया एस. स्वामी विवेकानंद और भारतीयता का पुनर्निर्माण. रूपा एंड कंपनी. 2007.
19. भट ए. स्वामी विवेकानंद का युवाओं के लिए संदेश. शुभम बुक्स. 2004.
20. राव ए. स्वामी विवेकानंद का भारतीय राष्ट्रीयता पर दृष्टिकोण. एस. चंद्र एंड कंपनी. 2007.
21. सिंह एच. स्वामी विवेकानंद और भारत के आधुनिक समाज. दिल्ली पब्लिशिंग हाउस. 2013.
22. प्रधान एस. स्वामी विवेकानंद: आत्मशक्ति का संदेश. प्रश्न प्रकाशक. 2009.
23. बनर्जी आर. स्वामी विवेकानंद: भारतीय राष्ट्रवाद और समाज के पुनर्निर्माण का विचार. अद्वैत आश्रम. 2010.
24. कुमारी कीर्ति, राठोड़ डीडी. स्वामी विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद: आधुनिक भारत के प्रेरणा स्रोत. अफ्रीकन जर्नल ऑफ मैथेमेटिक्स. 2022.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जांजगीर का लोक महोत्सव मेला की प्रासंगिकता

डॉ. रामरतन साहू* दिनेश कुमार राठौर**

* सह. प्राध्यापक (इतिहास) डॉ सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी (इतिहास) डॉ. सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

प्रस्तावना – हिन्दू धर्म में कई लोको का उल्लेख आता है। जिसमें देव लोक, पाताललोक एवं पृथ्वीलोक आदि का वर्णन आता है। यह विचारणीय प्रश्न है कि लोक क्या है। वस्तुत: लोक उसके रहवासियों के चरित्र को चरितार्थ करने वाला एक चिन्हित क्षेत्र होता है। उसमें रहने वाले अगर परम्परा, संस्कृति एवं समाजशास्त्रीय विवेचनाओं की परिधि में आबद्धध हो तो उसे भी हम लोक कह सकते है। परम्परा और संस्कृति लोक में सन्निहित मूल तत्व है। लोक अपनी संस्कृति परम्परा और आसपास की प्रकृति से आंतरिक संवेदनाओं से जुडकर संपूर्ण सृष्टि के लिये मंगलकामना करते हुये अपनी मनोभावनाओं को सार्वजनिक रूप से जब व्यक्त करते है तब हम असे उत्सव या वृहद् रूप में महोत्सव कह सकते है। जांजगरी-चांपा की धरती को यहां के मनुपुत्रों ने अपने कौशल और श्रम से बहुगुणित किया हैं। नैसर्गिक विविधता के इस क्षेत्र में एक ओर सदानिरा हसदेव-महादनी- मांद और उसकी सहायक जधराएं है जलधाराएं वही पहाड़ी उपत्यका और वनश्री भी यहां पर्याप्त है। इस क्षेत्र की मुख्यत: उपजाउ मैदानी भूमि ने प्राचीन काल से ही मानव सभ्यता और बसाहट को अपनी ओर आकृष्ट किया है, इसलिए यहां जन-समुदाय का घनत्व अभी भी हैं। जांजगीर-चांपा जिले में उपजाउ मैदन और गढ़ के साथ खाईयां मे तथा विशाल तालाब मानव उद्यम के प्रमाण है तो आधुनिक बांगो-हसदेव की सिचाई सुविधा ने नहर की लकीरों से मानों किस्मत की रेखा खीच दी हैं। यहां की कृषक संस्कृति की उत्सवधर्मिता के दर्शन हाते है रंगबिरंगे मेलो में।

क्षेत्र के गांव, देहात, कस्बा तथ शहरो में मड़ई मेलों की परम्परा सदियों से चली आ रही है। इसी तरह बस्तर का दशहरा मेला, शिवरीनारायण का माघ मेला, राजिम में राजीव लोचन मेला, पीथमपुर, रतनुपर, मल्हार, कनकी का मेला, रावत नाच अथवा अन्य कोई मेला ये सभी मेले एक ओर छत्तीसगढ़ की पहचान, लोक जीवन, सांस्कृतिक परम्परा की झांकी प्रस्तुत करते ही है वही दूसरी ओर आध्यात्म का भी दर्शन कराते हैं। मेले जीवन का अभिन्न अंग है, ये हमारे सांस्कृतिक, पारम्परिक व आध्यात्मिक धरोहर हैं। ये हमारे जीवन से जुड़े है, इनसे हम अलग नहीं हो सकते। समय से साथ मेला का स्वरूप अवश्य बदल गया है, पर मेला का अस्तित्व समाप्त नहीं हुआ है। यदि इन मेलो में ज्ञान-विज्ञान की बातें हो, तकनीक तथा विकास की बातें हो, समृद्धि तथा आत्मनिर्भरता की बातें हो तो मेला की सार्थकता कई गुना बढ़ जाती है। ऐसा ही एक मेला है जांजगीर का 'एग्रीटेक कृषि यांत्रिकी मेला' जिसे लोक महोत्सव मेला भी कहते है। जो कई मायनो में अन्यो से अलग है, और यह जांजगीर की विशिष्ठ पहचान बनता जा रहा है।

जांजगीर-चाम्पा जिला मुख्यत: धान उत्पादक जिला है। यहां के कृषक परम्परागत ढ़ंग से खेती करते आ रहे है। हरित क्रांति के दौर में उन्नत कृषि प्रणाली, उर्वरक तथा कीटनाशक रसायनों का प्रार्दूभाव हुआ, फलत: कृषकों के मन में उत्पादकता बढ़ाने की होड़ सी मच गई। कृषक इस प्रयास में सफल भी हुये। नि:संदेह यह सफलता उन्नत कृषि तकनीक तथा कृषकों के परिश्रम से प्राप्त हुई है। कृषि के क्षेत्र में रोज नये-नये अनुसंधान हो रहे है। आधुनिक कृषि यंत्रों को खेतों में त्वरित गति से पहुंचाने तथा हर कृषक को उन्नत कृषि प्रणाली की जानकारी देने के लिये जांजगीर-चाम्पा के जिला मुख्यालय जांजगीर में एग्रीटेक कृषि मेला की शुरूआत की गई है।

जिले में प्रथम बार कृषि एवं लोक महोत्सव यांत्रिकी मेला एग्रीटेक 2000 जिला मुख्यालय जांजगीर में 3 एवं 4 जनवरी को आयोजित किया गया। जिले के प्रथम कलेक्टर डॉ. व्ही.एस. निरंजन के मार्गदर्शन पर स्थानीय नागरिकों के सहयोग से कृषि विभाग के द्वारा यह आयोजन किया गया। मेला का मुख्य उद्देश्य कृषको को कृषि वैज्ञानिको से सीधे सम्पर्क कर आधुनिक कृषि तकनीक को समझना तथा नवीन कृषि यंत्रों को त्वरित गति से खेतों में पहुंचाकर यांत्रिकी खेती को बढ़ावा देना है। प्रथम वर्ष के इस दो विसीय आयोजन में राष्ट्रीय स्तर के कृषि यंत्र निर्माताओं, प्रदायको, उर्वरक एवं कीटनाशक दवा निर्माताओं ने अपने उत्पाद के साथ भाग लिया।

विगत वर्षो के आयोजन से यहां के जन-जन में उत्साह का संचार हो गया। जिससे हर नागरिक की चाह थी कि इस आयोजन की अवधि को बढ़ाया जाये। मेला का विस्तार करते हुये छत्तीसगढ़ की परम्परा लोककला, लोक संगीत, संस्कृति तथा लोक साहित्य को समावेश कर इसे वृहत स्वरूप दिया गया। जिसमें कई राज्य के कलाकार शामिल हुये वर्ष 2002 में दिनांक 7 से 13 जनवरी तक वर्ष 2003 में दिनांक 7 से 12 जनवरी तक तथा वर्ष 2004 में 2 से 4 फरवरी तक एग्रीटेक कृषि यांत्रिकी मेला के साथ जाज्वल्यदेव लोक महोत्सव का आयोजन किया गया। इस आयोजन में जहां कृषकों को अपेक्षाकृत अधिक दिनों तक कृषि संबंधी जानकारी तथा वैज्ञानिकों से रूबरू, चर्चा करने का मौका मिला, वही लोक कला, लोक संगीत, लोक शिल्प, लोक साहित्य, लोक परम्परा को जानने व समझने का पूरा अवसर मिला। गत आयोजनों की भांति इसमें भी राष्ट्रीय स्तर के कृषि यंत्र निर्माताओं, उर्वरक, कीटनाशक दवा निर्माताओं ने बढ़-चढ़कर भाग लेकर जता दिया कि वह आयोजन अद्धितीय व बेमिसाल है।

धीरे-धीरे एग्रीटेक कृषि मेला इस जिले की पहचान बनते गया। इस आयोजन के बगैर जांजगीर अधूरा लगने लगा। लोक शिल्प, लोक कला, लोक संगीत, लोक साहित्य तथा उन्नत कृषि यंत्रों का यह वृहत आयोजन जिला मुख्यालय जांजगीर में हर वर्ष आयोजित किया जा रहा है। नि: संदेह यह आयोजन कृषि के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन ला रहा हैह और वह दिन दूर नहीं जब यह जिला यांत्रिकी खेती के मामले में सबसे अग्रणी जिला होगा। देश की खुशहाली तब है जब एक-एक किसान कृषि में पारंगत होकर कृषि को एक नई दिशा प्रदान करेगा।

राज्य बनने के बाद राजधानी में राज्योत्सव तथा सभी जिलों में लोक महोत्सव शुरू हुआ। इन महोत्सवों की महती आवश्यकता महसूस की गई। सभी जिले अपनी परंपराओं पुरावैभवों एवं प्राकृतिक संसाधनों से संपन्न है, पर यह महसूस किया गया कि हम इन पुरावैभवों एवं संसाधनों को अभी तक संपूर्णता के साथ अभिव्यक्त नहीं कर पाए हैं। जिले के सभी प्राकृतिक पर्यटन स्थलों, ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक महत्व के स्थानों तथा विकास के नये सोपानों की समग्र जानकारी एकत्र कर प्रांत के बाहर एवं भीतर प्रस्तुत किये ताकि जिले की पहचान बन सके। जांजगीर लोक महोत्सव में जिले की संपूर्ण सांस्कृतिक एवं सामाजिक गतिविधियों को एक मंच पर प्रस्तुत कर लोक व्यापीकरण के लिए उन्हें प्रदर्शित एवं संरंक्षित किया जाता है। इससे जिलों के संगीत, कला, साहित्य एवं परंपरा के संरक्षण एवं विकास को नई दिशा मिल जाने के आसार साफ नजर आने लगे है।

जांजगीर के लोक महोत्सव का अपना विशिष्ट पहचान बना इसके साथ एग्रीटके कृषि मेला के संयोजन के कारण है। लोक परंपराओं के दृश्य मान होने के साथ साथ एक से बढ़कर कलाकार नृत्य एवं संगीत प्रस्तुत करते जिसे देखने के लिये हजारों की भीड़ लगती है। सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन लगातार चलते रहता है। इसी बीच कृषि संबंधी आधुनिकतम औजारों, नवीन उपलब्धियों एवं उत्पादन की नई वैज्ञानिक जानकारियों को शीर्षस्थ विषय विशेषज्ञों द्वारा संगोष्ठियों के माध्यम से कृषकों के लिये रखा गया। जाजल्ल देव की नगर में शबरी की पवित्रता एवं अड़भार की अधिष्ठात्री देवी के तंत्र साधनों की साधना की छांह में हम अपने जिले को व्याख्यायित कर पूरे देश में प्रचारित किये यही हमारे लोक महोत्सव की उपलब्धि है। इसी कामना के साथ हम गत वर्षो से लगातार लोक महोत्सव का आयोजनकर रहे है। हाईस्कूल के विशाल प्रागण में सैकड़ो झाकियां लगती है, खेल तमाशे वाले आते है और अपनी आंखों में जीजिविषा लिए अपार भीड़ जुटती है। इस आयोजन के उद्घाटन में महामहिम राज्यपाल की सहभागिता तथ प्रतिदिन किसी न किसी केन्द्रीय या प्रादेशिक मंत्री की उपस्थिति एवं विषय विशेषज्ञों के उद्बोधन महोत्सव की उपादेयता को प्रतिपादित करती हैं।

महोत्सव के समय पूरे जिले में उत्सव का माहौल होता है। ग्रामवासी सहभागी होकर आनंद एवं ज्ञान प्राप्त करते है। उन्नत कृषक आवश्यकता के अनुरूप ट्रेक्टर एवं उन्नत कृषि यंत्र खरीदते है तथा शासन की विभिन्न योजनाओं से अवगत होकर लाभ उठाते है। बहुत ही आल्हादपूर्ण वातावरण में संपन्न होता है लोक महोत्सव। पूरे नगर को सजाया संवांरा जाता है तथा जिले की उपलब्धियों को दूर-दूर तक प्रसारित - प्रचारित किया जाता है। इस अशासकीय महोत्सव में शासकीय अमलों की एकजुट सहभागिता उल्लेखनीय होती है। इस महोत्सव की निरंतरता के लिये हम सब संकल्पित है ताकि जांजग्रीर-चांपा जिला राज्य के नक्शे में अलग से चिन्हित हो सके। कोरना काल में यह महोत्सव स्थगित हुआ था इसके बाद वर्तमान में निरंतर महोत्सव गतिमान है।

जांजगीर-चांपा जिला का लोक महोत्सव मेला छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक धरोहर परंपरा और लोककला का अनूठा प्रतीक है यह महोत्सव न केवल संस्कृति को बल्कि क्षेत्रीय कला तथा कलाकारो को संरक्षित एवं प्रोत्साहित करता है। यह महोत्सव स्थानीय के साथ-साथ बाहरी कलाकारों को एक मंच प्रदान करता है। महोत्सव में लोकनृत्य लोकगीत, स्थानीय व्यंजनों तथा हस्तशिल्प के प्रदर्शन से क्षेत्र की विविधता का जानने पहचानने का अवसर प्राप्त होता है। ग्रामीण क्षेत्र के कलाकारों तथा शिल्पकारों को अवसर प्रदान करने के साथ-साथ मेला उन्हें अपने कौशल का प्रदर्शन करने और जीवन-यापन के साधन उपलब्ध कराने का अवसर देता है। महोत्सव लोगो के बीच आपसी भाईचारे और सांस्कृतिक एकता को बढ़ावा देता है। यह मेला हमारी प्राचीन संस्कृति से जुड़ने और सांस्कृतिक विरासत को जानने का एक सशक्त माध्यम है। यह संस्कृति, समृद्धि, कृषि विकास का एक अद्वितीय संगम है। लोक कलामहोत्सव ने न केवल ग्रामीण परंपराओं और लोक कला को प्रोत्साहित किया है बल्कि कृषि और तकनीकी उन्नति के प्रति किसानों और युवाओं को भी जागरूक किया है। जांजगीर का लोक महोत्सव मेला एक सार्थक पहल है जो सांस्कृतिक और आर्थिक विकास की दिशा में मिल का पत्थर साबित हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जाज्वल्या पत्रिका, 2004
2 सोनी रमाकांत, 2008, अतीत से वर्तमान तक
3. चोपड़ा सीमा, 2013, छत्तीसगढ़ एक परिचय
4. नवभारत दैनिक समाचार पत्र, 2014
5. वत्स सुमनेश कुमार, 2015, छत्तीसगढ़ की पुरातात्विक संपदा
6. जाज्वल्या पत्रिका, 2016
7. बघेल वीरेंद्र सिंह, 2017, आओ जाने छत्तीसगढ़
8. शील साहित्य परिषद, 2018
9. पटैरया शिवअनुराग, 2022, छत्तीसगढ़

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Role of Traditional Training Methods in Wrestling: A Study of Wrestler Development in Rajasthan

Dr. Neelam Yadav* Shashank Gurjar**

***Associate Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**
**** Ph. D. Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

Abstract : Wrestling in Rajasthan continues to thrive as both a sport and a tradition, largely due to the sustained use of traditional training methods passed down through generations. This research explores the role that these methods play in the development of wrestlers in Rajasthan. Focusing on aspects such as endurance training, diet, and technical skills, the study investigates how traditional practices compare with modern sports science techniques. Using qualitative and quantitative research methods, the paper assesses the long-term effectiveness of these methods and their impact on performance. The results suggest that while traditional training provides a solid foundation for physical conditioning and mental discipline, the integration of modern techniques can enhance performance and reduce injury risk. Future research should investigate the blending of traditional and modern methods to optimize wrestler development in Rajasthan.
Keywords: traditional wrestling training, Rajasthan, athlete development, sports science, endurance training, diet, technique.

Introduction -Wrestling has long been a cornerstone of sports culture in Rajasthan, with its roots firmly planted in the traditional *akhadas* where wrestlers, known as *pehlwans*, have trained for generations. The training regimens followed in these *akhadas* emphasize physical strength, flexibility, discipline, and technique, using methods that have been passed down through centuries. Wrestlers in Rajasthan are deeply connected to these traditions, often engaging in routines that blend rigorous physical training with a strict diet and lifestyle.

As modern sports science continues to influence athletics globally, there has been a growing interest in understanding how these traditional methods measure up against contemporary approaches. Modern techniques such as strength and conditioning programs, nutrition plans, and injury prevention strategies are becoming increasingly popular in urban centers, even among traditional athletes. However, in rural Rajasthan, many wrestlers continue to adhere to the time-honored ways of training, which include mud pit training, natural diets, and rigorous endurance routines.

This study explores the role of traditional wrestling training methods in Rajasthan, examining how they contribute to wrestler development, performance, and longevity in the sport. By comparing traditional approaches with modern sports science techniques, the research aims to assess the benefits and potential limitations of both systems in developing athletes for national and international competition.

Review of Literature:

1. Traditional Wrestling Training in Rajasthan: Traditional training methods in Rajasthan focus heavily on endurance, strength, and discipline. Wrestlers typically train in *akhadas*, where their routines involve physical exercises such as *dands* (push-ups), *baithaks* (squats), and grappling drills. Studies by Meena and Sharma (2020) indicate that these exercises develop core strength and flexibility, which are crucial for success in wrestling. However, the lack of modern strength equipment and facilities poses challenges when competing against athletes trained in contemporary methods.

2. Diet and Nutrition in Traditional Wrestling: A wrestler's diet is considered a vital part of their training in Rajasthan. Traditional diets consist of high-protein meals such as milk, almonds, and ghee, which are believed to enhance strength and endurance. Singh and Rao (2019) found that while these diets are beneficial, they often lack the precision of modern sports nutrition plans, which are carefully designed to maximize muscle recovery and performance.

3. Modern Training Techniques and Their Impact: Modern sports science has introduced techniques such as plyometric training, personalized diet plans, and injury prevention strategies. Research by Gupta and Patel (2021) suggests that integrating these techniques with traditional training can lead to better performance outcomes for

wrestlers. However, the challenge lies in adapting these modern methods to the traditional wrestling context without compromising the cultural and historical significance of the sport.

Research Objectives: The primary objective of this research is to analyze the role of traditional wrestling training methods in Rajasthan and how these practices contribute to the development of wrestlers. The study aims to:

1. Examine the effectiveness of traditional training methods in improving physical strength and endurance.
2. Investigate the role of traditional diets in supporting wrestler development and performance.
3. Compare traditional methods with modern sports science techniques to determine areas for potential improvement.
4. Assess the long-term sustainability of traditional training for competitive wrestling in Rajasthan.

Research Hypotheses:

1. Traditional training methods in wrestling significantly enhance strength and endurance but may lack the specificity needed for peak performance.
2. Traditional diets provide essential nutrients for wrestlers but may not be as optimized as modern sports nutrition plans.
3. Integrating modern training techniques with traditional methods will result in better performance outcomes for wrestlers.
4. A blended approach to training, combining traditional and modern methods, will support long-term athlete development.

Research Methodology:

Subjects: This study will focus on 60 wrestlers, aged 18 to 35, from various districts in Rajasthan, with experience in district or state-level competitions. Wrestlers will be divided into two equal groups of 30:

Group	Number of Wrestlers	Training Method
Traditional Training Group (TTG)	30	Traditional *akhada* methods (mud pits, bodyweight exercises, etc.)
Modern Training Group (MTG)	30	Modern sports science (gym-based strength training, specialized diet)

Tools & Instruments:

1. **Strength and Conditioning Test:**

Test	Measur-ement	Traditional Train-ing Group (TTG)	Modern Training Group (MTG)
Bench Press 1RM	kg	75 kg (average)	85 kg (average)
Squat 1RM	kg	110 kg (average)	125kg (average)
Yo-Yo End urance Test	Level	Level 14	Level 16
Sit-&-Reach Flexibility Test	cm	22 cm	27 cm
Agility T-Test	sec	12.8 sec	12.0 sec

2. **Dietary Assessment:** Wrestlers will complete a 7-day food diary. The dietary intake will be analyzed to assess the intake of macronutrients.

Nutrient	Daily Intake (Traditi -onal)	Daily Intake (Modern)	Recommended Daily Intake (RDI)
Protein (grams)	85g	120g	100g
Carbohydrates (grams)	200g	300g	350g
Fats (grams)	70g	60g	70g
Water Intake (liters)	2.2L	3.0L	3.0L

3. **Technique Analysis:** Each wrestler's technique will be evaluated using video analysis. Technical proficiency in key moves such as takedowns and holds will be assessed based on the following criteria:

Technique	Traditional Training Group (TTG)	Modern Training Group (MTG)
Speed of Execution	7/10	8/10
Precision and Form	8/10	9/10
Adaptability in Competition	7.5/10	8.5/10

4. **Injury Reports:** Injuries will be tracked throughout the study, categorized by severity and type.

Type of Injury	Traditional Training Group (TTG)	Modern Training Group (MTG)
Muscle Strains	25%	15%
Ligament Tears	10%	5%
Joint Dislocations	12%	8%
Overuse Injuries (e.g., tendonitis)	30%	20%

Data Collection Procedures:

1. **Initial Assessments (Baseline Testing):** Baseline testing will measure strength, endurance, flexibility, and technique. Injuries will also be documented.

Test	Baseline Performance (TTG)	Baseline Performance (MTG)
Bench Press 1RM	70 kg	75 kg
Squat 1RM	105 kg	115 kg
Yo-Yo Endurance Test Level	13	14
Sit-and-Reach Flexibility Test	20 cm	25 cm

2. **Midpoint Evaluation:** After six months, progress in strength, endurance, flexibility, and injury frequency will be evaluated.

3. **Final Assessment:** At the end of 12 months, final assessments will compare the performance and injury outcomes with the baseline and midpoint data.

Data Analysis:

1. **Descriptive Statistics:** Summarize demographics and performance metrics.

2. **Paired T-Test:** Compare the progress between

baseline, midpoint, and final assessments within each group.

3. ANOVA: Compare differences in performance and injury rates between TTG and MTG.

4. Correlation Analysis: Examine the relationship between diet and performance improvements, particularly focusing on protein intake and strength gains.

Ethical Considerations: All participants will provide informed consent, and their personal data will be kept confidential. The wrestlers can withdraw at any point without penalty. All tests will be supervised by certified trainers and medical professionals to minimize injury risks.

Conclusion:

1. Effectiveness of Traditional Methods: The study highlights that traditional wrestling training methods in Rajasthan are highly effective in building strength, endurance, and discipline. However, these methods may lack the precision and injury prevention strategies found in modern sports science approaches.

2. Diet and Performance: Traditional diets, while rich in nutrients, may not fully meet the demands of modern wrestling competition. A more scientific approach to diet and nutrition could enhance recovery and performance.

3. Blending Tradition with Modernity: The integration of modern training techniques, such as personalized nutrition plans and injury prevention strategies, can significantly enhance performance outcomes for wrestlers trained in traditional methods.

4. Sustainability of Traditional Practices: While traditional methods have sustained wrestling in Rajasthan for generations, the growing competitiveness of the sport at national and international levels necessitates the inclusion of modern sports science techniques to ensure long-term success and health.

Recommendations for Further Study:

1. Long-Term Health Impacts: Research should investigate the long-term health outcomes of wrestlers who follow traditional training methods, particularly regarding injury rates and recovery.

2. Injury Prevention Techniques: Future studies should focus on integrating modern injury prevention techniques within the traditional wrestling context to reduce the frequency of common injuries.

3. Dietary Optimization: Further research is needed to optimize traditional diets using modern sports nutrition principles to enhance wrestler performance and recovery.

References:-

1. Gupta, A., & Patel, S. (2021). “Modern Training Techniques and Their Impact on Indian Wrestlers.” *Journal of Sports Science*, 19(3), 321-336.
2. Meena, R., & Sharma, P. (2020). “Traditional Wrestling Methods in Rajasthan: Core Strength and Endurance.” *Indian Journal of Physical Training*, 16(2), 89-102.
3. Singh, V., & Rao, D. (2019). “Dietary Practices Among Wrestlers: Traditional Versus Modern Approaches.” *Journal of Athletic Nutrition*, 22(4), 198-212.
4. Kumar, A., & Sharma, V. (2020). “Injury Patterns in Traditional Indian Wrestling.” *Indian Journal of Sports Medicine*, 14(1), 105-115.

****

Aryabhatta : Great Indian Mathematician and Astronomer

Dr. Meenakshi Rawal*

***Assistant Professor (Mathematics) PMCoE Maharaja Bhoj Govt. P. G. College, Dhar (M.P.) INDIA**

Abstract : Aryabhatta, also known as the father of Indian Mathematics, was a ronowned Astronomer and Mathematician of the ancient times of India. His most famous works are the Aryathatiya (499 CE, when he was 23 years old). He was also the first Mathematician to obtain the calculation based on sine and versine tables from 0 to 180 degrees with four decimal places of precision. He was the first person to say that Earth is spherical and it revolves around the Sun.
Keywords – Aryabhatta, Ancient Astronomy, Solar system, Mathematics.

Introduction - Aryabhatta was an ancient Indian Mathematician and Astronomer who lives during the Gupta dynasty, approximately between 476 and 550 CE. He is widely regarded as on of the most influential figures in the history of Indian Mathematics and Astronomy. Aryabhatta's contributions laid the foundation for significant advancements in these fields.

Aryabhatta was born in 476 CE in Ashmata, possibly present day Kodungallur in Kerala, India. Not much is known about his personal life, and historical records about the personal life of Aryabhatta are sparse and limited. While the absence of personal details leaves much unknown about Aryabhatta's daily life, his enduring legacy lies in the impact of his groundbreaking ideas and theories in the fields of Mathematics and Astronomy.

Aryabhatta's most renowned work is the 'Aryabhattiya' a comprehensive text that covers various aspects of Mathematics and Astronomy. It is composed in 118 verses, each written in poetic form. These verses cover various aspects of Mathematics including arithmetic algebra, and trigonometry, as well as astronomy, providing insights into Aryabhatta's profound understanding of these subjects.

Methodology – The research for this study involves a through analysis of ancient Indian Texts, Scholarly articles on Aryabhatta and his work, In addition, data from online journals and websites is also utilized together information for this study.

Contribution of Aryabhatta to Astronomy – Aryabhatta made several impactful discoveries and inventions in Astronomy. Aryabhatta's astronomical system was known as the audAyaka system. Scientists made several discoveries such as that Planets and Moon in the Solar system are lightened by sunlight only. He gave the theory that Earth rotates on its axis only. Some of the Aryabhatta's significant contribution to Astronomy includes:

1. **Solar system motion**
2. **Sidereal periods**
3. **Eclipses**
4. **Heliocentrism**

Aryabhatta also wrote several books about his discovery and piece of work in Mathematics and Astronomy. Some of books are Aryabhatiya, Rishab's Good Theory of Indian, Dash Geetika, Arya sidhanta.

Contribution of Aryabhatta to Mathematics – Aryabhatta made several contributions to Mathematics inventions and theories. Due to his significant contribution and achievement in Mathematics.

A few of the Aryabhatta's contributions to Mathematics includes following:

1. **Decimal places :** Aryabhatta invented the decimal system and used zero as a place holder. He names the first 10 decimal places and gives algorithms for abtaining square and cubic roots, using the decimal.
2. **Value of Pi :** He treats geometric measurements employing 62832/20000 =3.1416 forπ, very close to the actual value of 3.14159.
3. **Area of Triangle :** Aryabhatta correctly calculated the areas of a triangle and of a circle for example, in Ganitapadam, he mentioned that " for a triangle, the result of a perpendicular with the half-side is the area".
4. **Table of sines :** Using the Pythagoras theorem he obtained one of the two methods for constructing his table of sines.
5. **Other contributions :** Mathematical series, Quadratic equation, Indeterminate equations, Trigonometry, Algebra.
6. **Understood the concept of Zero :** Aryabhatta in his work Aryabhatiya, developed a number system using letters from the Indian alphabet to represent numbers. Aryabhatta's

understanding of the place value system in numbers required the concept of zero. The place - value system was clearly in place in Aryabhatta's work. Aryabhatta did not explicitly use a symbol for zero in his work. However, French Mathematician Georges Ifrah argues that Knowledge of zero was implicit in Aryabhatta's place - value system.

Conclusion – Aryabhatta's contribution to Mathematics and Astrology were phenomenal and influential. The discoveries and inventions made by the Aryabhatta turned out to be helpful in the Science and Mathematics fields. Aryabhatta's contributions to Mathematics like trigonometry, pi, place value system etc. solve significant problems and are still practiced and taught in school and colleges. His contribution to Astronomy brought major changes in the scientific sector, which led scientists and Astronauts to achieve new milestones in Astronomy.

References :-

1. Mohan Apte, "Aryabhatiya", Rajhans publication, 2011.
2. Walter Eugene clark, "Aryabhatiya of Aryabhatta: An Ancient Indian work on Mathematics and Astronomy" Data Book World, Jan 2020.
3. B.S. Yadav, "Ancient Indian leaps in to Mathematics" springler, 2010.
4. Kak, Subhash C, "Birth and early development of India Astronomy" Selin Helaine, 2000.
5. Anant Vyavhare, "Indian Mathematics (from Aryabhatta to Ramanujan and others)" , Sharda Sanskrit Sansthan, Varanasi, 2011.
6. Sudipto Das "The ARyabhata clan" Niyogibooks, 2017.
7. https://www.britannica.com/biography/Aryabhata
8. https://unacademy.com
9. https://prepp.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय न्याय पालिका में साक्षी की सुरक्षा

ऋचा अग्रवाल*

* शोधार्थी, रवीन्द्रनाथ टागोर विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – 'बेंथम' के शब्दों में द्द साक्षी न्याय के आँख ओर कान होते है। भारतीय न्याय व्यवस्था में साक्षियों की सुरक्षा एक महत्वपूर्ण पहलू है। भारत में न्यायिक प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य अपराधियों को दंडित करना और न्याय को स्थापित करना है। इस प्रक्रिया में साक्षियों का योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है ,क्योंकि वे घटना के संबंध में अपने अनुभव और जानकारी प्रदान करते हैं, जो न्याय की प्रक्रिया की निष्पक्षता और पारदर्शिता को सुनिश्चित करने में सहायक होती है। न्यायालयों में गवाही देने वाले व्यक्तियों को विभिन्न रूपों में खतरे का सामना करना पड़ सकता है द्यभारत में कई बार न्यायालयों में साक्षी अपनी गवाही से मुकर जाते हैं और 'शत्रुतापूर्ण' हो जाते हैं। इसके पीछे कई कारण हो सकते हैं। सबसे पहला कारण –यह है कि साक्षियों को धमकियाँ दी जाती हैं या उनका शारीरिक और मानसिक शोषण किया जाता है जिससे वे गवाही देने से मुकर जाते हैं। इसके अलावा अपराधियों के साथ उनके रिश्ते भय और दबाव भी एक महत्वपूर्ण कारण बनते हैं। कई बार साक्षियों को न्यायालय की प्रक्रिया और इसके परिणामों का डर होता है और वे अपने बयान बदलने का निर्णय लेते हैं। इसके अतिरिक्त साक्षियों को अपर्याप्त सुरक्षा और कानूनी सहायता का अभाव भी एक बड़ा कारण हैद्य भारतीय न्याय प्रणाली में साक्षियों का विद्रोही होना एक गंभीर समस्या बन गई है, जिसे हल करने के लिए सख्त कदम उठाने की आवश्यकता है। यह लेख भारतीय न्याय पालिका में साक्षी की सुरक्षा के महत्व विभिन्न सुरक्षा उपायों और कानूनी द्रष्टिकोण को विस्तार से बताता है। इसके साथ ही यह भी संकेत करता है कि साक्षी की सुरक्षा को लेकर न्यायालयों में और अधिक सुधार की आवश्यकता है ताकि न्याय प्रणाली में विश्वास बना रहे और अपराधों को रोकने में सफलता प्राप्त हो सके।

शब्द कुंजी– साक्षी , साक्षी संरक्षण स्कीम ,अपराध, आपराधिक न्याय प्रणाली।

प्रस्तावना

साक्षी कौन है?

किसी अपराध को अंजाम देना एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें कई परस्पर जुड़ी घटनाएं शामिल होती हैं। आपराधिक न्याय प्रणाली का एक प्राथमिक लक्ष्य अपराधी पकड़ना और दंडित करना है। जिसे गहन और व्यवस्थित जांच के ढांचे के बाद ही पूरा किया जा सकता है।अपराध को साबित करने के लिए आवश्यक गतिविधियों की श्रृंखला की पहचान करना ,व्यवस्थित साक्ष्य एकत्र करना और जांच प्रक्रिया के लिए प्रस्तुतिकरण महत्वपूर्ण है, क्योंकि मुकदमे के दौरान आपराधिक जिम्मेदारी से बचने के लिए बचाव पक्ष लगभग हमेशा इसकी सत्यता को चुनौती देने का प्रयास करेगा और वाद के दौरान आपराधिक दायित्व से बचने के लिए इसकी सत्यता को अस्वीकार करेगा।

भारतीय न्याय प्रणाली मे 'साक्षी' की परिभाषा नहीं है। 'साक्षी'वह व्यक्ति होता है जो किसी घटना अपराध या कानूनी मामले से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है। साक्षी की भूमिका न्यायिक प्रक्रिया में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है क्योंकि वह अपने देखे सुने या अनुभव किए हुए तथ्यों को अदालत में प्रस्तुत करता है। साक्षियों के बयानों के आधार पर न्यायाधीश या न्यायालय यह निर्णय ले सकते हैं कि आरोपी दोषी है या निर्दोष।

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार: साक्षी वह व्यक्ति है जिसने कोई घटना देखी या अनुभव की हो, विशेषकर अपराध या दुर्घटना, और जो इस संबंध में साक्ष्य देने के लिए सक्षम हो।

ब्लैक लॉ डिक्शनरी के अनुसार: साक्षी वह व्यक्ति है जो किसी तथ्य की गवाही देने के लिए समन्वित होता है या जो किसी घटना के संबंध में अपने ज्ञान की पुष्टि करने के लिए साक्ष्य प्रदान करता है। यह वह व्यक्ति हो सकता है जिसने घटना को प्रत्यक्ष रूप से देखा हो या जिसने किसी विशेष मामले के संबंध में जानकारी प्रदान की हो।

'साक्षी' वह व्यक्ति होता है जो किसी घटना अपराध या कानूनी मामले से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है। साक्षी की भूमिका न्यायिक प्रक्रिया में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है क्योंकि वह अपने देखे सुने या अनुभव किए हुए तथ्यों को अदालत में प्रस्तुत करता है। साक्षियों के बयानों के आधार पर न्यायाधीश या न्यायालय यह निर्णय ले सकते हैं कि आरोपी दोषी है या निर्दोष।साक्षी के प्रकार–

1. प्राकृतिक साक्षी (eye witness)
2. आंशिक साक्षी (corroborative witness)
3. विशेषज्ञ साक्षी (expert witness)
4. चरित्र साक्षी (character witness)

न्यायशास्त्र में साक्षी की भूमिका:

1. सत्यापन का साधन : साक्षी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य घटनाओं के पुनर्निर्माण और सत्यापन में सहायक होते हैं।

2. **न्यायिक प्रक्रिया में सहायता:** साक्षी की गवाही न्यायिक प्रक्रिया को गति प्रदान करती है और तथ्यों को स्पष्ट करने में मदद करती है।

3. **विश्वसनीयता का परीक्षण:** साक्षी की विश्वसनीयता का परीक्षण उनकी गवाही की सटीकता और उनके चरित्र के आधार पर किया जाता है।

4. साक्षियों की साक्ष्य के बिना, न्यायिक प्रक्रिया अपूर्ण हो सकती है और अपराधियों को सजा दिलाने में कठिनाई हो सकती है।

उद्देश्य:

1. क्या भारतीय न्यायपालिका में साक्षी संरक्षण का तंत्र प्रभावी है? मौजूदा कानून कितना प्रभावी हैं और कहां सुधार की आवश्यकता है? तथा इसके उपाये ।

2. वर्तमान विधायी प्रावधानों का अध्ययन करना ,ताकि भविष्य में संभावित विकास हो सके ।

शोध पद्धति – वर्तमान कानूनी ढांचे मे 'साक्षी की सुरक्षा' एक मुख्य समस्या है ओर साक्षी सुरक्षा तंत्र इस समस्या को पूरी तरह खतम करने मे अपर्याप्त है । साक्षी को उचित सुरक्षा न मिलने से न्यायपालिका की प्रतिष्ठा और न्यायिक निर्णयों पर क्या प्रभाव पड़ता है।

शोध विश्लेषण – यह अनुसंधान विधि गुणात्मक और रचनात्मक होगी। इसका उद्देश्य मौजूदा साक्षी सुरक्षा तंत्र की संरचना, कार्यान्वयन और समस्याओं का गहराई से अध्ययन करना है।

1. **सर्वेक्षण और साक्षात्कार:** न्यायधीशों, वकीलों, और कानून प्रवर्तन अधिकारियों से साक्षात्कार और सर्वेक्षण किए जाएंगे। इसके माध्यम से साक्षियों की सुरक्षा से संबंधित अनुभवों, चिंताओं और सुधार के सुझावों को एकत्र किया जाएगा।

2. **द्वितीयक डेटा विश्लेषण:** रिपोर्ट, न्यायालय के फैसले, और सरकारी दस्तावेजों का अध्ययन किया जाएगा ताकि साक्षी संरक्षण के प्रभाव का विश्लेषण किया जा सके।

3. **साक्षात्कार और केस स्टडी:** साक्षियों के मामलों की समीक्षा और साक्षात्कार किए जाएंगे, जिससे साक्षी सुरक्षा तंत्र की वास्तविक कार्यप्रणाली का आकलन किया जा सके।

4. **स्रोत और डेटा संग्रहण:**

- **प्राथमिक स्रोत:** न्यायालयों में साक्षियों के मामलों का विश्लेषण, सरकारी रिपोर्टें, साक्षियों के साक्षात्कार, और संबंधित अधिकारियों से डेटा एकत्रित किया जाएगा।
- **द्वितीयक स्रोत:** न्यायालय के फैसले, शैक्षिक लेख, सरकारी दस्तावेज और मीडिया रिपोर्टें।
- **डेटा विश्लेषण:** एकत्रित डेटा को विश्लेषणात्मक और संगठनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाएगा। इसका उद्देश्य साक्षी सुरक्षा तंत्र की प्रभावशीलता को समझना और उसकी कमियों की पहचान करना होगा। डेटा का विश्लेषण विषयगत तरीके से किया जाएगा, जिसमें साक्षी सुरक्षा की विभिन्न चुनौतियों पर जोर दिया जाएगा।

साक्षी की योग्यता – साक्षी ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो न्यायलाय को साक्ष्य देता है या जरूरत पढ़ने पर दे सकता है । सभी अन्य न्यायिक और अर्ध–न्यायिक अदालतें और फोरम साक्षियों के माध्यम से साक्ष्य प्राप्त करते हैं।साक्षी को साक्ष्य के माध्यम के रूप में विचार करते समय,तीन महत्वपूर्ण विचार उठते हैंरू भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 124 के अनुसार जो भी व्यक्ति पूछे गए प्रश्न को समझने में सक्षम है और उन प्रश्नों के आधार पर तर्कसंगत उत्तर देने में सक्षम है।

- साक्षियों की योग्यता और योग्यता,
- अदालत में साक्षियों की उपस्थिति और गवाही सुनिश्चित करने का दायित्वय और
- गवाही की अयोग्यता का आधार,

तथ्यों को साबित करने के लिए साक्ष्य न्यायालय में प्रस्तुत करना होगा। एक साक्षी की योग्यता और एक साक्षी की अनिवार्यता में अंतर है । एक विधिक रूप से सक्षम साक्षी अवश्य प्रमाण ?साक्ष्य देता है द्यभारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 124 साक्षियों की योग्यता से संबंधित है। धारा 124 –कौन गवाही दे सकता है? सभी व्यक्ति साक्ष्य देने के लिए सक्षम होंगे, जब तक कि न्यायालय यह न समझे कि कम उम्र, अत्यधिक बुढ़ापे, शारीरिक या मानसिक रोग, या इसी प्रकार के किसी अन्य कारण से वे उनसे पूछे गए प्रश्नों को समझने में या उन प्रश्नों के तर्कसंगत उत्तर देने में असमर्थ हैं।

स्पष्टीकरण–विकृत चित्त वाला व्यक्ति साक्ष्य देने के लिए अयोग्य नहीं है, जब तक कि वह अपनी विकृत चित्तावस्था के कारण उससे पूछे गए प्रश्नों को समझने और उनका युक्तिसंगत उत्तर देने में निवारित न हो।

विरोधी ?पक्ष द्रोही साक्षी (hostile witness) और इसका साक्ष्य मूल्य–

भारतीय न्याय व्यवस्था में 'पक्षद्रोही ? विरोधी गवाह' (hostile witness) का मतलब उस साक्षी से है, जो न्यायालय में दिए गए अपने पूर्व बयान से मुकर जाता है

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2024 की धारा 157 में विरोधी साक्षी के विषय में स्पष्ट प्रावधान हैं। यह धारा अभियोजन पक्ष या बचाव पक्ष को यह अधिकार देती है कि वे किसी साक्षी को यदि वह अपने बयान से मुकरता है या उसमें किसी तरह का बदलाव करता है, तो उसे विरोधी साक्षी घोषित कर सकते हैं। इसके बाद, वकील उस साक्षी से क्रॉस–एक्सामिनेशन (विपरीत परीक्षण) कर सकता है, जिसका उद्देश्य साक्षी की साक्ष्य की विश्वसनीयता पर प्रश्न उठाना और गवाही के अंतर्निहित सत्य को उजागर करना होता है। धारा 157 के मुताबिक, किसी साक्षी के पूर्व बयान को उसी तथ्य से जुड़ी बाद की गवाही की पुष्टि के लिए साबित किया जा सकता है. इसके लिए, साक्षी द्वारा उसी तथ्य से जुड़ा कोई पूर्व कथन साबित किया जा सकता है–

- जब वह तथ्य घटित हुआ था
- उस तथ्य की जांच करने के लिए विधिक रूप से सक्षम किसी प्राधिकारी के समक्ष दिया गया कोई पूर्व कथन

1. राजा राम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य –इस निर्णय में यह कहा गया कि यदि साक्षी अपने बयान से पलटता है, तो पुलिस रिकॉर्ड पर दर्ज बयान का मूल्य साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, बशर्ते वह बयान विश्वसनीय हो।

2. अकबर बनाम कर्नाटका राज्य–न्यायालय ने यह माना कि साक्षी के पहले के बयान को उसकी गवाही से मुकरने के बावजूद साक्ष्य के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, बशर्ते वह बयान अन्य साक्ष्यों से मेल खाता हो और विश्वसनीय हो।

3.बसप्पा / बसवराज बनाम कर्नाटका राज्य – यह निर्णय दर्शाता है कि यदि साक्षी अदालत में अपने बयान से पलटता है, तो उसके पहले के बयान को साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, बशर्ते वह बयान

प्रमाणित हो और न्यायिक दृष्टिकोण से उचित हो।

साक्षी –संरक्षण कानून की आवश्यकता क्यों है?

- साक्षियों का भय और दबाव– यह साक्षियों के लिए शारीरिक और मानसिक दोनों तरह का खतरा पैदा कर सकता है। इस कारण से साक्षी सुरक्षा की आवश्यकता है ताकि वे बिना किसी डर के अपने बयान दे सकें।
- साक्षियों की सुरक्षा से यह सुनिश्चित होता है कि वे अदालत में सही और निष्पक्ष गवाही देने के लिए स्वतंत्र हों।
- ताकि अपराधों की रोकथाम हो सके और अपराधियों के खिलाफ सजा दी जा सके।
- साक्षियों का विश्वास और न्याय व्यवस्था पर विश्वास: अगर साक्षियों को यह विश्वास होता है कि उनकी सुरक्षा की जाएगी, तो वे न्याय व्यवस्था में विश्वास बनाए ,जिससे न्यायिक प्रक्रिया की पूरी विश्वसनीयता बनी रहती है।
- राज्य की जिम्मेदारी: राज्य का यह कर्तव्य है कि वह अपने नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करे। साक्षी सुरक्षा कानून राज्य के दायित्व को पूरा करने में मदद करता है, विशेष रूप से उन साक्षियों के लिए जो अत्यधिक जोखिम में होते हैं। यह कानून न केवल साक्षियों की व्यक्तिगत सुरक्षा को सुनिश्चित करता है, बल्कि न्यायिक प्रणाली के संचालन को भी संरक्षित करता है।

साक्षी सुरक्षा पर विभिन्न विधि आयोग की रिपोर्टें

1. भारत सरकार का 14वां विधि आयोग

- साक्षियों की पहचान और स्थान को गोपनीय रखा जाना चाहिए।
- साक्षियों को शारीरिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए पुलिस सुरक्षा का प्रबंध किया जाना चाहिए।
- साक्षियों को कानूनी सहायता प्रदान की जानी चाहिए ताकि वे न्यायिक प्रक्रिया में अपने अधिकारों को समझ सकें और उनका उल्लंघन न हो।
- साक्षियों की सुरक्षा से संबंधित एक विस्तृत कानून को लागू करने की सिफारिश की गई।

2. 22वें विधि आयोग का रिपोर्ट

- साक्षियों को मानसिक, शारीरिक और वित्तीय सहायता प्रदान की जाए, ताकि वे सुरक्षित महसूस करें और बिना किसी भय के गवाही दे सकें।
- न्यायालयों को साक्षियों के लिए संरक्षण प्रदान करने के लिए ठोस उपाय लागू करने चाहिए, जैसे कि साक्षियों की पहचान को गोपनीय रखना और उनका स्थान बदलना।

3. विधि आयोग की 198वीं रिपोर्ट के तहत साक्षी सुरक्षा

- विशेष साक्षी सुरक्षा प्राधिकरण का गठन: यह प्राधिकरण साक्षियों की सुरक्षा, पुनर्वास और वित्तीय सहायता को सुनिश्चित करेगा।
- साक्षियों को सुरक्षा उपायों का विकल्प देना: साक्षियों को यह विकल्प दिया जाए कि वे अपनी सुरक्षा के लिए पुलिस सुरक्षा या अन्य सुरक्षा उपायों का चयन कर सकें।
- मानसिक और शारीरिक समर्थन
- विकसित कानून और प्रोटोकॉल का निर्माण
- साक्षियों को विशेष सुरक्षा देने के उपाय जैसे कि: साक्षियों के परिवर्तित नाम से गवाही देने की व्यवस्था,गवाही देने के दौरान पहचान छुपाने की अनुमति देना, विशेष पुलिस सुरक्षा प्रदान करना।

4. मालिमथ समिति :मालिमथ समिति (Malimath Committee) का गठन 2000 में भारत सरकार द्वारा किया गया

- साक्षियों को अपराधियों से सुरक्षा प्रदान करने के लिए एक ठोस कानून की आवश्यकता जताई गई।ताकि वे अपने बयान देने से डरें नहीं।
- आपराधिक मामलों की सुनवाई को त्वरित और निष्पक्ष तरीके से पूरा किया जाए। इसके लिए विशेष अदालतों का गठन किया जाए द्य साक्ष्य और गवाही की प्रक्रिया में सुधार, आपराधिक न्याय प्रणाली में पारदर्शिता ला सकें।
- पुलिस को आधुनिक तकनीकों और प्रशिक्षण से सुसज्जित किया जाए।
- प्राथमिकता वाले मामलों की पहचान और सुनवाई तथा संवेदनशील मामलों में विशेष अदालतों का गठन।
- साक्षियों और पीड़ितों के लिए कानून।

भारत मे साक्षी सुरक्षा कानून

साक्षी को झूठी गवाही देने के लिए प्रेरित करने या प्रभावित करने का प्रयास: आपराधिक प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2008 की धारा 195। के तहत, यदि कोई व्यक्ति साक्षी को झूठी गवाही देने के लिए प्रेरित करता है या प्रभावित करता है, तो उसे सात साल की सजा हो सकती है। यह संशोधन सही दिशा में पहला कदम है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 148 के साथ धारा 149 से 152 को मिलाकर पढ़ने पर, साक्षी को अनुचित जिरह से बचाने की व्यवस्था की गई है, जो अक्सर आवश्यक होती है।

साक्षी सुरक्षा स्कीम के पीछे का दर्शनशास्त्र –

BNSS ने विधिवत रूप से साक्षी संरक्षण योजना (विटनेस प्रोटेक्शन स्कीम) की शुरुआत की है। यह योजना हाल ही में उच्च न्यायालयों/सुप्रीम कोर्ट द्वारा दिए गए निर्देशों के अनुरूप है। BNSS की धारा 398 के अनुसार, प्रत्येक राज्य सरकार को साक्षियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए साक्षी संरक्षण योजना तैयार करनी और अधिसूचित करनी होगी। यह प्रावधान आपराधिक प्रक्रिया ढांचे में एक नई पहल है।

2018 में, सुप्रीम कोर्ट ने महेंद्र चौला मामले (Mahender Chawla v Union of India), में यह योजना विधिक घोषित की, 2018 की योजना ने साक्षियों की सुरक्षा के लिए एक समग्र कानूनी और संस्थागत ढांचे को स्थापित करने का विस्तृत दृष्टिकोण अपनाया। इसमें साक्षियों के जोखिम/असुरक्षा स्तर की श्रेणीकरण, साक्षी संरक्षण की प्रक्रियाएं, साक्षियों को आवश्यक सुरक्षा स्तर का आकलन करने के लिए पुलिस द्वारा धमकी विश्लेषण रिपोर्ट का परिचय, और इसकी कार्यप्रणाली को लागू करने और निगरानी करने के लिए पुलिस अधिकारियों और सत्रध्जिला अदालत के न्यायाधीशों की एक समिति का गठन शामिल था।

2019 में, गृह मंत्रालय (MHA) ने सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों को 14 जनवरी, 2019 को सं. 24013/35/2016 – सीएसआर.III के माध्यम से साक्षी संरक्षण योजना के संबंध में निर्देश जारी किए। MHA ने सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों से 2018 की साक्षी संरक्षण योजना को पूरी तरह से लागू करने के लिए आवश्यक कदम उठाने का अनुरोध किया और कहा कि यह संविधान के Article 141/142 के तहत 'कानून' होगी।

साक्षी संरक्षण स्कीम ,2018–

1. योजना के तहत संरक्षण आदेश के लिए आवेदन, उचित प्रपत्र और

सहायक दस्तावेजों के साथ उस जिले की सक्षम प्राधिकरण के सदस्य सचिव के माध्यम से किया जा सकता है जहाँ अपराध हुआ था।

2. जब सक्षम प्राधिकरण का सदस्य सचिव निर्धारित प्रपत्र में आवेदन प्राप्त करता है, तो वह संबंधित पुलिस उप-विभाग के प्रभारी सहायक पुलिस आयुक्त (SP)उप पुलिस अधीक्षक (DSP) को एक धमकी विश्लेषण रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए आदेश जारी करेगा।

3. स्थिति की तात्कालिकता के आधार पर, संभावित खतरे के कारण, आवेदन के दौरान साक्षी या उसके परिवार के सदस्यों के लिए अंतरिम सुरक्षा आदेश जारी कर सकता है।

4. धमकी विश्लेषण रिपोर्ट को जल्दी और गोपनीय रूप से पूरा करना चाहिए और आदेश प्राप्त होने के पांच कार्य दिवसों के भीतर सक्षम प्राधिकरण को सौंपना चाहिए।

5. धमकी विश्लेषण रिपोर्ट में खतरे की धारणा का वर्गीकरण किया जाएगा और यह सलाह देगा कि साक्षी या उसके परिवार को पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने के लिए कौन से कदम उठाए जाएं।

6. साक्षी संरक्षण के लिए आवेदन प्रक्रिया के दौरान, सक्षम प्राधिकरण साक्षी और उसके परिवार के सदस्यों, नियोक्ताओं या अन्य किसी व्यक्ति से व्यक्तिगत रूप से और यदि संभव न हो तो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से संवाद करेगा, ताकि साक्षी की सुरक्षा आवश्यकताओं का निर्धारण किया जा सके। सक्षम प्राधिकरण साक्षी संरक्षण आवेदनों पर सभी सुनवाई गुप्त रूप से करेगा और पूरी गोपनीयता बनाए रखेगा।

7. पुलिस अधिकारियों द्वारा धमकी विश्लेषण रिपोर्ट प्राप्त होने के पांच कार्य दिवसों के भीतर आवेदन का निपटारा करना होगा।

8. राज्य की साक्षी संरक्षण इकाई या परीक्षण अदालत, जैसा भी मामला हो, सक्षम प्राधिकरण के साक्षी संरक्षण आदेश को लागू करेगी।

9. साक्षी संरक्षण आदेश जारी होने के बाद, साक्षी संरक्षण सेल को सक्षम प्राधिकरण को मासिक फॉलो-अप रिपोर्ट प्रदान करनी होती है। साक्षियों को ष्साक्षी संरक्षण योजनाष और इसकी मुख्य विशेषताओं की जानकारी जांच अधिकारी और अदालत द्वारा दी जानी चाहिए।

10. यदि सक्षम प्राधिकरण यह निर्धारित करता है कि साक्षी संरक्षण आदेश को संशोधित करने की आवश्यकता है तो परीक्षण समाप्त होने के बाद संबंधित पुलिस उप-विभाग के प्रभारी सहायक पुलिस आयुक्त (एसीपी)उप पुलिस अधीक्षक (डीएसपी) से नई धमकी विश्लेषण रिपोर्ट का अनुरोध किया जाएगा।

11. 'व्यय वसूली' और समीक्षा' का भी प्रावधान है ।

साक्षी संरक्षण योजना ,2018 में कमियाँ-साक्षी संरक्षण योजना, 2018 में कई खामियां हैं, जिन्हें यहाँ संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है:

- साक्षी की गरिमा की रक्षा के लिए कोई प्रावधान नहीं है और यह साक्षी को सहायता प्रदान करने के लिए एक अधिकारी नियुक्त करने के बारे में मालीमथ समिति द्वारा की गई सिफारिश पर मौन है।
- योजना में अदालत कक्ष में साक्षियों की सुविधा के लिए उचित व्यवस्था जैसे सीटें, आराम करने की जगह, शौचालय, पीने का पानी आदि का उल्लेख नहीं है।
- योजना में यात्रा भत्ता (TA) या दैनिक भत्ता (DA) का प्रावधान नहीं है।
- योजना में मामले की सुनवाई स्थगित होने से संबंधित मुद्दों पर चर्चा नहीं की गई है।
- योजना में साक्षियों को उत्पीड़न से बचाने के लिए कोई प्रावधान नहीं है।

साक्षी संरक्षण योजना, 2018 के अनुसार, 'साक्षी संरक्षण कार्यक्रमों' का खर्च राज्य सरकार को उठाना होगा, जो कि 198वें विधि आयोग की रिपोर्ट की सिफारिश के विपरीत है, जिसमें कहा गया है कि 'साक्षी संरक्षण कार्यक्रमों' की लागत केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा समान रूप से साझा की जानी चाहिए।

- पुलिस द्वारा तैयार की गई खतरे के विश्लेषण की रिपोर्ट में, प्रभावशाली लोगों के साथ मिलीभगत की संभावना अधिक है।

निष्कर्ष - यह सुनिश्चित करने के लिए कि कानून का शासन सुरक्षित रहे, साक्षियों को बिना किसी डर या धमकी के अदालत में गवाही देने या जांच में भाग लेने में सक्षम होना चाहिए। देश धीरे-धीरे ऐसे कानून बना रहे हैं या ऐसे उपाय लागू कर रहे हैं जो उन साक्षियों की सुरक्षा करते हैं जिनका कानून प्रवर्तन के साथ सहयोग या अदालत में गवाही देना उनके या उनके परिवार के जीवन को खतरे में डाल सकता है। भारत का 2018 का साक्षी संरक्षण योजना साक्षी संरक्षण का कानून है। साक्षी की गरिमा की रक्षा के लिए, 2018 साक्षी संरक्षण योजना में न तो मलिमथ समिति की सिफारिशों को और न ही 198वें विधि आयोग की रिपोर्ट की सिफारिशों को शामिल किया गया है। आपराधिक न्यायालय प्रणाली तब तक यह आदेश देने में सक्षम नहीं है कि साक्षी स्वतंत्र और निष्पक्ष हो जब तक कि उचित समर्थन प्रदान नहीं किया जाता। 2018 की साक्षी संरक्षण योजना साक्षियों को उचित समर्थन देने में विफल रही।

हालांकि, 2018 में, अदालत में दोषसिद्धि की दर 50% थी, और 2019 में, अदालत में दोषसिद्धि की दर 50.4% थी। अंततः, 2020 में अदालत में दोषसिद्धि की दर 59.2% थी, जो पांच वर्षों में सबसे अधिक थी। इस प्रकार, हम यह मान सकते हैं कि साक्षी संरक्षण कार्यक्रम ने दोषसिद्धि की दर में वृद्धि में योगदान दिया।

कई खामियों के बावजूद, साक्षी संरक्षण योजना ने भारत के आपराधिक न्याय सुधारों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। फिर भी, ऐसा प्रतीत होता है कि इस रणनीति ने पूरी तरह से समस्या का समाधान नहीं किया है। भारत में न केवल एक मजबूत साक्षी संरक्षण कार्यक्रम की कमी है, बल्कि एक गैर-जिम्मेदार कार्यपालिका और विधायिका भी है, जिससे साक्षी संरक्षण कार्यक्रम न्यायपालिका द्वारा संचालित एक व्यक्ति का शो बन गया है। प्रतिपक्षीय प्रणाली में, अभियोजन पक्ष को उचित संदेह से परे आरोपी की दोषसिद्धि साबित करनी होती है। इस मामले में, साक्षी तथ्यों पर प्रकाश डालकर और न्यायाधीश को सत्य को स्पष्ट रूप से देखने में मदद करके महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। न्याय की रक्षा के लिए, साक्षियों को स्वतंत्र और निष्पक्ष गवाही देने की अनुमति दी जानी चाहिए। परिणामस्वरूप, साक्षियों की सुरक्षा के लिए प्रणाली को मजबूत करना चाहिए ताकि कानून की आंखों और कानों की रक्षा की जा सके।

प्रभावी साक्षी संरक्षण कार्यक्रम संगठित अपराध समूहों के विघटन के लिए महत्वपूर्ण व्यक्तियों की सुरक्षा के लिए एक व्यापक आपराधिक न्याय रणनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। एक प्रभावी साक्षी संरक्षण कार्यक्रम बनाने के लिए निम्नलिखित रणनीतियाँ अपनाई जा सकती हैं:

1. कानूनी और संस्थागत आँकलन,
2. विधायी सहायता,

3. न्यायिक अधिकारियों (जिसमें न्यायाधीश, अभियोजक, पुलिस और जेल अधिकारी शामिल हैं) को लक्षित कर जागरूकता बढ़ाने के कार्यक्रम,
4. न्यायाधीशों, अभियोजकों, पुलिस और साक्षी संरक्षण अधिकारियों को प्रशिक्षण देना,
5. साक्षी संरक्षण इकाइयों की स्थापना में सहायता के लिए विशेष समर्थन और सलाह, जिसमें मानक संचालन प्रक्रियाएं विकसित करने, उपयुक्त संरचनाएं और स्टाफ व्यवस्था पर सलाह शामिल है,
6. साक्षियों की सुरक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को मजबूत करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. Shivaji Sahabrao Bobade v State of Maharashtra, (1973) 2 SCC793.
2. Mahender Chawla &Ors. v Union of India & Ors,2018 SCC SC 2678.
3. Girish Abhayankar and Asawari Abhayankar, Witness Protection In Criminal Trials In India (1st edn,Thomson Reuters 2018)13.
4. Dr. Abhishek Atrey,Law Of Witness (1st edn, Lawmann's 2020)174.
5. J. F. Stephen, Digest Of The Law Of Evidence (4th edn.Arkose Press 2010)220.
6. Fourth Report of the National Police Commission, 20180(India).
7. Basappa @ Basavaraj S/O Chandappa v The State Of Karnataka, CRA NO.200069/2017.
8. C.R.,A NO.200069/2017
9. ibid .
10. 1979 AIR 1848.
11. Sat Paul v Delhi Administration, AIR 1976 SC 294
12. Law Commission Of India's 198th Report On Witness Identity Protection And Witness Protection Programmes (August 2006) INDIA.
13. Law Commission of India , "Consultation Paper on Witness Protection Witness protection "7 (August, 2004).
14. AIR 2003 SC 886..
15. Law Commission of India," 154th Report
16. Prof.N.V. Paranjape, Criminology and Penology, 218(Central Law Publications)
17. Allahabad, 12th Edition, 2006)
18. Satya Prakash Sagar, Crime and Punishment in Mughal India
19. 47(Reliance Publishing House, Delhi, 1967

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Study Comparing the Quality of Life of Elderly Living with Family and Old Age Homes (with special reference to Chhatarpur District)

Suyash Sagar Bajpai*

***Deptt. of Sociology, Maharaja Chhatrasal Bundelkhand University, Chhatarpur (M.P.) INDIA**

Introduction - Aging is an important aspect in everyone's life. As old age deteriorates normal physical, psychological well-being, isolates them from society and also leads to financial problems etc. India, like many other developing countries in the world is perceiving the fast ageing of its population. Changing the cultural and family value system in the present situation is one of the major reasons for the increase in old age homes over the country as it causes economic pressure on children which becomes the reason behind the negligence of elderly. 'Quality of life' is determined by conditions of events and age had no problem, later after the disintegration of the joint family system the impact of economic change became a particular problem that old age people are facing currently in this country. WHO defines "Quality of life context of the culture and value systems in which they live and in relation to their goals, expectations, standards and concerns". It is a broad ranging concept affected in a psychological state, personal belief, social relationship and relationship to the salient features of their environment. Lifestyle changes created difficulties and time has become very valued in the fast paced life to leave the elderly unattended. Shifts in intergenerational relations and changes in family structure have brought many issues into focus. The traditional family system is breaking up which is one of the major impacts of globalization. Most of the elders feel that the time spent by their children and grandchildren with them has reduced due to usage of mobiles and computers and more common reason for increasing old age homes are disrespect in the house by the son or daughter-in-law.

Objectives: The objective of this study was to compare the quality of life of elderly living with family and at old age homes.

Methods: The study was conducted in two different settings, those elderly living with family and at an old age home. The duration of the study is three months and it was conducted in the Chhatarpur city. '50' elderly were included in study from an old age home (Darshana Vradhashram) in Chhatarpur and rest '50' elderly were included in study through non-probability purposive sampling. For sampling, a random sampling technique was used in an old age home in Chhatarpur city and elderly living with family also selected from multiple areas/ colonies. Total sampling is '100'. Elderly people above the age of 60 years living in the old age homes and with family, who were willing to participate in the study. Gender and Marital Status variables taken into account.

The researcher has enquired the respondents with the help of well-structured schedule method. They were interviewed face to face using a questionnaire after obtaining their consent. Institutional ethical clearance was obtained and written informed consent was obtained from the study participants before obtaining any information from them. Quality of life of elderly was assessed using WHOQOL-Bref questionnaire after taking informed consent from the respondent.

Data was analysed using SPSS and Excel programmes. The data has been presented with the help of frequencies and percentage. Primary data to be collected by using 'Structured Interview' and 'Questionnaire'. The data were analysed on the basis of objectives of the study by using SPSS method and the results were recorded as frequencies, mean, SD, SED and t- value. In addition to the tables and bar charts, researcher also applied the t-test for comparing the responses of the respondents. Data entry and statistical analysis was done using SPSS. Frequency distribution is calculated for all the variables. Descriptive statistics and t-test was applied, and appropriate value was considered as significance.

Results

Physical capacity: This study shows that 56% of elderly living with family had high quality physical health whereas elderly living at old age homes. Elderly living with family scored high in the physical health domain.

Psychological well being: This study shows that 26% of elderly living with family showed high psychological well being, compared to elderly living at an old age home. Elderly living with family scored high in the psychological well-being domain.

Social relationship: This study shows that 50% elderly living with family showed high quality of life in social relations, compared to elderly living at an old age home. Elderly living with family scored high in the Social relationship domain.

Environment and living conditions: This study shows that 24% elderly people living with their family show a good environment and living conditions, compared to elderly living at an old age home. Elderly living with family scored high in the Environment and living conditions domain.

In all domains, low scores showed in elderly living at old age homes compared to elderly living with family.

The overall quality of life score shows that Elderly living with family scored higher in comparison with Elderly living at old age home score. Quality of life was good in 63.5% of families and at old age homes it was 27.5%. So we may state that elderly living with family are happy and comfortable with their family members and they live their life in good quality.

Table 1: Quality of Life of elderly living with family and at old age homes

Domain	QOL scores	Family (N=50)		Old age home (N=50)	
		N	%	N	%
Physical Capacity	Low	0	0	15	30
	Moderate	22	44	29	58
	High	28	56	6	12
Psycho logical well-being	Low	6	12	26	52
	Moderate	31	62	21	42
	High	13	26	3	6
Social relation ship	Low	0	0	24	48
	Moderate	25	50	28	56
	High	25	50	0	0
Environ ment & living condition	Low	5	10	29	58
	Moderate	33	66	21	42
	High	12	24	0	0

Discussion & Conclusion: Quality of life in both old age homes and family setup elders was really very different. From this study we are able to find out that quality of life in family setup is better than old age homes. Psychologically, many people are depressed as they live separately from their family and relatives, friends and the community they live in. The main reason for residing in old age homes was no family, lack of care takers. QOL-BREF under the four domains like physical, psychological, social and environmental domains were assessed in both old age homes and family setup and it was found to be statistically highly significant. They feel left alone when physically ill and psychologically need the family support during those periods. Most of them in old age homes were not satisfied with the life in old age homes, even though they feel safe in old age homes. Old age should be given proper care and needs special attention and to be kept engaged with family members in all memorable moments to avoid loneliness and depression. Increasing old age homes can be reduced by providing more care to our elder ones in our family who are more valuable and supported us through out to lead a peaceful and economic life.

The elderly need to remain active, to know that they still have a part to play in the family or community to which they can make a useful contribution. They still need to feel love and affection. To admit them in old age home is to let them know that they are being discarded. The support and care must come from the heart, with feelings of sympathy affection and compassion. Continue effort must therefore be made to preserve and strengthen the Joint family system. Quality of life is subjective and dependent upon individual perceptions. This study compared the Quality of life of the elderly living with family and at old age homes of Vadodara city. There is significant difference in quality of life of elderly living with family and at old age homes. Comparatively elderly living with family Experience High quality of life than elderly living at old age homes. Age, health, transportation facility, gender, education, marital status and money were found to be significantly associated with quality-of-life domains.

References:-

1. https://youtu.be/ui3LbDLzAC8?si=QeG1O4JWqqRkAH7T
2. Aghanuri, et.al., (2013)., "Quality of life and its relationship with quality of diet among elderly people" in urban areas of Markazi province, Iran, Journal of Arak Medical University, 15(68):1– 11.
3. Amonkar, P. Mankar MJ (2018)."A Comparative Study of Health Status and Quality of Life of Elderly People Living in Old Age Homes and within Family Setup in Raigad District, Maharashtra" Indian J Community Med. 2018 Jan-Mar;43(1):10- 13.
4. Barua, A, Mangesh R, Harsha Kumar HN, Mathew S. (2007)., A cross-sectional study on quality of life in geriatric population. Indian J Community Med; 32(2):146- 7.
5. Chandrika, et.al., (2015). "Quality of Life of Elderly Residing in Old Age Homes and Community in Visakhapatnam City". IOSR Journal of Dental and Medical Sciences Ver. IX, 14 (10), 2279–861.
6. Chandrika, S. Dr. P. Radha Kumari, Dr.B.Devi Madhavi (20/15)., "Quality of Life of Elderly Residing in old Age Homes and Community in Visakhapatnam City " IOSR Journal of Dental and Medical Sciences (IOSR-JDMS) Volume 14, Issue 10 Ver. IX (Oct. 2015), PP 27-31.
7. Dani, Pravin (2018). "A comparative study to assess the quality of life among senior citizens residing at homes and old age homes of Pune city"., faculty of Nursing, Bharti Vidyapeeth, Deemed University.
8. Dhan Lakshmi, G. (2019), "Quality of Life and Family Support Among Elders Living with Family and In Old Age Home: A Comparative Study". University of

Madras.

9. Hemawathi and Swaroopa (2014)., studied on "Problems Faced by Elderly- A Comparative Study of (Institutionalized and Non-Institutionalized)".100.
10. Jacob, John Kattakayam (2000). Led a relative investigation of "Elderly care by families and Institutions in Kerala".200.
11. Joseph, et al. (2014). conducted "Life Satisfaction among Inhabitants of selected Old Age Homes at Chandigarh- A Cross Sectional Survey".
12. Kavitha, A K (2007). 'A comparative study on quality of life among senior citizens living in home for aged and family setup in Erode District.Nightingale Nursing Times. Jul; 3(4): 47.
13. Kumar, Rakesh (2020)." Problems faced by elderly persons living with families and old age homes in Haryana A comparative study". Kurukshetra university. Singhji University, Bhavnagar, Gujarat.
14. Kumkum, & Tulika (2015). In her study "A comparative study of the relationship between emotional intelligence and life satisfaction among elders of homes and institutions".
15. Mathew, M.A., George S.L and Paniyad N. (2009)."Comparative Study on Stress, Coping Strategies and Quality of Life of Institutionalized and non-institutionalized in "Kottayam District, Kerela"., Indian Journal of Gerontology, 23(1), 79-89, (2009).
16. Mudey, Abhay et.al., (2011)."Assessment of Quality of Life among Rural and Urban Elderly Population" Wardha, Department of Community Medicine, Jawaharlal Nehru Medical College, Maharashtra, Journal of Ethno Med Publication 5(2),89-93.
17. Panday, R, Kiran M, Srivastava P, Kumar S.(2015). "A study on quality of life between elderly people living in old age home and within family setup". Open J Psychiatry Allied Sci.2015;6:127-31.
18. Suganya, (2020). study on "Quality of life of elderly people in old age homes in Chennai city" and to investigate 'the quality of life of the elderly people in old age homes'.
19. Thresa, S. S. (2020). A cross-sectional descriptive study was conducted in Kanchipuram district, Tamil Nadu on the topic of "quality of life among elderly in old age homes and family setup".
20. Usha, V.K. Lalitha K. (2016). "Quality of life of senior citizens: A Rural-Urban comparison". Indian J Soc Psychiatry 2016; 32:158-63.
21. World health report 'mental health: New understanding, new hope' WHO, Geneva, 2007.http://www.who.int/whr/whr01_en.pdf

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण के पंचायतीराज व्यवस्था का प्रभाव (झाबुआ जिले के अनुसूचित जनजाति के विशेष संदर्भ में)

मोहन डोडवे* डॉ. दीपक कारभारी**

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) डॉ. अंबेडकर विश्वविद्यालय, डॉ. अंबेडकर नगर, महू (म.प्र.) भारत
** शोध निर्देशक, सामाजिक विज्ञान अध्ययनशाला, डॉ. अंबेडकर विश्वविद्यालय, डॉ. अंबेडकर नगर, महू (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – पंचायतीराज व्यवस्था राजनीतिक जागरूकता के अलावा आम आदमी के सशक्तिकरण का भी परिचालक है, इसलिये विकेंद्रीकरण शासन वयवस्था और सहभागिता मूलक लोकतंत्र पंचायतीराज व्यवस्था के मुख्य घटक है। इसकी सफलता वहां के केवल स्थानीय स्तर पर लोगों की सक्रियता के लिये ही नहीं बल्कि देश में लोकतंत्र के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये भी आवश्यक है।

शब्द कुंजी – पंचायतीराज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति पर प्रभाव।

प्रस्तावना – सन 1993 में जब 73 वां संविधान संशोधन पंचायतीराज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ है तब से आधुनिक भारत की राजनीतिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण कदम रहा है। जिसमें त्रिस्तरीय राजव्यवस्था में ग्राम पंचायत, पंचायत समिति एवं जिला पंचायत के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों का स्वशासन परिषद में सहभागिता लोकतंत्र का एक मॉडल बनाया गया है। सरकार को आंतरिक क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को करीब लाने की योजना है।

शोध प्रविधि :

अध्ययन का क्षेत्र –मध्य प्रदेश का झाबुआ जिला अध्ययन का क्षेत्र चुना गया है।

अध्ययन का समग्र –झाबुआ जिलें के ग्राम पंचायत के अनुसूचित जनजातियों के निर्वाचित सदस्य अध्ययन के समग्र है।

अध्ययन की इकाई – अध्ययन की इकाई अनुसूचित जनजातियों के निर्वाचित प्रतिनिधि है।

निदर्शन पद्धति – निदर्शन विधि के अंतर्गत शोध की प्रकृति तथा उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए देव निदर्शन के उद्देश्यपूर्ण पद्धति के द्वारा झाबुआ जिले की 06 ब्लाक से 300 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है।

समंकों के संकलन के स्त्रोत:

प्राथमिक स्त्रोत –प्राथमिक संमकों का संकलन निम्नलिखित स्त्रोतों के द्वारा किया गया है :-

1. साक्षात्कार अनुसूची 2. अवलोकन 3. समूह चर्चा 4. फोटोग्राफी एवं 5. कैमरा है।

द्वितीयक स्त्रोत –द्वितीय समंक के अन्तर्गत संबंधित साहित्य, पत्र-पत्रिकाएं, समाचार पत्र, इंटरनेट, भू-अभिलेख, सांख्यिकीय कार्यालय तथा विश्वविद्यालयों से प्राप्त शोध साहित्यों का अध्ययन किया गया है।

शोध समस्या का चयन – प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण का लक्ष्य अनुसूचित जनजाति की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा शैक्षणिक स्तर को उंचा उठाना है। लेकिन ग्रामीण परिवारों की स्थिति बहुत खराब हो रही है एवं उनके विकास में भी समूचित लाभ अनुसूचित जनजातियों के लोगों को मिल पा रहा है या नहीं, को जानने के लिये शोध समस्या का चयन किया गया है।

पंचायतीराज व्यवस्था का प्रभाव – पंचायतीराज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही प्रभाव पड़ें है जो इस प्रकार है –

विकेंद्रीकरण के अंतर्गत पंचायतीराज व्यवस्था के सकारात्मक प्रभाव–

1. जिला परिषद में जिला स्तर पर, पंचायत समिति में मध्यवर्ती स्तर पर एवं ग्राम पंचायत में ग्राम स्तर पर पंचायत राजव्यवस्था के माध्यम से विकास किया गया है।
2. 11वीं अनुसूची में कृषि विस्तार के साथ ही साथ भूमि विकास, भूमि सुधार कार्यावियन, चकबंदी एवं भूमि संरक्षण किया जाता है।
3. इसके अलावा लघु सिंचाई, जल प्रबंधन एवं जल विभाजक क्षेत्र का विकास किया गया है। पशुपालन, डेयरी उद्योग, कुक्कुट पालन एवं मत्स्य पालन आदि ग्रामीण विकास के लिये स्वरोजगार के अवसर प्रदान किये गये है।
4. सामाजिक वानिकी और फार्म वानिकी की व्यवस्था के साथ ही लघु वन उपज एवं लघु उद्योग जिसके अंतर्गत खाद्य प्रसंस्करण उद्योग भी शामिल किये गये है।
5. खादी ग्राम उद्योग एवं कुटीर उद्योगों को बढावा दिया गया है इसके अतिरिक्त ग्रामीण आवासन, पेयजल, ईधन एवं चारा की वयवस्था के साथ ही यातायात के साधन जैसे सडके, पुलिया, पुल, फेरी, जलमार्ग और अन्य संचार के साधन उपलब्ध किये गये। विद्युतीकरण के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत वितरण किया जा सकें।
6. अपारंपरिक ऊर्जा स्त्रोत एवं गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के अलावा शिक्षा जिसके अंतर्गत प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालय शामिल किये जाने के साथ ही साथ तकनीकी प्रशिक्षण, व्यावसायिक शिक्षा, प्रौढ एवं औपचारिक शिक्षा आदि की व्यवस्था की गयी।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

7. सांस्कृतिक क्रियाकलाप के लिये बाजार एवं मेले की व्यवस्था की गयी।
8. स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के लिये अस्पताल, प्राथमिक सवास्थ्य केंद्र और औषद्यालय के अलावा महिला बाल विकास केंद्र खोले गये सार्वजनिक वितरण प्रणाली एवं सार्वजनिक बस्तियों का निर्माण किया गया है।

सारिणी क्रं. – 1: उत्तरदाताओं से पंचायतीराज व्यवस्था के आने से उनपर पडने वाले प्रभाव के आधार पर वर्गीकरण

उत्तरदाता	आवृत्ति	प्रतिशत
सकारात्मक प्रभाव	180	60.0 प्रतिशत
नकारात्मक प्रभाव	70	23.4 प्रतिशत
दोनों ही	50	16.6 प्रतिशत
योग	300	100.0

आरेख क्रं. – 1

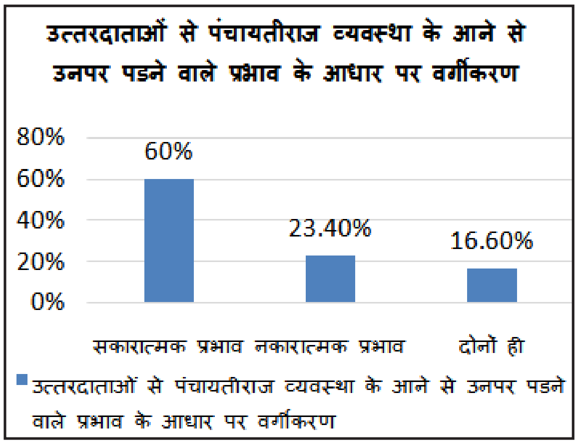

उपरोक्त सारिणी में उत्तरदाताओं से पंचायतीराज व्यवस्था के आने पर उनपर क्या प्रभाव पडा है, जानने के लिये किये गये वर्गीकरण के अनुसार 300 उत्तरदाताओं में से 180 उत्तरदाताओं का मानना है कि उनपर सकारातमक प्रभाव पडा है जिसका 60 प्रतिशत है जो कि सर्वाधिक है जबकि 70 उत्तरदाताओं का मानना है कि इसका उनपर नकारात्मक प्रभाव भी पडा है जिसका 23.4 प्रतिशत है जबकि 50 उत्तरदाताओं का मानना है कि सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही प्रभाव पडा है जिसका 16.6 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि झाबुआ जिले के अधिकांश लोगों पर पंचायतीराज व्यवस्था के आने से सकारात्मक प्रभाव पडा है।

सारिणी क्रं. – 2: उत्तरदाता से ग्रामीण स्तर पर अनुसूचित जनजातियों को प्राप्त जनहित सुविधाओं में कोई सुधार होने, के आधार पर वर्गीकरण

उत्तरदाता	आवृत्ति	प्रतिशत
मूलभूत आवश्यकताओं में सुधार	112	37.3 प्रतिशत
ग्रामीणों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार	98	32.7 प्रतिशत
स्थानीय क्षेत्रों में लाभ मिलना	90	30.0 प्रतिशत
योग	300	100.0

आरेख क्रं. – 2

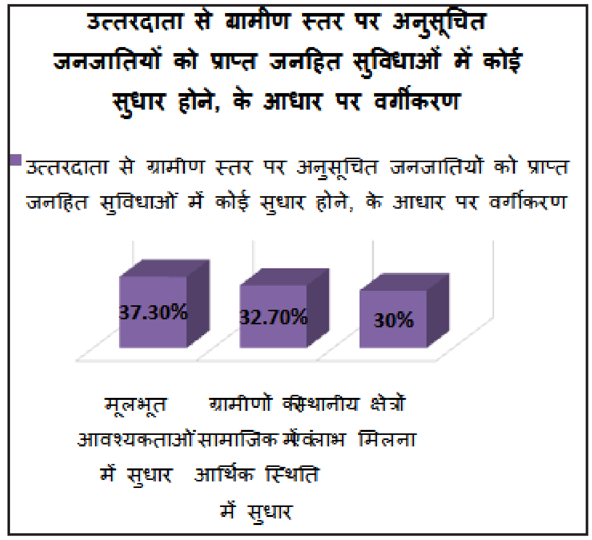

उपरोक्त सारिणी में उत्तरदाता से ग्रामीण स्तर पर अनुसूचित जनजातियों को प्राप्त जनहित सुविधाओं में कोई सुधार होने, के आधार पर वर्गीकरण 300 उत्तरदाताओं में से 112 उत्तरदाताओं का कहना है कि उनकी मूलभूत आवश्यकताओं में सुधार हुआ है जिसका 37.3 प्रतिशत है जबकि 98 उत्तरदाताओं ने कहा कि ग्रामीणों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है जिसका 32.7 प्रतिशत है एवं 90 उत्तरदाताओं ने कहा है कि स्थानीय क्षेत्रों में लाभ मिला है जिसका 30 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाताओं के अनुसार ग्रामीण स्तर पर अनुसूचित जनजातियों को प्राप्त जनहित सुविधाओं में उनके क्षेत्र में मूलभूत सुविधाओं में सुधार हुआ है।

विकेंद्रीकरण के अंतर्गत पंचायतीराज व्यवस्था के नकारात्मक प्रभाव:

1. अनुसूचित जनजाति में पंचायत की ग्राम सभा की बैठकों में महिलायें समय के अभाव एवं अज्ञानता व समझ की कमी के अतिरिक्त रूढिवादी विचारधारा के कारण कई समस्याओं का सामना कर रही है।
2. पंचायत की ग्रामसभाओं की नियमित रूप से बैठक न होने के स्थानीय समस्याओं का समाधान नहीं हो पाता है। इसका कारण पंचायत कर्मियों के पास समय का अभाव रहता है।
3. इसके अलावा जनजागरूकता में कमी के साथ ही पंचों एवं लोगों में इसके प्रति रूचि का अभाव रहता है।

सारिणी क्रं.– 3: उत्तरदाताओं से पंचायतीराज व्यवस्था के अंतर्गत सामाजिक सेवाओं के नियोजन एवं क्रिंयावयन में आने वाली समस्याओं के आधार पर वर्गीकरण

उत्तरदाता	आवृत्ति	प्रतिशत
जातिवाद	40	13.4 प्रतिशत
अशिक्षा	90	30.0 प्रतिशत
वित्तीय साधनों का अभाव	70	23.4 प्रतिशत
राजनीति एवं गुटबंदी	35	11.6 प्रतिशत
उपरोक्त सभी	65	21.6 प्रतिशत
योग	300	100.0

आरेख क्रं. – 3

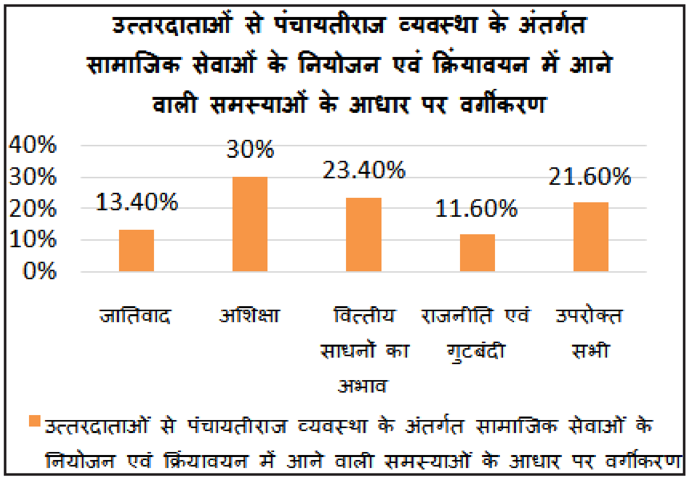

उपरोक्त सारिणी में उत्तरदाताओं से पंचायतीराज व्यवस्था के अंतर्गत सामाजिक सेवाओं के नियोजन एवं क्रिंयावयन में आने वाली समस्याओं के आधार पर वर्गीकरण करने पर 300 उत्तरदाताओं में से 40 उत्तरदाताओं का कहना है कि जातिवा सबसे बडी समस्या है जिसका 13.4 प्रतिशत है जबकि 90 उत्तरदाताओं का कहना है कि पंचायतीराज व्यवस्था में आने वाली सबसे बडी समस्या अशिक्षा है जिसका 30 प्रतिशत है जो कि सबसे अधिक है। 70 लोगों का कहना है कि उनके पास वित्तीय साधनों के अभाव के कारण पंचायत के नियोजन में समस्यायें उत्पन्न हो रही है जिसका 23.40 प्रतिशत है जबकि 35 लोगों का कहना है कि पंचायतीराज व्यवस्था में राजनीति एवं गुटबंदी बडी समस्या है जिसका 11.6 प्रतिशत है एवं 65 लोगों का कहना है कि उपरोक्त सभी बातें पंचायतीराज के कार्य नियोजन में बाधक है जिसका 21.6 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट है कि झाबुआ जिले में पंचायतीराज व्यवस्था के अंतर्गत सामाजिक सेवाओं के नियोजन एवं क्रिंयावयन में आने वाली सबसे बडी समस्या वहां के लोगों को अशिक्षित होना है।

निष्कर्ष :

1. झाबुआ जिले के सर्वेक्षण के आधार पर जिले में विकेंद्रीकरण के पंचायतीराज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति समुदाय पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही प्रकार के प्रभाव पडे है लेकिन पंचायतीराज व्यवस्था के आने से ग्रामीण स्तर पर अनुसूचित जनजातियों को प्राप्त जनहित सुविधाओं में उनके क्षेत्र में मूलभूत सुविधाओं में सुधार हुआ है।
2. झाबुआ जिले के अधिकांश लोगों पर पंचायतीराज व्यवस्था के आने से सकारात्मक प्रभाव पडा है।
3. झाबुआ जिले में पंचायतीराज व्यवस्था के अंतर्गत सामाजिक सेवाओं के नियोजन एवं क्रिंयावयन में आने वाली सबसे बडी समस्या वहां के लोगों को अशिक्षित होना है।

सुझाव :

1. जिले में पंचायतीराज व्यवस्था के अंतर्गत सामाजिक सेवाओं के नियोजन एवं क्रियांवयन में आने वाली सबसे बडी समस्या वहां के लोगों को अशिक्षित होना है। इसलिये सर्वप्रथम झाबुआ जिले के अनुसूचित जनजाति समुदाय को शिक्षित करने की आवश्यकता है, इसके लिये हरसंभव प्रयास करने की जरूरत है।
2. पंचायतीराज व्यवस्था के आने से ग्रामीण स्तर पर अनुसूचित जनजातियों को प्राप्त जनहित सुविधाओं में उनके क्षेत्र में मूलभूत सुविधाओं में सुधार तो हुआ है, लेकिन शत-प्रतिशत मूलभूत सुविधायें मुहैया कराने के लिये सतत प्रयासरत होने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डिगरसे नरेन्द्र: *'नए पंचायत राज मे अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधियों की भागीदार का अध्ययन पंचायत'* (2001)
2. गौड़ कृष्ण कुमार (1991) : 'भारत में ग्रामीण नेतृत्व का उदीयमान स्वरूप', मानक पब्लिकेशन प्राधिकरण लिमिटेड, दिल्ली।
3. प्रसाद अवध (1998) :'गांवों में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीति परिवर्तन', रावत पब्लिकेशन, जयपुर।

****

नई शिक्षा नीति में सामाजिक विज्ञान

कैलाश चन्द्र वैष्णव*

* व्याख्याता, राजकीय कन्या महाविद्यालय, फलासिया, जिला उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – शिक्षा किसी समाज में सदैव चलने वाली सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके द्धारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है।

शिक्षा का तात्पर्य जीवन में चलने वाली ऐसी प्रक्रिया-प्रयोग से है, जो मनुष्य को अनुभव द्धारा प्राप्त होते हैं एवं उसके पथप्रदर्शक बनते हैं। यह प्रक्रिया सीखने के रूप में बचपन से ही चलती है एवं जीवन पर्यन्त चलती रहती है जिसके कारण मनुष्य के अनुभव भण्डार में लगातार वृद्धि होती रहती है।

शिक्षा शब्द संस्कृत के 'शिक्ष' धातु से बना है, जिसका अर्थ 'सीखना' अथवा 'सिखाना' होता है। शिक्षा का अर्थ आन्तरिक शक्तियों अथवा गुणों का विकास करना है।

नई शिक्षा नीति को भारत सरकार ने 29 जुलाई 2020 को मंजूर कर देश के सभी राज्यों के सामने प्रस्तुत कर लागू करने पर विचार विमर्श किया जा रहा है और कुछ राज्यों में नई शिक्षा नीति लागू हो चुकी है। कर्नाटक पहला राज्य बना है जहां नई शिक्षा नीति लागू की गई है। नई शिक्षा नीति का प्रमुख उद्देश्य देश में स्कूली शिक्षा और उच्च शिक्षा प्रणाली में क्रांतिकारी सुधार लाने के लिए मार्ग प्रशस्त करना और 2030 तक स्कूली शिक्षा में शत-प्रतिशत सकल नामांकन अनुपात के साथ पूर्व विद्यालय से माध्यमिक स्तर तक शिक्षा का सार्वभौमिकरण करना प्रस्तावित है। नई शिक्षा नीति में कई महत्वपूर्ण बाते समाहित है उसमें 12 साल की स्कूली शिक्षा और 3 साल की आंगनबाड़ी शिक्षा के साथ-साथ आधारभूत साक्षरता और संख्यात्मकता अर्थात् पढ़ने-लिखने और गणित में बुनियादी कौशल पर जोर दिया है। स्कूलों में शैक्षणिक धाराओं, पाठ्यत्तर व्यावसायिक धाराओं के बीच समन्वय बिठाते हुए इंटर्नशिप के साथ कक्षा 6 से शुरू करने के लिए व्यावसायिक शिक्षा का प्रावधान किया गया है। कक्षा पांचवी तक की पढ़ाई मातृभाषा अथवा क्षेत्रिय भाषा में करने का प्रावधान करते हुए 3600 हॉलिस्टिक प्रोग्रेस कार्ड के साथ मूल्यांकन में सुधार और लर्निन आउट कम प्राप्त करने के लिए छात्र प्रगति पर नजर रखना महत्वपूर्ण कदम है।

भविष्य में सभी राज्यों में नई शिक्षा नीति का क्रियान्वयन निश्चित है। और सभी राज्यों को एन.सी.ई.आर.टी. की पाठ्यपुस्तकों के साथ सामाजिक विज्ञान पाठ्यपुस्तक की रचना भी करना होगा। शिक्षाशास्त्री, शिक्षक और शिक्षा जगत से जुड़े लोगों के मन में कई प्रश्न उठे होंगे अथवा उठ रहे होंगे कि पाठ्यपुस्तक कैसी होनी चाहिए। विदित है कि नई शिक्षा नीति के क्रियान्वयन और वांछित परिणाम को प्राप्त करने में पाठ्यपुस्तक का महत्वपूर्ण योगदान है। पाठ्यपुस्तक में क्या पढ़ाना है? क्यों पढ़ाना है? कितना पढ़ाना है? कैसे पढ़ाना है? आदि महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर विचार करते हुए पाठ्यक्रम निर्धारण करने की बड़ी चुनौती के साथ-साथ भारत में विविधता मूलक समाज होने शिक्षा का प्राय: राजनीतिकरण करने की प्रवृत्ति के कारण पाठ्यपुसतक निर्माण करने वाली संस्थाओं और राज्य सरकारों के सामने एक बहुत बड़ी चुनौती है। पाठ्यपुस्तक का निर्माण, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या ही नई शिक्षा नीति की अवधारणा के अनुरूप विद्यार्थियों को संस्कारित करने, मानव जीवन मूल्य की स्थापना के साथ-साथ अन्य तमाम उद्देश्य को प्राप्त करने का लक्ष्य पाठ्यक्रम निस्तारण करते समय ध्यान में रखना होगा। छात्रों को मनोवैज्ञानिक अभिरूचि व वैज्ञानिक तरीके से कक्षा कक्ष में पठन-पाठन करना और जिस कक्षा के लिए पाठ्यपुस्तक बना रहे है उस कक्षा के छात्र की उम्र और ज्ञानार्जन करने की क्षमता का विशेष रूप से ध्यान रखना होगा। अधिगम और बाल मनोविज्ञान का विशेष ख्याल रखने की जरूरत होगी? उस उम्र के छत्र को क्या देना चाहते हैं? इन सब बिन्दुओं पर चर्चा करते हुए यहां कुछ तथ्यों का विश्लेषण प्रासंगिक है। नई शिक्षा नीति के अनुसार जो पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया है उसका यहां विस्तार से चर्चा करना लाभकारी होगा।

नई शिक्षा नीति के अनुसार पाठ्यक्रम निर्माण (**5+3+3+5**) 5 अर्थात् तीन से छह साल की उम्र तक का बालक आँगनबाड़ी में शिक्षा ग्रहण करेगा। पश्चात् 6 से 8 साल उम्र तक का बालक 2 वर्ष तक कक्षा पहली व दूसरी में पढ़ेगा। कोई परीक्षा नहीं। कोई पुस्तक नहीं। कोई अन्य पाबन्दी नहीं। बालवाटिका और खेलकूद के साथ संख्या ज्ञान। इस तरह 5 वर्ष अर्थात् 8 साल की आयु पूर्ण करने तक प्रथम चरण अर्थात् फाउंडेशन स्टेज समाप्त हो जायेगी।

3..... अर्थात प्राइमरी स्टेज अर्थात् 8 से 11 साल की उम्र का बालक कक्षा तीसरी चौथी और पांचवी पढ़ेगा। शिक्षा शिक्षण का माध्यम मातृभाषा अथवा क्षेत्रिय भाषा में करने का प्रावधान है। कोई अवरोधन नहीं। यहाँ सामान्य विज्ञान, गणित और कला जैसे विषय के पठन-पाठन पर विशेष जोर दिया जाएगा। बालमन परत खोलने की भरपूर चेष्टा की जाएगी।

3**+**..... अर्थात् मिडिल स्टेज अर्थात् 11 से 14 साल की उम्र का बालक कक्षा 6 से 8 तक की पढ़ाई करेगा। इन 3 वर्ष के चरण में कौशल विकास पर विशेष जोर दिया जाएगा। कोई अवरोधन नहीं। कोई बोर्ड परीक्षा नहीं है। किसी अन्य प्रकार की कोई रूकावट नहीं। कम्प्यूटर ज्ञान के साथ व्यावहारिक

शिक्षा और इंन्टर्नशीप का प्रावधान। अन्य विषय के साथ कोई भी एक भारतीय भाषा का अध्ययन।

4+.... अर्थात् 14 से 18 वर्ष की आयु का बालक कक्षा नौवी से 12वीं तक की पढ़ाई करेगा। यहाँ विषय चयन व पढ़ने की आबादी होगी और सकल निरीक्षण, परीक्षण के आधार पर परीक्षा परिणाम की घोषणा होगी। साल में दो बार परीक्षा का प्रावधान किया गया है। दसवीं बोर्ड से मुक्ति। बारहवीं बोर्ड परीक्षा में सम्मिलित होना होगा।

सामाजिक विज्ञान और क्षेत्र – सामान्यत: समाज के इर्द-गिर्द वाले विषय सामग्री के अध्ययन से सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत रखा जाता है। कक्षा छठी से आठवीं तक इतिहास नागरिक शास्त्र, भूगोल, अर्थशास्त्र एवं समाजशास्त्र के विभिन्न आयामों का सामान्य अध्ययन इस विषय की अध्ययन सामग्री होती है।

सम्भावनाएँ :

1 सामान्य नागरिक शास्त्र के अध्ययन के अन्तर्गत राष्ट्रीय लक्ष्य, संविधान की विशेषताएँ, मौलिक अधिकार और कर्तव्य तथा राष्ट्रीय लक्ष्यों को कैसे प्राप्त किया जा सकता है। आदि पाठ्य सामग्री के अध्ययन की संभावना बनती है।

2 सामान्य भूगोल अध्ययन के अन्तर्गत देश की भौगोलिक बनावट, भौगोलिक लक्षण और भौगोलिक विशेषताओं का अध्ययन करना हितकर होगा।

3 परिवार, समाज और संस्कृति का ज्ञान माध्यमिक स्तर पर अति आवश्यक है। इसलिए हमारी भारतीय संस्कृति की परम्परा में संयुक्त परिवार तथा माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी आदि रिश्तेदारियों को प्रगट करने वाले सामाजिक मूल्य एवं ऐसी पाठ्य सामग्री जो बालक के समाजीकरण में सहायक हो, का समावेश किया जाना अपेक्षित है।

4 अर्थशास्त्र की पाठ्यसामग्री के अन्तर्गत स्वावलम्बन बनाने वाले आर्थिक क्रिया-कलाप का सामान्य ज्ञान और स्वयं सहायता समूह एवं सहकारिता क्षेत्र के आयामों को जोड़ना नई शिक्षा नीति के उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक होंगे।

5 सामाजिक विज्ञान की नई पुस्तकें केन्द्र व राज्य स्तर पर तैयार होगी या हो रही है, उसमें भारतीय ज्ञान परम्परा और प्रजातांत्रिक परम्परा जो कि हमेशा से शांति की अग्रदूत रही है का समावेश भारतीय शिक्षा दर्शन के अनुरूप होना चाहिए।

6 माध्यमिक स्तर की सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में भारत और भारतीय संस्कृति-सभ्यता से जुड़ी धारणाएँ, प्रवृत्तियाँ और लोकाचार का पाठन और पठन परिलक्षित होना चाहिए।

इस नीति के अन्तर्गत सरकार के द्वारा कई महत्वपूर्ण लक्ष्य निर्धारित किए गए है, जिसमें वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात को 100 प्रतिशत तक लाना शामिल है। शिक्षा के क्षेत्र पर केन्द्र व राज्य सरकार की मदद से जी.डी.पी. का 6 प्रतिशत हिस्सा ०' करने का लक्ष्य भी निर्धारित किया गया है।

नई शिक्षा नीति के गुण :

कौशल विकास पर जोर देती नई शिक्षा नीति उच्चतर शिक्षा संस्थानों को विभिन्न स्नातकोत्तर कार्यक्रमों की छूट दी जाएगी। जैसे 3 वर्ष के स्नातक डिग्री वाले विद्यार्थियों के लिए 2 वर्षीय कार्यक्रम, 4 वर्ष के शोध स्नातक विद्यार्थियों के लिए एक वर्षीय स्नातकोत्तर कार्यक्रम और 5 वर्ष का एकीकृत स्नातक हो सकते है।

नई शिक्षा का दोष :

नये विश्वविद्यालय व महाविद्यालय खोलने की रूपरेखा नहीं है। बच्चों की पढ़ाई के तीन साल बड़ा दिये। प्ले, नर्सरी, केजी की कक्षाओं को अनिवार्य करके जो शहरी प्राइवेट स्कूलों को अरबो का व्यापार देगा और गरीब माता-पिता को बोझ़ा।

नई शिक्षा नीति के तहत् तमिल सरकार का कहना है, कि तमिल का कोई बच्चा दिल्ली में जाकर हिन्दी में पढ़ाई कैसे करेगा, जबकि केन्द्र सरकार की शिक्षा नीति के अनुसार ऐसा कहीं नहीं लिखा गया है कि राज्य सरकार को 3 भाषा फॉर्मूला को अपनाना ही होगा और ऐसा भी नहीं है कि बच्चे अंग्रेजी नहीं पढ़ेंगे।

भारत की नई शिक्षा नीति विशेष रूप से चार चरणों में काम करेगी, **5+3+3+5** के पैटर्न को प्रयोग में लेकर स्टूडेन्ट की शिक्षा को आगे बढ़ाया जाएगा। इस नए पैटर्न के तहत् 12 साल की स्कूली शिक्षा तथा 3 साल की प्री स्कूलिंग शिक्षा शामिल है।

नई शिक्षा नीति शिक्षार्थियों के एकीकृत विकास पर केन्द्रित है। यह 102 सिस्टम को **5+3+3+5** संरचना के साथ बदल देता है, जिसमें 12 साल की स्कूली शिक्षा और 3 साल की प्री-स्कूलिंग होती है इस प्रकार बच्चों को पहले चरण में स्कूली शिक्षा का अनुभव होता है।

प्रत्येक राज्य में शिक्षा विभाग की स्थापना से प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा की जिम्मेदारी भी राज्यों पर आ गई जिसके लिए उनके पास संसाधनों की कमी थी। इसके तहत् इस बात पर जोर दिया गया कि राज्य प्राथमिक शिक्षा के विस्तार तथा विकास हेतु विशेष कार्य करे और प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम क्षेत्रिय भाषा हो।

हाल ही प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लाई गई जिसे सभी के परामर्श से तैयार किया गया है। इसे लाने के साथ ही देश में शिक्षा पर व्यापक चर्चा आरम्भ हो गई है। शिक्षा के सम्बन्ध में गांधीजी का तात्पर्य बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वागीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है। इसी प्रकार स्वामी विवेकानन्द का कहना था कि, मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है। इन्हीं सब चर्चाओं के मध्य हम देखेंगे कि 1986 की शिक्षा नीति में ऐसी क्या कमिया रह गई थी, जिन्हें दूर करने के लिए नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लाने की आवश्यकता पड़ी। साथ ही क्या यह नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति उन उद्देश्यों को पूरा करने में सक्षम होगी जिसका स्वप्न महात्मा गांधी और स्वामी विवेकानन्द ने देखा था?

नई शिक्षा नीति 2020 की घोषणा के साथ ही मानव संसाधन मंत्रालय का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय कर दिया गया है। इस नीति द्वारा देश में स्कूल एवं उच्च शिक्षा में परिवर्तनकारी सुधारों को अपेक्षा की गई है। इसके उद्देश्यों के तहत् वर्ष 2030 तक स्कूली शिक्षा में 100 प्रतिशत जी.ई.आर. के साथ-साथ पूर्व विद्यालय से माध्यमिक स्तर तक शिक्षा के सार्वभौमिकरण का लक्ष्य रखा गया है।

सावधानियाँ :

आजादी के पहले और बाद में जितनी सामाजिक विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों का निर्माण हुआ है, उसमें अनेकानेक भाषाई, तथ्यों, घटनाओं एवं पात्र परिचय में भयंकर त्रुटियां हुई है। इतिहास अध्ययन के अन्तर्गत ऐसे तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत किया गया, जिससे हमारी भारतीय संस्कृति,

सम्भ्यता, लोकाचार जैसे मानवीय मूल्यों को कमतर आंकने और दिखाने का प्रयास हुआ है। परम्परा से प्राप्त उपाख्यान, वीरगाथा और ऐतिहासिक साक्ष्यों के साथ या तो खिलवाड़ किया गया अथवा तोर-मरोड़ कर भारतवर्ष की गौरवशाली परम्परा को ध्वंस करने के उद्देश्य से गलत तरीके से रखा गया। फलत: हमारे युवाओं में भारत की संस्कृति, धर्म और लोकाचार के प्रति वैराग्य उत्पन्न होता गया और वे पश्चिमी सभ्यता-संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान को ही श्रेष्ठ मानने के आदि हो गए। परिणामत: हम क्या थे और क्या होंगे? के स्वाभिमान और गर्व से दूर हो गए। नतीजा आज हमारे सबके सामने है।

सामाजिक विज्ञान बालक के व्यक्तित्व को बनाता और निखारता है। अत: सामाजिक विज्ञान पुस्तक लेखन में भाषा की शुद्धता, क्रमबद्धता एवं भाषा विज्ञान का अक्षरश:, पालन होना चाहिए। जो भी ऐतिहासिक तथ्यों का पठन-पाठन का समावेश किया जाना है, उन तथ्यों एवं कथाओं का क्रम सहीं होना चाहिए। जो पाठ्य सामग्री कक्षा के अनुसार अपेक्षित है। उन तथ्यों और कथाओं को प्रमाणित करने वाले संदर्भ प्रस्तुत किए जाने चाहिए। जिन पात्रों का ऐतिहासिक परिचय सामाजिक विज्ञान के माध्यम से देना है उन पात्रों का इतिहास में जो वास्तविक योगदान है उसको उजागर करने की पुरजोर से चेष्टा होनी चाहिए।

समग्र रूप से कहा जा सकता है कि नई शिक्षा नीति 2020 को यदि सफलता की ऊँचाई तक पहुँचना है तो हमें पाठ्यक्रम निर्धारण और पाठ्यसामग्री का चयन बहुत ही सोच-समझकर राजनीति से परे और बिना किसी भेदभाव से करना होगा। तभी भारत 2030 तक विश्व गुरू बनने की ओर अग्रसर होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समकालीन भारत एवं शिक्षा - डॉ. भगवतीलाल व्यास
2. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा - डॉ. डी.एल. शर्मा
3. उभरते भारतीय समाज में शिक्षा - डॉ. डी.डी. मेहता
4. भारत में शिक्षा का विकास - डॉ. डी. डी. मेहता
5. शैक्षिक चिंतन एवं प्रयोग - लाल एवं पलोड

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय संस्कृति में मूल्यों का ह्रास

डॉ. सोनिका बघेल*

* सहायक अध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय आदर्श महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – भारतीय समाज में पारिवारिकता का ह्रास हो रहा है, आपसी / रिश्तों की मर्यादायें टूट रही हैं। आधुनिकता का नाम लेकर संबंधों में फूहड़ता पनप रही है। समाजों की नकारात्मक मानसिकता ने पारिवारिक संबंधों, प्रकृति, पर्यावरण एवं मानवीय संवेदनाओं का क्षरण किया है। हवा, पानी, वृक्ष, जीव एवं सम्पूर्ण धरती इसका शिकार हो रहे हैं। पुरानी परम्पराओं ने इन सब में ईश्वर इस लिए प्रतिस्थापित किया था क्योंकि इनमें जीवन पलता है। किन्तु वर्तमान में इन सब का दोहन करके मनुष्य स्वयं को विखंडित एवं असुरक्षित कर रहा है।युवा पीढ़ी भटकाव के रास्ते पर है। इसका मुख्य कारण / पारिवारिक संस्कारों का आभाव एवं सामाजिक मूल्यों में बदलाव प्रमुख है। दूर संचार तकनीक के विकास के साथ दुराचार एवं आप संस्कृतियाँ समाज में व्याप्त हो चुकी हैं। युवाओं में भावनात्मक भटकन है। इसका दूसरा मुख्य कारण शिक्षा का अधूरापन है। शिक्षा सिर्फ किताबों में सिमट कर रह गई है। नैतिक मूल्यों का समाज से पलायन जारी है। परिवार एकल होने कारण अच्छे नैतिक शिक्षा के संस्थान नहीं बन पा रहे हैं। माता-पिता स्वयं भ्रमित हैं उन्हें अपनी प्राथमिकताएँ ही नहीं पता सिर्फ पैसा कमा / कर कोई भी अपनी संतान को योग्य नहीं बना सकता है।नैतिकता की ढहती दीवारें यौवन को विनाश की और ले जा रही हैं। मर्यादाओं एवं वर्जनाओं को लाँघती जवानी नष्ट हो रही है। आज युवा जिस रास्ते पर अग्रसर है उसमें स्वछन्दता तो है लेकिन स्वतंत्रता नहीं है। आज के युवा का जीवन भ्रम और भ्रान्ति में कट रहा है। महानगरीय संस्कृति ने युवाओं की वर्जनाओं को तोड़ दिया है। भड़कीले परिधान अंगप्रदर्शन करने वाले कपड़े, कान में लगे इयर फोन, हाथों में महँगा मोबाइल और आँखों से गायब होती शर्म ये महामारी महानगरों से कस्बों व गाँवों में फैल चुकी है।

संस्कृति में मूल्यों का ह्रास में आज भी समाज जातिगत, धर्मगत,एवं सम्प्रदायगत संकीर्ण मानसिकता में जी रहा है। आज आतंकवाद, नक्सलवाद, तालिबान, आईसिस एवं अनेक सम्प्रदायवादों की तांडव लीला में मनुष्य का जीवन कीड़े-मकोड़ों जैसा बन गया है। कमजोर, असहाय, अभावग्रस्त व्यक्ति की यह नियति है कि वह ताकतवर के सामने नतमस्तक हो। सामंती एवं पूँजीवादी मूल्यों से ग्रसित शोषित एवं असंघटित समाज व्यवस्था ने मनुष्य को विवेक हीन एवं चेतना शून्य बना दिया है। आज की उपभोक्ता संस्कृति वास्तव में सामाजिक मूल्यों एवं मानवीय संवेदनाओं के प्रति असहिष्णु है।

आज की उपभोक्ता संस्कृति उपभोग करना जानती है। आम जनता की हित, / अहित, सुख-दु:ख, लाभ-हानि आदि सन्दर्भों से इसका कोई सरोकार नहीं रह गया है। यह संस्कृति इतनी अमानवीय हो गई है कि अपने प्रचार के लिए गरीब किसानों को सरेआम फाँसी / पर लटका दिया जाता है, मनुष्य का सरेआम कपड़े उतार कर उसका वीडियो बना कर सरे संचार माध्यम अपने आप को धन्य समझते हैं। आज के कोरोना काल में तो स्थितियाँ और भी भयावह हो रहीं है लोग साँसों के लिए तड़फ रहे हैं ऑक्सीजन, अस्पतालों में बिस्तरों का सौदा हो रहा दवाइयों की कालाबाजारी चरम पर है ये सब इसलिए कि संस्कृति में मूल्यों एवं नैतिक मूल्य खो चुके हैं।

युवा पीढ़ी भटकाव के रास्ते पर है। संस्कृति में मूल्यों का ह्रास इसका मुख्य कारण / पारिवारिक संस्कारों का आभाव एवं सामाजिक मूल्यों में बदलाव प्रमुख है। दूर संचार तकनीक के विकास के साथ दुराचार एवं आप संस्कृतियाँ समाज में व्याप्त हो चुकी हैं। युवाओं में भावनात्मक भटकन है। इसका दूसरा मुख्य कारण शिक्षा का अधूरापन है। शिक्षा सिर्फ किताबों में सिमट कर रह गई है। नैतिक मूल्यों का समाज से पलायन जारी है। परिवार एकल होने कारण अच्छे नैतिक शिक्षा के संस्थान नहीं बन पा रहे हैं। माता-पिता स्वयं भ्रमित हैं उन्हें अपनी प्राथमिकताएँ ही नहीं पता सिर्फ पैसा कमा / कर कोई भी अपनी संतान को योग्य नहीं बना सकता है।

लक्ष्य की खोज न कर पाने से युवा दिग्भ्रमित है। ओछे आकर्षण उसे लुभा कर गहरे गर्त में धकेल रहे हैं 'किसी भी कीमत पर सफलता' का आकर्षण माँ-बाप एवं युवाओं को विनाश की ओर ले जा रहा है।

आज भी समाज जातिगत, धर्मगत,एवं सम्प्रदायगत संकीर्ण मानसिकता में जी रहा है। आज आतंकवाद, नक्सलवाद, तालिबान, आईसिस एवं अनेक सम्प्रदायवादों की तांडव लीला में मनुष्य का जीवन कीड़े-मकोड़ों जैसा बन गया है। कमजोर, असहाय, अभावग्रस्त व्यक्ति की यह नियति है कि वह ताकतवर के सामने नतमस्तक हो। सामंती एवं पूँजीवादी मूल्यों से ग्रसित शोषित एवं असंघटित समाज व्यवस्था ने मनुष्य को विवेक हीन एवं चेतना शून्य बना दिया है। आज की उपभोक्ता संस्कृति वास्तव में सामाजिक मूल्यों एवं मानवीय संवेदनाओं के प्रति असहिष्णु है।

किसी देश, जाति या समाज की संस्कृति का मूल आधार उसके मानवीय मूल्य एवं परम्परायें होती हैं जो काल के घात-प्रतिघात सहते हुए भी अपनी विशिष्ट पहचान नहीं खोते हैं। ये जीवन मूल्य हमारे सामाजिक एवं आध्यात्मिक चिंतन से बने होते हैं। अनादि वर्षों के सांस्कृतिक एवं सामाजिक सरोकारों को अपने में समेटे हुए ये मानवीय संवेदनाओं के संवाहक होते हैं। ये हमारी सांस्कृतिक चेतना की पहचान होते हैं। आधुनिक पाश्चात्य चिंतन हमारी संस्कृति और समाज के मूल्यों पर स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है। हर देश

की संस्कृति एवं सभ्यता उस देश के समाज एवं समय के लिए अनुकूल होती है लेकिन अगर कोई दुसरे देश या समाज इस की नकल करता है तो इसके परिणाम हमेशा गंभीर एवं पतनोन्मुखी होते हैं। टूटते परिवार, बिखरते दाम्पत्य जीवन, बच्चों के भविष्य की असुरक्षा, नारियों के प्रति असंवेदनशीलता, पर्यावरण के प्रति उदासीनता, पूँजीवादी मानसिकता, शीघ्र सफल होने की प्रवृत्तिा आज हमारी संवेदनाओं को विकृति की ओर प्रेरित कर रह है सज हर रिश्ता तनाव के दौर से गुजर रहा है। माता–पिता, भाई–बहिन, पति–पत्नी, दोस्ती, अधिकारी कर्मचारी एवं पारिवारिक व सामुदायिक रिश्ते यांत्रिक होते जा रहे हैं। रिश्तों में निजता की ऊष्मा खत्म होती जा रही है। पीढ़ियों की ये रिक्तता, संवादहीनता, युवाओं में मूल्यों का ह्रास, संस्कारों की कमी एवं पारिवारिक रिश्तों में गहनता का खो जाना मानवीय संवेदनाओं के लुप्त होने के कारण ही है। टीवी, इंटरनेट एवं मोबाइल जहाँ / दूरसंचार के क्षेत्र की क्रांति बन कर उभरे हैं वहीं उनके दुष्परिणाम भी आज समाज भुगत रहा है। इनके गलत उपयोग से समाज की परम्परागत आस्थाएँ, मान्यताएँ एवं मूल्यों में विकृति आ चुकी हैय जीवन के श्रेष्ठता के मानदण्ड बदल गए हैं। चिंतन की विकृति से चरित्र भी विकृत हो गया है।

आज के युवा में व्यवहारिक सामंजस्य, बौद्धिक श्रेष्ठता एवं सामाजिक प्रतिबद्धता का अभाव है। वह सिर्फ किताबी ज्ञान एवं मशीनों में उलझ कर भ्रमित है। समाज एवं नैतिक संस्कारों से उसका सरोकार खत्म हो चुका है। सामुदायिक रिश्तों के पर्याय हमारे गाँव सबसे ज्यादा विकृति की ओर बढ़ चले हैं। पिछले वर्षों में जमीनों के ऊपर से / एवं घरेलू झगड़ों में सर्वाधिक मौतें गाँवों में ही हुई हैं। आज मशीनों एवं मानव के बीच संघर्ष चल रहा है। आज चारों ओर पूँजी, प्रॉपर्टी, धन, बाजार एवं व्यवसायिकता का ही बोलवाला है इनके सामने मानवीय मूल्य, चरित्र एवं संस्कार सब बौने नजर आने लगे हैं।

निष्कर्ष – मनुष्य को पशुओं से अलग करने वाले संस्कार, सम्वेदनायें एवं जीवन मूल्य का हास आज उसे पशुता की ओर ले जा रहे हैं। लेकिन आशा की किरण अभी बाकी है। युवाओं को सही रास्ता दिखाना होगा क्योंकि जब तक युवक अपनी मौलिक विशेषताओं एवं संभावनाओं को नहीं समझेंगे तब तक भटकाव जारी रहेगा। युवाओं में संकल्पशक्ति जागृत होनी चाहिए संकल्प से व्यक्ति संयमित एवं दृढ़ प्रतिज्ञ हो जाता है असंभव से संभव करने की यह ऊर्जा संकल्प शक्ति ही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ नरेश प्रसाद तिवारी, हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना।
2. डी .एन. सिंह ,'बदलते सामाजिक परिवेश में मूल्य और तकनीकी की भूमिका', जयपुर।
3. एस. आर. दारापुरी. डॉ. अम्बेडकर का आर्थिक दर्शन ।
4. मूल्य संस्कृति का हास सुशील कुमार शर्मा साहित्य कुंज।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

2019 लोकसभा चुनाव के प्रचार में सोशल मीडिया की भूमिका

नवीन कुमार*

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) पंडित दीनदयाल उपाध्याय शेखावाटी विश्वविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

शोध सारांश – वैश्विक प्रवृत्ति के बाद, सोशल मीडिया का उपयोग भारतीय राजनीतिक अभिनेताओं द्वारा चुनावों के बीच नियमित राजनीतिक संचार के लिए नेताओं और नागरिकों को जोड़ने और देश में राजनीतिक परिदृश्य को फिर से सक्रिय करने के लिए मध्यस्थ और प्रत्यक्ष संचार प्रदान करने के लिए किया जा रहा है। जबकि हाल के आम चुनावों ने इस बदलाव की सबसे अधिक स्पष्ट अभिव्यक्तियाँ प्रदान की हैं, 2014 के आम चुनावों के बाद से सोशल मीडिया प्लेटफार्मों को नियमित राजनीतिक संचार में एकीकृत किया गया है, जिसने भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) को सत्ता में ला दिया। यह बदलाव प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और भाजपा द्वारा 2014 के चुनावों में और कार्यालय में अपने पहले कार्यकाल के दौरान सोशल मीडिया के व्यापक उपयोग पर आधारित है।

शब्द कुंजी – वैश्विक, सोशल मीडिया, राजनीतिक संचार।

प्रस्तावना – मोदी ने राजनीतिक संचार की एक अलग शैली विकसित की है जो संवादात्मक और निरंतर है। राजनीतिक एजेंडा निर्माण और नीति क्राउडसोर्सिंग और प्रचार के लिए सोशल मीडिया का उनका सफल उपयोग स्वच्छ भारत और हाल ही में शुरू किए गए फिट इंडिया मूवमेंट, एक राष्ट्रव्यापी अभियान जैसे अखिल भारतीय अभियानों में स्पष्ट है, जो नागरिकों को अपने दैनिक जीवन में शारीरिक गतिविधि और खेल को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है। यह 2014 के आम चुनाव में मोदी की अभूतपूर्व सफलता थी जिसने भारत के अन्य राजनीतिक अभिनेताओं को सोशल मीडिया की खेल-परिवर्तनकारी प्रकृति पर ध्यान देने के लिए प्रेरित किया। सोशल मीडिया पर कूदने वाले अन्य राजनीतिक दलों के साथ, भारत में राजनीतिक संचार का परिदृश्य कभी भी इतना विषम, समावेशी, खंडित, ऊर्जावान, अराजक, रचनात्मक नहीं रहा है।

2019 के चुनावों में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की सफलताओं, साथ ही ट्विटर और फेसबुक का उपयोग करते हुए, कई राज्यों के राजनेताओं ने अपने लिए ट्विटर प्रोफाइल बनाए और अपनी पार्टी के राजनेताओं को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित किया। यही कारण है कि 2019 के चुनावों में प्रत्येक प्रमुख राजनीतिक दल ने अपने राजनीतिक अभियान के कई महत्वपूर्ण हिस्सों को ऑनलाइन स्थानांतरित करने और इस प्रक्रिया में मुख्यधारा के मीडिया से टकराव करने के साथ डिजिटल उपस्थिति बनाई।

नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) 35 वर्षों में पूर्ण बहुमत के साथ सत्ता में लौटने वाली पहली पार्टी बन गई, जिसने भारतीय राजनीति के पारंपरिक नियमों को उलट दिया। चुनाव भारत में 2016 और 2019 के बीच हुए दूसरे सामाजिक प्रतिमान बदलाव से भी घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए थे, जिसके राजनीतिक प्रभाव के संदर्भ में, तुलनात्मक रूप से कम टिप्पणी की गई है और इसका कम अध्ययन किया गया है।

अनुसंधान उद्देश्य – लोकतांत्रिक मूल्यों को सही मायने में बनाए रखने के लिए समय-समय पर चुनाव कराना आवश्यक है, इस प्रकार, नागरिकों को अपनी राय व्यक्त करने और अपने राजनीतिक नेताओं को चुनने के लिए एक मंच प्रदान करना आवश्यक है जो बदले में उनका प्रतिनिधित्व करेंगे। राजनीतिक नेताओं के लिए, एक चुनाव अभियान देश के लोगों तक पहुंचने का एक महत्वपूर्ण साधन है, जो नागरिकों को किसी भी अन्य साधन की तुलना में अपने नेता के रास्ते को बेहतर ढंग से जानने में समान रूप से मदद करता है।

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म राजनीतिक अभियानों की गतिशीलता को कैसे प्रभावित करते हैं, जनमत और राजनीतिक विमर्श को कैसे आकार देते हैं। साथ ही, विभिन्न सोशल मीडिया चैनलों के माध्यम से विभिन्न राजनीतिक संदेशों की पहुंच और जुड़ाव के स्तर की जांच करना। शोध सोशल मीडिया पर राजनीतिक अभियानों के लिए नियोजित रणनीतियों का भी विश्लेषण करेगा। यह राजनीतिक अभियानों के लिए अपनाई गई विभिन्न सोशल मीडिया रणनीतियों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करता है और मतदाताओं से जुड़ने के लिए लक्षित विज्ञापन, प्रभावशाली लोगों के साथ साझेदार/सहयोग और रणनीति के उपयोग की जांच करता है।

फेसबुक ट्विटर और गूगल की भूमिका – 2019 तक, भारत की लगभग आधी मतदान करने वाली आबादी के पास अब उन तरीकों से सूचना के रास्ते थे जो पहले संभव नहीं थे (भारत निर्वाचन आयोग 2019) उदाहरण के लिए, 2019 की शुरुआत में, गूगल ने अनुमान लगाया कि भारत में 40 करोड़ सक्रिय इंटरनेट उपयोगकर्ता थे, जिसमें हर साल औसतन 4 करोड़ उपयोगकर्ता जोड़े जा रहे थे। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि गूगल ने यह भी बताया कि इसकी आधे से अधिक खोजें अब 'भारत' या गैर-मेट्रो शहरों से आ रही थीं। महत्वपूर्ण रूप से, उपयोगकर्ताओं में यह वृद्धि इस तथ्य से प्रेरित थी कि भारत की प्रति उपयोगकर्ता औसत मोबाइल डेटा खपत (2018 में 8 जीबी प्रति माह से अधिक) विकसित बाजारों के बराबर थी। मई 2019 तक, लगभग एक तिहाई भारतीयों के पास फेसबुक व्हाट्सएप और यूट्यूब (सीएसडीएस लोकनीति 2019) तक पहुंच थी।

सितंबर 2016 में जियो फोन नेटवर्क के शुभारंभ से शुरू हुई इस सस्ती डेटा क्रांति ने भी भारतीय राजनीति को बदल दिया। जागरूकता का हिस्सा अपेक्षाकृत आसान था। उदाहरण के लिए, चुनाव संचार पर, फेसबुक ने दो पहल शुरू की: 'कैंडिडेट कनेक्ट', जिसे मतदाताओं को उनके उम्मीदवारों के बारे में सटीक जानकारी देने और लोगों को विभिन्न उम्मीदवारों के बारे में अधिक जानने में मदद करने के लिए डिजाइन किया गया था, और लोगों को वोट देने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए 'शेयर यू वोट' (फेसबुक 2019) इसी तरह, गूगल न्यूज इनिशिएटिव ने एक ष्पोल-चेकष कार्यक्रम आयोजित किया, जिसमें 30 शहरों में पत्रकारों के लिए तथ्य-जांच, सत्यापन और डेटा विजुअलाइजेशन पर प्रशिक्षण सत्र आयोजित किए गए।

राजनीतिक विज्ञापनों पर, फेसबुक और गूगल दोनों ने चुनावों से पहले विज्ञापन पारदर्शिता पहल शुरू की, जिसमें उन्हें प्राप्त राजनीतिक विज्ञापनों की सटीक संख्या, किससे, और राजनीतिक विज्ञापनों पर खर्च की गई राशि की सूचना दी गई। दोनों प्लेटफार्मों पर उपयोगकर्ता सभी राजनीतिक विज्ञापनों को भी देख सकते हैं और व्यक्तिगत विज्ञापनों, दाताओं, भूगोल और समयसीमा द्वारा किए गए खर्च को देख सकते हैं। फरवरी और मई 2019 के बीच, गूगल और फेसबुक ने 58.67 करोड़ रुपये के संचयी राजनीतिक ऑनलाइन विज्ञापन की घोषणा की। दोनों प्लेटफार्मों पर खर्च किया गया पैसा समान था, हालांकि फेसबुक की विज्ञापन लाइब्रेरी को व्यक्तिगत विज्ञापनों की बहुत अधिक मात्रा मिली। गूगल ने 12,276 करोड़ रुपये के राजनीतिक विज्ञापनों की घोषणा की। 29.3 करोड़ रु. फेसबुक ने अपनी इंडिया एड लाइब्रेरी में 29.28 करोड़ रुपये के कुल 132,419 विज्ञापनों की घोषणा की।

सोशल मीडिया पर भाजपा और कांग्रेस: एक तुलना – अक्सर एक धारणा बनाई जाती है कि किसी तरह डिजिटल प्लेटफॉर्म दक्षिणपंथी के लिए तैयार किए जाते हैं, और ध्रुवीकरण संदेश के साथ हावी होना आसान होता है। सच्चाई थोड़ी अधिक जटिल है। ट्विटर और फेसबुक पर, जहां 2014 में मोदी मैदान में उतरे, वहीं 2017 के बाद से, तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी ने उत्तर प्रदेश (यूपी) विधानसभा चुनावों के बाद अपनी ऑनलाइन रणनीति को एक साथ लाना शुरू किया और महत्वपूर्ण प्रगति की। जबकि मोदी अनुयायियों और कुल पदों दोनों के मामले में काफी आगे रहे, जून 2017 और मई 2019 के बीच, भले ही गांधी ने मोदी के 8,201 ट्वीट्स की तुलना में केवल 1,497 बार ट्वीट किया, लेकिन समय के साथ गांधी के लिए प्रति ट्वीट जुड़ाव का स्तर बढ़ गया। बेशक, मोदी के जुड़ाव का पैमाना बहुत अधिक रहा, लेकिन प्रति ट्वीट औसत जुड़ाव के मामले में, गांधी आश्चर्यजनक रूप से रीट्वीट और लाइक्स दोनों में आगे थे।

मोदी और गांधी के ऑफलाइन प्रचार पैटर्न के साथ इस डिजिटल प्रवृत्ति पर विचार करना उपयोगी है। मोदी ने अभियान के दौरान 142 रैलियों को संबोधित किया, कुल 133,349 किलोमीटर की यात्रा की, जैसा कि टाइम्स ऑफ इंडिया के विस्तृत रैली-दर-रैली अभियान ट्रैकर द्वारा दर्ज किया गया है। इसके विपरीत, गांधी ने कम रैलियों (115) को संबोधित किया और मोदी (123,466 किमी) से कम यात्रा की। दिलचस्प बात यह है कि चुनाव प्रचार के पहले चरण में गांधी ने अधिक रैलियों को संबोधित किया था और चुनाव प्रचार के दौरान मोदी से अधिक दूरी तय की थी। हालाँकि, अंतिम महीने में, जब मोदी ने कई रैलियाँ कीं और व्यापक रूप से यात्रा की, तो गांधी अभियान के दूसरे भाग के दौरान पीछे रह गए।

इसका प्रतिबिंब नमो ऐप और कांग्रेस के शक्ति मंच के प्रक्षेपवक्र के बीच की खाई है। मार्च 2019 तक, नमो ऐप को एंड्रॉइड और आईओएस प्लेटफॉर्म पर 1 करोड़ बार डाउनलोड किया गया था, और 5 करोड़ रुपये से अधिक का माल बेचा गया था। जबकि नमो ऐप, जो जियो फोन पर पहले से तैयार किया गया था, का बंद ट्विटर जैसा पारिस्थितिकी तंत्र है जो उपयोगकर्ताओं को अपनी सामग्री पोस्ट करने की अनुमति देता है, इसने सूचना एकत्र करने और सर्वेक्षण करने के लिए एक महत्वपूर्ण दो-तरफा प्रणाली के रूप में भी काम किया।

निष्कर्ष – डिजिटल प्लेटफार्मों द्वारा सामग्री के उल्लंघन और राजनीतिक वित्त पोषण में पारदर्शिता को स्व-विनियमित करने के लिए उठाए गए कदम नए हैं और बहुत कुछ करने की आवश्यकता है। फिर भी, एक महत्वपूर्ण शुरुआत की गई है।

युवजन श्रमिक रायथू कांग्रेस और द्रमुक जैसे कुछ क्षेत्रीय दलों ने भी डिजिटल तकनीकों को अपनाया, लेकिन अधिकांश डिजिटल प्लेटफार्मों पर सक्रिय नहीं थे। इसमें बदलाव आना शुरू हो गया है। जबकि विभिन्न दल अलग-अलग तरीके से अनुकूलन करते हैं, एक बात स्पष्ट है: सस्ते डेटा का मतलब है कि राजनीतिक गतिशीलता के बारे में हमारी कई पुरानी धारणाओं को चलाने वाली अंतर्निहित मान्यताओं में एक विवर्तनिक बदलाव देखा गया है। हम अभी इस परिवर्तन के प्रभावों को उजागर करना शुरू कर रहे हैं। इस परिवर्तन की रूपरेखा को समझे बिना वर्तमान राजनीति को प्रभावी ढंग से नहीं समझा जा सकता है। जहां इसने हमारी राजनीति के लिए कई संभावनाएं खोल दी हैं, वहीं इसने शोध के लिए आकर्षक नए सवाल भी खड़े किए हैं।

यह लेख चुनाव अवधि के दौरान पर राजनीतिक आउटरीच के कुछ बड़े पैमाने के रुझानों को दर्शाता है। भाषा का उपयोग उन तरीकों पर प्रकाश डालता है जिनमें राजनीतिक अभिनेताओं और मुख्यधारा के मीडिया के साथ-साथ 2019 में सोशल मीडिया पर सक्रिय मतदाताओं के छोटे अंशों के बीच बातचीत के माध्यम के रूप में अपने कार्य को अच्छी तरह से विस्तारित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Stone, N. (2017). Verdict. Pegasus Books.
2. Quraishi, S. Y. (2019). An undocumented wonder: The making of the great Indian election. Rupa Publications India Pvt. Ltd.
3. Sharma, A., & Singh, P. (2019). Analysing the Role of Social Media in Shaping Voter Perceptions: A Case Study of the 2019 Lok Sabha Elections. Journal of Political Science Research, 25(4), 321-335.
4. Gupta, R., & Sharma, S. (2019). Social Media Strategies of Political Parties during the 2019 Lok Sabha Elections. Indian Journal of Political Science, 45(3), 321-335.
5. Reddy, G., & Desai, M. (2020). Digital Democracy: Understanding Voter Engagement on Social Media during the 2019 Lok Sabha Elections. Journal of Information Technology and Politics, 18(3), 201-218.
6. Verma, V., & Gupta, S. (2019). Social Media Campaigns and Electoral Outcomes: Insights from the 2019 Lok Sabha Elections. Indian Journal of Political Communication.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

राजा राम मोहन राय आधुनिक युग के पुरोधा

हरीश*

* एम ए, नेट –जेआरफ (इतिहास) कोडुका पोस्ट रिछोली, ब्लॉक पाटोदी बालोतरा (राज.) भारत

प्रस्तावना – प्राचीनकाल से भारत में अनेक आक्रमणकारी आये इनमें यूनानी शक, हूण, कुषाण, अरबी, तुर्क, मंगोल, मुगल,अंग्रेज इत्यादि प्रमुख है।भारत पर आक्रमण करने का अधिकांश का मुख्य उद्देश्य यहां की धन सम्पदा को प्राप्त करना था। कुछ यहां से पुन अपने मूल स्थान को लौट गए और कुछ यही बस गए और उन्होंने भारतीय सभ्यता संस्कृति को अपना लिया इस प्रकार भारतीय संस्कृति और विदेशी संस्कृति में समन्वय स्थापित हुआ। भारत में अंग्रेज व्यापार करने के लिए आये थे और धीरे उन्होंने भारत पर कब्जा कर लिया। अंग्रेज मानते थे की पूरी दुनिया में उनकी संस्कृति सर्वश्रेस्ठ है और उनका उद्देश्य है भारत के लोगों भी सभ्य बनाना है। उनीसवीं सदी का भारतीय समाज अनेक परम्परागत रूढ़ियों से ग्रसित था इस समय भारतीय समाज में अनेक कुप्रथाओ नई कब्जा जमा रखा था। इनमें जाति प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा, छुआछूत, उच्च नीच, धार्मिक आडम्बर, कर्मकांड इत्यादि प्रमुख है।

इस सदी भारत में मध्यम वर्गो के अनेक लोग पश्चिम से शिक्षा प्राप्त करने यूरोप गए थे इनमें राजा राममोहन राय एक प्रमुख व्यक्ति थे। राममोहन राय को अनेक भाषाओ का ज्ञान था उन्होंने बचपन में संस्कृत सीखी और अल्पायु में तिब्बत का यात्रा की थी। इन्होने अरबी, फारसी की शिक्षा पटना से प्राप्त की थी। राजा राम को धर्म सुधार से विशेष प्रेम था उन्होंने सभी धर्मो का अध्ययन किया था। इन्होंन सभी धर्मो को तर्क की कसौटी से देखना शुरू किया। इन्होने सभी धर्मो तथा ईश्वर के लिए एक मत का प्रतिपादन किया इसके लिए इन्होने 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना की। उन्होंने तत्कालीन हिन्दू धर्म में व्याप्त रूढ़ियों, कर्मकांडो, बहुदेववाद का विरोध किया।इनका मानना था की ईश्वर एक है और उसे प्राप्त करने के लिए हमें किसी कर्मकाण्ड की आवश्यकता नहीं है। इनके धार्मिक विश्वास उपनिषदों पर आधारित थे।

मुनरो विलियम नई लिखा की राममोहन राय ने तो धार्मिक नेता थे और ना ही वेदांती धर्म के प्रति उनका झुकाव न तो अलौकिकता के प्रति उनका आकर्षण और ना ही शैक्षिणक कारणों से था। मात्र सामाजिक हित ही उनका उद्देश्य था जिसने उन्हें प्रेरित किया कि वे धर्म में कुछ सुझावों को प्रतिपादित करे।

राजाराम मोहन का मानना था कि धर्म गुरु अपनी बातो को सिद्ध करने के लिए धर्म में अकारण जटिलता और संशय पैदा करते है। जिस अवधारणा ने उनके मन को सर्वाधिक प्रभावित किया वह था स्वतंत्र सोच और तर्क के विरुद्ध धर्म कि भूमिका। राममोहन राय जानते थे कि क्यों ब्रूनो को जिन्दा जलाया गया, गेलोलियो को जेल भेजा गया और मंसूर को मृत्यु दंड दिया गया। उन्होंने स्पष्ट रूप से उद्धघोषित किया कि तर्क और एकमात्र तर्क ही धर्म के अन्वेषण में मार्ग दर्शक है।

राज राम ने केवल धार्मिक क्षेत्र में सुधार पर बल दिया बल्कि तत्कालीन हिन्दू समाज में व्याप्त रूढ़ियों कि भी जमकर आलोचना की। भारत का सामाजिक संगठन का स्वरूप कमजोर था इसके अन्तर्गत कई बुराइयाँ विद्यमान थी।समाज सुधार के क्षेत्र में सबसे बड़ा कार्य इनका सती प्रथा को प्रतिबंधित करवाना था। इनके भाई की मौत के बाद जब इनकी भाभी को जबरदस्ती सती होने पर विवश किया गया तब से इन्होने सती प्रथा के विरुद्ध आंदोलन छेड़ दिया। ब्रिटिश सरकार ने 4 दिसंबर 1829 को बंगाल प्रेसीडेंसी में सती को गैर कानूनी घोषित कर दिया। कानून में कहा गया था कि जो लोग किसी विधवा को उसकी इच्छा के विरुद्ध सती होने के लिए विवश करेगा उसके विरुद्ध कार्यवाही कि जाएगी। इसके बाद कुछ रूढ़िवादी हिंदुओ ने इस कानून कर प्रति आपत्ति जताई इनमें राधाकांत देव और काली कृष्ण बहादुर प्रमुख थे इन्होने सम्राट कि कौंसिल में तक अपील कि किन्तु सफलता नहीं मिली।

बंगाल में सामाजिक सुधारको की जो लहरों की जो लहर उत्पन की उसके परिणामस्वरूप कुछ समय बाद कुछ वर्षो में कन्या वध बंद हुआ, विधवाओं के पुनर्विवाह का रास्ता खुला, दास प्रथा बंद हुई स्त्री शिक्षा की दिशा में कदम उठाए गए। राममोहन ने स्त्री अधिकारों का भी समर्थन किया था।

राजराम मोहन राय पश्चिम के स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व जैसे मूल्यों से प्रभावित थे। वह इन मूल्यों को भारत में भी लागु करना चाहते थे। वह ब्रिटिश भारत में स्वराज की स्थापना करना चाहते थे। ये ब्रिटिश शासन के समर्थक थे। उन्होंने प्रेस की आजाद के लिए आवाज उठाई और अभिव्यक्ति की आजादी के लिए संघर्ष किया। उन्होंने कार्यपालिका को न्यायपालिक से अलग करने पर बल दिया और अधिक से अधिक संख्या में भारतीयों को प्रशासन में साम्मिल करने पर बल दिया।

राजा राम मोहन आधुनिक शिक्षा के समर्थक थे इन्होने शिक्षा के विकास के लिए डेविड हेयर के साथ मिलकर हिन्दू कॉलेज की स्थापना की। तथा 1825 में वेदांत कॉलेज स्थापना की जहाँ भारतीय शिक्षण और पश्चिमी सामाजिक भौतिक विज्ञान को पढ़ाया जाता था।

इस प्रकार 19 वी शताब्दी में राजा राम मोहन राय पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने तत्कालीन भारत की सभी समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया।उन्होंने

भारतीय समाज की समाज के रूढ़ियों का विरोध किया।

उन्होंने भारतीयों का शोषण करने वाली सभी ब्रिटिश नीतियो की भी खुलकर आलोचना की थी। ऍफ मेक्समूलर लिखते है की राममोहन राय के सभी कार्यो में साहस और खरापन देखने को मिलता है उनके कुछ मित्रो को उनके बारे में गलतफहमी हो गई थी और वह उन्हें मुसलमान अथवा ईसाई कहने लगे। यूरोप के लिए रवाना होने से पहले उन्होन कहा था कि उनकी मौत पर हरेक धर्म सम्प्रदाय चाहे वह ईसाई हो, हिन्दू हो या मुसलमान उन्हें अपना मानने का दावा करेंगे, किन्तु वास्तव में उनका वास्ता किसी से नहीं था। उनकी धार्मिक भावनाएं एक इस्तिहार में लिखी मिलती है इस कृति में ईश्वर के एक होने अनंत शक्ति सम्पन होने, परम् कल्याणकारक होने और आत्मा कि अमरता के बारे में विश्वास प्रकट किया है।

इसी संदर्भ में डॉक्टर मेक्निकाल के अनुसार वह एक नवीन युग के अग्रदूत थे उनकी जलाई हुई ज्वाला आज तक जल रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यादव शिवाशा, राजा राम मोहन राय, ऋषभ बुक्स 2011, नई दिल्ली।
2. मेक्समूलर ऍफ, राममोहन राय से परमहंस तक विद्या विहार 2013, नई दिल्ली।
3. ग्रोवर, यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास नवीन मूल्यांकन, एस चंद एण्ड कम्पनी 2000,नई दिल्ली।
4. ताराचंद, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, सुचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार 1997
5. चंद्र विपिन, आधुनिक भारत का इतिहास, ओरियंट ब्लैकस्वान 2008, नई दिल्ली।

****

Effect of Soil Biota on Physicochemical Properties of Soil

Harish Raghunath Khairanar*   Dr. Pramod Pandit   Dr. Dhananjay Dwivedi*****

***Research Scholar, Devi Ahilya Vishwa Vidyalaya, Indore (M.P.) INDIA**
**** Principal, Govt. New Model College, Barwani, Indore (M.P.) INDIA**
***** Professor (Chemistry) P.M.B. Gujarati Science College, Indore (M.P.)INDIA**

Abstract : Soil biota plays an important role in soil formation, soil development, organic matter decomposition and in soil structure formation.On decomposition of organic matter they free up nitrogen, potassium and phosphorus which are primarily nutrients for plants in crops field. Biochemical activities of soil organisms help in cycling of various nutrients in soil, improve physicochemical properties of soil, water regime and hummus availability. They are acting as a driving agent within food webs for releasing, transformation, relocation and storage of elements throughout the ecosystem by several biological activities.

Qualitative research approach has applied in study on the effect of soil biota on physicochemical properties of soil.In this research paper primary and secondary data has collected by different sources vizsubjective opinions, real-time field observations, already existing written materials such research articles, literature review , textual data etc. has been collected, analysed and reviewed.

This paper, briefly highlighted some of the biological functions of soil biota, there interaction, effect and importance to improve soil physicochemical properties under sustainable soil management activities in agricultural production. This study would play an important role to establish natural farming, sustainable agriculture practice, food quality and soil environmental health, at global aspects.

Keywords: Soil biota,Soil physicochemical properties, Soil organic matter , Nitrogen fixation, Soil biodiversity.

Introduction - The majority of life on Earth is dependent upon six critical elements: hydrogen, carbon, oxygen, nitrogen, phosphorus and sulfur. These elements are reduce, reuse and recycle by soil biota. Due to invisibility to the naked eye soils are one of the most poorly researched and diverse habitats on earth .The soil is one of nature's most complex ecosystemsthat contains thousands of different organisms, which interact and contribute to the global cycles that make possibleall life support system. Approximately a teaspoon soil in size, containing all the domains (Bacteria, Archaea,Eukarya) and elements of life. This means that one might see the 'biological universe' in a single gram of fertile soil.The species numbers, composition and diversity of a given soil depend on many factors, including aeration, temperature, acidity, moisture, nutrient content and organic substrate.

Soil biota include the bacteria, actinomycetes, ,cyanobacteria,fungi and algae, the protozoa, nematode ,collembolan, mites, termites, ants and other associated micro-organisms.Activities of soil biota in soil environment and soil ecosystem functions have been considered the most important component of soil quality managements and nutrient recycling (Kramer and Gleixner, 2008).

Therefore, the objectives of this paper are to provide a concise elucidation of the roles of soil biota and their biodiversity in the aspect of global soil development, soilquality and naturalfarming.This study establish the necessities ,importance, effect , and biochemical functional processes of biota to improve soil physicochemical properties for agricultural land at global aspects.

Material and methods: Qualitative research approach has applied in study on the effect of soil biota on physicochemical properties of soil.In this research paper primary and secondary data has collected by different sources viz field work, laboratory work and by real-time field observations. Subjective opinion , farmers options, Scholars guidance, their experience, valuable suggestions has examined during the investigation. Already existing written materials such as annual reports, research articles, record, documents, literature review , textual data etc. has been collected, analysed and reviewed.

Not only scientific approach has taken in, collection of data, sampling analysis**,** interpretation of data, conception ,designing and in drafting the of manuscript but involved in revising it critically for important intellectual content for the research paper also.

Soil biota and types of soil biodiversity: Soil biodiversity can be classified into 4 major groups: micro-organisms,

micro-fauna, meso-fauna, macro-fauna. Plants also be considered through their root system.

Microorganisms are members of the soil biota but are not members of the soil fauna. The soil fauna is the collection of all the microscopic and macroscopic animals in a given soil. Soil animals can be conventionally grouped by size classes: micro fauna (µm; protozoa, nematodes), mesofauna (mm; micro arthropods, mites and collembolan, termites, ants), andmacro fauna (cm;, earthworms, spiders, insects macro arthropods),

Soil biota in a general term refers to all soil organisms living and communicating in soil environment. Ritz et al. (2004)considered soil biota as the 'biological engine of the earth',-driving and transforming physical, chemical, biological and ecological processes in global soils.

Their ranges were identified as the smallest in different sizes, extremely diverse ,abundant and able to decompose almost any existing natural material in soil . (Table 1: common population of some soil microorganisms)

Table-1:Common population of some soil microorganisms:

S.	Organism	Number per gram of soil
1.	Bacteria	10^8-10^9
2.	Actinomycetes	10^7-10^8
3.	Fungi	10^5-10^6
4.	Algae	10^4-10^5
5.	Protozoa	10^4-10^5
6.	Nematoda	10-10^2

Role of soil biota to improve soil physicochemical properties: A small fraction of the soil is made up of 0-10% biological organisms, or parts of organisms. The percent present depends on the parent material , period of time and strongly influenced by environmental conditions. Biological content includes both microscopic organisms such as some fungi, bacteria, archaea and macroscopic organisms such as plant roots, rodents, insects, earthworms. This organisms may be alive or dead when dead they become "organic matter".

Thesustainable function of natural and agricultural soil ecosystems is dependent on these active groups of biota and their biodiversity offer.Coleman (2001) noted that the soil biota contribute with a wide range of essential services to the sustainable function of all ecosystems, by acting as the primary driving agents of regulating the dynamics of soil organic matter, nutrient cycling, soil carbon sequestration and greenhouse gas emission, modifying physical structure of soil, enhancing plant health and maintain soil quality (Castro-Huerta et al., 2015).

Bacteria: Soil bacteria are the active organisms fall into four functional groups-decomposers, mutualists (form partnership with plants-nitrogen-fixing bacteria), pathogens and lithotrophs or chemoautotrophs; played a vital role in soil nutrient cycling (Coleman et al., 1983)**.** Bacteria contribute to the carbon cycle by fixation (photosynthesis) and decomposition of organic materials and hence might improve soil colour and soil quality (FAO, 2005).Their activities might also help to improve the strength of soil particles and soil resilience against soil erosion.

Fungi: Fungi also help in binding soil particles and an increase water infiltration and soil water holding capacity(Ritz et al., 2004).

Protozoa: These organisms move soil particles and help in the decomposition processes of soil organic matter (Song et al.,2004).

Nematodes: Nematodes are considered the major consumers classified as fungal feeders, bacteria feeders, plant feeders, predators and omnivores (Usman, 2013). These groups of nematodes were identified to range between 2 to 100 µm wideand 0.15 to 5 mm long (FAO, 2005).Yeates and Coleman (1982)recognized nematodes in soils environment. These flexible organisms play an important role in soil health, soil function, and soil organic matter decomposition processes (Kramer and Gleixner, 2008).

Termites: Termites are divided into three groups according to the structure of their nests (those that build mounds): (a) above ground, (b) on the soil surface, and (c) below ground. Termites are described as surface litter feeders, grass harvester, wood feeders and soil feeders 'humivores' (FAO, 2005). Termites played an important role in modifying the soil particles into fine and stable aggregate, increase soil water infiltration rate and aerates the soil(Allen, 1990).

Table-2: Ecosystem services provided by soil biota (adapted after modifications made by Brussaard, 2012 from the work of Kibblewhite et al., 2008)

S.	Ecosystem services	Ecosystem functions
1.	Water quality and supply	Soil structure maintena -nce, Nutrient cycling
2.	Erosion control	Soil structure maintenance
3.	Atmospheric composition and climate (greenhouse gas) regulation	SOM dynamics
4.	Pollutant attenuation and degradation	Decomposition
5.	Pest and disease control	Nutrient cycling
6.	Biodiversity conservation	Biological population regulation

Earthworms: Earthworms are considered numerous and grouped into 23 families, 700 genera and many species (Usman,2013).Earthworms play a significant role in regulating soil physical and chemical properties and soil processes (Lubbers et al., 2011).They redistributes nutrients, aerates the soil and increases surface water infiltration, decompose of dead organic matter and transformed soil colour and surface soil layers (Edwards, 2000).It noted that earthworms essentially change soil structure by casting and burrowing and as such improve soil aggregate stability, cohesion and adhesion in soil and pore-size division.

Plants (Through extensive root system): Soil biota such as plants as a major producersuse solar energy to fix carbon from carbon dioxide through photosynthesis, and help to produce roots, tubers and other underground organs within soil body. The root plays an important function in binding soil particles and resilienceagainst soil erosion and unacceptable environmental changes. The leaves and litter materials from the trees also add organic matter to the soils.

Table-3: Soil fauna and their eating habits:

Microphytic feeders:	
Organism	**Microflora consumed**
Springtails	Algae, Bacteria, Fungi
Mites	Fungi, Algae, Lichens
Protozoa	Bacteria, other microflora
Nematodes	Bacteria, Fungi
Termites	Fungi
Carnivores secondary consumers :	
Predator	**Prey**
Mites	Springtails, Nematodes, Enchytraeids
Centipedes	Springtails, Nematodes, Snails, Slugs, Aphids, Flies
Moles	Earthworms, Inspects
Carnivores tertiary consumers :	
Predator	**Prey**
Ants	Spiders, Centipedes, Mites, Scorpions
Centipedes	Spiders, Mites, Centipedes
Beetles	Spiders, Mites, Beetles

Effect of soil biota on physicochemical properties of soil : Soil biota directly or indirectly participate in many biochemical functions that affect the physicochemical properties of soil in various ways that are mentioned below:

Soilorganic matter: Organic matter consists of dead plants, animal, microbes and fungi or their parts, as well as animal and microbial waste products in various stages of decomposition. Eventually, all of these break down into humus, which is relatively stable in the soil. Increasing levels of organic matter aid in soil structure, nutrient mineralization, biological activity, cation exchange capacity, water-holding capacity, and water and air infiltration rates.Soil organic matter which is the vital component of soil quality development in soil environment undergoes some important decomposition processes process that are as:

Mineralization: Mineralization is a biochemical breakdown of organic materials by soil biota.

Humification: Humification is the change of simple organic substances into larger molecules, which finallybecome humus (FAO, 2005).

Nitrogen fixation: Biological nitrogen fixation, the process by which some micro-organisms (certain bacteria) are able to transform atmosphere nitrogen gas into nitrate and make it available to the ecosystem. During biological nitrogen fixation, microbes form symbiotic relationships with plants, in which microbes provide nitrogen to the plants and the plants provide sugars from photosynthesis to the microbes. The main nitrogen-fixing bacteria in agricultural systems are from the genus *Rhizobium*, and are associated with plants of the bean family (*Leguminosae*).

Ammonification: Ammonification is the release of ammonium ions from decomposing organic matter. This process is also called nitrogen-mineralization, as it changes the unavailable organic forms of nitrogen into plant-usable forms. The ammonium that is produced is held in the soil solution, adsorbed onto CEC sites, or taken up by plants.

Nitrification: Nitrification is process in which ammonium is transformed into nitrate. In this process Nitrosomas spp. oxidize ammonium to nitrite and Nitrobacter spp. oxidize nitrite to nitrate.

Denitrification: Nitrogen can be lost from wet soils where anaerobic conditions occur. Under these conditions some bacteria get their oxygen from nitrate rather than oxygen gas, releasing nitrogen, gas back into the atmosphere. This process is called denitrification. Though nitrogen can be lost from the soil ecosystem this way, denitrification can be a very useful function where excess concentrations of nitrate occur in the soil.

Immobilization: Nitrogen is unavailable to plants (immobilized) when it is in the organic form. Usually, rates of mineralization in the soil are higher than rates of immobilization. However, if organic matter added to the soil has less than 1.5% nitrogen, soil microbes will rapidly take up the available nitrogen, so that the rate of immobilization will temporarily exceed the rate of mineralization. This temporarily decreases the amount of nitrogen available to plants.

Soil formation: Soil biota played a vital role in soil formation process. Biota (Flora, Fauna, Microorganisms and plants roots) in conjunction with climate, modifies parent material to produce soil.

Soil structure: Biological factors help bind soil particles together like Bacterial exudates, high organic matter content, root activity and exudates (sugars that act as glue),Fungal hyphae, Macro fauna (especially earthworm) activity and waste,

Ritz et al. (2010)noted that soil biota produce soil structure by a number of direct and indirect processes. These processes are:

I. Moving and aligning primary particles alonghyphal surfaces.
II. Adhering particles together by the action of adhesives involved in colony cohesion, and other exudates, such as extra-cellular polysaccharides.
III. Enmeshment and binding of aggregates by fungal hyphae and actinomycete filaments, and associated mycelia.
IV. Coating pore walls with hydrophobic compounds, particularly by fungi which produce such polymers to insulate their mycelia, which have a relatively large surface area: volume ratio.

Soil aggregate formation: Soil biota bind soil particle together, improve the stability and cohesion of aggregate

development and help in nutrients cycling within the pores of different sizes(Six et al., 2004).

FAO (2005) noted that numerous microbes exist in soil particles and or within the surface areas of soil micro-aggregates. Thus, soil micro-aggregates could be considered as zoological houses where millions of bacteria and fungi occupied. Their presence provides many essential ecosystem services to soil aggregates and soil structures .

Soil texture: Soil texture means fineness or coarsenessaffects plant rooting, soil structure and organic matter content, determine the pore-size distribution, soil water holding capacity and air-filled pore space in soil aggregates that provide habitat for soil organisms. One can visualize all the interactions of gases, water, organisms and organic and inorganic constituents at the “micro scale “provide us with a “glimpse of the universe” in a gram of soil.

Soil permeability: Microorganisms (bacteria and fungi) and macroorganisms (insects and earthworms)increase soil permeability and infiltrationby encouraging the formation of soil aggregates and creating macropores.

Soil temperature: Growingplants shade the soil, cool the surrounding air through transpiration which reducing the temperature. Soil temperature influences on soil physicochemical properties and biological activity. Below about 40°F there is little biological activity. At lower temperature organic matter accumulation increase.

Table-4: Size classification of soil organisms according to body width (Adapted and modified after Swift et al., 1979)

Microflora & Microfauna (Less than 100 µm)	Meso fauna (100 µm to 2 mm)	Macro and Mega fauna (2 mm to 20 mm)
Bacteria, Fungi, Nematodes, Protozoa, Rotifera	Acari Collembola Protura, Diplura, Symphyla, Enchytraeide, Chelonethi, Isoptera, Chilopoda, Diplopoda	Opiliones Isopoda Amphipoda Megadrili(Earthworms) Coleoptera Araneida Mollusca

Soil colour: Greenish, bluish, and gray colors in the soil indicate wetness. The colors are caused by the reduction of iron by bacteria in anaerobic conditions, when the bacteria get the electrons they need energy from iron rather than from oxygen.

Result and discussion: Field work, real-time observations and textual data etc. that has been collected, analysed and reviewed , indicated that soil biota directly or indirectly participate in many biochemical functions that affect the physicochemical properties of soil in various ways.

Overall it noted that soil biota and their biodiversity play a role in soil formation ,soil fertility,and nutrient uptake by plants. There biodegradation processes reduce hazardous waste and control of pests through natural biocontrol among the food webs. They improve soil physicochemical properties and enhance crop productivity through recycling the basic nutrients (nitrogen, potassium, phosphorus, and calcium)required for all ecosystems.

They break down organic matter into humus hence enhancing plants nutrients, soil moisture retention and reducing leaching of nutrients. They increases soil porosity through soil aggregate stability and hence water infiltration and thereby reducing surface water runoff and decreasing erosion.

Environmental issues related to agricultural soils and food security are quite very important in determining and understanding the role of soil biota and their biodiversity (Walletal.,2001).Agricultural soil management, environmental pollution, global warming, soil degradation and climate change are directly and indirectly connected with the existence and biodiversity of many soil organisms(de Bello et al., 2010).

Conclusion: The role of soil biota is vital to soil properties and soil components. Soil biota maintain critical processes such as carbon storage, soil carbon sequestration and greenhouse gas emission, nutrient cycling andsoil physicochemical properties. They influence the stabilization and destabilization of soil organic materials for soil quality and soil fertility development.

Properunderstandings of soil biota and their biodiversity in soil environment would provide ways to improve soil health, soil function, soil quality, soil fertility and sustainable soil management activities in agricultural production.Generally, without vital recycling processes of soil organisms, the soil would become a stockpile of dead plant and animal materials with no facilities to reprocess essential nutrients such as carbon, nitrogen and phosphorus in soil ecosystem .

Both the field and laboratory data requirements are quite important, we have shown that assessments and analyses are possible in the aspects of physical, chemical and biological relationships between soil biota and the role they played in soil medium.

This study will emphasize the needs to further expand our understanding into many aspects of soil organisms and their roles in relation to nature farming, sustainable agriculture, environmental pollution, global warming, climate change and food security.

Loss of soil biota leading to the long term deterioration of soil fertility and the loss of agricultural productivity. Implementing sustainable practices in agriculture, natural farming, plantation, reducing deforestation and over grassing , limited use of fertilizer and pesticides can be improve soil biota in agriculture land.

Acknowledgement: I wish to express my profound sense of gratitude and thanks to my esteemed Supervisor Dr.

Pramod Pandit (Principal, Government New Model College Barwani (MP)) and Co- Supervisor Dr. Dhananjay Dwivedi (Professor Department of Chemistry P.M.B.Gujarati Science College, Nasiya Road, Indore,MP.- Research center) for their inspiring guidance, constant encouragement and help extended during the investigation, conception ,design, collection of data, sampling, analysis and preparation of the research paper.

I also express my sincere thanks and gratitude to Dr. Mahesh Baviskar (Profe. Depart. of Chem. Govt. PG. College Sendhwa, Dist. Barwani (MP)),Dr. Dinesh Kanade(HOD&Profe. Depart. of Chem. Govt. PG. College Sendhwa, Dist. Barwani and DrVikas Pandit (Profe. Depart. of Chem. Govt. PG. College Sendhwa, Dist. Barwani)for their valuable suggestions and help during theinvestigation, analysisinterpretation of data, who involved in drafting the manuscript , revising it critically for important intellectual contentand preparation of the research paper.

I also wish to express my sincere thanks to Soil Scientist Dinesh Jain Sir and JitenAlawe sir (Krishi Vigyan Kendra-KVK Barwani) for providing me the necessary laboratory facilities, valuable instructions , devices, instruments,costly chemicals during my investigations.

I also wish to express my sincere thanks to Shree RajendraMotiyaniji(President and Chairman Person of Sendhwa Welfare & Development Trust Sendhwa Dist.Barwani MP)for their direct and indirect support, blessings in my work.

My heartly thanks to my father Shree Raghunath Khairanar, my mother SmtRajani Khairanar My lovely Brother Shivendra Khairanar who were always present in all of my good and the bad times and all my family member for their love blessings, inspiration, financial support and never ending faith in me.

I also want to express feelings of gratitude to my wife Smt.Shivani Khairanar for her love, devotion, trust and care enabled me to achieve this goal. I am thankful to the almighty for his grace and immense blessings, always showered upon me.

I also extend my thanks to all who helped me directly or indirectly during their course of investigation.

References:-

1. Allen, J.J., 1990. Termites, soil fertility and carbon cycling in dry tropical Africa: A hypothesis. Journal of Tropical Ecology ,6 (3): 291-305.
2. Brussaard, L., 2012. Ecosystem services provided by the soil biota. In: Soil ecology and ecosystem services. Wall, D.H., Bardgett, R.D., Behan-Pelletier, V., Herrick, J.E., Jones, T.H., Ritz, K., Six, J., Strong, D.R., van der Putten, W.H. (Eds). Oxford University Press. pp.45-58.
3. Castro-Huerta, R.A., Falco, L.B., Sandler, R.V., Coviella, C.E., 2015. Differential contribution of soil biota groups to plant litter decomposition as mediated by soil use. PeerJ 3:e826.
4. Coleman, D. C., 2001. Soil biota, soil systems, and processes. In: Encyclopaedia of Biodiversity. Levin, S.A. (Ed).Vol. 5, Academic Press. pp.305-214.
5. Coleman, D.C., Reid, C.P.P., Cole, C.V., 1983. Biological strategies of nutrient cycling in soil systems. Advances in Ecological Research 13: 1-55.
6. de Bello, F., Lavorel, S., Díaz, S., Harrington, R., Cornelissen, J.H.C., Bardgett R,D., Berg, M.P., Cipriotti, P., Feld, C.K., Hering, D., da Silva, P.M., Potts, S.G., Sandin, L., Sousa, J.P., Storkey, J., Wardle, D.A., Harrison, P.A., 2010. Towards an assessment of multiple ecosystem processes and services via functional traits. Biodiversity and Conservation 19(10): 2873-2893.
7. Edwards, C. A. Chapter 6: The Living Soil: Earthworm In: Soil Biology Primer. Tungel, A., Lewandowski, A. HappevonArb, D. (Eds.) 2000. Soil and Water Conservation Society & NRCS Soil Quality Institute, Ames, IA., USA.Available at: www.statlab.iastate.edu/survey/SQI/soil_biology_primer.htm [Access date: 05.12.2015].
8. FAO, 2005. The importance of soil organic matter: key to drought-resistant soil and sustained food production. FAO Soils Bulletin, No. 80. Food and Agricultural Organization of United Nation, Rome, Italy. pp.11-47.
9. Kibblewhite, M.G., Ritz, K., Swift, M.J., 2008. Soil health in agricultural systems. Philosophical Transactions of the Royal Society B: Biological Sciences 363: 685–701
10. Kramer, C., Gleixner, G.,2008.Soil organic matter in soil depth profiles: Distinct carbon preferences of microbial groups during carbon transformation. Soil Biology and Biochemistry 40(2): 425-433.
11. Lubbers, I.M., Brussaard, L., Otten, W., Van Groenigen, J.W., 2011. Earthworm-induced N mineralization in fertilized grassland increases both N2O emission and crop-N uptake. European Journal of Soil Science 62(1): 152 – 161.
12. Ritz, K., Harris, J., Murray, P., 2010. The role of soil biota in soil fertility and quality, and approaches to influencing soil communities to enhance delivery of these functions. Defra project code: SP1601: Sub-Project A of Defra Project SP1601: Soil Functions, Quality and Degradation – Studies in Support of the Implementation of Soil Policy. Cranfield University and Rothamsted Research, UK, 34 pp.
13. Ritz, K., McHugh, M., Harris, J.A., 2004. Biological diversity and function in soils: contemporary perspectives and implications in relation to the formulation of effective indicators. In: Agricultural soil erosion and soil biodiversity: Developing ýndicators for policy analyses. Francaviglia, R. (Ed.), OECD, Paris, France. pp. 563-572.
14. Six, J., Bossuyt, H., Degryze, S., Denef, K., 2004. A

history of research on the link between (micro) aggregates, soil biota,and soil organic matter dynamics. Soil and Tillage Research 79(1): 7–31.

15. Song X., Song Y., Sun T., Zhang W., Zhou Q., 2004. Bio-indicating function of soil protozoa to environmental pollution. Chinese Journal of Applied Ecology 15(10): 1979-1982. [in Chinese].
16. Swift, M.J., Heal, O.W., Anderson, J.M., 1979. Decomposition in terrestrial ecosystems. University of California Press, Berkeley & Los Angeles, USA. 372p.
17. Usman, S., 2013. Understanding soils: Environment and properties under agricultural conditions. Publish America, Baltimore, USA. 151p.
18. Wall, D.H., Adams, G., Parsons, A.N., 2001. Soil Biodiversity. In: Global biodiversity in a changing environment: Scenarios for the 21st century. Chapin III, F.S., Sala, O.E., Huber-Sannwald, E. (Eds.), Springer-Verlag, New York, USA. pp. 47–82.
19. Yeates, W.G., Coleman, D.C., 1982. Role of nematodes in decomposition. In: Nematodes in soil ecosystem. Freckman,D.W. (Ed.). University of Texas Press. Austin, USA. pp. 50-80.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Pros and Cons of FDI in Multi-Brand Retailing in India

Dr. Rupesh Pallav*

***Assistant Professor (Principal Incharge) Govt. College, Rajoudha Porsa, Morena (M.P.) INDIA**

Abstract : FDI plays an essential role in the overall development of the economy of the Country. The contribution of FDI through financial resources, technology and innovative techniques raises the overall productivity of the economy of the country. There is a mixed response about FDI in the retail sector. Still, some of the retailers are not in favour of the FDI and feel that FDI in retail is harmful to local retailers in India. Everyone has the reasons for supporting or opposing the issue. However, there is some pros and cons of FDI which we are discussing in this paper. This Paper investigates the pros and cons of FDI in multi brand retailing business. The purpose of this research was conducted with the use of both primary and secondary databases. The primary source data was collected by the researcher's observations at different multi-brand retail stores. And the Secondary data was collected with the help of comprehensive literature available in the form of secondary data i.e., Magazines, Journals, e-journals, Websites, Books, and Newspapers etc has been taken. After conducting a deep review of collected data, findings are presented to understand the pros and cons of FDI in Multi Brand Retailing.
Keywords: Pros and Cons, FDI, and Multi Brand Retailing.

Introduction - Foreign Direct Investment broadly known as any long-term investments by an organisation or company that is not a resident of the host country. The investment for a long duration of time is to make an initial investment and then subsequently keep investing in the host country for the betterment of business and market scenario. This long-term relationship benefits both the investor as well as the host country. The investor benefits in getting higher returns for his investment and the host country can benefit by the increase in market scenario like new technologies, infrastructures, retailing chains, multi branding areas, more employments, etc.Retail Sector is one of the most important pillars of Indian economy and it is growing at anegregious pace. Now a days we see that Retail sector contribute more for country's GDP and economy. Foreign Direct Investment (FDI) in retail sector plays an integral role in the economic growth. FDI in Multi-brand retail can be seen as an important revolution to revive the Indian economy.To revive the Indian economy, FDI policy in multi-brand retail reform that would ease supply-side pressures and reduces inflation. FDI in multi-brand retail can go long way in improving the efficiency of supply chain, low wastages, systematic working, infrastructural facilities, technological up gradations and other relevant areas of growth in retail sector. Even the FDI policy on multi-brand retail creates opportunities for the Micro, Small and Medium Enterprises to reach out the International markets. Farmers also get help to tame food inflation by improving agro-commodity management.

Present scenario of FDI: There has been opening of Indian economy to foreign players for foreign direct investment through organized retail. The Indian government has sanctioned 51% foreign direct investment in multi-brand like Wal-Mart, Carrefour, and Tesco. Due to this foreign goods and items of daily bases available locally at a lower price to Indian consumers. The new policy will allow multi-brand foreign retailers to set up shop only in cities with a population of more than 10 lakhs. In 2024, India's foreign direct investment (FDI) inflows grew significantly, with a gross inward FDI of $42.1 billion from April–September. This was a 26% increase from the same period in 2023.This means that big retailers can move not only in the metropolises but also in the small cities. However the final decision will lies with the state governments. There is a need of talented officials to take appropriate decision in the right direction for the betterment of foreign companies as well as our small and big retailers.

Retail Sector of India: The retail industry ofIndia is the third largest in the Asia and if we talk about India itself it is second largest sector which contributes more for GDP and Indian Economy. Employer with an estimated 48 million people engaged by the industry. India truly does embrace diversity with apassion like very few places in the world.

Retailing in India is slightly different than in developed markets. It is divided in two section that is organized and unorganized retailing. Organizedretail could be described

as when everything is run in a right manner with full legal rules and regulations. Trading istaking place under a license or through peoplethat are registered for sales tax or income tax. But when we talk about unorganized retail it is India's more traditionalstyle of low-cost retailing, for example, local shops, departmental stores, own-managed general stores, convenience stores, hand carts and pavement vendors, etc. This section of the retail sector which is unorganized in nature is just one of the issuescontributing to the sensitive debate on FDI inIndia at the moment. There is a need of much awareness and complete information channel.

Research Objectives:

1. To analyse pros and cons of FDI in multi brand retail sector.
2. To identified the current scenario of FDI in multi brand retail sector.

Review of Literatures:

● K. R. Kaushik and Dr. Kapil Kumar Bansal (2012) identified in their study that if we are assuming advantages of FDI there is also a disadvantage attached with it. This is an era of change, everyone wants change. As the living style and purchasing power of consumer improves they wants changes in their environment. The current market scenario should have to be change if marketers wants new hikes. There is a need of big investments which can only be done through the help of foreign companies. Development of Indian markets means development of Indian economy. Everything is related with each other. That's why it is also the responsibility of Indian Government to allow FDI in India with a right manner and in right direction. Talented officials should decide the policies for FDI. However there is some disadvantages and risks in this deal but we talk about the advantages they are a lot. In every business deal there is some risk but if we wants profit and success we have to take some risk and it is natural because risk is a part of every business deals. So forget about this FDI is very advantageous for our Indian economy instead of loss.

● Professor Santosh Karmani (2013) identified in there study that although the permission of allowing FDI in Indian retail sector taken by the Indian government but there are several conditions including 50% local peoples employment in multi brand setups, 30% in procurement, etc. TheIndian Government says that if companies don't paid these amounts than it will not be beneficial for Indian economy to allowing FDI in India. If there is some conditions of Outsiders and then here is also some conditions apply in permitting investments in India.

● Dr.M.ShahulHameedu (2014) said in their research that FDI in India has plays a very important role in the development of economic growth of India. FDI in India is helpful in accessing the jobs and improving the existing manufacturing industries. The inflow of FDI in Indian retailing Business aware and make active the other sectors like Computer Software and Hardware,Drugs and Pharmaceuticals, Electronic sector, etc.These sectors in Indian retailing business have much to expand by the FDI.

● Krish Kumar and Arbinder Chatwal (2012) found that as per the current conditions new policies and regulations not being perfect for foreign investors.There should be done some changes in Indian market scenario then allow FDI in India by which it is beneficial for both insider and outsider. The current policy is trying to encourageJoint Ventures in multi-brand retailing to increases the domestic retailer's growth in this area but there is also the risk thatsome foreign retailers want to spend with a condition of complete ownership while the current policy of India will not permitted them to invest in such conditions.To sort out this problem both the parties have decide an appropriate solution than start the business.

● Nirmit Gogia said that entering of FDI in Indian retail sector is very negotiable matter. There is many issues which have to be resolved by taking appropriate action. The decision to allow entry of foreign players in Multi Brand Retail is definitely an overall changing issue for Indian retail sector. Allowing FDI in retail trade will be beneficial in terms of quality standards in retail sector. It improves the quality standards as well as cost-competitiveness of Indian producers and marketers.It will also helpful in introducing the modern Indian retail market with that of the global retail market.

· Rajib Bhattacharyya (2012) said in there study thatallowing FDI in India provide a boost to small-and medium enterprises. Moreover, expansion in the retail sector may also generate significant employment potential, especially among rural and semi-urban peoples. But the government of India must be cautious about the pros and cons of FDI and safeguards must be taken so that the positive effects may overcome the negative ones and the local small retailers easily survive even after big foreign retailers enter into the market.

● Anusha Chari and T.C.A. Madhav Raghavan (2011) described in their research that

India's retail sector remains limited especially in multi-brand retailing. Competition by large retailers become threats for domestic retailers, especially thesmall family-owned business. Another problem is that local retailers are under-developed and in a nascent stage in this field. The potential benefits from allowing large retailers to enter theIndian retail market may increases the costs. It is also seems thattechnical knowledge from foreign firms like warehousing technologies and distribution systems will lend itself to improving the supply chain for agricultural sector in India. Providing better linkages between demand and supply also improve theprice signals.It also enhanced exports in India. As far as IT sector is concern, it also openingthe door to large-scale investments in these sectors.

● Agarwal Anuradha and Maithili R.P. Singh (2013) said in there study that retail sector grows very fast in India and encouraging large number of globalplayers to enter in the market. As we talk about Indian policies, it is also change according to the current market scenario which promote

FDI in this sector for the bettermentof Indian economy. It can be very beneficial if government takes right decision in right direction.

- "Oppose FDI in Retail: Defend Indian Livelihoods" (2011) identified in their research that there is some back-drops where private companies are entering both in retail trade and agriculture in a bigway. It is necessary to frame new rules in order toregulate the operations of corporates in these sectors, which gives employment to the Indian population.

Research Methodology: For analysing the pros and cons of FDI in multi brand retailing the research is conducted with the help of both the primary and secondary database. In primary source the data is collected by the researchers own observations at different retail stores. And the secondary data is collected with the help of comprehensive literature available in the form of secondary data i.e. Magazines, Journals, e-journals, Websites, Books, and Newspapers etc. has been taken. The Opinion and views of the Retailing Professionals and experts on the subject were also obtained through personal interactions and telephonic interview.

Research Findings

Positive Outcomes of FDI:

1. FDI generates new employment opportunity by poolingyouth and providing them training in various aspectsof retailing.
2. Entry of FDI has developed the infrastructure & the construction of the retailindustry.
3. From when the FDI comes in India the market scenario is change and it increases the purchasing power of middle class families in urban areas.
4. Increase in working of women population which will decreases the difference of men and women in India.
5. Welcoming FDI in Indian retail sector will help toboost up the competition in domestic level retailchain.
6. Farmers also get benefit by FDI as it will help them toenter into a contract farming where they can supplydirectly to the retailer on demand without searchingfor buyers and could earn good cash.
7. Consumers will have more options to get number of internationalbrands at one place at a reasonable price.

Negative Outcomes of FDI:

1. FDI transfers the profits outside the India.
2. FDI would lead to unfair competition & ultimatelyresult in large-scale exit of domestic retailers whichwill lead to large scale displacement of personsemployed in the retail sector.
3. Indian retailing business is still immature and underdeveloped and in the improving stage, so it is necessary to make ourself strengthen first then merging with foreign investors.
4. Another problem is the monopolistic tendenciesand unnatural price trends of Indian retailing sectors which is directly effects the multi rand retailing system.
5. Due to competition small retailers are faces the problem and unable to get profit.
6. FDI is beneficiary only for big retailers who want to expand or upgrade themselves.
7. It is harmful to our small manufacturing units of India.

Suggestions:

1. The Government should create an awareness amongst the customers about the services and policies.
2. Government should keep eye on every action taken by foreign players.
3. Government policies should be beneficial to big as well as small retailers.
4. Channel of distribution should be effective and prompt to satisfy the customers.
5. The business house should provide friendly environment to the visitors so that they will not hesitate to enter in big multi brand shops'
6. Government should maintain the ratio of foreign investors in everything like in investment, employee's jobs, brands, etc.
7. Proper marketing research should be conducted in this direction.

Conclusion: The retail sector of India is moving under the phase of golden sunshine, encouraging large number of foreign investors to enter in the market. Changes in the Indiangovernment policy regarding FDI in retail sector would promote this sector on the whole economic development as well as social welfare of India. It can be very profitablefor the country if it is done in the right manner and in the right direction. However it depends on the Indian government officials that how they take decisions and make policies which will appropriate for small and big retailers as well as foreign investors. In futureFDI in multi-brand retail upto100 percent can bring abouthuge investment in technology and real estate which will expand the Indian economy. Now the government has added a new element of social benefit to opening of the multi-brand retail sector to foreign direct investment (FDI). Every consumer in India wants change, they wants some new in their lifestyle. As we all know that the lifestyle and purchasing power of the peoples change at a very fast speed in India. For this FDI become successful in the fulfilment of consumer needs. At last I want to say that as far as FDI is concern the pros and cons is depends on the government policies. How government officials decide the policies and rules and regulation which is beneficial to small and big retailers of India as well as Indian consumers.

References:-

1. K. R. Kaushik and Dr. Kapil Kumar Bansal*"Foreign Direct Investment in Indian Retail Sector Pros and Cons"*International Journal ofEmerging Research in Management &TechnologyISSN: 2278-9359Research Article 2012
2. Professor Santosh Karmani, Assistant Professor,S.S.T

College of arts and Commerce,Ulhasnagar, Mumbai" *The advantages and disadvantages of FDI in multi-brand retail"*Episteme: an online interdisciplinary, multidisciplinary & multi-cultural journalVolume 2, Issue 3 December 2013

3. Dr.M.ShahulHameedu, M.Com, MBA, PGDHRM, Ph.D.*"Foreign Direct Investment, the Indian Scenario"*International Journal of Scientific and Research Publications, Volume 4, Issue 2, February 2014
4. Krish Kumar and Arbinder Chatwal*"Foreign Direct Investment in India's Single and Multi-Brand Retail: New Opportunities & Developments"*www.bdo.uk.comand www.sannams4.comOctober 2012
5. Nirmit Gogia, 4th Year B.A., LLB, Osmania University, Hyderabad*. "F.D.I in Multi-Brand Retail: - "Competition Issues"*
6. Rajib Bhattacharyya, Assistant Prof. in Economics, P. G. Department of Commerce, Hooghly Mohsin College, India*"The Opportunities and Challenges of FDI in Retail in India*IOSR Journal of Humanities and Social Science (JHSS)ISSN: 2279-0837, ISBN: 2279-0845. Volume 5, Issue 5 (Nov. - Dec. 2012), PP 99-109www.Iosrjournals.Org
7. Anusha Chari and T.C.A. Madhav Raghavan*"Foreign Direct Investment in India's Retail Bazaar: Opportunities and Challenges"* Correspondence to achari@unc.edu, Department of Economics, Gardner Hall, University of NorthCarolina atChapel Hill, Chapel Hill NC 27576. Phone: 919-966-5346.
8. Agarwal Anuradha and Maithili R.P. Singh, Department of Management, CentralUniversity of Rajasthan, NH-8, Bandar Sindri, Ajmer-30580, Rajasthan India*"Growth and future scenario of FDI in Indian retail sector"*International Journal of Engineering and Management SciencesI.J.E.M.S., VOL.4 (4) 2013: 460-464
9. *"Oppose FDI in Retail: Defenfd Indian Livelihoods"* December 6, 2011, A Government Report.
10. Wikipedia (https://en.wikipedia.org/wiki/Foreign_direct_investment_in_India)
11. Anil Kumar Thakur and T.K. Shandliya*"Foreign Direct Investment in India: Problem and Prospects"* Published by Economic Association of Bihar 2008.
12. Swapna S. Sinha *"Comparative Analysis of FDI in China and India"* 2007 Published by Boca Raton, Florida USA.
13. Economica India *"Investments Approval and FDI in India"* Published by Academic Foundation.
14. Theodore H. Moran *"Foreign Direct Investment and Development"* published by Institute of International Economics.
15. https://economictimes.indiatimes.com/news/economy/indicators
16. https://www.business-standard.com/economy/news/india-s-outward-fdi-dips_1

****

A Critical Analysis of Kalidasa's Poetic Vision of Nature

Sachin Sharma*

***Assistant Professor (English) PMCoE, Rajiv Gandhi Govt P.G. College, Mandsaur (M.P.) INDIA**

Abstract : Kalidasa is renowned all over the world as a poetic genius for his nature poetry which sympathetically describes the beautiful landscape, soundscape, and the scenic beauty of ancient India with an unparalleled poetic mastery and charm; the lucid and elevated description of nature is the soul of his poetry. *Ritusamharam* which is supposed to belong to his days of prime describes the different aspects of nature seen from a devout lover's eye; *Meghadutam* is known for its sublime description of nature as stated by an alienated lover. *Kumarsambhavam* is based on the account of Mountain Himalaya; the setting of *Abhijanashakuntlam*, is the natural surroundings of the forest and sanctums of sage Kanva and Maricha; Shakuntala, the adopted daughter of sage Kanva, lives and rears the trees and animals with filial emotions.
Keywords: World, alienated, trees,Sanskrit, emotions, affection, emotions, sage.

Introduction - Kalidasa is widely acknowledged as the supreme poet and playwright of the classical Sanskrit tradition. He is also the greatest writer that India has ever produced (Johnson 1). His works testify his vast knowledge of Vedas, Puranas, Upanishads, and various theatrical treatises. Bana Bhatta says "When Kalidasa's sweet sayings charming with sweet sentiment, went forth who did not feel delight in them as in honey-laden flowers of mango tree?" 6 (Shastri 28). Kalidasa is indisputably the greatest poet in Sanskrit poetry and his genius has been recognised in Sanskrit literature from very early times. He has presented the worldview of Satyam, Shivam, Sundram in his writings and is an expert in picturisation of emotions through his art. Having portrayed inner feelings and the outer world, Rasa, Alamkara and metre are also used perfectly by him. Kalidasa was the summation of Indian culture in one of its most exalted periods of triumphant self-realization. His works form a treasury of the truest and the highest Indian ideals of life. If one wishes to know the heights of life and super-life to which authenticity of India can reach, one must study the works of Kalidasa with loving attention and minute scrutiny and reverential affection again and again. By a study of his works and his genius the rest of the world will be enabled to achieve its true progress by attaining a synthetic vision of life and by having a true concept of that idealised and transfigured life which alone is the crown and the consummation of one's petty worldly life otherwise so full of fruitless toil and unfraternal strife. Kalidasa has had great influence on several Sanskrit works, on all Indian literature (Gopal 8). He also had a great impact on Rabindranath Tagore. The romanticism of *Meghadutam* can be found in Tagore's poems on the monsoons. Sanskrit plays by Kalidasa influenced late eighteenth and early nineteenth-century European literature (Sastri 26).

According to Dale Carnegie, father of modern medicine, Sir William Osler always kept on his desk a poem written by Kalidasa (2). As for as Kalidasa's biographical sketch is concerned, no authentic information is available about the life and date of the immortal poet-playwright who has left an indelible imprint on the Indian mind. There is no evidence to prove where and when he was born, who were his parents, where and when he died.

The poet has studiously observed complete silence about himself in his work. Neither directly nor indirectly does he shed any light on his personal life or any remarkable event of his life. In this circumstance, the only reliable sources of his birthplace are his writings and works. Scholars have speculated that Kalidasa may have lived near the Himalayas, in the vicinity of Ujjain, and in Kalinga. This hypothesis is based on Kalidasa's detailed description of the Himalayas in his *Kumarsambhava*, the display of his love for Ujjain in Meghaduta, and his highly eulogistic descriptions of Kalingan emperor Hemangada in RaghuvaCsa (Sixth Canto). Lakshmi Dhar Kalla, a Sanskrit scholar, wrote a book titled The Birth-Place of Kalidasa, which tries to trace the birth-place of Kalidasa based on his writings. He concluded that Kalidasa was born in Kashmir, but moved southwards, and sought the patronage of local rulers to prosper.

V. V. Mirashi and Navlekar in their book, Kalidasa, Date, Life and Works state that the birth place of Kalidasa is Vidarbha on the base of the style of his writings. They have

also mentioned that Kalidasa has described various places across the country in his works. Kalidasa in his writings has adopted the Vaidarbhi style of composition which is distinguished by elegance of thought and expression, fineness of sentiment and imagination, and avoidance of cumbrous compounds and obscure worlds. All these facts show that his original home was in Vidarbha. Kalidasa has never explained his birth place in his writings. Various philosophers and eminent scholars of Kalidasa's work have discussed his birth place with the help of his internal as well as external sources. Ram Gopal in his book Kalidasa: His Art and Culture has certified that the birth-place of Kalidasa is Ujjayini. The fact cannot be ignored that Ujjayini and the river Sipra were the great liking place for Kalidasa. In Meghaduta he devotes nearly a dozen stanzas to the warm description of the beautiful ladies, palatial buildings, glittering bazaars and salubrious surroundings of his favorite city which he fondly describes as a splendid fragment of heaven.

Moreover, he has also described the other places of Central India like the hills Nichagiri, Devagiri and Ramagiri, rivers like Reva, Vetravati, Charmanvati, Vananadi, Nirvindhya, and Gambhira and the Dasarna country with its capital city named Vidisha, Dasapura (Mandasor). For example, in Meghaduta, Kalidasa "requests the cloud-messenger to proceed from Daspura to the famous battle-field of Kurukshetra in the river Brahmavarta country and to enjoy the sacred waters of the river Saraswati. Then the cloud is requested to go to his destination Alaka on Mount Kailasa via the vicinity Kanakhala where the river Ganga descends from the Himalayas" (Gopal 4). Kalidasa's deep attachment to Ujjayini coupled with his intimate knowledge of the geography of this region suggests that he spent the best part of his life in this city, whatever might have been his birth-place.

According to various scholars and philosophers, it can be well said that Kalidasa's life and his literary works are still relevant in contemporary time and his thoughts and opinion are the need of the time. Kalidasa's life cannot be described in a single word or a philosophy as he is an epitome of Indian aesthetics and literature itself, mingled with soil and air of the country. Although, Kalidasa has described the places like Mithila, Ujjayini, Vidarbha, Vidisha, Bengal and Kashmir in his writings, but it cannot be certified that his birth place is one of them because in his writings one can find a large number of natural places. In order to get an insight to the ethics, religion, and philosophy of the society, it is very pertinent to go through the life and works of Kalidasa.

Kalidasa's Contribution to Literature

Kalidasa, the greatest poet, ever India ever has seen, and his contribution to almost all branches of Sanskrit literature is well known. His works include two cantos, *Raghuvamsam* (Dynasty of Raghu) and Kumdrasambhavam (Birth of Kumara), two lyrical poems, *Meghadutam* (Cloud-Messenger) and *Ritusamharam* (The Exposition on the Seasons) and three plays, *Malvikagnimitra* (The dancer and the King), *Abhijnanshakuntala* (The Recognition of Shakuntala) and *Vikramorvasiyam* (Urvashi won by Valour). He wrote his plays based on the love stories of the kings and in poems also the main sentiment is love. He wrote his works in the context of the Vedic culture and kingly rule. Evidently, his works envisage the impact of the social and cultural scenario of his times and the design and characterisation throughout his works seem to be largely based on these facts.

Alexander Vom Humboldt says, "Kalidasa the celebrated author of the Sakuntalam, is a masterly describer of the influences which nature exercises upon the minds of lovers. Tenderness and richness of creative fancy have assigned to him his lofty place among the poets of all nations" (Nagaiah 46). *Malavikagnimitram* is the first play of Kalidasa. It shows the strong gap for readers from beginning to the end. The story has been projected by the poet well and it revolves around the love of a King in a royal palace. The description of the things is beautiful and praiseworthy. Poet has beautifully handled the hurdles which were coming in the development of the story in all five acts commendably. Malavika was a perfect dancer and a skilled actor while Agnimitra was a royal king, though he is passionate but a little bit passive and deploys his minister to win over Malvika to make her queen. Malavikagmitram is the finest work because of its tragic-comic presentation.

The second play named *Abhijnanshakuntalam* is one of the most famous works of Indian Literature which was at first known in Europe. Later on, it has been translated by many English and German translators. It was welcomed and well known by all poets of the world. It dramatizes the story of Shakuntala told in the epic Mahabharata. The play tells the love story of Shakuntala and King Dushyanta in all seven acts. King meets Shakuntala on a hunting trip. She is the adopted daughter of sage Kanva, while the real mother of Shakuntala is apsara Menka. Dushyanta marries her according to Gandharva rites when he fell in love with Shakuntala at the first sight. Shakuntala and Dushyanta express their love within the environment surrounded by beautiful flowers. After returning to his court, a misfortune falls upon her. Sage Durvasa incurs a curse inadvertently that Dushyanta will forget her completely until he sees the ring he has left with her when she was pregnant with their child. In an advanced state of pregnancy, she trips to Dushyanta's court, on the way she losses the ring and has not been recognized. Because the royal seal ring is returned to Dushyanta which is found by a fisherman, in consequence, he regains his memory of Shakuntala and strives to find her. After a long traveling, they are united eventually.

The third play *Vikramorvasiyam* contains five acts and it tells the love story of King Vikrama and apsara Urvashi. The dialogues of this play are recorded in the Rigveda.

The story develops with a hymn in the Shatapatha Brahmana which is a part of Rigveda. He used Vaidharbhi style in the play. Urvashi was an apsara and she was returning from the palace of Kubera on mount Kailasa along with Chitralekha, Rambha and many others. In a midway, the demon named Keshin abducted Urvashi and Chitralekha and flew in the North-East direction. The group of apsaras started to scream for help, which was heard by the king Pururava, who rescued the two. Urvashi and Pururava fall in love at first sight. The nymphs were without delay called back to the heaven. King could not forget the thoughts of Urvashi though he tried a lot to focus on his work. He amazed to find that only her love is an option. Urvashi wrote a message on a birch leaf to confirm her love in invisible form. The leaf was found by the queen of Aushinari who was the princess of Kashi and the wife of Pururava because that leaf was carried off by the wind. At first, the queen became angry but later she stated that she will not interfere the two lovers. Urvashi was called again back to heaven to perform a play before having any conversation with Pururava. She mispronounced her lover's name during the performance as she had to pronounce Purushottam instead of Pururava because she was infatuated with the Pururava. She was punished by the Indra that she would be banished from heaven until her human lover laid eyes on the child that she would bear him. She suffered the result of her misfortune that she would be transformed into a vine, and it was eventually lifted. It was sentenced that the lovers were allowed to remain together on Earth as long as Pururava lived. *Raghuvansam* (Dynasty of Raghu) is a grand historical poem in classical epic style. The great epic tells of three groups of kings. Cantos 1 to 9 deal with Rama's ancestors; Cantos 10 to 15 are directly concerned with the great Rama himself in whom the ideal of kingship reaches its highest; cantos 16 to 19 are devoted to Rama's descendants. It is an epic poem about the Kings of the Raghu dynasty. The first king to be described is Raja Dilip and was cursed to be infertile. He wholeheartedly worships and cares for his cows and as a result, his curse was redeemed. The most beautiful and interesting account in Raghuvamsam is of king Dasaratha and Rama. This is a brief description of Dasratha's trip: during the hunting period, Dasaratha saw many beasts. Since he could not shoot the peacock because it reminds him of his wife's hair adorned with flowers of different kinds and how it would become disarranged during their lovemaking, for as the peacock spread its tail feathers before him. It contains about six thousand verses lines having 1564 stanzas. This story describes some great warrior kings born in holy Indian soil. *Kumarasambhavam* (The birth of the war god) consists of seventeen cantos, 1096 stanzas and about 4420 verse lines in all. This work explains the simple and firm life of Shiva who is meditating on Kailasa Mountain. It tells the story of the courtship of Lord Shiva and Parvati. Most of the chapters talk about love and romance between Shiva and Parvati. It is a story of a powerful demon named as Tarakasur who was blessed that the child of Lord Shiva could only kill him. But Lord Shiva was very strict for the desire of love by intense meditation. By a great effort of Parvati and through much penance, she could win over the love of Lord Shiva. After some time, Lord Shiva and Parvati have blessed a son named as Kartikeya who killed the demon and restored peace and the glory of Lord Indra and the divine world. In this way, the great epic *Kumarsambhavam* comes to end. It is regarded as one of the greatest literary works of all time and pays all details of a courtship between two people. *RitusaCharam* (The Exposition on the Seasons) is a glowing tribute to the glories of six Indian seasons, each of which is vividly described in each canto. It is an early composition of his young days and in this play, Kalidasa may truly be called a poet of nature. Like Tennyson, he is also aware of the beauties and the crudities of nature and is well known to "Nature red in tooth and claw" (Tennyson 80). The contents of poems in six cantos convey the situation for the six Indian seasons: Grisma (summer), Varsa (monsoon), Sarat (autumn), Hemanta (cool), Sisirs (winter), Vasanta (spring) and this poem is generally considered to be Kalidasa's earliest work. The content of the poem is not simply a description of nature but it is also a combination of the beauty of nature and women, with an emotional response to both. Dotting the woodlands are charming glades by streams, Haunted by timorous gazelles easily alarmed Tremulous eyes like blue water lilies, enchanting and the heart is twisted with sudden longing8 . (Kalidasa, Ritusamhara)

This poem states the harmonious affinity of a human being with the forces of nature. Ritusamhara describes the vivid description of the importance of seasons. It is called the 'Medley' or 'Garland of Seasons.' The seasons in India are compared with the pairs of the lovers like lovers experience changes in relation to the season's changes. This poem opens with the explanation of summer with the extreme heat and dry weather and cracked lands. In this situation, everyone prays for the drops of rain. On the other side, it is a season of fruits like mango and moonlit nights. Women compel their husbands to make love but they have lost their passion because of the heat. After being enticed, their passions are restored and their longing reignited. The detachment from their partners during the Summer Season has been also portrayed that how people travel to faraway places for the sake of work. Their love shooting pain and adverse distance that detaches them is elaborated beautifully. For quenching their thirst even animals are shown to be going for looking water. They roam around in search of water even to forget animosity towards other animals along with other fellow animals they come and go to their personal territories. Because of their suffering from intense scorching sun, they are not scared of being hunted by the large animals. The Summer Season ends with a description of a forest fire caused by the heat of the sun.

After that, the poet has described the beautification of much awaited Rainy Season. In this season the whole India becomes drenched and looks neat and clean. The magic of the rainy season is added by the black clouds which are rumbling all over the sky. Because of the heavy rain and mossy environment birds and animals get affected and they do not enjoy properly. To get relief from the heat and misery, the peacocks start their dance which symbolises the liberty and freedom. The rivers are shown to be flowing fast because of the adding of spurious rainwater. By uprooting every tree that has been growing on its bank until now, these rivers flow furiously towards the ocean. The green trees and delicate flowers are seen everywhere and it looks lush and luxuriant. Women are shown to be running towards their lovers due to the thundering of clouds which creates fear in the hearts of women. The women, in this season, decorate themselves with the help of flowers and perfumes and to be sitting outside want to hear the voice of their lovers, it relates the suffering of their longing hearts. The Hemanta is a part of the pre-winter season. This season is known for the brewing of crops, blooming of flowers and sitting of swans in the ponds. The water becomes very cold. This season is filled with distinct kinds of the beauty of nature which attracts the heart of lovers for their beloved. The next season is autumn which describes the celebrating festivals and spread cheer and joy. This season is almost like a second summer because the weather remains pleasant but afternoon can be hot. Therefore, one can feel the nip in the air because of the change of weather. The season of the frost arrives also at this time of the year.

The specialty of this season is a nip in the air, chilly winds in the morning and nights and the biting cold which all signify the season of frost. Women use, in this season Jasmine flowers to decorate their hair and blue lotus for their ears. Then comes Winter Season, which is a more acute form of frost. In this season, people wear layers of clothes because temperatures fall down. But the winter season of Western countries is severer than the East. It only snows in the hilly regions and the south of India hardly experiences any winters. Lovers are shown drinking wine together and igniting their passion. They lose themselves in the long nights of lovemaking during the cold weather. People welcome Spring Season after the winter. In this season weather starts to warm a little bit. It is also the season of harvest festival and flowers can be seen blooming all around. It signifies that the changes in the season affect the minds of lovers. Trees put forth flower, waters abound in lotuses' Women's thoughts turn to love; the air is sweetly scented: Mornings are pleasant and days delightful:

All things are more alluring in springtime, my love9 . (Kalidasa, Ritusamhara, 6.2) With the theme of Ritusamhara, Kalidasa has shown his extraordinary talent for the depiction of the Seasons, their unsurpassed beauty singularly their own and in Meghaduta he has shown his masterful portrait of the most abundant beauty of the Rainy Season. Meghaduta (Cloud-Messenger) consists of 122 stanzas and it is one of Kalidasa's most famous works. This lyric shows how Yaksha feels after having been exiled from Alaka. Suffering the agony of separation, Yaksha, the lover, becomes completely love ridden and takes the help of a Cloud, the Megha, to address his love message to his beloved. The graphical descriptions of nature and topographical details of ancient India have been shown in the lyric by Kalidasa. It also shows the Mountains, rivers, historical places, mythological characters and rituals of those days. One feels surprised to find its Romanticism, classicism, rational, spiritual and emotional which are intermingled with each other properly. Its material is bound in Mandakranta metre. The poem contains two parts Purvamegha and Uttaramegha. Both the parts are complete in tone and attitude. The first part of it explains a kind journey which goes through the hills, rivers, Mountains to Alka City. In the second part, the Cloud visits to deliver the message to the wife of Yaksha who is living in Alkapuri. Her husband is left out by the Lord of the treasure of wealth, Kubera because of some disobedience and was sent to Ramgiri hill for one year, in the hope of reunion she is waiting for him. In the opening of the poem, Yaksha is yearning to meet his beloved because he is away from the eight months of exile. On the very first day of the month of Asadha, he requests the Cloud to be the messenger of his love. He indicates the route of Alkapuri and says while traveling towards North the Cloud will come across the region of Mala. After that, it will float towards NorthWest, will pass through Amarkoot Hill and it will touch the foothills of Vindhyachal where Reva or Narmada is flowing in a zigzag motion. Then passing through Darshan cloud will reach capital Vidisa, after taking a straight route and turn towards Ujjaini the capital of Avanti. After that, he gives the description of the number of rivers, hills, states, temples, and flowers. It can be assumed that poet must have visited his places of India individually. In the second part, the task of the cloud is to convey to message to Yaksha's wife that she should not be in grief. He calls cloud, his gentle friend to deliver the message to the lady who is unwidowed. The period of his exile will come to end soon and the time of reunion is very near, after that, they will enjoy together to fulfill their every desire.

Kalidasa's Treatment of Nature

Kalidasa is renowned all over the world as a poetic genius for his nature poetry which sympathetically describes the beautiful landscape, soundscape, and the scenic beauty of ancient India with an unparalleled poetic mastery and charm; the lucid and elevated description of nature is the soul of his poetry. *Ritusamharam* which is supposed to belong to his days of prime describes the different aspects of nature seen from a devout lover's eye; *Meghadutam* is known for its sublime description of nature as stated by an alienated lover. *Kumarsambhavam* is based on the account of Mountain Himalaya; the setting of *Abhijanashakuntlam*,

is the natural surroundings of the forest and sanctums of sage Kanva and Maricha; Shakuntala, the adopted daughter of sage Kanva, lives and rears the trees and animals with filial emotions. Further, the plays like The *Vikarormvashiyam* and The *Malvikagnimitram* also describe nature in various aspects.

Nature and poetry of Kalidasa are as inseparable as a rose and its smell. For example, in Raghuvamsa, the following verses describe the beautiful journey of Lord Rama as: "Looking thin, being distant, like the rim of a wheel/ coloured blue by rows and rows of tamala and palm trees"10 (Kalidasa, Raghuvamsa 13.15). The natural scenery of India has been described by Lord Rama and his companions when they were returning from Lanka to Ayodhya by Pushpak Vimaan. It shows the extraordinary power of imagination of the poet. The poet says that the river Mandakini is flowing with calm and clear current in the vicinity of Chitrakuta. It looks like the necklace of pearls around the neck of the earth when looked from the sky.
Along with this description of river Mallinatha has vivified picture of the union of Ganga and Yamuna in Raghuvansama: "presenting an aerial view of the confluence of the rivers Ganga and Yamuna, Kalidasa imagines that the former mingled in its flow with the waves of the latter looks at one place like a necklace of pearls inlaid with sapphires emitting luster" (Gopal 120). In the following verses of Raghuvamsa, the poet has vividly compared the river Mandakini with a necklace of Earth: 'We have arrived at Mandakini of which Crystal clear waters flow at leisure. From a distance, it looks so lean. Running below the Chitrakoota Mountain, The river resembles a necklace of pearls around the neck of the (mother) earth11. (Kalidasa, Raghuvamsa 13.48) In the same way, the poet has given a praiseworthy description of the landscape when Matali and King Dushyanta were descending from the heaven to earth. King Dushyanta has described the natural scenery and the lustre beauty of mother earth in Abhijanansakuntalam in act VII as following:

As the mountains rear upwards the land sinks rapidly Off their great peaks: trees whose forms were merged within the dense foliage Emerge distinct as their branched shoulders thrust into view; Those fines lines are now seen as rivers brimming with waters: See how the Earth looms at my side As if some mighty hand had flung her up to me12 . (Kalidasa, *Abhijanansakuntalam* 7.9) This verse has been composed in quatrain which has been extracted from the magnum opus work of Kalidasa i.e. Shakuntalam. In this verse, King is giving the picturesque description of deer that is running fast because of the fear of sharp arrows of King Dushyanta. The deer runs to save his life: Arching his neck with infinite grace, now and then He glances back at the speeding chariot, His form curving fearful of the arrow's fall The haunches almost touch his chest. Painting from fatigue, his jaws graping wide Spill the half-chewed tender grass to mark his path. With long leaps bounding high upwards, see how he soars Flying in the sky, scarce skimming the surface of the earth13. (Kalidasa, *Abhijanansakuntalam* 1.11) The King states to Matali when he was looking below while descending from the sky, that the world of man appears wonderful because of our rapid descent. It seems that the earth descends from the peaks of the mountains. Because of the rise of their trunks, the trees are withdrawing the state of being enveloped in their foliage. The water of the rivers is disappearing because of the thinness. But now these rivers acquire the manifestation owing to the expansion. Behold this world of men; it seems that it is brought near me by someone throwing it up (Shastri 381). Kalidasa is a sharp beholder of nature. He has included each and every type of flora and fauna like forests, rivers, lakes, creepers, trees, plants, mountains, animals, and birds. In the Ritusamhara poet elaborates the various seasons of India. The following verses describe the penuriousness of thirsty deer in summer season: "Antelopes suffering from Summer's savage heat/ race with parched throats towards the distant sky/ the colour of smooth-blended collyrium, thinking/ there's water there in another forest"14 (Kalidasa, Ritusamhara 1.11).

Further there is a scene describing and delineating the plight of the animal life in the summer season because of the excessive heat; birds sit thirsty panting for water on leafless trees; monkeys gather in dens under dry bushes; wild bulls wander here and there in search for food and water; elephants eagerly looking into dry wells for any trace of water15 (Kalidasa, Ritusamhara 1.23).

Kalidasa minutely observed the seasons of India. In the next verse, the poet has vividly described the current of the water in the rainy season. He also observes manifold varieties of the flora and the fauna which mainly originate in the rainy season. Kalidasa compares the water of torrential rain with snakes because of its crisscross movement of descending water and the fearful situation of frogs as: "Thick with insects, dust and bits of grass/ a dirtygrey in colour, headed downward/ rain water snakes slowly on its tortuous way/ watched anxiously by a brood of nervous frogs"16 (Kalidasa, Ritusamhara 2.13).

Conclusion: The vision of Kalidasa regarding the nature is immensely rich, for instance, in fourth canto of Raghuvansama, like the sandal forests infested with snakes on the southern Mountains of Malaya and Dardura, vineries of Persia, the pearl-fishery in the Bay of Bengal which is near the river Tamarapani, the walnut trees of the Kamboja country, the cardamom plant and the trees named Ketaka, Pumnaga (Nagakesara) and Rajatali growing in the south, the saffron plant growing on the banks of the river Indus, the groves of pepper plants in the valleys of the mount Malaya, the betel-plant growing in Orissa, a variety of rice known as Kalama cultivated in the eastern part of India, the herbs, musk-deer, minerals, bamboos, birch-trees, Sarala trees and deodar trees of the Himalayas, and the forest of palm trees on the eastern coast. Kalidasa is the

master of presenting the description of the mountains and his fondness can be seen in the Kumarasambhava. He gives a lucid description of the Himalayan Mountain which is snow-clad. It is the treasure house of innumerable house of precious stones, minerals, important herbs, trees, plants, and creepers with delightful flowers.

References :-

1. Bharadwaj, Saroj. The Meghaduta of Kalidasa. Delhi: Vidhyanidhi Prakashan, 2003.
2. Carnegie, Dale. How to Stop Worrying and Start Living. New York: Simon and Schuster, 1984.
3. Das, Gopinath. Alamkaras in Sanskrit Poetics with special reference to Visvanatha. PhD Thesis, June 2015.
4. Devadhar, C. R. Malvikagnimitram of Kalidasa. Delhi: Motilal Banarsidass, 1986.
5. Devadhar, C. R. Raghuvamsa of Kalidasa. Delhi: Motilal Banarsidass, 1985. Print.
6. Gopal, Ram. Kalidasa: His Art and Culture. New Delhi: Concept Publishing, 1984. Print.
7. Gupta, D.K. Kavyadarsa by Dandin. Delhi: Meharchand Lachhmands, 1973.
8. Johnson, W. J. The Recognition of Sakuntala by Kalidasa. London: OUP Press, 2008.
9. Kale, M.R. Bana's Kadambari (Purvabhaga). Bombay: Gopal Narayan and Company, 1928. Print. Kalidasa. Meghadutam. Trans (Sanskrit text with English Translation).
10. M.R. Kale. Delhi: Motilal Banarsidass, 2008. Print.
11. —. Ritusamharam. Trans (Sanskrit text with English Translation).
12. M.R. Kale. Delhi: Bharatiya Kala Prakashan, 2007. Print.
13. —. The Complete Works of Kalidasa, Vol. 1: Poems. Trans. Chandra Rajan. New Delhi: Sahitya Akademi, 1997. Print.
14. —. Kalidasa Raghuvamsha. Trans. Rajendra Tandon. Delhi: Rupa & Com. 2008. Print.
15. —. Ritusamharam of Kalidasa. Trans. N.P. Unni. Delhi: New Bharatiya Book Corporation, 2014.
16. Kalla, Lachhmi Dhar. The Birth-Place of Kalidasa. Delhi: DU Publication, 1926.
17. Krishnamoorthy, K. Kalidasa. New Delhi: Sahitya Akademi, 1994. Print.
18. Mirashi, V. V. and Navlekar N. R. Kalidasa, Date, Life and Works. Bombay: Popular Prakashan, 1969.
19. Nagaiah, Samudrala. Kalidasa. Michigan: Super Power Press, 1978.
20. Sastri, Gaurinath. A Concise History of Classical Sanskrit Literature. Motilal Banarsidass, 1987.
21. Shastri, Ved Prakash. AbhijnanaSakuntalam. Varanasi: Chowkhama, 2000. Print.
22. Tennyson, Baron Alfred. In Memorian. Oxford: University Press, Eward Maxon Publishing, 1867. Web.
23. Vishveshwar, Aacharya. Kavya-Prakash by Aacharya Mammata. Varanasi: Gyanmandal Limited, 1960.
24. Vyas, Ramnarayan. Nature of Indian Culture. New Delhi: Concept Publishing Company, 1992. Print.

****

भारतीय अर्थव्यवस्था में एमएसएमई के प्रभाव की खोज

डॉ. जी. एल. खांगोडे*, शिवानी जायसवाल**

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ़ एक्सीलेंस, शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय,उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – शोध पत्र में वर्ष 2017-18 से 2021-22 के बीच भारतीय आर्थिक विकास पर एमएसएमई के संभावित प्रभाव का पता लगाया गया है। इसमें सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों और उनकी प्रमुख विशेषताओं का अवलोकन प्रस्तुत किया गया है, जिसमें भारतीय आर्थिक विकास को और अधिक प्रगतिशील तथा परिणामोन्मुखी बनाने पर धयान केंद्रित किया गया है। एमएसएमई भारतीय अर्थव्यवस्था के उभरते स्तंभ हैं और उद्यमशीलता कौशल को बढ़ावा देने के साथ गरीबी में कमी लाने तथा स्थानीय व्यवसायों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह पत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए एमएसएमई के लाभ पर ध्यान केंद्रित करने और स्थानीय उद्यमों को बढ़ाकर रोजगार सृजन में वृद्धि करने और साथ ही नौकरियों और निवेश के संदर्भ में एमएसएमई के विकास और प्रदर्शन का आंकलन करने का प्रयास करता है।

शब्द कुंजी – एमएसएमई, आर्थिक विकास, उद्यमिता, स्थानीय उद्यम, रोजगार।

प्रस्तावना – सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। एमएसएमई को भारत सहित सभी विकासशील देशों के लिए 'प्रगति का इंजन' भी कहा जाता है। यह प्रचुर मात्रा में रोजगार उपलब्ध कराते हैं तथा शहरी से लेकर ग्रामीण क्षेत्रों तक रोजगार के अवसर पैदा करते हैं। यह समाज के सबसे कमजोर और गरीब लोगों के लिए बहुत काम करता है। एमएसएमई औद्योगिकीकरण में मदद करते हैं, विशेष रूप से पिछड़े क्षेत्रों में, कम निवेश के साथ बड़े पैमाने पर रोजगार उपलब्ध कराते हैं। इस पत्र का उद्देश्य भारत देश के आर्थिक विकास में एमएसएमई उद्यमों के प्रभाव का पता लगाना है। एमएसएमई क्षेत्र हमारे देश में दूसरा सबसे बड़ा रोजगार प्रदाता है और यह समावेशी और वितरित विकास हासिल करने का एक अच्छा साधन है। वर्तमान भारत सरकार ने एमएसएमई के संवर्धन के लिए कई सकारात्मक पहल की हैं, जैसे सूक्ष्म और लघु उद्यमों के लिए ऋण गारंटी ट्रस्ट फंड (सीजीटीएमएसई), प्रधान मंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (पीएमईजीपी), लघु उद्योग क्लस्टर विकास कार्यक्रम योजना, पीएमआरवाई आदि।

भारत सरकार ने एमएसएमई विकास अधिनियम, 2006 के 14 वर्ष बाद आत्मनिर्भर भारत पैकेज में एमएसएमई को पुन: परिभाषित किया है। एमएसएमई को परिष्कृत करने का प्राथमिक उद्देश्य व्यावसायिक गतिविधियों को आसान बनाना, अधिक निवेश आकर्षित करना और एमएसएमई क्षेत्र में अधिक रोजगार सृजित करना था। एमएसएमई की नई परिभाषा के अनुसार, एमएसएमई मंत्रालय ने अब क्षेत्र को मजबूत करने और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए खुदरा और थोक व्यापारी दोनों व्यापार को एमएसएमई के तहत शामिल किया है। एमएसएमई के अंतर्गत ऐसे समावेशन के साथ, मंत्रालय का उद्देश्य भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) के नियमों के तहत बैंकों से प्राथमिकता क्षेत्र को ऋण देने के सीमित उद्देश्य के लिए था। यह पेपर एमएसएमई की सहायता से भारत के आर्थिक विकास की जांच करेगा, कार्यान्वयन की चुनौतियों पर चर्चा करेगा और एमएसएमई के सकारात्मक और नकारात्मक परिणामों का आंकलन करेगा।

इसके अतिरिक्त, यह शोध पत्र देश की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए, निष्कर्षों के आधार पर, भविष्य के अनुसंधान के लिए सुझाव भी प्रदान करेगा, ताकि भारतीय आर्थिक प्रणाली में अधिक सकारात्मक इष्टतम परिणाम सुनिश्चित किया जा सके।

साहित्य की समीक्षा :

साहित्य समीक्षा का उद्देश्य भारतीय आर्थिक विकास पर एमएसएमई के प्रभाव का पता लगाना है। साहित्य समीक्षा में वर्तमान परिदृश्य में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों की वर्तमान समझ पर चर्चा की जाएगी। यह विषय पर आगे के शोधा के लिए वर्तमान साहित्य का एक व्यापक अवलोकन प्रदान करता है।

श्रीनिवास (2013) ने एमएसएमई के प्रदर्शन और भारत की आर्थिक वृद्धि में उनके योगदान का विश्लेषण किया, एमएसएमई में उद्यमों की संख्या और रोजगार की पहचान की और निष्कर्ष निकाला कि एमएसएमई भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भारत में एमएसएमई की बीमारी और पुनर्वास (2005) लेखक का मानना है, कि - एमएसएमई कई कारणों से किसी क्षेत्र में विफल हो जाएंगे। वैश्विक प्रतिस्पर्धा ने भारत के पहले से ही कमजोर बुनियादी ढांचे को और भी अधिक कमजोर कर दिया है, जिससे लघु उद्योगों के उत्पादन में गंभीर बाधा उत्पन्न हो रही है। असफलता के अनेक कारण हैं, हालांकि, उनमें से सभी प्रतिस्पर्धा से संबंधित नहीं हैं। ज्ञान की कमी, उपलब्ध संसाधनों, योग्य श्रमिकों या यहां तक कि मालिक की ओर से प्रेरणा भी व्यवसाय की असफलता के संभावित कारण हैं। विफलता का कारण चाहे जो भी हो, व्यवसाय के पास अपनी रुग्णता 'घोषित' करने के लिए कुछ प्रकार के संसाधन अवश्य होने चाहिए। भारत में, यह तंत्र क्या है, यह अपेक्षाकृत अस्पष्ट है, तथा वर्तमान प्रगति के बावजूद, इसने अनेक अकुशलताएं छोड़

दी हैं।

संजीव कुमार डे (2014) एमएसएमई के महत्व को हाल के वर्षों में विकसित और विकासशील दोनों देशों में विभिन्न सामाजिक-आर्थिक उद्देश्यों जैसे कि रोजगार, उत्पादन, निर्यात को बढ़ावा देने और उद्यमशीलता को बढ़ावा देने में इसके महत्वपूर्ण योगदान के लिए मान्यता दी गई है। यह किसी भी देश के औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एमएसएमई क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है, क्योंकि - यह भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में बहुत योगदान देता है।

उद्देश्य :

1. भारत में एमएसएमई के प्रदर्शन और उनकी विकास संभावनाओं का विश्लेषण करना।
2. भारत में एमएसएमई के सामने आने वाली चुनौतियों और बाधाओं पर विचार करना
3. देश में सकल घरेलू उत्पाद में योगदान के संबंध में एमएसएमई के परिणाम का मूल्यांकन करना।
4. एमएसएमई योजना और नीतियों के वर्तमान परिदृश्य का अध्ययन करना।
5. रोजगार और निवेश के संदर्भ में जमीनी स्तर की स्थितियों की जांच करना।

अनुसंधान क्रियाविधि - यह शोधा द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है, जिसमें विषय-वस्तु के बारे में गहन जानकारी प्राप्त करने के लिए सर्वेक्षणों और साहित्य की जांच की मुख्य मदद ली गई है। अधिकांश आंकड़े सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय द्वारा प्रकाशित 2017 से 2022 की वार्षिक रिपोर्ट से एकत्र किए गए थे। अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए डेटा विभिन्न लेखों और प्रकाशित पत्रिकाओं से भी एकत्र किया गया है।

परिणाम :-

भारत में एमएसएमई का प्रदर्शन -

(क) किसी अर्थव्यवस्था में एमएसएमई के प्रदर्शन को मापने का मतलब देश के सकल घरेलू उत्पाद में उस क्षेत्र का योगदान है। भारत के सकल घरेलू उत्पाद में एमएसएमई का योगदान नीचे दिया गया है -

तालिका क्रमांक 1: एमएसएमई का विकास प्रतिशत (वर्ष 2017-18 से 2021-22 तक)

क्र.	वर्ष	GDP %	कमी / वृद्धि दर
1.	2017-18	29.25	आधार वर्ष
2.	2018-19	29.69	+1.50 %
3.	2019-20	30	+1.04%
4.	2020-21	26.83	-10.57%
5.	2021-22	30	+11.81%

स्त्रोत - एमएसएमई मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, 2021-22

एमएसएमई का एक और सकारात्मक प्रभाव रोजगार सृजन पर है। एमएसएमई ने रोजगार के अवसरों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

एमएसएमई मंत्रालय के अनुसार 5 वर्षों में रोजगार सृजन में शीर्ष 10 राज्यों का विश्लेषण, साथ ही भारत की अर्थव्यवस्था में उनके योगदान का विवरण -

तालिका क्रमांक 2

S.	State	2017-18	2018-19	2019-20	2020-21	2021-22
1	Uttar 14% Pradesh	546021	361761	361021	800146	847687
2	West 14% Bengal	152774	141722	264024	251498	555317
3	Tamil 8% Nadu	601788	429314	501816	936255	854219
4	Mahar 8% ashtra	700212	606815	634334	1392726	1123000
5	Karnataka 6%	369606	291854	327723	585031	773214
6	Bihar 5%	183887	177074	191091	441429	567241
7	Andhra 5% Pradesh	173898	117225	123951	266068	370771
8	Gujrat 5%	418450	275241	282037	521524	373447
9	Rajas 4% than	378607	226675	249819	578555	820332
10	Madhya Pradesh	174341	151942	143150	341260	412845

एमएसएमई मंत्रालय के अनुसार 5 वर्षों में रोजगार सृजन में शीर्ष 10 राज्यों का विश्लेषण, साथ ही भारत की अर्थव्यवस्था में उनके योगदान का विवरण।

साहित्य समीक्षा, द्वितीयक समंक, सर्वेक्षण, नमूने, शोध पत्र, पुस्तकें, मुद्रण मीडिया आदि की सहायता से हमने पिछले कुछ वर्षों में एमएसएमई के सामने आई कुछ चुनौतियों का पता लगाया जैसे -

(क) पर्याप्त ऋण का अभाव
(ख) बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए प्रतिस्पर्धा
(ग) खराब बुनियादी ढांचा
(घ) उन्नत प्रौद्योगिकी का अभाव
(ग) संसाधनों की अनुपलब्धता
(ङ) कार्यशील पूंजी की कमी

एमएसएमई को बढ़ावा देने और भारतीय अर्थव्यवस्था को समर्थन देने के लिए सरकार द्वारा विभिन्न पहल की जा रही हैं। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय (एमएसएमई) देश में एमएसएमई क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिए विभिन्न योजनाओं को क्रियान्वित करता है। इनमें प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (पीएमईजीपी), सूक्ष्म और लघु उद्यम-क्लस्टर विकास कार्यक्रम (एमएसई-सीडीपी), पारंपरिक उद्योगों के पुनरुद्धार के लिए निधि योजना (एसएफयूआरटीआई), सूक्ष्म और लघु उद्यमों के लिए ऋण गारंटी निधि ट्रस्ट (सीजीटीएमएसई) और नवाचार, ग्रामीण उद्योग और उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए योजना (एएसपीआईआरई), स्टार्ट-अप इंडिया, मेक इन इंडिया शामिल हैं।

कुछ और पहल -

1. एमएसएमई के लिए 20,000 करोड़ रुपये का अधीनस्थ ऋण
2. एमएसएमई सहित व्यापार के लिए 3 लाख करोड़ रुपये का कोलैटरल मुक्त स्वचालित ऋण
3. एमएसएमई फंड ऑफ फंड्स के माध्यम से 50,000 करोड़ रुपये की

इक्विटी निवेश
4. एमएसएमएस के वर्गीकरण के लिए नए संशोधित मानदंड
5. व्यापार में आसानी के लिए 'उद्यम पंजीकरण' के माध्यम से एमएसएमई का नया पंजीकरण
6. 200 करोड़ रुपये तक की खरीद के लिए कोई वैश्विक निविदा नहीं, इससे एमएसएमई को मदद मिलेगी।
7. प्रत्येक बीतते वर्ष में बजटीय व्यय में वृद्धि , रिपोर्ट के अनुसार, वित्त वर्ष 2021-22 के लिए एमएसएमई के लिए बजट आवंटन दोगुना से अधिक होकर 15700 करोड़ रुपये हो गया, जबकि 2020-21 में यह 7572 करोड़ रुपये था।

यहां हमने एमएसएमई के पिछले 5 साल के बजट आवंटन को दिखाया है-

तालिका क्रमांक 3: देश में एमएसएमई का बजट आवंटन (वर्ष 2017-18 से 2021-22 तक की स्थिति)

क्र.	वर्ष	बजट (करोड़ मे)	प्रतिशत
1.	2017-18	6481	14.96%
2.	2018-19	6552	15.13%
3.	2019-20	7011	16.18%
4.	2020-21	7572	17.48%
5.	2021-22	15700	36.25%
	कुल	**43316**	**100.00**

स्रोत - एमएसएमई मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, 2021-22

निष्कर्ष - एमएसएमई क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था में एक बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका के रूप में उभरा है। रोजगार और आय सृजन में एमएसएमई का योगदान बहुत बड़ा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि एमएसएमई के पिछले दो वर्ष पूरी तरह से उत्कृष्ट रहे, लेकिन आगामी वर्ष में एमएसएमई निश्चित रूप से भारत को 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। उद्योग को नए युग की प्रौद्योगिकी को अपनाने पर अधिक धयान देना चाहिए, जिसमें अधिक डिजिटलीकरण प्रणाली शामिल है। सरकार द्वारा प्रदान की गई लाभकारी योजनाओं में तेजी लाने और जमीनी स्तर के उद्यमों का समर्थन करने की भी आवश्यकता है क्योंकि छोटे उद्यम केवल छोटे शब्द के लिए ही जाने जाते हैं, लेकिन वे ही हैं जो विकास को बढ़ावा देने के साथ अर्थव्यवस्था में बहुत प्रगति में योगदान करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अमुथा, डी., भारत में उद्यमिता और आर्थिक विकास के सृजन में एमएसएमई की भूमिका (27 मार्च, 2022) SSRN पर उपलब्ध https://ssrn.com/abstract=4076260
2. जंजुरे प्रियदर्शिनी, भारत में एमएसएमई का विकास और भविष्य की संभावनाएं इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस्ड इंजीनियरिंग, मैनेजमेंट एंड साइंस (आईजेएईएमएस) (वॉल्यूम-4, अंक-8, अगस्त-2018)
3. गाडे सुरेन्द्र, एमएसएमई की आर्थिक वृद्धि में भूमिका: भारत के परिप्रेक्ष्य पर एक अध्ययन (शुद्ध और अनुप्रयुक्त गणित का अंतर्राष्ट्रीय जर्नल)
4. श्रीनिवास, के.टी. (2013) समावेशी विकास में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों की भूमिका (इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंजीनियरिंग एंड मैनेजमेंट रिसर्च, 3, 57-61)
5. सानू, एमडी साहनेवाज़, भारत के कुल निर्यात और जीडीपी वृद्धि में एमएसएमई का योगदान: सह-एकीकरण और कारणता परीक्षणों से साक्ष्य (https://mpra.ub.uni-muenchen.de/107892/ एमपीआरए पेपर नंबर 107892)
6. सुधा वेंकटेश, कृष्णवेणी मुथैया, एसएमई के लिए विकास के निर्धारकों पर एक अध्ययन - सर्वो स्टेबलाइजर विनिर्माण इकाइयों के संदर्भ में।
7. सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, 2021-22
8. https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1886709
9. https://pib.gov.in/PressReleasePage-aspx?PRID=1881704
1. https://pib.gov.in/PressReleasePage-aspx?PRID=1778406
11. लेख- एमएसएमई के पास 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था की कुंजी है। (https://www.business-standard.com/article/opinion/msmes-hold-the-key-to-5-trn-economy-122110600679_1-html)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्राचीन भारत में चिकित्सा व्यवस्था

शिवलाल*

* एम ए, नेट (इतिहास) गांव लालपुरा पोस्ट,तह-चितलवाना जालौर (राज.) भारत

प्रस्तावना - भारत में प्राचीन काल से ही चिकित्सा कि एक सुव्यवस्थित परम्परा रही है। विभिन्न प्रकार के रोग और उनका उपचार के तरीको का भारतीय साहित्य में उल्लेख मिलता है। सिंधु घाटी सभ्यता से भारत में चिकित्सा प्रणाली के बारे में जानकारी मिलती है। कालीबंगा से एक ऐसा शव मिला जिसके मस्तिष्क में 6 छेद मिले है, इसी तरह का एक अवशेष लोथल से भी प्राप्त हुआ है। ऋग्वेद में अश्विन को देवताओं का कुशल वैद्य कहा गया है जो अपने औषधो से रोगों को दूर करने में निपुण थे। अथवर्वेद में विविध प्रकार के ज्वरो, यक्ष्मा, अपचित, अतिसार, जलोदर जैसे रोगों के प्रकार एंव उनकी चिकित्सा का विधान प्रस्तुत किया गया। अथर्ववेद के विषस्य विषमौषधम अर्थात विष कि दवा विष होती है का उल्लेख अथर्ववद में मिलती है।

साईंस में विभिन्न प्रकार के रोगों तथा उनके निवाकरण के बारे में जानकारी मिलती है। अर्थववेद में विभिन्न प्रकार कि जड़ी बूटियों का भी उल्लेख मिलता है इसके साथ ही जल चिकित्सा, सूर्य किरण चिकित्सा, मानसिक चिकित्सा पर का विस्तृत विवरण दिया गया है।

प्राचीन भारतीय चिकित्सकों ने इस समय चिकित्सा के नाम पर व्याप्त अभिचार, तंत्र-मंत्र, धार्मिक अनुष्ठान, धर्म आदि को चुनौती दी। साथ ही साथ ऊँच-नीच अर्थात सोपान क्रमिक व्यवस्था को इन चिकित्सकों ने नकार दिया। यही कारण है कि धर्मशास्त्रों और स्मृतियों के रचनाकार सामान्यत: चिकित्सकों विशेषकर शल्य चिकित्सकों को आदर की दृष्टि से नहीं देखते थे। इस तरह बिना भेद-भाव के इन चिकित्साशास्त्रियों ने भारतीय चिन्तन परम्परा में पहली बार दोषरहित ज्ञान मीमांसा के मूल सिद्धान्त को स्थापित किया था।

महाभारत में चिकित्सा विज्ञान से संबंधित जानकारी मिलती है। महाभारत में एक घटनाक्रम का जिक्र है जिसमें एक बार भीम को दुर्योधन ने विष खिलाकर गहरे जल में फेंक दिया था और वह अचेतावस्था में नागलोक जा पंहुचा। जहाँ सांपो के काटने से उसके शरीर से विष का प्रभाव दूर हो गया और वह तत्काल स्वस्थ हो गया।

बुद्धयुग में औषधी शास्त्र के बारे में व्यापक जानकारी मिलती है। बौद्ध काल में चिकित्सा विषयक सूचनाएं विनय-पिटक, दीपवंश महावंश, मिलिंदपह्नों एवं विसुद्धिमग्ग से मिलती है। चिकित्सा विज्ञान से संबंधित एक महत्वपूर्ण ग्रंथ चीनी तुर्किस्तान (मध्य एशिया) से प्राप्त हुआ है। यह पाण्डुलिपि संस्कृत भाषा तथा गुप्त लिपि में है, जिसे एक अधिकारी बोअर ने प्राप्त किया था इसलिए बोअर पाण्डुलिपि के रूप में जाना जाता है। इसके अतिरिक्त मौर्य एवं सातवाहन काल के कुछ अभिलेखों से भी प्राचीन भारतीयजातको ग्रंथो के अनुसार तक्षशिला विश्वविद्यालय में आयुर्वेद कि शिक्षा प्रदान की जाती है। यहां पर दूर विद्यार्थी आर्युविद की चिकित्सा प्राप्त करने आते है। जीवक बुद्धकाल का प्रसिद्ध चिकित्सक था। जिसे बिमिबसार ने अपना राजवैद्य बनाया था उसने बिम्बिसार, प्रद्योत, महात्मा बुद्ध की चिकित्सा कर उन्हें रोगमुक्त किया। इसका शुल्क 1600 कार्षापण था।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में चिकित्सा व्यवस्था का उल्लेख है। अर्थशास्त्र में वैद्यो, चीर फाड़ करने के यंत्रो, भिषजो, महिला चिकित्सको का भी उल्लेख किया गया है। शवों को विकृत से बचाने के लिए तेल में डुबोकर रखा जाता था।

कुषाण काल में चिकित्सा क्षेत्र में सर्वाधिक उन्नति हुई। कनिष्क काल में चरक नामक प्रसिद्ध चिकित्सक थे। कनिष्क ने इनको राजवैद्य नियुक्त किया था। चरक को कायचिकित्सा का जनक कहा जाता है। इन्होने चरक संहिता नामक ग्रंथ लिखा। इसमें शरीर रचना, गर्भ की दशा, शिशु का जन्म तथा विकास, कुष्ठ, ओषधियो की वनस्पतियो का वर्णन। चरक सहिंता में एक वैद्य को दिए गए निर्देश जो वह अपने शिष्यों को प्रक्षिशण समाप्ति के समय देता।

'यदि तुम आपने कार्य में सफलता, धन, सम्मान तथा मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग प्राप्त करना चाहते हो, तो तुम्हें प्रतिदिन प्रात: उठने पर और सोने से पहले सभी प्राणियों विनि तथा के प्राप्त करना हो तो सच्चे हृदय से रोगी के स्वास्थ्य के लिये प्रयास कराकर ही एवं ब्राह्मणों के कल्याण के लिये प्रार्थना करनी पनि रानी के साथ धोखा न करो, मद्यपान मत करो, पाप न करो, तुमारि अपने स्वयं के जीवन के मूल्य विचारवान बना तथा सदैव अपने ज्ञान की वृद्धि के लिये प्रयत्नशील रहो। यदि तुम्हारे मित्र बरे न हो, तुम मृदुभाषी एवं विचारवान बच्चन, मन, बुद्धि तथा इन्द्रियों को उसकी चिकित्सा के अतिरिक्त अन्यत्र किसी रोगी के घर जाना पड़े तो तुम्हें की बातों की चर्चा बाहर नहीं करनी चाहिए और न ही रोगी की दशा के विषय में उस व्यक्ति को बताना चाहिए जिससे रोगी को कोई हानि पहुंच सके।'

'चरक संहिता' का न केवल भारतीय अपितु सम्पूर्ण विश्व चिकित्सा के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है।

गुप्तकाल में नालंदा विश्वविद्यालय में आयुर्वेद की चिकित्सा दी जाती थी। वाग्भट्ट ने अष्टांगहृदय की रचना की की थी। चन्द्रगुप्त विक्रमादितीय के नवरत्नों में धन्वतरि भी थे। इनका मुख्य योगदान आयुर्वेद की शल्य

चिकित्सा था। इन्होंने नवगीतम नामक ग्रंथ की रचना की थी जिसमें रसो, चूर्णों, तेलों, इत्यादि का वर्णन है। गुप्तकाल में पशु चिकित्सा से संबंधित ग्रंथ भी लिखे गए। पालकाप्य ने हाथियों से संबंधित हस्त्यायुवेर्द और शालिहोत्र ने घोड़ो से संबंधित अश्वशास्त्र की रचना की। गुप्तकाल में नागार्जुन ने रसचिकित्सा का अविष्कार किया था जिसमें यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि सोने, चांदी, ताम्बा, लोहा इत्यादि धातुओं में भी रोग प्रतिरोधक क्षमता थी।

शुश्रुत एक अन्य प्रसिद्ध चिकित्सक थे इन्होने शुश्रुत संहिता लिखी जिसमें विभिन्न प्रकार के शल्य एंव छेदन क्रियाओ का विवरण है। इन्होने मोतियाबिंद पथरी जैसे रोगों के उपचार बताये है।

कालांतर में माधवकरण ने माधवनिदान नामक ग्रंथ लिखा। इसमें भी रोगों के निदान पर विस्तार से चर्चा कि गई है। 11 वी सदी में चक्रपाणीदत ने चरक और शुश्रुत पर टिकाए लिखी साथ ही चिकित्सासारसंग्रह कि रचना की। 12 वी सदी में सारंगधरसंहिता नामक ग्रंथ लिखा गया। जिसमें विभिन्न रसो और विष का वैज्ञानिक विवेचन किया गया। इस प्रकार भारत में चिकित्सा प्रणाली प्राचीन काल से ही विद्यमान रही और वर्तमान में भी भारतीय चिकित्सा प्रणाली काफी मजबूत है और आधुनिक समय की अधिकांश तकनीक भारत में मौजूद है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा कृष्णगोपाल, जैन हुकुम चंद, भारत का इतिहास, अजमेरा बुक कम्पनी जयपुर 2016.
2. श्रीवास्तव, के.सी. प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति।
3. रायचौधरी, एच.सी. पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एन्सिएण्ट इण्डिया।
4. मजूमदार, आर.सी.– हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ इण्डियन पीपुल।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसायों में संरचनात्मक परिवर्तन (एक समाजशास्त्रीय अवलोकन)

डॉ. ज्योति सिंह*

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्नातक महाविद्यालय, नैनपुर, जिला मंडला (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना

जाति का अर्थ-भारतीय समाज में जाति सामाजिक वर्गीकरण का एक प्रमुख पहलू है। यह एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जो व्यक्तियों को उनके जन्म के आधार पर वर्गीकृत करती है। भारत में जातिवाद एक पुरानी प्रथा है, जो जाति के परंपरागत बंधनों और भारतीय समाज की संरचना पर आधारित है।

जातियों के अनुसार व्यक्तियों के समाज में स्थान, काम, और सामाजिक स्थिति का निर्धारण होता है। इसके अलावा, जातियां विवाह, भोजन, और सामाजिक आयोजनों में भी भूमिका निभाती हैं। यह विभाजन भारतीय समाज को उसके सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक जीवन में प्रभावित करता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में जातिगत व्यवसायों का महत्व अत्यंत उच्च है। ये व्यवसाय गांव की स्थायित्व और समृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में जातिगत व्यवसाय सामाजिक संरचना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है जो समृद्धि और सामाजिक समरसता को बढ़ावा देते हैं।

जातिगत व्यवसाय ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक संरक्षण प्रदान करते हैं। ये व्यवसाय वहाँ के लोगों को नौकरी, आजीविका, और स्वावलंबन के अवसर प्रदान करते हैं। वे स्थानीय विकास में भूमिका निभाते हैं और गांव की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने में मदद करते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में जातिगत व्यवसायों का स्थानीय संवाद में भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। ये व्यवसाय समुदाय को एकसाथ लाने में मदद करते हैं और सामाजिक संरचना को मजबूत बनाते हैं।

जातिगत व्यवसाय ग्रामीण क्षेत्रों में परंपरागत विविधता को बचाए रखते हैं। ये व्यवसाय स्थानीय शिल्प और कला को प्रोत्साहित करते हैं, जिससे स्थानीय आदिवासी और जनजातियों का विकास होता है।

इस प्रकार, ग्रामीण क्षेत्रों में जातिगत व्यवसायों का महत्व अत्यंत उच्च है क्योंकि वे आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक रूप से समृद्धि और समरसता को प्रोत्साहित करते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में पिछले कुछ दशकों में, जाति के आधार पर व्यापारिक गतिविधियों में सुधार हुआ है।

प्रारंभ में, गाँवों में जाति आधारित पेशेवर व्यवसाय जैसे कि खेती, चरखा, गाय-बैल पालन आदि मुख्य थे। इन व्यवसायों में जातिगत विभाजन भी होता था, जो समाज में असमानता और विविधता को बढ़ाता था। हालांकि, विकास के साथ, ग्रामीण क्षेत्रों में नए और आधुनिक व्यवसाय उद्भव हो रहे हैं। ये व्यवसाय जैसे कि अन्नपूर्णा बिजनेस, पशुपालन, पोषण केंद्र, गर्मी और गर्मियों के मौसम के आधार पर पशुओं की बिक्री, ग्रामीण पर्यटन, और स्थानीय उत्पादों की उत्पादन और विपणन में शामिल हैं।

इन नए व्यवसायों में, लोगों की जाति का महत्व कम हो जाता है और उनकी कौशल, योग्यता और उत्पादों की गुणवत्ता पर ध्यान केंद्रित होता है। यह सामाजिक रूप से समानता को बढ़ाता है और ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान करता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसायों में परिवर्तन सामाजिक समृद्धि और आर्थिक उन्नति की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

भारत की कुछ जातियाँ- भारत एक सांस्कृतिक और जातिवादी समाज है, जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक जातियां निवास करती हैं। यहाँ कुछ प्रमुख जातियों का उल्लेख है:

1. **यादव**:यादव जाति भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक रूप से पाई जाती है। वे मुख्य रूप से गाय पालन, और कृषि व्यवसाय से जुड़े होते हैं।
2. **जाट**: जाट जाति उत्तर भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांशतः पाई जाती है। वे मुख्य रूप से खेती करते हैं और पशुपालन का भी काम करते हैं।
3. **गुज्जर**: गुज्जर जाति पश्चिमी और उत्तरी भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। वे पशुपालन और खेती के लिए प्रसिद्ध हैं।
4. **भील**: भील जाति उत्तर और मध्य भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में पाई जाती है। वे मुख्य रूप से खेती, चाराई, और वन्यजीवन से जुड़े होते हैं।
5. **गोंड**:गोंड जाति मध्य भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। वे मुख्य रूप से खेती, चराई, और मदिरा बनाने के काम में लगे होते हैं।
6. **मीणा**: मीणा जाति उत्तर और मध्य भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। वे मुख्य रूप से खेती और पशुपालन के काम में लगे होते हैं।
7. **आदिवासी जनजातियां**: भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक आदिवासी जनजातियां हैं जो अपने विशेष संस्कृति, भाषा, और जीवनशैली के लिए प्रसिद्ध हैं। उनमें संगी, सांड, ओरांग, बघेल, गोंड, आदि शामिल हैं।

भारत में और भी कई जातियां हैं जो अपनी अनूठी संस्कृति, परंपराएं, और आदतों के साथ गाँवों में निवास करती हैं। इन जातियों के मिलनसार, सामाजिक संगठन, और सहयोग से गाँवों का विकास होता है और सामूहिक उत्थान होता है।

ग्रामीण क्षेत्र के कुछ प्रमुख व्यवसायों पर आये परिवर्तन- ग्रामीण

क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसाय का परिचय करना महत्वपूर्ण है। यह व्यवसाय आमतौर पर परंपरागत रूप से पितृव्यवसाय या समुदाय के विशेष गतिविधियों पर आधारित होता है, जैसे कि किसानी, खान–पान की दुकान, चारपाई बनाने , आदि।

(1) कृषि के क्षेत्र में परिवर्तन– कृषि क्षेत्र में जाति आधारित व्यवसाय में परिवर्तन के कई कारण हैं।

1. सामाजिक परिवर्तन और विकास के साथ–साथ, तकनीकी और विज्ञान की प्रगति ने कृषि क्षेत्र को एक नई दिशा दी है। उदाहरण के लिए, समुदाय के किसान अब उन्नत कृषि तकनीकों, संशोधित बीज, और कृषि मशीनरी का उपयोग कर उत्पादकता में वृद्धि कर रहे हैं।
2. आर्थिक परिवर्तन है, जिसमें सरकार के कृषि से संबंधित नीतियों के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में नए विकास और निवेश के अवसर पैदा हो रहे हैं।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादित खेती उत्पादों का बाजार में उपलब्ध होना, विशेष रूप से उन्हें विशेष ब्रांडिंग और पैकेजिंग के माध्यम से बेहतर मूल्य प्राप्ति के लिए उपलब्ध होना, ग्रामीण क्षेत्रों के व्यापारियों और किसानों को अधिक आकर्षक बनाता है।
4. शिक्षा और प्रशिक्षण का प्रभाव। ग्रामीण क्षेत्रों में व्यवसाय के क्षेत्र में नवाचारिता और प्रौद्योगिकी के प्रयोग के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण के लाभकारी परिणाम आएं ह

(2) पशुपालन में आये परिवर्तन– पशुपालन ग्रामीण क्षेत्रों के लिए एक महत्वपूर्ण आर्थिक स्रोत है और यहाँ तक कि सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों को भी प्रेरित करता है नई तकनीकों और उन्नत प्रबंधन प्रणालियों के प्रयोग से, पशुपालन क्षेत्र में उत्पादकता में वृद्धि हो रही है। उदाहरण के लिए बेहतर जाति के पशुओं की प्रजनन की तकनीकों ने पशुपालकों को अधिक उत्पादक और लाभकारी बनाया है।

पशुपालन क्षेत्र में नए बाजारों का खुलना और नए उत्पादों की मांग में वृद्धि के कारण, लोग निवेश करने के लिए अधिक प्रेरित हो रहे है साथ ही, एक्सपोर्ट और इम्पोर्ट के साथ हुए व्यापारिक संबंधों में भी सुधार हुआ है, जिससे पशुपालन के क्षेत्र में नए व्यापारिक अवसर उत्पन्न हो रहे हैं।

पशुपालन के क्षेत्र में आने वाले परिवर्तनों ने समाज में समानता और उत्थान को बढ़ावा दिया है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएं भी पशुपालन के कार्यों में भाग ले रही हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है।

पशुपालन क्षेत्र में आने वाले परिवर्तनों ने ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक दृष्टि से विकास की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह आगे और भी उत्पादक, उद्यमी और समृद्ध ग्रामीण समुदायों के लिए नए अवसरों की स्थापना में मदद करेगा।

भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में, जाति आधारित व्यवसाय एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यहाँ, विभिन्न जातियों के लोग विभिन्न प्रकार के कृषि, हस्तशिल्प, और अन्य उद्योगों में लगे हुए हैं, जिनमें कुटीर उद्योग भी शामिल हैं। कुटीर उद्योग उन व्यावसायिक गतिविधियों को संदर्भित करता है जो छोटे पैमाने पर, सामाजिक परिवारों या समुदायों द्वारा संचालित होती हैं, और ये अक्सर ग्रामीण क्षेत्रों में पाए जाते हैं।

(3) कुटीर उद्योगों में परिवर्तन– कुछ वर्षों में, ग्रामीण क्षेत्रों में भी जाति आधारित कुटीर उद्योगों में परिवर्तन देखने को मिला है। इसमें कई कारक शामिल हैं जैसे कि,आधुनिकीकरण, औद्योगिकरण,तकनीकी उन्नति, सामाजिक परिवर्तन, और व्यापारिक संबंधों में परिवर्तन।

डिजिटलीकरण और तकनीकी उन्नति के प्रभाव से, कुटीर उद्योगों को नए और सुगम तरीके से उत्पादन और विपणन करने की क्षमता मिली है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय कलाकारों द्वारा बनाए गए उत्पादों को डिजिटल प्लेटफॉर्मों के माध्यम से अधिक बड़े बाजार तक पहुंचाया जा सकता है। इससे उत्पादकों को नए ग्राहकों तक पहुंचने का मौका मिलता है और उन्हें अधिक विकसित बाजार मिलता है।

कुटीर उद्योगों का संगठन समाज में समृद्धि के लिए महत्वपूर्ण होता है। ये उद्योग स्थानीय समुदायों को आर्थिक स्वायत्तता और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसके अलावा, इन उद्योगों के माध्यम से स्थानीय कलाकारों और कारीगरों को रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक विकास होता है।

कुटीर उद्योगों के लिए नए और विश्वासनीय बाजार खुले हैं,जिससे इन कुटीर उद्योगों का क्षेत्र वर्तमान समय में बढ़ गया है।

(4) मछली पालन– ग्रामीण क्षेत्रों में मछली पालन के क्षेत्र में पिछले कुछ दशकों में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन देखे गए हैं। पहले, परंपरागत तरीके से मछलियों को बढ़ावा देने के लिए व्यक्तिगत स्तर पर मछली पालन किया जाता था, जो कि अक्सर गरीबी और अस्थिरता का कारण बनता था।

हालांकि, अब इस क्षेत्र में एक परिवर्तनशील दृष्टिकोण आ गया है। सरकारी और गैर–सरकारी संगठनों के सहयोग से, ग्रामीण क्षेत्रों में मछली पालन को एक वित्तीय और सामाजिक विकास का माध्यम बनाने के लिए कई पहल की जा रही हैं।

पहला परिवर्तन तकनीकी प्रगति में आया है। उत्पादकता बढ़ाने के लिए, नवीनतम और उन्नत तकनीकों का उपयोग किया जा रहा है। उदाहरण के लिए, आधुनिक जलवायु नियंत्रण प्रणालियों का उपयोग करके, मछलियों की उत्पादकता में सुधार हो रहा है।

बाजार की मांग और आवश्यकताओं के अनुसार उत्पादन हो रहा है। मछलियों के उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए, विभिन्न प्रकार की मछलियों का चयन किया जा रहा है, जो अधिक लाभकारी हो सकते हैं।

स्थानीय समुदायों में मछली पालन के क्षेत्र में अनुसंधान, प्रशिक्षण, और अनुशासन की प्रक्रिया में सुधार हो रहा है। सामुदायिक संगठनों और सरकारी योजनाओं के सहयोग से, स्थानीय समुदायों को संसाधनों का उपयोग करके स्वावलंबी बनाने में मदद मिल रही है।

मछली पालन क्षेत्र में ये सभी परिवर्तन सामूहिक और व्यक्तिगत स्तर पर अर्थव्यवस्था को स्थायी और स्थिर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके।

भारतीय समाज में ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसाय एक पुरानी परंपरा है, जिसमें लुहार जाति का व्यापक योगदान है। लुहार जाति का मुख्य काम लोहे के उत्पादन और प्रसंस्करण में होता था। वे धातु को प्रयोगशाला से लेकर उत्पादन और बाजार में पहुंचाने तक के सभी कार्य करते थे।

हालांकि, समय के साथ ग्रामीण जीवनशैली के परिवर्तनों ने लुहारों के व्यवसायिक प्रकृति में भी बदलाव लाया है। औद्योगिकीकरण, नए उत्पादन तकनीक और विकास की दिशा में प्रगति ने लुहारों के काम के ढंग को भी प्रभावित किया है। अब लुहारों के अनेक काम बदल गए हैं।

अब, लुहार लोहे के काम के अलावा अन्य कार्यों में भी लगे हैं, जैसे कि जंगली अवस्था की बजाय खुदाई की तकनीकों का उपयोग करके खनिज धातुओं की खुदाई करना। उन्होंने स्थानीय खनिज संपदा के निर्माण में भी योगदान दिया है।

आजकल कई लुहार अपने काम को औद्योगिक या व्यावसायिक स्तर पर उच्च तकनीकी मानकों के साथ संचालित कर रहे हैं। उन्हें नए उत्पादन प्रक्रियाओं, जैसे कि कंप्यूटर सहायता और ऑटोमेशन, का उपयोग करना पड़ रहा है। इससे उनके काम की गुणवत्ता और उत्पादकता में वृद्धि हुई है। विभिन्न सरकारी योजनाओं और नई सांस्कृतिक दिशाओं ने लुहारों को अनेक अवसर प्रदान किए हैं। उन्हें व्यावसायिक प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता, और अन्य संबंधित सुविधाएं मिल रही हैं।

इस प्रकार, ग्रामीण क्षेत्रों में लुहारों के व्यवसाय में परिवर्तन के चलते लुहार अब लोहे के काम के अलावा भी अन्य क्षेत्रों में योगदान कर रहे हैं और नए तकनीकी और व्यवसायिक योजनाओं का लाभ उठा रहे हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसायों में संरचनात्मक परिवर्तन का आगमन, भारतीय समाज के तथाकथित अवसरों और सामाजिक समानता की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाया है। यह परिवर्तन ग्रामीण क्षेत्रों के अर्थव्यवस्था, समाजिक संरचना, और राजनीतिक परिदृश्य में व्यापक प्रभाव डाल रहा है। हम इस परिवर्तन के कारणों, प्रभावों, और संभावित परिणामों पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

परिवर्तन के कारण:

1. **सामाजिक बदलाव:** आधुनिकीकरण और ग्लोबलीकरण के साथ, ग्रामीण क्षेत्रों में समाज में बदलाव आया है। यह नए सामाजिक संरचनाओं की अपेक्षा करता है जिसमें जाति आधारित व्यवसाय भी शामिल हैं।

2. **आर्थिक विकास:** स्थानीय विकास योजनाओं, उद्यमिता को बढ़ावा देने और अर्थव्यवस्था को सुधारने के प्रयासों के कारण, ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक विकास हुआ है। इससे जाति आधारित व्यवसायों को नई संभावनाएं मिली हैं।

3. **सरकारी नीतियाँ:** सरकारी नीतियों के परिवर्तन और समर्थन ने भी ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसायों को प्रभावित किया है। यह नई समृद्धि के अवसरों को साधने में मदद करता है।

4. **तकनीकी उन्नति:** तकनीकी उन्नति ने ग्रामीण क्षेत्रों में उद्यमिता और उत्पादकता में सुधार किया है। इससे जाति आधारित व्यवसायों को नए बाजारों और संभावनाओं की पहुंच मिली है।

परिवर्तन के परिणाम– ग्रामीण क्षेत्र में जाति आधारित व्यवसायों में संरचनात्मक परिवर्तन के साथ, बहुत सारे परिणाम सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक स्तर पर दिखाई दे रहे हैं। इस परिणाम के अन्तर्गत, जाति आधारित व्यवसायों में उन्नति, समाजिक समानता, और अर्थव्यवस्था में सुधार का महत्वपूर्ण योगदान है। निम्नलिखित में हम इस परिणाम के कुछ प्रमुख पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करेंगे:

1. **आर्थिक परिणाम:**

अधिक आय का अवसर: जाति आधारित व्यवसायों में संरचनात्मक परिवर्तन ने अधिक आय के अवसर प्रदान किए हैं। यह ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाता है।

रोजगार के अवसर: नए व्यवसायों के उत्पन्न होने से ग्रामीण क्षेत्रों में और ज्यादा रोजगार के अवसर उत्पन्न हो रहे हैं।

बाजार सहायता: जाति आधारित व्यवसायों के संगठन ने स्थानीय बाजारों को मजबूत किया है और अन्य संबंधित व्यवसायों के लिए एक महत्वपूर्ण सहायक बन गए हैं।

2. **सामाजिक परिणाम:**

समाजिक समानता: जाति आधारित व्यवसायों में संरचनात्मक परिवर्तन ने समाज में समानता की भावना को बढ़ाया है। इससे सामाजिक असमानता की कुछ मात्रा कम हो रही है।

सामुदायिक उत्थान: यह परिणाम ग्रामीण समुदाय की उन्नति और स्थायित्व में मदद करता है, क्योंकि व्यवसायों के माध्यम से सामुदायिक उत्थान होता है।

3. **राजनीतिक परिणाम:** सामाजिक और आर्थिक स्वायत्तता: जाति आधारित व्यवसायों में संरचनात्मक परिवर्तन ने सामाजिक और आर्थिक स्वायत्तता की भावना को बढ़ाया है। इससे समुदायों को अपनी आर्थिक स्थिति को स्वयं नियंत्रित करने की क्षमता मिली है।

नई नीतियों का अवलोकन: सरकारी नीतियों का अवलोकन किया जा रहा है ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में व्यवसायों को प्रोत्साहन मिले।

4. **नई संभावनाएं:** संरचनात्मक परिवर्तन ने ग्रामीण क्षेत्रों में नई संभावनाओं की खोज को प्रोत्साहित किया है। लोग नए और नवाचारी व्यवसायों में उत्साहित हो रहे हैं और अपने सपनों को पूरा करने के लिए नए रास्ते ढूंढ़ रहे हैं।

5. **सामाजिक अनुबंधों का विस्तार:** संरचनात्मक परिवर्तन ने सामाजिक अनुबंधों का विस्तार किया है और लोगों के बीच साझेदारी की भावना को बढ़ाया है। यह लोगों को एक–दूसरे के साथ अधिक मिलकर काम करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

निष्कर्ष – ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसायों में संरचनात्मक परिवर्तन से जाति आधारित व्यवसायों की प्रमुखता कम हो रही है और लोग अब अपने कौशलों और प्रतिभाओं के आधार पर उत्पादन और व्यापार कर रहे हैं। सामाजिक एवं आर्थिक समानता के प्रति ध्यान केंद्रित हो रहा है। इस परिवर्तन में समुदायों की साझेदारी, संगठन और प्रोत्साहन की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। सरकारी योजनाओं, वित्तीय समर्थन की उपलब्धता और प्रशिक्षण कार्यक्रम इस प्रक्रिया को बढ़ावा दे रहे है।

ग्रामीण क्षेत्रों में जाति आधारित व्यवसायों के संरचनात्मक परिवर्तन ने न केवल आर्थिक विकास को गति दी है बल्कि सामाजिक रूप से भी समृद्धि लाई है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में नई दिशाएँ एवं नये अवसर खुले हैं और समाज के सभी वर्गों को समान रूप से लाभ पहुंचने का मार्ग प्रशस्त हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. https://egyankosh.ac.in
2. https://www.dspmuranchi.a
3. https://ncert.nic.in
4. https://en.m.wikipedia.org
5. https://academic.oup.com
6. https://ec.europa.eu/eurostat/statistics-explained
7. https://www.sciencedirect.com
8. https://www.oecd-ilibrary.org
9. https://www.drishtiias.com
10. https://www.nextias.com
11. https://www.ideasforindia.in
12. https://innovativegyan.com

An Analytical Study of Impact of Modern Technology on Production of Sanchi Dugdh Sangh

Shruti Vidyarthi*

*Research Scholar, School of Studies in Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

Abstract : This study is based on the changes takes place in production of milk through dairy in Ujjain. Milk is an important food product which is commonly consumed by consumers in their daily life. This survey is based on the role of technology in the development of production activities. Along with this, possibilities of development and expansion is also the part of research.

Keywords: Technology Advancement, Role, Production, Agriculture, Farmers, Turnover, Products.

Introduction - Ujjain district is an important and well known historical and cultural centre of Madhya Pradesh, which is well known for its primary production. Among all these an important business centre for milk production. Milk and its by-products are used as food which is consumed by all age groups. Milk is an integral part of humans.Today's era Is the era of technology. Modern Technology plays an important role in production milk . So as it also helps in increasing the production of Dugdh Sang too. In this process milk can be extracted even without intervention of humans which reduces wastages and increases efficiency. Present cooking system are better than before, as they ensure that the milk remains fresh and safe for longer periods and reduces spoilage.

Review of literature: In the backdrop of the aims and objectives of this study, a systematic review of the existing literature related to the topic under investigation will be carried out. On milk industry many Researchers took place in the pastas well as it is now also a topic of study as it is a major source of livelihood of rural India various study Tell us that modern technologies such as automated milking system, advanced cooling system and computerised feeding system etc. have increased the productivity of dairy farms.

1. According to Dr Simmi Choyal (2019), technology advancement plays an important role in the local economy of Ujjain and nearby places. This study shows that Dairy farming is an important source of local employment and by widening its scope it is good source of livelihood. According to him , automation in milk production has led to higher yields per cow as well as lower costs associated with Labour and equipment. Improved quality control measures have also enabled producers to meet not only local needs but they can send outside too.
2. Supply chain of milk production in M.P. according to Aniel Kumar (2019), The rural population is widely scattered in the state and the coverage of dairy activities is limited to only 8 % to 10% laying new milk routes, promoting cattle induction, milk automation systems, establishment of new milk collection centres etc. are still challenges. According to him, by improving supply chain production will be improved.
3. New technology and innovation in milk production many researchers , are focused on the technology improvement and innovation in milk industry for its development. According to G. Kumar (2022) the capability of technology enables a business firm to add value to process, products and its impact on success of the organisation.
4. Market Competition and marketing strategies A comparative study of marketing strategies by Mahesh Randhave (2020), Stated that all dairy firms are utilising proper marketing mixed strategy in business. He also stated that other important challenges are to search location, for getting ample raw material and also search of potential consumer and diversification of products.

Govt. policies and support: Ujjain Dugdh Sahakari Sangh is a member of M.P. state cooperative dairy federation,Bhopal.The complete infrastructure regarding Milk Procurement, processing, milk and milk products marketing was created.

Objectives Of Research: By seeping into every aspect of our life, technology has changed the way we behave and operate. However , dairy industry is the least mechanized industry compared to other sectors of agriculture due to being perceived as a secondary occupation of farmers.

1. To study the technology which was used by

organization earlier.

2. To obtain, study and analyze the information regarding impact of technology on production process of Sanchi Dugdh sangh.
3. To study assessing technological integration in milk production.
4. Two study impact on quality control and safety standards.
5. To study digitalization of cooperative management.

Research hypothesis: There is significant impact of technology on production activities of the organization.

1. The use of automated milking system helps in increasing milk yield.
2. Advanced quality control technologies leads to improve the quality of milk.

Importance of research: This research is important in analysis of technology advancement in production , as it will study the opportunities available in future . During research, examination will done that how technology improves milk production, quality control and enhance farmer's income. The insights gained from this research can shape the future of the dairy industry, making it more efficient as per market demands.

Research methodology: A multi - method empirical approach would be used in the study it includes quantitative and qualitative both data to analysis.

Source: Under this research , production process Which include collection and further process will be studied.

Sample: For this research, Ujjain Dugdh Sangh Maryadit, Ujjain is being selected .

Result and discussion: Impact of technology on the production of milk is analysed on the basis of available data and information.

Table 1 :- Milk production by societies of Ujjain Sshkari dugd sangh (average per kg per day)

Year	Production(per kg)
2019-20	170142
2020-21	151974
2021-22	145172
2022-23	129326
2023-24	197494

On the basis of available data and information Dugdh sangh helping in selling bulk milk and milk products . Dugdh sangh is also parallely keeping watch on machinery functioning, Establishment of new equipments , assessment of new machines required for future . All these efforts results in increased production of milk. In the year 2019 - 20 average milk production was 1,70,142 per kilogramme per day which was reached to 1,97,494 per kilogramme per day in 2023 - 24.

For this Dugdh sangh formed dugdh samities. As well helping farmers in raising bank loans to purchase livestock under Chief Minister Dairy Plus Yojana in some of the districts such as Sihor Vidisha and Raisen, on the basis of pilot survey high genetic quality livestocks are made available.

Table 2 :- Production and sale of milk and milk products

S.	particulars	2019 -20	2020 -21	2021 -22	2022 -23	2023 -24
1	Local milk sales (Lt./day)	67700	45848	53519	62447	62699
2	Wholesale milk sales(kg/day)	38897	4071	42430	42136	28852
3	Ghee (mt. tonnes)	1794.90	1474.71	1483.96	1600.91	1996.30
4	Butter milk (000' Lt.)	510.83	365.20	532.13	786.36	822.70
5	Shrikhand (mt. tonnes)	32.66	31.86	43.39	44.37	46.18
6	Curd (Mt. tonnes)	49.84	61.52	154.92	176.61	206.46
7	Peda (mt. tonnes)	34.03	30.33	53.49	56.56	58.73

According to the above data, we can say that turnover in the year 2019-20 was 67,700 where is in 2023-24 it was 62,699. There was a fall in production in year 2000-21 and 2021-22 due to the Corona pandemic. This was the duration, which was even affected the production. Still, constantly rising turnover is the proof of standard maintained by Dugdh sangh . For selling saanchi products, marketing was also done by using electronic media . Along with it, for this purpose quiz competition was also conducted with the help of online platforms on the festive occasions.

Conclusion: On the basis of research, we can say that dairy industry has experienced a great magnitude of improvement in relation to past practises.There has been a constant rise in need of milk and milk products due to rising population. Due to this farmers are also actively involved in regular supply by using modern equipments. Technology has made easy to handle large volume of milk, its process and packaging. This research has provided detail insights into how technological advancements have propelled the dairy industry forward as well enhancing both productivity and sustainability.

India mostly remained traditional in their approach to dairy production activities, which is mainly due to their social economical and ecological compulsions. However in order to meet the challenges ahead, it calls for an integration with the modern technology. This would not only bring more economic benefits to small holder farmers and improve dairy production but also would pave way for better integration of the traditional and technological systems of dairy production.

References:-

1. Sanch Dugdh Sangh , Annual General meeting, Mannual
2. Sanchi milk project report
3. T. Norton and D Burkmans (2017) Developing Precision livestock farming tools for precision dairy farming
4. R. S. Walse (2016) Business applications of

information technology in dairy industry
5. Sairakharuddin, et.al. (2015), Effects of decision rationality on ERP adoption extensiveness and organizational performance
6. N. Schuring (2010) Evolving technologies for a growing dairy industry
7. B. Manisha(2010) It applications in Indian dairy sector
8. Sanjay Verma (2009) dairy cooperatives in India
9. S. C. Mittal (2007) Roll off information technology in agriculture and its scope in India

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Artificial Intelligence in Libraries: Opportunities and Challenges

Chandra Chauhan*

***Guest Faculty (DLIS, BLIS) Mohanlal Sukhadiya University, Udaipur (Raj.) INDIA**

Abstract : Libraries are not an exception to the ways that artificial intelligence (AI) is changing other industries. The integration of AI in library services is examined in this study, along with the benefits it offers to improve operations and user experiences as well as the difficulties it creates, such as implementation hurdles and ethical issues. This study intends to offer insights into the current state of AI adoption in libraries and make recommendations for future developments through a thorough assessment and analysis of the literature.
Keywords: AI, Libraries, Library Services, Ethical Issues, and Difficulties in Implementation.

Introduction - Artificial intelligence (AI) has been a disruptive force in a number of industries in recent years, and libraries are no exception. A new era of automation, efficiency, and improved user experiences has been brought about by AI's incorporation into library systems. AI is a key factor in changing how information is stored, retrieved, and used as libraries continue to adjust to the digital world. This essay examines the potential and difficulties that artificial intelligence (AI) brings to the library setting, examining how it affects user engagement, information retrieval, library services, and administration. The ethical, privacy, and financial issues of AI's application in the library industry are also covered in this research. Libraries have historically served as information bases, altering over time to accommodate society's shifting demands. The emergence of artificial intelligence (AI) in the digital age presents libraries with new opportunities to improve their operations and services. Artificial Intelligence (AI) refers to a variety of technologies that allow robots to carry out tasks like learning, reasoning, and problem-solving that need human intelligence. The management, access, and use of information could be completely transformed by the incorporation of AI into library services.

This paper delves into the various opportunities AI presents for libraries, including improved information retrieval, personalized user experiences, and efficient resource management. It also addresses the challenges associated with AI adoption, such as ethical concerns, data privacy issues, and the need for staff training. By examining these aspects, the

Literature Review

Numerous studies have examined the use of AI in libraries, demonstrating the technology's increasing importance in the industry. **Das and Islam's (2021)** comprehensive analysis of the literature emphasizes how AI and ML have the ability to completely transform library operations and services. According to their findings, although theoretical debates predominate in the literature, real-world applications that improve user experiences and information retrieval are starting to appear.

The dangers of AI in libraries are covered by **Berendt et al. (2023),** with special attention to bias and unfairness in automated content analysis. They stress how critical it is to deal with these problems in order to provide just and equitable library services.

In a number of settings, the incorporation of AI with library services has been investigated. For example, a research by Oladokun (2023) looks at how AI is being adopted and used in academic libraries, highlighting both the advantages and disadvantages for both developed and developing countries. The study draws attention to both the inherent difficulties in using AI and its potential to improve library services.

This paper examines the current state of AI in libraries, including global best practices and Indian initiatives such as those at IIT Delhi and Jawaharlal Nehru University (JNU). ijisrt.com.

Opportunities of AI in Libraries

1. Improved Efficiency and Automation: The integration of AI into library operations has significantly improved efficiency and automation, allowing libraries to streamline processes that were once labor-intensive and prone to human error. AI can automate cataloging, classification, and metadata generation, enabling faster and more accurate data management. For example, AI systems like machine learning (ML) algorithms are capable of

categorizing books based on their content and metadata, which drastically reduces the time required for manual cataloging and classification (**Williams & Carter, 2020**). Additionally, AI-driven systems can assist with managing circulation and inventory, alerting staff to overdue books, lost items, or even potential damages, ensuring that the library's resources are consistently tracked and updated in real-time.

2. **Improved Information Retrieval:** AI has dramatically improved information retrieval within libraries, moving beyond traditional keyword-based search engines to more sophisticated and intuitive search methods. Traditional search engines often provide limited results based on matching keywords, but AI-powered search engines employ Natural Language Processing (NLP) to understand user queries in a more human-like manner. This means that users can ask questions in natural language and receive accurate and contextually relevant results, even when the search terms do not exactly match the library's catalog (**Lee, 2023**). Additionally, AI algorithms can learn from previous searches, continuously refining and improving search results over time. By using content-based filtering, AI systems can provide results that not only match the keywords but also take into account the context and preferences of the user, offering them a more customized search experience.

3. **Data Analytics and Decision Making:** AI can provide libraries with powerful data analytics tools that help in decision-making processes. By collecting and analyzing large volumes of data, libraries can gain insights into user behavior, preferences, and trends. For instance, libraries can use AI to track which materials are most frequently checked out, which subjects are most popular among users, and how long patrons typically spend at the library. These insights can then be used to optimize collection development and resource allocation. Additionally, libraries can use AI to predict future trends based on user behavior and adapt their services accordingly. AI also helps streamline operations by analyzing patterns in inventory management, predicting demand, and providing recommendations for purchasing new materials or reallocating resources (**Patel & Gupta, 2022**).

4. **Enhanced User Experience:** The improvement of user experience is among AI's most important contributions to libraries. AI goes beyond the long-standing responsibility of libraries to give patrons rapid access to resources by delivering tailored and context-aware services. Recommendation engines driven by AI employ user information, including search queries, preferences, and borrowing history, to propose pertinent books, journals, or articles. Recommender systems, for instance, employ collaborative filtering and deep learning to find trends in user behavior and provide personalized recommendations (**Brown et al., 2021**).

Because it makes it easier for users to find material that suits their interests, personalization enhances the user experience overall. Additionally, chatbots and virtual assistants powered by AI are transforming user engagement by offering round-the-clock support.

5. **Digital Collection Management and Preservation:** The administration and maintenance of digital collections in libraries are greatly aided by artificial intelligence. Libraries are responsible for maintaining a wide range of materials in the digital age, such as old books, rare manuscripts, and other tangible objects. AI can help with the digitization process, which transforms printed text into digital formats that users may readily store and access via optical character recognition (OCR). Additionally, AI algorithms can recognize and catalog audio, video, and image files, helping to preserve multimedia collections for future generations (**Smith, 2021**). AI tools that can fix and improve broken texts and images also aid in the preservation and restoration of historical materials.

Challenges of AI in Libraries

1. **Data Privacy and Security:** As AI systems in libraries collect vast amounts of user data, including personal preferences, search histories, and reading habits, concerns about data privacy and security have become increasingly important. Libraries must ensure that user data is stored securely and that privacy laws, such as the General Data Protection Regulation (GDPR), are strictly adhered to. Additionally, AI systems often require access to sensitive information to deliver personalized services, raising concerns about how that information could be misused or exposed in case of a security breach. Libraries must implement stringent security measures to protect against hacking and data breaches while maintaining transparency with users about how their data is being used **(Smith, 2021).**

While AI offers numerous advantages, its reliance on technology also brings potential risks. Libraries can become overly dependent on AI systems, which could result in disruptions to services if there are technical issues. For instance, if the AI-based recommendation system or the cataloging system malfunctions, users may not be able to access resources efficiently. In addition, AI systems are not infallible and can make errors. AI-powered tools might misclassify materials, suggest irrelevant content, or even overlook important resources due to limitations in the algorithm. To mitigate such risks, libraries must regularly update their AI systems and ensure that staff members are trained to intervene when needed (**Brown et al., 2021).**

2. **Ethical and Social Concerns:** AI's integration into libraries raises several ethical concerns that need to be addressed. One major concern is algorithmic bias, where AI systems could unintentionally reinforce existing social or cultural biases. For example, if an AI system is trained on biased data, it may recommend certain materials over others, excluding diverse voices or perspectives. In addition, there is growing concern about the potential for AI to replace human workers in libraries, leading to job displacement and

a reduction in the personal touch that librarians provide. While AI can enhance certain tasks, human librarians still play a crucial role in managing library collections, assisting users, and providing guidance that AI systems cannot replicate **(Lee, 2023).**

Implementing AI in libraries can be costly, both in terms of initial investment and ongoing maintenance. Libraries need to invest in AI infrastructure, including hardware, software, and security systems. Additionally, there are expenses related to the training of library staff to operate AI systems effectively. These costs can be prohibitive for smaller libraries or those in underfunded areas. The long-term benefits of AI, such as improved efficiency and user experience, may outweigh the initial costs, but libraries must carefully weigh the costs and benefits before implementing AI solutions. Furthermore, libraries may need to seek external funding or partnerships to afford the necessary resources for AI adoption **(Patel & Gupta, 2022).**

3. Technological Fragmentation and Training Needs: The adoption of AI in libraries may face challenges due to technological fragmentation, especially in developing countries or rural areas. Libraries with limited resources may struggle to keep up with rapid technological advancements and may not have access to the necessary infrastructure for implementing AI systems. Moreover, libraries must invest in continuous training for staff members to ensure they are proficient in using AI technologies. This training must cover not only technical skills but also ethical considerations and privacy issues. As AI evolves, library staff must stay updated on new developments and adapt to the changing landscape of AI-driven library services **(Williams & Carter, 2020).**

4. Bias and Fairness: Library services may experience unfair or biased results if AI technologies unintentionally reinforce or magnify preexisting biases in their training data. Recommendation algorithms, for example, may give preference to particular writers or subjects, which would reduce the variety of materials available to consumers. Maintaining the library's dedication to equal access to knowledge requires ensuring equity and reducing prejudice in AI applications.

5. Transparency and Explainability: Many AI models, especially deep learning algorithms, function as "black boxes," making it challenging to comprehend how they make particular judgments or suggestions. This lack of openness creates problems for accountability and may erode confidence in AI-driven services. To keep users confident, libraries should work toward explainable AI systems that offer transparent explanations of how they operate.

Case Studies of AI Implementation in Libraries: Several libraries have begun integrating AI into their services, providing valuable insights into practical applications and associated challenges**.**

1. The Singapore National Library Board: The Singapore National Library Board implemented an AI-driven recommendation system to personalize user experiences. The system recommends appropriate books and resources to users by examining their borrowing habits and preferences. User satisfaction and engagement have grown as a result of this customisation. However, issues with user privacy and the possibility of reinforcing preexisting reading habits have been noted.

2. The National Library of Finland: The National Library of Finland implemented an AI-based system to transcribe and index historical newspapers. The library made its archival resources more accessible and searchable by combining machine learning methods with optical character recognition (OCR). In addition to enhancing user access to historical documents, this initiative brought to light issues with AI transcription accuracy and the requirement for ongoing system training**.**

Case Studies of AI Implementation in Indian Libraries

Several Indian libraries have begun exploring AI applications to enhance their services.

1. IIT Delhi Central Library: The Central Library at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi has implemented AI-driven tools to improve information retrieval and user engagement. By incorporating machine learning algorithms, the library offers personalized resource recommendations to users, enhancing their research experience. **ijisrt.com**

2. Jawaharlal Nehru University (JNU) Library: Jawaharlal Nehru University Library has adopted AI-based systems for efficient cataloging and classification. The implementation of natural language processing tools has streamlined the organization of resources, making it easier for users to locate relevant materials. **ijisrt.com**

Future Directions of AI in Libraries

1. Advanced and Accurate Recommendation Systems: In the future, AI-based recommendation systems will become even more accurate and sophisticated. By leveraging deep learning and neural networks, these systems will not only suggest materials based on a user's browsing history but will also consider contextual and environmental factors. For example, an AI system could recommend content based on the user's location, time of day, or even emotional state, providing more personalized and meaningful suggestions. Moreover, AI will incorporate more diverse datasets to reduce bias and improve the inclusivity of recommendations **(Lee, 2023).**

2. Integration with Human Organizational Intelligence: The future of AI in libraries will see greater integration between artificial intelligence and human organizational intelligence. While AI will continue to handle routine tasks such as data processing, cataloging, and recommendation systems, librarians will focus on higher-level tasks that require emotional intelligence, creativity, and critical thinking. For instance, librarians may work with AI systems to make more informed decisions about resource allocation, collection development, and user engagement.

This human-AI collaboration will lead to smarter and more efficient library operations **(Smith, 2021).**

3. Investing in Staff Training: Providing training programs to enhance staff competencies in AI technologies is crucial. This includes workshops, seminars, and courses that cover the basics of AI, its applications in libraries, and ethical considerations**.**

Strategies for Effective AI Integration in Libraries: To successfully integrate AI into library services, the following strategies can be employed:

1. Conducting Needs Assessments: Libraries should carry out thorough evaluations to find out where AI can be useful. To identify the most useful AI applications, this entails examining existing services, user requirements, and operational difficulties.

2. Developing a Clear Implementation Plan: A clear implementation strategy that includes the goals, deadlines, resources needed, and evaluation criteria is crucial. This plan should take into account potential hazards and ways for mitigating them, as well as the library's strategic goals.

3. Collaborating with Technology Partners: Libraries can collaborate with technology firms, academic institutions, and other organizations to access expertise and resources for AI projects. Partnerships can facilitate knowledge exchange and provide support during the implementation process.

India is making significant strides in the field of Artificial Intelligence (AI) through various initiatives and investments:

Government Initiatives:

- National Strategy for Artificial Intelligence (#AIforALL): Developed by NITI Aayog, this strategy envisions India as a leader in AI, focusing on inclusive growth and leveraging AI for social and economic benefits. **nationalskills network.in**
- **IndiaAI Mission**: In March 2024, the Indian government approved the comprehensive IndiaAI mission with a budget of ¹ 10,371.92 crore. This mission aims to strengthen the AI innovation ecosystem by developing impactful AI solutions and establishing a public AI compute infrastructure of over 10,000 GPUs. **pmindia.gov.in**

Educational Initiatives:

- **AI University in Maharashtra:** The Maharashtra government is set to establish India's first artificial intelligence university, aligning with the nation's "Viksit Bharat 2047" mission and the goal of becoming a $5 trillion economy**. timesofindia.indiatimes.com**

Industry Investments:

- **Microsoft's Investment:** Microsoft has announced a $3 billion investment to expand its Azure cloud and AI capacities in India over the next two years. This includes setting up new data centers and training 10 million people in AI skills by 2030. **wsj.com**

Regional Initiatives:

- **Tripura's BHASHINI Initiative:** Tripura is pioneering AI integration with the BHASHINI initiative, which aims to provide translation services in 22 scheduled Indian languages, enhancing digital inclusion in the Northeast region. **indianexpress.com**

These efforts reflect India's commitment to harnessing AI for inclusive growth and economic transformation.

Conclusion: The implementation of AI in libraries has the potential to transform library services, making them more efficient, personalized, and accessible. While there are several challenges to be addressed, such as data privacy, algorithmic bias, and high implementation costs, the opportunities AI presents for enhancing user experience, improving information retrieval, and streamlining library operations are substantial. As libraries continue to embrace AI, they must carefully navigate these challenges while ensuring that AI remains a tool to complement the invaluable role of human librarians. By investing in training, infrastructure, and ethical AI practices, libraries can create more engaging and equitable services for all users.

References:-

Books:-

1. Brown, T., Miller, R., & Johnson, S. (2021). Artificial Intelligence and Libraries: A Comprehensive Analysis. Oxford University Press.
2. Jones, K. (2019). Digital Archives and AI Technologies: A New Era in Libraries. Springer.
3. Lee, M. (2023). AI and User Behavior Analytics in Libraries. MIT Press.
4. Patel, R., & Gupta, S. (2022). AI-Powered Search and Metadata Management in Libraries. Cambridge University Press.
5. Smith, J. (2021). The Role of AI in Smart Libraries. Routledge.
6. Williams, D., & Carter, B. (2020). The Evolution of AI in Libraries. Routledge.

Journal Articles:-

1. Avineni Kishore. (2024). Artificial Intelligence in Libraries: Innovations, Implementation, and Global and Indian Best Practices. International Journal of Innovative Science and Research Technology, 9(12).
2. Berendt, B., Büchler, M., & Müller-Birn, C. (2023). The rise of artificial intelligence in libraries: the ethical and equitable methodologies, and prospects for empowering library users. AI and Ethics, 3(1), 45-59.
3. Clark, J., Shorish, Y., Rossmann, D., & Sheehey, B. (2024). Responsible AI Practice in Libraries and Archives. Information Technology and Libraries, 43(3), 1-20.
4. Das, R. K., & Islam, M. S. (2021). Application of Artificial Intelligence and Machine Learning in Libraries: A Systematic Review. arXiv preprint arXiv:2112.04573.
5. Gasparini, A. (2022). Understanding Artificial Intelligence in Research Libraries: An Extensive Literature Review. LIBER Quarterly, 32, 1-36.
6. Jyoti, & Pankaj Kumar. (2024). Reshaping the Library

Landscape: Exploring the Integration of Artificial Intelligence in Libraries. IP Indian Journal of Library Science and Information Technology, 9(1).
7. Subaveerapandiyan, A., & Alfian Akbar Gozali. (2022). AI in Indian Libraries: Prospects and Perceptions from Library Professionals. Open Information Science.
8. "Empowering Library System with AI: A Roadmap of AI in Indian Academic Libraries System." (2023). International Journal of Research and Technology Innovations.
9. "The Intelligent Libraries: Imposing Artificial Intelligence to Enhance Library Services." (2023). Journal of Indian Library Association.

Magazine Articles:

1. "Embracing AI in Libraries: A Strategic Approach for India's Evolving Information Landscape." (December 2024). Library Hi Tech News.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Challenges and Opportunities for Women Entrepreneurs in Indore

Kapil Rahangdale* Dr. S.S. Mourya**

* Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
** HOD & Professor (Sociology) Govt. Arts and Science College, Ratlam (M.P.) INDIA

Abstract : Abstract: This paper explores the multifaceted challenges and opportunities for women entrepreneurs in Indore, Madhya Pradesh, using secondary data sources. By analysing government policies, industry reports, and academic literature, the study identifies socio-cultural, financial, and institutional barriers while highlighting opportunities arising from digital transformation, government initiatives, and a growing entrepreneurial ecosystem. The findings provide actionable insights for policymakers, educators, and support organizations aiming to enhance women's participation in the entrepreneurial landscape.
Keywords: Women Entrepreneurs, Challenges in Entrepreneurship, Opportunities for Women Entrepreneurs, Indore Business Ecosystem, Gender and Entrepreneurship, Socio-Cultural Barriers, Financial Constraints, Government Policies, Digital Transformation, Skill Development Programs, Women Empowerment in Madhya Pradesh.

Introduction - Women entrepreneurship is a critical driver of economic growth and social progress. In India, women-owned businesses account for 20% of all enterprises, but the participation rate remains low due to systemic barriers. Indore, a fast-growing business hub in Madhya Pradesh, offers a unique case study due to its evolving entrepreneurial ecosystem and active policy interventions.

This study aims to:

1. Identify the key challenges faced by women entrepreneurs in Indore.
2. Explore the opportunities available to them.
3. Suggest actionable strategies to bridge thegap between challenges and opportunities.

The research relies on secondary data from government reports, academic studies, and industry insights to provide a comprehensive analysis.

Literature Review

Several studies have highlighted the role of women entrepreneurs in economic development while addressing challenges such as financial exclusion, gender biases, and lack of support systems.

1. Challenges Identified: Research from Economic and Political Weekly emphasizes how societal norms and family responsibilities restrict women's entrepreneurial aspirations in India.

2. Opportunities Explored: Reports by NITI Aayog and MSME Ministry underscore the potential of government schemes like Stand-Up India and MUDRA Yojana in fostering women entrepreneurship.

3. For Indore specifically, the Madhya Pradesh State Policy on Women Empowerment (2013) outlinesinitiatives for skill development and financial inclusion but lacks sufficient implementation.

Methodology: This research utilizes secondary data collection to examine women entrepreneurship in Indore. The data sources include:

1. Government reports: MSME Annual Report, NABARD data, and MP State Policy documents.

2. Industry publications: FICCI and CII reports on women in business.

3. Academic literature: Journal articles and case studies on gender and entrepreneurship.

4. Local insights: Information from Indore business associations and women's networks.

The analysis is qualitative, relying on thematic content analysis to extract patterns and trends related to challenges and opportunities.

Challenges for Women Entrepreneurs in Indore

1. Socio-Cultural Barriers: Women in Indore face entrenched gender roles and expectations that prioritize family responsibilities over career ambitions. Secondary data reveals:

i. A study by FICCI (2022) found that 68% of women entrepreneurs in Tier-II cities like Indore struggle with societal biases.
ii. Limited family support often restricts their ability to scale businesses.

2. Financial Constraints: Access to credit remains a significant challenge:

i. Only 14% of women entrepreneurs in Madhya Pradesh

benefit from institutional funding, according to MSME reports (2023).

ii. High-interest rates and lack of collateral further limit opportunities for small-scale women-led enterprises.

3. Skill Gaps and Limited Networks: Indore's women entrepreneurs often lack access to professional training and mentorship programs. Reports indicate:

i. A mismatch between available training programs and industry needs.

ii. Restricted participation in entrepreneurial networks due to time and mobility constraints.

4. Policy and Implementation Challenges: Although government schemes exist, awareness and accessibility remain low:

i. Only 22% of women in Madhya Pradesh were aware of the MUDRA Yojana, according to a 2022 NABARD survey.

Opportunities for Women Entrepreneurs in Indore

1. Government Initiatives: Schemes such as MUDRA, Start-Up India, and the MP State Women Empowerment Policy offer financial aid and training opportunities.

i. MUDRA loans have disbursed over [1] 10,000 crore to women entrepreneurs in Madhya Pradesh, with Indore being a significant beneficiary.

2. Digital Transformation: The rise of e-commerce platforms like Amazon and Flipkart has opened new avenues for women entrepreneurs in Indore to market their products.

i. Social media platforms are being leveraged for cost-effective marketing, particularly in sectors like fashion and handicrafts.

3. Support Networks and Ecosystem:

i. Indore has seen the emergence of women-centric business forums such as the Women Entrepreneurs Network (WEN), which provides mentorship and collaboration opportunities.

ii. Industry bodies like CII have initiated programs to connect women entrepreneurs with funding agencies and market opportunities.

4. Educational and Skill Development Programs: Skill-building workshops and entrepreneurship training provided by NGOs and local institutions have empowered women to start and sustain businesses.

Conclusion: This study highlights the socio-cultural, financial, and institutional barriers faced by women entrepreneurs in Indore, alongside opportunities in digitalization, government policies, and skill development programs. While the city's entrepreneurial ecosystem is evolving, targeted interventions are necessary to maximize its potential for women entrepreneurs.

Recommendations:

1. **Strengthen Policy Implementation:** Improve awareness campaigns for schemes like MUDRA and Stand-Up India.
2. **Enhance Access to Credit:** Introduce low-interest loans and collateral-free credit options tailored for women entrepreneurs.
3. **Promote Digital Literacy:** Conduct training programs to help women leverage e-commerce and digital marketing.
4. **Expand Support Networks:** Establish more women-centric business forums and mentorship opportunities.
5. **Focus on Rural Women Entrepreneurs:** Extend skill development and funding opportunities to rural areas around Indore.

References:-

1. Ministry of MSME. (2023). Annual Report on MSME Sector in India.
2. NITI Aayog. (2022). Women Entrepreneurship in India: Challenges and Prospects.
3. FICCI. (2022). Women Entrepreneurs in Tier-II Cities: A Study.
4. NABARD. (2022). Survey on Women Entrepreneurs and Financial Inclusion in Madhya Pradesh.
5. Madhya Pradesh State Policy on Women Empowerment. (2013).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

नीमच जिले में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के अंतर्गत जिला उपभोक्ता फोरम का योगदान

मनोज कुमार सोलंकी* डॉ. लक्ष्मी नारायण शर्मा **

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
**शोध निर्देशक एवं सेवानिवृत्त प्राचार्य एवं प्राध्यापक (वाणिज्य) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मदंसौर (म.प्र.) भारत

नीमच जिले का परिचय – नीमच जिला उत्तर में राजस्थान और पूर्व और दक्षिण में मध्य प्रदेश के मंदसौर जिले से घिरा हुआ है। प्रशासनिक और भोगोलिक क्षेत्रफ़ल की दृष्टि से नीमच का कुल क्षेत्रफ़ल 3,875 वर्ग किलोमीटर है। जिले में कुल बसे हुए गाँवों की संख्या 804 है। नीमच जिले में कुल 12 शहर है, जिसमे नीमच नगर पालिका परिषद तथा अठाना, डिकेन, जावद, जीरन, कुकड़ेश्वर, मनासा, नयागांव, रामपुरा, रतनगढ़, सरवानिया महाराज, सिंगोली प्रमुख नगर परिषद है। नीमच जिले में 03 उपखण्ड (नीमच, जावद, मनासा) है तथा 07 तहसील (नीमच ग्रामीण, नीमच शहरी, जीरन, मनासा, रामपुरा, जावद, सिंगोली) है।

विषय का परिचय – उपभोक्ता से तात्पर्य किसी वस्तु एवं वातावरण में विद्यमान सेवा के उपयोग या उपभोग करने से संबंधित विचार करना है, जिसके उपभोग के समय प्रत्येक उपभोक्ता उचित गुणवत्ता वाली वस्तु एवं सेवा को चाहता है, जिनके उपयोग के उपरान्त व अपनी आवश्यकता की सन्तुष्टि के साथ शारीरिक, मानसिक व आर्थिक रूप से स्वयं को सन्तुष्ट महसूस कर सके।

अर्थशास्त्र के विशेषज्ञों के अनुसार केवल सेवाओं के उपयोग के समय ही व्यक्ति उपभोक्ता की श्रेणी में नहीं आता, अपितु वातावरण में विद्यमान विभिन्न सेवाओं, सुविधाओं के समय भी वह उपभोक्ता होता है। अत: उपर्युक्त तथ्य से स्पष्ट है कि वातावरण में उत्पन्न होने वाले प्रदूषण या किसी भी प्रकार के नकारात्मक प्रभाव, विषम विघ्न से संरक्षण उपभोक्ता की सन्तुष्टि के लिये प्राथमिक रूप से आवश्यक है और यदि विपरीत परिस्थितियों के कारण वस्तु की गुणवत्ता या सेवाएं प्रभावित होती है, तो उपभोक्ताओं को पूर्ण सन्तुष्टि प्राप्त नहीं हो पाती।

उपभोक्ता से संबंधित अध्ययन करने के पश्चात् नीमच व मंदसौर जिले के संदर्भ में एक जागरूक उपभोक्ता एवं उपभोक्ता शिक्षा में किन-किन बिन्दुओं का महत्व है तथा उन बिन्दुओं के उपयोग एवं जानकारी के आधार पर एक उपभोक्ता को पूर्ण रूप से जागरूक बनाया जा सकता है, उपभोक्ता किसी भी वस्तु या सेवा के उपयोग के लिये कुछ ना कुछ मूल्य अदा करता है। प्राप्त सेवाओं एवं वस्तु के उपयोग से वह सन्तुष्टि तथा अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करना चाहता है, पर कभी कभी पूर्ण मूल्य अदा करने के उपरान्त भी उसे सन्तुष्टि की प्राप्ति नहीं होती है। ऐसे में उसका व्यय व्यर्थ हो जाता है अपितु उसे कई प्रकार की शारिरीक और मानसिक परेशानियों का सामना करना पड़ता है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के उद्देश्य – उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के उद्देश्य निम्नानुसार है :-

1. उपभोक्ता को बेहतर संरक्षण प्रदान करना।
2. उपभोक्ताओं की शिकायतों को यथाशीघ्र, सरल तरीकों से तथा कम खर्च में दूर करने की व्यवस्था करना।
3. उपभोक्ता के अधिकारों को महत्व देना व उन्हें जागरूक करना।
4. इस अधिनियम में राष्ट्रीय, राज्य तथा जिला स्तरों पर एक तीन स्तरीय अर्द्धन्यायिक तन्त्र की स्थापना करना।
5. इस अधिनियम में केन्द्र तथा राज्यों में उपभोक्ता संरक्षण परिषद् स्थापित करना, जिससे उपभोक्ताओं के अधिकारों को बढ़ावा दिया जा सके।
6. विपणन नियंत्रण करने हेतु सरकारी एवं अर्द्ध-सरकारी न्यायिक तन्त्र की स्थापना करना।
7. उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक तथा शिक्षित करना।
8. उपभोक्ताओं के हित में उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना करना तथा विभिन्न विवादों के निपटारे की व्यवस्था करना।
9. उपभोक्ताओं को क्षतिपूर्ति करवाने में सहयोग प्रदान करना।
10. उपभोक्ताओं को व्यापारियों की अनैतिक क्रियाओं के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करना।

शोध विषय के चयन का औचित्य – विज्ञापन, अपर्याप्त उत्पादन एवं जमाखोरी जैसे कई कारणों से व्यावहारिक सार्वभौमिकता में उपभोक्ता उत्पादन पर निर्भर हो गया है या हम यूं कहें उसकी सार्वभौमिकता मात्र व्यवहारिक सार्वभौमिकता तक ही रह गई है।

आज उपभोक्ता की उपभोग की वस्तुओं एवं सेवाओं की सूची में निरन्तर वृद्धि हो रही है। व्यक्ति की बढ़ती भोगवादी प्रवृत्ति ने उसे विभिन्न समस्याओं में जकड़ रखा है, जिसका लाभ विक्रेता द्वारा अधिक धन कमाने के लालच तथा बढ़ती स्पर्धा के कारण, वस्तुओं की गुणवत्ता में कमी, मिलावट, गलत प्रस्तुतिकरण, विज्ञापनों का बढ़ता जाल, बढ़ती महंगाई, कम माप-तौल, मिथ्या छाप आदि समस्यायें दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। इन

समस्याओं को कम करने के लिये प्रत्येक वस्तु के लिये मानक निर्धारित कर दिये गये तथा उपभोक्ता को उनसे संबंधित जानकारी प्रदान की जानी है कि वह बाजार से सरकार द्वारा प्रमाणित वस्तुए ही खरीदे, किन्तु फिर भी विक्रेता कहीं ना कहीं किसी योजना का प्रयोग कर कम माप, तौल एवं मिलावट वाली वस्तु को बेचकर उपभोक्ता का शोषण करते ही हैं। आज आधुनिक पूंजीवाद के युग में उपभोक्ता की कई प्रमुख समस्यायें है, उससे उपभोक्ता को मुक्ति दिलवाने के लिये तथा उपभोक्ताओं की विभिन्न समस्याओं के निराकरण के लिये उपभोक्ताओं में जागरूकता एवं उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम से संबंधित जानकारी को सामान्य उपभोक्ता तक पहुंचाना अत्यन्त आवश्यक है।

शोध विषय के उद्देश्य :

1. उपभोक्ताओं के आर्थिक हितों के संरक्षण में योगदान करना।
2. उपभोक्ताओं के सामाजिक हितों को संरक्षण प्रदान करना।
3. उपभोक्ता अधिनियम 1986 का विस्तृत अध्ययन विश्लेषण करके उपभोक्ताओं से संबंधित विभिन्न समस्याओं को अंकित करना।

शोध विषय की परिकल्पनाएं:

1. **H1** प्रस्तावित शोध से उपभोक्ता जागरुकता से आर्थिक हितों के सरंक्षण पर सार्थक प्रभाव पड़ता हैं।

2. **H2** प्रस्तावित शोध से उपभोक्ताओं के सामाजिक हितों के सरंक्षण पर सार्थक प्रभाव होता हैं।

शोधा विषय से संबंधित पूर्व में किए गए शोधा कार्य –

1. **सेठी, उपेन्द्र (2022)** ने अपने शोध कार्य में प्रस्तुत रिपोर्ट में स्पष्ट किया है कि, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 2019 ने पूर्ववर्ती सीपीए 1986 में कई बदलाव किए हैं। भारत में उपभोक्ता संरक्षण व्यवस्था की पहुंच में सीपीए 2019 का विस्तार हुआ है। सीपीए 2019 के माध्यम से किए गए बदलाव से न केवल अपने समकक्षों, यानी विक्रेताओं, निर्माता, सेवाप्रदाता, बल्कि ऐसे उत्पादों के समर्थनकर्ता भी जिम्मेदारियों का लाभ उठाकर आगे बढ़ते दिख रहे हैं। सीपीए 2019 ने आयोगों के आर्थिक क्षेत्राधिकार को बढ़ाना, मध्यस्थता कक्षों को जोड़ना, बढ़ाना, उपभोक्ता विवादों के समाधान की प्रक्रिया को आसान और तेज़ बनाने का भी प्रयास किया है।

शोध प्रविधि

- **अध्ययन के चर –** प्रस्तुत शोध कार्य में उपभोक्ता फोरम एवं उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम नीमच जले के योगदान को स्वतंत्र चर तथा उपभोक्ता के आर्थिक हित संरक्षण पर पड़ने वाले प्रभाव के अध्ययन को आक्षरित चर के रूप में प्रयोग किया गया है।

- **निर्देशन इकाई –** निर्देशन इकाई के रूप में शोध कार्य में सामान्य उपभोक्ता (साक्षर एवं असाक्षर) (व्यापारी एवं नौकरी पेशा) तथा युवा एवं प्रौढ़ अवस्था से संबंधित को निर्देशन इकाई के रूप में चयन किया गया है। उपर्युक्त शोध कार्य के दौरान नीमच उपभोक्ता फोरम में तथा न्यायालय में अपील के रूप में आने वाले उपभोक्ता संरक्षण संबंधित मामलों को भी निर्देशन इकाई के रूप में उपयोग किया गया है जिससे तथ्यपूर्ण परिणाम प्राप्त हो सके।

- **निर्देशन चुनाव की विधि –** उपरोक्त शोध कार्य में उपभोक्ता एवं जिला उपभोक्ता फोरम की भूमिका से संबंधित निर्देशन को निर्देशन इकाईयों से सूचना संकलन का लक्ष्य निश्चित किया गया था। कुल 500 इकाईयों को सूचना प्राप्ति के लिये सुविधाजनक चुनाव विधि द्वारा चुना गया।

- **शोध उपकरण –** उपर्युक्त शोध कार्य के दौरान आवश्यकता के अनुसार लांग टेबल, प्रश्नावली रेटिंग स्केल, प्रश्नपत्र आदि उपकरणों का उपयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध कार्य में तथ्य संकलन हेतु स्वयं ही साक्षात्कार अनुसूची को सुविधा की दृष्टि से दो भागों में वर्गीकृत किया गया था। अनुसूची के प्रथम भाग में उपभोक्ता की सामान्य जानकारी जैसे– नाम, उम्र, शिक्षा, आय, कार्य आदि के बारे में जानकारी एकत्रित करने हेतु सामान्य प्रश्नों को सम्मिलित किया गया एवं द्वितीय भाग में उपभोक्ता की क्रय–विक्रय क्षमता, व्यवहार, पसन्द, उपभोक्ता फोरम की जानकारी, समस्याएं, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की जानकारी, उपयोग, बिल एवं वारण्टी कार्ड आदि से संबंधित प्रश्नों को सम्मिलित किया गया।

- **तथ्य संकलन –** तथ्य संकलन हेतु उज्जैन संभाग के नीमच जिले के जिला उपभोक्ता फोरम से उपभोक्ता की समस्याएं, व्यवहार, क्रय–विक्रय प्रक्रिया के तहत् आने वाले मुख्य बिन्दुओं से संबंधित जानकारी को प्रश्नावली एवं साक्षात्कार विधि के उपयोग से विभिन्न तथ्यों को संकलित किया है।

शोध का क्षेत्र – शोध कार्य हेतु नीमच जिले के अंतर्गत आने वाली प्रमुख 03 तहसीलें का चुनाव किया गया है।

शोध की सीमाऐं – मध्यप्रदेश में नीमच जिले में उपभोक्ताओं की अच्छी संख्या है। मध्यप्रदेश में उपभोक्ताओं का बहुत व्यापक दायरा है जो बदले में बहुत बड़े रोजगार सृजन प्रदान करता है। अत: यह आवश्यक हो जाता है कि शोधा कार्य को प्रारंभ करने से पूर्व उस विषय की कुछ सीमाएं निर्धारित कर दी जाये तथा उन्हीं सीमाओं को ध्यान में रख कर विषय का अध्ययन किया जाये तो निश्चित रूप से प्राप्त होने वाले परिणाम अधिक उपयोगी, सार्थक तथा वास्तविकता के करीब होंगे।

1. उपभोक्ता संरक्षण एक बहुत बड़ा विषय है। इस प्रकार नीमच जिले में उपभोक्ताओं संबंधी गतिविधियों का विश्लेषण करना काफी कठिन है। इस शोधा कार्य में उपभोक्ताओं संबंधी निम्नलिखित गतिविधियों को शामिल किया गया है।
2. शोध कार्य में केवल पंजीकृत फर्म के उपभोक्ताओं संबंधी इकाइयों पर विचार किया गया है। लेकिन मध्यप्रदेश में नीमच जिले में कई अपंजीकृत फर्म के उपभोक्ताओं संबंधी इकाइयां हैं जिन पर विचार नहीं किया जा सकता है, लेकिन फिर भी रोजगार सृजन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।
3. इस शोध कार्य में विभिन्न अप्रत्यक्ष/अंतिम उपभोक्ताओं के आंकड़ों का पता नहीं लगाया गया है।
4. इस शोध कार्य में कुल नीमच जिले में कुल उपभोक्ताओं का सही अनुमान नहीं लगाया जा सका।

तालिका संख्या 1: नीमच जिले में आयु के अनुसार उपभोक्ताओं का वर्गीकरण

क्रं.	आयु	नीमच जिला	
		संख्या	प्रतिशत
1.	40 वर्ष तक	260	54.17
2.	40 वर्ष से ऊपर	220	45.83
	कुल	480	100

स्त्रोत – व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित

चित्र 1

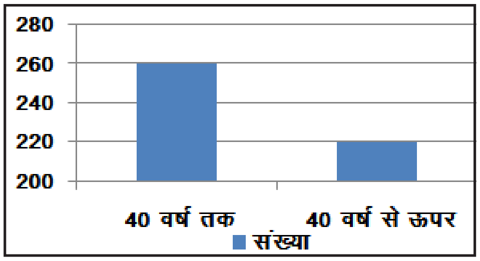

तालिका 1 के अवलोकन के बाद हम देखते हैं कि नीमच जिले के संदर्भ में युवा उपभोक्ताओं का प्रतिशत वृद्धों की तुलना में अधिक है। उपरोक्त तालिका नीमच जिले के संदर्भ में उपभोक्ताओं की आयु के अनुसार उपभोक्ता के वर्गीकरण को दर्शाती है। विश्लेषण के बाद हमें पता चला कि नीमच जिले के संदर्भ में कुल उपभोक्ता 480 हैं। जिसमें 260 (54.17 प्रतिशत) उपभोक्ता युवा (40 वर्ष तक) के हैं और 220 (45.83 प्रतिशत) उपभोक्ता वृद्धावस्था (40 वर्ष से अधिक) के हैं। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि युवा उपभोक्ता, वृद्ध उपभोक्ताओं से अधिक हैं।

तालिका 2: नीमच जिले में वस्तु या सेवा के प्रकार का अध्ययन

वस्तु या सेवा का प्रकार	**उत्तरदाताओं की संख्या**
(अ) वस्तु	**नीमच**
1. साधन सवारी	25
2. सौंदर्य प्रसाधन	50
3. इलेक्ट्रानिक उपकरण	18
4. कपड़ा	30
5. दवाईयां	40
6. फर्नीचर	30
7. जमीन-जायदाद	15
8. अन्य	25
(इ) सेवा	
1. कोरियर	20
2. बैंक	41
3. बीमा	48
4. बिजली	42
5. टेलीफोन	20
6. जल आपूर्ति	28
7. नगरपालिका	19
8. अन्य	29
कुल	**480**

स्रोत: व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित

चित्र 2 (अ)

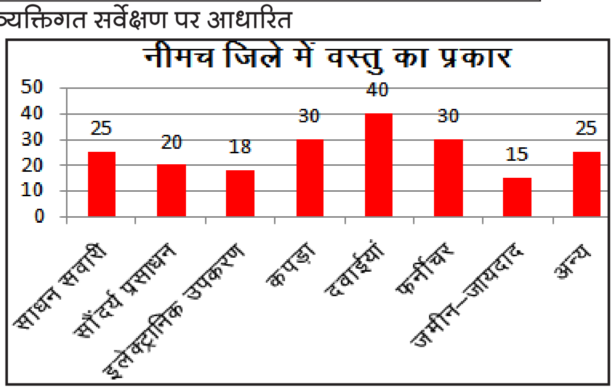

चित्र 2 (इ)

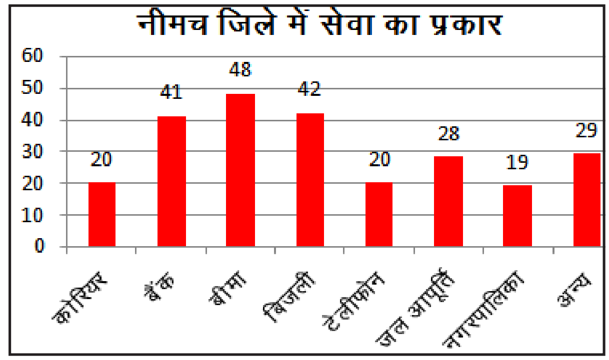

तालिका 2 में नीमच जिले के संदर्भ में उपभोक्ताओं को उनकी वस्तु या सेवा के प्रकार के अनुसार वर्गीकृत किया गया है।हम देख सकते हैं कि वस्तु या सेवा के प्रकार के आधार पर उपभोक्ताओं का प्रतिशत सभी क्षेत्रों में लगभग समान है।

तालिका 2 दर्शाती है कि नीमच जिले के संदर्भ में उपभोक्ता सभी वस्तु या सेवा का क्रय करते हैं। सौंदर्य प्रसाधन और बैंक वर्ग के उपभोक्ताओं में नीमच जिले के उपभोक्ताओं की संख्या 50 एवं 41 है। जबकि इलेक्ट्रानिक उपकरण वर्ग में उपभोक्ताओं की संख्या 18 है।

तालिका 3: नीमच जिले में जिला उपभोक्ता फोरम के बारे में जानकारी का अध्ययन

क्र.	**जानकारी के क्षेत्र**	**उत्तरदाताओं की संख्या (नीमच)**	**प्रतिशत**
1.	समाचार-पत्र/पत्रिकाएं	210	43.75 %
2.	टेलीविजन	94	19.58 %
3.	होर्डिंग्स/फ्लैक्स	54	11.25 %
4.	मौखिक प्रचार	36	7.50 %
5.	अन्य	86	17.92 %
	योग	**480**	**100.00 %**

स्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित

चित्र 3

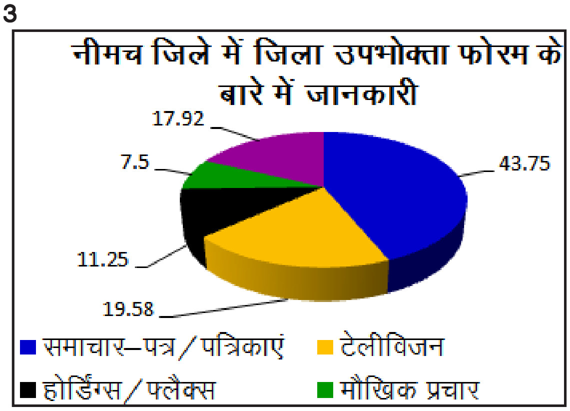

तालिका 3 दर्शाती है कि नीमच जिले के संदर्भ में उच्चतम उपभोक्ता समाचार-पत्र/पत्रिकाओं से जिला उपभोक्ता फोरम के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 का ज्ञान, उपभोक्ताओं के लिए अपने अधिकारों के लिए लड़ने के लिए बहुत महत्वपूर्ण साधान है। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के बारे में जानने के लिए उपभोक्ताओं के पास जानकारी के बहुत सारे स्रोत उपलब्धा हैं। नीमच जिले के संदर्भ में

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के बारे में उनके ज्ञान के स्रोत के बारे में शिकायतकर्ताओं की प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए, कई प्रतिक्रियाओं को चिन्हित करने के लिए 5 विकल्प दिए गए थे।

तालिका 3 से यह स्पष्ट है कि उत्तरदाताओं ने उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के ज्ञान के स्रोत के संबंध में विषम प्रतिक्रियाएँ दीं। मीडिया (रेडियो, टीवी, समाचार पत्र आदि) को उत्तरदाताओं द्वारा सबसे लोकप्रिय स्रोत बताया गया। तालिका 3 में उपभोक्ताओं को उनकी जिला उपभोक्ता फोरम के बारे में जानकारी के अनुसार वर्गीकृत किया गया है तालिका में 210 उपभोक्ता समाचार-पत्र/पत्रिकाऐं से, जिला उपभोक्ता फोरम के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। टेलीविजन से जिला उपभोक्ता फोरम के बारे में जानकारी प्राप्त करने वाले उपभोक्ताओं में 94 नीमच जिले से हैं।

तालिका 4: नीमच जिले में प्रकरण की श्रेणी के आधार पर अध्ययन

क्रं.	श्रेणी	संख्या	प्रतिशत
1.	**रुपये 1 लाख तक**	106	22.08%
2.	**रुपये 1 से 2 लाख**	82	17.08%
3.	**रुपये 2 से 3 लाख**	112	23.33%
4.	**रुपये 3 लाख से अधिक**	180	37.51%
	कुल	**480**	**100%**

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित

चित्र 4

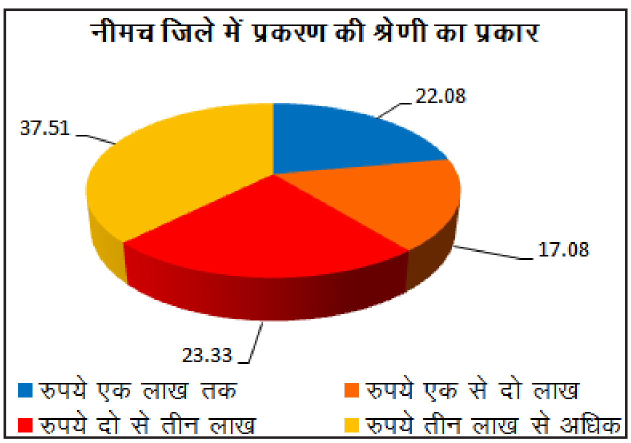

तालिका 4 के अवलोकन के बाद हम देखते हैं कि नीमच जिले के संदर्भ में रु. 3 लाख से अधिक श्रेणी वाले प्रकरण बाकी श्रेणियों की तुलना में अधिक हैं। उपरोक्त तालिका नीमच जिले के संदर्भ में उपभोक्ताओं में प्रकरण राशि के अनुसार श्रेणी के वर्गीकरण को दर्शाती है। विश्लेषण के बाद हमें पता चला कि नीमच जिले के संदर्भ में कुल उपभोक्ता 480 हैं, जिसमें 106 (22.08 प्रतिशत) प्रकरण (रु. 1-1 लाख) श्रेणी के हैं, 82 (17.08 प्रतिशत) प्रकरण (रु. 1-2 लाख) श्रेणी के हैं, 112 (23.33 प्रतिशत) प्रकरण (रु. 2-3 लाख) श्रेणी के हैं और 180 (37.51 प्रतिशत) प्रकरण (रु. 3 लाख से अधिक) श्रेणी के हैं । इसलिए हम कह सकते है कि सबसे अधिक प्रकरण रु. 3 लाख से अधिक राशि वाले श्रेणी में आते हैं।

तालिका 5 :

यदि अतिरिक्त वारण्टी (Additional Warranty) नहीं लेते है तो न लेने के पीछे आपका क्या दृष्टिकोण रहा है ?

क्रं.	दृष्टिकोण	संख्या	प्रतिशत
1.	लागत/मूल्य में वृद्धि	106	22.08 %
2.	लापरवाही	122	25.42 %
3.	दुकानदार का अच्छा व्यवहार	114	23.75 %
4.	अन्य	138	28.75 %
	कुल	**480**	**100%**

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित

चित्र 5

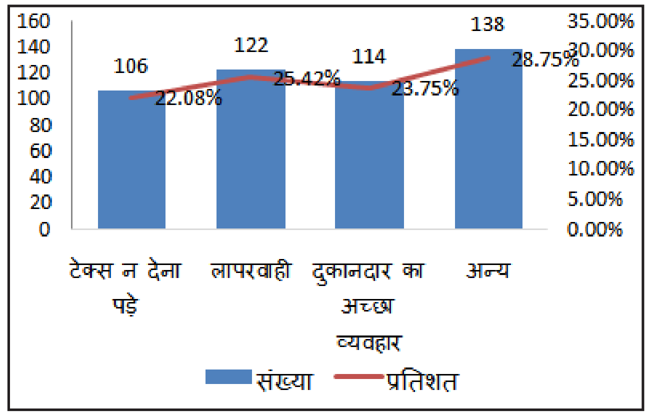

तालिका 5 के अवलोकन के बाद हम देखते हैं कि नीमच जिले के संदर्भ में अतिरिक्त वारण्टी (Additional Warranty) न लेने के पीछे का दृष्टीकोण अन्य कारण है, जो बाकी अन्य की तुलना में अधिक हैं। उपरोक्त तालिका नीमच जिले के संदर्भ में उपभोक्ताओं के अतिरिक्त वारण्टी (Additional Warranty) न लेने के पीछे के दृष्टीकोण के वर्गीकरण को दर्शाती है। विश्लेषण के बाद हमें पता चला कि मंदसौर जिले के सदर्भ में कुल उपभोक्ता 480 हैं जिसमें 106 (22.08 प्रतिशत) उपभोक्ता (लागत/मूल्य में वृद्धि) दृष्टीकोण वाले हैं, 122 (25.42 प्रतिशत) उपभोक्ता (लापरवाही) दृष्टीकोण वाले हैं, 114 (23.75 प्रतिशत) उपभोक्ता (दुकानदार का अच्छा व्यवहार) दृष्टीकोण वाले हैं और 138 (28.75 प्रतिशत) उपभोक्ता (अन्य) दृष्टीकोण वाले हैं। इसलिए हम कह सकते है कि सबसे अधिक उपभोक्ताओं के अतिरिक्त वारण्टी (Additional Warranty) न लेने का दृष्टीकोण अन्य हैं।

शोध विषय की परिकल्पना का निष्कर्ष

H1 शोध से उपभोक्ता जागरुकता से आर्थिक हितों के संरक्षण पर सार्थक प्रभाव पड़ता हैं।

तालिका 6: उपभोक्ता के आर्थिक हितों का संरक्षण के पैमानों पर नीमच जिले के सभी उपभोक्ताओ का तुलनात्मक अध्ययन

चर	औसत	एसडी	टी-मान औरसार्थकता का स्तर
नीमच एन=480	155.20	15.36	t = 2.28 significant at 0.05 as t= 2.28 > 1.96 at 0.05

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित

तालिका 6 से पता चलता है कि इस उपभोक्ता के आर्थिक हितों का संरक्षण के पैमानों पर नीमच जिले के उपभोक्ताओ का स्कोर 155.20 है और 2.5 का औसत 0.01 स्तर पर t = 2.28 < 2.58 के रूप में सार्थक नहीं है, लेकिन यह अंतर 0.05 के स्तर पर t = 2.28 1.96 > 0.05 के

रूप में सार्थक है। अत: शोध परिकल्पना 0.01 स्तर पर अस्वीकृत होती है। परंतु 0.05 स्तर पर स्वीकृत की जाती है।

H2 शोध से उपभोक्ताओं के सामाजिक हितों के संरक्षण पर सार्थक प्रभाव होता हैं।

तालिका 7: काई स्क्वायर परीक्षण

क्र.	चर	प्रत्याशित आवृत्ति
1	जिला उपभोक्ता फोरम में वाद प्रस्तुत करने में लगने वाला समय	115
2	जिला उपभोक्ता फोरम में प्रकरण का निराकरण में लगने वाला समय	95
3	जिला उपभोक्ता फोरम में वाद प्रस्तुत करने में व्यय	104
4	जिला उपभोक्ता फोरम में प्रकरण दर्ज से निराकरण तक आपको फोरम में उपस्थिती	114
5	जिला उपभोक्ता फोरम द्वारा दिये गये निर्णय के अंतर्गत प्राप्त राशि	97
6	उपभोक्ता संरक्षण हेतु मौजुदा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 से सन्तुष्टि का स्तर	53

Calculated Chi Square Value=3.295; Table value= 9.488; df= 2; p-value=.510

स्त्रोत-व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर आधारित

विश्लेषण करने के लिए कि सभी 6 कारकों का उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत निर्मित प्रावधानों से उपभोक्ताओं के सामाजिक हितों के सरंक्षण पर सार्थक प्रभाव जानने के लिए काई स्क्वायर परीक्षण का प्रयोग किया गया। उत्तरदाताओं ने सभी छह कारणों को 1 से 6 तक रैंक दिया। सभी 6 कारणों को रैंक देने के बाद उक्त तालिका 7 में दिखाए गए परिणाम प्राप्त होते हैं।

स्वतंत्रता की 2 डिग्री और सार्थकता के 5 प्रतिशत स्तर पर काई स्क्वायर का सारणीबद्ध मान 9.488 है और काई स्क्वायर का परिकलित मान 3.295 है। चूँकि काई स्क्वायर का परिकलित मान सारणीबद्ध मान से कम है, यह स्वीकृति क्षेत्र में आता है। इस प्रकार, **परिकल्पना** को स्वीकार किया गया और निष्कर्ष निकाला गया कि उपरोक्त 6 कारणों में सांख्यिकीय रूप से कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं था और ये विलंबित न्याय के लिए **सामाजिक हितों के सरंक्षण पर** समान रूप से महत्वपूर्ण कारण थे। विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पहला कारण (बहुत अधिक शिकायतें) सबसे महत्वपूर्ण माना गया और दूसरा कारण (जटिल एवं तकनीकी प्रक्रिया) विलंबित न्याय का कुछ कम महत्वपूर्ण माना गया।

मामलों के निपटान में उपभोक्ता फोरमों द्वारा लिए गए समय के विश्लेषण की व्याख्या इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि उपभोक्ता फोरमों पर अत्यधिाक बोझ (अत्यधिक शिकायतें) को मामले के धीमे निपटान के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारक माना गया जिसके परिणामस्वरूप शिकायतकर्ताओं को न्याय में देरी हुई। शिकायतकर्ताओं द्वारा प्रक्रियात्मक जटिलताओं की अनदेखी की गई। न्याय में लगने वाले समय के बारे में उपभोक्ता मंचों की समग्र धारणा नकारात्मक प्रतीत हुई क्योंकि बड़ी संख्या में शिकायतकर्ताओं ने मंचों पर न्याय में देरी की सूचना दी। सभी कारण एक-दूसरे से संबंधित और आपस में जुड़े हुए प्रतीत होते हैं क्योंकि 'बार-बार स्थगन', 'अधिवक्ताओं का अनावश्यक हस्तक्षेप' अन्य दो कारण थे, जो न्याय में देरी के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण दिखते थे।

मामलों के निपटान में उपभोक्ता फोरमों द्वारा लिए गए समय के विश्लेषण की व्याख्या इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि उपभोक्ता फोरमों पर अत्यधिक बोझ (अत्यधिक शिकायतें) को मामले के धीमे निपटान के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारक माना गया, जिसके परिणामस्वरूप शिकायतकर्ताओं को न्याय में देरी हुई। शिकायतकर्ताओं द्वारा प्रक्रियात्मक जटिलताओं की अनदेखी की गई। न्याय में लगने वाले समय के बारे में उपभोक्ता मंचों की समग्र धारणा नकारात्मक प्रतीत हुई क्योंकि बड़ी संख्या में शिकायतकर्ताओं ने मंचों पर न्याय में देरी की सूचना दी। सभी कारण एक-दूसरे से संबंधित और आपस में जुड़े हुए प्रतीत होते हैं क्योंकि 'बार-बार स्थगन', 'अधिवक्ताओं का अनावश्यक हस्तक्षेप' अन्य दो कारण थे जो न्याय में देरी के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण दिखते थे।

सुझाव – इस अध्ययन के आधार पर उपभोक्ता व्यवहार, उपभोक्ता जागरूकता और उपभोक्ता संरक्षण के क्षेत्र में निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते हैं:

1) 1986 उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण के संबंध में एक ऐतिहासिक कानून है लेकिन इस अधिनियम में कुछ संशोधन अभी भी आवश्यक हैं जैसा कि मंदसौर और नीमच के उपभोक्ताओं द्वारा देखा जाता है और लगभग इसी तरह के विचार देश के अन्य हिस्सों के उपभोक्ताओं से देखे जा सकते हैं। सीपीए 86 के संशोधन का प्रारूप आज नहीं तो कल संसद में पेश होने वाला है। नए प्रारूप में उपभोक्ताओं की उन सभी शेष समस्याओं को शामिल किया जाना चाहिए जिनका वे अब भी सामना कर रहे हैं ताकि एक संकुचित उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम से छुटकारा पाया जा सके।

2) **उपभोक्ता शिक्षा :** उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों और जिम्मेदारियों के बारे में शिक्षित करना। सामुदायिक केंद्रों में उपभोक्ता शिक्षा कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए, जिसमें उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों और जिम्मेदारियों के बारे में जानकारी दी जा सके। इसके अलावा, ऑनलाइन संसाधनों का विकास किया जाना चाहिए, जिससे उपभोक्ता अपने घर बैठे ही जानकारी प्राप्त कर सकें। इसके साथ ही, प्रशिक्षित शिक्षकों का विकास किया जाना चाहिए, जो उपभोक्ता शिक्षा के क्षेत्र में प्रशिक्षित हों।

3) **जागरूकता अभियान :** उपभोक्ताओं को जागरूक करने के लिए अभियान चलाना। जागरूकता अभियान चलाने के लिए सबसे पहले उपभोक्ताओं की जरूरतों और समस्याओं की पहचान करनी चाहिए। इसके बाद, एक प्रभावी अभियान योजना बनानी चाहिए जिसमें संदेश, माध्यम और लक्ष्य समूह का चयन किया जाना चाहिए। अभियान के दौरान, उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों और जिम्मेदारियों के बारे में जानकारी देनी चाहिए और उन्हें अपने अधिकारों का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।अभियान के लिए विभिन्न माध्यमों का उपयोग किया जा सकता है, जैसे कि प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, सोशल मीडिया और सामुदायिक कार्यक्रम। इसके अलावा, स्कूलों और कॉलेजों में जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जा सकते हैं ताकि युवा पीढ़ी को उपभोक्ता अधिकारों के बारे में शिक्षित किया जा सके। अभियान के परिणामों का मूल्यांकन करने के लिए एक प्रणाली भी स्थापित की जानी चाहिए ताकि इसकी प्रभावशीलता का आकलन किया जा सके।

4) **शिकायत निवारण :** उपभोक्ताओं की शिकायतों का समाधान करने

के लिए प्रबंधन संस्थाओं द्वारा शिकायत निवारण प्रक्रिया को आसान और प्रभावी बनाना। शिकायत निवारण प्रक्रिया को पारदर्शी और आसान बनाने के लिए, एक ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म बनाया जाना चाहिए जहां उपभोक्ता अपनी शिकायतें दर्ज कर सकें। इसके अलावा, शिकायत निवारण के लिए एक निश्चित समय सीमा तय की जानी चाहिए ताकि उपभोक्ताओं को जल्द से जल्द समाधान मिल सके। शिकायत निवारण अधिकारियों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए ताकि वे उपभोक्ताओं की शिकायतों का समाधान करने में सक्षम हों। साथ ही उपभोक्ताओं को शिकायत निवारण प्रक्रिया के बारे में जानकारी दी जानी चाहिए ताकि वे अपनी शिकायतों का समाधान करा सकें।

5) कानून और नियमों का पालन : उपभोक्ताओं के अधिकारों का संरक्षण करने के लिए कानून और नियमों का पालन करना। कानून और नियमों का पालन करने के लिए, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम और नियमों को मजबूती से लागू किया जाना चाहिए। इसके लिए, सरकार और संबंधित एजेंसियों को सख्ती से कानूनों का पालन करना चाहिए और उल्लंघन करने वालों के खिलाफ कार्रवाई करनी चाहिए। साथ ही, उपभोक्ताओं को कानूनों और नियमों के बारे में जागरूक किया जाना चाहिए ताकि वे अपने अधिकारों का उपयोग कर सकें। इसके अलावा, कानूनों और नियमों की समीक्षा और अद्यतन करना चाहिए ताकि वे बदलते समय के अनुसार प्रासंगिक बने रहें।

6) उपभोक्ता संगठन : उपभोक्ताओं को संगठित करके उनकी आवाज को मजबूत बनाना और उनके हितों की रक्षा करना। उपभोक्ता संगठन को मजबूत बनाने के लिए, उपभोक्ताओं को संगठित करना और उन्हें अपने अधिकारों के बारे में जागरूक करना चाहिए। संगठन को उपभोक्ताओं की शिकायतों का समाधान करने और उनके हितों की रक्षा करने के लिए काम करना चाहिए। इसके अलावा, संगठन को सरकार और उद्योग के साथ मिलकर काम करना चाहिए ताकि उपभोक्ता हितों को बढ़ावा दिया जा सके। संगठन को अपनी गतिविधियों को पारदर्शी और जवाबदेह बनाना चाहिए ताकि उपभोक्ताओं का विश्वास बना रहे।

7) जानकारी का अधिकार : उपभोक्ताओं को उत्पादों और सेवाओं के बारे में सही जानकारी देना।जानकारी का अधिकार देने के लिए, उत्पादों और सेवाओं के बारे में स्पष्ट और सच्ची जानकारी प्रदान करनी चाहिए। उपभोक्ताओं को उत्पादों के मूल्य, गुणवत्ता, और उपयोग के बारे में जानकारी देनी चाहिए। इसके अलावा, उत्पादों पर सुरक्षा और स्वास्थ्य संबंधी जानकारी भी देनी चाहिए। जानकारी को आसानी से समझने योग्य और सुलभ बनाना चाहिए, ताकि उपभोक्ता अपने निर्णय लेने में सक्षम हों।

आगे के लिये शोध विषय – अनुसंधान विद्वानों को क्षेत्र में कई अन्य अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि अन्य कोणों से भी समस्याओं का गहन विश्लेषण किया जा सके। इनमें से कुछ विषय नीचे दिए गए हैं:–

1. महानगरीय शहरों के लोगों की उपभोक्ता समस्याएं और उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम।
2. उ.प्र. एवं हरियाणा के 10 जिलों के विशेष संदर्भ में उपभोक्ता न्यायालयों में लंबित मामले।
3. 1986 के प्रति व्यवसायी वर्ग और उत्पादकों का दृष्टिकोण।
4. 1986 से उपभोक्ता संबंधी कानूनों का रुझान विश्लेषण।
5. उपभोक्ता अदालतों द्वारा दिए गए फैसले और उपभोक्ताओं और उत्पादकों पर उनके प्रभाव।
6. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के व्यावहारिक लाभ और इसके कार्यान्वयन में प्रासंगिक बाधाएं।
7. सेवा क्षेत्र के क्षेत्र में उपभोक्ता अदालतों की भूमिका।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था –डॉ. सुदामा सिंह,राजीव कृष्ण सिंह
2. भारतीय अर्थव्यवस्था –एस.के. मिश्र, वी.के. पुरी
3. आर्थिक विकास एवं नियोजन –एस.पी. सिंह
4. भारत विकास की दिशायें –डॉ. अमर्त्य सेन एवंज्यां ब्रीज
5. उपभोक्ता संरक्षण दिग्दर्शन –डॉ. बसन्ती लाल बावेल
6. उपभोक्ता सरंक्षण में उपभोक्ता संगठनों की भूमिका– अनुराग सक्सेना
7. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 –राम कृष्ण मिश्र
8. अपकृत्य विधि तथा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986–डॉ. आर.के. बांगिया
9. आवश्यक वस्तु अधिनियम–सावंतमल माथुर
10. बीएमआरबी सोशल रिसर्च, यू.के. पोषण साइन पोस्ट लेबलिंग योजनाओं की समझ और उपयोग : http://www.food.gov.uk/multimedia/pdfs/pmpreport.pdf
11. कैथी गुडविन, गोपनीयता : उपभोक्ता अधिकारों की मान्यता, http://www.jstor.org/pss/ 3000257
12. Consensus action on Salt and Health. Salt survey in the older population. [cited 2009/8/10]; Available from:
13. http://www.actionsalt.org.uk/publications/survey_pages/older_survey.htm
14. Consumer Act, 1991 of Philippines.
15. Consumer Bill of rights at http://www.cuts-international.org/safetywatch.htm,
16. Consumer Protection Act 1986 of India, West Bengal Government.
17. See http://wbconsumers.nic.in/cpa-detail.html.
18. उपभोक्ता संरक्षण–उपभोक्ता संरक्षण निदेशालय, म0.प्र0, भोपाल
19. उपभोक्ता जागरण–भारत सरकार उपभोक्ता मामले और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
20. www.consumeronline.org
21. www.consumer-voice.org
22. www.core.nic.in
23. www.corecentre.org
24. www.cuts-international.org
25. www.en.wikipedia.org/wiki/Consumer_protection

****

अष्टांग योग से आत्मनिष्ठ एवं मानसिक जगत का ज्ञान

डॉ. विनोद राय*

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, डोलरिया, जिला नर्मदापुरम (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – प्रत्येक विद्या की अपनी एक प्रणाली है। यदि मनुष्य एक अंतरिक्ष वैज्ञानिक बनने की जिज्ञासा रखता है तो मात्र अंतरिक्ष विज्ञान के वक्तव्य सुनने से वह अंतरिक्ष वैज्ञानिक नहीं बन सकता। उसे अंतरिक्ष विज्ञान का यथावत अध्ययन करना होगा और एक प्रयुक्त प्रणाली के माध्यम से उस विज्ञान से सम्बधितं ज्ञान अर्जित करता होगा, तब कहीं जाकर वह एक अंतरिक्ष वैज्ञानिक बनने में सक्षम होगा। प्रत्येक विद्या की अपनी एक प्रणाली है मात्र उपदेश को सुनने भर से सभी परिणामों की प्राप्ति असंभव है जब तक कि उन उपदेशों को सुनकर उन्हें आत्मसात न किया जाये और उनको व्यावहरिक जीवन में प्रारम्भ न किया जाये। प्रयोग के अभाव में परिणाम अधूरे ही रहेंगें और द्योष साधनों को दिया जायेगा और साध्य को, लक्ष्य को असंभव कहकर छोड दिया जायेगा। जबकि कारण साधक और उसकी साधना प्रणाली का अधूरापन है।

प्रयुक्त साधन-प्रणाली लेकर उसकी युक्ति संगत प्रायोगिक विधियों में श्रद्धा रखकर साधना करने से हम उस परिणाम को प्राप्त कर सकते हैं जो उस साधन प्रणाली के परिणाम के रूप में वर्णित है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार कोई ज्ञान प्राप्त करने के लिए हम साधारणीकरण की सहायता लेते हैं और साधारणीकरण घटनाओं के पर्यवेक्षण पर आधारित है। हम पहले घटनावली का पर्यवेक्षण करते है फिर उनका साधारणीकरण करते हैं और फिर उनसे अपने सिद्धांत या मतामत: निकालते हैं। हम जब तक यह प्रत्यक्ष नहीं कर लेते है कि हमारे मन के भीतर क्या हो रहा है और क्या नहीं, तब तक हम अपने मन के सम्बन्ध में, मनुष्य की आभ्यान्तरिक प्रकृति के सम्बन्ध में, मनुष्य के विचार के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जान सकते। वाह्य जगत के व्यापारों का पर्यविक्षण करना अपेक्षाकृत सहज है, क्योंकि उसके लिए हजारों यंत्र निर्मित हो चुके हैं, पर अंतर्जगत के व्यापार को समझने में मदद करने वाला कोई भी यंत्र नहीं है। अष्टांग योग रूपी राजयोग-विद्या पहले मनुष्य की उसकी अपनी आभ्यन्तरिक अवस्थायों के पर्यविक्षण का इस प्रकार उपाय दिखा देती है कि मन ही उस पर्यविक्षण का यंत्र है। मनोयोग की शक्ति का सही सही नियमन कर जब उसे अंतर्जगत की ओर परिचालित किया जाता है, तभी वह मन का विश्लेषण कर सकती है। और तब उस ज्ञानरूपी प्रकाश से हम यह सही सही समझा सकते हैं कि अपने मन के भीतर क्या घट रहा है। मन की शक्तियों इधर उधर बिखरी – हुई प्रकाश की किरणों के समान हैं। जब उन्हें केन्द्रीभूत किया जाता है तब वे सब कुछ आलोकित्त कर देती हैं। यही ज्ञान का – हमारा एकमात्र उपाय है।

मन को अन्तर्मुखी करना, उसकी बहर्मुखी गति को रोकना, उसकी समस्त शक्तियों को केन्द्रीभूत कर उस मन को ही उपर उनका प्रयोग करना, ताकि वह अपना स्वभाव समझ सकें, अपने आपको विश्लेषण करके देख सके एक अत्यन्त कठिन कार्य है। परंतु इस विषय में वैज्ञानिक प्रथा के अनुसार अग्रसर होने के लिए यही एकमात्र उपाय है। अष्टांग योग के अभ्यास से मन और बुद्धि से मल, विक्षेप और आवरण हटते जाते हैं, वैसे-वैसे आध्यात्मिक आलोक की उपलब्धि प्राप्त होती जाती है। आध्यात्मिक उन्नति की सबसे बड़ी बाधा अविद्या है। अविद्या से अस्मिता, अस्मिता से राग, राग से द्वेष और द्वेष से अभिनिवेश, अभिनिवेश से सकाम कर्म, उनकी वासनाओं से जन्म, आयु, भोग एवं उनमें सकाम कर्मो के पाप-पुण्य के आधार पर सुख-दु:ख आदि प्राप्त होते हैं। उन समस्त विकारों की निवृत्ति हेतु महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग को प्रमुख साधन माना है। अष्टांग योग के विभिन्न अंगों का अभ्यास योग साधक की साधना करने के लिए आवश्यक हैं। इससे शरीर, मन की अशुद्धियों दूर होती हैं और क्रमश: अभ्यास से आध्यात्मिक उपलब्धियों की प्राप्ति होने लगती हैं। अष्टांग योग के विस्तृत स्वरूप का वर्णन इस प्रकार है-

अष्टांग योग का स्वरूप- अष्टांग योग में वर्णित साधनों को बहिरंग और अंतरंग साधनों के रूप में विभाजित किया गया है। यह सभी आठ अंग अन्योन्याश्रित तथा प्रत्येक का समान महत्व है। प्रथम पाँच अंग यम, नियम, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार बहिरंग साधन अथवा बहिरंग योग कहलाते हैं। अन्य तीन धारणा, ध्यान तथा समाधि को अंतरंग साधन या अंतरंग योग कहते हैं। बहिरंग साधन का तात्पर्य उन अभ्यासों से है जिनका लक्ष्य शरीर, समाज तथा अन्य विषयों के संदर्भ में होता है। अंतरंग साधनों का उद्देश्य एवं लक्ष्य आत्मचिन्तन एवं बहिरंग साधनों का उद्देश्य एवं लक्ष्य व्यावहारिक, शारीरिक, मानसिक परिष्कार होता है। बहिरंग साधनों का लक्ष्य वस्तुनिष्ठ होता है परन्तु अंतरंग साधनों का लक्ष्य आत्मनिष्ठ होता हैं महर्षि पतंजलि अष्टांग का वर्णन इस प्रकार से करते हैं-

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानरामाधयोऽष्टावङ्गानि ॥
पांतजल योग सूत्र 2/29

अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायान, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि योग के आठ अंग हैं। योग के विभिन्न अंगों के महत्व को क्रमानुसार हम यहाँ समझ सकते हैं-

1. **यम-**यम वास्तव में हमारे व्यवहार से संबंधित है, इनके माध्यम से हम व्यवहार को परिश्कृत करते हैं। हमारा व्यवहार दूसरों से जुड़ा होता है अर्थात् हम जो व्यवहार दूसरों के साथ करते है, उसमें पवित्रता की आवश्यकता

होती है जो कि यम के पालन से प्राप्त होती है। महर्शि पतंजलि ने यम के पांच अंग बताये हैं।

'अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचार्या परिग्रहा यमा:'

अर्थात्

अहिंसा,सत्य,अस्तेय,ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पांच यम हैं।

यम के इन अंगो का वर्णन निम्नलिखित हैं :-

अहिंसा- अर्थात् किसी प्राणी को मन, वचन, कर्म से पीड़ा न पहुंचाना। आयुर्वेद ग्रन्थ 'अष्टांगहृदय' के अनुसार हिंसा तम का द्योतक है। यह अभिघात (चोट मारना) और प्रतिरोध को उत्पन्न करने वाला होता है। अत: इसे पापकर्म बताकर त्यागने का निर्देश हैं शांडिल्यउपनिषद के अनुसार- मनसा, वाचा कर्मणा कभी भी किसी प्राणी को कष्ट न देना अहिंसा है।

सत्य- सत्य को यथार्थ वचन द्वारा समझा जाता है। स्वामी हरिहरानन्द के अनुसार वाक्य को तदनुरूप करने की चेष्टा ही सत्यसाधन है। मनुस्मृति में कहा गया है कि सत्य बोलो, प्रिय बोलो। अप्रिय सत्य नहीं बोलो एवं प्रिय असत्य भी नहीं बोलो, यही सनातन धर्म है।

अस्तेय- अस्तेय का सामान्य अर्थ चोरी करना है अत: अस्तेय का अर्थ चोरी न करना है। इसका प्रभाव व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन पर पड़ता है। जो धर्मत: अप्राप्य होता है उस प्रकार के द्रव्य का ग्रहण स्तेय कहलाता है। पृथ्वी में कहीं पर भी गुप्त स्थल में स्थित सभी तरह के घोषित रत्न वस्तु पदार्थ आदि उसके लिए प्रकट हो जाते है। किसी भी पदार्थ वस्तु पदार्थ के प्रति राग (आसक्ति) का होना भी स्तेय (चोरी) कहलाता है।

अपरिग्रह- आपातकाल में भी इच्छानुसार द्रव्यों का संग्रह न करना अपरिग्रह कहलाता है। परिग्रह का अर्थ जमा करना है। अपरिग्रह अर्थात् संचय प्रवृति का त्याग करना है। महर्षि व्यास के अनुसार-अर्जन, रक्षण, क्षय संग और हिंसा इन पांच प्राकर के दोषों को देखकर विषयों को ग्रहण न करना अपरिग्रह है। आपातकाल में भी इच्छानुसार द्रव्यों का संग्रह न करना अपरिग्रह कहलाता है। अपरिग्रह अर्थात् संचय प्रवृत्ति का त्याग करना है।

ब्रह्मचर्य- यह इन्द्रियों का संयम है। इसके द्वारा ऊर्जा का संरक्षण सिखा जाता है। शारीरिक दृष्टि से ब्रह्मचर्य को तप कहा जा सकता है। क्योंकि तप का अर्थ मन का निष्काषन करना है और ब्रह्मचर्य अर्थात् इन्द्रिय संयम होता है। ब्रह्मचर्य से आत्मिक, भौतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति होती है। योगी ही ब्रह्मचर्य धर्म का पालन करके आध्यात्मिक उन्नति करते है.

2. **नियम-** यदि हम व्यवहार के मूल में जाए तो मन ही इसकी उत्पत्ति का कारण है। नियम का अर्थ नियमित अनुष्ठानो द्वारा मन को अनुशासन में लाकर मन के विखराव को रोकना है। महर्षि पतंजलि नियम का वर्णन इस प्रकार करते है-शौचसंतोषतपरूस्वाध्यायेशवरप्राणीधानानि नियमा: । नियम अत्यंत आवश्यक अंग हैं जिसे सभी ने स्वीकार किया है कि यह योग का महत्वपूर्ण अंग है। उपनिषद संहिता आदि में योग के अंग के रूप में नियम का वर्णन है। विज्ञानभिक्षु ने तप स्वाध्याय संतोष, पवित्रता तथा ईश्वरपूजन को योग की सिद्धियों को प्रदान करने वाले नियम कहा है। इन नियमों का विस्तृत वर्णन इस प्रकार है-

शौच-शौच का सामान्य अर्थ शुद्धिकरण है। आन्तरिक व सूक्ष्म रुप में इसे पावनता कहते है। पावनता कभी नष्ट नहीं होती है इसलिए ईश्वर को पतित पावन कहते है। इस संबंध में तुलसीदास जी ने कहा है 'निर्मल मन जन सो मोहि भावा। मोहि छल कपट छिद्र न भावाद्य' मन पवित्र होने पर ही परमात्मा को प्रिय होते हैं कपट छल रहने पर उन्हें अप्रिय लगते है।

संतोष - संतोष एक मानसिक गुण है जिससे सुख प्राप्त होता है। संतोष से ही जीवन में सुख-शांति प्राप्त होती है, यह इसका आधार स्रोत है। भौतिक आकाक्षाओं की पूर्ति की ललक व उसे प्राप्त करने के पश्चात भोग करना तृष्णा है और तृष्णा के पश्चात असंतोष होता है। तृष्णा का अंत नहीं होता है संतोष करने पर ही इसकी समाप्ति हो सकती है। अत संतोष ही शांति आनन्द की प्राप्ति का मुख्य साधन है।

तप-यह नियम का तीसरा अंग है। इसके द्वारा सहनशीलता का अभ्यास किया जाता है तथा इसके माध्यम से व्यवहार में उत्पन्न दोषों का निराकरण किया जाता है। उदाहरणत: चन्द्रायण व्रत, यह तप का ही एक प्रकार है, जिसके माध्यम से पूर्वकृत दोषकर्मो का परिमार्जन किया जाता है। तप व्यवहार परिमार्जन के साथ ही शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक परिमार्जन हेतु एक महत्वपूर्ण तकनीक है।

स्वाध्याय- स्वयं अपने जीवन का समीक्षात्मक अध्ययन ही स्वाध्याय कहलाता है। यह शास्त्रों के अध्ययन द्वारा संपन्न होता है और इससे ज्ञान-विज्ञान की प्राप्ति होती है। गीता में कहा गया है 'नहि ज्ञानेन सदृशंपवित्र भिहविधाते।' अर्थात् ज्ञान के सदृश पवित्र संसार में कुछ नहीं है। स्वाध्याय के द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होती है, जो हमारे व्यवहार को सन्मार्ग में प्रेरित करती है। स्वाध्याय का महत्व मानव जीवन में बहुत है।

ईश्वरप्रणिधान - प्रणिधान का अर्थ है, धारणकरना स्थापित करना। **'समाधिसिद्धिरीश्वर प्रणिधानात'** ईश्वर प्रणिधान से समाधि सिद्ध होती है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार प्रणिधान का अर्थ समर्पण बताया है तथा कहा कि ईश्वर समर्पण भाव में सब कुछ समर्पित कर दिया जाता हैं इसके पश्चात हि समाधी की पूर्णता होती हैं ईश्वर प्रणिधान अर्थात् ईश्वर को धारण करना।

3. **आसन-**आसनों का पूर्ण वर्णन हठयोग से ग्रन्थों में ही उपलब्ध होता है। हठयोग प्रदीपिका में आसन का योगाभ्यास में प्रथम स्थान है। हठयोग में आसनों के अनेक भेद बतलाये गये हैं, परन्तुमहर्षि पतंजलि ने आसन शरीर को सुखदायी रखने की तकनीक के रूप में बताया है। उनके अनुसार 'स्थिरसुखमासनम्' अर्थात् जो स्थिर और सुखदायी हो वह आसन है। आसन शरीर के मन स्थानों में रहने वाली 'हव्य वहा' व 'कव्य वहा' विद्युत शक्ति को क्रियाशील रखते हैं। आसनों का सीधा प्रभाव शरीर की नस-नाडीयों के अतिरिक्त सूक्ष्म कशेरुकाओं पर भी पडता है।

4. **प्राणायाम-** प्राणायाम का अर्थ है-प्राण का विस्तार करना। स्थूल रूप में यह जीवनी शक्ति प्राण से संबंधित है। योगसुत्रकार महर्शि पतंजलि के अनुसार- महर्षि पतंजलि में अष्टांग योग का चौथा अंग प्राणायाम बताया है, 'तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासंयोर्गतिविच्छेद प्राणायाम।' अर्थात्-उस आसन की सिद्धि होने के बाद, श्वास और प्रश्वास की गति का स्थिर हो जाना प्राणायाम कहलाता है। प्राणायाम के संदर्भ में बहुत से विद्वानों ने अपने विचार रखे हैं और उसे समझने की कोशिश की है। स्वामी हरिहरानंद के अनुसार, श्वासगति तथा प्रश्वासगति का रोध करना ही प्राणायाम है। स्वामी स्वात्माराम के अनुसार 'चले वातं चलं चित्तं निश्चले निश्चल भवति।' योगी स्थाणुत्वामासीति ततोवायु निरोधयेत् अर्थात् वायु के चलायमान होने पर चित्त भी चंचल होता है और वायु के निश्चल हो जाने पर चित्त भी स्थिर हो जाता है तब योगी स्थिरता को प्राप्त होता है। अत: प्राणायाम का अम्यास करे।

5. **प्रत्याहार-**वस्तुत: पतंजलि के अष्टांगयोग में प्रत्याहार अन्तरंग तथा

बहिरंग अवस्थाओं में सेतु रूप है। महर्षि पतंजलि के अनुसार – 'स्वविषयासंप्रयोगचीत्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहार:' अपने विषयों के सम्बन्ध से रहित होने पर इंदियों का जो चित्त स्वरूप में तदाकार सा हो जाता है वह प्रत्याहार है। स्वामी हरिहरानंद के अनुसार दचित्त निरोध होने पर इंदियों का निरोध साधन रूप प्रत्याहार ही योगियों का उपादेय होता है। विज्ञानभिक्षु के अनुसार, इंदियों का निग्रह करना अर्थात् उन्हें वश में करके अपनी इच्छानुसार उनसे कार्य लेना ही प्रत्याहार कहा गया है।

6. धारणा– धारणा पतंजलि के अष्टांग योग में छठे अंग के रूप में वर्णित है। पतंजलि ने धारणा को अन्तरंगयोग मानते हुए संयम का अंग माना है। महर्षि पतंजलि के अनुसार 'देशबंधश्वितश्य धारणा' किसी एक देश में चित्त को ठहराना धारणा है। व्यास भाष्य के अनुसार– 'नाभीचक्र, ह्रदय पुण्डरी, मूर्द्धज्योति नासिकाग्र,जिह्वाग्र इत्यादि देशों में (बंध होना) अथवा बाहा विषय में वृत्तिमात्र के द्वारा चित्त का जो बध है, वही धारणा है।

7. ध्यान– धारणा के पश्चात् ध्यान की प्रक्रिया है। महर्षि पतंजलि के अनुसार 'तत्र प्रत्ययेकतानताध्यानम।' (जहां पर चित्त का केन्द्रित किया जाए) उसी में वृत्ति (वित्तवृत्ति) का एक तार चलना (एकाग्र होना) ही ध्यान कहलाता है। प्यास भाष्य के अनुसार– उस देश में, ध्येयविषयक प्रत्यय की जो एकातानता अर्थात् अथ प्रत्यय के द्वारा अपरामृष्ट एकरूप प्रथाह है, वहीं ध्यान है। स्वामी हरिहरानंद के अनुसार– अभ्यास बल से जब धारणा एकतान या अखण्ड घारा की भांति हो जाता है, तब उसे ध्यान कहते है। गीता के अनुसार, जिस प्रकार वायुरहित स्थान में स्थित दीपक की लो चलायमान नहीं होती, वैसी ही उपमा परमात्मा के ध्यान में लगे हुए योगी के जीते हुए चित्त की कही गई है।

8. समाधि–समाधि पतजलि अष्टांगयोग का आठवां तथा अन्तिम लक्ष्य है। प्राय: योग की सभी विचारधाराओं में समाधि को अन्तिम लक्ष्य स्वीकार किया गया है। यह मन की समस्त वृत्तियों के निरोध या विनाश की अवस्था है। महर्षि पतंजलि के अनुसार 'तदेवार्थमात्रनिर्मासस्वरूपशून्यमिव समाधि:' जब (ध्यान में) मात्र ध्येय (लक्ष्य) की ही प्रतीति होती है तथा चित्त का निज स्वरूप शून्य सा हो जाता है, तब वही (ध्यान ही) समाधि हो जाता है। व्यास भाष्य के अनुसार ध्यान ही जब ध्यय स्वाभाव के आवेश में अपने ज्ञान्तामक स्वाभाव से शुन्य के सामान होता है तब (उसे) समाधि कहते है। विज्ञानभिक्षू के अनुसार ध्यान जब ध्येय के अत्यधिक चिन्तन से ध्यान, ध्येय तथा ध्यात्र भाव की दृष्टि से रहित होकर ध्यय मात्र का आकार हो जाता है तब समाधि कहलाता हैं स्वामी विवेकानंद के अनुसार– जब ध्यान में वस्तु का रूप या बाहरी भाग परित्यक्त हो जाता हैं, तभी यह समाधि अवस्था आती है।

उपरोक्तत विवरण से यह स्पष्ट है कि, अष्टांग योग के ये अंग ऐसे उपाय हैं जिनसे शारीरिक तथा मानसिक विकास के साथ ही साथ आध्यात्मिक विकास भी संभव होता है। वास्तव में अष्टांग योग का प्रत्येक अंग प्रथक रूप से योग के अभ्यास में एक–एक साधन है। जो की जीवन के लिए एक उपयोगी व श्रेष्ठ साधन हैं। योग की पूर्ण साधना के लिए इन आठों अंगो क्रमश: अभ्यास आवश्यक है। क्रमश: एक–एक अंग पर पूर्ण अधिकार हो जाने पर ही अग्रिम योगागों में प्रवृत्ति होती है। अष्टांग योग के ये सभी साधन परस्पर अन्योन्याश्रित होते हैं, सभी अंगों का महत्व एवं उपयोग पारस्परिक निर्भर है।

अत: अष्टांग योग अन्तर्जगत से सम्बन्धित घटनाओं के वैज्ञानिक विश्लेषण हेतु महत्वपूर्ण एवं व्यावहारिक विधि है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पवनकुमारी विज्ञानभिक्षु प्रणित योगसार संग्रह इस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली पृष्ठ संख्या 67
2. पतंजली योगसूत्र 2/3
3. पतंजली योगसूत्र 2/12
4. पतंजली योगसूत्र 2/30
5. अष्टांग ह्रदय 2/21–22
6. मानरा गोस्वामी तुलसीदास, उत्तराखंड
7. विवेकानंद स्वामी विवेकानंद साहित्य, स्वामी स्वानंद अद्धेत आश्रम मायावती पिथोरागढ़ खंड 1 पृष्ठ संख्या 39
8. आचार्य श्री राम शर्मा संख्यदर्शन एवं योगदर्शन वेदमाता गायत्री ट्रस्ट शांतिकुंज हरिद्वार पृष्ठ संख्या 57

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Artificial Intelligence in Research: Transformative Advances, Applications, and Ethical Implications

Mrs. Madhuri Khandelkar*

***Assistant Professor (Home Science) Govt. M.H. College of Home Science and Science for Women, Jabalpur (M.P.) INDIA**

Abstract : Artificial Intelligence (AI) has revolutionized research practices across various disciplines by offering innovative tools and techniques to analyze data, uncover patterns, and generate insights. This paper explores the integration of AI in research, highlighting its transformative advancements, diverse applications, and ethical considerations. By examining recent developments and scholarly literature, this paper aims to provide a comprehensive understanding of the evolving role of AI in shaping research methodologies and practices.
Keywords: Artificial Intelligence, Research, Advancements, Applications, Ethical Considerations.

Introduction - Artificial Intelligence (AI) has emerged as a transformative force in research, offering novel approaches to data analysis, pattern recognition, and decision-making. From healthcare and finance to social sciences and environmental studies, AI technologies have penetrated diverse research domains, facilitating groundbreaking discoveries and innovations. This paper explores the multifaceted relationship between AI and research, elucidating its advancements, applications, and ethical implications.The evolution of AI technologies, propelled by advancements in machine learning, deep learning, and data analytics, has ushered in a new era of possibilities for researchers worldwide. From deciphering complex datasets to automating mundane tasks, AI offers researchers powerful tools and techniques to enhance their productivity and uncover insights that were previously unattainable. The proliferation of AI-driven research is evident across diverse fields, ranging from healthcare and finance to social sciences and environmental studies, where AI algorithms are deployed to tackle complex challenges and accelerate scientific breakthroughs.

Advancements in AI for Research: The advancements in AI technologies have significantly enhanced researchers' capabilities to process large datasets, extract meaningful insights, and develop predictive models. Machine Learning (ML) algorithms, such as neural networks, support vector machines (SVM), and decision trees, enable researchers to uncover complex patterns and correlations within data. Deep Learning techniques, including convolutional neural networks (CNNs) and recurrent neural networks (RNNs), excel in tasks such as image recognition, natural language processing (NLP), and speech synthesis.

Moreover, AI-driven algorithms have been integrated with other emerging technologies like big data analytics and Internet of Things (IoT) devices, expanding the scope of research applications. Predictive analytics powered by AI facilitate proactive decision-making in fields like predictive maintenance, personalized medicine, and risk assessment. AI-based virtual assistants streamline research processes by automating literature reviews, data collection, and experimental design.

Applications of Artificial Intelligence (AI) in Research: Artificial Intelligence (AI) has permeated virtually every aspect of modern research, offering unprecedented opportunities to revolutionize traditional methodologies, accelerate knowledge discovery, and address complex challenges across diverse domains. From healthcare and finance to social sciences and humanities, AI-powered tools and techniques are transforming the research landscape, enabling researchers to unlock new insights, make predictions, and automate labor-intensive tasks. This section explores the wide-ranging applications of AI in research, highlighting real-world examples and case studies that demonstrate the transformative impact of AI across various disciplines.

Healthcare: AI has emerged as a game-changer in healthcare research, revolutionizing diagnostics, drug discovery, personalized medicine, and patient care. In diagnostic imaging, AI algorithms analyze medical images, such as X-rays, MRIs, and CT scans, to assist radiologists in detecting abnormalities and diagnosing diseases with greater accuracy and efficiency. For instance, DeepMind's AlphaFold AI system has demonstrated remarkable success in predicting the 3D structure of proteins, facilitating

drug discovery and protein engineering.

Moreover, AI-driven predictive analytics are transforming healthcare by enabling early disease detection, predicting patient outcomes, and optimizing treatment plans. For example, IBM's Watson for Oncology utilizes AI to analyze patient data and medical literature to recommend personalized cancer treatment options based on individual patient characteristics and clinical evidence. Similarly, AI-powered virtual health assistants, such as Babylon Health's chatbot, provide patients with personalized medical advice, triage services, and remote monitoring, improving access to healthcare services and enhancing patient outcomes.

Finance: In the financial sector, AI technologies are revolutionizing research methodologies, portfolio management, risk assessment, and fraud detection. AI-based trading algorithms leverage predictive analytics to forecast market trends, optimize investment strategies, and mitigate financial risks. For instance, quantitative hedge funds like Renaissance Technologies and Two Sigma employ sophisticated AI algorithms to analyze vast amounts of financial data and execute high-frequency trades with minimal human intervention.

Sentiment analysis techniques, powered by AI, analyze social media feeds, news articles, and market data to gauge investor sentiment and market volatility. By identifying emerging trends and market sentiments, financial researchers can make informed decisions and capitalize on market opportunities. Moreover, AI-driven fraud detection systems employ anomaly detection algorithms to identify fraudulent activities, detect suspicious transactions, and prevent financial crimes in real time.

Social Sciences and Humanities: AI tools and techniques are increasingly being applied in social sciences and humanities research to analyze textual data, uncover patterns, and gain insights into human behavior, culture, and society. Text mining and natural language processing (NLP) techniques enable researchers to analyze large volumes of textual data, such as social media posts, academic papers, and historical documents, to identify trends, sentiments, and themes.

For example, researchers use topic modeling algorithms, such as Latent Dirichlet Allocation (LDA) and Non-negative Matrix Factorization (NMF), to uncover hidden topics and themes within textual data, facilitating literature reviews, content analysis, and knowledge discovery. Similarly, sentiment analysis techniques analyze the sentiment expressed in textual data, enabling researchers to gauge public opinion, sentiment, and attitudes towards specific topics, products, or events.

Environmental Research: In environmental research, AI technologies are being leveraged to analyze complex environmental datasets, monitor ecosystems, and predict environmental changes. Remote sensing data, such as satellite imagery and aerial photographs, are analyzed using AI algorithms to monitor deforestation, track changes in land cover, and assess the impact of human activities on the environment.

For instance, Conservation Metrics' TrailGuard AI system utilizes AI-powered cameras to detect and alert authorities to the presence of poachers in protected wildlife areas, helping to combat illegal wildlife trafficking and protect endangered species. Similarly, AI-driven models and simulations are used to predict climate change, assess environmental risks, and inform policy decisions aimed at mitigating the impact of climate change on ecosystems and human societies.

Engineering and Physical Sciences: In engineering and physical sciences research, AI technologies are driving innovations in materials science, robotics, and complex systems modeling. AI-driven materials discovery platforms leverage machine learning algorithms to accelerate the discovery and development of new materials with desirable properties for various applications, such as energy storage, catalysis, and electronics.

For example, researchers at MIT's Computer Science and Artificial Intelligence Laboratory (CSAIL) have developed AI algorithms that can predict the mechanical properties of materials based on their chemical composition and crystal structure, enabling the design of new materials with specific mechanical properties. Similarly, AI-powered robotics systems are revolutionizing manufacturing processes, logistics, and automation, enabling robots to perform complex tasks with precision and efficiency.

Ethical Considerations in AI-Driven Research: Despite the transformative potential of AI in research, its integration raises significant ethical concerns regarding data privacy, bias, transparency, and accountability. The use of sensitive personal data in research studies necessitates robust privacy safeguards and informed consent mechanisms to protect individuals' rights and autonomy. Moreover, AI algorithms are susceptible to biases inherent in training data, which can perpetuate existing disparities and discrimination in research outcomes.

Transparency and interpretability are essential aspects of ethical AI research, as researchers must be able to understand and explain the decisions made by AI systems. Explainable AI (XAI) techniques, such as model interpretability methods and algorithmic transparency frameworks, aim to enhance the accountability and trustworthiness of AI-driven research systems. Furthermore, interdisciplinary collaborations between researchers, ethicists, policymakers, and industry stakeholders are crucial for developing ethical guidelines and regulatory frameworks to govern the responsible use of AI in research.

Conclusion: Artificial Intelligence (AI) has become a cornerstone in modern research, providing researchers with invaluable tools to propel scientific progress, foster innovation, and confront pressing societal issues. Its capacity to process vast volumes of data, identify patterns, and predict outcomes has significantly expedited the pace

of scientific discoveries and breakthroughs. However, unlocking the full potential of AI in research necessitates a conscientious approach that addresses ethical considerations, prioritizes transparency, and upholds responsible AI practices.

Ethical considerations are paramount in the deployment of AI in research. Researchers must navigate complex ethical dilemmas, including privacy concerns, algorithmic bias, and transparency issues, to ensure that AI technologies are utilized in a manner that respects human rights and promotes fairness. Transparency is equally essential, as it enables stakeholders to understand the decision-making processes of AI systems and assess the reliability of AI-generated insights. By embracing transparency and ethical guidelines, researchers can foster trust among stakeholders and ensure that AI technologies are deployed responsibly.

In Conclusion, AI presents unparalleled opportunities to revolutionize research methodologies and practices. However, realizing its full potential requires a concerted effort to navigate ethical complexities, promote transparency, and foster interdisciplinary collaborations. By adhering to ethical principles and embracing interdisciplinary approaches, researchers can harness the transformative power of AI to drive scientific innovation, improve human welfare, and foster inclusivity in research endeavors.

References:-

1. Bojarski, M., Del Testa, D., Dworakowski, D., Firner, B., Flepp, B., Goyal, P., ... & Zhang, X. (2016). End to end learning for self-driving cars. arXiv preprint arXiv:1604.07316.
2. Ching, T., Himmelstein, D. S., Beaulieu-Jones, B. K., Kalinin, A. A., Do, B. T., Way, G. P., ... & Greene, C. S. (2018). Opportunities and obstacles for deep learning in biology and medicine. Journal of The Royal Society Interface, 15(141), 20170387.
3. Esteva, A., Kuprel, B., Novoa, R. A., Ko, J., Swetter, S. M., Blau, H. M., & Thrun, S. (2017). Dermatologist-level classification of skin cancer with deep neural networks. Nature, 542(7639), 115-118.
4. Finkelstein, J., Friedman, C., &Hripcsak, G. (2000). A tool for creating and managing well-annotated data sets of biomedical text. AMIA Annual Symposium Proceedings, 2000, 189.
5. Floridi, L., & Cowls, J. (2019). A unified framework of five principles for AI in society. Harvard Data Science Review, 1(1).
6. LeCun, Y., Bengio, Y., & Hinton, G. (2015). Deep learning. Nature, 521(7553), 436-444.
7. Mittelstadt, B. D., Allo, P., Taddeo, M., Wachter, S., &Floridi, L. (2016). The ethics of algorithms: Mapping the debate. Big Data & Society, 3(2), 2053951716679679.
8. Rajkomar, A., Dean, J., &Kohane, I. (2019). Machine learning in medicine. New England Journal of Medicine, 380(14), 1347-1358.
9. Russell, S., & Norvig, P. (2016). Artificial intelligence: A modern approach. Pearson.
10. Silver, D., Huang, A., Maddison, C. J., Guez, A., Sifre, L., Van Den Driessche, G., ... & Dieleman, S. (2016). Mastering the game of Go with deep neural networks and tree search. Nature, 529(7587), 484-489.
11. Silver, D., Schrittwieser, J., Simonyan, K., Antonoglou, I., Huang, A., Guez, A., ... & Hassabis, D. (2017). Mastering the game of Go without human knowledge. Nature, 550(7676), 354-359.
12. Topol, E. J. (2019). High-performance medicine: the convergence of human and artificial intelligence. Nature medicine, 25(1), 44-56.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

क्रीड़ा चिकित्सा का महत्व : वर्तमान खेलों के संदर्भ में

कु. भारती चंदेल*

* क्रीड़ा अधिकारी, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – ओलम्पिक खेल जो की ब्राजील के रियो डी जनेरियो में 5 से 21 अगस्त 2016 तक आयोजित किया गया था में यह नियम था कि यदि कोई खिलाड़ी प्रतियोगिता के समय खेल मैदान पर घायल हो जाता है तो खेल को रोक दिया जाता था और नियम यह था की पीडित खिलाड़ी को किसी तरह की औषधि लेनी की अनुमति नहीं थी। यदि खिलाड़ी कोई औषधि लेना चाहता है तो चिकित्सक की निगरानी में ही ले सकता था। यह नियम डोपिंग रोकने के लिए थे। ऐसे में खिलाड़ियों के लिए 'क्रीडा चिकित्सा' एक कारगर उपचार पद्धति साबित हुई। चिकित्सा के क्षेत्र में क्रीड़ा चिकित्सा के उपयोग से एक नये युग की शुरूआत हुई है। यह पूरी दुनिया के सामने एक नये चिकित्सा उपकरण के रूप में आया है। चिकित्सकों के सामूहिक प्रयासो से चिकित्सा के क्षेत्र में उपचार का नया द्वार खुला है। वर्तमान समय में व्यायाम के क्रियाकलाप इतने प्रचलित हो गये हैं कि उनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि क्रीड़ा चिकित्सा का भविष्य बहुत उज्जवल है। इसे सूक्ष्म रूप से देखें तो पता चलता है कि यह चिकित्सा विज्ञान की एक शाखा है। जिसका संबंध खिलाड़ियों के स्वास्थ्य को बनाए रखने शारीरिक प्रदर्शन को बढ़ाने तथा रोगों की रोकथाम से होता है। क्रीड़ा चिकित्सा सिद्धांतों का अध्ययन और अभ्यास है। साथ ही खेलों के विज्ञान से संबंधित है। विशेष रूप से खेल स्पर्धाओं के दौरान चोट और निदान उपचार, चोट के दौरान रोकथामए खेल प्रशिक्षण सहित एथेलेटिक प्रदर्शनए व्यायाम और खेल पोषणए खेल मनोविज्ञान के क्षेत्र में कारगर है। इसका उद्देश्य खेलो के दौरान खिलाड़ी को लगने वाली चोट के लिए सावधान करना है साथ ही चोट के दौरान खिलाड़ियों द्वारा बरती जाने वाली सावधानियां और उपचार है।

शब्द कुंजी – शरीर क्रिया विज्ञान, खेल चिकित्सा, क्रीडा चिकित्सा, पोषक तत्व, शरीर रचना, संतुलित आहार, खेल अभ्यास, शारीरिक ऊर्जा, स्नायुतंत्र, मस्तिष्क, शिक्षण प्रशिक्षण, खेल अभ्यास, जल उपचार, किरणीय उपचार, पराध्वनि तरंग उपचार, चिकित्सीय कारक, मनोवैज्ञानिक चिकित्सा, वार्मिंग, अनुकूलन, खेल कौशल, रगड, गुमचोट, विदारण, चीरा, मोच, खिचांव।

प्रस्तावना – आज के प्रतिस्पर्धात्मक समय में जहां प्रत्येक खिलाडी उत्कृष्ट प्रदर्शन के लिए नहीं, बल्कि मेडल प्राप्त करने के लिए खेल में हिस्सा ले रहा है, खेल का मैदान युद्ध मैदान के समान प्रतीत होता है। आज खिलाड़ी विरोधी का रूप धारण कर चुके हैं। उनका मुख्य उद्देश्य केवल दूसरे खिलाड़ी को किसी भी प्रकार से हराना या परास्त करना रह गया है।

प्रथम आने की होड़ में खिलाड़ी यह भूल ही जाता है कि उनका शरीर भी कंकाल से निर्मित है। तथा वह कुछ ऐसी तरीकों अथवा कौशलों का प्रयोग करने का प्रयास करते है जिसे उनका शरीर बर्दाश्त नहीं कर पाते।

जिससे शरीर चोट ग्रस्त हो जाता है। चोट ग्रस्त होने की संभावनाएं जितनी खिलाड़ियों में होती है, उतनी एक आम मनुष्य को नहीं होती। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि खिलाड़ियों को एक आम मनुष्य की तुलना में अधिक मात्रा में शारीरिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

आज के समय में क्रीडा चिकित्सा का होना बहुत जरूरी हो गया है इसी कारण सन 1928 में अन्तर्राष्ट्रीय क्रीडा चिकित्सा संगठन की स्थापित की गई है। इस संगठन को फीन्स (FIMS) के नाम से भी जाना जाता है। क्रीड़ा चिकित्सा के विषय में जागरूकता बढ़ाने तथा इसकी अधिक से अधिक जानकारी प्रदान करने के लिए यह संगठन एक त्रैमासिक पत्रिका भी प्रकाशित करता है। केवल यही नहीं वह दो वर्षों के अंतराल पर शारीरिक क्षमता तथा चिकित्सा कांग्रेस सम्मेलनों का आयोजन भी करता है। क्रीड़ा चिकित्सा के क्षेत्र में लोगों की रूचि को बढ़ाने के लिए कई प्रकार के अन्य प्रयत्न भी किए जा रहे है।

क्रीड़ा चिकित्सा का महत्व

खेल औषधि विज्ञान और क्रीड़ा चिकित्सा इतना महत्वपूर्ण हो गया है कि इसे विश्व स्तरीय मान्यता प्राप्त हो गई है। विश्व के अनेक देशों के सामने हमारे देश में भी खेल विशेषज्ञों ने इसे स्वीकृति प्रदान की है। वास्तव में खेल औषधि विज्ञान भारत जैसे विकासशील देश में औषधियों से ही संबंधित नहीं है बल्कि यह खेलों में बेहतर प्रदर्शन तथा 'आधुनिक खेल औषधि विज्ञान' से भी संबंधित होता है। आज यह स्वयं को विकसित कर चुका है। किसी भी खेल में भाग लेने से खिलाड़ियों की शारीरिक तथा मानसिक स्थितियों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। जिनके कारण खिलाड़ी के शरीर और मासपेशियों में खिचावट तथा मस्तिष्क में तनाव उत्पन्न होता है। आज खेल प्रतियोगिताओं में बेहतर प्रदर्शन करना तथा उनमें विजय प्राप्त करनाए किसी भी प्रकार से सरल कार्य नहीं रह गया है। इस कठिन कार्य को करने में सभी खिलाडियों को खेल औषधि विज्ञान का सहारा लेना पड़ता है। यही कारण है कि आज के समाज में विभिन्न व्यक्ति इस प्रकार की चिकित्सा को विकसित करने के लिए समर्थन प्रदान करते हैं।

खेल चिकित्सा में खिलाड़ी, खेल प्रशिक्षक, ट्रेनर एवं शारीरिक शिक्षक आदि का बहुत महत्व है। खेलो के विभिन्न क्षेत्रों में खिलाड़ी की चयन प्रक्रिया,

पोषण, ट्रेकिंग विधियां, शारीरिक दक्षता, चोटों से रक्षा, बचाव एवं इलाज खिलाड़ी का दैनिक कार्यक्रम, नई तकनीकों का उपयोग खिलाड़ी का पूर्ण परीक्षण खेल के दौरान खिलाड़ी की कार्य विधि एवं मनोवैज्ञानिक दशा तथा खेलों एवं क्रीडाओं की वैज्ञानिक उन्नति आदि में इस औषधि विज्ञान की बहुत आवश्यकता पड़ती है।

एक मनुष्य की शारीरिक क्षमता शारीरिक दक्षता के कुछ विशिष्ट घटकों पर निर्भर करती है तथा इन्ही घटकों का उपयोग व्यक्ति अपने प्रतिदिन की क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए करता है। यही तथ्य एक खिलाड़ी पर भी लागू होता है। वह खेल कौशलों को सीखने तथा उनमें निपुणता प्राप्त करने के लिए इन्हीं शारीरिक दक्षता के घटकों को प्रयोग करता है परन्तु प्रतिदिन की क्रियाओं तथा कौशलों का अभ्यास करते समय विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना एक साधारण व्यक्ति तथा एक खिलाड़ी को करना पड़ता है। तथा इन समस्याओं का निवारण करने के लिए उन्हें औषधि विज्ञान एवं खेल औषधि विज्ञान को प्रयोग करने की आवश्यकता महसूस होती है। शारीरिक दक्षता के घटकों की कमी होती है तथा इस प्रकार की स्थिति में केवल खेल औषधि विज्ञान ही समाधान प्रदान खेल के दौरान एक खिलाड़ी के क्षतिग्रस्त होने की संभावनाएँ उस समय अधिक हो जाती है सर्वप्रथम चिकित्सक द्वारा पता लगाया जाता है कि खिलाड़ी की चोट किस प्रकार की है तथा तत्पश्चात् उन विधियों का प्रयोग किया जाता है जिनका उपयोग खिलाड़ी की चोट का उपचार करने के लिए किया जा सकता है। इस प्रकार की अनुसंधान क्रिया के पश्चात खिलाड़ी के प्रशिक्षक को उसकी सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करने का कार्य भी चिकित्सक द्वारा किया जाता है। जिसमें विभिन्न प्रकार के विषयों का समावेश होता है, जिनमें से महत्वपूर्ण व्यायाम कार्यकीय, चिकित्सा संबंधित अभ्यास इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि खेल विज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा होती है खेल औषधि विज्ञान तथा रक्षात्मक औषधि विज्ञान।

खेल औषधि विज्ञान का क्षेत्र किसी भी प्रकार से नया नहीं है जिसका प्रमाण यह है कि इसके उद्गम स्थान तथा समय को खोजने का प्रयास वैदिक काल की धार्मिक पुस्तकों से प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है। वास्तव में खेल औषधि विज्ञान को एक विशिष्ट क्षेत्र के रूप में स्थापित करने का सुझाव कई वर्षो पूर्व स्थापित किया गया था कि जिसके अंतर्गत खेलों के दौरान विभिन्न प्रकार के रक्षात्मक तथा चिकित्सकीय साधनों को प्रयोग करने का परामर्श प्रदान किया गया। खिलाड़ियों का खेल प्रदर्शन एवं राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर परिणाम प्रभावित होते है। खेल औषधि विज्ञान के उद्देश्यों की पूर्ति की आवश्यकताएं खिलाड़ी के प्रदर्शन में इन सभी उपरोक्त कारकों को सही एवं सफलतापूर्वक उपयोग में लाने के लिए खेलों से संबंधित सभी व्यक्तियों संयुक्त प्रभाव ही खिलाड़ी का प्रदर्शन होता है। चिकित्सा खेल वर्तमान युग में बहुत व्यापक स्तर पर अपना कार्य कर रही है जिसकी खेल एवं शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में निम्नलिखित आवश्यकता पड़ती है:–

1. खिलाड़ी के प्रदर्शन स्तर के नियमित परीक्षण
2. ट्रेनिंग कार्यक्रम तैयार करना है।
3. खिलाड़ी का संतुलित आहार तैयार करना ।
4. प्रशिक्षकों के लिए ट्रेनिंग विधियों को खोजने का साधन
5. पूर्ण दक्षता प्राप्त करना।
6. खेल चोटों को काम करना
7. खेल चोटों के इलाज एवं पुनर्वास
8. प्रतिभावान खिलाड़ियों के पहचान एवं चयन।

खेल चिकित्सा की परिभाषाऐं

'खेल चिकित्सा विज्ञान के अंतर्गत खिलाड़ी की विभिन्न कार्यकीय, मनोवैज्ञानिक तथा पैथोलॉजिकल समस्याओं का विशिष्ट अध्ययन किया जाता है। जिससे उनकी शारीरिक दक्षता को बनाए रखा जा सके या उन्हें विकसित किया जा सके।

खेल चिकित्सा एक ऐसी शाखा होती है जो खिलाड़ी के स्वास्थ्य को बनाए रखने तथा उसके शारीरिक प्रदर्शन को विकसित करने से संबंधित होती है।

खेल चिकित्सा विज्ञान औषधि विज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा होती हैए जिसमें विज्ञान के विभिन्न विषयों का समावेश होता हैए जैसे रसायन शास्त्र जैव यात्रिकीए भौतिक चिकित्सा तथा हड्डी रोग विशेषज्ञ आदि।

खेल चिकित्सा के उद्देश्य

खिलाड़ियों के स्वास्थ्य को सुरक्षा प्रदान करना वर्तमान समय में खेलों तथा शारीरिक क्रियाओं को बहुत महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है जिससे कई ऐसे साधनों तथा उपकरणों का आविष्कार किया गया है जिन्हें प्रयोग करने के लिए खिलाड़ियों के भीतर की सम्पूर्ण मांसपेशियों का तथा अंगों को कार्यशील होना पड़ता है। यदि खिलाड़ी की मांसपेशियां सही प्रकार से कार्य नहीं कर पाएंगी अथवा कुशलतापूर्वक कार्य करने में अयोग्य होगी तो उन्हें विभिन्न प्रकार के रोग घेर सकते है। इसलिए यह सुनिश्चित करना अति आवश्यक होता है कि खिलाड़ी के शरीर में उपस्थित सभी मांसपेशियां कुशलतापूर्वक कार्य करती है तथा वह पूर्ण रूप से स्वस्थ हैं। खिलाड़ियों के स्वस्थ्यता स्तर को मापने के लिए समय–समय पर उनका परीक्षण किया जाना चाहिए।

अधिशिक्षण के कार्यक्रमों की योजना निर्मित करना विभिन्न खेलों में प्रशिक्षण कार्यक्रम को निर्मित करने से पूर्व खिलाड़ियों की शारीरिक तथा मानसिक क्षमताओं को मूल्यांकित करना अति आवश्यक होता है तथा इन क्षमताओं के आकलन से प्राप्त होने वाले परिणामों के आधार पर ही प्रशिक्षण कार्यक्रम को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से निर्मित किया जाना चाहिए। प्रशिक्षण कार्यक्रम को निर्मित करते समय अन्य तथ्य ध्यान रखा जाना चाहिए, वह हैं खिलाड़ी की आयु तथा खेल की प्रकृति।

विवेचना: क्रीडा चिकित्सा का सम्बन्ध निम्नलिखित विषयों से है :

1. शरीर रचना (Anatomy) का अध्ययन किया जाता है।
2. शरीर क्रिया (Physiology) विज्ञान के साथ खेल चिकित्सा का सीधा संबंध है क्योकि इसमें शरीर की भीतरी अंगों व उनके कार्यो का अध्यन किया जाता है।
3. पोषक तत्व एवं संतुलित आहार सीधे ही क्रीड़ा चिकित्सा से जुड़ता है। यदि खिलाड़ी को संतुलित भोजन मिलेगा तो उसके शरीर को खेल अभ्यास के लिए अधिक ऊर्जा मिलेगी। इससे खिलाड़ी की क्षमता बढ़ेगी।
4. स्नायुतंत्र का गठन मस्तिष्क कार्य आदि क्रियाओं से भी क्रीडा चिकित्सा से सम्बन्ध है, क्योंकि व्यक्ति प्रतिदिन दैनिक क्रिया के रूप में जो कार्य करता है एवं खेलो के दौरान जो कार्य करता है यह पूर्ण रूप से इन्ही के द्वारा संचालित किया जाता है।
5. क्रीड़ा चिकित्सा का क्षेत्र मानव शास्त्र विषयों से भी सम्बंधित है। इस विषय के माध्यम से व्यक्ति शिक्षण प्रशिक्षण एवं अन्यास आदि

क्रियाओं को सही ढंग से सम्पन्न करता है। व्यक्तिगत स्तर पर प्रतिक्रिया काल का मूल्यांकन करता है वास्तव में इन सभी प्रकार की क्रियाओं का क्रीड़ा के अन्दर काफी महत्व है।

6. क्रीडा चिकित्सा का सम्बन्ध समाजशास्त्र से भी है, इसमें क्रीड़ा के क्षेत्र में भाग लेने वाले खिलाड़ीयों की सामाजिक दृष्टिकोण से चिकित्सा की जाती है।
7. क्रीडा चिकित्सा विभिन्न प्रकार की औषधियों से सम्बन्धित विकारों को समाप्त करने का प्रयास क्रीड़ा चिकित्सा के माध्यम से सम्पन्न किया जाता है।
8. क्रीडा चिकित्सा एवं बल विज्ञान का आपस मे घनिष्ट सम्बन्ध है। व्यक्ति क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए बल का प्रयोग करता है। बगैर बल के किसी भी कार्य को सम्पन्न नही किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि क्रीडा पूर्ण रूप से इसी पर आधारित है।
9. क्रीडा चिकित्सा का गति विज्ञान से भी अत्याधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है। क्रीड़ा के क्षेत्र विभिन्न प्रकार की क्रियाओं को सम्पन्न करते समय शरीर के जोड़ो एवं अंगो में जो हरकत होती है, उनके सम्बन्ध में इसी विषय के माध्यम से गहनतम अध्ययन सम्भव है।

इलाज से परहेज बेहतर – कभी–कभी खिलाड़ी को इस प्रकार की चोट लग जाती है कि वह दोबारा कभी नहीं खेल सकता। उसका खेल जीवन ही समाप्त हो जाता है। हालांकि बहुत सी चोटों का उपचार हो सकता हैए लेकिन फिर भी यह एक कटु सत्य है कि इलाज से परहेज बेहतर होता है। इसलिए एथलीट्स या खिलाड़ी खेल चोटों के खतरों को कम या समाप्त करना चाहते हैं। खासकर जब वे प्रशिक्षण या खेल प्रतियोगिता में भाग ले रहे हो।

उचित वार्मिंग – निम्न उपाय कारगर साबित हो सकते हैं किसी भी खेल प्रतियोगिता या खेल प्रशिक्षण आरंभ करने से पहले उचित ढंग से वार्मिंग अप करना अत्यंत आवश्यक है। खेल चोटों के खतरों को काफी सीमा तक कम किया जा सकता हैए क्योंकि उचित वार्मिंग अप करने के बाद हमारे शरीर की मासपेशिया अर्थतनाव की स्थिति में आ जाती है। जो शरीर को शारीरिक क्रिया करने के लिए तैयार कर लेती है।

उचित अनुकूलन– बहुत सी चोट शरीर की कमजोर मासपेशियों की वजह से हो जाती है जो आपके खेल जीवन को ही समाप्त कर देती है। इसलिए उचित मासपेशियाँ शक्ति के लिए शरीर का उचित अनुकूलन आवश्यक है। इसके लगातार अभ्यास से कई सारी चोटों से आसानी से बच जा सकता हैं। साथ ही प्रतियोगिताओं के दौरान लगने वाली चोटों के प्रति भी सचेत होते है अत: अक्सर खेल प्रशिक्षक भार व प्रशिक्षण विधियां उचित अनुकूलन की सलाह देते हैं जो कि बेहद आवश्यक और महत्वपूर्ण विधियां हैं।

संतुलित आहार – संतुलित आहार सही किस्म के भोजन एवं तरल पदार्थ से शरीर को पोषक तत्व व ऊर्जा प्राप्त होती है ताकि शरीर अपनी कोशिकाओं का रखरखाव कर सके और सामान्य वृद्धि एवं विकास को सुनिश्चित बना सके आहार वह सामग्री भी प्रदान कराता है जिससे हमारा शरीर अपने टिशुओं का निर्माण एवं क्षतिग्रस्त टिशुओं की मरम्मत करता है और अंग व तंत्र को नियंत्रित की क्षमता प्रदान करता है।

क्रीड़ा स्किल का उचित ज्ञान – प्रतियोगिता में भाग लेने से होने बाली चोटों से बचाव के लिए क्रीड़ा स्किन का उचित ज्ञान या जानकारी बहुत आवश्यक है। एक खिलाड़ी को संबंधित क्रीड़ा स्किल की सही–सही जानकारी होना चाहिए। उदाहरण के लिए कबड्डी के मैदान में उतरने से पहले खिलाड़ी को संबोधित खेल से संबंधित स्किल की पूरी जानकारी होनी चाहिए। यदि वह इस कौशल में दक्ष है तो वह उन कौशलों की वजह से दुर्घटना से पूरी तरह से सुरक्षित रह सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 श्रीवास्तव, डॉ. अभय कुमार: शरीर व्यायाम क्रियात्मक विज्ञान एवं क्रीड़ा चिकित्सा
2. भोगल, आरएस : योग एवं मानसिक स्वास्थ्य
3. www.zigyz.com
4. www.oneindia.com
5. www.healthcarestudies.in.uk
6. www.hi-m.lliveok.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ग्रामीण आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अध्ययन

डॉ. राकेश कुमार चौहान*

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सरदार वल्लभ भाई पटेल शासकीय महाविद्यालय, कुक्षी (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत की संस्कृति और सभ्यता की सम्पूर्णता अपने आप में अनूठी है। इसका प्रमुख कारण यहाँ के निवासियों की विभिन्न सांस्कृतिक अस्मिता है, जो अपने आप में एक मिसाल है, वहीं एकात्मकता भारतीय अस्मिता की परिचायक है। इसीलिए भारत को एकता में अनेकता का देश कहा जाता है। विभिन्न प्रजातीय तत्वों का मिश्रण होने के कारण कभी-कभी इसे प्रजातियों का अजायबघर भी कहा जाता है। यहाँ वन प्रदेशों तथा पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करने वाले अनेक मानव-समुदाय मानव सभ्यता के विकास क्रम में विभिन्न कारणों से पृथक रह गये, फलत: विकास का प्रकाश वहाँ तक नहीं पहुँच पाया। इन दुर्गम और पृथक क्षेत्रों में निवास करने वाले मानव समुदाय सभ्यता की दृष्टि से अभी भी प्रारंभिक सोपानों पर ही हैं।

कुंजी शब्द– ग्रामीण आदिवासी, संस्कृति, मानव सभ्यता।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश का दक्षिणी-पश्चिमी भाग जनजातीय भारत के नाम से जाना जाता है।एक लम्बे अरसे से पिछड़े एवं आदिवासी क्षेत्रों को उनकी अपनी सांस्कृतिक धरोहर को बनाये रखते हुए विकास करना एवं राष्ट्रीय मुख्य धारा से जोड़ा जाना महत्वपूर्ण चुनौती रही है। इसी के अनुरूप बदलते परिवेश में आदिवासियों की समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है।

शोध विषय का चयन – शोध कार्य के लिए मध्यप्रदेश के जनजाति बाहुल्य झाबुआ जिले का चयन किया गया है। झाबुआ जिले **'ग्रामीण आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अध्ययन'** विषय बहुत ही महत्वपूर्ण है। ग्रामीण आदिवासी परिवारों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति किस प्रकार की है ? इस महत्वपूर्ण प्रश्न से संबंधित बिन्दुओं का अध्ययन करने के लिए इस शोध विषय का चयन किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. ग्रामीण आदिवासियों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण आदिवासियों के समक्ष उत्पन्न समस्याओं का विश्लेषण करना।

अध्ययन का महत्व – इस शोध अध्ययन के माध्यम से ग्रामीण आदिवासियों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति से संबंधित विभिन्न पहलूओं जानकारी प्राप्त हो सकेगी और उनके समक्ष उत्पन्न समस्याएँ को समझने का अवसर मिलेगा जो आदिवासी विकास की नीति निर्धारकों के लिए महत्वपूर्ण होगा।

अध्ययन का क्षेत्र – शोध कार्य के लिए मध्यप्रदेश के जनजाति बाहुल्य झाबुआ जिले का चयन किया गया है। इस जनजाति बाहुल्य जिले में सर्वधिक जनजाति जनसंख्या निवास करती है।

निदर्शन प्रक्रिया

1. अध्ययन का समग्र – इस शोध कार्य के समग्र के रूप में अध्ययन हेतु चयनित आदिवासी आधिक्य झाबुआ जिले के जनजाति परिवारों को शामिल किया गया है।

2. अध्ययन की इकाई – अध्ययन की इकाई के रूप में झाबुआ जिले के जनजाति परिवारों में से कुल 360 आदिवासी परिवारों का चयन उत्तरदाताओं के रूप में दैव निदर्शन पद्धति से किया गया है।

उत्तरदाताओं का चयन – शोध कार्य की पूर्ति के लिए उत्तरदाताओं का चयन शोध के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर **सोद्देश्य प्रतिचयन विधि** से किया गया है। झाबुआ जिले से कुल 360 आदिवासी परिवारों का चयन **सोद्देश्य प्रतिचयन विधि** से किया गया है।

आँकड़ों का संकलन – ग्रामीण आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति के अध्ययन से संबंधित इस शोध की पूर्ति के लिए प्राथमिक आँकड़ों एवं द्वितीयक आँकड़ों का संकलन किया गया है।

आँकड़ों के संकलन के स्रोत – अध्ययन क्षेत्र के आदिवासी उत्तरदाताओं से संकलित किए गए प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों का वर्गीकरण, श्रेणीकरण एवं सारणीकरण के बाद में तथ्यों का विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गए, जिसके आधार पर शोध कार्य की पूर्ति की गई है।

अध्ययन के निष्कर्ष

1. आदिवासियों की आयु-संरचना के आधार पर स्पष्ट है कि अधिकतर (51.17 %) आदिवासी 40-50 वर्ष की आयु के हैं तथा लगभग 34 प्रतिशत आदिवासी 30-40 वर्ष के आयु वर्ग में शामिल है। जोबट तहसील में लगभग 54 प्रतिशत आदिवासी 40-50 वर्ष की आयु के हैं, वहीं भाबरा तहसील में इस आयु वर्ग के 50 प्रतिशत आदिवासी हैं। अत: अध्ययन से स्पष्ट है कि तहसील स्तर पर आदिवासियों की आयु में सार्थक अंतर नहीं है। इस विश्लेषण में एक बात सबसे महत्वपूर्ण यह है कि ज्यादातर आदिवासी मध्यम आयु वर्ग के हैं। सामान्यत: मध्यम आयु वर्ग के व्यक्ति अपनी पारिवारिक एवं सामाजिक जिम्मेदारियों का निर्वहन अच्छे तरीके से करते हैं।
2. आयु-संरचना एवं व्यावसायिक स्थिति के दृष्टिकोण से देखें तो स्पष्ट है कि कृषि कार्य में संलग्न लगभग 55 प्रतिशत आदिवासी 40-50 वर्ष के आयु वर्ग के है तथा इसी कार्य में संलग्न लगभग 31 प्रतिशत आदिवासी 30-40 वर्ष की आयु के है। विभिन्न व्यवसायों में संलग्न 50 प्रतिशत

आदिवासी 40-50 वर्ष के तथा लगभग 33 प्रतिशत आदिवासी 30-40 वर्ष की उम्र के है। मजदूरी करने वाले लगभग 51 प्रतिशत आदिवासी 30-40 वर्ष की आयु के हैं तथा लगभग 37 प्रतिशत आदिवासी 40-50 वर्ष की आयु वर्ग के है। स्वतंत्रता के परीक्षण से जो परिणाम प्राप्त हुए हैं, उनके अनुसार आयु का व्यावसायिक-संरचना पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात् विभिन्न कार्यों में संलग्न आदिवासियों की आयु में सार्थक नहीं अंतर है। आदिवासी लोग काम की उपलब्धता/अनुपलब्धता के कारण अपने रोजगार क्षेत्र में संलग्न होते हैं, न कि आयु के प्रभाव से।

3. आदिवासियों की उपजाति के वर्गीकरण के आधार पर स्पष्ट है कि लगभग 62 प्रतिशत आदिवासियों की उपजाति भील है तथा लगभग 29 प्रतिशत आदिवासियों की उपजाति भिलाला है तथा शेष आदिवासियों की उपजाति पटेलिया है। स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में सबसे अधिक भील जनजाति निवास करती है।

4. वैवाहिक स्थिति के संबंध में प्राप्त तथ्यों के अनुसार लगभग 83 विवाहित तथा शेष आदिवासी अविवाहित हैं।

5. आदिवासियों की शैक्षणिक-स्थिति के अनुसार लगभग 71 प्रतिशत आदिवासी अशिक्षित है। जोबट तहसील में लगभग 68 प्रतिशत आदिवासी अशिक्षित हैं, वहीं भाबरा तहसील में अशिक्षितों का प्रतिशत लगभग 74 है। अत: स्पष्ट है कि झाबुआ जिले के आदिवासियों की शिक्षा का स्तर काफी चिंताजनक है। यह तथ्य वर्ष 2001 कि जनगणना से भी स्पष्ट हो गया है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में साक्षरता दर 36.89 प्रतिशत है। यह जिला मध्यप्रदेश का सबसे कम साक्षरता दर वाला है। अशिक्षा के कारण आदिवासियों को अपने जीवन में अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है।

6. जो आदिवासी शिक्षित हैं, उनकी शिक्षा के स्तर के संबंध में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि लगभग 64 प्रतिशत केवल प्राथमिक स्तर तक शिक्षित है तथा लगभग 14 प्रतिशत माध्यमिक स्तर तक ही शिक्षित है। उच्च शिक्षित आदिवासियों का प्रतिशत लगभग 6 है, जो सबसे कम है।

7. शैक्षणिक-स्थिति एवं व्यावसायिक-संरचना की स्थिति को देखें तो स्पष्ट है कि कृषि करने वाले लगभग 74 प्रतिशत आदिवासी अशिक्षित है तथा शेष कृषक शिक्षित है। विभिन्न व्यवसायों में संलग्न लगभग 71 प्रतिशत तथा नौकरी करने वाले सभी आदिवासी शिक्षित है। मजदूरी करने वाले 84 प्रतिशत आदिवासी अशिक्षित है।

8. शिक्षा के स्तर एवं व्यावसायिक-संरचना के संबंध में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि कृषि कार्य में संलग्न कुल शिक्षित आदिवासियों में से लगभग 78 प्रतिशत आदिवासी केवल प्राथमिक स्तर तक शिक्षित है तथा इस वर्ग में मात्र 5 प्रतिशत आदिवासी हाईस्कूल/हायर सेकंडरी तक शिक्षित है। कृषि में संलग्न आदिवासियों में से कोई भी उच्च शिक्षित नहीं है। दूसरी ओर विभिन्न व्यवसायों में संलग्न लगभग 83 प्रतिशत आदिवासियों ने हाईस्कूल/हायर सेकंडरी तक की शिक्षा प्राप्त की है। मजदूर वर्ग के सर्वाधिक (87.50%) आदिवासियों की शिक्षा का स्तर भी प्राथमिक शिक्षा तक ही है। नौकरी करने वाले सभी आदिवासी उच्च शिक्षित है।

9. आदिवासियों के परिवार के स्वरूप के संबंध में प्राप्त तथ्यों के अनुसार लगभग 57 प्रतिशत आदिवासियों के परिवार का स्वरूप एकाकी है तथा 43 प्रतिशत आदिवासियों के परिवार का स्वरूप संयुक्त है। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि जनजाति समाज में संयुक्त परिवार का महत्व धीरे-धीरे कम होता जा रहा है और दूसरी ओर एकल परिवार प्रणाली उसका स्थान ले रही है। उत्तराधिकारी एवं स्वामित्व की चाह तथा कमजोर आर्थिक स्थिति ऐसे महत्वपूर्ण कारण है, जो संयुक्त परिवार प्रणाली को तेज गति से विघटित कर रहे है। इस प्रकार अदिवासी समाज में एकाकी परिवार प्रणाली का विस्तार होता जा रहा है।

10. परिवार के स्वरूप एवं व्यावसायिक-संरचना के संबंध में प्राप्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि कृषि कार्य में संलग्न लगभग 53 प्रतिशत आदिवासी संयुक्त परिवार में रहते हैं तथा शेष आदिवासी एकाकी परिवार में रहते है। दूसरी ओर विभिन्न व्यवसायों (91.67%), मजदूरी (88.24%) तथा नौकरी (83.33 %) करने वाले आदिवासियों के परिवार का स्वरूप एकाकी है। अत: स्पष्ट है कि कृषि में संलग्न आदिवासी आज भी संयुक्त परिवार प्रणाली को महत्व देते हैं और इसी परिवार प्रणाली में रहना पसंद करते है। परिवार में अधिक सदस्य होने के कारण कई सदस्य अन्य सहायक क्षेत्रों में कार्य करते हैं और इस हेतु वे परिवार से अलग रहकर दूसरे गाँवों या शहरों में जाकर कार्य करते हैं, परन्तु परिवार को संयुक्त परिवार का आधार प्रदान करते हैं, जबकि दूसरी ओर व्यवसाय, मजदूरी एवं नौकरी पेशा लोगों में एकाकी परिवारों में रहने की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ती जा रही है। परिणामत: संयुक्त परिवार प्रणाली का विघटन होता जा रहा है।

11. आदिवासियों के परिवार के आकार के संबंध में प्राप्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि लगभग 43 प्रतिशत आदिवासी परिवारों के सदस्यों की संख्या 4-6 है तथा लगभग 40 प्रतिशत परिवारों में सदस्यों की संख्या 7-9 है। लगभग 13 प्रतिशत परिवारों में 10 से अधिक सदस्य है। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि अधिकांश आदिवासी ऐसे हैं, जिनके परिवारों में सदस्यों की संख्या 4 से अधिक है। आदिवासी समाज में परिवार का आकार सीमित नहीं है अर्थात् वे परिवार में सदस्यों की अधिक संख्या को महत्व देते हैं। उनका सोचना है कि अधिक सदस्य होंगे तो वे अधिक कार्य करेंगे और परिणामत: अधिक आय प्राप्त होगी, क्योंकि यह समाज अपने परिवार के कम उम्र के बच्चों को भी आर्थिक कार्यों में संलग्न कर देते हैं। इस प्रकार आदिवासी अर्थव्यवस्था के दृष्टिकोण से बड़ा परिवार आर्थिक समृद्धि का सूचक है।

12. परिवार के आकार एवं व्यावसायिक संरचना के संबंध में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि कृषि कार्य में संलग्न सभी आदिवासी परिवारों में 4 से अधिक सदस्य है। विभिन्न व्यवसायों में संलग्न अधिकांश (54.17%) आदिवासी परिवारों में भी 4 से अधिक सदस्य हैं। मजदूरी करने वाले आदिवासियों में यह अनुपात लगभग 80 प्रतिशत है। इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि कृषि, विभिन्न व्यवसायों एवं मजदूरी में संलग्न आदिवासियों के परिवार में सदस्यों की संख्या अधिक है। इसका महत्वपूर्ण कारण यह है कि कृषकों में संयुक्त परिवार प्रणाली अपनायी जाती है, वहीं व्यवसाय करने वाले आदिवासी ज्यादा शिक्षित नहीं है। इस वजह से वे छोटे परिवार के महत्व को नहीं समझ सकें है। मजदूरी करने वाले परिवारों के समक्ष पालन-पोषण की समस्या होती है और परिवार में अधिक सदस्य को लाभकारी मानते हैं।

उपसंहार - अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण के आधार पर प्राप्त निष्कर्षो से यह स्पष्ट है कि आदिवासी परिवारों के आर्थिक-सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती है और शिक्षा की ओर ध्यान दिया

जाना बहुत ही आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Singh, Jaspal (1991), Introduction to methods of Social Research, Sterling Publishers Pvt. Ltd., New Delhi, P-44.
2. यादव, मारकेण्डय सिंह (1994), आदिवासी समुदाय के स्वास्थ्य के कुछ पल, रावत पब्लिकेशंस, दिल्ली, पृ. 76-79
3. Singh, B. (1977), `Comparative Study of Seven Tribes Village of India :- Economic Diemention, The tribe, Vol. 13, No. 1, PP. 14-19
4. Pande, P.K. (1991), `Tribal Occupation & New Dynamics, Mittal Publications, New Delhi, P. 12
5. भार्गव, करूणा (1996), ग्रामीण-नगरीय संरचना, प्रिंटवैल, जयपुर, पृ. 256
6. Swarup, R. & Singh, Ranveer (1988), `Social Economic of a Tribal Village village, Mittal Publications, New Delhi, P. 41
7. Bairathi, Shashi (1991), `Tribal Culture, Economy & Health, Rawat Publication, Jaipur, P.54

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बाल लोक साहित्य और बाल विमर्श

डॉ. अनिता बिरला*

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय आदर्श महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – बाल लोक साहित्य का सृजन बाल जीवन के जन्म के साथ ही माना जाता है। यह साहित्य बालकों के लिए मौखिक, कल्पनाशील साहित्य है जिसका परित्याग करना सम्भव नहीं क्योंकि यह साहित्य बाल मन के साथ स्वत: प्रवाहित होता है। दादा – दादी और नाना – नानी की कहानियों और लोरियों के रूप में प्राय: सभी बचपन में इनका आस्वाद करते है। प्रारंभिक बाल साहित्य जो मौखिक रूप में लोककथाओं और लोरियों के रूप में प्राप्त होता है, वह लोक साहित्य का ही अंग है। इन्साक्लोपीडिया ब्रिटानिया के अनुसार, 'लोक साहित्य मौखिक रूप में प्रचलित संस्कृति है, जिसका कोई लिखित रूप नहीं होता है और जो परिचित लोगों द्वारा किसी समय आकार लेता है, यह आधुनिक विकसित संस्कृति के साथ – साथ विद्यमान होकर बच्चों व अशिक्षितों द्वारा जीवित रहता है, लेकिन अब यह धीरे – धीरे किताबों, अखबारों, रेडियो व दूरदर्शन द्वारा भी जन – जन तक प्रेशित हो रहा है। इनमें गीत, नृत्य नाटिका, कहानियाँ, कहावत और मुहावरे मुख्य है।'[1] बालकों के भविष्य निर्माण में घर के वातावरण के साथ–साथ बाल साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। शिशु सर्वप्रथम बाल साहित्य श्रुति परम्परा के रूप में प्राप्त करता है, इस श्रृव्य बाल साहित्य में पशु – पक्षी, राजा – रानी, परी आदि का उल्लेख मिलता है, अपने चुम्बकीय आकर्षण के कारण बाल लोक साहित्य जीवन भर बालक के साथ चलता है, बाल लोककथाएँ बाल – जीवन की संजीवनी है। दादी और नानी से कहानी सुने बगैर भला कोई बचपन आगे बढ़ सकता है ? इन कहानियों को सुन–सुन कर बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास सम्भव होता है। बालकों के मस्तिष्क में सामाजिक व्यवहार तथा एक–दूसरें की सहायता करने का बीजांकुर सहज रूप में बाल लोक साहित्य के द्वारा हो जाता है।

बच्चों को संस्कारित करने, उनमें मानवता के भाव भरने के लिए बाल लोक साहित्य एक सशक्त माध्यम है। बाल लोक साहित्य वाचिक परम्परा के रूप में अनादिकाल से चला आ रहा है। स्वराज्य सूची का कथन है 'मानव समाज में आदिकाल से ही लोककथाएँ प्रचलित है और अपनी व्यापकता और सार्थकता के आधार पर ये लोक जीवन में इतनी गहरी पैठ गई है कि ये जनमानस का संस्कार बन चुकी है।'[2]

बालक जब दादी नानी की गोद में बैठकर कहानी सुनाने की जिद करता है तो बुर्जुग कहानी, गीत, लोरी, पहेली सुनाकर उनका मनोरंजन करते थे। इन कहानियों, लोरियों,गीतों व पहेलियों से बालक में प्रेम, दया, सहानुभूति, परोपकार, धैर्य, लगन, साहस, चातुर्य, कौतूहल जैसे गुणों का विकास हो जाता था तथा वे आत्मविश्वास से परिपूर्ण चरित्रवान नागरिक के रूप में परिणित हो जाता था। बाल लोक साहित्य में बालक को संस्कारित करने की अद्‌भूत क्षमता है। इस साहित्य द्वारा नौनिहालों को बड़ी आसानी से संस्कारित किया जा सकता है। हिन्दी बाल साहित्य को दो भाग में बाँटा गया है पहले भाग में डॉ. परशुराम शुक्ल एवं विभा शुक्ल ने लिखा है 'पहले के अन्तर्गत उस लोक साहित्य को रखा जा सकता है, जो जन सामान्य का साहित्य था। दादा – दादी, नाना – नानी अथवा परिवार के अन्य सदस्य, बच्चों को प्राय: रात में सोते समय मनोरंजन अथवा नैतिकता से युक्त कथाएँ सुनाते थे। इनमें पंचतंत्र, हितोपदेश आदि की कहानियाँ भी होती थी। ये कहानियाँ अलिखित थी तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती थी।'[3] आज के बालक – बालिका घण्टों टी.वी. के पास बैठकर मनोरंजन करते है, लेकिन इन कार्यक्रमों में देश की संस्कृति, सभ्यता, जीवन व्यवहार, षिष्टाचार, नैतिक शिक्षा का अभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

आज जीवन की बढ़ती जटिलताओं का प्रभाव बच्चों पर स्पष्ट देखा जा सकता है। जीवन में टेलीविजन, मोबाईल एवं इंटरनेट का महत्व इतना बढ़ गया है कि मानव जीवन जैसे मशीन बन गया है, इस भागदौड़ में वर्तमान षिक्षा प्रणाली और सामाजिक व्यवस्था के कारण अभिभावकों की महत्वाकांक्षाओं के बीच बचपन खोता जा रहा है। सामाजिक जीवन की बढ़ती व्यस्तताओं से दादी – नानी का साथ नहीं मिल पा रहा है। फलस्वरूप दादी – नानी की कहानियों का संसार लुप्त होता जा रहा है, जब से बालक दादी – नानी के इस कथा संसार से वंचित हुआ है उसका मानसिक विकास थम सा गया है। मशीनी जीवनशैली ने बालक के मस्तिष्क को भी जंग सी लगा दी है, बालक की सहज व नैसर्गिक प्रतिभाएं खो सी गई है। मोबाईल, इन्टरनेट व कार्टून चैनलों ने बाल मन को विचित्र और डरावने साँचे में ढालने के प्रयास शुरू कर दिये है। आज समाज में बच्चों की जो स्थिति है, वह अत्यन्त विवादास्पद है। बदलते जीवन मूल्यों, समाज में फैला हुआ झूठ और भ्रष्टाचार, परम्पराओं का मोह और नई सदी की चुनौतियों के बीच फँसा बच्चा अपना भविष्य निर्धारित नहीं कर पा रहा है। परिवार उनकी पहली पाठशाला होती है, बच्चे भी वही सीखते है, जो वह अपने बड़ों को करते देखते है, लेकिन विडंबना यह है कि बड़े लोग ही आज समाज, राजनीति और परिवारों में दोहरी मानसिकता में जी रहे है। चाहे समाज के ठेकेदार हो, राजनेता हो, शिक्षक हो या अभिभावक सभी के दोहरे चेहरे होते है। बाहर से जिन आदर्शो की बात करते है, घर में वह नहीं होता। हाथी के दाँत खाने के और है, दिखाने के और। बच्चे तो वही सीखेंगे, जो अपने बड़ों को करते देखेंगे।

आज औद्योगीकरण, नगरीकरण और पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव के

कारण संयुक्त परिवार का विघटन हुआ है और एकल परिवार बनने लगे। संयुक्त परिवार के टूटने और एकल परिवार के बनने के बीच बच्चे की स्वयं की पहचान गुम हो गयी। संयुक्त परिवार में दादा – दादी और नाना – नानी बच्चों को अनेक कहानियाँ सुनाते थे, जो बच्चों का मनोरंजन तो करती ही थी उन्हें सांस्कृतिक मूल्य देकर उनकी विवेक शक्ति को भी जागृत करती थी किन्तु एकल परिवार में आ जाने से संयुक्त परिवार में जो संस्कार और संरक्षण मिलता था बच्चे आज उस सांस्कृतिक विरासत से धीरे–धीरे दूर होते जा रहे है। डॉ. हरिकृष्ण देवसरे लिखते है, 'लोककथाओं में मनोरंजन भी होता था और समसामयिक सामाजिक परिस्थितियों की मीमांसा भी। जब जैसी समस्याएं आई, उन्हीं के अनुकूल कथाएँ बनी। लोककथाओं के माध्यम से जीवन के अनुभव आने वाली पीढ़ियों को विरासत में देने की परम्परा का उद्देश्य यही था कि आने वाले समाज के प्रति वे पीढ़ियाँ सजग हो जाएँ। यह सजगता केवल समाज की समस्याओं के प्रति ही न थी, बल्कि समाज के प्रति उत्तरदायी बनाने की भी थी।'[4] मानसिक भूख जो दादा – दादी की कहानियाँ सरलता से शान्त कर देती थी, आज एकल परिवार में माता – पिता बच्चे को समय नहीं दे पाने के कारण उसकी मानसिक क्षुधा को शान्त करने में असमर्थ है। इसका परिणाम यह हुआ कि पिछले गत वर्षो में जो पीढ़ी तैयार हुई वह दिशाविहीन होकर संस्कारों से वंचित होती जा रही है। बालक जहाँ माता – पिता के ध्यान नहीं देने से उपेक्षित महसूस कर रहा है, वही माता – पिता के बीच होने वाले झगड़ों से स्वयं कुंठित व परेशान है, वही वह पाश्चात्य संस्कृति व मूल्यों के प्रति भी आकृष्ट हुआ है, सांस्कृतिक मूल्यों में हो रहे इस तरह के विघटन और उसके रंग में डूबनेवाले बच्चों के बारे में विद्धत जन, चिन्तक, राजनेता, षिक्षक व अभिभावक सभी आँख – कान बंद किए बैठे है। बच्चों की उपेक्षा के कारण जो सांस्कृतिक विस्फोट हो रहा है, उसके परिणाम बहुत भयावह होगें, इस कारण आज दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श की तरह बाल विमर्श पर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। इस विषय पर गहनता से विचार विमर्श किया जाना चाहिए। यदि भारत की बात की जाय तो यहाँ 20 करोड़ बच्चे है, यही भावी भारत के कर्णधार है जो प्रगति की मशाल को हाथ में लेकर सुदृढ़ भारत के निर्माण में अपनी महती भूमिका निभायेंगे।

बाल लोक साहित्य बच्चों में जिज्ञासा व कल्पना को जन्म देता है, जो बच्चों को मानव जीवन के प्रति जागरूक व आस्थावान बनाता है। वर्तमान युग के भौतिकता प्रधान जीवन ने बच्चों को निष्क्रिय सा बना दिया है, आज के चलचित्र लोककथाओं पर आधारित होते हुए भी बच्चों की जिज्ञासा को शान्त व कल्पनाशक्ति को विस्तार नहीं दे पा रहे है। बच्चों को सहज, सरल व पारिवारिक वातावरण देकर उसकी जिज्ञासा व कल्पनाशीलता की भावना का विकास करने का प्रयास करना चाहिए। उसमें धैर्य व साहस के गुण विकसित करने का कार्य किया जाना चाहिए। बच्चों को बाल लोक साहित्य के माध्यम से श्रृव्य – दृष्य सामग्री के माध्यम से, खेल के माध्यम से संस्कारित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। बालक के मस्तिष्क के अनुरूप अगाध संग्रह लोक साहित्य में व्याप्त है, अत: आवश्यक हैं कि बाल लोक साहित्य के रूप में संचित धरोहर का उपयोग करें व दिशाहीन होती बाल पीढ़ी को दिशा व संस्कार प्रदान करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पं. निमाड़ की जनजातियों के गीतों का तात्विक अनुशीलन : पृष्ठ 14
2. स्वराज्य सूची : उत्तरप्रदेश की लोककथाएँ भाग – 2, भू. : मई 1979
3. शुचिता सेठ : समकालीन हिन्दी बाल साहित्य : अंकित पब्लिकेशन, जयपुर
4. डॉ. हरिकृष्ण देवसरे : बाल साहित्य मेरा चिन्तन : मेघा बुक्स दिल्ली 2000

****

कौटिल्य के विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता

डॉ. माया रावत*

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय आदर्श महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – कौटिल्य के आर्थिक विचार, समृद्धि, सुरक्षा और समाज की सामाजिक व आर्थिक कल्याण पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। आदर्शवाद से हटाकर भौतिकवाद की आधारशिला पर रखा। वर्तमान युग भी भौतिकवाद को अधिक महत्व देता है। कौटिल्य की आर्थिक अवधारणा में राज्य की प्रभुता संरक्षण एवं सर्वव्यापी हस्तक्षेप की नीति अपनायी गई है।

शब्द कुंजी – अर्वाचीन उन्नति,अपवंचन,मन्त्री, पुरोहित, सेनापति, आयुक्त, नायक, दण्डपाल,बुद्धिजीवी, राजनीतिक चिन्तक, राजनेता।

प्रस्तावना – कौटिल्य के आर्थिक विचार, समृद्धि, सुरक्षा और समाज की सामाजिक व आर्थिक कल्याण पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। आदर्शवाद से हटाकर भौतिकवाद की आधारशिला पर रखा। वर्तमान युग भी भौतिकवाद को अधिक महत्व देता है। कौटिल्य की आर्थिक अवधारणा में राज्य की प्रभुता संरक्षण एवं सर्वव्यापी हस्तक्षेप की नीति अपनायी गई है।कौटिल्य के विचार आज भी कई मामलों में प्रासंगिक हैं। ये विचार समृद्धि, सुरक्षा, और समाज के कल्याण पर केंद्रित हैं। कौटिल्य के विचारों में नैतिक मानकों का महत्व भी शामिल है।

आर्थिक विचार–कौटिल्य के आर्थिक विचारों में समृद्धि, सुरक्षा, और समाज के कल्याण पर ध्यान दिया गया है। कौटिल्य के आर्थिक विचारों में भौतिकवाद की आधारशिला रखी गई है।

राजनीतिक विचार–कौटिल्य के विचारों में राज्य की प्रभुता, संरक्षण, और सर्वव्यापी हस्तक्षेप की नीति शामिल है, कौटिल्य ने राज्य के सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक और धार्मिक कार्यों के जरिए प्रजा के विकास का लक्ष्य रखा था।

न्याय प्रणाली–कौटिल्य ने न्याय प्रणाली और दंड व्यवस्था की विस्तृत विवेचना की है, कौटिल्य ने दो प्रकार के न्यायालयों का उल्लेख किया है – धर्मस्थीय और कण्टकशोधन।

भ्रष्टाचार–कौटिल्य ने राजकीय कर्मचारियों से ईमानदारी से कर्तव्यपालना का आग्रह किया था, भ्रष्टाचार पर कौटिल्य के विचार आज भी आधुनिक भारत में प्रासंगिक हैं।

कौटिल्य ने अपनी पुस्तक अर्थशास्त्र में शासन, भ्रष्टाचार के सिद्धांत एवं व्यवहार संबंधित मुद्दों पर चर्चा की है।कौटिल्य के अनुसार 'यथा राजा तथा प्रजा' का अर्थ है, किसी राज्य के लोगों का चरित्र वहाँ राजा के समान होगा। यदि राजा में नेतृत्व, जवाबदेही, बुद्धिमत्ता, ऊर्जा, अच्छा नैतिक आचरण तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ, त्वरित निर्णय लेने में सक्षमता आदि गुण हैं तो वह अपनी प्रजा को इन गुणों को अपनाने के लिये प्रेरित करेगा।

स्वरूप/ढाँचा:

1. वर्तमान भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में कई प्रकार की राजनीतिक कमियाँ व्याप्त हैं। जैसे अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, चुनाव प्रक्रिया को प्रभावित करने हेतु धन–बल का प्रयोग, भाई–भतीजावाद तथा वंशवाद आदि।
2. भारत की राजनीतिक संस्कृति में राजनीतिक विचारधारा के प्रति प्रतिबद्धता की कमी, राजनीतिक दलों में अवसरवादिता, गुटबाजी, लोगों को एकजुट करने हेतु पहचान की राजनीति अर्थात् जाति, धर्म, भाषा जैसे पहचान चिह्नों का उपयोग जैसे लक्षण परिलक्षित होते हैं।
3. हालिया समय में राजनीतिक दलों पर सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर फेक न्यूज, असहिष्णुता तथा उग्रवादी विचार फैलाने के आरोप लगाए गए हैं।
4. ये राजनीतिक लक्षण भारतीय लोगों को प्रभावित करते हैं और जैसा कि कौटिल्य ने 'यथा राजा तथा प्रजा' कहा था, लोगों में राजनीतिक नेतृत्व के चरित्र का अनुसरण करते हुए ये उनमें परिलक्षित होते हैं।
5. लोगों को एकजुट करने के लिये जाति, धर्म, भाषा आदि पहचान चिह्नों के इस्तेमाल की वजह से समाज में तनाव और संघर्ष बढ़ रहा है। हमारे नेताओं ने विविधता में एकता का संदेश दिया था, लेकिन हालिया समय में चुनाव जीतने हेतु इस विविधता का दुरुपयोग किया जा रहा है। कई सांप्रदायिक तथा जातिगत दंगे होते हैं जिनमें आम नागरिक आपराधिक हिंसा में शामिल होते हैं एवं 'यथा राजा तथा प्रजा' वाली उक्ति को पुष्ट करते हैं।

इसी प्रकार कर अपवंचन भी भारतीय अर्थव्यवस्था का एक लक्षण है। आम नागरिक आय के स्रोतों को जाहिर न करके कर में हेर–फेर और करों से बचने की प्रवृत्ति रखते हैं। इस तरह का भ्रष्टाचार राजनीतिक नेतृत्व से अलग नहीं है क्योंकि वह भी भ्रष्टाचार लिप्त होता है तथा वहाँ भी सार्वजनिक धन का इस्तेमाल अपने लिये किया जाता है।

वर्तमान भारतीय संदर्भ में फेक न्यूज का उपयोग का इस बात का परिणाम है कि राजनीतिक दल जानते हैं, इसके उपयोग से आम लोगों को भिन्न–भिन्न समुदायों के खिलाफ असत्यापित, असंतुलित जानकारी के माध्यम से पूर्वाग्रहित कर चुनावी लाभ उठाया जा सकते है। वर्तमान में यह

समाज में परिलक्षित भी हो रहा है, जहाँ लोग असत्यापित दावों पर प्रतिक्रिया कर रहे हैं। उदाहरण के लिये, भीड़ द्धारा की जाने वाली हत्याएँ, गुजरात और बेंगलुरु से प्रवासियों का पलायन आदि।

निष्कर्ष–कौटिल्य ने कहा है कि 'अपनी प्रजा के सुख में राजा की प्रसन्नता निहित होती है तथा उनके कल्याण में ही उसका कल्याण होता है। वह केवल उन बातों को अच्छा नहीं मानेगा जो उसे प्रसन्न करती हैं, बल्कि वह उन विषयों पर भी ध्यान देगा जो उसकी प्रजा के लिये लाभकारी हैं।' इसलिये भारत में राजनीतिक नेतृत्व को आत्मनिरीक्षण करने और भारतीय लोगों के कल्याण के लिये काम करने की आवश्यकता है। उन्हें नेतृत्व, सहिष्णुता, त्याग, प्रेम, विरोधी नेताओं के लिये सम्मान, अखंडता, नैतिक जिम्मेदारी जैसे गुणों को विकसित करना चाहिये। बाद में यह गुण आम लोगों में भी परिलक्षित होंगे।कौटिल्य के विचार आज भी प्रासंगिक हैं क्योंकि उनके विचारों में समृद्धि, सुरक्षा और समाज के कल्याण के प्रति चिंता है, कौटिल्य के विचारों में भौतिकवाद की आधारशिला रखी गई है, जो वर्तमान युग में भी प्रासंगिक है।

कौटिल्य के विचारों की प्रासंगिकता इस प्रकार है:

1. कौटिल्य के आर्थिक विचारों में समाज कल्याण को मुख्य केंद्र में रखा गया है।
2. कौटिल्य ने राज्य से अपेक्षा की थी कि वह गरीबों और असहायों की मदद करे।
3. कौटिल्य ने कहा था कि राजा की प्रसन्नता उसकी प्रजा के सुख में निहित होती है।
4. कौटिल्य ने विदेशी व्यापार के महत्व को स्वीकार किया था।
5. कौटिल्य ने करारोपण की दर कम करने की बात कही थी।
6. कौटिल्य ने एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना की बात कही थी।
7. कौटिल्य ने निर्धन वृद्ध जनों तक लाभ पहुंचाने की बात कही थी।
8. कौटिल्य ने भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ने की बात कही थी।
9. कौटिल्य ने लोक सेवकों और राजा के लिए नैतिक मानकों पर जोर दिया था।
10. कौटिल्य ने राजनीतिक नेतृत्व में सहिष्णुता, त्याग, प्रेम, और अखंडता जैसे गुणों को विकसित करने की बात कही थी।
11. कौटिल्य के राजनीतिक विचारों के बारे में विकिपीडिया पर ये जानकारी दी गई है।
12. कौटिल्य ने राजतंत्र की संकल्पना को अपने विचारों का केंद्र बनाया था।
13. राजा को अपने शत्रुओं की तुलना में मित्रों की संख्या बढ़ाने की सलाह दी थी.
14. निर्बल राज्यों को शक्तिशाली पड़ोसियों से सतर्क रहने की सलाह दी थी।
15. मंडल सिद्धांत दिया था।
16. राजा को युद्धों के लिए सक्षम रहने के लिए निरंतर शिकार करने की सलाह दी थी।
17. साम, दाम, दंड, और भेद की नीति को श्रेष्ठ बताया था।
18. राजा को चार वेदों और सरकार के चार विज्ञानों (अंविकिकी, त्रयी, वार्ता, और दंडनीति) से परिचित होने की सलाह दी थी।
19. राजा को कोष में शक्ति या बल पाने की सलाह दी थी।
20. राजनय का सांगोपांग विवेचन और विश्लेषण किया था।
21. राजनयिक नियमों के निर्माण में राष्ट्रीय हित और राजतंत्र का सशक्त बनाना अपने मुख्य उद्देश्य के तौर पर रखा था।
22. नैतिकता का त्याग और धर्मनिरपेक्षता का मार्ग अपनाया था।
23. राजा को प्रशासन के सुचारू संचालन और लोगों के कल्याण के लिए प्रयासरत रहने की सलाह दी थी।

कौटिल्य के महत्त्व और राजनीतिक चिन्तन से उनकी देन – भारतीय राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में कौटिल्य एक महान् विभूति का नाम है। कौटिल्य प्राचीन भारत के महान् सम्राट् चन्द्रगुप्त का निर्माता और उसके वंश के साम्राज्य का संस्थापक है। वह यथार्थवादी विचारक, महान् कूटनीतिक, व्यवहारवादी राजनीतिज्ञ और नीतिशास्त्र का महान् विद्वान् था, परन्तु दुर्भाग्य से इस महान् बुद्धिजीवी, राजनीतिक चिन्तक, राजनेता और सुप्रसिद्ध 'अर्थशास्त्र' के लेखक के जीवन के बारे में प्रामाणिक तथ्यों का अभाव है। यह कितने आश्चर्य की बात है कि उनका कोई एक नाम भी सुनिश्चित नहीं है। उन्हें कौटिल्य, चाणक्य अथवा विष्णुगुप्त तीन नामों से जाना जाता है।कौटिल्य भारत के प्रमुख राजनीतिक विचारक हैं। उनकी रचना 'अर्थशास्त्र' में संवैधानिक, राजनीतिक,कटनीति आर्थिक समाज व परिवार से सम्बन्धित जीविका विचारों का अनोखा संग्रह है, जिन पर कोई भी भारतीय गर्व सकता है।

कौटिल्य के महत्त्व और राजनीतिक चिन्तन से उनकी देन का उल्लेख निम्न प्रकार किया जा है। भारतीय राजनीतिक चिन्तन के पिता कौटिल्य भारतीय राजनीतिक चिन्तन के पिता हैं। जैसे प्लेटो और अरस्तु पाश्चात्य राजनीतिक चिंतक के पिता माने जाते हैं।भारत के राजनीतिक विचारकों पर उनका (कौटिल्य कर) प्रभाव देखा जा सकता है।कामन्दक, कालिदास, कात्यायन,सोमदेव सूरी पर उनके विचारों का स्पष्ट प्रभाव है।

अर्थशास्त्र सभी विचारों का सार– कौटिल्य से पहले भारतीय राजनीतिक चिन्तन इधर-उधर बिखरा हुआ था, कौटिल्य ने उस चिन्तन को संग्रहीत करके उसका वैज्ञानिक विवेचन किया। नि:सन्देह अर्थशास्त्र पूर्व के सभी राजनीतिक विचारों का महत्त्वपूर्ण संग्रह और सार है।

राजनीति का स्वतन्त्र अध्ययन – कौटिल्य ने पहली बार राजनीतिशास्त्र को एक पृथक् शास्त्र बनाने का काम किया है। कौटिल्य से पहले धर्म और नैतिकता की पृष्ठभूमि में ही राजनीतिक विचारों का अध्ययन होता रहा था। कौटिल्य ने राजनीतिशास्त्र को ज्ञान की एक क्रमबद्ध, व्यापक और तर्कसंगत शाखा बनाया है।

सप्तांग सिद्धान्त – कौटिल्य की एक महान् देन उनका सप्तांग सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के द्वारा कौटिल्य ने राज्य के सात अंगों (प्रकृतियों) का उल्लेख किया हैय जैसे स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड और मित्र। यह सिद्धान्त आज भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं, जितने कौटिल्य के समय में महत्त्वपूर्ण थे।

कौटिल्य व्यावहारिक राजनीति के प्रणेता हैं– कौटिल्य व्यावहारिक राजनीति के जनक हैं। कौटिल्य ने शासन कला, कूटनीति, विदेश नीति, आदि के सम्बन्ध में व्यावहारिक विचार प्रकट किये हैं। इस दृष्टि से कौटिल्य की रचना 'अर्थशास्त्र', अरस्तु की रचना 'पॉलिटिक्स' से भी श्रेष्ठ है।

दण्डनीति (राजनीति) की प्रधानता– कौटिल्य ने धर्म को राजनीति से पृथक् ही नहीं किया है, वरन् राजनीति को धर्म से ऊपर रखा है। कौटिल्य सभी विद्याओं की सिद्धि को दण्डनीति पर आधारित मानता है। कौटिल्य के

शब्दों में, 'सम्पूर्ण सांसारिक जीवन (लोक यात्रा) दण्डनीति पर आश्रित है।' कौटिल्य ने दण्ड के उद्देश्य, स्वरूप, दण्ड निर्धारण के सिद्धान्त, मृत्यु दण्ड आदि का विस्तार से उल्लेख किया है। कौटिल्य की दण्ड व्यवस्था व्यावहारिक है।

लोक-कल्याणकारी राज्य के संस्थापक- कौटिल्य का राज्य पुलिस राज्य न होकर, श्लोक-कल्याणकारी राज्य है। कौटिल्य का राज्य अपने नागरिकों को वही सुख-सुविधाएँ देता है, जो आधुनिक युग की महत्त्वपूर्ण विचारधारा लोक-कल्याणकारी राज्य है। कौटिल्य ने राज्य के वही कार्य बताए हैं, जिन्हें आधुनिक राज्य करते हैं, जैसे- वाणिज्य व व्यवसायों की व्यवस्था, अस्पतालों का निर्माण, विधवा, अनाथो, रोगियों, दुखियों की आर्थिक सहायता, कृषि और पशुपालन, अनुसंधान आदि। कौटिल्य ने राजा और प्रजा के बीच पिता और पुत्र जैसे सम्बन्धों पर बल दिया है।

कौटिल्य के सामाजिक विचार-कौटिल्य ने सामाजिक व्यवस्था पर भी विचार प्रकट किये हैं। कौटिल्य ने 'वर्णाश्रम' धर्म का समर्थन किया है। उन्होंने विवाह, तलाक, वेश्यावृत्ति, शराब, जुआ, गोहत्या, ऋण, सूदखोरी, दास प्रथा आदि जैसी सामाजिक कुरीतियों पर भी प्रकाश डाला है।

प्रशासनिक व्यवस्था-कौटिल्य ने प्रशासनिक व्यवस्था पर भी विस्तृत रूप से प्रकाश डाला है। कौटिल्य ने विभिन्न प्रशासनिक अधिकारियों के विभिन्न कार्यों का उल्लेख किया हैय जैसे मन्त्री, पुरोहित, सेनापति, आयुक्त, नायक, दण्डपाल आदि। प्रशासन का जितना विस्तृत उल्लेख कौटिल्य ने किया है, उतना प्लेटो व अरस्तु ने भी नहीं किया है।

कौटिल्य की अन्य देन कौटिल्य की अन्य कई महत्त्वपूर्ण देन भी हैं, जैसे (क) (ख) राजदूत व्यवस्था, (ग) मण्डल सिद्धान्त, (घ) पाड्गुण्य नीति, (ङ) गुप्तचर व्यवस्था। मन्त्रिपरिषद्,

कौटिल्य ने अर्थव्यवस्था पर भी विस्तार से प्रकाश डाला है। कौटिल्य ने कृषि, जमीन, सिंचाई, पशुपालन, व्यापार-वाणिज्य, खानं और उद्योग जैसे आर्थिक पहलुओं पर विचार किया है। कौटिल्य ने राज्यकी कर नीति का भी विवेचन किया है। आज के समय में भी कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित कर नीति और अर्थव्यवस्था अपना महत्त्व रखती है।

निष्कर्ष- नि:सन्देह कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' भारतीय अर्वाचीन उन्नति का प्रतीक है। कौटिल्य ने जीवन से सम्बन्धित सभी पक्षों का वर्णन किया है। राज्य का जितना विशद् और व्यापक विवेचन कौटिल्य ने किया है।उतना किसी ने नहीं। कौटिल्य ने मैकियावली से लगभग 2000 वर्ष पहले यह कह दिया कि राजनीति और नैतिकता दोनों पृथक् पृथक् हैं। कौटिल्य ने राजतन्त्र का समर्थन अवश्य किया है, परन्तु उसका राजा निरंकुश नहीं है। कौटिल्य ने राजा के नैतिक कर्त्तव्यों पर बल दिया है। इसीलिए कौटिल्य अनैतिक भी नहीं है। कौटिल्य ने राजा की शिक्षा, गुणों, दिनचर्या, शक्तियों और कार्यों पर जो प्रकाश डाला है, उससे स्पष्ट है कि कौटिल्य का राजा नैतिक गुणों से युक्त है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यू.एस. स्मिथ, अरली हिस्ट्री आफ इन्डिया 1914 पेज 112-113
2. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, प्रथम अधिकरण
3. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, अधिकरण-15, अध्याय-1, श्लोक-
4. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 1/19/39
5. प्राचीन हिन्दू अर्थशास्त्र की रूपरेखा, नवराज चालिसे, पृष्ठ 188
6. कौटिल्य, अर्थशास्त्र 5/2
7. कौटिल्य, अर्थशास्त्र 5/90/2
8. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 2/5
9. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 2/21, 2/22
10. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 5/90/10
11. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, अनुवादक वाचस्पति गैरोला, चौबीसवाँ अध्याय
12. डी.आर. शामाशास्त्री KautilyasArthshastra
13. के.टी. शाह Ancient Foundations of Indian Economic thought
14. सन्तोष कुमार दास Economic History of Anicient India
15. के0वी0 रंगास्वामी Aspets of Ancient Indian Economic thought.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ऋतु परिवर्तन का वायु गुणवत्ता पर प्रभाव ग्वालियर नगर के विशेष संदर्भ में- एक भौगोलिक अध्ययन (2024)

अजय प्रताप*

* शोधार्थी (भूगोल) जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध अध्ययन के अन्तर्गत वायु गुणवत्ता सूचकांक (AQI) एवं वायु गुणवत्ता कैलेंडर-2024 से प्राप्त आंकडों को विश्लेषित किया गया है। आंकडों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि मौसम परिवर्तन के साथ वायु गुणवत्ता में भी परिवर्तन होता है। सर्दी के समय वायु गुणवत्ता खराब रहती है। जिसमें मुख्य प्रदूषक पी.एम 2.5 व पी.एम 10 का संकेद्रण बढ जाता है। गर्मी में प्रदूषणों का प्रभाव मध्यम स्तर का रहता है मानसून के समय प्रदूषण के स्तर में तीव्रता से कमी आती है। मानसून, वायु के लिये प्राकृतिक शोधक के रूप में कार्य करता है। नवंबर से जनवरी तक सर्दी के समय में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिये पर्याप्त उपाय किये जाने की आवश्यकता है। इस मौसम में प्रदूषण उच्च स्तर पर होता है। जिससे वायु गुणवत्ता खराब हो जाती है। श्वसन संबंधित समस्यायें उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है एवं श्वसन संबधित रोगो से ग्रसित लोगो के लिये गंभीर खतरा उत्पन्न होता है।
शब्द कुंजी – एक्यूआई, विश्व स्वास्थ्य संगठन, वायुगुणवत्ता कैलेंडर, पीएम10, पीएम 2.5, ओजोन, तापमान एवं वायुदाब।

प्रस्तावना – पर्यावरण, जीवन का आधार है। इसमें न सिर्फ मानव सम्मिलित है बल्कि समस्त जीव- जगत, एवं वनस्पति सम्मिलित है। पर्यावरण समस्त जैव-जगत की उत्पत्ति, विकास एवं अस्तित्व का आधार है। पर्यावरण, प्रकृति एवं मानव द्वारा निर्मित होता है, जिसमें मानव एक महत्वपूर्ण घटक है। प्राकृतिक पर्यावरण में पृथ्वी पर पाये जाने वाले जैव व अजैव दोनो घटकों को शामिल किया जाता है। मानव पर्यावरण के अन्तर्गत मानव द्वारा निर्मित सांस्कृतिक पर्यावरण को सम्मिलित किया जाता है। सामान्यत जैव व अजैव घटकों के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों में संतुलन रहता है। इससे स्वच्छ पर्यावरण का निर्माण होता हैं। प्रदूषण की मात्रा नही होती है। परन्तु सांस्कृतिक पर्यावरण के निर्माण से मानव ने प्राकृतिक पर्यावरण आवंछनीय परिवर्तन किये है। अवांछनीय परिवर्तन ने प्रदूषण को जन्म दिया। पर्यावरणीय प्रदूषण के कई प्रकार है:- वायु, जल, मृदा एवं ध्वनि प्रदूषण। इनमें वायु प्रदूषण एक महत्वपूर्ण प्रदूषण है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर पडता है। जिससे विभिन्न प्रकार के श्वास संबंधित समस्याओं को जन्म होता है।

वर्तमान में तेजी से बढते नगरीकरण, परिवहन सुविधाओं और औद्योगीकरण से वायु में कई प्रकार के ठोस, तरल या गैसीय अपशिष्ट छोड दिये जाते है, जिससे लोगो, जानवरों, पौधो, सम्पत्तियों एवं पर्यावरणीय को गम्भीर नकारात्मक प्रभाव होते है।

विश्व वायु गुणवत्ता रिपोर्ट-2023 में भारत विश्व में तीसरा सबसे अधिक प्रदूषित देश था। भारत में लगभग 96 प्रतिशत नागरिक विश्व स्वास्थ्य संगठन की गाइडलाइन से 7 गुना अधिक पी.एम. 2.5 के संकेन्द्रण का सामना करते हैं।

विश्व के 10 सबसे अधिक प्रदूषित शहरो में 9 शहर भारत से है- विश्व वायु गुणवत्ता रिपोर्ट- 2023। 2024 में ग्वालियर नगर में पीएम 2.5 का औसत वार्षिक संकेन्द्रण 44 एम.सी.एम.सी था, जो पीएम 2.5 के राष्ट्रीय मानक औसत वार्षिक 40 एम.सी.एम. से भी अधिक था वही विश्व स्वास्थ्य संगठन के वार्षिक औसत 5 एम.सी.एम के मानक से 8 से 9 गुना अधिक है। वायु प्रदूषण के कारण स्वास्थ्य संबंधित विकार उत्पन्न होते है। जीवन प्रत्याशा पर भी नकारात्मक प्रभाव होता है।

इसलिए ग्वालियर नगर में ऋतु परिवर्तन के साथ वायु प्रदूषण के स्तर में परितर्वन के प्रभाव का सूक्ष्म स्तरीय अध्ययन करने की आवश्यक्ता है।

शोध का उद्देश्य – वर्तमान समय में नगरीकरण एवं औद्योगीकरण तेजी से बढ रहा है, जिससे परिवहन विकास में भी तेजी आई है। नगरीकरण, औद्योगीकरण एवं यातायात तीनों के सम्मिलित प्रभाव से वातावरण में अवांछनीय पदार्थो का संकेन्द्रण लगातार बढा है इसने वायु प्रदूषण को जन्म दिया है, वायु प्रदूषण का जीव-जन्तुओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मानव भी इस वातावरण का अंग है। मानव स्वास्थ्य पर भी वायु प्रदूषकों का गंभीर प्रभाव होता है। इस शोध-पत्र के माध्यम से निम्नांकित उद्देश्यों के संबंध में अध्ययन किया जाएगा।

1. ग्वालियर शहर में प्रमुख वायु प्रदूषक का पता करना।
2. वायु प्रदूषकों के स्तर में मौसम परिवर्तन के प्रभाव का अध्ययन।
3. ग्वालियर शहर में वायु प्रदूषक के उत्पन्न होने के कारण।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध-पत्र में ग्वालियर नगर में प्रदूषण के स्तर का पता लगाने के लिए द्वितीय ऑकडो क़ा उपयोग किया जाएगा। राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर प्रदूषण मॉनीटरिंग रिपोर्ट एवं वायु गुणवत्ता कैलेंडर-2024 को आधार बनाया गया है। इन से प्राप्त आंकडो क़ो मासिक स्तर पर वर्गीकृत किया गया है। इसके साथ सरकारी प्रकाशनों एवं विभिन्न वेबसाइटों से प्राप्त ऑकडो का सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण किया जाएगा।

शोध का महत्व– प्रस्तुत शोध का महत्व न केवल अकादमिक क्षेत्र में है, बल्कि शहर के पर्यावरण एंव मानव स्वास्थ्य के लिये भी महत्वपूर्ण है। इस

शोध-पत्र के माध्यम से वायु प्रदूषण के कारणों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होगी। जिससे वायु प्रदूषण नियंत्रण के लिये नीति निर्माण में सहयोग प्राप्त होगा। मानव स्वास्थ्य पर वायु प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभावों के प्रति जागरूक करने में सहायक होगी।

अध्ययन क्षेत्र – ग्वालियर नगर 26.22° उत्तरी और 78.18° पूर्वी देशान्तर पर अवस्थित है। ग्वालियर नगर का क्षेत्रफल 289 वर्ग किलोमीटर है। अध्ययन क्षेत्र की समुद्र तल से औसत ऊँचाई 220 मीटर है परन्तु क्षेत्रीय उच्चावच में पर्याप्त भिन्नता भी है। अध्ययन क्षेत्र की जलवायु अर्द्ध शुष्क है। ग्रीष्म ऋतु में तापमान अत्यधिक बढ जाता है वही शीत ऋतु में अपेक्षाकृत अत्यधिक कम तापमान रहता है। अधिकांश वर्षा मानसून ऋतु में होती है। शीत ऋतु में पश्चिमी विक्षोभ के प्रभाव से भी वर्षा होती है। महाद्वीपीयता का प्रभाव होने के कारण ताप परास अधिक है। गीष्म ऋतु में वायु की गति अधिक, शीत ऋतु में कम तापमान एवं उच्च वायुदाब के प्रभाव से वायु की गति कम हो जाती है।

अध्ययन क्षेत्र में दो अपवाह तंत्र हैं। पश्चिमी व पूर्वी अपवाह तंत्र, स्वर्ण रेखा नदी का संबंध पश्चिमी अपवाह तंत्र से है सांक नदीं, इसकी सहायक नदी है, जिसका उद्गम लश्कर के दक्षिण-पश्चिम दिशा से हुआ है।

पूर्वी अपवाह तंत्र की प्रमुख नदी मुरार नदी है जिसे 'कपिली' नदी भी कहते हैं। यह वैशाली नदी की सहायक नदी है। यह नदी मुरार छावनी क्षेत्र में पश्चिमी एवं उत्तर पश्चिमी दिशा से बहती हुई उत्तरी सीमा को पार करती है।

विश्लेषण एवं परिणाम – भारत में केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) ने राष्ट्रीय आयु गुणवत्ता सूचकांक (NAQI) में अटख के लिये 8 वायु प्रदूषकों को शामिल किया है। जिनमें झच 10, झच 2.5, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2), सल्फर डाई ऑक्साइड (SO_2), कार्बन मोनो ऑक्साइड (CO), ओजोन (O_3), अमोनिया (NH_3) एवं लेड (Pb) को शामिल किया है।

राष्ट्रीय वायु गुणवत्ता निगरानी कार्यक्रम (NAMP) के अन्तर्गत केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) मुख्य 4 प्रदूषकों की नियमित निगरानी करता है। जिनमें पीएम10, पीएम 2.5, सल्फर डाई आक्साइड (SO_2) एवं नाइट्रोजन डाई आक्साइड (NO_2) है।

ग्वालियर शहर में प्रमुख वायु प्रदूषक – केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड ने प्रदूषकों के नियमित मॉनीटरिंग करने हेतु 4 अटख मॉनीटरिंग स्टेशन स्थापित किये हैं। जिनसे प्राप्त ऑकडों से शहर में प्रमुख वायु प्रदूषकों का पता लगाया जा सकता है।

प्राप्त ऑकडो से शहर के अंदर क्षेत्रीय स्तर पर वायु प्रदूषको का क्षेत्रीय स्तर पर वायु में प्रदूषक संयोजन की भिन्नता का पता लगाया जायेगा।

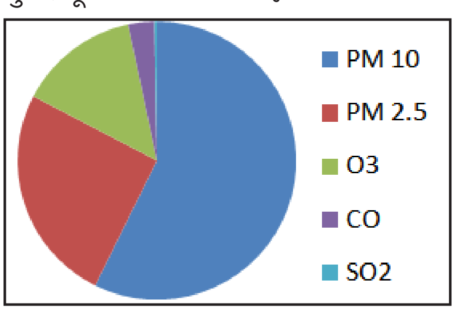

सिटी सेन्टर क्षेत्र में प्रमुख प्रदूषक (तालिका-1)

सिटी सेन्टर क्षेत्र में पी.एम.10 एवं पी.एम 2.5 प्रमुख प्रदूषक है। ओजोन एवं कार्बन मोनो आक्साइड प्रदूषको की भी उपस्थिति है।

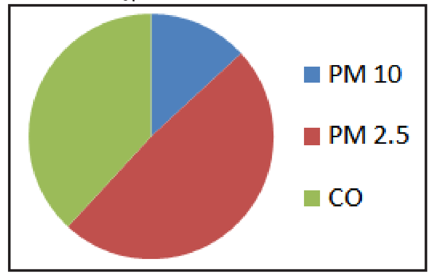

फूलबाग क्षेत्र में प्रमुख प्रदूषक (तालिका-2)

फूलबाग क्षेत्र में पीएम 10 एवं कार्बन मोनो ऑक्साइड प्रमुख प्रदूषक हैं। पीएम 2.5 प्रदूषक की मात्रा अपेक्षाकृत कम है।

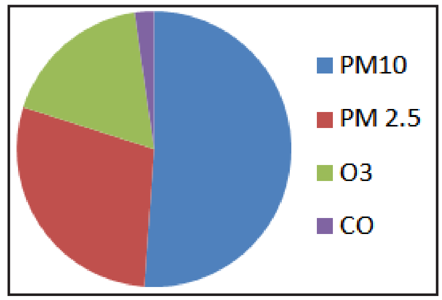

डी.डी. नगर क्षेत्र में प्रमुख प्रदूषक (तालिका-3)

डी.डी. नगर में पीएम 10 एवं पीएम 2.5 प्रमुख प्रदूषक हैं पीएम 10, 2.5 की अपेक्षा अधिक है। ओजोन प्रदूषक तीसरा प्रमुख प्रदूषक है। कार्बन मोनो ऑक्साइड की भी उपस्थिति है।

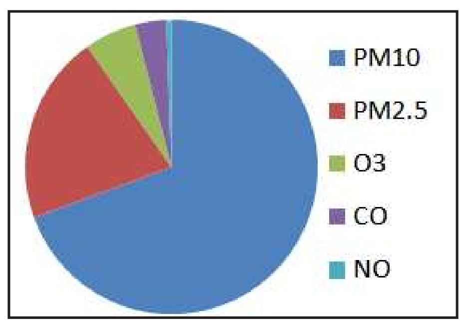

महाराज बाडा क्षेत्र में प्रमुख प्रदूषक (तालिका-4)

महाराज बाडा मे पीएम 10 प्रदूषक की उपस्थिति लगभग वर्षभर रहती हैं इसके अतिरिक्त पीएम 2.5 एवं ओजोन प्रमुख प्रदूषक हैं। कार्बन मोनो आक्साइड एंव नाइट्रोजन मोनो ऑक्साइड की भी उपस्थिति दर्ज की गयी।

वायु गुणवत्ता में मौसम परिवर्तन के साथ बदलाव

AQI स्तर – ए क्यू आई के अनुसार 2024 में विश्व के सबसे अधिक प्रदूषित शहरों में ग्वालियर की रैंकिंग 141 थी वही औसत वार्षिक एक्यू आई सूचकांक 111 था। जिसे संवेदनशील लोगो के लिये खराब श्रेणी में रखा जाता है। एक्यूआई सूंचकांक में मासिक एवं ऋतु परिवर्तन के साथ बदलाव देखने को मिलता है।

मासिक स्तर एक्यूआई सूचकांक (2024)

स्तर	एक्यूआई सूचकांक	महीना
मध्यम	51-100	जून(90), जुलाई(68), अगस्त(65) एवं सितम्बर (63)
खराब	101-150	फरवरी (129), मार्च (120), अप्रैल (101), मई (117), अक्टूबर (114), दिसम्बर (145)
अस्वास्थकर	151-200	जनवरी (159), नवम्बर (154)

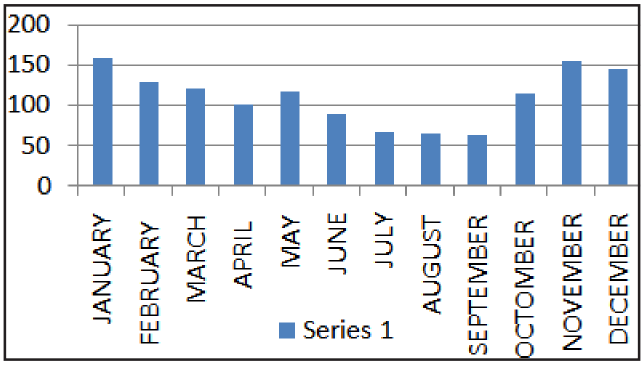

ऋतुओं के आधार पर विश्लेषण – ऋतु परिवर्तन के साथ एक्यू.आई सूचकांक में परिवर्तन होता है। सर्दी के समय वायु गुणवत्ता सबसे अधिक खराब रहती है अर्थात अस्वास्थकर गर्मी के समय वायु गुणवत्ता खराब रहती है मानसूनी वर्षा होने से वर्षा ऋतु में मध्यम स्तर की रहती है।

पी.एम 2.5– वायु प्रदूषण में पीएम 2.5 एक प्रदूषक है। ये वायु में उपस्थित बेहद सूक्ष्म कण होते हैं। जिनका व्यास 2.5 एम.सी.एम से भी कम होता है। जिन्हें इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप के माध्यम से ही देखा जा सकता हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वायु में इसका सीमा मान 5 एम.सी.एम. है लेकिन ग्वालियर नगर में पी.एम 2.5 वायु में प्रदूषक की वायु में औसत वार्षिक स्तर 44 एम.सी.एम है। मासिक स्तर पर वायु में उपस्थित पीएम 2.5 को ग्राफ एंव तालिका के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है।

पी.एम 2.5 का मासिक आधार पर वायु में संकेन्द्रण स्तर

स्तर	पीएम 2.5 (एम.सी.एम)	महीना
अच्छा	0-30	जुलाई (20), अगस्त (20), सितम्बर (20)
मध्यम	31-60	फरवरी (54), मार्च (47), अप्रैल (36) मई (46) जून (33) अक्टूबर (43)
खराब	61-90	जनवरी (78), नवम्बर (73), दिसम्बर (61)

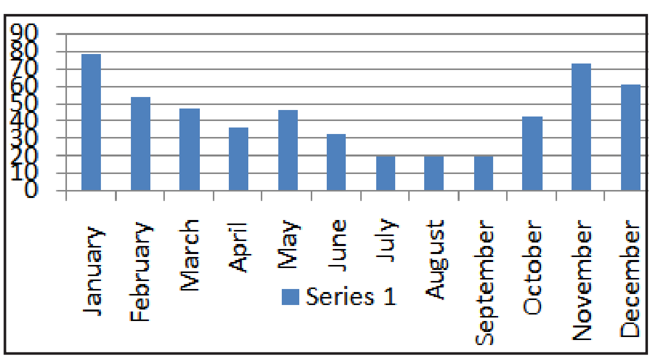

ऋतुओं के आधार पर विश्लेषण

सर्दी (नवम्बर-जनवरी)– तापमान में कमी, उच्च वायुदाब एवं पवन की गति धीमे होने के कारण पी.एम 2.5 का संकेन्द्रण अत्यधिक होने लगता है। जिससे वायु की गुणवत्ता प्रभावित होती है।

गर्मी (अप्रैल जून) –तापमाप बढने एवं कम वायुदाब के कारण वायु की गति तीव्र हो जाती है। सूक्ष्म कण वायु के साथ गति करते है। धुल भरी पवन के कारण कण वायु के साथ गति करते है। जिससे वायु की गुणवत्ता मध्यम स्तर की रहती है।

माननून (जुलाई- सिंतम्बर) मानसून आगमन से बर्षा होने लगती है जिससे पी.एम 2.5 का वायु में संकेन्द्रण कम हो जाता है। शहर के आसपास हरियाली में वृद्धि होती है। मानसून वायु के लिए एक शोधक का कार्य करता है इस समय वायु की गुणवत्ता सबसे अच्छी होती है।

मानसून पश्चात (अक्टूबर -नवम्बर) पुन: पी.एम 2.5 का संकेद्रण वायु में बढना प्रारम्भ हो जाता है। मानसून की अनुपस्थिति, तापमान में कमी एवं उच्च वायुदाब के विकास होने से वायु की गति कम होने लगती है। जिससे वायु की गुणवत्ता खराब होना शुरू हो जाती है।

पीएम 2.5 के उत्पत्ति के प्रमुख स्त्रोत

(1) वाहनो से निकलने वाला उत्सर्जन (2) औद्योगिक उत्सर्जन (3) बायोमास अवशिष्ठ के ज्वलन (4) डीजल वाहन उत्सर्जन

पी.एम 2.5 के स्वास्थ्य के प्रभाव – इस्केमिक हृद्रय रोड, फेफडो का कैंसर, क्रॉनिक ऑब्सट्रक्टिव पल्मोनरी डिजीज, श्वसन सक्रमंण (निमोनिया), स्ट्रोक, ऑखो में जलन, अस्थमा, टाइप 2 मधुमेह, प्रतिकूल जन्म प्रत्याशा

पी.एम-10– वायु में उपस्थित धूल व धुँए के छोटे कणों को पी.एम.10 कहते हैं। ये कण पार्टिकुलेर मैटर (पी.एम) का हिस्सा है इन्हे नग्न ऑखों से देखा जा सकता हैं इनका व्यास 10 एम.सी.एम या इससे कम होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार पी.एम.10 कणों का औसत दैनिक सांद्रता सीमा मान 50 एम.सी.एम व वार्षिक सीमा मान 20 एम.सी.एम है। पीएम10 का ग्वालियर नगर में मासिक स्तर पर वायु में सकेंद्रण को निम्न ग्राफ एवं तालिका में प्रदर्शित है।

पी.एम10 का मासिक आधार पर वायु में सकेन्द्रण स्तर

स्तर	पीएम 10 (एम.सी.एम)	महीना
अच्छा	0-50	जुलाई (43), अगस्त (42), सितम्बर (44)
मध्यम	51-100	अप्रैल (90) मई (86) जून (71) अक्टूबर (99)
खराब	101-250	नवम्बर (151), दिसम्बर (127) जनवरी (113) फरवरी (102), मार्च 120)

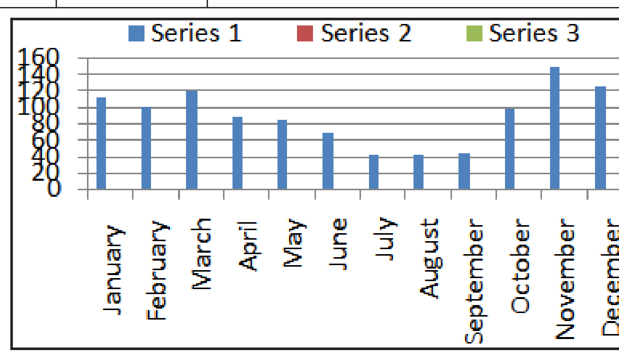

ऋतुओं के आधार पर विश्लेषण

सर्दी (नवम्बर –फरवरी) – निम्न तापमान, उच्च वायुदाब के कारण पवन की गति में कमी होने से पीएम 10 कणों का संकेद्रण अत्यधिक बढ जाता है। इस समय फसलों के अवशिष्ठों को जलाया जाता है इससे भी पीएम-10 के स्तर में वृद्धि होती है।

गर्मी (अप्रैल-जून)– गर्मी में तापमान बढने व वायु की तीव्र गति होने से धूल पवन के साथ गति करती है इसलिये पी.एम.10 का स्तर सर्दी की अपेक्षा कम रहता है।

मानसून (जुलाई– सितम्बर)–मानसून आगमन के कारण तीव्र गति से वर्षा होने लगती है। इसलिये इसमें अपेक्षाकृत पी.एम 10 का सकेन्द्रण बहुत कम होता है। वर्षा होने के कारण हरियाली बढ जाती है जिससे धूल वायु में कम हो जाती है।

मानसून पश्चात (अक्टूबर) पुन: पी.एम10 के संकेद्रण में बृद्धि होने लगती है वायु का तापमान कम होने लगता है। उच्च वायुदाब का प्रभाव होने लगता है। जिससे वायु ही गति कम होने लगती है एवं कृषि अवशिष्ठों के ज्वलन होने के कारण पीएम 10 की मात्रा वायु मे बढने लगती है।

पीएम 10 के उत्पत्ति के स्त्रोत – हवा में उडती हुई धूल, निर्माण स्थल पर, कचरा जलाना, वाहनों से उत्सर्जन एवं औद्योगिक उत्सर्जन

पी.एम 10 के स्वास्थ्य पर प्रभाव – श्वास लेने में दिक्कत, हृद्रय सम्बन्धी समस्याऐं, सीने मे जकड़न, गंभीर मामाले में समय से पहले मौत एवं जीवन प्रत्याशा में कमी।

ओजोन O_3 –तीन ऑक्सीजन परमाणुओ से मिलकर बना गैस अणु है। यह अत्यधिक प्रतिक्रियाशील गैस है। ओजोन पृथ्वी के वायुमंडल में कई स्तरो में पाई जाती है। ओजोन, स्मॉग का एक अहम हिस्सा है। ओजोन निर्माण गर्मी एवं अत्यधिक धूप के समय होता है। ग्वालियर शहर में O_3 एक प्रदूषक है जिसका प्रभाव गर्मी व तेज धूप के समय ही देखने को मिलता है। ओजोनका सकेन्द्रण फरवरी माह से लेकर जून तक देखने को मिलता है।

इसकी उत्पत्ति वाहनों के होने वाले उत्सर्जन, गैसोलीन एवं हाइड्रो कार्बन एवं नाइट्रोजन ऑक्साइड जैसी गैसों का तेज धूप में तीव्र अभिक्रिया के माध्यम से होता है। ओजोन से सीने में दर्द खॉंसी एवं फेफडो में कार्य क्षमता में कमी, त्वचा कैंसर अल्सर एवं मोतियाबिन्द जैसी स्वास्थ्य संबंधित समस्याऐं उत्पन्न होती है।

निष्कर्ष– ग्वालियर शहर के वायु प्रदूषण के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मौसम परिवर्तन के साथ प्रदूषण के स्तर में भी परिवर्तन होता है सर्दी के महीनों में प्रदषकों का सकेन्द्रण अत्यधिक हो जाता है। मानसून के समय इसमें कमी आ जाती है। मानसून प्राकृतिक शोधक के रूप में कार्य करता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अध्यन क्षेत्र में प्रमुख प्रदूषक पी.एम 2.5 व पी.एम. 10 है पार्टीकुलर मैटर के संकेन्द्रण को कम करने के लिये उपायों की आवश्यकता है। यातायात प्रबन्धन, औद्योगिक इकाईयों को शहर से बाहर स्थापित करना एवं निर्माण कार्यो को करते समय प्रदूषण नियन्त्रण इकाईयों के सुझावों को ध्यान में रखना चाहिये। शहर में हरित क्षेत्र को संरक्षित व संवर्धित करने की आवश्यकता है।

तालिका –1: सिटी सेन्टर (ए.क्यू.आई. 2024)

प्रदूषक	वर्ष में दिनों की संख्या	वर्ष में दिनों का प्रतिशत
पीएम 10	208	57.30
पीएम 2.5	92	25.34
ओजोन	51	14.05
कार्बन मोनो आक्साइड	11	3.03
कार्बन मोनो आक्साइड	11	3.03
सल्फर डाई आक्साइड	1	0.28

तालिका –2: फूलबाग (ए.क्यू.आई. 2024)

प्रदूषक	वर्ष में दिनों की संख्या	वर्ष में दिनों का प्रतिशत
पीएम 10	21	13.13
पीएम 2.5	78	78.75
कार्बन मोनो आक्साइड	61	38.13

तालिका –3: डी.डी. नगर (ए.क्यू.आई. 2024)

प्रदूषक	वर्ष में दिनों की संख्या	वर्ष में दिनों का प्रतिशत
पीएम 10	181	51.13
पीएम 2.5	102	28.81
ओजोन	63	17.6
कार्बन मोनो आक्साइड	8	2.25

तालिका –4: महाराजबाडा (ए.क्यू.आई. 2024)

प्रदूषक	वर्ष में दिनों की संख्या	वर्ष में दिनों का प्रतिशत
पीएम 10	243	69.43
पीएम 2.5	73	20.86
ओजोन	20	5.71
कार्बन मोनो आक्साइड	12	3.43
नाइट्रोजन मोनो आक्साइड	2	0.57

सदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. राजोरिया, धमेन्द्र कुमार (2020), ग्वालियर महानगर में वायु प्रदूषण द्वारा मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर
2. सह, साविन्द्र (2015) पर्यावरण भूगोल प्रयाग पुस्तक भवन इलाहाबाद
3. http://www.arthapedia.in/index.php/Ambient_Air_Quality_Standards_in_India
4. https://cpcb.nic.in/aboutnamp/#:~:text=Under%20N.A.M.P.%2 C%20four%20air%20pollutant s,and%20Fine%20Particulate%20Matter%20(PM2
5. https://www.aqi.in/in/dashboard/india/madhya-pradesh/gwalior
6. https://www.drishtiias.com/daily-updates/daily-news-analysis/world-air-quality-report-2023
7. https://www.aqi.in/in/dashboard/india/madhya-pradesh/gwalior
8. https://www.iqair.com/in-en/india/madhya-pradesh/gwalior
9. https://erc.mp.gov.in/EnvAlert/AQI

****

Nature as Fate: Thomas Hardy's Exploration of Environmental Determinism in His Wessex Novels

Pr Minu Gidwani*

***Asst. Professor (English) PMCoE, BKSN Govt. College, Shajapur (M.P.) INDIA**

Abstract : Thomas Hardy's Wessex novels portray the natural world not merely as a backdrop but as an active, deterministic force shaping human lives. This paper argues that Hardy employs environmental determinism—the idea that physical landscapes dictate societal and individual outcomes—to critique Victorian industrialization and social hierarchies. Through close readings of *Tess of the d'Urbervilles*, *The Return of the Native*, and *The Mayor of Casterbridge*, this study demonstrates how Hardy's settings (Egdon Heath, agrarian valleys, and industrializing towns) function as agents of fate, constraining characters' agency and reflecting broader tensions between rural tradition and modernity. Engaging with eco-critical theory and Darwinian discourse, the paper positions Hardy as a transitional figure who bridges Romantic nature worship and 20th-century ecological consciousness.

Keywords: Environmental determinism, Physical determinism, Victorian industrialization, Socio-economic structures, Eco-critical theory, Darwinian discourse, Anthropocentrism.

Introduction - In her analysis, Catarina Belo states, "determinism can be broadly defined as the theory that every event or substance in the world has a definite and necessary cause such that it could not have been otherwise" (Belo, 2). This definition implies that every action in the world is governed by fixed conditions, with such necessity manifesting in various ways for human beings. Owing to its association with necessity and causality, this idea is typically viewed as an ontological framework rather than an epistemological one. Moreover, this philosophical concept must not be confused with chance, since chance occurs spontaneously without a definite cause. Although recent scholarship has attributed many characteristics to 'determinism,' this study focuses primarily on physical determinism.

In this context, metaphysical determinism holds that everything in the cosmos is controlled by a single force, often identified as 'God's will' or 'Fate' (Taylor, 359). Conversely, physical determinism deals with the natural laws that determine the cause of each specific event, aiming to explain phenomena through inherent natural processes. In this view, although human actions seem to shape destiny, individuals remain subject to predetermined outcomes; differences in human behavior would consequently lead to differences in life trajectories. It is essential to recognize that these considerations are discussed hypothetically rather than as pure reality, and the notion of independence within such a deterministic framework is little more than the illusion of free will in an already preordained future.

Environmental determinism—the theory that geography and climate dictate human behavior and societal development—gained prominence in the 19th century alongside Darwinism and Industrialization. This concept posits that nature is not merely a passive backdrop but an active force shaping cultural practices, social structures, and individual destinies. Proponents argue that factors such as terrain and climate prescribe not only the economic and social fortunes of peoples but also their moral and psychological character.

In this context, Thomas Hardy's Wessex novels offer a compelling exploration of environmental determinism. His rural England—a blend of Romanticized pastoralism and harsh realism—serves as a stage where characters struggle against indifferent natural forces and socio-economic systems rooted in their environment. Roger Ebbatson notes in *Landscape and Literature 1830–1914 (2013)* that "Hardy's landscape is not a mere setting but an active, implacable force that imposes its own will upon human lives, determining the fates of characters as much as any plot device" (Ebbatson 45). Similarly, Gillian Beer observes in *Darwin's Plots(2009)* that "In Hardy's novels, the environment stands as a mute yet unyielding arbiter of fate, challenging the notion of human autonomy in an era defined by both natural and industrial upheaval"(Beer 112).

This paper examines how Hardy's ecosystems—such as heaths, farms, and villages—dictate moral choices, economic survival, and tragic outcomes. It situates his work within Victorian debates on progress, arguing that his

environmental fatalism critiques the era's unbridled industrialization. By analyzing key novels, this study reveals Hardy's belief that human aspirations are futile against the immutable laws of nature and society—a vision that resonates with modern ecological concerns.

Discussion

Thomas Hardy (1840–1928) stands as a pivotal figure in the evolution of English literature, occupying a unique position between the austere moralities of late Victorian fiction and the burgeoning modern sensibilities of the twentieth century. Although Hardy's literary career spanned diverse genres, his tragic novels—*Jude the Obscure* (1895), *The Mayor of Casterbridge* (1886), and *Tess of the D'Urbervilles* (1891)—have cemented his reputation. In an age defined by conservatism and prudish moral codes, Hardy's radical treatment of sex and marriage incited considerable controversy, with *Tess of the D'Urbervilles* in particular provoking vehement criticism from Victorian moralists. Some scholars argue that such backlash eventually impelled Hardy to retreat from the realm of fiction in favor of poetry. As Morgan observes, *Tess* "is perhaps the most notable of his literary creations to haunt his poetic imagination" (Morgan 177).

In Hardy's corpus, the interplay between fate and individuality is rendered with disquieting precision. Unlike his contemporaries, who upheld conventional virtues grounded in social institutions and public morality, Hardy redefines purity as an inner quality, an intrinsic essence rather than an external accolade. Nemesvari aptly remarks, "Hardy's great strength as a novelist lay in his representation of rural life, based on his own intimate knowledge of the countryside of southwest England" (Nemesvari83). The industrial revolution, which wrought havoc upon the rural communities of 19th-century Britain, serves as a crucial backdrop for Hardy's work. Farmers and laborers were not only deprived of their means of livelihood but also of the land itself—a loss that Hardy equates with a profound erosion of humanity, as nature stands as the core of all existence.

Hardy's keen observational prowess is manifest in the minutiae of his narrative technique. For instance, in *The Return of the Native*, the detailed portrayal of "drunk" wasps amid the fallen apples exemplifies his commitment to rendering nature in all its symbolic and literal dimensions. Consider the following passage:

There lay the cat asleep on the bare gravel of the path, as if beds, rugs, and carpets were unendurable. The leaves of the hollyhocks hung like half-closed umbrellas, the sap almost simmered in the stems, and foliage with a smooth surface glared like metallic mirrors. A small apple tree, of the sort called Ratheripe, grew just inside the gate, the only one which throve in the garden, by reason of the lightness of the soil; and among the fallen apples on the ground beneath were wasps rolling drunk with the juice, or creeping about the little caves in each fruit which they had eaten out before stupefied by its sweetness. (*The Return of the Native* 23)

This exquisitely detailed imagery is emblematic of Hardy's broader thematic concerns, wherein nature emerges as an omnipresent, deterministic force that not only mirrors but actively dictates human destiny. His landscapes—whether the vast, implacable Egdon Heath or the barren, industrializing backdrops of his novels—are not passive settings but vital, almost sentient actors in the unfolding drama of life. Hardy's work, therefore, invites us to reconsider the notion of human agency, suggesting that in the grand scheme of existence, the immutable laws of nature invariably constrain and shape our lives.

Thomas Hardy's *Tess of the d'Urbervilles* is a searing critique of Victorian socio-economic structures, where Tess Durbeyfield's tragedy emerges from the collision of environmental degradation, capitalist exploitation, and patriarchal oppression. Tess's family's poverty is rooted in the depleted farmland of the Vale of Blackmoor, a once-fertile landscape transformed into a "prison" by economic decline. Hardy's depiction of Flintcomb-Ash as a "starve-acre place" (Ch. 43, pp 363) underscores how environmental decay mirrors social decay. The barren fields and harsh conditions symbolize the collapse of agrarian livelihoods under industrial capitalism. Marxist critic Raymond Williams argues that Tess's migration reflects the proletarianization of rural workers, forced into mechanized labor that alienates them from the land.

The Vale of Blackmoor, initially idyllic, becomes a site of entrapment. As Tess moves to Flintcomb-Ash, her social descent is paralleled by the land's degradation, a metaphor for the erosion of rural autonomy under capitalist modernity. Hardy's description of Flintcomb's "blighted land" reflects what eco-feminist critics term the "interpenetration" of environmental and social collapse, where Tess's body and labor are commodified alongside the soil.

The novel's landscapes—from the fertile Valley to the desolate Flintcomb-Ash—serve as metaphors for socio-economic determinism. Stonehenge, where Tess is arrested, embodies the "primordial forces" of history and class that entrap her. Hardy's description of the stones as "altars of a vanished religion" underscores the futility of human struggle against immutable systems.

Eco-critical readings highlight how Tess's fate intertwines with environmental decay. Ramnarayan Panda argues that Hardy critiques anthropocentrism, showing how capitalist exploitation disrupts ecological harmony. The threshing machine scene (Ch. 47), where Tess becomes a "cog in the industrial apparatus," symbolizes the dehumanizing force of modernity, reducing her to a mechanized laborer .

In *The Return of the Native*, Egdon Heath transcends its role as a mere setting to become a primordial antagonist, a living entity that shapes the destinies of its inhabitants. Hardy's opening description of the heath as a "face on which

time makes but little impression" establishes it as an ancient, immutable force, resistant to human intervention and progress. Its "ancient permanence" and "sombreness" (Book 1, Ch. 1) reflect the futility of human endeavors, as the heath remains unchanged while human lives are fleeting and fragile.

Eustacia Vye, the novel's tragic heroine, perceives the heath as a "prison," a place of "netherward" desolation that stifles her aspirations for a life of passion and grandeur . Her celestial beauty and fiery spirit are at odds with the heath's barrenness, and her attempts to escape through romance with Clym Yeobright and Damon Wildeve are ultimately thwarted by the heath's oppressive geography and the storms that symbolize its wrath. As critic Jean R. Brooks observes, "Egdon Heath, the resistant matter of the cosmos, bears, shapes, nourishes, and kills conscious organisms possessed of its striving will without its unconsciousness of suffering". Eustacia's tragic end—drowning in Shadwater Weir—underscores the heath's role as an inescapable force that punishes those who rebel against its dominion.

Similarly, Clym Yeobright's idealism is crushed by the heath's unyielding nature. Returning from Paris with dreams of reforming rural education, Clym finds himself overwhelmed by the heath's "oppressive horizontality," which reduces him to a state of "bare equality with, and no superiority to, a single living thing under the sun". His gradual blindness, both literal and metaphorical, symbolizes his inability to see beyond the heath's constraints, and his eventual resignation to its rhythms reflects Hardy's deterministic worldview. As critic Avrom Fleishman notes, "Egdon Heath is not merely a setting but a figure in both narrative senses of 'figure,' as a person and as a trope, embodying the forces of nature and fate that govern human lives" (Fleishman 67).

Hardy's narrator reinforces this theme by declaring, "The sea changed, the fields changed, the rivers… but Egdon remained" (Book 1, Ch. 1). This statement frames the heath as a timeless, deterministic force, indifferent to human struggles and aspirations. The heath's unchanging nature contrasts sharply with the transient lives of its inhabitants, highlighting the futility of human efforts to control or escape their environment. As critic John Patterson argues, "Hardy's landscapes are transfigured in being juxtaposed with the grisly underworld of the ancients, evoking images of hell, limbo, and Tartarus to emphasize their role as places of suffering and entrapment" (Paterson 34).

The heath's symbolic significance extends beyond its physical attributes. It represents the broader forces of environmental determinism, shaping the moral and psychological character of its inhabitants. Eustacia's rebellion against the heath mirrors her defiance of societal norms, while Clym's submission to its rhythms reflects his acceptance of fate. The timelessness of the heath and the unlikely confluence of events that occur there blend to create a unique place where nature itself is unnatural. This interplay between human agency and environmental determinism lies at the heart of Hardy's tragic vision.

In conclusion, Egdon Heath is not merely a backdrop but a central character in *The Return of the Native*, embodying the forces of nature and fate that govern human lives. Its ancient permanence and oppressive stasis symbolize the futility of human endeavors, while its role as a deterministic force underscores Hardy's critique of Victorian progress and individualism. Through the heath, Hardy explores the tension between human aspirations and the immutable laws of nature, creating a powerful allegory of environmental determinism that resonates with modern ecological concerns.

Thomas Hardy's *The Mayor of Casterbridge* stands as a profound meditation on the inexorable march of industrialization and its existential implications within a cosmos indifferent to human suffering. Michael Henchard's tragic trajectory—from the heights of agrarian success to the depths of obscurity—serves as a microcosm of the Victorian era's fraught transition from rural tradition to mechanized modernity. Hardy's narrative, steeped in naturalistic fatalism, interrogates the Darwinian struggle for survival in a world where human agency is dwarfed by both socio-economic forces and the immutable laws of nature. Henchard embodies the vestiges of a pre-industrial order, his identity tethered to the rhythms of weather, soil, and manual labor. His initial rise as Casterbridge's corn factor and mayor hinges on an intuitive understanding of agrarian cycles, a mastery rendered obsolete by Donald Farfrae's "scientific" innovations. Farfrae, the Scotsman who introduces mechanized farming and rationalized business practices, epitomizes the encroaching industrial ethos. Hardy juxtaposes Henchard's reliance on "organic" intuition—such as his superstitious consultation of a weather prophet—with Farfrae's adoption of the horse-drill, a symbol of technological progress that "creates a stir in the market" (Hardy 123). This contrast underscores the novel's central dialectic: the displacement of humanistic, feudal modes of production by impersonal capitalist efficiency. As critic Perry Meisel observes, "Henchard's intuitive morality is rendered obsolete by Farfrae's economic rationalization, reflecting the broader shift from agrarian feudalism to industrial capitalism" (Meisel 102).

Hardy's Wessex is a universe devoid of divine providence, where nature operates as a Darwinian filter. Henchard's death in a "mud-filled hut," a relic of rural life, epitomizes this cosmic indifference. The narrator's stark declaration—"His will had been respected, and he was erased from the memory of the town" (Hardy 45)—resonates with the naturalist tenet that human existence is subject to amoral, deterministic forces. The environment itself becomes an agent of selection: Farfrae thrives by adapting to industrial logic, while Henchard, "a vehement

gloomy being who had quitted the ways of vulgar men without light to guide him," perishes (Hardy 45). As Ian Gregor notes, "Hardy's landscapes are imbued with a sense of cosmic indifference, where nature operates as a Darwinian filter, indifferent to human suffering" (Gregor 89). This Darwinian framework is amplified through Hardy's symbolic landscapes, such as the Roman amphitheater, "The Ring," where Henchard and Farfrae duel, serving as a metaphor for the cyclical brutality of existence (Ebbatson 45).

This Darwinian framework is amplified through Hardy's symbolic landscapes. The Roman amphitheatre, "The Ring," where Henchard and Farfrae duel, serves as a metaphor for the cyclical brutality of existence. Its "dismal privacy" mirrors the futility of Henchard's struggles against a cosmos indifferent to his suffering. Similarly, the bridges of Casterbridge—sites of suicide and social division—symbolize the irrevocable gulf between human aspiration and natural law. As critic Roger Ebbatson notes, Hardy's landscapes are "active, implacable forces" that enforce ecological and social Darwinism, reducing individuals to "reluctant members of a proletariat".

Conclusion : Vernon White argues that Hardy "remained preoccupied with both fate and providence even as his belief in a personal God was fading, and although written a hundred years ago his work remains an interesting window onto our situation" (White 357). Thomas Hardy's Wessex novels stand as monumental explorations of environmental determinism, where geography and climate are not mere backdrops but active agents shaping human morality, economics, and survival. Through his vivid landscapes—Egdon Heath's oppressive stasis, Flintcomb-Ash's barren desolation, and Casterbridge's industrial encroachments—Hardy constructs a world in which human aspirations are perpetually thwarted by the immutable forces of nature and socio-economic systems. His deterministic vision critiques the Victorian ethos of progress, exposing the fragility of humanity's symbiosis with the natural world in the face of industrialization and unchecked ambition.

Hardy's novels reveal the environment as destiny, a theme that resonates with striking urgency in our contemporary moment. As climate change amplifies environmental hazards, his works serve as cautionary tales about the ecological hubris of assuming dominion over nature. The degradation of Tess's rural idyll, the mechanized dehumanization of Flintcomb-Ash, and Henchard's tragic struggle against industrial modernity all prefigure the ecological crises of the 21st century. Hardy's warning is clear: humanity's disruption of natural harmony carries profound consequences, not only for the environment but for the social and moral fabric of society. As Timothy Morton argues in *Ecology Without Nature*, Hardy's landscapes resist Romantic idealization, instead presenting nature as a "mesh" of interconnected forces that defy human control (Morton 45). This perspective aligns with contemporary eco-critical theories that challenge anthropocentrism and advocate for a more holistic understanding of humanity's place within the natural world.

References:-

1. Belo, Catarina. *Chance and Determinism in Avicenna and Averroes*. Koninklijke Brill NV, 2007. Print.
2. Beer, Gillian. *Darwin's Plots: Evolutionary Narrative in Darwin, George Eliot, and Nineteenth-Century Fiction*. Cambridge UP, 2009. Print.
3. Ebbatson, Roger. *Landscape and Literature 1830-1914*. Palgrave Macmillan, 2013. Print.
4. Fleishman, Avrom. "The Buried Giant of Egdon Heath." *Critical Essays on Thomas Hardy: The Novels*, edited by Dale Kramer, G. K. Hall, 1990, pp. 143-155. Print.
5. Hardy, Thomas. *The Mayor of Casterbridge*. Oxford World's Classics, 2008. Print.
6. —. *The Return of the Native*. Penguin Classics, 1999. Print.
7. —. *Tess of the d'Urbervilles*. Penguin Classics, 2003. Print.
8. Kingsolver, Barbara. *Prodigal Summer*. HarperCollins, 2000. Print.
9. Morgan, Rosemarie. *Women and Sexuality in the Novels of Thomas Hardy*. Routledge, 1988. Print.
10. Morton, Timothy. *Ecology Without Nature: Rethinking Environmental Aesthetics*. Harvard UP, 2007. Print.
11. Nemesvari, Richard. *Thomas Hardy, Sensationalism, and the Melodramatic Mode*. Palgrave Macmillan Ltd, 2011. Print.
12. Panda, Ramnarayan. "Tess of the D'Urbervilles: An Eco-Critical Reading." *The IUP Journal of English Studies*, vol. X, no. 3, Sept. 2015, pp. 70-72. SSRN. (link unavailable).
13. Taylor, R. "Determinism." *Encyclopedia of Philosophy*, edited by P. Edwards, Macmillan, 1967, II, p. 359. Print.
14. White, Vernon. "Providence, Irony and Belief: Thomas Hardy—and an Improbable Comparison with Karl Barth." *Theology*, vol. 113, no. 6, 2010, pp. 357-366. Print.
15. Williams, Raymond. *The Country and the City*. Oxford UP, 1973. Print.
16. Ebbatson, Roger. *Landscape and Literature 1830-1914*. Palgrave Macmillan, 2013. Print. (Duplicate entry)
17. Gregor, Ian. *The Great Web: The Form of Hardy's Major Fiction*. Faber and Faber, 1974. Print.
18. Meisel, Perry. *The Myth of the Modern*. Yale UP, 1987. Print.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

गोंड जनजाति के विशेष संदर्भ में

श्रीमती सोनाली ठाकुर*

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय आदर्श महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत के हृदय प्रदेश मध्य प्रदेश को जनजाति प्रदेश भी कहा जाता है यहां की जनजाति तीन भागों में बटी हुई है पहली गोंड दूसरी जनजाति भील व तीसरे वर्ग में कोल वह मुंडा जनजाति पाई जाती है। मध्य प्रदेश की प्रमुख जनजातियों में पहली जनजाति है गोंड व दूसरी जन जाति भील है।

शब्द कुंजी – जनजाति,गोंड,भील,कोल व मुंडा।

प्रस्तावना – गोंड जनजाति भारत के सबसे बड़ी जनजाति है। गोंड जनजाति का इतिहास गोंडवाना राज्य से संबंधित है। गोंडवाना राज्य की रानी दुर्गावती की वीर कथाएं महाकौशल और बुंदेलखंड क्षेत्र के अचलो मैं अभी भी सुनी जा सकती है। गोंड जनजाति में द्रविड़ियन प्रजाति के गुण मिलते हैं और उनकी भाषा में दक्षिण भारत की तेलुगु भाषा के शब्द मिलते हैं।ऐसा माना जाता है कि हिंदू साम्राज्य की समाप्ति के बाद 14वीं शताब्दी के लगभग मध्य प्रदेश के वन-जंगलो व पठारों में संभावित दक्षिण की ओर से गोदावरी की घाटी में गोंड जनजाति के लोग आकर बसे।गोंडजनजाति एक प्रभुताशाली जनजाति के रूप में पहचानी जाती है।

जनजाति की परिभाषा:

1. **इम्पीरियल गजेटियर के अनुसार –** 'एक जनजाति समान नाम धारण करने वाले परिवारों का संकलन है, जो समान बोली बोलते हैं, एक क्षेत्र से संबंधित होते हैं एवं सामान्यत: ये समूह अंतर्विवाही होते हैं।'

2. **राल्फ लिंटन के अनुसार–** 'सरलतम रूप में जनजाति ऐसी टोलियों का एक समूह है, जिसका एक सानिध्य वाले भूखण्ड अथवा भूखण्डों पर अधिकार हो और जिनमें एकता की भावना, संस्कृति में गहन सामान्यत: निरंतर संपर्क तथा कतिपय सामुदायिक हितों में समानता से उत्पन्न हुई हो।'

3. **हॉबल के अनुसार –** 'एक जनजाति एक सामाजिक समूह है जो एक विशेष भाषा बोलता है तथा एक विशेष संस्कृति रखता है जो उन्हें दूसरे जनजाति समूहों से पृथक करते हैं यह अनिवार्य रूप से राजनीतिक संगठन नहीं है।'

4. **गिलिन और गिलिन के अनुसार –**'स्थानीय जन समूहों का ऐसा समुदाय जनजाति कहलाता है जो एक सामान्य क्षेत्र में निवास करता है तथा जिसकी एक समान संस्कृति होती है।'

5. **डी. एन. मजूमदार–** ने भारतीय परिवेश में जनजाति की परिभाषा देते हुए कहा है कि किसी भी जनजाति परिवारों तथा पारिवारिक वर्गों का ऐसा समूह है, जिसका अपना एक सामान्य नाम है, जिसके सदस्य एक निश्चित भू-भाग पर निवास करते हैं, एक सामान्य भाषा का प्रयोग करते हैं, विवाह, व्यवसाय सम्बन्धी कुछ नियमों का पालन करते हैं तथा एक सुनियोजित आदान-प्रदान करते हैं।

गोंड जनजाति से संबंधित साहित्य का अध्ययन:

- डॉ. हरिशचन्द्र उत्प्रेती(1982) इन्होने अपने शोध प्रबंध भारतीय जनजातियाँ में बताया कि गोंड़ आज के विज्ञान के युग में भी अधिकांशत: प्रकृति पर ही आश्रित है। जंगलों तथा पहाड़ों से खाद्य संग्रह करना, नदियों तथा तालाबों में मछली पकड़ना तथा कही-कही घटियों या अनेक पहाड़ी क्षेत्रो पर कृषि करना ही उनके आजीविका के प्रमुख साधन रहें है। अत: आधुनिक तौर तरीके बरतने वाले तथा सभ्य कहे जाने वाले लोगां की अपेक्षा सभ्यता की दौड़ में पिछली समझे जाने वाली जातियों का सामाजिक एंव आर्थिक जीवन भौगोलिक पर्यावरण के प्रत्यक्ष प्रभाव से ओत-प्रोत है। पर्यावरण के अनुसार ही उनका जीवन व्यतीत होता रहा है। जनजातीय जीवन को प्रकृति से लगातार संघर्ष करना पड़ता है और उदर पूर्ति के लिए कठोर परिश्रम करना पड़ता है।
- डॉ. के. के. शर्मा (1989) इन्होने अपने शोध प्रबंध 'अनुसूचित जनजातियों में सांस्कृतिक परिवर्तन' में शहडोल जिले की चार प्रमुख जनजातियों, गोंड, बैगा, पंका, अगरिया के सांस्कृतिक पक्षों में होने वाले परिवर्तनों की विस्तृत व्याख्या की है।
- दीप मिश्रा (2003) इनके द्वारा अप्रकाशित लघु शोध कार्य में कोल जनजाति में सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तन के अन्तर्गत कोल जनजाति में पाये जाने वाले परिवर्तनों एवं आधुनिकीकरण के बारे में विस्तार से बताया है।
- श्री कमल शर्मा, 2015, पृ.111गोंड जनजाति का इतिहास गोंड जनजाति गोंडवाना राज्य से संबंधित है गोंडवाना राज्य की रानी दुर्गावती की वीर कथाएं महाकौशल और बुंदेलखंड क्षेत्र के चलो मैं अभी भी सुनी जा सकती है। गोंड जनजाति में द्रविड़ियन प्रजाति के गुण मिलते हैं और उनकी भाषा में दक्षिण भारत की तेलुगु भाषा के शब्द मिलते हैं।

1. **प्रजातिय तत्व –** गॉड जनजाति के लोगों में द्रविडियन प्रजाति के लक्षण दिखाई देते हैं। शरीर का का कद मध्यम आकार का होता है, त्वचा का रंग काला, चेहरा चपटा, नाक चपटी व मोटी, मोटे हॉट, दाढ़ी मूछ में कम बाल

होते है।

2. **खानपान एवं पहनावा** –गोंड जनजाति के लोग कोदू–कुटकी, गेहूं, चावल और समई जैसे अनाज को प्रमुखता से भोजन में शामिल करते हैं। गोंड जनजाति के लोग शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनों ही होते हैं यह शराब का सेवन भी करते हैं। गोंड जनजाति में परंपरागत रूप से पुरुष घुटने तक धोती, सर पर पगड़ी कंधे पर पिछौरा डालते हैं। महिलाएं रंगीन सूती साड़ी पहनती है। वर्तमान समय में आधुनिकता एवं नगरीकरण के कारण इनके खान–पान व पहनावे में परिवर्तन आया है।

3. **अर्थव्यवस्था** –गोंड जनजाति का मुख्य व्यवसाय कृषि व्यवसाय हैं। इसके अलावा वन उपज भी जीविका का साधन है। महिला पुरुष बराबरी से काम करते हैं। शासन के कई योजनाओं का लाभ भी लेते हैं आज के समय में गोंड जनजाति के लोग शिक्षित होकर कई उच्च पदों पर पदस्थ है किंतु कई जगह आज भी जागरूकता की कमी के कारण गोंड जनजाति के लोग कई योजनाओं का लाभ नहीं ले पाते हैं जिससे वह आज भी समाज की मुख्य धारा से जुड़े हुए नहीं है।

गोंड जनजाति का अध्ययन करने के बाद अंतरू यह उपयुक्त विवेचन मिलता है कि मध्य प्रदेश की गोंड जनजाति गरीबी, शिक्षा और तकनीकी ज्ञान के अभाव के कारण कई सारी योजनाओं का लाभ नहीं ले पाती है। गोंड जनजाति के लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं है जिसके कारण जंगलों के ठेकेदार व्यापारी आदि इन लोगों का फायदा उठाते हैं।

1. **सांस्कृतिक पक्ष** –सांस्कृतिक पक्ष गोंड जनजाति के लोक कला प्रेमी होते हैं, पारंपरिक रूप से गोदना गुन्दवाना और अपने घरों की दीवारों पर पारंपरिक कला चित्र बनाते हैं जैसे चांद, वृक्ष, पक्षीव सूरज आदि। गोंड जनजाति में शैली नृत्यव करमा नृत्य किए जाते है।

2. **धार्मिक विश्वास**–गोंड जनजाति में देवी–देवताओं की पूजा का प्रचलन है जैसे बड़ा देव, ठाकुर देव, नारायण देव, दर्शन देव, शारदा माईव खेत में नागेश्वर देव आदि। गोंड जनजाति प्रकृति के उपासक है जैसे जल, अग्नि, वृक्ष, पक्षी,चांदवसूरज इन सब की पूजा की जाती है।

3. **पर्व त्यौहार** –गोंड जनजाति में पर्व त्यौहार बड़ी हर्षोल्लास के साथ मनाए जाते हैं पर्व में सामाजिक–आर्थिक जीवन की झलक दिखाई देती है। गोंड जनजाति में पर्व–त्योहार पारंपरिक रूप से मनाए जाते हैं जिसमें हैं बिदारी पूजा, जवारा, मड़ई, छेरता, हर ढीली, बागबंदी, नवाखानी।

4. **विवाह संस्कार** – जनजात्तियों में विवाह केवल वंश की वृद्धि के लिए नहीं रचाए जाते बल्कि विवाह आदिम समाज में प्रेम, स्नेह, परस्पर सहयोग एवं सहज आर्कषण की अभिव्यक्ति का प्रतीक होता है। गोड जनजातियों में पहले बाल विवाह का प्रचलनथा, किन्तु अब यह प्रथा कम हो गई है। विवाह के लिए लड़के की आयु 15–16 वर्ष और लड़की 13–14 वर्ष है।

- **विवाह** –गोंड जनजाति में विवाह की विविध विधियो का प्रचलन है। गोंड जनजाति में बाल–विवाह का प्रचलन है। गोंड जनजाति में दूध–लौटावा विवाह का प्रचलन है, जिसमें ममेरे–फुफेरे भाई–बहनों का विवाह करवा दिया जाता है।
- **नियमित विवाह**– यह एक प्रकार का सामान्य विवाह है जिसमें पारंपरिक रूप से विवाह करवाया जाता है।
- **लमसना या सेवा विवाह** – इस विवाह में विवाह से 3 वर्ष पूर्व व्यक्ति अपने ससुराल के निर्धारित कार्य करता है जिससे की जीविका उपार्जन हो सके।इस समय अवधि में यदि लड़की के पिता को व्यक्ति का कार्य संतोषजनक लगता है तो वह उसका विवाह कर देता है।
- **विनिमय विवाह** – वह विवाह है जिसमें दो परिवारों का आपस में आदान–प्रदान या आटा–साटा विवाह करवाया जाता है। जिसमें एक पक्ष से पुत्री का विवाह किया जाता है तो दूसरे पक्ष से पुत्रवधू विवाहकर लाई जाती है।

1. **जन्म संस्कार गोंड जनजाति** – जनजाति में पुत्र–पुत्री को समभाय की दृष्टि से देखा जाता है। गर्भधारण के लक्षण दिखते ही कुल देवी–देवता का पूजन कर उत्सव मनाया जाता है। शिशु जन्म के बाद गाँव की महिलाएँ पारम्परिक गीत सोहर व दादरे रात्रि के समय गाती है।

2. **मृत्यु संस्कार गोंड** – पुर्नजन्म पर विश्वास नहीं करते इसलिए स्वर्ग और नरक की धारणा भी गोंडों में बहुत कम है। ये केवल देव योनि और भूतयोनि मानते हैं। गोंड समाज में ऐसी मान्यता है कि देव–देवताओं पूजा करने से मृतक की आत्मा देवत्व प्राप्त करती है। मृत्यु के बाद शय को दफनाया जाता है वहीं सम्पन्न व्यक्ति को जलाया जाता है। ये जनजातियों सूरज, चाँद, बादल, बिजली व वर्षा आदि के प्रति आस्थावान हैं। इनका कोई धार्मिक ग्रन्थ नहीं है, फिर भी अपने धर्म को पूरी निष्ठा और आस्था से निभाते है। गोडों को अपने देवी देवताओं पर अटूट विश्वास है। गोंड जनजातियों की कला परम्परा,गोंड जनजाति के समाज में जितना महत्य धर्म और संस्कृति का है उनके जीवन में कला का भी उतना ही महत्तवपूर्ण स्थान है, क्योंकि उनकी कला उनकी संस्कृति का एक अंग है।

3. **बोली** –बोली गोंड जनजाति में गोंडी बोली जाती है, जो द्रविड़ भाषा परिवार से संबंधित है। कुछ गोंड उप जातियां मोरिया गोंडी के अलावा हलवी बोली का प्रयोग करते हैं।

4. **गोंडजनजाति की संस्कृति** – संस्कृति मनुष्य जाति के शाब्दिक एवं अशाब्दिक व्यवहार और उसके भौतिक व अभौतिक प्रतिफलों का योग है। किसी भी देश व समाज की संस्कृति उसकी जीवन शैली, रहन–सहन, रीति–रिवाज, बोली–भाषा, धर्म आदि को समझाने का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण साधन है। जिसके माध्यम से हमें किसी क्षेत्र में निवास करने वाले मानव समूहों की जीवन शैली व कला परम्परा का ज्ञान प्राप्त की महिलाएँ लुगड़ी (साड़ी) धारण करती हैं। इनको गहनों से अधिक लगाय है, इनके परम्परागत् आभूषणों में जुरिया, हलेम, द्वार, झरका, टरकी, बारीव टिकूसी आदि।

5. **गोंड जनजातियों की कला परम्परा**– गोंद जनजाति के समाज में जितना महत्त्व धर्म और संस्कृति का है उनके जीवन में कला का भी उतना ही महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि उनकी कला उनकी संस्कृति का एक अंग है। गोंड समाज में लोक कलाओं का विशेष महत्त्व है जिसने नृत्य कला, संगीत कला, चित्र कला व गुदना कला आदि प्रमुख हैं।

गोंडजनजातियों के द्वारा किए जाने वाले प्रमुख नृत्य है जिनमें करमा नृत्य कर्म की प्रेरणा प्रदान करने वाला नृत्य है इसमें श्रम का विशेष महत्त्व है, श्रम को ये करम देवता के रूप में मानते हैं जिनकी पूजा के अवसर पर यह नृत्य किया जाता है। इसके अतिरिक्त सैला, सुआ नृत्य, सजनी, दीवाली नृत्य, बिरहा आदि लोक नृत्य है। नृत्यों के साथ–साथ गीत–संगीत, कहानी कहावतें प पहेलियां आदि गोंड जनजाति के याचिक (बोली) परम्परा का प्रमुख अंग है जिसके माध्यम से इनके जीवन से जुड़े सम्पूर्ण संस्कृति का ज्ञान होता है।

भित्ति अलंकरण – गोंड कला संस्कृति एवं परम्परा का एक अन्य स्वरूप

उनके घरों की दीवारों पर अलंकृत भित्ति चित्रों के माध्यम से देखने को मिलता है। गोंड जनजातियों के घर कलात्मक रूप से बने होते हैं घर बनाने में गोड महिलाएं अधिक कुशल होती हैं। घरों की दीवारों के किनारों पर मिट्टी से तह बनाकर उस पर अनेक प्रकार की डिजाइने जिसमें प्रायः त्रिभुजाकार वृत्ताकार व ऊभरी हुई

शोध विधि – इस शोध में तथ्यों का संकलन द्वितीयक स्त्रोतों से किया गया है तथ्यों के स्त्रोत–पत्रिकाएं एवं अभिलेख तथा विभिन्न प्रकार के महत्वपूर्ण समाचार पत्र, पुस्तकें व आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी इण्टरनेट आदि से लिया गया है। यह शोध वर्णनात्मक एवं व्याख्यात्मक शोध अभिकल्प पर आधरित है।

निष्कर्ष और सुझाव – गोंड जनजाति की कला एवं संस्कृति का विस्तार पूर्वक उल्लेख किया गया है गोंड जनजाति की ऐतिहासिक एवं संस्कृति की झलक उनके सामाजिक जीवन में दिखाई देती है अपनी संस्कृति, परंपरा एवं ऐतिहासिक धरोहर को आदि काल से ही सहज कर कर रखा है। वर्तमान समय में भी अपने संस्कृति और सभ्यता को जीवंत बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. शर्मा, श्रीनाथ, 2014, जनजातीय समाजशास्त्र मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
2. उपाध्याय, विजय शंकर 2009 भारत की जनजातीय संस्कृति मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
3. श्रीवास्तव, ए. आर. एन., 2007, जनजातीय भारत, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
4. श्रीवास्तव, ए. आर. एन., 2012, जनजातीय संस्कृति, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
5. दीक्षित, धुप कुमार, 2010, पातालकोट घाटी का भारतीय जनजीवन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

****

Investigation of the insecticidal activities of *Carica papaya* Linn. and *Cassia tora* Linn. leaf extracts on *Callosobruchus chinensis Linn.*

Rita Mishra* Dr. Arti Saxena Kransi Gautam*****

*Research Scholar, Govt. Model Science College, Rewa (M.P.) INDIA
** Professor (Zoology) Govt. Model Science College, Rewa (M.P.) INDIA
*** Research Scholar, Govt. Model Science College, Rewa (M.P.) INDIA

Abstract : Pests are killed with various substances. Although these pesticides frequently have good results, they can pose major issues for people or their pets because they are made to destroy living things. When we use pesticides on our plants or animals, they might enter our bodies and damage the environment and the food we eat. Other organisms besides their target pest are occasionally harmed by them. The potential for pests to develop a resistance to the pesticide is another issue with employing chemicals to manage them. One strategy to stop pests from harming the environment or the economy is biological control. Utilizing live creatures including parasites, viruses, and predators, biological control techniques manage pest populations on agricultural crops. Agricultural fields that sustain robust populations of native predators can benefit from the application of basic land conservation techniques, or biological control agents can be created and bred in vast quantities prior to becoming released to minimize pest populations in crops that are affected (improvement) .*Cassia tora* and *carica papaya* methanol and chloroform fractions were successful in controlling *Callosobruchus chinensis*. According to the results, plant-based biopesticides might soon be used extensively in pest management initiatives.
Keywords: *Callosobruchus chinensis*, insecticides, germination loss, pulses.

Introduction - An significant part of the Indian cuisine and economy, pulses are a great gift from nature. Proteins, a number of amino acids, minerals, and several vitamins are all present in pulses. The world's largest producer of pulses is India.Pulses are leguminous plants; belonging to the family leguminosae and subfamily papilionoideae, they are nutrient –rich crops. In addition to being low in fat and high in dietary fiber, they are a great source of protein and minerals.. A part from this, they play an important role in maintaining and improving soil health.

Within the Indian economic and social framework, pulses hold a special position, especially in the Indian subcontinent, Pulses are an integral protein source. where consumption of animal protein is very low. A part from being a rich and inexpensive source of protein in daily life, pulses also substantial role in improving and maintaining soil productivity due to biological nitrogen fixation and adding huge amounts organic matter. More than a dozen pulse crops are grown in Indian. The common ones are Bengal gram (chickpea), pigeon pea, green gram, black gram, lentil, field pea and lathyrus vugaris. Pulses occupy 22-23 million hectares and contribute 14-15 million tons of grain to the country's food stocks.

It include subtrophical and tropical crops such as lentil, greengra (mung), red gram (pigeanpea), black gram, and Bengal gram. It is a good source of vitamins, minerals, and high-quality carbs. It is also high in protein and fiber. Because they are released more gradually than those found in cereals, the carbohydrates included in pules are highly valuable for preserving ideal blood sugar levels and providing sustained energy after a meal.

About 19% the world pulses production is used as fodder,6% as seeds the remaining 5% is wasted, and 68% pulses are used for food. Aisa has a significant contribution in the world pulses production. In this the production of gram, pigeon pea and lentil is 84.6% and 55.6% respectively. Among Asian countries India has achieved a high position in the production of gram and pigeon pea, in while terms of productivity, china and Philippines got the first place in the production of gram and pigeon pea respectively in 2012-13. As far as world production fingure are concerned, Canada is leading in lentil production during the period under reference, followed by India, while News Zealand is ranked first in productivity.

Callosobruchus chinensis L is a very dangerous insect found in pulses. It reproduces rapidly and has a high

fecundity and C*ollosobruchs chinensis* causes a significant decrease in the number of stared grain as well as reduces their nutritional value. Adult pulse beetle do not feed on seeds but they mate and lay eggs on them. They newly hatched larvae bore into the seeds and feed on the contents until. They have consumed all the endosperm damage caused by this pest affects the germination capacity and nutritional value of the seed **(1984, Sharma**). Under normal storage condition *C. cheninsis* cause heavy damage to chickpea, which increase with storage time (**2013, Jait et al.).** During storage, the beetle can causes up to 100% damage to bean feeds. The pulses beetle feeds on the endosperm of the seed and leaves only the seed coat, leading to poor seed germination low seed weight and poor market value. In view of the economic importance of pulse beetle, on attempt was made to assess seed damage, weight loss and germination loss in a local green gram variety during storage.

Materials And Methods

Insect (*Callosobruchus chinesis*)

In India, *Callosobruchus chinesis* is a significant pest of pulses. The larval and pupal phases of this holometabolic insect live inside grains, whereas the adult and egg stages are found on grains. The most harmful stage of the life cycle occurs when the larva consumes the endosperm. Adult beetles have long, upright antennae, are oval in shape, 3–4 mm long, and are chocolate or reddish brown in colour. The female produces scale-like eggs or grins that range in size from 1 to 8. In a different compartment, each larva completes its entire cycle. In India, the insect hibernates in the larval stage during the winter and breeds freely from March to November. January to April is when the adults emerge. The months of February through August are when the bug causes the most damage.

Collection of plant material: *Carica papaya*, a native plant belonging to the Asteraceae family, was gathered from Jayanti Kunj Rewa. The collection was carried out during the winter.

Cassia tora a member of the Caesalpiniaceae family was gathered from the Bichhiya Rewa Lakshaman Bag area. It was collected during the rainy season.

Selection of plant: Carica papaya and Cassia tora were chosen for the study due to their medicinal and insecticidal qualities, as well as the fact that they were abundant in the study area.

Taxonomic position of the plant -

Carica papaya

Phylum – Angiosperm
Division – Magnoliophyta
Order – Brassicales
Family – Caricaceae
Genus –Carica
Species – papaya

The *Carica papaya* is also utilized as an Aboriginal medicine to treat a number of illnesses, including as infectious diseases and cancer. Crushed *Carica papaya* leaves have been used to treat fever and anthelmintic symptoms. The green fruits are cooked like vegetables, while the fruits are commonly used as desserts or processed into jam, puree, or wine **(Matsuura *et al*., 2004 and Ahmed *et al*., 2002**). The leaf extract or tea is known to be a tumor. While dried brown pawpaw leaves work best as a blood purifier and tonic, fresh green tea has antibacterial properties. Additionally, according to **Mantok (2005**), the tea helps with digestion and helps alleviate conditions including arteriosclerosis, high blood pressure, chronic indigestion, obesity, and heart disease, tumour-destroying substance.(**Walter, 2008).**

Cassia tora

Phylum –Tracheophyta
Class – Spermatopsida
Divison– Rosopsida
Order – Fabales
Family – Casesalpinaceae
Genus – *Cassia*
Species – *tora*

In the Ayurvedic medical system, *Cassia tora* leaves and seeds are used to treat a variety of conditions, including ringworm, leprosy, flatulence, colic, dyspepsia, constipation, cough, bronchitis, and heart diseases. Because *Cassia tora* leaves contain chrysophanic acid, or 9-anthrone, they are also utilized as an antifungal agent. Because seed extract contains anthraquinone aglycones and naphthopyrone glycosides 2, 3, it has also been shown to have a hypotensive effect in vitro. Because of its phenolic components, seed extract has also been shown to have antibacterial properties.

Abbott (1925) states that the cold percolation process is applied to new plant leave. Fresh leaves were first allowed to air dry before being ground into a powder using an electric blender. 300 ml of n-hexane and 500 g of powder were combined, let to sit for 72 hours, filtered, and then placed in a reagent bottle. After two hours of drying, the powder was mixed with methanol and chloroform and left for seventy-two hours. After passing through What Man's filter paper No. 1, the resulting crude extract was dried in a water bath or rotary vacuum evaporator at ambient temperature (40°C) at decreased pressure (25–30 mmHg). Before being employed for bioassay, these dry and semi-solid crude extracts were kept in a refrigerator.

Chemical analysis and identification of the compounds

Initially, n-hexane was used to separate the crude leaf extracts of both plants from the fat, and methanol and chloroform were then used to extract them. The concentrated solution was let to settle once a greenish yellow coating had formed. The purified samples were submitted to SAIF, CDRI Lucknow for spectral analysis in order to better identify and clarify the structure of the plant's leaf extracts: Tests were performed on the IR, UV, NMR, and mass spectra. Sesquiterpene lactones were ultimately

identified by matching the spectrum data acquired from SAIF CDRI Lucknow with the legitimate markers that were accessibly.

Study of extract *Carica papaya* and *Cassia tora* on *callosobrushus chinensis* with different pulses –

1. Insects were collected from the infected grains.
2. Twenty beakers were collected. After being cleaned with distilled water, they were dried.
3. One hundred pulse seeds (such as Arhar, Mung, and Urad) were placed in each beaker.
4. Each beaker contains two drops of different amounts of methanol and chloroform fractions (e.g., 500 ppm, 100 ppm, 150 ppm, 200 ppm, and 250 ppm).
5. Three male and three female insect pairs were introduced. They poured one of control.
6. A piece of muslin cloth was placed over the mouth of each beaker and secured with a rubber band.
7. Seven days later, the muslin fabric was removed from the beakers, allowing the insects to be removed.
8. After counting the eggs that were placed on the grains, the beakers were once again covered with muslin cloths.
9. The beakers were once again closed after seven days, after which they were unsealed to count the number of larvae that had emerged from the eggs.
10. The beakers were opened once more after seven days in order to determine how many pupae had developed. The muslin fabric was then used to seal the beakers once more.
11. The adult insects emerged from the pupae when they were opened after seven days. They are beakers that are counted.
12. To check for germination, the seeds from each beaker were placed on a petri dish and moistened with water.
13. A count was made of the seeds that sprouted.

With the wrinkled seeds, the same experiment was conducted again

Percentages loss in weight of the plant materials

(Table see in last page)

Result and discussion

Khaire et al. (1993) reported Neem oil-treated seeds demonstrated a repelling effect on adult beetle egg-laying behavior, according to Khaire et al. (1993).

According to Pandey et al. (1986), neem leaf and twig plant extracts exhibited strong repellent properties against C. chinensis. According to Khaire et al. (1993), neem oil treatment of pigeon pea seeds shown a strong deterrent effect on adult C. chinensis beetle egg laying for up to 100 days following treatment.

Extracts of Cassia tora and Caricca papaya leaves at five concentrations demonstrated the highest deterrent activity against Callosobruchus chinensis at one hour, while extracts of the leaves at 250 ppm concentration demonstrated 90% deterrent activity in methanol and chloroform and the lowest in control.

Direct poisoning **Bhaduri et al. (1985**) claimed that Bankalami leaf extract had insecticidal effects against pulse beetles. According to some researches, pulse beetle can be controlled with a range of plant preparations. According to Ogunwolu and Idowu (1994), C. maculatus is poisoned by 2.5% powdered A. indica seeds. Dust and ether extracts from brown pepper seeds are useful in raising the mortality rate of C. maculatus adults infesting cowpea seeds, according to Mbata et al. (1995). According to Kim et al. (2003), within a day of treatment, extracts of horseradish (Coccoleria auroracia) oil, mustard (Brassica juncea) oil, and cinnamon (Cinnamomum cassia) bark and oil demonstrated strong insecticidal action against C. chinensis.

Larval mortality in the current investigation was highest in 250 ppm concentrations of chloroform and methanol extract of Caica papaya and Cassia tora. Chenopodium ambrosioides' dried ground leaf, according to Tapondjou et al. (2002), prevented the formation of F• offspring and the adult appearance of C. chinensis and C. maculatus. Our conclusions are generally supported by these results. leaf, whereas in the control it was at its lowest.

The experimental plant's leaf extracts prevented the appearance of adults in the current investigation. Adults appeared at the lowest concentration in 250 ppm of methanol and chloroform and at the highest concentration in the control.

(Tables see in last page)

Conclusion: In-depth research is necessary to identify environmentally friendly bruchids and other pests. Through thorough investigation, we can pinpoint practical methods that lessen the influence on the environment and guarantee the security of farming operations. This finding is critical to creating long-term pest control strategies that promote crop health and ecosystem health.

References :-

1. Abbott, W.S. (1925). A method for calculating insecticide effectiveness. J.Eco. Entomol., 18: 265-267.
2. Anonymous (2007-2008) Highlights of research on pulses. University of Agricultural Sciences, Dharwad, Karnataka, India
3. Aravind, G., Bhownik D, Duraivel S, Harish G. Traditional and Medicinal Uses of Carica papaya. Journal of Medicinal Plants Studies 2013, Volume 1, Issue 1, 7-15
4. Bhaduri N., Ram S., Patil B. D. Evaluation of some plant extracts as protection against the pulse beetle, Callosobruchus maculatus F., which damages cowpea seeds. Journal of Entomological Research. 1985;9(2):183-187. [Google Scholar]
5. Choudhary B.S. and Pathak S.C. (1989) Relative preference of Callosobruchus chinensis (LINN.) for different varieties of Bengalgram. B 8.

6. Dotta L, de Andrade JIA.,. Goncalves E.L.T, Brum A, Mattos J.J., Maraschin M, Martins ML Leukocyte phagocytosis and lysozyme activity in Nile tilapia fed supplemented diet with natural extracts of propolis and Aloe barbadensis. Journal of Fish& Shellfish Immunology 39 (2014) 280-284
7. Hasimun, P., Suwendar, and Ernasari GI. Analgetic activity of papaya (Carica papaya L.) leaves extract. International Seminar on Natural Produst Medicines. ISNPM 2012. Journal of Procedia Chemistry 2014, 13; 147 – 149
8. Jat N R, Rana B S and Jat S K (2013) Estimation of losses due to pulse beetle in chickpea: Bioscan 8(3), 861-863.
9. Kanjilal U.N. (1979). Forest flora of Chakrata, Dehradun and Saharanpur forest divisions, United Provinces. Bishan Singh and Mahendra Pal Singh, Dehradun, India.ulletin of Grain Technology, 27(3): 181-187.
10. Khaire, V.M., Kachare, B.V. and Mote, U.N. (1993). Effect of different vegetable oils on ovipositional preference and egg hatching of Callosobruchus chinensis Linn, en pigeonpea seeds. Department of Entomology, Mahatma Phule Agricultural University, Seod Research Journal 21:128-130
11. Kirtikar, K.R., Basu, B.D. (1999). Indian Medicinal Plants, Vol. I. Dehradun; India: International Book Distributors. pp.56-58.
12. Kim S.I., Roh J.Y., Kim D.H., Lee H.S., Ahn Y.J. Insecticidal activities of aromatic plant extracts and essential oils against Sitophilus oryzae and Callosobruchus chinensis. Journal of Stored Products Research. 2003;39(3):293-303. [Google Scholar]
13. Mantok ,C. 2005. Multiple usage of green papaya in healing at Tao Garden Health Spa and Resort, Thailand. Retrieved from : www. tao.garden .com
14. Matsuura, F.C. A.U, Folegatti, M.I.D.S, Cardo- so, R.L. and Ferreira, D.C 2004. Sensory acceptance of mixed nectar of *papaya*, pas- sion fruit and Acerola. *Science Agric*ulture (Piracicaba, Braz). 61: 604-608.
15. Mbata G. • N., Oji O. A., Nwana I. E. Insecticidal activity of preparations from brown pepper, Piper guineense, shroom seeds to Callosobruchus maculatus (Fabricius). Discovery and Innovation. 1995;7(2):139-142. [Google Scholar]
16. Mukherjee, A., Joshi, K., Joshi, P., Shubha, Roy, M.L., Jethi, R., and Chandra, N. (2018). Status of major pulse crops in northwestern Himalaya and its importance in nutritional security. Climate Risk Management: Sustainable Pulses Production,
17. Ogunwolu O., Idowu O. Efficacy of powdered Zanthoxylum zanthoxyloides (Rutaceae) root bark and Azadirachta indica (Meliaceae) seeds for the control of the cowpea seed bruchid, Callosobruchus maculatus (Bruchidae) in Nigeria. Journal of African Zoology. 1994;108(8):521-
18. Pandey, N.D., Mathur, K.K., Pandey, S. and Tripathi, R.A. (1986). Effect of some plant extracts against pulse beetle, Callosobruchua chinensis Linnaeus. Indian Journal of Entomology 48:85-90.
19. Pandey, N.K. and Singh, S.C.(1995). Effect of neem leaf powder on survival and mortality of pulse beetle, Callasobruchut chinensis (L.) infestation gram. Uttar Pradesh Journal of Zoology 3:162-164,
20. Prajapati N.D., Purohit S.S., Sharma A.K., Kumar T. (2003). A handbook of medicinal plants: a complete source book. Agrobios (India).
21. Ranjan, K.P., and Singh, R.K.P. (1998). Cropping patterns in backward agriculture – a case of north Bihar. Status of Agriculture in India, 55(2):69-72.
22. Reddy AA. Technology of pulses production: status and way forward. Economic and Political Weekly. 2009;
23. Sarika Sharma., Man Singh Dangi., Shailendra Wadhwa., Vivek Daniel., Akhilesh Tiwari. (2010). Antibacterial activity of Cassia tora leaves. International Journal of Pharmaceutical and Biological Archives., 1(1): 84-86.
24. Singh, A.K., Singh, S.S., Prakash, V., Kumar, S. and Dwivedi, S.K., (2015). Pulses production in India: current status, constraints and way forward. Journal of Agricultural Research, 2(2), 75-83.
25. Sharma S.S. (1984) A review of the literature on damage caused by Callosobruchus species (Bruchidae: Coleoptera) during storage of pulses. Bull. Grain Tech. 22(1), 62-6*
26. Tapondjou L. A., Adler C., Bouda H., Fontem D. A. Efficacy of powder and essential oil obtained from leaves of Chenopodium ambrosioides as post-harvest grain protectants against six-toed stored product beetles. Journal of Stored Products Research. 2002;38(4):395-402. [Google Scholar]
27. Walter, L. 2008. Cancer remedies Retrieved form: www.health-science-spirit.com/cancer6-remedies

Percentages loss in weight of the plant materials

S.	Name of the plant	Wet weight of plant material in (gms)	Weight on drying of the plant material (gms)	Loss in weight on drying (gms)	Percentage loss in weight
1.	*Carica papaya*	2000	185	1815	96.2%
2.	*Cassia tora*	2000	190	1800	98%

Statistical data of Purified fraction of *Carica papaya* (CMF_1) Methanol extract against Pulse beetle *(Collosobruchus chinensis)* on fresh Pegeon Pea Arhar.

Concentration	24 hr. larval mortality	Regression equation (y = a±bx)	Chi - Square x^2(n-1)	LC_{50}(ppm)	Variance (V)	S.E.	Fiducial limits (ppm)
50	59	-3.750±1.748x	4.512	139.874	0.0246	0.157	L = 126.940 U =130.564
100	86						
150	120						
200	145						
250	169						
Control	11						

Statistical data of Purified fraction of *Carica papaya* (CCF_2) Chloroform extract against Pulse beetle *(Collosobruchus chinensis)* on fresh Pegeon Pea Arhar.

Concentration	24 hr. larval mortality	Regression equation (y = a±bx)	Chi - Square x^2(n-1)	LC_{50}(ppm)	Variance (V)	S.E.	Fiducial limits (ppm)
50	45	-4.146±1.845x	6.868	176.479	0.0265	0.163	L = 140.570 U = 246.648
100	68						
150	99						
200	129						
250	157						
Control	11						

Statistical data of Purified fraction of *Cassia tora* (CCF_3) Chloroform extract against Pulse beetle *(Collosobruchus chinensis)* on Wrinkled Pegeon Pea Arhar seeds.

Concentration	24 hr. larval mortality	Regression equation (y = a±bx)	Chi - Square x^2(n-1)	LC_{50}(ppm)	Variance (V)	S.E.	Fiducial limits (ppm)
50	72	-3.780±1.84x	10.034	112.337	0.0243	0.156	L = 77.211 U = 148.935
100	99						
150	130						
200	164						
250	189						
Control	10						

Statistical data of Purified fraction of *Cassia tora* (CMF_4) Methanol extract against Pulse beetle *(Collosobruchus chinensis)* on Wrinkled Pegeon Pea Arhar seeds.

Concentration	24 hr. larval mortality	Regression equation (y = a±bx)	Chi - Square x^2(n-1)	LC_{50}(ppm)	Variance (V)	S.E.	Fiducial limits (ppm)
50	76	-4.047±2.056x	4.683	92.981	0.0252	0.159	L = 83.763 U = 101.766
100	119						
150	152						
200	180						
250	203						
Control	10						

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Value of Fantasy and Imagination in Modern Trends

Dr. Ramashanker Mishra*

***PGT Teacher (Art) Mody School, Lakshmangarh, Sikar (Raj.) INDIA**

Introduction - From the first, modernism felt it should embrace new developments in natural science. For obvious reasons, optical physics and colour theory were to be of lasting importance, from Kandinsky onwards. There was also some input by mathematics into cubism; Einstein's physics found parallels in futurist notions of the fourth dimension; and the curious biomorphs of Miró and Klee may be related to creatures seen under the biologist's microscope. But it was in the human sciences - more tenuous but richer in suggestion - that modern art found both its philosophical courage and a fountainhead of source material. The most important of these soft sciences - which appear even softer today than they did at the time were Freudian and Jungian psychology. The unconscious mind provided nothing less than a new world, a Prospero's island, in which artists could walk their imaginations and release their fantasies. The surrealist interest in dreams and automatism writing, drawing and painting without the mediation of thought cast an immensely long shadow over the whole culture of the twentieth century, while Jung's archetypes breathed new life into symbolism. The latter have persisted long after Jung the clinician has been consigned to the dustbin of history. They can be spotted, for example, in the later post-pop work of Peter Blake.

In more recent times it was not scientific ideas but technological hardware that stimulated the visual arts. While the result has undoubtedly been a preponderance of very ordinary and much bad art, this is besidethe point: oil on canvas is also mostly mediocre. Artists have grasped at the opportunities which technical advance gives them because that is their nature - to seek symbolic languages appropriate to their time and their vision. In some cases the languages used in the second half of the century were borrowed from those of the first, merely translated into contemporary terms. Much video-installation art, for example, looks like the kind of thing Dada would have been doing had they been lucky enough to possess DVD. On the other hand, because the material from which art can be made has become so radically different, there have been immense changes in what can be produced: stainless steel, plastics, fibreglass, polyester resin, neon, acrylic paints and NASA adhesives have all had their effects, as have airbrushes, aerosol sprays, Polaroid cameras, photocopiers and fax machines. Some of these would have delighted advanced practitioners like Malevich or Boccioni, but they would also have utterly changed their art, just as cheap computers and colour printers in the early 1960s would have transformed pop and op art.

The artist's orientation to the world became much more various in the modern era. At one extreme there were the depressives. Gloom-laden and angst-ridden, they contemplated modern society as one might a burnt-out church or a crashed car. Existentialism was the in-house religion of this branch of the avant-garde. It embraced freedom spiritual, cultural and political but this was not a particularly comfortable or comforting clinch. Released from irrational taboos, irrelevant religion and unthinking social obedience, the self became a pit in which exhilaration wrestled with boredom, liberty with fear. In life, anything was allowable, but existence was a cul-de-sac and personal extinction a certainty. In this perspective, art often became a desperate and driven activity but also a meaningless one.

In contrast to these intimations of the existential condition, much of modern art has been nothing but an expression of joy. Matisse, Balla, O'Keeffe, Brancusi, Klee, Moore and Johns are just a selection of the artists who felt no compulsion to make their works into public acts ofsuffering. And one of the most attractive strands in modernist art has been its sense of humour. To spend an hour in a room with the solemn works of a Clyfford Still or a Ben Nicholson is perhaps thought-provoking. To do so with those of Magritte pays the same dividend, but you will also laugh in delight.

Twentieth-century art is a broad church, complex and fraught with contradictions. Here is an art that dealt in serene unities and hectic disjunctions, in the private meditations of Rothko and Mondrian and the public interventionism of Picasso's Guernica. It embraced the metal and machine

age and at the same time hankered for the pre-colonial art of the black nations. It sanctioned the excesses of Dali and yet adored the monk-like dedication of Albers. It shouted against consumerism while lauding Warhol. And, if very often an art of movement, it was always one of movements, a forest tangled with an undergrowth of -isms.

No selection of art from such a period can hope to be complete. What follows is an attempt to trace a path loosely through the briery wood. At its centre may be found a castle and a sleeping beauty: but she is for each of us to discover for ourselves.

References:-

1. On Modern Art, Jean Paulsartre White Publication, 2011
2. Origin's of Modern Art, Rosalind Ormiston, Flametree Publication 2015,Oct 06
3. History of Modern Art, H. H. Arnason, 2003,August 29
4. Modern Art in America, Agee William Phaidon Publication 1908-68

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

नागार्जुन का जीवन संघर्ष और काव्य के स्वर

मनोज कुमार*

* सहायक आचार्य (हिंदी) शारदा कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, अनूपगढ़ (राज.) भारत

प्रस्तावना – जनकवि नागार्जुन जी का जन्म मधुबनी जिला के समीप सतलखा गाँव (ननिहाल) में 30 जून 1911 ई0 में हुआ था। किन्तु पिता का गाँव तरौनी था। इनके पिता का नाम गोकुल प्रसाद तथा माता का नाम उमा देवी था। नागार्जुन कई नामों से सुशोभित हुए। बचपन का नाम ठक्कन विद्यार्थी जीवन में बैद्यनाथ तथा साहित्यिक जीवन में इनका नाम नागार्जुन पड़ा। इनके पिता गोकुल प्रसाद मिश्र खेती बारी से ही गुजर करते रहे है। माता के मृत्यु के बाद पिता के द्वारा कोई अच्छी साधन उपलब्ध नहीं करायी गई। इस तरह से सामान्य जीवन जीते हुए कवि नागार्जुन वयस्क हुए और सन् 1931 ई0 में उनका विवाह हरिपुर गाँव की लड़की अपराजिता देवी के साथ हो गया।

शिक्षा – तरौनी ग्राम में संस्कृत विद्यालय से लघुसिद्धांत लेकर प्रथमा उत्तीर्ण हुए। इस अध्ययन काल में नागार्जुन जी को बटुक पुरोहित के रूप में कार्य करने के कारण यदा–कदा अठारह आने मिल जाया करता था। जिसे वे सोलह आने पिता को और दो आने अपने खर्चे के लिए होता था। इस तरह से मध्यमा उत्तीर्ण करने के बाद बनारस चले गए और वहाँ चार वर्षो में शास्त्री उत्तीर्ण करने के बाद काव्य तीर्थ पढ़ने हेतु कलकता एक वर्ष के लिए चले गए। तदनन्तर एक दिन अध्ययन छोड़कर नागार्जुन जी ढाई–तीन वर्षो तक पंजाब, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और गुजरात आदि स्थानों की यात्रा करते रहे। इस दौरान पंजाब में मासिक पत्रिका 'दीपक' का संपादन कार्य करने का इन्हें अवसर मिला। (परिचय, विवरण एवं सूचनाएँ: नागार्जुन संवाद–डॉ0 विजय बहादुर सिंह, सापेक्ष अंक–34 के आधार भूत)

सन् 1936 में नागार्जुन जी सिंहल द्वीप पहुँचे। वहाँ कोलंबो के समीपस्थ 'कैलानिया विद्यापीठ' जो बौद्ध जगत में प्रख्यात है वहाँ दीक्षा ग्रहण की। दीक्षित होने के बाद नागार्जुन अपने पुराने नाम 'वैद्यनाथ मिश्र' से हटकर नागार्जुन बन गए। वहाँ वे बौद्ध शिक्षुओं को व्याकरण और दर्शन पढ़ाते हुए पाली भाषा के माध्यम से बौद्ध दर्शन का वृहद अध्ययन किया। इस तरह अध्ययन–अध्यापन करते हुए दो वर्ष लंका में बिताने के बाद जैन मुनियों से सम्पर्क कर यायवरी जीवन में ही प्राकृत भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया और एक बार पुन: अपने गृहस्थ आश्रम में लौट आए। नागार्जुन जी को बिहार में रहते हुए किसी प्रकार की नौकरी नही मिली। वे मैथिली की लोकप्रिय शैली में चार–चार पन्नों वाली पुस्तक स्वयं लिखकर बेचने लगें। उस समय वे पुस्तक छ: पैसे में बिक जाती थी। इसी क्रम में नागार्जुन जी लेखन जीवी बन गए। पहले वे कविताएँ लिखते थे, फिर उपन्यास भी लिखने लगे। इस तरह से वे धीर–धीरे यायावरी जीवन में साहित्य और राजनीति दोनों में परिपक्क होते गए किन्तु घर गृहस्थी के प्रति बेफिक्र और लापरवाह रहे। नागार्जुन जी के चार बेटे और दो बेटियाँ थी। पत्नी और बच्चे अन्न वस्त्र और आवस का कष्ट झेलते रहे पर वे एक घर तक नहीं बनवा सके। सन् 1982–83 में दस हजार और पंद्रह हजार के दो पुरस्कार भी इन्हें मिले किन्तु वे सब भी समाप्त हो गये। उनके जीविका का स्त्रोत लेखन ही था। वे स्वभाव से फक्कड़ निश्चिंत किन्तु सत्य के प्रति निष्ठवान, देश के प्रति आस्थावान और आम लोगों के प्रति हमदर्द थे। नागार्जुन हिन्दी साहित्य के काव्य जगत में दूरदर्शी तथा जनता के शुभ चिंतक रहे है। (बातों–बातों में मनोहर श्याम जोशी के लेख के आधार भूत)

इस तरह नागार्जुन का बचपन से लेकर शिक्षा–दीक्षा और 'यात्री' की जिद का भाव जो कि जीवन पर्यन्त रहा। चाहे कितनी बड़ी हस्ती क्यों न हो बेहिचक टक्कर जाते थे। वे बिना किसी लाग लपेट के अपनी बात कविता के माध्यम से कह देते थे। जनकवि नागार्जुन जी के जीवन का यही संक्षेपण है। इस प्रतिभा संपन्न व्यक्तित्व के यात्रा का 5 नवम्बर सन् 1998 में समापन हो गया। बाबा नागार्जुन इस दुनिया को छोड़कर स्वर्गवासी हो गये।

काव्य स्वर – नागार्जुन समाज तथा देश के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ एवं जागरूक कवि है। हिन्दी में सर्वहारा वर्ग के संघर्ष की आवाज बुलंद रखने वालों में नागार्जुन अग्रगण्य है। मजदूर वर्ग के संघर्ष को उन्होंने प्रेरणा दी। देश की असहाय अवस्था से उनका हृदय पीड़ित हो उठा। उनकी कविता में जनता का संघर्ष मूर्तिमान है। गाँधी जी की हत्या से भावाकुल कवि की छठपटाहट में युग का यर्थाथ रूप मुलक रहा है। नेताओं के बदले हुए स्वर से कवि को बड़ी चोट पहुँचती है। उन्होंने जन भाषा को अपनाया, उपमानों को चुनने में भी जनभावनाओं की प्रमुखता प्रदान की। 'महँगाई कैसे बढ़ी है जैसे द्रोपदी की साड़ी हो।'[1]

नागार्जुन की कविता सामाजिक जीवन की परिस्थितियों एवं धारणाओं पर पैनी नजर रखती है। जनकवि नागार्जुन को केवल साधारण जनता ही नहीं पशु–पंक्षी भी संवेदनशील कर देते है, जो 'अकाल और उसके बाद' कविता से द्रष्टव्य है–

कई दिनों तक चूल्हा रोया चक्की रही उदास।
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास।।
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त।
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।।[1]

इस कविता में कवि केवल दीन–हीन भूखे नंगे मनुष्यों से ही नहीं वरन् पशु–पक्षियों से भी संवेदनशील है। घर में दाना नहीं होने के कारण मनुष्य सहचर चूल्हा, चक्की, चूहे, कानी कुतिया आदि सब दु:खी है। यहाँ पर कवि ने 'कानी कुतिया' शब्द का प्रयोग कर दीनता की ओर अत्यधिक मार्मिक चित्र प्रस्तुत करते है क्योंकि भूखे दीन हीन व्यक्तियों के पास दीन–हीन जानवर ही हो सकते है। उसके पास अमीरों की तरह बुलडॉग या अन्य किस्म के विलायती कुत्ते नहीं हो सकते।

नागार्जुन कबीर दास के अगली कड़ी है जो 'आँखन देखी' में हामी
है। तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता आंखिन की देखी।
मैं कहता सुरझावन हारी, तू राखा उरझोय रे।।

कबीर दास में अनुभूति की सच्चाई एवं अभिव्यक्ति का खरापन विद्यमान था, वे अनुभव परक सत्य पर विश्वास करते है। वे वेद शास्त्र कर्मकाण्ड को नहीं मानते ठीक उसी प्रकार नागार्जुन की काव्य भी अनुभूति परक है। वे तुलसीदास के अत्यधिक निकट है, जो जनता को शोषण मुक्त कराने के लिए अत्यधिक व्याकुल है। वे निराला जी के हुंकार और राहुलसांकृत्यायन के फूँफकार के वाहक है। वे प्रेमचंद के साहित्य के समर्थक है जो बुद्धिजीवियों की महफिल से होती हुई खेत–खलिहानों नुक्कड़–चौराहों की तरफ उन्मुख है। 'जनता के साहित्य को जनता के लिए' बनाने में अग्रगण्य कवियों के श्रेणी में जनकवि नागार्जुन का स्थान सर्वोपरी है।

जनकवि नागार्जुन का आगमन उस समय होता है जब समाज में नैतिकता का पतन हो चुका है। चारों तरफ अंधविश्वास, अशिक्षा, भूखमरी, शोषण का बोल बाला है। देश को दिशा देने वाले बुद्धिजीवी पूँजपतियों के हाथों बिक चुके है। हर वह व्यक्ति या संस्था जिनसे कुछ उम्मीद की जा सकती है। वह स्वार्थ में लिप्त है। जहाँ समाज का हर दिशा दिग्भ्रमित हो जीवन का कोना–कोना प्रदूषित होता जा रहा हो, वहाँ शोषण मुक्त समाज का स्वप्न और उस स्वप्न के लिए संघर्ष करने वाला साहित्यकार कितना आवश्यक हो सकता है। इसका अनुमान सहजता से लगाया जा सकता है।

जनकवि नागार्जुन के काव्य स्वर देश, समाज गाँव शहर कस्बे गली–कूचों एवं पगडंडियों से होते हुए जीवन में आस्था प्रेम, सौहार, राष्ट्रीयता और मानव प्रतिष्ठा का स्वर गुंजित किया है। इनके काव्य में समाजव्यापी कुरीतियों, विकृतियों और असंगतियों को यथार्थ की दृष्टि से देखा गया है। सम्पूर्ण भारत के दु:ख दर्द पीड़ा छटपटाहट, शंका, कुशंका ग्रामीण तथा नगरीय जीवन की विद्रुपताएँ निम्न मध्यमवर्गीय जनता के अभाव के सभी रूप उनके काव्य स्वर की रागनी बनी है। एक ओर सधारण जनता की ऐसी दशा है तो दूसरी और नगरीय जीवन में व्याप्त आपाधापी, स्वार्थपरता यांत्रिकता भौतिकवादी सुख एवं ऐश्वर्य की भाग–दौड़, शोषण पूंजीपतियों के द्वारा अत्याचार को काव्य में चित्रित किया गया है।

'अध भूखे अधनंगे डोले, हरिजन–गिरिजन वन में।
खुद तो चिकनी रेशम डांरे, उड़ती फिरो गगन में।।
महँगाई के सूर्पनखा को, वैसे पाल रही हो।
शासन को गोबर जनता के, मत्थे डाल रही होय'।।

इस तरह से साधारण जनता के अहितकर चाहे जो भी हो जनकवि नागार्जुन बेहिचक उनकी बखिया उधेड़ते नजर आते है। जन आन्दोलन काव्य में प्रगतिवादी काव्य धारा के अनेक जनकवि उनके समर्थक और बलदाता रहे है और अनेक विरोधी भी रहे है। नागार्जुन किसी भी वाद आन्दोलन या फिर धारणाओं में बंधकर नही रहे चाहे वह मार्क्सवाद हो या समकालिन आंदोलन। वे किसी एक लिंक में बंध कर नहीं रहे। वे एक कुशल गृहणी की भाँति जो भोजन बनाने के लिए अन्न के दाना को अच्छी तरह सूपा में फटकार लगाती है जिससे बेकार कण बाहर हो जाते है और सकार कर्ण को ही भोजन बनाने के रूप में स्वीकार करती है जो उनके घरवालों के लिए अच्छा, होता है, ठीक उसी प्रकार जनकवि नागार्जुन भी अपने काव्य में जनहितकर स्वर को ही प्रमुखता देते है। जहाँ कही भी उनके जनविरोधी स्वर सामने आता है उनकी कवि हृदय व्याकुल हो उठता है। वे गाँधी जी, लोहिया, जवाहरलाल नेहरू, जयप्रकाश नारायण आदि महान व्यक्तियों से प्रभावित थे लेकिन जहाँ कही भी भ्रांतियाँ देखे बेहिचक आलोचना की है। शासक शोषक वर्ग के अंतर्विरोध और अत्याचार, निकम्मेपन को सिर्फ नागार्जुन के काव्य स्वर में स्पष्ट सुना गया और समझा गया है। नागार्जुन आम आदमी के पास उनकी भाषा में ही उनके करीब पहुँच जाते है। उनकी काव्य ठेठ हिन्दी का ठाठ है, जो दोरंगी नीति, दुहरी मानसिकता के खिलाफ अवाज बुलंद किया। जिससे भारतीय जनता ठगी जाती रही है। कोई भी सहज चिंतक ऐसी स्थिति में चुप नहीं रह सकता। जनकवि नागार्जुन नेहरू जी की नीतियों पर व्यंग्य किये है। वे उनसे लाभान्वित होने वाले नेताओं को भी नही छोडे है। उनका कहना है कि नेहरू दस वर्ष और रह जाते तो कांग्रेसी नेता खादी के ओट में गांजा बेचते नेहरू सभी का तेजहरण करवा देते

'होता सबका तेजहरण', जुगनू करलेती आत्मघात।
हँसते गुलाब खिलते गुलाब, कमलों का करता कौन बात।।
महलो की महँगी बिजली से, हस्ती संध्या डरता प्रभात।
जमती, अशोक के सिंहो पर, उल्लुओं की जमात।।

इस तरह से देश के नेता भी–

गरूआ पहनते जयप्रकाश, नर्मदा किनारे बस जाते।
डांगे हो जाते राज्यपाल, लोहिया जेल में बलखाते।।
गोपलन हो जाते नजर बंद, राजा की माथा घुखाते।
जनसंधी अटलबिहारी जी, मिश्रा जी की झोली फैलाते।। [1]

निष्कर्षत: नागार्जुन गाँधी लोहिया बिनोवा भावे जवाहरलाल तथा जयप्रकाश नारायण से प्रभावित रहे है किन्तु इन भारत के सपूतो के कर्त्तव्य परायणता में जहाँ कही कमी आयी इनके जनवादी काव्य का स्वर बेहिचक गुंज पड़ा है। राष्ट्र के प्रति तल्लीनता और जनजीवन के प्रति गहरी सोच तथा जनवादी मानसिकता के कारण नागार्जुन कालमार्क्स और लेनिन के प्रभावों को भी बहुत से जगहों पर नकारते हुए दिखाई देते है। [1]

नागार्जुन–'मेरे लिए साम्यवाद का मतलब स्थानीय और निकट के संघर्षो से जुड़ना है। बाहर–बाहर हम प्रगतिशील बने रहे और भीतर वही प्रतिक्रियावादी काम चलता रहे तो फिर कैसी राष्ट्रीयता और कैसी साम्यवादिता। मैं स्थानीय समस्याओं से निर्लिप्त होकर मार्क्सवादी नहीं कहलाना चाहता।' [2]

नागार्जुन के काव्य में जनशक्ति के स्वर अनुगूंजित हो रही है। जनकवि नागार्जुन सही अर्थो में भारतीय मिट्टी से बने आधुनिकतम कवि है जिनका काव्य जन–जन के चेतना में जागृति के लहर भरने में अहम भूमिका निभाती है। जन कवि नागार्जुन को जनशक्ति एवं जन संघर्ष में, अडिग आस्था, जनता से गहरा लगाव और एक न्याय पूर्वक समाज की सपना ये तीनों गुण उनके व्यक्तित्व में ही नहीं उनके काव्य के स्वर में भी रागनी बनी है। निराला

के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि है जिनके काव्यों में अन्याय के प्रति बेहिचक आक्रोश दिखाई देता है। निराला जी अनीति अत्याचार के विरूद्ध क्रांति की भावना व्यक्त करते हुए नजर, आते है। वे जन शक्ति को संगठित करना चाहते है। वे जन साधारण के हित के लिए क्रांति चाहते है। उनका मानना है कि क्रांति से शोषक वर्ग का विनाश और शोषित वर्ग का नव निर्माण होगा। निराला जी 'बादल राग' कविता में बादल को जन संगठित शक्ति का क्रांति दूत मानते है। ठीक इसी तरह जनकवि नागार्जुन के काव्य में भी जन संगठन की शक्ति तथा उसे जागृत करने की प्रेंरणा द्रष्टव्य है–

'आओ खेत मजदूर और भूमिदास नौवान।
आओ खदान श्रमिक और फैक्ट्री वर्कर नौजवान।।
आओ कैम्प के छात्र और फैक्ट्रियों की नवीन प्रवीण।
हाँ–हाँ तुम्हारे ही अंदर तैयार हो रहे है, आगामी युगों के लिवरेटर'। [3]

कवि जानता है कि इन साधारण जनों पर करूणा का मेध ऐसे नहीं बरसने वाले है इनके लिए क्रांति की आवश्यकता है जिससे पूँजीपतियों का हृदय परिवर्तन हो सके सभी को समानता का अधिकार मिले जिसे साम्यवाद की स्थापना हो सके। देश के चारो तरफ शांति और खुशियाली भर जाए मानव– में मानवता की स्थापना हो सके।

नागार्जुन के काव्य से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में जनवादी स्वर का शंखनाद सुनायी देता है चाहे वह राजनीतिक हो, प्रशासनिक हो, बौद्धिक हो, राष्ट्रीय स्वाभिमान हो, सामाजिक जगत हो, धार्मिक जगत हो। नागार्जुन राजनीति को विकृति की अमरलता मानते है, जो दुष्प्रवृत्ति से फैलती जाती है। आजादी की लड़ाई लड़ते समय भारतीय जनता ने कुछ और सपने देखे थे, जो आजादी के बाद विफल नजर आते है। आजादी के दिवाने भारतीय जनता ने रामराज्य की स्थापना चाही थी कि स्वतंत्रता बाद भारत की सरकार रामराज्य के आदर्शो और मूल्यों की दिशा में प्रयास करेगी पर इन सपनों के साथ छल करने वाली व्यवस्था पर नागार्जुन अपनी व्यंग बाणो की बौछार 'रामराज्य' नामक कविता में कहते है–

'पूंछो जाकर बतलाएँगे, तेलंगाना के मजलूम।
रामराज से कुम्भकरन का रावण का क्या नाता है।।
रामराज में रावण अबकी नंगा होकर नाचा है।
सूरज–शकल वही है भैया,बदला केवल ढांचा है।
नेताओं की नीयत बदली फिर तो अपने ही हाथो।।
भारत माता के गालों पर कसकर पड़ा तमाचा है'। [4]

नागार्जुन ने प्रशासन तंत्र के संवेदनशील स्वार्थपरायण चरित्र को काव्य के माध्यम से बार–बार बेपर्दा किया है। भारत की स्वतंत्रता और सम्मान को ठेस पहुँचाने वाली विदेशी शक्तियों की नागार्जुन ने अपनी रचना के माध्यम से पुरजोर विरोध किया है। वे इंग्लैण्ड और अमेरिका की भारतीयों के साथ मित्रता पर संदेह करते है। वे इन साम्राज्यवादी पूँजीवादी देशों की आंतरिक आकांक्षा से वाकिफ है।

सामाजिक चिंताओं से परे किसी भी तर्क की आड़ लेकर मुँह छुपाने वाले, आध्यात्म की शाश्वत खोज में लीन योगी या दार्शनिक हो या रेशमी आवरण से ढका साहित्यकार हो या फिर चाँदी की चंद दुनिया में चमकता हुआ बुद्धिजीवी वर्ग हो नागार्जुन की जनवादी चेतना से बच नहीं पाया है। समाज मे फैली विषमताओं विद्रुपताओं अनाचारों के चक्की में पिसती हुई जनता से सहानुभूति रखने वाले नागार्जुन ने उनके दु:ख दर्दो को काव्य में यथार्थ चित्रित किया है। सामन्ती व्यवस्था के पतन के बाद भी समाज में सामंती विकृति दिखाई देती है। समाज को अनेक दारूण स्थितियों का सामना करना पड़ रहा है।

जातीय दम्भ, अस्पृश्यता, नारियों की गुलामी जैसी स्थिति नारियों के प्रति सामंती व्यवस्था जिसका शिकार हमारा समाज सदियों से भोगता आ रहा है। समाज में धर्म के नाम पर न जाने कितने आडम्बर फैलाएं जाते है जिसके चक्की में साधारण जनता पिसी जाती है। 'काली माई' कविता में नागार्जुन आधुनिक जीवन की विडम्वना को उद्घाटित करते है–

'कितना खुन पिया है, जाती नहीं खुमारी।
सुर्ख और लम्बी है मइया जीभ तुम्हार।
मुंडमाल के लिए गरीबों पर निगाह है।
धनपतियों के लिए दया की खुली राह है'।

इस तरह से जनवादी कवि नागार्जुन जनता के हित के लिए समग्र क्षेत्र संवेदनशील करता है। ये सभी क्षेत्रों में जनविरोधियों पर निर्भीक होकर अपनी बात कह देते है। इनके काव्य के द्वारा जिस पर चोट की गई, वह चोट से गहरे तिलमिला उठता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'अकाल और उसके बाद' कविता–नागार्जुन।
2. उद्भावना, अंक 5.1, 5.2 कुबेर दास–पृ0 25।
3. नागार्जुन–सत्यनारायण पृ0 115।
4. 'रामराज' कविता–नागार्जुन पृ0 133–34।
5. 'काली माई' कविता–नागार्जुन।
6. प्यासी पथराई आँखे : नागार्जुन, हिन्दी काव्य संग्रह–1962 ई0।
7. नागार्जुन संवाद : डॉ0 वियज बहादुर सिंह सापेक्ष अंक–34।
8. 'बातों–बातों में' : मनोहर श्याम जोशी–लेख।
9. 'कविता' अकाल और उसके बाद–नागार्जुन।
10. 'कविता' तुम रह जाते दस साल और पाण्डुलिपि–नागार्जुन।
11. उद्भावना, कुबेरदास अंक 5.1, 5.2।
12. नागार्जुन : सत्यनारायण पृ0 115।
13. 'रामराज्य' नागार्जुन कविता।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Digital Humanities: Bridging the Gap Between Technology and Literary Studies

Aastha Jain*

***Research Scholar, Govt. Girls PG College, Ujjain (M.P.) INDIA**

Abstract : Digital Humanities (DH) is an interdisciplinary field that integrates computational tools and methodologies with traditional humanities disciplines. This research article explores the significance of DH in literary studies, focusing on its impact on text analysis, authorship attribution, cultural preservation, and the accessibility of literary scholarship. The paper also addresses challenges and ethical considerations associated with DH methodologies. Through case studies and examples, this paper highlights the transformative influence of digital humanities on literary research and its future prospects.

Introduction - The field of humanities has traditionally relied on qualitative methods of research, focusing on critical analysis and interpretation of texts. However, with the advent of computational technologies, scholars have begun leveraging digital tools to enhance literary studies. Digital Humanities represents a transformative shift, allowing for large-scale textual analysis, data visualization, and algorithmic pattern recognition in literature. By combining traditional literary scholarship with digital innovations, DH opens up new opportunities for understanding and interpreting literary texts in novel ways.

The Role of Digital Humanities in Literary Studies:

1. **Computational Text Analysis:** Digital tools enable researchers to analyze vast corpora of texts, identifying linguistic patterns, thematic structures, and stylistic elements. Techniques such as natural language processing (NLP) and machine learning allow for deeper insights into literature, beyond what manual analysis can achieve. For example, topic modeling algorithms can detect recurring themes in 19th-century novels, revealing underlying patterns of discourse that might otherwise go unnoticed.
2. **Authorship Attribution and Stylistics:** DH methodologies have been instrumental in identifying anonymous or disputed authorship. Stylometric analysis, which examines word frequency, sentence structures, and other linguistic markers, has been applied to texts like Shakespearean works and early modern literature to determine authorship authenticity. In recent years, these techniques have also been used in forensic linguistics to analyze authorship in legal and journalistic contexts.
3. **Cultural Preservation and Digital Archives:** The digitization of historical texts and manuscripts ensures their preservation and accessibility. Digital repositories, such as the Gutenberg Project and the HathiTrust Digital Library, provide open access to literary works, enabling scholars and the general public to engage with historical texts. Additionally, interactive digital archives, such as the Rossetti Archive and the Walt Whitman Archive, allow users to explore annotated versions of classic texts with multimedia elements, enhancing the reading and research experience.
4. **Accessibility and Open Scholarship:** Digital Humanities democratizes literary research by making resources available to a global audience. Open-access databases, digital libraries, and interactive platforms enhance collaboration among researchers, educators, and students. Furthermore, initiatives such as crowdsourced transcription projects empower the public to contribute to the preservation and study of historical documents, fostering community engagement in literary scholarship.
5. **Visualization and Network Analysis in Literature:** Digital Humanities employs advanced visualization techniques to illustrate relationships between literary texts, authors, and historical contexts. Network analysis tools can map connections between characters in novels, highlighting social structures and narrative dynamics. Textual heat maps, word clouds, and geographic mapping tools further enrich literary analysis by providing new ways to interpret textual data.

Challenges and Ethical Considerations: Despite its advantages, DH faces several challenges, including the risk of data bias, ethical concerns regarding digital copyrights, and the potential reduction of human-centered literary analysis. The reliance on computational methods necessitates interdisciplinary training, which can be a barrier for traditional humanities scholars. Furthermore, there is an ongoing debate about the balance between quantitative

analysis and traditional interpretive methods in literary studies. Addressing these challenges requires collaboration between computer scientists, digital librarians, and literary scholars to ensure ethical and effective use of digital tools in humanities research.

Conclusion: Digital Humanities is reshaping the study of literature by integrating technology with humanistic inquiry. While challenges remain, the field continues to evolve, offering innovative methodologies that expand the scope of literary analysis. Future research should focus on addressing ethical concerns, improving the accessibility of DH tools, and developing more sophisticated computational models to enhance literary interpretation. As digital tools become increasingly embedded in humanities research, the collaboration between technology and literary studies will continue to unlock new insights and possibilities for scholarship.

References:-

1. Berry, David M. *Understanding Digital Humanities*. Palgrave Macmillan, 2012.
2. Burdick, Anne, et al. *Digital_Humanities*. MIT Press, 2012.
3. Gold, Matthew K., and Lauren F. Klein, editors. *Debates in the Digital Humanities 2016*. University of Minnesota Press, 2016.
4. Hayles, N. Katherine. *How We Think: Digital Media and Contemporary Technogenesis*. University of Chicago Press, 2012.
5. McGann, Jerome. *Radiant Textuality: Literature after the World Wide Web*. Palgrave Macmillan, 2001.
6. Presner, Todd, et al. *Digital Humanities: A Primer for Students and Scholars*. Cambridge University Press, 2020.
7. Schreibman, Susan, Ray Siemens, and John Unsworth, editors. *A Companion to Digital Humanities*. Blackwell Publishing, 2004.
8. Terras, Melissa, Julianne Nyhan, and Edward Vanhoutte, editors. *Defining Digital Humanities: A Reader*. Routledge, 2013.

✽✽✽✽✽✽✽✽✽✽✽✽✽

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अनुसूचित जाति एवं जनजातियों में रोजगार हेतु शहरी प्रवसन (छिंदवाड़ा जिले के जुन्नारदेव तहसील के विशेष संदर्भ में)

डॉ. शैलप्रभा कोष्टा*

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाकोशल कला एवं वाणिज्य स्वशासी महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – प्रस्तुत अध्ययन म.प्र. के छिंदवाड़ा जिले के जुन्नारदेव तहसील क्षेत्र में निवासरत् विभिन्न अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के न्यादर्श परिवारो में रोजगार हेतु तहसील से बाहर शहरों की ओर पलायन के विभिन्न कारणों पर आधारित है।

जिले एवं तहसील का परिचय – म.प्र. का छिंदवाड़ा जिला जिसका गठन 1 नवम्बर 1956 को हुआ था। यह सतपुड़ा पर्वत शृंखला के दक्षिण–पश्चिम क्षेत्र में स्थित है यह 21.28 से 22.49 डिग्री उत्तर (देशांतर) और 78.40 से 79.24 डिग्री पूर्व (अक्षांश) तक फैला हुआ है और 11.815 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है।

अध्ययन क्षेत्र – जुन्नारदेव नगर सतपुड़ा पर्वतमाला की पहाड़ियों और वादियो के घने जंगलो के निकट बसा है शहर के निकट कुछ छोटी नदियां, पेंच, कन्हान प्रमुख है।

साल 2020–21 मे छिंदवाड़ा जिले के जुन्नारदेव तहसील की आबादी 561.76 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैली हुई है। इस तहसील में पुरुषों की आबादी 59,011 और महिलाओं की आबादी 57,829 थी। अनुसूचित जनजाति की आबादी 39.22 प्रतिशत है।

यहाँ एशिया का सबसे बड़ा कोयला वॉश प्लांट है। साथ ही डब्ल्यू. सी. एल. के कन्हान क्षेत्र का प्रधान कार्यालय इसी क्षेत्र में स्थित है। यहाँ की क्षेत्रीय भाषा हिन्दी, गोंडी और मराठी है। जिले का स्त्री पुरुष अनुपात काफी अच्छा है। सामान्यत: अध्ययन न्यादर्श परिवारों में पारिवारिक दायित्वो के प्रति सामूहिक उत्तरदायित्व की परम्परा रही है पति पत्नी दोनो संयुक्त रूप से परिवार के भरण–पोषण के लिए कार्य करते है फलत: क्षेत्र में स्त्रियाँ पुरुषो से मात्र कुछ कदम ही पीछे है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन निम्न उद्देश्यों पर आधारित है।

(अ) अध्ययन क्षेत्र में रोजगार हेतु वर्तमान में उपलब्ध संसाधनों का पता लगाना।

(ब) शहरी प्रवसन के प्रमुख कारणों का अध्ययन करना।

(स) प्रवसन को रोकने हेतु आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध परिकल्पना :

(अ) रोजगार के साधन जिले में पर्याप्त हैं।

(ब) रोजगार साधनों में विविधता की कमी प्रवसन हेतु उत्तरदायी है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको पर आधारित है प्राथमिक समंको के संकलन हेतु दैव निदर्शन पद्धति द्वारा न्यादर्श परिवारों का चयन किया गया है अध्ययन ग्रामीण क्षेत्र के 200 परिवारो के अनुसूचित जाति और जनजाति के व्यक्तियों का चयन किया गया है। जिनमें अनुसूचित जाति के 25 परिवार एवं जनजाति के 175 परिवारों को शामिल कर प्रवसन का विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र में विकास योजनाएँ – इस क्षेत्र के अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बेरोजगार सदस्यों के आर्थिक विकास हेतु उनकी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार स्वयं का रोजगार स्थापित करने के लिए म.प्र. शासन एवं केन्द्र के सहयोग से विभिन्न योजनाएँ संचालित है जिसमें से कुछ प्रमुख योजनाएँ इस प्रकार है–

1. आहार अनुदान योजना
2. आकांक्षा योजना
3. प्रतिभा योजना
4. आवास सहायता योजना
5. विदेश अध्ययन छात्रवृत्ति
6. प्री एवं पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति
7. मुख्यमंत्री सीखो–कमाओं योजना

व्यवसाय एवं न्यादर्श परिवार – जनजातियों की अर्थव्यवस्था उन्नत समाज की अर्थव्यवस्था से नितांत भिन्न होती है इनकी निजी आवश्यकताएँ बहुत सीमित होती है इन सीमित आवश्यकताओं के लिए प्रधानत: प्रकृति पर निर्भर रहते है। वन न केवल इनके वांछित प्रिय निवास क्षेत्र हैं बल्कि आजीविका के स्त्रोत भी रहे हैं, अब इस स्थिति में अमूल्य परिवर्तन हो गया है। हमारी आधुनिक अर्थव्यवस्था में न केवल आदिवासियों के असीमित अधिकार को समाप्त कर दिया बल्कि वन संसाधन का व्यापारिक स्तर पर दोहन प्रारंभ किया गया। आदिवासियों द्वारा वनों का परम्परागत उपयोग उस बहुमूल्य सम्पत्ति के अपव्यय के रूप में देखा जाने लगा है। सिमटते हुए वनों और उन पर निरन्तर बढते प्रतिबन्धों एवं दबावो के कारण आदिवासी समुदाय कृषि, मजदूरी और पशुपालन जैसे व्यवसाय की ओर मुड़े।

जनजातीय समुदाय इतने निर्धन हैं कि इनके पास स्वयं की कृषि भूमि तक नहीं है जिनके पास कृषि भूमि है भी तो वह बहुत कम उपजाऊ है जिसमें मोटा अनाज का ही उत्पादन हो पाता है विकल्प के रूप में केवल मजदूरी ही जनजातियों का आर्थिक स्त्रोत है वनों से प्राप्त लघु वनोपज एवं जड़ी–बूटी का संग्रह बहुत थोड़ा सा आर्थिक स्त्रोत है जो जीवन यापन के लिये पर्याप्त नहीं है।

अनुसूचित जाति परिवार के ज्यादातर सदस्य गांव के मालगुजार, बड़े किसानो के घर पर खेती से संबंधित कार्य करते हुए अपना जीवन यापन

करने का प्रयास करते है परन्तु ग्रामीण क्षेत्र में पर्याप्त मजदूरी न मिल सकने के कारण यह अनुसूचित जाति परिवार शहरो की ओर पलायन कर रहे है। अध्ययन क्षेत्र के 200 परिवारों से उनके रोजगार के बारे में जानकारी ली गई तो प्राप्त निष्कर्ष इस प्रकार है :

तालिका क्रं. 1: न्यादर्श परिवार एवं व्यवसाय (रोजगार)

क्रं.	व्यवसाय का प्रकार	अनुसूचित जनजाति	अनुसूचित जाति	योग
1	कृषि	58 (33.15)	05 (20.00)	63 (31.5)
2	मजदूरी	105 (60.00)	14 (56.00)	119 (59.5)
3	स्वयं का व्यवसाय	09 (5.14)	05 (20.00)	14 (7.00)
4	शासकीय नौकरी	01 (0.57)	---	01 (0.5)
5	अशासकीय नौकरी	02 (1.14)	01 (4.00)	03 (1.5)
	योग	175 (100)	25 (100)	200 (100)

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित समंक। कोष्ठक के समंक प्रतिशत में हैं।

उपरोक्त तालिका क्रं. 1 से स्पष्ट है, कि अनुसूचित जनजाति समुदाय के न्यादर्श परिवार सर्वाधिक मजदूरी कर रहे हैं कृषि कार्य करने वाले परिवारों की संख्या 58 अर्थात 33.15 प्रतिशत है। 59.50 प्रतिशत परिवार सबसे अधिक मजदूरी करते हैं जिससे मिलने वाली आय इतनी कम होती है कि परिवार हेतु रोटी कपड़ा जैसी बुनियादी सुविधाए जुटा पाना मुश्किल होता है।

इन न्यादर्श परिवारों में शिक्षा की कमी होने से ये सरकारी आरक्षण संबंधी सुविधाओं का लाभ नहीं उठा पाते हैं और निम्न जीवन स्तर पर हमेशा बने रहते हैं। जुन्नारदेव तहसील के ग्रामीण अंचलों में गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति के कृषक एवं भूमिहीन लोगों के लिए घर पर ही कृषि के अतिरिक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने हेतु जिले में सुविधाओं का आंकलन एवं पूर्ति की व्यवस्था हेतु उद्योग, परिवहन सुविधाऐं, संचार एवं शिक्षा जैसी आधारभूत (मूलभूत) सुविधाएँ प्रदान की गई हैं इसके अतिरिक्त प्राकृतिक संसाधनों के अंतर्गत लघु वनोत्पादों का संकलन एवं शासकीय विभिन्न रोजगार उपयोजना एवं योजनाओं के माध्यम से जिले के आदिवासी एवं अनुसूचित जाति परिवारों की आय-वृद्धि कर जीवन स्तर को उच्च बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

सर्वेक्षण के दौरान यह देखा गया है कि न्यादर्श परिवार मुख्यरूप से जल एवं वन संसाधनों के संरक्षण द्वारा रोजगार प्राप्त कर आय प्राप्त कर रहे है।

तालिका क्रं. 2

क्रं.	समुदायगत विवरण	जल संरक्षण पर आधारित कार्य में रोजगार प्राप्त परिवार				
		मत्स्यपालन	सिंचाई	वानिकी	अन्य	योग
1	अनुसूचित जनजाति	40 (22.85)	45 (25.73)	70 (40.0)	20 (11.42)	175 (100)
2	अनुसूचित जाति	06 (14.00)	12 (48.00)	05 (20.0)	02 (08.0)	25 (100)
	योग	46 (23.00)	57 (28.50)	75 (37.5)	22 (11.0)	200 (100)

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित समंक। कोष्ठक के समंक प्रतिशत में हैं।

उपरोक्त तालिका क्रं. 2 से स्पष्ट है, कि वानिकी कार्यो में सर्वाधिक 37.50 प्रतिशत न्यादर्श परिवारों को रोजगार मिला हुआ है, क्योकि जुन्नारदेव तहसील आदिवासी बहुल होने के साथ ही जिले का वन क्षेत्र भी बहुत अधिक है, परिणाम स्वरूप जिले में वानिकी कार्यक्रमों को विशेष महत्व दिया जा रहा है फिर भी इस क्षेत्र में रोजगार का प्रतिशत बहुत अधिक नहीं है।

तालिका क्रं. 3

क्रं.	समुदायगत विवरण	वन संरक्षण आधारित कार्यक्रमों/उद्योगों में रोजगार				
		लघुवन उपज संकलन	वनसंपदा पर आधारित उद्योग	औषधी पौधारोपण	अन्य	योग
1	अनुसूचित जनजाति	84 (48.0)	44 (25.15)	40 (22.85)	7 (4.0)	175 (100)
2	अनुसूचित जाति	12 (48.0)	6 (24.0)	04 (16.0)	03 (12.0)	25 (100)
	योग	96 (48.0)	50 (25.0)	44 (22.0)	10 (5.0)	200 (100)

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित समंक। कोष्ठक के समंक प्रतिशत में हैं।

उपरोक्त तालिका क्रं. 3 से स्पष्ट है, कि 200 न्यादर्श परिवारों में से 48 प्रतिशत परिवारों को लघु वन उपज संकलन में 25 प्रतिशत परिवारों को वन संपदा पर आधारित उद्योग जैसे दियासलाई, कागज, टोकनी एवं झाड़ू बनाने वाले लघु उद्योगों एवं 22 प्रतिशत परिवार औषधी पौधों के रोपण के काम में लगे हुए है, ये काम ज्यादातर अनुसूचित जनजाति परिवारों से इस कारण कराया जाता है, क्योकि इन परिवारों को इन औषधी पौधों की बहुत अच्छी पहचान होती है।

रोजगार हेतु प्रवसन :- ग्रामीण परिवारों को ज्यादातर प्रवसन की समस्या का सामना करना पड़ता है विशेष रूप से इन जनजातीय क्षेत्र के न्यादर्श परिवारों के पास उतनी भूमि नहीं है जिससे उनको साल भर कृषि कार्य हेतु रोजगार मिल सके इनके पास इस प्रकार की भूमि है जो अधिक पैदावार नहीं देती है। सिंचाई एवं अधिक उपज देने वाली भूमि के अभाव में जनजातीय समाज के सदस्यों को काम की तलाश में दूसरे स्थानों पर जाना पड़ता है। अध्ययन क्षेत्र के न्यादर्श परिवारों के व्यवसाय से संबंधित विवरण से स्पष्ट है कि ये परिवार कृषि कार्य से बचे समय में जंगल में काम कर अपनी आजीविका चलाते हैं परन्तु जंगली वनोत्पाद में कमी तथा वन नीति के कारण इन न्यादर्श परिवारों को समय एवं आवश्यकता अनुसार काम करने के लिए गांव के बाहर जाना पड़ता है इन न्यादर्श परिवारों में प्रवसन के निम्न कारण इस प्रकार हैं :

तालिका क्रं. 4: न्यादर्श परिवारों में प्रवसन के कारण

क्रं.	प्रवसन के कारण	अनुसूचित जनजाति		अनुसूचित जाति	प्रतिशत
		न्यादर्श परिवार (संख्या में)	प्रतिशत	न्यादर्श परिवार (संख्या में)	
1	मौसमी	18	10.28	2	8.00
2	माहवारी	9	5.15	1	4.00
3	पाक्षिक	15	8.57	3	12.00
4	आवश्यकतानुसार	79	45.15	13	25.00
5	सूखे के समय	40	22.85	6	24.00
6	वार्षिक	6	3.43	-	-
7	अन्य	8	4.57	-	-
	योग	175	100.00	25	100.0

स्रोत :- प्राथमिक सर्वेक्षण पर आधारित समंक।

उपरोक्त तालिका क्रं. 4 से स्पष्ट है, कि अध्ययन क्षेत्र के 45.15 प्रतिशत परिवार सबसे अधिक आवश्यकतानुसार रोजगार हेतु गांव से बाहर जाते हैं 22.85 प्रतिशत परिवारों द्वारा जिले में ही सूखे के समय प्रवसन किया जाता है वहीं मौसमी कारणों से 10.28 प्रतिशत, पाक्षिक रूप से 8.57 प्रतिशत परिवारों द्वारा ग्राम से बाहर अन्य स्थानों पर रोजगार कार्य किया जाता है।

सुझाव – उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में विकास की संभावनायें और शासन द्वारा क्षेत्र के विकास हेतु पर्याप्त धन राशि भी आवंटित की जाती रही है परन्तु इन न्यादर्श परिवारों में जागरूकता की कमी के कारण विकास कार्यक्रमों का पता ही नहीं चल पाता है फलत: इन योजनाओं से होने वाले लाभों से ये परिवार वंचित रहते हैं अत: उचित लाभ जरूरतमंद व्यक्तियों तक पहुंचाने हेतु कुछ सुझाव इस प्रकार हैं :

1. शिक्षा के समुचित विकास द्वारा इन परिवारों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ाई जा सकती है।
2. जनजातीय एवं अनुसूचित समाज के समग्र विकास हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च, तकनीकी, व्यवसायिक एवं रोजगारोन्मुखी शिक्षा के अवसर प्रदान किये जाने चाहिये ताकि स्वयं के व्यवसाय द्वारा आय अर्जित की जा सके।
3. कृषि क्षेत्र में उन्नत तकनीक के प्रयोग को प्राथमिकता दी जाना चाहिए।
4. लघु वनउपज संग्रह में स्थानीय आदिवासी परिवारों के सहयोग द्वारा निर्धन बेराजगार आदिवासियों को अल्पकालिक ही नहीं बल्कि दीर्घकालिक रोजगार की व्यवस्था की जा सकती है।
5. क्षेत्र में निवास करने वाले परिवारों की शारीरिक एवं मानसिक क्षमता को ध्यान में रखकर रोजगार उपलब्ध कराये जा सकते है।
6. रोजगार संसाधनों में विविधता द्वारा रोजगार के अवसर बढ़ाने के प्रयास होना चाहिए।
7. सूखे के समय या अन्य कारणों से होने वाले शहरी प्रवसन को रोकने हेतु तत्कालिक रोजगार उपलब्ध कराने वाले कार्यक्रमों का अध्ययन क्षेत्र में विकास किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. चतुर्वेदी, सी. एल.: 'मानव संसाधन प्रबंध', महावीर बुक डिपो 2006 पृष्ठ 248
2. गंगेले, अरूण कुमार: 'व्यष्टि अर्थशास्त्र', म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल 1995 पृष्ठ 168,16
3. सिकलागर डॉ. पूनमचन्द्र:'वन एवं आदिवासी सामाजिक जीवन', शिवा पब्लिशर्स, 1994 पृष्ठ 113
4. तिवारी, राकेश कुमार:'आदिवासी समाज में आर्थिक परिवर्तन', नार्दन बुक डिपो 1990 पृष्ठ 27
5. नेट http://www.junnerdeo.nic.in/origio/htm
6. जोशी, हेमलता:'जनजातियों का भौगोलिक अध्ययन', यूनिवर्सिटी बुक हाउस प्रा. लि. जयपुर 2000
7. गुप्ता, एस.:'रिसर्च मैथालाजी एण्ड स्टेटीकल तकनीक', दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन नई दिल्ली 2009
8. दैनिक समाचार पत्र – दैनिक भास्कर 5 अक्टूबर 2022 पृष्ठ 6

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

काव्यमीमांसा में वर्णित कविचर्या की प्रासंगिकता

डॉ. रामेश्वर प्रसाद झारिया*

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय महाकोशल कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – राजशेखर द्वारा रचित काव्यमीमांसा यद्यपि अत्यन्त विस्तृत शास्त्रीय लक्षण ग्रंथ है किन्तु कविचर्या इस मायने में सर्वथा भिन्न है, क्योंकि इसमें न तो काव्य की आत्मतत्त्व की तरह गवेशणा है और न ही स्थापना बल्कि इन सारे सिद्धांतों के इतर कवियों के व्यक्तित्व परिवेश और दिनचर्या का विषद् विवेचन हुआ है। प्रस्तुत आलेख में उन्हीं बातों की पड़ताल करना है कि संस्कृत साहित्य के विकास क्रम में यायावरीय राजशेखर द्वारा स्थापित सैद्धांतिकी वर्तमान परिद्रष्य में कितनी और कहाँ तक प्रासंगिक है और दिलचस्प है।

प्रस्तावना – यायावरीय: संक्षिप्य मुनीनां मतविस्तरम् ।
व्याकरोत्काव्यमीमांसां कविभ्यो राजशेखर:।।

(काव्यमीमांसा अध्याय–प्रथम)

कवि, कविता और कवित्व शक्ति के सर्वप्रथम वैज्ञानिक निरूपण का श्रेय यायावरीय कवि राजशेखर को ही प्राप्त है। इन्होंने कवियों की काव्यविद्यास्नातक, हृदयकवि, अन्यापदेशी, सेविता, घटमान, महाकवि, कविराज, आवेशिका, अविच्छेदी, संक्रामयिता प्रभृति दश अवस्थाएँ कही है।[1] राजशेखर ने काव्यमीमांसा के कविरहस्य नामक अधिकरण में कविचर्या का जो चित्रण किया है, उसे परवर्ती आचार्यो ने भी आदर्श रूप में स्वीकारा है। क्योंकि यह कवियों के लिये आचार या सिद्धांत कोष है। काव्यमीमांसा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कवियों का अध्ययन क्षेत्र अत्यन्त व्यापक था। कवि होना कोई आसान काम नहीं था। राजशेखर का कवि ऋग्वेद के कवि की तरह ही अमूढ़ और प्रज्ञ प्रतीत होता है।[2]

राजशेखर के शब्दों में कवि वह है, जो प्रतिभा और व्युत्पत्ति से युक्त हो–

'**प्रतिभाव्युत्पत्तिमांष्च कवि: कविरित्युच्यते।**'

(काव्यमीमांसा अध्याय–पंचम्)

उनके मतानुसार काव्य विद्या के शिक्षार्थी द्वारा काव्योपयोगिनी विद्याओं और काव्य की उपविद्याओं का अच्छी तरह से अध्ययन हो जाने के पश्चात् ही काव्य–रचना की ओर प्रवृत्त होना चाहिए।[3]

व्याकरण, कोष, छन्द और अलंकार ये काव्योपयोगी मुख्य विद्याएँ हैं, चौंसठ कलाएँ काव्य की उपविद्याएँ हैं। इन विद्याओं और उप विद्याओं में निपुणता प्राप्त करने के अतिरिक्त कवियों के सत्संग, देश–विदेश के समाचार, विशिष्ट विद्वानों की सूक्तियों, लोक व्यवहार, विद्धद्घोष्ठी और प्राचीन कवियों के प्रबंधों का मनन करना इत्यादि आवश्यक था। उनकी मान्यता थी काव्य ज्ञान के लिये शास्त्र ज्ञान आवश्यक है। जिस प्रकार बिना दीपक के पदार्थो का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं किया जा सकता, उसी प्राकर शास्त्र ज्ञान के बिना काव्य ज्ञान असम्भव है–

'**शास्त्रपूर्वकत्वात् काव्यानां पूर्वं शास्त्रेष्वभिनिविषत्।**'

(काव्यमीमांसा अध्याय–द्वितीय)

आचार्य राजशेखर ने कविचर्या के अन्तर्गत कुशल कवि में जिन आठ गुणों का होना आवश्यक बतलाये हैं[4]– स्वास्थ्य, प्रतिभा, अभ्यास, भक्ति, विद्धत्कथा, बहुश्रुतता, स्मृति, दृढ़ता और उत्साह इत्यादि गुणों के अभाव में कवि के व्यक्तित्व का समुचित विकास संभव नहीं है।

एक अच्छे कवि के लिये उसके रहन–सहन एवं वातावरण का अच्छा होना आवश्यक है। राजशेखर का कथन है कि कवि को सर्वदा पवित्र रहना चाहिए। उनके अनुसार पवित्रता तीन प्रकार की है[5]–

1. वाणी की पवित्रता,
2. मानसिक पवित्रता,
3. शारीरिक पवित्रता।

वाणी की पवित्रता शास्त्रों द्वारा प्राप्त होती है, मन की पवित्रता योग से और शारीरिक पवित्रता के लिये हाथों और पैरों के नाखून हमेशा कटे रहना चाहिए। मुख में ताम्बूल हो, शरीर पर चंदनादि का लेप होना चाहिए। सदा स्वच्छ और उत्तम वस्त्रों को धारण करना चाहिए।

यायावरीय का अभिमत है कि कवि का काव्य पर उसके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप पड़ती है। यह प्रसिद्ध है कि चित्रकार अपने ही अनुरूप चित्र बनाता है।[6] राजशेखर अनुसार कवि की प्रतिभा या उसके मानसिक संस्कार पर उसके आचार–विचार का भी बहुत प्रभाव पड़ता है।[7] कवि को सदा मुस्कुराते हुए बातें करनी चाहिए, परन्तु वार्तालाप में गम्भीरता बरतनी चाहिए। रहस्य अन्वेषण में रूचि रखनी चाहिए। समय का सदुपयोग परदोश–दर्शन से परहेज और आग्रह करने पर समुचित आलोचना करनी चाहिए। कवि के आसपास के वातावरण के विषय में यायावरीय का कथन है कि कवि का भवन साफ सुथरा और लिपा पुता होना चाहिए। साथ ही कवि का प्रसाधन साफ सुथरा होना चाहिये। प्रत्येक ऋतु में कवि के बैठने के लिये पृथक–पृथक स्थान होना चाहिये। गृह वाटिका के वृक्षों की सुखद छाया में और लता कुंजों में बैठने के सुन्दर स्थान होना चाहिए। वाटिका विस्तृत और समुन्नत होनी चाहिए। जब कवि काव्य निर्माण करते–करते खिन्न चित्त वाला हो जावे तो उस समय एकान्त बना रहे और कवि जब शांत होकर मनोरंजन करना चाहे, तब उस

समय उसके परिजन व्यवधान न डालें।[8] उनका मानना है कि कवि का मित्र सभी भाषाओं में प्रवीण होना चाहिए। कवि का लिपिकार सभी भाषा में कुशल, शीघ्रवादी, सुन्दर अक्षरों को लिखने वाला, इशारे से समझने वाला, नाना लिपियों को जानने वाला, कवि तथा लाक्षणिक होना चाहिए।[9] उनके अनुसार कवि के पास स्लेट-पेन्सिल, सामान रखने का डिब्बा, कलम तथा स्याही, ताडपत्र या भुर्जपत्र, और लिपी पुती भित्तियां सर्वदा रहना चाहिये। आचार्यो का कथन है ये समग्र पदार्थ काव्य विद्या के परिकर (सहायक) हैं पर राजशेखर का कथन है- **'प्रतिभैव परिकर' इति यायावरीय:**।[10] अर्थात् प्रतिभा ही परिकर है। आचार्य राजशेखर अनुसार पुरूषों के समान स्त्रियाँ भी कवि हो सकती हैं उनके विवरण से यह प्रतीत होता है कि वे स्त्री तथा पुरूष को समान दृष्टि से देखते थे। उनके विचार से संस्कार दोनों में समान होते हैं अत: उनके विकास का समान अवसर मिलना चाहिए-

'संस्कारो ह्यात्मनि समवैति, न स्त्रैणं पौरूषं वा विभागमभवेक्षते।'
(काव्यमीमांसा अध्याय-दशम्)

उनके समय में स्त्रियाँ कविता भी करती थीं, जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण स्वत: उनकी पत्नी अवन्तिसुन्दरी थी। कर्पूरमंजरी में चेटी आदि दासियाँ भी अच्छी तरह कविता कर लेती थीं, जिसकी प्रशंसा स्वयं राजा चन्द्रपाल भी किया करते थे। कवि कर्म के लिये राजशेखर समय के सदुपयोग पर बल देते थे, क्योंकि समय का नियमित विभाग न करके किए जाने वाले कार्य विनष्ट हो जाते हैं। इसलिए दिन और रात को प्रहरों के हिसाब से चार-चार भागों में विभक्त कर लेना चाहिए।[11]

कवि को प्रात: काल उठना चाहिए। स्नान आदि दैनिक क्रिया के उपरान्त सरस्वती का पाठ करना चाहिए। तदनन्तर विद्याभवन में सुखपूर्वक बैठकर एक प्रहर तक काव्य की विद्या एवं उपविद्याओं का अनुशीलन करना चाहिए, क्योंकि प्रतिभा बढ़ाने के लिये अभ्यास जरूरी है।

कवि को इसके प्रहर में काव्य रचना का अभ्यास करनी चाहिए। भोजन उपरान्त काव्य गोष्ठी अर्थात् काव्य विषयक चर्चा करना चाहिए। तीसरे प्रहर की इस दिनचर्या में काव्य संबंधी विभिन्न विषयों का विवेचन करना चाहिए। चौथे प्रहर में एकाकी या सीमित अभिन्न मित्र मण्डली के साथ प्रात: काल की गई रचनाओं का पुनर्निरीक्षण करना चाहिए। गुण-दोष की विवेचना उपरान्त अव्यवस्थित पदों को सजाकर रखना और भूले या छूटे पदों का अनुसंधान करना चाहिए।

इसी प्रकार सायंकाल के प्रथम प्रहर में सायंकालीन संध्या वंदन और सरस्वती-स्त्रोत का परायण करना चाहिए। तत्पश्चात् दिन में लिखी हुई और परीक्षित काव्य रचना के प्रथम प्रहर के अन्त तक लिख कर पूर्ण कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् मानसिक श्रम निवृत्ति के लिये स्त्री-सहवास में मन बहलाने का कार्य करना चाहिए-

'यावदर्तिस्त्रियमभिमन्येत्।'(काव्यमीमांसा अध्याय-दशम्)

इस प्रसंग में श्री डी.सी. दलाल का यह विचार द्रष्टव्य है- Here the word 'आर्ति' denotes राग or इन्द्रियदौर्वल्य, Rajasekhara instructs Poets not to indulge in sexual excesses and advises them to have recourse to women only to remove their अर्ति or mental weakness similar usage can be found in the mahabhasya of Patanjali (1-1-1) where the word खेद is used instead of अर्ति' Cf.'खेदात् स्त्रीशु प्रवृत्तिर्भवति। समानष्च खेदविगमो गम्यायां चागम्यामांच।।'[12]

दूसरे और तीसरे प्रहर में भली - भाँति शयन करना चाहिए, क्योंकि अच्छी नींद स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। चौथे प्रहर में अवश्य उठना चाहिए, क्योंकि ब्रह्म मुहूर्त में मन निर्मल रहता है जिससे गूढ़ से गूढ़ तथा अलौकिक विषयों की भी प्रत्यक्ष अनुभूति करा देता है।

इस प्रकार उपर्युक्तानुसार जो कवि दिन-रात का विभाजन करके कविता की रचना करता है उसका काव्य विद्वानों के कण्ठ में सुशोभित होता है। यायावरीय ने कविचर्या के अन्तर्गत कवि के द्वारा आलस्य करने पर पांच विपत्तियों का उल्लेख किया है[13] - (1) दरिद्रता[14](2) दुर्व्यसनों में आसक्ति (3) काव्य क्रिया का तिरस्कार (4) दुर्भाग्य (5) दुष्टों और शत्रुओं पर विश्वास। उनका मानना है कि काव्य रचना के समय, उसका संस्कार करते समय ही पूर्ण करना चाहिए, उसे बाद के लिए नहीं छोड़ना चाहिए। कवि को लोक निन्दा के भय से ग्रसित नहीं होना चाहिए, उसे अपने को और अपनी वस्तु को स्वयं यथार्थ रूप से समझना चाहिए, क्योंकि जनता तो कुछ भी कहती रहती है, उसके जवान में लगाम नहीं रहती और अच्छी से अच्छी वस्तु की भी कुछ लोग निन्दा करते रहते हैं। लोक में प्रत्यक्ष कवि की कविता, कुलस्त्रियों का रूप और घरेलू वैद्य की चिकित्सा- ये तीन बातें किसी-किसी को अच्छी लगती है, इस संदर्भ में राजशेखर का स्पष्ट कहना है-

प्रत्यक्ष कवि काव्यं च रूपं च कुल योषित:।
ग्रहवैद्यस्य विद्याचकस्मैचिद्यदि रोचते।।
(काव्यमीमांसा अध्याय-दशम्)

इस तरह कहा जा सकता है कि कवि को सर्वदा लोक निन्दा के भय से अपनी स्वतंत्र भावना तथा यथोचित बातों को व्यक्त करने से विरत नहीं होना चाहिए।

यायावरीय ने कविचर्या के अन्तर्गत विस्तृत जानकारी प्रदान किये हैं जो सम्पूर्ण मानव समाज के लिये प्रेरणा स्त्रोत है। यथा- भवन लिपा पुता होना चाहिए, गाय के गोबर से लिपा और चूना से पुता भवन कीटाणु से मुक्त होते हैं। इसी प्रकार स्वच्छता पर विशेष बल दिया है। बालभारत में राजशेखर ने कहा है-

'संस्कार सौचयेन परं पुनीते।' (बालभारत 1/9)

निष्कर्षत: आचार्य राजशेखर के काव्यमीमांसा में वर्णित कविचर्या का जब हम सूक्ष्मता से विचार करते है तो यह स्पष्ट होता है कि जिज्ञासु शिष्यों के लिये काव्य निर्माण-ज्ञान के असंख्य द्वारों के उद्घाटनकर्ता तथा अपने ही मौलिक विषयों के आलोक से स्वत: आलोकित है। यह तो स्वयंसिद्ध है कि काव्य जैसी मानवीय मूल्यों से सुसज्जित सृजन के लिए कवि को मनसा, वाचा और कर्मणा से पवित्र, उन्नत और संवेदनशील होना ही चाहिए। तभी कवि का विचार मानव समाज के लिए हितकर हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दश च कवेरवस्था भवन्ति....। तद्यथा काव्यविद्यास्नातको, हृदयकवि:, अन्यापदेशी, सेविता, घटमान:, महाकवि कविराज, आवेशिक:, अवेच्छेदी संक्रामयिता च काव्यमीमांसा। (काव्यमीमांसा अध्याय-पंचम)
2. अमूर: कविरदितिर्विवस्वान्त्युसंसन्मित्रो अतिथि: शिवो: न:। ऋग्वेद- 7 मंडल 9 सूक्त 3 मंत्र (7-9-3)
3. गृहीत विद्योपविद्य: काव्य क्रियायै प्रयतेत्। काव्यमीमांसा-अध्याय-दशम्-राजशेखर

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

4. स्वास्थ्यं प्रतिभाभ्यासो भक्तिर्विद्वत्कथा बहुश्रुतता।
स्मृतिदार्श्यमनिर्वेदश्च भातरोऽष्टौ कवित्वस्य।।
काव्यमीमांसा अध्याय दशम्।
5. वही– 'शुचिशीलं हि सरस्वत्या: संवहनमामनन्ति।'
6. काव्यमीमांसा अध्याय दशम्–'यादृशाकारश्चित्र कारस्तादृशाकारमस्य चित्रमिति प्रयोगवाद:।'
7. वही–'नह्येवंविधमन्यत्प्रतिभा हेतुर्यथा प्रत्यग्रसंस्कार:।'
8. वही– दशम् अध्याय
9. वही– दशम् अध्याय
10. वही– दशम् अध्याय
11. वही– दशम् अध्याय
12. राजशेखर और उसका युग–उद्धृत पृष्ठ– 247 पाण्डेय रामेश्वर प्रसाद शर्मा
13. काव्यमीमांसा अध्याय–दशम्
14. देशं कालं च विभजमान: कविर्नार्थदर्शनदिशि दरिद्राति।
(काव्यमीमांसा अध्याय सप्तदशम्)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सिंध के बौद्ध राजाओं के समय का सामाजिक सांस्कृतिक वैभव, एक ऐतिहासिक अध्ययन (चचनामा के विशेष संदर्भ में)

डॉ. आकाश ताहिर*

* सहा. प्राध्यापक एवंविभागाध्यक्ष (इतिहास) पी.एम.सीओ.ई. शासकीय कला एवं वि. महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोध पत्र चचनामा में वर्णित तथ्यों के आधार पर सिंध के बौद्ध राजाओं के शासनकाल के दौरान हुए सामाजिक सांस्कृतिक विकास का विश्लेषण करता है। तत्कालिन समय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, सामाजिक विकास, सांस्कृतिक विकास, सांस्कृतिक विकास और अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में सिंध ने बौद्ध धर्म और भारतीय संस्कृति को अन्य क्षेत्रों में फैलाया।

शोध पत्र का उद्देश्य: बौद्ध राजाओं शासनकाल में हुए विकास का अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में किस प्रकार महत्व था और सिंध किस तरह एक महत्वपूर्ण व्यापारिक और सांस्कृतिक केंद्र के रूप में उभरा। दूसरे शब्दों में इस शोध पत्र का उद्देश्य विभिन्न प्रश्नों का उत्तर निकालना है जैसे– सिंध के बौद्ध राजाओं के शासनकाल में सामाजिक और सांस्कृतिक विकास किस प्रकार हुआ। बौद्ध धर्म ने सिंध के समाज और संस्कृति को किस प्रकार प्रभावित किया। सिंध के व्यापारिक और सांस्कृतिक संबंध अन्य देशों के साथ कैसे थे।

सिंध, भारत के पश्चिमोत्तर में स्थित एक ऐतिहासिक क्षेत्र, प्राचीन काल से ही विभिन्न सभ्यताओं और संस्कृतियों का संगम रहा है।[1] इस क्षेत्र का इतिहास विभिन्न राजवंशों के उत्थान और पतन का साक्षी रहा है। चचनामा, जो की एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथ है, हमें सिंध के बौद्ध राजाओं के शासनकाल के दौरान सामाजिक और सांस्कृतिक विकास की जानकारी प्रदान करता है।[2] इस शोध पत्र में हम चचनामा में वर्णित तथ्यों के आधार पर सिंध के बौद्ध राजाओं के समय के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास का विश्लेषण करेंगे।

चचनामा के अनुसार, सिंध में बौद्ध धर्म का प्रसार तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में सम्राट अशोक के शासनकाल के दौरान हुआ था।[3] सम्राट अशोक के प्रयासों से बौद्ध धर्म न केवल भारत में फैला, बल्कि इसने सीमावर्ती क्षेत्रों में भी अपनी जड़ें जमाई। सिंध जो की व्यापारिक मार्गो के चौराहे पर स्थित था, बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया।[4] इसके बाद, कई बौद्ध राजाओं ने सिंध पर शासन किया। जिनके शासनकाल में इस क्षेत्र में सामाजिक और सांस्कृतिक विकास को बढ़ावा मिला। इन राजाओं में से कुछ प्रमुख थे राय वंश, जिन्होंने सिंध पर कई शताब्दियों तक शासन किया। राय वंश के शासनकाल में सिंध ने राजनीतिक स्थिरता और आर्थिक समृद्धि का अनुभव किया। जिसने सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान किया।[5]

सिंध में कई बौद्ध राजाओं ने शासन किया। चचनामा और अन्य ऐतिहासिक ग्रंथों में कुछ प्रमुख राजाओं का उल्लेख मिलता है। यहां कुछ प्रमुख बौद्ध राजाओं और उनके वंशों का विवरण दिया गया है–

1. **राय वंश :** यह वंश सिंध का एक प्राचीन और शक्तिशाली वंश था। इस वंश के राजाओं ने सिंध पर कई शताब्दियों तक शासन किया। राय वंश के प्रमुख राजाओं में से कुछ थे राय दीवाच, राय सहरासी और राय दुहर।[6]

राय दीवाच : शासनकाल लगभग 450 ई.– 520 ई.

राय सहरासी : शासनकाल लगभग 520 ई.– 550 ई.

राय दुहर : शासनकाल लगभग 550 ई.– 622 ई.

2. **चच वंश :** यह वंश राय वंश के बाद सत्ता में आया। चच वंश के संस्थापक चच था। चच के बाद उनका पुत्र दाहिर राजा बना।[7]

चच : शासनकाल लगभग 632 ई.– 671 ई.

दाहिर : शासनकाल लगभग 671 ई.– 712 ई.

सामाजिक विकास: सिंध के बौद्ध राजाओं के शासनकाल में सामाजिक विकास अपने चरम पर था। बौद्ध धर्म के प्रभाव ने समाज को अधिक समावेशी और समतापूर्ण बनाया।[8] बौद्ध धर्म ने जाति और वर्ण के आधार पर भेदभाव को नकारते हुए सभी मनुष्यों की समानता का समर्थन किया। इस विचारधारा ने समाज में सामाजिक समरसता को बढ़ावा दिया और विभिन्न वर्गो के बीच सहयोग और सद्भाव को प्रोत्साहित किया।[9] बौद्ध शिक्षा और संस्थानों के विकास ने समाज में ज्ञान और शिक्षा के स्तर को भी बढ़ाया। बौद्ध मठ और विश्वविद्यालय जैसे की मोहनजोदड़ो और तक्षशिला शिक्षा के प्रमुख केंद्र बन गए। जहां न केवल बौद्ध धर्म की शिक्षा दी जाती थी बल्कि अन्य विषयों जैसे की दर्शन, विज्ञान, और कला का भी अध्ययन किया जाता था।[10] इन संस्थानों ने समाज में ज्ञान और शिक्षा के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और समाज को अधिक प्रगतिशील और विचारशील बनाया।

सांस्कृतिक विकास: सिंध के बौद्ध राजाओं के शासनकाल में सांस्कृतिक विकास भी अपने चरम पर था। बौद्ध धर्म के प्रसार ने कला, साहित्य और वास्तुकला को बढ़ावा दिया।[11] इस समय में कई स्तूपों, विहारों और चैत्यों का निर्माण हुआ जो बौद्ध कला और वास्तुकला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।[12] इन संरचनाओं में बुद्ध की मुर्तियों और जातक कथाओं के चित्रण ने बौद्ध कला की उत्कृष्टता को प्रदर्शित किया। इसके अलावा बौद्ध विद्वानों और

दार्शनिकों ने विभिन्न विषयों पर महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखे जिन्होंने भारतीय संस्कृति और ज्ञान को समृद्ध किया। इन ग्रंथों में बौद्ध धर्म के सिद्धांतों, दर्शन, और नैतिकता का विस्तृत वर्णन है, जो आज भी बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण स्रोत हैं।[13]

सिंध में संगीत, नृत्य और नाटक जैसी ललित कलाओं का भी विकास हुआ। बौद्ध धार्मिक उत्सवों और त्योहारों ने इन कलाओं को बढ़ावा दिया और समाज में सांस्कृतिक गतिविधियों को प्रोत्साहित किया। इन कलाओं ने न केवल लोगों का मनोरंजन किया बल्कि उन्होंने बौद्ध धर्म के संदेशों को भी जन-जन तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[14]

उपसंहार: चचनामा में वर्णित के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि सिंध के बौद्ध राजाओं के शासनकाल में सामाजिक और सांस्कृतिक विकास अपने चरम पर था। बौद्ध धर्म के प्रभाव ने समाज को अधिक समावेशी और समतापूर्ण बनाया, जबकि कला, साहित्य और वास्तुकला के विकास ने सांस्कृतिक समृद्धि को बढ़ावा दिया।[15] इन विकासों का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी प्रभाव था। जिससे सिंध एक महत्वपूर्ण व्यापारिक और सांस्कृतिक केंद्र के रूप में उभरा। सिंध के बौद्ध राजाओं का शासनकाल भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण अध्याय है, जो हमें सामाजिक समरसता, सांस्कृतिक विकास और अंतरराष्ट्रीय संबंधों के महत्व के बारे में बहुमूल्य सबक सिखाता है।[16]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंध का इतिहास: डॉ. एच. टी. लमानी, पृ. 12।
2. चचनामा: पृ. 5।
3. चचनामा, पृष्ठ संख्या 52।
4. सिंध का इतिहास, डॉ. एच. टी. लमानी, पृ. 78
5. वही, पृ. 92।
6. सिंध का इतिहास: डॉ. एच. टी. लमानी, पृ. 12।
7. चचनामा: पृ. 78।
8. बौद्ध धर्म का इतिहास: आचार्य नरेंद्र देव, पृ. 125।
9. भारत की सांस्कृतिक विरासत, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, पृ. 88।
10. प्राचीन भारत का आर्थिक एवं सामाजिक इतिहास, डॉ. राधाकृष्ण चौधरी, पृ. 152।
11. बौद्ध धर्म का इतिहास, आचार्य नरेंद्र देव, पृ. 152।
12. भारतीय कला एवं संस्कृति का इतिहास, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, पृ. 95।
13. प्राचीन भारत का इतिहास, डॉ. रामशरण शर्मा, पृ. 188।
14. भारतीय कला एवं संस्कृति का इतिहास, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, पृ. 210।
15. चचनामा, पृ. 285।
16. सिंध का इतिहास, डॉ. एच.टी. लमानी, पृ. 310।
17. Ancient Sindh: A Study in its Civilization: M.R. Majumdar
18. The History of Sindh: Mir Ali Sher Qanbar
19. Buddhist Art in India: Heinrich Zimmer

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई-लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना

डॉ. कृष्णकान्त शर्मा* राजेन्द्र कुमार वैष्णव**

* डीन, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा एवं प्राचार्य भगवती टी.टी.कॉलेज, गंगापुरसिटी, सवाई माधोपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी,कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध कोटा जिले के माध्यमिक स्तर के ई-लर्निंग करवाने वाले विद्यालयों के छात्र-छात्राओं की ई-लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पढ़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना है। इस शोध में शोधार्थी ने पाया कि छात्राओं की ई-लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव छात्रों की अपेक्षा अधिक है।

प्रस्तावना – वर्तमान समय जब दुनिया एक छत के नीचे स्थित है तब शिक्षा में होने वाले क्रांतिकारी परिवर्तनों से कोई भी व्यक्ति अछूता कैसे रह सकता है। वर्तमान समय में इन्टरनेट के विभिन्न साधनों की सहायता से शिक्षा की पहुंच प्रत्येक व्यक्ति तक विश्व में किसी भी कोने तक पहुंचाई जा सकती है जिसके द्वारा एक योग्य नागरिक तैयार किया जा सकता है। आज के समय में मोबाइल द्वारा विश्व की कोई भी जानकारी तत्काल किसी भी व्यक्ति को उपलब्ध कराई जा सकती है। ऐसे समय में शिक्षा का क्षेत्र इस तकनीकी से कैसे अछूता रह सकता है। ई-लर्निग में छात्रों की शिक्षण के प्रति अभिरूचि में वृद्धि कर उनकी शैक्षिक उपलब्धि में सकारात्मक परिवर्तन करने में सक्षम है क्योंकि ई-लर्निंग द्वारा छात्रों को शिक्षण सामग्री को रोचक मनोरंजन युक्त व आकर्शक बनाकर उनकी सीखने की समता के अनुसार विशय-विशेषज्ञों की सलाह से तैयार कर प्रत्येक समय प्रदान की जा सकती है इसके द्वारा एक ही सामग्री को बार-बार दौरान कराकर छात्रों की शैक्षिक योग्यता को बढ़ाया जा सकता है जिससे उनकी शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि की जा सकती है। प्राप्त करने के कई तरीके है जिसमें परम्परागत कक्षा शिक्षण की तकनीकी व शिक्षण विधियों का व्यापक प्रभाव होता है तकनीकी, शिक्षण विधियों को रोचक व सरल बनाने में प्रमुख योगदान देती है जिसके कारण शिक्षण कार्य को सहज व आसान बनाया जा सकता है और सभी छात्रों तक पहुंचाया जा सकता है। ई-लर्निंग के द्वारा विद्यार्थियों के शिक्षण सम्बन्धि समस्याओं का तकनीकी द्वारा तुरन्त समाधान कर शिक्षण में आई रूकावट को दूर करना और उनकी शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि करना है। ई-लर्निंग द्वारा विद्यार्थियों को विशय विशेषज्ञों की सलाह से गुणांत्मक युक्त शिक्षण सामग्री तैयार कर विद्यार्थियों को शिक्षण सामग्री प्रदान कर उनकी शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि की जा सकती है।

वर्तमान में शिक्षण कार्य को सरल, सुगम व व्यापक बनाने हेतु कई तकनीको का प्रयोग किया जा रहा है जिनमें ई-लर्निंग भी सम्मिलित है इसके द्वारा वर्तमान में सरकार दुरस्थ विश्वविद्यालयों के द्वारा दूरस्थ स्थानों पर स्थित विद्यार्थियों को जोड़ने का प्रयास कर रही है।

समस्या का औचित्य – इस शोध का उद्देश्य माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई-लर्निंग के विभिन्न संसाधनों का छात्र-छात्राओं की अभिरूचि पर पड़ने वाले प्रभाव का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव ज्ञात करना है इस हेतु संर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है जिसके लिए व्यछादिक न्यादर्श तकनीक का प्रयोग किया गया। जिसका मुख्य परिणाम में पाया गया है कि माध्यमिक स्तर की छात्राओं की ई-लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव माध्यमिक स्तर के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि से अधिक पाई गई।

समस्या कथन – माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई-लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

सम्बंधित साहित्य का अध्ययन :

टी. टेरेन (2014) छात्रों की अभिरुचि उद्दीपन को प्रभावित करने में ई-लर्निंग के योगदान के अध्ययन मैं पाया कि छात्रों की लर्निंग द्वारा उनकी अभिरुचि वह उद्दीपन में वृद्धि होती है जिससे उनके अध्ययन बाधा दूर होती है वह छात्र अपनी काटी से अध्ययन कर सकते हैं।

मनीषा कौशलेष (2012) छात्रों की अभिरुचि समायोजन एवं वैज्ञानिक अभिवृत्ति पर बहू आगामी शैक्षिक उपागम का प्रभाव एक अध्ययन इस शोध के निम्न उद्देश्य थे । इन्होंने 200 छात्र छात्राओं पर अध्ययन किया। जिसमें पाया कि बहुआयामी शैक्षिक उपागमों के अध्ययन में अधिक प्रयोग करते हैं उन विद्यार्थियों की वैज्ञानिक अभिवृत्ति तथा साहित्य एवं विज्ञान के प्रति अभिरुचि उच्च पाई गई है। खेल कला एवं सामाजिक कार्य के प्रति अभिरुचि तथा समायोजन में बहुआयामी शैक्षिक उपागम का उपयोग करने पर अभिरुचि में कोई अंतर नहीं पाया गया।

गुप्ता सुधिर कुमार (2001) मध्यप्रदेश के माध्यमिक स्तर के छात्र अध्यापकों की अभिरुचि में अभिवृद्धि हेतु कम्प्यूटर आधारित अभिकरणों का अध्ययन में पाया गया कि कम्प्यूटर आधारित अभिकरणों का छात्रों की अभिरुचि अभिवृद्धि में सकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं।

बाना, बीना (2008) पिछड़े व सामान्य बालकों में सीखने की समस्या व अभिरुचि में अभिवृद्धि हेतु इंटरनेट छात्रों की अभिरुचि वृद्धि में सहायक है।

परिकल्पना

प्रथम परिकल्पना

H_0: माध्यमिक स्तर के छात्रों की ई–लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नही पड़ता है।

H_1: माध्यमिक स्तर के छात्रों की ई–लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव पड़ता है।

द्वितीय परिकल्पना

H_0: माध्यमिक स्तर के छात्राओं की ई–लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नही पड़ता है।

H_1: माध्यमिक स्तर के छात्राओं की ई–लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव पड़ता है।

तृतीय परिकल्पना

H_0: माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई–लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नही पड़ता है।

H_1: माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई–लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव पड़ता है।

शोध परिसीमाएं – प्रस्तुत शोध कोटा जिले में स्थित ई–लर्निंग आधारिक अधिगम प्रदान करने वाले माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों तक सीमित रखा गया है।

जनसंख्या न्यादर्श – प्रस्तुत शोध कोटा जिले में स्थित ई–लर्निंग आधारिक अधिगम प्रदान करने वाले माध्यमिक विद्यालयों के 150 छात्र एवं 150 छात्राओं तक सीमित रखा गया है।

शोध विधि – प्रयुक्त शोध में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

शोध उपकरण – प्रयुक्त शोध हेतु शोधार्थी में शोध निर्मित ई–लर्निंग अभिरूचि मापने का प्रयोग किया गया है जिसमें 40 प्रश्न हां–ना सम्बन्धित है जिनको विशय विशेषज्ञों की सलाह से तैयार किया गया है इस प्रश्नावली विश्वसनियता .82 है।

शोध तकनीकी – प्रयुक्त शोध हेतु टी परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या

सारणी 1: छात्र एवं छात्राओं की वेब आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण

	N	*छात्र*		*छात्रा*			
ई–लर्निंग अभिरूचि		Mean	SD	Mean	SD	SED	t value
वेब आधारित	150	30.6	5.3	31.4	4.9	0.41	1.9

*Df=150+150-2=298 T value at 0.05=1.96*and 0.01=2.59***

उपरोक्त सारणी 1 में छात्र एवं छात्राओं की वेब आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण के परिणामों को दर्शाया गया है।

सारणी में प्राप्त परिकलित (कैलकुलेटेड) टी मान 1.9 प्राप्त हुआ है, जो स्वतंत्रता के अंश 598 पर टी के टेबल मान 0.05 स्तर पर टी के टेबल का मान 1.96 से निम्न होने के कारण शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत करते हुए कहा जा सकता है कि, वेब आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का छात्र एवं छात्राओं में सार्थक अंतर नही पाया जाता है।

***सारणी 2:* छात्र एवं छात्राओं की वेब आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको का तुलनात्मक अध्ययन**

	प्रतिशत मध्यमान	
ई–लर्निंग अभिरूचि	छात्रा	छात्र
वेब आधारित	71.3	69.5

आरेख 1: छात्र एवं छात्राओं की वेब आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको की तुलनात्मक स्थिति

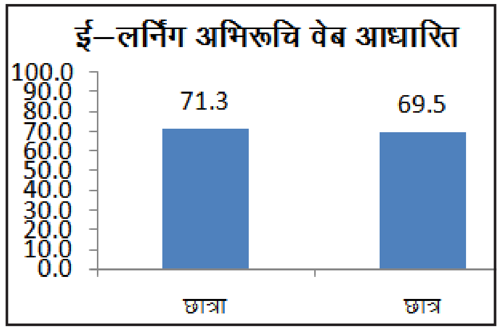

सारणी 2 एवं आरेख 1 को समेकित रूप में देखने पर स्पष्ट होता है कि वेब आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का स्तर में जहां छात्र समूह का प्रतिशत मध्यमान 69.5 प्राप्त हुआ है वहीं छात्राओं के द्वारा 1.8 प्रतिशत अधिक अर्थात 71.3 प्रतिशत के साथ नगण्य प्राप्त हुई है, अर्थात शोध में चयनित समूह में वेब आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर जेंडर का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्राप्त नहीं हुआ है

सारणी 3: छात्र एवं छात्राओं की कम्प्यूटर आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण

	N	*छात्र*		*छात्रा*			
ई–लर्निंग अभिरूचि		Mean	SD	Mean	SD	SED	t value
कम्प्यूटर आधारित	150	28.9	7.2	34.0	5.7	0.53	9.6**

Df=150+150-2=298 T value at 0.05=1.96 and 0.01=2.59***

उपरोक्त सारणी 3 में छात्र एवं छात्राओं की कम्प्यूटर आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण के परिणामों को दर्शाया गया है।

सारणी में प्राप्त परिकलित (कैलकुलेटेड) टी मान 9.6 प्राप्त हुआ है, जो स्वतंत्रता के अंश 598 पर टी के टेबल मान 0.01 स्तर पर 2.59 से उच्च होने के कारण 99 प्रतिशत विश्वास के साथ शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत करते हुए कहा जा सकता है कि, कम्प्यूटर आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का छात्र एवं छात्राओं में सार्थक अंतर पाया जाता है। इसमें भी छात्रा समूह छात्र समूह के अपेक्षा सार्थक स्तर पर उच्च प्राप्त हुआ है।

सारणी 4: छात्र एवं छात्राओं की कम्प्यूटर आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको का तुलनात्मक अध्ययन

	प्रतिशत मध्यमान	
ई–लर्निंग अभिरूचि	छात्रा	छात्र
कम्प्यूटर आधारित	70.8	60.2

आरेख 2: छात्र एवं छात्राओं की कम्प्यूटर आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का प्राप्त प्रतिशत मध्यमान प्राप्तांको की तुलनात्मक स्थिति

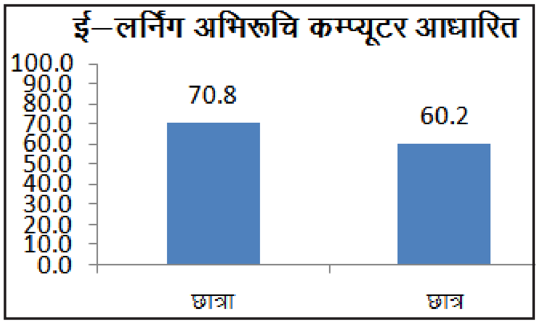

सारणी 4 एवं आरेख 2 को समेकित रूप में देखने पर स्पष्ट होता है कि कम्प्यूटर आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का स्तर में जहां छात्र समूह का प्रतिशत मध्यमान 60.2 प्राप्त हुआ है वहीं छात्राओं के द्वारा 10.6 प्रतिशत अधिक अर्थात 70.8 प्रतिशत के साथ उच्च प्राप्त हुई है, अर्थात शोध में चयनित समूह में कम्प्यूटर आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर जेंडर का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्राप्त हुआ है

सारणी 5: छात्र एवं छात्राओं की मोबाइल आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण

	N	*छात्र*		*छात्रा*			
ई–लर्निंग अभिरूचि		Mean	SD	Mean	SD	SED	t value
मोबाईल आधारित	150	**30.7**	**5.8**	**31.7**	**8.7**	0.61	1.7

Df=150+150-2=298 T value at 0.05=1.96* and 0.01=2.59**

उपरोक्त सारणी 5 में छात्र एवं छात्राओं की मोबाइल आधारित अभिरूचि प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण के परिणामों को दर्शाया गया है।

सारणी में प्राप्त परिकलित (कैलकुलेटेड) टी मान 1.7 प्राप्त हुआ है, जो स्वतंत्रता के अंश 598 पर टी के टेबल मान 0.05 स्तर पर 1.96 से निम्न होने के कारण 99 प्रतिशत विश्वास के साथ शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत करते हुए कहा जा सकता है कि, मोबाइल आधारित अभिरूचि पर छात्र एवं छात्राओं में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

सारणी 6: छात्र एवं छात्राओं की मोबाइल आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको का तुलनात्मक अध्ययन

	प्रतिशत मध्यमान	
ई–लर्निंग अभिरूचि	छात्रा	छात्र
मोबाईल आधारित	56.6	54.8

आरेख 3: छात्र एवं छात्राओं की मोबाइल आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त प्रतिशत मध्यमान प्राप्तांको की तुलनात्मक स्थिति

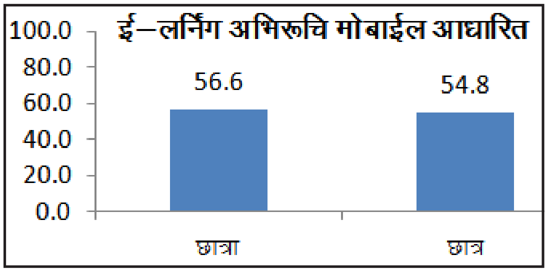

सारणी 6 एवं आरेख 3 को समेकित रूप में देखने पर स्पष्ट होता है कि मोबाइल आधारित अभिरूचि स्तर में जहां छात्र समूह का प्रतिशत मध्यमान 54.8 प्राप्त हुआ है वहीं छात्राओं के द्वारा 1.8 प्रतिशत अधिक अर्थात 56.6 प्रतिशत के साथ नगण्य अन्तर प्राप्त हुई है, अर्थात शोध में चयनित समूह में मोबाइल आधारित अभिरूचि पर जेंडर का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्राप्त नहीं हुआ है

सारणी 7: छात्र एवं छात्राओं की आभासी कक्षाएं आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण

	N	*छात्र*		*छात्रा*			
ई–लर्निंग अभिरूचि		Mean	SD	Mean	SD	SED	t value
आभासी कक्षाएं	150	28.4	6.1	35.1	7.2	0.55	12.3**

Df=150+150-2=298 T value at 0.05=1.96* and 0.01=2.59**

उपरोक्त सारणी 7 में छात्र एवं छात्राओं की आभासी कक्षाएं आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण के परिणामों को दर्शाया गया है।

सारणी में प्राप्त परिकलित (कैलकुलेटेड) टी मान 12.3 प्राप्त हुआ है, जो स्वतंत्रता के अंश 598 पर टी के टेबल मान 0.01 स्तर पर 2.59 से उच्च होने के कारण 99 प्रतिशत विश्वास के साथ शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत करते हुए कहा जा सकता है कि, आभासी कक्षाएं आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर छात्र एवं छात्राओं में सार्थक अंतर पाया जाता है। इसमें भी छात्रा समूह छात्र समूह के अपेक्षा सार्थक स्तर पर उच्च प्राप्त हुआ है।

सारणी 8: छात्र एवं छात्राओं की आभासी कक्षाएं आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त प्रतिशत मध्यमान प्राप्तांको का तुलनात्मक अध्ययन

	प्रतिशत मध्यमान	
ई–लर्निंग अभिरूचि	छात्रा	छात्र
आभासी कक्षाएं	67.6	54.7

आरेख 4: छात्र एवं छात्राओं की आभासी कक्षाएं आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको की तुलनात्मक स्थिति

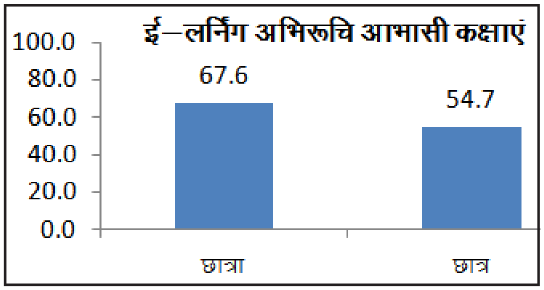

सारणी 8 एवं आरेख 4 को समेकित रूप में देखने पर स्पष्ट होता है कि आभासी कक्षाएं आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि का स्तर में जहां छात्र समूह का प्रतिशत मध्यमान 54.7 प्राप्त हुआ है वहीं छात्राओं के द्वारा 12.9 प्रतिशत अधिक अर्थात 67.6 प्रतिशत के साथ उच्च शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त हुई है, अर्थात शोध में चयनित समूह में आभासी कक्षाएं आधारित ई–लर्निंग अभिरूचि पर जेंडर का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्राप्त हुआ है

सारणी 9: छात्र एवं छात्राओं की सभी साधनों पर आधारित ई-लर्निग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण

	N	*छात्र*		*छात्रा*			
ई-लर्निंग अभिरूचि		Mean	SD	Mean	SD	SED	t value
कुल योग	150	118.6	13.5	132.2	15.3	1.18	11.6**

Df=150+150-2=298 T value at 0.05=1.96* and 0.01=2.59**

उपरोक्त सारणी 9 में छात्र एवं छात्राओं की सभी साधनों से आधारित ई-लर्निंग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको में अंतर की सार्थकता हेतु टी परीक्षण के परिणामों को दर्शाया गया है।

सारणी में प्राप्त परिकलित (कैलकुलेटेड) टी मान 11.6 प्राप्त हुआ है, जो स्वतंत्रता के अंश 598 पर टी के टेबल मान 0.01 स्तर पर 2.59 से उच्च होने के कारण 99 प्रतिशत विश्वास के साथ शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत करते हुए कहा जा सकता है कि, सभी साधनों से आधारित ई-लर्निंग अभिरूचि पर छात्र एवं छात्राओं में सार्थक अंतर पाया जाता है। इसमें भी छात्रा समूह छात्र समूह की अपेक्षा सार्थक स्तर पर उच्च प्राप्त हुआ है।

सारणी 10: छात्र एवं छात्राओं की सभी साधनों पर आधारित ई-लर्निग अभिरूचि पर प्राप्त प्रतिशत मध्यमान प्राप्तांको का तुलनात्मक अध्ययन

	प्रतिशत मध्यमान	
ई-लर्निग अभिरूचि	छात्रा	छात्र
कुल योग	66.1	59.3

आरेख 5: छात्र एवं छात्राओं की सभी साधनों पर आधारित ई-लर्निग अभिरूचि पर प्राप्त मध्यमान प्राप्तांको की तुलनात्मक स्थिति

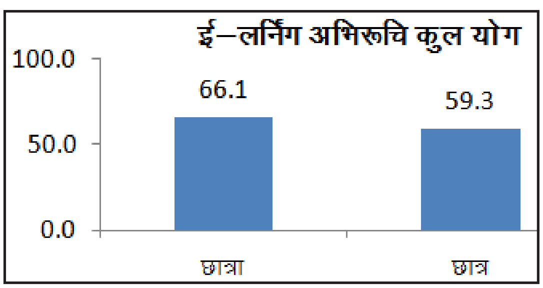

सारणी 10 एवं आरेख 5 को समेकित रूप में देखने पर स्पष्ट होता है कि सभी साधनों से आधारित ई-लर्निग अभिरूचि स्तर में जहां छात्र समूह का प्रतिशत मध्यमान 59.3 प्राप्त हुआ है वहीं छात्राओं के द्वारा 6.8 प्रतिशत अधिक अर्थात 66.1 प्रतिशत के साथ उच्च शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त हुई है, अर्थात शोध में चयनित समूह में सभी साधनों से आधारित ई-लर्निग अभिरूचि पर जेंडर का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्राप्त हुआ है।

परिणाम :

1. उपरोक्त टेबल 9 व 10 तथा आरेख 5 से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई-लर्निग के प्रति अभिरूचि का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर छात्रों की अपेक्षा छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि अधिक पाई गई। अत: परिकल्पना H_0 सिद्ध होती है।
2. उपरोक्त टेबल 9 व 10 तथा आरेख 5 से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई-लर्निंग के सभी साधनों के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पाया जाता है। अत: परिकल्पना H_0 सिद्ध होती है।

निष्कर्ष :

1. माध्यमिक स्तर की छात्र की ई-लर्निंग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव छात्राओं की अपेक्षा कम पाया जाता है।
2. माध्यमिक स्तर की छात्राओं की ई-लर्निग के प्रति अभिरूचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि का प्रभाव छात्रों की अपेक्षा अधिक पाया जाता है।
3. माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की ई-लर्निंग के प्रति शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव नहीं पाया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. टी टेरेन (2014) छात्रों कि अभिरूचि व उद्दीपन को प्रभावित करने में ई-लर्निंग के प्रभाव का अध्ययन, अप्रकाशित पीएच डी शोध हावर्ड विश्वविद्यालय अमेरिका।
2. बाना, बीना (2008) पिछड़े व सामान्य बालकों में सीखने कि समस्या तथा अभिरूचि में वृद्धि हेतु इन्टरनेट कि भूमिका का अध्ययन, अप्रकाशित पीएच डी शोध महाराजा गंगा सिंह विश्वविद्यालय बीकानेर।
3. गुप्ता, सुधीर कुमार (2001) मध्यप्रदेश के माध्यमिक स्तर के छात्र अध्यापकों कि अभिरूचि में वृद्धि में कम्प्यूटर आधारित अभिकरणों का अध्ययन, अप्रकाशित पीएच डी शोध बरकतुल्ला विश्वविद्यालय भोपाल।

Websites:-

1. www.education.india.gov.in
2. www.shodhgangotri.ac.in
3. www.shodhganga.ac.in
4. www.ignou.ac.in
5. www.wikipedia.org
6. www.cbse.nic.in
7. www.mios.ac.in

Report & Commissions:-

1. Reports of New education policy (2020)
2. Reports of secondary education commission (1952-1953) Ministry of education govt of India
3. Reports of the Text book committee of C.A.B.E. (1945)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

एथलीटों के बहिर्मुखी व्यक्तित्व लक्षणों और खेल प्रदर्शन के स्तर का एक सहसंबंधनात्मक अध्ययन

योगेंद्र सिंह राजपूत*

* शोधार्थी (शारीरिक शिक्षा) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – बहिर्मुखी व्यक्तित्ववाले खिलाड़ी दुसरो के कार्यो में ध्यान देते है, तथा इन कार्यो को करने में आनंद महसूस करते है। मैदानी स्पर्धा क्रीडा प्रकारों में बहुर्मुखी व्यक्तित्ववाले खिलाड़ी अधिक दिखाई देते है। समाज के सामान्य व्यक्ति समुह की अपेक्षा किसी भी खेल में सहभागी होने वाले खिलाड़ी अधिक प्रमाण में बहुर्मुखी होते है, क्योकि उन्हें निरंतर दुसरो की भावना, सहकार्य तथा सहयोग इन आन्तरक्रियाओं में अधिक सम्मिलित होना होता है। इसी कारण अधिकतर खिलाडियों में बहुर्मुखी व्यक्तित्व दिखाई देता है। मैदानी खेलों में बेहतर प्रदर्शन करने की द्रष्टि से खिलाडियों में बहुर्मुखी व्यक्तित्व होना अत्यंत आवश्यक है।

प्रस्तावना – आधुनिक काल में प्रदुषण तथा अन्य विभिन्न प्रकार की समस्याओं का समावेश पाया जाता है। यह देखा जाता है की बालक के द्वारा इन सभी के परिणामस्वरूप पूर्ण रूप से स्वस्थता की ओर अग्रसित नहीं हुआ जा सकता। इसलिए यह अति आवश्यक माना जाता है कि आज मनुष्य को इन सभी प्रकपो से बचाने की ओर बल दिया जाए। शारीरिक शिक्षा के आधार पर यह एक कार्य भली भांति किया जा सकता है। इसके आधार पर बालक के द्वारा भली भांति उन्नति प्राप्त की जाती है। यह देखा जाता है की आज शारीरिक रूप से स्वास्थ्यता प्राप्त करने के उपरान्त ही मनुष्य के द्वारा पूर्ण रूप से विकास किया जा सकता है। जब तक वह शारीरिक रूप से स्वस्थ नहीं होता है। तब तक वह भली भांति अपने जीवन में विभिन्न प्रकार की क्रियाओ का क्रियान्वयन नहीं कर सकता।यह अध्ययन मैदानी खेलों (एथलेटिक्स) में सहभाग लेनेवाले खिलाडियों के मानसिक गुण विशेषो को समझने में मददगार होगा। यह अध्ययन मैदानी खेलों (एथलेटिक्स) में सहभाग लेनेवाले खिलाड़ियों के क्रीडा प्रदर्शन के स्तर में वृद्धि के लिये भी बहुत महत्वपूर्ण होगा। यह अध्ययन शारीरिक शिक्षकों, खेल प्रशिक्षको को मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेनेवाले खिलाडियों के क्रीडा प्रदर्शन के संबंध को समझने के लिए सहायता प्रदान करेगा।

संबंधित साहित्य का अध्ययन

जंग (2000)[9] द्वारा प्रस्तुत अध्ययन में खेल के दौरान होनेवाली चोटो का एथलीटों के मानसिकता पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया। खेल के दौरान होने वाली चोटों के कारण मानसिकता पर होने वाले प्रभाव का सांख्यिकिय पद्धती से अध्ययन किया गया। प्रस्तुत अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला गया कि, खेल के दौरान होने वाली चोटों के दौरान एथलीटों का करियर दांव पर लग जाता है। तथा यह चिज उनकी मानसिकता पर गहरा प्रभाव डालती है।

लॉरी और डूदा (2010)[10] ने अमेरिकन और आफ्रिकन एथलीट्स के मध्य साध्य प्रोत्साहन का अध्ययन किया। अध्ययन हेतु 13 से 18वर्ष की आयु के अनेक पश्चिमी मध्य स्कूलों से ट्रैक एण्ड फिल्ड के एथलीट्स लिये गये। 117 अमेरिकी एथलीट्स समेह में 66महिला और 52 पुरुष थे। तथा 56 अफ्रिकन एथलीट समूह में 23 महिला और 32 पुरुष थे। ट्रैक एण्ड फिल्ड के ये एथलीट कार्य की और साहस के साथ अभिमुख थे तथा ये प्राथमिक रूप से इस बात पर विश्वास करते थे कि परिश्रम और परिश्रमी प्रयासों से सफलता मिलती है। इन एथलीट में साधारण रूप से जातिगत पहिचान का उच्च स्तर था।

श्री स्मिथ तथा सहकारियों (2002)[11] द्वारा विद्यालय में व्यवहार समस्यासे ग्रस्त विद्यार्थियों की समस्या निवारण हेतू एक कार्यक्रम तयार किया गया। इस कार्यक्रम में समुह परामर्श तथा ज्युडो इस खेल के प्रशिक्षण का समावेश किया गया। ज्युडो यह खेल अहिंसक खेलो की श्रेणी में आता है। इस खेल के प्रशिक्षण से व्यक्ती कें सामाजिक, मानसिक तथा शारीरिक विकास में सहायता होती है। इस अध्ययन हेतु व्यवहार समस्या से ग्रस्त 15 से 20 विद्यार्थीयों का चयन किया गया। तथा इन विद्यार्थियों को 10 सप्ताह तक ज्युडो का प्रशिक्षण दिया गया। इस अध्ययन के परिणाम यह दर्शाते है की, कार्यक्रम में संम्मिलीत सार्थक रूप से अधिकांश विद्यार्थियों के सामाजिक तथा विद्यालयीन सहपाठीयों के साथ व्यवहार में सकारात्मक बदलाव देखा गया।

अनिश बॅनर्जी (2002)[12] ने उच्च और निम्न स्तर की शारीरिक योग्यतावाले सेंकडरी स्कूलों के फुटबॉल की कलाकौशल को सीखने की योग्यता का तुलनात्मक अध्ययन करने के उद्देश्य से यह अनुसंधान संचालित किया। अध्ययन हेतु 45 छात्रों की शारीरिक योग्यता का परीक्षण करने के बाद 30 छात्रों का इस अध्ययन के लिये अंतिम चयन किया गया जिसमें 15 छात्र उच्च स्तर की शारीरिक योग्यतावाले और 15 छात्र निम्न स्तर की शारीरिक योग्यतावाले थे। इन सभी 30 छात्रों के लिये 6 सप्ताह का फुटबॉल कैम्प लगाया गया।

शारीरिक योग्यता का स्तर ज्ञात करने हेतू निम्नलिखीत परीक्षण किये

गये :

1. जठार (पेट) की स्नायुओं की क्षमता
2. सार्जेन्ट जम्प (पैरों की स्नायुओं की क्षमता)
3. 50 मीटर डैश
4. 4x10 मीटर शटल दौड़ (चपलता का मापन)
5. बैठना और पहुँचना (तन्यता का मापन)
6. 12 मिनिट तक दौड़ना / चलना (हृदय की सहनशक्ति का मापन)

प्रत्येक परीक्षण के स्कोर को प्रामाणिक स्कोर में परिवर्तन किया गया। और औसत स्कोर की गणना की गई। शोधकर्ता द्वारा हाई किक, लांग किंक और ड्रिबलिंग को फुटबॉल की कलाकौशल में अचुकता के पैमाने तय किया गया। इन तीनों कलाओं में उच्च और निम्न स्तर की शारीरिक योग्यता समूहों के प्रारंभिक और अंतिम स्कोर को रिकार्ड किया गया। मुख्य अंतर की टी – टेस्ट से सार्थकता मानी गई।

0.05 स्तर से सार्थकता का आकलन को प्रारंभिक स्कोर माना गया।

अध्ययन के अंत में निम्नलिखीत परिणाम सामने आये :

1. हाई किक और लांग किक में उच्च स्तर की शारीरिक योग्यता के छात्रों के समूह के प्रदर्शन की अचूकता में सार्थक अंतर देखा गया।
2. निम्न स्तर की शारीरिक योग्यता के छात्रों के समूह के प्रदर्शन में किसी भी कला कौशल में कोई सार्थक अंतर नहीं देखा गया।

समस्त प्रकार की खोजों के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकले :

1. उच्च शारीरिक योग्यता के खिलाड़ी निम्न शारीरिक योग्यता के खिलाड़ियों की अपेक्षा फुटबॉल की कला कौशल में हाईकिक और लांग किक में जल्दी ही अचूक हो जाते है।
2. फुटबॉल की कला कौशल ड्रिबलिंग खिलाड़ी की शारीरिक योग्यता के स्तर पर निर्भर नहीं करती है।

परिसीमाएं :

1. यह शोध कार्य दक्षिणी राजस्थान के उदयपुर संभाग तक के विद्यार्थियों तक सीमित है।
2. यह शोध कार्य विश्व विद्यालय में अध्ययनरत एथेलेटिक्स प्रतियोगिता में भाग लेने वाले पुरुष एथलीट विद्यार्थियों तक सीमित है।

उद्देश्य :

1. एथलिटों के अंतर्मुखी व्यक्तिव गुण विशेष स्तर का अध्ययन करना।
2. एथलिटों के बहिर्मुखी व्यक्तिव गुण विशेष स्तर का अध्ययन करना।
3. एथलिटों के खेल प्रदर्शन स्तर का अध्ययन करना।

परिकल्पना:

1. एथलिटों के अंतर्मुखी व्यक्तिव गुण विशेष वाले खिलाड़ियों में सार्थक अंतर अधिक है।
2. एथलिटों के बहिर्मुखी व्यक्तिव गुण वाले खिलाड़ियों में सार्थक अंतर अधिक है।
3. एथलिटों के खेल प्रदर्शन स्तर का संतोषजनक है।

उपकरण – प्रस्तुत शोध में आंकड़ों के एकत्रीकरण करने हेतु निमलिखित उपकरणों का प्रयोग किया जाएगा।

1. श्री यज्ञ सिंह तथा एच. सी. चिमा द्वारा निर्मित स्पोर्ट्स स्पेसिफिक पर्सनल्टी टेस्ट।
2. अजीज एवं रेखा गुप्ता द्वारा निर्मित इन्ट्रोवर्जन एवं एक्सटरोवर्षन इनवेंटरी प्रश्नावलियों का प्रयोग किया जाएगा।

परिणाम :

1. अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि समाजशीलता व्यक्तिव गुण विशेष मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 34.9 $\pm$4.3 तथा जंपर्स का 48.6 $\pm$3.5 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रतीत होता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि समाजशीलता व्यक्तिव गुण विशेष सार्थक ($p<0.05$) अधिक प्रबलता पाई गई है।

2. अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि प्रभुत्व व्यक्तित्व गुण विशेष मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 46.4 $\pm$4.9 तथा जंपर्स का 47.9 $\pm$4.2 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रतीत होता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि प्रभुत्व व्यक्तित्व गुण विशेष में सार्थक रूप से अंतर नहीं है।

3. अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि बहिर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 30.8 $\pm$2.9 तथा जंपर्स का 44.9 $\pm$4.6 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह पता चलता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि बहिर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष में सार्थक सार्थक ($p<0.05$) रूप से अधिक प्रबलता पाई गई है।

4. अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि रूढ़िवादिता व्यक्तित्व गुण विशेष मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 33.7 $\pm$3.4 तथा जंपर्स का 24.8 $\pm$2.8 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रतीत होता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि रूढ़िवादिता व्यक्तित्व गुण विशेष में सार्थक (<0.05) रूप से कम है।

5. अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि स्व संकल्पना व्यक्तित्व गुण विशेष मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 43.9 $\pm$3.8 तथा जंपर्स का 45.2 $\pm$4.9 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रतीत होता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि स्व संकल्पना व्यक्तित्व गुण विशेष स्तर में सार्थक रूप से अंतर नहीं है।

6. अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि मानसिक कठोरता मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 46.2 $\pm$4.2 तथा जंपर्स का 48.3 $\pm$2.9 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रतीत होता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि मानसिक कठोरता में सार्थक रूप से अंतर नहीं है।

7. अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि भावनात्मक स्थिरता व्यक्तित्व गुण विशेष मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 49.6 $\pm$4.1 तथा जंपर्स का 42.8 $\pm$3.9 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रतीत होता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि भावनात्मक स्थिरता व्यक्तित्व गुण विशेष में सार्थक

(<0.05) रूप से अधिक प्रबल है।

8. अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि अंतर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 34.9 ±4.3 तथा जंपर्स का 48.6 ±3.5 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रतीत होता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि अंतर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष में सार्थक <0.05 रूप से अधिक प्रबल है।

9. (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले खिलाड़ियों कि बहिर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष मध्यमान मानक विचलन तथा टी रेशीयों दर्शाया गया है। जिसमे रनर्स का मध्यमान 34.9 ±4.3 तथा जंपर्स का 48.6 ±3.5 है। प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रतीत होता है की मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि बहिर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष में सार्थक ($p<0.05$) रूप से अधिक प्रबल है।

निष्कर्ष :

1. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों की तुलना में जंपर्स खिलाड़ियों कि समाजशीलता व्यक्तिव गुण विशेष सार्थक रूप से अधिक प्रबल है।
2. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे अथलेटिक्स में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि प्रभुत्व व्यक्तित्व गुण विशेष सार्थक रूप से अंतर नहीं है।
3. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों में बहिर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष स्तर सार्थक रूप से अधिक है।
4. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि रूढ़िवादिता व्यक्तित्व गुण विशेष का सार्थक रूप से कम है।
5. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि स्व संकल्पना व्यक्तित्व गुण विशेष सार्थक रूप से अंतर नहीं है।
6. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि मानसिक कठोरता सार्थक रूप से अंतर नहीं है।
7. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि भावनात्मक स्थिरता व्यक्तित्व गुण विशेष सार्थक रूप से अंतर है।
8. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि अंतर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष सार्थक रूप से अधिक है।
9. प्रस्तुत शोधकार्य में प्राप्त तथ्यों के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष के रूप मे मैदानी खेलों (अथलेटिक्स) में सहभाग लेने वाले धावकों एवं जंपर्स खिलाड़ियों कि बहिर्मुखता व्यक्तित्व गुण विशेष सार्थक रूप से अधिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हेरोल्ड के. जैक, 'मिनेसोटा उच्च शिक्षा कार्यक्रम के शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम का विश्लेषण,' रिसर्च ट्रामासिक 17 (मार्च 1946): 24
2. गार्डनर एल. और हेनरी डब्ल्यू. रीकेन एडल्ट सब्जेक्ट्स के जर्नल ऑफ कंसल्टिंग साइकोलॉजी में मंदी का जन्म हो रहा है।, 15(1),1951, पीपीपी 18–2।
3. केमिसन जे., 'वर्ष 1958–59 वाशिंगटन के साम्राज्य क्षेत्र के द्वीप में ग्रामीण सार्वजनिक प्राथमिक स्कूलों में शारीरिक शिक्षा का एक सर्वेक्षण,' स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा और मनोरंजन 2 (1960), पृष्ठ 72 में पूरा शोध।
4. मिजुगुची, एन.के.'जूनियर एंड सीनियर हाई स्कूल होनोलूलू, हवली में फिजियोलॉजी के शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम कासर्वो,' निबंध सार इंटरनेशनल, 32, 1972, 3379ए–4166ए।
5. लोकेन्द्र शरण,'लघु प्रबंध हनुमान व्यायाम प्रसारक मंडल द्वारा शारीरिक शिक्षक तैयार करके खेलों का विकास में योगदान ,' नागपुर विद्यापीठ में प्रस्तुत 1980
6. ए.के. उप्पल, ए.सिंधु,एण्ड एस.आर.गंगोपाध्याय,'अ स्टडी ऑफ स्पोर्ट्स मोटिवेशन ऑफ इंडियन एंड झिम्बोम्बिय वुमेन हॉकी टीम' एन.आय.इस.साइंटिफिक जनरल 11.2. (1988), 17.20
7. कारमेन वेवर,'दि रिलेशनशिप ऑफ कॉलेज स्टूडेंट अचिवमेंट मोटिवेशन टू फेमेली चुजन एन इंस्पायरेशन : एन एनलिसिस बाय रेस एण्ड गेंडर' डेझरटेशन अबस्ट्रेक्ट इंटर नेशनल , 50 (1990), 1665.
8. डेल्वीन केटली,'एन ओवरव्यू ऑफ अचिवमेंट थेअरी' रिसर्च क्वार्टरली फार एक्सरसाइज एंड स्पोर्ट्स स्पलिमेंट 63:1(मार्च 1992), 77
9. जुंगे ए., खेल चोटों पर मनोवैज्ञानिक कारकों का प्रभाव। साहित्य की समीक्षा, अमेरिकन जर्नल ऑफ स्पोर्ट्स मेड। 2000,28(5 सप्लीमेंट):एस10–5।10.
10. लोरी ए. गानो एण्ड एल. डूदा,'पर्सनल थेअरिज ऑफ अचीवमेंट मोटिवेशन अमंग आफ्रिकन एंड वाइट मेनस्ट्रीम अमेरिकन एथलेटिस', इंटरनेशनल जनरल ऑफ स्पोर्ट्स सायकोलोजी, वोल्यूम 32 (2001रू 339–341.
11. डेविड स्मिथ, जेय पारे, डेविड्य ग्रेवेल, फ्रैन्सिन स्कूल निलंबन का विकल्प: जोखिम वाले छात्रों के लिए एक हस्तक्षेप। रिपोर्ट – वर्णनात्मकय भाषण/बैठक पत्र, 2002–04–00

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अलग-अलग भोगोलिक क्षेत्र के विद्यार्थियों कि हिमेटोलॉजीकल चरों का एक तुलनात्मक अध्ययन

महेश कुमार शर्मा *

* शोधार्थी (शारीरिक शिक्षा) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – भारत में ही राजस्थान राज्य के भौगोलिक क्षेत्र की सरंचना में पहाड़ी क्षेत्र समतल क्षेत्र दोनों ही प्रकार के क्षेत्र में जनता निवास करती है। राजस्थान का इतिहास आलोकीक है, यहाँ पर पहाड़ क्षेत्र में अरावली पर्वत माला गुजरती है, इसलिए राजस्थान में भौगोलिक क्षेत्र में पहाड़, पठार समतल रेगिस्तान सभी प्रकार के क्षेत्र विद्यमान है।

प्रस्तावना – इस संशोधन में राजस्थान के पहाड़ी क्षेत्र तथा समतल क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत छात्र वर्ग कि शारीरिक योग्यता के चरों के हाथ ओर कंधों के स्नायुओं का स्नायु बल तथा सहन शक्ति, तेज गति तथा गति सुमेल, पैर का विस्फोटक बल, तथा रुधिराभिसरण श्वसन सहन शक्ति का ध्यान रखने मे मदद मिलेगी। राजस्थान राज्य के पहाड़ी क्षेत्र तथा समतल क्षेत्र के अलग अलग क्षेत्र पुरुषों कि बी. एम. आई., वजन तथा उंचाई का पता चलेगा जिससे खेल जगत में इसका लाभ होगा। राजस्थान राज्य के पहाड़ी क्षेत्र तथा समतल क्षेत्र के अलग अलग क्षेत्र पुरुषों कि हिमेटोलॉजीकल के चरों का लाल रक्त कणो, श्वेत रक्त कणो, प्लेटलेट्स, हीमोग्लोबिन आदि का पता चलेगा जिससे स्वास्थ्य का ख्याल रहेगा। इस अभ्यास से शारीरिक शिक्षकों को खेल के अनुसार चयन करने में मदद होगी। इस अभ्यास से अच्छे खिलाड़ियों को परसंद करने में मदद मिलेगी। इस अभ्यास से शारीरिक शिक्षा के प्रशिक्षण के कार्यक्रम तैयार करने में सहायता मिलेगी। इस अभ्यास से मेडिकल के क्षेत्र में भी मदद मिलेगी।

उद्देश्य :

1. अलग अलग भोगोलिक क्षेत्र के विद्यार्थियों कि हिमेटोलॉजीकल चरों का एक तुलनात्मक अध्ययन।
2. राजस्थान राज्य के पहाड़ी क्षेत्र तथा समतल क्षेत्र के अलग अलग क्षेत्र पुरुषों कि हिमेटोलॉजीकल के चरों का मापन करना।
3. राजस्थान राज्य के पहाड़ी क्षेत्र तथा समतल क्षेत्र के अलग अलग क्षेत्र पुरुषों कि हिमेटोलॉजीकल के चरों की आपस में तुलना करना।

परिकल्पना :

1. राजस्थान राज्य के पहाड़ी क्षेत्र तथा समतल क्षेत्र के अलग अलग क्षेत्र पुरुषों कि हिमेटोलॉजीकल के चरों में सार्थक अंतर देखने को मिलेगा।

क्र.	चर	परीक्षण	मापन विधि
1.	लालरक्त कण	हीमोटोलॉजी अनालिसिस मशीन	(माइकोलीटर) Mil./cu.Mm
2.	श्वेत रक्त कण	हीमोटोलॉजी अनालिसिस मशीन	G/di (माइकोलीटर) Gms/100ml
3.	प्लेटलेट्स	हीमोटोलॉजी अनालिसिस मशीन	(माइकोलीटर) Mil./cu.Mm
4.	हीमोग्लोबीन	हीमोटोलॉजी अनालिसिस मशीन	G/di (माइकोलीटर) Gms/100ml

सीमाएं – जो घटक शोधकर्ता के नियंत्रण के में नहीं है वह इस प्रकार से है।

1. विद्यार्थियों का सामाजिक एवं आर्थिक स्तर को नियंत्रण से बाहर रखा था।

परिसीमाएं :

1. यह शोध कार्य राजस्थान तक के विद्यार्थियों तक सीमित था।
2. यह शोध कार्य राजकीय विद्यालय में अध्ययनरत माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों तक सीमित था।
3. आयु सीमा अधिकतम 14 से 18 वर्ष तक विद्यार्थियों तक सीमित था।

आंकड़ों का विश्लेषण – अलग अलग भोगोलिक क्षेत्र के विद्यार्थियों कि हीमोटोलॉजीकल चरों कि तुलना करने के लिए विचरण प्रथक्करण (ANOVA) टेस्ट का प्रयोग किया गया था। मध्यमान के बीच पता करना के लिए LSD (Least Significant Difference) परीक्षण द्वारा 0.05 स्तर से सार्थकता मापी गई थी।

अध्ययन के परिणाम:

1. अलग अलग भोगोलिक क्षेत्र में विद्यार्थियों की हीमोग्लोबिन परीक्षण का समतल क्षेत्र के 13.30, देखने को मिला था, तथा पहाड़ी क्षेत्र में 14.88, मध्यमान देखने को मिला था। तथा दोनों समूहों मध्यमान विचरण 26.57, देखने को मिला था। तथा दोनों समूहों के प्राप्तांक का मध्यमान विचरण 2.14, देखने को मिला था। जबकि 't' रेशीयों 12.40 देखने को मिला था। जिसे टेबल की वेल्यू के साथ देखने पर सार्थकता का स्तर 0.05 स्तर 't' = 0.05 (3,196) कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। हीमोग्लोबिन परीक्षण में दोनों समूहों में कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। समानता पाई गई थी।

2. अलग अलग भोगोलिक क्षेत्र में विद्यार्थियों की लाल रक्त कण परीक्षण का समतल क्षेत्र के 5.07, देखने को मिला था, तथा पहाड़ी क्षेत्र में 5.09, मध्यमान देखने को मिला था। तथा दोनों समूहों मध्यमान विचरण 11.12, देखने को मिला था। तथा दोनों समूहों के प्राप्तांक का मध्यमान विचरण 0.35, देखने को मिला था। जबकि 't' रेशीयों 31.84 देखने को मिला था। जिसे टेबल की वेल्यू के साथ देखने पर सार्थकता का स्तर 0.05 स्तर 't' =

0.05 (3,196) कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। लाल रक्त कण परीक्षण में दोनों समूहों में कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। समानता पाई गई थी।

3. अलग अलग भोगोलिक क्षेत्र में विद्यार्थियों की श्वेत रक्त कण परीक्षण का समतल क्षेत्र के 6702.00, देखने को मिला था, तथा पहाड़ी क्षेत्र में 7336.00, मध्यमान देखने को मिला था। तथा दोनों समूहों मध्यमान विचरण 12620983.33, देखने को मिला था। तथा दोनों समूहों के प्राप्तांक का मध्यमान विचरण 2043729.59, देखने को मिला था। जबकि 't' रेशीयों 6.18 देखने को मिला था। जिसे टेबल की वेल्यू के साथ देखने पर सार्थकता का स्तर 0.05 स्तर 't' = 0.05 (3,196) कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। श्वेत रक्त कण परीक्षण में दोनों समूहों में कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। समानता पाई गई थी।

4. अलग अलग भोगोलिक क्षेत्र में विद्यार्थियों की प्लेटलेट्स परीक्षण का समतल क्षेत्र के 311.66, देखने को मिला था, तथा पहाड़ी क्षेत्र में 3.7.62, मध्यमान देखने को मिला था। तथा दोनों समूहों मध्यमान विचरण 896.99, देखने को मिला था। तथा दोनों समूहों के प्राप्तांक का मध्यमान विचरण 3200.37, देखने को मिला था। जबकि 't' रेशीयों 0.28 देखने को मिला था। जिसे टेबल की वेल्यू के साथ देखने पर सार्थकता का स्तर 0.05 स्तर 't'= 0.05 (3,196) कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। प्लेटलेट्स परीक्षण में दोनों समूहों में कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। समानता पाई गई थी।

निष्कर्ष :

1. हीमोग्लोबिन परीक्षण में दोनों समूहों में कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। समानता पाई गई थी।
2. लाल रक्त कण परीक्षण में दोनों समूहों में कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। समानता पाई गई थी।
3. श्वेत रक्त कण परीक्षण में दोनों समूहों में कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। समानता पाई गई थी।
4. प्लेटलेट्स परीक्षण में दोनों समूहों में कोई सार्थक अंतर देखने को नहीं मिला। समानता पाई गई थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची : -

1. जी स्पोरिस, फुटबॉल अमेरिकन स्पोर्ट्स जर्नल में फिटनेस प्रोफाइलिंग एलीट खिलाड़ियों की शारीरिक और शारीरिक विशेषताएं। जे स्ट्रेंथ कॉन्ड रेस 23 (7).1947-1953,2009
2. रॉय एस.के. (1995), उत्तरी पश्चिम बंगाल, भारत में काम किए गए उच्च और निम्न उत्पादकता के शारीरिक और मानवमितीय विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन। पूर्वाह्न। जे हम। बायोआई।, 1310070603अजहब./1002 10:डोई: 7: 693-699।
3. एलीट सॉकर अमेरिकन जर्नल वॉल्यूम 18, अंक 9, 2000 के लिए टी. रेली एंथ्रोपोमेट्रिक और फिजियोलॉजिकल प्रीडिस्पोजिशन
4. एलीट ऑस्ट्रेलियन रूल्स फुटबॉल में स्टार्टर और नॉन स्टार्टर्स प्लेइंग पोजीशन के युवा, डब्ल्यूबी फिजियोलॉजिकल और एंथ्रोपोमेट्रिक लक्षण: एक केस स्टडी। स्कूल ऑफ ह्यूमन मूवमेंट एंड स्पोर्ट्स साइंसेज, यूनिवर्सिटी ऑफ बैलरैट, विक्टोरिया, ऑस्ट्रेलिया।
5. अनिंदिता मंडल 'एंथ्रोपोमेट्रिक एंड फिजियोलॉजिकल प्रोफाइल ऑफ इंडियन शूटर' इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एप्लाइड स्पोर्ट्स साइंसेज 2011, वॉल्यूम। 23, नंबर 2, 394-405।
6. मीर होजत मौसवी नेजहाद ने एलीट साइकिलिंग और कराटे एथलीटों की एंथ्रोपोमेट्रिक और फिजियोलॉजिकल विशेषताओं की तुलना स्कॉलर्स रिसर्च लाइब्रेरी एनाल्स ऑफ बायोलॉजिकल रिसर्च, 2012, 3 (1): 628-631)
7. राठौड़ अरुण सिंह सरकारी स्कूल के राज्य खिलाड़ी और निजी स्कूल के राज्य स्तरीय खिलाड़ी के बीच एंथ्रोपोमेट्रिक माप का एक तुलनात्मक अध्ययनष त्रैमासिक ऑन लाइन इंडेक्स डबल ब्लाइंड पीयर इन्नुपे ग्वालियर, एम.पी., भारत www.ijems.net वॉल्यूम-1 अंक-02 दिसंबर-2012
8. संतोषी 'आदिवासी महिला बास्केट बॉल, निजी स्कूल राज्य स्तरीय खिलाड़ियों और सरकारी स्कूल राज्य आदिवासी महिला खिलाड़ी के बीच चयनित मोटर फिटनेस चर की तुलना' गोल्डन रिसर्च थॉट्स: दिसंबर 2011, वॉल्यूम। 1 अंक 6, विशेष खंड 1 अकादमिक जर्नल।
9. हामिद अराजी एंथ्रोपोमेट्रिक एंड फिजियोलॉजिकल प्रोफाइल ऑफ एलीट जूनियर पुरुष और महिला ईरानी रोवर्स मिडिल- इस्लामिक आजाद यूनिवर्सिटी, मारिवन ब्रांच, मारिवन ईरान। ईस्ट जर्नल ऑफ साइंटिफिक रिसर्च 9 (2): 162,2011 आईएसएसएन 1990-9233।
10. एम जे डंकन 'जूनियर एलीट प्राइवेट स्कूल स्टेट प्लेयर्स के एंथ्रोपोमेट्रिक और फिजियोलॉजिकल लक्षण' ब्र जे स्पोर्ट्स मेड। 2006 जुलाईय 649-651। डोई: 101136/बीजेएसएम.021998. 2005

****

A Study of Emotional Intelligence Between the Male Athletes and Non-Athletes of Senior Secondary School of Jaipur

Saksham Hajela* Dr. H.C. Raval**

*Research Scholar (Physical Education) Bhupal Nobles University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Supervisor & Associate Professor (Physical Education) Bhupal Nobles University, Udaipur (Raj.) INDIA

Abstract : The aim of this study is to compare the emotional intelligence of male athletes and non-athletes of senior secondary school of Jaipur. There were 25 national level male athletes and 25 male non-athletes were selected as subjects for this study. Purposive sampling technique was used to conducting for this study. The sample for the study was selected from various schools in Jaipur. A standard psychological questionnaire constructed by Dr. Arun kumar Singh and Dr. Shruti Narain was used to measure emotional intelligence. To check the difference in the level of emotional intelligence, an independent sample "t" test was used to compare emotional intelligence between male athletes and male non-athletes of senior secondary school of Jaipur. The significance level was set at 0.05. The results of this study show that there was no significant difference between senior secondary school of Jaipur in terms of emotional intelligence.
Keywords: Emotional intelligence, Athletes, Non-athlete etc.

Introduction - In the field of sports psychology, it is crucial to understand the psychological constructs that influence sports performance. One such construct that has garnered significant attention is the emotional intelligence. Coined by Dr. Arun Kumar Singh and Dr. Shruti Narain, emotional intelligence refers to the ability to manage emotions in different situations. It is a fundamental concept in psychology, shedding light on individual differences in attributions of causality. In the context of sports, emotional intelligence plays a pivotal role in determining an athlete's approach to training, competition, and performance outcomes. For male athletes and non-athletes, who navigate a fast-paced and dynamic environment, understanding their emotional intelligence orientation can provide valuable insights into their mindset, resilience, and overall athletic development.

This study aims to explore the emotional intelligence among male athletes and non-athletes, examining how their beliefs about control influence various aspects of their sporting endeavors. By researching into this aspect of psychological functioning, we can better grasp the factors that contribute to success, satisfaction, and well-being in the field of sports and physical activities.

Whilst technical abilities and physical talents are important within the sports industry, emotional intelligence is equally important to success. Athletes with excessive emotional intelligence are better equipped to cope with aggressive challenges, build strong relationships, and lead correctly.

Athlete: The athlete is a Greek word which means the one who participate in contest. The athlete also known as sportsman or sportswoman is the person who competes in one or more sports which involve physical strength, speed, endurance, coordinated ability and flexibility.

Athlete the word athlete is most commonly used for the person who competes in one or more sports activities. Few decades ago the athlete word is used only for the person who participated in athletic events or in running later on his word is used for the all type of sports person. The person who plays any kind of sports is known as athlete. A person who is good in sports and physical activities is also known as athlete.

Physical and Mental Demands: Athletes require a unique combination of physical attributes, including speed, agility, strength and endurance. Players must have quick reflexes, clear hand-eye coordination and the ability to move quickly and decisively on the pitch. Additionally, strategic thinking, anticipation and mental toughness are essential elements of successful players must outsmart their opponents while remaining calm under pressure.

Non Athletes: The person who not participated in any kind of sports is known as non athlete. One who does not perform any kind of exercise is also known as non athlete. The person lives sedentary lifestyle and do not participate in

any kind of physical activity like yoga, calisthenics, gym, dance, aerobics etc can also be considered as non athlete. In today's era many student of the age of 16 to 18 years live sedentary lifestyle and love to play video games or mobiles games due to this behaviour later on face many kind of health as well as psychological problem in life.

The person who does not participated in any kind of sports and physical activity is known as non athletes. Basically the person whose lifestyle is sedentary will included in non athletes. The person who does not participated in any kind of sports and physical activity is known as non athletes. Basically the person whose lifestyle is sedentary will included in non athletes.

Methodology: In this section selection of subjects, selection of variables, criterion measures, design of the study, collection of data, and administration of questionnaires and statistical technique to be employed for analyzing the data have been described**.**

Selection of the Subjects: Total 50 male (athletes and non-athletes) from various senior secondary schools of Jaipur (Rajasthan) has been selected as subjects for this study. For this study, the age range is 16 to 20 years.

Selection of the Variables: Keeping in the mind about specific purpose of the study athletes and non-athletes were selected as Independent variables and emotional intelligence was selected as dependent variable.

Criterion measures: Emotional intelligence was assessed by Emotional intelligence scale prepared by Dr. Arun Kumar Singh and Dr. Shurti Narian.

Administration of the test: The instruction given on the test form is sufficient to take care of the statements that are given. The Emotional Intelligence Scale SANS generally takes from 20 to 30 minutes. However, no time limit should be given for the test.

Scoring: The Emotional intelligence scale consist of total 31 statement, in which 04 statements for understanding emotions, 08 statements for understanding motivation, 10 statements for empathy and 09 statements for handling relations. Each statement has one mark. If respondent give positive responses they will get one marks otherwise 0 marks for negative responses. These 27 positive responses statements i.e. 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 14, 15, 16, 18, 19, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, and 31. Remaining 4 negative statements i.e. items no. 13, 17, 20, and 21if respondent gave negative responses they will get one marks otherwise 0 marks. According to emotional intelligence scale, if score were less than 20 they have low level of emotional intelligence. If the score range between 21 to 26 they have average level of emotional intelligence. If the score is above the 27 they have declared high level of Emotional intelligence.

Statistical technique: For analysis of collected data Mean, Standard Deviation and t-test was applied for testing the hypothesis at 0.05 level of significance.

Results : The raw data on Emotional intelligence scale was subjects to appropriate statistical analysis and the results of women section are presented in table no.1:

Table 1: Table showing the Mean, SD and 't' value of Emotional intelligence of male athletes and non-athletes of senior secondary schools of Jaipur

Group	N	Mean	SD	MD	't' value
Athletes	25	27.92	1.57	6.60	4.156
Non-Athletes	25	21.32	3.55		

't' value at 0.5 = 2.02

From table no.1, result found that the male athlete have shown more emotional intelligence (M=27.92, S.D= 1.57) as compare to male non-athlete (M= 21.32, S.D. = 3.55), the calculated 't' value is 4.156, which is less than the tabulated value, so that there is no significant difference has been found at 0.05 level.

Fig.1: Graphical presentation of Mean and SD of Emotional intelligence of male athletes and non-athletes of senior secondary schools of Jaipur.

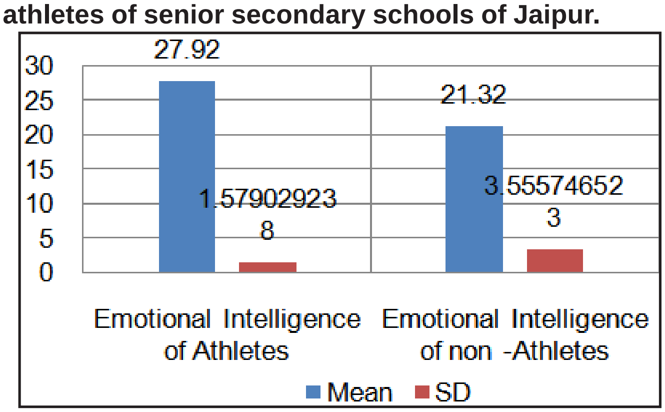

Conclusion: It is concluded that there is significance difference has been found on Emotional intelligence among male athlete and non-athlete. The athlete have more emotional stability then non athlete.

References:-

1. SINGH, A., & NARAIN, S. (2005). EMOTIONAL INTELLIGENCE SCAL. NATIONAL PSYCHOLOGICAL CORPORATION.
2. Shaik, K. (2022, February 16). Why Emotional Intelligence Is More Important Than IQ. https://www.linkedin.com/pulse/why-emotional-intelligence-more-important-than-iq-khaleel-shaik#:~:text=While%20IQ% 20 (Intelligence%20Quotient)%20is,in%20life% 20than%20your%20IQ.
3. Edis, N. (2023, February 2). 30 Best Quotes About Emotional Intelligence. ThinkPsych. https://thinkpsych.com/blogs/posts/30-best-quotes-about-emotional-intelligence#:~:text=%E2%80%9CEmotional%20Intelligence%20 grows% 20throug h%20perception,will%20appear.% E2%80% 9D%20% E2%80%93% 20Guy%20Finley
4. Wikipedia contributors. (2024, April 3). Athlete. In Wikipedia, The Free Encyclopedia. Retrieved 14:04, April 18, 2024, from https://en.wikipedia.org/w/

index.php?title=Athlete&oldid=1217110193

5. Kamlesh ML, Jaswinder. Emotional intelligence in Socio Economically stratified female adolescent athletes. Ahmadabad, India: proceeding of fourth National Conference on Sports Psychology, 1986.
6. Non-athlete.(2024).https://dictionary.cambridge.org/dictionary/english/non athlete#google_vignette
7. Ajmer Singh, et.al., Essentials of Physical Education, (New Delhi: Kalyani Publishers, 2005), p. 201.
8. Schacter, Daniel L.; Gilbert, Daniel T.; Wegner, Daniel M. (2011). Psychology (2nd ed.). New York: Worth Publishers. p. 310. ISBN 978-1429237192.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

रघुवंशम् के आधार पर राजा रघु का शौर्य वर्णन

डॉ. पी.एस. बघेल*

* एसोसिएट प्रोफेसर, पीएम एक्सीलेंस शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – राजा रघु ने अपने प्रभाव से निर्जल प्रदेश को जल बनाते हुए नदियों पर पुल बनायें। जंगलों को काटकर प्रशस्त मार्गों का निर्माण किया। रघु ने दिग्विजय के निमित्त अपनी सेना को पूर्व सागर की ओर ले जाते हुए ऐसा प्रतीत हुआ कि मानों भगीरथ के प्रयासों से शिवजी की जटाजूट से उत्पन्न गंगा सागर की ओर प्रवाहित हो रही है।

रघु ने सर्वप्रथम कलिंगराज का वीरतापूर्वक सामना किया।

प्रतिजग्राह कालिंगस्तम्भस्त्रैर्गजसाधन:।
पक्षच्छेदोद्यतं शक्रं शिलावर्षाव प्रर्वत।।

भावार्थ– जैसे पत्थर बरसने वाले पर्वतों ने अस्त्रों से पंख काटने में तत्पर इन्द्र का सामना किया था वैसे ही हाथी साधने वाले कलिंग राज ने मोर्चा लिया।

रघु ने दिग्विजय के निमित्त अपनी सेना को पूर्व सागर की ओर ले जाते हुए इस प्रकार लग रहे थे मानो राजा भगीरथ शिवजी की जटाजूट से निकली हुई गंगाजी को गंगा सागर की ओर ले जाते हो।

ताम्बूलीनां दलैस्तत्र रचिता पान भूमव्य:।
नारिकेलासवं योधा: शात्रवं च पपुर्यथा।।

भावार्थ– पर्वत पत्र मद्यपान के लिए स्थान बनाकर रघु के सैनिकों ने नारियल के मद्य को पान के पत्तों से पिया और शत्रुओं के यश का भी हरण किया।

ततो वेलातटेनैव फलत्पुगमालिना।
अगस्तत्याचरितामात्मना शास्तत्रयौययौ।।

भावार्थ– पूर्व दिशा को जीतकर आशातीत विजयी रघु फल संयुक्त सुपारी के विपिन की कतार वाले समुद्र के किनारे–किनारे अगस्त्मुनिसेवित दक्षिण की ओर चले।।

भयोत्सृष्ट विभूषाणां तेन केरलयोपिताम्।
अलकेषु चमूरेणुश्चूर्ण प्रतिनिधी कृत:।।

भावार्थ– रघु ने भय से अलंकार रहित केरल देश की स्त्रियों के सुन्दर घुंघराले बालों में सेना की धूलि सुगंधित चूर्ण के स्थान में लगा दी।।

भत्ते भरदनोत्कीर्ण व्यक्तविक्रमलक्षणम्।
त्रिकूटमेव तत्रोच्चैर्जयस्तभं चकार।।

भावार्थ– उस रघु ने अपने हाथियों के दाँतों से खुदे हुए पराक्रम के चिह्न वाले त्रिकूट पर्वत को केरल देश में विजस्तम्भ बनाया।

पारसीकांस्ततोजेतुं प्रतस्थे स्थल वर्त्मना।
इन्द्रिाख्यानिव रिपूंस्तत्त्वज्ञानेन संजमी।।

भावार्थ–उसके बाद जैसे योगी ज्ञान से इन्द्रियों को जीत लेते हैं वैसे ही राजा रघु पारसियों को जीतने के लिए स्थल मार्ग से चले।

यवनीमुखपद्मानां सेहे मधुमदं न स:।
बलातपमिवाब्जा नामकालजलदोदय:।।

भावार्थ– रघु पारसी स्त्रियों के मुख भी मद्यगन्ध को सहन न कर सके, जैसे समय में उठा हुआ बादल कमल संबंधित बालसूर्य के तप को नहीं सहता।

सङ्ग्रामास्तुमुलस्तस्य पश्चास्तैरश्वसाधनै।
शाङ्गकू जितविज्ञेप्रतियोधे रजस्य भूत।।

अश्वसेनावाले पश्चिम देशवासियों के साथ धनुष की टंकारों से ही अपने शत्रु का द्योतक, धूलि के अन्धेरे में रघु का भीषण संग्राम हुआ।

भल्लापवर्जितैस्तेषां शिरोभि: श्यश्रुलैर्महीम्।
तस्तार सरधायातै स क्षौद्र पटलैरिव।।

भावार्थ– रघु ने मधुमक्खियों से व्याप्त मधु के छत्तों के समान भल्ल वाणों से कटे हुए उनके दाढी वाले शिरों से पृथ्वी को पाट दिया।

अपनीत शिरस्त्राणा: शेषास्तं शरणं ययु:।
प्रणिपातप्रतीकार: संरम्भी हि महात्मना।।

भावार्थ– शेष बचे हुए वन अपने शिरक टोपों को उतार कर उस रघु की शरण में गये और क्षमा पा गये, क्यों कि बड़े लोगों का क्रोध नम्रता से दूर होता है।

तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्तबिक्रमम्।
कपोट पाटलादेशि बभूव रघुचेष्तितम्।।

भावार्थ– उत्तर के राजाओं के प्रति पराक्रम दिखाने वाले रघु का पौरूषं हूणों की स्त्रियों के कपोलों में लालिमा का सूचक हुआ।

काम्बोजा: समरे सोढुं तस्य वीर्यभनीश्वरवरा:।
गजाला परिक्लिस्टैरक्षोटै: सार्वमानता:।।

भावार्थ– युद्ध में रघु के पराक्रम को न सह सकने वाले काम्बोज राजा हाथियों के रस्सों से छिले हुए अखरोट के पेड़ों के साथ नम्र होंगये।

तेषा सदश्वभूयिष्ठास्तुगा द्रविणराशय:।
उपदा विविशु: शश्वन्नोत्सेका: कोसलेश्वरम्।।

भावार्थ–उन राजाओं के बहुत से अच्छे–अच्छे काबुली घोड़े और ऊँची सोने की राशि उपहार में रघु के पास बार–बार आई, किन्तु गर्व नहीं आया।

तत्र जन्यं रघोर्घोरं पर्वतीयर्गणैरभूत्।
नाराचक्षेपनीयाश्वनिष्येषोत्पतितानलम्।।

भावार्थ– उस हिमालय पर रघु का पर्वतीय गणों से नाराच, बाण, भिन्दिपाल और पत्थर के टुकड़ों की रंगड़े उठी हुई अग्निवाला भयंकर युद्ध हुआ।

शरैरुत्सवसंकेतान् स कृत्वा विरतोत्सवान्।

जयोदाहरणं बाह्वोर्गापियास किन्नरान्।।

भावार्थ– उस रघुने बाणों से उत्सव संकेत नामक पहाड़ी कबीलों को पराजित कर किन्नरों द्वारा अपनी भुजा की जकथा का गान कराया।।

'परस्परेण विज्ञात स्तेषूपान पाणिषु।
राज्ञा हिमवत: सारोराज्ञ सारो हिमाद्रिणा।।'

भावार्थ– भभेंट देने के लिए हाथ में लेकर पर्वतीयों के सर्वणादि आने पर रघु ने हिमालय के धन और हिमालय के राजा रघु के बल को जाना।

'चकम्पे तीर्णलौहित्ये तस्मिन् प्राग्ज्योतिषेश्वर:।
तद्गजालानतां प्राप्तै: सह कालागुरुद्रुमै:।।'

भावार्थ– उस रघु के लौहित्यनद के पार उतर जाने पर प्राग्जेतिष (आसाम) के राजा रघु के हाथियों की सीकरों के बांधने के लिए स्तम्भ भूतकाले अणर के वृक्षों के साथ काँप गये।

न प्रसेहे स रुद्धाकमधारावषै दुर्दिनम्।
रथवर्त्मरजोऽप्स्यकुत्त एव पताकिनाम्।।

भवार्थ– वे आसाम के राजा सूर्य को ढँक देने वाले वर्षा के बिना मेघावृत्तं दिन के समान रघु के रथ की धूलि को भी न सह सके फिर सेना को कैसे सह सकते हैं।

कामरूपेश्वरस्तस्यहेमपीठाधिदेवताम्।
रत्नपुष्पोपहारेण छायामानर्चं पादयो:।।

भावार्थ– काम रूप के राजा ने संवर्णनिर्मित राजसिंहासन के देवता उस रघु के पैरों की उपहारभभूत रत्नमयी पुष्पों को अर्पित करके पूजा की।

मिट्टी के अर्ध्य पात्र से ही विश्वजित यज्ञ में समस्त सम्पत्ति का व्यय करने वाले रघु की यह उदार वाणी सुन कौत्सऋषि अपनी कार्यसिद्धि में निराश होते हुए बोले– हे राजन्! आप हमारी सब प्रकार से कुशल समझें, आप जैसे राजा के रहने पर प्रजा का अकुशल कैसे हो सकता है? जैसे सूर्य के प्रकाशमान रहते अन्धकार किसी दृष्टि को ढँक सकता है।

पूज्जनों में भक्ति रखना आपकी कुल परम्परा है, अत: आपमें यह गुण अपने पूर्वजों से भी अधिक है। किन्तु इसका मुझे अत्यंत दु:ख है कि मै समय बीतने पर आया।

हे राजन्! यज्ञ में सर्वस्व दे देने के कारण शरीर मात्र से स्थित आप वैसे ही लग रहे हैं जैसे वनवासियों द्वारा फल तोड़ लिये जाने पर ढंठल मात्र शेष नीवार धान्य हो।

आप अद्वितीय चक्रवर्ती होते हुए भी यज्ञ में सर्वस्व दान कर देने से उत्पन्न निर्धनता को प्रकट कर रहे हैं, यह उचित ही हैं, क्योंकि देवताओं द्वारा क्रम से पीये गये चंद्रमा का कलाक्षय वृद्धि की अपेक्षा अधिक प्रशंसनीय होता है।

हे राजन्! गुरुदक्षिणा के अतिरिक्त दूसरा कोई प्रयोजन न रखने वाला मैं अन्य देवताओं से गुरु दक्षिणा की प्राप्ति का प्रयत्न करूंगा,क्योंकि चातक पक्षी भी जल रहित मेघ से जल की याचना नहीं करता।

रघु के पराक्रम की चर्चा करते हुए राजा रघु की उदारता की भी चर्चा स्पृहणीय है। राजा रघु ने जिन राजाओं को जीत लि था, उन्हें पुन: वहीं का राजा बना दिया। जिससे रघु का दिग्विजय का रास्ता निष्कंटक बना दिया था।

सुह्य देश के राजा ने बुद्ध किये बिना ही वैतसी वृत्ति का आश्रय कर उनकी अधिनता स्वीकार कर ली थी। बाद में रघु ने बंगाल के राजाओं पर विजय प्राप्त कर गंगा सागर के द्वीपों पर अपना विजय स्तम्भ गाड़ दिया था।

रघु ने हाथियों का पुल बनाकर कपिशा नदी को पार किया। फिर कलिंग राजा को पराजित किया।

अन्त में रघु ने यवनों को पराजित कर पारसी राजाओं को युद्ध में पराजित किया।

हूणों का प्रान्त ही पूर्व में अपराजित था लेकिन रघु ने हूणों को भी पराजित किया।

अन्त में चारों दिशाओं में अपनी विजय यात्रा पूरी कर विश्वजित नामक यज्ञ किया।

राजा रघु को कोई संतान नहीं थी तब गुरु कौत्स ने राजा को पुत्र प्राप्ति का वरदान दिया और तदनुसार रघु को पुत्र प्राप्ति हुई।

समाप्त विधेन मया महर्षि र्विज्ञापितोऽभूत्
गुरुदक्षिणायै।
स मे चिरास्खलितोपचारां तां
भक्तिमेवागणयत्पुरस्तात्।।

भावार्थ– समस्त विद्याओं को पढ़ लेने पर मैंने महर्षि वरतन्तु से जब गुरु दक्षिणा लेने की प्रार्थना की तब उन्होंने बहुत दिनों तक निमपूर्वक मेरे द्वारा की गई गुरु–सेवा को ही श्रेष्ठ दक्षिणा समझा।

तब गुरु क्रोधित हो कर बोले–

बार–बार गुरु दक्षिणा के लिए आग्रह करने पर क्रूद्ध गुरु ने मेरी दरिद्रता पर ध्यान न देते हुए कहा कि 14 विद्याओं के लिए 14 करोड़ द्रव्य लाकर दो।

सोऽ हं सपर्या विधि भाजनेन मत्वा
भवन्तं प्रभु शब्द शेषम्।
अभ्युत्सहे सम्पत्ति नोपरोद्धुल्पेतर–
त्वाच्छू, तनिष्क्रयास्य।

भावार्थ– पूजा में 'मृण्मय' अर्ध्यपात्र के द्वारा ही आपको सर्वधा निर्धन जानकर गुरु दक्षिणा की अधिकता से अब आपसे कुछ कहने का साहस ही नहीं है। अब तो आप नाम मात्र से सम्राट् है।

स त्वं प्रशस्ते महिते मदीये ऽग्नि।
वसंश्चतुर्थोऽग्नि रिवाग्न्गारे
द्वित्राण्हार्न्हसि सोढुमर्हम्
यावधते सधायितु त्वदर्थम्।

भावार्थ– अत: मेरी परम पवित्र यज्ञ शाला में चतुर्थ अग्नि के समान दो या तीन दिन निवास करें, जब तक मैं आपकी कार्यसिद्धि के लिए प्रयत्न करूं।

तथेति तस्यावितर्थ प्रतीत:
प्रत्यग्रहीत्सङ्गरमग्रजन्मा।
गात्तसारां रघुरप्वेक्ष्य
निष्क्रटुमर्थ चकमे कुबेरात्।

भावार्थ– ब्राह्मण कौत्स ने प्रसन्न हो रघु को अव्यर्थं प्रतीज्ञा को स्वीकार किया। इधर महाराज रघु ने भी पृथ्वी को सारहीन समझ कर कुबेर से धन लेने की इच्छा की।

इस प्रकार राजा रघु के दिग्विजय यात्रा समाप्त होने के बाद प्रात: राजा रघु ने प्रभात यात्रा प्रारंभ की त्योंही राक्षसों ने सूचना दी कि कोशगृह में आकाश से सवर्ण वर्षा हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Urban Transport Transformation: Evaluating the Role of Electric Vehicles in Indore

Saransh Ukey* Dr. Subhan Singh Baghel**

***JRF(Geography) School of Social Sciences, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA**
**** Principal, Maharaja Bhoj Govt PG College, Dhar (M.P.) INDIA**

Abstract : Urban transport systems are changing at a fast pace, with electric vehicles (EVs) being one of the primary solutions for sustainable mobility. The present study assesses the potential of EVs in revolutionizing Indore's urban transport based on secondary data on infrastructure, pollution levels, and policy initiatives. This research highlights the environmental benefits of the adoption of electric vehicles as limited emissions and good air quality, together with challenges such as underdeveloped charging infrastructure and awareness. Recommended policy points for discussion include the build-up of EV infrastructure, persuading through incentives for wider availability, and making EVs more prominent in public transport. The strategic planning of a city will therefore be very important in Indore to ensure a cleaner and more efficient transport future.
Keywords: Urban Transport Electrification, Electric Vehicles (EVs) Adoption, Sustainable Mobility, Public Transport Infrastructure, Charging Infrastructure.

Introduction - In the last few years, public transport systems in urban areas all over the world have undergone a tremendous change, with electric vehicles (EVs) playing major roles in green transport solutions. This change is clearly visible in Indore, where the population is growing and traffic requires new avenues for public transport. Introducing electric buses in the existing public transport system of the city provides a nice means to reduce carbon footprints and enhance city commutes. While climate change threatens our lifestyle, Indore's shift towards using electric vehicles reflects a broader trend of looking after the environment when planning a city.Also, effectively operating well electric public transport infrastructure can lead to cleaner air and less noise pollution—both factors significantly affecting city dwellers' quality of life. Having an EV charging point symbolizes such change, and both infrastructure establishment and social evolution towards more green city travel alternatives.

Overview of urban transport challenges in Indore: Urban transportation in Indore is afflicted with many problems that in turn affect its ability to be efficient and sustainable. Due to massive urban development, freeway congestion has caused air quality to deteriorate and public health to worsen. Internal combustion engine-operated vehicles worsen this predicament by discharging high contents of an array of pollutants that are harmful to nature and public health. The present transport system is unable to handle the augmentation of population and thus end up with complexities like traffic jams and very few public transportation facilities to deal with it. A thorough focus of planning has not been on the sustainable means while furthering transport, especially those like electric vehicles which promise to cause minimum adverse effect in mobility systems. According to (N/A, 2019), it is clearly time for an improved new paradigm of good quality urban air for common benefit in calling for multilateral partnership. Systematic development of infrastructure would be required in overcoming such hiccups to ensure the development of electric car use, including sufficient charging centers.

Introduction to electric vehicles (EVs) as a potential solution: Transitioning toward electric vehicles is a feasible option to mitigate the pollution in urban scenarios and promote a cleaner choice for transport in the city of Indore. Renewable source-of-fuels EVs may reduce emissions of Greenhouse gases when compared with conventional fossil fuels, thereby improving their air quality in dense urban areas. Cities worldwide have demonstrated that they can successfully implement electric public transport systems—evidenced by pictures of buses stating '100% battery electric'—that not only make urban travel more sustainable, but also show a larger commitment to climate and public health. In Indore, use of EVs not only ties in with urban development groups giving prescriptions for close-knit connected cities elemental in achieving net-zero emissions ((N/A,2019)). With advancements made so far in petrol-combustion engine technologies, it also becomes apparent that we must continue to push electrification within a broader strategy toward urban transport emissions reduction

subsequently ((Gohil et al., 2020).

Current State of Urban Transport in Indore: Indore's urban transportation faces some formidable challenges: outrageous traffic jams, alarmingly poor air quality, and abysmal availability of major public transport options. For these reasons, the city authorities have set in motion parallel solutions such as introducing electric vehicles (EVs) into the current transport system. Recent studies suggest that such a shift could, in a major change, usher in an era of zero-emission cities if well exploited to further economic development while fighting climate change (N/A, 2019). The introduction of electric buses, as done elsewhere, does provide a very encouraging model for sustainable urban transport that Indore could adopt. Moreover, strengthening internal combustion engine technologies for the Indian market is a great way to cut emissions and use cleaner fuels. All of this together creates an auspicious moment for Indore, as the redevelopment of urban transport aims to put Indore on the cleaner and smarter path towards growth.

Analysis of existing transportation infrastructure and services: The review of Indore's current transport infrastructure indicates fundamental weaknesses that directly affect urban mobility and sustainability. The current systems are based primarily on traditional fossil-fuel-powered vehicles, a reliance that fuels severe congestion, pollution, and safety issues. Studies show that these problems not only deter economic development but also lower the general standard of living in cities (S et al., 2023). However, having recognized that the introduction of electric vehicles presents compelling arguments in terms of improving urban transport efficiency and mitigating the environmental impacts of the city transit systems, one has to assess the systemic issues involved in such a transition with great scrutiny. The shift to EVs can be mainly motivated by increasing environmental issues and requisite for sustainable measures, as figured out from the research into strong EVCS networks, relieving congestion from higher EV uptake globally (Kumar V r Gaur, 2025). An integrated analysis of cities with sophisticated electric bus systems like those represented by and clarifies the possible advantages of green public transport projects. However, careful consideration of infrastructural preparedness, public reception, and mechanisms for funding which can affect successful induction of equivalent systems in Indore is vital. These visual portrayals of a few of the cities modifying service not only suggest an improvement in transportation efficiency but also lend credence to their commitment towards cleaner surroundings. So the required changes in Indore's infrastructure are, thus, not only encouraging but necessary to achieve a compact and integrated urban context that embraces zero emissions (N/A, 2019). It will require a very well-coordinated integrated strategy with a teamwork effort by all stakeholders on-board to solve the most challenging problems that exist in our current transport systems and to meet the sustainability objectives.

Transport Mode	% of Total Commu -ters	Average Daily Users	Environmental Impact (CO2 Emissions in kg/ year)
Personal Vehicles	60%	800,000	200,000,000
Public Buses	25%	333,000	75,000,000
Bicycles	10%	133,000	0
Walking	5%	67,000	0

Existing Transportation Infrastructure in Indore

Assessment of pollution and traffic congestion issues: As the population of Indore increases, the problems of traffic congestion and pollution only worsen with greater demand for urban amenities. The use of conventional vehicles is further deteriorating air quality that can cause health issues for the residents and lower the city's general quality of life. Transitioning to electric vehicles can be an effective measure to probably curb polluted traffic. Thus, to face environmental issues and ease mobility, cities can simply switch to the cleaner mode of mobility. An integrated, systemic approach toward broader environmental issues is necessary for implementing the introduction of EVs in cities, as research by the WRI India Ross Center for sustainable city development would suggest (Chanchani R et al., 2023). In addition, green infrastructure projects, such as urban agriculture, help in the execution of sustainability initiatives and thus target community-oriented projects to reduce urban pollution (Rao N, 2022). Finally, it is the sustainable means of alternative transportation that will help usher in that new age of improved rideability, reduction of pollution, and a much healthier town of Indore.

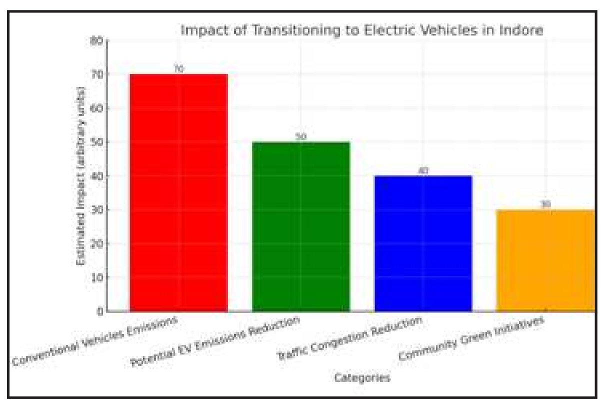

This bar chart illustrates the impact of transitioning from conventional vehicles to electric vehicles in Indore. It highlights the estimated emissions from conventional vehicles (70 units), the potential reduction in emissions if electric vehicles are adopted (50 units), the anticipated decrease in traffic congestion (40 units), and the role of community-driven green initiatives (30 units) in addressing urban pollution.

Benefits of Electric Vehicles: The use of electric vehicles (EVs) in city transport systems marks a major change

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

towards being more sustainable, especially in fast-growing places like Indore. A key advantage of EVs is that they can seriously lower greenhouse gas emissions compared to regular vehicles that use petrol or diesel. Recent research shows that moving to electric transport helps fight the climate crisis while also improving air quality in cities and health for the public (N/A, 2019). Moreover, there are strong economic effects; the broader use of EVs can boost local economies by creating jobs in areas like production, upkeep, and building new infrastructure (Gohil et al., 2020). This combo of caring for the environment along with boosting the economy makes EVs important not just as transport options, but also as essential tools in planning for cities, pushing Indore towards a more sustainable and successful future.

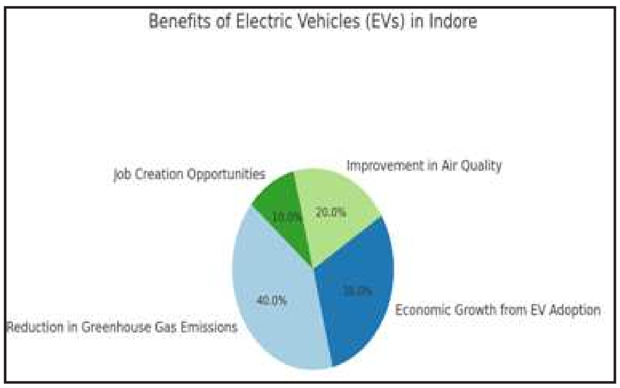

This pie chart illustrates the various benefits of electric vehicles (EVs) in Indore, highlighting the expected percentage reductions in greenhouse gas emissions, the potential for economic growth from EV adoption, improvements in urban air quality, and job creation opportunities associated with the transition to electric mobility.

Environmental advantages of adopting EVs in urban settings: The switch towards electric vehicles in the cities such as Indore has many positive impacts on the environment in most cases, by reducing the emissions of greenhouse gases and air pollution. An upsurge in pollution in urban areas, for example, will drastically help cut down on the carbon footprint of different cities, thereby improving public health and living conditions in the cities. Furthermore, the inclusion of electric vehicles in any mass public transport will enhance their benefits; pictures showing public sector electric buses remain a prime part of green urban transport solutions. Research from several studies stresses the need for creating zero-carbon cities in favor of sustainability. Within urban areas, organization of large-scale infrastructure changes together with innovative policies can facilitate a shift toward a clean transport system, thus benefiting environmental sustainability and local economic development.

Economic implications of transitioning to electric mobility: The shift to electric mobility holds tremendous advantages economically, particularly for cities such as Indore, whose public transport infrastructure badly needs an overhaul. But one needs to investigate if the upfront investment in EVs can really generate the promised jobs in manufacturing, infrastructure building, and maintenance, or only shift existing jobs with minimal net economic advantage.Although some research, e.g., that referenced in (N/A, 2019), predicts that the lower operating expenses of EVs can result in municipal government long-term budget savings, it is critical to examine the assumptions behind such estimates and also look for likely hidden costs not yet apparent. Second, the economic loss brought about by COVID-19 is a cue to revisit policies on energy (Cüce et al., 2021); it points to some interesting questions regarding whether electric mobility is sustainable in view of changing economic conditions and to what extent stakeholder commitment has to be pursued in the long term. In addition, although the infrastructure models for incorporating EVs into cityscapes look promising, it is important to look at their feasibility, upkeep, and the local economic impact they may have. Therefore, the economic aspects of promoting electric mobility need to be viewed in a multi-faceted way, emphasizing the complexity of its place in the larger shift of Indore's urban transport.

Challenges to Electric Vehicle Adoption: The transition to electric vehicle systems in Indore is fraught with several challenges, which make them a hard sell. Most of it deals with the fact that lack of charging stations hinder people from switching to electric vehicles due to the exorbitant price. There is still doubt among most residents about the viability of the technology in comparison with gasoline cars. This is quite evident in where electric buses look sleek and efficient; however, we still need robust infrastructure in place. And since very few know of the green benefits of EVs-while there is a low interest from the consumers. Those issues are to be considered by the policymakers who, according to, have to provide supporting strategies to make compact green cities. Such synchronized efforts will assist in steering towards cleaner transport options.

Infrastructure requirements for EV charging stations: Effective urban transport systems using electric vehicles (EVs), especially in Indore, will depend greatly on establishing an efficient network of EV charging points. This network has to accommodate the increasing number of electric vehicles on offer and provide ease of access to

their users. Key requirements include well-positioned charging points in urban zones, compatibility with different types of EVs, and fast charging that minimizes waiting times and maximizes the customer experience. Financial support for renewable energy projects is a government incentive that could also help fuel private investment in charging points for long-term infrastructure for electric mobility (Aggarwal et al., 2021).In addition, it is critical to disseminate different public campaigns and outreach on the availability and aforementioned advantages of EV charging to promote usage among the large population (Gohil et al., 2020). In conclusion, effective installation of charging stations will facilitate a smoother move toward electric mobility within the urban areas of Indore. A picture of a charging station would be in favor of this debate because it would show what would need to be done to facilitate such a move.

Public perception and awareness of electric vehicles: Indore's attitude toward and general awareness of EVs will play a deciding role in the transition of the city's transport systems. Awareness of EVs varies, as some willing to open their minds to the emerging technology expressed environmental concerns with regard to air pollution. Education, income levels, and access to information greatly affect how the public thinks. Recent research shows that younger people are usually more aware and supportive of EVs, while older individuals often do not understand them well and are hesitant, mainly because of worries about costs and the availability of charging stations (Hanssen et al., 2023). In addition, images, such as the electric bus in, substantiate the benefits of EVs and help foster a good public image. In this context, such gaps in awareness have to be addressed to engender a broader discussion around the transition to electric transport in Indore.

Conclusion: In summary, putting electric vehicles (EVs) into Indore's city transport system is an important move for sustainable development and looking after the environment. Changing from traditional petrol and diesel engines to EVs is necessary for lowering pollution and cutting down greenhouse gas emissions, which fits with worldwide sustainability aims as shown by recent research (et. al. et al., 2021). Also, by building good infrastructure for EVs, like charging stations and special lanes, Indore can improve public transport efficiency, make travel easier, and create a better urban environment over time (GABSALIKHOVA et al., 2017). Adding to this change, showing electric buses in city areas highlights the visual and practical benefits of using greener technologies. As cities grow, accepting electric mobility should be seen not just as a choice, but as a crucial plan for building long-term urban strength and improving life quality in Indore.

Summary of key findings regarding EVs in Indore: Electrification in Indore has highlighted the huge shift toward urban transport that is cleaner, with its own perfect mix of green technologies. Key points show that local policies, adding to charging stations and benefits for the purchase of EVs, have motivated buyers and businesses to get involved. . Furthermore, there is proof that these actions could lower city air pollution a lot, while also improving travel within Indore. The availability of a new electric bus fleet, shown in and , not just illustrates progress in public transport but also highlights Indore's commitment to eco-friendly practices, matching global patterns noted in (N/A, 2019). In the end, these changes are crucial for meeting larger national aims for clean urban spaces, as described in (Hanssen et al., 2023).

Recommendations for future urban transport policies and initiatives: In order to tackle the pressing requirement for Indore's sustainable transport policies, there is a need to develop electric vehicle (EV) infrastructure that is geared towards accommodating the projected rise in EV usage. The future policy must prioritize setting up many charging points, drawing lessons from the success in European cities, as pointed out. This strategy not only supports the shift to electric public transport but also promotes personal ownership of electric vehicles, which helps to further lower urban emissions. Also, creating exclusive lanes for electric buses, as presented in , would improve their efficiency and safety. Besides, promoting the partnerships among local governments and private enterprises in developing green transport modes can strengthen public transport initiatives. Finally, it is very much imperative that an integrated strategy should be developed with infrastructure development, public awareness, and promotion of EVs usage in the country.

References:-

1. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
2. S., Dhanasekaran, T., Raghu, V., Raju (2023) AN ANALYSIS TO URBAN TRANSPORT PROBLEMS AND CHALLENGES IN INDIA. doi: https://core.ac.uk/download/618327710.pdf
3. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
4. Hanssen, Thor-Erik Sandberg, Hasan, Saiful (2023)

Electric vehicles : An assessment of consumer perceptions using importance-performance analysis. doi: https://core.ac.uk/download/573317164.pdf
5. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
6. et. al., Damodara Reddy K, (2021) Optimum Energy Control of a Robotic Electric Vehicle at Time with Improved Control Assignment Approaches. doi: https://core.ac.uk/download/621409921.pdf
7. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
8. Hanssen, Thor-Erik Sandberg, Hasan, Saiful (2023) Electric vehicles : An assessment of consumer perceptions using importance-performance analysis. doi: https://core.ac.uk/download/573317164.pdf
9. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
10. Cüce, Erdem, Priya, S. Shanmuga, Sudhakar, K. (2021) A perspective of COVID 19 impact on global economy, energy and environment. doi: https://core.ac.uk/download/543015343.pdf
11. et. al., Damodara Reddy K, (2021) Optimum Energy Control of a Robotic Electric Vehicle at Time with Improved Control Assignment Approaches. doi: https://core.ac.uk/download/621409921.pdf
12. GABSALIKHOVA, Larisa, MAKAROVA, Irina, SHUBENKOVA, Ksenia (2017) ANALYSIS OF THE CITY TRANSPORT SYSTEM'S DEVELOPMENT STRATEGY DESIGN PRINCIPLES WITH ACCOUNT OF RISKS AND SPECIFIC FEATURES OF SPATIAL DEVELOPMENT. doi: https://core.ac.uk/download/pdf/144875996.pdf
13. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
14. Hanssen, Thor-Erik Sandberg, Hasan, Saiful (2023) Electric vehicles : An assessment of consumer perceptions using importance-performance analysis. doi: https://core.ac.uk/download/573317164.pdf
15. Hanssen, Thor-Erik Sandberg, Hasan, Saiful (2023) Electric vehicles : An assessment of consumer perceptions using importance-performance analysis. doi: https://core.ac.uk/download/573317164.pdf
16. Jaafar Sidek, Mohd Farid (2023) Measuring the effect of park-and-ride facilities and interchange station on passenger ridership at the urban rail station in Kuala Lumpur.doi:https://core.ac.uk/download/590896291.pdf
17. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
18. Gohil, Dhrumil B., Pesyridis, Apostolos, Serrano, J.R. (2020) Overview of Clean Automotive Thermal Propulsion Options for India to 2030. doi: https://core.ac.uk/download/362655145.pdf
19. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
20. Gohil, Dhrumil B., Pesyridis, Apostolos, Serrano, J.R. (2020) Overview of Clean Automotive Thermal Propulsion Options for India to 2030. doi: https://core.ac.uk/download/362655145.pdf
21. Aggarwal, Prateek, Beaton, Christopher, Dutt, Arjun, Ganesan, et al. (2021) Mapping India's energy subsidies 2021: time for renewed support to clean energy.doi:https://core.ac.uk/download/554841075. pdf
22. Gohil, Dhrumil B., Pesyridis, Apostolos, Serrano, J.R. (2020) Overview of Clean Automotive Thermal Propulsion Options for India to 2030. doi: https://core.ac.uk/download/362655145.pdf
23. Radha Chanchani, Jaya Dhindaw, R. O. C. King, Madhav Pai (2023) Our Journey with the City: Deciphering WRI India Ross Center's Influence in Bengaluru.doi: https://doi.org/10.46830/wripn.18.00097
24. Nitya Rao (2022) Sowing Sustainable Cities: Lessons for Urban Agriculture Practices in India. doi: https://doi.org/10.24943/ssc12.2023
25. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
26. Gohil, Dhrumil B., Pesyridis, Apostolos, Serrano, J.R. (2020) Overview of Clean Automotive Thermal Propulsion Options for India to 2030. doi: https://core.ac.uk/download/362655145.pdf
27. Vinay Kumar Gaur (2025) Electric Vehicle Charging Stations in India: Challenges, Business Prospects, and Future Opportunities. INTERANTIONAL JOURNAL OF SCIENTIFIC RESEARCH IN ENGINEERING AND MANAGEMENT. doi: https://www.semanticscholar.org/paper/6621d2d7173cd0aaa9c8b95c3b7048cfc2e4679

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Assessing the Effectiveness of Indore Municipal Solid Waste Policies: A Legal Perspective

Priyanka Malviya*

***Research Scholar (Law) School of Law, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA**

Abstract : Even though Indore is one of India's cleanest cities by recognition, persistent and nagging issues still trouble city authorities when it comes to municipal solid waste management. The definitions and modes of waste disposal strategies crafted in Indore are assessed in this study based on the legal perspective of the implementation of Municipal Solid Waste Management Rules, 2016, and its affiliates. This study capitalizes on policy analysis and the stakeholders' points of view where such lacunae are brought out in the legal regime, extent of governance, and citizens' involvement. The conclusion reiterates the necessity of rigorous enforcement, involvement of the stakeholders, and bringing the program to the forefront in consonance with international goals for sustainability. Proposals centre around the development of legal responsibility, compliance, and community education for a sustainable future for the urban context.

Keywords: Municipal Solid Waste Management Rules 2016, Stakeholder Involvement, Legal Framework, Judicial Intervention, Regulatory Gap, Environment Legislation.

Introduction - In the last few years, the quick growth of cities and more people in Indore have made waste management problems worse, which means it is important to look closely at current rules from a legal view. With waste production reaching about 14,468 tonnes each day, there is an urgent need for solid management strategies to tackle waste disposal issues. This study will closely examine the rules set out by the Municipal Solid Waste Management Rules, 2016, evaluating how well they work and how they are put into practice in dealing with the various problems faced. The framework discussed in explains the key parts of solid waste management, showing how policy, public involvement, and technical services connect. Knowing how these aspects work together will help to identify weaknesses in the legal rules and suggest potential changes to improve waste management practices in Indore, thus aiding wider goals for environmental sustainability.

Overview of Indore's municipal solid waste management challenges: The problems with managing municipal solid waste in Indore are closely linked to bigger urban governance issues, showing clear gaps in capacity and how policies are put into action. Although Indore is known as one of the cleanest cities in India, its lofty waste management goals are often hindered by poor infrastructure and a lack of public involvement, leading to a situation where recognised efforts do not lead to expected success. The complicated nature of local adaptation actions, especially in the face of competing development needs, makes it hard to govern waste management effectively. This results in disjointed strategies that do not effectively involve important stakeholders (Chu et al., 2016). Moreover, the existing legal and bureaucratic hurdles limit innovative methods, blocking the chances for integrated and sustainable solutions. The Integrated Solid Waste Management framework has laid the groundwork for the key issue in terms of collective strategy for public involvement, financial openness, and legal accountability. To address such issues will be key to a successful implementation of waste policies in Indore.

Table 1 (see in last page)

Importance of legal frameworks in waste management policies: Regulation of legal rules is, by all standards and measures, quite crucial in the area of waste management policies, particularly in places like Indore, where rules and environmental care matter. These rules are appropriately meant to set limits on garbage disposal and recycling while detailing the responsibilities of the various parties, thereby promoting harmonious action-loosened under which solutions to solid waste problems could be attempted. This is borne out by a few recent studies indicating that a good law system enhances local governance, inclination to implement laws, and mobilization of community participation in waste management-promotion programs (N/A, 2019). Furthermore, the complex issues surrounding climate resilience and legal issues indicate the role that policymakers can play in influencing environmental outcomes, demonstrating the need to align waste management activities with broader sustainability objectives (Bahadur et al., 2014). The introduction of these legal

RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

thoughts into operative strategy becomes important in achieving sustainable waste management and in bolstering the effectiveness of the town's municipal policies, at this juncture exemplified in the Integrated Solid Waste Management framework.

Historical Context of Waste Management Policies in Indore: When we reflect on the past of waste management regulations in Indore, we realize it has seen a slow but unavoidable change due to urbanization issues. At the beginning, there was a lack of a clear system for solid waste management which resulted in damage to the environment and health-related concerns. The big legislation introduced in 2016 was kind of an important-change, which was aimed to combat the complaints raised against the earlier methods and was majorly sided towards adopting more sustainable practices. . Additionally, as local political figures dealt with the challenges of climate change, they used different methods to connect local needs with outside funding and help, thus adding resilience to the policy frameworks (Chu et al., 2016). Nevertheless, problems in carrying out these policies often stemmed from established bureaucratic systems and differing priorities, exposing the complex relationship between policy goals and real-world challenges (Bahadur et al., 2014).

Evolution of municipal solid waste policies in Indore: Indore is showing how law and environment-friendly activities work in tandem in the unfolding changes of waste management policies. The management of waste in the city was initially very dusty and inefficient, though it has significantly changed especially after the introduction of segregated waste systems and increased participation of the community. This changes aligned with the global imperatives for cities to be resilient and adaptive, thus creating a window into policies that connect economic development with environmental care (N/A, 2019). This work also shows that by bringing together multiple stakeholders and the formulation of strong policies, the complex interactions within urban governance, particularly with regard to climate issues, are revealed (Bahadur et al., 2014). Therefore, these changes tell crucial things about how functional Indore waste management policies would be in informing how the legal frameworks of waste management in fast-growing cities could be improved.

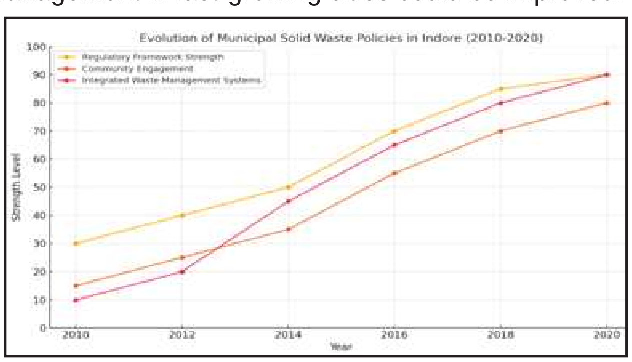

This line graph illustrates the evolution of municipal solid waste policies in Indore from 2010 to 2020. It highlights the increasing strength of regulatory frameworks, the rise in community engagement, and the growth of integrated waste management systems over the specified years. The data indicates a significant improvement in all three areas, reflecting the effectiveness of implemented waste management strategies.

Key legal frameworks and regulations influencing waste management: Legislation and legal rules contribute significantly towards establishing waste management within the urban centers. For India, the 2016 Solid Waste Management Rules are a great achievement towards improved waste management in municipalities. Local waste management strategies and the need for community engagement in the formulation of sustainable interventions will be assisted by these pieces of legislation. Additionally, important international agreements and local policies need to work together well for complete waste governance. This includes not just environmental health but also economic stability. For example, projects that explain the details of waste sorting and treatment processes show the need for strong legal support for these practices (). All in all, it is necessary to connect local rules with global sustainability aims, as shown in various studies ((N/A, 2019), (Zulu et al., 2020)), to create effective waste management strategies that tackle the issues caused by increasing urban growth.

Table 2 (see in last page)

Analysis of Current Waste Management Policies: When looking at the waste management policies in Indore, it is important to think about how local government works with global influences, especially with the growth of laws and institutional backing. Indore has done well in solid waste management, seen in it being named the cleanest city in India, but these results should be viewed with reference to larger national and international standards. For example, city programs that are aimed at climate changes oppose the local actions to lacrosse with global climate finances Sytem because of how (Chu et al., 2016) view them. Alongside with this linking comes concerns on how sustainable and equitable different waste management processes really are, which can be skewed by conflicting development goals. In addition, efficient waste management demands a deep understanding of integrated systems, established by frameworks like, to provide determination for good policies involving public participation and effective legal systems.

Assessment of policy implementation and compliance: The success of Indore's municipal solid waste regime greatly depends on the efficacy and compliance in implementation of these policies. There should be a thorough examination of the regulatory framework in place, particularly the Municipal Solid Waste Management Rules of 2016, to determine their efficiency in dealing with waste problems in urban areas. . The assessment should involve measurable information and opinions and adherence by

the generators of the waste and efficiency of the separation in different environments. Furthermore, public involvement is required to ascertain the compliance with these regulations, which demands awareness campaigns and community involvement. . For example, the detailed overview of waste management methods in Uttar Pradesh, shown in , reveals the main difficulties encountered, pointing out the difference between what policies say and what actually happens. Furthermore, as noted in (Niyoti M, 2017) and (N/A, 2019), the role of urban governance is crucial in closing these gaps, highlighting the need for cooperation between different governing sectors and local authorities to reach sustainable waste management goals.

Evaluation of stakeholder involvement and public awareness: The success of Indore's waste management policies relies much on getting stakeholders involved and raising public awareness. Stakeholders, such as local councils, NGOs, and community members, are key in shaping waste management efforts through working together. Public awareness campaigns are vital, creating a community spirit that values sorting waste and using proper disposal methods. Examples from case studies show that when local actions are linked with global networks, ongoing involvement from these stakeholders improves adherence and new ideas in waste management practices (Chu et al., 2016). Also, stories about resilience should connect with the real impacts of waste policies, highlighting how stakeholder participation leads to better sustainability results (Bahadur et al., 2014). A framework can be used to show this teamwork visually, like the one illustrated in , which highlights the different levels of public involvement in waste management.

Legal Challenges and Implications: Legal intricacies of municipal solid waste policy in Indore are a product of intricate nexus of governance, regulation, and public engagement. Existing legal situation indicates that such policies are ineffectual due to dispersed implementation and inadequate awareness among the population about waste management and duties.. The interaction between the local and international institutions, researched in urban adaptation studies, indicates that even though external finance can initiate waste management initiatives, it can give rise to dependency rather than promoting sustainable practice ((Chu et al., 2016)). National governments have an important role to play in this respect because they are tasked with creating robust legal systems that transcend local limitations, instilling accountability in all stakeholders (N/A, 2019). This shows the need for a normative establishment of legal systems spanning local constraints bonded in accountability by all stakeholders.

Examination of legal disputes related to waste management policies: Investigation of the legal issues pertaining to waste management regulations in Indore has underscored the difficulties with compliance and enforcement of laws. Various stakeholders, including civic officials and various private firms involved in waste management, tend to mutually quarrel, owing to gaps and uncertainties in the law regulating solid waste management. This conflict brings into sharp focus the delicate question of responsibility for and the reliability of current laws, which are vital for the sustainability of cities. The legal conflicts are especially due to shortcomings in new waste management plans that do not meet expected standards, as explained in . Additionally, the absence of clear legal strategies weakens efforts in effective waste management, resulting in many social and environmental problems (N/A, 2019). Thus, it is important to grasp the legal situation around these issues to improve the effectiveness of Indore's waste management policies and create a more accountable atmosphere (Das et al., 2001).

Impact of judicial interventions on policy effectiveness: The role that courts play in formulating local policies-for instance, in Indore waste management-is fraught with complexity but also immensely critical. Courts may be instrumental in holding representations of local governments accountable for compliance with laws implemented to promote sustainability. For example, judicial rulings have had a clear effect on how waste policies are put into action since they push for compliance with environmental laws and improve transparency. This situation shows that city governments cannot meet their goals alone; they need help from national laws to strengthen local actions ((N/A, 2019)). Furthermore, adding legal views into the policy structure can help find ways to achieve sustainable city development ((Das et al., 2001)). Therefore, judicial actions not only influence policy compliance but also act as triggers for wider changes in the system, showing how legal and environmental governance are connected.

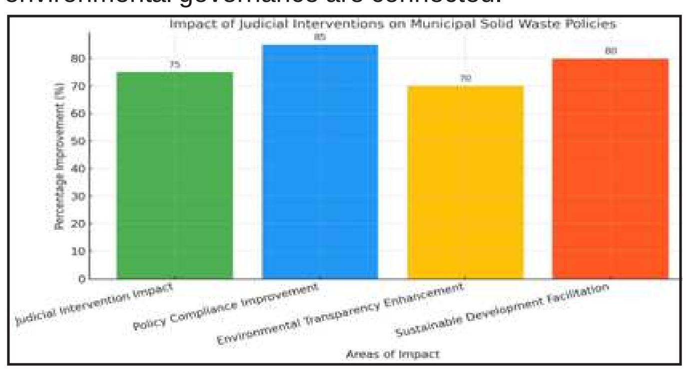

This bar chart illustrates the impact of judicial interventions on various aspects of municipal solid waste policies in Indore. Each bar represents the percentage improvement in areas such as policy compliance, environmental transparency, and sustainable development facilitation, highlighting the significant role of judicial actions in enhancing effective governance.

Conclusion: To sum up the analysis of Indore's municipal solid waste policies, it is clear that although there have been important improvements in waste management, the legal

frameworks still have significant gaps that prevent sustainability. The involvement of international actors in local adaptation efforts, noted in recent studies, shows the difficulties in incorporating waste management into existing bureaucratic and financial systems (Chu et al., 2016).Moreover, while these policies professed to provide comprehensive waste management strategies, the implementation thus faced serious problems such as weak enforcement actions and problems of engaging the public. In addition, unequal allocation of resources has led to inefficiency illustrated in urban governance case studies in India (Niyoti M, 2017). Altogether, therefore, vulnerability to such issues is the localized solution for long-term results for Indore's solid waste management regulations; a complete approach is necessary that links legal requirements with public health and environmental sustainability needs.

Summary of findings regarding the effectiveness of policies: The review of the municipal solid waste policies shows significant gaps and successes that affect their effective working. The city has employed waste minimization and resource recovery strategies in advancing its waste management. However, as pointed, the solid waste management hierarchy thus reveals a vast gap for better improvements where methods promoting disposal and less sustainable alternatives reign. This serves to emphasize the significance of connecting policy implementation with strong legal frameworks-the bigger picture here relates to urban resilience and governance (Bahadur et al., 2014). The success of these policies is also illustrated through which emphasizes the systematic problems in waste treatment and management, highlighting the necessity for an integrated approach that integrates local stories and community participation with technical options (N/A, 2019). In conclusion, although certain steps have been initiated, an effective overhaul of policies is still imperative for the long-term viability of Indore's waste management system.

Recommendations for improving legal frameworks and policy implementation: To make the Indore municipal solid waste management policies better, a varied approach is needed, starting with improving legal rules about waste management. This means aligning current laws with international best practices, especially the ideas found in the Integrated Solid Waste Management (ISWM) framework, which highlights the importance of public involvement, technical help, and support from institutions, as shown in [citeX]. Also, it is important to set up strong monitoring and evaluation systems to check overall compliance and effectiveness. Creating rewards for reducing waste and sorting it at the source can help with better handling and processing of waste while keeping financial management clear. Moreover, encouraging community involvement through educational campaigns can raise awareness and motivate residents to take part in sustainable practices. These combined strategies seek to turn policy into real actions, helping to create a cleaner and more sustainable urban area in Indore.

Image3. Framework for Integrated Solid Waste Management (ISWM)

Acknowledgment: I sincerely acknowledge the guidance and support of my guide/supervisor Prof. Dr. Archana Ranka,Reader, School of Law, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) for their valuable insightsand mentorship in conducting this research.

References:-

1. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
2. Chu, Eric K. (2016) Transnational Actors and the Governance of Urban Climate Adaptation in India. doi: https://core.ac.uk/download/199425260.pdf
3. Chu, Eric K. (2016) Transnational Actors and the Governance of Urban Climate Adaptation in India. doi: https://core.ac.uk/download/199425260.pdf
4. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
5. Chu, Eric K. (2016) Transnational Actors and the Governance of Urban Climate Adaptation in India. doi: https://core.ac.uk/download/199425260.pdf
6. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf

7. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
8. Bahadur, Aditya Vansh (2014) Policy climates and climate policies: analysing the politics of building resilience to climate change. doi: https://core.ac.uk/download/30608128.pdf
9. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
10. Bahadur, Aditya Vansh (2014) Policy climates and climate policies: analysing the politics of building resilience to climate change. doi: https://core.ac.uk/download/30608128.pdf
11. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
12. Bahadur, Aditya Vansh (2014) Policy climates and climate policies: analysing the politics of building resilience to climate change. doi: https://core.ac.uk/download/30608128.pdf
13. Chu, Eric K. (2016) Transnational Actors and the Governance of Urban Climate Adaptation in India. doi: https://core.ac.uk/download/199425260.pdf
14. Mahajan Niyoti (2017) doi: https://core.ac.uk/download/286958662.pdf
15. Mahajan Niyoti (2017)doi: https://core.ac.uk/download/286958662.pdf
16. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
17. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
18. Das, A. K. (Ashok Kumar) (2001) The role of NGOs in improving shelter for the poor : a critical analysis of case studies from India. doi: https://core.ac.uk/download/84601005.pdf
19. Chu, Eric K. (2016) Transnational Actors and the Governance of Urban Climate Adaptation in India. doi: https://core.ac.uk/download/199425260.pdf
20. Bahadur, Aditya Vansh (2014) Policy climates and climate policies: analysing the politics of building resilience to climate change. doi: https://core.ac.uk/download/30608128.pdf
21. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
22. Zulu, Boniwe. (2020) Towards a sustainable and integrated waste disposal approach: an assessment of waste-to-energy feasibility in Msunduzi Municipality, South Africa..doi: https://core.ac.uk/download/467101746.pdf
23. Chu, Eric K. (2016) Transnational Actors and the Governance of Urban Climate Adaptation in India. doi: https://core.ac.uk/download/199425260.pdf
24. Bahadur, Aditya Vansh (2014) Policy climates and climate policies: analysing the politics of building resilience to climate change. doi: https://core.ac.uk/download/30608128.pdf
25. N/A (2019) Climate emergency, urban opportunity: how national governments can secure economic prosperity and avert climate catastrophe by transforming cities. doi: https://core.ac.uk/download/286355247.pdf
26. Das, A. K. (Ashok Kumar) (2001) The role of NGOs in improving shelter for the poor : a critical analysis of case studies from India. doi: https://core.ac.uk/download/84601005.pdf

Table 1

Year	Waste Generated (Tons/Day)	Waste Segregated (%)	Waste Recycled (%)	Landfill Usage (%)	Additional Notes
2020	1158	60	45	25	Increased waste generation due to urban population growth.
2021	1225	68	53	22	Improved segregation initiatives led to higher recycling rates.
2022	1280	72	58	20	Policies on composting introduced, contributing to lower landfill use.
2023	1360	76	61	15	Continued efforts in public awareness resulted in improved waste management.

Indore Municipal Solid Waste Management Challenges Data

Table 2

Regulation	**Year**	**Overview**	**Impact**
Municipal Solid Waste Management Rules	2016	Sets guidelines for waste segregation, collection and disposal.	Facilitates systematic waste management practices at the municipal level.
Environmental Protection Act	1986	Framework for the protection and improvement of the environment.	Establishes responsibility for waste producers and encourages recycling initiatives.
Solid Waste Management Policy, Madhya Pradesh	2015	State-specific policy aimed at effective waste management strategies.	Empowers local authorities to implement waste management plans tailored to regional needs.
Plastic Waste Management Rules	2016	Addresses the challenges posed by plastic waste through regulation and restrictions.	Encourages reduction, recycling, and safe disposal of plastic waste.
Bio-Medical Waste Management Rules	2016	Guidelines for the handling and disposal of bio-medical waste.	Ensures safe disposal practices to prevent health hazards associated with medical waste.

Key Legal Frameworks and Regulations Influencing Waste Management in Indore

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत में संसदीय लोकतंत्र और चुनाव घोषणा पत्र का महत्त्व

सरोज कुमार*

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) मोनहलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

लोकतंत्र - अर्थ एवं महत्व - मानव जाति के प्रारम्भिक काल से लेकर वर्तमान समय तक अनेक प्रकार की शासन व्यवस्थाएँ विद्यमान रही है और शासन के इन विभिन्न रूपों का मानव जाति के राजनीतिक विकास में विशेष महत्व रहा है। इस प्रकार की महत्वपूर्ण शासन व्यवस्थाओं में राजतंत्र, अधिनायक तंत्र, कुलीनतंत्र व लोकतंत्र अधिक प्रमुख है। शासन प्रणालियों के विभिन्न स्वरूपों में लोकतंत्र सबसे मर्यादित एवं प्रतिष्ठित है। यह केवल एक शासन पद्धति न होकर एक सार्थक जीवन पद्धति है, लोकतांत्रिक शासन प्रणाली का मूलमंत्र स्वतंत्रता, समानता तथा बंधुत्व की भावना है जो फ्रांस की क्रांति के बाद सशक्त रूप से एक सर्वमान्य लोकतांत्रिक वितर्श के यप में प्रस्थापित हुआ।

लोकतंत्र जनता की शक्ति का प्रतिफलन होने के साथ-साथ व्यक्ति की सर्वोन्मुखी उन्नति का साधन भी है, जिसमें शासक वर्ग के प्रतिनिधि जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि ही होते हैं। यह आर्थिक समानता, राजनीतिक समता का ही नहीं, अपितु सुदृढ़ आत्मबल का भी प्रतीक है। लोकतंत्र से आशय है जनता का शासन। जिस शासन प्रणाली में जनता अपने भाग्य की लकिरें स्वयं बनाते हुए अपनी स्थापना, अपना वजूद और अपनी अस्मिता की पहचान देती है, वही लोकतंत्र है।

लोकतंत्र एक विकासशील दर्शन है, जीवनयापन की गतिशील पद्धति भी है। लोकतंत्र केवल अधिकारों पर ही जीवित नहीं रहता वरन् उसका मूल, कर्तव्य पर आश्रित है। समाज की इकाई के रूप में व्यक्ति लोकतंत्र का मूल आधार है। लोकतंत्र मर्यादा की मांग करता है और व्यक्ति के आचरण में उतारता है। लोकतंत्र हिंसा व नकली क्रांति को रोकता है।

एक शासन प्रणाली के रूप में प्रजातंत्र का आशय उस शासन व्यवस्था से होता है, जिनमें सम्प्रभुत्व अंतोगत्वा किसी एक व्यक्ति अथवा वर्ग के हाथ में न होकर सम्पूर्ण जनता के ही हाथ में रहता है और जिसमें शासन तंत्र सम्पूर्ण जनता के द्वारा अथवा उसके प्रतिनिधियों द्वारा अथवा कम से कम उसकी सहमति द्वारा ही चलाया जाता है जिसमें किसी एक व्यक्ति अथवा वर्ग विशेष का नहीं वरन् सम्पूर्ण जनता का ही हित प्रधान लक्ष्य होता है।

एक लोकतान्त्रिक समाज की आधारशिला उस समाज की विविधाता में सन्नहित होती है। समाज में लिंग, जाति, भाषा, रंग, स्थान के आधार पर भेदभाव न हो और समाज में समरसता एवं व्यवस्था बनी रहे इसलिए आवश्यक है कि उस समाज से एक स्थान ऊपर एक सित्क राज्य हो तथा उस राज्य को मूत:रूप प्रदान करनेवाली एक प्रतिनिधियात्मक सरकार हो। एक सरकार लोकतान्त्रिक प्रक्रियाओं का सतत पालन करे, संविधानवाद के अनुसार शासन व्यवस्था चले और शासन को समाज से भी लगातार वैधता प्राप्त होती रहे इसलिये यह जरूरी है कि सरकार का चुनाव एक निति कार्यकाल के लिए हो। नियतकालिक चुनाव किसी भी लोकतांत्रिक सरकार की आधारशिला होती है। इसके माध्यम से न केवल जनता को शासन में सक्रिय रूप से भागीदारी करने का अवसर मिलता है बल्कि इसके साथ-साथ विभिन्न राजनीतिक दलों को भी जनता की इच्छा अनुरूप अपने प्रदर्शन को बेहतर करने का मौका मिलता है।

लोकतन्त्र और राजनीतिक दल - लोकतन्त्र और राजनीतिक दल का गहरा रिश्ता है। राजनीतिक दल का प्रजातन्त्र में होना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य सा लगता है। दोनों एक-दूसरे से अविच्छेद है। राजनीतिक दल के अभाव में लोकतन्त्र अव्यवहार्य बन जाता है। राजनीतिक दल को बर्क ने ऐसे व्यक्तियों का समूह कहा है जो किसी राष्ट्रीय हित की पूर्ति के लिए किसी एक विशिष्ट सिद्धान्त को आधार मानकर अपना सन्धान करते है। डब्ल्यू. बी. मुनरो के शब्दों में स्वतन्त्र राजनीतिक दलो। का शासन लोकतन्त्रीय शासन का ही दूसरा नाम है। जहाँ अनेक राजनीतिक दल नहीं रहें वहाँ स्वतन्त्र शासन कभी नहीं रहा। क्योंकि प्रजातन्त्र में जनता का शासन होता है जनता द्वारा निर्वाचित अपने प्रतिनिधियों के निर्वाचन और प्रतिनिधियों द्वारा शासन व्यवस्था के संचालन की इस सम्पूर्ण व्यवस्था को पूर्ण करने के लिए राजनीतिक दलों का अस्तित्व अनिवार्य है यद्यपि जय प्रकाश नारायण ने दल विहिन लोकतंत्र के सिद्धांत का भी प्रतिपादन किया है।

संसदीय लोकतन्त्र की कोई भी कल्पना राजनैतिक दलों के अभाव में अधूरी रह जाएगी। यदि किसी संसद या विधानसभा में एक ही राजनैतिक दल हो और वही सरकार को चलाए तो कुछ ही समय में वह सरकार पंगु अथवा निष्क्रिय हो जाएगी। क्योंकि वह कोई भी गलती करेगी तो उसकी गलती बताने वाला कोई भी नहीं होगा। इसका तो एक मात्र विकल्प राजशाही या तानाशाही ही होगा। मानव समाज मत-मतान्तरों से ओत-प्रोत रहता है। किसी भी विचारधारा या योजना में अच्छे-बुरे और सही-गलत, लागू हो सकने वाले और असंभव, दोनों पहलू होते हैं और उन्हें सही दिशा में चलाए रखने या लागू करने के लिए दूसरे पहलू को सदैव ध्यान में रखना आवश्यक है यही पर विपक्ष की भूमिका का उदय होता है। राजनीतिक जीवन की क्रमश: परिपक्व होती अवस्था में इसका महत्त्व क्रमश: बढ़ता जाता है और अंत में वह चलकर शासन के विकल्प का रूप ले लेता है।

आज किसी देश की राजनीतिक दलों के बगैर परिकल्पना नहीं की जा सकती। इस कारण लार्ड ब्राइस में लोकतन्त्र के पहियों के रूप में

राजनीतिक दलों को अपरिहार्य माना है। ह्युवर ने प्रजातन्त्र यन्त्र के परिचालन में राजनीतिक दलों को तेल के समान माना है। ऐलेन वॉल ने कहा है कि राजनीतिक दल राजनीतिक प्रक्रिया को जोड़ने, सरल करने तथा स्थिर बनाने का कार्य करते हैं।

राजनीतिक दल की इसी महत्ता को परिभाषित करने के लिए प्रसिद्ध विचारक मैकाइवर ने कहा है कि 'बिना दलीय संगठन के किसी सिद्धान्त का एक होकर प्रशासन नहीं हो सकता, किसी भी नीति का क्रमबद्ध विकास नहीं हो सकता, संसदीय चुनावों की वैधानिक व्यवस्था नहीं हो सकती और न ऐसी मान्य संस्था की स्थापना ही हो सकती है जिनके द्वारा कोई भी दल शक्ति प्राप्त कर सकता है।' इसका सीधा सा अर्थ यह है कि प्रजातन्त्रात्मक शासन व्यवस्था लोकमत पर आधारित होती है और राजनीतिक दल लोकमत के निर्माण तथा उसकी अभिव्यक्ति के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साधन होते हैं।

संसदीय लोकतन्त्र में तो राजनीतिक दलों का होना और भी आवश्यक है। आधुनिक युग में राजनीतिक दल प्रजातन्त्र के जीवन रक्त है, इसके बिना प्रजातन्त्र निरंकुश तन्त्र में तब्दील होने की सम्भावना रहती है। इन बातों से स्पष्ट है कि अधिनायकवाद या तानाशाही से बचने के लिए राजनीतिक दलों की आवश्यकता होती है।

राजनीतिक दलों की जब बात करते हैं तो यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि किसी गुट से भिन्न होते है। गुट अपेक्षाकृत संकीर्ण हितों के लिए आपस में लड़ते हैं, वे समग्र से पृथक पहचान बनाना चाहते हैं जबकि राजनीतिक दल व्यापक हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं, हालांकि वर्तमान में तो राजनीतिक दल तथा गुट में भेद करना लगभग असम्भव दल क्षेत्र, वर्ग या समूह की एक सूत्रीय नीति को लेकर भी चुनाव लड़ते है। इस प्रकार राजनीतिक दल हित अथवा दवाब समूह से भिन्न प्रकृति के संगठित समूह है।

भारतीय संविधान में कही पर भी राजनैतिक दलों का वर्णन नहीं मिलता है। परन्तु भारतीय संविधान के निर्माण से पूर्व ही 1885 ई. में ए. ओ. ह्यूम नामक अंग्रेज अधि भारतीय संविधान में राजनीतिक दलों का उल्लेख नहीं किया गया है। परन्तु संसदीय शासन प्रणाली की व्यवस्था करके उन्हें अप्रत्यक्ष रूप से मान्यता प्रदान की है। संसदीय शासन प्रणाली में सरकार का गठन दलीय आधार पर ही किया जाता है और विरोधी दल सरकार की नीतियों तथा कार्यक्रमों पर निगरानी रखते हैं और उनकी त्रुटियों का पता लगाकर जनता को उनसे अवगत कराते हैं। यदि सरकार बहुमत का समर्थन खो देती है तो विरोधी दल उसका स्थान ले लेता है अत: यह स्पष्ट है कि लोकतन्त्र के लिए राजनीतिक दलों का होना अनिवार्य है। राजनीतिक दल ही संसदीय शासन प्रणाली में सरकार का गठन करते हैं और पराजित दल विपक्ष की भूमिका निभाते हैं। इसके अलावा राजनीतिक दल जनता व सरकार के बीच कड़ी का काम करते हैं।

स्वतन्त्रता के बाद तीन दशकों तक कांग्रेस का एक छत्र राज केन्द्र में रहा। इसके अलावा राज्यों में भी कांग्रेस का राज रहा। 1980 के बाद से कांग्रेस का प्रभाव लगातार कम होता जा रहा है और वर्तमान समय में कांग्रेस पार्टी अपने राजनैतिक जीवन के सबसे मुश्किल दौर से गुजर रही है। दूसरी तरफ भारतीय जनता पार्टी का ग्राफ लगातार बढ़ता जा रहा है। भाजपा की स्थापना 1980 ई. में अटल बिहारी वाजपेयी ने की थी। इससे पूर्व भाजपा जनसंघ के नाम से जानी जाती थी। इसकी स्थापना 1951 ई. में श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने की थी। वर्तमान में भाजपा की केन्द्र में सरकार है और भारत के आधे राज्यों से ज्यादा में भाजपा की सरकारें है। इसके अलावा 1977 ई. में जनता पार्टी का गठन हुआ और इस पार्टी ने लोकसभा चुनाव में ऐतिहासिक सफलता अर्जित की थी और मौरारजी देसाई देश के पहले गैर कांग्रेसी प्रधानमन्त्री बने थे। लेकिन आपसी मतभेद के चलते जनता पार्टी की सरकार 1980 में गिर गई और जनता पार्टी बिखर गई। 1989 ई. में जनता दल का गठन हुआ और वी. पी. सिंह के नेतृत्व में जनता दल की सरकार बनी। लेकिन आपसी मतभेद और सत्ता के संघर्श के कारण 1990 ई. में जनता दल भी बिखर गया और सरकार गिर गई। तत्पश्चात साझा सरकारों के दौर में छोटी बडी अनेक दलों का महत्व बढ गया और उनके चुनाव घोषणा पत्रों में रूचि भी बढ गयी। 2014 के पश्चात भाजपा नीत एन डी ए का सशक्त बहुमत का चुनाव घोषणा पत्रों के क्रियान्वयन की प्रक्रिया अपेक्षाकृत बढी है।

भारत की चुनावी प्रक्रिया शासन है जहाँ भारत की चुनाव व्यवस्था विश्व की सबसे बड़ी और जतिल चुनाव प्रणावलयों में से एक है। भारत की चुनाव प्रणाली की जतिलता का अंदाजा केवल इसी बात से लगाया जा सकता है कि यहाँ मतदाताओं की संख्या 81.45 लाख करोड़ से ज्यादा है। कुल मतदान केन्द्रों की संख्या 930000 है। चुनाव करवाने में सुरक्षा केवल पुलिस व अर्द्धसैनिक बलो के सैनिकों की संख्या लगभग 12 लाख है।

भारतीय संविधान में अनुच्छेद 324 से 329 तक स्वतन्त्र निर्वाचन आयोग की स्थापना की गई है। आधुनिक लोकतन्त्र के ढ़ांचे में कार्यान्वियन की दृष्टि से चुनाव का विशेष महत्त्व है। जनता शासन में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से भाग लेती है। जब जनता स्वयं प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित होकर शासन कार्यो में भाग लेती है तो उसे प्रत्यक्ष लोकतन्त्र कहा जाता है। परन्तु यह प्रणाली कम जनसंख्या वाले क्षेत्रों में ही सम्भव है। वर्तमान में अधिकांश देशों की जनसंख्या इतनी अधिक है कि सम्पूर्ण जनता का शासन कार्य के लिए एकत्र होना सम्भव नहीं है। इसलिए जनता के द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि शासन कार्य करते हैं। चुनाव लोकतन्त्र के पर्व होते हैं। चुनाव वह साधन है जिसके द्वारा नागरिकों में सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने की इच्छा उत्पन्न होती है। आम चुनाव में विभिन्न राजनीति दल जनता के सामने अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं और जनता अपना निर्णय मत पत्र द्वारा अभिव्यक्त करती है। इस तरह से चुनावों के द्वारा सरकार को वैधानिकता की शक्ति प्राप्त होती है तथा राजनीतिक दलों और नेताओं से यह आशा की जाती है कि इस अवसर पर जनमत को जागृत तथा प्रशिक्षित करें। चुनावों का प्रयोजन मात्र दलों की हार-जीत या सत्ता परिवर्तन नहीं है। बल्कि यह एक ऐसा अवसर होता है। जब लोकतन्त्र अपने वास्तविक रूप में सामने आता है।

नागरिक और मतदाता के साथ उसका सम्पर्क स्थापित हो जाता है। लोकतन्त्र में चुनावों का अवसर मतदाताओं को राजनैतिक प्रशिक्षण देने तथा राष्ट्रीय मतदाताओं को राजनैतिक प्रशिक्षण देने तथा राष्ट्रीय समस्याओं से उसे अवगत कराकर उसकी चेतना को जगाने से होता है। चुनाव का महत्त्व केवल सत्ता पाने या विरोधियों को हराना ही नहीं है। बल्कि सामान्य मतदाता के ज्ञान एवं विवके को जागृत करके प्रस्थापित तन्त्र के साथ उसकी सम्बद्धता और प्रतिबद्धता को इक्ट्ठा कर उस प्रणाली के प्रति विश्वास कराना है। चुनावों को जनता व सरकार के बीच कड़ी के रूप में स्वीकार किया गया है। लोकतन्त्र में सबसे ज्यादा महत्त्व जनता और मतदाता का होता है और चुनाव जनमत की अभिव्यक्ति के अवसर होते हैं। लोकतन्त्र में चुनाव अक्सर इस बात पर जोर देता है कि उसके द्वारा लोकमत को अपने भाग्य का निर्णय करने का अधिकार मिले और वह मनचाही सरकार की स्थापना करने

का अभिमत प्रकट करे। और इससे राजनैतिक भागेदारी भी बढ़ती है। जो कि लोकतन्त्र की स्थापना में अहम भूमिका निभाता है।

लोकतन्त्र को चलाने के लिए लोगों की भागेदारी बहुत जरूरी है और इसके लिए राजनैतिक दलों की जरूरत होती है क्योंकि लोग राजनैतिक दलों को ही वोट देते हैं। राजनैतिक दल विभिन्न क्षेत्रों में अपने उम्मीदवार उतारते हैं और इन उम्मीदवारों को लोग मतदान करते हैं। चुनाव के समय राजनैतिक दलों द्वारा अपने चुनाव घोषणा पत्र जारी किए जाते हैं और इन चुनाव घोषणा पत्रों को देखकर ही लोग मतदान करते हैं। जिस भी दल के चुनाव घोषणा पत्र से लोग सहमत होते हैं उसे ही मतदान करते हैं। भारत में संसदीय लोकतंत्र की प्रक्रिया में उत्तरदायित्व की भावना के विकास में चुनावी घोषणा पत्रों की महती भूमिका रही है चुनावी घोषणा पत्रों की चुनावी (भारतीय) राजनीति में भूमिका घोषणा पत्र से किसी राजनैतिक दल की विचारधारा, नीतियों व कार्यक्रमों का पता चलता है।

घोषणा पत्र के आधार पर ही लोगों का विश्वास व आस्था राजनैतिक दलों से जुडती है। अगर चुनाव के बाद सत्तारूढ़ राजनैतिक दल घोषणा पत्र में की गई घोषणाओं पर अमल नहीं करता तो लोगों का सरकार व राजनैतिक दल से विश्वास उठ जाता है और अगले चुनाव में राजनैतिक दल के विरोध में मतदान करके सत्ता से बाहर कर देते हैं। उसके बाद फिर पराजित दल विपक्ष में बैठकर सत्तारूढ़ सरकार की कमियाँ जनता के सामने लाता है। सरकार की गलत नीतियों का विरोधा करता है और जनता के हितों की आवाज बुलंद करता है। जिससे कि वह जनता का खोया हुआ विश्वास हासिल कर सके। लोकतन्त्र शासन पद्धति में सत्तारूढ़ दल और विपक्षों दल दोनों जनता के बीच रहते हुए प्रयास करते हैं। उन्हें राजनीतिक शिक्षा देते हैं। ताकि जनता का भरोसा उन पर बना रहे। यही लोकतन्त्र भासन पद्धति की खासयित है। इसी कारण 20वीं और वर्तमान सदी में ज्यादातर देशों ने लोकतन्त्र शासन पद्धति को अपनाया।

चुनाव में सभी राजनीतिक दल भाग लेते हैं और जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिए राजनीतिक दल अपने चुनाव घोषणा पत्र निकालते हैं। जिसमें वह अपनी चुनाव नीतियों, घोषणाओं व वायदों का प्रारूप जारी करते हैं। जिसे घोषणा पत्र कहते हैं। चुनाव घोषणा पत्र किसी भी राजनीतिक दल को अपनी उदान्त आशाओं तथा महान आंकाक्षाओं को समय-समय पर व्यक्त करने का अवसर देता है। यह अवसर अपनी उपलब्धियों को रेखांकित करने और सम्पन्न किए गए कार्यो को बताने का भी है। घोषणा पत्र एक ऐसा अवसर है। जब हम अपनी जनता के समक्ष अपने चिन्तन की नवीनता, संकल्प की निर्भीकता और उद्देश्य की स्पष्टता प्रदर्षित करते हैं। लेकिन यह एक संजीदा अवसर भी है। क्योंकि घोशणा पत्र वह प्रतिज्ञा है। जो कोई भी राजनीतिक दल अपने वायदों को पूरा और अपने वचनों को निभाने के लिए करते हैं। चुनाव घोषणा पत्र बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रलेख है। दलों की परख उन्हीं से होती है। वे विचारों की अभिव्यक्ति मात्र नहीं है। उनमें दल की प्रतिज्ञाएँ होती है। यदि सत्ता में आने पर कोई दल अपने वायदों को पूरा नहीं करता तो निश्चय ही उसकी आलोचना होती है।

राजनीतिक दलों द्वारा चुनाव के समय चुनाव घोषणा पत्र जारी करने की परम्परा है। जिसके द्वारा दल मतदाताओं के समक्ष दल के भावी कार्यक्रमों की रूपरेखा, देश से जुड़ी समस्याओं एवं समाधान व नई दिशा देने की सोच को प्रस्तुत करता है। मतदाताओं की आंकाक्षाओं को समझते हुए उनसे कुछ वायदे भी किए जाते हैं। चुनाव घोषणा पत्रों का परस्पर तुलनात्मक विश्लेषण करके जनता को इस बारे में जागृत करना भी भारत समेत अन्य लोकतंत्रों में उत्तरदायित्व विकसित करने का एक बडा माध्यम बन चुका है। चुनाव अभियान के दौरान चुनाव घोषणा पत्र के बिन्दुओं पर जनता प्रश्न भी करने लगी है।

सोशल मिडियो के विविधा प्लेटफार्म इस प्रकार की अंतकिया का एक सशक्त माधयम बन चुका है।

घोषणा पत्र का अर्थ एवं तात्पर्य – मेनीफेस्ट शब्द इटालियन शब्द 'मेनीफेस्टे' से अद्भूत है। जिसका अर्थ है जो आँखों से सहजता से देखा जा सके या दिमाग से विचारा जा सके। अत: उत्पत्ति व अर्थ की दृष्टि से उन विचारों को जहाँ तक हो सके स्पष्ट करना।

आक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार – चुनाव घोषणा पत्र जनसाधारण के लिए किसी भी सम्प्रभु देश, राज्य, व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह द्वारा अथवा उसकी सहमति से जारी किया जाता है। जिसमें जनसाधारण की महत्त्व की बातों का उल्लेख होता है। जिसके द्वारा उसके घोषणा कर्त्ताओं की पिछली गतिविधियाँ ज्ञात हो सके तथा आगे जो करना है उनके कारणों और उद्देश्यों का वर्णन है।

चैम्बर्स की 20वीं सेंचुरी डिक्शनरी के अनुसार– घोषणा पत्र को इस प्रकार परिभाषित करती है जो एक सम्प्रभुता सम्पन्न राष्ट्र, नेता, दल या संगठन के उद्देश्यों, विचारों को घोषित करे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि घोषणा-पत्र एक ऐसा प्रपत्र है जो राजनीतिक दलों के मस्तिष्क एवं भविष्य के कार्यक्रमों को उद्घाटित करता है और मतों को आकर्षित करने का तरीका है।

राजनीतिक दल का घोषणा पत्र सम्बन्धित दल का मुखपत्र होता है। जो उसके कार्यक्रमों और नीतियों से सम्बन्धित होता है और चुनाव जीतने के बाद कार्यान्वित किया जाता है। चुनाव घोषणा पत्र समाज, राज्य और आर्थिक नीतियों के प्रति दल के दृष्टिकोण को दर्शाता है और कार्यकर्त्ताओं की प्रतिबद्धता को मजबूत करता है। घोषणा पत्र पुरानी विचारधाराओं, धारणाओं और भविष्य में विकसित होने वाली विचारधारा के बीच का अन्तरिम दस्तावेज ही कहा जा सकता है।

घोषणा पत्र कमोवश दोनों के कल्पित आत्मकथ्य होते हैं और बहुविधा अलंकरण के अनुष्ठान होते हैं। वे राजनीतिक दलों के सिद्धान्तों को प्रतिपादित करते हैं और मतदाताओं को अपने विचारधारा व वादों से बाँधाते हैं। वे मुद्दों को प्रस्तुत करते हैं, देश की समस्याओं से अवगत कराते हैं तथा दल की योजना व नीति तथा मूल्यपूरक उद्देश्यों को निर्धारित करते हैं। चुनाव ऐसा अवसर होता है जब राजनीतिक दल लोगों से वादे करते हैं और वादे उनके घोषणा पत्र में शामिल होते हैं। घोषणा पत्र राजनीतिक दलों के लिए अपनी नीतियों व कार्यक्रमों के प्रति नया दृष्टिकोण पेश करने का मौका होता है। जिसमें उनकी दृढ़ इच्छा, उद्देश्य और संकल्प शक्ति का परिचय मिलता है। यह वह प्रतिज्ञा है जिसमें कोई भी दल अपने चिन्तन की नवीनता, संकल्प की निर्भीकता और उद्देश्यों की स्पष्टता प्रदर्शित करते हैं। जहाँ तक भारत का प्रश्न है चुनाव से पूर्व घोषणा पत्रों को लिखित रूप में जनता के समक्ष रखा जाता है। इससे सम्बन्धित राजनीतिक दल की शपथ, वादों, नीतियों तथा उपलब्धियों का समावेश होता है। विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा अपने घोषणा पत्रों में ये शब्द और वाक्यांश में लाये जाते हैं। जिनके अर्थ इस प्रकार हो सकते हैं–

(अ) 'प्रतिज्ञा' एक सहमति, शपथ या प्रण होती है।

(ब) 'प्रतिबद्धता' एक समर्पण होता है, किसी कारण, लक्ष्य या कृतज्ञता के प्रति।

(स) 'वचन' स्वयं की किसी निश्चित कार्य को करने से सम्बन्धित शपथ होती है।

(द) 'निष्ठा' का अर्थ है किसी कार्य या विचार के प्रति गंभीरता।

भारत में चुनावी घोषणा पत्र निर्धारण के प्रमुख कारक – संसदीय व्यवस्था वाले देशों में राजनीतिक दल चुनाव से कुछ दिन पूर्व अपना घोषणा पत्र मतदाताओं के समक्ष प्रस्तुत करते है। इन घोषणा पत्रों में वादों एवं नीतिगत के बिन्दु शामिल किये जाते है। भारत में बहुदलीय प्रणाली के विकसित होने के कारण यहघोषणा पत्र दलों के राजनीतिक एवं रणनितिक दिशा तय करते है। स्पष्ट रूप से घोषणा पत्रों का प्रभाव मतदाताओं के माध्यम से चुनावी परिणाम पर दृष्टिगोचर होता है। सोशल मिडिया तथा संचार माध्यमों की व्यापकता के कारण घोषणा पत्रों के महत्व एवं प्रभाव काफी बढ गया है। इसलिए इनकी विश्वनियता कायम रखने के प्रयास में

राजनीतिक दल अब वैकल्पिक रूप से इनके लिए आकर्षक नामावली संकल्प पत्र वचन पत्र विजन डोक्युमेंट इत्यादि का प्रयोग करने लगे है। चुनाव घोषणा पत्र के कुछ प्रमुख निर्धारक कारक इस प्रकार रहे है।

1. विचारधारा (पंथ निरपेक्षता, यु सी सी, धारा 370, समाजवाद)
2. सामुदायिक– जातिवादी तुष्टीकरण तथा वोट बैंक की राजनीति
3. क्षेत्रवाद – क्षेत्रिय आर्थिक असंतुलन, भाषा
4. किस की धीमी गति
5. गरीबी, अशिक्षा तथा अन्य सामाजिक सूचकांक
6. नैतृत्व की महत्वाकांक्षा
7. मुफ्त – रेवडी देने की राजनीति

चुनावी घोषणा पत्रों का आलोचनात्मक विश्लेषण एवं जवाबदेही का निर्धारण चुनावी घोषणा पत्र मतदाताओं का समर्थन हासिल करने के लिए लोकलुभावन वायदो तथा नीतियो का एक राजनीतिक दस्तावेज है जिसका कोई वैधानिक आधार नही होता। चुनावी घोषणा पत्रों को लागु करना राजनीतिक दलों के लिए सत्ता प्राप्त करने के बाद बाध्यकारी भी नही होता इसलिए चुनाव से पूर्व मूलभूत सामाजिक आर्थिक सूचकांको के अतिरिक्त कही ऐसे लोलुभावन आर्थिक वायदे भी कर दिये जाते है जिन्हे पुरा करना राजनीतिक दलों के लिए असंभव सा ही हो जाता है। जैसे 1971 में गरीबी हटाओं, 2012 72000 रूपये नकद भुगतान करने, उत्तरप्रदेश, तमिलनाडु तथा राजस्थान में लेपटोप, स्मार्ट फोन, टी वी, कुकर, मुफ्त बिजली, मुफ्त यात्रा इत्यादि वायदे अर्थ व्यवस्था की दृष्टि से राजनीतिक दलों के लिए से पूर्णत: लागु करना व्यवहारिक नही प्रतीत होता है।

भारत में घोषणा पत्र के बिन्दुओं का लागु करवाने और राजनीतिक दलों के उत्तरदायित्व निर्धारण का कोई वैधानिक अथवा सस्थागत तंत्र ना होने के बावजूद इस संदर्भ में कुछ प्रयास अवश्य हुए है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 2013 में सुब्रहमनीयम बालाजी बनाम तमिलनाडु सरकार के वाद में कहां कि 1951 के जनप्रतिनिधी कानून की धारा 123 के अंतर्गत चुनावी वायदों को प्रेष्ट आचरण नही माना जा सकता परन्तु मुफ्त की योजनाओं तथा चुनाव के उपरान्त मतदाताओं की अनदेखी करने के संबंध में चुनाव आयोग को दलों की सहमति से दिशा–निर्देश निर्धारित करने का आदेश दिया। चुनाव आयोग के आदर्श आचार संहिता के भाग 8 में इस संबंध में दिशा–निर्देश शामिल किये गये है। इसके अतिरिक्त जनप्रतिनिधी कानून 1951 के खंड 127 ए में भी चुनावी घोषणा पत्रों की बेलगाम स्वच्छदता को नियंत्रित करने के उपाय शामिल है। भारत के चुनाव आयोग ने विभिन्न अवसरों पर राजनीतिक दलों को चेतावनियां भी दी है। 2016 में तमिलनाडु में ए आई ए डी एम के को 2017 को आम आदमी पार्टी को और 2017 में ही समाजवादी पार्टी को इन्ही करणों से चेतावनी दी गई थी।

उपरोक्त प्रयासों के बावजूद कठोर वैधानिक प्रावधानों के अभाव में चुनाव घोषणा पत्रों में अव्यवहारिक एवं निरर्थक लोकलुभावन मुफ्त के वायदों का दौर अनवरत जारी है। इससे चुनाव घोषणा पत्रों पर जनता का विश्वास निश्चित रूप से प्रभावित होता है।

निष्कर्ष – भारत के संसदीय लोकतंत्र में निसंदेह चुनाव घोषणा पत्रों का एक विशिष्ट स्थान है। जनता तथा राजनीतिक दलों के बीच में एक प्रभावी संपर्क सूत्र का कार्य करते है। विशेष रूप से संचार के बढते माध्यमों से राजनीतिक दलो की मंशा तथा नीतियां इन्हीं चुनाव घोषणा पत्रों के द्वारा प्रकट होती है। लेकिन दुर्भाग्य से चुनाव घोषणा पत्र अधिकांशत: आभासी ही साबित हुए है। नीतिगत विषयों की गंभीरता तात्कालिक मुफ्त की रेवडी की राजनीति ने काफी कम कर दी है। आवश्यकता इस बात की है कि मतदाता विभिन्न माध्यमों से राजनीतिक दलों को पुरे किये जा सकने वाले तथा देश के समग्र विकास को आगे बढाने वाले बिन्दुओं को चुनाव घोषणा पत्र में शमिल करने के लिए बाध्य करें। चुनाव घोषणा पत्र वस्तुत चुनाव के बाद नीति पत्र में परिवर्तित किये जाने योग्य होने चाहिए जैसा कि कुछ राज्यो में शुरू भी किया है। अन्यथा लोकतंत्र के प्रति विश्वनियता भी प्रभावित हो सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. आचार्य गोस्वामी भाल चन्द्र, 'संसदीय लोकतन्त्र में विपक्ष की भूमिका', प्रकाशन : पोइन्टर पब्लिशन, जयपुर, 1997, पृ. 1६5.
2. वेद. ई. एस., 'ला एण्ड ओपीनियन इन इंग्लैण्ड, प्रकाशन : मेकमिलन कम्पनी, लन्दन, 1961, पृ. 50—52.
3. गार्नर जेम्स विलफोर्ड, 'पालिटिक्ल साईस एण्ड गर्वनमेन्ट' प्रकाशन दी वर्ल्ड प्रैस प्राईवेट लिमिटेड, कलकत्ता, 1951 पृ. 286.
4. ब्राइस जेम्स, 'मार्डन डेमोक्रेटिक' वाल्यूम – 1 प्रकाशन : दी वर्ल्ड प्रैस प्राईवेट लिमिटेड, कलकत्ता, 1962, पृ. 26.
5. आचार्य गोरस्वामी भालचन्द्र, 'संसदीय लोकतन्त्र में विपक्ष की भूमिका' प्रकाशन : पोइन्टर पब्लिकेशन, जयपुर, 1997, पृ. 5.
6. नीरजा गोपाल, प्रताप भानू महता, 'भारत में राजनीति' प्रकाशन : आक्सफोर्ड यूनिवसर्टी प्रेस 2010, पृ. 98 –100.
7. भारणक एस. बी. 'चुनाव: लोकतन्त्र की अभिव्यक्ति' प्रकाशन योजना भवन, नई दिल्ली, पृ. 7–10.
8. राय, डॉ. गुलशन, 'भारतीय सरकार व राजनीति' प्रकाशन : जनता हाउस, दिल्ली पृ. 450–455.
9. फड़िया डॉ. बी. एल., 'भारतीय राजव्यवस्था और भारत का संविधान' प्रकाशन : साहित्य भवन, आगरा, पृ. 265.
10. राय डॉ. गुलशन, 'भारतीय सरकार व राजनीति' प्रकाशन : जनता हाउस, दिल्ली, पृ. 450–455.
11. चण्डीदास आर., ' इण्डिया वोटस' प्रकाशन : पापुलर, बम्बई, 1998, पृ. 118.

12. तिवारी अरूण, 'जनता के सरोकार और दलीय घोषणा – पत्र' 11 अप्रैल, 2014, राष्ट्रीय सहारा.
13. परमानन्द, 'न्यू डाइमेंशन इन इण्डियन पोलिटिक्स' प्रकाशन : यू. डी. एच., दिल्ली, 1985, पृ. 11.
14. द कन्साइज आक्सफोर्ड डिक्शनरी आफ करन्ट इंग्लिश, 1970, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, पृ. 741.
15. चैम्बर्स, टवन्टिस्थ सेन्चरी डिक्शनरी, 1976, स्लाइड पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृ. 798.
16. मार्क्स कार्ल एण्ड एंजिल्स फ्रेडरिक 'कम्यूनिस्ट मेनीफेस्टो, 1971, पेगुइन, पृ. 7
17. घोषणा–पत्र का इतिहास (www.internet.com)
18. भार्गव डॉ. प्रभा, 'चुनाव घोषणा–पत्र सिद्धान्त व स्थिति' प्रकाशन : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2006, पृ. 4. 22
19. www.electioncommissionofindia.com
20. नारायण इकबाल, 'स्टेट पोलिटिक्स इन इण्डिया' प्रकाशन : मीनाक्षी, मेरठ, 1976.
21. इरफान अहमद, भारतीय चुनाव में घोषणा पत्र, अलजजीरा, अप्रेल 15, 2014
22. कृष्णा महाजन एवं योगेशसिंह, चुनाव घोषणा पत्र – वैधानिक यथार्थता अथवा आभासी, टी एन एन एल यु लॉ रिव्यु 2018

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

महाराव सिरोही एवं मेवाड़ महाराणा मुगल बादशाह अकबर के विरुद्ध

भरत कुमार माली*

* शोधार्थी, इतिहास विभाग मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – महाराव उदयसिंह की 10 रानियाँ थी लेकिन उनकी नि:संतान मृत्यु के बाद एकमात्र व्यक्ति मानसिंह दूदावत था जो इस समय मेवाड़ के कुम्भलगढ़ में महाराणा उदयसिंह के साथ था। महाराणा उदयसिंह कुंवर मानसिंह की वीरता बहादूरी से बहुत खुश थे तथा शिकार में मानसिंह द्वारा शौर्य व श्रेष्ठता बताने पर हमेशा शिकार के समय अपने साथ रखते थे। शिकार के सिलसिले में महाराणा उदयसिंह तथा कुंवर मानसिंह कुम्भलगढ़ आये थे। इसी समय सिरोही मेवाड़ महाराव उदयसिंह का देहान्त हो गया तब सिरोही वालों ने सोचा की अगर मेवाड़ महाराणा के महाराव उदयसिंह के नि:संतान मृत्यु की जानकारी मिली तो वे यहाँ आक्रमण कर देंगे और आबू–सिरोही क्षेत्र पुन: मेवाड़ के पास चला जायेगा। अत: सभी बातों को देखकर मानसिंह को जानकारी देने तथा उसे अतिशीघ्र सिरोही बुलाने हेतु भरोसेमन्द व्यक्ति जयमल साघणी को नियुक्त किया जो रात्रि के समय सिरोही से निकला और सुबह कुम्भलगढ़ पहुँच गया। कुम्भलगढ़ पर पहुँचा तब मानसिंह महाराणा के साथ कुम्भलगढ़ दुर्ग पर था। अत: जयमल साहाणी ने सम्पूर्ण घटनाक्रम मानसिंह के डेरे पर चीबा सावंत सी (सामंतसिंह) से कहा। वहाँ से जयमल साहाणी किले पर गया जिसको देखकर मानसिंह समझ गया की सिरोही में कुछ अप्रिय घटना हुई है। मानसिंह वहाँ से डेरे पर आया और चीबा सामन्त जी को बोला कि में 4–5 सवारों के साथ सिरोही की तरफ जा रहा हूँ और महाराणा के यहाँ से कोई आये तो बोलना कि मैंने दो सुअर देखे है जिसके शिकार के लिए गया हूँ।[1]

मानसिंह वहां से एक प्रहर रात होते ही सिरोही पहुँच गया और बाग में आकर ठहर गया। जहाँ सभी सरदार उससे मिले और अगले दिन दोपहर में उसको महाराव बनाया गया। जब महाराणा ने मानसिंह को बुलाने हेतु व्यक्ति को भेजा तब शिकार का बहाना किया लेकिन रात्रि में भी मानसिंह नहीं आया तब महाराणा को महाराव उदयसिंह के शीतला से गुजरने और मानसिंह के सिरोही जाने का पता चला। तब महाराणा ने मानसिंह के डेरे से जगमाल देवड़ा (बालिसा) को बुलाया और मानसिंह के जाने का कारण पूछा। तब जगमाल ने 'क्यों जाने' कहा। इस पर महाराणा ने उससे कहा कि 'परगने सिरोही के लिख दो तब उसने सुबह लिखने की बात कही। सुबह उसने स्वयं को मानसिंह का सेवक कहा तब महाराणा ने अपने पुरोहित के साथ जगमाल को सिरोही भेजा और 4 परगनों पर अधिकार करवाने को कहा। सिरोही महाराव मानसिंह ने पुरोहित का बड़ा समान आदर किया और कहा कि 'महाराणा 4 परगनों के लिए क्या फरमाते हैं। मैं तो सिरोही का राज्य उन्हें नजर करने को तैयार हूँ।' इस पर महाराणा प्रसन्न हुए और उसके राज्य में हस्तक्षेप नहीं किया।[2]

इस प्रकार मानसिंह सिरोही का शासक बनने से पूर्व मेवाड़ महाराणा उदयसिंह के साथ अपने संबंधों को स्थिर व मधुर कर चुका था। मेवाड़ महाराणा ने भी उसकी वीरता तथा योग्यता को देखकर अपने पास रखा और 18 गांव देकर अपना खास बनाया। शिकार में उसकी विशेष रूचि व कौशल देखकर महाराणा उदयसिंह उसे शिकार के समय हमेशा साथ रखते थे।

शासक बनने के बाद भी मानसिंह द्वारा महाराणा का विशेष सम्मान और इज्जत प्रदान की थी। मेवाड़ महाराणा के पुरोहित को विशेष सम्मान प्रदान किया और कुछ दिन उनका आदर सत्कार करने के बाद उनको एक हाथी व चार घोड़े महाराणा को नजर करने के साथ अर्जी में लिखा कि चार परगनो की क्या बात है सिरोही का सारा राज्य ही दीवाण जी का है और में भी दीवान जी का राजपूत हूँ।[3]

इस प्रकार महाराव मानसिंह ने बुद्धिमता व सुझबुझ से महाराणा के खतरे को टाल भी दिया और उनका प्रीति पात्र भी बन गया।

महाराव मानसिंह का जन्म सं. 1599 (ई. 1542) मागसर वदी अष्टमी को हुआ था। सं. 1619 (ई. 1562) को उनका राज्याभिषेक हुआ और बीस वर्ष की आयु में उन्होंने सिरोही व मेवाड़ दोनों राज्यों की परिस्थतियों का सम्पूर्ण ज्ञान हो चुका था।[4]

महाराव मानसिंह वीर, साहसी, योद्धा जैसा व्यक्तित्व रखते थे। उन्होंने लोहियाणा गढ़ में परकोटा, बुर्ज, पोल आदि का निर्माण करवाया था तथा दुर्ग को मजबूत बनवाया था। उनके गुरू सारणेश्वर के महन्त विद्यागिरी जी थे। उन्होंने मेवाड़ राज्य से मित्रता स्थापित कर ली थी तथा उसके सानिध्य में रहकर सिरोही क्षेत्र का विस्तार करते रहे। आबूरोड़ के समीप कोलीयों के बड़े मेवासे (संतरामपुर से पालनपुर तक लूटेरो का क्षेत्र) थे जो आये दिन जनता व व्यापारियों को परेशान तथा लूटमार करते थे। ये किसी भी शासक के अधीनस्थ नहीं आये थे। महाराव मानसिंह ने एक ही दिन में 22 स्थानों पर फौज भेजकर इन मेवासों पर अपना अधिकार कर लिया तथा 6 माह तक अपने थाने बिठाये रखा। बाद में विवश होकर कोलीयो को क्षमा याचना करनी पड़ी तथा आत्म समर्पण करने पर महाराव मानसिंह ने उसको उनकी जागीरें दे दी व ये सभी महाराव के सहयोगी बन गये।[5]

महाराव मानसिंह ने दिल्ली के बादशाहों का भी मद मर्दन किया जिस पर कवित्ता भी लिखा है कि 'एकला सो ना भला, भला सो मानाराव : दीधा दुजल जल रे, सर ढीली रे पाव। अर्थात् अकेला आदमी बड़ा कार्य नहीं कर सकता अत: उसे भला कहना अच्छा नहीं। लेकिन मानराव (मानसिंह महाराव) को भला कहना चाहिए। दूर्जनसाल के पुत्र ने अकेले ही देहली के सिर पर अपना पैर रखा।[6]

इसी वर्णन को मुहता नैणसी लिखते है कि 'राव मानसिंह दूदारो बड़े दृढ़ ठाकुर राव हुवो: सिरोही घणौ तपीयो पातसही फौपां सु घणी बैठ कीवी। इस कथन में महाराव मानसिंह द्वारा दिल्ली मुगल शासक अकबर के वहां जाना और दहिया राजपूत के सहारे ही अपनी झाली रानी को वापस लाना तथा दहिया राजपूत की दिल्ली में मृत्यु के बाद उसके वंशजों को केर की जागीर दी गई जो बिना कर वाली है प्राप्त होता है।[7]

मानसिंह की वीरता और साहस देखकर अकबर ने सेना भी भेजी लेकिन महाराव ने उसको विफल कर दिया। महाराव के ऊपर कई बार मुसलमानों ने आक्रमण किए लेकिन उसने सभी को परास्त किया और सिरोही राज्य का विस्तार किया। सिरोही महाराव मानसिंह का मुसाहिब वजेसिंह डूंगरावत तथा प्रेमा खवासी को जासूसी के लिए शाही दरबार में भेजा था जहां राज खुल जाने पर बादशाह अकबर ने वजेसिंह को अपनी तरफ मिलाकर सिरोही महाराव को जनाने सहित 'डोला नौरोज' में लाने को कहा लेकिन मानसिंह ने युद्ध का ही रास्ता स्वीकार किया।[8]

मुस्लिम धर्म विरूद्ध सारे कार्य महाराव मानसिंह ने महाराणा उदयसिंह व मेवाड़ राज्य से प्रेरणा लेकर किये थे। मेवाड़ महाराणा ने भी कभी अकबर या मुस्लिम अधीनता स्वीकार नहीं की और अपने जनाने को कभी भी अकबर के नौरोज डोला में नहीं भेजा था। साथ ही अपनी स्वतंत्रता को हमेशा बनाए रखा उसके लिए चाहे अपने प्राण भी त्यागने पड़ जाए। उसी नीति का अनुसरण महाराव मानसिंह ने भी किया। वह महाराणा उदयसिंह का समकालीन ही था तथा दोनों की मृत्यु सं. 1628 (ई. 1572) में हुई थी। दोनों में मुस्लिम शत्रुओं से निरन्तर युद्ध किया और अपने राज्य को स्वतंत्र बनाए रखा।

महाराव मानसिंह अबुर्दांचल के सत्रह दुर्गों का स्वामी था जिसमें सिरवणा, अचलगढ़, बसंतगढ़, चौटिलागढ़, लोहियाणा गढ़, कोलरगढ़, धिधगगढ़, श्रीकण्ठगढ़, निखंगर गढ़ प्रमुख थे। उनके समय ही सिरोही की सेना अधिक मजबूत बनी। उन्होने ही सिरोही में सैनिक मजबूती हेतु हथियार के कारखाने खोले जिसमें तलवारें, भाले (नेजे), कटारी, तमचे, बंदूके आदि उत्ताम स्तर की बनने लगी।[9]

सं. 1628 (ई. 1592) में महाराव मानसिंह आबू यात्रा पर गये थे जहां रात्रि भोजन कर रहे थे। वहाँ पर उनके साथ कल्ला परमार भी था जो महाराव उदयसिंह का प्रधान पंचायण परमार का भतीजा था। जिसे महाराव मानसिंह ने जहर देकर मार दिया था। उसने रात्रि भोजन के समय महाराव पर कटार से वार किया और भाग गया। विष बुझी कटारी के कारण एक प्रहर के बाद उनका वहीं देहान्त हो गया। उनका दाहकर्म अचलेश्वर मंदिर के सामने हुआ था। इस घटना के पीछे जोधपुर के मोटाराजा उदयसिंह का हाथ माना जाता था। क्योंकि अकबर युद्ध व संघर्ष से मानसिंह को जीत नहीं पाया था और छल के द्वारा उसने मानसिंह को अपने रास्ते में हटा दिया। मरते समय नि:संतान होने पर उन्होंने अपने काका नदिया ठिकाने के भाणसिंह के पुत्र सुरताठा सिंह को शासक बनाना नियुक्त किया और उनकी मृत्यु के बाद महाराव सुरताण शासक बने।[10]

महाराव सुरताण एवं महाराणा प्रताप – महाराव मानसिंह तथा महाराणा उदयसिंह का देहान्त एक ही वर्ष सं. 1628 (ई. 1572) में हुआ। उनके उत्तराधिकारी भी इसी वर्ष में राज्य सिंहासन प्राप्त किया और दोनों नव शासकों का सामना एक ही शक्ति मुगल शासक अकबर से हुआ। दोनों ही शासक अपने-अपने राज्य में सदैव अग्रणी बने रहे और विश्व में विख्यात है। ये दोनों शासक महाराव सुरताण (सुल्तान) और महाराणा प्रताप है जो आज भी विश्व में प्रसिद्ध है। महाराव सुरताण व महाराणा प्रताप के मध्य राजनैतिक सम्बन्ध बहुत मजबूत रहे और दोनों ने एक-दूसरे की सहायता की। दोनों में समानताएँ बहुत सी है क्योंकि दोनों ने मुगल अकबर की अधीनता डोला और नौरोज वाली 'काजल (नैत्राजन) की कोटड़ी' रूपक कलंक को अपने सिर पर लगने नहीं दिया। दोनों वीर प्रतापी व महान शासक जिनके नाम से दोनों राज्य पहचाने जाते है वे दोनों शासक एक-दूसरे के समकालीन थे। इस पर एक कविता भी है – अबर नृप पतशाह अगे, होय भ्रत जोड़े हाथ। नाथ उदेपुर न नमयो, नमयों न अरबुद नाथ।[11]

महाराव सुरताण का जन्म सं. 1616 (ई. 1559) में हुआ और मात्र 12 वर्ष आयु में वे सिरोही के महाराव बने। शासक बनते ही नाबालिग स्थिति को देखकर सिरोही के अन्य सामन्तों जिनमें देवड़ा बीजा (बजा) हरराजोत प्रमुख था, वे सभी राव सुरताण को गद्दी से हटाकर सिरोही राज्य पर अधिकार चाहते थे। सुरताण बचपन से ही वीर, बहादुर व अच्छा धनुर्धर था। सिरोही क्षेत्र में प्रसिद्ध है कि महाराव मानसिंह के समय जब अकबर ने सिरोही पर चढ़ाई की थी तब सुरताण जो केवल दस वर्ष का था उसके तीर से ही अकबर जख्मी हुआ था। इसका प्रमाण कवित के रूप में निम्न है – 'पर्वत जतशे प्रमाण, नख जतरो अंजस नहीं, त्रां सहजा सुलतान, विधो माण नरद वन। अर्थात् मुकाबला किया जाए तो एक तरफ बड़ा पहाड़ (यानी बादशाह) और दूसरी तरफ नख साप्रमाण (अर्थात् सुरताण) तब भी है, भाण नरेन्द्र का पुत्र तेने सहज-सरलता से सुल्तान (बादशाह) को विंध डाला।[12]

नाबालिग अवस्था में ही महाराव बनने से मानसिंह का प्रमुख मुसाहिब बीजा (विजयसिंह) देवड़ा और अबातन सुरताण दोनों सिरोही का शासक बनना चाहते थे। बीजा ने सबसे पहले महाराव के चाचा सूजा रणधीरोज देवड़ा जो महाराव का पक्षधर था एवं बहादुर तथा अच्छे-अच्छे घोड़े, मरने-मारने वाले राजपूतों को रखता था। उसे मारने हेतु अपने चचेरे भाई रावत सेखावत को सेना सहित सुजा देवड़ा की हवेली पर भेजा और धोखे से उसे मार दिया। उसके बाद बीजा देवड़ा ने महाराव को धोखे से कैद कर लिया और महाराव मानसिंह की बाड़मेरी रानी जो गर्भ होने के कारण सती नहीं हुई और उसके एक पुत्र भी हुआ। जो अपने मायके बाड़मेर रहती थी। उसको बुलाकर उसके पुत्र को महाराव बनाना तथा उसका संरक्षक बनकर सिरोही पर अधिकार करना शुरू किया। कुछ समय बाद बालक अचानक मर गया। कैद में सुरताण ने डूंगरोत देवड़ा की मदद से शिकार के बहाने से भागकर रामसीन आ गया जहाँ उसके काका सूजा देवड़ा की विधवा और उसके पुत्र भी आ गये और शांति से रहने लगे। सिरोही पर वीजा देवड़ा ने अपना अधिकार कर लिया।[13]

बीजा देवड़ा ने 4 माह सिरोही पर राज्य किया और जब इस सम्पूर्ण घटनाक्रम का पता खेमराज चीबा द्वारा मेवाड़ महाराणा प्रताप को लगा तब महाराणा ने अपने भांजे कल्ला मेहाजलोत जो महाराव जगमाल के द्वितीय पुत्र मेहाजल का पुत्र था उसे ई. 1572 में मेवाड़ी सेना देकर सिरोही पर भेजा। मेवाड़ी सेना को देखकर बीजा देवड़ा ईडर भाग गया और कल्ला सिरोही का महाराव बन गया। महराव कल्ला चीबा खेमराज के सहयोग से शासक बना था तो कल्ला ने चीबा खेमराज खीवसिंह/खीबा भारमलोत को अपना प्रधान नियुक्त किया। सारा काम काज यही देखता था। चीबा खेमराज की शक्ति बढ़ने लगी तो वह अपने सामने किसी को कुछ नहीं मानता था। तब समरा देवड़ा, सूरा देवड़ा और हरराज देवड़ा (डूंगरावत तेजसी का पोता व

सुरा देवड़ा का चचेरा भाई।) कूटनीतिक का सहारा लेकर कल्ला के पास शामिल हो गये और सुरताण को भी मना कर कल्ला की अधीनता स्वीकार करा दी जिससे प्रसन्न होकर कल्ला ने सुरताण को कई गाव जागीर में दिये और इन गाँवों से सुरताण अपनी सेना मजबूत करने लगा।[14]

देवड़ा चीबा और खीवा/खेमराज अपना वर्चस्व बढ़ाने लगा और देवड़ा समरा, सूरा व हरराज को नीचा दिखाने लगा। एक बार बैठने वाले गलीचे कालीन दरी को लेकर पाता चीबा (खेमराज चीबा का भाई) से इनकी बहस हो गई तब ये तीनों सुरताण के पास रामसीन चले गये और तीनों ने वहाँ उसका राज्यतिलक कर दिया। उन्होंने देवड़ा बीजा को ईडर से बुलाया। बीजा देवड़ा 150 सिपाहियों के साथ रोहुआ व सरोतरा/सिरोत्रा होता हुआ वरमाण पहुँचा। राव कल्ला ने चुली गांव के रावतसिंह हामावत देवड़ा (इसके पिता को महाराव मानसिंह ने मारा था) को 500 सवार देकर गिरवर द्वारे (तोड़ा का दरवाजा) पर रोकने हेतु भेजा। वरमाण से 1 कोस (लगभग 3 किमी) दूर दोनों सेनाओं में युद्ध हुआ और रावतसिंह हामावत घायल हुआ तथा उसकी सेना के 40 सैनिक मारे गये व 60 घायल हुए। बीजा देवड़ा इस युद्ध में जीत गया और उसके केवल 13 सैनिक (सिरोही राज्य का इतिहास में केवल 1 सैनिक लिखा है) वीरगति को प्राप्त हुए। देवड़ा बीजा यहाँ से रामसीन आ गया और सुरताण से क्षमा मांगी तब सुरताण ने उसे माफर कर दिया तथा अपनी शक्ति बढ़ाने हेतु जालोर के मालिक को अपनी तरफ मिलाने या सहायता लेने हेतु 1 लाख मुद्राएँ देने का वादा किया। लेकिन बिहारी पठान मलिक खां ने रूपयों के बदले 4 परगने क्रमश: सियाणा, लोहियाणा, बड़गांव और डोडियाल मांगे। मांग स्वीकार करने पर मलिक खां ने 1500 सवार सुरताण के पास भेज दिये।[15]

सुरताण के पास 3000 की सेना और महाराव कल्ला के पास 4000 की सेना थी। कल्ला ने अपनी सेना की मोर्चाबंदी कलिन्द्री गांव में कर दी। लेकिन सुरताण ने सिरोही पर ही आक्रमण करना चाहा। जब कल्ला को वह बात पता चली तब उसने कालिन्द्री से 1 कोस दूर सुरताण की सेना का रास्ता रोक दिया और वहाँ भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में सुरताण की सेना विजय हुई। इसमें सुरताण की तरफ से 20 व्यक्ति और प्रमुख सेनापति सूरा/सूरसिंह नरसिंहोत देवड़ा भी मृत्यु को प्राप्त हुआ जबकि कल्ला की सेना के कई व्यक्तियों सहित प्रधानमंत्री खींबा (खेमराज चीबा), मुकन्ददास, श्यामदास व दलपत सिसोदिया (मेवाड़ी सेना), चीबा, पाता आदि मृत्यु को प्राप्त हुए। राव कल्ला भाग कर पहाड़ों में चला गया और सिरोही पर सुरताण का अधिकार हो गया और राजमहल में पहुँच कर राव कल्ला के जनाने (पत्नी व बच्चें) को इज्जत व हिफाजत के साथ कल्ला की जागीरी विसलपुर बांकली व कोरटा में भेज दिया। यह युद्ध सं. 1631 (ई. 1574) में हुआ था और पुन: राजगद्दी प्राप्त करते समय महाराव सुरताण की आयु 15 वर्ष थी।[16]

सिरोही पर महाराव सुरताण का शासन था लेकिन राज काज प्रधानमंत्री बीजा देवड़ा सम्भालने लगा। उसका प्रभाव पुन: बढ़ने लगा तब सुरताण ने अपने ससुराल बाड़मेर से बीस हट्टे कट्टे राजपूत बुलाए तथा अपने अंगरक्षक नियुक्त किये। साथ ही उनकी रानी बाड़मेरी जो बुद्धिमान व वीर प्रवृत्ति की थी उससे राय ले लेकर अपना रौब व प्रभाव बढ़ाने लगे। सभी राजपूत सहित बीजा देवड़ा के भाई लूणां व माना को भी अपनी तरफ मिला दिया। इन सब से बीजा का प्रभाव कम हो गया और अपनी जागीरी बावली में चला गया। वहाँ रहकर भी फसाद करता ही रहा।[17]

इसी वर्ष बीकानेर महाराजा रायसिंह गुजरात के सोरठ में मुगल शासक अकबर का अधिकार करने जा रहा था तब वह सिरोही राज्य से गुजरा तब सिरोही महाराव सुरताण ने उसका आतिथ्य किया और सारा घटनाक्रम तथा देवड़ा बीजा वाली बात बताई। तब रायसिंह ने कहा कि तुम अपना आधा राज्य अकबर बादशाह को दे दी तो में बीजा देवड़ा को यहाँ से निकलकर आपका रास्ता साफ कर दूंगा। बीकानेर रायसिंह ने 500 सवारों सहित राठौड़ मदन पातावत को बीजा देवड़ा के विरूद्ध कार्रवाई हेतु भेजा और उसने बीजा को भगाकर सिरोही के आधे भू-भाग पर अधिकार कर लिया। रायसिंह वहाँ से सोरठ आया और उस पर अधिकार पर पुन: बादशाह के पास पहुँचा तथा सिरोही का घटनाक्रम बता दिया। इस पर अकबर और उसके दीवान, बख्शी आदि ने कूटनीतिक चाल चल कर आधा सिरोही का राज्य महाराणा प्रताप के भाई कुंवर जगमाल को दे दिया। जगमाल का विवाह सिरोही महाराव मानसिंह की पुत्री से भी हुआ था। जगमाल शाही फरमान लेकर सिरोही आ गया और अब सिरोही राज्य दो भागों में महाराव सुरताण व जगमाल के पास गया। बीजा देवड़ा भी मौका देखकर जगमाल की सेवा में आ गया।[18]

महल पर अधिकार से शुरू हुई लड़ाई में महाराव सुरताण की अनुपस्थिति में जगमाल व बीजा देवड़ा ने मिलकर सिरोही राजमहल पर अधिकार करना चाहा लेकिन सुरताण के वीर राजपूतों सांगा सोलंकी, चारण आसिया दूदा खंगार आदि ने विफल कर दिया। लज्जित होकर जगमाल व बीजा अकबर के पास बड़ी सेना लेने चले गये। अकबर ने राव चन्द्रसेन के तीसरे पुत्र राव रायसिंह चन्द्रसेनोत (सोजत परगना), दांतीवाड़ा के मालिक कोलीसिंह के नेतृत्व में विशाल सेना भेजी। इस सेना को देखकर जालोर के ताज खाँ ने आत्मसमर्पण करके अधीनता स्वीकार की लेकिन सुरताण ने कुछ सेना महल में रखकर आबू पहाड़ पर चले गये जो महाराणा प्रताप व मेवाड़ की छापामार/गौरिल्ला पद्धति से प्रेरित था। महाराव सुरताण भी कही न कहीं महाराणा प्रताप से प्रेरणा ले रहा था। सिरोही पर अधिकार होने के बाद जगमाल ने आबू अचलगढ़ पर भी सम्पूर्ण अधिकार करना चाहा। जगमाल ने सोचा की पहले सुरताण के सहायक सामन्तों के ठिकानों पर आक्रमण करना चाहिए जिससे वे अपने ठिकाने पर रक्षा हेतु आएंगे और महाराव कमजोर हो जायेगा। इस पर वीजा देवड़ा व मांडणोत राठौड़ को कुछ सेना देकर परगनों भी तरफ भेजा। सुरताण ने अच्छा मौका देखकर दत्ताणी नामक स्थान पर (17 अक्टूबर) सं. 1640 (ई. 1583) कार्तिक सुदि ग्यारस को जगमाल सहित मुगल सेना पर आक्रमण कर दिया। समरा देवड़ा सुरताण का सेनापति था और महाराव सुरताण के साथ मिलकर देवड़ा सेना ने भयंकर मारकाट की तथा इस युद्ध में विजय प्राप्त की। इस युद्ध में महाराव के कुछ सैनिक मारे गये लेकिन अकबर की सेना में जगमाल, राव रायसिंह चन्द्रसेनोत, कोलीसिंह दांतीवाड़ा सहित बहुत से सैनिक मारे गये। दुरसा आढा नामक चारण इस युद्ध में घायल हुआ। जिसे महाराव ने उपचार करवाकर अपना पोतपाल नियुक्त किया। इस युद्ध पर दुरसा आढा ने लिखा कि 'नंद गिरी नरेश, कटार बंध चहुआण, दत्ताणी खेतरां, जेत जुहार। गल जोड़े छत्र, धरियारा गठनहार, बंका भड़ारा, पांदेरिण द्वार।। घोड़े चढ़ हाथीयारी गजधड़ारा विदुशण हार, सुरताण ग्रह नभ भूषण।। शरणाया साधार, शरणा थी वज्रे पिंजर।

अर्थात् अर्बुदगिरि के राजा कटार बांधने वाला चौहान (राज्य चिह्न कटार) दत्ताणी क्षेत्र में विजय प्राप्त करने वाला को नमस्कार हो। दो छत्र धारी (जगमाल व रायसिंह) को साथ ही मारा और निश्चय विजय प्राप्त करके आवे उनको गाढ़ (नाश करने) देने वाला बंका (बहादुर) योद्धाओं ने सीधा

करने वाला, घोड़े पर सवार होकर (घोड़ी का नाम केसरी) हाथियों की सवारी वालों को व हाथियों के समूह को विध्वंश करने वाला, गगन मण्डल वे गुढ़ों का आभूषण रूप (सूर्य रूप) सुरताण शरण आने वालो को अच्छा आशय देने वाला और शरण रहने वालों का वज्र के प्रिजर समान बनकर रक्षण करने वाला है। इस युद्ध में सुरताण की वीरता अमर रही है।[19]

महाराणा प्रताप ने जब इस युद्ध के बारे में सुना तो उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई लेकिन गद्दी विवाद के कारण जगमाल की मृत्यु पर उन्होंने शोक नहीं मनाया। महाराणा प्रताप के समान ही सुरताण ने भी सामरिक महत्व वाले आबू, अचलगढ़ को अपना युद्ध क्षेत्र बनाया और सामरिक युद्ध नीति गुरिल्ला/ छापामार/पहाड़ी नीति का सहारा लेकर उस समय की सर्वोच्च शक्ति को परास्त कर दिया। वह महाराणा प्रताप के पद्‌चिह्नों पर चलता रहा।

लल्लू भाई देसाई लिखते है कि बीजा और उसका भाई धनसिंह भाग गये जिसके पीछे महाराव सुरताण ने कवि आसिया दूदा व सामन्त सिंह सूरसिहोत डुंगरावत भी था। सामंत सिंह ने धनसिंह को मार दिया लेकिन बीजा देवड़ा भाग कर महाराणा मेवाड़ के पास चला गया। तब दूदा के पुत्र दला आसिया को महाराणा के दरबार में भेजा। दला ने बीजा के लिए कवित गाया जिसको सुनकर बीजा महाराणा की सेवा से चला गया और जान बचाकर अकबर के पास चला गया।म उपर्युक्त कथन मनगढ़त की प्रतीत होता है या चारण कवियों द्वारा बनाया हुआ लगता है, क्योंकि महाराणा प्रताप और महाराव सुरताण दोनों समान उद्देश्य के लिए लड़ रहे थे और उनका दुश्मन भी समान था। दोनों अपनी मातृभूमि के लिए लड़ते रहे और कही न कहीं महाराव सुरताण महाराणा प्रताप से प्रेरित था तथा दत्ताणी के युद्ध में विजय होने के पीछे उसे ई. 1576 का हल्दीघाटी का युद्ध तथा ई. 1582 का दिवेर युद्ध का ज्ञान अवश्य होगा। जिसमें महाराणा प्रताप ने कम सेना बल होते हुए भी अकबर की सेना को परास्त किया और मुगलों की अजेयता को तोड़ दिया था। महाराणा प्रताप स्वतंत्रता के पुजारी थे जिन्होंने अकबर जैसी शक्ति से सामना करने हेतु मेवाड़ के समीपस्थ सभी शासकों को एकत्रित करके एक संगठन बना दिया जिसमें सिरोही राव सुरताण, ईडर का शासक, डूंगरपूर-बांसवाड़ा के शासक, मारवाड़ का राव, चन्द्रसेन आदि शासक उसके साथ मिलकर अकबर मुगलों को चुनौती दे रहे थे।

इसके साथ ही बीजा देवड़ा जगमाल के साथ हो गया तथा महाराणा प्रताप द्वारा जगमाल से वैर ही था अत: वे जगमाल के साथी बीजा को अपने यहाँ कभी शरण नहीं देने वाले थे। साथ ही लल्लु भाई के अलावा किसी अन्य ग्रंथ में यह जानकारी नहीं मिलती है। मुहतां नैणसी व गौरीशंकर हीराचन्द ओझा भी अपने ग्रंथों में बीजा देवड़ा के दत्ताणी युद्ध में हार के बाद सीधा अकबर के पास जाना लिखते है जो सही प्रतीत होता है।

बीजा देवड़ा अकबर के पास गया। अकबर अपनी हार से क्रुद्ध ही था और दरबार में जोधपुर शासक मोटा राजा उदयसिंह भी जो सिरोही राज्य को मारवाड़ में मिलाना चाहता था। अत: अकबर ने मोटा राजा उदयसिंह, जामबेग तथा बीजा देवड़ा के नेतृत्व में सं. 1644 (ई. 1588) में मुगल सेना सिरोही भेज दी। महाराव सुरताण ने सैन्य बल अधिक देखकर पुन: गौरिल्ला पद्धति का अनुसरण कर आबू की शरण में चले गये। इस बार महाराव स्वयं द्वारा निर्मित वास्थानजी के गढ़ गये और सं. 1644 (ई. 1587-88) फाल्गुन सुदि पंचमी को शाही सेना ने नीतोरा गांव लूटा और एक माह तक सेना वही पड़ी रही। मोटाराजा सुरताण ये भय खाते थे अत: उन्होंने यही रहना उचित समझा क्योंकि वे जगमाल की गलती को नहीं दोहराना चाहते थे। तब कुछ उपाय नहीं होता देख मोटाराजा उदयसिंह ने चालाकी के द्वारा बगड़ी (सोजत) के ठाकुर राठौड़ पृथ्वीराजोत को अपनी तरफ से किसी भी प्रकार का छल कपट न करवाकर सुरताण के प्रमुख सरदारों को वार्ता हेतु बुलवाकर राय रतनसिहोत के हाथों मरवा दिया। तब नाराज होकर वैरसल राठौड़ ने उदयसिंह के सामने ही राय रतनसीहोत को मारा और स्वयं कटार भौंक कर मर गया। उसका स्मारक नीतोड़ा गांव में बना हुआ है।[20]

बीजा देवड़ा जामबेग के भाई को लेकर युद्ध करने के लिए वास्थानजी की तरफ गया। जहां सुरताण की सेना से युद्ध हुआ और सुरताण के सामन्त सांगा सोलंकी के हाथों वह मारा गया व जामबेग का भाई घायल हुआ। कुछ फायदा न देखकर मोटा राजा उदयासिंह महाराणा प्रताप के भाणेज कल्ला मेहाजेलोत को पुन: सिरोही का शासक बना कर चला गया। उनके जाने के बाद सुरताण ने सिरोही की तरफ कूच की तब कल्ला यहाँ से भाग कर मारवाड़ चला गया जहाँ उसे बीसलपुर की जागीरी मिली और इसके वंशज विसलपुर के लाखावत कहलाते हैं और जागीरे मारवाड़ में अभी भी है।[21] महाराणा प्रताप ने गुजरात आक्रमण के समय सिरोही राव सुरताण, ईडर राव नारायणदास, जालौर ताजखां को साथ लेकर किया था।[22]

निष्कर्ष - इस प्रकार सिरोही के दोनों महाराव मानसिंह एवं सुरतान का मेवाड़ से विशेष सम्बन्ध रहा और उन्होंने हमेशा मेवाड़ का साथ दिया। दोनों राजवंशों ने अपनी सामरिक स्थिति को मजबूत बनाने हेतु वैवाहिक स्म्बन्धों एवं राजनैतिक रूप से मजबूत बनने हेतु सहयोग के रूप में कार्य किया जिनका अध्ययन इस शोध प्रबन्ध में किया गया है।[23]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 124-125; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 232-33
2. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 124-126; उदयपुर राज्य का इतिहास, पृ. 353-54; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 234; अनु. रामनारायण दुग्गड़, मुहनोत नैणसी की ख्यात, पृ. 135-136; वीर विनोद, भाग द्वितीय, पृ. 65-66
3. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 125-126; सिरोही गौरव, पृ. 95
4. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 122; सिरोही गौरव, पृ. 90
5. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 125-126; सिरोही गौरव, पृ. 95; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 235
6. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 126-127; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 236; सिरोही गौरव, पृ. 96
7. अनु. रामनारायण दुग्गड़, मुहणोत नैणसी की ख्यात, पृ. 136-137; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 236-237; सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; सिरोही गौरव, पृ. 96-97
8. चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 238; सिरोही गौरव, पृ. 96
9. चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 237; सिरोही गौरव, पृ. 97
10. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127-128; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 239; सिरोही गौरव, पृ. 102
11. चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 241
12. सिरोही गौरव, पृ. 103; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 251
13. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 124; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 243-244; सिरोही गौरव, पृ. 104

14. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 125; सिरोही गौरव, पृ. 105; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 245
15. सिरोही राज्य का इतिास, पृ. 125-126; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 247-248; सिरोही गौरव, पृ. 106-107; वीर विनोद, भाग द्वितीय, पृ. 160-161
16. वीर विनोद, वही, पृ. 161; सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 125-26; चौहान कुल कल्पद्रुम, 249-250; सिरोही गौरव, पृ. 107-108
17. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; वीर विनोद भाग द्वितीय, पृ. 161-62; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 257; सिरोही गौरव, पृ. 108-09
18. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; चौहाल कुल कल्पद्रुम, पृ. 258; सिरोही गौरव, पृ. 109-110; उदयपुर राज्य का इतिहास, पृ. 368; वीर विनोद, भाग द्वितीय, पृ. 162
19. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 262-271; वीर विनोद, भाग द्वितीय, पृ. 161-63; उदयपरु राज्य का इतिहास, पृ. 368-369
20. चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 272
21. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127-128; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 273-274; सिरोही गौरव, पृ. 116-117
22. सिरोही राज्य का इतिहास, पृ. 127; चौहान कुल कल्पद्रुम, पृ. 275; सिरोही गौरव, पृ. 117-118
23. उदयपुर राज्य का इतिहास, वही, पृ. 385

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Exploring Practitioner Inquiry Among Health and Physical Education Teachers

Dr. Sonali Singh*

*Associate Professor (Physical Education) JKP PG College, Muzaffarnagar (U.P.) INDIA

Abstract : Existing research suggests that practitioner inquiry(PI) can positively influence teachers' professional learning. Within the context of Health and Physical Education(HEP), however, we know little about the influence of PI on HPE teachers and their students, and HPE colleagues. Aim: This study responds to the research question: in what ways do HPE teachers believe that PI influences their teaching practices, their students and their HPE colleagues? Context and participants: This study presents a case study of a year-long, government-funded teacher professional learning programme called Teaching Excellence Program (TEP) offered by the Victorian Academy of Teaching and Leadership. The TEP is intended to advance teacher professional knowledge in a range of ways, including through individual and collaborative PIs. This paper examines the outcomes that ensued from the teachers' individual and collaborative PIs. The study involved seven Australian HPE teachers with varying levels of experience (6–30 years). We employed an exploratory, multi-method case study approach, and data consisted of interview transcript, participant-designed cartoons, and artefacts (e.g. framing a problem of practice and action planning documentation). Findings: Within the broader context of the TEP, PI was identified as particularly engaging for the participating HPE teachers. The HPE teachers believed that engaging in PI: (a) enhanced their own teaching practices; (b) therefore improved students' engagement; and in some cases (c) influenced HPE colleagues' teaching practice. Implications: This study underscores the potential influence that PI can have on HPE teachers when scaffolded and sustained support is available and accessed.

Introduction - Practitioner inquiry (PI) is a multifaceted approach to professional learning that includes, for example, action research, practitioner research, self-study, and participatory action research (Cochran-Smith and Lytle Citation2009). PI is commonly used to capture the means through which teachers, teacher educators and researchers investigate and improve their own practice by considering the cycles of action and reflection in the process of improving their practices (Carr and Kemmis Citation1986; Kemmis Citation2006). The diversity of approaches to inquiry share a common goal of creating ways of knowing and generating practice-based evidence or evidence-based practice (Casey et al. Citation2018; Goodyear, Casey, and Kirk Citation2013) Oliver, Oesterreich, Aranda, Archeleta, Blazera, et al. Citation2015). PI invites educators to investigate their practice, recognising that improving practice is intricately linked to the contexts and power structures shaping teaching and learning (Cochran-Smith and Lytle Citation2009). In that context, PI positions teachers as agentic generators of knowledge and catalysts for change. Research in Health and Physical Education (HPE) suggests that PI can be a powerful tool to enhance teaching and learning (Jones Citation2023; MacPhail, Scanlon, and Tannehill Citation2023; Oliver, Oesterreich, Aranda, Archeleta, Blazer, et al. Citation2015; Alfrey, O'Connor, and Jeanes Citation2017). As a process, PI creates spaces for teachers to explore their daily practices, fostering pedagogical change and innovation (Goodyear and Casey Citation2015; Luguetti and Oliver Citation2020; Wrench and Paige Citation2020). The positioning of the teacher-as-researcher can support teachers in connecting theory and practice, providing a platform for reflection, experimentation, and meaningful change in thinking and practice (Freire Citation1987; Jones Citation2023; MacPhail, Scanlon, and Tannehill Citation2023). It also enables teachers to innovate and untangle themselves from historically traditional practices in HPE that may no longer serve them or their students (Goodyear, Casey, and Kirk Citation2013; Jones Citation2023; Oliver, Oesterreich, Aranda, Archeleta, Blazera, et al. Citation2015).Despite some evidence of the influence of PI on HPE teachers' knowledge and practices (Goodyear and Casey Citation2015; Luguetti et al. Citation2019; Patton and Parker Citation2014), limited research has explored the ways in

which teachers view their PI as a means to influence student learning and their HPE colleagues.

Practitioner inquiry: the notion of inquiry as stance: Across multiple sectors, it is important for teachers to engage in ongoing PI (Salter and Tett Citation2022). PI emphasises active exploration of knowledge creation, critical thinking, and self-directed learning (Cochran-Smith and Lytle Citation2009). Rooted in constructivist and critical pedagogies, PI encourages teachers to pose questions, investigate problems, reflect on their findings, and draw conclusions. Importantly, the process of inquiry involves formulating questions, investigation, reflection and conclusion and this process becomes the central focus rather than the outcome of the learning or the product (Newman and Leggett Citation2019; Salter and Tett Citation2022; Schon Citation2017). Cochran-Smith and Lytle (Citation2009) extend this thinking by suggesting PI offers a critical and transformative stance that is linked not only to high standards for the learning of all learners, but also to social change and social justice and the individual and collective professional growth of teachers.

Whilst the value of teacher PI is rarely questioned, it is important to acknowledge the challenges that teachers face in attempting to enact this practice. Research suggests that teachers can struggle to identify as a 'researcher', and they usually face the pragmatic and perennial challenges of time, opportunity and capacity to engage with PI (Newman and Leggett Citation2019; Salter and Tett Citation2022). Enacting PI requires teachers to become reflexive, inquiry-based practitioners. This sees teachers adopt and cultivate an active inquiry stance to systematically investigate their practice (Cochran-Smith and Lytle Citation2009). Such an approach means that teachers must be guided on how to critically reflect during the systematic, data-based critique of their ongoing teaching practices and the contexts in which they teach (Schon Citation2017).

The notion of inquiry as stance (Cochran-Smith and Lytle Citation2009) foregrounds the role that teachers can play, both individually and collectively, in generating local knowledge, re-envisioning and theorising practice, as well as interpreting and interrogating the theory and research of others. For Cochran-Smith and Lytle (Citation2009), inquiry as stance means that PI forms habits of mind or worldviews intended to challenge the inequities perpetuated by the educational status quo. In that sense, teachers who undertake PI aim to explore and understand the intertwining concerns of practice and inquiry, emphasising reflexivity – acknowledging and grappling with one's biases and assumptions. It advocates for teachers to take responsibility for these biases in both personal and institutional contexts, actively challenging them within collaborative and service-oriented relationships (Cochran-Smith and Lytle Citation2009). This approach views inquiry as a platform for reflective educational, political, and cultural engagement, fostering personal and professional growth while cultivating an inquiry driven approach to practice.

Research context: the TEP programme: The TEP, which is a one-year programme designed to advance professional knowledge and practice for teachers from government, Catholic and independent schools in Australia, was launched in 2022 with a pilot cohort of 250 teachers. There are six key interconnected components of the TEP, which are:

(a) Teaching and learning in and across the disciplines;
(b) Implementing a responsive pedagogy;
(c) Embedding PI and understanding impact;
(d) Activating dispositions for excellent teaching;
(e) Enhancing collaborative expertise; and
(f) Promoting teacher agency.As part of TEP, teachers engage in various learning activities including 'Conference Days' and 'Discipline Days' (discipline-based workshops).

They also participate in cross-sectoral and cross-discipline Learning Communities, focusing on both improving pedagogy and engaging in PI projects. Master TeachersFootnote2 lead the Discipline Days, facilitate the activities within the Learning Communities, and provide feedback to the teachers on their PI projects, fostering professional dialogue and peer learning among the teachers. There are two PI projects within the TEP:

(i) an independent PI; and
(ii) a collaborative extended PI.

These two practitioner inquiries focus on a self-identified problem of practice that the teachers wish to explore further and entail an examination of teaching methodologies, the intricacies of student learning processes, and the cultural and contextual dynamics within learning environments.

The TEP inquiry cycle scaffolds the process of conducting an inquiry into practice. Supported by Master Teachers, teachers engage in each phase of the cycle and participate in dialogue and collaborative problem-solving related to emerging challenges. The cyclical process involves identifying and selecting problems as opportunities for new learning. While problem identification is a starting point for PI, new, connected problems will likely emerge during the inquiry. Problem-finding and solving enable deep thinking and learning. They are catalysts for strategic action and for improving what teachers do

Methodology: This study is drawn from a larger project in which researchers evaluated the TEP throughout the year 2023. In the large project, the researchers collected documentary data and interviews with TEP organisers and HPE teachers. The larger project was guided by collaborative evaluation principles (O'Sullivan Citation2012; Rodríguez-Campos and Rigoberto Citation2012) where key TEP organisers were engaged during each stage of the evaluation process.This study focuses on the HPE teachers' perspectives, and is presented an exploratory, multi-method case study. The case study presented here is embedded in real-life situations that allowed us to share in what ways

HPE teachers believe that PI in the TEP programme impacted their teaching practices, their students and their HPE colleagues.

Participants: In 2023, thirteen HPE teachersFootnote3 were accepted into the TEP programme. Participants for this study were drawn from this field and included seven HPE teachers from different sectors (Government, Catholic, and Independent)Footnote4 and levels (Primary and Secondary) of education We invited all 13 HPE teachers to be part of the study and seven teachers accepted.

Data collection and analysis: Data were collected via three qualitative methods, which were:

Two semi-structured interviews with each of the HPE teachers. The first interview occurred in the middle of the year, and we asked questions about the teachers' backgrounds, previous experiences regarding PL and questions about the individual PI. The second interview occurred in November 2023 and focused on the impact of the TEP programme and questions to the collaborative PI. Artefacts generated through the PI. We collected all teachers' artifacts in the TEP including framing a problem of practice and action planning documentation, and their self-evaluation of impact.Cartoons. Four of the seven HPE teachers agreed to explore their PI in more detail via cartoon co-creation. During the second interview with participating teachers, they were invited to reflect on their PI more deeply and identify critical incidences within their inquiry that influenced their professional learning experiences, and this impacted their teaching practices, students, and in some cases colleagues.

Conclusion: Fundamental to the notion of inquiry as stance is the idea that educational practice is not simply instrumental in the sense of figuring out how to get things done, but also and more importantly, it is social and political in the sense of deliberation.In considering PI as stance, Cochran-Smith and Lytle (Citation2009) invite us to consider the pivotal role of teachers as teacher-researchers, in generating localised knowledge, reconceptualising and theorising practice, and critically engaging with the theories and research of others. Viewing PI as stance entails adopting a 'habit of mind' or worldview aimed at challenging the inequities entrenched in the educational status quo (Cochran-Smith and Lytle Citation2009). In our study, the HPE teachers – positioned as agents of change – suggested that engaging in multiple cycles of inquiry supported them to (a) shift their teaching practices, including more student-centred pedagogies; (b) therefore influenced students' experiences, particularly by increasing their engagement in HPE; and in some cases, (c) influenced some of their HPE colleagues. In this discussion, and in response to the research question, we now critically examine the influences of the PI on the participating teachers, their students and their HPE colleagues.The findings of our research align with a body of literature that underscores the influence of PI on HPE teachers' practices.Teacher approached this shift in unique ways for instance, Rosie focused on creating inclusive spaces to foster social inclusion.

References:-

1. Alfrey, Laura, Justen O'Connor, and Ruth Jeanes. 2017. "Teachers as Policy Actors: Co-Creating and Enacting Critical Inquiry in Secondary Health and Physical Education." Physical Education and Sport Pedagogy 22 (2): 107–120. https://doi.org/10.1080/17408989.2015.1123237
2. Armour, Kathleen M, and Martin Yelling. 2007. "Effective Professional Development for Physical Education Teachers: The Role of Informal, Collaborative Learning." Journal of Teaching in Physical Education 26 (2): 177–200. https://doi.org/10.1080/19415250903319275.
3. Braun, V., and V. Clarke. 2019. "Reflecting on Reflexive Thematic Analysis." Qualitative Research in Sport, Exercise and Health 11 (4): 589–597. http://doi.org/10.1080/2159676X.2019.1628806.
4. Braun, V., and V. Clarke. 2021. "One Size Fits All? What Counts as Quality Practice in (Reflexive) Thematic Analysis?" Qualitative Research in Psychology 18 (3): 328–352. http://doi.org/10.1080/14780887.2020.1769238.
5. Carr, W., and S. Kemmis. 1986. Becoming Critical: Education Knowledge and Action Research. New York, NY: Routledge.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मेवाड़ में झाला ठिकानों के अधीन आर्थिक व्यवस्था

देवा राम*

* शोधार्थी (इतिहास) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – अर्थ मानव जीवन का प्रमुख अंग है। बिना अर्थ के मनुष्य के नित्य कर्म अवरूद्ध हो जाते है। चाणक्य का कथन 'अर्थ राज्यस्य मूलम्, अर्थ धर्मस्थ मूलम्'। सत्य है कि इतिहास के प्रत्येक काल में तथा वर्तमान में भी अर्थ या राजस्व ही किसी साम्राज्य, राष्ट्र, राज्य व ठिकाने का मूल आधार तत्व है। मुख्य वार्ता, वृत्ति अर्थात् जीविका में मनुष्य जीवन निर्वाह हेतु कृषि, पशुपालन तथा वाणिज्य को साधन माना जाता है। अर्थ सभी वर्णो व कालों में महत्वपूर्ण है। भारतीय अर्थव्यवस्था मुख्यत 'ग्रामाश्रित' थी।[1]

सामाजिक पक्ष के साथ ठिकाने का आर्थिक पक्ष भी महत्वपूर्ण पक्ष होता है। मेवाड़ में सभी ठिकानों को श्रेणियों में विभक्त करके उनको तीन श्रेणियों में विभक्त किया था। मेवाड़ में उच्च ठिकानों (उमरावों) को अधिक आय वाले क्षेत्र प्रदान किये जाते थे जिससे महाराणा की सेना में अधिक से अधिक सैनिक व जाब्ते में साथ उपस्थित रहते थे। प्रशासनिक दृष्टि से मेवाड़ मुगल पद्धति के समान परगनों में विभक्त था। इसमें 55 परगनों का विवरण जागीरदारों के संदर्भ में मिलता है। परगनों की शासन व्यवस्था दो भागों में विभक्त थी खालसा व जागीर प्रशासन। खालसा गावों का सम्बन्ध सीधा महाराणा से था, जबकि जागीरी क्षेत्र जागीरदारों के अधीन होता था।[2]

जागीरदार के स्तर के अनुसार उसकी रेख निश्चित की जाती थी। उसकी पूर्ति के लिए रोकड़ वेतन नहीं देकर गांव प्रदान किये जाते थे। गांव की आय के अनुसार उसकी रेख तय की जाती थी। जागीरी पट्टों के गांव की रेख सदैव एक समान नहीं रहती थी। जागीरदार की सेवा के अनुसार यह घटती-बढ़ती रहती थी। किसी जागीरदार को उसकी रेख के अनुपात में अधिक रेख के गांव दिये जाते तो बढ़ी हुई रेख के बदले रोकड़ रूपये जागीरदार को राजकीय कोष में जमा कराने पडते थे। दूसरी ओर अगर जागीरदार को निर्धारित रेख के अनुपात में कम रेख के गांव मिलते थे तो उसकी पूर्ति हेतु राज्य की तरफ से उसे रोकड़ राशि प्रदान की जाती थी। पट्टों में रेख के साथ उपत के आकड़े अंकित होते थे। रेख टको में होती थी, जबकि उपत रूपयों में होती थी। इन आकड़ों में कोई भी तालमेल नहीं होता था। सामान्यत: इनका अनुपात 2:1 होता किन्तु कभी-कभी अनुपात नहीं भी हो सकता था। मेवाड़ का सामन्ती क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने हेतु सामन्तों पर निम्न रूप से जागीरी प्रदान की जाती थी। इसमें रेख, रखवाली, वधारा, पट्टा, जागीरी गावों का हस्तांतरण, तलवार बंधाई, कैद, खड़लाकड़, व्यापारियों की सुरक्षा व दाण कर, सासण (माफी) की भूमि आदि होती है।[3]

कृषि एवं राजस्व व्यवस्था – अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियों तथा जलवायु के कारण भारत प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश रहा है। मेवाड़ में यद्यपि भूमि पूर्णतया कृषि अनुकूल नहीं है परन्तु बहुसंख्यक निवासियों का मुख्य व्यवसाय कृषि ही रहा। जीवन निर्वाह के अनेक साधन जो बाद में विकसित होते रहे, वे भी कृषि पर आधारित या इनसे सम्बन्धित रहे। मध्यकालीन कृषि व्यवस्था जागीरदारी प्रणाली, के तरीकों से प्रभावित रहा। तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक व प्राकृतिक उथल-पुथल व अनियमितता का कृषि की उन्नति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। फिर भी ग्रामीण जीवन एवं अर्थव्यवस्था का मूल आधार कृषि ही बना रहा।

मेवाड़ में समस्त भूमि का मालिक महाराणा ही था। उसी के आदेश से भूमि प्रदान की जाती थी। यह भूमि खालसा, जागीर, भोम, सासण और चरनोट के रुप में होती थी। महाराणा किसी भी व्यक्ति को किन्हीं भी शर्तो पर भूमि का अनुदान देने व प्रदत्त भूमि को वापस लेने का अधिकारी था।[4]

व्यवहारिक रुप से भूमि पर काश्त करने वाले जब तक लगान देते रहते थे, तब तक भूमि के मालिक बने रहते थे। मेवाड़ में प्रदत्त पट्टे, परवाने, महाराणाओं एवं जागीरदारों के मध्य सम्पन्न कौलनामें इन तथ्यों की पुष्टि करते हैं।[5]

देलवाड़ा ठिकाने की भूमि महाराणा द्वारा झाला वंश को जागीर के रुप में दी गई भूमि है। जागीर भूमि का क्षेत्रफल विभिन्न महाराणाओं के समय, ठिकाने के महाराणा से संबंधों के अनुसार, परिवर्तित होता रहा। उदाहरणार्थ महाराणा प्रताप व अमरसिंह द्वारा राणा कल्याणसिंह (सं. 1639) को देलवाड़ा पट्टे में 231 गांव, महाराणा कर्णसिंह द्वारा राणा कल्याणदास को 200 गाँव, महाराणा राजसिंह द्वारा राणा राघवदेव को 274 गाँव, महाराणा भीमसिंह द्वारा 94 गाँव राणा कल्याण सजावत को दिये गये। राजनैतिक व आर्थिक परिस्थितियों में परिवर्तन का प्रभाव जागीरी गांवों के वितरण पर पड़ता रहा।[6]

कृषक – ठिकाने में अधीनस्थ जागीरदार मुख्यतया बँटाई या हाली प्रणाली से काश्त करवाते थे। कुछ गाँवों मे राजपूत भाई बन्द भी खुद काश्त करते थे। मौजावार खुलासा अध्ययन से परिचय मिलता है कि अधिकतर जहाँ पैदावार अच्छी व पीवल की भूमि थी वह खालसा अथवा अधीनस्थ जागीरदारों के पट्टे में, या महाजनों या ठिकाने से सम्बन्धित कर्मचारियों के पट्टे मे थी। खाकी की जमीनों पर गाँव के अन्य निवासियों यथा डांगी, तेली, रेबारी आदि जातियों की कृषि भूमि थी। माफी की जमीने अधिकतर ब्राह्मणों की थी।[7]

किसान बापीदार/खड़मदार, खातेदार या शिकमी हो सकते थे। बापीदार/खड़मदार गाँव की चकबंदी में माफीदार की हैसियत से दर्ज थे।

खातेदार वे किसान थे, जिनके पट्टे में उसकी जमीन से संबंधित नाम, गांव की सालाना जमाबंदी आदि दर्ज थे। शिकमी काश्तकार वे होते थे जिसका कब्जा किसी जमीन पर 12 वर्ष से अधिक समय से ठिकाना जागीरदार या माफीदार ने दिया था। इनका जमीन पर हक नहीं होता था। बाकी काश्तकारों को जब तक वे लगान देते रहते थे उन्हें जमीन से बेदखल नहीं किया जाता था।[8]

इसके अतिरिक्त काश्तकारी मोल देकर, हाली प्रथा या बँटाई पर भी की जाती थी। चकबंदी के समय डोरी से नापकर और खेत के चारों ओर डोरी बाँध कर एक, साखी दो साखी अलग-अलग की जाती थी एवं कृषकों को निर्धारित राजस्व देने हेतु पाबन्द किया जाता था। कई जगह शरह (दर) अधिक ऊँची थी, निम्न कृषक जातियाँ यथा रेबारी, डांगी आदि महाजनों के कर्जदार थे। कई खेत रहन (गिरवी) रखे हुए थे, कभी-कभी ठिकाना भी अधीनस्थ गाँवों को खालसा कर देता था। रेबारी अधिकतर अपने ऊँटों के साथ बाहर रहते थे तो उनकी स्त्रियाँ कीमत देकर कृषि करवाती थीं।[9]

ठिकाने के अन्य गाँवों में जैसे बिलोता में कुल 57 घर थे जिसमें से 50 घर डांगियों के थे। पास की मंगरियों पर भीलों के 20 घर थे, अत: मुख्य कृषक व कृषि मजदूर जातियाँ यही थी। इसी प्रकार गुड़ली में कुल 20 ही घर डांगियों के थे। गोरेला में 26 घरों में से 14 घर राजपूतों के, 6 घर रेबारियों एवं पास ही भीलबस्ती में 13 घर भीलों के थे। इसी प्रकार सोडावास में 53 घरों में से 10 घर राजपूतों के, 10 घर रेबारियों के एवं 16 घर डांगियों थे। झीपों का रंहट में 15 घर डांगियों के थे।[10]

इस प्रकार ठिकाने में मुख्य कृषक जातियाँ डांगी, राजपूत, रेबारी, भील ही थी। अन्य जातियों को भूमि माफी या चाकराना मिली थी जिन पर भी कृषक मजदूर रुप में या हाली, हिजारी के रूप में उपरोक्त कृषक जातियों को रखा जाता था।

जलवायु व वर्षा – किसी भी स्थान की जलवायु वहाँ होने वाली वर्षा एवं वहाँ के प्राकृतिक वन सम्पदा पर निर्भर करती है। मेवाड़ की जलवायु स्वास्थ्यप्रद है। पहाड़ी क्षेत्र होते हुए भी वनस्पति की सहायता ने यहाँ सुरम्य वातावरण का निर्माण किया है। पहाड़ी क्षेत्रों में पानी प्राय: भारी होता है। इस भौगोलिक क्षेत्र में तीनों ही मौसम अपनी विशेषता लिये हुए रहते हैं अर्थात् सर्दी के मौसम में सर्दी गर्मी के मौसम में, गर्मी व वर्षा के मौसम में वर्षा की अधिकता रहती है।[11]

ठिकाने के समय औसतन 25 से 30 इंच वर्षा का रिकार्ड मिलता है। यह क्षेत्र चारों ओर से हरी भरी पहाड़ियो से घिरा रहा है। ब्रिटिश काल में धीरे-धीरे वनों की कटाई से, पहाड़ियाँ शुष्क व उजाड़ हुई एवं जलवायु पर विपरीत प्रभाव पड़ा। कुछ वर्षो के अंतर पर अकाल भी पड़ते रहे।[12]

ब्रिटिश प्रभाव से विभिन्न क्षेत्रों में जागीरों में भी वर्षा को नापा जाने लगा एवं रिकार्ड रखा जाने लगा। देलवाड़ा ठिकाना रिकार्ड्स में भी वर्षा नापने के उदाहरण यत्र-तत्र मिलते है जैसे भादवा सुदी 1 बुधे कल शाम बरसी 3 सेंट, रात की दस बजे से 12 बजे तक 18 सेंट, कुल अमावस की सारी रात कुल बरसात 21 सेंट।[12]

सं 1949 (ई.1893) में सावन विद 3 बुध 10.7.1895 ई. को 3 सेंट पानी बरसा। सं 1940 (ई.1833) में 2 शीशी का 1 इंच का नाप बनाया गया था। इसके अनुसार वर्षो के महीनों में प्रत्येक वर्षा दिवस का रिकार्ड रख कर औसत वर्षा का माप ज्ञात किया जाता था।[14]

ब्रिटिश काल में ई. 1884 (सं 1941) में सज्जनकीर्ति सुधाकर में प्रकाशित सभी जिलों के वर्षा औसत के अनुसार उदयपुर व देलवाड़ा की वर्षा का माप निम्न था।[15]

क्र.	नाम	जून		जुलाई	
	जिला	इंच	सेंट	इंच	सेंट
1.	उदयपुर	4	14	11	18
2.	देलवाड़ा	3	37	13	82

सं. 1941 में ही देलवाड़ा जिले व उदयपुर जिले की माहवार वर्षा का वितरण[16] –

क्र.	नाम	जून		जुलाई		अगस्त		सितम्बर		कुल	
	जिला	इंच	सेंट	इंच	सेंट	इंच	सेंट	इंच	सेंट	इंच	सेंट
1.	देलवाड़ा	2	17	13	82	6	41	6	29	28	79
2.	उदयपुर	4	14	11	18	12	21	6	82	34	45

कृषि मुख्यतया वर्षा आधारित होती थी। अत: ठिकाने के कृषि अध्ययन हेतु मेवाड़ की वर्षा को अनुमान रुप में लिया जा सकता है। दहसाला राजस्व सारणी से वर्षा का उपज व राजस्व पर प्रभाव देखा जा सकता है। उदाहरणार्थ ई. 1875 (सं. 1932) में अतिवृष्टि से कृषि उपज में कमी आई एवं बिलोता में राजस्व 5166 रु. से 4682 रु. और अगले वर्ष भी 3805 रु. तक कम वसूल हो पाया।[17]

वर्षा के अतिरिक्त ठिकाने में मुख्यतया कुऐं एवं तालाबों से सिंचाई की जाती थी। ठिकाने के गाँवों और तालाबों का विवरण निम्न प्रकार से हैं[18] –

क्र.	नाम गाँव	कुल कुऐं	आबाद कुऐं	तालाब आबाद	तालाब बेआबाद	सं. 1989 में कुऐं	ई1941 में कुऐं
1.	देलवाड़ा	23	22	1	–	25	28
2.	बिलोता	119	108	2	–	37	40
3.	सोडावास	9	5	–	–		15
4.	रामपुरा	2	2	–	–		4
5.	मांडक	1	1	–	–		8
6.	करोली	37	24	2	–		62
7.	बरवालिया	5	4	–	–		7
8.	भूमलया रो गुड़ा	1	1	–	–		
9.	कोलर	1	1	–	–		2
10.	शयाघाटी को मठ	2	2	–	–	3	2
11.	श्यामजी का गुड़ा	1	1	–	–		1
12.	गोलेरा	3	3	–	–	7	5
13.	नेगड्या	32	23	–	–	44	43
14.	लोलेरा का गुड़ा	15	7	–	–		14
15.	जावड़	1	1	–	–		114
16.	बांसल्यो	16	13	2	–		29
17.	धोली मगरी	21	20	1	–		25
18.	बगड्या	3	3	–			3
19.	जाट सादड़ी	20	16	–	–	27	27
20.	जीडोली	3	3	1	1		8
21.	लाड्यां का खेड़ा	6	2	1	–		5
22.	जाला का गुड़ो	2	2	–	–		2
23.	करेला की गुड़ो	5	2	–	–		6
24.	बड़ो भेरड़ो ढाणिया समे	36	19	1	1		54

25.	छोटा भेरड़ो	8	8	-	-		22
26.	मारूवास	9	8	1			14
27.	बेरण	12	9	1	-		20
28.	कोटड़ी	7	7	-	-		23
29.	गणदोली	15	15	-	1		34
30.	आकोदड़ो	9	7	-	-		
31.	वजम्या	8	5	-	-		18
32.	देवद्या को गुडो	5	4	-	-		7
33.	कुंडाल को गुडो	3	2				5
34.	वीखरणी	24	17	1	-		22
35.	बीलावास	4	4	-	-	3	3
36.	रठूंजना	19	14	-	-		25
37.	मागथला	31	25	1	-		45
38.	बालाथल	23	17	-	-		31
39.	बिठोली	25	19	2	-		45
40.	भाणसोल	60	55	-	-		61
41.	गुडली	9	9			11	16
42.	सूरजगढ़	154	123	-	-		
43.	मोडी	10	8	-	-		12
44.	कठणयावड़ा	2	1	1	-		12
45.	रामा	30	27	2	-		30
46.	पांडोली	268	237	3	2		156
47.	सीसमी	23	17	1	2		28
48.	मांथुडल	19	13	-	-		31
49.	बड़गाँव	17	14	-	-		17
50.	मुडोल	11	10	-	-		12
51.	अणगोर	28	22				
52.	जड़फा	4	2	-	-		10
53.	हतण्रावड़	22	19	-	-		12
54.	बनाऐको	5	5	-	-		
55.	पीपरोली	20	18	1	0		27
56.	नेता का गुड़ा	10	8	-	-	10	13
57.	मदार	19	18	-	-		147
58.	कदमाल	17	14	-	-		20
59.	सेलु	15	8	-	-		10
	कुल	1339	1140	28	12		1781

उपरोक्त सारणी के अनुसार ठिकाने में कुल कुँओं की संख्या 1873 ई. में 1393 थी जिसमें से 1140 कुएँ आबाद थे अर्थात् पानी पीने एवं सिंचाई हेतु उपयोग में लिया जाता था। आबाद तालाबों की संख्या 25 थी जो सिंचाई एवं पेयजल के रुप में उपयोगी थे एवं बेआबाद तालाब 12 थे। ई. 1932 में संख्या में कुछ वृद्धि हुई परन्तु ई. 1941 में कुल 1781 कुऐं थे।[19]

मुख्यतया सिंचाई कुएं एवं नाडियों से होती थी, जिसमें जमीन के प्रकार के अनुसार कुओं का भी वर्गीकरण किया जाता था। उदाहरण के लिये 31 खालसा जारी, 4 गैर जारी, 2 माफी जागीर कुल 37 कुएं भी थे। विभिन्न कुओं पर रँहट, चडस एवं छोटी नहरों द्वारा सिंचाई की व्यवस्था की जाती थी। नए कुएँ खोदने की प्रवृति भी ई. 1873 से ई. 1932 के मध्य देखी गई।[20]

निष्कर्ष – इस प्रकार झाला राजवंश के प्रमुख ठिकाने एवं देलवाड़ा ठिकाने में आर्थिक रूप से निम्न प्रशासनिक व्यवस्था होती थी एवं राजराणा द्वारा इस क्षेत्र पर जो भी आय प्राप्त होती थी उसका कुछ हिस्सा मेवाड़ महाराणा को दिया जाता था। देलवाड़ा ठिकाना प्रमुख व्यापारिक मार्ग पर होने के कारण महत्वपूर्ण क्षेत्र था। जिससे आय अधिक होती है एवं मेवाड़ को काफी फायदा होता था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राधाकृष्ण चौधरी, प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास पृ. 12-15; गोगुन्दा ठिकाने का इतिहास, पृ. 405
2. हुकमसिंह भाटी (सं.), महाराणा भीमसिंह कालीन मेवाड़ जागीरदारा रे गांव-पट्टों राह मरजाद री हकीकत, पृ. प्रस्तावना VII; मेवाड़ ठिकानो के अभिलेख पृ. XIV-XVII सम्पादकीय गोगुन्दा ठिकाने का इतिहास, पृ. 406
3. सम्पादक हुकमसिंह भाटी, महाराणा भीमसिंह कालीन मेवाड़ जागीरदारा रे गांव-पट्टों राह मरजाद री हकीकत, पृ. प्रस्तावना VII; मेवाड़ ठिकानों के अभिलेख पृ. XIV-XVII सम्पादकीय गोगुन्दा ठिकाने का इतिहास, पृ. 406
4. गोपीनाथ शर्मा, सोशल लाइफ इन मिडाइवल राजस्थान, पृ. 289; देलवाड़ा ठिकाने का इतिहास, पृ.51
5. उदयपुर राज्य का इतिहास, पृ.708, 736, 45, 55, 813, 20; वही, पृ. 51
6. देलवाड़ा ठिकाने का इतिहास, पृ. 51
7. वही, पृ. 51-52
8. देलवाड़ा ठिकाने का इतिहास, पृ. 52
9. वही, पृ. 52
10. देलवाड़ा ठिकाने का इतिहास, पृ. 53-54
11. देलवाड़ा ठिकाने का इतिहास, पृ. 54
12. वही, पृ. 54
13. वही, पृ.54
14. वही, पृ. 54
15. देलवाड़ा ठिकाने का इतिहास, पृ. 55
16. वही, पृ. 55
17. वही, पृ. 55
18. देलवाड़ा ठिकाने का इतिहास, पृ. 56-57
19. देलवाड़ा ठिकाने का इतिहास, वही, पृ. 58
20. वही, पृ. 58-59

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Political Participation of Women in Panchayati Raj System (With Special Reference to Gram Panchayats of Rajnandgaon district)

Dr. (Mrs.) KiraniTigga*

***Assistant Professor (Political Science) College of Rajmata Vijaya Raje Sindhiyan Kanya Mahavidyalaya, Kawardha, District Kabirdham (C.G.) INDIA**

Abstract : In India, leadership has always been male dominated since ancient times, irrespective of the form of the system, whether it is monarchy, dictatorship, aristocratic system or modern democratic system, it is clear that in any country of the world, national leadership has mostly been in the hands of men. After independence, in India, except for the tenure of Mrs. Indira Gandhi, national leadership has been run by men in the last 70 years. Today, from Panchayat to Parliament, power is in the hands of men in most of the states of India as Chief Minister. At the national level, the Prime Minister and the main members of the cabinet are men. Whenever it comes to leadership, from 2000 till today, all the national parties have advocated 33 percent reservation for women in Parliament many times.Political participation For all types of systems prevalent at present, including the democratic system, political participation is important. For its permanent basis and strength, it is necessary to have political participation. In its absence, the success of the democratic system can be questioned. That is, the basis of the democratic governance system is participation. Because it is run by the people. In the 20th century, all political systems, whether authoritarian or democratic, conservative or reactionary, give their citizens the right to participate in politics and encourage them to do so. Because the more political participation expands, the more stable, popular and powerful the system will be. In India, after the 1980s, most of the time mid-term elections have weakened India's parliamentary democratic system. Because whether it is a state or a centre, where there is a coalition government, the political system remains weak and temporary. Because the percentage of public participation is weak there.

Introduction - The 73rd Constitutional Amendment proved to be a milestone in the direction of democratic decentralization. The question of ensuring women's participation in politics is of national importance today. Leaving aside other problems, important questions like politicization of tribes and bringing them to the center of the process of formation of political power have sparked debate across the country. Despite half of the world's population being women, their number in elected positions is negligible. The low participation of women in politics is indicative of their second-class status and powerlessness. Illiteracy, economic dependency, social customs, traditions and patriarchal attitudes are the basic reasons for women's political inactivity. Women perform two-thirds of the work in the world. But they become the owner of only 10% of the income and 1% of the means of production.

Political status of women: In January 1957, a study group was formed under the chairmanship of ShriBalwantRai Mehta. Following the recommendations of this committee, Panchayati Raj was formally established in the country on 2 October 1959 in Nagaur, Rajasthan. For about a decade after 1959, steps were taken by the Center and the states for the progress of Panchayati Raj, but between 1965-1969 this enthusiasm cooled down and the period 1969-1977 was a period of decline for Panchayati Raj institutions. In 1977, a committee was formed under the chairmanship of Ashok Mehta, which was not accepted by the then Congress government in 1980. Then in 1985 a committee was formed under the chairmanship of G.B.K. Rao, which emphasized on block level revival, but this too could not be implemented. The same fate befell the report of the Singhvi Committee formed in 1986 and finally the day came when the NarasimhaRao government amended the bill related to Panchayati Raj institutions prepared by the Rajiv Gandhi government and got it passed in Parliament as the 73rd Constitutional Amendment in December 1992. This 73rd Constitutional Act was implemented from 24 April 1993. After the report of the committee formed on the status of women, the need for women empowerment at the Panchayati Raj level was felt. After the 73rd Constitutional Amendment in 1992, the political ambitions of women in villages have increased and a new revolution has started

in the villages.

Political importance of the subject of study: The main result of the processes of change in Indian society is the change in rural political participation. The reality is that to understand the social and political structure of any community, it is necessary to understand the power structure of that organization. The reason for this is that the position of various individuals and groups is determined according to the power structure in the organization. Whenever the nature of political participation changes, the basis of power in the organization also starts changing. Till some time ago, when hereditary leadership and political participation based on caste and religion were dominant in the villages, the role of caste panchayats was very important in the rural power structure.Political participation is a universal phenomenon. Wherever there is life, there is society and wherever there is society, there is also leadership. As far as the question of women's political participation in society is concerned, but when it comes to leadership and participation, society has acknowledged their participation. Whether it is Rani Durgavati, Razia Sultan, Devi AhilyaBai, Rani Lakshmi Bai, Annie Besant, Sarojini Naidu, VijayalakshmiPandit, Kamala Nehru, Indira Gandhi, Mother Teresa, the contribution of all these cannot be forgotten. In this too, women's political participation is a more challenging subject. But in a state where almost half of the population is women, its relevance increases further. The proposed framework is related to women's political participation in the Panchayati Raj system. Gram Panchayat is the pillar and center point of Indian society, from where the doors of participation in state and national politics open. Women represent half of the society, but their political participation has been almost negligible. The present Panchayati Raj is a collective effort to give a new shape to rural life based on social, equality and justice, economic development and dignity of personality. This can be called an effort towards women empowerment.

Objectives of the study: The proposed study is an analytical study of the political participation of women in the political system at the state level (with special reference to the Gram Panchayats of Rajnandgaon district) in which it is proposed to do a detailed study of the status of participation in women leadership after the implementation of Panchayati Raj system with special reference to the Gram Panchayats of Rajnandgaon district. The proposed study has the following objectives:

1. To find out the level of political participation of women in the Panchayati Raj system.

Study Area: Rajnandgaon district is spread from 20.07°N to 22.29°N latitude and 80.2°E to 81.24°E longitude. It s average height from the ground level is 330.78 meters. Its total area is 9202.36 square kilometers. Kawardha is in its north, Durg in the east and Bastar district in the south. The western border of the district is connected to some border of Gondia district of Maharashtra and Balaghat district of Madhya Pradesh. It is connected to some border of Balaghat district of Madhya Pradesh. Along with the richness of mineral and forest wealth, it has its own importance from commercial and political point of view. From administrative point of view, there are 8 tehsils and 9 development blocks in the district. In which Manpur, Mohla, AmbagarhChowkiare Scheduled Tribe dominated development blocks. There are 3 towns, inhabited villages 952, revenue villages 1001, forest villages 10, deserted villages 59 and 632 gram panchayats and 2 municipal corporations in the district. There are a total of 9 JanpadPanchayats in the district. According to the 2001 census, the population is 12,81,811. In which 5,39,726 urban density is 159, sex ratio is 1024 and literacy rate is 77.58%. Rajnandgaon district is the most literate district of Chhattisgarh state.

Rajnandgaon district is basically a farmer dominated family. But the biggest pilgrimage place of Chhattisgarh state is Dongargarh Devi temple. The biggest pilgrimage place through Panchayati Raj system is Dongargarh Devi temple. By giving political opportunities to women through Panchayati Raj system, they will be more capable of fighting against inequality, injustice and exploitation against themselves. Also, through political participation in society, they can play an important role in the development of women at the rural level. Study methods of the proposed research: - The methodology of the proposed research will be divided into the following parts.

Selection of the study area.

Unit of study: In the proposed study, it is proposed to analyse the political participation of women representatives elected in the Gram Panchayat of Rajnandgaon district as a unit of study.

Selection of respondents: For the proposed study, the women representatives of Gram Panchayat of the study area Rajnandgaon are to be selected through multi-level guidance. Under this, the women representatives of the same four development blocks are selected through purposeful guidance and from among them, a total of 300 respondents including women representatives are selected for the study through daily guidance. 4. Data collection method, technique and tools - The data is to be collected in two ways. For the proposed research work

1. Primary source
2. Secondary source

Primary Sources - Under this, facts will be collected through interview schedule from all the representatives of women dominated development blocks of the study area.

Secondary Sources - Under this, various government forms and documents related to political participation of women and Panchayati Raj system in the study area, • facts published from time to time in various research journals, magazines, newspapers and material through internet will be included. Collection of Facts.

Based on the nature of respondents, interviews related

to Gram Panchayat are to be conducted through schedule and interviews related to women representatives of Panchayat are to be conducted through schedule. Also, during the research work, the study is to be conducted through schedule. Also, during the research work, facts will be collected from the people of the study area through group discussion and observation techniques.

Meaning and Definition of Political Participation: When someone starts getting interested in politics, then it is called group or public participation in the context of politics. Public participation or political participation can be considered synonymous with each other. There is no society in the world today where there is no politics. Political system is an extremely important fact for the good functioning of the society and the society. Political participation is an important concept in democracy. Every citizen of the society is taking interest in understanding politics today. Participation means taking part or being a participant. In political participation, the members of the society participate in political activity directly or indirectly in more or less quantity. Such activity or action is called political participation. The political action of a person can be continuous or can be occasional, which has a direct impact on the political system of the society. Even in ancient times, where there were institutions with political participation, there was a democratic rule and the systems deprived of political participation had autocratic rule.

It will remain only a desolate forest. As a result, from the beginning till now, scholars have been interested in the study of political participation. Aristotle has presented the classification of the system of governance based on political participation. In modern times, politics has remained the lifeline of people which depends on the amount of political participation. The political behavior of a group or an individual or his attachment to politics or involvement in politics is generally called political participation or group participation. When a person is involved in political action, behavior or political activity in a small or large amount, then such an action is called political participation.

Various scholars have defined political participation as follows

Norman H. Nye Sidney Varsh "Political participation is the lawful activities of the common people whose aim is to directly influence the selection of political officials and the decisions taken by them."

McGlaskey "Political participation can be defined as those voluntary actions by which people participate in the selection of the rulers of the society and in the formation of direct-indirect public policies."

Matthews and James W. "Every behavior related to the direct expression of political views by the public is political participation."Today, in the era of democracy, public participation has definitely increased. The only means of making public power practical is the election of its representatives by the public. By casting their vote, people hand over their political sovereignty to their duly elected representative for a fixed period. This casting of vote is a political action because it affects the decision-making of the political system. Therefore, voting is an important example of political participation.

Nature and characteristics of political participation: The nature and characteristics of political participation have been determined on the basis of definitions. The characteristics of political participation are as follows-

Political action and activity is political participation - Political participation includes political activities of man. For this, various means are used by people. Participation in interest groups, pressure groups, political parties, etc. are important among these means.

It affects the decision-making process of governance - Such a process of people is called political participation, which directly or indirectly affects the system of governance or the public. The main actor doing political action is a person. This person remains engaged or entangled in such actions or activities. Therefore, political action has been considered an essential element of political participation. Apter has also called public projects as political participation.

Political Participation: Political participation is an essential system for all political systems. Participation is the basis of democratic governance because it is run by the people. In the 20th century, all political systems, whether authoritarian or democratic, conservative or reactionary, give their citizens the right to participate in politics and on this basis they give their country the pride of being based on democratic governance. Modern democratic systems are based on the principle of public participation. The only basis for making public power practical is the election of its representatives by the people. Voting is a political act because it affects the decision-making of the political system. Therefore, voting is political participation, due to which whatever be the reason for the political act, its result is always the same.

Table No. 01: Participation of women in Panchayat meetings

No.	Opinion	Frequency	Percentage
1.	Yes	137	45.67
2.	No	140	46.67
3.	Can't say anything	13	4.33
4.	Did not understand the question	10	3.33
	Total	300	100

It is clear from the above table that 45.67 percent of the respondents are of the opinion that women regularly participate in the meetings of the Panchayat. Whereas 46.67 percent of the respondents believe that women are not able to participate in the Panchayat because they have many family responsibilities attached to them, that is why they first fulfill their family responsibilities, later in the time that is left, they do the work related to the Panchayat and society. 433 percent of the respondents did not say anything about this question because they migrate to other states and work,

that is why they do not have any information about these local activities and 333 percent of the respondents did not understand the question at all, the reason for which is that they are illiterate and live in slums, they have neither voted till date, nor have participated in any political activities.

Table No. 02: 50% reservation for women in Gram Panchayats will create awareness

No.	Opinion	Frequency	Percentage
1.	Yes	174	58
2.	No	93	31
3.	Can't say anything	30	10
4.	Did not understand the question	3	1
	Total	300	100

From the analysis of the above table, it is clear that 58 percent of the respondents believe that the provision of 50 percent reservation for women in Panchayats has increased women's public awareness. Whereas 31 percent of the respondents disagree with this argument. Because they believe that even before 50 percent reservation, there was as much public awareness as there is after getting this reservation for women. The reason given for this is that all the work of the Panchayat is done by their husbands and the women only put their thumb impression. 10 percent of the respondents maintained complete neutrality in this regard. 1 percent of the respondents could not understand this question.

The respondents disagree with this argument. Because they believe that even before 50 percent reservation, there was as much public awareness as there is after getting this reservation for women. The reason given for this is that the entire work of the Panchayat is done by their husbands and the women only put their thumb impression. 10 percent of the respondents maintained complete neutrality in this regard. 1 percent of the respondents could not understand this question.

Table No. 03: Increase in the social status of women by getting leadership in Panchayats

No.	Opinion	Frequency	Percentage
1.	Yes	203	67.67
2.	No	67	22.33
3.	Can't say anything	20	6.67
4.	Did not understand the question	10	3.33
	Total	300	100

From the analysis of the table presented, it is known that 67.67 percent of the respondents believe that giving leadership to women in panchayats has increased their social status. Whereas 22.33 percent of the respondents expressed their disagreement in this regard. They believe that even today, in practice, whatever happens in society, women's voice is ignored as per the wishes of the men. Whereas 6.67 percent of the respondents did not say anything in this regard. Whereas 3.33 percent of the respondents could not understand this question because they are all labourers and have nothing to do with society or politics. They say that for us, filling our stomachs is the biggest achievement.

Table No. – 04: Effect of political participation on social status

No.	Opinion	Frequency	Percentage
1.	Yes	152	50.67
2.	No	106	35.33
3.	Can't say anything	29	9.67
4.	Did not understand the question	13	4.33
	Total	300	100

It is clear from the above analysis that 50.67 percent of the respondents say that political participation of women affects their social status. They have an influence in the society and their social status increases. Whereas 35.33 percent of the respondents expressed their disagreement in this regard. 9.67 percent of the respondents remained neutral in this regard. 4.33 percent of the respondents did not give any information because they did not understand the question itself.

Table No. – 05: Participation by women Sarpanchs in the meetings of District Panchayats

No.	Opinion	Frequency	Percentage
1.	Yes	153	51
2.	No	105	35
3.	Can't say anything	229	9.67.67
4.	Did not understand the question	13	4.33
	Total	300	100

Analysis of the above table shows that 51 percent of the respondents believe that women Sarpanchs regularly participate in the meetings of the District Panchayat. Whereas 35 percent of the respondents expressed their disagreement in this regard because they argued that women take so much time in carrying out their family responsibilities that they do not get even a day to travel to and from the district level to attend the meetings of the District Panchayats. They only participate in the meetings held at their village level. 9.67 percent of the respondents remained neutral in this regard. 4.33 percent of the respondents did not understand the question at all.

Conclusion: Throughout the present times, the rural population in different countries has been using different means to carry out their programs. In the recent general elections that have been held in these years, the rural population has used their votes by participating in the general elections and after providing reservation for women, the participation of these people in politics increased due to which women were elected to different posts under the three-tier Panchayati Raj system, through which women got the opportunity to provide leadership in rural areas, through which women played an important role in political change in rural areas.The analysis of the opinions received from the respondents in the study area makes it clear that

58 percent of the respondents believe that the system of 50 percent reservation for women in Panchayats has increased the public awareness of women. Whereas 31 percent of the respondents disagree with this argument. 10 percent of the respondents maintained complete neutrality in this regard. 1 percent of the respondents could not understand this question.

From other analysis, it is known that 58.67 percent of the respondents agree that political influence is increasing due to social participation at the rural level. While 32.33 percent of the respondents completely disagreed in this regard. 6.33 percent of the respondents remained completely neutral in this regard

Other analysis shows that 58.67 percent of the respondents agree that social participation at the rural level is increasing political influence. Whereas 32.33 percent of the respondents completely disagreed in this regard. 6.33 percent of the respondents remained completely neutral in this regard. In the present environment, many educated graduate and post graduate women are providing commendable leadership as Sarpanch at the rural level and increasing social awareness among women. A living example of this can be seen that an educated woman in Chhattisgarh, dedicated to the SwachhataAbhiyan of Prime Minister NarendraModi, sent back the wedding guests who had come to the wedding hall because she cannot get married until a permanent toilet is constructed in her house. This has been appreciated in the entire state. Hence, today women leadership, women public awareness, women political and social participation are developing rapidly and in the direction of women empowerment, women fulfilling their responsibility in social and political participation is being considered the biggest achievement. In the study area Rajnandgaon district, Prime Minister Narendra Modi's Beti Padhao Beti Bachao program is being successfully run by women Sarpanchs, which is commendable. Through the social and political participation of women, effective leadership is being provided by women in the Gram Panchayats, giving a new direction and condition to the Gram Panchayats in Chhattisgarh, which will prove to be the biggest contribution of women in improving the fate and image of the Gram Panchayats.

References:-

1. Sharma, Hari Om: Role of Women in Political Participation in Rural Areas, Emerging Patterns of Rural Leadership, Arjun Publishing House, New Delhi, 2004, p. 75
2. Kukreja, Sundarlal: Need to Strengthen Panchayat Raj System, Kurukshetra, p. 11
3. Puri, S.: Indian Political System or Indian Governance and Politics, New Academic Publishing Company, Jalandhar, p. 301
4. Giri, D.K.: People Participation and Rural Development, Kurukshetra, New Delhi, 2002, p. 11
5. P.R. Dubhashi Administration and the Citizen Eye Prices, Volume July 1975, p. 28
6. Gaina, Hari B. Modern Political Theory, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi, 2004, p. 330-332
7. McGloxy, Herbert: Political Participation in David, edited Volume 12, page 253
8. Bharti, Dr. Dharamvir Political Sociology, Rajasthan Hindi Granth: Academy, Jaipur, 1998, page 151

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

अनुवाद के क्षेत्र में भारतीय परम्परा

डॉ. श्रीमती बिन्दू परस्ते *

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस श्री अटल बिहारी वाजपेयी, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना - भारतीय ज्ञान परंपरा में अनुवाद कामत इस वजह से है कि यह ज्ञान के प्रसार में मदद करता है और भारतीय भाषाओं भाषा की समानता को बढ़ाता है। अनुवाद के जरिए भारती सहित को वैसे दार्शकों तक कुछ जा सकता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में अनुवाद से भारती भाषाओं की सांस्कृतिक समानता का पता चलता है। इससे भारत में एकता और अखंडता की भावना पैदा होती है। ज्ञान का प्रचार होता है। भाषा और विचार के बीच संबंध स्पष्ट होता है। अनुवाद से राष्ट्रों के बीच आपसी समझ और सद्भाव बढ़ता है। इसके माध्यम से भारतीय साहित्य को वैश्विक दार्शकों तक पहुंचाया जा सकता है। पाठों की व्यख्या और निर्वचन में मदद मिलती है। अनुवाद से संस्कृति का संवहन होता है। शिक्षा के क्षेत्र में पाठ्य सामग्री का स्तर बढ़ा बना रहता है। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विकास के नए आयाम स्थापित होते हैं।

भारतीय ज्ञान परंपरा में अनुवाद का महत्व इसलिए है कि यह ज्ञान और संस्कृति को एक जगह लाता है। अनुवाद के जरिए भारतीय भाषाओं के बीच सांस्कृतिक समानता का एहसास होता है और भारत की एकता की भावना मजबूत होती है। अनुवाद ज्ञान का प्रसार करने और संस्कृति को मजबूत बनाने में, आगे बढ़ाने में अहम भूमिका निभाता है।

भारत जैसे बहुभाषी देश में एकता और अखंडता को सुरक्षित और सुदृढ़ बनाए रखने के लिए अनुवाद की आवश्यकता है। अनुवाद की जीवंत परंपरा का परिणाम है विश्व भर में गीता तथा उपनिषद के ज्ञान का अनुवाद अपने ढंग से किया जा रहा है। बौद्ध धर्म के माध्यम से भारतीय ग्रंथों का अनुवाद चीनी भाषा में हुआ। अनुवाद का महत्व केवल शिक्षा तक सीमित नहीं है। यह व्यापार साहित्य विज्ञान प्रौद्योगिकी और अन्य कई क्षेत्रों में भी समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अनुवाद के बिना विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों के बीच संपर्क स्थापित करना लगभग असंभव हो जाता है।

आधुनिक युग में अनुवाद की महत्वता व उपदेयता को विश्व भर में स्वीकारा जा चुका है। वैदिक युग के पुन: कथन से लेकर आज के ट्रांसलेशन तक आते-आते अनुवाद अपने स्वरूप और अर्थ में बदलाव लाने के साथ-साथ अपने बहुमुखी व बहुआयामी प्रयोजन को सिद्ध कर चुका है। प्राचीन काल में स्वांत: सुखाय माना जाने वाला अनुवाद कर्म आज संगठित व्यवसाय का मुख्य आधार बन गया है।

दूसरे शब्दों में कहें तो अनुवाद प्राचीन काल के व्यक्ति परिधि से निकलकर आधुनिक युग की समष्टि परिधि में समा गया है। आज विश्व भर में अनुवाद की आवश्यकता जीवन के हर क्षेत्र में किसी न किसी रूप में महसूस की जा रही है। और इस तरह अनुवाद आज के जीवन की अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

20वीं शताब्दी के अवसान और 21वीं शताब्दी के स्वागत के बीच आज जीवन का कोई देश कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जहां हम चिंतन और व्यवहार के स्तर पर अनुवाद के आग्रही ना हों। भारत में अनुवाद की परंपरा पुरानी है किंतु अनुवाद को जो महत्व 21वीं सदी के उत्तारार्ध में प्राप्त हुआ वह पहले नहीं हुआ था।

सन 1947 इस भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात देश की आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन आया विश्व के अन्य देशों के साथ भारत के आर्थिक राजनीतिक समीकरण बदले। राजनीतिक और आर्थिक कारणों के साथ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का विकास भी इस युग की प्रमुख दिन है। जिसके फल स्वरुप विभिन्न भाषा-भाषी समुदायों में संपर्क की स्थिति उभर कर सामने आई।

विभिन्न भाषा-भाषीयों के बीच उन्हें की अपनी भाषा में संपर्क स्थापित कर लोकतंत्र में सब की हिस्सेदारी सुनिश्चित की जा सकती है वस्तुत: है अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न देशों के बीच राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बढ़ती हुई आदान-प्रदान की अनिवार्यता ने अनुवाद एवं अनुवाद कार्य का महत्व को बढ़ा दिया है।

हमारे देश में अनुवाद का महत्व प्राचीन काल से ही स्वीकृत है। प्रो,जी. गोपीनाथ ने ठीक ही लक्ष्य किया था कि अनुवाद आज व्यक्ति की सामाजिक आवश्यकता बन गया है। आज के सिमटते हुए संसार में संप्रेषण माध्यम के रूप में अनुवाद भी अपना निश्चित योगदान दे रहा है। भारत जैसे बहुभाषी देश में अनुवाद की उपादेयता स्वयंसिद्ध है। भारत के विभिन्न प्रदेशों के साहित्य में निहित मूलभूत एकता के स्वरूप को निखारने के लिए अनुवाद ही एकमात्र अचूक साधन है। इस तरह अनुवाद द्वारा मानव की एकता को रोकने वाली भौगोलिक और भाषायी दीवारों को ढहाकर विश्व मैत्री को और सुदृढ़ बना सकते हैं।

भारत जैसे विशाल राष्ट्र की एकता के प्रसंग में अनुवाद की महती आवश्यकता है। भारत की भौगोलिक सीमाएं न केवल कश्मीर से कन्याकुमारी तक बिखरी हुई है बल्कि इस विशाल भूखंड में विभिन्न विश्वासों एवं संप्रदायों के लोग रहते हैं जिनकी भाषाएं एवं बोलियां एक दूसरे से भिन्न है। भारत में अनेकता में एकता इन्हीं अर्थों में हैं की विभिन्न भाषाओं विभिन्न जातियों विभिन्न संप्रदायों विभिन्न विश्वासों के देश में भावनात्मक एवं राष्ट्रीय एकता कहीं भी बाधित नहीं होती। एक समय में महाराष्ट्र का जो व्यक्ति सोचता है, वहीं हिमाचल का निवासी भी चिंतन करता है।

भारत के हजारों वर्षो के अधिकतम इतिहास चिंतन ने इस धारणा को पुष्ट किया है की मध्ययुगीन भक्ति आंदोलन से लेकर आज के प्रगतिशील आंदोलन तक भारतीय साहित्य की दिशा एक रही है। यह बात अनुवाद के द्वारा ही संभव हो सकी है, जिस समय गोस्वामी तुलसीदास जी राम जी के चरित्र पर महाकाव्य लिख रहे थे, हिंदी के समानांतर उड़ीसा में बलराम, बंगाल में कृतिदास, तेलुगु में पोतना, तमिल में कंबन और हरियाणवी में अहमदवख्श अपने- अपने साहित्य में राम जी के चरित्र को नया रूप दे रहे थे।

आज की भारतीय संस्कृति जिसे हम सामासिक संस्कृति कहते है। उसके निर्माण में हजारों वर्षो के विभिन्न धर्मो, मतों एवं विश्वासों की साधना छिपी हुई है।साहित्य के अध्ययन में अनुवाद का महत्व आज व्यापक हो गया है। साहित्य आदि जीवन और समाज के यथार्थ को प्रस्तुत करता है, तो विभिन्न भाषाओं के साहित्य के सामूहिक अध्ययन से किसी भी समाज देश या विश्व की चिंतन धारा एवं संस्कृति की जानकारी मिलती है।

साहित्य और अनुवाद का अंतर संबंध बहुत गहरा और अत्यधिक प्राचीन है। गीता और बाइबल के अनुवाद विश्व की सर्वाधिक भाषाओं में हुए। रामायण और महाभारत दोनों ही महाकाव्य का अनुवाद सरल से सरल शैली में कितनी ही भाषाओं में किया गया। जर्मन कवि गेटे के अभिज्ञान शंकुनतलम के माध्यम से संस्कृत का महत्व विश्व को ज्ञात हुआ और कालिदास आज विश्वकृति बन गए। विश्व विश्रुत कृतियां एक देश से दूसरे देश में मूल भाषा में अनुवादित होकर विभिन्न भाषा में जाती है, तो अपने साथ विचार और संस्कृति भी ले जाती है। मध्यकाल में कई संस्कृत ग्रंथों का फारसी में अनुवाद किया गया। मुगल काल में भी संस्कृत के अनेक ग्रंथों के अनुवाद अरबी फारसी में किए गए। इसमें उपनिषद रामायण महाभारत सिंहासन बत्तीसी वेद तथा कई ग्रंथ हैं। दाराशिकोह ने योग वशिष्ठ एवं भागवत गीता का अनुवाद फारसी में किया था। फारसी कवि फैजी ने लीलावती और नलदमयंती कथा का अनुवाद किया था। रामायण का बदायूनी ने हरिवंश पुराण का मौलाना शोरी ने जायदे रशीदी नाम से प्रस्तुत किया था। महाभारत का अनुवाद राज्मनामा नाम से बदायूनी, शेख सुल्तान और नकीब खा ने किया था। पंचतंत्र का अबुलफजल न अनवारे सहेली नाम से किया था। इस तरह मुगल सम्राट अकबर का समय अनुवाद कार्य की दृष्टि से काफी समृद्ध माना जा सकता है।

साहितिक अनुवाद सिर्फ भाषा से भाषा का रुपांतर नही है। तो वह विचार और संवेदना, संस्कृति और सभ्यता, मूल्य और मानवीय चेतना का भी अनुवाद होता है। साहित्य के अनुवाद ही संसार के अनेक देश और संस्कृतियाँ एक दूसरे से भावनात्मक रुप से जुड़ते रही हे। किसी राष्ट्र के किसी युगविशेष को पढ़ना है तो इतिहास और भूगोल के साथ-साथ उस समय का साहित्य भी पढना चाहिए। साहित्स में राष्ट्रीय और जातीय चेतना की अभिव्यक्ति होती है। काव्य अनुवादक दो भाषाओं, दो संस्कृतियों और दो पृष्ठभूमियों के बीच पुल का निर्माण करता है। उसकी इसी दोहरी भूमिका के कारण दुनिया के श्रेष्ठ कवि आज विश्व कृति के रूप में हमारे सामने है, जैसे कि कालिदास होमर शेक्सपियर टालस्टाय, अरस्तु, गेटे, उमर खैयाम, रविन्द्रनाथ टैगोर, जयशंकर प्रसाद, मोताले, इलियट, आदि।

भारत में सबसे भारती भाषा में अनुवाद की दीर्ध परंपरा रही है। बाद में पाली, प्राकृत तथा अपभ्रश से भी अनुवाद किया जाने लगे।

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल से अनुवाद का कार्य विधिवत प्रारंभ हुआ। भारतेंदु काल से अनुवाद कार्य प्रारंभ हुआ। स्वयं भारतेंदु शेक्सपियर कृत मारचेट ऑफ वेनिस नाटक का हिंदी में दुर्लभ बंधु शीर्षक से अनुवाद किया। यह नाटक महात्वपूर्ण होने के साथ शिक्षाप्रद भी है। भारतेंदु शाब्दिक के स्थान पर भावानुवाद के पक्ष पाती थे।

भारतेंदु के बाद आचार्य हजारी प्रसाद दिवेदी ने पर्याप्त अनुवाद कार्य किया था। कालिदास के कई ग्रंथों के अनुवाद भी किए। कुमार संभव का अनुवाद किया। किरातार्जुनीय की भूमिका में उन्होंने स्पष्ट किया है कि हमारा यह अनुवाद तो परीक्षार्थी छात्रों के लिए है। और संस्कृत सीखने की इच्छा रखने वाले और लोगों के लिए।

श्रीधर पाठक स्वयं एकांतवासी योगी, उखड ग्राम भ्रान्त पथिक रचनाएं अनुवाद के रूप में प्रस्तुत की। एकान्त वासी योगी गोल्डस्मिथ के हरमीट का अनुवाद है। हरिओध की वैनिस का बाँका, नीति निबंध, उपदेश कुसुम, विनोद वाटिका, स्फुटकाव्य संग्रह अनुवाद के रूप में प्रस्तुत किए।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी अनुवाद में अपना अभूतपूर्व योगदान दिया है। बाॅग्ला से राखाल बाबू का उपन्यास शशांक अनुदित किया। डॉक्टर ब्राउन के 'फिलॉसाफी ऑफ ह्यूमन माईड' के आधार पर लिखा गया सदाचार, स्पेन्सर के प्रोग्राम इट्स लॉ एण्ड कॉलेज के आधार पर लिखी प्रगति उसका नियम और निदान उल्लेखनीय है।

शुक्ला जी ने अनुवाद के क्षेत्र में अपनी अद्वितीय प्रतिभा का परिचय दिया। विश्वप्रापंच में हेकल की पुस्तक The Riddlesa of the Universe Riddle के लिए पहेली या रहस्य न देकर प्रपंच शब्द का चुनाव करके।

रवींद्रनाथ ने अपनी कविताओं, गीतों का अनुवाद स्वयं किया है। हिंदी में आज्ञेय ने अपनी काफी कविताओं का अनुवाद स्वयं किया है। डॉ. पांडुरंग राव ने कामायनी का तेलुगु में अनुवाद किया। बच्चन जी ने अंग्रेजी से मेकमेथ का हिंदी में अनुवाद किया। वर्तमान में बहुत से विदेशी कवियों और लेखकों के अनुवाद हिंदी में हो रहे हैं। स्त्रोत भाषा अंग्रेजी ना होने पर मूल से अंग्रेजी और अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद हो रहे हैं। आजकल हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाओं में लगातार विदेशी कवियों के अनुवाद प्रकाशित हो रहे हैं।

अभी हाल ही में 'सुखनवर' पत्रिका में मणिमोहन द्वारा फलस्तीनी कवि इब्राहिम नसरुल्लाह, कमाल नासिर, अलकासिम, की कुछ कविताओं का अनुवाद प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त कुछ अमेरिकी कवियों शेल, सिल्वरस्टिन लैग्स्टन, ह्यूज और जेमसी रेन्डम की कुछ कविताओं का अनुवाद प्रकाशित हुआ है। जो अनुवाद कार की प्रगति और दिशा को रेखांकित करता है। इन अनुवाद उनकी विशेषता है कि इनमें सहज प्रवाह है।

प्रभात पटनायक का व्याख्यान 'भूमंडलीकरण के संदर्भ में उच्च शिक्षा की वैकल्पिक अवधारणाएँ' नाम से अनुवाद किया जो वसुधा 77 मैं प्रकाशित हुआ। यह व्याख्यान बहुत महत्वपूर्ण है और आज के दौर में आवश्यक रूप से पठनीय और विचारणीय है। इस दृष्टि से इसका अनुवाद प्रकाशित होना हिंदी भाषियों के लिए महात्वपूर्ण कार्य है। इन श्रेष्ठ और वैचारिक आलेख और व्याख्यानों को हिंदी के पाठकों को उपलब्ध कराना भी एक वैचारिक क्षेत्र में महात्वपूर्ण दायित्व का वहन करना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अनुवाद विज्ञान - डॉ. संजू कुमार जैन
2. अंग्रेजी हिंदी कोष - फादर कामिल बुलके
3. सुकरात के मुकदमे- डी. डी. कौसाम्बी
4. सुखनवर - मणिमोहन

जल अधिग्रहण या जलग्रहण क्षेत्र कार्यक्रमों की पर्यावरण प्रबंधन में भूमिका

नेहा शर्मा*   डॉ. राजू शर्मा **

* शोधार्थी (भूगोल) श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, पिलीबंगा, हनुमानगढ़(राज.) भारत
** शोध निर्देशक (भूगोल) श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, पिलीबंगा, हनुमानगढ़(राज.) भारत

शोध सारांश – जल–अधिग्रहण या जल–ग्रहण वह भौगोलिक क्षेत्र है जिसमें गिरने वाला जल एक नदी या एक–दूसरे से जुड़ती हुई कई छोटी नदियों के माध्यम से एकत्रित होकर एक स्थान से होकर बहता है। ढालू एवं पर्वतीय क्षेत्रों में केवल देखने से ही जल–अधिग्रहण क्षेत्रों की पहचान की जा सकती है। नदी के संगम स्थल से ऊपर की और का क्षेत्र जिसमें सीमा निर्धारित करेंगा, जैसे विकास खंड, गाँव व जिला आदि की अपनी एक भौगोलिक सीमा होती है, परन्तु उक्त सीमा प्रकृति द्वारा निर्धारित होती है और इसमें प्रशासकीय आवश्यकताओं हेतु परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।

सामान्यत: कुछ लक्षण छोटे अथवा बडे हर जल–अधिग्रहण में विद्यमान रहते हैं, जैसे–प्रत्येक जल–अधिग्रहण क्षेत्र का सम्पूर्ण पानी सिर्फ एक निकास से जल–अधिग्रहण की सीमा पार करता है। कोई भी क्षेत्र एक ही श्रेणी के दो जल–अधिग्रहण में नहीं आता है।

पिछले कुछ वर्षो में विकास संस्थाओं के मध्य जल–अधिग्रहण शब्द बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। विभिन्न विकासात्मक योजनाएँ, चाहे वे सरकारी हों या गैर सरकारी, जो जल–अधिग्रहण की अवधारणा से प्रभावित हुई हैं और उन्हें ही पुन: परिभाषित किया जा रहा है।

विकास से सम्बन्धित पूर्व के अनुभवों पर आधारित विशेषकर सूख सम्मभावित व पर्वतीय क्षेत्रों में यह महसूस किया गया है कि विभिन्न विकास कार्यक्रमों का परस्पर समन्वय अधिकतम सर्वागीण विकास के लिए आवश्यक है। विकास के नाम पर पिछले कुछ दशकों में विकास संसाधनों का अंधाधुंध दोहन किया गया है। फलत: अधिकांश क्षेत्रों में संसाधनों की उपलब्धता में अत्यधिक कमी का अनुभव किया जा रहा है, जो कि ढाँचागत विकास पर भी विपरीत प्रभाव डाल रही है।

शब्द कुंजी –जल अधिग्रहण, जलग्रहण,भू–जल, प्रबंधन, जल संरक्षण, जल पुनर्भरण, जीवन की गुणवत्ता,जल संकट।

प्रस्तावना – भू–जल एक सीमित प्राकृतिक संसाधन है जो सीमित मात्रा में उपलब्ध है। भू–जल को गिरता रहना इसी गति से होता गया और यदि संरक्षण एवं पुनर्भरण पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया तो भविष्य में विकट स्थिति पैदा हो जायेगी। आज जल संकट विश्व समुदाय के लिए एक चुनौती उभर कर आ रहा है क्योंकि एक तरफ जनसंख्या वृद्धि होने से जल के उपयोग में वृद्धि हो रही है तो दूसरी तरफ बढ़ते औद्योगिक विकास के कारण जल की मांग लगातार उद्योगों में बढ़ रही है तथा कृषि क्षेत्रों में जल की मांग में वृद्धि होने के बाद लगातार आपूर्ति में कमी हो रही है जिस कारण भविष्य में खाद्यान्न संकट पैदा हो सकता है। भारत में विशेषकर राजस्थान में सींचित कृषि का क्षेत्र घट रहा है। क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान भारत का सबसे बड़ा राज्य है जो भारत का कुल 10.41 प्रतिशत है। जबकि जनसंख्या 5.5 प्रतिशत है एवं सतही जल 1.16 प्रतिशत है राज्य का दो तिहाई भाग थार रेगिस्तान है।

आज विश्व में बढ़ती औद्योगिक जल की मांगों की तुलना में आपूर्ति घटती जा रही है। औद्योगिक क्षेत्र में जल संसाधन की मांगों में लगातार वृद्धि होती जा रही है लेकिन बढ़ती मांगों के अनुरूप पूर्ति नहीं हो पा रही है। औद्योगिक क्षेत्र में जलाभाव के कारण औद्योगिक इकाईयाँ बन्द होती जा रही है। आज विश्व के सामने औद्योगिक जलापूर्ति एक चुनौती बनती जा रही है। विश्व की 8 करोड़ से ज्यादा जनसंख्या के लिए जल के विभिन्न रूपों में उपयोग के नूतन परिदृष्य से स्पष्ट हुआ है कि घरेलु उपयोग केवल 8 प्रतिशत है जबकि सर्वाधिक कृषि में 70 प्रतिशत तथा उद्योगों में 22 प्रतिशत जल का उपयोग होता है। यह आंकलन हाल ही संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के विश्व जल विकास प्रतिवेदन 2003 में प्रकाशित हुआ है। अप्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्यो के उपयोग में लिए जाने वाले जल से औद्योगिक क्षेत्र जुड़ा हुआ है। औद्योगिक इकाईयों को कच्चा माल कृषि से ही प्राप्त होता है। कृषि क्षेत्र में जल की आपूर्ति में कमी से औद्योगिक विकास सीधा प्रभावित होता है, क्योंकि कच्चे माल की आपूर्ति प्रभावित होती है। यह कहा जा सकता है कि उद्योगों में जल 22 प्रतिशत प्रत्यक्ष रूप से एवं 70 प्रतिशत अप्रत्यक्ष रूप से उपयोग में लिया जाता है।

वर्तमान में उद्योगों में जल की बढ़ती मांग चिन्ता का विषय बन रही है क्योंकि विकासशील देश विकसित औद्योगिक प्रधानता वाले देशों का अनुकरण कर रहे हैं। इस प्रकार आशंका जतायी जा रही है कि जल का वर्तमान उद्योगों में उपयोग (22 प्रतिशत प्रत्यक्ष) आगामी दो दषकों में दुगुना हो जायेगा। विश्व जल विकास प्रतिवेदन 2003 के अनुसार सन् 1995 में प्रतिवर्ष 752 मिमी जल का उपयोग था जो बढ़कर सन् 2025 तक 1170 प्रतिवर्ष मिमी हो जायेगा। इसमें सर्वाधिक वृद्धि औद्योगिक क्षेत्र में होगी। भारत में औद्योगिक मांग अधिक होगी। यहाँ आज विकसित देशों की तुलना में कम है। भारत के कुछ क्षेत्रों में जल की अधिकता पाई जाती है तो ज्यादातर क्षेत्रों में जल संकट है।

भारत में हरित क्रान्ति के बाद कृषि उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई लेकिन वर्तमान तक जलाभाव के कारण स्थायीत्व हो चुका है। भारत में औद्योगिक

विकास लगातार वृद्धि की ओर अग्रसर है जिसकी मांगों के रूप में कच्चे माल की आवश्यकता बढ़ती जा रही है जिसमें कृषि उत्पादन भी प्रमुख है लेकिन कृषि उत्पादन के स्थायीत्व के कारण औद्योगिक कच्चे माल की पूर्ति नहीं हो पा रही है जो कि औद्योगिक विकास में बाधक बन रही है।

कृषि के लिए जल की नियमित एवं सुचारू आपूर्ति अत्यंत आवश्यक है। भारत एक कृषि प्रधान देशहै। भारत में जल के अभाव में ज्यादातर फसले मौसम आधारित उगाई जाती है, लेकिन भारत में मानसून की भी अनिश्चितता बनी रहती है। ज्यादातर क्षेत्रों में मानसून आधारित फसले ही ली जाती है, लेकिन मानसून की अनिश्चितता के कारण अनेक बार अकाल की स्थिति रहती है, मानसून की भी काफी असमानता रहती है। भौगोलिक दृष्टि से मानसून में काफी भिन्नता पाई जाती है। किसी क्षेत्र में अतिवृष्टि तो किसी क्षेत्र में अल्पवृष्टि पाई जाती है। इसी प्रकार वर्षाकाल के दौरान किसी महिने में अत्यधिक वर्षा तो किसी महिने में सूखा पाया जाता है।

जल संसाधन के अभाव के कारण कृषि क्षेत्र का सम्पूर्ण विकास नहीं हो पाया और एक चुनौती बना हुआ है। कृषि योग्य सम्पूर्ण क्षेत्रफल पर जल अभाव के कारण कृषि नहीं की जा रही है। राज्य का क्षेत्रफल 342.55 लाख हैक्टेयर है, जिसमें से 210.00 लाख हैक्टेयर कुल फसली क्षेत्रफल है जो राज्य का 56.12 प्रतिशत क्षेत्रफल है। 2004-05 में 210 लाख हैक्टेयर का 32.4 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल था, जबकि फसल सिंचित क्षेत्रफल 70.93 लाख हैक्टेयर था। राजस्थान में सबसे ज्यादा सिंचित क्षेत्रफल गंगानगर तथा हनुमानगढ़ जिलों में है जबकि सबसे कम जैसलमेर में है। गंगानगर एवं हनुमानगढ़ जिलों में सिंचाई के लिए इन्दिरा गांधी नहर से जलापूर्ति की जाती है जिसके कारण जल स्तर भी ऊपर है जिससे नलकूपों से सिंचाई आसानी से की जाती है। इन्दिरा गांधी नहर से बीकानेर, जैसलमेर एवं चूरू के कुछ क्षेत्रों में सिंचाई हेतु जलापूर्ति की जाती है।

राज्य के कुल कृषि योग्य क्षेत्रफल में से 66.5 प्रतिशत भाग पर ही खेती की जा रही है, शेष भूमि पर पानी व वर्षा के अभाव में कृषि नहीं हो पा रही है। राजस्थान के गंगानगर, हनुमानगढ़ जिलों को छोड़कर शेष सभी जिलों में भूमिगत जल का अत्यधिक दोहन हो रहा है। जल के दोहन में लगातार हो रही वृद्धि के कारण जल खत्म होने के कारण सिंचित कृषि क्षेत्र में लगातार कमी हो रही है जबकि जनसंख्या में लगातार वृद्धि होने के कारण खाद्यान्न की मांग बढ़ रही है यही स्थिति रही तो खाद्यान्न के लिए भी दूसरे राष्ट्रों पर निर्भरता बढ़ेगी। कृषि क्षेत्र में विकास की अपार सम्भावनाऐं है, लेकिन जल संकट बड़ी बाधा है। वर्ष 1951 में 4 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध थी जो बढ़कर 2004-05 में 70.93 लाख हैक्टेयर हो गई। 2004-05 में सिंचित कृषि का क्षेत्र बढ़कर 33.7 प्रतिशत हो गया। लेकिन 2004 -05 में भूमिगत जल से सिंचाई क्षेत्रफल में लगातार गिरावट दर्ज की जा रही है, जिसका मुख्य कारण जल का खत्म हो जाना है। आज राजस्थान की 33 प्रतिशत कृषि सिंचित क्षेत्र है तो शेष 67 प्रतिशत कृषि अब भी असिंचित है जो केवल मात्र वर्षा पर ही आधारित है लेकिन मानसून की अनिश्चितता के कारण उन पर कृषि बहुत कम और वो भी एक वर्ष में केवल एक फसलीय ही होती है। यदि वर्षा जल पुनर्भरण, पुन: चक्रण की समुचित व्यवस्था की जाती तो आज कृषि क्षेत्र में वृद्धि की जाती, न कि गिरावट और भविष्य में कृषि क्षेत्र की गिरावट को रोका जा सकता था।

कृषि प्रधान राज्य में कृषि का विकास करके आज विकसित किया जा सकता था लेकिन 67 प्रतिशत भूभाग असिंचित होने के कारण बेरोजगारी एवं मौसमी बेरोजगारी बढ़ती जा रही है। गांवो से शहरों में रोजगार के अभाव में पलायन हो रहा है। 67 प्रतिशत भूभाग पर एक वर्ष में एक फसल भी मौसम पर आधारित होती है, जिसमें मानसून की असमानता होने के कारण फसल बहुत कम वर्षो एवं कम क्षेत्रफल में ही हो पाती है। भारत में औसत वर्षा 120 से.मी. है लेकिन राज्य में औसत वर्षा 53 प्रतिशत से भी कम है और उत्तारी पश्चिमी भागों में बहुत कम है जहाँ औसत 10 से.मी. से 50 से.मी. के मध्य पाया जाता है। अत: राज्य में समुचित सिंचाई की सुविधाओं के अभाव में कृषि का वांछित विकास असम्भव है जिसका मुख्य कारण गहराता जल संकट है। यदि इसी गति से जल संसाधन का दोहन एवं प्रदूषित होता रहेगा तो भविष्य में उद्योगों के लिए जल की आपूर्ति एक चुनौती बन जायेगी और जल के अभाव में औद्योगिक विकास ठप हो जायेगा। औद्योगिक क्षेत्र में जल की भावी मांग को देखते हुऐ अभी से समुचित प्रयास शुरू किये जाने चाहिए ताकि मांग की आपूर्ति सुनिश्चित की जा सके एवं औद्योगिक विकास को गति प्रदान की जा सके।जल-ग्रहण प्रबंधन से तात्पर्य यह है कि धरती पर गिरने वाली वर्षा जल की प्रत्येक बूँद के लिए ऐसी संरचनायें एवं श्रृंखलायें तैयार की जाये कि जल 10 मीटर से आगे न बह पाये और इसे धरती में अवषोषित कर लिया जाये। जलग्रहण का सिद्धान्त है कि पानी दौड़े नहीं, चले नहीं, बल्कि रेगें और अन्तत: रूककर जमीन की गहराईयों में समा जाये जिसे सूरज की रोषनी भी उड़ा न सके।

भारत में विश्व का केवल 5 प्रतिशत जल पाया जाता है जबकि विश्व की 17.5 प्रतिशत जनसंख्या भारत में निवास करती है। भारत में विश्व के धरातलीय क्षेत्र का लगभग 2.45 प्रतिशत जल है। देश में एक वर्ष में वर्षण से प्राप्त कुल जल की मात्रा लगभग 4,000 घन किमी है। धरातलीय जल और पुन: पूर्ति योग्य जल से 1,869 घन किमी उपलब्ध है। इसमें से केवल 60 प्रतिशत जल का लाभ उपयोग में किया जा सकता है। इस प्रकार देश में कुल उपयोगी जल संसाधन 1,222 घन किमी है। भारत में समुचित जल प्रबन्ध के अभाव में सदावाहिनी नदियों का जल समुद्र में जाकर गिरता है एवं समुद्र का जल स्तर बढ़ता है जो कि विश्व समुदाय के लिए एक खतरा है। भारत में एक तरफ जहाँ नदियों के बहाव क्षेत्रों में वर्षाकाल में अत्यधिक जल बहाव के कारण जम्मु एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, उतराखण्ड सहित कई राज्यों में बाढ़ की स्थिति पैदा होती है जहाँ काफी जान माल का नुकसान होता है एवं हजारों करोड़ रूपये बाढ़ से निपटने के लिए खर्च किये जाते हैं। जबकि दूसरी तरफ राजस्थान, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, गुजरात, कर्नाटक सहित काफी राज्य जल संकट से जूझ रहे हैं। जल प्रबन्ध के अभाव के कारण जल संकट के लिए भी देश को जूझना पड़ रहा है तो अत्यधिक जल के कारण भी। भारत में 1.6 किमी लम्बाई की लगभग 10360 नदियाँ है जिनमें औसत वार्षिक प्रवाह 1869 घन किलोमीटर है इनके प्रबन्ध के अभाव में नदियों का पानी जाकर समुद्र में गिरता है।

जल ग्रहण प्रबंधन से तात्पर्य मुख्य रूप से धरातलीय और भौम जल संसाधनों के दक्ष प्रबंधन से है। इसके अन्तर्गत बहते जल को रोकना और विभिन्न विधियों जैसे - अंत:स्रवण तालाब, पुनर्भरण कुओं आदि के द्वारा भौम जल का संचयन और पुनर्भरण शामिल हैं। तथापि विस्तृत अर्थ में जल ग्रहण प्रबंधन के अंतर्गत सभी प्राकृतिक संसाधनों जैसे - भूमि, जल, पौधे और प्राणियों और जल ग्रहण सहित मानवीय संसाधनों के संरक्षण, पुनरूत्पादन और विवेकपूर्ण उपयोग को सम्मिलित किया जाता है। जल ग्रहण प्रबंधन का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों और समाज के बीच संतुलन

लाना है। जल ग्रहण व्यवस्था की सफलता मुख्य रूप से सम्प्रदाय के सहयोग पर निर्भर करती है।

केन्द्रीय और राज्य सरकारों ने देश में बहुत से जल ग्रहण विकास और प्रबंधन कार्यक्रम चलाए है। इनमें से कुछ गैर सरकारी संगठनों द्वारा भी चलाए जा रहे हैं। 'हरियाली' केन्द्र सरकार द्वारा प्रवर्तित 'जल ग्रहण विकास परियोजना' है जिसका उद्देश्य ग्रामीण जनसँख्या को पीने, सिंचाई, मत्स्य पालन और वन रोपण के लिए जल संरक्षण के लिए योग्य बनाना है। परियोजना लोगों के सहयोग से ग्राम पंचायतों द्वारा निष्पादित की जा रही है। नीरू–मीरू, जल और आप कार्यक्रम आध्र प्रदेश में और अरवारी पानी संसद। अलवर राजस्थान के अन्तर्गत लोगों के सहयोग से विभिन्न जल संग्रहण संरचनाएँ जैसे – अंत:स्रवण तालाब ताल जोहड़ की खुदाई की गई है और रोक बाँध बनाए गए हैं। तमिलनाडु के घरों में जल संग्रहण संरचना को बनाना आवश्यक कर दिया गया है।

जल ग्रहण की सबसे बड़ी उपयोगिता तब है, जब इसे बहुत ही सूक्ष्मता, धैर्य और विवेक के साथ इसे लागू किया जाए तो नतीजा यह निकलना चाहिए कि बरसात में नदी नाले या तो बहें ही नहीं या बहुत धीमें बहें। सालभर भीषण गर्मी में जल की उपलब्धता बनी रहे। पानी के अलावा जलग्रहण में वहां के व्यक्तियों को संगठित करना एक महत्वपूर्ण कार्य है। एक अच्छे जलग्रहण में सीमेन्ट और लोहे का कोई काम नहीं है, सिर्फ श्रम ही पर्याप्त है। अर्थात 'हींग लगे न फिटकरी रंग दिखे चोखा'। सामाजिक एवं आर्थिक रूप से एक अच्छे जलग्रहण का मापदंड है संगठित एवं सहयोगी समाज का उद्भव व औसत आय में कम से कम सौ प्रतिशत की वृद्धि। यह आदर्ष जलग्रहण कार्य की पराकाष्ठा है यही उसकी परिणति है।

भारत में वर्षा एवं नदियों से जलग्रहण किया जा सकता है यदि नदियों के जल का उपयोग या जलग्रहण किया जायें तो जल संकट को काफी हद तक समाप्त किया जा सकता है। भारत में वर्षा में अत्यधिक स्थानीय भिन्नता पायी जाती है और मुख्य रूप से मानसूनी मौसम संकेन्द्रित है। भारत में कुछ नदियों से जलग्रहण वर्षा की अपेक्षा अधिक किया जा सकता है। ये नदियाँ देश के कुल क्षेत्रफल के एक तिहाई भाग पर पायी जाती है, इन नदियों को सूखे क्षेत्र में मोड़कर कृषि, औद्योगिक एवं पेयजल की आपूर्ति की जा सकती है। नदियों से जलग्रहण के लिये नदियों को नहरी तन्त्र में बदलकर नहरों के अंतिम छोर पर खुले जालीदार बोरवेल बनाकर भूमि में 100 से 150 फिट गहरे शैलछिद्रों में पानी छोड़कर जलग्रहण किया जा सकता है। इसी प्रकार वर्षा जल संग्रहण विभिन्न उपयोगों के लिए वर्षा के जल को रोकने और एकत्र करने की विधि है। इसका उपयोग भूमिगत जलभृतों के पुनर्भरण के लिए भी किया जाता है। यह एक कम मूल्य और पारिस्थितिकी अनुकूल विधि है जिसके द्वारा पानी की प्रत्येक बूँद संरक्षित करने के लिए वर्षा जल को नलकूपों, गड्ढ़ों और कुओं में एकत्र किया जाता है। वर्षा जल संग्रहण पानी की उपलब्धता को बढ़ाता है, भूमिगत जल स्तर को नीचा होने से रोकता है, फ्लुओराइड और नाइट्रेट्स जैसे संदूषकों को कम करके अवमिश्रण भूमिगत जल की गुणवत्ता बढ़ाता है। मृदा अपरदन और बाढ़ को रोकता है और यदि इसे जलभृतों के पुनर्भरण के लिए उपयोग किया जाता है तो तटीय क्षेत्रों में लवणीय जल के प्रवेश को रोकता है।

देश में विभिन्न समुदाय लम्बें समय से अनेक विधियों से वर्षाजल संग्रहण करते आ रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में परंपरागत वर्षा जल संग्रहण सतह संचयन जलाष्यों जैसे –झीलों, तालाबों, सिंचाई तालाबों आदि में किया जाता है। राजस्थान में वर्षा जल संग्रहण ढाँचे जिन्हें कुंड अथवा टाँका, एक ढका हुआ भूमिगत टंकी के नाम से जानी जाती है जिनका निर्माण गाँव के पास या घर में संग्रहित वर्षा जल को एकत्र करने के लिए किया जाता है।

भारत में उचित जल प्रबन्ध करके जहाँ एक तरफ बाढ़ से बचा जा सकता है वहीं दूसरी तरफ सूखा से बचा जा सकता है। भारत में पर्याप्त जल भण्डार तो नहीं है लेकिन यदि वर्षा एवं नदियों के जल का व्यावहारिक रूप में वितरण एवं जलग्रहण किया जाये तो सूखे की स्थिति से निपटा जा सकता हैं। भविष्य में जल संकट की स्थिति को देखते हुऐ सरकार एवं आमजन को निश्चित रूप से जल की एक–एक बूंद को बचाने के लिए संयुक्त रूप से प्रयास करने होगें।

जल संरक्षण एवं जल पुनर्भरण प्रयासो के अन्तर्गत विभिन्न तरीकों से जल संरक्षण एवं पुनर्भरण किया जा सकता है:–

वर्षा जल से जल संरक्षण एवं पुनर्भरण – वर्षाकाल में ऐसे जिले जहाँ पर्याप्त वर्षा होती है। राजस्थान के रेगिस्तान को छोड़कर शेष भागों में सामान्य वर्षा होती है एवं कई जिलों में तो सामान्य से ज्यादा वर्षा होती है। केवल कुछ जिलों में ही वर्षा की स्थिति खराब होती है शेष जिलों में वर्षा जल से पुनर्भरण किया जा सकता है, वर्षा के दौरान जल का पुनर्भरण निर्मित मकानों की छतों से जिसमें घर, कार्यालय, संस्था आदि सभी के मकानों की छतों से वर्षा के पानी की पाईप लाईन द्वारा सोखते कुओं का निर्माण करके पुनर्भरण किया जा सकता है एवं जहाँ पर भूमिगत जल खारा है वहां पर कुण्डों का निर्माण क्षमता के अनुसार करके पानी का संरक्षण किया जा सकता है। जो कि पेयजल के काम में लिया जा कर पेयजल की समस्या को कम किया जा सकता है लेकिन इन कार्यो को सरकार और जनता दोनो के सहयोग से ही पूरा किया जा सकता है।

सरकार द्वारा योजना बनाये जाने के अभाव में इन कार्य को सफल नहीं बनाया जा सकता। सरकार द्वारा योजना बनाकर एवं विभागीय तौर पर जैसे पेयजल योजना संचालित कर रही है उसी प्रकार लगातार योजना का संचालन व प्रबन्ध करके वर्षा के घरों से बहने वाले सम्पूर्ण जल का पुनर्भरण किया जा सकता है। इस योजना को केवल मात्र सोखते कुओं या कुण्डों का निर्माण करने से ही जल का पुनर्भरण नहीं किया जा सकता बल्कि लगातार प्रबन्ध व संचालन की आवश्यकता है। जिस प्रकार पेयजल आपूर्ति की प्रतिदिन निगरानी की जाती है उसी प्रकार वर्षा से जल पुनर्भरण व संरक्षण की प्रति वर्षा निगरानी की आवश्यकता होगी इस प्रयास से जहाँ मकानों की छतों से व्यर्थ बहने वाले सम्पूर्ण जल का संरक्षण व पुनर्भरण किया जा सकता है।

वर्षा के दौरान गाँव एवं शहरों की नालियों से बहने वाले सम्पूर्ण जल का पुनर्भरण किया जा सकता है। वर्षा से गाँव एवं शहरों की सड़कों, गलियों एवं रास्तों से पानी बहकर बेकार जाता है और उसका वाष्पीकरण हो जाता है। इस प्रकार गाँव एवं शहर के रास्तों, गलियों से वर्षा में जहाँ पानी बहकर एकत्रित होता है वहाँ नालियों के माध्यम से पानी को सोखतें कुओं में छोड़कर सम्पूर्ण जल का पुनर्भरण किया जा सकता है। जिससे वर्षा के दौरान बहने वाले बेकार जल का पुनर्भरण करके जल स्तर को सुधारा जा सकता है।

आज देश एवं प्रदेश में सड़कों का जाल बिछा हुआ है। वर्षाकाल में वर्षा से सड़कों को भारी क्षति पहुँचती है ओर सड़के टूट जाती है ऐसा वर्षा का पानी सड़कों पर भरने से होता है यहां तक कि कहीं तो सड़के अवरूद्ध हो जाती है जिससे आवागमन बाधित हो जाता है।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

वर्षा जल के पुनर्भरण के लिए उचित प्रबन्ध के अभाव में ऐसा हो रहा है कि एक तरफ वर्षा से सड़कों को नुकसान होता है तो दूसरी तरफ वर्षा का शुद्ध अमूल्य जल बहकर बेकार जाता है और उनका वाष्पीकरण हो जाता है जबकि दूसरी तरफ जल संकट है।

सड़कों से बहने वाले सम्पूर्ण जल का पुनर्भरण करके काफी हद तक जल संकट को खत्म किया जा सकता है। दूसरी और सड़कों को टूटने से भी बचाया जा सकता है। इस प्रकार दोहरे लाभ प्राप्त किये जा सकते है एवं जल के पुनर्भरण पर आने वाले खर्चे को भी सड़कों के टूटने पर आने वाले खर्चे में समायोजन किया जा सकता है।

सड़कों से जल पुनर्भरण करने के लिए सड़कों के दोनों और नालियों का निर्माण करके एवं सोखतें कुओं का निर्माण करके वर्षा से बहने वाले सम्पूर्ण जल का पुनर्भरण किया जा सकता है। सड़कों के दोनों ओर नालियों का निर्माण व सोखतें कुओं के निर्माण पर आने वाले बजट को नरेगा एवं सड़को की मरम्मत व पुन: निर्माण पर आने वाले खर्चे को भी समायोजित किया जा सकता है क्योंकि सड़के ज्यादातर पानी के भराव से ही टूटती है और बार – बार मरम्मत करने पर काफी खर्चा आता है। दूसरी तरफ नरेगा से जोहड़ खुदाई व रास्तों की कटाई जैसे कार्य करवाये जाते है इसलिए नरेगा के तहत जल पुनर्भरण कार्य को करवाया जाना चाहिए ताकि दोहरे लाभ प्राप्त किये जा सके ताकि एक तरफ तो जल पुनर्भरण पर आने वाले खर्चे की लेबर राशि को समायोजित करने पर बजट कम खर्च करना पड़ेगा और दूसरी तरफ नरेगा के तहत रोजगार मिलता रहेगा।

अत: सारांश रूप से कहा जा सकता है कि जल एक अविकल्पनीय प्राकृतिक संसाधन है जिसका कोई भी विकल्प भविष्य में नहीं हो सकता है। और न ही जल संसाधन में वृद्धि की जा सकती है। इसलिए जल संसाधन की भावी मांग एवं आपूर्ति को ध्यान में रखकर जल संसाधन योजनाओं का निर्माण करके जल संसाधन की अपव्यय, पुन:चक्रण, संरक्षण एवं पुनर्भरण की समुचित व्यवस्था की जाने की तत्काल आवश्यकता है। वर्तमान में जल संसाधन के आपूर्ति, संरक्षण एवं पुनर्भरण के लिए संचालित योजनाओं से कोई प्रभावकारी सकारात्मक परिणाम प्राप्त नहीं आये है और यदि यहीं गति एवं इस प्रकार ही जल संसाधन योजनाऐं संचालित रही तो आने वाले समय में जल संकट के समाधान के रास्ते नजर नहीं आयेगें। भावी जल संकट की स्थिति को देखकर ही जल संसाधन का उपयोग किये जाने की आवश्यकता है। ताकि भविष्य के लिए जल संसाधन के भण्डार सुरक्षित किये जा सके। जैसे आज विश्व स्तर पर जल संकट को प्रमुखता से लिया गया है और अनेक योजनाओं का विभिन्न स्तरों पर निर्माण किया जाने लगा है।

जल अधिग्रहण योजनाओं की व्यावहारिकता– जल अधिग्रहण योजनाओं शोध क्षेत्र की व्यावहारिकता की स्थिति स्पष्ट होती है जिससे भविष्य में योजनाओं में परिवर्तन करके परिणाम प्राप्त किये जा सकते है एवं व्यावहारिकता की उपयुक्तता के आधार पर नई नई योजनाऐं शुरू की जा सकती है। जल संसाधन की प्रत्येक बूँद–बूँद का संरक्षण एवं पुनर्भरण तथा जल के पुन: चक्रित उपयोग के लिए नई योजनाऐं शुरू करने, वर्तमान योजनाओं को अन्य योजनाओं यथा मनरेगा, सार्वजनिक निर्माण विभाग एवं जनस्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग द्वारा समायोजित करके कार्य में गति प्रदान की जा सकती है।

जल अधिग्रहण योजनाओं का अन्य योजनाओं में समायोजन करने से भविष्य में जल संसाधन योजनाओं पर आने वाले आर्थिक भार में कमी आयेगी तथा परिणाम ज्यादा प्राप्त होगें। भविष्य में जल के संरक्षण एवं पुनर्भरण पर शोध किया जाना व्यावहारिक होगा।

जल संसाधन के पुनर्भरण एवं संरक्षण के लिए वर्तमान में संचालित योजनाओं के सकारात्मक परिणाम नहीं आये है और यदि यही व्यवस्था एवं योजनाओं के संचालन का तरीका रहा तो परिणाम प्राप्ति की ज्यादा अच्छी सम्भावना नहीं है। सरकार द्वारा इस क्षेत्र में काफी योजनाऐं शुरू की गई है एवं काफी योजनाओं की प्रोजेक्ट रिपोर्ट तैयार की जा रही है जो भविष्य में शुरू की जानी है। जल संसाधन के संरक्षण एवं पुनर्भरण के लिए सरकार द्वारा जन जागृति अभियान चलायें जा रहे हैं। जिससे समाज में जल के उपयोग, पुनर्भरण एवं संरक्षण के प्रति जागृति आ रही है आषा है कि भविष्य में इससे अच्छे परिणाम प्राप्त होगें, राज्य सरकार द्वारा ग्राम पंचायत स्तर से भी कई योजनायें संचालित की जा रही है। काफी योजनाओं का प्रचार प्रसार ग्राम पंचायतों द्वारा किया जा रहा है जिसके भविष्य में सकारात्मक परिणाम आने की उम्मीद है।

निष्कर्ष– आज समय की मांग है कि तेजी से कम होते संसाधनों को संरक्षित एवं पुनर्जीवित किया जायें। उपलब्ध संसाधनों को पुनर्जीवित करना उनको संरक्षित किये बिना कठिन है। सरंक्षण की प्रक्रिया का प्रांरम्भ संसाधनों, भूमि एवं जल के बेहतर प्रबन्धन से होता है। भूमि एवं जल संरक्षण परस्पर जुडे हुऐ हैं, व इनका यह सम्बन्ध जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। इनको संरक्षित करने के लिए सर्वाधिक उपर्युक्त तरीका यह होगा कि हम अपने प्रयासों को एक सीमित क्षेत्र के अन्दर केन्द्रित करें। प्राथमिक संसाधनों के परस्पर सुधार लाने व इसके उचित प्रबन्ध हेतु भूमि एवं जल के द्वारा निर्धारित क्षेत्र में जलअधिग्रहण कार्य करना ही सर्वाधिक उपयुक्त है। जलअधिग्रहण क्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत होने वाली विभिन्न प्रक्रियाएँ उपलब्ध संसाधनों के ऊपर प्रभाव डालती हैं। किसी भी विकास प्रक्रिया का टिकाऊ (पोषणीय) होना संसाधनों के परस्पर सम्बन्धों को गहराई से समझने व परिस्थितियों के अनुरूप कार्य करने पर निर्भर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मिश्र अनुपम (1995) : 'राजस्थान की रजत बूँदे' पर्यावरण कक्ष गाँधी शान्ति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली।
2. डॉ. स्नेह साईवाल (2015) 'राजस्थान का भूगोल' प्रकाशक–कॉलेज बुक हाउस, चौड़ा रास्ता, जयपुर।
3. डॉ. धर्मेन्द्र सिंह (2012) 'जल संरक्षण – आवश्यकता एवं उपाय', प्रकाशक–श्री गिर्राज प्रकाशन, राम भवन चौड़ा रास्ता, जयपुर।
4. Chris Baroow - "Water Resources and Agricultural Development in the Tropice''नामक पुस्तक में उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र में जल एवं कृषि क्षेत्रों पर विशेष चर्चा की गई है।
5. एस. सी महनोत, पी. के सिंह एवं संजय मोटी ने 'Watershed Approches in Improving The Socio-economic States of Trible Area' में जल ग्रहण विकास द्वारा राज्य के जनजातीय भागों में जीवन सुधार पर अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।
6. डॉ. बी. सी. जाट ने 'Water Resource Geography'में जल संसाधन पर विशेष विवेचना की गई है।
7. गुरचरन सिंह एवं जगदीश सिंह के 'जल सम्भरण, सफाई एवं पर्यावरण इंजीनियरी' में जल संसाधन के स्त्रोत एवं उपयोग का विशेष अध्ययन किया गया है।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

निशा यादव* डॉ. कल्पना शर्मा**

* शोधार्थी, शासकीय क.रा.क. महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** विभागध्यक्ष, जे.सी. मिल कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना –परिवार बच्चों की प्रथम पाठशाला होती है और माता उसकी प्रथम गुरू। जन्म के पश्चात् बच्चे खाना-पीना, हँसना-बोलना, चलना-फिरना, खेलना-कूदना, पढ़ना-लिखना आदि समस्त गतिविधियाँ परिवार में ही सीखते हैं। घर में ही बालक बालिकाओं का शारीरिक, मानसिक, क्रियात्मक, संवेगात्मक, भाषा व सामाजिक विकास होता है। वे विभिन्न परिस्थितियों में समायोजन करना सीखते हैं। माता पिता व परिवार के सदस्यों की आदतें, उनके निर्णय लेने के तरीके व अन्य लोगों के प्रति उनका आचरण आदि नैतिक मूल्यों की शिक्षा देते हैं। घरेलू महिलाएँ अपने बच्चों के सम्पर्क में अधिक रहती हैं इसलिये बच्चों के आचरण व नैतिक मूल्यों पर उनका प्रभाव अधिक पड़ता है। प्रत्येक कार्य, निर्णय में वे उनकी मदद लेते हैं। कामकाजी महिलाओं 6-8 घंटे लगभग घर से बाहर रहना पड़ता है। इसलिए उनके बच्चे परिवार के अन्य सदस्य व आया के सम्पर्क में अधिक रहते हैं। माता की अनुपस्थिति बच्चों को अपने कार्य स्वयं करने तथा निर्णय स्वयं लेने के लिये प्रेरित करती है। अधिक आवश्यकता पड़ने पर ही बच्चे परिवार के अन्य सदस्यों से मदद लेते हैं। इस प्रकार घरेलू महिलाओं के बच्चों की तुलना में कामकाजी महिलाओं के बच्चे जल्दी आत्मनिर्भर होने लगते हैं। उन्हें निर्णय लेने, समायोजन करने के अवसर अधिक मिलते हैं। वे प्रयास व भूल से बहुत कुछ स्वयं ही अनुभव प्राप्त कर लेते हैं।

बड़े होने के साथ-साथ बच्चे पास-पड़ौस में जाने लगते हैं। उनका प्रवेश विद्यालय में हो जाता है। इस प्रकार उनका परिचय मित्रमंडली, रिश्तेदारों, पड़ौसियों तथा शिक्षकों से होता है। इन सभी के आचार-विचार तथा मूल्यों का प्रभाव बच्चों पर पड़ने लगता है। इस प्रकार परिवार, समाज व विद्यालय का वातावरण व सम्पर्क में आने वाले लोगों के प्रभाव से बच्चे अपने नैतिक मूल्यों का सृजन करते हैं या उनके मूल्यों का अनुसरण करते हैं। घरेलू माताओं तथा कामकाजी माताओं के बच्चों को मिलने वाले वातावरण, सहयोग, अवसर, प्रशिक्षण में भिन्नता रहती है। दोनों प्रकार की महिलाओं के बच्चों के नैतिक मूल्यों में क्या अंतर है यह ज्ञात करने के लिये मैंने अपने शोध का विषय - 'घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन' चुना है।

उद्देश्य- मैंने अपने शोध कार्य हेतु निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं-

1. घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
2. कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
3. घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ – मैंने अपने शोध कार्य हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्मित की हैं-

1. घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।
2. कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।
3. घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

शोध प्रविधि- शोध अध्ययन हेतु ग्वालियर शहर की 150 घरेलू एवं 150 कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं का चयन सवविचार निदर्शन विधि से किया गया। तथ्यों का संकलन स्वनिर्मित प्रश्नावली के माध्यम से किया गया। सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु माध्य, मानक विचलन, टी-परीक्षण का उपयोग किया गया। प्राप्त परिणामों के आधार पर प्रामाणित निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

तथ्यों का वर्गीकरण- तथ्यों के वर्गीकरण को तालिका क्रमांक एक से तालिका क्रमांक छः तक में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका क्रमांक - 1: घरेलू महिलाओं के बालक-बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर

स्तर	बालक		बालिकाएँ		योग	
	संख्या	प्रति.	संख्या	प्रति.	संख्या	प्रति.
उच्च	26	17.33	25	16.66	51	34.00
मध्यम	19	12.66	22	14.66	41	27.33
निम्न	30	20.00	28	18.66	58	38.66
योग	75	50.0	75	50.0	150	100.0

तालिका क्रमांक - 1 में घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर प्रदर्शित किया गया है। तालिका से स्पष्ट होता है कि 26(17.33%) बालक तथा 25(16.66%) बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर उच्च पाया गया है। मध्यम स्तर के नैतिक मूल्यों वाले बालक बालिकाओं में 19(12.66%) बालक तथा 22(14.66%) बालिकाएँ हैं। निम्न स्तर के नैतिक मूल्य अपनाने वाले बालकों की संख्या 30(20.0%)

तथा बालिकाओं की 28(18.66%) पाई गई है।

इस प्रकार घरेलू महिलाओं के 51(34.0%) बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर उच्च, 41(27.33%) का मध्यम तथा 58(38.66%) का निम्न पाया गया है। उच्च नैतिक मूल्यों के स्तर में बालक बालिकाओं की संख्या में मामूली अंतर पाया गया है। बालकों की संख्या बालिकाओं की तुलना में अधिक है तथा मध्यम स्तर में बालिकाओं की संख्या बालकों की तुलना में अधिक पाई गई है। निम्न स्तर के मूल्यों को अपनाने में भी बालकों की संख्या बालिकाओं की तुलना में अधिक है।

तालिका क्रमांक – 2: कामकाजी महिलाओं के बालक–बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर

स्तर	बालक		बालिकाएँ		योग	
	संख्या	प्रति.	संख्या	प्रति.	संख्या	प्रति.
उच्च	28	18.66	39	26.00	67	44.66
मध्यम	27	18.00	27	18.00	54	36.00
निम्न	20	13.33	09	06.00	29	19.33
योग	75	50.0	75	50.0	150	100.0

तालिका क्रमांक – 2 में कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर प्रदर्शित किया गया है। तालिका से स्पष्ट है कि 28(18.66%) बालकों के मूल्यों का स्तर उच्च है जो कि उच्च स्तर के मूल्यों वाली बालिकाओं की संख्या 39(26.0%) की तुलना में कम है। मध्यम स्तर के मूल्यों वाले बालक बालिकाओं की संख्या एक समान अर्थात् 27(18.0%), 27(18.0%) पाई गई है। निम्न स्तर के मूल्यों के श्रेणी में 20(13.33%) बालक तथा 09(6.0%) बालिकाएँ हैं। अत: बालकों की संख्या बालिकाओं की तुलना में अत्यधिक है। सम्पूर्ण तालिका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि 67(44.66%) बालक बालिकाओं के मूल्यों का स्तर उच्च, 54(36.0%) का मध्यम तथा 29(19.33%) का निम्न पाया गया है। इस प्रकार उच्च स्तर के मूल्यों वाले बालक बालिकाओं की संख्या सर्वाधिक तथा निम्न स्तर के मूल्यों वाले बालक बालिकाओं की संख्या न्यूनतम पाई गई है। यद्यपि उच्च स्तर की श्रेणी में बालिकाओं तथा निम्न स्तर की श्रेणी में बालकों की संख्या अधिक है।

तालिका क्रमांक – 3: घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर

स्तर	घरेलू महिलाएँ		कामकाजी महिलाएँ		योग	
	संख्या	प्रति.	संख्या	प्रति.	संख्या	प्रति.
उच्च	51	17.00	67	22.33	118	39.33
मध्यम	41	13.66	54	18.00	95	31.66
निम्न	58	19.33	29	09.66	87	29.00
योग	150	50.0	150	50.0	300	100.0

तालिका क्रमांक – 3 में घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक स्तर प्रदर्शित किया गया हैं तालिका से स्पष्ट होता है कि घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं 51(17.0%) के नैतिक मूल्यों का स्तर उच्च, 41(13.66%) का मध्यम तथा 58(19.33%) का निम्न पाया गया है। कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं में 67(22.33%) के नैतिक मूल्यों का स्तर उच्च, 54(18.0%) का मध्यम व 29(9.66%) का निम्न पाया गया है। घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के मूल्यों के स्तर का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 118(39.33%) का स्तर उच्च, 95(31.66%) का मध्यम व 87(29.0%) का निम्न पाया गया है। इस प्रकार मूल्यों के उच्च स्तर के बालक बालिकाओं की संख्या सर्वाधिक तथा निम्न स्तर की न्यूनतम है। यद्यपि कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं की संख्या 67(22.33%) उच्च मूल्यों के स्तर में घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं की तुलना में अधिक है तथा मूल्यों के निम्न स्तर की श्रेणी में घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं की संख्या कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं की तुलना में अधिक है।

तालिका क्रमांक – 4: घरेलू महिलाओं के बालक एवं बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर के अंतर की सार्थकता हेतु टी–परीक्षण तालिका

लिंग	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्र्यांश	टी–परीक्षण का मूल्य	सार्थकता स्तर
बालक (N=75)	1.95	0.87	298	0.0953	p>0.05
बालिकाएँ (N=75)	1.96	0.85			

*0.05 तर पर सार्थक

तालिका क्रमांक – 4 में घरेलू महिलाओं के बालक एवं बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर के मध्यमान , मानक विचलन एवं टी–परीक्षण का मूल्य प्रदर्शित किया गया है। तालिका दर्शाती है कि घरेलू महिलाओं के बालकों के नैतिक मूल्यों के स्तर का मध्यमान 1.95 है तथा बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर का मध्यमान 1.96 है। तालिका दर्शाती है कि टी–परीक्षण का परिगणित मूल्य 0.0953 है। जो कि 0.05 स्तर पर असार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना– 'घरेलू महिलाओं के बालक एवं बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा' स्वीकृत होती है। बालक एवं बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक का अंतर नहीं पाया गया।

तालिका क्रमांक – 5: कामकाजी महिलाओं के बालक एवं बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर के अंतर की सार्थकता हेतु टी–परीक्षण तालिका

लिंग	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्र्यांश	टी–परीक्षण का मूल्य	सार्थकता स्तर
बालक (N=75)	2.11	0.80	298	2.39	p<0.05
बालिकाएँ (N=75)	2.40	0.70			

*0.05 तर पर सार्थक

तालिका क्रमांक – 5 में कामकाजी महिलाओं के बालक एवं बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–परीक्षण का मूल्य प्रदर्शित किया गया है। तालिका दर्शाती है कि कामकाजी महिलाओं के बालकों के नैतिक मूल्यों के स्तर का मध्यमान 2.11 है तथा बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर का मध्यमान 2.40 है। तालिका दर्शाती है कि टी–परीक्षण का परिगणित मूल्य 2.39 है। जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना– 'कामकाजी महिलाओं के बालक एवं बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा' अस्वीकृत होती है। बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक का अंतर पाया गया। बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर बालकों की तुलना में उच्च पाया गया। क्योंकि बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर का मध्यमान बालकों के मध्यमान

की तुलना में अत्यधिाक है।

तालिका क्रमांक - 6: घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर के अंतर की सार्थकता हेतु टी-परीक्षण तालिका

महिलाएँ	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्र्यांश	टी-परीक्षण का मूल्य	सार्थकता स्तर
घरेल (N=150)	1.95	0.85	298	-2.211	p<0.05
कामकाजी (N=150)	2.25	0.76			

*0.05 तर पर सार्थक

तालिका क्रमांक - 6 में घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-परीक्षण का मूल्य प्रदर्शित किया गया है। तालिका दर्शाती है कि घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर का मध्यमान 1.95 है तथा कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर का माध्यम 2.25 है। तालिका दर्शाती है कि टी-परीक्षण का परिगणित मूल्य -2.211 है जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना- 'घरेलू एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा' अस्वीकृत होती है। बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक का अंतर पाया गया। बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर बालकों की तुलना में उत्ताम पाया गया क्योंकि बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर का मध्यमान बालकों के मध्यमान की तुलना में अत्यधिाक है।

परिणाम - शोध अध्ययन के निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुये हैं-

1. घरेलू महिलाओं की बलिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर बालकों के नैतिक मूल्यों के स्तर की तुलना में मामूली अधिक पाया गया।
2. कामकाजी महिलाओं की बालिकाओं के नैतिक मूल्यों का स्तर बालकों के नैतिक मूल्यों के स्तर की तुलना में उच्च पाया गया।
3. कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं केनैतिक मूल्यों का स्तर घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों के स्तर की तुलना में उच्च पाया गया।
4. घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।
5. कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।
6. घरेलू महिलाओं एवं कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्यों में सार्थक अंतर पाया गया। कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के नैतिक मूल्य घरेलू मलिाओं के बालक बालिकाओं की तुलना में उच्च पाये गये।

निष्कर्ष- बालकाओं के मूल्य बालकों के मूल्यों की तुलना में उच्च स्तर के होते हैं। कामकाजी महिलाओं के बालक बालिकाओं के मूल्य घरेलू महिलाओं के बालक बालिकाओं की तुलना में उच्च स्तर के होते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. बर्मन, गायत्री 'किशोरावस्था' शिवा प्रकाशन इन्दौर।
2. कपूर, प्रमिला, 'भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ' राजकमल प्रकाशन 1976।
3. कुप्पूस्वामी, बी. 'बाल व्र्र्र्र्र्र्र्र्र्र्रवहार और विकास' विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि. कानपुर।
4. भटनागर, सुरेश 'बाल विकास एवं बाल मनोविज्ञान' इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
5. सलूजा तथा सलूजा 'कामाकजी महिलाएँ' पुस्तक महल, दिल्ली।
6. वर्मा प्रीति तथा श्रीवास्तव डी.एन. 'बाल मनोविज्ञान बाल विकास' विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।

****

Impact of Ferric Chloride and Fenton Reagent on Photocatalytic Decoloration of Azure B dye.

Dr. David Swami*

***Department of Chemistry PM College of Excellence SBN Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) INDIA**

Abstract : The present paper deals with the Study of Photocatalytic degradation of Azure B dye in aqueous suspension of TiO_2 Particles. Photocatalytic degradation of Azure B dye have been studied with the help of variety of parameters which are Effect of $Fecl_3$ and Fenton Reagent. The effect of $Fecl_3$ and Fenton Reagent on the rate of degradation was investigated. Result demonstrated that TiO_2 in the presence of visible irradiation can effectively degrade Azure B dye. The addition of $Fecl_3$ and Fenton regents had an important influence on the processes of the photocatalytic degradation of the dye.

Keywords : Degradation, Azure B, $Fecl_3$, Fenton Reagents, Visible, TiO_2.

Introduction - Interest in the application of titanium oxide in different fields has increased rapidly in recent years. Photocatalytic processes, Which had been reported as the pioneering work for the first time in 1972. (1) Purification of wastewater contaminated with these pollutants is very difficult since they are resistant to conventional treatment techniques. Advances oxidation processes are based on the production of highly reactive hydroxyl radicals that oxidizes a broad range of organic pollutants quickly and non selectively.(2) The mechanism of the photo assisted degradation of dyes under visible radiation follows different pathway compared to UV radiation. Electrons of dyes are exited by visible light to singlet and triplet states followed by electron injection from the exited dye to the conduction band of the catalyst TiO_2, Which plays as an electron transfer mediator. The cation radicals of the dye are formed and the transferred electron to TiO_2 band reacts with the Pre adsorbed O_2 from with the air to from oxidizing radical species like O_2 and OH radicals which start photoxidation of the dye. (3) Advanced oxidation method allows the complete degradation of organic pollutants to CO_2 and inorganic acids.

Experimental: Azure B was obtained from Loba Chemie. Photo catalyst TiO_2 was obtained from the S.D. Fine Company. All Solutions were prepared in doubly distilled water. Photo catalytic experiments were carried out with 50 ml of dye solution (3.8x10-5 mol dm-3) using 300mg of TiO_2 photo catalytic under exposure to visible irradiation in specially designed double-walled slurry type batch reactor vessel made up of Pyrex glass (7.5 cm height, 6 cm diameter) surrounded by thermostatic water circulation arrangement to keep the temperature in the range of 30$\pm$0.3.c. Irradiation was carried out using 500 w halogen lamp surrounded by aluminum reflector to avoid irradiation loss. During photo catalytic experiments after stirring for 10 min slurry composed of dye solution and catalyst was placed in dark for ½h in order to establish equilibrium between adsorption and desorption phenomenon of dye molecule on photo catalyst surface. Then slurry containing aqueous dye solution and TiO_2 was stirred magnetically to ensure complete suspension of catalyst particle while exposing to visible light. At specific time intervals aliquot (3ml) was withdrawn and centrifuges for 2 min at 3500 rpm to remove TiO_2 particle from aliquot to assess extent of decolourisation photo metrically. Changes in absorption spectra were recorded at 480 nm on double beam UV-Vis, spectrophotometer (Systronic Model No. 166) Intensity of visible radiation was measured by a digital luxmeter (Lutron LX 101). pH of solution was measured using a digital pH meter.

Results and Discussion:

Effect of $FeCl_3$: The addition of $FeCl_3$ had an important influence on the processes of the photocatalytic decoloration of the dye. Catalytic influence of Fe^{3+} ions on the decoloration of dye depend on the concentration of $FeCl_3$, the applied amount of TiO_2 and on the initial concentration of the dye in the solutions. We have studied the effect of $FeCl_3$ on the photodegradation of Azure B by varying the concentration from 2.0×10^{-6} mol dm^{-3} to 14.0×10^{-6} mol dm^{-3}. In TiO_2 / $FeCl_3$ / Vis addition of $FeCl_3$ caused an increase in rate constant (5.64×10^{-4} s^{-1}), up to concentration 8×10^{-5} mol dm^{-3}. Fe^{3+} behaves as an electron scavenger thus preventing the recombination of electron-hole pairs. The above two reactions led to increase the

amount of OH and H_2O_2 thus improving the efficiency of the photocatalytic process. When Fe^{3+} concentration is in excess of 10 × 10^{-5} mol dm^{-3}, the photodegradation efficiency decreased gradually due to the deposition of Fe^{3+} ions on the semiconductor particles. Active sites of the catalyst are covered with Fe^{3+} ion and hence the photon absorption by the catalyst decreased (4).

Fe^{3+} + hv → Fe^{2+} + $^{\bullet}OH$ (1)
Fe $(OH)_2$ + hv → Fe^{2+} + $^{\bullet}OH$ (2)
Fe^{2+} + H_2O_2 + H^+ → Fe^{3+} + $^{\bullet}OH$ + H_2O (3)
Fe^{2+} + $HO^{\bullet}_2$ + H^+ → Fe^{3+} + H_2O_2 (4)

Photoactivation of surface adsorbed complex ion (Fe^{3+} OH^-) resulted into Fe^{2+} OH species, which consequently injected electrons to conduction band of TiO_2. Increased rate of degradation in case of $FeCl_3$ is due to rapid scavenging of conduction band electrons by molecular oxygen leading to formation of superoxide and hydro peroxide radicals. Higher concentration of $FeCl_3$ eliminated adsorption of cationic dye on TiO_2 surface and also inhibited reaction rate by reducing production of hydroxyl radicals (5).

AB + hv visible → 1AB* or 3AB* (5)
hv
1AB* or 3AB*+TiO_2(Fe^{3+} OH^-) → TiO_2(Fe^{2+}•OH)+ AB+. (6)

TiO_2(Fe^{2+} •OH)+H_2O_2 → TiO_2 (e- CB)+TiO_2 (Fe^{3+} •OH) (7)

H+
TiO_2 (e^- CB) + O_2 → O^-_2 → HO_2 (8)

AB /AB+. + •OH / O^-_2 / HO_2 → Degradation products (9)

Table 1 Effect of $FeCl_3$: [AB] = 3.0 × 10^{-5} mol dm^{-3}, TiO_2 = 200 mg/100 mL
pH = 9.0, Light intensity = 25 × 10^3 lux, Temperature = 30 ± 0.3ºC.

$FeCl_3$ × 10^5 mol^{-1} dm^3	k × 10^{-4} s^{-1}	$t_{1/2}$ × 10^3 s
0.0	4.10	1.69
2.0	4.30	1.61
4.0	4.60	*1.50*
6.0	4.99	1.38
8.0	5.64	1.22
10.0	4.50	1.54
12.0	2.95	2.34
14.0	2.30	3.01

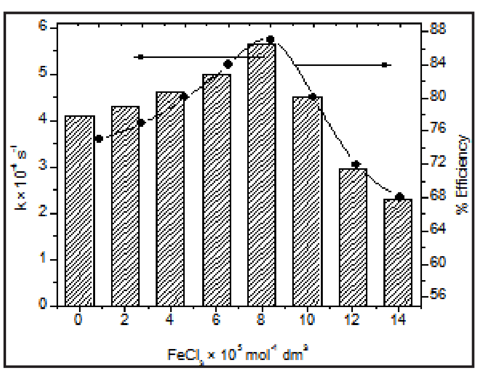

Fig.1 : Effect of $FeCl_3$

Effect of Fenton reagent: The mixture of ferrous ion and hydrogen peroxide is called Fenton reagent. It is known for oxidizing many organic compounds. Fenton system provides an economical approach in treatment of dye pollutants and played important roles in the degradation of dyes. Fenton's reagent is an attractive treatment for the effective decolorization and degradation of dyes because of its low cost, the lack of toxicity of the reagents (i.e. Fe^{2+} and H_2O_2) the absence of mass transfer limitation due to its homogeneous catalytic nature and the simplicity of the technology(6). The Fenton system uses ferrous ion to react with hydrogen peroxide, producing hydroxyll radicals with powerful oxidizing ability to degrade organic pollutants. During reaction, ferric ions are formed which can be reacted to produce ferrous ions. The reaction of hydrogen peroxide with ferric ions is referred to as a Fenton-like reaction. Efficiency of Fe^{3+} / H_2O_2 system has been studied for decolorization of Azure B in the presence of TiO_2 and visible light irradiation. The results are shown in Table 2 and plotted in Fig.2. Rate constant has a value of 4.83 × 10-4 s-1 on the addition of (Fe^{3+} : H_2O_2) in molar ratio (3:1). In the presence of (Fe^{3+} : H_2O_2) in molar ratio (1.4:1), rate constant has been found 4.0 × 10-4 s-1. Upon irradiation of Fe^{3+}/H_2O_2/TiO_2/AB system with visible light, production of •OH radicals involving a very complex mechanism.

Fe^{2+} + H_2O_2 → Fe^{3+} + OH^- + $^{\bullet}OH$ (1)
$^{\bullet}OH$ + Fe^{2+} → OH^- + Fe^{3+} (2)
Fe^{3+} + H_2O + hv → $^{\bullet}OH$ + Fe^{2+} + H^+ (3)

A dye molecule absorbs visible irradiation and is excited into high energy state. These excited dye molecules reduce the ferric ion complex to ferrous ion complex followed by the transfer to ferric ion. The reduced ferrous ions react with H_2O_2 to decompose and generate •OH hydroxyl radical as a strong oxidizing agent, which attack the dye molecules leading to the decolorization of the solution.

AB + $hv_{visible}$ → $_1AB^*$or $_3AB^*$ (4)
$_1AB^*$ or $_3AB^*$ + TiO_2 ($Fe^{3+}OH^-$)→TiO_2(Fe^{2+} $^{\bullet}OH$)+ $AB^{+\cdot}$ (5)
h*v*
TiO_2 (Fe^{2+} $^{\bullet}OH$) + H_2O_2→ TiO_2 (Fe^{3+} $^{\bullet}OH$)+OH^- + $^{\bullet}OH$ (6)
TiO_2 (Fe^{3+} $^{\bullet}OH$) + H_2O_2 → TiO_2 (Fe^{2+} $^{\bullet}OH$) + $HO^{\bullet}_2$ + H^+ (7)
TiO_2 (Fe^{2+} $^{\bullet}OH$) → TiO_2 (Fe^{3+} $^{\bullet}OH$) + TiO_2 (e^-_{CB}) (8)
H^+
TiO_2 (e^-_{CB})+ O_2 → $O^{\bullet-}_2$ → $HO^{\bullet}_2$ (9)
H_2O_2 + $O^{\bullet-}_2$ → $^{\bullet}OH$ + OH^- + O_2 (10)
H_2O_2 + TiO_2 (e^-_{CB}) → $^{\bullet}OH$ + OH^- (11)
$^{\bullet}OH$ + H_2O_2 → H_2O + $HO^{\bullet}_2$ (12)
AB/$AB^{+\bullet}$+$^{\bullet}OH$/$O^{\bullet-}_2$/$HO^{\bullet}_2$ → Degradation products (13)

Table 2 Effect of Fe^{3+}/ H_2O_2: [AB] = 3.0 × 10^{-5} mol dm^{-3}, pH = 9.0
TiO_2 = 200 mg/100 mL, Light intensity = 25 × 10^3 lux, Temperature = 30 ± 0.3 ºC.

$Fe^{3+}:H_2O_2$	With TiO_2		Without TiO_2	
	$k\times10^{-4}\ s^{-1}$	$t_{1/2}\times10^{3}s^{-1}$	$k\times10^{-4}\ s^{-1}$	$t_{1/2}\times10^{3}\ s^{-1}$
3:1	4.83	1.43	1.74	3.98
1.4:1	4.00	1.73	2.15	3.22
1:1.4	8.86	0.78	2.32	2.98
1:3	6.14	1.12	2.49	2.78
11:1	3.41	2.03	2.68	2.58

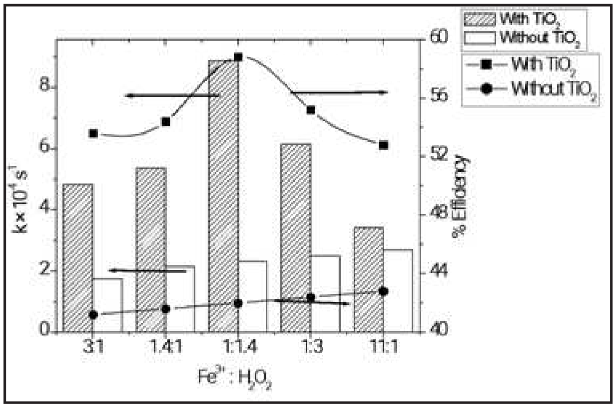

Fig.2 : Effect of Fenton reagent

Conclusion: The addition of $FeCl_3$ had an important influence on the processes of the photocatalytic decoloration of the dye. Catalytic influence of Fe^{3+} ions on the decoloration of dye depend on the concentration of $FeCl_3$, the applied amount of TiO_2 and on the initial concentration of the dye in the solutions. TiO_2 mediated degradation of dyes in combination with Fenton reagent has been found to be an effective treatment technology.

Acknowledgment: Author acknowledgement the support and laboratory facilities provided by Chemistry Department PMCOE S.B.N. Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) My sincere thanks to the technical staff of UGC-DAE, CSR, Indore for their kind co-operation and help offered during the work period.

References:-

1. Fujishima A - and Honda K., 1972 Electrochemical photocatalysis of water at semiconductor electrode. *Nature 27 238 -278.*
2. Daneshvar N. Salari D and A.R. Khatae. *J. Photochem Photobio. A, Chem. 162 317 (2004)*
3. Liv G. Wu T. And Zheo J. 1999 Photoassisted degradation of dye pollutants and irreversible degradation of Alizarin Red under Visible light radiation in Air – equilibrated equeous TiO_2 dispersion, *Environ. Science Technol. 33, 2081 -2087.*
4. Sakthivel S., Neppolion B., Arabindo B., Palanichamy M. And Murugeson V., *Indian J. Eng. And Mater Sci. 7 (2000) 87.*
5. Benejady M. A. , Modirshala N. And Hamazari R. *J. Hazard Mater. 133 (2006) 226.*
6. Aplin R. And Waite T.D. *Water Sci. And Technol., 42 (2000) 345.*

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

वागड़ की संस्कृति और कला : ऐतिहासिक विकास और समकालीन परिप्रेक्ष्य

डॉ. नरेंद्र सिंह राणावत* रश्मि गुप्ता**

* शोध निर्देशक, भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – वागड़ क्षेत्र राजस्थान के दक्षिणी भाग में स्थित एक समृद्ध ऐतिहासिक और सांस्कृतिक क्षेत्र हैजो मुख्य रूप से बांसवाड़ा और डूंगरपुर जिलों में विस्तृत है। यह क्षेत्र अपनी विशिष्ट संस्कृति, सांस्कृतिक धरोहर, लोककला, स्थापत्य, संगीत और पारंपरिक रीति-रिवाजों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ की संस्कृति का मुख्य आधार भील और मीणा जैसी जनजातियों की परंपराएँ रही हैं जिनका सामाजिक जीवन प्रकृति और धार्मिक आस्थाओं से गहराई से जुड़ा हुआ है। वागड़ का इतिहास और संस्कृति इसे राजस्थान के अन्य क्षेत्रों से भिन्न बनाते हैंक्योंकि यहाँ की परंपराएँ बाहरी प्रभावों और आंतरिक सामाजिक संरचना के मिश्रण से विकसित हुई हैं।

वागड़ का भौगोलिक स्वरूप इसे एक विशिष्ट पहचान प्रदान करता है। यह क्षेत्र अरावली पर्वतमाला के दक्षिणी छोर पर स्थित हैजहाँ पहाड़ियाँ, घने जंगल और जलाशय प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। जल संरचनाओं की प्रचुरता के कारण इस क्षेत्र में प्राचीन समय से ही मानव संस्कृतिका विकास हुआ। यहाँ के जनजातीय समुदायों ने प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर अपनी विशिष्ट जीवनशैली विकसित कीजो कृषि, पशुपालन, कुटीर उद्योग और कला पर आधारित थी। यहाँ की सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराएँ भी प्रकृति से प्रेरित रही हैंजिससे यह क्षेत्र अपने अद्वितीय सांस्कृतिक स्वरूप को बनाए रखने में सक्षम रहा है।

ऐतिहासिक रूप से वागड़ क्षेत्र का उल्लेख विभिन्न प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। महाभारत और पुराणों में इसे 'वाटग्र' या 'वाटग्राम' के नाम से संदर्भित किया गया है। 'प्राकृत भाषा के विद्वान वागड़ शब्द की उत्पत्ति 'बग्गड' शब्द से स्वीकारते हैं लेकिन संस्कृत भाषा परक व्युत्पत्ति को आधार मानकर कुछ विद्वान वागड़ शब्द की उत्पत्ति 'वाग्गर' अथवा 'वार्गवट' से होना बताते हैं।' डॉ. दशरथ शर्मा के अनुसार 'वागड शब्द का अर्थ है- जंगल। उनके अनुसार राजस्थान में दो और गुजरात में एक वागड़ है।' विभिन्न विद्वान वागड़ शब्द को वाग्वर, वागट, वैयागड, वार्गट आदि से संबंधित करते हैं परंतु अधिकांश शिलालेखों और ताम्रपत्रों में वागड़ शब्द का ही प्रयोग मिलला है।

जनजातीय समाज के प्रभाव के कारण यह क्षेत्र बाहरी आक्रमणों से अपेक्षाकृत सुरक्षित रहालेकिन धीरे-धीरे राजपूत शासकों ने यहाँ अपनी सत्ता स्थापित की। ऐतिहासिक काल में वागड़ क्षेत्र शुंग, क्षत्रप, गुप्त, वर्धन, परमार, चालुक्य और गुहिल राजवंशों के प्रभाव में रहा।परमारों और सोलंकियों के कमजोर पड़ने के बाद गुहिलवंशी सामंतसिंह ने वागड़ में अपने राज्य की स्थापना की। उनके वंशजों के बीच संघर्ष और विभाजन के कारण वागड़ दो भागों में विभाजित हो गया। महारावल उदयसिंह के शासनकाल में इस विभाजन के परिणामस्वरूप डूंगरपुर और बांसवाड़ा नामक दो स्वतंत्र राज्य अस्तित्व में आए।

वागड़ राज्य की स्थापना को लेकर विभिन्न ऐतिहासिक तथ्य और मान्यताएँ उपलब्ध हैं, जो इसकी उत्पत्ति को लेकर अलग-अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। ऐतिहासिक स्रोतों के अनुसार, रावल वीरसिंहदेव (1278-1303 ई.) ने विक्रम संवत 1339 (1282 ई.) में कार्तिक शुक्ला एकादशी के दिन डूंगरपुर नगर की नींव रखी, जिसे नगर का स्थापना दिवस माना जाता है। बाद में उनके पोते रावल डूंगरसिंह ने वास्तुशास्त्र के अनुसार गढ़ और नगर के विकास कार्य प्रारंभ किए, जिन्हें उनके पुत्र रावल कर्मसिंह (1362-1384 ई.) ने पूर्ण किया।

एक मान्यता के अनुसारबाँसवाड़ा नगर की स्थापना बाँसिया भील ने कीजबकि दूसरी मान्यता में इसे गुहिल वंश से जोड़ा जाता है। अधिकांश इतिहासकार यह मानते हैं कि वागड़ राज्य के वास्तविक संस्थापक गुहिलवंशी सामंतसिंह थेजिन्होंने 1179 ईस्वी के आसपास इस क्षेत्र पर अपना अधिपत्य स्थापित किया। इन विविध मतों और ऐतिहासिक संदर्भों से स्पष्ट होता है कि वागड़ राज्य की स्थापना का इतिहास विभिन्न परंपराओं और दृष्टिकोणों से समृद्ध है।इन राज्यों की स्थापना के साथ ही इस क्षेत्र में किलों, मंदिरों, बावड़ियों और जलाशयों का निर्माण हुआजिससे यहाँ की स्थापत्य कला और धार्मिक परंपराओं को समृद्धि मिली।

प्रस्तुत शोध पत्र में वागड़की संस्कृति एवं कला का ऐतिहासिक विकास और समकालीन परिप्रेक्ष्य में विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

वागड़ की संस्कृति का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य- प्राचीन काल से लेकर आधुनिक समय तक वागड़ की संस्कृति विभिन्न राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों से गुजरी हैजिसने इसे अद्वितीय सांस्कृतिक पहचान दी। इसका भौगोलिक और सांस्कृतिक विस्तार उदयपुर जिले के ऋषभदेव, खेरवाड़ा, खड़ग क्षेत्र (जवासपट्टी, पहाड़ा, मेवल, छप्पन), प्रतापगढ़ जिले, गुजरात के माहीकांठा और रेवाकांठा क्षेत्रों, तथा मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के कुछ भागों तक विस्तृत है।इस क्षेत्र की प्रमुख नदियाँ माही, सोम, जाखम और अनास हैंजो यहाँ की कृषि और जल आपूर्ति के मुख्य स्रोत हैं।

वागड़ का जनजातीय समाज प्रकृति के साथ गहरे संबंध में रहा हैऔर इसी कारण यहाँ की जीवनशैली, धार्मिक मान्यताएँ और सांस्कृतिक परंपराएँ

प्राकृतिक तत्वों से प्रेरित रही हैं।वागड़ क्षेत्र मुख्य रूप से भील और मीणा जनजातियों के निवास स्थान के रूप में जाना जाता है। भील समुदाय अपनी साहसी प्रवृत्ति और योद्धा संस्कृति के लिए प्रसिद्ध था। वे जंगलों और पहाड़ियों में रहकर शिकार, खेती और कुटीर उद्योगों में संलग्न रहते थे।मध्यकाल में वागड़ क्षेत्र के राजाओं ने मुगलों और मराठों से कई संघर्ष किए। इसी प्रकार 17वीं और 18वीं शताब्दी में मराठों का प्रभाव बढ़ने से वागड़ के प्रशासन और सांस्कृतिक परंपराओं में भी परिवर्तन देखने को मिला।

ब्रिटिश शासनकाल में वागड़ क्षेत्र के सामाजिक और राजनीतिक ढाँचे में महत्वपूर्ण बदलाव हुए। ब्रिटिश सरकार ने इस क्षेत्र को एक रियासत के रूप में मान्यता दीजहाँ स्थानीय राजाओं को सीमित प्रशासनिक अधिकार प्रदान किए गए। इस दौरान शिक्षा, परिवहन और संचार व्यवस्था में सुधार हुएजिससे इस क्षेत्र में आधुनिकता की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। जनजातीय समाज को औपनिवेशिक प्रशासन के नियमों के अनुरूप ढालने की कोशिशें की गईजिससे उनके पारंपरिक रीति-रिवाजों में परिवर्तन आया। इस काल में जनजातीय आंदोलनों का भी उदय हुआजिसमेंगोविंद गुरु के नेतृत्व मेंभगत आंदोलन सबसे महत्वपूर्ण रहा।

वर्तमान समय में वागड़ की संस्कृति आधुनिकता और परंपरा के संगम का प्रतीक बन रही है। पारंपरिक आदिवासी समाज अपनी मूल सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ा हुआ हैलेकिन शिक्षा, संचार और तकनीकी विकास के कारण नए सामाजिक परिवर्तन भी देखने को मिल रहे हैं। वागड़ की ऐतिहासिक धरोहर को संरक्षित करने और इसकी पारंपरिक संस्कृति को आधुनिक समाज से जोड़ने के लिए अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। पर्यटन और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से इस क्षेत्र की सांस्कृतिक धरोहर को बढ़ावा दिया जा रहा हैजिससे स्थानीय कलाकारों और शिल्पकारों को प्रोत्साहन मिल रहा हैसाथ ही बाहरी दुनिया को भी वागड़ की समृद्ध संस्कृति से परिचित होने का अवसर मिल रहा है।

वागड़ की कला और संस्कृति – वागड़ क्षेत्र की कला और संस्कृति इसकी ऐतिहासिक विरासत, पारंपरिक मान्यताओं और सामाजिक जीवन से गहराई से जुड़ी हुई है। यहाँ की लोककला, चित्रकला, स्थापत्य, संगीत, नृत्य वर्षो से अपनी पहचान बनाए हुए हैं। वागड़ क्षेत्र में स्थापत्य और मूर्तिकला की एक विशिष्ट और समृद्ध परंपरा रही है। मूर्तिकला या पाषाण कला को वास्तुकला (स्थापत्य) की अनिवार्य सहचरी माना जा सकता है। यहां के राजा-महाराजाओं ने अपने वैभव और कीर्ति को चिरस्थायी बनाने के उद्देश्य से राजप्रासाद, मंदिर, बावड़ियाँ तथा अन्य भव्य भवनों (नगर, हवेलियाँ, कोठियाँ) का निर्माण करायाजो स्थापत्य कला के अद्धितीय उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

जहां-जहां मंदिरों का निर्माण हुआ वहीं मूर्तिकला को उसका अभिन्न अंग बनाकर विविध देवी-देवताओं एवं ऐतिहासिक प्रसंगों की शिल्पांकन कला विकसित की गई। इन मंदिरों की दीवारों और स्तंभों पर उत्कीर्ण मूर्तियाँ तत्कालीन संस्कृति का सजीव प्रतिबिंब प्रस्तुत करती हैं। ये मंदिर बाहरी रूप से ऐतिहासिक कलात्मकता को दर्शाते हैंवहीं आंतरिक रूप से आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित होकर संतुलित स्थापत्य का उत्कृष्ट नमूना प्रस्तुत करते हैं। वागड़ की स्थापत्य कला में मंदिर, किले, महल और बावड़ियाँ शामिल हैंजो इस क्षेत्र की ऐतिहासिक समृद्धि को दर्शाते हैं।

यहाँ के स्थापत्य को दो भागों धार्मिक एवं लौकिक में विभक्त किया जा सकता है। 'धार्मिक स्थापत्य के अन्तर्गत वे सभी वास्तुकृतियाँ समाहित हैजिनका सीधा सम्बन्ध धार्मिक भावनाओं से है जैसे- यज्ञवेदी, यज्ञशाला, यजमानशाला, यूप, विमान, मन्दिर, प्रतिमा, स्तूप विहार आदि। लौकिक स्थापत्य का सीधा सम्बन्ध मानव के भौतिक विलास से है। गृह, भवन, राजवेश्म तथा विभिन्न शालायें, ग्राम, पुर, नगर, दुर्ग आदि का विन्यास, मनोरंजनात्मक मूर्तियों-खिलौनों आदि का निर्माण, चित्रकला आदि लौकिक स्थापत्य के अन्तर्गत आते हैं।'

धार्मिक स्थापत्य के अन्तर्गत मन्दिर स्थापत्य एवं मूर्तियों का अध्न किया गया है। देवसोमनाथ मंदिर, त्रिपुरा सुंदरी मंदिर, श्रीनाथजी मंदिर, बेणेश्वर धाम, हजारेश्वर शिव मंदिर, सूर्य मंदिर, जैन मंदिर, गदाधर का जीर्ण मंदिर, सोमेश्वर मंदिर जैसे धार्मिक स्थल वागड़ की स्थापत्य कला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। लौकिक स्थापत्य में यहाँ के नगर, दुर्ग, भवन, कलात्मक यापियों (बावड़ियों), राज प्रासाद (महल) आदि शामिल है। मंदिरों की भव्यता और शिल्पकला में राजस्थानी और द्रविड़ शैली का मिश्रण देखने को मिलता है।

मुरलीमनोहर मंदिर

हजारेश्वर शिव मंदिर　　　　देव सोमनाथ

बाँसवाड़ा अंचल में कई धार्मिक स्थल हैं जो अपनी गौरव गाथा सुनाते हैं। यहाँ का खजुराहो-पाराहेड़ा मंदिर, पुष्कर छींच का ब्रह्मा मंदिर, अरथुना (अर्थणा) मंदिर, धार्मिक नगरी तलवाड़ा के मंदिर, त्रिपुरा सुन्दरी का मंदिर आदि पर्यटन व श्रद्धा केन्द्र के रूप में विकसित हैं। बाँसवाड़ा के निकट ठिकरिया गाँव में कलात्मक बावड़ी है। डूंगरपुर का उदय बिलास पैलेस, एक

थम्बा महल, गेप सागर, नव चौकी महल और बांसवाड़ा का महारावल महल, पाराहेडा, अरथूना आदि भी इस क्षेत्र की स्थापत्य विशेषताओं को दर्शाते हैं। राजपूतकालीन किलों और जलाशयों का निर्माण इस क्षेत्र की रणनीतिक महत्ता को भी दर्शाता है। इसके अलावायहाँ की जल संरचनाएँजैसे- माही बाँध और विभिन्न कृत्रिम झीलें स्थापत्य कला की उत्कृष्टता को दर्शाती हैं।

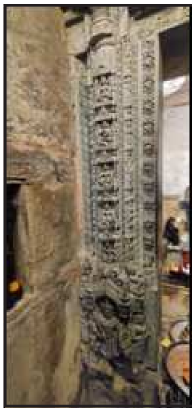

स्थापत्य कला **गेप सागर**

वागड़ में चित्रकला का विशेष रूप से प्रचलन देखा जा सकता है। संत मावजी कालीन पोथी चित्रों में राजस्थानी अपभ्रंश शैली की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इन चौपड़ों का आकार विशाल है और लिपि व चित्रण की दृष्टि से ये शीघ्रता से निर्मित प्रतीत होते हैं। संपूर्ण चित्रांकन में चित्र संयोजन एवं अंतराल मेवाड़ की चित्र शैली से समानता रखते है तथा इन ग्रंथों का मुख्य चित्रण विषय धार्मिक है। चित्रकारों ने मावजी को श्रीकृष्ण के बाल रूप के समान मानते हुए चित्रित किया है जिसमें कृष्ण की रासलीला, बाल क्रीड़ा, दशावतार एवं निष्कलंकावतार में मावजी का चित्रण किया गया है। देवी-देवताओं, मावजी के माता-पिता, उनके जन्मस्थल साबला और भावपुरी को भी चित्रण का विषय बनाया गया है।

'जयपुर शैली के प्रतिनिधि चित्रों में जिस प्रकार कृष्ण को गोर्वधन धारण करते हुए बनाया गया है उसी प्रकार यहाँ कृष्णावतार में संत मावजी को बनेश्वर धारण किये चित्रित किया है। उनकी शारिरिक बनावट में कोमलता तथा अंग भंगिमा में दृढ़ता दिखाई देती है। यह चित्र शेषपुर मेवाड़ में हरिमंदिर में स्थित महारासलीला ग्रंथ के पृ.सं. 117 पर बना हैं। इन चित्रों का आधार भागवत पुराण माना जाता है। उसी के समान साहित्यों मेंराधा कृष्ण का मोहक स्वरूप, गोपीयों का नृत्य, नौका विहार तथा लताओं, कुजों, वृक्ष के झुरमुट, सघन वन आदि का चित्रण किया गया है। इन चित्रों में नदी, वृक्ष, मछलियाँ, पशु-पक्षी, पुष्प, कमल कुंज, ग्वाले तथा ग्रामीण परिवेश का सुंदर चित्रण तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को दर्शाता है।

वागड़ की संस्कृति में लोकसंगीत, नृत्य, मेले महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यहाँ की जनजातियों के पारंपरिक नृत्य और गीत उनके सामाजिक और धार्मिक जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं। गवरी नृत्य, घूमर नृत्य और गैर नृत्य इस क्षेत्र के प्रमुख लोकनृत्य हैंजिनका प्रदर्शन त्योहारों और विशेष अवसरों पर किया जाता है। गवरी नृत्य विशेष रूप से भील समुदाय द्वारा किया जाता हैजिसमें पौराणिक और धार्मिक कथाओं को प्रस्तुत किया जाता है। गैर नृत्य होली के समय किया जाने वाला सामूहिक नृत्य हैजो सामाजिक मेल-मिलाप का प्रतीक है। गैर नृत्य में नर्तक वृत्ताकार रूप में घूमकर लयबद्ध गति से नृत्य करते हैं।

वागड़ के पर्यटन और ऐतिहासिक स्थलों से यहाँ की संस्कृति का सजीव परिचय प्राप्त होता है। यहां के निवासियों के खान-पान, परिधान, जीवनशैली, धार्मिक आस्थाओं, विवाह परंपराओं तथा भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति की झलक मिलती है। विभिन्न कालखंड के धर्म, दर्शन, साहित्य, कला, विज्ञान और ज्ञान परंपरा का बोध भी होता है। साथ हीग्रामीण और शहरी जीवन की विशिष्टताओं की जानकारी प्राप्त होती है। विभिन्न धर्मो की सांस्कृतिक विविधता और उनके आपसी समन्वय का भी अवलोकन किया जा सकता है।

वागड़ की संस्कृतिऔर कला पर बाहरी प्रभाव - वागड़ की संस्कृतिऔर कला का विकास केवल स्थानीय संस्कृति और परंपराओं तक सीमित नहीं रहाबल्कि विभिन्न बाहरी प्रभावों ने भी इसकी संरचना को प्रभावित किया है। समय-समय पर विभिन्न शासकों, व्यापारियों, उपनिवेशवादियों और आधुनिकता के प्रभावों ने वागड़ की कला और संस्कृति को नए आयाम दिए। इन प्रभावों ने जहाँ इस क्षेत्र की सांस्कृतिक समृद्धि को और विस्तृत कियावहीं कुछ पारंपरिक कलाओं और परंपराओं को कमजोर भी किया।

वागड़ की प्राचीन कला और संस्कृति मूलत: जनजातीय परंपराओं से प्रभावित रही हैलेकिन मध्यकाल में यहाँ राजपूत शासकों का आगमन हुआजिससे इसकी स्थापत्य कला, संगीत, नृत्य और लोककला में नए तत्व जुड़े। राजपूतों के शासनकाल में मंदिर निर्माण, किलों की स्थापना और सांस्कृतिक आयोजनों में वृद्धि हुई। मंदिरों और महलों की भव्यता में नक्काशी, मूर्तिकला और चित्रकला का उत्कृष्ट प्रदर्शन देखने को मिलता है। डूंगरपुर और बांसवाड़ा के किलों की स्थापत्य शैली इस बात का प्रमाण है कि वागड़ क्षेत्र में राजपूत प्रभाव ने यहाँ की स्थापत्य कला को नया स्वरूप दिया।

ब्रिटिश शासन का वागड़ की संस्कृति और कला पर व्यापक प्रभाव पड़ा। ब्रिटिश औपनिवेशिक व्यवस्था के चलते परंपरागत कला और शिल्प का धीरे-धीरे ह्रास हुआ। आधुनिक शिक्षा प्रणाली और प्रशासनिक सुधारों ने पारंपरिक जीवनशैली को प्रभावित किया। कई शिल्पकारों और कलाकारों को अपनी पारंपरिक कला को छोड़कर नए व्यवसायों की ओर जाना पड़ा। ब्रिटिश शासन के दौरान रेलवे, डाक सेवाएँ और सड़क निर्माण जैसी आधुनिक संरचनाओं का विकास हुआजिससे स्थानीय समाज और संस्कृति में बदलाव आए। इसके साथ हीवागड़ की कला और परंपराओं का दस्तावेजीकरण प्रारंभ हुआजिससे इसकी सांस्कृतिक धरोहर को सहेजने के प्रयास किए गए।

आधुनिकता और वैश्वीकरण ने वागड़ की कला और संस्कृति को कई तरह से प्रभावित किया है। पारंपरिक लोककला, संगीत, नृत्य और हस्तशिल्प की ओर लोगों का झुकाव कम होने लगाऔर युवा पीढ़ी आधुनिक जीवनशैली अपनाने लगी। डिजिटल युग में पारंपरिक कला के स्थान पर नई विधाएँ और शैलियाँ विकसित हो रही हैंजिससे लोककला और शिल्पकारों को चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। हालाँकिपर्यटन और सांस्कृतिक जागरूकता अभियानों के कारण वागड़ की कला को वैश्विक मंच पर पहचान मिलने लगी है। सरकार और विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों द्वारा इस क्षेत्र की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने के प्रयास किए जा रहे हैंजिससे यहाँ की पारंपरिक कला को पुनर्जीवित किया जा सके।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में वागड़ की कला और संस्कृति - वागड़ क्षेत्र की कला और संस्कृति सदियों से अपने ऐतिहासिक, सामाजिक और धार्मिक महत्व के कारण विशेष स्थान रखती आई है। यह क्षेत्र अपनी पारंपरिक लोककला, स्थापत्य, संगीत, नृत्य के लिए जाना जाता है। समय के साथ

वागड़ की सांस्कृतिक धरोहर पर आधुनिकता, औद्योगीकरण और वैश्वीकरण का प्रभाव पड़ा हैजिससे यहाँ की पारंपरिक कलाएँ एक नई दिशा में विकसित हो रही हैं। समकालीन संदर्भ में वागड़ की कला और संस्कृति कई नए परिवर्तनों और चुनौतियों का सामना कर रही हैजिनमें पारंपरिक कलाओं का संरक्षण, आधुनिक तकनीकों का समावेश और सांस्कृतिक पहचान बनाए रखने की आवश्यकता शामिल है।

बेणेश्वर मेला

सरकार और गैर-सरकारी संगठनों द्वारा यहाँ की लोककला, स्थापत्य कला, संगीत, मेलो, रीति-रिवाजों को बढ़ावा देने के लिए अनेक योजनाएँ चलाई जा रही हैं। लोककला और चित्रकला के संरक्षण के लिए कलाकारों को वित्तीय सहायता दी जा रही हैजिससे वे अपनी पारंपरिक शैलियों को जीवित रख सकें। पुराने मंदिरों, किलों और महलों का जीर्णोद्धार किया जा रहा हैजिससे इन धरोहरों को संरक्षित किया जा सके। पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए ऐतिहासिक स्थलों का विकास किया जा रहा है, जिससे स्थानीय लोगों को आर्थिक लाभ भी मिल सके। त्रिपुरा सुंदरी मंदिर, श्रीनाथजी मंदिर और बेणेश्वर धाम जैसे धार्मिक स्थलों को आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित किया गया हैजिससे श्रद्धालुओं को बेहतर अनुभव मिल सके।

लोकसंगीत, नृत्य और मेले भी समकालीन परिप्रेक्ष्य में बदलाव का सामना कर रहे हैं। पारंपरिक गवरी, घूमर, झूमर, गैर आज भी विशेष अवसरों और त्योहारों पर आयोजित किए जाते हैंलेकिन अब इन्हें मंचीय प्रस्तुतियों और सांस्कृतिक आयोजनों में भी शामिल किया जाने लगा है। युवा कलाकार पारंपरिक धुनों को आधुनिक संगीत से जोड़ रहे हैंजिससे वागड़ का लोकसंगीत नई पीढ़ी को आकर्षित कर रहा है।

निष्कर्ष - वागड़ की संस्कृतिऔर कला का अध्ययन इस क्षेत्र की समृद्ध ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विशेषताओं को उजागर करता है। यह क्षेत्र अपनी विशिष्ट लोककला, स्थापत्य, संगीत, नृत्य और हस्तशिल्प के लिए प्रसिद्ध रहा है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक, वागड़ की संस्कृतिविभिन्न प्रभावों से गुजरती रही हैजहाँ जनजातीय परंपराओं, राजपूत शासन, मुगल प्रभाव और औपनिवेशिक हस्तक्षेपों ने इसे एक अद्वितीय पहचान दी। वर्तमान में यह क्षेत्र अपनी पारंपरिक धरोहर को सहेजने और आधुनिक समाज में उसके अस्तित्व को बनाए रखने के प्रयास कर रहा है।

वैश्वीकरण, औद्योगीकरण और आधुनिक जीवनशैली के प्रभाव से पारंपरिक कलाएँ धीरे-धीरे विलुप्ति की ओर बढ़ रही हैं। इस शोध पत्र से यह स्पष्ट होता है कि वागड़ की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करना न केवल इस क्षेत्र की पहचान बनाए रखने के लिए आवश्यक हैबल्कि यह भारतीय संस्कृतिकी विविधता को भी बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।पारंपरिक लोककला और चित्रकला के संरक्षण के लिए कलाकारों को आर्थिक सहायता और आधुनिक तकनीकों की जानकारी दी जानी चाहिए ताकि वे अपनी कला को नए आयाम दे सकें। पिठौरा चित्रकला जैसी लोककलाएँ धीरे-धीरे लुप्त हो रही हैंजिन्हें पुनर्जीवित करने के लिए सरकारी और गैर-सरकारी प्रयास आवश्यक हैं।

इन संरचनाओं के संरक्षण और पर्यटन के माध्यम से उनके विकास को बढ़ावा देने के लिए सरकार को ठोस नीतियाँ अपनानी होंगी। वागड़ की हस्तशिल्प और कारीगरी को बढ़ावा देने के लिए विशेष योजनाएँ चलाई जानी चाहिएंजिससे स्थानीय कारीगरों को आर्थिक लाभ मिल सके और उनकी कला को एक व्यापक बाजार उपलब्ध हो।सरकारी नीतियों, सामाजिक जागरूकता, पर्यटन को बढ़ावा देनेऔर स्थानीय कलाकारों व कारीगरों को आर्थिक सहयोग प्रदान करने के माध्यम से इस क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान को और अधिक सशक्त बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्रा वी.सी. : राजस्थान का भूगोल धरातल एंव भू-गर्भिक संरचना, पृ. 21.
2. यादव प्रकाश : वागड़ क्षेत्र के ऐतिहासिक व धार्मिक स्थल एवं पर्यटन, नवीन शोध संसार (एन इंटरनेशनल रेफरीड पीयर रिव्यू रिसर्च जर्नल), पृ. 457
3. शर्मा, दशरथ : राजस्थान थ्रू द एजेस बीकानेर, भाग 1, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर, 2014, पृ. 17
4. महेश पुरोहित (2015), 'डूंगरपुर परिचय व संक्षिप्त इतिहास', अभिरूप प्रिन्टर्स, डूंगरपुर (राजस्थान)।
5. गहलोत जगदीश सिंह : राजपूताने का इतिहास (पहला भाग, दूसरा भाग), हिन्दी साहित्य मंदिर, जोधपुर, 1994
6. शर्मा गोपीनाथ राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1989
7. ओझा गौरीशंकर ; हीराचन्द : डूंगरपुर राज्य का इतिहास, मुद्रक वैदिक ग्रन्थालय, अजमेर, पृ. 1-81
8. मनीषा चौबीसा : वागड क्षेत्र के प्रमुख लोक साहित्य का सामाजिक, सांस्कृतिक महत्त्व तथा कला सृजन पर प्रभाव, IOSR Journal of Research & Method in Education (IOSR-JRME) e-ISSN: 2320-7388, p-ISSN: 2320-737X, Volume 5, Issue 1 Ver. III (Jan-Feb. 2015), PP 56-59
9. व्यास राजशेखर : मेवाड़ की कला और स्थापत्य, पृ, 31, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण, 1988
10. रतनलाल मिश्र : स्मारकों का इतिहास एवं स्थापत्य कला, ईना श्री पब्लिशर्स, जयपुर, 1998

****

Ethnomedicinal Plants of Euphorbiaceae Family Used By Tribal's of Dhar District, Madhya Pradesh, India

Dr. Kamal Singh Alawa*

***Assistant Professor (Botany) PMCoE, Maharaja Bhoj Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA**

Abstract : The present paper deals with an ethnomedicinal trends were carried out during 2024-2025 in the Euphorbiaceae families plants used by tribal's of Dhar district, Madhya Pradesh, India. A total of 19 plant species belonging to 10 genera of Euphorbiaceae family from the study area. Such knowledge is transferred from one generation to another by word of mouth only and restricted to few families of the area recognized as 'Vaidyas' 'Badwa' and 'Ojhas'. Tribal do not approach doctors (physicians) due to lack of awareness and shyness or hesitation. Herbal healers and their patients who receive the treatment for any enquired the local names, parts used and method of administration. The binomial names are enumerated with utilization and dosages of these plants are like Viz. *Acalypha indica*, *Bridelia retusa*, *Croton bonplandianus, Euphorbia hirta*, *Phyllanthus emblica*, *Ricinus communis* etc. The family Euphorbiaceae is the second largest among the dicotyledonous plants of the study area.
Keywords: Ethnomedicinal trends, Fabaceae family, Dhar district, tribal's, Madhya Pradesh.

Introduction - Dhar district is situated in the south-western part of Madhya Pradesh, India. The study area lies between 22º oo' to 23º 10' Northern latitude and 74º 28' to 75º 42' Eastern longitude. Covering 8153 Sq. Km study area and geographical area of 1214.8 Sq.km. Its population is 2184672 (Census 2011). Dhar The tribal people constitute over 83.93 percent of the population. The study area is mostly inhabited of tribal groups are *Bheel*, *Bhilala, Barela* and *Patelia*. Majority of the population live in remote villages and depend on shifting cultivation and forest for their food, shelter and other requirements. These Tribal's live close to the forest and are largely dependent on the wild biological resources for their livelihood. Although the tribal people traditionally use many ethno-medicinal Euphorbiaceae family plants used by tribal's of Dhar district, Madhya Pradesh. Such documentation has been done earlier. Keeping this in view, the present study was initiated with an aim to identify medicinal plants resources and traditional knowledge of tribal people of the study area. Literature survey of ethnobotanical work was done (Srivastava 1984, Samvatser *et al*. 2004, Jain 2004, Jain 1991, Jadhav 2007, Alawa *et al*. 2012, Shaikh *et al*. 2012, Alawa 2015, Alawa *et al*. 2016, Alawa 2018, Alawa 2021, Wagh et al. 2010,). The present paper first time documented of the study area.

Materials and Methods: The present paper is outcome of extensive field survey of different tribal villages of Dhar district during 2024- 2025 to collect information on medicinal uses of different plant species. Herbarium of the collected plants specimen was prepared following customary method (Jain and Rao, 1977). During field work, interviews were conducted with local knowledgeable villagers; local elders and experienced tribal peoples (both men and women) were interviewed and cross -interviewed again and again. Local 'Vaidyas,' 'Badwa' and 'Ojhas'.The collected plant species are arranged alphabetically along with their botanical name and family, local names, method of preparation of drug and mode of administration are given below in observation. The plant specimens were collected and identified with local flora available literature (Varma *et al*. 1993, Mudgal *et al*. 1997 & Khanna *et al*. 2001). Herbarium preserved in Department of Botany, PMB Gujarati Science College, Indore, Madhya Pradesh.

Enumeration of species: During ethnobotanical survey of Dhar district it was found that some wild medicinal plants are used by tribal of Dhar district Madhya Pradesh. The enumerations of field observation are given below:

***Acalypha indica* L.** (Euphorbiaceae) **V.Ns**.- Muripinda, Khokali.

Uses:

1. Juice of leaf is consumed orally early in the morning in empty stomach for 3 days to cure Constipation.
2. Powder of root with milk is given twice a day for 2-3 days to relieve pneumonia.
3. Paste of root is given as twice a day for a week for the treatment of piles.

***Baliospermum montanum* (Willd.) Muell.-Arg.**

(Euphorbiaceae) V.Ns.- Jangli jamalgota.

Uses:

1. Leaves extract is used twice a day for 3 weeks to cure asthma and bronchitis.
2. Powder of root with Kela (*Musa paradisiaca* L.) is given twice a day for a week to cure jaundice.

***Bridelia retusa* (L.) Spreng** (Euphorbiaceae) **V.Ns**.- Aggnia, Aggiya, Khaja, Khasai.

Uses:

1. Powder of bark is applied as plastering agent to cure bone fracture.
2. Paste of bark is used cuts for healing to check bleeding.
3. Decoction of Stem-bark is taken orally twice a day for 3 days to cure diarrhoea.

***Croton bonplandianus* Baill**. (Euphorbiaceae) **V.Ns.-** Kala-bhangra.

Uses:

1. Paste of root is applied on the effected teeth for teeth infection.
2. Juice of leaf is applied externally on fresh cut to stop bleeding.
3. Latex is applied on wounds and cuts for early healing.

***Euphorbia geniculata* Orteg** (Euphorbiaceae)**V.Ns.-** Guleria Chara.

Uses:

1. Latex is rubbed in eczema and ringworm.

***Euphorbia hirta* L.. (**Euphorbiaceae**) V.Ns**.- Dudhi, Dudhiya.

Uses:

1. Paste of leaves is applying to cure ringworm.
2. Latex is applied on skin disease for eczema and scabies.

***Euphorbia ligularia* Roxb. (**Euphorbiaceae**) V.Ns.** Thuwar, Pattonkisend.

Uses:

1. Chewed pulp and applied on wound to cure snake bite.
2. Paste of stem mixed with turmeric is tied over wounds.

***Euphorbia tirucalli* L.** (Euphorbiaceae) **V.Ns.-** Dudhi, Gangli thor.

Uses:

1. The milky latex is applied to old wounds to cure skin.
2. Latex is applied over affected parts in arthritis.
3. Latex is applied on skin disease to cure for scabies and eczema.

***Jatropha curcas* L.** (Euphorbiaceae) **V.Ns.–** Ratanjot, Agarandi.

Uses:

1. Twigs are used as toothbrush to cure toothache.
2. Latex is applied externally in ear to stop pus formation.
3. Latex is also applied on cuts and injury to cure bleeding.

***Jatropha gossypifolia* L.** (Euphorbiaceae) **V.Ns.–** Ratan jhad, Ratanjot.

Uses:

1. Paste of leaf is applied as skin for scabies, itching and eczema.
2. Paste of seed is used for purgative.
3. Seed oil is used for affected body massage to relieve paralysis.

***Phyllanthus amarus* Schum and Thonn.** (Euphorbiaceae) **V.Ns.-** Bhui amla.

Uses:

1. Powder of whole plant is given orally twice a day for 3 days to cure leucorrhoea.
2. Powder of seed with water is given orally twice a day for 3 days to cure diabetes.

***Phyllanthus emblica* L.** (Euphorbiaceae) **V.Ns.–** Amla, Aonla.

Uses:

1. Extract of stem bark is given orally with water to cure diarrhoea.
2. Dry fruit powder with ghee mixed is applied on nose and head to prevent bleeding.
3. Powder of seed with honey is given twice a day for 3 weeks to cure leucorrhoea.
4. Raw fruit powder is given twice a day for 3 days to cure cough.

***Ricinus communis* L.** (Euphorbiaceae) **V.Ns.–** Arandi, Arand.

Uses:

1. Seed oil is applied on cut and wounds.
2. Decoction of leaf with water is given twice a day for intestinal worms.
3. Decoction of leaf is given orally twice a day to relieve fever.

Results and Discussion: The present study includes information on the total 23 plant species belonging to 19 genera of Fabaceae family. Generally local medicine men are known as 'Badwa' or Vaidyas. The rich treasure of indigenous knowledge of local medicinal plant is also under serious threat in rural areas due to the availability of allopathic medicines and treatment of ailments and disease. The indigenous knowledge of the tribal communities must be properly documented and preserved so that their knowledge could be passed on the future generation. Such studies and documents provide important for understanding the complex heritage of tribal communities and their association with environment and nature. the important medicinal plants were used again Ring worm, scabies and eczema and cure of bleeding of 3 species; asthma, diarrhoea, toothache and leucorrhea of 2 species; constipation, pneumonia, piles, jaundice, bronchitis, bone fracture, snake bite, paralysis, and fever each of 1 species. The collection of remote areas of Euphorbiaceae family plants of photo graphs below (Fig. 1 to 4).

Fig.1:*Phyllanthus amarus* **Fig.2: *Phyllanthus emblica***

Fig.3:*Euphorbia hirta* **Fig.4: *Jatropha curcas***

Ethnomedicinal plants of Euphorbiaceae family used by tribals of Dhar district (M.P.)

Acknowledgement: The author is thankful to Dr. S.S.Baghel, Principal and Dr. Kamal Singh Alawa, Head of Botany Department and Dr. N.S. Dawar Head of Microbiology Department Govt. P.G. College, Dhar for their help and support. We are also thankful to Divisional forest officer, Dhar for help during the ethno botanical survey in tribal villages and forest areas of the district. We are thankfully acknowledging the informants for the important information giving regarding ethno botanical plants.

References:-

1. **Alawa KS, Ray S. (2012)**. Ethnomedicinal plants used by tribal's of Dhar district, Madhya Pradesh, India. *CIBTech. Jour. Of Pharmaceutical Science,* 1 (2-3): 7-15.
2. **Alawa KS, Ray S, Dubey A (2016)**. Folklore claims of ethnomedicinal plants used by Bhil tribes of Dhar district Madhya Pradesh. Bioscience discovery, 7(1): 60-62.
3. **Alawa KS (2021).** Ethnomedicinal plants used for antifertility by tribals of Dhar district, Madhya Pradesh, India*. European Jour. Of Biome. and pharma.Science*, 8 (8): 495-497.
4. **Jain SP (2004).** Ethno-Medico-Botanical Survey of Dhar district Madhya Pradesh. *Journal of Non-Timber Forest products*, 11(2): 152-157.
5. **Jadhav D (2007)**. Ethnomedicinal plants used by *Bhil* tribes of Matrunda, District, Ratlam, Madhya Pradesh, *India. Bull. Bot. Surv. India,* 49 (1-4): 203-206.
6. **Jain SK and Rao RR (1977).** A handbook of field and Herberium methods.*Today and Tomorrow Publishers*, New Delhi.
7. **Jain SK (1991)**. Dictionary of Indian folk medicine and Ethnobotany.*Deep Publication,* New Delhi,India.
8. **Jadhav D (2007)**. Ethnomedicinal plants used by *Bhil* tribes of Matrunda, District, Ratlam, Madhya Pradesh, *India. Bull. Bot. Surv. India,* 49 (1-4): 203-206.
9. **Khanna KK, Kumar A, Dixit RD and Singh NP (2001)**. Supplement to the flora of Madhya Pradesh, 2001.
10. **Madgal V, Khanna KK, Hajra PK (1997).** *Flora of Madhy Pradesh*, Vol. II.BSI. Calcutta.
11. **Samvatsar, S and Diwanji, VB (2004).** Plant used for the treatment of different types of fever by *Bheels* and its sub tribes in India. *Indian J. Traditional Knowledge*: 3(1): 96-100.
12. **Shaikh MJ, Ray S and Mehara SS (2012).** Ethnomedicinal trends of Fabaceae in East Nimar (M.P.) India, Journal of tropical forestry,; Vol, 28 (III): 68-71. .
13. **Verma DM, Balakrishan NP, Dixit RD(1993)**. *Flora of MadhyaPradesh*,Vol. I, BSI, Calcatta.
14. **Wagh VV, Jain AK (2010).** Ethnomedicinal observations among the *Bheel*and *Bhilala* tribe of Jhabua District, Madhya Pradesh, India. *Ethnobotanical Leaflets,* 14: 715-720.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Artificial Intelligence as a Catalyst for Sustainable Development: Exploring the Synergy with CSR

Ritvik Roonwal*

***Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA**

Abstract: After months of field research and literature review, this paper examines Artificial Intelligence's role as both disruptor and enabler in the sustainability space, particularly focusing on its often-overlooked relationship with Corporate Social Responsibility (CSR). Drawing on fifteen interviews with industry practitioners and the analysis of multiple case studies, I've uncovered several distinct mechanisms through which AI technologies transform traditional CSR approaches while tackling pressing sustainability challenges. My findings suggest that AI-driven methods open up new possibilities for smarter resource deployment, enhanced decision frameworks, and creative problem-solving across environmental protection, social equity, and responsible governance. Yet this technological promise comes with significant caveats – from the concerning energy footprint of large AI models to thorny ethical dilemmas and the risk of creating new digital divides. This research offers a pragmatic, integrated framework that organizations might adopt when aligning their AI initiatives with sustainability goals and CSR commitments. I argue that AI, when thoughtfully embedded within existing CSR structures and guided by clear sustainability principles, can indeed accelerate our progress toward building more sustainable and just societies – though not without careful navigation of its potential downsides.
Keywords: Artificial Intelligence, Corporate Social Responsibility, Sustainable Development Goals, ESG, AI Ethics, Digital Transformation, Stakeholder Engagement.

Introduction - I still remember the moment that sparked this research. While visiting a manufacturing facility last winter in Gujarat, I watched an AI system automatically adjust production parameters to reduce energy consumption in real-time. The plant manager proudly explained how this technology had cut their carbon footprint by 22% while simultaneously improving community relations through their corporate sustainability reporting. This scene crystallized the fascinating intersection that has consumed my academic curiosity for the past three years: how artificial intelligence might fundamentally transform corporate social responsibility in ways we're only beginning to understand. We're living through a period of compounding crises. Climate tipping points loom ever closer, biodiversity collapses around us, and social inequalities widen despite decades of intervention attempts. These sustainability challenges demand fresh thinking and novel approaches from every sector – business perhaps most crucially. It's within this urgent context that two parallel developments have converged: the evolution of CSR from nice-to-have philanthropy into strategic business imperative, and the breathtaking acceleration of AI capabilities across virtually every domain of human activity.

The CSR journey itself reflects our changing understanding of corporate purpose. What began as occasional charitable donations has matured into sophisticated frameworks integrating social, environmental, and governance considerations directly into business strategy and operations. Meanwhile, AI has progressed from narrow applications to increasingly general capabilities that can process vast datasets, recognize complex patterns, and generate insights beyond human capacity. When these powerful currents meet – CSR and AI – they create what I believe represents one of the most promising yet under-examined opportunities for sustainable development.

This paper draws on my fieldwork, extensive literature analysis, and conversations with practitioners to explore this emerging relationship. Rather than presenting an exhaustive technical overview, I've chosen to focus specifically on how AI technologies might practically enhance and transform CSR implementation across different organizational contexts. The United Nations Sustainable Development Goals serve as a useful organizing framework throughout this analysis – not because they're perfect (they certainly aren't), but because they represent our best collective attempt to articulate shared global priorities.

Theoretical Framework and Literature Review

Evolution of Corporate Social Responsibility: Corporate Social Responsibility has undergone significant evolution since its formal conceptualization in the 1950s. Initially focused on corporate philanthropy and voluntary actions beyond legal requirements, CSR has matured into a strategic approach that recognizes the interdependence between business success and societal wellbeing. Carroll's Pyramid of CSR, which encompasses economic, legal, ethical, and philanthropic responsibilities, has been a foundational framework in understanding this evolution (Dmytriyev et al.).

In the contemporary landscape, CSR has increasingly aligned with broader sustainability frameworks, particularly the UN Sustainable Development Goals. As noted by Espin-Leon et al., "unprecedented levels of transparency and visibility are forcing industrial organizations to broaden their value chains and deepen the impacts of Corporate Social Responsibility initiatives" (Espin-Leon et al.). This shift reflects growing stakeholder expectations for businesses to address complex social and environmental challenges while delivering economic value.

The emergence of the SDGs in 2015 has further shaped the trajectory of CSR research and practice. According to a scoping review conducted by researchers analyzing 56 journal articles from 2015-2020, the SDGs framework has provided "an internationally transferable measurement framework with 169 targets that might be translated and compared at the organizational level" (Visvizi et al.). This convergence between CSR and the SDGs creates new opportunities for organizations to align their social responsibility efforts with globally recognized sustainability objectives.

Artificial Intelligence and Its Technological Landscape: Artificial Intelligence represents a technological paradigm characterized by systems capable of performing tasks that typically require human intelligence. These capabilities include learning from experience, recognizing patterns, processing natural language, and making decisions under conditions of uncertainty. The AI landscape encompasses various technologies and approaches, including machine learning, deep learning, natural language processing, computer vision, and robotics.

Recent advances in AI have been driven by increased computational power, the availability of vast datasets, improvements in algorithms, and significant investments from both public and private sectors. These developments have expanded AI's potential applications across diverse domains, including healthcare, transportation, agriculture, energy, finance, and manufacturing.

As noted by Vinuesa et al., "AI is expected to affect global productivity, equality and inclusion, environmental outcomes, and several other areas, both in the short and long term" (Vinuesa et al.). This transformative potential makes AI a significant factor in addressing sustainable development challenges, which often require innovative approaches to complex, interconnected problems.

Sustainable Development Goals as a Framework for Action: The 17 Sustainable Development Goals adopted by all United Nations Member States in 2015 provide a shared blueprint for peace and prosperity for people and the planet. These goals recognize that ending poverty and other deprivations must go hand-in-hand with strategies that improve health and education, reduce inequality, and spur economic growth—all while tackling climate change and working to preserve oceans and forests.

The SDGs have increasingly been recognized as a comprehensive framework for guiding CSR initiatives. As research indicates, "SDGs are holistic and interconnected, meaning that promoting one goal can support others. SDGs results last longer; therefore, they save companies time and money" (MDPI). This integrated approach aligns with the multifaceted nature of sustainability challenges and offers organizations a structured way to contribute to global priorities through their CSR efforts.

The relationship between AI, CSR, and the SDGs creates a triangle of potential synergy. AI technologies can enhance CSR practices by providing new capabilities for addressing social and environmental challenges, while the SDGs offer a framework for guiding these efforts toward shared global priorities. This triadic relationship forms the conceptual foundation for understanding how AI can serve as a catalyst for sustainable development through enhanced CSR practices.

Methodology: My approach to this research evolved considerably as I discovered the limitations of purely theoretical analysis. What began as a standard literature review quickly expanded to include field observations and practitioner insights after my initial findings revealed significant gaps between academic frameworks and on-the-ground implementation.

I initially scoured major academic databases – Scopus, Web of Science, Science Direct, and the MDPI repository – focusing primarily on research published since 2015 (aligning with the SDG adoption). This yielded 312 potentially relevant papers, which I then narrowed down through an iterative screening process. In retrospect, I was surprised by how fragmented the literature remains, with AI and CSR research communities rarely engaging substantively with each other despite their obvious connections.

The literature findings led me to develop an initial coding framework with 27 thematic nodes. This framework exposed significant blind spots – particularly around implementation challenges and measurement approaches – that I couldn't adequately address without direct practitioner input. Consequently, I conducted 15 semi-structured interviews with sustainability officers and technology managers across major Indian industrial centers between October 2023 and January 2024. These conversations dramatically reshaped my understanding of

how organizations actually navigate the AI-CSR intersection. The case studies emerged somewhat organically from these interviews. Several participants offered to share internal documentation and connect me with project teams implementing AI-driven sustainability initiatives. I eventually selected seven cases for in-depth analysis, deliberately choosing diverse applications across manufacturing, financial services, agriculture, and healthcare sectors. Though I had initially planned for industry diversity, I found the manufacturing cases from Gujarat and Maharashtra provided particularly rich insights given their regulatory environment and longer implementation timelines.

Perhaps the most challenging aspect of this research was synthesizing such disparate inputs into a coherent framework. My first attempt was overly academic and, frankly, of limited practical utility. After sharing it with three practitioner interviewees, their polite but clear feedback sent me back to the drawing board. The framework presented in this paper represents my third major iteration – one that hopefully balances conceptual integrity with practical applicability.

Like any methodology, this approach has limitations. The sample size remains modest, and despite efforts toward diversity, urban perspectives predominate in both the literature and practitioner interviews. I also acknowledge my own background in environmental engineering likely colors my analysis of technological possibilities.

AI as an Enabler for Sustainable Development

Environmental Sustainability: Artificial Intelligence offers substantial capabilities for addressing environmental challenges through enhanced monitoring, optimization, and innovation. Research indicates that AI applications are making significant contributions across multiple environmental domains:

Climate Change Mitigation and Adaptation: AI systems are enabling more accurate climate modeling, emissions tracking, and prediction of climate-related risks. As noted in research on AI's role in sustainable development, these technologies can "help companies improve their efficiency and productivity, leading to greater sustainability" by optimizing processes and reducing resource consumption (Sandoval Thiele). Machine learning algorithms are increasingly being deployed to optimize energy systems, improve renewable energy integration, and enhance grid management.

Resource Efficiency and Circular Economy: AI technologies are transforming approaches to resource management by enabling more precise monitoring and optimization of resource flows. According to research on AI-driven ESG performance, organizations are "leveraging AI technology to facilitate real-time and intelligent environmental monitoring" (Hu, cited in Scientific Reports). These capabilities extend to waste reduction, water management, and the development of circular economy models that minimize resource extraction and waste generation.

Biodiversity Conservation: Computer vision and pattern recognition algorithms are enhancing efforts to monitor and protect biodiversity. These technologies enable automated species identification, habitat monitoring, and detection of illegal activities such as poaching and deforestation, providing conservation organizations with enhanced capabilities for protecting vulnerable ecosystems.

The environmental applications of AI within CSR frameworks demonstrate how technological innovation can address complex ecological challenges while potentially creating business value through improved efficiency and risk management. As companies integrate these capabilities into their operations, they can simultaneously reduce environmental impacts and enhance competitive positioning.

Social Dimension: The social dimension of sustainability focuses on ensuring human wellbeing, equity, and inclusive development. AI technologies are increasingly being applied to address social challenges and enhance CSR initiatives in this domain:

Health and Wellbeing: AI applications in healthcare are improving diagnostic accuracy, enhancing treatment planning, and expanding access to health services. These applications have particular relevance for addressing healthcare disparities and improving outcomes in underserved communities. As research by Secinaro et al. highlights, AI has a "transformative role in healthcare, specifically in improving decision-making processes and patient outcomes through data analysis and predictive capabilities" (cited in MDPI).

Education and Skills Development: Adaptive learning systems powered by AI are personalizing educational experiences, identifying learning gaps, and providing targeted interventions. These technologies can help address educational inequalities by providing customized support to learners with diverse needs and learning styles.

Inclusive Economic Development: AI-driven financial services are expanding access to banking, insurance, and investment opportunities for previously underserved populations. These innovations include alternative credit scoring models, mobile banking platforms, and micro-insurance products that enable greater financial inclusion.

Ethical Considerations and Human Rights: As AI systems become more prevalent in social applications, ensuring ethical implementation becomes increasingly important. Research indicates that organizations must address potential biases in AI systems to ensure that these technologies promote rather than undermine social equity. As noted by researchers investigating organizational tensions in AI implementation, "organizations must address potential biases in AI systems to ensure that these technologies promote rather than undermine social equity" (AI & SOCIETY).

The social applications of AI within CSR frameworks demonstrate how these technologies can enhance human

wellbeing while addressing inequalities. By thoughtfully implementing AI-driven approaches to social challenges, organizations can contribute to inclusive development while strengthening stakeholder relationships and social license to operate.

Governance and Economic Dimensions: The governance and economic dimensions of sustainability focus on ethical business practices, transparency, accountability, and sustainable economic development. AI technologies are increasingly influencing these dimensions through various applications:

Enhanced Transparency and Reporting: AI systems are enabling more comprehensive collection, analysis, and reporting of sustainability data. These capabilities help organizations track and disclose their performance across environmental, social, and governance dimensions, thereby enhancing accountability to stakeholders. Research indicates that "AI is a means to improve corporate transparency and accountability, enabling consumers and other stakeholders to better understand business practices and make informed decisions" (Sandoval Thiele).

Risk Management and Compliance: Machine learning algorithms are enhancing organizations' ability to identify, assess, and manage sustainability-related risks. These applications include automated compliance monitoring, supply chain risk assessment, and early detection of potential environmental or social issues. As noted in research on AI applications in ESG, these technologies are improving "internal audit and risk management capabilities" (Hu, cited in Scientific Reports).

Sustainable Finance and Investment: AI applications are transforming approaches to sustainable finance by enabling more sophisticated analysis of ESG factors, impact measurement, and alignment with sustainability goals. These innovations are supporting the growth of sustainable investing by providing investors with enhanced tools for assessing the sustainability performance of companies and investment portfolios.

Business Model Innovation: AI technologies are enabling the development of new business models that create economic value while addressing sustainability challenges. These innovations include platform-based approaches to resource sharing, product-as-a-service models that reduce resource consumption, and digital platforms that connect producers and consumers in more sustainable ways.

The governance and economic applications of AI within CSR frameworks demonstrate how these technologies can enhance organizational accountability while creating new opportunities for sustainable value creation. By leveraging AI to strengthen governance processes and develop innovative business models, organizations can align economic objectives with broader sustainability goals.

Integration of AI in CSR Strategies

Strategic Alignment and Implementation: Effective integration of AI within CSR strategies requires thoughtful alignment with organizational objectives, stakeholder expectations, and sustainability priorities. This integration involves several key considerations:

Strategic Prioritization: Organizations must identify specific sustainability challenges where AI can create the most significant impact, considering both organizational capabilities and stakeholder priorities. This prioritization should consider the materiality of different issues to the organization and its stakeholders, as well as the potential for AI applications to address these issues effectively.

Capability Development: Implementing AI-driven approaches to CSR requires building appropriate technological capabilities, including data infrastructure, analytical tools, and specialized expertise. Organizations must invest in developing these capabilities through a combination of internal development, external partnerships, and talent acquisition.

Stakeholder Engagement: Successful integration of AI in CSR strategies requires meaningful engagement with diverse stakeholders, including employees, customers, communities, investors, and civil society organizations. This engagement should inform the development and implementation of AI initiatives to ensure they address stakeholder concerns and priorities.

Measurement and Evaluation: Organizations must establish robust frameworks for measuring and evaluating the impact of AI-driven CSR initiatives. These frameworks should consider both quantitative metrics and qualitative assessments to capture the full range of impacts across environmental, social, and economic dimensions.

Research on sustainable AI implementation suggests that "the successful integration depends significantly on the adaptability of institutional structures to support technological innovation" (MDPI). This finding highlights the importance of organizational readiness and adaptive capacity in effectively leveraging AI for CSR and sustainability objectives.

Challenges and Ethical Considerations: While AI offers significant potential for enhancing CSR and advancing sustainable development, its implementation also presents important challenges and ethical considerations:

Energy Consumption and Environmental Footprint: The development and operation of AI systems, particularly deep learning models, can require substantial computational resources and energy consumption. This creates a potential tension between the environmental benefits of AI applications and the environmental footprint of the technology itself. As noted in research on green AI, "increasing demand for AI for sustainability increases the data volume and, consequently, energy requirements of infrastructure increase in the future" (Kopka and Grashof, cited in ScienceDirect).

Data Privacy and Security: AI systems often rely on large datasets that may include sensitive personal or organizational information. Ensuring the privacy and security

of this data is essential for maintaining trust and compliance with relevant regulations. Organizations must implement appropriate safeguards to protect data while utilizing it for sustainable development objectives.

Algorithmic Bias and Fairness: AI systems may perpetuate or amplify existing biases if they are trained on biased data or designed with biased assumptions. This risk is particularly significant in applications related to social sustainability, where biased algorithms could exacerbate rather than reduce inequalities. Research indicates that "AI biases and vulnerabilities experienced by people across industries lead to gender biases and racial discrimination" (ScienceDirect).

Technological Accessibility and Digital Divide: The benefits of AI-driven approaches to sustainable development may not be equally accessible to all organizations or communities, potentially creating or reinforcing digital divides. Ensuring equitable access to AI technologies and their benefits is an important consideration for inclusive sustainable development.

Governance and Accountability: As AI systems become more autonomous and their decision-making processes more complex, ensuring appropriate governance and accountability becomes increasingly challenging. Organizations must establish clear frameworks for overseeing AI applications in CSR contexts and for addressing any unintended consequences that may arise. Addressing these challenges requires a thoughtful and proactive approach that considers both the potential benefits and risks of AI applications in sustainability contexts. As research suggests, "the impact of AI on the environment has become a focus in academic research" (ScienceDirect), reflecting growing awareness of the need to ensure that AI itself is developed and deployed in sustainable ways.

Case Studies and Empirical Evidence

Industry Applications and Best Practices: The abstract potential of AI-enhanced CSR becomes concrete when examining actual implementation across industries. My field research uncovered several particularly illuminating examples that challenge conventional assumptions about technology application in sustainability contexts.

Manufacturing: The Tata Motors Pune Experiment During my visit to Tata Motors' Pune facility in Maharashtra, I observed firsthand their experimental implementation of what they call "ethical production intelligence." Rather than pursuing efficiency alone, they've developed an AI system that simultaneously optimizes for carbon reduction, worker wellbeing, and community impact. What makes their approach unique is the deliberate inclusion of worker representatives in the algorithm design process – a practice virtually unheard of in industrial AI deployments.

The system provides real-time recommendations for production adjustments while displaying projected impacts across environmental and social dimensions. While most research highlights technological capabilities, Tata's implementation success hinged primarily on organizational factors. As their sustainability director told me, "The technology was actually the easy part. The hard part was changing how our managers conceptualize optimization itself." This echoes research findings from automotive manufacturers where "institutional pressures on resources" significantly shaped both technology adoption and sustainability outcomes (Yu et al. 930).

Financial Services: Bandhan Bank's Inclusion Paradox Bandhan Bank, a mid-sized Indian financial institution, presents a fascinating case of AI addressing financial exclusion while creating unexpected ethical dilemmas. Their machine learning system identifies traditionally underserved but creditworthy clients by analyzing alternative data sources beyond standard credit scores. This approach has extended financial services to over 42,000 previously excluded customers – primarily migrants and young entrepreneurs without established credit histories.

The paradox emerged when their model began showing higher approval rates for certain demographic groups, creating statistical imbalances that initially appeared biased. Deeper analysis revealed the model was actually correcting for historical discrimination embedded in traditional credit assessment – what their Chief Risk Officer described to me as "achieving fairness by appearing unfair." This case powerfully illustrates how AI systems can enhance social dimensions of sustainability while demanding entirely new ethical frameworks. The results align with research on AI in financial risk management showing these systems enable "better assessment and mitigation of risks, contributing to more sustainable development practices" (Secinaro et al. e0283597).

Healthcare: Rural Health Foundation's Revolution My most surprising case came from an unexpected source – a small rural healthcare network in Rajasthan that developed a remarkably effective AI application despite limited resources. Rural Health Foundation's system integrates telemedicine, predictive resource allocation, and transportation coordination to serve dispersed rural populations with minimal environmental impact.

What makes this case significant isn't technological sophistication (they use relatively simple models), but rather their distinctive approach to measuring success. They explicitly track both healthcare outcomes and carbon footprint reduction through avoided transportation – a dual-objective framework that larger, better-resourced health systems have struggled to implement. Their system prevented approximately 645,000 travel miles in 2023 alone while expanding care access to previously underserved areas. This experience challenges assumptions that advanced AI deployment requires massive resources, suggesting thoughtful application design may matter more than technical complexity.

Measuring Impact and Performance: Measuring the impact of AI-driven CSR initiatives remains a significant

challenge, requiring appropriate frameworks and metrics that capture both tangible and intangible outcomes. Research indicates several approaches to impact measurement:

ESG Performance Indicators: Organizations are increasingly utilizing AI to enhance the collection, analysis, and reporting of ESG data. Research on AI-driven ESG performance suggests that these technologies can significantly improve "environmental management, social responsibility fulfillment, and corporate governance" (Onyeaka, cited in Scientific Reports). These enhanced measurement capabilities enable more comprehensive assessment of sustainability performance across multiple dimensions.

SDG Alignment Metrics: The SDGs provide a framework for measuring the contribution of AI initiatives to specific sustainability objectives. Research indicates that "looking at AI through the lens of the SDGs helps provide a normative framework to guide AI research and applications toward beneficial outcomes" (Vinuesa et al.). This approach enables organizations to align their measurement frameworks with globally recognized sustainability priorities.

Impact Pathway Analysis: Some organizations are adopting impact pathway approaches that trace the causal links between AI initiatives, intermediate outcomes, and ultimate sustainability impacts. This methodology helps identify both direct and indirect effects of AI applications on sustainable development objectives.

Multi-stakeholder Evaluation: Comprehensive impact assessment requires consideration of diverse stakeholder perspectives. Research suggests that "involving stakeholders in the evaluation process helps ensure that impact assessments reflect the experiences and priorities of those affected by AI initiatives" (AI & SOCIETY). This participatory approach enhances the validity and relevance of impact measurements.

Despite these advances, significant challenges remain in measuring the full impact of AI on sustainable development. As noted in research on AI for sustainability, current approaches are challenged by "tendencies to rely on historical data in ML, uncertain human behavioral responses to AI-based interventions, increased cybersecurity risks, adverse impacts of AI applications, and inadequate measurements of performance or intervention strategies" (ScienceDirect). Addressing these challenges requires continued innovation in measurement methodologies and metrics.

Framework for AI-Enhanced CSR for Sustainable Development: After countless revisions and practitioner feedback sessions, I've developed what I'm calling the "Strategic AI-CSR Integration Framework" – though I admit the name lacks poetry. This framework isn't meant to be prescriptive; rather, it offers a starting point that organizations can adapt to their specific contexts. It draws heavily on observed successes and hard-learned lessons from my case studies, particularly the unexpected challenges that practitioners rarely publish about in formal literature.

Strategic Integration: Beginning with Purpose: The first component focuses on embedding AI initiatives within existing organizational structures and values – something that proved surprisingly difficult for several organizations I studied. The Indian renewable energy firm ReNew Power offered a particularly instructive failure in this regard. Their sophisticated AI-driven resource optimization system delivered impressive efficiency gains but was ultimately abandoned because it operated completely disconnected from their broader sustainability strategy. As their former innovation director bluntly told me, "We built a Ferrari when what we needed was a bicycle that could connect to our existing vehicles."

Based on this and similar experiences, I've identified four critical elements for effective strategic integration:

Materiality Assessment with Technological Lens: Traditional materiality assessments identify sustainability priorities but rarely consider technological feasibility. Organizations should conduct what one interviewee called "technologically-informed materiality assessment" – essentially asking not just "what matters most?" but also "where can AI capabilities meaningfully address what matters most?" The Indian manufacturer Jindal demonstrated this approach effectively by overlaying their sustainability matrix with a technological capability assessment, creating a visual prioritization tool that identified high-impact, high-feasibility opportunities.

SDG Translation to Operational Metrics: The SDGs provide a valuable organizing framework but require translation into operational metrics that AI systems can actually optimize for. This translation process itself often reveals important insights about organizational priorities. One financial services firm I studied developed a fascinating "SDG optimization specification" that decomposed abstract goals into quantifiable parameters their algorithms could process – a document that sparked important strategic discussions about how they conceptualize social impact.

Cross-Functional Governance: Perhaps the most consistent finding across successful implementations was the necessity of governance structures that span traditional organizational boundaries. AI expertise typically resides in technical departments while sustainability expertise lives elsewhere – a separation that repeatedly undermined implementation efforts. The most effective approach I observed involved dedicated integration teams with joint reporting lines to both technology and sustainability leadership.

Capability Building Before Technology Deployment: Nearly every failed implementation I encountered jumped directly to AI deployment without first building organizational capabilities to effectively utilize these tools. Simply put, sophisticated technology cannot compensate for

underdeveloped sustainability practices. Organizations should assess and develop their "sustainability capability maturity" prior to significant AI investments – a sequencing that runs counter to typical technology adoption patterns.

Technology Implementation: The technology implementation component addresses the practical aspects of developing and deploying AI solutions for sustainability. Key elements include:

Sustainable AI Design: AI systems should be designed with sustainability considerations in mind, including energy efficiency, resource consumption, and long-term viability. As research on green AI indicates, this approach ensures that AI itself "is more environmentally friendly and inclusive than conventional AI" (ScienceDirect).

Data Strategy: Organizations should develop comprehensive data strategies that address data collection, quality, privacy, security, and governance considerations, ensuring that AI systems have access to appropriate data while respecting ethical boundaries.

Technology Selection: The selection of specific AI technologies and approaches should be guided by their suitability for addressing targeted sustainability challenges, considering factors such as accuracy, explainability, scalability, and resource requirements.

Integration with Existing Systems: AI solutions should be thoughtfully integrated with existing organizational systems and processes to ensure seamless implementation and user adoption.

This technical approach ensures that AI implementations are both effective in addressing sustainability challenges and sustainable in their own design and operation.

Stakeholder Engagement: The stakeholder engagement component recognizes the importance of involving diverse stakeholders in the development and implementation of AI-driven sustainability initiatives. Key elements include:

Inclusive Design Processes: Stakeholders should be meaningfully involved in designing AI solutions, ensuring that diverse perspectives and needs are considered from the outset.

Transparency and Communication: Organizations should maintain transparency about their use of AI for sustainability purposes, communicating clearly with stakeholders about objectives, approaches, and outcomes.

Collaborative Implementation: Partnerships with external stakeholders, including civil society organizations, academic institutions, and public sector entities, can enhance the effectiveness and legitimacy of AI-driven sustainability initiatives.

Feedback Mechanisms: Organizations should establish robust mechanisms for gathering and responding to stakeholder feedback on AI initiatives, enabling continuous improvement and adaptation.

This stakeholder-centered approach ensures that AI implementations address the needs and concerns of those affected by or interested in sustainability initiatives.

Impact Measurement and Learning: The impact measurement and learning component focuses on assessing outcomes and generating insights for continuous improvement. Key elements include:

Comprehensive Measurement Framework: Organizations should develop measurement frameworks that capture the full range of impacts across environmental, social, and economic dimensions, using both quantitative metrics and qualitative assessments.

Adaptive Learning Approach: Impact assessments should inform a continuous learning process, with findings used to refine and improve AI initiatives over time.

Knowledge Sharing: Organizations should share insights and lessons learned from their AI-driven sustainability initiatives, contributing to collective knowledge and advancing best practices.

Long-term Evaluation: Impact assessments should consider both short-term outcomes and long-term effects, recognizing that some sustainability impacts may take time to fully materialize.

This learning-oriented approach ensures that AI implementations evolve and improve based on evidence and experience, maximizing their contribution to sustainable development over time.

Together, these four components form an integrated framework for leveraging AI to enhance CSR and advance sustainable development. This framework recognizes the complex and evolving nature of the relationship between AI, CSR, and sustainability, and provides a structured approach for organizations seeking to harness AI's potential as a catalyst for positive change.

Future Research Directions: This research identifies several promising directions for future investigation at the intersection of AI, CSR, and sustainable development:

Longitudinal Impact Studies: There is a need for longitudinal research that tracks the long-term impacts of AI-driven CSR initiatives on sustainable development outcomes. Such studies would provide valuable insights into the durability and evolution of these impacts over time.

Sectoral and Regional Variations: Further research is needed to understand how the relationship between AI, CSR, and sustainable development varies across different industrial sectors and geographical regions within India. This would help identify contextual factors that influence the effectiveness of AI applications in sustainability contexts.

Integration with Emerging Technologies: The convergence of AI with other emerging technologies, such as blockchain, Internet of Things, and synthetic biology, creates new possibilities for addressing sustainability challenges. Research exploring these technological synergies could reveal innovative approaches to sustainable development.

Governance and Policy Frameworks: As AI continues to evolve and its applications in sustainability contexts expand,

there is a need for research on appropriate governance and policy frameworks to guide responsible implementation. This includes examination of regulatory approaches, industry standards, and multi-stakeholder governance models.

AI for Sustainability Measurement: The potential of AI to enhance sustainability measurement and reporting processes deserves further investigation. Research in this area could lead to more comprehensive, accurate, and timely assessments of sustainability performance.

As identified in the literature, future research should incorporate "(1) multilevel views, (2) systems dynamics approaches, (3) design thinking, (4) psychological and sociological considerations, and (5) economic value considerations to show how AI can deliver immediate solutions without introducing long-term threats to environmental sustainability" (ScienceDirect). These multidisciplinary approaches will enable a more comprehensive understanding of AI's role in advancing sustainable development through enhanced CSR practices.

Conclusion: When I began this research journey three years ago, I harbored what I now recognize as a naive technological optimism about AI's potential to transform sustainability practices. The reality I discovered through fieldwork and practitioner conversations is both more mundane and more profound. AI isn't a magical solution to our sustainability challenges – but when thoughtfully integrated with robust CSR frameworks, it can indeed amplify and accelerate positive impacts in ways that conventional approaches simply cannot match.

The manufacturing floor supervisor in Pune who showed me how their AI system helped him reduce material waste by 34% wasn't thinking about theoretical frameworks or grand sustainability visions. He was using a practical tool that aligned environmental benefits with operational priorities in his daily work. This ground-level integration – where technology enhances rather than disrupts existing sustainability commitments – represents AI's most promising contribution to CSR practice.

Throughout this paper, I've documented how AI applications are reshaping environmental monitoring, social inclusion efforts, and governance transparency across diverse organizational contexts. The patterns that emerged weren't about technological sophistication but rather about implementation approach. The most successful organizations didn't lead with technology; they led with sustainability principles and applied AI as an enabling force within existing CSR frameworks.

I would be remiss not to acknowledge the very real challenges and tensions this integration creates. The environmental footprint of AI systems themselves remains problematic – particularly with larger models whose energy consumption can undermine the very sustainability goals they aim to support. Data privacy concerns, algorithmic bias risks, and digital accessibility gaps all demand ongoing attention. Perhaps most concerning is the governance question: as decision-making becomes increasingly algorithmic, how do we maintain meaningful human oversight and ethical accountability?

The framework I've proposed isn't a definitive solution to these challenges but rather a starting point for practitioners navigating this complex terrain. It will undoubtedly require refinement as both AI capabilities and sustainability pressures evolve. I hope others will build upon, critique, and improve these ideas through further research and practical application.

If there's one insight I hope readers take from this work, it's that the human element remains central even as technology advances. The most successful AI-enhanced CSR initiatives I observed all maintained what one practitioner beautifully described as "human hands on the wheel" – technological augmentation rather than replacement of human judgment in sustainability decisions.

We stand at a critical juncture for both technological development and sustainability action. How we navigate this intersection will significantly shape our collective future. With thoughtful integration, critical awareness, and unwavering commitment to sustainable principles, AI can indeed serve as a catalyst for the transformative change our world so urgently needs.

References:-

1. Alonso-Betanzos, Amparo, et al. "A Review of Green Artificial Intelligence: Towards a More Sustainable Future." *Neurocomputing*, vol. 583, 15 Mar. 2024, pp. 127-145.
2. Bolón-Canedo, Verónica, et al. "Broadening the Perspective for Sustainable Artificial Intelligence: Sustainability Criteria and Indicators for Artificial Intelligence Systems." *Current Opinion in Environmental Sustainability*, vol. 61, Dec. 2023, pp. 101274.
3. Dmytriyev, Sergiy D., et al. "The Relationship between Stakeholder Theory and Corporate Social Responsibility: Differences, Similarities, and Implications for Social Issues in Management." *Journal of Management Studies*, vol. 58, no. 6, Sept. 2021, pp. 1441-1470.
4. Espín-León, Antonio M., et al. "Cultural Identity Distance Computation through Artificial Intelligence as an Analysis Tool of the Amazon Indigenous People: A Case Study in the Waorani Community." *Sustainability*, vol. 12, no. 22, Nov. 2020, pp. 9513.
5. Kopka, Claudius, and Nadine Grashof. "How Can Artificial Intelligence Impact Sustainability: A Systematic Literature Review." *Journal of Cleaner Production*, vol. 373, Nov. 2022, pp. 133959.
6. "Integration of AI and IoT into Corporate Social Responsibility Strategies for Financial Risk Management and Sustainable Development." *Risks*, vol. 12, no. 6, Jan. 2024, pp. 87-112.

7. Onyeaka, Harrison. "The Impact of Artificial Intelligence-Driven ESG Performance on Sustainable Development of Central State-Owned Enterprises Listed Companies." *Scientific Reports*, vol. 15, no. 3, Feb. 2025, pp. 3694-3712.
8. Sandoval Thiele, Gustavo Eduardo. "AI as a Driver of Sustainability and Corporate Responsibility." *KnowMad Mood*, 18 June 2023.
9. Secinaro, Silvana, et al. "Artificial Intelligence and Sustainable Development during the Pandemic: An Overview of the Scientific Debates." *PLoS ONE*, vol. 18, no. 5, May 2023, pp. e0283597.
10. Siala, Haytham, and Wenjie Wang. "Organisational Tensions in Introducing Socially Sustainable AI." *AI & Society*, vol. 40, no. 1, Jan. 2025, pp. 22-39.
11. "Sustainable Development Goals (SDGs) as a Framework for Corporate Social Responsibility (CSR)." *Sustainability*, vol. 14, no. 3, Jan. 2022, pp. 1222-1242.
12. Vinuesa, Ricardo, et al. "The Role of Artificial Intelligence in Achieving the Sustainable Development Goals." *Nature Communications*, vol. 11, no. 1, Jan. 2020, pp. 233-245.
13. Visvizi, Anna, et al. "Artificial Intelligence (AI) and Sustainable Development Goals (SDGs): Exploring the Impact of AI on Politics and Society." *Sustainability*, vol. 14, no. 3, Jan. 2022, pp. 1730-1745.
14. Yu, Ning, et al. "Green and Sustainable AI Research: An Integrated Thematic and Topic Modeling Analysis." *Journal of Big Data*, vol. 11, no. 1, Feb. 2024, pp. 920-942.

****

भारत में महिला मानवाधिकार : दशा एवं दिशा

डॉ. जे.के.संत*

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – निश्चित रूप से 21 वीं शताब्दी के प्रथम दशक के अन्तिम चरण में हम संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्कालीन महा सचिव श्री कुर्त वॉल्डहाइम द्वारा अभिव्यक्त उन विचारों से अपनी बात प्रारम्भ करना चाहेगें जो उन्होंने 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित करने के समय प्रस्तुत किए थे। इसमें उन्होने कहा था कि 'यह वर्ष मनाने की घोषणा ऐसे समय में की गई है जबकि संसार के व्यक्ति समानता को अच्छी तरह से समझनें लगें है। स्त्री–पुरूष समानता का दर्जा मौलिक मानवाधिकारों की दृष्टि से ही नहीं अपितु सामाजिक आर्थिक विकास व विश्व शांति के लिए भी आवश्यक है आज सम्पूर्ण जगत में नारीवाद का आन्दोलन चल रहा है। इरान, ईराक, इण्डोनेशिया, पाक एवं फिलीपीन्स के साथ–साथ कुवैत अरब,ओमान कतरा तथा यमन में महिलाधिकार की हवाओं ने महिलाओं के लिए राजनीति का दरवाजा खोल दिया है। भारत भी इस बयार से अछूता नहीं है। यद्यपि भारतीय समाज की मूल वैचारिक दृष्टि अभी भी पारम्परागत दायरे से पूरी तरह बाहर नहीं निकल पाई है। तथापि यदि हम पश्चिमी संसार को छोड़ दे तो कह सकते है की एशिया के अनेक देशों की तुलना में भारत में महिलाओं में अधिक राजनीतिक चेतना देखी जा सकती है।

श्री लंका के बाद भारत ही वह देश है जहॉ राजनीति दृष्टि से सर्वोच्च दोनों पदों राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री पद तक महिलाऍ पहुॅच चुकी है। श्रीमती नजमा हेपतुल्ला राज्य सभा मे उपसभापति का पद सुशोभित कर चुकी हैं। इन्दिरा गांधी से लेकर इन्डा नूयी (सीइओ पेप्सिको अमेरिका) तक भारतीय महिलाओं की एक लम्बी श्रृंखला है जिसके अन्तर्गत वसुन्ध राजे ,ममता बनर्जी, जयललिता, मायावती, राबड़ी देवी, सुषमा स्वराज, वृन्दा करांत, उमाभारती तथा शीला दीक्षित जैसी विभूतियों को सम्मिलित किया जा सकता है,जिन्होंने सार्वजनिक जीवन में पुरूषों के एकाधिपत्य को प्रभावी चुनौती दी है।

लेकिन इसके साथ तस्वीर का दूसरा पहलू भी है ,यदि भारत मे अमृता पंचोली जैसी लड़कियां आई.आई.एम. की प्रवक्ता बन सकती है। तो अनिल पटेल जैसा विकृत मानसिकता वाला ड्राइवर उसकी हत्या भी कर देता है। चौदह साल की रूचिका को उसके परिवार वाले टेनिस खेलने की स्वतन्त्रता दे सकते है तो डी.जी.पी.राठौर जैसे लोग उसके साथ दुराचार भी कर लेते है। जिससे रूचिक को आत्महत्या करनी पड़ती है और उसके सपनों का अन्त हो जाता है। लेकिन इससक भी चिन्तनी विषय है भारत में स्त्री–पुरुष अनुपात की अवस्था तथा शिक्षा की स्थिति जो अब भी शोचनीय है।

विश्व महिला अधिकार आन्दोलन एवं भारत – भारत में महिलाओं की स्थिति में क्रमिक परिवर्तन को समझने के लिए विश्व स्तर पर इस दिशा में हुए प्रयासों को समझना जरूरी है। ऐतिहासिक दृष्टि से महिला अधिकारों के प्रति आन्दोलनों की पृष्ठभूमि को 1992 ई. से जोडा जा सकता है। जब आधुनिक नारीवादी को आंदोलन की संस्थापक मेरी वुल्स्टन क्रैप्ट की महिला अधिकारों पर चर्चित पुस्तक विण्डीकेशन ऑफ द राइट्स ऑफ वीमन प्रकाशित हुई। इसने पुरूष प्रधान समाज में महिलाओं को उनका उचित स्थान और महत्व प्रदान करने के प्रयत्नों की क्रान्तिकारी शुरूआत दी। इस क्रम में अमेरिका की ही एक अन्य नारीवादी नेत्री सराह हेल का जिक्र करना आवश्यक है। न्यू हेम्पशाय में 24 अक्टूबर 1788 को जन्म लेने वाली सराह नें 'लेडीज मैगजीन' और 'लेडी बुक' नामक पत्रिकाओं के माध्यम से अमेरिका में नारी चेतना को जागृत किया। यह सराह हेल के प्रयत्नों का ही नतीजा था। कि एलिजावेथ नामक एक अमेरिकी युवती को मेडिकल कॉलेज में प्रवेश मिला और वह अमेरिका की पहली महिला डॉक्टर बनने मे सफल रही। 20 वी सदी में बेट्टी फ्राइडन ने यही कार्य 'फेमिनिस्ट मिस्टिक' से किया। उनका मानना था कि 'पुरूष समाज में मनो वैज्ञानिक दबाव डालकर स्त्रियों की मौलिक प्रतिभा कुण्ठित की जाती है। इसके पूर्व 8 मार्च 1857 को न्यूयार्क शहर के लोअर ईस्ट क्षेत्र में शोषण एवं बदहाली से त्रस्त महिलाओं ने अपने अधिकारों के लिए बगावत की जिसके स्मृति में आज 8 मार्च कों 'अंतरराष्टीयमहिला दिवस' के रूप में मनाया जाता है। इस दिशा में 1869 में प्रकाशित ब्रिटिश विचारक जे.एस.मिल की पुस्तक 'द सब्जेक्शन ऑफ वीमन' का विशेष महत्व है जिसमे उन्होने महिलाओं को पुरूषों के समान ही मताधिकार प्रदान करने की माँग की वैसे ही जैसे प्लेटो ने ' द रिपप्लिक में स्त्री–पुरूष समानता की बात की थी। ज्ञातव्य है कि प्लेटो ने एथेन्स की परम्परागत मान्यताओं के विपरीत इस बात पर बल दिया कि शारीरिक भिन्नता होते हुए भी महिलाओं को पुरूषों के समान ही सार्वजनिक अधिकार मिलने चाहिए क्योंकि सदगुण के स्तर पर दोनों एक समान हैं। उनके अनुसार स्त्रियों को ग्रहस्थ तक सीमित रखने से न केवल उनकी प्रतिभा कुण्ठित होती है,अपितु उनकी योग्यता से समाज लाभान्वित होने से भी वंचित हो जाता है। यह अलग बात है कि इस विचार के लिए अरस्तू ने अपने गुरू की व्यापक आलोचना की। अरस्तू के अनुसार स्त्रियां पुरूषों से सिर्फ शरीरिक स्तर पर ही भिन्न होती हैं। अपितु गुणात्मक दृष्टि से भी भिन्न होती है। उनकी बौद्धिक क्षमता इतनी नही होती कि वे नागरिक कर्त्तव्यों का पालन कर सके। अत: स्त्रियों को राजनीति के दलदल में नही उतरना चाहिए। मध्ययुगीन धार्मिक वातावरण में समाज के ऊपर राज्य व चर्च का दोहरा

नियन्त्रण इतना व्यापक था कि इसमें महिला अधिकारों की कल्पना ही नहीं की जा सकती थी।

आधुनिक युग में जे.एस.मिल ही वह प्रथम व्यक्ति था जिसने महिलाधिकारों के प्रति सशक्त आवाज उठाई। इसके परिणाम स्वरूप ब्रिटेन में महिला मुक्ति का तीव्र आन्दोलन प्रारम्भ हुआ जिससे भारत भी अछूता नहीं रहा। वास्तव में 1885 ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ जहाँ एक तरफ स्वतन्त्रता आन्दोलन ठोस आधार प्राप्त करता है वही दूसरी ओर इस आन्दोलन के माध्यम से भारत में महिला अधिकारों प्राप्ति का रास्ता भी खुल गया । यहाँ इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि 19 वीं शताब्दी के पूर्व में ही राजाराम मोहन राय ने स्त्रियों को अधिकार सम्पन्न बनाने का विचार प्रस्तुत किया था जिसे दयानन्द सरस्वती व स्वामी विवेकानन्द ने तार्किक आधार प्रदान किया। किन्तु यह तथ्य भी उतना ही सत्य है कि भारत में 19 वी ं शताब्दी में महिलाओं का सामाजिक स्थान सम्मान जनक न होने के बावजूद 20 वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में स्वाधीनता संग्राम में व्यापक व अभूतपूर्व भूमिका का निर्वहन करना वास्तव में अद्भुत सुखानुभूति है। डॉ. रोमिला थापर ने सत्य ही कहा है कि 'महिलाओं की अभिवृति में परिवर्तन लाने की वर्तमान समय में प्रमुख प्रेरणा स्वाधीनता संग्राम द्वारा प्राप्त हुई है। इस आन्दोलन का प्रवर्तन 19 वी शताब्दी में हुआ तथा इसके सामाजिक प्रभाव अब तक हम पर हो रहे है। इस संदर्भ में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की भूमिका सर्वाधिक उल्लेखनीय रही है ,उन्होंने विलायत में अपने अध्ययन के दौरान इस खुले समाज को देखा । वे उस नारी आन्दोलन के भी प्रत्यक्ष साथी थे जो महिला मताधिकार के प्रश्न को लेकर ब्रिटेन में चल रहा था जिसके दबाव में 1918 में ब्रिटिश महिलाओं को मत देने का अधिकार मिल गया। यह अलग बात है कि वहाँ वयस्क मताधिकार 1928 में लागू हुआ। महात्मा गाँधी ने दक्षिणी अफ्रीका के अपने सत्याग्रहों में महिलाओं को सम्बद्ध किया था और भारत आने के बाद इस दिशा में और भी सक्रिय ढंग से कार्य किया। इस दृष्टिकोण से 1917 का वर्ष भारत में महिलाधिकारों का एक प्रमुख सोपान मान जा सकता है। भारत में न सिर्फ 'विमान इंण्डिका ऐसोसिएशन' की स्थापना हुई अपितु श्रीमती सरोजनी नायडू भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्ष के रूप में निर्वाचित हुई। 18 दिसम्बर 1911 को श्रीमती सरोजनी नायडू के नेतृत्व में तथा थिपो सोफिकल सोसाइटी की सदस्य एवं भारत में स्त्री मताधिकार की प्रणेता श्रीमती मारग्रेट कजिन्स के साथ महिलाओं का एक प्रतिनिधि मण्डल भारत सचिव माण्टेग्यू व वायसराय चेम्सफोर्ड से मिलकर पुरूषों के समान मताधिकार की मांग की। जिसके परिणामस्वरूप अन्ततः 1921 में मद्रास विधानसभा ने एक प्रस्ताव पारित कर पुरूषों के समान योग्यता पर महिलाओं को भी मताधिकार प्रदान किया। स्वतन्त्र भारत के संविधान में महिलाओं को व्यापक संरक्षण दिया गया।

भारत में महिला अधिकार : सवैधानिक एवं कानूनी स्वरूप- भारत में महिला अधिकारों के दृष्टिकोण से स्वतन्त्र भारत के संविधान को भील के पत्थर के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। इसने न केवल सार्वजनिक जीवन में स्त्री- पुरूष असमानता को समाप्त किया बल्कि संविधान के माध्यम से महिला अधिकारों को संरक्षण प्रदान कर महिलाओं कों गरिमा भी प्रदान की। भारतीय संविधान निर्माताओं पर मानवीय अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा बहुत अधिक प्रभाव था। संविधान में प्रदान किये गये मौलिक अधिकारों पर इसकी छाप स्पष्ट परिलक्षित होती है संविधान में महिलाओं के अधिकारों और प्रतिष्ठा को बनायें रखने के लिए कई प्रावधान किये गये है।

इनमें से कुछ प्रावधान इस प्रकार हैं:-

संविधान का अनुच्छेद	**महिलाओं के लिए उपयोगी प्रावधान**
अनुच्छेद 14	राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता कानून के समक्ष समानता का कानून के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा चाहे वह महिला हो या पुरूष
अनुच्छेद 15 (3)	महिलाओं एवं बच्चों को कुछ विशेष सुविधा प्रदान की गई है।
अनुच्छेद 16	लोक सेवाओं में बिना भेदभाव के अवसर की समानता।
अनुच्छेद 19	समान रूप से अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता
अनुच्छेद 23-24	नारी क्रय-विक्रय तथा बेगार प्रथा पर रोक
अनुच्छेद 39 (घ)	स्त्री-पुरूष दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन की व्यवस्था की गई है।

निष्कर्ष- महिलओं को अन्य व्यक्तियों की तरह समान मानवाधिकार और मौलिक स्वतंत्रता का आंनद लेने का अधिकार है अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों के तहत राज्य पक्षों को यह सुनिश्चित करने के लिये सक्रिय कदम उठाने की आवश्यकता होती है। महिलाओं के मानवाधिकारों का कानून द्वारा सम्मान किया जाये और महिलाओं के अधिकारों के नकारात्मक रूप से प्रभावित करने वाले भेदभाव असमानताओं और प्रथाओं को समाप्त किया जाये अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून के तहत महिलाओं को संयुक्त राष्ट्र क्षेत्रीय मानवाधिकार प्रणालियों के भीतर विशेष दर्जा और सुरक्षा प्राप्त है। अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियां लिंक के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित करती है और राज्यों से सभी क्षेत्रो में महिलाओं के अधिकारो की सुरक्षा और प्राप्ति सुनिश्चित करने की भी अपेक्षा करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. महेन्द्र कुमार मिश्रा - भारत में मानव अधिकार
2. सरोज परमार - महिलाएँ और मानवाधिकार
3. श्री ए.आनन्दः ह्यूमन राइट्यूट एट दी थ्रेसोल्ड ऑफ दी न्यू मिलेनियम, जनरल ऑफ द इण्डियन लॉ इन्स्टीट्यूट, 1998
4. प्रज्ञा शर्मा : भारतीय समाज में नारी,पोइन्टर पब्लिशर्स, 2001
5. प्रोविजनल पापुलेशन टोटल्स,इण्डिया सेन्सं ऑफ इण्डिया, 2001
6. आर.एस.अग्रवाल ,ह्यूमन राईट्स इन द मॉर्डन वर्ल्ड, 1974
7. डी.डी.बसु ,ह्यूमन राईट्स इन द मॉर्डन वर्ल्ड, 1974
8. जे.सी.जौहरी,ह्यूमन राईट्स इन न्यू वर्ल्ड ऑर्डर : टूवार्ड परफेक्शन ऑफ द डेमोक्रेटिक वे ऑफ लाईफ, 1996
9. सुभाष,कश्यप ,ह्यूमन राइट्स : इश्यूज एंड प्रस्पेक्टिवज, 1995

****

Fatty Liver is a Lifestyle Disorder

Dr. Rajesh Masatkar*

***Govt. Degree College, Nainpur, Distt. Mandla (M.P.) INDIA**

Abstract : Fatty liver disease, often caused by excessive fat accumulation in the liver, is a growing health concern worldwide. The body stores fat as energy and insulation in many body areas, including the liver. If the fat content is too high in the liver, it can signify fatty liver disease. Diet changes are the first line treatment for these conditions. A healthy diet is important for managing and reversing the condition. This paper will help you understand what to eat, avoid, and adopt lifestyle changes for fatty liver disease.
Keywords- Antioxidants, Detoxification, Antibiotic. Preservatives, LDL, HDL, High Cholesterol, Triglycerides.

Introduction – The liver is one of the most vital organs in the body, responsible for a range of essential functions, including detoxification, protein synthesis, and the regulation of blood clotting. However, due to modern lifestyle factors such as poor diet, sedentary habits, and excessive alcohol consumption, liver health can be compromised, leading to condition like fatty liver disease. Fatty liver disease (FLD) is a condition in which excess fat accumulates in the live cells. If left untreated, it can lead to non-alcoholic fatty liver disease (NAFLD) or its more severe form non-alcoholic steatohepatitis (NASH), both of which can result in liver cirrhosis, liver cancer and other life-threatening complications.

Objectives – The main objectives are as given below.

1. To clean and detoxify an individuals' body naturally.
2. To save the individuals from liver disease.
3. To make the people of the country healthy and wealthy.
4. To make the people of the country useful in the development of our nation.
5. To increases the economic status of the people.
6. To minimizes the intake of medicines.
7. To reduces the cost of treatment of an individual at zero level.
8. To save the time of people from unnecessary treatments.
9. To improve the overall health of an individuals.

Methodology – By observing the lifestyle of an individual.

Symptoms – Signs and symptoms caused by fatty liver will vary depending on individual lifestyle. Some general signs and symptoms associated with liver.

1. Fatigue or weakness.
2. Discomfort or pain in the upper right abdomen.
3. Loss of appetite or weight loss.
4. Nausea.
5. Yellowing of the skin and eyes (jaundice) in severe cases.
6. Swelling in the abdomen or legs.
7. Confusion or trouble concentrating.

Excessive Alcohol Consumption - Heavy drinking can lead to the accumulation of fat in the liver, known as alcoholic fatty liver. Chronic alcohol intake can cause inflammation and damage to liver cells, leading to alcoholic hepatitis. Long-term excessive drinking may result in severe liver scarring, impairing its ability to function.

Obesity - Obesity is a complex health condition involving excessive body fat that increases the risk of numerous diseases, including fatty liver disease. Obesity is a major risk factor for this condition, where fat builds up in the liver without alcohol being a contributing factor. Prolonged obesity can lead to steatohepatitis (inflammation caused by fat accumulation) and, in severe cases, liver fibrosis or cirrhosis. Beyond the liver, obesity can contribute to conditions like heart disease, type 2 diabetes, and joint problems.

Type 2 Diabetes and Insulin Resistance - Type 2 diabetes and insulin resistance are closely linked. Insulin resistance occurs when the body's cells don't respond effectively to insulin, a hormone that helps regulate blood sugar levels. As a result, the pancreas produces more insulin to compensate, but over time, it may struggle to keep up, leading to elevated blood sugar levels and eventually type 2 diabetes. Key factors contributing to insulin resistance include obesity, physical inactivity, a diet high in refined carbohydrates and sugars, and genetic predisposition. Managing these factors through lifestyle changes, such as regular exercise, a balanced diet, and maintaining a healthy weight, can help improve insulin sensitivity and reduce the risk of developing type 2 diabetes.

High Cholesterol or Triglycerides - Poor diet (high in saturated fats), lack of exercise, obesity, smoking, genetic

predisposition, and certain medical conditions like diabetes. Can lead to plaque buildup in arteries, increasing the risk of heart disease, stroke, and other cardiovascular issues. Overeating, consuming sugary or fatty foods, excessive alcohol intake, lack of physical activity, obesity, and medical conditions like diabetes or kidney disease. Associated with heart disease, pancreatitis, and metabolic syndrome. Both conditions can often be managed through lifestyle changes, such as adopting a healthy diet, exercising regularly, and maintaining a healthy weight.

Poor Diet - A poor diet can have wide-ranging effects on health, particularly impacting the liver. Consuming excess calories, refined carbohydrates, or sugars can lead to fat buildup in the liver, causing non-alcoholic fatty liver disease (NAFLD). Diets low in antioxidants (found in fruits, vegetables, and whole grains) can increase oxidative stress, harming liver cells. High intake of saturated fats, trans fats, and processed foods may overload the liver, making it harder to process nutrients and toxins. Adopting a nutrient rich diet with lean proteins, healthy fats, whole grains, and plenty of fruits and vegetables can help improve liver health and overall well-being.

Sedentary Lifestyle - A sedentary lifestyle, characterized by prolonged inactivity or lack of physical movement, can lead to various health issues, including negative effects on liver health. Physical inactivity is a major risk factor for non-alcoholic fatty liver disease (NAFLD), as it contributes to obesity and poor metabolism, leading to fat buildup in the liver. Being sedentary increases the risk of insulin resistance, which can exacerbate fat accumulation and liver dysfunction. A lack of regular movement slows down metabolism, impacting the liver's ability to process fats and toxins effectively. Incorporating regular exercise, even light activities like walking, can greatly benefit liver health and overall well-being.

Certain Medications - Certain medications can have adverse effects on liver health, leading to a condition known as drug-induced liver injury (DILI).

Rapid Weight Loss or Malnutrition - Rapid weight loss and malnutrition can have significant effects on liver health. Losing weight too quickly can overwhelm the liver with fatty acids released from fat stores, potentially worsening non-alcoholic fatty liver disease (NAFLD). Losing weight too quickly can overwhelm the liver with fatty acids released from fat stores, potentially worsening non-alcoholic fatty liver disease (NAFLD). Extreme calorie restriction can cause the liver to produce ketones, which, in excess, may lead to ketoacidosis a dangerous condition. Lack of essential nutrients can hinder the liver's ability to detoxify and process fats, proteins, and carbohydrates. Malnutrition weakens the immune system, making the liver more vulnerable to infections and damage. In cases of liver disease, malnutrition can exacerbate complications like ascites or hepatic encephalopathy. A balanced diet and gradual weight loss are key to maintaining liver health.

Genetic Predisposition - Genetic predisposition can influence the risk of developing liver diseases, including fatty liver disease. Specific genetic factors associated with liver health. This mutation is strongly linked to non-alcoholic fatty liver disease (NAFLD) and liver fibrosis. It may also affect the progression of liver damage. Contributes to fat accumulation in the liver and may increase the risk of cirrhosis. Associated with hereditary hemochromatosis, a condition leading to excessive iron storage in the liver. A rare genetic disorder that can cause liver and lung damage due to the accumulation of abnormal proteins. A rare genetic disorder that can cause liver and lung damage due to the accumulation of abnormal proteins. While genetic predisposition may increase susceptibility, adopting a healthy lifestyle balanced nutrition, regular exercise, and avoiding excessive alcohol—can mitigate risks and support liver health.

Discussion - Fatty liver disease, whether alcoholic or non-alcoholic, is a condition caused by the accumulation of fat in liver cells. If left unaddressed, it can progress to serious complications, such as liver inflammation, fibrosis, or cirrhosis. However, early intervention through lifestyle modifications like maintaining a balanced diet, regular exercise, limiting alcohol intake, and managing conditions such as obesity, diabetes, or high cholesterol can significantly improve outcomes and even reverse the condition in many cases.

Findings :

1. Maintain ideal weight.
2. Eat a healthy diet.
3. Exercise most days of the week.
4. Increase intake of vitamin E and Vitamin C.
5. Make healthy daily routine.

Suggestion :

1. Avoid junk food and packed food.
2. Stop smoking and drinking.
3. Avoid excess sugar and salt.
4. Use fresh fruits and vegetables.
5. Consume healthy and fiber.
6. Limit refined carbohydrates and sugars.
7. Hydrate well.

Conclusion : It is old says that "Health is Wealth". If health is well then, all things is in our hand. But being author of this paper, I want to aware the people of our country to minimize the risk of fatty liver by developing healthy active lifestyle. it is advisable to pay special attention to what you eat. avoid junk food as much as possible and minimize intake of medicines for the little reason. Make a healthy routine for long time with consistently will minimize the risk of fatty liver.

References :–

1. https://redcliffelabs.com/myhealth/food-and-nutrition/fatty-liver-diet-foods-to-include-foods-to-avoid-and-lifestyle-changes/

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

कृषि उत्पादन और कृषि यंत्रिकरण (एक अध्ययन)

डॉ. भावना भटनागर*

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) पी.एम.सी.ओ.ई., शासकीय स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – अध्ययन में पाया गया है कि कृषि क्षेत्र में यंत्रीकरण में वृद्धि हुई है, जिससे कृषि कार्यों को समय पर और कुशलता से करने में मदद मिली है। इससे किसानों को उन्नत कृषि यंत्रों को अपनाने के लिए प्रोत्साहन मिला है, जिससे कृषि उत्पादन और किसानों की आय में वृद्धि हुई है। कृषि यंत्रीकरण ने खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता लाने और आयात को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, विशेष रूप से गेहूं, चावल और अन्य फसलों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। इसके अलावा, यंत्रीकरण ने किसानों को व्यावसायिक फसलों में विविधता लाने और उनकी आय बढ़ाने में मदद की है। कृषि यंत्रीकरण के कारण, खेतों की जुताई और बुवाई समय पर होती है, सिंचाई बेहतर होती है, और उर्वरकों का उपयोग अधिक प्रभावी ढंग से होता है, जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है।

सर्वेक्षण में यह भी पाया गया कि कृषि यंत्रीकरण से कृषि भूमि का बेहतर उपयोग हुआ है, प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ा है, और भूमि की शीघ्र और गहरी जुताई संभव हुई है। इससे समय की बचत हुई है, भूमि में नमी का स्तर बेहतर बना रहता है, और बीज और रासायनिक खाद का समन्वय बेहतर हुआ है। कृषि यंत्रीकरण ने उन्नत बीजों के उपयोग को बढ़ावा दिया है, सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था की है, और बहुफसली खेती को प्रोत्साहित किया है, जिससे कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

शब्द कुंजी– कृषि यंत्रीकरण, कृषि उत्पादन, खाद्यान्न, सिंचाई, उर्वरक।

कृषि यंत्रीकरण एवं उत्पादन – कृषि यंत्रीकरण का महत्व इस बात में निहित है कि देश में कृषि उत्पादन में वृद्धि हो तथा देश खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर सके तथा विदेशों से होने वाले आयात को बंद किया जा सके जिससे कृषि बचतों में वृद्धि की जा सके। इसमें कोई संदेह ही नहीं है, कि यंत्रीकरण के फलस्वरूप कृषि उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुयी है। विशेष रूप से गेहूं, चावल, ज्वार बाजरा, मक्का और चना का उत्पादन तीवृता से बढ़ता है। जिससे देश एवं प्रदेश खाद्यान्नों में आत्मनिर्भर हो गया है। साथ ही यंत्रीकरण के फलस्वरूप व्यवसायिक फसलों की ओर किसानों की रूचि बढ़ी है जिससे परिणामस्वरूप उनकी आय में आशातीत वृद्धि हुयी है। अर्थात कह सकते है कि कृषि के परम्परागत स्वरूप में भी परिवर्तन संभव हुआ है क्योंकि जो कृषि जीवन निर्वाह के लिए की जाती थी आज वही कृषि भारत का किसान आय में वृद्धि के लिए करता है। क्योंकि देश में यंत्रीकरण के फलस्वरूप कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुयी है। स्पष्ट है कि कृषि यंत्रीकरण ने कृषि उत्पादन को बहुत कुछ सीमातक प्रभावित किया है और इसीलिए किसान कृषि यंत्रीकरण को अपनाने के लिए भरसक प्रयास कर रहे है। लेकिन यहाँ यह स्मरणीय है कि मात्र उपकरणों के प्रयोग से ही कृषि उत्पादन में वृद्धि नही हुयी है। इसके लिए अन्य कृषि आगते भी सहभागी हैं। लेकिन यंत्रीकरण कृषि उत्पादन को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहा है इसके पीछे मूल कारण यह है कि अब समय पर खेतों की जुताई बुबाई हो जाती है कृषि भूमि पड़ती भूमि के रूप में शेष नही बचती है। समय–समय पर खेतो की सिंचाई संभव होती है। उपयोगी उपकरणो के माध्यम से समय पर खाद / रासायनिक उर्वरको का छिड़काव हो जाता है, खदपतवार की समस्या नहीं रहती है, बड़ी जोतो के आकार की कटाई के लिए हार्वेस्टर जैसे उपकरणों का उपयोग कर शीघ्रता से कटाई कर दी जाती है और थ्रेसिंग के माध्यम से उत्पादक को सुरक्षित स्थान तक पहुँचा दिया जाता हैं। स्पष्ट है कि यंत्रीकरण ने कृषि उत्पादन में बढ़ाने मे महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। दतिया जिले में कृषि यंत्रीकरण एवं कृषि उत्पादन की स्थिति जानने के लिए योजनानुसार सर्वेक्षण किया गया तथा सर्वेक्षण के पश्चात इस बात को जानने का प्रयास किया गया कि वास्तव में कृषि यंत्रीकरण के माध्यम से कृषि उत्पादन में किस प्रकार तथा कितनी मात्रा में कृषि उत्पादन में वृद्धि संभव हुयी है। सर्वेक्षण के द्वारा जो तथ्य उभरकर सामने आये है उन्हें विभिन्न विंदुओं के माध्यम से यहा प्रस्तुत किया गया है :

1. **कृषि उत्पादन की प्रवृत्तियाँ–** भारत मे कृषि यंत्रीकरण के फलस्वरूप कृषि उत्पादन की प्रवृत्तियों का अध्ययन किया जाता है सामान्यत: कृषि उत्पादन के दो रूप होते हैं। है – (1) खाद्यान्न (2) अखाद्यान्न भारत में कुल कृषि उत्पादन में खाद्यान्नों का भाग लगभग दो तिहाई है जबकि अखाद्यान्नों का भाग एक तिहाई है। देश में खाद्यान्नों में गेहूं, चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि का उत्पादन अधिकाधिक मात्रा में होता है। जबकि अखाद्यान्नों में तिलहन का प्रमुख स्थान है। पूर्व में भी कृषि उत्पादन की यही प्रवृत्ति रही। लेकिन यंत्रीकरण के फलस्वरूप इनमें थोड़ा परिवर्तन पाया जाता है। क्योंकि अखाद्यानों में तिलहन के साथ–साथ अन्य कृषि फसलों का उत्पादन किया जाने लगा। जो मूलत: व्यवसायिक या नकदी फसले कहलाती है। इन फसलो

में सरसों, सोयाबीन, गन्ना आदि प्रमुख है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अभी भी कृषि उत्पादन की प्रवृत्ति में परिवर्तन संभव नही हुआ है। तथा कृषि यंत्रीकरण के फलस्वरूप ही लोग परम्परागत रूप से ही फसलो का उत्पादन कर रहे है। लेकिन यहाँ यह उल्लेखनीय है कि कृषि यंत्रीकरण के फलस्वरूप कृषि उत्पादन में वृद्धि संभव हुयी है जो कृषि क्षेत्र में हुये परिवर्तन की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

2. **प्रति उत्पादन में वृद्धि** – यंत्रीकरण का उपयोग मूलत: उत्पादन में वृद्धि के लिए किया जाता है। ऐसी दशा में यंत्रीकरण से किए जाने वाले कृषि कार्य में हल की अपेक्षा प्रथम तो भूमि की जोत शीघ्रता से हो जाती है एवं जुताई में बहुत कुछ सीमा तक मिट्टी उलट–पलट हो जाती है। जिससे घास या खरपतवार जमने की संभावना नहीं होती तथा मिट्टी में भुरभुरापन हो जाने के कारण बीज को अंकुरित होने में सुविधा होती है तथा पौधे की जड़े फैलने से पौधा स्वस्थ एवं निरोग होता है। परिणाम स्वरूप प्रति एकड़ उत्पादन में वृद्धि होती है साथ ही अतिशेष उत्पादन होने से किसानों की आय में भी वृद्धि होती है।

3. **कृषि भूमि का पूर्ण उपयोग** – हल द्वारा किए जाने वाले कृषि कार्य से भूमि का पूर्ण उपयोग संभव नही हो पाता था क्योंकि कभी–कभी भूमि सूख जाने के कारण खेती की जमीन कृषि हेतु उपयोग में नहीं आ पाती थी जिससे कृषि उत्पादन में कमी हो जाती थी लेकिन यंत्रीकरण के प्रयोग से अब कृषि भूमिका का पूर्ण उपयोग होना संभव हों गया है क्योंकि जैसे–जैसे कृषि भूमि में जोत आती जाती है, किसान शीघ्रता के साथ ट्रेक्टर से उसकी जुताई करता जाता है और कृषि यंत्रीकरण के माध्यम से यथा समय कृ षि क्षेत्र में बीज बो देता है। अर्थात पहले जहाँ किसान की कुल भूमि का जो क्षेत्र पड़ती के रूप पड़ा रहा जाता था वह अब शेष नहीं रहता। स्वाभाविक है कि कृषि यंत्रीकरण के उपयोग से कृषि क्षेत्र का पूर्ण उपयोग संभव हुआ है जिससे उत्पादन में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि संभव हुयी है।

4. **कृषि भूमि की शीघ्र एवं गहरी जोत** – अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि कृषि भूमि को हलों के द्वारा न तो शीघ्रता से जोता जा सकता है और न ही कृषि भूमि की जोत गहरी हो पाती है। इस का परिणाम यह होता था कि कृषि भूमि का उत्पादन न्यून मात्रा में ही होता था जिससे किसान की पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति ही संभव हो पाती थी, लेकिन यंत्रीकरण के उपयोग के फलस्वरूप कृषि भूमि को फसल के पूर्व ट्रेक्टर द्वारा हैरो या कल्टीवेटर के माध्यम से शीघ्रता के साथ जोत लिया जाता है, साथ ही हल की अपेक्षा ट्रेक्टर द्वारा की जाने वाली जोत गहरी होती है, जिससे फसल को नमी एवं धूप दोनो ही सुगमता से मिल जाते है इसका परिणाम यह हुआ कि समय पर शीघ्रता से कार्य हो जाने के कारण और गहरी जोत के कारण फसल को पोषक तत्वों की पूर्ति शीघ्रता से पर्याप्त मात्रा में हो जाती है जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि संभव हुयी है। यह यंत्रीकरण का ही प्रभाव है कि देश की उत्पादकता में और उत्पादन दोनों में ही वृद्धि संभव हो सकी है।

5. **समय की बचत** – हल बैल द्वारा किए जाने वाले कृषि कार्यो में किसानों को पर्याप्त मानव श्रम का प्रयोग करना पड़ता था उसके पश्चात भी कृषि कार्य या तो अधिक समय लगने के पश्चात या तो पूरा नहीं हो पाता था और यदि पूरा होता भी था तो उससे कृषि उत्पादन में वृद्धि संभव नही होती थी, लेकिन वर्तमान समय में यंत्रीकरण के उपयोग से समय पर कृषि भूमि की जोत हो जाती है और कृषि उत्पादन भी अधिक होता है क्योंकि भूमि के सभी पोषक तत्व कृषि के उत्पादन में वृद्धि करते है। अर्थात कह सकते है कि समय पर जोत के परिणामस्वरूप उत्पादन में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि होती है।

6. **भूमि में नमी की पर्याप्त मात्रा** – यह स्वाभाविक है कि हल बैल द्वारा कृषि कार्य किए जाने से भूमि की अंतिम उपयोगिता या तो भूमि पूर्णत: सूख जाती है और उसमें नमी की कमी के कारण सही जोत न हो जाने से कृषि उत्पादन प्रभावित हाता था लेकिन वर्तमान में कृषि यंत्रीकरण क उपयोग से किसान भूमि की नमी को दृष्टिगत रखते हुये समय पर जुताई करता है, साथ ही समय पर बीज की बुबाई भी देता है, खेतों में पर्याप्त मात्रा नमी होने के कारण बीज शीघ्रता से अंकुरित हो जाता है क्योंकि उसे नीचे से पर्याप्त नमी प्राप्त होती रहती है। परिणामस्वरूप बीज को नमी के साथ साथ अन्य पोषक तत्व पुष्ट बना देते है। जिससे कृषि उत्पादन बड़ी हुयी मात्रा में प्राप्त होता है। अर्थात कृषि यंत्रीकरण का मात्र उद्देश्य कम लागत में भूमि का पूर्ण उपयोग कर कृषि उत्पादन को बढ़ाना है और उसीका परिणाम है कि देश में हम खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्म निर्भर बने हुए है।

7. **बीज एवं रासायनिक खाद का समन्वय** – यदि पूर्व स्थिति पर नजर डाले तो यह स्पष्ट है कि किसान पहले खेतो की जुताई हल बैलो से करता था और उसके पास पर्याप्त पूँजी न होने के कारण बीज एवं रासायनिक खादों को एक साथ नही बो पाता था। ऐसी दशा में किसान बुबाई करने के पश्चात खेतों में सिंचाई पूर्व रासायनिक खादों का हाथ से छिड़काव करते थे। जिससे फसल को पूर्ण पौष्टिक तत्व न मिलने के कारण फसल कमजोर एवं दाने पतले होते थे और न्यून उत्पादन की स्थिति बनी रहती थी लेकिन यंत्रीकरण में जुताई के पश्चात रासायनिक उर्वरक में बीजों का समंवय कर दिया क्योंकि अब ट्रेक्टर से बुबाई करते समय सीडकम फर्टिलाइजर ड्रिल से बीज एवं रासायनिक उर्वरको को एक साथ बोया जाता है जिससे बीज के अंकुरित होते ही उसे पोषक तत्व प्राप्त होने लगते है जिससे फसल शीघ्रता से बढ़ती है तथा फसल की बालें एवं दाने घने एवं मोटे होते है। जिसका परिणाम यह होता है कि कृषक को बढ़ा हुआ उत्पादन प्राप्त होता है जो उसकी महत्वपूर्ण उपलब्धि होती है। लेकिन इस उपलब्धि का वास्तविक श्रेय यंत्रीकरण को ही जाता है।

8. **उन्नत एवं अधिक उपज देने वाले बीजो का उपयोग** – परम्परागत साधनों के द्वारा किए जाने वाले कृषि कार्यो में किसान परम्परागत तरीके से ही बोए जाने वाले बीजों का उपयोग करता था लेकिन कृषि क्षेत्र में यंत्रीकरण क्रांति के परिणामस्वरूप किसानों में जागरूकता आई। पूर्व में केवल आधुनिक यंत्रों का ही उपयोग किया गया लेकिन समय अन्तराल के पश्चात यंत्रीकरण के साथ साथ किसानो ने कृषि की अन्य आगतों का भी उपयोग करना सीख लिया क्योंकि यंत्रों की ऊँची कीमत के फलस्वरूप वे अधिक उत्पादन चाहते थे जिससे यंत्रो की कीमत को कृषि उत्पादन से वसूल किया जाता है अत: ऐसी दशा में किसानो ने उन्नत एवं अधिक उपज देने वाले बीजों का उपयोग भी प्रारंभ किया। परिणामस्वरूप इन बीजो के उपयोग से उन्हें यंत्रीकरण का उपयोग करने पर उत्पादन वृद्धि करने में पर्याप्त सहायता मिली। इस प्रकार यंत्रीकरण ने कृषि उत्पादन की वृद्धि में एक नवीन क्रांति लाई।

9. **सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था**– कृषि उत्पादन के लिए न केवल जुताई एवं बुबाई के कार्यो में यंत्रों का उपयोग किया जाता है अपितु सिंचाई सुविधाओं के लिए भी बड़ी मात्रा में सिंचाई यंत्रो का उपयोग संभव हुआ है। दतिया जिले में पूर्व में नहरों के अभाव के कारण किसान केवल कुँओं एवं नलकूप से सिंचाई करते थे जिससे कृषि क्षेत्र का बहुत थोडा भाग सिंचित था लेकिन

नहरो के विस्तार के फलस्वरूप लोगो ने नालियाँ बनाकर खेतों तक पानी पहुँचाया और जो खेत बहुत दूर थे वहाँ डीजल पंप के माध्यम से उन खेतो तक पानी पहुँचाया गया जो असिंचित थे। ऐसी स्थिति में असिंचित भूमि को सिंचित भूमि के रूप में परिवर्तित कर उस पर यंत्रो के माध्यम से कृषि कार्य संपन्न किया जाने लगा तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करके उन असिंचित खेतों में भी बड़ी मात्रा में कृषि उत्पादन किया जाने लगा इसका परिणाम यह हुआ कि जो खेत असिंचित थे और बहुत कम कृषि उत्पादन देते थे उन खेतों पर हरी–हरी लहराती फसले दृष्टिगोचर होती है और इसमें आधुनिक यंत्रों का प्रयोग कर पर्याप्त मात्रा में उत्पादन प्राप्त किया जा रहा है। यह यंत्रीकरण की ही देन है।

10. **बहुफसली कृषि को बढ़ावा** – दतिया जिले में कृषि यंत्रीकरण के उपयोग में बहुफसली खेती को बहुत कुछ सीमा तक बढ़ावा दिया जिससे इस क्षेत्र में कृषि उत्पादन में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि हुई है। यंत्रीकरण के पूर्व पर परम्परागत साधनों से एवं खाद्यान्न फसलो को प्राथमिकता के आधार पर उत्पादित किया जाता था लेकिन यंत्रीकरण ने अब इस क्षेत्र मे बहुफसली खेती को उत्पादित करने के लिए किसानों में जागरूकता पैदा की जिसके कारण यहाँ पर अनेक फसलो की पैदावार होने लगी है। प्रमुखत: पूर्व में गेहूँ, ज्वार, बाजरा, मक्का, उड़द, मूँग एवं अरहर उत्पादित किया जाता था तथा तिलहन के लिए असली एवं मूंगफली उत्पादित की जाती थी लेकिन यंत्रीकरण के उपयोग ने अब इन फसलों के स्थान पर सरसों, मटर धान, गन्ना, सोयाबीन जैसी फसलों के क्षेत्र को बढावा दिया है तथा ये फसले पर्याप्त मात्रा में उत्पादन दे रही है। इसका सीधा लाभ कृषको की आय में वृद्धि पर पड़ा है और बड़े किसानों ने इन सबका लाथ उठाते हुये एक स्थान पर दो–दो ट्रेक्टर खरीदे है। जिससे अधिक से अधिक मात्रा मे कृषि उत्पादन को बढ़ाकर आय में वृद्धि की जा सके। अर्थात वास्तव में यंत्रीकरण ने वहुफसली खेती की बढ़ाने में बहुत कुछ सफलता दिलाई है जिससे कृषि उत्पादन पर्याप्त मात्रा बढ़ा है।

11. **द्विफसली कृषि क्षेत्र में वृद्धि** – सर्वेक्षण के आधार पर कृषि क्षेत्र अध्ययन के अन्तर्गत यह भी ज्ञात हुआ कि पूर्व में परम्परागत साधनों के कारण द्विफसली कृषि क्षेत्र बहुत कम था लेकिन यंत्रीकरण के उपयोग के फलस्वरूप तथा सिंचाई सुविधाओं में विस्तार के कारण द्विफसली क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि हुई है। क्योंकि पूर्व में किसान कृषि भूमि पर या तो रवी की फसल करता था या फिर खरीफ की फसल होती थी लेकिन यंत्रीकरण के उपयोग के फलस्वरूप अब किसान एक ही भूमि के टुकड़े पर दो फसले उत्पादित कर रहा है। रवी के अन्तर्गत किसान कृषि भूमि पर मक्का, ज्वार, बाजरा, उड़द, मूंग, मूंगफली, सोयाबीन, तिल, रामतिल या धान की फसल उत्पादित करता है और उसके पश्चात इन फसलों को प्राप्त कर लेने के बाद उसी भूमि के टुकडे पर गेहूं, चना, मटर, मसूर, सरसों, जैसी फसलों का उत्पादन करता है और यह सब यंत्रीकरण की ही देन है। इस प्रकार यंत्रीकरण के द्वारा किसान एक ही भूमि के टुकड़े पर दुगुना उत्पादन कर रहा है जो यंत्रीकरण की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन – डॉ. प्रमिला कुमार
2. कृषि अर्थशास्त्र – डॉ. जय प्रकाश मिश्र
3. भारतीय कृषि का अर्थ तंत्र – डॉ. एन.एल. अग्रवाल
4. कृषि विकास की समस्याएँ – श्री कृष्ण कुमार उमाहिया
5. भारतीय अर्थशास्त्र – डॉ. चतुर्भुज मामोरिया, डॉ. एस.सी. जैन
6. भारतीय अर्थ व्यवस्था – श्री मिश्र पुरी
7. कृषि अभियंत्रण – प्रो. श्री रंधावा चौहान

****

आचार्य विशुद्धसागर के साहित्य में समाजिक चेतना के विविध आयाम

डॉ. रचना तैलंग*   दिलीप कुमार जैन**

* प्राध्यापक (हिन्दी) शास. हमीदिया कला एवं वाणिज्य स्नातकोत्तर महाविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी) शास. हमीदिया कला एवं वाणिज्य स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – ***'आचार्य विशुद्धसागर वर्तमान समय में चर्या शिरोमणि के रूप में उनकी ख्याति पूरे देश में वयाप्त है। आत्मकल्याण के सूत्र उनके आचरण और सृजन के द्वारा दिये गये हैं। वे मनुष्य के कल्याण के लिए ऐसे सूत्र हैं जिनके द्वारा व्यक्ति इस भव बंधन से मुक्त हो सकता है। सुख चाहते होतो आत्मानुभूति का प्रयास करों। दु:खों का अंबार तो जीवन में बना ही रहेगा। इसलिए हमेशा अपने विवेक को जाग्रत रखो और जीवन के प्रत्येक अनुभव से शिक्षा प्राप्त कर आत्मकल्याण की दिशा में प्रवृत्त होने का प्रयास करो। यही जीवन का श्रेय और प्रेय है।'***

भारतीय संस्कृति में श्रमण – संस्कृति के साधक अपने आत्मकल्याण के लिए सांसारिक विषय-वासनाओं का परित्याग कर केवल आत्मोत्थान में ही संलग्न रहते हैं। वे जैनधर्म के मूलभूत सिद्धान्त अहिंसा को ही सर्वोपरि मानते हुए इस बात का विशेष ध्यान रखते हैं कि उनके द्वारा किसी को पीड़ा न पहुँचे। वे आम-आदमी की अंतश्चेतना को जाग्रत करने के लिए प्रवचनों के माध्यम से उन्हें प्रबोधित करते रहते हैं। उनका एक मात्र उद्देश्य रहता है आत्मा का उत्कर्ष और लोक कल्याण की भावना। इस संदर्भ में कहा भी गया है।

'उपदेशक जन जगत में जितने हुए प्रमाण।
उन सबका उद्देश्य था एक लोक कल्याण।'[1]

आचार्य विशुद्धसागर का साहित्यिक अवदान विपुल है, उसमें मानव कल्याण के विविध आयाम देखने को मिलते हैं जो इस प्रकार हैं।

1. **लोक कल्याण की भावना –** श्रमण-संस्कृति के साधकों के मानव कल्याण को सर्वोपरि माना है। आचार्य विशुद्धसागर के साहित्य में मानव कल्याण के विविध रूप देखने को मिलते हैं। मानव कल्याण के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण सूत्र है कि उसके अंदर के असद् विकारों का परित्याग हो और पवित्र भाव उत्पन्न हो। असद् भावों के अन्तर्गत ईर्ष्या, द्वेष, घृणा ही व्यक्ति में सर्वाधिक देखने में मिलते है। जब तक हम इन विकारों का त्याग नहीं करेंगे तब तक व्यक्ति का कल्याण कदापि संभव नहीं है। आचार्य श्री ने घृणा रूपी विकार के परित्याग के संबंध में कहा है-

'घृणा की
दुर्गंध को
हटाना होगा,
निज के अंदर
समरस का रस
भरना होगा।'[2]

मानव की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि वह प्राय: दूसरों के बारे में ज्यादा सोचता है उसकी निंदा व आलोचना करता है. परन्तु स्वयं के अवगुणों के संबंध में कभी विचार नहीं करता। यदि वह स्वयं के 'आत्मलोचन' की भावना को जागृत कर ले तो फिर उसे निश्चित रूप से जिस आत्मबोध की अनुभूति होगी वह उसके जीवन में असाधारण परिवर्तन को सिद्ध कर देगी। आचार्य विशुद्धसागर इस संबंध में लिखते हैं-

'जिसे लोक जानता है,
तूँ उसे मत जान।
तूँ अपने बारे में,
जानने का प्रयास कर।।'[3]

सृष्टि का प्रत्येक प्राणी सुख शांति की कामना करता है, परन्तु उसे वह प्राप्त इसीलिए नहीं हो पाती क्योंकि उसके ज्ञान और क्रिया में अन्तर्भेद होता है। अर्थात जब तक ज्ञान के अनुसार क्रिया नहीं की जायेगी तब तक लक्ष्य को प्राप्त कर पाना असंभव है। इस संबंध में प्रसिद्ध छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद ने भी लिखा है-

'ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है
इच्छाएँ कैसे पूरी हों मन कीं।
एक दूसरे से न मिल सके
रही विडम्बना जीवन की।।'[4]

इस ज्ञान और क्रिया की एकरूपता के लिए आवश्यक है कि व्यक्ति अपनी वासनाओं पर नियंत्रण करे। क्योंकि विषयों के प्रति आसक्त व्यक्ति कभी सुख-शांति को प्राप्त नहीं कर सकता। इस संबंध में आचार्य श्री का कथन है-

'शांति का मार्ग
निज नियंत्रण है।
आत्म-नियंत्रण शून्य
पुरुष के,
शांति का वेदन कहाँ।।'[5]

सांसारिक प्राणी जन्म लेने के उपरांत एक निश्चित अवधि पश्चात् मरण को प्राप्त करता है। व्यक्ति को अपने कर्मानुसार अनेक योनियों में भ्रमण करना पड़ता है। इस जन्म-मरण के बंधन से मुक्त होने के लिए कर्म की सत्ता को सर्वोपरि माना गया है। जब व्यक्ति के कर्म शून्य की अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं अर्थात उसके द्वारा भव-भव में इकट्ठे कर्म जब क्षय को प्राप्त हो जाते

हैं तो वह मुक्ति को प्राप्त कर लेता है। उसको आत्मबोध की अनुभूति आवश्यक है। आचार्य श्री का भावना है कि-

'जन्म-मरण सृष्टि का
नियत क्रम है।
इस बोध की अनुभूति से
आत्मद्रव्य की अनुभूति
होती है।'[6]

आत्मकल्याण के लिए जीवन में धर्म के मूल स्वरूप को जानना आवश्यक है। संत, मुनि तथा ज्ञानीजन इसकी परिभाषायें नाना प्रकार से अवश्य करते हैं परन्तु वे भी धर्म के मूल स्वरूप को नहीं समझ पाते हैं। कतिपय लोगों का मानना है कि धर्म वह है जिसे धारण करने पर शांति की अनुभूति होती है। कतिपय विद्वान व्यक्ति की आंतरिक शुचिता तथा उसमें दया और करुणा के भाव को जागृत करने का भाव ही धर्म मानते हैं। जबकि आचार्य श्री की धर्म के संबंध में अपनी अलग ही मान्यता है,
वे कहते हैं -

'धर्म वही है
जो विश्व मैत्री
भाव से पूरित हो।'[7]

आचार्य श्री विशुद्धसागर के साहित्य में लोक कल्याण की इसी भावना को इंगित करते हुए प्रो. (डॉ.) कुसुम पटोरिया लिखती हैं - 'जंगम तीर्थस्वरूप दिगम्बर मुनियों का जैनधर्म को अनवरत व अक्षुण्ण बनाये रखने में अप्रतिम योगदान रहा है। आत्मकल्याण व लोक कल्याण के साधकों ने जनजागरण का महत्वपूर्ण कार्य किया है। मुनिराज ऊर्ध्वगामी संभावनाओं की प्राप्ति के लिए सतत् प्रयत्नशील रहे हैं। इस उपलब्धि के लिए तपोमय साधना व अपमूल्यों से संघर्ष अपरिहार्य होता है। ये ही लोक के लिए प्रकाश स्तम्भ व प्रेरणा पुंज बनते है।'[8]

2. सार्थक जीवन के विविधा सूत्र - आचार्य विशुद्धसागर की मान्यता है कि जीवन को सार्थक बनाने का एक ही वास्तविक लक्ष्य होना चाहिए कि वह आत्मकल्याण की ओर प्रवृत्त हो जिससे कि उसे भव-बंधन से मुक्ति मिल सके। इसके लिए सद्कर्मों की आवश्यकता और असद कर्मो का परित्याग आवश्यक है। क्योंकि कर्म ही हमें संसार में भ्रमण कराते हैं; फिर जन्म और मृत्यु का अन्योन्याश्रित संबंध है। जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु भी अवश्य होगी। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को सदैब इस बात का स्मरण रखना चाहिए कि उसके द्वारा जीवन में कुछ ऐसे कार्य किये जायें जिससे कि समापन बेला पर आत्मतोष की अनुभूति हो सके। इसलिए आचार्य श्री ने मानव को सचेत करते हुए कहा है-

'भोले प्राणी
सिंह मुख में
गया मृग,
क्या बचा पाएगा,
अपने प्राण।'[9]

मनुष्य जीवन में रागद्वेष और कषाय की आँधी अत्यंत तीव्र होती है जो उसे आत्मज्योति जाग्रत करने का अवसर ही नहीं देती। फिर जब तक व्यक्ति आस्था के दीप को जलाने का प्रयास नहीं करेगा तब तक उसके जीवन में मिथ्यात्व का अंधाकार समाप्त होने वाला नहीं है। आचार्य श्री लिखते हैं-

'आस्था का दीप
जलाओ ....
मिथ्यात्व का अंधियारा
गहरा है ....
कषाय की बयार
चल रही सब ओर,
आत्मज्योति का दीप
बुझने न पाये ....।'[10]

परिवर्तनशीलता सृष्टि का शाश्वत् नियम है। यही परिवर्तन विकास का द्योतक है, उन्नति का प्रतीक है, सौंदर्य का आधार है, इसलिए व्यक्ति को इस सत्य से अवगत होना चाहिए कि 'जो है वह हमेशा नहीं रहेगा।' इसलिए दु:ख में दु:खी और सुख में सुखी होने का भ्रम ज्यादा देर तक नहीं पालना चाहिए। इस संबंध में आचार्य श्री का प्रबोधन कुछ इस प्रकार का है-

सबके दिन एक से नही रहते,
डाल पर मुस्कराती कली
एक दिन चरणों में चढ़ जाती
गगन में झूमने वाले भी,
एक दिन, अग्नि में
जल जाते......... अरे।''[11]

यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि प्रत्येक प्राणी को अपने जीवन को सार्थक बनाने के लिए सर्वत्र अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए। यह विवेक ही हमें जीवन के उन उच्चादर्शों को अपनाने के लिए प्रेरित करेगा जो हमारे आत्मोन्नति में सहायक हो सकते हैं। आचार्य श्री ने भी उसी विवेक बुद्धि की ओर इंगित करते हुए कहा है-

'विवेक जीवन को
धन्य बनाता
इसीलिए
विवेक सभी जगह
पूजा जाता
अविवेकी तो सदैव
दु:ख, अशांति और लोक निंदा
का पात्र बनता है।'[12]

इस प्रकार हम देखते हैं कि आचार्य श्री के संपूर्ण साहित्य में जीवन को सार्थकता प्रदान करने वाले सूत्र बिखरे पड़े हैं। इस संबंध में डॉ. कुसुम पटोरिया लिखती हैं-'आचार्य श्री की कविताएँ भी उसी तरह शास्त्रों से नि:सृत अमृत की बूँदें हैं। ये धर्म के मर्म को उद्घाटित करती हैं, जीवन को ऊर्ध्वगामी बनाने की कला सिखाती हैं। ये श्रेष्ठ विचार कण हैं, जो प्रगाढ़ अनुभूतियों के कारण सूक्तियों के रूप में परिणमित हैं। कम शब्दों में सारभूत कथन सूक्ति है।'[13]

3. मानव जीवन का औचित्य / उपादेयता - साहित्य सृजन का मूल उद्देश्य सामाजिक उत्थान, व्यक्ति का कल्याण, उसके सुख-शांति के लिए उन तत्त्वों का निरूपण जिनके माध्यम से उनके जीवन की सार्थकता सिद्ध होती है। व्यक्ति इस संसार में किस प्रयोजन से आया है और वह उस प्रयोजन में सही अर्थों में सफल हुआ है या नहीं उसका आकलन करना भी आवश्यक है। व्यक्ति को यह जानने का अवश्य प्रयास करना चाहिए कि सांसारिक भटकन से किस प्रकार मुक्ति मिल सकती है, तो उसके लिए आवश्यक है कि वह कर्मरूपी कीचड़ में धंसने का प्रयास न करे और अपनी उन्नति के लिए

वैराग्य पथ का अनुसरण करते हुए आत्मकल्याण की भावना को अंगीकार करते हुए जीवन के औचित्य को प्रतिपादित करने का प्रयास करे। इसीलिए आचार्य श्री का कथन है-

'राग को हटाओ
वैराग्य भाव का भाव जगाओ
निज वैभव के प्रगटीकरण
से ही सिद्धि संभव है।'[14]

ऐसा माना जाता है कि चिंतन के माध्यम से हमारा चित्त निर्मल होता है, चरित्र पवित्र होता है और मन, वचन, काय की विशुद्धि बढ़ जाती है। चिंतन के माध्यम से मन मानवता के कल्याण हेतु विचार करते हुए निर्विकल्प भाव से मानवता के कल्याण का चिंतन करता है। आचार्यश्री का भी यही मानना है कि -

'चिंतन वहीं
जिसमें चिंता न हो,
न हो गिरने का भय
और न खोने की आशंका।'[15]

4. आत्मकल्याण के लिए रत्नत्रय की आराधाना - जैनदर्शन में रत्नत्रय को काफी महत्व दिया गया है अर्थात सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र के माध्यम से हम यहाँ पर यह कह सकते हैं कि देव, शास्त्र, गुरु अथवा तत्वों पर समीचीन श्रद्धा करना ही सम्यक दर्शन है, आत्मतत्त्व को पहचानना ही सम्यक् ज्ञान है, तत्त्व ज्ञान का फल कर्मों से कैसे दूर करना होता है यही सम्यक चारित्र है। इस सृष्टि में जो पीड़ा और क्लेष का भाव होता है वह हमारी आत्मा की अज्ञानता पर ही अवलंबित है। आत्मा का मुक्त होना ही जीवन को आध्यात्मिक बना देता है, पर सेवा में जीवन का उत्सर्ग करना ही सच्ची चारित्रिक सम्यक्ता प्राप्त करना है। इसीलिए साधु धर्म को विश्व-बंधुत्व का व्रत माना गया है, क्योंकि एक सच्चा साधु ही जन्म, जरा, मृत्यु जैसी आधिकारिक उपाधि आदि सब कृत्यों से रहित होकर परमानंद स्वरूप से मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। जैन कवियों और दार्शनिकों का स्पष्ट मत है कि जीवन में कल्याण का मार्ग सबके लिए खुला हुआ है। गुरू में अपार श्रद्धा धर्म प्रभावना के लिए परम् आवश्यक है। भगवान की प्रतिमा के दर्शन से मन का समस्त कालुष्य धुल जाता है। जीवन को गतिशील बनाने के लिए अहिंसा का अनुगमन करना चाहिए। उसके लिए मनुष्य का दयावान और करुणावान होना आवश्यक है। क्योंकि ईश्वर की प्राप्ति के लिए ये भावनाएँ अत्यंत सरल मार्ग प्रशस्त करती हैं। इन्हीं कारणों से जैन-दर्शन आत्मा के उत्कर्ष के लिए अनेक प्रकार से विवेचन करता है जो हमारे जीवन को उत्कर्ष प्रदान करती हैं।

5. जीवन में कर्म सिद्धान्त की प्रासंगिकता - कर्म सिद्धान्त जैन-दर्शन में सर्वमान्य सिद्धान्त है। कहा भी गया है कि जैसा हम बोयेंगे बैसा ही हम काटेंगे। व्यक्ति अपने जीवन में नाना प्रकार के कर्मरूपी बीजों को बोता रहता है और समय आने पर उसे अच्छे बुरे कर्मों का फल अवश्य प्राप्त होता है। इस सृष्टि का निर्माता न तो किसी को सुख देता है और न ही किसी को दु:ख देता है। वह केवल एक द्दष्टा मात्र है। इस सृष्टि के रंगमंच पर आप अपना किरदार किस रूप में निभाते हैं ये आपको स्वयं ही तय करना होगा। व्यक्ति को जिंदगी का यथार्थ समझ में तो आता है, किन्तु काफी बिलंब से। जब समझ में आता है तब समय काफी निकल जाता है। इसलिए हमारे पास जो कुछ बचता है, वह है 'पश्चाताप'। कर्मों के कारण ही अमीर व्यक्ति दरिद्र हो सकता है और दरिद्र व्यक्ति अमीर हो सकता है। ईमानदार व्यक्ति बेईमान हो सकता है और बेईमान ईमानदार हो सकता है। इसलिए यह कहना कठिन है कि वास्तव में व्यक्ति अपने आप में क्या है। यह समय के परिवर्तन के हिसाब से तय होता है। 'अहंकार' मानव का सबसे बड़ा शत्रु है। वह मानव को सदैव अशांत बनाये रखता है। जबकि व्यक्ति को इस अहंकार की अकड़ से बचने का प्रयास करना चाहिए, अन्यथा यह अहंकार दु:खदायी ही होगा। आचार्य श्री का मानना है कि कर्मों की गति अपने आप में निराली है। कर्मों की कुद्दष्टि पड़ने पर लाखों व्यक्ति हाहाकार मचाने लगते हैं। कर्मों ने सती सीता, राम और तीर्थंकर ऋषभदेव को भी नहीं छोड़ा। इसलिए सांसारिक प्राणियों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसे सद्कर्म ही करते जाना चाहिए तभी उसे जीवन में शांति का अनुभव संभव हो सकेगा -

'कर्मों ने सती सीता
राम को
नहीं छोड़ा।
तीर्थंकर ऋषभदेव को
छ: माह
तक घुमाया।'[16]

जीवन को सार्थक बनाने के विविधा सूत्र - आचार्य विशुद्धसागर जी, ने मनुष्य के जीवन को सार्थक बनाने के लिए समय-समय पर विविध सूत्रों का सूत्रपात किया है जिन्हें अपनाकर व्यक्ति, जीवन को सार्थकता प्रदान कर सकता है-

1. धैर्य के बिना लक्ष्मी, वीरता के बिना विजय, धन के बिना यश, और ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं मिलता है।
2. जैसे आप अपने बारे में सोचते हो सभी के बारे में सोचो।
3. भविष्य के राग में वर्तमान को मत भूलो।
4. परिवार नियोजन नहीं वासना का नियोजन करो।
5. वासना आत्मशांति की शत्रु है।
6. शत्रु को भी शत्रु की द्दष्टि से मत देखो, वह भी भगवान आत्मा है।
7. मन को पकड़ा नहीं जाता मोड़ा जाता है।
8. विश्वास बड़े संभलकर करना कई बार जीभ भी दाँत के नीचे आ जाती है।
9. शब्द मूल्य रहित है मूल्य उनके उपयोग पर आधारित है।
10. कमजोर व्यक्ति ही दूसरों की कमजोरी पर वार करता है।
11. जो दूसरों को दु:खी देखना चाहते हैं बे सबसे बड़े दुखियारे हैं।
12. घास नहीं बनो जिसपर सब चलें। आकाश बनो जहाँ सब पहुँचने की इच्छा रखें।
13. वर्तमान में सब अस्तित्व के ज्वर से पीड़ित हैं।
14. मोक्षमार्ग में मोक्ष की कामना नहीं की जाती है वरन् भावना भायी जाती है।

निष्कर्ष- आचार्य विशुद्धसागर समकालीन समय के एक ऐसे आचार्य हैं जिन्होंने सामाजिक शुचिता, मानवीय चेतना तथा जीवन को सार्थक बनाने के लिए अनेक प्रकार से जनसामान्य को प्रबोधित किया है। उनका मानना है कि मनुष्य के जीवन का मुख्य लक्ष्य आत्मकल्याण की भावना का होना चाहिए। कष्टों से भरे हुए इस जीवन से मुक्ति का एक उपाय है कि वह वैराग्यपथ का अनुगमन करते हुए मोक्ष पाथ का अनुगामी बने। आचार्य श्री के साहित्य में इस बात को बार-बार रेखांकित किया गया है कि मनुष्य के दु:खों का मूल

कारण सांसारिक चीजों के प्रति मोह ही है। मोह की आसक्ति इतनी प्रबल होती है कि वह व्यक्ति को परमात्मा के निकट पहुँचने में बार-बार बाधा उत्पन्न करती है। ये बाधायें मुख्य रूप से विकारों की हुआ करती हैं। इन विकारों पर विजय प्राप्त करने पर ही व्यक्ति सच्चे अर्थों में ईश्वर के प्रति श्रद्धावनत होकर, अपना आत्मकल्याण कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्वानुभव-स्वरचित।
2. 'स्वानुभव', आचार्य विशुद्धसागर, पृष्ठ-31
3. वही, पृष्ठ-36
4. 'कामायनी महाकाव्य' जयशंकर प्रसाद।
5. 'स्वानुभव' आचार्य विशुद्धसागर, पृष्ठ-42
6. वही, पृष्ठ-45
7. वही, पृष्ठ-53
8. 'ध्रुव स्वभाव', आचार्य विशुद्धसागर, (संपादकीय) डॉ. कुसुम पटोरिया।
9. 'शब्द अध्यात्म पंथी का', आचार्य विशुद्धसागर, पृष्ठ-09
10. वही, पृष्ठ- 16
11. वही, पृष्ठ-20
12. वही पृष्ठ-21
13. ध्रुव-स्वभाव-आचार्य विशुद्धसागर (संपादकीय) डॉ. (प्रो.) कुसुम पटोरिया।
14. वही, पृष्ठ-37
15. वही, पृष्ठ-40
16. शुद्धात्म काव्य तरंगिणी, (कर्मों की गति), आचार्य विशुद्धसागर, पृष्ठ-60

****

Potential Benefits of Artificial Intelligence for the Legal Profession

Dr. Anoop Kailasia*

***Assistant Professor (Law) Govt. Law College, Gwalior (M.P.) INDIA**

Abstract : Artificial intelligence (AI) is revolutionizing the legal industry by improving client service, accuracy, and efficiency. Lawyers can concentrate on more intricate and strategic facets of their work by using AI technologies to automate repetitive duties like legal research, document review, and contract analysis. AI can greatly increase productivity by automating monotonous operations, freeing up legal practitioners to spend more time interacting with clients and developing case strategies. Additionally, by using past data to evaluate case outcomes, AI's predictive analytics skills help attorneys make better decisions and provide better client counselling. This paper examines features of artificial Intelligence, introduction, definitions of AI, history, applications, growth and achievements in law fields.

Introduction - An intelligent agent is a system that acts in a way that maximizes its chances of success. Artificial intelligence (AI) is the area of computer science that studies the intelligence of computers. What makes people appear bright is the study of concepts that allow machines to perform tasks. The abilities to reason, plan, learn, communicate, perceive, and move and manipulate objects are some of the fundamental ideas of artificial intelligence. Artificial intelligence involves the engineering and science of creating intelligent devices, particularly intelligent computer programs.

Lawyers now have the chance to increase productivity, cut expenses, and concentrate on more strategic work thanks to the advancement of AI technology. AI is capable of performing repetitive, mechanical activities like data analysis, legal research, and document and contract review. In the end, this may result in more productivity and financial success for legal practices. However, more complicated jobs like deal structuring, negotiation, advocacy, and court representation are still beyond AI's current capabilities. AI adoption could therefore result in fewer billable hours for legal companies. Larger companies might be able to deploy AI systems, while smaller businesses might find it difficult to stay cost-effective and keep up with technological advancements.

Indian Judiciary: The Supreme Court has been utilizing an AI-controlled technology since 2021 to process data and provide judges with it so they can make decisions. It doesn't take part in the process of making decisions. The Supreme Court of India also uses SUVAS (Supreme Court VidhikAnuvaad Software), which converts legal documents between English and vernacular languages[1].

The Punjab & Haryana High Court denied a bail request in the case of Jaswinder Singh v. State of Punjab[2] because the prosecution claimed the petitioner was a party to a vicious, deadly assault. The presiding judge asked ChatGPT for feedback in order to obtain a broader viewpoint on the granting of bail in cases involving cruelty. The trial court will not take these remarks into consideration, so it is crucial to remember that this mention of ChatGPT does not represent a view on the merits of the case. The reference was only meant to provide readers a more comprehensive knowledge of bail law where cruelty is involved.

A comparative study on the application of AI in the judiciary

USA: Through the analysis of variables including criminal history, social and economic background, and mental health, artificial intelligence (AI)-powered technologies like COMPAS (Correctional Offender Management Profiling for Alternative Solutions) help courts assess risk and forecast the possibility of recidivism. To develop and implement sentencing recommendations for a just and equitable sentence, the US Sentencing Commission also uses AI. Chatbots are used by the US legal system to provide the public with answers to often requested inquiries on court dates, processes, and other relevant topics. This improves everyone's access to information and reduces the workload of court employees[3].

China: AI technology that can evaluate previous cases and recommend relevant laws and precedents is used by judges in China's Smart Court system. Additionally, it can suggest penalties based on comparable cases, enabling judges to swiftly administer justice and make well-informed decisions. AI is used by Chinese courts to conduct legal research.

The AI-powered 'China Judgements Online' tool enables judges to locate pertinent court papers in a flash[4].

United Kingdom: In 2020, the Digital Case System was implemented for the crown courts by the UK Ministry of Justice. It provides remote court participation, real-time case updates, and the ability to submit evidence digitally to cut down on paper use. Guidelines for criminal law barristers using the online portal are provided by the Bar Council's Ethics Committee. " Compare the potential risk of AI systems with the risk of losing the social and economic benefits that the new technology can provide." By 2035, the UK's AI industry is predicted to have grown from its current valuation of over US$21 billion to over US$1 trillion. is currently the world's third-largest national AI sector, behind China and the United States. According to the Global AI Index, which measures the degree of AI investment, innovation, and application, the UK comes in at number four. The US invests 2.5 times more per capita than the EU, but both countries' levels of investment are comparable[5].

Market Size and Trends for Artificial Intelligence: The size of the worldwide artificial intelligence market was estimated at USD 279.22 billion in 2024, and it is expected to expand at a compound annual growth rate (CAGR) of 35.9% between 2025 and 2030. Advanced technologies are being adopted in a variety of industry verticals, including manufacturing, automotive, healthcare, retail, and finance, thanks to the ongoing research and innovation spearheaded by digital giants. For example, Ethical Web. Ai introduced AI Vault, a corporate security SaaS service for AWS users driven by generative AI, in March 2025. With real-time data redaction, AI Vault improves threat detection, response, and prevention. It is based on the company's AI intellectual property, which includes three US patents. It is an essential part of a company offering for a scalable Gen AI marketplace[6].

Artificial intelligence improve efficiency in the legal field: AI has many benefits for the legal industry, such as increased accuracy, lower costs, better client experiences, and more speed in document review and legal research. It can also help legal departments make decisions more effectively and expedite compliance procedures. AI's Benefits for the Legal Sector[7]

Efficiency and Time Saving : Lawyers may spend a lot less time on repetitive chores like document review and legal research by using AI to automate them.

Cutting Expenses: AI can reduce operating expenses for corporate legal departments and law firms by reducing the requirement for significant human labour on repetitive tasks.

Improved Legal Services Access: AI technologies have the potential to democratize access to legal information, enabling small enterprises and people to get basic legal help without paying for pricey consultations.

Enhanced Precision: Artificial intelligence (AI) systems can precisely evaluate large volumes of data, which lowers the possibility of human error in research and legal papers.

Improved Customer Experience: AI can improve overall client satisfaction with legal services by giving them more individualized care and faster responses.

Advanced Analysis and Research in Law: AI can help with case outcome prediction and precedent analysis, giving attorneys insightful information to guide their tactics.

Streamlined Procedures for Compliance: By automating monitoring and reporting chores, artificial intelligence (AI) can assist enterprises in maintaining regulatory compliance and lowering the risk of non-compliance.

Making Contract Management Easier: Legal teams may manage complex agreements more effectively by using AI tools to help with contract analysis, negotiation, and management.

An Indian Point of View: As of right now, India has no legislation specifically governing artificial intelligence. The Ministry of Electronics and Information Technology (MEITY), which is in charge of executive strategies pertaining to AI, established committees to develop a framework for AI policy. Seven responsible AI principles have been devised by the Niti Ayog. These include safety and reliability, equality, non-discrimination and inclusion, privacy and security, responsibility, transparency, and the preservation and upholding of good human values. The right to privacy is one of the fundamental rights that the Supreme Court and lower courts are mandated by the Constitution to uphold. India's main data protection laws are the Information Technology Act and its implementing regulations. Although it has not yet been formally enacted, MEITY has also introduced the Digital Personal Data Protection Bill. Individuals will be able to request information about the information that is gathered about them by government and private organizations, as well as how that information is processed and stored, if this bill is signed into law.

Artificial Intelligence's Status In Law Today: With a global valuation of almost $1 trillion, the legal market is among the biggest in the world. However, it is still not digitalized. In one way or another, the legal Lawyers continue to rely on solutions created over the years, and the profession is known for being sluggish to accept new technologies. In the upcoming years, this might alter. AI has the power to alter the way Indian laypeople view the law and how legal professionals operate. This is a continuous process. Legal research is one of the areas where AI can have the biggest effects.

The Indian legal system is dynamic, and attorneys can quickly obtain unique legal knowledge by using their clever skills. AI can equal legal research costs without sacrificing quality. It may offer practical resources to assist attorneys in giving their clients better advice. The legal field is quickly changing as a result of artificial intelligence (AI). AI is being utilized to increase productivity, automate processes, and make wiser choices. But there are also several ethical and legal issues with the application of AI in the legal system.

These days, most industries are more effective and efficient thanks to the use of contemporary technologies. However, the legal profession does not use contemporary technologies all that much. To make advances, they must continue to use outdated technology and file-handling methods. Thus, the demand is enormous. Modern technology must be familiarized with in the field of law. To increase the effectiveness of their advancement in this situation, they can readily implement AI technology.

Furthermore, it has been cited by the Indian Supreme Court on numerous occasions as a necessary component of democracy, and it has determined that this freedom encompasses the right to know[8].

AI has a significant impact on freedom of speech because of the growing dependence on these systems for online content moderation and the growing use of AI applications in daily life, such as mobile device autocorrect and smart assistants[9].

Conclusion: In summary, technological advancements in the legal sector include the automation of repetitive tasks, improved research capabilities through artificial intelligence (AI), predictive analytics for well-informed decision-making, blockchain for safe transactions, cloud computing for flexible operations, enhanced client services through digital platforms, new business models powered by ALSPs, and heightened attention to cybersecurity measures. Firms that adopt these improvements will be better positioned to prosper in an increasingly competitive climate as these technological developments continue to transform the legal profession.

References:-

1. https://legal.thomsonreuters.com/blog/how-ai-is-transforming-the-legal-profession/
2. https://www.forbes.com/councils/forbesbusinesscouncil/2025/02/03/eight-legal-tech-trends-set-to-impact-law-firms-in-2025/
3. https://appinventiv.com/blog/evolution-of-legal-technology/
4. https://www.walkeradvertising.com/law-firms-evolving-with-technology/
5. https://www.linkedin.com/pulse/future-law-how-technology-transforming-legal-services-shawn-a—lnale
6. https://www.runsensible.com/blog/impact-of-technology-on-legal-profession/
7. https://www.linkedin.com/pulse/future-law-navigating-impact-technology-legal-sector-charles-lau-7vq5c
8. https://www.linkedin.com/pulse/future-law-navigating-impact-technology-legal-sector-charles-lau-7vq5c

Footnotes:-

1. https://www.indiatoday.in/law/story/ai-help-translate-judicial-documents-into-vernacular-languages-under-ecourts-project-law-ministry-2311933-2022-12-21
2. Jaswinder Singh v. State of Punjab, CRM-M-22496-2022, order dated 27-3-2023 https://www.scconline.com/blog/post/2023/11/14/chatgpt-fication-of-the-judicial-process/
3. https://www.statista.com/outlook/tmo/artificial-intelligence/united-states
4. https://en.wikipedia.org/wiki/Artificial_intelligence_industry_in_China
5. https://www.europarl.europa.eu/RegData/etudes/ATAG/2024/762285/EPRS_ATA%282024%29762285_EN.pdf
6. https://www.grandviewresearch.com/industry-analysis/artificial-intelligence-ai-market
7. https://www.upes.ac.in/blog/law/ai-in-law-field
8. Shreya Singhal v. Union of India. AIR 2015 SC 1523
9. https://www.article19.org/wp-content/uploads/2018/04/Privacy-and-Freedom-of-Expression-In-the-Age-of-Artificial-Intelligence-1.pdf

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

चित्रा मुद्गल के साहित्य में अभिव्यक्त जीवन-कथा

प्रकाश वास्कले*

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस, क्रांतिकारी शहीद छितुसिंह किराड़ शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अलीराजपुर (म.प्र.) भारत

चित्रा मुद्गल का जीवन परिचय – समकालीन हिन्दी साहित्य की सशक्त लेखिका एवं मानवीय संवेदनाओं की धनी ने अपनी सजीव एवं ईमानदार अभिव्यक्ति के रूप में भरपूर साहित्य सृजन किया। अपने लेखन में उन्होंने अपने सामाजिक और नैतिक मूल्यों की बड़ी गहराई से अपनी समझ प्रस्तुत की है। अपने समाज में व्याप्त सामाजिक यथार्थ को बड़ी निष्ठा से प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने समाज में व्याप्त सामाजिक यथार्थ को, खासतौर से मध्यम वर्गीय और निम्नवर्गीय अनुभवो को अपनी रचनाओं के द्वारा समृद्ध किया है। समाज की निष्ठावान लेखिका चित्रा मुद्गल ने स्त्रियों के संगठन से जुड़कर काम किया। जिससे उनका अनुभव अत्यधिक परिपक्व हुआ। उन्होंने झोपड़ी पट्टी में निवासरत श्रमिक पुरुषों और महिलाओं में चेतना पैदा की।

चित्रा मुद्गल ने महानगरीय जीवन के निम्न और मध्यवर्गीय नारी चरित्रों का, उनके अन्तर्द्वंद्वों सहित विश्लेषित किया है। उन्होंने अपनी जीवन दृष्टि के रूप में अनुभव किया कि समाज में कार्य करने वाली सामाजिक संस्थाएँ अपने सहयोग से कार्य करने की अपेक्षा आपसी प्रतिद्वंद्विता तथा अपराधी गिरोह की ठेकेदारी को भी काफी निकटता से अनुभव किया है। उनकी रचनाओं में समाज के शोषित, पीड़ित, पद-दलित और विशेष रूप से नारी की दुर्दशाग्रस्त स्थितियों को तमाम बेबसी और दर्द के साथ अभिव्यक्त किया है।

उनकी अनेक कहानियों में ग्रामीण विधवा स्त्री की व्यथा, निम्नवर्ग की पारिवारिक समस्याएँ तथा दुर्घटनाग्रस्त अपाहिज नारी की दशा का चित्रण किया है।

चित्रा जी की लघुकथाओं में जिन विषयों को छुआ है उसमें 'चीखें' काफी दमदार अभिव्यक्ति का उदाहरण है।

चित्रा मुद्गल की अनेक कहानियों में नारी के दुर्दान्त संघर्ष का चित्रण देखने को मिलता है।

वर्तमान समाज में आर्थिक विषमता के कारण, सामाजिक मल्यों में परिवर्तन के कारण भभी आम आदमी का जीवन अधिक तनावग्रस्त रहने लगा है। किन्तु इन सब कारणों में वर्तमान नारी को ही काफी संघर्ष झेलना पड़ रहा है।

चित्रा मुद्गल की कहानियों में 'शून्य', 'अग्निरेखा', 'प्रमोशन' आदि कहानियों में दाम्पत्य जीवन से उत्पन्न तनाव से ग्रस्त पात्रों का रेखांकन किया गया है।

श्रीमती प्रविता लक्ष्मी ने चित्राजी के कथा साहित्य में युगबोध' की व्याख्या की गई है जिनमें यथार्थबोध के दृष्किोण को अहम् माना गया है। स्त्री-पुरुष संबंधों में परिस्थितिजन्य बदलाव, का संबंधी दृष्टि, महानगरी शोषित जीवन की प्रवृत्तियों और मानवी मूल्यों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण विशेष रूप से प्रभावशाली रूप में चित्रित किया गया है।

वस्तुत: मानवीय संबंधों में परिवर्तन, वर्तमान सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक परिवेश के प्रति जागरूकता आदि की चर्चा की है। उनके 'भावबोध' की दिशा यमें मध्यवर्ग की हताशा और विवशता को उतारा हैए तो दूसरी ओर व्यक्तियों की महत्वाकांक्षाओं को भी उभारा है। वस्तुत: मध्यमवर्गीय आदमी सहसा हिंसा पर उतारू नहीं होता, वह हमेशा अपनी परिस्थितियों में सामंजस्य पैदा करने की और प्रवृत्त रहता है। इस प्रकार मध्यमवर्गीय व्यक्ति अपने आप में सज्जन बने रहने में अधिक विश्वास करता है।

वर्तमान स्थितियों में अनेक राजनैतिक परिवर्तन हुए है। दिनोंदिन पूंजीवादी सभ्यता का विस्तार हो रहा है। जिससे महानगरी जीवन में अनेक जटिलता पैदा हुई है। जैसे यांत्रिकता, कृत्रिमता, संवेदनशीलता और निर्मम तटस्थता का वातावरण प्रस्तुत कहानियों में उभर कर आया है। डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल कहते है कि-'शहरी जीवन में जितनी भूख शरीर की हैए उतनी ही अर्थ की भी है। सेक्स और अर्थ दोनों ही भौतिक मूल्यों के अन्तर्गत आते है। आज के युग में समाज का वातावरण तेजी से बदल रहा है।' अनेक कहानियों में पाश्चात्य प्रवृत्तियों का प्रभाव परिलक्षित हो रहा है। फैशन, चमक, दमक, यौन भावनाओं की प्रति बढ़ता हुआ आकर्षण आदि सब कुछ चित्राजी के भाव लोक में दृष्टिगत हो रहा है।

आधुनिकता के नाम पर साहित्य में दमित वासनाओं और यौन कुंठाओं का बोलबाला दिखाई दे रहा है।

आज के भौतिकवादी युग में अकेलेपन की भावना का बोध गहराई से महसूस हो रहा है। समाज दिनोंदिन विक्रति की ओर बढ़ने लगा है जिनमें नशीले पदार्थों का सेवन, उन्मुक्त प्रेम की स्थितिए जो विक्रत काम वासनाओं की ओर अग्रेषित हो रही है, फलत: समाज में तलाक जैसी विसंगतियां बढ़ने लगी है।

श्रीमती मधु सारस्वत की दृष्टि से साठोत्तरी कहानियों में नारी की वर्तमान दशा का चित्रण किया है। इनके साथ ही अनेक प्रथित यश लेखिकाओं के चिंतन के प्रभावों को भी व्यक्त किया गया हऐ जिनमें विशेष रूप से मृणाल पाण्डे, मेहरून्निसा परवेज, ममता कालियाँ, चंद्रकांता, मैत्रैयी पुष्पा आदि लेखिकाओं ने वर्तमान नारी की स्थितियों का व्यापक चिन्तन किया है। 'प्रेतयोनि' में नीतू हबशी टैक्सी वाले की कामवासना का शिकार होते-होते

बची है। इस प्रकार मध्मयवर्गीय मानसिकता में पिसती नारी की अवस्था को रेखांकित किया है। 'सुख' कहानी में नौकरीपेशा नारी घर और नौकरी को संभालने में एक मशीनी यंत्र बन जाती है। जिसे जीवन में 'सुख' की कल्पना दुरूह होती है।

आज मध्यमवर्गीय नारी स्व-अस्तित्व का निर्माण करने के लिए आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होना चाहती है इसलिए घर परिवार के बाहर रह कर नौकरी भी कर रही है। फलत: वह न तो घरएपरिवार तथा नौकरी को भी अच्छी तरह से नहीं संभाल पाती है।

वर्तमान कहानियों में युगीन यथार्थ की अवधारणा – साहित्य में समाज की स्थिति के अनुसार परिवर्तन होते रहते है जिनमें मूलत: सामाजिक मान्यताओं में फेरबदल होना स्वाभाविक है। कहानियों में किरदार, वेशभूषा, खान-पान, उपमा, प्रतिमान, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि युग के अनुकूल जानकारी प्राप्त की जाती है। इस प्रकार कहानियाँ एक विशेष समय में लिखी गई उस समय की यथार्थ जानकारी प्राप्त करने के लिए सशक्त माध्यम की जरूरत होती है।

ग्राम्य जीवन में पशुपालन मुख्य जीविकोपार्जन के रूप में यथार्थ स्थिति का चित्रण करती है। सीता स्वयंवर से नारी की स्वतंत्रता और विवाह पद्धति का पता चलता है।

मुंशी प्रेमचंद की कहानियाँ तो उस युग के यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती है। डॉ.सीमा गुप्ता महानगर को विशिष्ट अर्थों से प्रयुक्त करती हैं, उसके मतानुसार वे नगर जो अपने विकास के द्वारा राष्ट्रीय- अंतराष्ट्रीय स्तर पर पूर्ण रूप से प्रभाव स्थापित कर लेते हैं, महानगर की परिभाषा में आ जाते हैं।

महानगरीय परिवेश में मनुष्य जीवन मशीनी यंत्र बन जाता है। गाँवों में जो आत्मियता, संवेदना, अपनापन और स्नेह होता हैए वही शहरों तक आते आते अजनबीपन, अकेलेपन, घृणा, असंवेदनशील दृष्टिगत होता है।

महानगरीय चकाचौंध व्यक्ति को आकर्षित करती है। अपनी परंपरा से कटकर रोजगार की तलाश में शहर की ओर पलायन करता जा रहा हैए जिससे शहरों की आबादी बढ़ती जा रही है। परिणामस्वरूप बेरोजगारी, प्रदूषण, महंगाई, गंदगी, यातायात की भीड़, आदि के साथ बढ़ते प्रदूषण के कारण स्वास्थ्य के स्तर में भी गिरावट देखी जा रही है। हाएँ मनुष्य संबंधों को भभूलकर अधिकाधिक व्यवसायिक बन रहे हैं। पूंजीवाद सामाजिक व्यवस्था में क्रूर, स्वार्थी, कुटिल और असुरक्षित बनाती है। महानगरी परिवेश में आत्मकेन्द्रितता की भावना ने मनुष्य को अत्यधिक स्वार्थी बना दिया है।

महानगरों में पाश्चात्य सभ्यता के संक्रमण, अंधानुकरण, मशीनीकरण एवं फैशन परस्ती के परिणामस्वरूप अकेलेपन, घुटन, पीढ़ी में बढ़ती आंतरिक व्यवस्था, शोषण, अत्याचार, भ्रष्टाचार, महंगाई, राजनैतिक बदलते दुष्प्रभाव जैसे अप्राकृतिक और असांसारिक परिवेश बढ़ते हुए देख रहा है।

कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, मालती जोशी, कृष्णा सोबती, मंजुल भगत, यशपाल, महीपसिंह दूधनाथ आदि ने आधुनिक जिंदगी के दुष्प्रभावों को गहराई से महसूस किया है।

सामाजिक मूल्यों में धर्म का छद्म आवरण का आडंबर, चरित्र का ढोगलापन, नकली मुखौटे का निदर्शन ऐसे तत्व है, जो प्रतियोगी भूलें उजागर करते हैं।

चित्रा जी ने अत्यंत उल्लेखनीय लेखन किया हैए जिसमें उन्होंने नारी के कारखानों में काम करने वाली स्त्रियों के संगठन से जुड़ी श्रमिक महिलाओं के हितों की रक्षा की है।

पेंटिंग अकेली है में 10 कहानी संग्रह हैं। जिसकी प्रसतावना में चित्रा मुद्गल कहती है कि- कहानी मेरी सर्वाधिक प्रिय विधा है और वह अब भी है। और विषय में उससे अलगाव की दूर-दूर तक कोई संभावना मुझे नजर नहीं आ रही। ये बात सही है कि लिखने का दबाव निर्मित करने और उस दबाव को जुनून में परिवर्तित करने का कौशल कहानियों में खूब आता है। शिल्प भी वह खुद तलाश कर लेती है। उसका आरंभ कैसे हो, यह वही तय करती है।

यह भी सदैव महसूस किया- कहानियों ने ही मुझे कहानियाँ बिनने के लिए प्रेरित किया है। मैं एकाएक महसूस करने लगती हूँ, दबे पाँव कहानी मेरी अभिव्यक्ति को अपनी भूमिका में सन्नद्ध होने के लिए ललकारने लगी है, प्रतिरोध का जज्बा स्वं आत्मसात किए हुए।

घर, देश, समाज, जाति, आर्थिक, राजनीतिक विसंगतियों हों या स्वयं को छलने पर आमादा व्यक्ति के निजी स्वार्थपरक व्यक्तिवादी अंध प्रवृत्ति, व्यवस्था की आंतडियों में पैठे चेहरे विहीन संक्रमणों में सेंध लगाती कहानी ने कही मुझसे मुँह नहीं फेरा।

शायद यह सच है कि कहानियाँ मेरे लिए सर्जना का वह प्रस्थान बिंदु हैए जहाँ से अन्ध विधाओं की चौखटों ने अपने कपाट खोले हैं।

नारी के प्रति पुरुषों के दृष्टीकोण में बदलाव नजर आने लगा है। विस्मय होता है- गुलाम भभारत को स्वतंत्र हुए आधी सदी गुजर जाने के बाद भी स्त्री के प्रति हमारे उन्नतिशील समाज का जड़ रवैया यथावत् है। आपसी समझ की आयातीत अवधारणा न तो स्त्री की दशा और दिशा बदलने में कोई सार्थक भूमिका अदा की है।

'साहित्य में स्वचेतना और स्त्री' आलेख में चित्रा मुद्गल कहती है कि 'दरअसल नारी चेतना की मुहीम स्वयं स्त्री के लिए अपने अस्तित्व को मानवीय रूप में अनुभव करने और करवाने का आंदोलन है कि मैं भी मनुष्य हूँ और अन्य मनुष्यं की भाँति समाज में सम्मानपूर्वक रहने की अधिकारी हूँ। उसे हमारी सुनिश्चित करना होगा कि वह अपनी स्मिता की लड़ाई खुद लड़े। उसकी सामााजिक छवि कैसी हो। नारी चेतना के लिए सुनिश्चित करना अनिवार्य है कि देश में आधी आबादी की शेष चालीस प्रतिशत ग्रामीण आदिवासी स्त्रियाँ जिन प्रतिकूल परिस्थिति में रहकर जीवनापन कर रही है और अब तक वोट की राजनीति में रेड़की क्राँति हाँककर ले जाए जाने और पुरुषों के इशारों पर मतपत्र पर ठप्पा लगाने के लिए अभिशप्त है।

चित्रा मुद्गल कहती है कि सन् 2000 में मेरा ग्यारहवां कथा संकलन 'लपटें' प्रकाशित हुआ था। 'लपटें' कहानी 'उद्भावना' में प्रकाशित हुई थी। 'लपटे' के बाद 2004 में लघुकथा संग्रह 'बान' प्रकाशित हुआ।

चित्रा जी अपनी पुरानी यादों के संदर्भ में कहती है कि- 'ट्रेड यूनियन से मैं बहुत थोड़े समय के लिए जुड़ी रही।' लेकिन श्रमिक परिवारों से मेरा लंबा नाता रहा। मेरे घर के अहाते के बाहर चारों ओर मजदूर बस्तियों में कोई कल्पना नहीं कर सकता था कि वहाँ तब बिजली के लट्टू नहीं, लालटेन और ढिबरियाँ जला करती थी। पाखाने के लिए ठेठ गाँव की भाँति मजदूर पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे लोटा लेकर तड़के 'लेवल डाककार्ड' कॉलोनी के पिछले हिस्से में फैले सघन जंगलों में जाया करते थे। इस प्रकार बंबई जैसी सघन बस्ती की दशा उन दिनों थीं।

ऐसी बस्ती में चित्रा जी को समय बीतता था। 17 फरवरी 1965 को पिता की इच्छा के विरुद्ध अवधनारायण मुद्गल से अन्तर्जातीय विवाह किया। पति मुद्गल जी उत्तरप्रदेश के आगरा जनपद की 'बाह' तहसील सेमनपुरा गाँव के ब्राह्मण परिवार से हैं। 15 अप्रैल 2015 में अवधनारायण जी इस

संसार से विदा हो गये।

'जागरण' में 1965 को 1972 तक सचिव के रूप् में कार्य किया। महिलाओं की संस्था 'स्याधार' में 1979 को 1983 तक कार्य किया। 1986 से 1990 तक राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंसाधन एवं प्रशिक्षण परिषद की 'वूमन स्टडीज यूनिट' की कई महत्वपूर्ण पुस्तक योजनाओं में निर्देशन के रूप् में कार्य किया सन् 1999 तक फिल्म सेंसर बोर्ड की मानद सदस्य रही।

महानगरीय परिवेश में पनप रही उपभोक्तावादी संस्कृति में उपयोगहीन वस्तु की तरह मानवीय संवेदनाहीन कहानी 'गेंद' नामक वृद्धाश्रम में रहने वाले वृद्धों की पीड़ा और विडम्बनाओं को अभिव्यक्ति दी।

इस प्रकार चित्रा जी ने जीवन की त्रासद एवं विसंगतिपूर्ण व्यथा की गहराई से महसूस किया। उन्होंने स्त्री जीवन की उत्पीड़न दुर्गति को देखा और महसूस किया।

चित्रा जी ने समाज की निम्नवर्गीय नारी की दशा, पुरुषों द्वारा किये जाने वाले शोषण को जानाद्य संपूर्ण जीवन के लिए समाज में नारी के पास कठिन परिश्रम के अलावा कुछ कहने योग्य व्यथा नहीं है।

चित्रा मुद्गल अपनी प्रस्तावना में ही कहती है कि में कलम लिखती हूँ? कलम से मेरा रिश्ता क्या है? उत्तर में वह लिखती है कि– 'रिश्ता बना तो कलम से ही क्यों बना? कैसे बना और कब ऐसा लगने लगा कि कलम' ही मेरे होने का पर्याय है। कल' से अलग होकर में चेतना शून्य काया–सी डोलती–फिरती, सवालों के बवंडर में ऊभ–चूभ होती संभवत: जीती तो होती, चलती फिरती मुर्दों की भीड़ का वैसा ही हिस्सा होती, जैसे हम में से बहुत से लोग होते है या होने को अभिशप्त होते हैं, या शायद वे इस बात से ही अनभिज्ञ होते हैं कि ऐसा होना और इस तरह से जीना उनके न होने के बराबर है।'

नींद से जागे बिना अपनी जड़ता से लड़ना संभव नहीं। स्त्री होकर तो विशेष रूप से नहीं। क्योंकि स्त्री जनमते ही उसके मुँह पर ताले जड़ दिये जाते हैं। ताले उसके मुँह पर नहीं जड़े जाते, मुँह के बहाने उसके मस्तिष्क पर लगाये जाते हैं। उन तालों को तोड़े बिना स्त्री अपनी चौतन्यता को अपनी आवाज में नहीं ढाल सकता' आवाज को शब्दों में नहीं रच सकती शब्द बहुत ढीठ होते हैं, कलम के भ्रूण में जब तक नहीं पकते औरों तक नहीं पहुंचते।

चित्रा मुद्गल ने ही अपनी कलम चलाना भली भाँति जान लिया है। एक दिन लड़की ने कल' उठाली अपने बप्पा को लिखने के लिए। उस लड़की ने अपनी आवाज को शब्दों के हवाले कर चिट्ठायाँ लिखने शुरू की।

चित्रा मुद्गल लिखती है कि– 'चित्रा मुद्गल लिखती है कि 'जब उसने लिखना आरभंकर दिया था, तो आगे फिर अभी नहीं रूका।'

पुराने समय में लड़की का सुन्दर होना उसके विवाह के लिए कोई बाधक तत्व नहीं था। चित्रा मुद्गल की 'लाक्षागृह' में एक ऐसी लड़की का सच प्रस्तुत किया गया है जो असुन्दर होने के कारण अपनी बड़ी और छोटी बहनों के विवाह हो जाने पर अविवाहित है। वह नौकरी करती है और पूर्णत: आत्मनिर्भर है। उसकी सारी समस्या औरत होना है, क्योंकि विवाह के लिए औरत का सुन्दर होना जरूरी होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत की भौगोलिक स्थिति और आर्थिक विकास

डॉ. विवेक कुमार पटेल* श्री अनबर खान**

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय शहीद केदारनाथ महाविद्यालय, मऊगंज (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक एवं विभाग (भूगोल) शासकीय शहीद केदारनाथ महाविद्यालय, मऊगंज (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत एक विशाल और विविध भौगोलिक संरचना वाला देश है, जिसकी स्थिति आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह शोध पत्र भारत की भौगोलिक विशेषताओं का विश्लेषण करता है और यह दर्शाता है कि किस प्रकार भौगोलिक स्थिति ने देश के विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियों को प्रभावित किया है।यह शोध पत्र भारत की भौगोलिक स्थिति और उसके आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करता है। भारत की अद्वितीय भौगोलिक स्थिति – हिमालय से घिरा उत्तर, विशाल तटीय क्षेत्र, विविध जलवायु और संसाधनों की उपलब्धता,इसके आर्थिक विकास के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित करती है।भारत की जलवायु विविधता कृषि को व्यापक रूप से प्रभावित करती है, जो आज भी करोड़ों लोगों की आजीविका का मुख्य स्रोत है। नदी प्रणालियाँ सिंचाई और जल परिवहन के लिए सहायक हैं, जबकि खनिज संसाधनों की उपलब्धता उद्योगों के विकास में योगदान देती है। इसके अलावा, भारत की रणनीतिक स्थिति – विशेष रूप से हिंद महासागर क्षेत्र में,अंतरराष्ट्रीय व्यापार और समुद्री संपर्क को बढ़ावा देती है।हालांकि, भौगोलिक विविधता के कारण क्षेत्रीय असमानता, प्राकृतिक आपदाओं की पुनरावृत्ति, और कुछ इलाकों में बुनियादी ढांचे की कमी जैसे मुद्दे भी सामने आते हैं, जो आर्थिक विकास की गति को प्रभावित करते हैं।

इस शोध में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि भारत की भौगोलिक स्थिति न केवल इसके आर्थिक विकास में सहायक है, बल्कि यह एक रणनीतिक संपत्ति भी है, बशर्ते कि उपलब्ध संसाधनों का समुचित और सतत् उपयोग किया जाए।

प्रस्तावना – भारत, एक विशाल और विविधताओं से भरपूर देश, अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के कारण विश्व मानचित्र पर एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह देश एशिया के दक्षिण में स्थित है, जो उत्तरी गोलार्ध में 8°4' उत्तरी अक्षांश से 37°6' उत्तरी अक्षांश और 68°7' पूर्वी देशांतर से 97°25' पूर्वी देशांतर के बीच फैला हुआ है। भारत की यह रणनीतिक स्थिति इसे व्यापार, कृषि, पर्यटन और अन्य आर्थिक क्षेत्रों में अद्वितीय अवसर प्रदान करती है।भूमध्यरेखा के उत्तर में स्थित यह देश हिमालय से लेकर हिंद महासागर तक फैला हुआ है, जिसमें अनेक प्रकार की जलवायु, प्राकृतिक संसाधन, नदी–घाटियाँ, पर्वत, और तटीय क्षेत्र सम्मिलित हैं। यही भौगोलिक विविधता भारत के आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

भारत की भौगोलिक विशेषताओं ने विभिन्न आर्थिक गतिविधियों जैसे कृषि, उद्योग, व्यापार और सेवा क्षेत्रों को प्रभावित किया है। उदाहरण स्वरूप, गंगा–ब्रह्मपुत्र मैदानों की उर्वर भूमि ने कृषि उत्पादन को बढ़ावा दिया है, वहीं पश्चिमी घाट और तटीय क्षेत्र व्यापार और पर्यटन के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, भारत की रणनीतिक स्थिति एशिया के मध्य में उसे वैश्विक व्यापार और निवेश के लिए एक महत्वपूर्ण केंद्र बनाती है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य भारत की भौगोलिक स्थिति और इसके आर्थिक विकास के मध्य अंतर्संबंध को समझना है। इसके अंतर्गत यह अध्ययन किया जाएगा कि किस प्रकार भौगोलिक कारकों ने क्षेत्रीय असमानताओं, संसाधनों के वितरण, जलवायु प्रभावों और अवसंरचनात्मक विकास को प्रभावित किया है। यह विश्लेषण नीति–निर्माताओं और योजनाकारों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है, ताकि भौगोलिक विशेषताओं का प्रभावी उपयोग कर सतत और समावेशी आर्थिक विकास सुनिश्चित किया जा सके।

उद्देश्य:

1. भारत की भौगोलिक स्थिति की विशेषताओं को समझना और उसका आर्थिक विकास पर प्रभाव स्पष्ट करना।
2. विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों (जैसे पहाड़ी, तटीय, मैदानी एवं पठारी क्षेत्रों) में आर्थिक गतिविधियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. यह विश्लेषण करना कि भारत की भौगोलिक विविधता कैसे क्षेत्रीय असमानताओं को जन्म देती है।
4. नीति निर्माताओं को भौगोलिक कारकों के आधार पर क्षेत्रीय विकास की रणनीतियाँ तैयार करने के लिए मार्गदर्शन देना।

पद्धति :

1. **शोध की प्रकृति:** यह अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक है।
2. **डेटा संग्रहण:** द्वितीयक स्रोत:भारत सरकार की आर्थिक रिपोर्ट, भूगोल व आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट, नीति आयोग के दस्तावेज, जनगणना डेटा, वर्ल्ड बैंक और IMF रिपोर्ट।
3. **डेटा विश्लेषण तकनीकें:** सांख्यिकीय विश्लेषण,GIS मैपिंग एवं स्थानिक विश्लेषण,तुलनात्मक क्षेत्रीय विश्लेषण।
4. **अध्ययन की सीमा:** अध्ययन भारत के विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों में भौगोलिक विशेषताओं और उनके आर्थिक प्रदर्शन पर केंद्रित रहेगा।

1. **भारत की भौगोलिक स्थिति का विवरण:**

- **उत्तर में हिमालय पर्वत:** हिमालय पर्वत भारत के उत्तर में स्थित है और यह भारत की प्राकृतिक सीमा के रूप में कार्य करता है। हिमालय न केवल

भारत के भूगोल का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, बल्कि यह देश की जलवायु को भी प्रभावित करता है। यह विश्व की सबसे ऊंची पर्वतमाला मानी जाती है। यह पर्वत श्रृंखला भारत को चीन, नेपाल, और भूटान से अलग करती है। यह पर्वत श्रृंखला देश के लिए जल स्रोतों का प्रमुख स्रोत है, जैसे गंगा, यमुना, और ब्रह्मपुत्र नदी। इन नदियों का जल भारतीय कृषि के लिए महत्वपूर्ण है।यह क्षेत्र प्राकृतिक सुंदरता, जैव विविधता, और जलवायु के लिहाज से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

- **दक्षिण में भारतीय महासागर:** भारत की दक्षिणी सीमा भारतीय महासागर से घिरी हुई है। यहां के तटीय क्षेत्रों का आर्थिक महत्व अत्यधिक है, क्योंकि ये क्षेत्र समुद्री मार्गों के द्वारा व्यापार और परिवहन का प्रमुख केंद्र हैं। भारत के विभिन्न बंदरगाह जैसे मुंबई, चेन्नई और कोलकाता अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।भारत की समुद्रतटीय रेखा लगभग 7,500 किलोमीटर लंबी है, जो विभिन्न प्रमुख बंदरगाहों को जोड़ती है।
- **पश्चिम में थार मरुस्थल:** थार मरुस्थल भारत के पश्चिमी भाग में स्थित है और यह राजस्थान राज्य के अधिकांश हिस्से में फैला हुआ है। यह मरुस्थल भारतीय उपमहाद्वीप के सबसे बड़े रेगिस्तानों में से एक है। थार का विशाल विस्तार इसके जलवायु, वनस्पति और जनसंख्या घनत्व पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। यहां की जलवायु अत्यधिक शुष्क है, और यहां की कृषि को जलवायु के अनुसार बहुत विशिष्ट रूप से अनुकूलित किया गया है।
- **पूर्वी क्षेत्र – असम का पठारी और पहाड़ी क्षेत्र:**असम और इसके आस-पास के क्षेत्र भारतीय उपमहाद्वीप के पूर्वी भाग में स्थित हैं। यह क्षेत्र हिमालय के पहाड़ी क्षेत्रों से जुड़ा हुआ है और यहां की प्रमुख भौगोलिक विशेषताओं में घने जंगल, नदियाँ (जैसे ब्रह्मपुत्र), और पर्वतीय क्षेत्र शामिल हैं। असम का पठारी क्षेत्र पहाड़ी श्रृंखलाओं से घिरा हुआ है, जिसमें जैव विविधता और कृषि के लिए उपयुक्त जलवायु है।
- **विविध जलवायु क्षेत्र (आर्द्र, शुष्क, समशीतोष्ण, उष्ण कटिबंधीय):**
- **आर्द्र जलवायु क्षेत्र:** यह क्षेत्र मुख्य रूप से भारत के दक्षिणी और पश्चिमी तटों पर स्थित है। यहाँ का मौसम गर्म और आर्द्र होता है, जिससे कृषि के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। उदाहरण के रूप में, केरल, कर्नाटका, तमिलनाडु और गोवा में आर्द्र जलवायु का प्रचलन है। यहाँ प्रमुख कृषि उत्पादों में चाय, कॉफी, मसाले, और पाम तेल की खेती होती है।
- **शुष्क जलवायु क्षेत्र:** यह क्षेत्र भारत के पश्चिमी और उत्तर-पश्चिमी भागों में फैला हुआ है, जैसे कि राजस्थान, गुजरात और हरियाणा के कुछ हिस्से। यहाँ की जलवायु बहुत शुष्क और गर्म होती है, जिसके परिणामस्वरूप जलवायु आधारित कृषि उत्पादों में कमी होती है। हालांकि, यहाँ पर उर्जा उत्पादन (कोयला, तेल, और गैस) और सौर ऊर्जा जैसी ऊर्जा परियोजनाएँ तेजी से विकसित हो रही हैं।
- **समशीतोष्ण जलवायु क्षेत्र:** यह क्षेत्र भारत के मध्य और उत्तर-पूर्वी भागों में स्थित है। यहाँ का मौसम न तो बहुत गर्म होता है और न ही बहुत ठंडा, जिससे कृषि के लिए आदर्श वातावरण मिलता है। यह क्षेत्र अनाज, फल, और अन्य कृषि उत्पादों के लिए उपयुक्त है। उदाहरण के रूप में, पंजाब और उत्तर प्रदेश का अधिकांश हिस्सा समशीतोष्ण जलवायु क्षेत्र में आता है।
- **उष्णकटिबंधीय जलवायु क्षेत्र:** भारत का अधिकांश हिस्सा उष्णकटिबंधीय जलवायु क्षेत्र में आता है, जिसमें गर्म और आर्द्र मौसम होता है। यह जलवायु क्षेत्र विशेष रूप से कृषि के लिए उपयुक्त है, खासकर धान और गन्ने की खेती के लिए। पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, और उत्तर प्रदेश जैसे राज्य उष्णकटिबंधीय जलवायु के तहत आते हैं।

2. भौगोलिक स्थिति का आर्थिक विकास पर प्रभाव:

1. कृषि पर प्रभाव: भारत की भौगोलिक स्थिति का कृषि पर गहरा प्रभाव पड़ा है, जिससे देश की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके विभिन्न पहलुओं को समझते हुए, कृषि प्रणाली की संरचना और उसकी उत्पादकता को देखा जा सकता है।

1. गंगा और ब्रह्मपुत्र घाटी की उपजाऊ मिट्टी: भारत की गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों की घाटियां विशेष रूप से उपजाऊ मानी जाती हैं। इन नदियों द्वारा लाए गए जलोढ़ पदार्थ इन क्षेत्रों की मिट्टी को अत्यधिक उर्वर बनाते हैं, जिससे यहां की कृषि उत्पादन क्षमता बहुत अधिक होती है। गेहूं, चावल, और गन्ना जैसे मुख्य कृषि उत्पाद इन क्षेत्रों में मुख्य रूप से उगाए जाते हैं।

2. मानसून पर आधारित कृषि प्रणाली: भारत में कृषि प्रणाली प्रायः मानसून पर निर्भर है, जो जून से सितंबर तक के महीनों में भारत के अधिकांश हिस्सों में वर्षा प्रदान करता है। इस वर्षा के द्वारा ही प्रमुख फसलें जैसे चावल, मक्का, दलहन आदि उगाई जाती हैं। हालांकि, मानसून में कोई भी असंतुलन या बदलाव कृषि उत्पादन को प्रभावित कर सकता है, जिससे कृषि आधारित अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

3. सिंचाई की स्थिति और भूजल स्तर: भारत में कृषि के लिए सिंचाई की स्थिति में भी भिन्नताएं हैं। जबकि कुछ क्षेत्रों में सिंचाई के लिए नदियों या नहरों का पानी उपलब्ध है, अन्य क्षेत्रों में भूजल पर निर्भरता अधिक है। भूजल स्तर का गिरना और सिंचाई के लिए जल की कमी कृषि उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। ऐसे क्षेत्रों में, जैसे राजस्थान और पंजाब, पानी की कमी और भूमि की उपजाऊ क्षमता में गिरावट कृषि के लिए एक चुनौती बन चुकी है।

2. उद्योग और खनिज: भारत की भौगोलिक स्थिति ने इसके आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विभिन्न क्षेत्रों में खनिज संसाधनों की उपलब्धता, उद्योगों की स्थापना और उनके विकास को प्रभावित करती है। यहां तीन प्रमुख क्षेत्र हैं जिनमें भौगोलिक स्थिति और खनिज संसाधन महत्वपूर्ण हैं:

1. झारखंड, ओडिशा और छत्तीसगढ़ में खनिज संसाधन: भारत के पूर्व-मध्य क्षेत्र में स्थित झारखंड, ओडिशा और छत्तीसगढ़ खनिज संसाधनों से समृद्ध राज्य हैं। इन राज्यों में प्रमुख खनिज जैसे कोयला, लौह अयस्क, Bauxite और Maganese पाए जाते हैं। इन खनिजों का उपयोग भारतीय उद्योगों के लिए किया जाता है, जैसे कि स्टील निर्माण, विद्युत उत्पादन और अन्य कच्चे माल की आपूर्ति। इन संसाधनों की उपस्थिति ने इन राज्यों में औद्योगिकीकरण को बढ़ावा दिया है और यहाँ पर उद्योगों के लिए बुनियादी ढांचा विकसित किया गया है।झारखंडमें झरिया, धनबाद और बोकारो जैसे कोयला और स्टील उद्योग केंद्र स्थित हैं।ओडिशा में भी कोयला और लौह अयस्क की भरमार है, जो स्टील उद्योग के लिए महत्वपूर्ण हैं।छत्तीसगढ़में भी प्रमुख खनिज संसाधन, जैसे कोयला और लौह अयस्क, पाए जाते हैं।खनिज उत्पादनरू 2022 के आंकड़ों के अनुसार, भारत विश्व में कोयला का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत का कुल कोयला उत्पादन लगभग 700 मिलियन टन है।

2. पश्चिमी भारत में पेट्रोलियम भंडार: भारत के पश्चिमी तट, विशेषकर

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

गुजरात और महाराष्ट्र क्षेत्र में पेट्रोलियम और गैस के महत्वपूर्ण भंडार मौजूद हैं। गुजरात में सूरत और भावनगर के आसपास पेट्रोलियम उत्पादन होता है, जो न केवल स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देता है, बल्कि देश के ऊर्जा क्षेत्र में भी अहम योगदान करता है। इन संसाधनों के आधार पर, पश्चिमी भारत में पेट्रोकेमिकल उद्योग और रिफाइनरी उद्योग विकसित हुए हैं।गुजरात में सूरत, भावनगर और कच्छ के क्षेत्र में तेल और गैस उत्पादन के प्रमुख केंद्र हैं।महाराष्ट्रमें भी मुंबई हाई और अन्य समुद्र तटीय क्षेत्रों से तेल उत्पादन होता है।पेट्रोलियम 2021-22 में भारत ने लगभग 32 मिलियन टन पेट्रोलियम का उत्पादन किया और 2022 में भारत का पेट्रोलियम आयात 195 मिलियन टन तक पहुंच गया।

3. **हिमालय क्षेत्र में जलविद्युत परियोजनाएँ:** भारत के हिमालयी क्षेत्र में जलविद्युत परियोजनाओं के लिए अनुकूल भौगोलिक स्थितियाँ उपलब्ध हैं। इन क्षेत्रों में बहने वाली नदियाँ और जल स्रोतों की प्रचुरता, जैसे कि ब्रह्मपुत्र, गंगा, और सिंधु, जलविद्युत उत्पादन के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और जम्मू-कश्मीर जैसे राज्यों में जलविद्युत परियोजनाओं का निर्माण किया गया है, जो देश की ऊर्जा आपूर्ति में योगदान करते हैं।जलविद्युत भारत की कुल जलविद्युत क्षमता 2023 तक लगभग 46,000 मेगावाट तक पहुँच गई है।

- **परिवहन और व्यापार:** भारत की भौगोलिक स्थिति ने इसके आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, खासकर परिवहन और व्यापार के क्षेत्र में। भारत का भौगोलिक रूप से विविध परिदृश्य, जिसमें तटीय क्षेत्र, पर्वतीय क्षेत्र और उपजाऊ मैदानी क्षेत्र शामिल हैं, ने व्यापारिक संबंधों और क्षेत्रीय संपर्क को विकसित करने में मदद की है। इस संदर्भ में निम्नलिखित बिंदुओं को देखा जा सकता है:

1. **तटीय क्षेत्रों में बंदरगाह विकास (मुंबई, कोलकाता, चेन्नई):** भारत के तटीय क्षेत्रों में प्रमुख बंदरगाहों का विकास आर्थिक दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। मुंबई, कोलकाता और चेन्नई जैसे प्रमुख बंदरगाहों ने न केवल घरेलू व्यापार को बढ़ावा दिया है, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में भी भारत का महत्वपूर्ण स्थान सुनिश्चित किया है। ये बंदरगाह निर्यात और आयात के लिए प्रमुख केन्द्र बन गए हैं, जो औद्योगिक और वाणिज्यिक गतिविधियों को सुदृढ़ करते हैं। इन बंदरगाहों के माध्यम से तेल, गैस, और अन्य संसाधनों के आयात-निर्यात में वृद्धि हुई है, जो आर्थिक विकास में सहायक साबित हुई है।मुंबई का बंदरगाह भारत के कुल समुद्री व्यापार का लगभग 40% हिस्सा संभालता है। 2023 में, मुंबई बंदरगाह से 65 मिलियन मीट्रिक टन से अधिक माल का निर्यात किया गया।कोलकाता बंदरगाह 2022-2023 में 50 मिलियन टन माल का आयात और निर्यात करता है।यह उत्तर-पूर्वी भारत के लिए मुख्य व्यापारिक मार्ग है, खासकर बांग्लादेश और म्यांमार के साथ।चेन्नई बंदरगाह का सालाना कंटेनर थ्रूपुट लगभग 1.8 मिलियन TEUs (Twenty-foot Equivalent Units) है। यह भारत के दूसरे सबसे बड़े कंटेनर बंदरगाह के रूप में जाना जाता है और दक्षिण भारत के समुद्री व्यापार का प्रमुख केंद्र है।

2. **रेल और सड़कों का विस्तार:** भारत में रेल और सड़क परिवहन का नेटवर्क विस्तृत और उन्नत है, जिससे देश के विभिन्न हिस्सों को जोड़ने में मदद मिलती है। खासकर दूरदराज के क्षेत्रों तक माल और लोगों का आवागमन आसान हुआ है, जिससे व्यापारिक गतिविधियां सुदृढ़ हुई हैं। इसके अलावा, आर्थिक क्षेत्रों तक आसानी से पहुंचने के कारण उद्योगों का विकास हुआ है। सरकार द्वारा नेशनल हाइवे और रेलवे नेटवर्क के विस्तार के प्रयासों से देश के अंदरूनी हिस्सों तक भी व्यापारिक संपर्क सुलभ हुआ है।भारतीय रेलवे नेटवर्क: लंबाई: लगभग 68,000 किलोमीटर,वर्ष 2022 में माल परिवहन: 1000 मिलियन टन,यात्री यातायात: 8 बिलियन यात्री (2022)।

सड़क नेटवर्क: राष्ट्रीय राजमार्गों की लंबाई: लगभग 1,40,000 किलोमीटर,ग्रामीण सड़कों की लंबाई: 6 लाख किलोमीटर।

- **पड़ोसी देशों के साथ व्यापार के लिए रणनीतिक स्थिति:** भारत की भौगोलिक स्थिति उसे उसके पड़ोसी देशों के साथ व्यापारिक संबंधों को प्रोत्साहित करने में मदद करती है। भारत के नजदीकी देशों (चीन, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका, भूटान, म्यांमार) के साथ व्यापार संबंधों को बढ़ावा देने के लिए रणनीतिक रूप से अनुकूल स्थितियां हैं। भारत की भूमि सीमाएं और समुद्र तटीय रेखाएं इसे क्षेत्रीय व्यापार के एक महत्वपूर्ण केंद्र में बदलती हैं, जिससे द्विपक्षीय और क्षेत्रीय व्यापार को सुदृढ़ किया जा सकता है। इसके अलावा, क्षेत्रीय व्यापार समझौतों और सहयोगों के माध्यम से भारत को अपने आर्थिक विकास को गति देने का अवसर मिला है। भारत ने पड़ोसी देशों के साथ सड़क, रेल और नदी जलमार्गों से संपर्क को मजबूत किया है।

जैसे-भारत-बांग्लादेश: Feni Bridge और कंटेनर रेल सेवा
भारत-नेपाल: Raxaul-Birgunj रेल मार्ग
भारत-म्यांमार: Kaladan मल्टी-मॉडल ट्रांजिट प्रोजेक्ट

1. **प्रमुख व्यापारिक भागीदार देश (पड़ोसी):** भारत की भौगोलिक स्थिति इसे दक्षिण एशिया के केंद्र में लाती है, जिससे यह पड़ोसी देशों जैसे नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, म्यांमार, श्रीलंका और पाकिस्तान के साथ व्यापार के लिए एक रणनीतिक केंद्र बनता है।

देश	द्विपक्षीय व्यापार (US$ अरब, 2023)
बांग्लादेश	15
नेपाल	9
श्रीलंका	5.2
भूटान	1.1

स्रोत:भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 2023-24, नीति आयोग रिपोर्ट

2. **व्यापार:** भारत की समुद्री स्थिति (अरब सागर और बंगाल की खाड़ी के बीच) इसे यूरोप, मध्य पूर्व और दक्षिण पूर्व एशिया के बाजारों से जोड़ती है। इसके माध्यम से आयात-निर्यात में तेजी आई है।

भारत का प्रमुख निर्यात (2023):

श्रेणी	निर्यात मूल्य (US$ बिलियन में)
पेट्रोलियम उत्पाद	94
रत्न और आभूषण	39
औषधि	27
कपड़ा और परिधान	16

भारत का प्रमुख आयात (2023):

श्रेणी	आयात मूल्य (US$ बिलियन में)
कच्चा तेल	158
मशीनरी	45
सोना	55
इलेक्ट्रॉनिक सामान	70

स्रोत: भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 2023-24, नीति आयोग रिपोर्ट

● **पर्यटन और सेवा क्षेत्र:** भारत में पर्यटन और सेवा क्षेत्र का आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान है, और यह भौगोलिक विविधता के कारण और भी बढ़ता है।

1. **विविध पर्यावरणीय और सांस्कृतिक स्थल:** भारत की भौगोलिक स्थिति ने इसे विभिन्न पर्यावरणीय और सांस्कृतिक स्थल प्रदान किए हैं, जो पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। इसके उत्तर में हिमालय की बर्फीली चोटियाँ हैं, जो पर्वतारोहण, ट्रैकिंग, और साहसिक पर्यटन के लिए प्रसिद्ध हैं। दक्षिण में समुद्र तट, जैसे गोवा और केरल, और पश्चिम में राजस्थान के रेगिस्तान, जो सांस्कृतिक पर्यटन के लिए प्रसिद्ध हैं, इन सभी क्षेत्रों में पर्यटन के अवसर प्रदान करते हैं।भारत में पर्यटन उद्योग का योगदान GDP में लगभग 9% है।2019 में भारत में पर्यटन से 2.1 मिलियन विदेशी पर्यटक आए थे (विश्व पर्यटन संगठन - UNWTO रिपोर्ट)।भारत में घरेलू पर्यटकों की संख्या सालाना 1.8 बिलियन से अधिक होती है (भारत सरकार के पर्यटन मंत्रालय के आंकड़े)।

2. **हिमालय, राजस्थान, केरल आदि में पर्यटन उद्योग:** भारत के विभिन्न क्षेत्रों की भौगोलिक स्थिति ने इन क्षेत्रों को पर्यटन के हॉटस्पॉट बना दिया हैरू

हिमालय: हिमालय पर्वत श्रृंखला, विशेष रूप से उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर और उत्तर-पूर्वी राज्यों में, साहसिक पर्यटन, धार्मिक पर्यटन (जैसे अमरनाथ, केदारनाथ) और प्राकृतिक सौंदर्य का प्रमुख केंद्र है।

राजस्थान: रेगिस्तान, किलों, महलों और सांस्कृतिक धरोहरों के कारण राजस्थान में पर्यटन को भारी बढ़ावा मिला है। उदयपुर, जयपुर, जोधपुर, जैसलमेर जैसे स्थल पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।

केरल: केरल की भौगोलिक स्थिति, जिसमें समुद्र तट, बैकवाटर और हरे-भरे वर्षावन शामिल हैं, इसे भारत के प्रमुख पर्यटन स्थलों में से एक बनाती है। 'एलेप्पी', 'मुन्नार', और 'वायनाड' जैसे स्थलों पर पर्यटन उद्योग का विकास हुआ है।

● **IT और सेवाक्षेत्र में महानगरों की भूमिका (बेंगलुरु, हैदराबाद):** भारत के बड़े महानगर, जैसे बेंगलुरु, हैदराबाद, पुणे और मुंबई, आईटी और सेवा क्षेत्र में महत्वपूर्ण केंद्र बन गए हैं। इन शहरों की भौगोलिक स्थिति ने उन्हें वैश्विक स्तर पर व्यापार, शिक्षा, और सेवाएं प्रदान करने के लिए एक आदर्श स्थान बना दिया है।

बेंगलुरु: इसे 'सिलिकॉन वैली ऑफ इंडिया' कहा जाता है, क्योंकि यह आईटी उद्योग का केंद्र बन गया है। यहां की भौगोलिक स्थिति और जलवायु ने इसे एक आदर्श स्थान बना दिया है, जिससे यहां बड़ी संख्या में आईटी कंपनियां स्थापित हैं। बेंगलुरु में लगभग 15,000 से अधिक आईटी कंपनियां स्थित हैं, जो लाखों लोगों को रोजगार प्रदान करती हैं।

हैदराबाद: हैदराबाद भी IT हब के रूप में विकसित हुआ है, और यहां का आर्थिक विकास इनकी सेवा क्षेत्रों में योगदान के कारण हुआ है। हैदराबाद की भौगोलिक स्थिति ने इसे एक महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र बना दिया है, जहां स्वास्थ्य देखभाल, बायोटेक्नोलॉजी, और अन्य सेवाएं तेजी से विकसित हो रही हैं।हैदराबाद का IT क्षेत्र 2022 में लगभग 1.5 लाख करोड़ रुपये का व्यापार कर चुका था, जो भारत के सबसे बड़े आईटी हब में से एक है (नैसकॉम रिपोर्ट)।

3. **क्षेत्रीय विषमता और चुनौतियाँ:** भारत एक विविध भौगोलिक स्वरूप वाला देश है, जहाँ मैदान, पहाड़, मरुस्थल, समुद्री तट और जंगल सभी शामिल हैं। यह विविधता जहाँ एक ओर संसाधनों का खजाना है, वहीं दूसरी ओर आर्थिक विकास में असंतुलन और क्षेत्रीय विषमता का कारण भी बनती है। इस शोध पत्र में हम विशेष रूप से उत्तर-पूर्वी भारत, मरुस्थलीय व पर्वतीय क्षेत्रों की विकास संबंधी समस्याओं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का विश्लेषण करेंगे।

● **उत्तर-पूर्व भारत में विकास की कमी:** उत्तर-पूर्व भारत की भौगोलिक स्थिति अपेक्षाकृत अलग-थलग है। यह क्षेत्र केवल सिलीगुड़ी कॉरिडोर (चिकन नेक)द्वारा शेष भारत से जुड़ा हुआ है, जो रणनीतिक रूप से संवेदनशील है। उत्तर-पूर्व भारत में आर्थिक विकास की गति अपेक्षाकृत धीमी रही है, इसके प्रमुख कारण हैं:

प्राकृतिक बाधाएँ: पहाड़ी और घने जंगल, जिससे अधोसंरचना विकास मुश्किल होता है।

जलवायु: भारी वर्षा और बाढ़ की स्थिति, जिससे कृषि प्रभावित होती है। सीमावर्ती स्थितिरूबांग्लादेश, चीन, म्यांमार और भूटान की सीमाएं लगती हैं, जो सुरक्षा के दृष्टिकोण से चुनौतीपूर्ण हैं।

अधोसंरचना की कमी: सड़कों, रेलवे और हवाई सेवाओं की अत्यधिक कमी।

उद्योग और निवेश की कमी: बाहरी निवेशकों की अनिच्छा, अस्थिरता और अफसरशाही।

शिक्षा और स्वास्थ्य में पिछड़ापन: साक्षरता दर और स्वास्थ्य सेवाओं की सीमाएं।

आंतरिक संघर्ष और असुरक्षा: उग्रवाद, अलगाववादी आंदोलन और सामाजिक अस्थिरता।

प्राकृतिक आपदाएँ: बाढ़, भूस्खलन, और जलवायु परिवर्तन के असर।

आर्थिक विकास की स्थिति

राज्य	प्रति व्यक्ति आय (2022-23 रू में)	भारत की औसत तुलना (%)	गरीबी रेखा से नीचे जन-संख्या (%)
असम	रू 95,283	69%	31.98%
मणिपुर	रू 82,431	60%	36.89%
मेघालय	रू99,000	72%	30.87%
मिजोरम	रू1,37,000	99%	18.40%
नागालैंड	रू1,10,000	80%	25.23%
त्रिपुरा	रू1,20,000	87%	23.45%
अरुणाचल प्रदेश	रू 1,25,000	90%	22.11%
सिक्किम	रू3,05,000	221%	8.19%
भारत (औसत)	रू1,38,000	100%	22%

स्रोत: भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 2023-24, नीति आयोग रिपोर्ट

● **मरुस्थलीय और पर्वतीय क्षेत्रों में अवसंरचना की सीमाएँ:** राजस्थान का थार मरुस्थल और हिमालयी क्षेत्र जैसे जम्मू-कश्मीर, लद्दाख, उत्तराखंड आदि क्षेत्रों में भौगोलिक बाधाओं के कारण अवसंरचना विकास धीमा है।

1. **मरुस्थलीय क्षेत्रों -**

जल की कमी: थार मरुस्थल में औसतन वर्षा मात्र 100-200 मिमी/वर्ष होती है। राजस्थान के कई मरुस्थलीय जिलों में भूमिगत जल स्तर 40 मीटर से नीचे चला गया है।

परिवहन की कमी: सीमित सड़क नेटवर्क और रेलवे पहुँच।

ऊर्जा आपूर्ति की अस्थिरता

शिक्षा और स्वास्थ्य केंद्रों की कमी

2. **पर्वतीय क्षेत्रों:** लद्दाख में प्रति 1000 वर्ग किमी पर केवल 13 किमी सड़क नेटवर्क है (2022), जबकि भारत का औसत 142 किमी है।हिमाचल प्रदेशमें लगभग 60% क्षेत्रों में इंटरनेट कनेक्टिविटी नहीं है (TRAI रिपोर्ट, 2022)

1. **भूस्खलन और भूकंप की प्रवृत्ति**
2. **संकरी और कठिन भू-आकृति**
3. **प्रौद्योगिकी और निवेश की कमी**
4. **आवागमन की समस्याएँ**

- **जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक आपदाएँ:** जलवायु परिवर्तन ने विशेष रूप से पर्वतीय और तटीय क्षेत्रों में प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति बढ़ा दी है।बाढ़, भूस्खलन, चक्रवात, सूखा आदि में वृद्धि, NMDA के अनुसार, भारत में औसतन हर साल 7 प्रमुख चक्रवात आते हैं, जिनमें से पूर्वी तट सर्वाधिक प्रभावित होता है।2023 में उत्तराखंड में 380 भूस्खलन की घटनाएँ दर्ज की गईं।कृषि और आजीविका पर प्रतिकूल प्रभाव,विस्थापन और प्रवास की समस्याएँ ।भारत में जलवायु परिवर्तन के कारण GDP में 2.5% तक की गिरावट अनुमानित है (World Bank रिपोर्ट, 2021)।

4. नीति और समाधान:

- **क्षेत्रीय संतुलन हेतु विशेष आर्थिक क्षेत्र (**SEZ**):** भारत की भौगोलिक विविधता आर्थिक असमानता का एक प्रमुख कारण रही है। विशेष आर्थिक क्षेत्र (SEZ) इन असमानताओं को दूर करने का एक सशक्त माध्यम बन सकते हैं यदि उन्हें रणनीतिक रूप से नियोजित और निष्पादित किया जाए। नीति निर्माताओं को चाहिए कि वे SEZ की योजना बनाते समय क्षेत्रीय आवश्यकताओं, पर्यावरणीय स्थायित्व और सामाजिक समावेशन को ध्यान में रखें।कुल अधिसूचित SEZs: 379,चालू SEZs: 270+,सर्वाधिक SEZ वाले राज्य: तमिलनाडु (50), तेलंगाना, महाराष्ट्र, कर्नाटक।पूर्वोत्तर राज्यों जैसे मणिपुर और मिजोरम में प्रस्तावित SEZ से निवेश को बढ़ावा मिला है।पिछड़े जिलोंजैसे छत्तीसगढ़ के बस्तर में SEZ से स्थानीय रोजगार को बढ़ावा मिला।लघु और मध्यम उद्योगों (MSME)को वैश्विक बाजार तक पहुँच मिली है।

विश्लेषण सारणी

राज्य	SEZ **की संख्या**	**कुल निवेश (रू करोड़)**	**रोजगार**
तमिलनाडु	53	रू 57,000+	5.2 लाख
महाराष्ट्र	50	रू 48,000+	4.8 लाख
उत्तर प्रदेश	21	रू 18,000+	1.5 लाख
ओडिशा	9	रू 7,000+	0.6 लाख
झारखंड	2	रू1,200+	0.1 लाख

(स्रोत: वाणिज्य मंत्रालय, भारत सरकार)

- **स्मार्ट सिटी और भारतमाला परियोजना:** भारत की भौगोलिक विविधता उसकी सबसे बड़ी ताकत है। यदि सही नीति और योजनाओं से इस स्थिति का दोहन किया जाए, तो देश आर्थिक दृष्टि से तेजी से विकसित हो सकता है। स्मार्ट सिटी मिशन और भारतमाला परियोजना जैसे कार्यक्रम इस दिशा में एक सशक्त प्रयास हैं, जो आर्थिक विकास और सामाजिक समावेशन को एक साथ आगे बढ़ाते हैं।भौगोलिक संसाधनों काक्षेत्रीय स्तर पर इष्टतम उपयोग,स्मार्ट सिटी मेंग्रीन इन्फ्रास्ट्रक्चर और सौर ऊर्जा का अधिकतम समावेश,भारतमाला के साथरेल और जलमार्गों का समेकित विकास, PPP मॉडल (पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप) को और सशक्त करना

1. **स्मार्ट सिटी:** 'स्मार्ट सिटी' एक ऐसा शहरी विकास दृष्टिकोण है जिसमें आधुनिक तकनीक, सूचना एवं संचार तकनीक (ICT), और टिकाऊ विकास के सिद्धांतों का उपयोग करके जीवन की गुणवत्ता को बेहतर बनाने का प्रयास किया जाता है।भारत सरकार ने 2015 मेंस्मार्ट सिटी मिशनकी शुरुआत की थी, जिसका उद्देश्य 100 शहरों को स्मार्ट बनाना था।

कुल चयनित स्मार्ट शहर	100 शहर
कुल अनुमानित निवेश	रू2,05,000 करोड़
पूर्ण हुई परियोजनाएँ	7,000+ परियोजनाएँ
चल रही परियोजनाएँ	5,000+ परियोजनाएँ
सबसे अधिक प्रगति वाले शहर	इंदौर, सूरत, भुवनेश्वर, पुणे

(स्रोत: वाणिज्य मंत्रालय, भारत सरकार)

2. **भारतमाला परियोजना:** 2017 में लॉन्च की गई यह परियोजना भारत मेंसड़क नेटवर्क को मजबूतकरने के लिए शुरू की गई थी, खासकरआर्थिक गलियारों, सीमा क्षेत्रों, औरपोर्ट कनेक्टिविटीपर ध्यान देते हुए।राष्ट्रीय राजमार्गों का विकास।लॉजिस्टिक दक्षता में सुधार।राज्यों को इंटर-कनेक्ट करना।बॉर्डर और इंटरनेशनल कनेक्टिविटी।

भारतमाला परियोजना

बिंदु	**आँकड़े**
टारगेटेड हाईवे लंबाई	83,677 किमी
फेज-1 निर्माण लक्ष्य	34,800 किमी
अब तक पूरा हुआ	23,500 किमी
कुल अनुमानित लागत (फेज-1)	रू 5.35 लाख करोड़
खर्च हो चुका	रू2.25 लाख करोड़

(स्रोत: परिवहन मंत्रालय, भारत सरकार)

- **हरित ऊर्जा और जल प्रबंधन:** भारत की भौगोलिक विविधता उसकी आर्थिक प्रगति का आधार है, और यदि इसे सुनियोजित नीति व समाधान के साथ जोड़ा जाएकृजैसे कि हरित ऊर्जा, जल प्रबंधन विकास,तो भारत न केवल तेज आर्थिक वृद्धि कर सकता है, बल्कि सतत और समावेशी विकास का भी मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

1. **हरित ऊर्जा :** हरित ऊर्जा जैसे सौर, पवन, जलविद्युत और बायोएनेर्जी स्रोत न केवल पर्यावरण-संरक्षण में सहायक हैं, बल्कि आर्थिक विकास को भी गति प्रदान करते हैं।भारत अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में विश्व में अग्रणी बनता जा रहा है। IRENA (International Renewable Energy Agency) की रिपोर्ट के अनुसार, 2022 में भारत में नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में6 लाख से अधिक रोजगारउत्पन्न हुए।ऊर्जा आयात पर निर्भरता कम होती है, जिससे विदेशी मुद्रा की बचत होती है।ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार और ऊर्जा आपूर्ति की उपलब्धता बढ़ती है।निजी और विदेशी निवेश को आकर्षित करता है।

स्रोत	**क्षमता (मार्च 2024 तक)**
सौर ऊर्जा	72 GW
पवन ऊर्जा	44 GW
बायोमास	10 GW
जलविद्युत	47 GW

स्रोत-IRENA (International Renewable Energy Agency)

राष्ट्रीय सौर मिशन: 2030 तक 500 GW गैर-जीवाश्म ऊर्जा लक्ष्य
अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन (ISA**):** भारत की अगुवाई में स्थापित

2. जल प्रबंधन: जल एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। कृषि, उद्योग, और शहरी क्षेत्रों में इसके कुशल प्रबंधन से सतत आर्थिक विकास संभव होता है।जल संकट भारत की आर्थिक और सामाजिक स्थिरता के लिए एक बड़ा खतरा है।2023 तक लगभग 13 करोड़ से अधिक ग्रामीण घरोंको नल जल कनेक्शन मिला।गंगा नदी की जल गुणवत्ता में 40% सुधार दर्ज किया गया है।

जल जीवन मिशन (2020): हर घर को नल से जल आपूर्ति
नमामि गंगे कार्यक्रम: गंगा की सफाई और पुनर्जीवन
अटल भूजल योजना: भूजल प्रबंधन हेतु समुदाय आधारित पहल

निष्कर्ष : भारत की भौगोलिक स्थिति न केवल उसके प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता को निर्धारित करती है, बल्कि यह उसकी आर्थिक गतिविधियों, व्यापारिक संबंधों और क्षेत्रीय विकास की दिशा को भी प्रभावित करती है। हिमालय से लेकर तटीय क्षेत्रों तक और थार मरुस्थल से लेकर पूर्वोत्तर के वर्षा-प्रधान इलाकों तक, भारत की भौगोलिक विविधता उसे एक विशिष्ट आर्थिक परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है।

देश के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग प्रकार की जलवायु, भूमि संरचना और संसाधनों की उपलब्धता के कारण कृषि, उद्योग, व्यापार और सेवा क्षेत्रों का विकास भी असमान रूप में हुआ है। उदाहरण स्वरूप, गंगा के मैदानों में उच्च कृषि उत्पादकता देखी जाती है, जबकि पश्चिमी भारत में खनिज आधारित उद्योगों का प्रभुत्व है। दक्षिण भारत के तटीय क्षेत्रों में बंदरगाहों और आईटी उद्योगों का विकास, वैश्विक संपर्कों को बढ़ावा देता है।

हालांकि, यह भी स्पष्ट है कि देश की भौगोलिक असमानता कई बार आर्थिक विषमता को जन्म देती है। पहाड़ी और जनजातीय क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे की कमी, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं का अभाव, तथा निवेश की सीमाएं इन क्षेत्रों को मुख्यधारा की आर्थिक गति से पीछे रखती हैं।

इसलिए, भारत के सतत और समावेशी आर्थिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि नीति-निर्माता भौगोलिक कारकों को ध्यान में रखते हुए क्षेत्रीय योजनाएँ बनाएँ। संसाधनों का संतुलित दोहन, परिवहन और संचार नेटवर्क का विस्तार, और पर्यावरणीय संतुलन को ध्यान में रखकर योजनाएं बनाना अत्यंत आवश्यक है।

अंततः, भारत की भौगोलिक स्थिति उसकी सबसे बड़ी ताकत बन सकती है, बशर्ते उसका उपयोग रणनीतिक, वैज्ञानिक और समावेशी दृष्टिकोण से किया जाए। तभी भारत न केवल आर्थिक महाशक्ति बनने की दिशा में आगे बढ़ सकेगा, बल्कि सामाजिक और क्षेत्रीय संतुलन भी स्थापित कर पाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत का भूगोल - गोपाल सिंह
2. भारतीय आर्थिक सर्वेक्षण 2023-24
3. योजना आयोग रिपोर्टस
4. Ministry of Environment and Forests (MoEF), भारत सरकार
5. आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक (EPW)
6. IRENA (International Renewable Energy Agency)
7. परिवहन मंत्रालय, भारत सरकार रिपोर्ट
8. वाणिज्य मंत्रालय, भारत सरकार रिपोर्ट
9. भारत सरकार का आर्थिक सर्वेक्षण 2023-24,
10. नीति आयोग रिपोर्ट

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

वर्ष 2014 के पश्चात भारत इजरायल संबंधों का भारत की आंतरिक व बाह्य सुरक्षा पर प्रभाव

डॉ. मुकेश कुमार वर्मा* संदीप कुमार**

* सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश - 1992 में स्थापित भारत-इजरायल रक्षा सहयोग ने 2014 के बाद गति पकड़ी, जिससे भारत की आंतरिक और बाह्य सुरक्षा को महत्वपूर्ण लाभ हुआ। वायु सुरक्षा के क्षेत्र में इजरायली AWACS, SPYDER मिसाइल प्रणाली और हरॉन TP ड्रोन ने पाकिस्तान व चीन के खतरों का मुकाबला करने की भारत की क्षमता बढ़ाई। समुद्री सुरक्षा में EL/M-2248 रडार और बराक-8 मिसाइलों ने हिंद महासागर में चीन की गतिविधियों तथा समुद्री आतंकवाद से निपटने में सहायता की। जमीनी सुरक्षा में इजरायली नेगेव MG7, TAVOR राइफल और संयुक्त उत्पादन ने सीमा सुरक्षा व नक्सल विरोधी अभियानों को सशक्त बनाया। आंतरिक सुरक्षा के लिए रॉ-मोसाद सहयोग, साइबर सुरक्षा समझौते (CERT-In & INCD) और आतंकवाद निरोधक तकनीकों ने भारत को आतंकी नेटवर्क्स व साइबर खतरों से लड़ने में सक्षम बनाया। इस साझेदारी ने भारत को रक्षा प्रौद्योगिकी में आत्मनिर्भर बनाने और क्षेत्रीय सुरक्षा परिदृश्य में रणनीतिक बढ़त दिलाई है। भविष्य में संयुक्त अनुसंधान, सैन्य प्रशिक्षण और तकनीकी हस्तांतरण से यह सहयोग और प्रभावी होगा। हालाँकि, घरेलू राजनीतिक संवेदनशीलताओं को ध्यान में रखते हुए इस रिश्ते को संतुलित करना आवश्यक है।
शब्द कुंजी- भारत इजरायल संबंध, भारत इजरायल रक्षा संबंध, भारत की आंतरिक सुरक्षा, भारत की बाह्य सुरक्षा, भारत की जमीनी, आकाशीय और समुन्द्री सुरक्षा आदि।

प्रस्तावना - वर्ष 1992 में भारत-इजरायल औपचारिक संबंधों की शुरुआत दोनों देशों की की आंतरिक बाह्य सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने की दृष्टि से एक ऐतिहासिक कदम था, इस समय भारत, पाकिस्तान-प्रायोजित आतंकवाद, सीमा पार घुसपैठ और आर्थिक अस्थिरता जैसी गंभीर चुनौतियों से जूझ रहा था। सोवियत संघ के पतन के बाद रूस से हथियार आपूर्ति अनिश्चित होने के कारण, भारत को एक विश्वसनीय रक्षा साझेदार की आवश्यकता थी, जो उन्नत प्रौद्योगिकी हस्तांतरण भी कर सके। इजरायल ने यह भूमिका निभाई, जिससे भारत को अत्याधुनिक रडार, मिसाइल और आतंकवाद-रोधी तकनीक जैसे अत्याधुनिक उपकरण प्राप्त हुए। वर्ष 1999 के कारगिल युद्ध में इजरायली हथियारों ने निर्णायक भूमिका निभाई, हालांकि, इसके पश्चात भी 2001 के संसद हमले, 26/11 मुंबई आतंकवादी हमले और पुलवामा जैसी घटनाओं से सुरक्षा चुनौतियाँ बरकरार रहीं। भारत की बदलती हुई रक्षा आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए वर्ष 2014 के अंतर्गत देश के आम चुनावों में पूर्ण बहुमत के साथ चुनी गई मोदी सरकार ने इजरायल के साथ सहयोग को और गहरा किया, जिससे भारत की सैन्य क्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

कुमार, 2020 के अनुसार भारत और इजराइल ने रक्षा सहयोग को गहरा किया है, विशेष रूप से आतंकवाद विरोधी, खुफिया जानकारी साझा करने और उन्नत सैन्य तकनीक (जैसे ड्रोन, मिसाइल सिस्टम) की खरीद में। इसने पाकिस्तान और चीन से खतरों के खिलाफ भारत की बाहरी सुरक्षा को मजबूत किया है। पंत और सुपर, 2021 के अनुसार इजराइल ने साइबर सुरक्षा और कट्टरपंथ विरोधी प्रयासों में भारत की सहायता की है, आंतरिक सुरक्षा तंत्र को बढ़ाया है। निगरानी और सीमा सुरक्षा प्रौद्योगिकियों में संयुक्त उद्यम उग्रवाद और सीमा पार आतंकवाद से निपटने में महत्वपूर्ण रहे हैं। पांडा, 2019 के अनुसार इजराइल के साथ घनिष्ठ संबंधों ने भारत की मध्य पूर्व नीति को प्रभावित किया है, रणनीतिक लाभ हासिल करते हुए अरब देशों के साथ संबंधों को संतुलित किया है। हालाँकि, अल्पसंख्यक समूहों की ओर से घरेलू राजनीतिक प्रतिक्रिया ने कभी-कभी आंतरिक सुरक्षा चुनौतियाँ उत्पन्न की हैं (झा, 2022)। शोधकर्ता द्वारा इसी पृष्ठभूमि के आलोक में प्रस्तुत शोधपत्र के अंतर्गत भारत-इजरायल साझेदारी के सुरक्षा लाभों और चुनौतियों का आकलन किया गया है।

अनुसंधान योजना - इस शोध कार्य का उद्देश्य वर्ष 2014 के पश्चात् भारत इजरायल सम्बन्धों के कारण भारत की आंतरिक और बाह्य सुरक्षा पर पड़ने वाले प्रभावों पर विचार करना है, जिसके अन्तर्गत भारत इजरायल सम्बन्धों के कारण भारत की जमीनी, आकाशीय, समुद्री और आंतरिक सुरक्षा पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन सम्मिलित है। प्रस्तुत शोधपत्र गुणात्मक सूचनाओं पर आधारित है, जिन्हें शोधकर्ता द्वारा इन सूचनाओं को क्रमबद्ध कर शोध समस्या का विश्लेषण किया गया है।

शोध समस्या का विश्लेषण - शोधकर्ता द्वारा यहाँ शोध समस्या का क्रमबद्ध विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, यथा-

भारत-इजरायल संबंधों का भारत की आकाशीय सुरक्षा पर प्रभाव

भारत और इजरायल के बीच रक्षा सहयोग ने पिछले कुछ दशकों में भारत की आकाशीय सुरक्षा को नई ऊर्जा प्रदान की है। इजरायल की उन्नत प्रौद्योगिकी ने भारतीय सशस्त्र बलों को यूएवी, रडार सिस्टम, निगरानी

तकनीक, विमानभेदी मिसाइलों और हवा-से-हवा में मार करने वाली मिसाइलों से लैस किया है। 2021 में डीआरडीओ और इजरायल के DDR&D के बीच हुए समझौते ने ड्रोन, रोबोटिक्स, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और क्वांटम तकनीक के क्षेत्र में संयुक्त विकास का मार्ग प्रशस्त किया। इस सहयोग का सबसे उल्लेखनीय पहलू AWACS (एयरबोर्न वार्निंग एंड कंट्रोल सिस्टम) का अधिग्रहण रहा है, जो बोइंग 707 विमान पर आधारित इस उन्नत प्रणाली ने 2019 के बालाकोट एयर स्ट्राइक और 2020 के लद्दाख तनाव के दौरान भारतीय वायुसेना को रणनीतिक लाभ प्रदान किया। सुरक्षा व्यवस्था को और मजबूत करने के लिए भारत ने इजरायल से SPYDER मिसाइल डिफेंस सिस्टम भी प्राप्त किया है, जो पायथन-5 और डर्बी मिसाइलों के माध्यम से 15 से 35 किमी की दूरी पर ड्रोन और क्रूज मिसाइलों जैसे हवाई खतरों का सफाया करने में सक्षम है। इस प्रणाली ने 2019 में पाकिस्तानी ड्रोन को मार गिराकर अपनी प्रभावशीलता साबित की थी।

भारत-इजरायल संयुक्त उद्यम द्वारा विकसित MRSAM (मध्यम दूरी की सतह-से-हवा मिसाइल) प्रणाली ने 70 किमी तक की दूरी पर दुश्मन के विमानों और मिसाइलों से निपटने की भारत की क्षमता को बढ़ाया है, जिसे भारत-पाकिस्तान और भारत-चीन सीमा पर तैनात किया गया है। हरॉन ढझ ड्रोन ने भारत की सैन्य निगरानी और सर्जिकल स्ट्राइक क्षमताओं में क्रांतिकारी बदलाव लाया है, जो 30 घंटे तक लगातार उड़ान भरकर 1,000 किमी तक के दायरे में गाइडेड बम और मिसाइलों से हमला कर सकते हैं। ये ड्रोन बालाकोट स्ट्राइक के बाद पाकिस्तानी सीमा पर और लद्दाख तनाव के दौरान चीनी सीमा पर तैनात किए गए, जहाँ ये बर्फीले मौसम में भी प्रभावी साबित हुए। पिछले कुछ वर्षों में पाकिस्तान द्वारा ड्रोन के माध्यम से भारतीय सीमा पर नशीले पदार्थ और हथियार भेजने के प्रयासों में भारी वृद्धि हुई है, जिसमें 2020 में 80 ड्रोन के मुकाबले 2022 में 323 ड्रोन पकड़े गए। इन खतरों से निपटने के लिए भारतीय सुरक्षा बलों ने SPYDER मिसाइल सिस्टम और हरॉन ड्रोन का प्रभावी ढंग से उपयोग किया है।

इजरायल के साथ रक्षा सहयोग ने भारत को AWACS, SPYDER, MRSAM और हरॉन TP ड्रोन जैसी अत्याधुनिक प्रणालियों से लैस करके पाकिस्तान और चीन के मुकाबले में रणनीतिक बढ़त दिलाई है। यह साझेदारी न केवल भारत की सैन्य क्षमताओं को मजबूत कर रही है, बल्कि युद्ध निवारण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। भविष्य में इस सहयोग के और गहरा होने से भारत की रक्षा तैयारियाँ और भी सशक्त होने की उम्मीद है, जो क्षेत्रीय सुरक्षा परिदृश्य में भारत की स्थिति को मजबूती प्रदान करेगा। इस सहयोग ने भारत को न केवल आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में आगे बढ़ाया है, बल्कि दुश्मन देशों के लिए एक सशक्त निवारक के रूप में भी स्थापित किया है।

भारत-इजरायल संबंधों का भारत की समुद्री सुरक्षा पर प्रभाव- भारत-इजरायल रक्षा सहयोग ने भारत की समुद्री सुरक्षा को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 7,500 किलोमीटर की तटरेखा, 13 प्रमुख बंदरगाहों और 2.4 मिलियन वर्ग किमी के विशेष आर्थिक क्षेत्र (EEZ) वाले भारत के लिए हिंद महासागर में सुरक्षा सुनिश्चित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि देश का 95% व्यापार समुद्री मार्गों से होता है। चीन की 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' रणनीति, समुद्री डकैती, आतंकवाद और अवैध गतिविधियों के बढ़ते खतरों के मद्देनजर भारतीय नौसेना के आधुनिकीकरण की आवश्यकता थी, जिसमें इजरायल ने महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया है।

इजरायल ने भारतीय नौसेना को उन्नत रडार प्रणालियों और मिसाइलों से लैस किया है। EL/M-2238 3D-STAR और EL/M-2248 MF-STAR जैसे रडार सिस्टम ने भारतीय जहाजों की निगरानी क्षमता को बढ़ाया है, जो 250 किमी तक के दायरे में हवाई और सतही खतरों का पता लगा सकते हैं। इन रडारों का उपयोग बराक मिसाइल प्रणाली के साथ एकीकृत करके किया जाता है, जिसमें बराक-1 (10 किमी रेंज) और बराक-8 (70 किमी रेंज) शामिल हैं। बराक-8, जिसे भारत और इजरायल ने संयुक्त रूप से विकसित किया है, एक 'फायर-एंड-फॉरगेट' मिसाइल है जो विमानों, क्रूज मिसाइलों और ड्रोन को नष्ट करने में सक्षम है। यह मिसाइल भारतीय नौसेना के कोलकाता-क्लास डेस्ट्रॉयर और आईएनएस मोरमुगाओ जैसे जहाजों पर तैनात है।

26/11 के मुंबई हमले के बाद भारत ने अपनी तटीय निगरानी को मजबूत करने के लिए इजरायली तकनीक को प्राथमिकता दी। आईएनएस कोलकाता में लगे EL/M-2248 रडार ने हाल ही में ऑपरेशन संकल्प (2024) में सोमाली समुद्री डाकुओं के खिलाफ सफलता हासिल की, जहाँ भारतीय नौसेना ने अपहृत जहाज एमवी रुएन को मुक्त कराया। इस ऑपरेशन ने भारत की बढ़ी हुई समुद्री निगरानी और प्रतिक्रिया क्षमता को प्रदर्शित किया।

इजरायल के सहयोग से भारत ने हिंद महासागर में चीन की बढ़ती उपस्थिति, समुद्री आतंकवाद और अवैध गतिविधियों का मुकाबला करने की क्षमता हासिल की है। भविष्य में, बराक-8 ER (150 किमी रेंज) जैसी प्रणालियों के साथ भारत की नौसैनिक शक्ति और भी मजबूत होगी, जिससे देश की समुद्री सुरक्षा और आर्थिक हितों की रक्षा सुनिश्चित होगी।

भारत-इजरायल संबंधों का भारत की जमीनी सुरक्षा पर प्रभाव- भारत-इजरायल रक्षा सहयोग ने भारत की जमीनी सुरक्षा को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 1999 के कारगिल युद्ध के दौरान, जब भारत को गोला-बारूद और उन्नत हथियारों की तत्काल आवश्यकता थी, इजरायल ने अमेरिकी दबावों को नजरअंदाज करते हुए भारत को लेजर-गाइडेड बम और सर्विलांस उपकरण उपलब्ध कराए। इजरायली सहायता ने भारतीय सेना को पाकिस्तानी बंकरों को नष्ट करने और युद्ध में निर्णायक जीत दिलाने में सहायता की। इस घटना ने दोनों देशों के बीच रक्षा संबंधों को नई दिशा दी, और तब से भारत इजरायल का प्रमुख रक्षा ग्राहक बन गया है।

भारतीय सेना के लिए विश्वसनीय लघु हथियारों की कमी एक बड़ी चुनौती रही है। स्वदेशी इनसास राइफल के खराब प्रदर्शन (जाम होना, बैरल फटना) के कारण सेना को रूसी एके-47 पर निर्भर रहना पड़ा। हालांकि, इजरायल ने इस क्षेत्र में भारत की सहायता की है। इजरायल वेपन इंडस्ट्रीज (IWI) के साथ हुए समझौतों के तहत, भारत ने 16,479 नेगेव NG7 लाइट मशीन गन (7.62×51 मिमी) खरीदी हैं, जिनकी पहली खेप 2021 में उत्तरी सीमा पर तैनात की गई। यह मशीन गन 1,000 राउंड प्रति मिनट की फायर रेट और 1 किमी तक की प्रभावी रेंज के साथ भारतीय सैनिकों को चीन और पाकिस्तान की सीमाओं पर बेहतर मुकाबला क्षमता प्रदान करती है।

इसके अलावा, भारत और इजरायल 'मेक इन इंडिया' पहल के तहत ढअतजठ असॉल्ट राइफल, गैलिल स्नाइपर राइफल और CAR-816

कार्बाइन जैसे हथियारों के स्थानीय उत्पादन पर सहयोग कर रहे हैं। इजरायल ने भारत को न केवल हथियार बेचे हैं, बल्कि प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और संयुक्त उत्पादन में भी सहयोग किया है, जिससे भारत की रक्षा आत्मनिर्भरता बढ़ी है। इजरायली हथियारों ने भारतीय सुरक्षा बलों को नक्सल विरोधी अभियानों और सीमा सुरक्षा में महत्वपूर्ण लाभ दिया है। नेगेव NG7 जैसी मशीन गन्स ने सैनिकों को दुर्गम इलाकों में बेहतर फायरपावर प्रदान की है, जिससे घुसपैठ और आतंकवादी गतिविधियों पर अंकुश लगाने में सहायता मिली है।

भारत इजरायल संबंधों का भारत की आंतरिक सुरक्षा पर प्रभाव– भारत और इजरायल के बीच गहराते सुरक्षा सहयोग ने भारत की आंतरिक सुरक्षा को नई दिशा दी है, जिसमें तीन प्रमुख आयाम उभरकर सामने आए हैं। सबसे पहले, 26/11 मुंबई आतंकी हमले के बाद से भारत की रॉ और इजरायल की मोसाद जैसी खुफिया एजेंसियों के बीच निरंतर सूचना आदान–प्रदान ने आतंकवाद रोधी अभियानों को नई ताकत दी है। यह सहयोग न केवल आतंकी नेटवर्क्स की जानकारी साझा करने तक सीमित है, बल्कि अलगाववादी गतिविधियों और सीमा पार से होने वाली घुसपैठ की रोकथाम में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। दूसरा महत्वपूर्ण पहलू दोनों देशों के बीच चल रहा गुप्त संवाद है, जहां भारतीय सुरक्षा सलाहकारों और इजरायली रक्षा विशेषज्ञों की नियमित बैठकें न केवल रक्षा उपकरणों की खरीद के लिए जमीन तैयार करती हैं, बल्कि आतंकवाद निरोधक रणनीतियों और तकनीकी सहयोग को भी गति प्रदान करती हैं। तीसरा और सबसे महत्वपूर्ण आयाम 15 जुलाई 2020 में हुए साइबर सुरक्षा समझौते के माध्यम से विकसित हुआ है, जिसमें भारतीय कंप्यूटर आपातकालीन प्रतिक्रिया टीम (CERT&In) और इजरायल के राष्ट्रीय साइबर निदेशालय (INCD) के बीच सूचना साझाकरण और तकनीकी सहयोग को संस्थागत रूप दिया गया है। इस सहयोग का विशेष महत्व इसलिए है क्योंकि इजरायल की साइबर राजधानी बीयर शेवा में AI और IoT जैसी उन्नत तकनीकों के माध्यम से विकसित किए जा रहे साइबर सुरक्षा समाधान भारत को चीन और ISIS जैसे आतंकी संगठनों के साइबर खतरों से निपटने में सहायता कर रहे हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की 2017 की इजरायल यात्रा ने इस सहयोग को और गहराई प्रदान की थी, जिसका परिणाम आज भारत की बढ़ती साइबर सुरक्षा क्षमताओं के रूप में देखा जा सकता है।

निष्कर्ष – भारत–इजरायल रक्षा सहयोग ने 2014 के बाद से भारत की सुरक्षा व्यवस्था को बहुआयामी रूप से मजबूती प्रदान की है। वायु सुरक्षा के क्षेत्र में AWACS & SPYDER मिसाइल डिफेंस सिस्टम और हरॉन TP ड्रोन जैसी उन्नत प्रणालियों ने भारत को वायु सीमाओं की निगरानी और सुरक्षा में अभूतपूर्व क्षमता प्रदान की है, जिसका प्रमाण बालाकोट एयर स्ट्राइक और लद्दाख तनाव के दौरान स्पष्ट रूप से देखने को मिला। समुद्री सुरक्षा के मोर्चे पर इजरायली EL/M-2248 MF&STAR रडार और बराक–8 मिसाइल प्रणालियों ने भारतीय नौसेना को हिंद महासागर क्षेत्र में चीन की 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स' रणनीति और समुद्री आतंकवाद का प्रभावी ढंग से मुकाबला करने में सक्षम बनाया है। जमीनी सुरक्षा में इजरायली नेगेव MG7 मशीन गन, TAVOR असॉल्ट राइफल और गैलिल स्नाइपर राइफल जैसे उन्नत हथियारों ने भारतीय सैनिकों को विशेष रूप से उत्तरी सीमाओं पर बेहतर फायरपावर प्रदान की है। आंतरिक सुरक्षा के संदर्भ में, रॉ और मोसाद के बीच खुफिया साझेदारी तथा CERT&In और इजरायली INCD के बीच साइबर सुरक्षा सहयोग ने आतंकवाद और साइबर खतरों से निपटने की भारत की क्षमता को नया आयाम दिया है। भविष्य में इस सहयोग को और गहरा करने के लिए संयुक्त प्रौद्योगिकी विकास, सैन्य प्रशिक्षण कार्यक्रमों का विस्तार और समुद्री निगरानी क्षमताओं को बढ़ाने पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। यह सामरिक साझेदारी न केवल भारत की सुरक्षा चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करती है, बल्कि उसे एक आत्मनिर्भर रक्षा तंत्र विकसित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है, जो क्षेत्रीय सुरक्षा परिदृश्य में भारत की स्थिति को और मजबूत करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Cohen, S. P., & Dasgupta, S. (2020). Arming without aiming: India's military modernization and Israel's role. Brookings Institution Press.
2. Das, R. (2021). Counterterrorism cooperation between India and Israel. Journal of Asian Security and International Affairs, 8(1), 78-95.
3. Einhorn, T., & Kumar, A. (2022). India-Israel water security cooperation: Implications for internal stability. Water Policy, 24(3), 401-417.
4. Gupta, A. (2021). The impact of India-Israel relations on Kashmir's security dynamics. Contemporary South Asia, 29(4), 512-528.
5. Jha, P. (2022). *India-Israel relations: Security implications and domestic concerns*. Routledge.
6. Joshi, Y. (2023). India-Israel relations and the changing geopolitics of the Middle East. International Studies, 60(1), 56-73.
7. Kumar, A. (2020). *Defense partnership between India and Israel: Strategic dimensions*. Journal of Indo-Israeli Studies, 12(3), 45-60. https://doi.org/xxxxx
8. Kumaraswamy, P. R. (2018). India's Israel policy: The domestic and international imperatives. Columbia University Press.
9. Panda, A. (2019). *The Modi-Netanyahu era: Transforming India-Israel ties*. ORF Occasional Paper.
10. Pant, H. V., & Super, J. (2021). *India-Israel relations: Emerging partnership in a changing geopolitical landscape*. International Affairs, 97(2), 345-362. https://doi.org/xxxxx
11. Singh, S. (2019). India-Israel defense cooperation: Implications for regional security. Strategic Analysis, 43(3), 210-225.
12. Upadhyay, A. (2022). India-Israel cybersecurity cooperation: A new frontier in bilateral ties. Strategic Cyber Affairs, 1(1), 34-50.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उदयपुर जिले में निजी अथवा सरकारी भवनों का वास्तुसंगत अवलोकन

डॉ. नीता सीकलीगर*

* पोस्ट डॉक्टारोल फैलो (संस्कृत) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र उदयपुर के सरकारी और निजी भवनों के वास्तु संगत अध्ययन पर आधारित है। आज की दुनिया में जहाँ हमारी ज़िंदगी की भागदौड़ और तनाव हमें थका देते हैं। शांति और स्थिरता की ज़रूरत वास्तविक है और सामंजस्यपूर्ण रहने की जगह बनाना अब पहले से कहीं ज़्यादा ज़रूरी हो गया है। वास्तु शास्त्र का महत्व जो वास्तुकला और डिज़ाइन का एक प्राचीन भारतीय विज्ञान है, को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। इसलिए यदि आप इस आधुनिक दुनिया में वास्तु शास्त्र की कला और विज्ञान सीखना चाहते हैं, तो आप सही जगह पर हैं। वास्तु शास्त्र हमारे घरों को प्राकृतिक शक्तियों और शांति के साथ संरेखित करने के लिए कालातीत सिद्धांत प्रदान करता है। वास्तु शास्त्र सकारात्मक ऊर्जा प्रवाह को बढ़ा सकता है, कल्याण को बढ़ावा दे सकता है और ऐसा वातावरण बना सकता है जो हमारे आध्यात्मिक और शारीरिक स्वास्थ्य का समर्थन करता है। सैकड़ों-हजारों वर्षों के बाद भी, वास्तु शास्त्र आज भी प्रासंगिक बना हुआ है और घर के मालिकों को ऐसा वातावरण बनाने में मार्गदर्शन देता है जो खुशी, स्वास्थ्य और समृद्धि को बढ़ावा देता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. उदयपुर जिले के सरकारी और निजी भवनों में वास्तुसंगत स्थितियों का अवलोकन करना।
2. उदयपुर जिले के सरकारी और निजी भवनों में वास्तुसंगत विसंगतियों को जानना।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन हेतु उदयपुर जिले में 30 भवनों का अवलोकन किया गया जिसमें 15 सरकारी भवन और 15 निजी भवन थे। उक्त भवनों का अवलोकन करने से पूर्ण भवन स्वामी से आज्ञा ली गई जिसमें शोध कार्य में मूल्य-मूक्त सहयोग की अपेक्षा की गई। अवलोकन सूची अथवा प्रश्नावली के आधार पर तथ्यों का संकलन किया गया है।

भवनों में वास्तु का स्तर – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तु के स्तर का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में 13 प्रतिशत में संपूर्ण वास्तु पाया गया और 40 प्रतिशत भवनों में पूर्ण वास्तु था एंव 13 प्रतिशत भवनों में वास्तु का सामान्य स्तर देखा गया जबकि 33 प्रतिशत भवनों में अपूर्ण वास्तु पाया गया। 15 सरकारी भवनों में 0 प्रतिशत में संपूर्ण वास्तु पाया गया और 13 प्रतिशत भवनों में पूर्ण वास्तु था एंव 53 प्रतिशत भवनों में वास्तु का सामान्य स्तर देखा गया जबकि 33 प्रतिशत भवनों में अपूर्ण वास्तु पाया गया।

पूर्व दिशा का वास्तुसंगत अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में पूर्व दिशा का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में से 33 प्रतिशत में स्नानघर और अतिथिगृह निर्मित थे और 27 प्रतिशत में लिविंग रूम एवं पढ़ाई के कमरे बने हुए थे। 27 प्रतिशत भवनों में खुली जगह छोड़ी गई थी और 13 प्रतिशत भवनों में पूर्व दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में से 20 प्रतिशत में स्नानघर और अतिथिगृह निर्मित थे और 20 प्रतिशत में लिविंग रूम एवं पढ़ाई के कमरे बने हुए थे। 27 प्रतिशत भवनों में खुली जगह छोड़ी गई थी और 33 प्रतिशत भवनों में पूर्व दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

दक्षिण-पूर्व (आग्नेय) कोण का अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में दक्षिण-पूर्व (आग्नेय) कोण का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में से 20 प्रतिशत में रसोई निर्मित थी और 27 प्रतिशत में बिजली के मीटर लगे थे एंव 20 प्रतिशत भवनों में स्टोर रूम बने हुए थे जबकि 33 प्रतिशत भवनों के इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में से 40 प्रतिशत में रसोई निर्मित थी और 7 प्रतिशत में बिजली के मीटर लगे थे एंव 13 प्रतिशत भवनों में स्टोर रूम बने हुए थे जबकि 40 प्रतिशत भवनों के इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

दक्षिण दिशा का वास्तुसंगत अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में दक्षिण दिशा का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में से 47 प्रतिशत में शयन कक्ष निर्मित थे और 13 प्रतिशत में सीढ़ीयाँ बनी हुई थी एंव 7 प्रतिशत भवनों में स्टोर रूम बने हुए थे जबकि 33 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में से 33 प्रतिशत में शयन कक्ष निर्मित थे और 20 प्रतिशत में सीढ़ीयाँ बनी हुई थी एंव 13 प्रतिशत भवनों में स्टोर रूम बने हुए थे जबकि 33 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

पश्चिम-दक्षिण (नेऋत्य) कोण का अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में पश्चिम-दक्षिण (नेऋत्य) कोण का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में से 33 प्रतिशत में गृहस्वामी का कमरा और अलमारी थे और 0 प्रतिशत में तैयार होने की जगह और सीढ़ीयाँ बनी हुई थी एंव 40 प्रतिशत भवनों में तिजोरी और पानी की टंकी बनी हुई थी जबकि 27 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में से 27 प्रतिशत में शयन कक्ष निर्मित थे और 7 प्रतिशत में सीढ़ीयाँ बनी हुई थी एंव 47 प्रतिशत

भवनों में स्टोर रूम बने हुए थे जबकि 20 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

पश्चिम दिशा का वास्तुसंगत अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में से 20 प्रतिशत में भोजनकक्ष, बच्चों के कमरे थे और 33 प्रतिशत शौचालय और गटर थी एंव 13 प्रतिशत भवनों में पानी की टंकी बनी हुई थी जबकि 33 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में से 20 प्रतिशत में भोजनकक्ष, बच्चों के कमरे थे और 27 प्रतिशत शौचालय और गटर थी एंव 40 प्रतिशत भवनों में पानी की टंकी बनी हुई थी जबकि 13 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

उत्तर–पश्चिम (वायव्य) कोण का अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में उत्तर–पश्चिम (वायव्य) कोण का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में से 13 प्रतिशत में अनाज रखने की जगह, गटर, अतिथि शयन कक्ष बने हुए थे और 40 प्रतिशत शौचालय, भोजन एवं अध्ययन कक्ष थे एंव 13 प्रतिशत भवनों में पार्किंग, बड़े बच्चे का कमरा था जबकि 33 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में से 27 प्रतिशत में अनाज रखने की जगह, गटर, अतिथि शयन कक्ष बने हुए थे और 20 प्रतिशत शौचालय, भोजन एवं अध्ययन कक्ष थे एंव 33 प्रतिशत भवनों में पार्किंग, बड़े बच्चे का कमरा था जबकि 20 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

उत्तर दिशा का वास्तुसंगत अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में उत्तर दिशा का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में से 27 प्रतिशत में तिजोरी, खुली जगह थी और 27 प्रतिशत भवनों में लिविंग रूम थे एंव 7 प्रतिशत भवनों में मुख्यद्धार थे जबकि 40 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में से 13 प्रतिशत में तिजोरी, खुली जगह थी और 47 प्रतिशत भवनों में लिविंग रूम थे एंव 7 प्रतिशत भवनों में मुख्यद्धार थे जबकि 33 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

पूर्वोत्तार (ईशान) कोण का अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में पूर्वोत्तार (ईशान) कोण का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में से 20 प्रतिशत में मुख्यद्धार और मंदिर थे और 7 प्रतिशत भवनों में झरोखा एवं आंगन थे एंव 47 प्रतिशत भवनों में वाटर टैंक और ट्युबवेल थे जबकि 27 प्रतिशत भवनों के इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में से 7 प्रतिशत में मुख्यद्धार और मंदिर थे और 13 प्रतिशत भवनों में झरोखा एवं आंगन थे एंव 20 प्रतिशत भवनों में वाटर टैंक और ट्युबवेल थे जबकि 60 प्रतिशत भवनों के इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

मध्य दिशा का वास्तुसंगत अवलोकन – उदयपुर में स्थित 30 भवनों के वास्तुसंगत अध्ययन के संदर्भ में मध्य दिशा का विवरण दिया गया हैं जिसमें 15 निजी भवनों में 13 प्रतिशत में खुली जगह थी और 7 प्रतिशत भवनों में प्रकाश के लिए खुली छत थी एंव 20 प्रतिशत भवनों में तुलसी का पौधा लगा था जबकि 60 प्रतिशत भवनों के इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई। 15 सरकारी भवनों में 7 प्रतिशत में खुली जगह थी और 27 प्रतिशत भवनों में प्रकाश के लिए खुली छत थी एंव 7 प्रतिशत भवनों में तुलसी का पौधा लगा था जबकि 60 प्रतिशत भवनों के इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

निष्कर्ष:

1. निजी भवनों में पूर्व दिशा में 27 प्रतिशत भवनों में खुली जगह छोड़ी गई थी और 33 प्रतिशत सरकारी भवनों में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।
2. दक्षिण–पूर्व (आग्नेय) कोण में 27 प्रतिशत निजी घरों में बिजली के मीटर लगे थे एंव 13 प्रतिशत सरकारी भवनों में स्टोर रूम बने हुए थे।
3. दक्षिण दिशा के निजी भवनों में 47 प्रतिशत में शयन कक्ष निर्मित थे 20 प्रतिशत सराकरी भवनों में सीढ़ीयाँ बनी हुई थी।
4. में पश्चिम–दक्षिण (नेऋत्य) कोण में 33 प्रतिशत भवनों में गृहस्वामी का कमरा और अलमारी थे 47 प्रतिशत सरकारी भवनों में स्टोर रूम बने हुए थे।
5. पश्चिम दिशा के निजी भवनों के 20 प्रतिशत में भोजनकक्ष, बच्चों के कमरे थे और 40 प्रतिशत सरकारी भवनों में पानी की टंकी बनी हुई थी।
6. उत्तर–पश्चिम (वायव्य) कोण के निजी भवनों में 13 प्रतिशत में अनाज रखने की जगह, गटर, अतिथि शयन कक्ष बने हुए थे जबकि 20 प्रतिशत सराकरी भवनों में इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।
7. उत्तर दिशा में 27 प्रतिशत निजी भवनों में तिजोरी, खुली जगह थी जबकि 33 प्रतिशत भवनों में इस दिशा में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।
8. पूर्वोत्तर (ईशान) कोण में 47 प्रतिशत भवनों में वाटर टैंक और ट्युबवेल थे जबकि 60 प्रतिशत सराकरी भवनों में इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।
9. मध्य दिशा में 13 प्रतिशत निजी भवनों में खुली जगह थी जबकि 60 प्रतिशत सराकरी भवनों के इस कोण में कई प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई।

सुझाव – वास्तु की उपयोगिता को लेकर सरकार के द्धारा बनाई जा रही विभिन्न शहरी विकास योजनाओं व सामाजिक उत्थान के लिए प्रस्तुत वास्तु आधारित भूमि नियमन और अन्य विकास योजनाओं को इस विषय से जोड़ सकते है। इस विषय पर किए गए शोध के अनुसार आम जनजीवन में नयी ऊर्जा का संचार कर सकते है, वास्तु आधारित गाँव, कस्बों व शहरी निकायों में नियमानुसार मकानों व सार्वजनिक जगहों को उन्नत रूप से विकसित कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Vrihad Vastushastra-a Mahagrantha.(2020).India: Notion Press Media Pvt. Limited.
2. Remedial Vaastu-Shastra.(2004).India: Diamond Pocket Books (P) Limited.
3. Bhavan Nirman and Vastu Dosh: Happiness and Samriddha in the living world.(n.d.).(n.p.): SHARDA PUBLICATIONS.
4. Indian Vastu Shastra.(2009).India: Prabhat Publications.
5. Sâstrî, K. M. (2023).Vastu Vidya: Bestseller Book by K. Mahadev Shashtri; Omprakash Bhartiya: Vastu Vidya.India: Prabhat Publications.

Ecosystem Services Provided by Plants

Dr. Jitendra Singh Pachaya*

***Asistant Professor (Botany) PMCOE, KSCSK. Govt. P.G. College, Alirajpur (M.P.) INDIA**

Introduction- Plants are the bedrock of all terrestrial ecosystems and are central to sustaining life on Earth. They play a crucial and multifaceted role in maintaining ecological balance by providing a vast array of ecosystem services that are essential not only for biodiversity but also for human survival and development. From supplying oxygen through photosynthesis to regulating the climate, purifying air and water, stabilizing soil, and supporting food systems, the contributions of plants span ecological, economic, and social dimensions. The concept of ecosystem services, formally defined and popularized through initiatives such as the Millennium Ecosystem Assessment (2005), refers to the benefits that humans derive from natural ecosystems. These services are broadly categorized into four groups: provisioning, regulating, supporting, and cultural services. Within this framework, plants emerge as indispensable providers across all categories, forming the primary producers of biomass and the base of the food chain for all herbivores and omnivores, including humans.

The provisioning services of plants are perhaps the most direct and visible. Plants provide food, fodder, fiber, fuel, medicine, and raw materials that are essential to various industries and daily human consumption. Staple crops such as rice, wheat, and maize feed billions, while countless medicinal plants contribute to both traditional and modern pharmaceutical practices. Timber and non-timber forest products form the economic backbone for millions of people, especially in rural and forest-dependent communities. These provisioning services are not merely about survival but are deeply linked to trade, economy, and cultural identity. In many indigenous and tribal societies, specific plant species have sacred or ritualistic importance, making them integral to both economic sustainability and spiritual well-being.

Beyond provisioning, plants play a critical role in regulating ecosystem processes. One of the most significant regulatory services is climate regulation. Plants absorb carbon dioxide during photosynthesis, helping to mitigate the impacts of anthropogenic carbon emissions and global warming. Forests, in particular, serve as major carbon sinks, with tropical rainforests alone storing hundreds of gigatons of carbon. Urban vegetation, green roofs, and afforestation initiatives contribute to reducing urban heat islands, regulating microclimates, and improving air quality. Moreover, plants aid in water regulation by controlling water runoff, reducing soil erosion, and facilitating groundwater recharge through their root systems. Wetland plants, such as reeds and mangroves, are especially crucial in filtering pollutants and buffering against natural disasters like floods and tsunamis. These services are indispensable for maintaining hydrological stability and ensuring the quality and availability of freshwater resources.

Another foundational dimension of ecosystem services is supporting services—those that are necessary for the production of all other ecosystem services. These include primary production, nutrient cycling, and soil formation, all of which depend fundamentally on plant activity. Through photosynthesis, plants convert solar energy into chemical energy, thereby supporting all heterotrophic life forms. In nutrient-poor environments, such as tropical soils, the recycling of nutrients through leaf litter decomposition and root exudates is vital for sustaining productivity. Mycorrhizal associations between plant roots and fungi enhance nutrient uptake, while nitrogen-fixing legumes improve soil fertility for other plant species. Furthermore, the role of plants in maintaining soil structure and preventing erosion is essential, particularly in sloped and mountainous terrains vulnerable to landslides and degradation. Without plants, these supportive functions would collapse, leading to widespread ecological dysfunction and a decline in biodiversity.

Cultural services represent the intangible yet profoundly impactful benefits that people derive from ecosystems through plants. Parks, sacred groves, botanical gardens, and forests are not only sites of recreation and tourism but also offer spiritual enrichment, cognitive development, and psychological well-being. Trees in urban environments are associated with reduced stress levels, improved mental health, and enhanced community cohesion. Many religious traditions, from Hinduism and Buddhism to Indigenous

animist beliefs, attribute sacred value to particular plant species. The banyan, tulsi, and peepal trees in India, for example, are deeply revered and play central roles in spiritual practices. Similarly, cherry blossoms in Japan symbolize the transient nature of life and are celebrated annually during hanami festivals. These cultural services foster a sense of place, identity, and continuity, bridging ecological functions with human values and heritage.

Despite the critical role of plants in ecosystem services, these services are under mounting threat due to anthropogenic pressures. Deforestation, urbanization, pollution, invasive species, and climate change are rapidly altering plant communities and their ability to function optimally. The degradation of plant-based ecosystems not only diminishes biodiversity but also weakens the resilience of societies to environmental stresses. The erosion of native plant species often leads to reduced agricultural productivity, increased vulnerability to natural disasters, and the loss of traditional knowledge. In the context of climate change, phenological shifts in plant flowering and fruiting patterns disrupt pollination services, food webs, and the livelihoods of people dependent on consistent seasonal cycles. As such, the preservation and sustainable management of plant diversity are crucial for ensuring ecological stability and long-term human well-being.

Scientific and policy attention to ecosystem services has increased significantly over the past two decades, leading to frameworks such as The Economics of Ecosystems and Biodiversity (TEEB) and the Intergovernmental Science-Policy Platform on Biodiversity and Ecosystem Services (IPBES). These platforms emphasize the need to recognize, quantify, and integrate the value of ecosystem services into development planning and environmental policy. Nevertheless, plants often remain undervalued in economic assessments because many of their services are not traded in markets and are considered public goods. There is a growing need to bridge the gap between ecological understanding and policy implementation to ensure that plant-based ecosystem services are protected and restored. Conservation strategies such as reforestation, agroforestry, urban greening, and the protection of endemic and keystone species are necessary to safeguard these vital services for current and future generations.

Provisioning Services: Provisioning services are the most tangible and directly utilized category of ecosystem services provided by plants. These services encompass all the products that plants offer for human use and consumption, including food, fuel, fiber, medicine, and raw materials. Across the globe, human societies—regardless of economic or cultural background—are fundamentally dependent on these services for their survival and development. From agricultural fields and orchards to forests and wetlands, plants form the basis of the global bio-economy, supporting billions of livelihoods and ecosystems simultaneously.

Food production stands out as the most significant provisioning service. Plants are the primary source of calories and nutrition for human populations. Globally, staple crops such as rice, wheat, maize, barley, and millet are central to food security and cultural identity. These crops, which are cultivated in diverse agro-ecological zones, contribute not only to local subsistence but also to international trade and economic growth. In addition to staple grains, a vast variety of fruits, vegetables, legumes, nuts, and seeds provide essential micronutrients, vitamins, and antioxidants, which are crucial for maintaining human health. Many of these plant products also support diverse culinary traditions and agricultural economies, particularly in rural and indigenous communities.

Moreover, plants also contribute to livestock fodder, which indirectly supports meat, dairy, and poultry production. Grasslands and agricultural residues provide forage and feed for animals, while legumes like alfalfa and clover enrich the soil and sustain livestock nutrition. In traditional pastoral societies, the availability of grass and forage plants directly determines the viability of the local economy and food system. Thus, provisioning services from plants also underpin animal husbandry and food chain sustainability.
Medicinal plants represent another major provisioning service. From ancient Ayurvedic texts in India to modern pharmacopoeias, the medicinal properties of plants have been recognized and utilized across civilizations. It is estimated that more than 25% of modern drugs have been derived directly or indirectly from plant compounds. Plants such as neem, turmeric, tulsi (holy basil), ashwagandha, and aloe vera continue to serve as critical ingredients in both traditional and alternative medicine systems. In developing countries, especially in rural and remote areas, medicinal plants are often the primary source of healthcare. Furthermore, many pharmaceutical companies actively engage in bioprospecting to discover new plant-derived compounds with therapeutic potential, especially in biodiversity-rich regions like tropical rainforests.

The fiber and textile industry is also heavily reliant on plant provisioning services. Cotton, flax, jute, hemp, coir, and bamboo are widely used in manufacturing textiles, ropes, mats, and various household goods. These plant materials are biodegradable, renewable, and support a wide range of industries, from small-scale artisans to large global brands. For example, jute cultivation in eastern India supports the livelihoods of millions and contributes to eco-friendly packaging materials as a sustainable alternative to plastics.

Plants also provide fuelwood and biomass energy, especially in developing countries where conventional energy sources are limited or unaffordable. Firewood, charcoal, crop residues, and energy crops such as sugarcane and sorghum serve as critical energy sources for cooking, heating, and small-scale industries. In rural

India and sub-Saharan Africa, for example, over 50% of households rely on plant-based fuels for daily energy needs. With advancements in green technology, plants are also being explored for biofuel production—such as ethanol from sugarcane or biodiesel from jatropha and soybean—offering promising alternatives to fossil fuels and contributing to energy security and climate mitigation.

Additionally, timber and non-timber forest products (NTFPs) form a large part of the provisioning ecosystem services. Timber from hardwood and softwood trees is used in construction, furniture, paper, and handicrafts. Meanwhile, NTFPs such as honey, resins, latex, essential oils, mushrooms, and wild fruits support household incomes, especially among forest-dependent communities. In many parts of India, for instance, tendu leaves (used for making traditional Indian cigarettes or 'beedis'), mahua flowers, and sal seeds are collected sustainably and traded in local markets, often forming a vital part of tribal economies.

Horticultural plants also provide aesthetic and ornamental value, contributing to the urban economy through landscaping, gardening, and floriculture. Flowers, decorative shrubs, bonsai, and ornamental trees are extensively cultivated for sale and use in ceremonies, decoration, and festivals. In countries like the Netherlands, India, and Kenya, flower cultivation and export is a multi-million-dollar industry employing thousands of people.

Another less visible but essential provisioning service comes in the form of genetic resources and plant breeding material. Plants harbor an immense reservoir of genetic diversity, especially traditional landraces and wild relatives of crops. This genetic diversity is critical for plant breeding and biotechnology, especially in an era of climate change, where new crop varieties need to be developed for drought tolerance, pest resistance, and nutrient use efficiency. Gene banks and botanical gardens are crucial in conserving this wealth of plant genetic material for future use.

Lastly, plants provide raw materials for cosmetics, fragrances, and industrial products. Essential oils from lavender, sandalwood, lemongrass, and rose are used in perfumery and skincare. Gums and resins such as frankincense, myrrh, and acacia have commercial value in religious and cultural markets. Additionally, plant-based materials are used in the manufacture of biodegradable plastics, dyes, paints, and adhesives, which are becoming increasingly important as sustainable alternatives to synthetic and petroleum-based products.

Regulating Services

Regulating services help maintain the Earth's life-support systems by moderating natural processes. One of the most important regulatory roles of plants is in **climate regulation**. Through **photosynthesis**, plants absorb atmospheric carbon dioxide—a leading greenhouse gas—and convert it into oxygen and biomass. Forests act as **carbon sinks**, storing significant amounts of carbon and mitigating the effects of anthropogenic climate change. Tropical rainforests and mangroves are especially effective in carbon sequestration due to their dense biomass.

Plants also play a vital role in **air purification**. Urban trees and green belts filter air pollutants like nitrogen dioxide, sulfur dioxide, and particulate matter, thus improving urban air quality and reducing respiratory diseases. This regulatory function is crucial in heavily polluted cities where trees act as natural air filters.

Another key regulating service is **water regulation**. Plants contribute to the **hydrological cycle** by facilitating infiltration, storing groundwater, and reducing runoff. Vegetation in watersheds slows down water movement, decreasing the risk of floods and droughts. Wetlands, sustained by aquatic and semi-aquatic plants, act as natural water purifiers by absorbing pollutants and filtering sediments.

Soil regulation is another essential service. Plant roots bind soil particles together, preventing **erosion** and landslides, especially on slopes and riverbanks. In agricultural contexts, cover crops and agroforestry systems improve soil structure, reduce nutrient leaching, and enhance water retention.

Plants also support **biological pest control** by hosting natural predators of pests. Flowering plants, for example, attract pollinators and parasitoids, reducing the need for chemical pesticides and supporting agricultural productivity in a sustainable manner.

Supporting Services

Supporting services are fundamental processes that underpin the other types of ecosystem services. **Photosynthesis**, the process by which plants convert solar energy into chemical energy, is the foundation of life on Earth. It not only produces oxygen but also drives the energy flow through the food web, supporting herbivores and the predators that feed on them.

One of the most vital supporting services is **nutrient cycling**. Through decomposition of plant litter and root exudates, nutrients like nitrogen, phosphorus, and potassium are recycled back into the soil, making them available for other organisms. Mycorrhizal fungi, which form symbiotic relationships with plant roots, further enhance nutrient uptake and improve soil health.

Plants are also essential for **soil formation and stabilization**. Over long periods, the breakdown of plant material contributes to the formation of humus—a nutrient-rich organic component that improves soil fertility and structure. In forests, leaf litter forms a protective layer that moderates soil temperature and moisture, fostering biodiversity within the soil ecosystem.

Pollination is another critical supporting service. While animals such as bees and birds are primary pollinators, plants play the initiating role by producing flowers, nectar, and pollen that attract these agents. The reproductive success of both wild and cultivated plants is heavily dependent on this plant-insect interaction. Loss of flowering

plant diversity can lead to a decline in pollinator populations, creating a feedback loop that threatens entire ecosystems.

Cultural Services: Beyond the tangible and ecological benefits, plants offer profound **cultural services**. They are deeply woven into the fabric of human society, influencing art, religion, literature, and identity. Sacred groves in India, olive trees in the Mediterranean, and cedar trees in Lebanon hold immense spiritual significance. Plants are symbols of life, death, peace, and prosperity in various cultures.

Urban green spaces such as parks and botanical gardens contribute significantly to **mental health and well-being**. Research shows that exposure to nature reduces stress, anxiety, and depression. Trees, flowers, and natural landscapes enhance aesthetic appeal and provide recreational spaces for physical activity, social interaction, and community cohesion.

Plants also play a key role in **education and scientific research**. Herbariums, botanical research, and ethnobotanical studies rely on plant specimens for understanding ecological interactions and traditional knowledge. Cultural festivals around harvest seasons and flower blooms (e.g., cherry blossom festivals) enhance tourism and cultural identity.

Case Studies and Applications: Understanding the practical implications of plant-based ecosystem services becomes clearer through real-world case studies and applications. Across diverse ecological and socioeconomic settings, plants contribute meaningfully to environmental resilience, economic sustainability, and community well-being. Several case studies from around the world, especially in biodiversity-rich countries like India, demonstrate how plant-driven ecosystem services are integrated into livelihood strategies, conservation policies, urban planning, and sustainable development programs.

One notable example is the **Western Ghats of India**, a global biodiversity hotspot that supports a wide range of plant-based ecosystem services. This region is home to over 7,400 species of flowering plants, many of which are endemic. The forests of the Western Ghats offer vital provisioning services, such as non-timber forest products (NTFPs), including honey, wild fruits, medicinal herbs, and spices like cardamom and pepper. Local communities, particularly indigenous tribes such as the Soliga and Kurumba, depend heavily on these resources for their daily sustenance and income. Conservation organizations have worked with these communities to promote sustainable harvesting techniques, value addition, and fair-trade marketing, resulting in increased household income and reduced pressure on forest ecosystems. This case exemplifies the intricate balance between biodiversity conservation and human livelihood through sustainable use of plant services.

Another compelling case comes from **agroforestry practices in Sub-Saharan Africa** and parts of India. In regions prone to soil degradation and water scarcity, agroforestry systems—where trees are integrated with crops and livestock—enhance food security and environmental health. Trees such as neem, moringa, acacia, and gliricidia not only provide fruits, fodder, fuelwood, and medicinal value but also regulate microclimates, prevent erosion, enrich the soil with nitrogen, and retain groundwater. In the Bundelkhand region of central India, agroforestry has been adopted as a climate-resilient practice, with increased crop yields, biodiversity recovery, and carbon sequestration reported over time. This illustrates how traditional plant knowledge and innovative land-use strategies can offer multi-dimensional ecosystem benefits.

Urban greening initiatives provide another important application of plant ecosystem services, especially in densely populated cities suffering from pollution, heatwaves, and loss of green spaces. Programs such as the “Green Delhi” and “Mission Green Mumbai” campaigns have attempted to increase urban canopy cover through tree plantations, vertical gardens, and green belts. Plants in urban spaces perform multiple regulating services: they sequester carbon, filter air pollutants, reduce surface temperatures, absorb noise, and mitigate flooding through improved water infiltration. Additionally, urban greenery supports mental health, promotes recreational activities, and enhances aesthetic appeal—ecosystem services that are critical to improving the quality of life in megacities.

In **wetland ecosystems**, plants play a crucial role in maintaining ecological balance and offering regulating services such as water purification and flood control. The **Chilika Lake** in Odisha, India—Asia’s largest brackish water lagoon—supports extensive vegetation including seagrasses and mangroves. These plant species trap sediments, absorb nutrients and pollutants, and stabilize the lake’s hydrology. Mangroves, in particular, have been essential in protecting coastal areas from cyclones and storm surges, a service that became especially apparent during the 1999 Odisha super cyclone. By conserving wetland vegetation and promoting sustainable fishing practices, the Chilika Development Authority has enhanced the ecosystem’s resilience and the livelihoods of thousands of fisherfolk.

In the Himalayan state of **Sikkim**, the promotion of organic farming illustrates the sustainable application of provisioning and regulating plant services. Sikkim became India’s first fully organic state in 2016, transitioning over 75,000 hectares of land to chemical-free agriculture. The emphasis on traditional plant-based pest repellents, organic composting, and native crop varieties not only reduced environmental pollution but also improved soil health and plant biodiversity. This transition was supported by strong policy measures and public awareness campaigns, leading to enhanced marketability of organic produce and ecotourism opportunities. The Sikkim model is now being studied globally as a successful integration of plant ecosystem services into a policy-driven sustainability

framework.

Community forest management in regions such as Odisha and Madhya Pradesh showcases the socio-economic value of collective action in conserving plant resources. In many tribal areas, communities manage and protect forest patches under the Joint Forest Management (JFM) system. These community-managed forests provide a steady stream of provisioning services, such as firewood, leaves, bamboo, and medicinal plants, and also regulate local climate, water sources, and biodiversity. With proper training and institutional support, communities have been able to develop micro-enterprises, such as herbal product manufacturing and handicrafts, using sustainably harvested plant materials. These initiatives promote self-reliance while contributing to forest conservation and restoration.

A modern application of plant ecosystem services is seen in **payment for ecosystem services (PES)** schemes. Under PES models, stakeholders such as farmers, forest dwellers, or landowners receive financial incentives for managing their land in ways that sustain or enhance ecosystem services. For example, in Mexico's national PES program, rural communities are paid for maintaining forest cover that provides hydrological and carbon sequestration services. Although India has fewer examples, pilot projects like "Green India Mission" and "Compensatory Afforestation Fund Management and Planning Authority (CAMPA)" aim to promote afforestation and reforestation to compensate for ecosystem losses due to development.

Technology has also enhanced our understanding and application of plant ecosystem services. **Remote sensing and Geographic Information Systems (GIS)** are used to monitor vegetation health, forest cover changes, and crop patterns. Digital platforms like e-Choupal have enabled farmers to access market information, weather forecasts, and best practices in plant resource management, thereby optimizing provisioning services and reducing dependency on intermediaries. Mobile applications now guide urban residents in planting native tree species suitable for local conditions, contributing to community-driven green spaces.

Threats to Plant-Based Ecosystem Services: Despite their vital role, the ability of plants to provide ecosystem services is under constant threat. Deforestation, urbanization, invasive species, climate change, and overexploitation have significantly degraded ecosystems worldwide. Habitat loss reduces plant diversity, which in turn diminishes the stability and resilience of ecosystems.

Climate change poses a particularly serious challenge. Altered temperature and rainfall patterns affect plant phenology, distribution, and productivity. Invasive species often outcompete native plants, disrupting ecosystem functioning. Meanwhile, pollution (especially from industrial and agricultural sources) degrades soil and water, weakening plant health.

Policy and Conservation Strategies: To safeguard ecosystem services, conservation strategies must be implemented at both local and global levels. Protected areas, biosphere reserves, and community-managed forests help conserve native vegetation. Payment for Ecosystem Services (PES) schemes reward communities for maintaining forests or planting trees that provide public benefits like carbon sequestration or watershed protection.

Sustainable agriculture practices such as organic farming, crop rotation, and agroforestry preserve soil fertility, reduce reliance on chemical inputs, and maintain biodiversity. Urban planning that incorporates green infrastructure like rooftop gardens and green belts enhances the delivery of cultural and regulating services.

Environmental education and public awareness are critical. Understanding how daily choices impact ecosystems can promote behavioral changes that support plant conservation and sustainable use of resources.

Conclusion: Plants are not merely passive components of the environment; they are dynamic agents that regulate, sustain, and enhance life on Earth. From provisioning food and medicine to regulating climate and supporting biodiversity, the services provided by plants are multifaceted and indispensable. As the planet faces mounting environmental crises, the value of these services must be acknowledged and protected. Conservation of plant diversity, sustainable management of natural resources, and integration of ecological principles into policy and development planning are urgent imperatives. Only by valuing and preserving the ecosystem services provided by plants can we ensure a sustainable and healthy future for both people and the planet.

References:-

1. Costanza, R., d'Arge, R., de Groot, R., Farber, S., Grasso, M., Hannon, B., ...& Belt, M. (1997). The value of the world's ecosystem services and natural capital. Nature, 387(6630), 253–260. https://doi.org/10.1038/387253a0
2. Daily, G. C. (Ed.). (1997). Nature's services: Societal dependence on natural ecosystems. Island Press.
3. Millennium Ecosystem Assessment. (2005). Ecosystems and human well-being: Synthesis. Island Press.
4. de Groot, R. S., Alkemade, R., Braat, L., Hein, L., & Willemen, L. (2010). Challenges in integrating the concept of ecosystem services and values in landscape planning, management and decision making. Ecological Complexity, 7(3), 260–272. https://doi.org/10.1016/j.ecocom.2009.10.006
5. TEEB. (2010). The Economics of Ecosystems and Biodiversity: Ecological and Economic Foundations. Earthscan.
6. Kumar, P. (Ed.). (2010). The Economics of Ecosystems and Biodiversity: Ecological and Economic Foundations. UNEP/Earthprint.
7. Singh, R. K., & Singh, A. (2015). Agroforestry systems

and their role in climate change mitigation. Indian Journal of Agroforestry, 17(1), 13–20.
8. FAO. (2013). Advancing Agroforestry on the Policy Agenda: A guide for decision-makers. Food and Agriculture Organization of the United Nations.
9. Sinha, R. K., &Sinha, K. K. (2001). Sustainable agriculture and the role of vermiculture. Environmentalist, 21(2), 105–111. https://doi.org/10.1023/A:1010647206362
10. Suding, K. N., & Hobbs, R. J. (2009). Threshold models in restoration and conservation: A developing framework. Trends in Ecology & Evolution, 24(5), 271–279. https://doi.org/10.1016/j.tree.2008.11.012
11. Ninan, K. N., & Inoue, M. (2013). Valuing forest ecosystem services: Case study of a forest reserve in Japan. Ecosystem Services, 5, 78–87. https://doi.org/10.1016/j.ecoser.2013.04.002
12. Chazdon, R. L. (2008). Beyond deforestation: Restoring forests and ecosystem services on degraded lands. Science, 320(5882), 1458–1460. https://doi.org/10.1126/science.1155365
13. Sharma, A., &Ojha, H. R. (2019). Community forestry in India: A review of policies and institutional mechanisms. Forest Policy and Economics, 100, 112–120. https://doi.org/10.1016/j.forpol.2018.06.003
14. Jadhav, S., &Barua, M. (2012). The elephant vanishes: Impact of human–elephant conflict on people's wellbeing. Economic and Political Weekly, 47(49), 62–70.
15. Pattanayak, S. K., & Kramer, R. A. (2001). Worth of watersheds: A producer surplus approach for valuing drought mitigation in eastern Indonesia. Environment and Development Economics, 6(1), 123–146. https://doi.org/10.1017/S1355770X01000055
16. Lele, S., &Srinivasan, V. (2013). Disaggregated indicators for assessing water security in urbanizing watersheds: An approach developed for Bangalore, India. International Journal of Water Resources Development, 29(2), 241–257. https://doi.org/10.1080/07900627.2012.642240
17. Kremen, C., & Miles, A. (2012). Ecosystem services in biologically diversified versus conventional farming systems: Benefits, externalities, and trade-offs. Ecology and Society, 17(4), 40. https://doi.org/10.5751/ES-05035-170440
18. Sikkim Organic Mission. (2016). Organic Sikkim: Towards a sustainable mountain ecosystem. Government of Sikkim.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मोबलिंचिंग : मानवता के विरुद्ध अपराध

आनंद मिश्रा* डॉ. अनूप कुमार सिंह**

* सहायक प्राध्यापक (लॉ) एम.एल.बी. शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (लॉ) एम.एल.बी. शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – वसुधैवकुटुम्बकम की अवधारणा लेकर पूरे विश्व को अपना परिवार मानने की भावना से विश्व गुरु की और बढ़ता भारत देश, आज खुद ही के घर में अपने लोगो की अपने ही लोगों द्वारा बर्बर एव निर्मम हत्या का मूकदर्शक बना बैठा हैं, वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बीते कुछ वर्षों में अपराध का एक नया पहलू सामने आया हैं जिसे मोबलीचिंग कहा जाता हैं, ये भी सामान्य अपराध की तरह ही हैं किन्तु केवल फर्क इतना सा है की सामान्य अपराधो में तो अपराधी 1,2, या गिने चुने होते हैं, लेकिन मोबलीचिंग में अपराधी अनगिनत संख्या में होते हैं या, यूं कहे भीड़ के रूप में होते है, जो किसी न किसी अफवाहों से गुस्से एव क्रोध वैमनस्य की भावना से उत्प्रेरित होकर भय का माहौल बनाया जाता हैं, हिंसा आगजनी तोड़फोड़ और निर्दोष व्यक्तियों के शरीर और सम्पति को नुकसान पहुंचाते हैं, अब अफवाहे कभी, धर्म को लेकर कभी गौ हत्या, गौ तस्करी, कभी बच्चा चोरी कभी चोर एव लुटेरे के रूप में होती हैं।

'जाने अनजाने हम भी कभी, उस भीड़ का हिस्सा बन जाते हैं, मिशाल बनने की ख्वाहिश लेकर, महज एक किस्सा बन जाते हैं, अफवाहों के जाल में फंसकर, कितने मासूमों पर डंडे बरसाते हैं, आज हाथों में डंडे लिए, तो कल खुद ही उन्ही डंडों से पीटे जाते हैं, कानून की तो जरूरत ही नही, हम खुद ही कात्या की अदालत बनकर फैंसले सुनाते हैं, जाने अनजाने हम भी कभी उस भीड़ का हिस्सा बन जाते हैं।'

मोबलिंचिंग दरअसल आज से नही बल्कि सैकड़ों सालों से किसी न किसी रूप में हो रही हैं। शुरुआत में, लिंचिंग जैसे जघन्य अपराध अमेरिका में देखने को मिलते थे, एक वक्त था जब अमेरिका में नस्ल भेद की समस्या अपने चरम पर थी। उस दौरान, यदि कोई गैर श्वेत अपराध करता था तो उसे सार्वजनिक रूप से फांसी दी जाती थी। वहां के श्वेत लोगों का मानना था की इसके जरिये वे पीड़ित को न्याय देने का काम कर रहे हैं।

मॉबलिंचिंग की उत्पत्ति18 वी शताब्दी में अमेरीकी क्रांति के दौरान चार्ल्स लिंच और विलियम लिंच से हुई। चार्ल्स लिंच निजी अदलत बिठाने लगा और अपराधियों और विरोधियों को बिना किसी कानूनी प्रक्रिया के सजा देने लगा।धीरे–धीरे 'लिंचिंग' के रूप मे यह शब्द पूरे अमेरिका मे फैल गया, इस अत्याचार का सर्वाधिक शिकार अमेरिका के दक्षिण हिस्से मे बसे अश्वेत अमेरिकी समुदाय के लोग हुए।

बीते कुछ वर्षों में मोबलीचिंग की बढती घटनाओं ने सामाजिक एव आर्थिक रूप से शोषित वर्गों और हाशिये पर मौजूद समुदायों के मध्य एक भय का माहौल पैदा कर दिया हैं, 2015 के बाद से NCRB ने मोबलिंचिंग के मामले से सम्बंधित आंकड़े भी संकलित नही किये हैं इस संदर्भ में NCRB का कहना हैं की मोबलिंचिंग को लेकर विभिन्न संस्थाओं द्वारा एकत्रित किये गये आंकड़े चौंकाने वाले हैं।

सोशलमिडिया यानी 21वी सदी में तकनीक का वो मंच जो हैं लोगो की जिंदगी में प्यार मोहबत और दोस्ती फैलाने के लिए आया था, शुरुआत में ये हुआ भी कई बिछड़े दोस्त मिले कई रिश्तेदार बने तो कई उम्र भर के लिए एक दुसरे का हो गया लेकिन धीरे धीरे हम उस दौर में पाँव रख गये जो नफरत शक और अफवाहों की दुनिया हैं।

सोशल मीडिया अब दोस्ती और प्यार की नही बल्कि मौत और अफवाहों की दुनिया साबित होती जा रही हैं, एक झूठा वीडियो एक झूठा मेसेज एक झूठा सन्देश कैसे लोगो को भीड़ को, और पूरे समाज को वैशी बना देता हैं, इसकी कई मिशाल हमारे सामने हैं।

इस वक्त हम अफवाहों के ऐसे बाजार में खड़े हैं, जहाँ देखते ही देखते निर्दोष को भीड़ पीट पीट कर मार डालती हैं, हम आधुनिकता के उस द्वंद्व में जी रहे हैं, जहाँ सोशल मीडिया विकास और तकनीक का सबक नहीं बल्कि झूठी जानलेवा अफवाहों का जरिया साबित हो रहा हैं।चिंता इस बात की हैं की इन अफवाहों को फैलाने वाले भी हम ही हैं, और तो और इन अफवाहों के शिकार भी हम और हमारे अपने ही हो रहे हैं, ये हमारेसमाज के लिए शर्मिंदगी, और सरकारों के लिए चिंता का विषय ही नही बल्कि, हमारे देश के प्रेम सहिष्णुता और भाईचारे की भावना को बनाये रखने के लिए चुनौती बन गया हैं।

मोबलिंचिंग का तात्पर्य – 'सच हैं भीड़ की कोई शक्ल नही होती, आवाज नही होती, ना ही होती हैं रीढ़, घर में उठने वाले चित्त और बुद्धि रहित, हजारों हाथ पैर भर से बाहर आकर कहलाते हैं भीड़'

लिंचिंग सामूहिक नफरत से जुडा एक ऐसा अपराध हैं, जिसमे एक भीड़ कानून के दायरे से बहार जाकर, महज वहम एव शक के बिनाह पर, किसी तथाकथित अपराधी को सजा दे देती हैं।

जब अनियंत्रित भीड़ द्वारा किसी दोषी को उसके किये गये अपराध के लिए, या कभी कभी अफवाहों के आधार पर ही बिना अपराध कियेभी तत्काल सजा दे दी जाती हैं, अथवा उसे पीट पीटकर अधमरा करदिया जाता हैं, या मार ही दिया जाता हैं तो इसे भीड़ द्वारा की गयी हिंसा या मोबलिंचिंग कहते हैं, यह हिंसा का ऐसा रूप होता हैं,जिसमे असंख्य लोगों का झुण्ड बिना

व्यक्ति को सुने भावुकतावश पीड़ित को तुरंत राहत देने के लिए बिना किसी न्यायिक प्रक्रिया के कानून अपने हाथ में लेकर सजा दे देते हैं।इस तरह की हिंसा में किसी कानून, प्रक्रिया या सिद्धांतों का पालन नही किया जाता हैं और यह पूर्णत: गैर कानूनी होता हैं।

मोबलिंचिंग की प्रमुख घटनाएँ– वैसे तो सरासर दृष्टि से देखा जाए तो हर एक दो दिन में देश के किसी न किसी राज्य के हिस्से से मोबलिंचिंग की घटनाये दृष्टिगोचर होती हैं, लेकिन हाल ही के दिनों में कुछ ऐसी घटनाएँ घटी जिसने पूरे देश को झकझोर दिया :

1. महाराष्ट्र के पालघर में जिस तरीके से दो साधू संतों की मोबलिंचिंग द्वारा निर्मम हत्या हुयी हैं वो पूरे देश को झकझोर देने वाली घटनाओं में से एक हैं तब ये दो पंक्तियाँ पूरे देश में गूँज उठी 'झूठ नही हैं, आखिर क्यों हैं, भीड़ इतना बदनाम, संतों के लिए जानलेवा बना, चोरी का इल्जाम' उनके साथ भी वहीहुआ उनको चोर एव लुटेरा होने की अफवाह फैलाई गयी और गाडी रोककर भीड़ द्वारा घेरकर सुनियोजित रूप से उनकी हमला किया और उनकी निर्मम हत्या हुयी।
2. इसी क्रम में वर्ष 2017 का पहलू खान हत्याकांड,मोबलिंचिंग का बहुचर्चित एव झकझोर देनें वाला मामला था,गाय की तस्करी एव हत्या की अफवाह फैलाकर भीड़ द्वारा उसकी हत्या कर दी, एक जिसमे कुछ तथाकथित गो रक्षकों की भीड़ ने गो तस्करी के झूठे एव बेबुनियाद आरोप में पहलू खान की पीट पीट कर हत्या कर दी थी।
3. कर्नाटक के बीदर में 13 जुलाई 2018 को बच्चा चोरी करने की अफवाह ने मोहम्मद आजम उस्माननाम के इंजिनियर को गाडी से घसीट कर और पीट पीट कर हत्या कर दी गयी,क्योंकि लोगो का कहना था की व्हाट्सएप पर ऐसी न्यूज आयी की ये बच्चे चुराने वाला व्यक्ति था।
4. महाराष्ट्र के धुले में 1 जुलाई 2018 को बच्चा चोर होने के शक में भीड़ ने 5 लोगो की पीट पीट कर हत्या कर दी।
5. 8 जून को महारष्ट्र के ओरंगाबाद जिले के बीजापुरताल्लुका में 2 लोगो को लुटेरा होने के संदेह में पीट पीट कर हत्या कर दी, पिछले डेढ़ महीने में महाराष्ट्र में अफवाह के चलते भीड़ की हिंसा या पीट पीट कर हत्या करने की 14 घटनाएँ और 10 लोगो की जान जा चुकी हैं।
6. त्रिपुरा में 28 जून को 33 वर्षीय सुकान चक्रवर्ती बच्चाचोरी होने के प्रति जागरूकता फैलाने में जुटे थे दक्षिणी त्रिपुरा जिले के सब उपमंडल में भीड़ ने सुकांत को पीट पीट कर मार डाला।
7. असम के कारबीआंगलोंग इलाके की घटना बच्चा चुराने वाले एक गैंग से जुडी अफवाह फैली 8 जून को उन्मादी भीड़ ने दो युवकों की पीट पीट कर हत्या कर दी दोनों युवक गुवाहाटी से कारबीआंगलोंग छुट्टियां मानाने आये थे।
8. अहमदाबाद में बच्चा चुराने के शक में 26 जून को महिला की हत्या।
9. छतीसगढ़ के अंबिकापुर जिले में बच्चा चोरी की अफवाह फैली भीड़ ने एक शख्स की हत्या कर दी।
10. उत्तार प्रदेश में हापुड़ में गोहत्या की अफवाह फैली 19 जून को अल्पसंख्यक समुदाय के दो शख्स की पिटाई बाद में इनमे से एक व्यक्ति की मौत हो गयी।
11. पश्चिम बंगाल में बच्चा चोरी की अफवाह 13 जून को एक शख्स की पीट पीट कर हत्या।
12. झारखण्ड के गोव जिले में जून में मवेशी चोरी की अफवाहअल्पसंख्यक समुदाय के दो लोगों की हत्या।
13. तमिलनाडू में 14 अप्रेल से 10 मई के बीच पांच लोगो की हत्या।
14. जुलाई के शुरू में तमिलनाडू में बिहार के दो मजदूरों की पिटाई।
15. जून के आखिरी हफ्ते में त्रिपुरा में दो और लोगो की हत्या।

इस तरह देश के तमाम हिस्सों में इस तरह मोबलिंचिंग की घटनाएँ सामने आती रहती हैं, कभी बच्चा चोर गैंग की अफवाहे फैलाकर निर्दोश लोगों को भीड़ द्वारा अपना शिकार बनाया जाता हैं, तो कभी धर्म जातिके नाम पर अफवाहे फैलाई जाती हैं जो आज के परिप्रेक्ष्य में नासूर बन गया हैं कुछेकपालघरएव पहलू खान जैसी घटनाएँ मिडिया के द्वारा हाईलाईट हो जातीहैं जो हमारे ध्यान में आती हैं और काफी सारी घटनाएँ लोगो के सामने भी नही आती।

केंद्र सरकार द्वारा इस दिशा में उठाये गये कदम – अफवाहों की वजह से हो रही मौतों पर केंद्र सरकार गंभीर हैं, केंद्र सरकार नेराज्यों को इसे मामलों पर अंकुश लगाने के लिए सख्त कदम उठाने के लिए निर्देश दिया हैं।

इस तरह के मामलों पर रिपोर्ट देने के लिए केंद्र सरकार नेगृह मंत्री की अध्यक्षता में मंत्रिसमूह यानी जीओएम और गृह सचिव राजीव गाबा की अगुवाई में एक समिति का गठन किया गया है।

1. समिति ने इस विषय पर विचारद्दविमर्श करने के बाद अपनी रिपोर्ट गृह मंत्री को सौंप दी है। इस रिपोर्ट में, सोशल मीडिया ।लेटफॉर्मों को समयबद्ध तरीके' से काम करने की जरुरत बताई गयी है।
2. गृह मंत्रालय ने राज्य सरकारों को परामर्श जारी कर इन घटनाओं पर अंकुश लगाने को कहा है। परामर्श में कहा गया कि सभी राज्य और केन्द्र शासित प्रदेश इन अफवाहों पर कड़ी नजर रखें और इन पर अंकुश लगाने के लिए कडे कदम उठाएं।
3. सरकार द्वारा अफवाहों को रोकने के लिये जल्द ही एक सोशल मीडिया पॉलिसी बनाई जाएगी, देश के आईटी मंत्रालय को इसका ड्राफ्ट तैयार करने का जिम्मा सौंपा गया है।
4. इन क्षेत्रों में जागरूकता अभियान चलाकर विश्वास बढाने के उपाय करने पर भी जोर दिया गया है।

सोशल मीडिया के जरिये बच्चा चोरी की अफवाहों की घटनाओं को फैलने और इसकी वजह से हुयी मौतों पर केन्द्रीय गृह मंत्रालय ने सख्त रोक अख्तियार किया हैं औरकेंद्र सरकार द्वाराकुछ निर्देश भी जारी किये हैं।

1. राज्य अफवाहों को रोकने के लिए तत्काल कदम उठायें।
2. बच्चा चोरी की अफवाहों का जल्दी पता लगाने के लिए पैनी नजर।
3. अफवाहों को रोकने के लिए असरदार उपाय शुरू हो।
4. ऐसे क्षेत्रों की पहचान करें जहाँ अफवाह फैलने की संभावना ज्यादा हो।
5. उन इलाकों में जागरूकता फैलाने का और विश्वास बहाली करने का काम।
6. बच्चों के अपहरण की शिकायतों की जांच तेजी से करने का निर्देश।
7. गैर जिम्मेदार और बवाल मचाने वाले संदेशों को फैलने से रोका जाए
8. व्हाट्सएपको तत्काल कदम उठाने का निर्देश।
9. अपने मंच का दुरूपयोगनही होने दे।
10. फर्जी खबरों वीडियो और तस्वीरों पर लगाम लगे।
11. व्हाट्सएपया दुसरेसोशलसाईट जिम्मेदारी और जवाबदेही से नही बच

सकते।

अफवाहों पर लगाम लगाने के लिए व्हाट्सएपद्धारा उठाये गये कदम– केंद्र सरकार की सख्ती के बाद अफवाहों को रोकने की दिशा में व्हाट्सएप ने कुछ सुझाव भी दिए, और इस दिशा में कदम भी उठा रहा हैं व्हाट्सएपने फारवर्डेडमेसेज को बिना सोचे समझे आगे बढ़ने से रोकने के लिए एप में जरूरी बदलाव किये और, सरकार औरआम नागरिकों से सहयोग की भी अपील की हैं:

1. एक मेसेज को पांच से ज्यादा सदस्यों या ग्रुप में नही भेज सकते एक साथ।
2. फारवर्डेड मेसेज पर लिखाहोता हैं की यह फारवर्डेड हैं और कितनी बार फारवर्ड हुआ हैं किसने सन्देश लिखा इत्यादि।
3. हिंदी और अंग्रेजी के प्रमुख अखबारों में विज्ञापन कि कैसे अफवाहों और फेकन्यूज से बचेफोरवर्ड मैसेज के संदेशों से सावधान रहे।
4. व्हाट्सएप फोरवर्ड मेसेज का फीचरजारीकर रहा हैं।
5. फोरवर्डमेसेज के परेशान करने वाले तथ्यों पर सवाल उठाये।
6. भावनाओं को भडकाने वाले मेसेज को साझा नही करें।
7. यकीन से परे तथ्यों की दुसरे स्त्रोत से जांच करें ऐसे संदेशों से बचे जो अलग दिखते हो।
8. संदेशों में मौजूद फोटो को ध्यान से देखे।
9. कभी कभी फोटो सच्ची होती हैं लेकिन उससे कहानी झूठी होती हैं।
10. ऑनलाइन फोटो का स्त्रोत पता करना चाहिए।
11. संदेशों में मौजूद लिंक की जांच भी करनी चाहिए।
12. लिंक में गलत वर्तनी या विचित्र वर्ण हो तो सच्चाई की गुंजाईश कम होती हैं।
13. खबर की जांच के लिए अन्य समाचार साईट या एप की मदद ले।
14. संदेशों में मौजूद जानकारी झूठी प्रतीत होने पर साझा करने से बचे।
15. उलटे सीधे मेसेज को ब्लोक करे।
16. अफवाह फैलाने वाले ग्रुप को भी छोड़ सकते हैं।
17. कई बार साझा होना खबर के सच होने का प्रमाण नही होता।

मोबलिंचिंग पर न्यायिक सक्रियता – तहसीन पूनावाला ने वर्ष 2018 में मोबलिंचिंग को लेकर मुद्दा उठाया और उच्चतम न्यायालय में जनहित याचिका दायर की उस याचिका पर संज्ञान लेकर सुनवाई करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने मोबलिंचिंग को 'भीड़ तंत्रके एक भयावह कृत्य' के रूप में संबोधित करते हुए केंद्र एव राज्य सरकारोंको कानून बनाने के दिशा निर्देश दिए थेएव कहा की समाज में वैमनस्य तथा नफरत फैलाने वाले व्यक्तियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 153 A के तहत FIR दर्ज करके दण्डित किया जाये।

1. राज्य सरकारें प्रत्येक जिले में मोबलिंचिग और हिंसा को रोकने के उपायों के लिए वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को प्राधिकृत करेगी।
2. राज्य सरकारें शीघ्रता से उन जिलों उप खण्डों तहसीलों ओए गाँवों की पहचान करेगी जहाँ हाल ही में मोबलिंचिंग की घटनाएँ हुयी हैं।
3. नोडल अधिकारी मोबलिंचिंग से सम्बंधित अंतर जिला स्तरीय मुद्दों को राज्य के क्ळच के समक्ष प्रस्तुत करेगा।
4. केंद्र तथा राज्य सरकारों को रेडियो टेलीविजन और अन्य सोशल मीडिया ।लेटफार्म पर यह प्रसारित कराना होगा की किसी भी प्रकार की मोबलिंचिंगएव हिंसा की घटना में शामिल होने पर विधि के अनुसार कठोर दंड दिया जा सकता हैं।
5. विभिन्न सोशल मीडिया ।लेटफार्म पर प्रसारित ऐसे गैर जिम्मेदार और भड़काऊ संदेशों तथा अन्य सामग्री पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए जिनसे समाज में मोबलिंचिंग जैसी घटनाएँ होती हैं ऐसे संदेशों को फैलाने वालों पर उचित प्रावधानों के अंतर्गत थ्त् दर्ज करनी चाहिये।
6. राज्य सरकारेंमोबलिंचिंग से प्रभावित व्यक्तियों के लिए क्षतिपूर्ति योजना प्रारंभ करेगी।
7. राज्य सरकारे यह सुनिश्चित करेगी की पीड़ित परिवार के किसी भी व्यक्ति का पुन: उत्पीडन न हो।

उच्चतम न्यायालय के निर्देश के पश्चात राज्य सरकारों द्वारा किये गये विधायी प्रयास – सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गये दिशा निर्देशों का पालन करते हुए सर्वप्रथम मणिपुर ने वर्ष 2018 में ही लिंचिंग के विरुद्ध विधेयक पारित किया था, जिसके पश्चात राजस्थान सरकार ने भी अगस्त 2019 में लिंचिंग विरुद्ध विधेयक पारित किया, राजस्थान के पश्चात पश्चिम बंगाल ने भी लिंचिंग को रोकने के लिए एक विधेयक पारित किया ।मणिपुर,राजस्थानऔर पश्चिम बंगाल के अतिरिक्त अब तक देश में किसी भी अन्य राज्य ने इस सम्बन्ध में कोईविधायी प्रयास नहीकिये हैं।

मणिपुर का लिंचिंग विरोधी विधेयक

मणिपुर के लिंचिंग विरोधी विधेयक में में निम्न बिंदु शामिल थे:

1. लिंचिंग जैसे अपराधों को रोकने के लिए प्रत्येक जिले में एक नोडल अधिकारी की नियुक्ति हो।
2. अपने क्षेत्राधिकार में लिंचिंग के अपराध को रोकने में विफल रहने वाले पुलिस अधिकारीयों के लिए जुर्माने तथा कारावास की सजा का भी प्रावधान किया गया हैं।
3. लिंचिंग सम्बन्धी अपराधों पर मुकदमा चलाने के लिए राज्य सरकारों की अनुमति प्राप्त करने की भी आवश्यकता नही हैं।
4. पीड़ित या उनके परिजनों को पर्याप्त मुआवजा राशि प्रदान करने सम्बन्धी भी प्रावधान किया गया।

विशेषज्ञों ने तर्क और प्रासंगिकता की दृष्टी से मणिपुर के विधेयक को काफी अच्छा बताया था।

राजस्थान का लिंचिंग विरोधी विधेयक – राजस्थान विधानसभा में विधेयक पर चर्चा के दौरान संसदीय कार्यमंत्री द्वारा विधानसभा में प्रस्तुत आंकड़ों से यह बात सामने आयी थी की वर्ष 2014के बाद देश में घटित लिंचिंग घटनाओं में से 78 प्रतिशत घटनाएं राजस्थान में घटित हुयी।

1. नये कानून के तहत इस संदर्भ में दर्ज किये गये सभी मामलोकी जांच इंस्पेक्टर या उससे ऊपर के अधिकारी द्वारा ही की जाएगी।
2. इसके अलावा राज्य का DIG लिंचिंग को रोकने के लिए राज्य समन्वयक के रूप में एक IG या उससे ऊपर के रैंक केअधिकारीकी नियुक्ति भी करेगा।
3. यदि लिंचिंग का शिकार हुए पीड़ित व्यक्ति को सामान्य चोटेंया फिर गंभीर चोटें आती हैं तो अभियुक्त को क्रमश: सात या दस साल तक की सजा हो सकती है।
4. यदि इस हमले के कारण पीड़ित की मृत्यु हो जाती हैं तो अभियुक्त को उम्र कैद की सजा हो सकती हैं।
5. यह विधेयक षड्यंत्रकारियों को भी जवाब देह बनाता हैं।

राजस्थान सरकार के लिंचिंग विधेयक को लेकर विश्लेषकों का कहना

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

हैं, की इनमे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी दिशा निर्देशों की अवहेलना की गयी हैं, मसलन यह विधेयक लिंचिंग की घटनाओं को रोकने में विफल रहने वाले जिम्मेदार अधिकारीयों के सम्बन्ध में सजा का कोई प्रावधान नही करता।

पश्चिम बंगाल का लिंचिंग विरोधी विधेयक– पश्चिम बंगाल के विधेयक में किसी व्यक्ति को घायल करने वालो को तीन साल से लेकर आजीवन कारावास तक की सजा का प्रावधान किया हैं और यदि किसी व्यक्ति की लिंचिंग से मृत्यु हो जाती हैं तो उस दशा में मृत्युदंड या कठोर आजीवन कारावास का भी प्रावधान किया गया हैं।

लिंचिंग के कारण – नफरत की राजनीतिः नफरत की राजनीति हिंसात्मक भीड़ की एक बड़ी वजह है। श्भीड़तंत्रश् तो वोट बैंक के लिये प्रायोजित हिंसा या धर्म के नाम पर करवाई गई हिंसा का एक जरिया है।

तमाम समुदायों के बीच आपसी अविश्वास: भारत में धर्म और जाति के नाम पर होने वाली हिंसा की जड़ें काफी मजबूत हैं वर्तमान में लगातार बढ़ रही लिंचिंग की घटनाएँ अधिकांशतः असहिष्णुता और अन्य धर्म तथा जाति के प्रति घृणा का परिणाम हैं, यह कहा जा सकता हैं की देश में बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक समुदाय के बीच अविश्वास की एक गहरी खाई हैं।एक कौम के लोग दूसरे कौम को शक के निगाह से देख रहे हैं। और फिर मौका मिलने पर वे एक दुसरे से बदला लेने के लिए भीड़ को उकसाते हैंएव भीड़ का इस्तेमाल करते हैं। सरकारी तंत्र की विफलता ऐसी घटनाओं में आग में घी का काम करता है।

वर्ष 2002 में हरियाणा के पांच दलितों की गौहत्या के आरोप में लिंचिंग कर दी गयी थी।

वही सितम्बर 2015में अज्ञात समूह ने मोहम्मदअखलाकऔर उनके बेटे दानिश पर गाय की हत्या करने और मांस का भंडारण करने का आरोप लगाते हुए पीट पीट कर हत्या कर दी गयी थी।इन घटनाओं से मोबलिंचिंग में धर्म और जाति का दृष्टिकोण स्पष्ट तौर परजाहिर होता हैं,

समाज में व्याप्त गुस्सा: लोगों के मन में शासन व्यवस्था, न्याय व्यवस्था या फिर सुरक्षा को लेकर गुस्सा हो सकता है। ये गुस्सा भी इन घटनाओं को किसी न किसी रूप में बढ़ावा दे रहा है। जो कि बाद में उन्मादी भीड़ के जरिये देखने को मिलता है।

अफवाह और जागरूकता की कमी: अफवाह और जागरूकता की कमी के चलते 'लिंचिंग' की जो घटनाएं हुई उनमें भीड़ का अलग ही रूप देखने को मिलता है। इसमें भीड़ के गुस्से के पीछे एक गहरी चिंता भी दिखाई देती है। बच्चे चोरी होना किसी के लिए भी बहुत बड़ा डर है। यहां हिंसा ताकत से नहीं बल्कि घबराहट से जन्म लेती है।

तकनीक का दुरुपयोग: इस तरह की 'भीड़तंत्र' में सोशल मीडिया का दुरुपयोग एक बड़ा कारक है। देशभर के अलग–अलग हिस्सों से सामने आ रहे मॉबलिंचिंग के मामले बताते हैं कि वॉट्सएप इसकी सबसे बड़ी वजह रहा है।

स्थानांतरण एक बड़ी समस्या: अक्सर आर्थिक जरूरतों के कारण लोग एक इलाके से दूसरे इलाकों में आकर बसने लगते हैं। इन लोगों को रहने की जगह तो मिल जाती है, लेकिन उन पर लोगों को विश्वास नहीं हो पाता। तमिलनाडु में इस तरह की कुछ घटनाएं देखने को मिली थीं।

व्यक्तिवाद की भावना का विकासरू आधुनिकता के साथ ही हमारे अंदर व्यक्तिवाद की भावना का विकास हुआ और हमारे सामाजिक जुडाव में कमी आई हैं, जिसके कारण हम विविधता की सराहना करना भूल गये हैं, अक्सर यहाँ कहा जाता हैं की भीड़ का कोई चेहरा नही होता और शायद इसी वजह से भीड़ में मौजूद लोग सही और गलत में फर्क नही करते।

मोबलिंचिंग के परिप्रेक्ष्य में भारतीय कानून – भारतीय दंड संहिता में लिंचिंग जैसी घटनाओं के विरुद्ध कारवाई को लेकर विशेष रूप किसी तरह का स्पष्ट उल्लेख नहीं हैं और इन्हें धारा 302(हत्या),307 (हत्या का प्रयास),323 (जानबूझकर चोटें कारित करना),147–148 (दंगा फसाद),149 (विधि विरुद्ध इकठा होना) तथा धारा 34 (सामान्य आशय) इन धाराओंके प्रावधानों के अंतर्गत ही अपराध पंजीबद्ध किया जाता हैं।

भीड़ द्वारा किसी की हत्याकिये जाने पर IPC की धारा 302 और 149 को मिलाकर पढ़ा जाता हैं और इसी तरह भीड़ द्वारा किसी की हत्या का प्रयास करने पर 307 के साथ 149 को पढ़ा जाता हैं तथा इसी के अंतर्गत अपराध दर्ज कर कानूनी कार्यवाही होती हैं।

IPC की धारा 223A में भी इस तरह के अपराध के लिए उपयुक्त कानून के इस्तेमाल की बात कही गयी हैं CRPC में भी स्पष्ट रूप से इसके बारे में कुछ भी नही कहा गया हैं।

भीड़ द्वारा की गयी हिंसा की प्रकृति और उत्प्रेरणा सामान्य हत्या से अलग होते हैं इसके बावजूद भारत में इसके लिए अलग से कोई कानून नही हैं।

मोबलिंचिंग के परिप्रेक्ष्य में अंतर्राष्ट्रीय प्रावधान – भारत में विभिन्न संगठन हैं, जिन्हें मानवाधिकारों की रक्षा करने और किसी भी अधिकारो के उल्लंघन के मामले में पीड़ित को न्याय सुनिश्चित करने का काम सौंपा गया है। कुछ महत्वपूर्ण भारतीय मानवाधिकार संगठन नीचे दिए गए हैं–

- **NCHRO (National Confederation of Human Rights Organizations) –** एनएचआरसीओ विभिन्न संगठनों और व्यक्तियों के लिए एक ऐसा ।लेटफार्म है जो भारत में मानव अधिकारों के उल्लंघन के खिलाफ एक जुट होकर उनके खिलाफ आवाज उठाते है।
- **NHRC (National Human Rights Commission of India) –** राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग एक स्वायत्ता सार्वजनिक निकाय, हैमानव अधिकारों के संरक्षण के लिए कार्य करता है। यह संविधान द्वारा गारंटीकृतस्वतंत्रता, गरिमा, धर्म और समानता के अधिकार के संरक्षण हेतु संकल्पित है।मॉबलिंचिंग मानवाधिकार काखुल्ला उल्लंघन है पीड़ित स्वयं अथवा अन्य कोई भी इसकी शिकायत राष्ट्रीय मानवाधिकार अथवा राज्य मानवाधिकार आयोग के समक्ष कर सकता है। महाराष्ट्र के पालघर की घटना में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने मामले का संज्ञान लेना और महाराष्ट्र के पुलिस महानिदेशक को नोटिस भेजाना यह दिखाता है की मॉबलिंचिंग की घटनाका स्वरूप कितनाभयानक है।
- **ANHAD (Act Now for Harmony and Democracy)- ANHAD** एक भारतीय सामाजिक और सांस्कृतिक संगठन है जिसका गठन 2003 में 2002 के गुजरात दंगों की प्रतिक्रिया के रूप में किया गया था। ।छभ्।क का मुख्य उद्देश्य मानव अधिकारों की रक्षा और सांप्रदायिक सद्भाव का प्रसार करना है।
- **Human Rights Law Network –** मानवाधिकार कानून नेटवर्क पूरे भारत में वकीलों और मानव अधिकार कार्यकर्ताओं का एक नेटवर्क है। इसका उद्देश्य गरीब वर्ग के पीड़ितों को कानूनी सहायता प्रदान करना है।यह बाल अधिकारों, मानव तस्करी, विकलांगता अधिकारों, कैदियों

और शरणार्थियों के अधिकारों और विभिन्न अन्य वर्गों पर काम करता है।

- **Legal Rights Observatory –** कानूनी अधिकार वेधशाला भारत में मानव अधिकारों के उल्लंघन को उजागर करने के मुख्य उद्देश्य के साथ एक संगठन है। यह राजनीति, सैन्य या आम जनता के सदस्यों के राजनीतिक, धार्मिक और सामान्य अधिकारों की रक्षा करता है।
- **MASS (Manav Adhikaar Sangram Samiti) –** MASS का गठन असम में राजनीतिक और नागरिक दोनों के मानवाधिकारों की सुरक्षा के लिए किया गया था। यह सशस्त्र बलों द्वारा किसी भी नागरिक अधिकारों के उल्लंघन की रोकथाम और रिपोर्टिंग के लिए काम करता है, जबकि सशस्त्र बल विशेष शक्ति अधिनियम या ।थ्ैच। का उपयोग करते हैं।
- **People's Vigilance Committee on Human Rights–** PVCHR एक गैर सरकारी संगठन है जो कई उत्तार भारतीय राज्यों, विशेष रूप से वाराणसी जिले में वंचित और हाशिए के लोगों के अधिकारों के लिए लड़ रहा है।

मानवाधिकार भारत के नागरिकों को भारत के संविधान द्वारा प्रदत्ता अधिकार हैं। किसी भी व्यक्ति द्वारा किसी भी सरकार या प्राधिकरण को इन अधिकारों के प्रयोग पर रोक लगाने की अनुमति नहीं है। गरिमा के अधिकार, न्याय की समानता, जैसे अधिकारों की गारंटी संविधान द्वारा दी गई है।

मानव अधिकारो की सार्वभौमिक घोषणापत्र – मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा पत्र में भी सुनवाई का पर्याप्त अवसर देने की बात कही गई है किसी भी व्यक्ति को न्याय के सम्यकप्रक्रिया के बिनादंडित नहीं किया जा सकता है।

मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा पत्र मानव अधिकारों का वर्णन किया गया है । अनुच्छेद 22 से 27 जिसमें आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों का समावेश किया गया है।

अनुच्छेद 5 मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा पत्र यंत्रणा अपमानित अथवा परिभृष्टकरने वाला व्यवहार या दंड के प्रतिषेध का अधिकार ।

अनुच्छेद 7 मानव विधि के समक्ष समानता एवं समान संरक्षण का अधिकार प्रदान करता है।

अनुच्छेद 8 केस्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा एक न्याय पूर्ण एवं लोक सुनवाई हेतु पूर्ण समानता का अधिकार प्रदान करता है ।अनुच्छेद 11पैरा 1 जब तक लोक सुनवाई के अनुसार दोषी सिद्ध ना हो निर्दोष माने जाने का अधिकार देता है।

वहीं आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की बात की जाए तो अनुच्छेद 22 मानव सुरक्षा का अधिकार तथा आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार जो व्यक्ति की गरिमा विकास तथा व्यक्तित्व के स्वतंत्र विकास के लिए अपरिहार्य हैकी बात करता है।

मानव अधिकारों काअमेरिकी अभिसमय 1969 – मानव अधिकारों का अमेरिकी अभी समय 1969 निम्नलिखित सिविल राजनीतिक अधिकारों की गारंटी देता है।

1. अनुच्छेद 8 न्यायोचित परीक्षण के अधिकार की बात करता है ।
2. अनुच्छेद 5 मानवीय व्यवहार का अधिकार देता है ।
3. अनुच्छेद24 विधि के समक्ष समान संरक्षण का अधिकार देता है।

निष्कर्ष – केंद्र सरकार ने 2011 के सूचना अधिनियम के नियम अधिसूचित किये, जो विभिन्न प्रकार के सेवा प्रदाता जिन मे सोशल मीडिया भी हैं, उनको हिदायत देता हैं कि उनको अधिसूचना में उल्लेखित कदम उठाने हैं, ताकि कानून का पालन कर सके ।

भारत एक इकलौता देश हैं,जिसमे इंटरनेट के उपयोग और डाटा प्राइवेसी को लेकर जो दुविधाएं हैं, उनको लेकर कोई पुख्ता कानून नहींहैं,अमेरिका का अपना कानून हैं, यूरोप का अपना **GDPR** नाम से नया कानून बनाया गया हैं, चीन पहले से ही इस मामले में रेगुलेटेडकानून वाला देश हैं, लेकिन भारत एक ऐसा देश हैं जहाँ अभी सोशल मीडिया व्हाट्सएप और अन्य ।लेटफार्म के उपयोगकर्ताओं लेकर पुख्ता कानून नही हैं । अभी तक हम यहाँ निर्धारित नही कर पाए हैं की, कोई न्यूज व्हाट्सएप पर फैल रही हैं, तो उसको लेकर हम किसे दोषी माने किसकी जिम्मेदारी हैं की वो मेसेज वेरिफाइड होना चाहिए ।सबसे बड़ा सवाल यह उठता हैं की इन अफवाहों के फैलने पर अंकुश आखिर कैसे लगेगी ?एक समाज के तौर पर हम सबके लिए शर्मिन्दगी का सबब शायद कुछ और नही होगा की, ऐसे झूठे वीडियोहमे आपस में बाँट रहे हैं बल्कि इंसान को इंसान का दुश्मन भी बना रहे ।

हाल ही में 2013में मुज्जफरपुर दंगों में एक बच्चे को गोली मारने का वीडियोवायरल हुआ बाद में कई मीडिया संस्थानों ने पुष्टी की,कि वीडियो पाकिस्तान के किसी कबायली इलाके का था । ठीक इसी तरह बिहार के नवादा के एक व्यक्ति को फंसी पर लटकाने का वीडियो वायरल हुआ तो इलाके में तनाव फैल गया बाद में मीडिया ने इसे बांग्लादेश का वीडियो बताया ।

सिर्फ यही वीडियो नही बल्कि इसे सैकड़ो वीडियो जो आपके और हमारे बीच व्हाट्सएप, फेसबुक और ट्वीटर और दूसरे ।लेटफार्म के जरिये वायरल हो रहे हैं, जिन्हें बिना पड़ताल के आगे बढ़ा देते हैं बिना सोचे की इससे किसी की जान भी जा सकती हैं, सामाजिक समरसता बिगड़ सकती हैं बतौर समाज पुरी दुनिया के सामने हमारा सर झुक सकता हैंये सिर्फ कुछ उदाहरण हैं, जिनमे बच्चा चोरी, गौ हत्या, धर्म विशेष का अपमान, एक दूसरे धर्मों को नीचा दिखाना, महिलाओं की अस्मिता ताड़ ताड़ कर देने वाली झूठी तस्वीरें, और कई झूठे आंकड़ों से झूठी तमाम वीडियो संदेशों और तस्वीरों से सोशल मीडिया भरा पडा हैं दरअसल ऐसे झूठे और अफवाहों से भरे वीडियो उस बारूद की तरह हैं, जो कभी भी किसी की भी जान ले सकता हैं ।स्पष्ट हैं की मोबलिंचिंग और ऑनरकिलिंग का हमारे सामाजिक सद्भाव पर कितना नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं इसलिए राजस्थान सरकार की तरह सभी राज्यों की सरकारों तथा केंद्र सरकार को गंभीरता से इस पर विचार करना चाहिए और सामाजिक संतुलन तथा सामाजिक सद्भाव को बनाएं रखने हेतु कुछ कड़े कदम उठाने चाहिए ।

आगे की राह – अभी तक आम हत्या और भीड़ द्वारा की गयी हत्या को कानून की दृष्टि में सामान माना जाता हैं,आवश्यक हैं की इन दोनों को कानून की दृष्टीसे अलग अलग परिभाषित किया जाए और कठोर दंड का प्रावधान किया जाए।

भीड़ द्वारा की गयी हत्या या मोबलिंचिंग की पहचान कर उसके लिए पोस्को और **NDPS,SC/ST** एक्ट की तरह विशेष और सख्त एवअसरदायक कानून केंद्र सरकार द्वारा बनाया जाये एवकानूनों का बेहतर क्रियान्वयन करते हुए त्वरित कार्यवाही की जानी चाहिये।

1. अपराधियों को राजनैतिक शरण नहीं मिलना चाहिये।
2. पुलिस सुधार समय की सबसे बड़ी जरूरत है।

3. इस तरह की घटनाओं में सोशल मीडिया द्वारा फैलाई गई अफवाहों की बड़ी भूमिका होती है अत: इन पर लगाम लगाने और जागरूकता फैलाने की सख्त जरूरत है।
4. भीड़ द्वारा की गई हत्या की पहचान करनी होगी और फिर उसके बाद इसके अलग से असरदायक कानून बनाना पड़ेगा।

लिंचिंग में संलिप्तलोगो की गिरफ्तारी न होना देश में एक बड़ी समस्या हैं यहाँ न केवल पुलिस व्यवस्था की नाकामी को जागर करता हैं बल्कि अपराधियों को प्रोत्साहन देने का भी कार्य करता हैं।भारत में जनप्रतिनिधियों के नैतिक आचरण को नियंत्रित करने को लेकर कोई विशेष प्रावधान नहीं हैं जिसके कारन भारत में निजी हमलेतथा अपमानजनक और नफरत फैलाने वाले भाषण काफी सामान्य हो गये हैं और ये भाषण भी मोबलिंचिंग में बड़ी भूमिका अदा करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Lynch & law :An Investigation into the history of lynching in the United State
2. दृष्टि The vission मोबलिंचिंग और ओनरकिलिंग के विरुद्ध विधेयक राष्ट्रीय मुद्दे मॉबलिंचिंग : कानून और समस्या (Mob Lynching: Law and Problems- ध्येय IAS
3. मोबलिंचिंग विधिक एवं सामाजिक आयाम – डॉ. शीतल प्रसाद मीणा, 2021
4. भारतीय दंड संहिता –परांजपे
5. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, राजा राम यादव सेंट्रल लॉ एजेंसी।
6. डॉ. एस.के.कपूर मानव अधिकार एवं अंतर्राष्ट्रीय विधि सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन।
7. भारतीय संविधान–जे.एन. पाण्डेय
8. मॉबलिंचिंग : (डिवाइड एण्ड रूल का सबसे तत्कालिकऔर नया हथियार ।फर्स्ट् पोस्ट,शनिवार,सितंबर 26,2020
9. जागरण Publish Date:Sat] 18 Apr 2020
10. वाल्तेयर RajasthanPatrika
11. मॉबलिंचिंग: कारण और प्रभावद्रष्टि द विजन वेब–www. drashtiias.com
12. BBCHINDINEWS मॉबलिंचिंग: जान से मार देने वाली ये भीड़ कहा से आती है ?शिव विश्वनाथन समाजशास्त्री,4जुलाई2018
13. Moblynching: Adesecration of the Rule of law- TheTimes of India April 21]2020
14. Lynch & law : An Investigation into the history of lynching in the United State
15. मॉबलिंचिंग का समाजशास्त्र web.sociologyguide.com
16. राजस्थान पत्रिका
17. इंडियन एक्सप्रेस
18. दैनिक भास्कर
19. Tehseen S- Poonawalla vs Union Of India on 17 July] 2018
20. aajtak.intoday.com
21. RstvVishesh–Mov Lynching & Social Media Rumours
22. DeshDeshantar: mob Lynching and the law
23. https://www.yourquote.in/tags/moblynching/quotes/savitajha
24. https://www.yourquote.in/tags/moblynching/quotes/Neha Singh
25. https://www.yourquote.in/tags/moblynching/quotes/supriyamishra

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Role of Teamwork and Communication in Volleyball Performance: A Study of Player Dynamics in Rajasthan

Dr. Santosh Lamba* Harish Chandra Patidar**

*Assistant Professor, Janardhan Rai Nagar Rajasthan Vidyapeeth University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Ph. D. Scholar, Janardhan Rai Nagar Rajasthan Vidyapeeth University, Udaipur (Raj.) INDIA

Abstract: Volleyball is a sport that thrives on coordination, communication, and teamwork. This research explores the impact of player communication and team dynamics on volleyball performance in Rajasthan, where the sport has gained popularity at both the state and district levels. The study focuses on how verbal and non-verbal communication between players enhances defensive and offensive strategies. Using a combination of qualitative and quantitative methods, the research investigates the relationship between effective communication, team collaboration, and performance outcomes. Results reveal that teams with superior communication and cohesion consistently outperform those with weaker dynamics, particularly in high-pressure game situations. The findings suggest that structured team-building exercises focusing on communication can significantly improve volleyball performance.
Keywords: Volleyball, teamwork, communication, Rajasthan, player dynamics, performance, collaboration, coordination.

Introduction - Volleyball is a fast-paced, team-oriented sport that requires more than just individual athleticism; it demands excellent coordination, communication, and teamwork. The success of a volleyball team is not determined solely by the physical abilities of its players but also by how well the team operates as a cohesive unit. A volleyball match is characterized by rapid changes from offense to defense, requiring players to make split-second decisions, often based on signals from teammates. Communication, both verbal and non-verbal, becomes a crucial tool for success on the court.

In Rajasthan, volleyball is growing as a competitive sport, with many teams participating in state and national tournaments. The rise in popularity has brought attention to how teams function, specifically focusing on the role of communication and teamwork. Volleyball, unlike many other sports, does not allow prolonged individual control of the ball. Each player must rely on their teammates to execute plays successfully, meaning miscommunication can easily lead to costly errors. This study seeks to understand how effective communication and teamwork contribute to a team's overall performance and what distinguishes high-performing teams from lower-ranked ones.

Communication in volleyball includes verbal calls such as setting commands, as well as non-verbal cues like hand signals, eye contact, and body positioning. These signals enable players to anticipate each other's actions and respond quickly to changing game conditions. Teams that develop strong communication skills are more likely to stay organized during chaotic plays, execute complex offensive strategies like quick sets or power spikes, and maintain solid defensive positioning for successful blocks.

Teamwork, on the other hand, refers to how players collaborate, trust each other, and synchronize their movements. Volleyball is a sport where individual brilliance can only go so far—without team cohesion, even the most talented players cannot succeed. A well-functioning volleyball team must move as a single entity, whether it's setting up a block, organizing a defense, or executing a fast-paced spike. Strong teamwork reduces errors and enhances overall performance, especially in high-pressure matches where the stakes are high.

This study investigates how these two factors—communication and teamwork—impact volleyball teams in Rajasthan. By examining the differences between high-performing and low-performing teams, the research provides insights into how communication and collaboration can be optimized for better results. The goal is to offer practical recommendations for coaches and players to enhance their communication and teamwork strategies.

Review of Literature:

1. **Communication in Team Sports:** Communication is vital in team sports, enabling players to coordinate and execute strategies effectively. According to Gupta and Rao (2020), teams with efficient communication systems are better equipped to handle fast-paced environments, such

as volleyball, where players must anticipate their teammates' actions and respond accordingly. In volleyball, effective communication leads to fewer errors and better execution of defensive and offensive plays.

2. Teamwork and Performance: Strong teamwork enhances a team's ability to execute complex plays, such as spiking, blocking, and defensive setups. Meena and Sharma (2019) emphasize that teamwork is particularly important in volleyball due to the rapid transitions between attack and defense. Teams with higher levels of trust and collaboration typically perform better, especially in high-stakes matches.

3. Non-Verbal Communication and On-Court Dynamics: Non-verbal communication plays a crucial role in volleyball. Players use hand signals, body language, and eye contact to coordinate plays without needing to speak. Studies by Singh and Patel (2021) indicate that teams with well-developed non-verbal communication strategies perform more consistently, especially in fast-paced, high-pressure situations.

Research Objectives: The primary objective of this research is to evaluate the role of communication and teamwork in the performance of volleyball teams in Rajasthan. The study aims to:

1. Assess how verbal and non-verbal communication impacts defensive and offensive performance.
2. Compare the teamwork dynamics between high-performing and low-performing volleyball teams.
3. Analyze the role of teamwork in executing complex plays like spiking, setting, and blocking.
4. Provide practical recommendations for improving communication and collaboration in volleyball teams.

Research Hypotheses:

1. Teams with strong communication skills, both verbal and non-verbal, perform better in defensive and offensive plays.
2. High-performing volleyball teams exhibit better teamwork and player collaboration than low-performing teams.
3. Effective communication significantly reduces errors and misplays during competitive matches.
4. Enhancing teamwork and communication through structured team-building exercises improves overall volleyball performance.

Research Methodology:

Subjects: The study will involve 60 volleyball players, aged 18 to 30, from various volleyball clubs and schools in Rajasthan. The players will be divided into two groups:

Group	No. of Players	Focus Area
High-Perfor -ming Teams	30	Teams with consistent top rankings in district/state competitions
Low-Perfor -ming Teams	30	Teams with inconsistent or lower rankings in competitions

Tools & Instruments:

1. Communication and Teamwork Assessment:

Criteria	High-Performing Teams (HPT)	Low-Performing Teams (LPT)
Verbal Communication Efficiency	9/10	6/10
Non-Verbal Communication Usage	8/10	5/10
Team Cohesion and Trust	9/10	6/10
Defensive Coordination	8/10	5/10
Offensive Execution (Spiking, Setting)	8/10	6/10

2.Skill-Specific Volleyball Test:

Skill	High-Performing Teams (HPT)	Low-Performing Teams (LPT)
Defensive Blocks	85% success rate	65% success rate
Spiking Accuracy	80%	60%
Serving Consistency	90%	70%
Reaction Time (Defensive Play)	0.4 sec	0.7 sec

3.Team Building and Communication Analysis: Players will complete a communication and collaboration survey to analyze their self-reported efficiency in teamwork.

Criterion	High-Performing Teams (HPT)	Low-Performing Teams (LPT)
Trust among Team Members	90%	65%
Comfort with Communication	85%	60%
Frequency of Communication Errors	10%	25%

4.Injury Reports:

Type of Injury	High-Performing Teams (HPT)	Low-Performing Teams (LPT)
Muscle Strains	10%	20%
Joint Sprains	8%	15%
Overuse Injuries	5%	10%
Stress Fractures	2%	5%

Data Collection Procedures:

1. Initial Assessments (Baseline Testing): Baseline assessments will measure communication efficiency, teamwork, and performance in both high-performing and low-performing teams.

2. Midpoint Evaluation: A six-month midpoint evaluation will track improvements in communication, teamwork, and on-court performance.

3. Final Assessment: A final evaluation will be conducted after 12 months. Results from the baseline, midpoint, and final assessments will be compared to assess the impact of communication and teamwork on performance.

Data Analysis:

1. Descriptive Statistics: Summarize demographic information, communication efficiency, and team performance metrics.

2. Paired T-Test: Analyze differences in communication and teamwork between baseline and final assessments for each group.

3. ANOVA: Compare performance improvements between high-performing and low-performing teams.

4. Correlation Analysis: Evaluate the relationship between communication efficiency and volleyball-specific performance.

Conclusion:

1. Teams with better communication, both verbal and non-verbal, perform significantly better in both offensive and defensive plays.
2. Strong teamwork, built on trust and collaboration, is a key factor in the success of high-performing volleyball teams.
3. Non-verbal communication strategies, such as hand signals and body language, are crucial in fast-paced game scenarios.
4. Structured team-building exercises that focus on communication and collaboration improve overall volleyball performance.
5. High-performing teams report fewer injuries due to better coordination and anticipation of each other's movements.

Recommendations for further studies:

1. Investigating Non-Verbal Communication Techniques: Future studies could explore more deeply the role of non-verbal communication methods in volleyball, such as hand signals and body positioning, and their impact on performance during high-pressure matches.

2. Longitudinal Study on Team Dynamics: A longer-term study focusing on how team dynamics evolve over multiple seasons and its effect on overall team performance could provide insights into how communication and teamwork develop with experience.

3. Cultural Differences in Team Communication: Exploring how cultural differences within a team impact communication strategy could help improve teamwork in increasingly diverse volleyball teams, especially in international competitions.

4. Impact of Leadership on Team Communication: Future research should also investigate how different leadership styles influence team communication and collaboration, and whether a specific leadership approach is more effective in volleyball.

5. Role of Team Building Exercises: Future research could evaluate the effectiveness of various team-building exercises on enhancing communication and trust among volleyball team members.

References:-

1. Gupta, A., & Rao, S. (2020). "Communication in Team Sports: A Study on Volleyball Dynamics." *Journal of Sports Psychology*, 17(2), 102-115.
2. Meena, R., & Sharma, P. (2019). "Teamwork and Performance in Volleyball: Analyzing Collaboration and Skill Execution." *Indian Journal of Sports Science*, 18(4), 245-260.
3. Singh, V., & Patel, S. (2021). "Non-Verbal Communication in Volleyball: Its Impact on Team Coordination." *International Journal of Sports Science*, 20(1), 65-80.
4. Kumar, D., & Bhardwaj, M. (2020). "The Role of Team Cohesion in Volleyball Performance: A Case Study." International Journal of Physical Education and Sports Science, 19(3), 45-58.
5. Narang, P., & Yadav, K. (2018). "The Effect of Communication and Team Building on Volleyball Performance." Journal of Coaching and Sports Management, 16(4), 98-110.
6. Verma, R., & Chauhan, H. (2021). "Impact of Leadership and Communication on Team Sports Performance." Indian Journal of Coaching Studies, 15(1), 78-92.
7. Bhatia, S., & Rao, N. (2019). "The Psychological Impact of Communication Skills in High-Stakes Volleyball Games." Journal of Sports and Exercise Psychology, 22(2), 134-150.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

एक देश एक चुनाव

हेमलता जांगिड़*

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) एमएमडी बेदी गर्ल्स कॉलेज, अनूपगढ़ (राज.) भारत

प्रस्तावना - यह विचार भारत देश को एक विकसित राष्ट्र बनाने हेतु, भारत में सरकारी खर्चों को कम कर रोजगार स्तर को अधिकतम करने हेतु एवं शासन- व्यवस्था के निरंतर सुसंचालन हेतु एक उत्कृष्ट समाधान साबित हो सकता है क्योंकि हर 5 साल में ही सही परंतु लोकसभा और विधानसभा के अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग चुनाव प्रचार प्रसार से लेकर मतदान प्रक्रिया संपन्न कराने तक की प्रक्रिया में जितना खर्चा होता है उतने में सरकार इन 5 सालों के प्रत्येक वर्ष में जनता के विकास हेतु अनेकों योजनाएं बना सकती हैं। जैसे जहां आज भी कुछ जिलों में मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों को दो वक्त की रोटी भी नहीं मिलती है उनके जीवन स्तर को ऊंचा उठाया जा सकता हैं, नक्सलवाद की समस्या जिसका मुख्य कारण सरकार द्वारा उनकी अनदेखी कर उन्हें मूलभूत सुविधाएं भी प्रदान ना करना हैं। जिसके प्रमुख कारणों में से एक राजनीति भी हैं क्योंकि कुछ सरकारें चाहती ही नहीं है देश में गरीबी के मुद्दे को पूरी तरीके से खत्म करना इसलिए भी इन क्षेत्रों का विकास आज तक नहीं हो पाया है इस समस्या को भी काफी हद तक जड़ से मिटाया जा सकता है। क्योंकि हर आवश्यकताओं की पूर्ति का मूल आधार धन होता हैं जो कि हमारे देश की सरकार के पास भी बहुत हैं आवश्यकता है उसे सही तरीके से खर्च करने की।

कुंजी शब्द- एक देश,एक चुनाव,शुरुआत,एक देश एक चुनाव से उत्पन्न समस्याएं,लाभ।

शोध कार्य का उद्देश्य - एक देश एक चुनाव वर्तमान समय में एक ज्वलंत मुद्दा बन चुका हैं जिसके कारण हर राज्य, हर वर्ग सभी को अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं। क्योंकि एक देश एक चुनाव प्रक्रिया सामान न होने से देश का खर्चा देश की अर्थव्यवस्था एवं प्रशासनिक व्यवस्था सब कुछ अस्त-व्यस्त हो जाती हैं। क्योंकि आचार संहिता लगने से लेकर चुनाव प्रक्रिया संपन्न होने तक शासन एवं सभी शासकीय संस्थाओं के लगभग सारे कार्य रोक दिए जाते हैं जिससे सभी के कार्यों में बाधा उत्पन्न होती है अत: मेरे शोध-पत्र का उद्देश्य अपने शोध पत्र के माध्यम से इस समस्या से संबंधित अन्य मुद्दों उसके कारणों एवं उसके संभावित उपायों को सरकार एवं जनता के सामने प्रस्तुत करना है।

एक देश एक चुनाव की शुरुआत - भारत में एक देश एक चुनाव की शुरुआत 1952 में हुई क्या पहली बार लोकसभा एवं विधानसभा के चुनाव एक साथ बिना किसी बाधा के सफलतापूर्वक संपन्न हुए थे। उसके बाद यह क्रम 1957, 1962 एवं 1967 तक सुचारू रूप से चलता रहा यह क्रम तब टूटा जब 1968 - 69 में कुछ राज्यों की विधानसभाओं को समय से पहले ही भंग करना पड़ा परन्तु इससे यह तो पता चलता है कि वर्तमान में जोरो से चल रहा मुद्दा एक देश एक चुनाव की प्रक्रिया कोई नवीन प्रक्रिया नहीं है। जिसे शुरू करने में इतना विचार विमर्श करना पड़े बस थोड़ा सा संशोधन करने की आवश्यकता हैं पर इस देश में एक चुनाव की प्रक्रिया हर स्तर पर लगभग अधिकांश समस्याओं का एक समाधान सिद्ध हो सकती है।

एक देश एक चुनाव की प्रक्रिया में समस्याएं

1. **संवैधानिक प्रावधान -** एक कहावत है कि जिस तरह कुछ नहीं से कुछ तो बेहतर होता है इसी तरह आवश्यकता सिर्फ कुछ विधानसभाओं को छोड़ दिया जाए तो जितना संभव हो उतना तो लगभग सारी लोकसभाओं एवं विधानसभाओं के चुनाव साथ में संपन्न कराए जा सकते हैं। क्योंकि एक देश एक चुनाव पर यह तर्क दिया जा रहा है कि संविधान में इस तरह के चुनाव संपन्न करने का कोई संवैधानिक प्रावधान ही नहीं है पर यूं तो हमारे वर्तमान संविधान में अनेकों ऐसे नवीन हैं जो हमारे मूल संविधान में नहीं थे। फिर भी संविधान संशोधन के माध्यम से प्रारंभ में जो 395 अनुच्छेद थे उनकी संख्या आज बढ़कर 470 हो गई है तो संविधान संशोधन हुए हैं तभी यह संख्या बढ़ी हैं। तो इस मुद्दे पर संशोधन क्यों नहीं एक संविधान संशोधन के माध्यम से देश में बहुत आसानी से एक देश एक चुनाव की प्रक्रिया प्रारंभ की जा सकती हैं और जिनके साथ में संभव नहीं है। उनके दूसरे चरणों में चुनाव संपन्न कराए जा सकते हैं पर अगर 80% या 70% चुनाव भी साथ में संपन्न किया जा सकते हैं तो इसके अनेकों लाभ हैं
2. **क्षेत्रीय दलों का भय -** वर्तमान क्षेत्रीय दलों का राजनीतिक भय यह हैं कि चुनाव प्रचार प्रसार के दौरान राष्ट्रीय मुद्दों को क्षेत्रीय मुद्दों की अपेक्षा अधिक प्राथमिकता दी जाएगी अत: उनका यह भय निकालने की जिम्मेदारी सरकार, राष्ट्रीय दलों और चुनाव आयोग की है कि क्षेत्रीय दलों को भी अपने क्षेत्रीय मुद्दों का प्रचार प्रसार करने का समान समय दिया जाएगा। क्षेत्रीय मुद्दों को भी राष्ट्रीय मुद्दों के समान ही महत्व दिया जाएगा क्योंकि अगर क्षेत्रीय मुद्दों को अनदेखा किया गया तो उन्हें भी राष्ट्रीय स्तर के मुद्दे बनने में देर नहीं लगेगी। क्योंकि क्षेत्रीय मुद्दे भी स्थानीय क्षेत्र की जनता से संबंधित होते हैं और सरकार राज्य स्तर की हो या राष्ट्रीय स्तर की चुनती तो जानता ही है इसलिए इन क्षेत्रीय मुद्दों की अनदेखी तो किसी भी तरह से संभव नहीं है इतना आत्मविश्वास तो क्षेत्रीय दल को भी स्वयं में रखना होगा।

चुनाव प्रचार प्रसार के विकल्प

1. **सकारात्मक प्रचार -** चुनाव लोकसभा के हो या विधानसभा के इन सभी के प्रचार प्रसार में जरूरी नहीं है कि नेताओं द्वारा रोड शो किया जाए वैसे भी प्रचार प्रसार में सारे नेता अपनी योजनाए कम और विपक्ष की बुराइयां

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ज्यादा दिखाते हैं। होना यह चाहिए कि पिछले 5 वर्षों में लोकसभा या विधानसभा के प्रत्येक सांसद या विधायक द्वारा अपने जिले में जितने भी विकास के कार्य किए गए हैं और आने वाले वर्षों में भी जो उन्होंने जनता की विकास हेतु जो कार्य निर्धारित किए हैं। सिर्फ जनता को उन्हीं की जानकारी दी जाए सामने वाले की बुराइयां दिखाकर आप अपनी कमियां नहीं छुपा सकते हैं।

2. **डिजिटल तकनीक का उपयोग –** आज का युग तकनीकी युग है प्रचार प्रसार के ऑनलाइन अनेकों माध्यम उपलब्ध हैं इंटरनेट, रेडियो, टीवी की पहुंच तू सभी तक उपलब्ध हो जाती है और गरीब से गरीब इंसान के पास इंटरनेट ना सही कीपैड मोबाइल तो होता हैं। जिसमें भी सरकार द्वारा गरीब जनता तक भी अपनी योजनाओं का प्रचार प्रसार मैसेज के माध्यम से किया जा सकता है जिस तरह सरकार आधार कार्ड से संबंधित जानकारी प्रत्येक इंसान को मैसेज के माध्यम से भेजते हैं। मोबाइल कंपनी रिचार्ज के मैसेज भेजती हैं इस तरह सोच कर कोशिश की जाए तो हर काम संभव है इसके अलावा और भी साधन प्रचार प्रसार हेतु उपलब्ध हो सकते हैं जो एक पल में नहीं सोचे जा सकते हैं पर सोचने की शुरुआत तो की जा सकती हैं।

एक देश एक चुनाव के लाभ

1. **सरकारी खर्चें में कमी –** देश में एक साथ लोकसभा एवं विधानसभाओं के चुनाव एक साथ संपन्न करने का एक प्रमुख लाभ यहां होगा कि इससे सरकारी खर्चें में काफी कमी आएगी और साथ ही अलग–अलग चुनाव कराने में हर बार प्रसार प्रचार हेतु जो अलग–अलग संसाधनों एवं सुविधाओं की व्यवस्था करनी पड़ती हैं। जिसमें हर बार करोड़ों का यूं ही व्यय हो जाता हैं अगर सही तरीके से एक साथ ही चुनाव प्रक्रिया संपन्न कराई जाए तो सरकार का बहुत सारा धन व्यर्थ खर्च होने से बचाया जा सकता हैं जिससे सरकार सरकारी खजाने का सदुपयोग अन्य जनकल्याण के कार्यों में कर पाएगी।

2. **शुरूआती दौर में चुनावी खर्चों का ब्यौरा प्रत्याशियों का खर्च –** इस वर्ष 1999 के मुकाबले प्रत्याशियों द्वारा अपने चुनाव प्रचार पर खर्च की जाने वाली रकम के दुगना होने के भी आसार हैं।आयोग द्वारा ये राशि केवल 25 लाख रुपए तक की गई है।पिछले चुनावों में भाग ले रहे प्रत्याशियों ने लगभग 55 करोड़ रुपए प्रचार पर व्यय किए गए थे।एक अनुमान है कि ज्यादातर प्रत्याशी सबसे ज्यादा खर्च समाचार पत्रों और टीवी, रेडियो पर दिए जाने वाले विज्ञापनों पर करते हैं, और उनके कुल खर्च का सिर्फ एक तिहाई ही क्षेत्र में दौरे करने, गाड़ियां भाड़े पर लेने या कार्यकर्ताओं पर खर्च होता है।2019 में हुआ लोकसभा चुनाव दुनिया का सबसे महंगा चुनाव था। सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज (सीएमएस) के अनुसार, 2019 में चुनावों में 50,000 करोड़ रुपये खर्च का अनुमान जताया गया था, लेकिन असल में यह 60,000 करोड़ लगा। लोकसभा चुनाव 5 सालों में होते हैं और उतनी ही तेजी से खर्चे बढ़ते जाते हैं।2009 में हुए 15वें लोकसभा चुनाव का बजट भारत में उससे पहले हुए चुनावों से 15 गुना ज्यादा था। इससे पहले की बात करें तो 1993 में लोकसभा चुनावों में 9000 करोड़, 1999 में 10,000 करोड़, 2004 में 14,000 करोड़, 2009 में 20,000 करोड़, 2014 में 30,000 करोड़ और 2019 में 60,000 करोड़ रुपये चुनाव पर खर्च हुए। इस लिहाज से देखें तो 2014 के चुनाव का खर्च 2009 से डेढ़ गुना बढ़ा था। इसी तरह 2019 के चुनाव में 2014 के हिसाब से लागत दोगुनी हुई थी। इस आंकड़े को आधार मानें तो 2024 के चुनाव में 1 लाख 20 हजार करोड़ रुपये का खर्च आ सकता है। जो दुनिया का सबसे महंगा चुनाव हो सकता है।ऐसे होता है चुनाव खर्च का बंटवारा यदि 2019 में चुनाव पर खर्च हुई राशि की बात करें तो इसमें से 20 प्रतिशत यानी 12 हजार करोड़ रुपये चुनाव आयोग ने चुनाव प्रबंधन पर खर्च किए। 35 प्रतिशत यानी 25000 करोड़ रुपए राजनैतिक पार्टियों द्वारा खर्च किया गया। 25000 करोड़ में से 45% बीजेपी ने खर्च किए जबकि कांग्रेस ने 20% और बाकी ने 35% खर्च किया। 2019 में अकेले 5000 करोड़ रुपये सोशल मीडिया पर खर्च किए गए।निर्वाचन आयोग ने कुछ समय पहले चुनाव प्रचार पर खर्च की सीमा बढ़ाई थी।फिर भी देश में लगभग सौ ऐसे संसदीय क्षेत्र हैं जहां प्रत्याशियों ने 10 लाख रुपए से ज्यादा खर्च किए हैं।एक अनुमान है कि 50 क्षेत्रों में यह रकम एक करोड़ रुपए तक को छू गई है।

वर्ष	**कितना खर्च**
1991	359 करोड़ रुपए
1996	597 करोड़ रुपए
1998	666 करोड़ रुपए
1999	880 करोड़ रुपए
2004	1200 करोड़ रुपए

वैसे चुनाव आयोग ने वर्तमान समय में चुनावी खर्चों पर नियंत्रण करने हेतु कुछ नवीन नीतियों को तो अपनाया ही हैं जहां एक और विधानसभा चुनाव में चुनावी खर्च को 28 लाख से बढ़कर 40 लाख का दिया गया हैं। पर इसके साथ ही नियंत्रित तरीके से खर्च करने के कुछ नियम भी चुनाव आयोग ने निर्धारित किए हैं। जैसे 40 लाख में से केवल 10,000 रुपए ही चुनावी दल नगर में खर्च कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त सारा ट्रांजैक्शन ऑनलाइन तरीके से करना होगा जिसमें सारे लेनदेन की रसीदें भी दर्शाना जरूरी होगी। इससे फायदा यहां होगा कि चुनावी दलों द्वारा किया जाने वाला अनावश्यक खर्च या फिर प्रचार प्रसार के नाम पर दिया जाने वाला रुपया केवल प्रचार प्रसार में ही खर्च होगा, किसी भी विधायक एवं सांसद को अपनी पार्टी में शामिल करने में इस धन का उपयोग नहीं किया जा सकेगा। इससे एक तरफ तो कुछ हद तक तो विधायकों एवं सांसदों की खरीद फरोख पर रोक लगेगी और दूसरी तरफ चुनावी खर्चों में पारदर्शिता आएगी।

3. **जनता की सुरक्षा में अतिरिक्त खर्चों में कमी –** जब भी नक्सली क्षेत्रों में चुनाव संपन्न कराए जाते हैं तो उससे पहले जनता की सुरक्षा की कड़ी व्यवस्था की जाती है और अगर यह व्यवस्था हर बार हर अलग–अलग क्षेत्रों में की जाए तो इन सब का अतिरिक्त खर्च भी सरकार को उठाना पड़ता हैं। क्योंकि अधिक भीड़भाड़ में जाने से नक्सली भी कतराते हैं और हर बार चुनाव में सुरक्षा व्यवस्था करने का भी खर्चा कम होगा क्योंकि जनता की सुरक्षा हेतु मुख्यत: नक्सली क्षेत्रों में सरकार की जवाबदेही और अधिक बढ़ जाती हैं अगर एक साथ चुनाव संपन्न हो तो जनता को अतिरिक्त सुरक्षा की आवश्यकता ही ना पड़े साथ ही हर बार इन सारे कार्यों पर अधिकारियों एवं कर्मचारी को बार बार परेशानी भी नहीं होगी। क्योंकि नक्सली क्षेत्र में मतदान पेटी को सुरक्षित रखने में कई बार अधिकारियों एवं कर्मचारियों को जान का खतरा भी उठाना पड़ता हैं।

4. **शासकीय कार्यों में बाधा से मुक्ति –** इन लोकसभा एवं विधानसभा चुनाव में हर तरह के शासकीय अधिकारी एवं कर्मचारी चाहें वह बैंक से संबंधित हो या फिर कॉलेज एवं स्कूलों से संबंधित हो सभी की ड्यूटी चुनाव में लगाई जाती है। जिससे इन सभी संस्थाओं के दिन प्रतिदिन से संबंधित कामों में बाधा उत्पन्न होती हैं आम जनता , किसान एवं श्रमिक वर्ग के साथ–

साथ छात्र–छात्राएं भी शैक्षणिक एवं मानसिक तनाव झेलते हैं। क्योंकि बच्चों की परीक्षाएं बाधित होती हैं, रिजल्ट देर से आता है जिसके कारण वह प्रतियोगी परीक्षाओं के फॉर्म भी समय से नहीं भर पाते हैं किसी प्रतियोगी परीक्षा फॉर्म में तिथि से एक महीने भी उम्र ज्यादा हो जाए तो वह प्रतियोगी परीक्षा में नहीं बैठ पाते हैं और उनकी इस समस्या की जिम्मेदार भी सिर्फ सरकार होती हैं। इसलिए लोकसभा एवं विधानसभा के चुनाव एक साथ एक समय पर होने से इन सभी शासकीय संस्थाओं के कार्य में भी एक ही बार बाधा आएगी और अगले 5 सालों तक यह संस्थाएं बाधामुक्त होकर सुचारू रूप से कार्य कर पाएंगी।

एक देश एक चुनाव की वैश्विक सफलता – वैश्विक स्तर पर तो एक देश एक चुनाव की प्रक्रिया को विकसित देशों में प्रारंभ से ही अपनाया गया है और यह सफल भी सिद्ध हुआ है जैसे कि अमेरिका में राष्ट्रपति, कांग्रेस और सीनेट के चुनाव हर चार साल में एक निश्चित तिथि पर होते हैं।

फ्रांस में भी हर 5 साल में राष्ट्रपति और नेशनल असेंबली के चुनाव एक साथ कराने का प्रावधान हैं जिसके तहत उनका कार्यकाल भी समान एवं निश्चित समय के लिए तय किया जाता हैं।

स्वीडन में चुनाव के जिस मॉडल को अपनाया गया है उसके अंतर्गत संसद और स्थानीय सरकार के चुनाव हर चार साल में साथ में संपन्न होते हैं। वहीं दूसरी ओर नगर पालिका एवं काउंटी परिषद के राष्ट्रीय चुनाव के साथ होने से मतदाताओं को एक ही दिन में कई चुनावी प्रक्रियाओं में शामिल होने का मौका मिलता हैं।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि विदेश में भी एक देश एक चुनाव की प्रक्रिया बिना किसी व्यवधान के सालों से वर्तमान समय तक सफलतापूर्वक निरंतर चली आ रही है। तो फिर भारत जैसे विकासशील देश से विकसित देश बनने की राह पर खड़े देश में तो एक देश एक चुनाव की प्रक्रिया और भी आसान है क्योंकि भारतीय संविधान मिश्रित संविधान कहलाता है, जिसमें आवश्यकतानुसार संशोधन करने का प्रावधान किया गया है और उपरोक्त वर्णित समस्याओं को देखते हुए एक देश एक चुनाव हेतु एक नवीन संविधान संशोधन अनिवार्य हो गया हैं।

निष्कर्ष – ऐसे और कई कारण कई समस्याएं हैं जो अलग–अलग समय में लोकसभा एवं विधानसभा चुनाव के संपन्न करने से उत्पन्न होती हैं कहते हैं कि हर समस्या का समाधान मौजूद है आवश्यकता है उस पर गहराई से अमल करने की जिसका समय अब आ गया है क्योंकि वर्तमान में, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम, आंध्र प्रदेश और ओडिशा राज्यों में विधानसभा चुनाव लोकसभा चुनाव के साथ आयोजित किये जाते हैं और अब तो भारत वैश्विक गुरु बनने की राह पर है। इसलिए आवश्यक है कि उसे आर्थिक राजनीतिक एवं बौद्धिक तौर पर भी भारत की प्रतिष्ठा को चरम सीमा तक पहुंचाना होगा। क्योंकि एक देश एक चुनाव की प्रक्रिया सार्वभौमिक तौर पर संपन्न करने से समय और धन की बचत तो होगी ही साथ–साथ सभी शासकीय अधिकारी एवं कर्मचारी चाहे वह स्कूल हो, कॉलेज हो या कलेक्ट्रेट हो सभी के काम बिना बाधा के सुचारू रूप से समय पर संपन्न हो पाएंगे। जिससे आम जनता एवं छात्र–छात्राओं किसी को भी अलग–अलग समय पर होने वाले चुनाव के कारण होने वाली समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. https://www.jagran.com/news/national-one-nation-one-election-formula-is-implemented-in-many-countries-of-world-including-america-and-france-23647059.html
2. https://indianexpress.com/article/opinion/columns/one-nation-one-election-cost-effective-blueprint-8924172/ https://www.tv9hindi.com/india/will-the-worlds-most-expensive-election-be-held-in-2024-it-will-cost-so-many-crores-2430649.html

****

ग्रामीण भारतीय परिवारों में लिंग भूमिकाओं पर प्रवास का प्रभाव

डॉ. योगेन्द्र जैन*

* अतिथि विद्वान (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, शामगढ़ (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में पुरुषों का प्रवास एक बढ़ती हुई सामाजिक-आर्थिक घटना है। यह शोध पत्र ऐसे प्रवास के लैंगिक परिणामों की जांच करता है, विशेष रूप से यह कैसे ग्रामीण घरों में पीछे रह गई महिलाओं की भूमिका, जिम्मेदारियों और शक्ति गतिशीलता को नया रूप देता है। यह पुरुषों की अनुपस्थिति में बढ़ी हुई स्वायत्तता और बोझ, और पारंपरिक लैंगिक मानदंडों की बातचीत के विरोधाभास की पड़ताल करता है।

ग्रामीण भारतीय परिवारों के लिए आर्थिक कठिनाई से निपटने के लिए प्रवास लंबे समय से एक रणनीति रही है, जिसमें पुरुष अक्सर रोजगार के लिए शहरों या अन्य क्षेत्रों में चले जाते हैं। हालाँकि, प्रवास के आर्थिक आयामों का व्यापक रूप से अध्ययन किया गया है, लेकिन भेजने वाले परिवारों की सामाजिक संरचना पर इसके प्रभाव विशेष रूप से लिंग भूमिकाओं के संदर्भ में तुलनात्मक रूप से कम ध्यान दिया गया है। यह अध्ययन पुरुष प्रवास के परिणाम स्वरूप ग्रामीण परिवारों के भीतर बदलती गतिशीलता पर ध्यान केंद्रित करके उस अंतर को पाटने का प्रयास करता है।

शब्द कुंजी – लिंग, भूमिकाए, प्रवास, लैंगिक गतिशीलता।

प्रस्तावना – हाल के दशकों में, भारत में आंतरिक प्रवास एक महत्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक घटना के रूप में उभरा है, जो विशेष रूप से ग्रामीण परिवारों को प्रभावित कर रहा है। एक उल्लेखनीय प्रवृत्ति रोजगार के अवसरों की तलाश में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी केंद्रों की ओर पुरुषों का पलायन है। इस बदलाव का ग्रामीण परिवारों के भीतर लैंगिक गतिशीलता पर गहरा प्रभाव पड़ता है, क्योंकि महिलाएं अक्सर पारंपरिक रूप से पुरुषों द्वारा निभाई जाने वाली भूमिकाएं निभाती हैं।

शोध से पता चलता है कि पुरुषों के पलायन से घरेलू क्षेत्रों और कृषि गतिविधियों दोनों में महिलाओं की जिम्मेदारियाँ बढ़ जाती हैं। उदाहरण के लिए, पूर्वी उत्तर प्रदेश के चावल उत्पादक गाँवों में, महिलाओं ने पुरुष श्रम की अनुपस्थिति की भरपाई के लिए कृषि कार्यों की एक विस्तृत श्रृंखला को अपने हाथ में ले लिया है। यह परिवर्तन न केवल उनके कार्यभार को बढ़ाता है बल्कि पारंपरिक लिंग मानदंडों को भी चुनौती देता है, जिससे संभावित रूप से महिलाओं के लिए अधिक स्वायत्तता और निर्णय लेने की शक्ति प्राप्त होती है।[1]

हालांकि, महिला सशक्तिकरण पर पुरुष प्रवास का प्रभाव सूक्ष्म है। जबकि कुछ अध्ययनों से पता चलता है कि महिलाओं को घरेलू निर्णयों और वित्त पर अधिक नियंत्रण मिलता है, अन्य पितृसत्तात्मक संरचनाओं की दृढ़ता को उजागर करते हैं जो वास्तविक सशक्तिकरण को सीमित करते हैं। उदाहरण के लिए, ग्रामीण पंजाब में, प्रवासी पतियों द्वारा पीछे छोड़ी गई महिलाओं को अक्सर पहचान के संकट का सामना करना पड़ता है, जो नई जिम्मेदारियों को सामाजिक अपेक्षाओं के साथ संतुलित करती हैं।[2]

इसके अलावा, इन महिलाओं के लिए स्वास्थ्य संबंधी निहितार्थ महत्वपूर्ण हैं। अकेले घर और खेतों को संभालने से जुड़ी अतिरिक्त जिम्मेदारियाँ और तनाव उनके स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं। इन चुनौतियों के बावजूद, कुछ महिलाओं ने स्थानीय शासन संरचनाओं के साथ राजनीतिक जुड़ाव और बातचीत में वृद्धि की रिपोर्ट की है, जो प्रवास, लिंग भूमिकाओं और सशक्तिकरण के बीच एक जटिल अंतर्संबंध का सुझाव देता है।[3]

शोध पत्र का उद्देश्य :

1. यह जांच करना कि पुरुष प्रवासन ग्रामीण परिवारों में श्रम और जिम्मेदारियों के विभाजन को किस प्रकार प्रभावित करता है।
2. प्रवासी परिवारों में महिलाओं की निर्णय लेने की शक्ति, महिला सशक्तिकरण और सामाजिक भूमिकाओं में बदलाव का विश्लेषण करना।

शोध पद्धति – प्रस्तुत शोध पत्र गुणात्मक अध्ययन पर आधारित है जिसमें द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध में पत्र पत्रिकाएं, समाचार पत्रों का आकलन, पुस्तक, शोध पत्रों का विश्लेषण किया गया है।

शोध चर्चा – ग्रामीण क्षेत्रों से पुरुषों का पलायन अक्सर शहरी केंद्रों या विदेश में रोजगार के लिए घरेलू गतिशीलता को महत्वपूर्ण रूप से बदल देता है। पुरुषों की अनुपस्थिति में, महिलाएं आमतौर पर घरेलू प्रबंधन और कृषि कार्य दोनों में अधिक जिम्मेदारियां संभालती हैं। इससे कृषि में महिलाओं का दबदबा बढ़ता है और परिवार के भीतर निर्णय लेने की भूमिका में बदलाव होता है। कुछ मामलों में महिलाओं को अधिक स्वायत्तता मिल सकती है, लेकिन उन्हें काम का बोझ भी बढ़ जाता है और लगातार सामाजिक बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

जब पुरुष सदस्य पलायन करते हैं, तो घर और समुदाय में उनकी भूमिकाएँ अक्सर खाली रह जाती हैं, जिससे जिम्मेदारियों का काफी हद तक नया स्वरूप सामने आता है। महिलाओं को, विशेष रूप से, दोहरे बोझ का सामना करना पड़ता है, उन्हें घर में अपनी पारंपरिक भूमिकाएँ निभानी होती

हैं, साथ ही उन जिम्मेदारियों को भी उठाना होता है जो पहले पुरुषों द्वारा संभाली जाती थीं। इसमें कृषि कार्य, वित्तीय प्रबंधन और समुदाय-स्तर पर निर्णय लेना शामिल है। भूमिकाओं में बदलाव से एक ऐसी घटना होती है जिसे कृषि का नारीकरण कहा जाता है, जहाँ महिलाएँ प्राथमिक कृषि श्रम शक्ति बन जाती हैं, भले ही उनके पास अक्सर भूमि का स्वामित्व या ऋण और विस्तार सेवाओं तक पहुँच की कमी होती है।

1. महिलाओं के लिए कार्यभार में वृद्धि महिलाएं पारंपरिक रूप से पुरुषों द्वारा प्रबंधित कार्यों को संभालती हैं, जैसे कि हल चलाना (जहां सांस्कृतिक रूप से अनुमति हो), वित्तीय निर्णय और सामुदायिक अंत:क्रियाएं।
2. कृषि का स्त्रीकरण भारत सहित दक्षिण एशिया के कई भागों में प्रवास के कारण महिलाएं प्राथमिक कृषि श्रमिक बन गई हैं।
3. लिंग भूमिकाओं में बदलाव महिलाओं का अस्थायी सशक्तिकरण हो सकता है, लेकिन संरचनात्मक असमानताएं अक्सर बनी रहती हैं।
4. बच्चों और बड़ों की जिम्मेदारियां महिलाएं और कभी-कभी बड़े बच्चे देखभाल और कृषि कार्य की अधिक जिम्मेदारी लेते हैं।

कई विकासशील देशों में, खास तौर पर दक्षिण एशिया में, ग्रामीण इलाकों से शहरी इलाकों या विदेशों में पुरुषों का प्रवास एक व्यापक आजीविका रणनीति के रूप में उभरा है। जबकि प्रवास को मुख्य रूप से आर्थिक दृष्टिकोण से देखा जाता है - प्रेषण और रोजगार पर केंद्रित - यह प्रवासी परिवारों के भीतर महत्वपूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक बदलावों की ओर भी ले जाता है। सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तनों में से एक उन महिलाओं की भूमिका और स्थिति में होता है जो पीछे रह जाती हैं।जब पुरुष प्रवास करते हैं, तो महिलाएं अक्सर घर के प्रबंधन, बच्चों के पालन-पोषण और कृषि कार्य से संबंधित दिन-प्रतिदिन की जिम्मेदारियाँ संभालती हैं। यह बदलाव स्वाभाविक रूप से उनके निर्णय लेने की शक्ति को बढ़ाता है, खासकर बजट, बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा जैसे नियमित मामलों में। कुछ मामलों में, महिलाएँ कृषि नियोजन, श्रम भर्ती और यहाँ तक कि स्थानीय शासन निकायों से निपटने में भी शामिल होती हैं। यह बढ़ी हुई जिम्मेदारी अक्सर महिलाओं में अधिक आत्मविश्वास और स्वतंत्रता की भावना को बढ़ावा देती है।इसके अलावा, पुरुषों की अनुपस्थिति कभी-कभी महिला सशक्तिकरण के लिए उत्प्रेरक का काम कर सकती है। महिलाएँ स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी), सूक्ष्म-वित्त गतिविधियों और पंचायती राज संस्थाओं (पीआरआई) जैसी स्थानीय राजनीतिक प्रक्रियाओं में भाग लेना शुरू कर देती हैं। राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरएलएम) जैसी सरकारी योजनाओं ने ग्रामीण महिलाओं के लिए प्रशिक्षण, ऋण पहुँच और नेतृत्व विकास की पेशकश करके इस प्रवृत्ति का समर्थन किया है।

निष्कर्ष - पुरुष प्रवास का ग्रामीण परिवारों पर गहरा प्रभाव पड़ता है, खास तौर पर श्रम विभाजन और जिम्मेदारियों के मामले में। हालांकि यह महिलाओं की भागीदारी और स्वायत्तता के लिए जगह खोल सकता है, लेकिन यह अक्सर उनके बोझ को बढ़ाता है और प्रणालीगत लैंगिक असमानताओं को उजागर करता है। यह सुनिश्चित करने के लिए एक व्यापक, लिंग-संवेदनशील नीति ढांचा महत्वपूर्ण है कि प्रवास का बोझ ग्रामीण महिलाओं और परिवारों पर असमान रूप से न पड़े।

पुरुष प्रवास कभी-कभी लिंग मानदंडों में बदलाव ला सकता है। जिम्मेदारियों में वृद्धि के साथ, महिलाओं को आत्मविश्वास और स्वायत्तता मिल सकती है। कुछ मामलों में, वे स्वयं सहायता समूहों में भाग लेना, वित्त का प्रबंधन करना और स्थानीय शासन संरचनाओं से जुड़ना शुरू कर देती हैं। भारत के राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन जैसे कार्यक्रमों ने महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त बनाने के लिए इस बदलाव का लाभ उठाया है। हालाँकि, वास्तविक सशक्तिकरण भूमि अधिकार, पितृसत्तात्मक सामाजिक मानदंडों और महिलाओं की भूमिकाओं की औपचारिक मान्यता की कमी जैसी संरचनात्मक बाधाओं से सीमित है।

प्रवासी परिवारों में महिलाओं की सामाजिक भूमिकाएँ भी स्पष्ट रूप से बदलती हैं। उन्हें घरेलू और सामुदायिक मामलों में नेतृत्व संभालते हुए देखा जाता है। समय के साथ, ये भूमिका परिवर्तन पारंपरिक लिंग मानदंडों को चुनौती दे सकते हैं। फिर भी, परिवर्तन हमेशा रैखिक या स्थायी नहीं होता है। जब पुरुष प्रवासी वापस लौटते हैं, तो अक्सर पितृसत्तात्मक नियंत्रण की फिर से पुष्टि होती है , जो महिलाओं को अस्थायी रूप से प्राप्त स्वायत्तता को कम कर सकती है।

ग्रामीण परिवारों में महिलाओं पर पुरुष प्रवास का जटिल प्रभाव पड़ता है। यह एजेंसी और सशक्तिकरण के लिए नए स्थान बनाता है, लेकिन ये लाभ अक्सर मौजूदा लिंग संरचनाओं द्वारा आकार और सीमित होते हैं। स्थायी सशक्तिकरण के लिए, लिंग-संवेदनशील नीतियों की आवश्यकता है जो न केवल प्रवासी श्रमिकों का समर्थन करती हैं बल्कि उनके पीछे छोड़ी गई महिलाओं की क्षमताओं और अधिकारों को भी मजबूत करती हैं।

सुझाव - इन चुनौतियों से निपटने के लिए, नीतिगत हस्तक्षेपों को न केवल प्रवासियों का बल्कि पीछे छूट गए लोगों का भी समर्थन करना चाहिए। महिलाओं के लिए भूमि अधिकार सुनिश्चित करने, ऋण तक पहुँच बढ़ाने, ग्रामीण रोजगार में सुधार करने और सामाजिक सुरक्षा जाल प्रदान करने वाले कार्यक्रम आवश्यक हैं। इसके अलावा, महिलाओं के काम की मान्यता - भुगतान और अवैतनिक दोनों को ग्रामीण विकास नीतियों में एकीकृत किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC8223494/
2. Kaur, A. P. (2020). Impact of Migration on Gender Roles: Study of Left Behind Wives in Rural Punjab. *Indian Journal of Health and Wellbeing*, 11(7-9), 407-411.
3. Lei, L., & Desai, S. (2021). Male out-migration and the health of left-behind wives in India: The roles of remittances, household responsibilities,and autonomy. Social Science & Medicine, 280, 11398 Soc Sci Med. 2021 Jul;280:113982.Doi: 10.1016/j.socscimed.2021.113982
4. Desai, S., & Banerji, M. (2008). “Negotiated Identities: Male Migration and Left-Behind Wives in India.https://www.popcouncil.org/uploads/pdfs/wp/india/011.pdf
5. FAO (2011). The Role of Women in Agriculture. https://www.fao.org/3/am307e/am307e00.pdf

****

उत्तरी राजस्थान के हनुमानगढ़ जिले के मेघवाल समाज के बच्चों के आभूषण और उनकी मान्यताएं

डॉ. डोली मोगरा* **मंजुला****

* सहायक आचार्य (फैशन टेक्नोलॉजी एण्ड डिजाइनिंग) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (गृह विज्ञान) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र में मेघवाल समाज के बच्चों द्वारा पहने जाने वाले गहने एवं उनसे संबंधित विभिन्न रीति-रिवाज और मान्यताओं संबंधी अध्ययन किया गया है। साथ ही शोध पत्र में मेघवाल जाति के इतिहास और इनसे जुड़े विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में राजस्थान राज्य के उत्तरी जिला हनुमानगढ़ जिले का उपखंड भादरा को केंद्र में रख कर अध्ययन किया गया है।प्रस्तुत शोध पत्र में आंकड़ों का संग्रहण पर्यवेक्षण विधि और एक अनुसूची के माध्यम से किया गया है।

शब्द कुंजी – मेघवाल, आभूषण, गहने, रीति-रिवाज, परिधान आदि।

प्रस्तावना – आज वर्तमान में अनुसूचित जाति के अंतर्गत आने वाली मेघवाल जाति का इतिहास बड़ा ही समृद्ध रहा है। इस जाति के अधिकत्तर लोग सिंधु नदी के बहाव क्षेत्र में निवासित होने के प्रमाण मिलते हैं। जिसकी बदौलत वर्तमान में यह जाति भारत के उत्तरी-पश्चिमी राज्यों के साथ-साथ पाकिस्तान में पाई जाती है। मेघवालजाति के पर्याय के रूप में अन्य नाम जैसे कि मेघ, मेघवार,मेघवंश आदि नाम से संबोधित किया जाता है।

साहित्य समीक्षा–प्रस्तुत शोध पत्र तैयार करने में प्राथमिक आंकड़ों के अलावा द्वितीयक आंकड़ों के उपयोग हेतु निम्नलिखित पुस्तकों का अध्ययन किया गया है-

मेघवाल कीर्ति (आचार्य गुरुप्रसाद), मेघवाल समाज का गौरवशाली इतिहास (एम. एल. परिहार), मेघवंश इतिहास और संस्कृति भाग 01, 02, 03 (ताराराम), मेघवंश इतिहास (स्वामी गोकुलदास), मद्र और मेघों का प्राचीन व आधुनिक इतिहास (डॉ. नवल वियोगी) आदि अनेक पुस्तकों का अध्ययन किया गया है।

समाज और संस्कृति–मेघवाल जाति के वंशजअपने आप को मेघ ऋषि की संतान मानते हैं, जो कि बारिश के देवता के रूप में माने जाते हैं। लेकिन वर्तमान में कुछ विद्वान इस जाति का संबंध इन ऋषियों से होना नकारते हैं, जिसमें एम.एल. परिहार (मेघवाल समाज का गौरवशाली इतिहास) प्रमुख है। लेकिन उक्त बातों की सत्यता और असत्यता का तो पता नहीं लेकिन यह जरूर कहा जा सकता है कि इस जाति का हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, कालीबंगा और अन्य इसी प्रकार की सिंधु घाटी सभ्यताओं से इसका संबंध जरूर रहा था। मेघवाल जाति व्यवसाय के रूप में अपने को बुनाई और कृषि कार्य से जोड़ती है। जिसमें एक व्यवसाय (बुनाई) अपनी कौशलता का परिचय देता है, वहीं दूसरा कार्य (कृषि)इनकी कर्मठता का परिचय देता है। इतिहास में इस जाति द्वारा चमड़े से जुड़े कार्य भी किए जाने के वक्तव्य मिलते हैं जो कि उस समय का मुख्य आधार था। समाज की महिलाएं अपनी कढ़ाई-बुनाई में वइस तरह के अन्य कौशलतापूर्ण कार्य में आज भी संलग्न रहती है।

मेघवाल समाज की संस्कृति भी काफी समृद्ध है। इस समाज में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में पारंपरिक वेशभूषा भिन्न-भिन्न है, क्योंकि इसका प्रभाव क्षेत्र विशेष के आधार पर पड़ना स्वाभाविक है। इस जाति की महिलाएं (अध्ययन क्षेत्र) वर्तमान में सलवार-कुर्ते को पहनना पसंद करती है, लेकिन पारंपरिक परिधान के रूप में ये लहंगा-कुर्ता (लहंगे को घाघरा और कुर्ते को जंफर कहा जाता है) पहनती है। आज वर्तमान में पारंपरिक परिधान के रूप में पहने जाने वाले लहंगे-कुर्ते का प्रचलन आधुनिकता के प्रभाव के कारण कम हो गया है।

पुरुषों में जहां प्रौढ़ पैंट-शर्ट और कमीज (लंबा)-पयजामा पहनने का प्रचलन है, वही वृद्ध पुरुष चद्दर (जिसे तहमद भी कहा जाता है) के साथ कमीज और धोती-कुर्ता पहनना अधिक पसंद करते हैं।तहमद-कमीज और धोती-कुर्ता इस जाति के पुरुषों का पारंपरिक परिधान माना जाता है।

आभूषण/गहने– मानव ने जब से सभ्य जीवन जीना सीखा तब से आभूषणों के उपयोग को अपने जीवन में सँजोया है चाहे वे आभूषण पेड़-पौधों की पत्तियां, फूल, पत्थर और मनके मोती आदि कुछ भी रहे हो।आभूषण एक व्यक्ति की समृद्धि और सुंदरता बढ़ाने के साधन है। ऐसा ही इस जाति में भी आभूषणों का प्रयोग किया जाता है।इस जाति में पूर्व में पुरुषों द्वारा आभूषणों का प्रयोग होता था लेकिन वर्तमान में पुरुषों में इनका प्रयोग कम हो गया है।इस जाति की महिलाओं में इनका प्रचलन आज भी पुरुषों की तुलना में काफी समृद्ध है।साथ ही इस समाज में बच्चों को आभूषण पहनाने का प्रचलन आज भी है, जो कि उनके जन्म के बाद से ही शुरू हो जाता है।

प्रसाधन में प्रथम सौंदर्य साधन के रूप में बच्चों (आँख में) को काजल लगाना है। साथ ही इस काजल का एक टीका उसके माथे के ऊपर एक तरफ नजर से बचने के लिए लगाया जाता है। यह काजल का टीका बच्चों के पैरों के तलवे पर भी लगाया जाता है।

काजल के अलावा इस जाति में बच्चों को पहनाएं जाने वाले आभूषण/गहने विशेषकर गले के आभूषण, हाथों-पैरों और कमर के आभूषण है। इस

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

क्षेत्र में इस समाज में कानों के आभूषणों का प्रचलन लड़कों में बिल्कुल नहीं है और ना लड़कों के कान आदि को छेदन किया जाता है। बल्कि लड़कियों के कान और नाक में छेड़ने की रिवाज है जिसमें वे क्रमशः छोटी बालियाँ और कोका पहनती है। यहाँ बच्चों संबंधित कान-नाक के अलावा आभूषणों के प्रचलन का विस्तार से अध्ययन किया जा रहा है।

तगड़ी- यह कमर का आभूषण है जो कमर के चारों ओर एक काले धागे में चांदी के घुंघरू पिरोकर बनाया जाता है।

कड़ले (कड़िया)- इस समाज में बच्चों के हाथों एवं पैरो में पहने जाने वाले कड़े होते हैं, जो विशेष कर चांदी के होते हैं।कड़लों में छोटे घुंघरू आदि भी लगे होतेहैं।

निजरिया- इस जाति में बच्चों के पैरों में काले धागे में काले मनके पिरोकर कर बांधे जाते हैं।कई बार इन कालेमनकों के साथ चांदी के घुंघरू भी पिरोये हुए होते हैं।

फूलड़ा- यह आभूषण बच्चों हेतु विशेष होता है, जो कि गले का आभूषण होता है।फूलड़ा एक धागा होता है जिसमें अनेक सांकेतिक चांदी के लॉकेट पिरोये हुए होते हैं। इसका वर्णन अलग-अलग निम्न प्रकार से किया जा रहा है-

चांद- यह है चांद के आकार का सांकेतिक लॉकेट होता है। जो चंद्रमा भगवान को समर्पित होता है।

सूरज-यह सूर्य भगवान को समर्पित लॉकेट होता है, जो कि गोलाकार बना होता है।

मावड़िया-यह लॉकेट मावड़िया या मावड़ीधिरानी(एक देवी जिसकी स्थानीय लोग पूजा करते है) को समर्पित होता है, जिस पर मावड़िया का चित्र उन्केरित होता है।

बाबा रामदेव को समर्पित लॉकेट- यह समाज अपने ईस्ट के रूप में लोक देव बाबा राम देव जी को मानते हैं, इसलिए ये अपने ईस्ट को समर्पित एक लॉकेट बच्चों के गले में बांधते हैं जिन पर पैरों के चिन्ह (पगल्या)उन्केरित होते हैं।

गोसाई जीको समर्पित लॉकेट-उक्त के अलावा भी इस समाज के फूलडे आभूषण में गोसाई जी को समर्पित एक लॉकेट भी होता है।

साथ ही इन पाँच के अलावा इसमें एक डोरा(पुजारी द्वारा मंत्रित) भी कपड़े में लपेट कर बांधा जाता है। आजकल चांद, सूरज,मावड़िया, बाबा रामदेव जी और गोसाई जी के लॉकेट के अलावा कांटा भीफूलड़े का एक भाग होता है। इसके अलावा इस समाज में एक कच्चे सूत से बना धागा (जिसे तांती कहा जाता है)जो रामदेव जी को समर्पित बांधने का भी प्रचलन देखा जा सकता है।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि इस समाज में बच्चों को पहनाए जाने वाले गहने बच्चे के सौन्दर्य प्रसाधन के साथ-साथ धार्मिक आस्था के भाव से पहनाए जाते हैं। जिससे स्पष्ट होता है कि ये सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान के धनी है और लोक देवी देवता और प्रकृति के उपासक है, क्योंकि इनके चाँद और सूरज के प्रति आस्था बचपन से ही होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. स्वामी गोकुलदास (1998) मेघवंश इतिहास, अजमेर: श्री सरस्वती प्रकाशन।
2. ताराराम (2011) मेघवंश इतिहास और संस्कृति भाग 1, 2 और 3. नई दिल्ली: सम्यक प्रकाशन।
3. परिहार,एम. एल. (2013)मेघवाल समाज का गौरवशाली इतिहास, जयपुर: बुद्ध पब्लिशर्स।
4. सिंह,आर. पी. (2014)मेघ वंश एक सिंहावलोकन, नई दिल्ली: रवि प्रकाशन।
5. औझा, डी.डी. (2018) जल प्रबंधन, जयपुर : सुरभि पब्लिकेशन।
6. वियोगी, नवल (2019)मद्र व मेघों का प्राचीन व आधुनिक इतिहास, नई दिल्ली: सम्यक प्रकाशन।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Innocence in a Corrupt World: Prince Myshkin as a Christ Figure in The Idiot

Dr. Rajkumari Sudhir*

*Asst. Professor (English) Govt. Sarojini Naidu Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract : This paper explores the portrayal of Prince Lev Nikolayevich Myshkin as a modern Christ figure in Fyodor Dostoevsky's novel The Idiot. Through Myshkin's embodiment of pure Christian virtue, Dostoevsky examines the possibility of absolute goodness in a morally compromised world. The paper argues that Myshkin's tragic fate illustrates the impossibility of sustaining pure goodness in a society that neither understands nor values it, highlighting the spiritual poverty and moral bankruptcy of the Russian aristocracy.

Introduction - Fyodor Dostoevsky's The Idiot (1869) is a profound philosophical and psychological novel that explores the possibility of absolute goodness in a morally compromised world. In Prince Lev Nikolayevich Myshkin, Dostoevsky attempts to create a character embodying pure Christian virtue—compassionate, humble, forgiving, and guileless. However, as the novel unfolds, it becomes painfully clear that such virtue is not only misunderstood but ultimately rejected by a society driven by egoism, materialism, and spiritual emptiness. This essay argues that Dostoevsky presents Myshkin as a modern Christ figure whose tragic fate illustrates the impossibility of sustaining pure goodness in a society that neither understands nor values it.

Morally Bankrupt World: From the moment Myshkin returns to Russia from a Swiss sanatorium, his distinctiveness is evident. His sincerity, lack of pretension, and genuine concern for others sharply contrast with the self-serving behavior of the Russian aristocracy. The General's family and their social circle regard him as naïve or even mentally deficient, failing to recognize the deeper moral clarity behind his simplicity. Myshkin is dubbed an "idiot" not because of a lack of intellect, but because his actions are governed by compassion and honesty rather than cunning or ambition (Dostoevsky 34). In this, Dostoevsky initiates his central question: can a truly good person survive in a morally bankrupt world?

Myshkin's Christ-like qualities: Myshkin's Christ-like qualities are evident throughout the novel. He consistently offers unconditional forgiveness, refrains from judging others, and approaches each person with empathy. His interactions with NastasyaFilippovna, in particular, highlight his redemptive intentions. Despite her repeated rejections and self-destructive behavior, Myshkin persists in seeing her as someone worthy of love and salvation. His proposal to her is not motivated by social convention or desire, but by an earnest wish to rescue her from a life of shame and degradation. In a world governed by transactional relationships and power struggles, Myshkin's selflessness appears incomprehensible and even threatening.

Concept of Beauty : The novel's most enigmatic and often-quoted line—"beauty will save the world" (Dostoevsky 233)—serves as a key to understanding Myshkin's worldview. While many around him interpret beauty superficially, Myshkin's concept of beauty is spiritual and moral. It is the beauty found in compassion, in the dignity of suffering, and in the possibility of redemption. In Nastasya, Myshkin perceives a tragic beauty rooted in her suffering and longing for purity. His love for her transcends physical attraction; it is a spiritual recognition of her value as a human soul in need of grace.

A Tragedy of Goodness : However, Myshkin's goodness does not inspire transformation in others; rather, it exposes their moral failings. As Malcolm Jones writes, The Idiot is "a tragedy of goodness: a parable of a saint crucified not by evil but by incomprehension" (Jones 201). Even those who admire Myshkin—like AglayaEpanchin—ultimately find his moral purity alienating. Aglaya is drawn to his innocence but desires a romantic hero who asserts strength through passion and dominance. Myshkin, by contrast, offers a quiet, sacrificial love that demands self-awareness and humility. In rejecting him, Aglaya joins the chorus of voices unable to engage with Myshkin on his moral and spiritual terms.

Destructive Triangle : The central tragedy of the novel culminates in the destructive triangle between Myshkin,

NastasyaFilippovna, and Rogozhin. Torn between Myshkin's offer of redemption and Rogozhin's obsessive desire, Nastasya embodies the conflict between spiritual longing and worldly despair. Despite multiple chances to accept Myshkin's love, she returns repeatedly to Rogozhin, ultimately meeting a violent end at his hands. Her murder is not just a personal tragedy—it signifies the annihilation of the hope Myshkin represents. That Myshkin responds not with judgment but by sitting silently beside Rogozhin's body, embracing him in grief, reinforces his Christ-like willingness to bear the sins of others.

Goodness in Practice: Dostoevsky closes the novel not with moral vindication but with defeat. Myshkin, shattered by Nastasya's death, suffers a final mental collapse and is sent back to Switzerland, his mission unfulfilled. As Joseph Frank observes, "Dostoevsky's Prince Myshkin is not merely a saintly figure; he is a test case—an experiment in goodness—and his failure suggests the limits of that in goodness practice" (Frank 358). The implication is clear: a society that lacks spiritual depth cannot accommodate true holiness. Myshkin is not destroyed by evil in the conventional sense, but by a world too fragmented, cynical, and emotionally stunted to receive him.

Goodness Appears as Foolishness : Religious and philosophical undertones permeate the novel. Dostoevsky, deeply influenced by Christian theology, constructs Myshkin as a figure who mirrors Christ not through miracle or doctrine, but through love, humility, and suffering. Yet the society into which Myshkin steps is one where religious values have lost their force. His failure is not simply narrative, but symbolic: in the absence of shared moral and spiritual frameworks, even divine goodness appears as foolishness. The novel thus becomes a meditation on modern alienation—the inability of people to connect across spiritual and ethical divides.

Voice of Compassion: In the end, The Idiot offers a sobering vision. Dostoevsky does not celebrate Myshkin's purity with triumph, nor does he condemn him as unrealistic. Rather, he presents Myshkin's life as a mirror to the society that encounters him. That mirror reflects not just cruelty or vice, but a terrifying emptiness: a world where goodness is mistaken for madness, and where salvation is neither sought nor recognized. Myshkin's descent into silence is not only a personal tragedy but a symbol of collective failure—the world's refusal to listen to its last remaining voice of compassion.

Conclusion: Dostoevsky's experiment in portraying a "positively good man" is thus both a philosophical challenge and a literary lament. In Prince Myshkin, he created a modern Christ whose rejection underscores the spiritual poverty of his time—and perhaps of ours as well. The Idiot remains one of Dostoevsky's most poignant and unsettling works because it dares to ask whether there is still a place for holiness in the modern world, and it offers no comforting answer.

References:-

1. Dostoevsky, Fyodor. The Idiot. Translated by Richard Pevear and Larissa Volokhonsky, Vintage Classics, 2003.
2. Frank, Joseph. Dostoevsky: The Miraculous Years, 1865–1871. Princeton UP, 1995.
3. Jones, Malcolm V. Dostoyevsky and the Dynamics of Religious Experience. Anthem Press, 2005.

****

Jurisdictional Issues in Cross-Border Cyber Crime

Dr. Surendra Singh Baghel*

***Director, Law Academy, Bhopal (M.P.) INDIA**

Abstract: The rapid evolution of digital technology and the borderless nature of cyberspace have posed significant challenges for the enforcement of laws across national boundaries. One of the most pressing concerns in this context is the issue of jurisdiction in cross-border cybercrimes. This paper explores the legal complexities, jurisdictional dilemmas, and international legal frameworks associated with prosecuting cybercriminals whose actions transcend geographic borders. It also evaluates case studies, discusses current cooperation mechanisms, and suggests recommendations for harmonizing jurisdictional practices.
Keywords: Cybercrime, Jurisdiction, International Law, Cross-border, Digital Forensics, Extradition, Cyber security.

Introduction - In the twenty-first century, cyberspace has revolutionized how societies function, how people interact, and how economies operate. The internet has transcended borders, enabling seamless communication, data exchange, e-commerce, and governance across nations. While the digital age has ushered in innovation and interconnectivity, it has also paved the way for new forms of criminal behavior that challenge the traditional boundaries of law enforcement and jurisdiction. Among the most pressing legal challenges posed by this digital revolution is the rise of **cross-border cybercrime**, which often involves actors, victims, and digital evidence scattered across multiple jurisdictions.

Cybercrime, by its very nature, is transnational. A cybercriminal sitting in one country can launch attacks affecting individuals, organizations, or critical infrastructure in another continent. Common forms of such crimes include identity theft, financial fraud, ransomware attacks, hacking into government or corporate networks, distribution of child sexual abuse material, and coordinated misinformation campaigns. These crimes often involve complex digital trails and anonymized communications, making it difficult to identify perpetrators and enforce the law. The anonymity and global reach of cyberspace have created a legal vacuum, wherein traditional principles of criminal jurisdiction—territoriality, nationality, and universality—struggle to cope with the dynamics of digital crime.

Jurisdiction, in legal parlance, refers to the authority of a state to make and enforce laws. In cybercrime scenarios, the exercise of jurisdiction becomes complicated due to the borderless nature of cyberspace. Key questions arise: Which country has the legal authority to investigate and prosecute a cybercrime? Can one state compel a foreign technology company to disclose data stored on servers abroad? What happens when laws of two or more countries conflict over data access or definitions of crime? These are not hypothetical questions but pressing realities that law enforcement agencies, courts, and policymakers grapple with daily.

The lack of a unified international legal framework on cybercrime exacerbates these challenges. While treaties like the **Council of Europe's Budapest Convention on Cybercrime** (2001) provide a foundational legal framework for cooperation among member states, their efficacy is limited by the non-participation of several major nations, including China and Russia. Moreover, even among participating countries, differences in legal definitions, privacy protections, and procedural rules hinder seamless cross-border cooperation. India, for example, is not a signatory to the Budapest Convention and has often found itself navigating bilateral or ad hoc arrangements in handling transnational cybercrime investigations.

India's own legal response to cybercrime is governed primarily by the **Information Technology Act, 2000** (amended in 2008), alongside provisions of the Indian Penal Code (IPC). The IT Act provides legal recognition to electronic transactions and penalizes cyber offenses such as hacking, identity theft, and data breaches. However, the Act has limitations when it comes to enforcing jurisdiction in cross-border contexts. For instance, while Section 75 of the IT Act asserts India's jurisdiction over offenses committed outside the country by any person if the act

involves a computer system located in India, the enforcement of such provisions depends heavily on international cooperation, mutual legal assistance treaties (MLATs), and diplomatic coordination.

A significant impediment in addressing cross-border cybercrime lies in the **fragmented nature of digital evidence**. Data relevant to a crime may be stored on cloud servers in another jurisdiction, controlled by foreign tech companies governed by their domestic laws. In such situations, Indian law enforcement agencies may face delays or denial of access due to conflicting privacy laws, lack of treaties, or political tensions. The rise of **data localization debates**, such as those surrounding India's Personal Data Protection regime, further complicates international cooperation, raising concerns about digital sovereignty versus global interoperability.

Moreover, **attribution of cyberattacks**—identifying the actual perpetrator—is fraught with technological and political challenges. Cybercriminals often use VPNs, botnets, and anonymization tools to mask their identities and locations. In cases where state-sponsored actors are involved, cyberattacks may be intentionally routed through multiple jurisdictions to obfuscate the source, leading to geopolitical implications. The legal question of holding a foreign government accountable for cyber operations targeting another state's infrastructure or citizens brings in aspects of international law, state responsibility, and diplomatic norms.

The paper aims to explore these multifaceted jurisdictional issues in detail. It will begin by analyzing the **foundational principles of criminal jurisdiction**—territorial, personal, protective, passive personality, and universal jurisdiction—and how they apply (or fail to apply) in cyberspace. The study will then assess **key international legal instruments**, such as the Budapest Convention, the Tallinn Manual on International Law Applicable to Cyber Operations, and relevant United Nations resolutions, in the context of jurisdictional enforcement.

Special attention will be paid to **India's legal and policy framework**, its engagements with global treaties, and the practical challenges Indian agencies face in cross-border investigations. Case studies such as the **Wanna Cryran somware attack**, the **Cambridge Analytica data scandal**, and **targeted phishing attacks on Indian government agencies** will be examined to illustrate real-world jurisdictional dilemmas. Additionally, the paper will evaluate the role of **mutual legal assistance treaties (MLATs), letters rogatory (LRs), and bilateral agreements** in facilitating or hindering international cooperation in cybercrime cases.

Furthermore, the research will discuss the **evolving role of multinational tech companies** like Google, Facebook, Microsoft, and Apple in digital law enforcement. These companies often act as intermediaries between law enforcement agencies and end-users, holding vast troves of sensitive data. Their policies on data access, transparency reports, and resistance to certain government requests present new layers of complexity in cross-border jurisdiction.

2. Understanding Jurisdiction in Legal Context: Jurisdiction is the authority granted to a legal body to administer justice within a defined field of responsibility. It includes:

i. Territorial jurisdiction: Authority over events or persons within a specific geographic area.

ii. Personal jurisdiction: Authority over individuals or entities involved in a legal matter.

iii. Subject matter jurisdiction: Authority over certain types of legal issues. In the realm of cybercrime, these traditional jurisdictional categories become complicated when cyber activities transcend national borders.

3. Nature of Cross-Border Cybercrime: Cross-border cybercrime refers to criminal acts carried out using information and communication technologies (ICT) that involve elements or actors in multiple jurisdictions. Common types include:

i. Phishing and identity theft
ii. Ransomware attacks
iii. Distributed Denial of Service (DDoS) attacks
iv. Online fraud and money laundering
v. Hacking and data breaches These crimes often involve victims, perpetrators, servers, and financial transactions located in different countries, complicating enforcement.

4. Jurisdictional Challenges in Cybercrime Cases:

i. Multiplicity of Jurisdictions One cybercrime act may implicate multiple countries, leading to conflicts over which state has the primary authority to investigate and prosecute.
ii. Attribution and Anonymity Cybercriminals often hide their identity using encryption, VPNs, and proxy servers, making it difficult to trace the origin of the attack.
iii. Extraterritorial Application of Laws Countries like the U.S. apply their laws extraterritorially in cybercrime cases, which can lead to diplomatic tensions and legal conflicts.
iv. Lack of Harmonized Legal Standards Different countries define cybercrimes differently and have varying levels of cybersecurity laws, making cooperation challenging.
v. Issues with Digital Evidence Collection, preservation, and admissibility of digital evidence across borders face legal hurdles due to data protection and privacy laws.

5. Case Studies Illustrating Jurisdictional Complexities:

i. Yahoo Data Breach Case (2014) Russian hackers breached Yahoo's systems affecting 500 million accounts. The U.S. indicted the perpetrators, but extradition from Russia was not possible due to the

absence of an extradition treaty.

ii. WannaCryRansomware Attack (2017)Attributed to North Korean actors, the attack affected organizations in over 150 countries. The global spread complicated attribution, legal action, and cooperation.

iii. Microsoft v. United States (2013) The U.S. government sought access to emails stored on servers in Ireland. The case raised questions about jurisdiction over data stored overseas, eventually leading to the CLOUD Act.

6. International Legal Frameworks and Cooperation Mechanisms:

i. Budapest Convention on Cybercrime (2001)The first international treaty aimed at addressing cybercrime, promoting harmonization of laws and mutual assistance.

ii. Mutual Legal Assistance Treaties (MLATs) Formal agreements between countries to facilitate cooperation in criminal investigations. However, MLATs are often criticized for being slow and bureaucratic.

iii. Extradition Treaties These treaties are essential for transferring cybercriminals between countries. The absence of such treaties hampers enforcement.

iv. Interpol and Europol Initiatives These agencies provide platforms for intelligence sharing and coordinated operations but lack enforcement powers.

v. CLOUD Act (U.S.) Allows U.S. law enforcement to access data stored abroad and supports bilateral agreements with foreign countries to access electronic evidence.

7. Recommendations for Addressing Jurisdictional Challenges:

i. Harmonization of Cybercrime Laws Encouraging uniform definitions and penalties for cybercrimes across countries.

ii. Faster and Transparent MLAT Procedures Streamlining mutual legal assistance processes to enable quicker evidence sharing.

iii. Developing Multilateral FrameworksExpanding conventions like the Budapest Convention to include more countries and update provisions for emerging threats.

iv. Public-Private Partnerships Involving technology companies in evidence preservation and threat intelligence sharing while ensuring compliance with data privacy laws.

v. Capacity Building and Technical Assistance Providing resources and training to developing countries for cybercrime investigation and digital forensics.

vi. Creating Cybercrime Courts or Tribunals Establishing specialized courts for transnational cybercrime cases under international law.

Conclusion: Jurisdictional issues in cross-border cybercrime are a significant hurdle in the global fight against digital threats. While the cyber realm defies physical boundaries, law enforcement remains bound by territorial limits. International cooperation, harmonization of laws, and the development of faster, more efficient legal instruments are crucial to effectively combat cybercrime. The path forward requires not only legal innovations but also a collaborative global effort involving governments, corporations, and international bodies.

References:-

1. Council of Europe. (2001). Convention on Cybercrime (Budapest Convention).
2. Brenner, S. W. (2010). Cybercrime: Criminal Threats from Cyberspace. Praeger.
3. Clough, J. (2015). Principles of Cybercrime. Cambridge University Press.
4. United Nations Office on Drugs and Crime (UNODC). (2013). Comprehensive Study on Cybercrime.
5. Kerr, O. S. (2005). Cybercrime's Scope: Interpreting "Access" and "Authorization" in Computer Misuse Statutes. *NYU Law Review*.
6. Chawki, M., &Wahab, M. A. (2009). Criminalization of Cyberporn under International Law. *Journal of Information, Law and Technology*.
7. SolangeGhernaouti-Hélie. (2013). Cyber Power: Crime, Conflict and Security in Cyberspace. CRC Press.
8. U.S. Department of Justice. (2018). Clarifying Lawful Overseas Use of Data (CLOUD) Act.
9. Interpol. (2021). Cybercrime – Understanding and Tackling Threats.
10. Europol. (2022). Internet Organised Crime Threat Assessment (IOCTA).

****

An Analytical Study on the Rise in Juvenile Crime and the Impact of Drugs

Vikram Singh Chandel* Dr. Mahesh Prasad**

***Research Scholar, SOS Jiwaji University, Gwalior (M.P.) INDIA**
**** Assistant Professor at Government SMS PG College, Shivpuri (M.P.) INDIA**

Abstract: Due to its growing prevalence, juvenile crime has become a major issue in modern society, garnering attention from psychological, social, and legal standpoints. This study examines the link between the increase in juvenile delinquency and the growing impact of drug use among adolescents using analytical methodology. Among the main causes of this occurrence, the study examines peer pressure, socioeconomic difficulties, inadequate parental supervision, and exposure to drug culture. The trends and nature of offenses committed under the influence of narcotic drugs are highlighted in this research through an examination of data from field interviews, rehabilitation facilities, and juvenile justice records. Additionally, it examines the psychological and behavioral effects of drug use on adolescents, which contribute to impulsivity, aggressiveness, and repeated offenses. Additionally, the study analyzes current legislative frameworks and rehabilitation strategies designed to promote prevention and reintegration. To address this twin threat, the data emphasizes the critical need for comprehensive intervention strategies that include community participation, drug education, and reforms to juvenile justice. The goal of this study is to help foster a more knowledgeable policy conversation and the successful application of preventative strategies.
Keywords: Juvenile Delinquency, Drug Abuse, Substance Influence, Adolescent Behavior, Criminal Psychology, Narcotic Impact, Juvenile Justice System, Rehabilitation, Preventive Measures, Peer Pressure, Socio-economic Factors, Legal Framework, Social Intervention.

Introduction - To promote a pleasant ambiance for a more enjoyable visit, all criminal behavior should be handled with the greatest urgency. The objective of this study is to identify the reasons for the rise in juvenile offenses and the impact of drugs on crimes committed by adolescents. Legislators, teachers, and the general population have all expressed significant concern about the startling rise in juvenile crime in recent decades. The kinds of offenses committed by adolescents have changed dramatically. Previously, juvenile crime was limited to petty theft or misconduct, but it now includes serious offenses such murder, drug trafficking, and assault. A key and concerning factor contributing to this increase is the increasing drug use among adolescents. A significant number of youngsters have resorted to substance abuse and criminal behavior as a result of the interplay of socioeconomic factors, peer pressure, inadequate parental supervision, and the prevalence of psychotropic medications and narcotics.

Teen drug addiction not only impairs their decision-making but also encourages impulsive conduct and aggressive tendencies, which often result in legal problems. The early years of adolescence, when one's character and morals are still forming, are especially vulnerable to negative impacts. Drug abuse acts as a trigger, either causing or exacerbating criminal inclinations in youth who are typically not violent. The complex relationship between youth crime and substance usage is influenced by a number of psychological, social, and environmental variables, which need to be carefully analyzed.

Using a multidisciplinary strategy, this research aims to investigate and evaluate the rising link between drug abuse and juvenile delinquency. The psychological impact of drugs on the minds of teenagers, the socioeconomic circumstances of young offenders, and the nature of offenses committed under the influence of drugs will all be investigated. In an attempt to assess the efficacy of existing systems in preventing juvenile crime related to drug addiction, the research will also examine current laws, institutional responses, and rehabilitation programs.

This study examines the underlying causes and key trends in an effort to offer evidence-based strategies for mitigating this dual threat to youth and society. The primary goal is to assist in the development of all-encompassing and preventative frameworks that emphasize early intervention, education, and rehabilitation over punitive measures alone.

'Juvenile' term under The Juvenile Justice (Care and Protection) Act, 2015:

We immediately picture a minor who is in trouble with the law when the term juvenile crosses our thoughts. This could be because prior legislation in India pertaining to juvenile justice concentrated more on juvenile offenders and paid less attention to other minors under the age of 18. However, the definition of "juvenile" has been expanded by the 2015 Juvenile Justice (care and protection) Act. The Juvenile Justice Act defines "child" under section 2(12) as any individual who has not yet reached the age of 18. Sections 2(13) and 2(14) distinguish between a child who has come into conflict with the law and a child who needs care and protection. But Section 2(35) defines juveniles as any child who has not turned 18 years old, regardless of whether they are a child with a conflict of law or a child in need of care and protection. Children from the slums, who are caught in the vicious snare of drug addiction and ultimately become either a child in conflict with the law or a child in need of care and protection, are the focus of this study.

Objectives of the Study:

1. To examine the relationship between drug usage and the trends in adolescent crime.
2. To ascertain the social, economic, and psychological variables that contributes to drug misuse.
3. To look at current legal frameworks for dealing with crimes committed by juveniles and those involving drugs.
4. To recommend rehabilitation and preventive measures.

Research Methodology: This study is both qualitative and quantitative. Its foundation is based upon:

1. Secondary Data: Government publications, judicial rulings, UNODC databases, and NCRB reports.
2. Case Studies: Chosen juvenile offenders with drug-related histories.
3. Interviews: Interviews with psychologists, probation officers, and NGOs to gather insights.

The majority of the research is concentrated on Indian cities during the previous ten years (2013–2023).The rate of juvenile crime in India rose from 6.4 per lakh in 2013 to 7.9 in 2022. Almost 18% of all juvenile crimes are drug-related juvenile arrests. Juvenile drug users are more likely to commit repeated offenses.

Drug crime cycle of juveniles: Researchers have known for over 20 years that drug use is linked to crime among adolescents. Most young people entering the justice system are drug users, and studies show this drug use often leads to ongoing violent crimes into adulthood. It is also connected to poor health, bad family relationships, and lower school performance. These issues can increase the chance of homelessness among youth, forcing them to engage in crime to support their drug habits. As they struggle with addiction, they may become estranged from family and end up on the streets, seeking companionship with others in similar situations.

Children in slums often turn to minor crimes like theft and fraud to support their drug addiction, creating a harmful cycle of drugs and crime. This issue affects kids from various backgrounds, but those in impoverished areas face greater risks due to their dangerous environments. Many slum children lack proper adult care and must fend for themselves, which increases their vulnerability, especially when drugs are readily available. The typical way these children maintain their addiction is through small crimes, as they have no other means to support themselves. Thus, a child already victimized by society becomes a juvenile offender without a fair chance.

Indian laws, particularly the Juvenile Justice Act of 2015, recognize that children under 18 may not fully understand the consequences of their actions, advocating for their reform and reintegration into society. Unfortunately, many slum children are deprived of necessary resources for healthy development, such as care, education, and understanding of their choices. Their tough circumstances adversely affect their mental health, leaving them with little hope for a better future. Comprehensive development and early intervention are essential for rehabilitating these youth, ensuring they don't revert to drug use after treatment.

Factors responsible for drug abuse in the juveniles:

1. Illiteracy: The majorities of slum residents are reliant on their daily income and make a living from day to day. In such a living environment, it is already difficult to put food on the table. Anything beyond the essentials like food, water, and rent is seen as a luxury, with education and schooling being the least. Despite the fact that the government has established a number of free education programs and facilities for youngsters, they would rather assist their parents in making money or are uninterested because they lack a culture of education. Therefore, children who are not in school are still ignorant of the effects of drug misuse, and by the time they do, the harm has already been done.

2. Poverty: The people who live in slums struggle with poverty and terrible financial circumstances. Due to a lack of resources and economic prospects, slum inhabitants resort to organized crimes like drug trafficking, illegal manufacturing, and the sale of counterfeit items. These give youngsters around them easy access to psychotropic drugs and narcotics.

3. Family and Surrounding Juveniles who are either drug users or encourage drug usage for financial gain, drug usage may be common for youngsters in the slums' families and neighborhood. The surroundings of such homes and families are also typically harmful and dangerous for young people. In addition to physical, sexual, and emotional abuse from their families and peers, children from drug-abusing families also experience feelings of vulnerability, rage, depression, and lack of motivation to continue with their lives, leading the majority of children in need of mental support and adequate encouragement to turn to drugs and substance misuse. Most teens quickly transition

from being drug abusers to being drug addicts in an effort to experience transient happiness and liberation from their harmful surroundings.

4. **Peer Pressure:** The majority of slum youths are members of peer groups that participate in criminal gangs or groups. Because teenagers experience numerous psychological and physical changes during this time, they are more susceptible to the effects of antisocial peers and the impulse to experiment with new things, which leads them to misuse drugs.

5. **Sexual abuse** The majority of slum children reside on the streets, which are the least secure places for a child's growth. Local gangs or criminal organizations take advantage of their vulnerability to the hostile environment. In exchange for cash, food, housing, or drugs, they eventually engage in 'survival sex work.These early sexual experiences encourage young minds to engage in sexual activity and commit sexual offenses both inside and outside their own social class. Due to their ignorance and mental condition, young women are once more defenseless against sexual assault.

6. **Absence of motivation and inspiration:** A young mind needs inspiration just as a plant needs water. A youngster may not have a purpose or goal in life without the right encouragement and direction. A child's behavior is monitored by goals and routines, which also help them, maintain concentration. In the worst-case scenario, slum youngsters lack a role model or have the wrong role models in their life, which causes them to be despondent and pushes them to seek short-term relief from drug misuse, leading to a solitary, unproductive, and meaningless existence.

Juvenile justice act impacts youth drug misuse: The Juvenile Justice (Care and Protection) Act, 2015, provides the rules for the juvenile justice system in India. It focuses on young people with drug addictions and emphasizes the need for proper rehabilitation in Section 93. The system is responsible for the safety and rehabilitation of young offenders and should have the final say on case management and treatment. A 2018–19 survey by the NCRB showed that Child Care Institutions did not understand the Juvenile Justice Act. This raises concerns about the increasing drug use among young people, as inadequate rehabilitation may lead them back to drug habits after leaving institutions. Understanding and implementing the "FIT FACILITY" standards in all Child Care Institutions is essential.

The juvenile delinquency system has not been successful mainly because it overlooks that many juvenile offenses stem from factors like peer pressure, poor self-control, and mental health issues. Past efforts to use rehabilitation and court involvement have not worked well. Parents play a crucial role in understanding their children's strengths and weaknesses, and their insights should be considered to help reform young offenders effectively. However, children often feel protected by laws against parental punishment, which can lead them to engage in harmful behaviors, like drug use. Despite biblical teachings on obeying parents, many youths choose to take legal actions against them rather than discussing issues openly. The best corrective measures for young people should come from their parents or guardians, who have a significant background and influence on their moral development.

Appropriate penalties for individuals who commit violent crimes: Juvenile offenders often face harsh punishment for minor crimes linked to emotional outbursts and poor self-control, while adults committing serious crimes receive lighter sentences. The lack of discipline from parents can lead to future issues. It is suggested that juvenile offenders undergo medical examinations to assess their mental health before punishment, as many may not be fully responsible for their actions. Instead of corporal punishment, addressing the root causes of their behavior is preferred. Counseling groups should help guide these youths back to normal activities with proper supervision.

Children should be allowed to join anti-drug campaign groups to influence their views on drug use. Current views oppose punishing children due to parents' concerns about their responsibilities. While kids have the right to report abuse in America, issues are worsening. Parents know their children best and can address their issues. Punishing children is now seen as inappropriate.

Typical Drug-Related Offenses Include:

1. Stealing and breaking into houses in order to obtain
2. Assault while intoxicated
3. Drug trafficking by juvenile gangs

Literature Review: The relationship between drugs and juvenile crime has been the subject of extensive research: **Radha, Rajvardhan (2023)** says that Today's culture recognizes the serious issue of drug and alcohol misuse, viewing addiction as a chronic illness rather than a choice. Users often become dependent, believing substances are vital to their comfort. Laws should provide health services for those affected to help them reintegrate into society. Reducing stigma through awareness and support is essential for understanding and treatment.• According to UNODC (2021), more than 60% of young people who commit crimes have a history of drug usage.

C. Dhawan's (2020) research article, "Drug Abuse in Indian Slums," analyzes substance abuse patterns and societal factors in Indian slum communities. It highlights challenges faced by children and suggests intervention strategies for support in these marginalized areas.

1. According to the NCRB (India), there is a steady increase in the number of drug-related juvenile crimes in urban areas.
2. Peer pressure and broken homes were highlighted by **Shekhar and Rani (2019)** as key factors in drug use among teenagers.

The relationship has been analyzed using theoretical

models like strain theory, social learning theory, and routine activity theory.

Social and psychological elements:

1. Family neglect, maltreatment, and inadequate parental supervision
2. Peer pressure and gang mentality
3. Psychological health problems such as trauma and depression

Legal Regulations and Institutional Procedures:

1. Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015 – Establishes rehabilitation-focused mechanisms and defines children. Sections 15 and 18 address serious crimes committed by children between the ages of 16 and 18.
2. NDPS Act, 1985 – Deals with the crime of drug possession and trafficking. No specific regulations exist for minors who use drugs.
3. The role of rehabilitation centers, the Juvenile Justice Board, and the CWC is crucial in evaluating the offender's mental state. Rehabilitation, counseling, and vocational training are all essential components.

The role of police officers as street social workers: Criminal activity has advanced with new technology, allowing criminals to exploit young people with drugs to commit crimes. To improve how police engage with youth and children, there has been a focus on long-term training and professionalism. This includes hiring better-educated officers and providing ongoing training to develop specialized areas. The objective is to enhance crime control by making police more central in delivering social services, especially in areas where social workers may be lacking.

The police officer understands that peer pressure and low self-esteem can lead to teenage delinquency. Knowing the reasons behind drug use is crucial. For example, if a parent discovers their child using drugs, it may be challenging to break that habit if the child is under the influence. The police have played a significant role in helping young people, such as bringing lost or stranded youth to recreation centers and guiding them safely through complex traffic systems. Nowadays, police officers often take on roles similar to social workers, which require professionalism and personal skills. This has shaped public perception, leading many to believe that police are there to support and collaborate with the community.

The effect of drugs on juvenile delinquency: Studies in America show a recent decline in youth drug use, but the number of young people using drugs remains high. Drug misuse can lead to antisocial behavior, health problems, and criminal activities, affecting individuals, families, communities, and society as a whole. Young people under the influence of drugs pose risks because they may turn to theft, robbery, or mismanage finances to support their habits, or they may drop out of school due to poor performance and frustrations.

Addiction can hurt self-esteem and self-control, leading to minor infractions that drugs might have prevented. The use of hard drugs is linked to increased sexual activity, and many boys and young men have been involved in serious crimes such as rape. Some offenses committed by youths under the influence are minor and require only slight corrections, but their inability to acknowledge these offenses due to drug use can lead to prolonged involvement in delinquency. Unlike adults, who might reflect on their behavior, young people often do not understand the consequences of their actions due to their reliance on parental support, resulting in a significant impact on juvenile delinquency.

Case Study:

1. In Delhi Case, 2021: A 17-year-old who participated in chain snatching confessed to committing robbery while high on heroin.
2. In Mumbai case, 2022: Because the penalties for juveniles are so low under the law, a drug ring employs them as peddlers.

These instances demonstrate how easily drugs can be used to manipulate vulnerable youth into criminal behave

Study examination: Young people living in India's slum areas face a higher risk of drug misuse due to their environment. Despite government efforts like Drug Action Plans and Drug Awareness Policies, there is often a gap between planning and actual execution. Slums are more isolated and neglected compared to regular neighborhoods, making it harder to implement awareness initiatives. Many slum residents lack education, which hampers effective outreach, as awareness campaigns are usually introduced in schools, and few slum children participate in formal education.

Reintegrating these children into a well-rounded education system, like the Sharva Sikhsha Abhiyan, could help address the issue by providing appropriate counseling and support. Regular state-sponsored surveys in high-risk slum neighborhoods could identify the extent and causes of drug use, allowing for targeted awareness campaigns. Strict monitoring in slums might reduce drug use and the spread of drug-related crimes. Additionally, Drug Action Plans should focus on establishing free De-Drug Addiction centers for easy access, enabling drug victims to seek help.

Finding:

1. There is a clear link between drug misuse and the rise in adolescent crime.
2. There are legal loopholes in addressing adolescent substance abuse.
3. Rehabilitation facilities are understaffed and underfunded
4. Social welfare organizations and law enforcement authorities are not adequately coordinated.

Recommendations:

1. Integrated de-addiction programs inside observation homes and schools.
2. Programs for raising parental awareness that keep an

eye out for the warning indicators of substance usage.

3. Providing at-risk children with employment prospects and skill-based training.
4. More stringent oversight of the distribution of narcotics in the vicinity of schools.
5. Modifying the NDPS Act to include rehabilitation clauses tailored to minors.

Conclusion: Parental involvement in issues pertaining to their children may help curb juvenile delinquency and reduce the possibility that youngsters will use drugs at a young age. But in America, no matter how many the children are offended, they should not be given the right to convict their parents in a court of law; this would result in an increase in criminal behavior since the children would no longer follow the commands of their parents.

References:-

1. C.Dhawan. (2020)"Drug abuse in Indian slums", IJPSL Vol 1, Issue 1
2. Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015
3. Ministry of Women and Child Development, Government of India
4. Narcotic Drugs and Psychotropic Substances Act, 1985
5. National Crime Records Bureau (2013–2023)
6. Radha, Rajvardhan (2023), International Journal of Law, ISSN: 2455-2194 Received: 16-11-2023, Accepted: 02-12-2023, Published: 18-12-2023 Volume 9, Issue 6, 2023, Page No. 219-222-www.lawjournals.org
7. Shekhar, R., & Rani, M. (2019). "Youth and Drugs: A Psychological Analysis"
8. United Nations Office on Drugs and Crime (UNODC) Reports
9. Whitehead, J.T. & Lab, S.P. (2010). 6th Edi. Juvenile Justice. New York: Academic Books.

Websites:-

1. https://ijarsct.co.in/Paper19552.pdf
2. https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC4919962/
3. https://www.ijisrt.com/assets/upload/files/IJISRT23SEP1112.pdf
4. https://www.researchgate.net/publication/359820228_An_Analytical_Study_of_Juvenile_Delinquency_in_India_ with_Reference_to_2021

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Study of the Contribution of Freedom Fighter of Barwani District (Present) of Nimar Region Mr. Kashinath Trivedi

Dr. Madhusudan Choubey*

*Associate Professor (History) PMCOE SBN PG College, Barwani (M.P.) INDIA

Abstract: The golden chapter in the history of modern India is freedom struggle. Many Gandhian freedom fighters have been active during that time in the present Barwani district area. Among them, Shri Mithulal Jain, Shri Shivnath Prasad Gupta, Shri Ramratan Sharma, Shri Babulal Soni, Shri Prabhudayal Choubey, Shri Ghanshyam Mundada, Shri Dayaram Horse, Shri Surajmal Lunkad, Shri Dhannalal Kalusa, Shri Natthuprasad Patel, Shri Ramchandra Kumravat, Shri Ramchandra Kumravat, Shri Kashinath Trivedi, Sri Kalavati Bai Pati Kashinath Trivedi, Sri Narayan Trivedi, Shri Mansharam Verma, Shri Narayan Soni, Shri Mangal Prasad Srivastava and Shri Dasharatha Soni are named in the Collector Office of Barwani district as the fighter of the Quit India Movement. Apart from these, there were more freedom fighters like Shri Narayan Choubey, who tried for freedom.

Shri Kashinath Trivedi and his wife Mrs. Kalavati Trivedi played an active role in the national movement. He used to have a continuous contact with the Father of the Nation Mahatma Gandhi. The letter received from Bapu proves this fact.

In this research paper, the discussion of his life and contribution is being presented.

Keywords- Freedom struggle, nationalism, Gandhism, Nimar region, Satyagraha.

Introduction - Shri Kashinathji Trivedi was an exclusive Gandhian and loyal freedom fighter. He operated the freedom struggle in Nimar region in a planned manner. He is also known as 'Gandhi of Nimar'. The interpretation of his living and achievements is being presented.

1. **Birth-** Freedom fighter Shri Kashinathji Trivedi was not born in the Nimar region. But he was born on February 10, 1906 in the Digthan village of a jagir in the old Gwalior state. Shri Kashinath's father Shri Narayan Rao Trivedi was a government employee in the Barwani princely state. Due to this, Kashinath ji was brought up in the Barwani region of Nimar. Then he settled here and gave impetus to the freedom struggle in this area.

2. **Family Status -**His father Shri Narayanrao Ji Trivedi had a government job and was working in the princely state of Barwani. Being from a middle -class family, his family situation was good. His family also had social reputation. The economic situation was also good. This is the reason that he did not face any kind of internal difficulties in childhood.

3. **Education-**Shri Kashinathji Trivedi was very wise in reading since childhood. Your early education was completed in Ujjain. After completion of his early education, he passed the high school examination from Ujjain in 1923. In 1928, he graduated from the college of Indore. Thus, he was a relatively highly educated person among his contemporary freedom fighters. In those days, it was considered a great achievement to get education up to graduates.

4. **Sources of livelihood-**The source editing and teaching of Shri Kashinathji Trivedi was. From 1928, he started working as co -editor in Ajmer's sacrifice. In 1929, he became the Editor of Hindi Navjivan[1]. Living in Sabarmati, non -Hindi speakers study Hindi language. From September 1931 to December 1932, he worked as a Acharya of Jain Guru (Godud) in the village Chhoti Sadri in Udaipur (Rajasthan).

5. **Inspiration for participation in freedom struggle-** Shri Kashinath Trivedi's arrival in the freedom struggle occurred in the Gandhian era. He was greatly influenced by Mahatma Gandhi's views. Therefore, after completing his studies, he came into contact with Mahatma Gandhi in 1929 AD[2]. He went to the Sabarmati Ashram to commit Gandhiji's ideas and take inspiration of the freedom struggle from him. He understood the revolutionaries of the freedom struggle and their activities in the ashram very carefully and got inspiration to struggle to gain freedom.

"For the first time, Mahatma Gandhi fought the freedom of India with the strongest power of the world with the power of the world by making weapons of truth, non -violence and love as weapons of eternal religion. he (Shri Kashinath Trivedi) are soldier of the army of that freedom struggle[3]."

When Pattabhisitaramaia visited Madhya Bharat, Mr. Trivedi stayed with him as his interpreters.

He was also in touch withlabor union. In 1935, he went to Wardha. Here till 1940 AD, he taught in the ashram.

6. Contribution to freedom movement -Shri Kashinathji Trivedi had done many important works for independence. In 1929 AD, he came in contact with Mahatma Gandhiji in 1929 AD[4]. After this he was in constant contact with Mahatma Gandhiji. He always used to inform Gandhiji abouthis activities, Throughcorrespondence. Mahatma Gandhi used to take his letters seriously and also gave answers in due course[5].

When the labor union was established, Mr. Haribhauji handed over the work of the labor union of Indore. Till 1934 AD, he worked with the labor union in Indore. After this, Shri Jamnalal Bajaj called him to Ahmedabad for the work of Charkha Sangh of All India Freedom Association. Its president was Mahatma Gandhi. From 1934 AD to 1936 AD, he discharged the responsibility of the Publication Officer of Charkha Sangh.

From 1936 AD to 1940 AD, he worked as the Director, Acharya and Hindi teacher in the Women's Ashram of Wardha. Later, in 1941-42 AD, Harijan was the assistant editor of the servant. Meanwhile, the Quit India Movement was started in 1942 AD by Mahatma Gandhi. From here, he started working against the British and spreading the spirit and nationality in the public. He was very impressed with Mahatma Gandhi's views, so he did peaceful work against British rule. Thus, along with knowing Gandhiji's ideas, he also got an opportunity to stay in his ashram for a long time.

In view of the intensity of the movement, the British started arrest. In this perspective, he was also arrested for working for Quit India Movement.

7. Jail Yatra-The British government arrested him on 13 December 1942 in Sevagram due to active participation in the Quit India Movement in 1942 AD. From 13 December 1942 to 31 December 1942, he were kept in Jail of Wardha Tehsil. After this, from 1942 AD to 1945 AD, his Nagpur remained as a royalty in the Central Jail[6]. After being released from jail, he took up the work of Harijan seva.

8. Status after independence- Central India was built in May 1948 and he became the first Education Minister of the Government of central India in 1948-49 AD. he adorned this post from May 28, 1948 to January 6, 1949 AD. In July 1949, he was elected President of the Provincial Congress. He bear this responsibility till 1951 AD.

Even after the independence of the country, he did not become inactive. In August 1949, he went to Italy to join the Thirteenth International Montsary Council and presided over a session of the council there.

In 1951-52 AD and 1954-55 AD, he remained connected with the Gandhi Memorial Fund of the state. In the middle time, he worked as the administrative teacher of a government village servant school in Agra. From 1956 AD, he operated the village Bharti Ashram of Tawlai Village Provincial Gandhi Nidhi in Dhar district. Through this, tribals were served through various creative tendencies.

In this way, Mr. Kashinath ji proved to be a really multiple personality. With journalism, Congress politics and creative tendencies, he has done continuous work for child teaching, new training and literature creation. he successfully translated a large number of books into Gujarati, Marathi, English and Hindi. Editing and publishing 'Hindi teaching magazine' for twenty years. It was your special good fortune that he got enthusiastically participated in the same national ideas and movements like Mrs. Kalavati ji.

He was inspired by Mahatma Gandhi's thoughts and he kept getting a continuous correspondence with him. Gandhiji gave him guidance through these letters[7]. He was also alert towards the environment and that is why he opposed the 'Narmada Dam construction' and was the motivator of the Narmada Bachao Movement.

He made a huge contribution in children's rights, prestige, meaningful child education through creative imagination. As a minister, he banned giving physical punishment to children. In this way, due to his multiple tasks, he received various awards. The Government of India and the Government of Madhya Pradesh honored him. He received the Jamnalal Bajaj Award in 1995 AD[8]. His services were appreciated by the Madhya Pradesh Congress Committee (I)[9].

He also got many awards for literature. Among which 'Sahitya Chakravarti', 'Sahitya Vachaspati' and 'Bal Mitra Gold Medal' are prominent.

9. Death-Shri Kashinathji Trivedi died at the age of 90 on June 26, 1996 after attaining freedom in his successful lifetime. In the last years of life, he started living in Indore. His death also collapsed the last pillar of a very loyal Gandhiist in the region. He is called Gandhi of Nimar with respect[10].

Conclusion- It is thus clear that, Shri Kashinath Trivedi, called Gandhi of Nimar, was an important freedom fighter. He earned higher education and remained engaged in excellent works like writing, editing and teaching. If he wanted, they could lead a comfortable life. But he chose the path of struggle. Mahatma Gandhi had a wide impact on him and joined the freedom struggle with body, mind and wealth. He also inspired his wife to follow this path. Played an important role in the freedom struggle. Even after the independence of the country, he remained active and made significant contribution to the social and political sectors.

References:-

1. Jamnalal Bajaj Award 1995 Citation given to Shri Kashinath Trivedi for his admirable contribution in the field of creative work.
2. Same.
3. Same.
4. Same.

5. Letters written by Mahatma Gandhi to Shri Kashinath Trivedi.
6. According to the certificate provided by the Superintendent of the Central Jail of Nagpur, 'Claus One' was in jail from 1 December 1942 to 12 Janwari, 1954 as a trial prisoner.
7. Letters written by Mahatma Gandhi to Shri Kashinath Trivedi.
8. Jamnalal Bajaj Award Certificate.
9. Madhya Pradesh Congress Committee (E) Citation provided on 9 August 1993 at Betul of the Quit India Movement (Semi -Centenary) Ceremony Committee of Bhopal.
10. Jamnalal Bajaj Award Certificate.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्लेटो का न्याय सिद्धांत

रोहित*

* (राजनीति विज्ञान) वार्ड नंबर 11, अनुपगढ (राज.) भारत

शोध सारांश – प्लेटो ग्रीक यूनानी विचारक था जिसने पहली बार न्याय (उस समय के विद्वानों में) को आत्मिक गुण कहा और उसके पूरे न्याय सिद्धान्त में इसी बात के इर्द–गिर्द पुरा कृम चलता है। जैसे प्लेटो ने व्यक्ति के तीन आन्तरिक गुण बताए विवेक, साहस क्षुदा, तृष्णा इन तीन गुणों के आधार पर ही प्लेटो ने समाज को तीन वर्गो में विभाजित किया जिनमें विवेक की प्रधानता होगी वे दार्शनिक राजा जिनमें साहस की प्रधानता होगी, वे सैनिक तथा जिनमें तृष्णा लालच की प्रधानता होगी उन्हें उत्पादक वर्ग में रखा है ताकि सभी वर्ग अपनी क्षमतानुसार कार्य का संचालन न्यायपूर्ण तरीके से कर पाएं और प्लेटो ने न्याय को स्पष्टत: परिभाषित भी किया है कि न्याय सिद्धान्त व्यक्ति की आत्मा का गुण है। प्लेटो न्याय को इतनी प्राथमिकता देत है कि उसने धन और पत्नीयां का साम्यवाद तक कर दिया क्योंकि इससे एक न्याय पूर्ण राज्य की स्थापना की जा सके। प्लेटो कहता है कि जब राजा के परिवार नहीं होगा तो उसके अन्दर लालच नहीं होगा और समस्त प्रजा को अपना परिवार समझेगा और किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करेगा यदि धन भी संगृहित करने का अधिकार देता है तो भी राजा भ्रष्ट हो जायेगा इस लिये राजा को धन रखना निषेध कर दिया अर्थात प्लेटों राज्य के आवश्यक तत्वों में न्याय को सर्वोपरि रखना चाहता है क्योंकि प्लेटों अपने गुरू सुकरात के साथ हुए अन्याय से झुब्ध था इसी कारण प्लेटो ने दार्शनिक राजा की संकल्पना की जो न्यायप्रिय एवं उदार हो।

शब्द कुंजी– न्याय, गुण, विवेक, साहस, दार्शनिक, रिपब्लिक, स्वार्थ कर्तव्य, समाज, विधि आदि।

प्रस्तावना – पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन में न्याय का अध्ययन प्लेटों की विचारधारा से प्रारम्भ होता है। प्लेटो का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'Republic' का सबसे अधिक महत्वपूर्ण विषय न्याय की प्रकृति और निवास की खोज करना है। प्लेटो की Republic में न्याय का सम्बन्ध इतना प्रमुख है कि Republic का उपशीर्षक 'न्याय से सम्बन्धित' रखा गया है।

प्लेटो के न्याय सिद्धान्त से प्रभावित होकर इबेन्स्तीन ने कहा है कि प्लेटो के न्याय सम्बन्धी में विवेचन में उनमें राजनीतिक दर्शन के समस्त तत्व शामिल हैं। प्लेटो ने न्याय शब्द का प्रयोग वैधानिक रूप में न मानकर नैतिक माना है। आगे प्लेटो कहता है 'न्याय मानव आत्मा की उचित अवस्था और मानवीय स्वभाव की प्राकृतिक माँग है।' प्लेटो ने न्याय के दो रूपों का वर्णन किया है एक व्यक्तिगत और सामाजिक या राज्य से सम्बन्धित न्याय तथा प्लेटो ने मानव के तीन गुणों की व्याख्या की है– इन्द्रिय या इच्छा, शौर्य या साहस, बुद्धि आगे प्लेटो ने कहा है समाज की आवश्यकता और व्यक्ति की योग्यता को देखते हुए प्रत्येक व्यक्ति के कुछ कर्तव्य निश्चित हैं और चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का पालन करे यही न्याय है। प्लेटो ने चार मूल सगुणों की व्याख्या की है संयम साहस, विवेक एवं न्याय तथा इन चार सगुणो में सर्वश्रेष्ठ गुण न्याय को मानता है। प्लेटो के न्याय सिद्धान्त में 'दार्शनिक शासकों का शासन' को समर्थन भी किया गया है। प्लेटो कहते है कि अन्याय करना स्वाभाविक रूप से अच्छा है और दष्टता झेलना बुरा लेकिन भलाई की तुलना में दुष्टता बड़ी है। इसलिए जब लोग अन्याय करने और झेलने दोनो का अनुभव करने लगते हैं और जब वे एक को करने दूसरे को पाने में सफल नहीं होने लगते है। तब सोचने लगते है कि कुछ भी न होने के लिए आपस में समझौता कर लेते है और इसे कानूनी संविदाएं माना जाता है तथा इसे ही न्यायोचित बताया या कहा जाता है (सुकरात स लाइकन–The Republic में) आगे चलकर प्लेटो ने न्याय को सरल शब्दो में समझाने का प्रयास किया है वह (प्लेटो) मानता है कि 'न्याय का प्रमुख कार्य समाज में सामंजस्य तथा सन्तुलन का निर्माण करना है।' प्लेटो ने समाज में समन्वय तथा सन्तुलन बनाए रखने के लिए दो नियम प्रतिपादित किए प्रथम पुरस्कृत करना, दूसरा दण्डित करना अर्थात पुरस्कृत से तात्पर्य यह है कि व्यक्ति सम्मान पाने के कारण अन्त: खुशी महसूस करेगा और न्यायोचित कार्य करेगा तथा दण्ड के भय से व्यक्ति अनुचित कार्यो को करने से बचेगा इसलिए प्लेटो ने इन दोनों नियमों को प्राथमिकता प्रदान की है।प्लेटो मानता है जिस प्रकार छोटे अक्षरों की तुलना में बडे अक्षर आसानी से पढ़े जा सकते है ठीक उसी तरह व्यक्ति की अपेक्षा राज्य में न्याय स्पष्ट रूप से लक्षित होता हे आगे राज्य के सम्बन्ध में प्लेटो कहते है 'राज्य मानव मतिष्क का ही विराट रूप है' राज्य बलूत के पेड़ो या चट्टोनों से नहीं निकलते बल्कि राज्य में निवास करने वाले लोगों के मस्तिष्क की उपज होते है।

प्लेटो ने यहाँ तक माना है कि व्यक्ति की भाँति राज्य के भी तीन गुण होते है, वासना, साहस, बुद्धि जो आर्थिक, सैनिक, दार्शनिक है। प्लेटो इन्हीं तीनों वर्गो को अपने कर्तव्यों के अनुसार कार्य करना न्याय माना है क्योंकि प्लेटो कहता है अपने कर्तव्य का पालन करना तथा दूसरे के कार्य में बाधा न

डालना ही उचित न्याय है अर्थात प्लेटो स्पष्ट रूप से मानता है कि न्याय आन्तरिक एवं नैतिक है। बी.एच. सेबाइन ने 'A history of Political Theory-1937' में लिखा है कि प्लेटो मानता है 'प्रत्येक व्यक्ति को अपना-2 हक दिलाना ही न्याय है' (Givng to every man his due) अर्थात प्रत्येक व्यक्ति को अपनी अपनी क्षमता एवं इच्छानुसार प्रशिक्षण एवं समाज में स्थान देना न्याय है क्योंकि प्लेटो कहता है 'ज्ञान के आलोक के बिना समस्त संसार अंधकार में भटक जायेगा।' प्लेटो ने शिकायती स्वर में कहा है कि जब हम साधारण सा कार्य जूता बनवाने भी एक अच्छे मोची के पास जाते है तो यह कहाँ तक उचित है कि व्यक्ति बातें बना कर सत्ता में बैठ जाएँ अर्थात प्लेटो जोरदार स्वरों में कहना चाहता है जब हम बीमार होते है तो विशेष चिकित्सक के पास इलाज कराते है ताकि रोग जल्द ठीक हो जाए फिर यह भूल क्यों हो जाती है कि समाज एवं राज्य चलाने वाले विवेकी हों ? जब हम मिठाई खाने को सोचते है तो अच्छे हलवाई के यहाँ जाते है ताकि मिलावट न मिले फिर शासन सत्ता में राजा या शासक मिलावटी कैसे पसन्द किया जाए ? इन सभी बातों से क्षुब्ध होकर प्लेटो कहता है राज्य को रूग्ण रोग लगने से पहले अच्छे दार्शनिक राजा से इलाज कराना ही समझदारी है क्योंकि धूर्त व्यक्तिसों को चिकनी बातें करे वोट लेना आता है लेकिन राज्य का उद्धार नहीं कर पाते और राज्य का पतन होना आरम्भ हो जाता है इसलिए एक अच्छे राज्य के लिए अच्छे दार्शनिक राजा होना अति आवश्यक है जिससे राज्य का विकास हो सके एवं निवास करने वाली जनता का भी उत्थान हो सके। प्लेटो न्याय सिद्धान्त की विशेषताएँ तीन गुणों का समावेश जिसेप्लेटो ने उत्पादक वर्ग को इन्द्रिय तृष्णा, सैनिक वर्ग को साहस और शासक वर्ग को विवेक से युक्त माना है नैतिक सिद्धान्त 'प्लेटो ने न्याय की अवधारणा को वैधानिक मान्यता प्रदान नहीं की है न्याय को नैतिक और सर्वव्यापी माना है।' कार्य विशिष्टता का सिद्धान्त प्लेटो के न्याय की यह विशेष विशेषता है क्योंकि प्लेटो का मानना है कि यदि प्रत्येक व्यक्ति अपना कतर्तव्य ईमानदारी पूर्वक करता है तथा अपनी क्षमता एवं इच्छा के अनुरूप कार्य करता है तो वह खुद या स्वंय के साथ-2 राज्य, समाज का भी विकास कर सकेगा वार्शनिक शासक प्लेटो का मानना है कि राज्य रूपी संस्था को सुचारू रूप से चलाने एवं आगे बढ़ाने के लिये एक विवेकी एवं सुयोग्य शासक की आवश्यकता होती है और ऐसा राजा तभी सम्भव है जब राजा दार्शनिक एवं विवेकी हो तभी राज्य एवं समाज का उत्थाना समभव होगा। अत: इस प्रकार प्लेटो अपने समस्त जीवन भर न्याय की संकल्पना लिए चलता रहा और उसके समय में जब असम्य एवं बर्बर स्थिति थी समाज की तब प्लेटो ने न्याय को नैतिक एवं आन्तरिक गुणों पर आधारित माना और उसका यह योगदान जो न्याय से जुड़ा है लोगों को उनके कर्तव्यों को समझाना तथा कर्तव्यों के प्रति ईमानदार होना जीवन पर्यन्त समझाता रहा।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. डॉ. पुखराज जैन, डॉ. अरूणोदय बाजपेई अवधारणाएँ साहित्य भवन पब्लिकेशन।
2. डॉ. पुखराज जैन, राजनीतिक विज्ञान साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।
3. ओम प्रकाश गाबा, समकालीन राजनीतिक सिद्धान्त नेशनल पेपर।
4. NCERT (कक्षा-11) राजनीतिक सिद्धान्त 2022 (NCERT नई दिल्ली) प्रष्ठ सं-52

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत की विदेश नीति: एक व्यापक अध्ययन

विनोद कुमार विश्नोई *

* एम.ए. नेट (राजनीति विज्ञान) ग्राम - समेलिया, पोस्ट घोड़ास, तह. मांडल, जिला भीलवाड़ा (राज.) भारत

प्रस्तावना - भारत की विदेश नीति स्वतंत्रता के बाद से ही उसके राष्ट्रीय हितों, भौगोलिक स्थिति, आर्थिक आवश्यकताओं, ऐतिहासिक विरासत और वैश्विक परिदृश्य पर आधारित रही है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भारत की विदेश नीति की नींव रखी, जिसमें गुटनिरपेक्षता, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व और वैश्विक शांति की अवधारणाएं प्रमुख थीं। बदलते वैश्विक राजनीतिक, आर्थिक और भू-राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में भारत की विदेश नीति में समय-समय पर आवश्यक बदलाव किए गए हैं। इस शोधपत्र में भारत की विदेश नीति का ऐतिहासिक विकास, सिद्धांत, प्रमुख घटक, वैश्विक चुनौतियाँ और भविष्य की दिशा का विश्लेषण किया गया है।

1. भारत की विदेश नीति का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

1.1 स्वतंत्रता पूर्व पृष्ठभूमि: ब्रिटिश शासन के अधीन भारत की कोई स्वतंत्र विदेश नीति नहीं थी। विदेश संबंध पूरी तरह से ब्रिटिश सरकार द्वारा नियंत्रित होते थे। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान ही अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत की भूमिका उभरने लगी थी, विशेष रूप से कांग्रेस द्वारा अंतरराष्ट्रीय औपनिवेशिक विरोध मंचों पर भागीदारी।

1.2 स्वतंत्रता के बाद की नीति (1947-1964): पंडित नेहरू ने भारत की विदेश नीति को दिशा दी। इस कालखंड में निम्नलिखित पहलू उभरकर आए:

गुटनिरपेक्ष आंदोलन (NAM): शीत युद्ध के दो ध्रुवों (अमेरिका और सोवियत संघ) से दूरी बनाकर एक स्वतंत्र और संतुलित दृष्टिकोण अपनाना।

पंचशील सिद्धांत: चीन के साथ शांति और आपसी सम्मान पर आधारित पंचशील सिद्धांत का प्रसार।

वैश्विक शांति का समर्थन: संयुक्त राष्ट्र और वैश्विक मंचों पर शांति और निरस्त्रीकरण की पैरवी।

2. विदेश नीति के प्रमुख सिद्धांत

2.1 गुटनिरपेक्षता (Non Alignmnet): भारत ने शीत युद्ध के दौरान गुटनिरपेक्ष रहकर अपने स्वायत्ता निर्णयों को प्राथमिकता दी। यह नीति भारत को स्वतंत्र विदेश नीति बनाने की शक्ति देती रही।

2.2 रणनीतिक स्वायत्तता (Strategic Autonomy): भारत की नीति किसी भी वैश्विक शक्ति के अधीन न होकर अपने राष्ट्रीय हितों के अनुसार निर्णय लेने की रही है।

2.3 क्षेत्रीय नेतृत्व और पड़ोसी प्रथम नीति: दक्षिण एशिया में शांति, स्थिरता और आर्थिक समावेशन को बढ़ावा देना भारत की नीति का हिस्सा रहा है।

2.4 वैश्विक सहभागिता: भारत का उद्देश्य वैश्विक मंचों पर अपनी भूमिका को मजबूत करना और अंतरराष्ट्रीय प्रणाली में सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना है।

3. विदेश नीति के प्रमुख आयाम

3.1 पड़ोसी देशों के साथ संबंध

3.1.1 पाकिस्तान

भारत-पाक संबंध

1. भारत-पाकिस्तान संबंध

मुख्य मुद्दे:

कश्मीर विवाद: 1947 से ही दोनों देशों के संबंधों में सबसे बड़ा रोड़ा।

तीन युद्ध: 1947, 1965, 1971 और करगिल संघर्ष (1999)।

आतंकवाद: पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद (26/11, पठानकोट, उरी, पुलवामा)।

भारत की पहल: अटल बिहारी वाजपेयी की लाहौर बस सेवा।

नरेंद्र मोदी का अप्रत्याशित लाहौर दौरा (2015)।

MFN (Most Favoured Nation)का दर्जा वापस लेना।वर्तमान स्थिति: राजनयिक संबंध न्यूनतम स्तर पर।

सीमित व्यापार, कोई द्विपक्षीय वार्ता सक्रिय नहीं।

नियंत्रण रेखा: पर तनाव में कश्मीर मुद्दा, आतंकवाद, युद्ध और सीमा विवाद प्रमुख विषय रहे हैं। हाल के वर्षों में 'सर्जिकल स्ट्राइक' और श्बालाकोट एयरस्ट्राइकश जैसे कदमों ने नई रणनीतिक सोच को दर्शाया है।

3.1.2 चीन

प्रारंभिक सहयोग:

1950 के दशक में 'हिंदी-चीनी भाई-भाई' का नारा।

1962 के युद्ध के बाद रिश्तों में भारी गिरावट।

वर्तमान संबंध:

आर्थिक: चीन भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार (2023 में +110 बिलियन से अधिक), लेकिन व्यापार असंतुलन भारत के खिलाफ।

सीमा विवाद: डोकलाम (2017), गलवान संघर्ष (2020), LAC पर गतिरोध जारी।

रणनीतिक चुनौती: चीन का BRI,CPEC और पाकिस्तान से निकटता भारत के लिए चिंता का विषय।

सहयोग: BRICS,SCO जैसे मंचों पर मिलकर कार्य।

जलवायु परिवर्तन और वैश्विक मंचों पर संवाद।

भारत-चीन संबंधों में आर्थिक सहयोग और सीमा विवाद समानांतर रूप से

चलते रहे हैं। डोकलाम और गलवान संघर्षों ने इन संबंधों में तनाव पैदा किया।

भारत-चीन संबंध सहयोग और संघर्ष : 1962 का युद्ध और सीमा विवाद (LAC) संबंधों पर छाया डाले हुए हैं।डोकलाम (2017), गलवान (2020) जैसी घटनाएं।

सहयोग के क्षेत्र:व्यापार: चीन भारत का सबसे बड़ा आयातक है।

अंतरराष्ट्रीय मंचों पर सहयोग: BRICS,SCO।

भारत की चिंता:CPECपरियोजना पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर से होकर गुजरती है।

चीन की Strings of Pearls रणनीति और हिंद महासागर में उसकी उपस्थिति।

3.1.3 नेपाल, भूटान, बांग्लादेश और श्रीलंका

भारत-नेपाल संबंध

सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संबंध:

खुली सीमा और Gorkha सैनिकों की परंपरा।

धार्मिक, भाषाई और सामाजिक जुड़ाव।

विवाद के मुद्दे:

कालापानी-लिपुलेख सीमा विवाद।

नेपाल के नए नक्शे में भारतीय क्षेत्र को दिखाना (2020)।

भारत की भूमिका:

नेपाल में जलविद्युत, इंफ्रास्ट्रक्चर और आपदा प्रबंधन में सहयोग।

बिचौली रास्ते से व्यापार और चिकित्सा सहायता।

नवीन सहयोग:

भारत-नेपाल रेल लिंक, पेट्रोलियम पाइपलाइन।

4. भारत-भूटान संबंध

सबसे घनिष्ठ पड़ोसी:

भारत भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है।

भूटान की रक्षा नीति में भारत का गहरा योगदान।

सहयोग के क्षेत्र:

हाइड्रो पावर: ताला, पुनतसांगचू जैसी परियोजनाएँ।

डोकलाम गतिरोध (2017): भारत ने भूटान की संप्रभुता की रक्षा की।

शिक्षा, स्वास्थ्य और पर्यटनरू भारत में भूटानी छात्रों की शिक्षा और इलाज में सहयोग।

5. भारत-बांग्लादेश संबंध

इतिहास:

भारत ने 1971 में बांग्लादेश की स्वतंत्रता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रमुख उपलब्धियाँ:

2015 भूमि सीमा समझौता।

नदी जल बंटवारा: गंगा जल समझौता (1996)।

सरहदी प्रबंधन: अंतरराष्ट्रीय सीमा को शांतिपूर्ण बनाने की पहल।

आर्थिक सहयोग:

रेल, सड़क, और बंदरगाह संपर्क का विस्तार।

ऊर्जा व्यापार और संयुक्त परियोजनाएँ।

चुनौतियाँ:

तीस्ता जल समझौता अभी लंबित।

रोहिंग्या शरणार्थियों पर सहयोग की कमी।

6. भारत-श्रीलंका संबंध

सांस्कृतिक और धार्मिक संबंध:

बौद्ध धर्म, रामायण परंपरा, तमिल संस्कृति।

सहयोग के क्षेत्र:

विकास परियोजनाएँ, आवास निर्माण, रेलवे लाइन पुनर्निर्माण।

संवेदनशील मुद्दे:

श्रीलंका के तमिलों की स्थिति।

चीन की बढ़ती उपस्थिति (हंबनटोटा बंदरगाह, कोलंबो पोर्ट सिटी)।

भारत की रणनीति:

SAARC और BIMSTEC के माध्यम से संबंध मजबूत करना।

सागर नीति: समुद्री सुरक्षा सहयोग।

7. भारत-म्यांमार संबंध

भौगोलिक रणनीतिकता:

भारत के पूर्वोत्तर राज्यों की सीमा म्यांमार से जुड़ी है।

सहयोग के क्षेत्र:

कालादान मल्टीमॉडल प्रोजेक्ट।

IMT ट्राइलेटरल हाईवे (India-Myanmar-Thailand)।

आतंकवाद विरोधी सहयोग (NSCN,PLA,ULFA, पर कार्यवाही)।

चुनौतियाँ:

म्यांमार में सैन्य शासन और लोकतंत्र संकट।

रोहिंग्या संकट और मानवीय सहायता।

8. भारत-अफगानिस्तान संबंध

भारत की भूमिका:

लोकतांत्रिक अफगान सरकार के पुनर्निर्माण में अग्रणी भूमिका।

सलमा डैम, पार्लियामेंट बिल्डिंग, अस्पताल आदि भारत द्वारा निर्मित।

चुनौतियाँ:

तालिबान शासन के बाद संपर्क सीमित।

पाकिस्तान के प्रभाव और चीन की भूमिका बढ़ रही है।

मूल्य आधारित नीति:

भारत अभी भी मानवीय सहायता भेजता है, परंतु तालिबान सरकार को मान्यता नहीं दी है।

9. भारत-मालदीव संबंध

भौगोलिक महत्व:

हिंद महासागर में रणनीतिक स्थिति।

भारत की SAGAR नीति का मुख्य भाग।

सहयोग:

मालदीव में मेडिकल सुविधा, डिजिटल सहयोग, सैन्य अभ्यास।

तटीय राडार सिस्टम और जल सुरक्षा सहायता।

वर्तमान चुनौती:

चीन की घुसपैठ और 'इंडिया आउट' आंदोलन।

भारत इन देशों के साथ ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक संबंध साझा करता है। हाल के वर्षों में बांग्लादेश के साथ भूमि सीमा समझौता और नदी जल समझौते प्रमुख उपलब्धियां रही हैं।

3.3.2 प्रमुख वैश्विक शक्तियों के साथ संबंध

3.2.1 अमेरिका

शीत युद्ध काल में दोनों देशों के संबंध ठंडे रहे।

21वीं सदी में संबंधों में उल्लेखनीय सुधार हुआ (2008 परमाणु समझौता एक मील का पत्थर)।

सहयोग के क्षेत्र:

रणनीतिक भागीदारी: 22 डायलॉग, LEMOA,BECA, COMCASA जैसे रक्षा समझौते।

व्यापार: द्विपक्षीय व्यापार +150 बिलियन (2024 तक), टेक्नोलॉजी और स्टार्टअप सहयोग।

डायस्पोरारू अमेरिका में लगभग 4.5 मिलियन भारतीय, राजनीतिक और आर्थिक प्रभाव बढ़ रहा है।

इंडो-पैसिफिक सहयोग: QUAD के तहत संयुक्त रणनीति।भारत-अमेरिका संबंध रणनीतिक साझेदारी, रक्षा सहयोग, परमाणु समझौते (2008) और इंडो-पैसिफिक नीति के इर्द-गिर्द विकसित हुए हैं।

3.2.2 रूस

भारत और रूस (पूर्ववर्ती सोवियत संघ) के बीच रक्षा, ऊर्जा और अंतरिक्ष अनुसंधान में गहरे संबंध रहे हैं।

सोवियत युग से भारत और रूस के संबंध ऐतिहासिक रूप से मजबूत रहे हैं। 1971 की भारत-पाक युद्ध में सोवियत संघ ने भारत का समर्थन किया।

प्रमुख क्षेत्रों में सहयोग:

रक्षा: ब्रह्मोस मिसाइल, सुखोई विमान, AK-203 राइफल, INS विक्रमादित्य विमानवाहक पोत। 70%से अधिक रक्षा उपकरण रूसी मूल के।

ऊर्जा: कूडनकुलम परमाणु संयंत्र, ऊर्जा सुरक्षा में सहयोग।

अंतरिक्ष: ISROऔर रूस के बीच तकनीकी सहयोग (जैसे Gaganyaanमिशन)।

कूटनीतिक सहयोग: BRICS, SCO, G-20 में साझा सदस्यता।

3.2.3 यूरोपियन यूनियन और यूनाइटेड किंगडम

भारत-यूनाइटेड किंगडम संबंध

ऐतिहासिक संबंध:

उपनिवेशवाद की विरासत, लेकिन स्वतंत्रता के बाद द्विपक्षीय संबंध स्थिर रहे।

आधुनिक संबंध:

व्यापार: मुक्त व्यापार समझौते पर वार्ता जारी।

शिक्षा: ब्रिटेन भारतीय छात्रों के लिए लोकप्रिय शिक्षा केंद्र है (2023 में 140,000 छात्र)।

प्रवासी संबंध: ब्रिटेन में भारतीय मूल की जनसंख्या सबसे बड़ी (20 लाख से अधिक)।

राजनयिक: ब्रिटेन में भारतीय मूल के प्रधानमंत्री (ऋषि सुनक) भारत के प्रति सकारात्मक संकेत।

विवाद:

कश्मीरी मुद्दों पर ब्रिटेन के कुछ सांसदों के बयान।

खालिस्तानी गतिविधियाँ और भारतीय मिशनों पर हमले।

5. भारत-फ्रांस संबंध

कूटनीतिक मित्रता:

फ्रांस हमेशा भारत का एक स्थिर और भरोसेमंद यूरोपीय भागीदार रहा है।

मुख्य क्षेत्र:

रक्षा: राफेल डील (36 लड़ाकू विमान), स्कॉर्पीन पनडुब्बी निर्माण।

अंतरिक्ष: ISRO-CNES सहयोग।

पर्यावरण: अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (ISA) की स्थापना में फ्रांस की भागीदारी।

इंडो-पैसिफिक: भारत-फ्रांस ने साझा रणनीति अपनाई है।

नई पहल:

UPI-Rupay और डिजिटलीकरण पर फ्रांस की सकारात्मक पहल।

सांस्कृतिक और भाषा सहयोग।

6. भारत-जर्मनी संबंध

अर्थव्यवस्था और विज्ञान आधारित साझेदारी:

जर्मनी भारत का सबसे बड़ा यूरोपीय व्यापारिक भागीदार है।

प्रमुख पहल:

व्यापार और निवेश: मर्सिडीज, BMW,Siemens जैसी कंपनियाँ भारत में कार्यरत।

ग्रीन हाइड्रोजन मिशन: भारत-जर्मनी ग्रीन डील सहयोग।

तकनीकी सहयोग: विज्ञान, इंजीनियरिंग, स्किल डिवेलपमेंट में निवेश।

शिक्षा: भारत-जर्मनी स्टूडेंट एक्सचेंज प्रोग्राम, फेलोशिप।

चुनौतियाँ:

जर्मनी की मानवाधिकारों पर संवेदनशीलता और भारत की आंतरिक नीतियों पर टिप्पणियाँ कभी-कभी तनाव का कारण बनती हैं।

व्यापार, शिक्षा और तकनीक के क्षेत्र में सहयोग। ब्रेक्सिट के बाद ब्रिटेन के साथ द्विपक्षीय समझौतों पर जोर।

3.3 बहुपक्षीय मंचों पर भूमिका

3.3.1 संयुक्त राष्ट्र: भारत संयुक्त राष्ट्र में स्थायी सदस्यता की दावेदारी करता रहा है। न्छ शांति मिशनों में भारत की भूमिका सराहनीय रही है।

3.3.2 BRICS, SCO, QUAD,G-20

BRICS में भारत की सक्रियता वैश्विक दक्षिण की आवाज बनने का प्रयास है।

SCO में भारत की भागीदारी एशियाई सुरक्षा और सहयोग की दिशा में एक कदम है।

QUAD (भारत, अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया) इंडो-पैसिफिक में चीन की चुनौतियों से निपटने की रणनीति है।

4. विदेश नीति की समकालीन चुनौतियाँ

4.1 चीन का आक्रामक विस्तारवाद

विशेषत: लद्दाख क्षेत्र में चीनी गतिविधियाँ भारत की सुरक्षा नीति पर प्रभाव डालती हैं।

4.2 आतंकवाद और सीमा पार सुरक्षा: पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद भारत की विदेश नीति की प्राथमिक चुनौतियों में से एक है।

4.3 ऊर्जा और जलवायु परिवर्तन: भारत को ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए अंतरराष्ट्रीय जलवायु प्रतिबद्धताओं को संतुलित रखना है।

4.4 प्रवासी भारतीय और वैश्विक भारतीय छवि: भारत की नीति में अब प्रवासी भारतीयों की सुरक्षा और अधिकारों की रक्षा भी शामिल है।

भारत-जापान संबंध :

इतिहास और सांस्कृतिक जुड़ाव:

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, भारत ने जापानी पुनर्निर्माण का समर्थन किया था।

रणनीतिक और आर्थिक भागीदारी:

इन्फ्रास्ट्रक्चर: मुंबई-अहमदाबाद बुलेट ट्रेन, स्मार्ट सिटी प्रोजेक्ट।
जापान भारत में शीर्ष निवेशकों में से एक है।
सुरक्षा: क्वाड सहयोग, समुद्री अभ्यास)।
विकासरू जापान की सहायता से भारत के पूर्वोत्तार क्षेत्रों में भी विकास परियोजनाएँ।
अनूठी बात: जापान के साथ भारत के संबंध 'विशेष रणनीतिक और वैश्विक साझेदारी' के रूप में घोषित हैं।

5. मोदी सरकार के अंतर्गत विदेश नीति (2014 से आगे)।

5.1 एक्ट ईस्ट नीति: पूर्वोत्तर राज्यों को ASEAN और पूर्व एशियाई देशों के साथ जोड़कर आर्थिक विकास और रणनीतिक गहराई प्रदान करना।

5.2 पड़ोसी पहले नीति :श्रीलंका, नेपाल, अफगानिस्तान, बांग्लादेश जैसे देशों के साथ सहयोग बढ़ाना।

5.3 वसुधैव कुटुंबकम का प्रसार: COVID-19 के दौरान श्वैक्सीन मैत्रीश के तहत भारत ने विश्व को सहायता भेजी।

5.4 डिजिटल डिप्लोमेसी और पब्लिक डिप्लोमेसी: सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से भारत ने अपनी वैश्विक छवि को सशक्त किया है।

6. विदेश नीति का भविष्य और संभावनाएँ:

1. संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता प्राप्त करना।
2. इंडो-पैसिफिक रणनीति में संतुलन बनाना।
3. आर्थिक कूटनीति को आगे बढ़ाना।
4. वैश्विक दक्षिण का नेतृत्व करना।
5. हरित ऊर्जा और जलवायु नेतृत्व में अग्रणी भूमिका निभाना।

निष्कर्ष - भारत की विदेश नीति की संतुलन, सहयोग और आत्मनिर्भरता का प्रमुख दृष्टिकोण अपनाया है। भारत किसी भी एक ध्रुव से न जुड़कर बहुध्रुववीय विश्व में अपनी रणनीतिक स्वायत्तता बनाए रखना चाहता है। यह नीति भारत को वैश्विक स्तर पर एक संतुलनकर्ता शक्ति के रूप में स्थापित कर रही है।भारत की विदेश नीति ने अपनी यात्रा में कई उतार-चढ़ाव देखे हैं। परंतु इसमें निरंतरता और लचीलापन दोनों रहे हैं। गुटनिरपेक्षता से लेकर रणनीतिक साझेदारी तक, भारत ने अपने राष्ट्रीय हितों को प्राथमिकता दी है। समकालीन वैश्विक परिदृश्य में भारत का बढ़ता कद, उसकी संतुलित विदेश नीति का प्रमाण है। भारत के पड़ोसी देशों के साथ संबंध मौकों और चुनौतियों का मिश्रण हैं। जहां सांस्कृतिक निकटता, भौगोलिक जुड़ाव और आर्थिक सहयोग संभावनाएं पैदा करते हैं, वहीं सीमा विवाद, आतंकी गतिविधियाँ, और चीन जैसे बाहरी प्रभाव भारत की नीति को संतुलन और सतर्कता के साथ चलने के लिए बाध्य करते हैं।

भारत की विदेश नीति में 'पड़ोसी प्रथम ' एक केंद्रीय सिद्धांत है, जिसके अंतर्गत भारत ने अपने पड़ोसियों के साथ आर्थिक, रणनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सहयोग को प्राथमिकता दी है।'पड़ोसी प्रथम' नीति के साथ भारत ने क्षेत्रीय नेतृत्व, मानवीय सहायता और संयुक्त विकास का मार्ग चुना है जो भारत को दक्षिण एशिया में स्थिरता और समृद्धि का केंद्र बना सकता हैआने वाले समय में भारत को वैश्विक राजनीति में न केवल एक भागीदार बल्कि एक मार्गदर्शक शक्ति के रूप में देखा जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. John G. Stoessinger- "Challenge and Strategy: Rethinking India's Foreign Policy - Ministry of External Affairs, Government of India-
2. Nehru. J.L. India's Foreign Policy.
3. Rajiv Sikri. Challenge and Strategy: Rethinking India's Foreign Policy.
4. C.Raja Mohan- Crossing the Rubicon.
5. IDSA Reports on India's Strategic Affairs.
6. Articles from The Hindu, Indian Express, EPW-4- "India's Foreign Policy: Retrospect and Prospect", Sumit Ganguly
7. United Nations and BRICS documentation.
8. "Why Nations Go to War" (with Indian context editions 2- "Pax Indica: India and the World of the 21st Century" A Dr. Shashi Tharoor
9. NCERT: Class 12 Political Science Book (Contemporary World Politics
10. इतिहास और विकास के लिए: V.P. Dutt, Sumit Ganguly
11. आधुनिक चुनौतियों के लिए: Rajiv Sikri, Shivshankar Menon.
12. राजनीतिक दृष्टिकोण से: Shashi Tharoor
13. रणनीतिक गहराई के लिए: Nonalignment 2.0, Muchkund Dubeey.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Gupta Empire : A Powerful Ancient Indian Empire

Sandeep*

***History Deptt., Village Daulatpura, Pilibanga (Raj.) INDIA**

Introduction

Rise of the Gupta Empire: The rise of the Gupta Empire occurred near Prayag (modern-day Allahabad) in Kaushambi towards the end of the 3rd century. The Guptas were feudatories of the Kushanas. Initially, the Gupta kingdom was based in Uttar Pradesh and Bihar. It appears that Uttar Pradesh held more importance for the Gupta rulers than Bihar, as most early inscriptions were found in Uttar Pradesh. From there, the rulers expanded in various directions. They established dominance over Anuganga (Middle Ganga Plain), Prayag, Saket (modern Ayodhya), and Magadha.

Origin of the Guptas: The history of the Gupta dynasty is known through literary and archaeological sources, as well as the accounts of foreign travelers.

Literary Sources:

1. **Puranas:** Matsya, Vayu, and Vishnu Puranas provide information about the early rulers.
2. **Buddhist Texts:** Arya Manjushri Mulakalpa, Vasubandhu Charita, and Chandragarbha Pariprichha.
3. **Jain Texts:** Harivansh and Kuvalayamala.
4. **Smritis:** Narada, Parashara, and Brihaspati Smritis give insights into the social, economic, and political aspects of the Gupta period.
5. **Secular Literature:** "Devichandraguptam" by Vishakhadatta provides details about Ramagupta and Chandragupta. Other works include Abhijnana Shakuntalam, Raghuvamsa, Mudrarakshasa, Mrichchhakatika, Harshacharita and Kamasutra.

Epigraphic Sources:

1. The most notable is the Prayag Prashasti of Samudragupta, highlighting his coronation, conquests, and personality.
2. Other inscriptions include the Udayagiri cave inscription of Chandragupta II, the pillar inscription of Kumaragupta at Bilsad, and the Junagadh inscription of Skandagupta.

Foreign Accounts:

1. Fa-Hien, who visited during Chandragupta II's reign, described the people and culture of the Madhya region.
2. Hiuen Tsang in the 7th century also provided insights, mentioning rulers like Buddhagupta, Kumaragupta I, Shakaditya, and Baladitya. He stated that Kumaragupta founded Nalanda University.

Views on Gupta Origin: There is disagreement among historians regarding the caste origin of the Guptas:

Caste	Historians
Shudra/Lower caste	K.P. Jayaswal
Vaishya	Allan, S.K. Aiyangar, A.S. Altekar, Romila Thapar, R.S. Sharma
Kshatriya	S. Chattopadhyay, R.C. Majumdar, G.S. Hira Chandra Ojha
Brahmin	Dr. Rai Chaudhary, Dr. Ramgopal Goyal

Gupta Administration: The republic system declined, and monarchy based on divine rights prevailed. Succession was hereditary, typically passing to the eldest son. At its peak, the empire stretched from the Himalayas in the north to the Vindhyas in the south and from the Bay of Bengal in the east to Saurashtra in the west.

Revenue Sources:

1. Bhaga: One-sixth of land produce.
2. Bhoga: Possibly daily gifts like fruits and vegetables.
3. Pranayakar:A compulsory or voluntary tax on villagers.
4. Bhumika: Mentioned in Manusmriti.
5. Bhent (Gift Tax): Mentioned in Harshacharita.

Trade and Commerce: Trade flourished in cities like Ujjain, Bharuch, Pratishthan, Vidisha, Prayag, Pataliputra, Vaishali, Tamralipti, Mathura, Ahichhatra, and Kaushambi. Ujjain was the most important hub due to its central location. The abundance of gold coins supported this prosperity.

Social Structure: Society was divided into the traditional four varnas:

1. Brahmins
2. Kshatriyas
3. Vaishyas
4. Shudras

Texts like Arthashastra and Brihat Samhita prescribed separate settlements for each varna. Judicial tests were unique to each varna (e.g., fire for Kshatriyas, water for Vaishyas, etc.)

Religion: The Gupta period marked the revival of

Brahmanism and Hinduism. Idol worship became mainstream, and rituals shifted from yajnas to personal devotion. Vaishnavism and Shaivism gained prominence and coexistence.

Art and Architecture: The Gupta period saw remarkable achievements in sculpture, painting, and pottery. Temples began to be built on raised platforms with sanctums, pradakshina paths, and flat roofs. Some had shikhara (towers). Bricks and stones were commonly used.

Important Gupta Temples:

Temple	Location
Vishnu Temple	Tigwa (Jabalpur, MP)
Shiva Temple	Bhumra (Nagod, MP)
Parvati Temple	Nachna Kuthar (MP)
Dashavatara Temple	Deogarh (Jhansi, UP)
Shiva Temple	Khoh (Nagod, MP)
Brick Lakshman Temple	Bhitargaon (Kanpur, UP)

Literature: The Gupta period is considered the Golden Age of Sanskrit literature. According to Barnett, it was as important to Indian history as the Periclean age was to Greece. Writers like Kalidasa, Sudraka, and others thrived.

Golden Age Concept: The Gupta period is also called:

1. Golden Age
2. ClassicalAge
3. Periclean Age

It was an age of literary, scientific, and artistic brilliance, religious tolerance, economic prosperity, good governance, and political unity. However, historians like R.S. Sharma, D.D. Kosambi, and Romila Thapar argue this notion is exaggerated, pointing to feudalism, urban decline, and economic stagnation.

References:-

1. Bharat Ka Itihas – Maurya Trivedi
2. Bharat Ka Itihas – Sharma Pawa
3. NCERT Class 11 History Textbook

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Physical Regions of India

Budhram*

***Geography, chak 21 SJM Anupgarh (Raj.) INDIA**

Introduction - India's geological structure has contributed to regional diversity, resulting in various types of landforms. The physical regions of India include plateaus, plains, high mountains, and deep valleys. About 10.6% of India is mountainous, 18.5% hilly, 27.7% plateau, and 43.2% plain. Based on topographical diversity, India is divided into five physiographic regions:

1. The Great Northern Mountains

Divided into two parts:

(i) Trans-Himalaya: Located north of the Himalayas, part of the Eurasian Plate, includes Karakoram, Ladakh, and Zanskar ranges. These formed before the Himalayas. It is about 2500 km long and 150–400 km wide with an average height of 6000 meters.

Notable peaks: K-2 (Godwin Austen) and massive glaciers like Baltoro and Siachen.

(ii) Himalayas: Extend from the Indus River to the Dihang River. Formed during the Tertiary period due to the collision of the Indian and Eurasian plates. It is the youngest fold mountain range in the world and consists of three parallel ranges from north to south:

a. Greater Himalayas (Himadri): Highest and innermost range (avg. 6000m), includes Kangchenjunga (India) and Mount Everest (Nepal).

b. Lesser Himalayas (Himachal): Located south of Himadri (avg. 4000–4500m), includes popular hill stations like Shimla, Mussoorie, and Dharamshala.

c. Shiwaliks: Outer, youngest and lowest range (1200–1500m), made of unconsolidated sediments. Narrow valleys here are called Doons (e.g., Dehradun).

d. Eastern Extension - Purvanchal Hills: Includes hills like Patkai, Naga, Mizo, Khasi, Jaintia, and Lushai, situated along the Myanmar border.

Subdivisions of the Himalayas by river valleys (as per Sydney Burrard):

1. Kashmir/Punjab Himalaya – from Indus to Sutlej
2. Kumaon Himalaya – from Sutlej to Kali River
3. Nepal Himalaya – from Kali to Teesta River
4. Assam Himalaya – from Teesta to Brahmaputra River

2. Northern Indian Plains: Located between the Himalayas and the Peninsular Plateau, formed by sediment deposition in a trough south of the Shiwaliks. Stretching about 2500 km in length, 150–300 km in width. Made of fertile alluvial soil, classified as:

i. Bhangar: Older alluvium
ii. Khadar: Newer alluvium

Sub-regions:

i. Ganga-Yamuna Plain (UP, Bihar, Bengal):
Divided into upper, middle, and lower Ganga plains.

i. Brahmaputra Plain (Assam Valley):
Located between Meghalaya Plateau and Himalayas.

3. Peninsular Plateau: Situated south of the Ganga plains, part of the ancient Gondwanaland. Formed from old, hard igneous rocks. Divided into:

(i) Central Highlands: Extends up to Delhi and Gujarat. Includes Malwa Plateau (lava-based), Bundelkhand and Baghelkhand, and Chotanagpur Plateau (eastern side).

(ii) Deccan Plateau: Triangular-shaped, from Vindhyas to southern tip of the peninsula (covers ~5 lakh sq. km). Bounded by:

Western Ghats: Steeper and higher, includes Sahyadri, Nilgiri, Annamalai, and Cardamom Hills. Annamalai is the highest peak (2695 m).

Eastern Ghats: Lower and more dissected.

Deccan Trap: Formed by ancient volcanic activity; covers Maharashtra and parts of Gujarat, MP, Karnataka.

Major rivers:

East-flowing: Godavari, Krishna, Kaveri (into Bay of Bengal)

West-flowing: Narmada, Tapi (into Arabian Sea)

4. Coastal Plains:

Narrow plains along the eastern and western coasts of the plateau:

Western Coastal Plain: Found along Gujarat, Maharashtra, Goa, Karnataka, and Kerala. Broader in the north, narrower in the south. Known as Konkan Coast (Maharashtra), Malabar Coast (Kerala)

Features: estuaries of Narmada, Tapi; backwaters in Kerala.

Eastern Coastal Plain: From Ganga Delta to Kanyakumari. Broader and flatter than the west.Known as Northern Circars (north), Coromandel Coast (south) Contains river deltas from large peninsular rivers.

5. Island

Located in:

Arabian Sea: Off the Kerala coast, Lakshadweep Islands, mostly coral atolls.

Bay of Bengal: Andaman and Nicobar Islands, larger and more numerous, some of volcanic origin, others are submerged mountain peaks.

Indira Point: Southernmost tip of India (on Great Nicobar), submerged in 2005 tsunami.

About Indian Islands: The Indian Islands or the Islands of India refer to the group of islands spread across the Indian Ocean, Arabian Sea, and the Bay of Bengal, which are a part of the Indian territory. Collectively, they form one of the five major physical divisions of India.

The Indian Islands can broadly be classified into two main groups:

i. Andaman and Nicobar Islands
ii. Lakshadweep Islands

Andaman and Nicobar Islands

Location: This is a group of islands located in the Bay of Bengal.

Extent: These islands are formed in an arc-shaped chain (convex towards the west) and extend from 6°452 N to 13°412 N latitude and 92°122 E to 93°572 E longitude.

The islands stretch over a distance of approximately 590 kilometers, with a maximum width of around 58 kilometers.

Major Islands in the Group: This island chain comprises 572 large and small islands, covering a total area of about 8,249 square kilometers. The entire chain includes two distinct groups of islands – Andaman Islands and Nicobar Islands.

Andaman Islands

Area: TheAndaman Islands form a group that is around 260 kilometers long and 30 kilometers wide.

Sub-Groups: These islands are divided into three major groups – North Andaman, MiddleAndaman, and South Andaman.

1. Two major island groups – LittleAndaman and Great Andaman – are separated by the Duncan Passage, which is 50 km wide.
2. The capital city Port Blair is located in South Andaman.

Inhabited Islands:About 24 islands in this group are inhabited.

Nicobar Islands

Area: These islands stretch 262 kilometers in length and have a maximum width of 58 kilometers, covering a total area of about 1,653 square kilometers.

Sub-Groups: The Nicobar Islands consist of 7 large and 12 small islands, and are divided into three major groups – Northern, Central, and Southern groups.

Key islands in each group:

1. Northern Group:Car Nicobar and Battimalv
2. Central Group:Chowra (or Sanenyo), Teresa (or Luroo), Bompuka (or Poahat), Katchal, Kamorta, Nancowry (or Nankovri), Trinket, Laouk (or Isle of Man), Tillangchong, etc.
3. Southern Group:Great Nicobar (largest island of Nicobar), Little Nicobar, Kondul Island, Pulo Milo (or Pilomilo), Mero, Treis, Menchal, Cabra, and Megapode.

1. Great Nicobar is the largest island with dimensions of about 50 × 25 kilometers. It is the southernmost island of India, located just 147 kilometers from Sumatra Island (Indonesia).
2. The southernmost point of India, 'Indira Point', is located on the southern tip of Great Nicobar.

Inhabited Islands:Around 12 islands in this group are inhabited. Indigenous ethnic groups living here include the Nicobarese and Shompens. Local languages include those of the Shompens and the Nicobari linguistic group.

Other Features:

- The 'Ten Degree Channel' separates theAndaman Islands (north) from the Nicobar Islands (south).
- Most of these islands are volcanic in origin, composed of Tertiary sandstone, limestone, and shale.
- Barren Island and Narcondam Island, located north of Port Blair, are primarily volcanic islands.
- Some islands are surrounded by coral reefs.
- The islands are mostly hilly, with moderate elevation.
- Saddle Peak in North Andaman is the highest peak, with an elevation of 737 meters.
- In 2018, the names of the following three islands were changed:
- Ross Island '! Renamed as Netaji Subhas Chandra Bose Island
- Neil Island '! Renamed as Shaheed Island
- Havelock Island '! Renamed as Swaraj Island
- Location: This is a group of islands located in the Arabian Sea.

Extent: These islands stretch between 8°N to 12°202 N latitude and 71°452 E to 74°E longitude, covering an area of 108.78 square kilometers. They lie approximately 200–500 kilometers southwest of the Kerala coast.

Major Islands in the Group: Although the word Lakshadweep literally means "a hundred thousand islands," the group actually consists of only 25 small islands. These islands are divided into three subgroups:

Amindivi Islands: Islands located north of 11°N latitude are known as the Amindivi Islands.

Cannanore Islands: Islands located south of 11°N latitude are referred to as the Cannanore Islands.

Minicoy Islands: This island group is located in the far south. It is the largest and most developed island in the Lakshadweep group.

Structure and Topography:

i. All the islands in this group are of coral origin and are surrounded by reefs.
ii. The topography is flat, with no hills, waterfalls, or valleys – in other words, there is a near-complete absence of elevation and depression features.
iii. Shallow lagoons can be seen on the western coasts of these islands, while the eastern coasts have steeper

slopes.

iv. Capital: The capital city is Kavaratti.

Importance of Indian Islands

Strategic Importance: The geographical positioning of India's islands makes them highly strategic:

i. TheAndaman and Nicobar Islands, located near the Malacca Strait, offer India a significant strategic advantage in the Indian Ocean region.

ii. These islands serve as a forward operating base for the Indian Navy, thereby enhancing India's maritime security and surveillance capabilities in the region.

Economic Importance: India's islands contribute to the national economy through tourism, fishing, and agriculture.

Environmental Importance: The Indian islands have a tropical climate and are covered with dense forests. These forests are home to a vast diversity of flora and fauna.

Conclusion: More than just a geographical feature, India's islands hold multiple layers of significance. Beyond strategic advantages, they are sources of valuable natural resources.

In recent years, climate change and rising sea levels have posed threats of submergence to some of these islands. Ensuring the sustainability of these islands is crucial—not only for India but also for the marine ecology of the subcontinent. Sustainable development is the only way forward.

References:-

1. Physical Geography of India - Dr. Savindra Singh.
2. Physical Geography of India – NCERT.
3. Physical Geography of India - Chaturbhuj Morya.
4. Physical Geography of India - Sanjay Gupta.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मध्य प्रदेश के शासकीय गोदामों की अवस्थिति और भण्डारण व्यवस्था (उज्जैन संभाग के संदर्भ में एक अध्ययन)

डॉ. मनु गौतम* लवकुश पाटीदार**

* एसोसिएट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र) म. प्र. सामजिक शोध संस्थान, भरतपुरी, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान, भगतसिंह शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा, जिला रतलाम (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र मध्य प्रदेश के उज्जैन संभाग के शासकीय गोदामों की अवस्थिति और भण्डारण व्यवस्था के आर्थिक अध्ययन पर आधारित है। खाद्य आपूर्ति की माँग पहले से कहीं अधिक है, और इससे फ़सल की पैदावार बढ़ी है, जिसके परिणामस्वरूप खाद्यान्नों का गोदामों में भंडारण बढ़ गया है। हालाँकि, खाद्य सुरक्षा, भोजन की उपलब्धता और उस तक पहुँच, दोनों से प्रभावित होती है, जिससे भूख और कुपोषण जैसी समस्याओं के समाधान के लिए यह उपाय अपर्याप्त हो जाता है। कवक, घुन, जीवाणु, कीट, कृंतक और अन्य जैविक घटक नुकसान में योगदान करते हैं। तापमान और भंडारण तकनीक, अन्य बातों के अलावा, अजैविक कारकों के कारण भंडारण में नुकसान का कारण बन सकते हैं।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. उज्जैन संभाग के शासकीय गोदामों की अवस्थिति को जानना।
2. उज्जैन संभाग के शासकीय गोदामों के भण्डारण प्रबन्ध को जानना।

निदर्शन तथा तथ्य संकलन – प्राथमिक तथ्य संकलन में उज्जैन संभाग के सात जिलो में तहसील स्तर पर शासकीय भण्डारगृहों को सम्मिलित किया गया है। प्रत्येक जिले से दो तहसील से दो–दो शासकीय भण्डारगृहों का चयन किया किया गया है जिसके अन्तर्गत कुल गोदाम की संख्या 28 हैं। उक्त गोदामों का व्यक्तिगत अवलोकन और गोदामों में कार्यरत अधिकारी, कर्मचारी एवं सदस्य किसानों एवं व्यापारियों का साक्षात्कार के माध्यम से प्राथमिक तथ्यों एवं जानकारी का संकलन किया गया है।

गोदाम तक सड़क की स्थिति – उज्जैन संभाग के शासकीय भण्डारगृहों का अवलोकन एवं लाभार्थियों से तथ्य संकलन करने पर पाया गया कि 10.71 प्रतिशत गोदामों तक जाने वाली सड़क बहुत ही अच्छी पाई गई एवं 28.57 प्रतिशत गोदामों तक जाने वाली सड़क औसत दर्जे की है तथा 46.43 प्रतिशत गोदामों तक जाने वाली सड़क औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 14.29 प्रतिशत गोदामों तक जाने वाली सड़क बहुत खराब थी। इन सड़कों पर वाहनों का माईलेज कम होता है और मेंटेनेंस बढ़ता है जिससे अर्थिक हानि होती है।

वाहन सहित वजन लेने की व्यवस्था – उज्जैन संभाग के शासकीय भण्डारगृहों का अवलोकन एवं लाभार्थियों से तथ्य संकलन करने पर पाया गया कि 7.14 प्रतिशत गोदामों में वाहन सहित वजन लेने की व्यवस्था बहुत अच्छी है एवं 21.43 प्रतिशत गोदामों में औसत दर्जे की है तथा 42.86 प्रतिशत गोदामों में औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 28.57 प्रतिशत गोदामों में वाहन सहित वजन लेने की व्यवस्था बहुत खराब थी। गोदामों वाहन सहित वजन लेने की व्यवस्था सही होने से तौल सही होता है जिससे अर्थिक हानि नहीं होती है।

माल लेने की प्रक्रिया – उज्जैन संभाग के शासकीय भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 17.86 प्रतिशत गोदामों में माल लेने की व्यवस्था बहुत अच्छी है एवं 28.57 प्रतिशत गोदामों में माल लेने की व्यवस्था औसत दर्जे की है तथा 32.14 प्रतिशत गोदाम में माल लेने की व्यवस्था औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 21.43 प्रतिशत गोदामों में माल लेने की व्यवस्था बहुत खराब थी। गोदामों में माल लेने की व्यवस्था सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

ड्रेनेज सुविधा – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 14.29 प्रतिशत गोदामों में वर्षा जल के लीकेज और ड्रेनेज सुविधा बहुत अच्छी है एवं 21.43 प्रतिशत गोदामों में वर्षा जल के लीकेज और ड्रेनेज सुविधा औसत दर्जे की है तथा 25.00 प्रतिशत गोदामों में वर्षा जल के लीकेज और ड्रेनेज सुविधा औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 39.29 प्रतिशत गोदामों में वर्षा जल के लीकेज और ड्रेनेज सुविधा बहुत खराब थी। गोदामों में वर्षा जल के लीकेज और ड्रेनेज सुविधा सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

क्षमता का आकलन – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 57.14 प्रतिशत गोदामों में भंडारण से पूर्व क्षमता के आकलन की व्यवस्था बहुत अच्छी है एवं 14.29 प्रतिशत गोदामों में क्षमता के आकलन की व्यवस्था औसत दर्जे की है तथा 17.86 प्रतिशत गोदामों में भंडारण से पूर्व क्षमता के आकलन की व्यवस्था औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 10.71 प्रतिशत गोदामों में भंडारण से पूर्व क्षमता के आकलन की व्यवस्था बहुत खराब थी। गोदामों में भंडारण से पूर्व क्षमता के आकलन सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

कीटनाशक उपचार – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 25.00 प्रतिशत गोदामों में कीटनाशक उपचार का स्तर बहुत अच्छा है एवं 25.00 प्रतिशत गोदामों में कीटनाशक उपचार औसत दर्जे का है तथा 25.00 प्रतिशत गोदामों में कीटनाशक उपचार का स्तर औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 25.00 प्रतिशत गोदामों में कीटनाशक उपचार का स्तर बहुत खराब था। गोदामों में कीटनाशक उपचार सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

अग्निशमन की व्यवस्था – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 28.57 प्रतिशत गोदामों में अग्निशमन की व्यवस्था का स्तर बहुत अच्छा है एवं 28.57 प्रतिशत गोदामों में अग्निशमन की व्यवस्था औसत दर्जे की है तथा 21.43 प्रतिशत गोदामों में अग्निशमन की व्यवस्था औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 21.43 प्रतिशत गोदामों में अग्निशमन की व्यवस्था का स्तर बहुत खराब था। गोदामों में अग्निशमन की व्यवस्था सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

सफाई का स्तर – उज्जैन संभाग भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 21.43 प्रतिशत गोदामों में भंडारण के दौरान सफाई का स्तर बहुत अच्छा है एवं 10.71 प्रतिशत गोदामों में भंडारण के दौरान सफाई का स्तर औसत दर्जे का है तथा 32.14 प्रतिशत गोदामों में भंडारण के दौरान सफाई का स्तर औसत से भी कम दर्जे का था जबकि 35.71 प्रतिशत गोदामों में भंडारण के दौरान सफाई का स्तर बहुत खराब था। गोदामों में सफाई का स्तर सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

वायु के आगमन का स्तर – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 25.00 प्रतिशत गोदामों में वायु के आगमन का स्तर बहुत अच्छा है एवं 28.57 प्रतिशत गोदामों में वायु के आगमन का स्तर औसत दर्जे का है तथा 28.57 प्रतिशत गोदामों में वायु के आगमन का स्तर औसत से भी कम दर्जे का था जबकि 17.86 प्रतिशत गोदामों में वायु के आगमन का स्तर बहुत खराब था। गोदामों में वायु के आगमन का स्तर सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

चूहों और दीमक के लिए प्रबन्धन – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 25.00 प्रतिशत गोदामों में चूहों और दीमक का प्रबन्धन बहुत अच्छा है एवं 28.57 प्रतिशत गोदामों में चूहों और दीमक का प्रबन्धन औसत दर्जे का है तथा 17.86 प्रतिशत गोदामों में चूहों और दीमक का प्रबन्धन औसत से भी कम दर्जे का था जबकि 28.57 प्रतिशत गोदामों में चूहों और दीमक के लिए प्रबन्धन बहुत खराब था। गोदामों में चूहों और दीमक के लिए प्रबन्धन सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

गुणवत्ता में गिरावट की निगरानी – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 32.14 प्रतिशत गोदामों में गुणवत्ता में गिरावट की अग्रिम निगरानी बहुत अच्छी थी एवं 21.43 प्रतिशत गोदामों में गुणवत्ता में गिरावट की अग्रिम निगरानी औसत दर्जे की है तथा 25.00 प्रतिशत गोदामों में गुणवत्ता में गिरावट की अग्रिम निगरानी औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 21.43 प्रतिशत गोदामों में गुणवत्ता में गिरावट की अग्रिम निगरानी बहुत खराब थी। गोदामों में गुणवत्ता की अग्रिम निगरानी सही न होने से अर्थिक हानि होने की संभावना होती है।

भार की हानि – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 17.86 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर भार की हानि का स्तर बहुत कम था एवं 28.57 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर भार की हानि का स्तर औसत दर्जे का था तथा 32.14 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर भार की हानि का स्तर औसत से अधिक था जबकि 21.43 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर भार की हानि का स्तर बहुत अधिक था। गोदामों से माल लेने पर भार की हानि का आर्थिक हानि से सीधा सम्बन्ध होता है।

वाणिज्यिक कीमत की हानि – उज्जैन संभाग के भण्डारगृहों के अवलोकन में पाया गया कि 28.57 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर वाणिज्यिक हानि का स्तर बहुत कम था एवं 28.57 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर वाणिज्यिक हानि का स्तर औसत दर्जे का था तथा 21.43 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर वाणिज्यिक हानि का स्तर औसत से अधिक था जबकि 21.43 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर वाणिज्यिक हानि का स्तर बहुत अधिक था। गोदामों से माल लेने पर वाणिज्यिक हानि का आर्थिक हानि से सीधा सम्बन्ध होता है।

निष्कर्ष – 46.43 प्रतिशत गोदामों तक जाने वाली सड़क औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 7.14 प्रतिशत गोदामों में वाहन सहित वजन लेने की व्यवस्था बहुत अच्छी है। 32.14 प्रतिशत गोदाम में माल लेने की व्यवस्था औसत से भी कम दर्जे की थी जबकि 39.29 प्रतिशत गोदामों में वर्षा जल के लीकेज और ड्रेनेज सुविधा बहुत खराब थी। 57.14 प्रतिशत गोदामों में भंडारण से पूर्व क्षमता के आकलन की व्यवस्था बहुत अच्छी है एवं 25.00 प्रतिशत गोदामों में कीटनाशक उपचार का स्तर औसत से भी कम दर्जे का था। 21.43 प्रतिशत गोदामों में अग्निशमन की व्यवस्था का स्तर बहुत खराब था तथा 32.14 प्रतिशत गोदामों में भंडारण के दौरान सफाई का स्तर औसत से भी कम दर्जे का था।28.57 प्रतिशत गोदामों में वायु के आगमन का स्तर औसत दर्जे का है एवं 17.86 प्रतिशत गोदामों में चूहों और दीमक का प्रबन्धन औसत से भी कम दर्जे का था।21.43 प्रतिशत गोदामों में गुणवत्ता में गिरावट की अग्रिम निगरानी औसत दर्जे की है तथा 32.14 प्रतिशत गोदामों से माल लेने पर भार की हानि का स्तर औसत से अधिक था।

सुझाव – गोदामों की निरंतर निगरानी की जा सकती है और कारकों को नियंत्रित करने के लिए उचित उपचार किया जा सकता है। अनाज के भंडारण को उन सभी कारकों से सुरक्षित रखने के लिए, जो इसे नष्ट कर सकते हैं, नियंत्रण उपायों की आवश्यकता है। भंडारण से पहले अनाज की उचित सफाई सुनिश्चित करने के लिए, सख्त सफाई प्रक्रियाओं का पालन किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, अनाज की जाँच यह सुनिश्चित करने के लिए की जानी चाहिए कि उन्हें धूप में और फिर पूरी तरह से छाया में सुखाया गया हो। कीटों से बचाव के लिए धूम्रीकरण भी आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Madhya Pradesh Warehousing and Logistics Corporation (2024) “Progress Report”, Government of Madhya Pradesh, Bhopal, page 22-23
2. Madhya Pradesh Warehousing and Logistics Corporation (2024) “Progress Report”, Ujjain Division Madhya Pradesh Warehousing and Logistics Corporation, Government of Madhya Pradesh, Ujjain Page 23

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Effect of Yoga on Hormonal Balance in Women with Polycystic Ovary Syndrome (PCOS): An Experimental Study

Sakshi Nagru* Dr. Sanjeev Kumar**

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Assistant Professor (Physical Education) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract : In women of reproductive years, Polycystic Ovary Syndrome (PCOS) is a common endocrine condition that frequently leads to hormonal abnormalities such high testosterone, a disturbed LH/FSH ratio, with insulin resistance. This study examines how a 12-week yoga program affects PCOS-afflicted women's hormone balance. A control group and a yoga intervention group were randomly assigned to forty women. The results showed that the meditation group's hormone levels and menstrual regularity significantly improved, suggesting that yoga may be a useful adjunctive treatment for PCOS.

Introduction - About 10% of women worldwide suffer with PCOS, which is characterized by polycystic ovaries, hyperandrogenism, and chronic an anovulation It contributes to infertility and metabolic diseases and is often accompanied by insulin resistance and an elevated LH/FSH ratio. Although there are pharmaceutical therapies available, holistic methods such as yoga are becoming more popular due to their ability to reduce stress, regulate metabolism, and balance hormones.

Objectives:

1. To measure improvements in insulin sensitivity and menstrual regularity following a yoga intervention;
2. To determine how a structured yoga program affects hormonal parameters in women with PCOS.

Methodology

1 Study Design

a 12-week, randomized, controlled experimental investigation.

2 Those who took part: 40 women in total with a PCOS diagnosis (Rotterdam Criteria)

- Age range: 18 to 35
- Dispersed at Random:
- 20 women make up Group A (Yoga Group).
- 20 women made up Group B (Control Group); they just got lifestyle guidance.

3 Inclusion Criteria

- An elevated LH/FSH ratio or blood testosterone level;
- An irregular menstrual cycle;
- A confirmed PCOS diagnosis

4 Exclusion Criteria:

- Pregnancy;
- Thyroid or adrenal diseases;
- Use of insulin sensitizers or hormonal therapy within the previous three months

5 Intervention

Yoga Group (Group A):

- 1-hour sessions, 5 days/week for 12 weeks
- Protocol included:
- **Asanas**: Surya Namaskar, Bhujangasana, Dhanurasana, BaddhaKonasana, SetuBandhasana
- **Pranayama**: NadiShodhana, Bhramari
- **Meditation**: 10-minute guided mindfulness

Control Group (Group B):

- Advised on dietary changes and physical activity (no yoga)

6 Outcome Measures

Assessed at baseline and after 12 weeks:

- Serum testosterone (ng/dL)
- LH/FSH ratio
- Fasting insulin (µU/mL)
- Menstrual cycle regularity

Results

1 Baseline Characteristics

Parameter	Yoga Group (n=20)	Control Group (n=20)	p-value
Age (years)	24.1 ± 3.4	23.8 ± 3.1	0.76
BMI (kg/m²)	26.5 ± 2.8	26.9 ± 3.2	0.65
Serum Testosterone	80.1 ± 10.7	79.4 ± 11.2	0.82
LH/FSH Ratio	2.6 ± 0.7	2.5 ± 0.6	0.68
Fasting Insulin	20.4 ± 4.5	20.0 ± 4.7	0.74

2 Post-Intervention Hormonal Parameters

Parameter	Yoga Group (Post)	Control Group (Post)	p-value
Serum Testosterone	**66.3 ± 8.9**	77.5 ± 10.5	0.005*
LH/FSH Ratio	**1.8 ± 0.5**	2.4 ± 0.6	0.003*
Fasting Insulin	**15.1 ± 3.7**	19.4 ± 4.1	0.004*
Menstrual Regularity (%)	**75% (15/20)**	30% (6/20)	0.001*

Statistically significant (p<0.05)

Discussion: In line with the research, yoga helps women with PCOS with their hormonal imbalances. Important gains were noted in:

i. Serum testosterone: a 17.3% decrease in the yoga group was linked to enhanced ovarian function.
ii. LH/FSH Ratio: A decline indicates that the hypothalamic-pituitary-ovarian axis has been repaired.
iii. Fasting Insulin: Reduces metabolic risk by improving insulin sensitivity.
iv. Menstrual Regularity: The yoga group's improvement over exceeded that of the control group.

These modifications are probably an outcome of yoga's combined impacts on endocrine function, vagal tone, and stress reduction.

Conclusion: Women with PCOS who participated in a structured 12-week yoga program saw a significant improvement in menstrual regularity and hormonal balance. For women who choose non-pharmacological methods, yoga might be a useful supplement to traditional treatment.

Limitations:

1. Small sample size
2. Short duration (12 weeks)
3. No long-term follow-up

Recommendations: It is advised to conduct more research with bigger cohorts and longer follow-up. Incorporating cortisol, the SHBG, which and glucose tolerance metrics could provide more profound understanding.

References:-

1. Ch, R./ D., & N, J./ R. (2023). Impact of yoga therapy on hormonal imbalance in women with Polycystic Ovarian Disease. *International Journal of Ayurvedic Medicine, 14*(1), 206–212. https://doi.org/10.47552/ijam.v14i1.3357Reddit+11ijam.co.in+11Wiley Online Library+11
2. Singh, D., Chaturvedi, K./ K., Singh, S., &Kandan, S./ L. (2022). Effect of yoga on management of Polycystic Ovarian Syndrome (PCOS): A systematic review. *Journal of Complementary and Alternative Medical Research, 20*(4), 1–18. https://doi.org/10.9734/jocamr/2022/v20i4420Journal of Clinical and Medical Research
3. Patel, V., Menezes, H., Menezes, C., Bouwer, S., Bostick Smith, C./ A., &Speelman, D./ L. (2020). Regular mindful yoga practice as a method to improve androgen levels in women with Polycystic Ovary Syndrome: A randomized controlled trial. *Journal of the American Osteopathic Association*. https://doi.org/10.7556/jaoa.2020.050Reddit+4PubMed+4vedamrita.com+4
4. Mohseni, M., Eghbali, M., Bahrami, H., Dastaran, F., &Amini, L. (2021). Yoga effects on anthropometric indices and Polycystic Ovary Syndrome symptoms in women undergoing infertility treatment: A randomized controlled clinical trial. *Evidence-Based Complementary and Alternative Medicine, 2021*, Article ID 5564824. https://doi.org/10.1155/2021/5564824ijlpr.com+1SpringerLink+1
5. Bahrami, H., et al. (2019). [Yoga intervention] randomized controlled trial in Iranian PCOS women (6-week study): outcomes on quality of life, follicles, weight. *[Journal]*. *Details in meta analysis*. PMC+1Wikipedia+1
6. Rao, R., et al. (2018). Ayurvedic treatment plus yoga for PCOS: Effects on AMH, prolactin, testosterone, LH, FSH, T3/T4, weight and anxiety. *[Journal]*. PMC
7. Ratnakumari, M./ E., Manavalan, N., Sathyanath, D., Ayda, Y./ R., &Reka, K. (2018). Changes in polycystic ovarian morphology after naturopathic and yogic interventions. *International Journal of Yoga, 11*(2), 139–147. https://doi.org/10.4103/ijoy.IJOY_62_16PMC+2ijlpr.com+2PMC+2
8. Selvaraj, V., Vanitha, J., Dhanaraj, F./ M., Sekar, P., &Babu, A./ R. (2020). Impact of yoga and exercise on PCOS risk among adolescent schoolgirls in south India. *Health Science Reports, 3*(4), e212. https://doi.org/10.1002/hsr2.212ijlpr.com+1vedamrita.com+1
9. Shalini, S., et al. (2019). Case-series of yoga therapy plus medication in PCOS: effects on menstrual regularity and BMI. *[Journal]*. PMC
10. Shanthi, B., et al. (2014). Kayakalp yogic exercises in PCOS: effects on FSH, LH, Hb, glucose and cholesterol. *[Journal]*. PMC
11. Verma, V., et al. (2017). Yoga intervention in PCOS: impacts on fasting blood glucose, insulin, HOMA IR. *[Conference abstract]*. PMC
12. Nidhi, R./ P./ V., Nagarathna, R., Ram, A. (2013). Effects of a holistic yoga program on endocrine parameters in adolescents with PCOS: a randomized controlled trial. *Journal of Alternative and Complementary Medicine, 19*(2), 153–160. SpringerLink
13. Nidhi, R./ P./ V., Nagarathna, R., Ram, A. (2013). Effect of yoga program on quality of life in adolescent PCOS: a randomized control trial. *Applied Research in Quality of Life, 8*(3), 373–383. SpringerLink+1Wiley Online Library+1
14. Innes, K./ E., Bourguignon, C., & Taylor, A./ G. (2005). Risk indices associated with the insulin resistance syndrome... possible protection with yoga: a systematic review. *Journal of the American Board of Family Medicine, 18*(6), 491–519. PMCSpringerLink

15. Chu, P., Gotink, R./ A., Yeh, G./ Y., Goldie, S./ J., & Hunink, M./ G./ M. (2016). The effectiveness of yoga in modifying risk factors for cardiovascular disease and metabolic syndrome: A systematic review and meta-analysis of RCTs. *European Journal of Preventive Cardiology, 23*(3), 291–307. ijlpr.comSpringerLink
16. Stefanaki, C., Bacopoulou, F., Livadas, S., et al. (2015). Mindfulness stress management program in women with PCOS: effects on stress, QoL, endocrine markers. *Stress, 18*(1), 57–66. SpringerLink+1PMC+1
17. Cooney, L./ G., Milman, L./ W., Hantsoo, L., et al. (2018). Cognitive-behavioral therapy improves weight and QoL in PCOS women: pilot randomized clinical trial. *Fertility and Sterility, 110*(1), 161–e711. Springer Link+1PMC+1
18. Moeller, L./ V., Lindhardt, C./ L., Andersen, M./ S., et al. (2019). Motivational interviewing in obese women with PCOS – pilot study. *Gynecological Endocrinology, 35*(1), 76–80. SpringerLink
19. Yin, M./ X./ C., Du, L./ B., Zou, X./ N., et al. (2021). Can psychosocial intervention suppress testosterone & triglycerides in women with PCOS? A feasibility trial. *Frontiers in Psychology, 12*, 690539. SpringerLink
20. Li, Y., et al. (2022). Tai chi intervention in PCOS women: effects on BMI, androgens, glucose, HOMA IR. *[Journal]*. SpringerLink
21. ELBanna, M./ M., Kamel, D./ M., Shaaban, A., Botla, A./ M., &Hamoda, R./ E. (2023). Effect of yoga training and high probiotic food supplements on insulin-resistance in PCOS: RCT. *International Journal of Kinesiology and Sports Science*. https://doi.org/10./ IJKSS2023Australian International Academic Centre
22. Shrivastava, R., Mishra, S., Singh, R., &Shrivastava, P. (2022). Effect of integrated yoga and naturopathy on PCOS: A case study. *Journal of Family Medicine and Primary Care, 11*(4), 1525–1527. https://doi.org/10.4103/jfmpc.jfmpc_651_21PMC
23. Innes, K./ E., et al. (Year unknown). Yoga interventions and endocrine outcomes in PCOS women: review. *[Article in press/projected]*PMCWiley Online Library
24. Systematic meta-analysis (2024). Mind body interventions in PCOS including yoga: hormonal, insulin, BMI outcomes. *Journal of Ovarian Research*. https://doi.org/10.1186/s13048-024-01477-2SpringerLink
25. Evidence review (2023). Lifestyle, yoga and endocrinal regulation in PCOS women. *Evidence Based Complementary and Alternative Medicine*. https://doi.org/10./ ECCAM2023

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Assessment of Social Status of Slums in Bilaspur City

Dr. Kajal Moitra* Soumen Maiti**

*Professor (Geography) and HOD (Social Science) Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (Geography)Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.) INDIA

Abstract: The rapid pace of urbanization in India has led to the emergence and expansion of slums, particularly in mid-sized cities like Bilaspur, Chhattisgarh. This study aims to conduct a comprehensive socio-economic assessment of the slum population in Bilaspur City, focusing on key indicators such as income levels, employment status, educational attainment, housing conditions, access to basic services, and health care facilities. Primary data was collected through field surveys, interviews, and structured questionnaires across various slum clusters, while secondary data was sourced from municipal records and census reports. The findings reveal significant disparities in access to essential services and highlight the persistent challenges faced by slum dwellers, including inadequate housing, poor sanitation, irregular employment, and limited educational opportunities. The study also explores the role of government policies and local urban development programs in addressing these issues. Based on the analysis, strategic recommendations are proposed to promote inclusive urban planning and improve the living conditions of the urban poor. This research contributes to the broader discourse on sustainable urban development and social equity in rapidly growing Indian cities.

Keywords: Emergence, essential services and highlight the persistent,Rapidly Growing.

Introduction - The socio-economic condition of slum populations is largely shaped by key factors such as education, income, and occupation. These elements collectively influence living standards and contribute to the broader social environment in slum areas (Tripathy, 2013). Factors like housing quality, lifestyle, access to education and healthcare, and overall well-being are directly affected by socio-economic status. Understanding the distribution of age, caste, income levels, educational attainment, and types of employment is essential for a comprehensive socio-economic analysis of slum communities.

Review of Literature

The socio-economic assessment of slum populations has been a vital area of research within urban studies, development geography, and public policy. Numerous scholars and organizations have studied the complex realities of slum dwellers in India, addressing issues such as poverty, inadequate infrastructure, social exclusion, and policy failures.**Davis (2006)**, in his seminal work *Planet of Slums*, emphasized the global spread of slums and identified them as byproducts of unchecked urbanization, economic inequality, and neglect of urban planning. He noted that in cities of the Global South, including Indian urban centers, slums are often informal settlements with limited access to civic amenities.**Kundu (2003)**analyzed the urbanization pattern in India and noted that although cities are engines of economic growth, they often fail to accommodate the influx of rural migrants, resulting in unplanned settlements and slum development. He highlighted the socio-spatial disparities that slum dwellers face due to marginalization and weak policy implementation. **Patel and Deb (2006)** examined the living conditions in slums of Mumbai and concluded that slum residents face multidimensional deprivation—low income, poor education, inadequate housing, and lack of access to healthcare. They emphasized the need for community-based participatory approaches in slum improvement policies.**UN-Habitat (2015)** defines slums as settlements with poor housing structures, overcrowding, insecure tenure, and insufficient access to safe water and sanitation. The report on *World Cities* suggests that slum upgrading should focus not only on infrastructure but also on improving socio-economic outcomes such as education, employment, and health.**Kumar and Aggarwal (2013)** conducted a study in Bhopal, Madhya Pradesh, which showed that slum populations are often engaged in informal and low-paying jobs, with limited upward mobility. They stressed the need for skill development, vocational training, and inclusive urban policy frameworks.

Bose (2011), in his study of slums in Kolkata, pointed out the role of political patronage in the persistence of slums and argued that regularization without adequate service provision perpetuates poverty and inequality.

Chatterjee (2010) introduced the concept of "political society" to explain how slum dwellers negotiate with the state for basic services through informal and political

channels, often bypassing legal frameworks. This lens helps understand why some slums gain services despite being illegal settlements.In the **Chhattisgarh context**, **Chandrika and Verma (2017)** studied urban slums in Raipur and highlighted that residents suffer from poor housing, lack of sanitation, erratic water supply, and weak health infrastructure. Their findings indicated the urgent need for policy reforms tailored to the local context.

Though limited, existing literature on **Bilaspur City** suggests similar trends of urban poverty and informal settlements. Reports by the **Bilaspur Municipal Corporation** and **Census 2011** show that the slum population in the city lacks access to safe drinking water, waste disposal systems, and affordable housing.Despite national-level interventions like the **Pradhan Mantri Awas Yojana (PMAY)** and the **Rajiv Awas Yojana (RAY)**, the gap between policy intentions and on-ground realities persists in medium-sized cities like Bilaspur. Therefore, there is a strong need for empirical and localized studies that can bridge this gap and inform effective urban planning.

Objectives of the Study :

1. To analyze the socialand population attributes of slums in the study areas.
2. To study the effects of slums on urban environment of the study areas.

Research Methodology:

Primary Data Sources: There are a total 27 slums in bilaspur city in which 16517 peoples reside. For collection of primary data questionnaires will be filled by selecting 50 houses from 09 slums. here are mainly 27 slums in Bilaspur town out of which 10 slums have been selected for collection of primary data which comprises more than 40% of the slums.

Secondary Data Sources: Topo sheet, Tahsil office Reports, Census Handbook, Record of Town Planning Office, Record of bilaspur Corporation Office, Paper cutting and web sites are the secondary data sources for this study

Analysis of Data: The data collected through primary and secondary data sources will be analyzed with the help of statistical tools.

Discussion: Slums typically emerge due to multiple challenges, including the lack of affordable developed land for the urban poor, high population growth, rural-to-urban migration in search of employment, and insufficient urban infrastructure and services. According to Sufaira (2013), slums are often the outcome of flawed urban policies, weak governance, corruption, poor land management, inadequate regulations, lack of political commitment, and ineffective financial systems.

In the Bilaspur urban area, industrial development, educational institutions, transport facilities, hospitals, and government offices have generated employment opportunities for both skilled and unskilled workers. Many migrants from nearby rural regions are drawn to these cities in search of better livelihoods. However, due to the high cost of urban housing, migrants often occupy vacant lands—whether public, private, or semi-government—to build informal shelters, leading to the formation of slums.These settlements are typically socially diverse, comprising individuals from different economic, religious, and educational backgrounds, creating a heterogeneous community structure. Due to limited education and skills, most slum residents—both men and women—work in low-wage, unskilled jobs and live in unhygienic and crowded conditions. A detailed socio-economic assessment of slums can be conducted by analyzing factors such as income levels, employment types, education, housing quality, and demographic characteristicHigh levels of poverty and lack of resources characterise the social status of Bilaspur slum dwellers. Most slum dwellers live in extreme poverty levels with limited access to basic amenities such as clean water, electricity, decent housing and health services. Lack of proper housing and sanitation facilities means that they are often exposed to various health hazards and suffer from preventable diseases. The social status of slum dwellers in Bilaspur is complex and multi-faceted and is shaped by many factors including poverty, migration, urbanisation and social inequality. Access to education and health services is limited in the slums of Bilaspur city, especially among the female population. Health facilities are inadequate. The high cost of medical treatment is a deterrent for most slum dwellers and as a result, diseases such as tuberculosis, respiratory infections and diarrhoea are prevalent. Due to the lack of proper drainage and waste disposal system in the area, there are open drains and garbage dumps, which spread diseases like malaria, dengue and cholera. A survey conducted by Bilaspur Municipal Corporation in 2023 has revealed that the number of slums in the city is 27. Bilaspur Municipal Corporation has 27 slums .. Most of the people living in slums are migrants, who come to the city in search of work and better economic opportunities. They are migrating here from different parts of the country including Uttar Pradesh, Bihar, Madhya Pradesh and Rajasthan itself. The situation of women and girls is particularly bad here due to low levels of literacy, limited access to health services and high rates of domestic violence . Maternal and child health outcomes are poor here.

Women face significant cultural barriers and are often excluded from decision-making processes which affect their way of life. Bilaspur slums are mostly inhabited by people of a particular caste, who come from the same background. Whose social status, social customs and traditions are almost similar. Slums of bilaspur city are areas characterized by limited economic opportunities. Most of the slum dwellers in the 10 slums surveyed are employed in the informal sector, working as daily wage labourers, roadside vendors, domestic workers and construction workers. They earn meager incomes, which are barely enough to meet their basic needs. The daily wage labourers who mostly come from villages are mostly from joint families.

Survey of commercial work places reveals that child

labour is another important issue here. Poverty forces children in slum areas to engage in manual labour to support their families. Age and gender are not a constraint for employment in slum areas as the survey found that even a 14-year-old child who is of an age to go to school or play with children of his age group is looking for work to have two meals a day. On the other hand, a woman who is breastfeeding a one-year-old child and who should be resting is also ready to work here.

Bilaspur, Chhattisgarh's third-largest city, has a significant slum population. As of the 2011 SECC, around 36.8% of the city's municipal residents—approximately 98,555 people—lived in slum areas. District-wide, nearly 29.9% of the urban population resides in such settlements, which are marked by social, economic, and spatial marginalization.

Most slum households fall under low-income categories, with 70.6% relying on casual labor, 7% being self-employed, and 3.7% engaged in salaried work. These jobs often lack security, regular pay, or benefits, leaving families vulnerable to economic fluctuations

Slum dwellings are typically substandard and made from low-cost materials. Fewer than 60% of residents have formal land tenure. Many slums face inadequate access to basic infrastructure such as water, sanitation, drainage, roads, and waste management. Education and healthcare access is limited, with only a few slums near schools or health centers.The population largely consists of displaced or landless individuals from marginalized caste groups—23% SC, 11% ST, 54% OBC, and 12% general category. Overcrowding is common, with families living in cramped conditions, which heightens social and health-related vulnerabilities.

Poor sanitation and overcrowded living conditions contribute to high rates of disease, including diarrhea and respiratory infections. Mobile health clinics like Dai Didi have helped improve access, serving over 128,000 women by 2022, but coverage remains limited.

Many slum residents are rural migrants seeking better livelihoods. However, they face difficulty accessing services and often lack strong social support systems within urban settings.Programs like PMAY-Urban and initiatives by Chhattisgarh's SUDA aim to improve housing and basic services. However, many slum clusters still suffer from inadequate water, sanitation, and legal housing security due to implementation gaps Bilaspur's slum population deals with compounded challenges—economic instability, poor housing, limited services, and social exclusion. Sustainable improvements require a comprehensive approach combining legal housing rights, infrastructure upgrades, skill development, healthcare access, and social inclusion.

A. Social Status Of Slum Population: Bilaspur, a rapidly growing city in Chhattisgarh, has witnessed significant urbanization over the past few decades. Alongside planned development, the city has also experienced the emergence and expansion of slum areas, where a considerable portion of the population resides under precarious conditions. The social status of the slum population in Bilaspur reflects a mixture of socio-economic challenges, informal living conditions, and limited access to basic services.Most slum dwellers in Bilaspur belong to economically weaker sections, including marginalized social groups such as Scheduled Castes (SCs), Scheduled Tribes (STs), and Other Backward Classes (OBCs). These communities often migrate from nearby rural areas in search of livelihood opportunities but end up settling in informal housing due to the lack of affordable shelter in the formal sector.

Education levels among slum populations remain low, especially among women and older generations. Many children attend government schools, but issues like lack of parental literacy, irregular attendance, and early involvement in labor affect their educational outcomes. Adult literacy rates are improving slowly due to government initiatives and NGO efforts, but disparities remain evident.Health conditions are another major concern. Overcrowding, poor sanitation, and limited access to clean water contribute to the spread of communicable diseases. Though some residents benefit from urban health centers, the quality and availability of medical facilities are often inadequate. Nutrition is also a persistent issue, particularly among children and pregnant women.Socially, slum dwellers often face stigmatization and exclusion. Their settlements are sometimes viewed as illegal or encroachments, leading to a lack of recognition and formal support from urban planning authorities. Despite this, strong community bonds and informal networks help residents manage everyday struggles, from finding employment to resolving local disputes.

Women in slums face multiple layers of disadvantage due to poverty, illiteracy, and gender-based discrimination. However, they often take active roles in informal economies through domestic work, street vending, or self-help groups. Over time, these efforts have contributed to gradual empowerment and greater community participation. In recent years, there has been some improvement due to government housing schemes, sanitation missions, and awareness programs. Yet, the overall social status of Bilaspur's slum population continues to be shaped by poverty, limited access to services, and socio-economic exclusion.

The social status of slum residents is often influenced by factors such as caste, religion, and the language they speak. These aspects are frequently inherited from their native regions, especially in the case of migrants. The slum population in Bilaspur city comprises individuals who have relocated from various parts of the country, including nearby tehsils, districts, and even other states, bringing with them diverse social backgrounds. To evaluate their social standing, key indicators such as caste, education level by caste, occupation by caste, and religious affiliation are considered. These elements collectively shape the overall social framework of slum communities in the urban area.

Area wise caste status of slum population : Data on caste composition within slum populations across different areas of Bilaspur city was gathered through structured interviews conducted using a prepared questionnaire. The caste-wise distribution is presented in Table 5.1 and Figure 5.2.Among the total surveyed population, individuals belonging to the Open General Caste category constitute 18.22 % of the slum residents in the urban region.

For the Other Backward Classes (OBC), 18.04% of the slum population falls under this category. The ST category makes up 10.87% of the slum dwellers. Scheduled Castes (SC) form the majority within the slum communities, comprising 52.85% of the total population.The data clearly indicates that Scheduled Castes dominate the slum areas across Bilaspur city slum area.

AreaWiseReligion StatusofSlumPopulation: Bilaspur, a rapidly growing urban center in Chhattisgarh, is witnessing significant demographic and spatial changes due to migration, urban expansion, and economic transformation. A notable aspect of this urban growth is the rise in slum settlements across various parts of the city. These informal settlements have emerged as a result of rapid population inflow from rural areas in search of employment, affordable living spaces, and better amenities. However, limited availability of planned housing and weak enforcement of urban planning policies have led to the unplanned growth of slums in different regions of the city.

Slum clusters in Bilaspur are primarily located near railway lines, industrial zones, drainage channels, and low-lying areas that are often prone to waterlogging and poor sanitation. Areas such as Sarkanda, Rajiv Nagar, Sirgitti, Mangla, Dayalband, and Nehru Nagar are known for their dense slum pockets. These regions are characterized by overcrowded housing, lack of access to clean drinking water, inadequate drainage systems, poor waste management, and limited access to education and health services.The socio-economic status of slum dwellers in Bilaspur reflects the broader challenges of urban poverty. A majority of the slum population belongs to marginalized communities, including Scheduled Castes (SC), Scheduled Tribes (ST), and Other Backward Classes (OBC), who often rely on informal labor markets such as construction, domestic work, rickshaw pulling, and small-scale street vending for their livelihood.

In terms of infrastructure, while some slum areas have received basic amenities under government schemes like the Pradhan Mantri Awas Yojana (PMAY) and Rajiv Awas Yojana (RAY), many remain inadequately served. The condition of roads, drainage, and electricity remains poor in several localities, leading to health hazards and frequent disruptions in daily life. Furthermore, the population density in slum areas is significantly higher than the city average, leading to a strain on existing public services. Seasonal migration adds to this pressure, particularly during harvesting and construction seasons when temporary laborers move in and settle in informal shelters.regional status of the slum population in Bilaspur city highlights the urgent need for inclusive urban planning, slum rehabilitation programs, and improved access to basic services. Addressing these issues is essential for enhancing the quality of life of slum dwellers and ensuring equitable urban development in Bilaspur.

Bilaspur, a prominent city in the Indian state of Chhattisgarh, reflects a diverse religious composition, showcasing the cultural harmony and pluralism that define much of urban India. The city accommodates a variety of faiths, with Hinduism being the predominant religion followed by a substantial portion of the population. Temples dedicated to various deities such as Lord Shiva, Vishnu, and Durga are widely spread across the city, serving not only as places of worship but also as cultural centres during major festivals like Navratri, Diwali, and Mahashivratri.

Apart from Hinduism, Islam is another significant religion in the region. Numerous mosques, including Jama Masjid and other community prayer halls, are active, especially during religious events such as Ramadan, Eid-ul-Fitr, and Eid-ul-Adha, which are observed with great enthusiasm by the local Muslim community. Christianity is also practiced by a segment of the population, with churches like the Sacred Heart Church and various Protestant establishments playing a central role in spiritual and community life. Christmas, Easter, and Good Friday are important religious events celebrated by the Christian residents.In addition, followers of Sikhism, Jainism, and Buddhism also contribute to the city's religious fabric. Sikh families regularly gather in Gurdwaras, where prayers, langar (community meals), and religious services are held. Jain temples in the city, often adorned with intricate carvings and serene environments, reflect the presence of a peaceful Jain community. Similarly, Buddhist followers, especially among scheduled tribes and some urban dwellers, observe rituals and teachings inspired by Lord Buddha. Bilaspur's religious structure is not only defined by places of worship but also by interfaith coexistence and mutual respect among communities. The city is a microcosm of secular values, where various religious traditions thrive side by side, contributing to a vibrant and inclusive urban society.

EducationalStatus ofSlumPopulation: Education is a key indicator of socio-economic development, and analyzing the educational status of slum dwellers in Bilaspur city provides valuable insights into their living conditions and opportunities for upward mobility. Based on primary data collection and field observations, the educational profile of the slum population in Bilaspur reveals a pattern of low literacy levels and limited access to quality education.

A significant portion of the slum residents in Bilaspur have either not attended school or dropped out at an early stage. Illiteracy remains a major concern, particularly among older adults and women. Many families prioritize earning over education due to economic hardship, leading to a high dropout rate among children, especially after primary or middle school. Children in these areas often attend nearby

government schools, but irregular attendance, lack of proper learning environments at home, and limited parental support in academic matters hinder their educational progress. Although some initiatives by government and non-government organizations have aimed to improve literacy levels through adult education programs and scholarships for students, the impact has been modest due to inadequate outreach and follow-up.

The data indicates that while a small percentage of slum dwellers have managed to complete secondary or higher secondary education, very few pursue higher education or vocational training. Factors such as financial constraints, early involvement in labour, and lack of guidance contribute to the low representation of slum youth in colleges or skill-based institutions. educational condition of the slum population in Bilaspur city is marked by high illiteracy, early school dropout, and limited access to quality education. Addressing these issues requires a multi-pronged approach involving better infrastructure, community awareness, financial assistance, and inclusive educational policies that target the specific needs of slum residents. o understand their literacy status, an attempt has been made to analyse the literacy pattern slum-wise, caste-wise and according to certain social groups. The male literate population in slums in Bilaspur city is 65,723 and female literate population in slums is 63,071.The literacy rate in slums of Bilaspur city was 81.81 per cent in 2011. The male literacy rate is 85.47%, which is higher than the female literacy rate of 73.86%. The literacy male-female disparity index was 0.108. The literacy rate of slums in Bilaspur city is lower than the district (86.2%) and state average (91.02%). Household surveys in slum areas across Bilaspur city show that Guru Ghasidas Nagar ward under Mini Basti slum tops the list with a literacy rate of 75.42 per cent, while Prem Gali slum in Vishnu Nagar ward is at the bottom with a literacy rate of only 52.24 per cent. Some areas have higher literacy rates than the city slums because they are surrounded by areas with better educational and other facilities. In Indian conditions, the higher the caste, the higher the literacy rate. Slums that have a higher number of people from one caste or another have higher literacy rates.Mini Mata slum literacy rate male and female 79.58% and 69.25% respectively are highest and Whears in Rajendra Nagar slum and Dabripara slum 55.71 and 49.44 lowes

Distribution of Age group wise and Gender-wise Literacy Rate: The literacy scenario in the slum areas of Bilaspur city reflects critical social patterns and disparities based on age and gender. Understanding these differences provides important insights for targeted educational interventions and policy formulation.

- **Age Group-Wise Literacy Distribution:** The literacy rate in slums varies significantly across different age brackets. The younger age groups tend to have higher literacy levels due to better access to educational opportunities in recent years. On the other hand, older generations often have lower literacy levels, reflecting past limitations in schooling infrastructure and social constraints.
- **Children (6–14 years):** This age group shows a relatively higher literacy rate, especially due to the implementation of compulsory primary education under the Right to Education (RTE) Act. Enrolment is high, though dropout rates still affect continuity, especially for girls.
- **Youth (15–24 years):** Literacy levels in this group are moderate but show improvement, especially among boys. Vocational training and skill-based learning also contribute to functional literacy. However, a portion of this group still struggles with basic reading and writing, especially among girls due to early marriage or domestic responsibilities.
- **Adults (25–59 years):** Literacy in this group shows a decline, particularly among women. Many individuals in this age group had limited access to formal education during their childhood. Employment responsibilities often prevented continued education.
- **Elderly (60 years and above):** This group reflects the lowest literacy levels. Most members of this generation, especially women, never received any formal education. Literacy is almost entirely male-dominated here, and functional literacy is rare.
- **Gender-Wise Literacy Analysis:** Gender disparities in literacy are clearly evident in Bilaspur's slum areas. Social norms, economic challenges, and domestic responsibilities contribute to unequal access to education for females.
- **Male Literacy:** Across all age groups, male literacy rates are consistently higher. Boys are generally prioritized for education in slum households. Even in older age groups, some men have received basic education or informal learning through work.
- **Female Literacy:** Despite gradual improvements, female literacy remains lower than male literacy across most age categories. The gender gap is particularly visible in the 25–59 and 60+ age groups. Early marriage, child-rearing, and household duties are major reasons for school discontinuation among girls. However, younger females show improved literacy rates due to governmental educational schemes, NGO interventions, and community awareness programs.

The literacy landscape in the slum areas of Bilaspur city highlights both progress and persistent challenges. While younger generations are increasingly gaining literacy, gender-based disparities and lower literacy among older residents remain key concerns. Focused educational drives, adult In the 7–14 years age group, literacy was found to be 100%, with no difference between males and females. This is largely due to the fact that children in this age range are enrolled in school, ensuring universal literacy without any gender disparity.

Among individuals aged 15–34 years, the literacy rate remained relatively high at 70.34%. However, a gender gap is evident, with male literacy at 88.06% and female literacy at 80.32%.In the 35–59 years age group, literacy levels declined noticeably, reaching an average of 45.51%. Both

male and female literacy rates showed a downward trend, and the disparity between the two genders began to widen. For individuals aged 60 and above, literacy rates dropped significantly to just 18.16%. A sharp gender disparity was observed here, with male literacy at 24.34% and female literacy much lower at 12.18%.Overall, the data suggests that as age increases, literacy rates decrease, and gender disparities become more pronounced. This trend indicates that older generations, particularly women, had limited access to education in the past, which is still reflected in the slum populations of Bilaspur city.

Conclusion: Average Annual income with educational status, area wise caste status, caste wise educationalstatus, caste wise occupational status, area wise religion status, educational status, age group wise distribution, dependency ratio and labour force participation rate ofslum population this will affect the living condition ofslum population, educational development of slum population, human resource in and economic development of slum population. All these factors plays important role for socio-economic assessments of slum population in bilaspur urban area.

References:-

1. Andy Cumbers, Danny Mackinnon (eds) (2013) “Clusters in urban and regional development” Rawat Publication, ISBN 978-0-415-56841-8. 28)
2. Asha A. Bhende and Tara Kanitkar (2011) “Principles of Population Studies” Himalaya Publishing House, ISBN 978-93-5051-415-3. 29)
3. B. Hema and Shagufta Jamal (2004) “Environmental Perception of Slum Dwellers” Mittal Publication, ISBN 81-7099-953-7. 30) C.N. Ray (2003) “Liberalisation and urban social services- Health and Education” Rawat Publication, ISBN 81-7033-762-3.
4. Anand, Gujrat Sanjukta Ghosh (2013) “Regional Disparities of Slums, 2013 An Overview with special Emphasis to Kolkata” International Journal of Humanities and Social Science Invention Volume 2 Issues 3, ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714.
5. Biplab Das, UtpalKhara, PradipGiri and Aditya Bandyo -padhyay, (2012) “The challenge of slum development in India- A case study of melatala-dasnagar slum area of Howrah Municipal Corporation” International Journal of Advanced System and Social Engineering Research .ISSN 2278 - 6031, Vol 2, Issue 1.
6. Dr. Abir Bandyopadhyay, VandanaAgrawal , (2013) “Slums In India: From Past to Present”International Refereed Journal of Engineering and Science (IRJES) ISSN (Online) 2319-183X, (Print) 2319-1821 Volume 2, Issue 4
7. Dr. Krishne Gowda, Dr. Chandrasekhar M. N, Prof. Sridhara M. V., Dr. Hemalatha B. N. (2013) „Solid Waste Management in the Slums and Squatter Settlements in the City of Bangalore” International Journal of Scientific and Research Publications, Volume 3, Issue 2, ISSN 2250-3153.
8. 5) Diganta Kumar Phukan (2014) “Levels of Some Basic Amenities in the Slums and Their Impacts on Ecology: A Case Study of Jorhat City, Assam” Volume 3 Issue 1, International Journal of Science and Research (IJSR) ISSN (Online): 2319-7064.
9. 6) Grace BahalenMundu, R.B. Bhagat, (2008) “Slum Conditions in Mumbai with Reference to the Access of Civic Amenities” Published in IIPS Mumbai, ENVIS center, Volume 5.
10. 7) Ghosh S, Shah D. (2004) “Nutritional problems in urban slum children.” Indian Pediatr. 2004 Jul; 41(7):682-96. Deborah Stevenson (2009) “Cities and urban cultures” Rawat Publication, ISBN 81-316-0290-7. 32)
11. Bose, A. (2011). *Urbanization and slums*. New Delhi: National Book Trust.
12. Chatterjee, P. (2010). *The politics of the governed: Reflections on popular politics in most of the world*. Columbia University Press.
13. Chandrika, R., & Verma, A. (2017). A study of urban slum dwellers in Raipur city, Chhattisgarh. *International Journal of Social Science and Economic Research*, 2(6), 4211–4224.
14. Davis, M. (2006). *Planet of slums*. Verso Books.
15. Kundu, A. (2003). Urbanisation and urban governance: Search for a perspective beyond neo-liberalism. *Economic and Political Weekly*, 38(29), 3079–3087.
16. Kumar, A., & Aggarwal, S. (2013). Socio-economic status of slum dwellers: A case study of Bhopal city. *International Journal of Humanities and Social Science Invention*, 2(3), 15–19.
17. Patel, S., & Deb, A. (2006). *Slum rehabilitation in Mumbai: Participatory urban planning or disguised displacement?* Economic and Political Weekly, 41(20), 2006–2010.
18. UN-Habitat. (2015). *World Cities Report 2015: Urbanization and development – Emerging futures*. United Nations Human Settlements Programme.
19. Census of India. (2011). *Primary Census Abstract for Slum*. Government of India. Retrieved from https://censusindia.gov.in/
20. Bilaspur Municipal Corporation. (2019). *Slum improvement and rehabilitation report*. Urban Development Department, Chhattisgarh.
21. Ministry of Housing and Urban Affairs. (2020). *Pradhan Mantri Awas Yojana (Urban) – Progress Report*. Government of India. Retrieved from https://pmay-urban.gov.in/
22. Ministry of Housing and Urban Poverty Alleviation. (2013). *Rajiv Awas Yojana: Guidelines for Slum-Free City Planning*. Government of India.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

A Legal Aspect of Child in Juvenile Delinquency in Today's Senerio

Dr. Jyoti Saran Saxena* Dr. Anushka Mishra Nayak**

*PhD. Scholar, LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor & HOD, School of Legal Studies, LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract: As we all know that in this time period so much act and offence to be done against the child. Under this research paper we will explain about the who is child ,what are the act and offence to be done against the child and what are the punishment to be provided under the juvenile delinquency act , 2015 and also compare this law with the other act in India. because it was so much important that every offence to be covered under specific law and that should be binding on each and every one. As per the time period goes on there are so much crime to be done against the child day by day. there are only few institution who only look forwards to be work under this senerio for the beneficial to them.Beacuse they we deeply study on this child juvenile delinquency.

Here we are try to legally aspect of child delinquency that how to be work in India , what are the approach should be fitted in the juvenile case, what are the circumstance to be happen when they do a crime and what are the corresponding to be happen when any child do a act and offence.

Keywords- juvenile justice, commission, offence, act,UNICIEF, UN Dispatch committee, universal.

Introduction - Before going in depth of this act let's first know the term 'juvenile'. It refers to any person below the age of 18 who has been accused of a crime. As we know child is one whose age is under 18 years, but when this child commits any crime, normal or heinous, called a Juvenile. The Children's constitute almost half of the World's Population.

Juvenile Justice Act 2015 passed by the Lok Sabha in May 2015 amidst protest and criticism. It passed by Rajya Sabha in December 2015. It repealed Juvenile Justice 2000.

As we all know that there are so much crime to be done against the child and we also know that there are so many law to be made by the to be enforced in India which is Cleary mention the offence to be punishable against child .now my question is that how we should stop that crime. while we are approach to the government to make the law and they just enforced them what about the actual fact that is that law properly applicable or not? This was my main question. now we will see some definition such as who are child, offence against child, child juvenile delinquency. meaning of juvenile section 2 (35) "juvenile" means a child below the age of eighteen years; now it is Cleary we know about that who was a juvenile and our approach is to this criteria only. As per the definition given in section 2 (13) "child in conflict with law" means a child who is alleged or found to have committed an offence and who has not completed eighteen years of age on the date of commission of such offence; under this definition clause we have to see that which are the child to be covered under those who are become the part of commission of offence. Now here the law researcher were trying to explain you what are A legal aspect of child in juvenile delinquency in today's senerio. What are the actual condition of the children in present time period .

Who is Juvenile in India? or What is Juvenile Age in India? And Difference between a Juvenile and Minor:

In India, a person below 18 years old is considered a juvenile or person of juvenile age. Juveniles are those who have committed offenses or need care and protection. The juvenile justice system aims too rehabilitate young offenders and give them a second chance. Factors contributing to juvenile involvement include brain development issues, exposure to alcohol or drugs, abuse or violence, poor parenting, media influence, and lack of education. The system is influenced by western countries and has been enacted by various acts, including The Apprentices Act, Indian Penal Code, Reformatory School Act, Code of Criminal Procedure, and Recommendations by the Indian Jail Committee in 1920. Juvenile courts are responsible for executing these individuals.

Who is juvenile?

Before talking about the various crimes committed by juveniles, we must understand who a juvenile is. In simple language, a teenager is a child who has not achieved the age of maturity at which he can understand the difference between right and wrong. Legally speaking, a juvenile is a

minor who has not attained a certain age at which he can be held liable for his criminal acts like an adult under the law of the country. According to J.J.A.2015, a juvenile means a child below the age of eighteen years. It states that a juvenile should not be treated as an adult even if he is a child for the purpose of trial and punishment in a court of law. Also be involved in criminal acts.

As per the report provided by the UNICEF

According to the latest available global data:

1. Every 4 minutes, somewhere in the world, a child is killed by an act of violence.
2. About 90 million children alive today have experienced sexual violence.
3. 650 million girls and women (1 in 5) alive today were subjected to sexual violence as children, including over 370 million (1 in 8) who experienced rape or sexual assault.
4. In fragile settings, girls face an even greater risk, with the prevalence of rape and sexual assault in childhood slightly more than 1 in 4.
5. Nearly 50 million adolescent girls aged 15-19 (1 in 6) have been victims of physical or sexual violence by their husbands or partners in the past year.
6. 410 to 530 million boys and men (around 1 in 7) experienced sexual violence in childhood, including 240 to 310 million (around 1 in 11) who were raped or sexually assaulted.
7. 1.6 billion children (2 in 3) regularly face violent punishment at home; more than two thirds are subjected to both physical punishment and psychological aggression.
8. Violence takes the lives of about 130,000 children and adolescents under 20 each year on average.
9. Boys face a higher risk of dying from violence: 3 out of every 4 children and adolescents killed by violence were boys.
10. The risk of dying from violence rises sharply in late adolescence: 7 in 10 children who died from violence were between the ages of 15 and 19, most of them boys.
11. Close to 550 million children (around 1 in 4) live with mothers who are victims of intimate partner violence.

The ministerial conference marks a pivotal opportunity to intensify efforts to end violence and build a future where every child grows up safe. UNICEF is calling for strong political leadership, evidence-based policies and interventions, and adequate finance, urging action in three key areas: 1) universal access to parenting support programmes that promote nurturing care; 2) universal provision of safe and enabling school environments; and 3) targeted response and support services for all children who need them.

Historical : As we all know that in historical time period there was not a such amount of crime to be done against the children. Only specific crime to be covered up such as rape ,murder, kidnapping, abduction are the commonly offensive crime to be done against the children only. When the girl is not complete the age of 18 year they were trying to forced in early childhood . or we can say that when the girl is born in any family they were kill that child. Only the male child or we can say boy is only survive. There was also so much pressure on the mother also that she will not give the birth of any female child . for so many time she was suffer from the pregency problem and time also there was also not any proper law to stop that crime but if that time law made I don't think so it will strictly effect to the society because the were are from very typically old school society and very rigid community they will not accept them. And one of the major crime which I seen in historical time period was that fix their marriage before the birth of that child . it was also an important crime to be done against child.

Specific crime to be done against child

1. Killing and maiming of children: Killing and maiming of children can be a result of direct targeting or indirect actions, including torture. Killing and maiming can occur through crossfire, landmines, cluster munitions, improvised or other indiscriminate explosive devices or even in the context of military operations, house demolitions, search-and-arrest campaigns, or suicide attacks.

Harm to children is often caused by direct attacks or attacks in which there has not been adequate distinction between civilian and military objectives and where parties to conflict failed to comply with their obligations under international humanitarian law, including the principles of distinction and proportionality, and the requirement to take all feasible precautions to avoid, and in any event minimize, loss of civilian life.

2. Recruitment or use of children in armed forces and armed groups: Recruitment or use of children in armed forces and armed groups refers to compulsory, forced, or voluntary conscription or enlistment of children into any kind of armed force or armed group. The use of boys and girls by armed forces or armed groups can be in any capacity, including as fighters, cooks, porters, messengers and spies, or when they are subjected to sexual exploitation.

Verified cases represent merely a fraction of the total number of children, including girls, believed to be associated with armed forces and armed groups globally. Girls are less likely to be formally identified and released, and lessons learnt from demobilization programmes have shown that girls tend to exit armed forces and groups quietly and informally, and to conceal their experience from the community due to fear of stigmatization.

3. Attacks on schools or hospitals: Attacks on schools or hospitals include the targeting of schools or medical facilities that cause the total or partial destruction of such facilities. Schools and hospitals should be protected spaces, where children are safe even in times of conflict, yet continued attacks on such facilities have underscored the

catastrophic impact of armed conflict on children's rights, including rights to education and health.

Attacks on schools and hospitals not only put children's lives at risk, but also disrupt their learning and limit their access to medical assistance, which can have a lifelong impact on their education, economic opportunities and overall health.

4. Rape or other grave sexual violence: Conflict-related sexual violence remains one of the most disturbing violation of children's rights and has often been used as a tactic of war. Rape or other grave sexual violence includes acts of rape, other sexual violence, sexual slavery and/or trafficking, enforced prostitution, forced marriage or pregnancy, enforced sterilization, or sexual exploitation and/ or abuse of children. In some cases, sexual violence is used to intentionally humiliate a population or to force people from their homes.

Sexual violence disproportionately affects girls. Rape is the most prevalent form of sexual violence to be verified, but girls are also subjected to forced marriage and used for various other forms of sexual exploitation, including while associated with parties to conflict, after recruitment. The widespread stigma around rape and sexual violence/ means it is a particularly under-reported issue affecting children in conflict. Sexual violence disproportionately affects girls, who were victims in 97 per cent of cases from 2016 to 2020.

5. Abduction of children: Abduction of children refers to the unlawful removal, seizure, capture, apprehension, or enforced disappearance of a child either temporarily or permanently. Whether it's an intentional act of violence or retaliation, to instill fear among populations, or to forcibly recruit and/or sexually abuse children, abduction is one of the most pervasive violations committed against children in situations of armed conflict.

Boys have accounted for around three quarters of verified instances of abducted children. However, girls remain at risk of being abducted, including for the purpose of sexual violence and exploitation. In many cases, children who are abducted are also victims of other grave violations, such as killing, maiming, sexual violence or recruitment into armed groups. They might also be held hostage or arbitrarily detained.

6. Denial of humanitarian access for children: Denial of humanitarian access for children includes the intentional deprivation or impediment of humanitarian assistance essential for children's survival by parties to the conflict, including willfully impeding the ability of humanitarian or other relevant actors to access and assist affected children in situations of armed conflict.

Warring parties often deny humanitarian actors access to those in need or prevent assistance from reaching civilian populations. Civilians are also denied aid when humanitarian workers are targeted and treated as threats.

Between 2005 and 2023, more than 347,000 grave violations were verified against children, committed by parties to conflict in more than 30 conflict situations across Africa, Asia, the Middle East, and Latin America. The actual number is undoubtedly far higher as access and security constraints, as well as the shame, pain and fear that survivors suffer often hamper the reporting, documentation and verification of these violations.

Here's How Every Country Ranks When it Comes to Child Abuse and Child Safety

It is a report provided by UN Dispatch appreciates the sponsorship of the United Nations Foundation.

The United Kingdom is the safest place to be a child, while Pakistan is the least safe. That's according to that ranks 40 countries on how well they're responding to the threat of sexual abuse and exploitation against children.

According to the report called *Out of the Shadows* by The Economist Intelligence Unit and the World Childhood Foundation, the 40 countries in the index represent 70 percent of the world's children.

The countries were ranked according to their environment in which child sexual violence occurs and is addressed, their legal framework to protect children, their government commitment and capacity to invest in appropriate responses as well as the engagement of industry, civil society and media in combating the issue.

"With approximately 200 million of the world's children experiencing sexual violence each year, the need to document and benchmark the global effort to prevent child sexual violence has never been more important," Sweden's Princess Madeleine, co-founder of the World Childhood Foundation's #EyesWideOpen campaign, said in a press release.

With a score of 100 representing the best environment for children, the top ten countries on the index were all high-income: U.K. (82.7), Sweden (81.5), Canada (75.3), Australia (74.9), United States (73.7), Germany (73.1), South Korea (71.6), Italy (69.7), France (65.2) and Japan (63.8). India (57.6) Brazil ranks next and is classified by the World Bank as upper-middle income. where India come in 13 rank offence against child.

Conclusion: As per the all my research to be made I made a conclusion is that there is so much requirements of implementation of law by forcefully to applicable because society never be changed they always do a such type of activity which is prohibited by law. as per the above my research paper I clearly give the impact on juvenile , crime against child delinquency, also define the type of crime also made a uncief report against the children, and also provide a deep study on UN foundation report as per this report we will clearly examine that what are current ranking ratio of crime against child and what the position of India under this report. The system needs better infrastructure, trained personnel and a more consistent approach across states to truly achieve its reformative and protective goals. The balance between rehabilitation and accountability remains a central debate in its future development. India's juvenile

justice system is designed to address juvenile delinquency, with a focus on rehabilitation and reform rather than punishment. While the basic requirement of juvenile delinquency in present senerio is to stop the crime against children and aware of them such crime . making a proper attention on children as well as parents and society also.

References:-

1. Bista, Min B., and Frances Elizabeth Cosstick, 'Providing Education to Girls from Remote and Rural Areas: Advocacy brief', United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization, Bangkok, 2005, , accessed 22 September 2022.
2. Breiding, Matthew, et al., Intimate Partner Violence Surveillance: Uniform definitions and recommended data elements, version 2.0, (U.S.) Centers for Disease Control and Prevention, Atlanta, GA, 2015.
3. Butler, Paul, 'The Problem of State Violence', Daedalus, vol. 151, no. 1, 2022, pp. 22–37.
4. Centers for Disease Control and Prevention, 'Preventing Abusive Head Trauma', 2020, , accessed 15 September 2022.
5. ECPAT International, Online Child Sexual Exploitation: A common understanding, ECPAT International, Bangkok, 2017, , accessed 25 October 2022.
6. Guidi, Jenny, et al., 'Allostatic Load and Its Impact on Health: A systematic review', Psychotherapy and Psychosomatics, vol. 90, no. 1, 2021, pp. 11–27.
7. Guedes, Alessandra, et al., 'Bridging the Gaps: A global review of intersections of violence against women and violence against children', Global Health Action, vol. 9, no. 1, 2016, pp. 1–15.
8. Interagency Working Group on Sexual Exploitation of Children, 'Terminology Guidelines for the Protection of Children from Sexual Exploitation and Sexual Abuse', ECPAT, Luxembourg, 2016.
9. Office of the United Nations High Commissioner for Human Rights, Human Rights Indicators: A guide to measurement and implementation, OHCHR, Geneva, 2012.
10. World Health Organization, 'What Works to Prevent Online Violence against Children?: Executive summary', WHO, Geneva, 2022, , accessed 13 January 2023.
11. that https://www.unicef.org/children-under-attack/six-grave-violations-against-children.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय ज्ञान परंपरा में भूगोल का महत्व

डॉ. मोहन निमोले*

* सहा. प्राध्यापक (भूगोल) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस, शासकीय माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – भारतीय ज्ञान परंपरा और भूगोल पर आधारित अध्ययन हमें यह समझने में मदद करता है कि कैसे प्राचीन भारत में प्राकृतिक परिवेश, जलवायु, स्थलाकृतिक विविधता, नदियों, पर्वतों और समुद्रों को न केवल भौगोलिक दृष्टि से देखा गया, बल्कि उन्हें धार्मिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक रूप से भी महत्व दिया गया।भारतीय ज्ञान परंपरा, जिसमें ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति, और दार्शनिक विचार शामिल हैं। भूगोल का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह न केवल भारतीय जीवन के विभिन्न पहलुओं को समझने में मदद करता है, बल्कि यह मानवता और प्रकृति के बीच संबंध को भी उजागर करता है। नीचे कुछ प्रमुख बिंदुओं के माध्यम से हम भारतीय ज्ञान परंपरा में भूगोल के महत्व को समझ सकते हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा में भूगोल का बहुत महत्व है, क्योंकि यह न केवल भारत के भौतिक स्वरूप और जलवायु को समझने में मदद करता है, बल्कि मानव जीवन, संस्कृति और इतिहास को भी प्रभावित करता है। भूगोल के अध्ययन से हमें यह समझने में मदद मिलती है कि कैसे विभिन्न भौगोलिक स्थितियाँ लोगों के जीवन, उनके रीति-रिवाजों, व्यवसायों और सामाजिक संरचनाओं को आकार देती हैं।

भारतीय ज्ञान परंपरा में भूगोल का महत्व:

1. भूगोल से जुड़े वर्णन वैदिक रचनाओं में मिलते हैं।
2. वेदों, पुराणों, और अन्य ग्रंथों में ब्रह्मांड, पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, अकाश, सूर्य, नक्षत्र और राशियों का विवरण मिलता है।
3. महाकाव्य काल में सामरिक और सांस्कृतिक भूगोल के विकास के संकेत मिलते हैं।
4. प्राचीन भारत के विकास में भौगोलिक कारकों ने अहम भूमिका निभाई।
5. भूगोल ने भारत की स्थानीय अर्थव्यवस्था, संस्कृति, राजनीति, समाज, और आर्थिक विकास में अहम भूमिका निभाई।

1. प्राचीन ग्रंथों में भूगोल– भारतीय विद्या के प्राचीन ग्रंथों जैसे वेद, उपनिषद, और पुराणों में भूगोल का महत्व दर्शाया गया है। इन ग्रंथों में विभिन्न स्थलों, नदियों, पर्वतों, और जलवायु पर चर्चा की गई है। जैसे, गंगा नदी को पवित्र माना गया है, और उसके आसपास के भूगोल का वर्णन मिलता है।

1. ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भ

स्थलों का महत्व– भारतीय भूगोल ने विभिन्न ऐतिहासिक और धार्मिक स्थलों का निर्माण किया है, जैसे वरुणा (गंगा), कासी (वाराणसी) और अयोध्या। ये स्थल न केवल सांस्कृतिक धरोहर का हिस्सा हैं, बल्कि लोग इन स्थानों पर धार्मिक और सामाजिक गतिविधियों के लिए भी जाते हैं। आचार-व्यवहार और रीति-रिवाज विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों की प्राकृतिक विशेषताएँ वहाँ के निवासियों के दैनिक जीवन आचार-व्यवहार और रीति-रिवाजों को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के लिए पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों के रीति-रिवाज उनके पर्यावरण से संबंधित होते हैं। भारतीय संस्कृति को आकार देने में भूगोल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिमालय पर्वतमाला से लेकर उपजाऊ गंगा के मैदानों और तटीय क्षेत्रों तक फैले विशाल और विविध भू-दृश्य ने विभिन्न क्षेत्रों की जीवनशैली, व्यवसायों और सांस्कृतिक प्रथाओं को प्रभावित किया है।

2. आर्थिक और सामाजिक विकास

संसाधनों का उपयोग– भूगोल के आधार पर विभिन्न क्षेत्र प्राकृतिक संसाधनों के लिए समृद्ध हैं, जैसे कि जल, खनिज, और वनिक संसाधन। ये संसाधन न केवल आर्थिक विकास में सहायता करते हैं, बल्कि आधुनिक समय में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कृषि और उद्योग भारत में कृषि भूगोल का गहरा संबंध है। विभिन्न जलवायु और भौगोलिक परिस्थितियों ने भारत में कृषि विशेषताओं को आकार दिया है। यह ज्ञान कृषि उत्पादन को सुव्यवस्थित करने में मदद करता है।

3. दार्शनिक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण– दार्शनिकता भारतीय दार्शनिक दृष्टिकोण, जैसे कि वेदांत और सांख्य, में भूगोल का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह मानव अस्तित्व, ब्रह्मांड और प्रकृति के बीच संबंधों को समझने में सहायता करता है। वैज्ञानिक ज्ञान प्राचीन भारतीय ग्रंथों में भूगोल और खगोलशास्त्र का उल्लेख मिलता है। उदाहरण के लिए आर्यभट्ट ने पृथ्वी की गोलाई और उसके घूर्णन की अवधारणा को प्रस्तुत किया। यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक है।

धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोण– भारतीय धार्मिक ग्रंथों में भूगोल का उल्लेख अक्सर होता है। नदियाँ जैसे गंगा, यमुना, और सरस्वती को पवित्र माना गया है और इनके आसपास के भूगोल का महत्व प्रस्तुत किया गया है।

4. पर्यावरणीय स्थिरता– प्राकृतिक संतुलन भारतीय भूगोल ने प्राकृतिक संतुलन और पारिस्थितिकी को समझने में मदद की है। यह ध्यान में रखते हुए, प्राचीन भारतीय ज्ञान में पेड़-पौधों और जल के संरक्षण पर जोर दिया गया है।

संवेदनशीलता– भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रकृति के प्रति सम्मान और संवेदनशीलता की भावना है। पर्यावरणीय आवरणों के ज्ञान से व्यक्ति और समुदाय प्राकृतिक संसाधनों का सही उपयोग कर सकते है।

5. सामरिक महत्व– भारत की भौगोलिक स्थिति, जैसे हिमालय की सुरक्षा और हिंद महासागर के साथ लंबी तटरेखा, इसे एक रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण क्षेत्र बनाती है।

कृषि और आजीविका– भूगोल का अध्ययन कृषि के लिए महत्वपूर्ण रहा है। विभिन्न क्षेत्र की जलवायु, मिट्टी और जल स्रोतों का ज्ञान किसानों को उपयुक्त फसले उगाने में सहायता करता है।

वास्तु शास्त्र– भारतीय वास्तु शास्त्र में भूगोल को बहुत महत्व दिया गया है। घर, मंदिर, और नगरों का निर्माण प्राकृतिकी और भूगोलिक विशेषताओं के अनुसार किया जाता है, ताकि लाभदायक ऊर्जा का प्रवाह हो सके।

प्राकृतिक संसाधन और विकास– भूगोल का अध्ययन प्राकृतिक संसाधनों के विकास में भी बहुत महत्वपूर्ण है। भारतीय जनसंख्या ने कुशलता से जल, मिट्टी, और खनिज संसाधनों का उपयोग किया है, जो कि स्थानीय भूगोल पर निर्भर करता है।

भूगोल के सामाजिक प्रभाव– भारत के विभिन्न भूगोलिक क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों और समुदायों की जीवनशैली भूगोल से प्रभावित होती है। पर्वतीय क्षेत्रों की जनजातियाँ, जैसे नगा, अपनी विशिष्ट परंपराओं और रीति–रिवाजों के साथ जीती हैं।

5. आधुनिक चुनौतियाँ– जलवायु परिवर्तन भूगोल की समझ और ज्ञान भारतीय समाज को जलवायु परिवर्तन जैसे आधुनिक चुनौतियों का सामना करने में मदद करती है। स्थानीय जलवायु और पर्यावरणीय स्थितियों के आधार पर स्थायी विकास की नीति विकसित करने में मदद मिलती है। Urbanization और विकास तेजी से हो रहे शहरीकरण और विकास के संदर्भ में, भूगोल का ज्ञान नए शहरों की विकास योजना और संसाधनों के संतुलन बनाने में सहायक है।

निष्कर्ष– भारतीय ज्ञान परंपरा में भूगोल का महत्व बहुआयामी है। यह न केवल सांस्कृतिक और सामाजिक ढांचे को समझने में मदद करता है, बल्कि आर्थिक विकास, पर्यावरण संरक्षण, और वैज्ञानिक दृष्टिकोण में भी योगदान देता है। इस प्रकार, भारतीय भूगोल का ज्ञान हमारी परंपराओं का अभिन्न हिस्सा है और इसे आगे बढ़ाना और संरक्षण करना आवश्यक है। भारतीय ज्ञान परंपरा में भूगोल का अध्ययन मानव जीवन, संस्कृति, इतिहास और पर्यावरण को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है। भारतीय ज्ञान परंपरा में भूगोल का अध्ययन विभिन्न दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण है। यह न केवल भौगोलिक विशेषताओं को समझने में मदद करता है, बल्कि समाज, संस्कृति, और धार्मिक विश्वासों की गहराई को समझने में भी सहायक है। इस प्रकार, भूगोल भारतीय ज्ञान परंपरा का अभिन्न हिस्सा है, जो समग्र विकास और समाज के विविध पहलुओं को समझने के लिए आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मिश्र,जयशकर : प्राचीन भारत का इतिहास।
2. सत्यार्थ प्रकाश, किरण प्रकाशन 2015
3. खलील, एस. टी. (2023). भारितीय ज्ञान प्रणाली: अर्थशास्त्री कौशिल्य द्वारा, नोशन प्रेस, चेन्नई।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शैव परम्पराओं के माध्यम से सामाजिक एकता और धार्मिक सहिष्णुता का विकास (बिलासपुर जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अंजू तिवारी* महेन्द्र कुमार दुबे**

* सह प्राध्यापक, सामाजिक विज्ञान विभाग (इतिहास) डॉ. सी.वी. रामन विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी, सामाजिक विज्ञान विभाग (इतिहास) डॉ. सी.वी. रामन विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – भारत में धार्मिक परम्पराएँ न केवल व्यक्तिगत आस्थाओं का प्रतिबिंब है, बल्कि समाज के सांस्कृतिक और सामाजिक ताने–बाने को भी आकार देती है। शैव परम्पराएँ, जो शिव भगवान की उपासना पर आधारित है। भारतीय समाज में सदियों से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है। यह परम्परा नकेवल धार्मिक आस्थाओं को प्रकट करती है। बल्कि सामाजिक एकता और धार्मिक सहिष्णुताके संवर्धान में भी अहम योगदान देती है। शैव परम्पराएँ विभिन्न जातियों समुदायो और वर्ग को एक साथ लाने में सहायक रही है। शिव की उपासना का सार्वभौमिक पहलू इस परम्परा को एकता का प्रतीक बनाता है जिससे समाज के विभिन्न वर्गो और धार्मो के बीच सहयोग और समझ को बढ़ावा मिलता है। शैव धर्म में न केवल हिंदू धर्म के अनुयायी, बल्कि बौद्ध, जैन और अन्य धार्मिक समुदायों के लोग भी शामिल हुए हैं, जो धार्मिक सहिष्णुता का एक जीवंत उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इस शोध में शैव परम्पराओं के सामाजिक और धार्मिक प्रभावी का विश्लेषण किया जाएगा जिसमें यह देखा जाएगा कि किस प्रकार शैव उपासना ने भारतीय समाज में धार्मिक भिन्नताओं के बावजूद एकता और सहिष्णुता को बढ़ावा दिया। यह अध्ययन यह भी दर्शाएगा कि शैव धर्म ने सामाजिक न्याय, समानता और मानवता के मूल्यों को स्थापित करने में किस तरह की भूमिका निभाई।

शब्द कुंजी – शैब परम्पराएँ, सामाजिक एकता, धार्मिक सहिष्णुता भारतीय समाज शिव पूजा धार्मिक विविधाता।

प्रस्तावना – भारत का धार्मिक और सांस्कृतिक इतिहास विविधताओं से भरा हुआ है। इस विविधता में विभिन्न आरथाएँ, संस्कृतियाँ और जीवन पद्धतियों समाहित है, लेकिन भारतीय समाज में इन भिन्नताओं के बीच एकता और सहिष्णुता की भावना भी हमेशा जीवित रही है। शैव परम्परा, जो शिव भगवान की उपासना पर आधारित है, भारतीय समाज के विभिन्न हिस्सों में सामाजिक एकता और धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। विशेष रूप से छत्तीसगढ़ राज्य का बिलासपुर जिला, जहा विभिन्न जातियों, पंथों और संस्कृति का मिश्रण देखा जाता है। यहीं की परम्पराओं ने सदियों से इन विविधताओ के बीच सामंजस्य स्थापित करने में योगदान दिया है। बिलासपुर जिले में शैव परम्परा प्राचीन समय से ही प्रचलित रही है. और इनकी उपासना का एक गहरा सामाजिक और धार्मिक प्रभाव इस क्षेत्र के लोगों के जीवन पर पड़ा है। शिव के भक्तों की संख्या में बढ़ोतरी और उनकी उपासना के विविध रूपों ने न केवल धार्मिक दृष्टिकोण से समाज को एकजुट किया, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से भी लोगों के बीच समानता और भाई चारे की भावना को प्रोत्साहित किया। यह परम्परा यहीं के विभिन्न समुदायों जातियों और धर्मो के बीच संवाद और सहिष्णुता का कारण बनी। शिव की पूजा के विविध रूपों ने भारतीय सम्माज के भीतर एकता और समरसता की भावना को मजबूत किया, जिससे समाज में भेदभाव और असमानता को कम करने में मदद मिली बिलासपुर जिले की शैव परम्परा विशेष रूप से इस क्षेत्र में शिव भक्तों के द्वारा निभाए जाने वाले अनुष्ठानों, मंदिरों और धार्मिक अनुष्ठानो से जुड़ी हैं। यहीं के शैव मंदिर जिनमें खासकर शिव के प्रमुख मंदिर जैसे रतनपुर का महामाया मंदिर और स्थानीय धार्मिक स्थलों ने क्षेत्रीय एकता को बनाए रखा।

इन मंदिरों में होने वाली भव्य पूजा–अर्चना और धार्मिक उत्सवों में विभिन्न जातियों और वर्गो के लोग मिलकर हिस्सा लेते हैं. जो सामाजिक समरसता का प्रतीक है। शैव परम्परा में शिव को न केवल एक देवता के रूप में पूजा जाता है, बल्कि उन्हें सर्वशक्तिमान और ब्रह्म के रूप में भी देखा जाता है, जी इसी विचारधारा को प्रबल करता है कि भगवान के सामने सभी इंसान समान है और किसी भी जाति या वर्ग के बीच भेदभाव नहीं होना चाहिए।

बिलासपुर जिले में स्थापित शिव मंदिर जैसे ताला गांव शिव मंदिर मल्हार का शिव मंदिर यह प्राचीन शिव मंदिर है। तथा स्थानीय राजवंश भी व संप्रदाय को मानते थे। व परम्पराओं के माध्यम से धार्मिक सहिष्णुता का संदेश इस जिले में कई तरह से फैलाया गया।

शैव संप्रदाय का ऐतिहासिक पृष्ठीभूमि– शैव संप्रदाय जो भगवान शिव की उपासना पर आधारित है. भारतीय धर्म और संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग रहा है। इसका इतिहास अत्यंत पुराना है और इसका विकास समय–समय पर विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक प्रवृतियों से प्रभावित हुआ। शैव परंपरा की जड़े वेदों उपनिषदों और पुराणों में मिलती हैं। लेकिन यह एक सम्पूर्ण धार्मिक परंपरा के रूप में भारतीय समाज में विशेष स्थान प्राप्त करने के लिए समय के साथ आकार लेने लगी। शैव सम्प्रदाय का विश्लेषण निम्न प्रकार से कर सकते है–पाशुपत शैव सम्प्रदाय यह शैव सम्प्रदाय का सबसे प्राचीनतम सम्प्रदाय है। इसकी उत्पति ई.पू. दूसरी शती में हुई थी। इसके

संस्थापक लकुलिश थे। महाभारत में इसका उल्लेख सांख्य योग, पंचरात्र के साथ हुजा है। उमापति, भूतनाथ शिव श्री कठा ने पाशुपत शैव की शिक्षा दी। अर्थात इस मत का संस्थापक कोई मनुष्य नहीं था। भण्डारकर महोदय ने पौराणिक एवं अभिलेखनीय तथ्यों के आधार पर शिय के 28 वीं अवतार लकुलिश को इस मत का सस्थापक माना है। वायुपुराण और लिगं पुराण के आधार पर भण्डारकर महोदय का विचार है कि महान व संत लकुलिश महेश्वर के अन्तिम अवतार थे, जिन्होंने कायावरोहण अथवा कायावतार (गुजरात के बड़ौदा जिला के दभीई तालुक में कारवान लिया था। उनको चार शिष्य यी। जिनका नाम था कुशिक गर्ग, मित्र और कौरुष्य उपनिषदों में भगवान शिव की अवधारणा और अधिक स्पष्ट हुई। तैतिरीय उपनिषद और श्काठक उपनिषद में रुद्र का संदर्भ मिलता है, जो बाद में शिव के रूप में प्रतिष्ठित हुए। शिय को ब्रहार या स्थादिशक्तिर के रूप में परिभाषित किया गया, जो सम्पूर्ण सृष्टि का रचनाकार, पालनकर्ता और संहारक है। उपनिषदों में शिय की शरण में जाने की सर्वोत्तम साधना माना गया और उनकी उपासना को जीवन का सर्वोत्तम उद्देश्य बताया गया।

छत्तीसगढ़ में कई ऐतिहासिक और पुरातात्विक स्थल है जो पर्यटन के दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। ये स्थल राज्य के समृद्ध इतिहास को दशाति हैं। सिरपुर नामक स्थान पर बगवान बुद्ध का आगमन हुआ था और सम्राट अशोक ने यहां स्तूप भी बनवाया था। बीपावी नामक स्थान पर खुदाई में कई मंदिरों के अवशेष मिले है जो शाक्य और शैव समुदाय से संबंधित है। यहां स्थित मोरनदेव मंदिर की तुलना खजुराहों के मंदिरों से की जाती है। मल्हार में तामकाल से लेकर मध्यकाल तक का व्यवस्थित इतिहास मिलता है। देवबलीदा दुर्ग में एक प्राचीन शिव मंदिर है। तालामाल में स्थित देवरानी जेठानी मंदिर गुप्तकाल की स्थापत्य कला को प्रदर्शित करते हैं। बारसूर स्थान अपनी विशाल गणेश प्रतिमा के लिए प्रसिद्ध है और यहां छिंदक नागवंश का शासन था। इन सभी स्थलों के माध्यम से हम छत्तीसगढ़ के ऐतिहासिक और सास्कृतिक धरोहर को समझ सकते है।

शैव धर्म का विकास – भगवद्गीता में भगवान शिव का नाम सीधे तौर पर नहीं लिया गया है, लेकिन गौता के श्लोकों में जो परम ब्रह्म और अस्तित्व की स्थिति का वर्णन किया गया है, वह शिव की अवधारणा से मेल खाता है। भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है कि वह सर्वशक्तिमान ब्रहा है. जो सभी देवताओं का आदिशक्ति है। शैव साम्याय की दृष्टि से, भगवान शिव को भी ब्रा के रूप में पूजनीय माना गया है।

पुराणों में शिव की प्रतिष्ठा – पुराणों में शिव की उपासना का विस्तार हुजा और उन्हें महादेव नटराज, शंकर और पार्वती पति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। विशेष रूप से शिवपुराण और लिंगपुराण में शिवको सर्वोच्च देवता के रूप में पूजा गया है। शिवपुराण में शिव की उत्पत्ति, उनके परिवार, उनके महान कार्यों और उनके उपासको के बारे में विस्तृत विवरण मिलता है। शिव की उपासना को श्रेष्ठतम साधाना और मुक्ति प्राप्ति का मार्ग माना गया है।

द्वितीय शताब्दी से छठी शताब्दी तक का समय – द्वितीय शताब्दी से छठी शताब्दी तक भारत में सैम सामप्रदाय का समृद्धि काल था। इस समय शैव धर्म का प्रमुख प्रवृत्ति के रूप में उमार हुआ और विशेषकर दक्षिण भारत में सैव भक्ति आंदोलन ने जोर पकड़ा। अक्कोय, कंबन और टिरुनेलवेली के गैव संतों ने भगवान शिव के प्रति मक्ति का प्रचार किया। यह समय शिव भक्ति के उत्कर्ष का था और अनेक गैद मतों और मंदिरों का निर्माण हुआ।

मध्यकाल में शैव संप्रदाय का फैलाव – मध्यकालीन में शैव संप्रदाय का व्यापक विस्तार हुआ। इस समय में शंकराचार्य का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। शंकराचार्य ने अद्वैत वेदांत की अवधारणा को स्थापित करते हुए शिव को सर्वोच्च महा माना। इसके साथ ही उन्होंने शैव परंपरा को एक वैदिक और सास्कृतिक धारा में पिरोने का कार्य किया। इस समय में शैव मठों और धार्मिक केंद्रों का विकास हुआ और शिव को केवल एक देवता के रूप में नहीं, बल्कि एक व्यापक ब्रह्म के रूप में पूजा जाने लगा। भक्ति कालीन संत ईश्वर की सर्वशक्तिमान मानते थे। वे विभिन्न देवी–देवताओं की उपासना के स्थान पर एक ईश्वर में विश्वास करते थे। कुछ संत राम और कृष्ण उपासना करते थे परंतु वे उनमें किती प्रकार का भेदभाव नहीं करते कुछ संत निर्गुण बा की उपासना करते थे और कुछ सगुण ब्रह्म की। वे राम रहीम में अंतर नहीं करते थे।

आधुनिक काल में शैव संप्रवाय – आधुनिक काल में शैव संप्रदाय ने भारतीय समाज में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भी रीय संप्रदाय के संतों ने भारतीय समाज में समानता, एकता और भाईचारे का संदेश दिया। शिव की उपासना से जुडी सामाजिक और धार्मिक परपराएँ आज भी भारतीय समाज में जीवित है और यह सुनिश्चित करती है कि शिव का संदेश हर वर्ग और समुदाय तक पहुंचे।

शोध का समस्या विवरण – इस शोध का समस्या विवरण होगा शिव (संवाद) की पूजा और भक्ति के इतिहास पर विचार करना, इस उद्देश्य के साथ कि यह मूल्यांकन किया जा सके कि क्या शिद को मेटा–मॉडर्न युग में जिसमें मजहा धर्मनिरपेक्ष प्रवृत्तियों है. पूजा जाता रहेगा या नहीं। क्या विवाद इतिहास और पोस्टमॉडर्न युग के समान मेटा–मीशन युग में भी जीवित रहेगा? हालांकि विवाद ने इन युगों में जीवित रहने और अपनी पहुँच की हाल के वर्षों में पूर्व से पश्चिम तक बढ़ाने में सफलता प्राप्त की है. क्या यह मेटा–मॉडर्न युग में धर्मनिरपेक्षता की चुनौतियों का सामना करते हुए जैसे है, वैसे ही जीवित रहेगा? यह तर्क किया जाता है कि यदि शैववाद, जो हिंदू धर्म के सबरी बड़े संप्रदायों में से एक है, मेटा–मॉडर्न महता की आवश्यकताओं के अनुसार अपने आप को अनुकूलित नहीं करता तो भगवान शिव को अपने अनुयाविथों की एक बड़ी सख्या खोनी पड़ सकती है। हालांकि, यह परिकल्पना, जो शैववाद के इतिहास और शैवों द्वारा विपत्तियों को पार करने की क्षमता पर आधारित है. यह है कि शिव भक्त यह सुनिश्चित करेंगे कि शैववाद समकालीन नेटा–मदने धर्मनिरपेक्ष युग में वैश्विक स्तर पर फलता–फूलता सोमा।

धार्मिक सहिष्णुता का अर्थ– धार्मिक सहिष्णुता का अर्थ विभिन्न धर्मो के प्रति आदर एवं प्रेम के भाव का प्रदर्शन करना है। मानव की सबसे बड़ी दुर्बलता यह है किवह अपने धर्म को श्रेष्ठ और दूसरे के धर्म को तुच्छ समझता है। जिसके फलस्वरूप धर्म को लेकर संघर्श होते रहते हैं। धार्मिक सहिष्णुता इस संघर्ष को रोकने के लिए विभिन्न धर्मो के प्रति सहनशीलता के दृष्टिकोण को प्रथम देने का काम करती है। महात्मा गाँधी भी मानते हैं। कि धार्मिक सहिष्णुता अहिंसा के सिद्धांत का प्रतिफल है। धार्मिक सहिष्णुता सभी धर्मो के प्रति उदारता की सावना को प्रचय देती है।

धार्मिक सहिष्णुता का सामाजिक एकता में योगदान – धार्मिक सहिष्णुता का खमाजिक एकता में इसका योगदान निम्न प्रकार से है:

1. धार्मिक सहिष्णुता आधुनिक समाज की नींव है, जो राभी समुदायों को समान रूप से शामिल होने का अवसर प्रदान करती है। यह नागरिकों

के शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए अत्यंत आवश्यक है।

2. धार्मिक सहिष्णुता के कारण समाज में विभाजन और संघर्षों में कमी आती है। यह युवाओं में एकता और भाईचारे की भावना को प्रोत्साहित करती है।
3. सहिष्णुता से समाज में हिंसा और पूष्णा में कमी आती है, जिससे समाज में शांति बनी रहती है।
4. धार्मिक अल्पसंख्यकों के प्रति भेदभाव पूरे समाज को नुकसान पहुंचाता है और सामाजिक समरसता को बाधित करता है।
5. पानिक असहिष्णुता की स्थिति में वसुधैव कुटुम्बकम की भावना कमजोर हो जाती है जिससे एकता पर प्रभाव पड़ता है।
6. चार्मिक असहिष्णुता के परिणाम स्वरूप आतंकवाद और नरसंहार जैसी हिंसक नीतियों का विकास होता है।

अध्ययन क्षेत्र – बिलासपुर जिले का इतिहास लगभग 400 साल पुराना है. और इसका निर्माण कलमुरी शासकों ने किया था। इस जिले का नाम एक मछुआरी महिला, बिल्लात्ता बाई के नाम पर रखा गया, यह जिला मैकल श्रेणी के पूर्वी भाग में स्थित है. जो प्राकृतिक संसाधानों से समृद्ध है। जिले का उत्तारी अक्ष 21.470 से 23.80 और पूर्वी देशातर 81 140 से 83.150 के बीच स्थित है। बिलासपुर जिले का गठन 1861 में हुआ था, जब यह मध्याति का हिस्सा था। इसके बाद 1956 में देश की आजादी के बाद बिलासपुर को एक संभाग के रूप में स्थापित किया गया। बिलासपुर संभाग में कुल आठ जिले शामिल है। इस जिले का कुल क्षेत्रफल लगभग 3508.48 वर्ग किलोमीटर है और यहां की कुल आबादी 16,25.502 है।

अध्ययन का उद्देश्य:

1. शैव परम्पराओं के माध्यम से बिलासपुर जिले में सामाजिक एकता को प्रोत्साहित करना।
2. धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा देने में जैव परम्पराओं की भूमिका का अध्ययन करना।
3. बिलासपुर जिले में शौच परम्पराओं के सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभाव को समझना।
4. जैव परम्पराओं के प्रभाव से समाज में सकारात्मक बदलावों की पहचान करता।

निष्कर्ष – बिलासपुर जिले में व परंपराओं ने न केवल धार्मिक आस्था की प्रगाढ़ किया, बल्कि सामाजिक एकता और धार्मिक सहिष्णुता के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जैव परंपरा की गहनी जड़े इस क्षेत्र में धार्मिक और सास्कृतिक परंपराओं के संरक्षण में योगदान करती है। शेष धर्म ने न केवल अपने अनुयायियों को एकजुट किया, बल्कि विभिन्न समुदायों के बीच सामूहिक समन्वय और सहिष्णुता को बढ़ावा दिया। बिलासपुर जिले में शैव मंदिरों और उनके मार्मिक आयोजनों ने विभिन्न धार्मा और जातियों के लोगों को एक मंच पर लाने का कार्य किया। शेव परंपरा में शामिल भक्ति और साधाना ने व्यक्ति को जान-निर्भर और सामूहिक रूप से समाज में सकारात्मक बदलाव लाने के लिए प्रेरित किया। इसके साथ ही, रौप संप्रदाय ने सदियों से क्षेत्रीय विविधाओं और मिन्नताओं को समेटते हुए धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा दिया, जिसते समाज में सामाजिक एकता को बल मिला। इस परंपरा की शिक्षाएं और आदर्शी ने न केवल स्थानीय स्तर पर बल्कि राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर भी शांति और सौहार्द की भावना को मजबूत किया है। इस प्रकार शैव परंपरा का धार्मिक सहिष्णुता और सामाजिक एकता के विकास में अत्यधिक योगदान रहा है. और यह आगे भी बिलासपुर जिले के सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिक्ष्य में महत्वपूर्ण स्थान बनाए रखेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राम नरेश (2020) पूर्व मध्यकालीन भारत में धार्मिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि एक समीक्षा. International Journal of Advanced Academic Studies] 2(4) पृष्ठ क्रमांक-210
2. ओवेतीरो साइयों और तलाबी मोचिनीलुवा (2023) धार्मिक सहिष्णुता राष्ट्रीय विकास का एक साप्पन Edumania & An International Multidisciplinary Journal. 01(02): पृष्ट कमांक- 15
3. गुरुपच कुबेर सिंह (2023) छत्तीसगढ़ के पर्यटन स्थलों का भौगोलिक अध्ययन एवं माता International Journal of Advances in Social Sciences, 11(04) पृष्ठ क्रमांक-261
4. रानां कविता (2020) धर्म एवं आका विकारा Internatioal Journal of Hindi Research 6(6): पृष्ट क्रमांक- 154
5. द्विगादर्शी अर्चना (2021) दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में शैव समादाय का उदभव एवं विकास Jouranl of Emerging Technologies and Innovative Research- 8(6): पृष्ठ क्रमांक 2430
6. https:www.britannica.com/topic/Shiva
7. https:rkarts.blogspot.com/2016.01.blog&post 23 himl
8. https:study.com.academy.lesson.shaivism overview origin beliefs.html
9. शर्मा कविता (2020) धर्म एवं जागा विकास Internatioal Journal of Hindi Research] 6(6): पृष्ठ क्रमांक- 154
10. कुमारी सुनिता, एट ऑल (2014) विश्वशांति में बार्मिक सहिष्णुता का योगदान, EÛplore&Journal of Research for UG and PG students. 6: पृष्ठ क्रमांक-70
11. हसन शेख तेज (2023) सल्तनत कालीन भारत के धार्मिक जीवन का विश्लेषण Anthology theresearch. 7(12): पृष्ठ क्रमांक-4
12. सिंह विशाल विक्रम (2018) चन्देल वंश में शैव धर्म का विकास एक अध्ययन Research Guru: Online Joural of Multicisciplinary Subject (peer Reviewed) 12-1-: पृष्ट प्रक्रमांक- 1152
13. जुनमुगम् मणियारस यूपान और सुकदावेन मणिराया (2010) शेप धर्म महादेव के इतिहास और भविष्य पर एक चिंतन शोध प्रबंध धर्मशास्त्र में स्नातकोत्तर पर्म का विज्ञान, पृष्ठ कमञ्नश्व -11
14. कुमारी सुबिता, एट ऑल (2014) विश्वशांति में धार्मिक सहिष्णुता का योगदान, EÛplore&Journal of Research for UG and PG students- 6: i`"B क्रमाक-70
15. https:www.scielo.org.za/scielo-php\script/sci arteÛt&pid/50259&94222022000400008
16. https:Bilaspur.gov.in/en/

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Ethnomedicinal Uses of *Moringa oleifera* (Linn.)

Dinisha Malviya*

***Assistant Professor (Botany) C.S.A. Govt. P.G. Lead College, Sehore (M.P.) INDIA**

Introduction - Since the dawn of human civilization, plants and human beings have shared an intimate, interdependent relationship. Human survival has always been shaped by the availability of plant resources, which provide not only food, clothing, and shelter but also medicine, spirituality, and cultural identity. Across cultures, the importance of plants extends beyond sustenance to the healing of the body and mind. It is often said that there is no single phase of human existence where plants do not play a vital role. From birth (janam), through life (paran), and ultimately to death (maran), plants are deeply intertwined with human destiny.

Nature, in its generosity, has gifted humanity with a healthy body and also with an abundance of natural resources to maintain and restore it. Among these resources, medicinal plants have been revered for centuries as the first line of defense against illness. In traditional societies, before the rise of modern pharmaceuticals, people relied entirely on herbs, shrubs, climbers, and trees to prevent and treat diseases.

The study of these relationships forms the basis of ethnobotany, which is the scientific discipline that examines how people of different cultures use and perceive plants. Ethnobotany is not merely a synonym for traditional medicine, but the two are closely connected. Traditional medicinal systems often originate from ethnobotanical practices, passed down through generations as folklore knowledge. These traditions laid the foundation for many of today's modern medicines. As Jain (1995) emphasizes, the roots of traditional medicine can often be traced back to ancient ethnobotanical folklore.

Among the wide variety of plants revered for their medicinal value, Moringa oleifera—commonly known as the "miracle tree"—stands out due to its extraordinary versatility. Indigenous to the Indian subcontinent, this plant has been adopted and naturalized across tropical and subtropical regions worldwide (Farooq et al., 2012). Its unique nutritional and pharmacological properties have made it one of the most significant ethnomedicinal plants known today.

Botanical Description of Moringa oleifera

Moringa oleifera belongs to the family Moringaceae and is a fast-growing, drought-resistant tree. It is generally 10–15 meters in height and can thrive even in poor soils, making it an invaluable plant for communities in resource-scarce environments. It is native to northern India but is now extensively cultivated throughout Southeast Asia, Africa, Polynesia, and the Caribbean.

The tree resembles legumes in appearance, with tripinnate leaves, a gum-bearing bark, and fragrant white flowers. It produces long, slender seed pods, commonly called "drumsticks," which are widely consumed as a vegetable. In English, the tree is often referred to as the "horseradish tree" or "drumstick tree," while in Hindi it is known as sahjan or mungna, and in Sanskrit as sigruha (Trivedi, P.C.).

Because of its rapid growth, resilience, and wide range of uses, Moringa oleifera has been nicknamed the "miracle tree." This title reflects not only its exceptional nutritional profile but also its diverse ethnomedicinal applications across cultures.

Fig : *Moringa oleifera*

Ethnomedicinal Significance

The ethnomedicinal value of Moringa oleifera is vast, with almost every part of the tree—roots, stems, bark, leaves, flowers, seeds, and pods—used in traditional medicine. For centuries, indigenous healers across Asia, Africa, and the Americas have employed Moringa to treat a wide spectrum of ailments, ranging from infections and skin disorders to malnutrition and chronic diseases.

This reliance on Moringa reflects a central principle of ethnobotany: local communities adapt their healing

practices based on plants available in their environment. As a result, Moringa oleifera has been integrated into numerous traditional medical systems, including Ayurveda, Siddha, Unani, and folk medicine practices across Africa and Latin America.

Traditional Ethnomedicinal Uses of Moringa oleifera:

1. **Eye Disorders and Conjunctivitis:** Fresh extracts of Moringa leaves are commonly used in traditional remedies for conjunctivitis. The soothing properties of the leaves help reduce irritation, redness, and infection.
2. **Anti-Inflammatory Applications:** The plant contains bioactive compounds such as flavonoids, tannins, and phenolic acids that provide strong anti-inflammatory properties. Decoctions of leaves and bark are applied to reduce swelling and inflammatory pain.
3. **Diabetes Management:** In traditional medicine, leaf decoctions are prescribed for managing diabetes. Communities have long recognized Moringa's ability to regulate blood sugar, a property later validated by pharmacological research.
4. **Treatment of Malaria and Fever:** Leaf decoctions are widely consumed as a remedy for malarial fever. This practice is prevalent in both Indian and African folk medicine.
5. **Respiratory Disorders:** Infusions of Moringa leaves are traditionally used to treat coughs, colds, and bronchial conditions. The warming properties of the plant make it an effective home remedy for respiratory health.
6. **Skin Disorders:** Poultices made from crushed leaves are applied topically to treat skin infections, rashes, abscesses, and other dermatological conditions. The antimicrobial nature of the leaves accelerates healing.
7. **Wound Healing:** Leaf poultices are applied directly to cuts and wounds, where they help stop bleeding, reduce infection, and promote rapid tissue regeneration.
8. **Nutritional Supplement for Malnutrition:** One of the most celebrated uses of Moringa is as a nutritional supplement. Its leaves are rich in protein, vitamins (A, C, E, B-complex), and minerals (iron, calcium, potassium, and magnesium), making it a valuable intervention for malnutrition, particularly in developing countries.

Pharmacological Properties and Modern Validation

While ethnomedicinal practices rely on tradition, modern scientific research has increasingly validated the therapeutic claims associated with Moringa oleifera. Studies have revealed that the plant contains over 90 nutrients and 46 antioxidants, contributing to its reputation as a "superfood."

1. **Antioxidant Properties:** Compounds such as quercetin and chlorogenic acid give Moringa strong antioxidant capacity, protecting cells against oxidative stress and aging.
2. **Anti-Diabetic Potential:** Research shows that Moringa leaf extracts reduce blood glucose levels and improve insulin sensitivity, supporting its traditional use in diabetes.
3. **Anti-Cancer Activity:** Phytochemicals such as niazimicin and isothiocyanates exhibit anti-tumor properties by inhibiting cancer cell growth and inducing apoptosis.
4. **Cardiovascular Benefits:** Seeds and leaves have been found to reduce cholesterol and triglyceride levels, thereby supporting cardiovascular health.
5. **Antimicrobial Action:** Extracts from various parts of the plant show activity against bacteria, fungi, and viruses, explaining its widespread use in treating infections and skin conditions.

Socio-Cultural and Global Importance: Beyond its medicinal and nutritional values, Moringa oleifera has immense socio-cultural significance. In India, the plant is integrated into daily diets through curries, soups, and pickles. In Africa, powdered Moringa leaves are distributed in humanitarian aid programs to combat malnutrition. In the Caribbean, it is valued both as food and as medicine, forming a part of indigenous healing practices.

The global recognition of Moringa has led to its commercialization as a health supplement in the form of powders, teas, capsules, and oils. This growing popularity underscores its transition from a local ethnomedicinal plant to a globally recognized functional food.

Conclusion: Moringa oleifera, often hailed as the "miracle tree," stands as a shining example of how ethnobotanical knowledge contributes to health and well-being. From traditional remedies for infections, diabetes, and skin conditions to its modern role as a nutritional powerhouse, Moringa represents the convergence of ancient wisdom and modern science.

Its versatility, resilience, and immense health benefits make it one of the most valuable herbal plants of our time. As societies face challenges of malnutrition, chronic diseases, and healthcare accessibility, Moringa oleifera offers a sustainable, natural, and affordable solution.

Thus, the plant's ethnomedicinal legacy not only preserves cultural heritage but also continues to inspire modern scientific exploration. Its role in both traditional medicine and contemporary health underscores why it has truly earned its title as a "miracle tree."

References:-

1. Trivedi, P.C. (2006). Medicinal Plants: Utilization and Conservation, 2nd Revised and Enlarged Edition. Aavishkar Publishers, Jaipur.
2. Jain, S.K. (1995). A Manual of Ethnobotany, 2nd Edition. Scientific Publishers, Jodhpur.
3. Farooq, F., Rai, M., Tiwari, A., Khan, A.A., & Farooq, S. (2012). Medicinal properties of Moringa oleifera: An overview of promising healer. Journal of Medicinal Plants Research, 6(27), 4368–4374.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Financial Performance and Shareholder Wealth Post-Merger: Evidence from the State Bank of India Mega Merger

Ms. Sharda Sethia* **Dr. George Thomas****

*Assistant Professor, GSIMR, Indore (M.P.) INDIA
** Director, Shri Vaishnav Institute of Management, Indore (M.P.) INDIA

Abstract: This study offers a comprehensive examination of the financial performance and shareholder value implications of mergers and acquisitions (M&A) within the Indian banking sector, with a focused case analysis of the State Bank of India (SBI) and its associate banks. By evaluating key financial indicators across pre- and post-merger periods, the research aims to assess the extent to which consolidation has influenced operational efficiency, profitability, and shareholder returns. The methodology employs a robust quantitative framework, utilizing financial ratio analysis and paired sample t-tests to detect statistically significant shifts in performance metrics. These include return on assets (ROA), return on equity (ROE), net profit margins, earnings per share (EPS), and market capitalization trends. The study also considers contextual variables such as integration strategy, regulatory environment, and macroeconomic conditions to interpret the observed outcomes.

Keywords: Mergers and Acquisitions in India, Public Sector Banking Performance, Shareholder Wealth Maximization, Financial Ratio Analysis, Pre-Post-Merger Operational Efficiency.

Introduction - In response to the sweeping forces of globalization and economic liberalization, the banking sector has undergone profound structural transformations, with mergers and acquisitions (M&A) emerging as a strategic tool for institutional growth and resilience. These consolidation efforts are primarily driven by the pursuit of economies of scale, geographic and market expansion, enhanced competitiveness, and the maximization of shareholder value. Within the Indian banking landscape, M&A activity has intensified over the past decade, particularly among public sector banks, as part of broader policy initiatives aimed at strengthening financial stability, improving asset quality, and fostering operational efficiency. The State Bank of India (SBI) and its associate banks represent a pivotal case in this consolidation wave, offering a unique lens through which to examine the financial and shareholder implications of large-scale mergers. This study critically evaluates the impact of such mergers on key financial performance indicators and shareholder wealth, using empirical methods to compare pre- and post-merger outcomes. By analysing the SBI merger, the research contributes to a deeper understanding of how strategic consolidation shapes institutional performance in emerging economies and informs future policy and investment decisions.

Objectives Of The Study: To evaluate changes in shareholder value metrics, including earnings per share, dividend payout, and stock price.

To identify the operational synergies achieved through M&A activities in the banking sector.

Research Methodology: Research Design: Descriptive research was used to analyze financial performance and shareholder value pre- and post-merger.

Data Collection: Secondary data was sourced from bank financial statements, the NSE website, and online financial platforms.

Tools Used: Financial ratios and t-tests were employed to evaluate profitability, operational efficiency, and shareholder metrics.

Sample Selection: The study focused on three mergers in the Indian banking sector from 2010 to 2024.

Analysis And Results:

State Bank of India (SBI): Post-Merger Financial Performance: The post-merger financial analysis of the State Bank of India (SBI) reveals notable shifts in key performance metrics, underscoring the complexities of operational integration. Specifically, there was a measurable decline in Net Profit Margin and Return on Equity (ROE) during the initial post-merger period. These reductions suggest that while the merger expanded SBI's asset base

and market reach, it also introduced transitional inefficiencies—likely stemming from integration costs, legacy system harmonization, and restructuring challenges. The findings point to the need for more agile post-merger management to fully capitalize on scale advantages.

State Bank of India (SBI):Shareholder Value Indicators

Earnings Per Share (EPS): EPS experienced a downward trend immediately following the merger, reflecting the dilution of earnings due to increased equity base and short-term integration expenses. However, longitudinal data indicates a gradual recovery in EPS across subsequent fiscal years, particularly as operational synergies began to materialize and cost structures stabilized.

Dividend Payouts: Dividend distributions post-merger was inconsistent, with SBI notably reducing its payout ratio in the immediate aftermath. This conservative approach likely aimed to preserve capital during the integration phase, though it may have temporarily dampened investor sentiment.

Share Price Volatility: SBI's stock exhibited significant volatility during the transition period, influenced by market uncertainty, integration risks, and fluctuating financial performance. Despite this, the share price demonstrated a strong recovery trajectory in the medium term, suggesting restored investor confidence as the merged entity began to show signs of financial consolidation and strategic clarity.

T-Test Results: The analysis reveals substantial shifts in both operational performance and shareholder value metrics following the merger of the State Bank of India (SBI) with its associate banks, affirming the tangible impact of mergers and acquisitions (M&A) on financial outcomes within the Indian banking sector.

From an operational standpoint, key performance indicators such as Return on Assets (ROA), Return on Equity (ROE), Net Interest Margin (NIM), and Cost-to-Income Ratio exhibited notable changes post-merger. These shifts suggest improvements in resource utilization, profitability, and overall efficiency, although the pace and consistency of these gains varied across different post-merger phases.

In terms of shareholder valuation, metrics including Earnings Per Share (EPS), Dividend Payout Ratio, and market capitalization reflected transitional volatility immediately following the merger, often due to integration costs and restructuring efforts. However, longitudinal analysis indicates a gradual recovery and upward trajectory in shareholder returns, particularly as operational synergies began to materialize and investor confidence was restored. The SBI merger serves as a compelling case study demonstrating how strategic consolidation can reshape financial performance and shareholder wealth—provided that integration is managed effectively and aligned with long-term institutional goals.

Findings and Implications

Operational Performance: Mergers and acquisitions have the potential to significantly enhance operational efficiency by streamlining processes, reducing redundancies, and leveraging shared infrastructure. However, the realization of these efficiencies is often delayed due to integration challenges such as technological incompatibilities, cultural misalignment, and organizational restructuring. The success of operational improvements hinges on the effectiveness of post-merger integration planning and execution.

Profitability: Post-merger profitability is not an automatic outcome—it depends critically on the acquiring institution's ability to manage costs, eliminate inefficiencies, and realize strategic synergies. Factors such as rationalization of branches, optimization of human resources, and harmonization of financial systems play a pivotal role in driving profit margins. Without disciplined cost control and synergy extraction, the financial benefits of consolidation may remain elusive.

Shareholder Value: In the immediate aftermath of a merger, shareholder value often experiences volatility, reflected in declines in earnings per share (EPS), dividend payouts, and stock price performance. These short-term disruptions are typically attributed to integration costs, market uncertainty, and transitional inefficiencies. However, with successful integration and strategic clarity, shareholder confidence can be restored, leading to long-term value appreciation and improved investor sentiment.

Sectoral Impact: At the macro level, consolidation within the banking sector contributes to a more robust and competitive financial ecosystem. Larger, merged entities are better equipped to meet regulatory requirements, absorb economic shocks, and compete in global markets. M&A activity also supports policy goals such as financial inclusion, capital adequacy, and systemic stability, reinforcing the sector's alignment with national economic reforms.

Recommendations: Effective execution of mergers and acquisitions (M&A) in the banking sector requires a multi-dimensional approach that begins well before the formal consolidation process. Organizations must undertake rigorous pre-merger assessments to identify potential integration challenges, including cultural alignment, technological compatibility, and operational redundancies. These evaluations are essential for crafting informed integration strategies that minimize disruption and maximize value creation.

Equally vital is transparent and continuous communication with all stakeholders—particularly employees, shareholders, and regulatory authorities. Clear messaging around the strategic rationale, expected outcomes, and transitional timelines fosters trust, mitigates uncertainty, and enhances stakeholder buy-in. This is especially important in the banking sector, where public confidence and institutional credibility are paramount.

Governments and regulatory bodies play a pivotal role in facilitating successful M&A activity by streamlining

approval mechanisms, ensuring timely clearances, and providing policy support that encourages consolidation without compromising financial stability or consumer protection. A responsive regulatory environment can significantly reduce transaction costs and accelerate post-merger integration.

Post-merger management should prioritize the realization of operational synergies, such as cost efficiencies, process optimization, and resource reallocation. Simultaneously, efforts must be directed toward restoring and enhancing shareholder confidence through transparent financial reporting, consistent dividend policies, and strategic growth initiatives. The long-term success of any merger hinges not only on financial metrics but also on the institution's ability to harmonize operations and deliver sustained value to its stakeholders.

Conclusion: The study concludes that mergers and acquisitions (M&A) serve as potent strategic instruments for enhancing financial performance and augmenting shareholder value within the banking sector. When executed with precision, M&A initiatives can lead to improved profitability, operational efficiency, and market competitiveness. However, the success of such consolidation efforts is not guaranteed by the transaction alone—it is contingent upon meticulous pre-merger planning, seamless execution, and robust post-merger integration frameworks.

The findings underscore the necessity of aligning short-term transitional management with long-term strategic objectives. While M&A activities often entail temporary disruptions—such as cultural dissonance, workforce realignment, and system integration challenges—these must be proactively managed to unlock the full spectrum of anticipated synergies. Institutions that effectively navigate this balance are better positioned to deliver sustained value to shareholders, enhance institutional resilience, and contribute meaningfully to sectoral stability.

Ultimately, the study reinforces the notion that M&A in banking is not merely a financial transaction but a complex transformation process requiring strategic foresight, stakeholder engagement, and adaptive leadership.

References:-

1. Ghosh, A. (2017). *Mergers, Acquisitions and Corporate Restructuring*. New Delhi: PHI Learning.
2. Srivastava, R. M., & Nigam, D. (2018). *Management of Financial Institutions*. New Delhi: Himalaya Publishing House.
3. Khan, M. Y., & Jain, P. K. (2020). *Financial Management: Text, Problems and Cases* (8th ed.). New Delhi: McGraw Hill Education.
4. Reddy, P. N. (2019). *Mergers and Acquisitions: Indian Perspectives*. Hyderabad: Himalaya Publishing House.
5. Sasikala, S., & Sudha, B. (2022). *Post-Merger Performance of the State Bank of India: An Analysis*. Karaikudi: Department of Banking Management, Alagappa University.

****

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 में योग का कार्यान्वयन एवं महत्त्व

डॉ. नीता मौर्य * डॉ.अवधेश कुमार मौर्य **

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) श्री शिवा डिग्री महाविद्यालय, तेरही कप्तानगंज, आजमगढ़ (उ.प्र.) भारत
** लेक्चरर (मनोविज्ञान) राजकीय इंटर कॉलेज, माताटीला ललितपुर (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – नई शिक्षा नीति (NEP 2020) भारत की शिक्षा प्रणाली में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने का एक महत्त्वपूर्ण प्रयास है। यह नीति समग्र शिक्षा को बढ़ावा देने पर बल देती है, जिसमें शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास शामिल है। योग, जो भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है, NEP 2020 में समग्र विकास के लिए एक महत्त्वपूर्ण उपकरण के रूप में उभरता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, जिसे सामान्यत: NEP 2020 के रूप में संक्षिप्त किया जाता है, ने पूर्ववर्ती राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की जगह ली है। इसका अकादमिक समुदाय द्वारा बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया गया है और इसे भारत भर में सफलतापूर्वक लागू किया जा रहा है। कई शिक्षाविद, छात्र और यहाँ तक कि नीति विशेषज्ञ भी इस नीति की क्षमता के प्रति अनिश्चित और संदेह में थे कि क्या यह शिक्षा परिणामों के मौजूदा स्थिति के बीच बढ़ते अंतर को भर सकेगी। इस शोध का उद्देश्य है कि इसे समझा जा सके। 2020 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संबंध में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि यह नीति छात्रों के व्यक्तित्व विकास में कैसे योगदान देगी। इस शोध पत्र के लेखक इस मौलिक प्रश्न का उत्तर देते हैं और छात्र के समग्र व्यक्तित्व के विकास में योग की भूमिका पर भी विचार करते हैं। यह शोध पत्र NEP 2020 के उद्देश्यों, योग के शैक्षिक महत्व, और दोनों के समन्वय से शिक्षा में होने वाले संभावित परिवर्तनों का विश्लेषण करता है।

शब्द कुंजी – शिक्षा पर राष्ट्रीय नीति 1986, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, भारतीय ज्ञान प्रणाली, आत्मनिर्भरता, योग।

प्रस्तावना – भारत सरकार द्वारा जुलाई 2020 में लागू की गई नई शिक्षा नीति (NEP 2020) का उद्देश्य 21वीं सदी की आवश्यकताओं के अनुरूप एक ऐसी शिक्षा प्रणाली विकसित करना है जो न केवल बौद्धिक विकास को बढ़ावा दे, बल्कि विद्यार्थियों के समग्र विकास को भी सुनिश्चित करे। NEP 2020 में नैतिकता, मूल्य-आधारित शिक्षा, और भारतीय संस्कृति के तत्वों को शामिल करने पर जोर दिया गया है। इस संदर्भ में, योग, जो शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शांति, और आत्म-अनुशासन को बढ़ावा देता है, शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। यह शोध पत्र NEP 2020 के ढांचे में योग के समावेश की संभावनाओं और इसके प्रभावों की पड़ताल करता है। यह नीति वैश्विक शिक्षा विकास के एजेंडे को ध्यान में रखते हुए तैयार की गई है, जैसा कि 2030 के स्थायी विकास एजेंडे के स्थायी विकास लक्ष्य 4 (SDG4) में प्रस्तावित किया गया है, जिसे भारतीय सरकार ने 2015 में आधिकारिक रूप से अनुमोदित और अपनाया था। नेशनल एजुकेशन पॉलिसी 2020 छात्रों में सृजनात्मकता के विकास पर बहुत जोर देती है। यह नीति भारत के शिक्षा क्षेत्र को पर्याप्त रूप से बदलने और विकसित करने का इरादा रखती है। व्यक्तित्व का समग्र विकास प्रत्येक व्यक्ति की भविष्य की संभावनाओं के समग्र विकास को दर्शाता है। इसका मूलत: अर्थ है कि हर व्यक्ति में तार्किक, संज्ञानात्मक, शारीरिक, प्रदर्शनी, दार्शनिक और आध्यात्मिक क्षमताओं का विस्तार, वृद्धि और विकास किया जाए, ताकि हर व्यक्ति आधुनिक दुनिया में जीवन की मांगों, जरूरतों और चुनौतियों का सामना करने में सक्षम हो सके, विशेष रूप से महामारी के बाद की स्थिति में। ऊपर उल्लेखित अनुसार, ये कौशल और योग्यता की श्रृंखला व्यक्तिगत और पेशेवर प्रयासों के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता और विजय हासिल करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

NEP 2020 भारत की शिक्षा प्रणाली को लचीला, समावेशी, और रोजगारोन्मुख बनाने पर केंद्रित है। यह नीति 5+3+3+4 की नई संरचना, बहुभाषी शिक्षा, और प्रौद्योगिकी के उपयोग को प्रोत्साहित करती है। इसके अतिरिक्त, यह शारीरिक शिक्षा, कला, और भारतीय संस्कृति के तत्वों को पाठ्यक्रम में शामिल करने पर बल देती है। योग, जो प्राचीन भारतीय दर्शन का हिस्सा है, मानसिक स्वास्थ्य, एकाग्रता, और तनाव प्रबंधान में सहायक है। विभिन्न अध्ययनों (Telles et al-, 2013) ने प्रमाणित किया है कि नियमित योग अभ्यास से विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियां और भावनात्मक स्थिरता में सुधार होता है। UNESCO (2021) ने भी योग को शिक्षा में समग्र विकास के लिए एक प्रभावी उपकरण माना है।

उद्देश्य:

1. NEP 2020 के प्रमुख प्रावधानों और समग्र शिक्षा के दृष्टिकोण को समझना।
2. योग के शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक लाभों का विश्लेषण करना।
3. NEP 2020 के अंतर्गत योग के समावेश की संभावनाओं और चुनौतियों का मूल्यांकन करना।

नई शिक्षा नीति 2020: प्रमुख विशेषताएं–

1. **समग्र और बहु-आयामी शिक्षा:** NEP 2020 का लक्ष्य विद्यार्थियों के बौद्धिक, शारीरिक, और भावनात्मक विकास को संतुलित करना है।
2. **भारतीय संस्कृति का समावेश:** नीति में भारतीय ज्ञान परंपराओं, जैसे वेद, उपनिषद, और योग, को पाठ्यक्रम में शामिल करने की

सिफारिश की गई है।

3. **शारीरिक शिक्षा और कल्याण:** शारीरिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए खेल और योग को अनिवार्य करने का प्रावधान है।
4. **लचीलापन और रचनात्मकता:** विद्यार्थियों को अपनी रुचि के अनुसार विषय चुनने की स्वतंत्रता दी गई है, जिसमें योग और ध्यान जैसे वैकल्पिक विषय शामिल हो सकते हैं।

योग का शैक्षिक महत्व– योग एक समग्र प्रणाली है जो शारीरिक आसन, प्राणायाम, ध्यान, और नैतिक सिद्धांतों को जोड़ती है। शिक्षा के संदर्भ में योग के निम्नलिखित लाभ हैं:

1. **मानसिक स्वास्थ्य:** योग तनाव और चिंता को कम करता है, जो विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है।
2. **एकाग्रता और स्मृति:** ध्यान और प्राणायाम मस्तिष्क की कार्यक्षमता को बढ़ाते हैं, जिससे शैक्षिक प्रदर्शन में सुधार होता है।
3. **शारीरिक स्वास्थ्य:** आसन और व्यायाम शारीरिक लचीलापन और प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करते हैं।
4. **नैतिक विकास:** यम और नियम जैसे योग के सिद्धांत विद्यार्थियों में नैतिकता और अनुशासन विकसित करते हैं।

NEP 2020 में योग का समावेश – NEP 2020 में योग को शामिल करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं:

1. **पाठ्यक्रम में योग:** प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक योग को एक अनिवार्य या वैकल्पिक विषय के रूप में शामिल किया जा सकता है।
2. **शिक्षक प्रशिक्षण:** शिक्षकों को योग और ध्यान के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शामिल किया जाए ताकि वे इसे प्रभावी ढंग से पढ़ा सकें।
3. **स्कूलों में योग सत्र:** दैनिक समय–सारिणी में योग और ध्यान के लिए समय निर्धारित किया जाए।
4. **जागरूकता अभियान:** विद्यार्थियों और अभिभावकों को योग के लाभों के बारे में जागरूक करने के लिए कार्यशालाएं आयोजित की जाएं।

योग और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 – मानव शरीर की स्वस्थ अस्तित्व के लिए अपनी आवश्यकताएँ होती हैं। इसका अर्थ है कि मानव शरीर के सभी अंगों और अंग प्रणाली का विकास सही तरीके से होना चाहिए ताकि वे स्वस्थ तरीके से कार्य कर सकें। यह बात मानव मन के लिए भी सत्य है। इस प्रकार, योग को भारत के ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों के सभी छात्रों को प्रभावी ढंग से सिखाना चाहिए ताकि मन, शरीर और आत्मा का समग्र और समग्र विकास हो सके। एक स्वस्थ मन तभी विकसित किया जा सकता है जब वह किसी बीमारी से रहित स्वस्थ शरीर में हो। योगिक प्रथाएँ जैसे यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और बंधा आदि मानसिक, भावनात्मक, संज्ञानात्मक, आध्यात्मिक और शारीरिक स्वास्थ्य में अत्यधिक प्रभावी साबित हुए हैं।मनुष्यों के विकास के लिए। इस प्रकार, भारत में वर्तमान शिक्षा प्रणाली के लिए यह बहुत आवश्यक है कि वह योग के विभिन्न स्कूलों और प्राचीन भारत की योग विद्या पर गहन अनुसंधान करने के लिए व्यापक और विशद शोध ढांचे का विकास करे। एक समग्र चरित्र का विकास और समग्र सामाजिकता कुछ मुख्य आवश्यकताएँ हैं ताकि एक समान, शिक्षित और प्रबुद्ध समाज का उदय हो सके। इसलिए, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को योग के सार्वभौमिक दर्शन को लागू करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए क्योंकि योग के मुख्य सिद्धांत और एक छात्र की व्यक्तित्व का समग्र विकास दोनों आपस में जुड़े और निर्भर हैं। इसके परिणामस्वरूप, यह शोध सुझाव देने के लिए है कि भारतीय सरकार को योग से संबंधित शिक्षा के सुधार और उन्नति के लिए मजबूत शोध और शैक्षिक ढांचे का विकास करना चाहिए, क्योंकि यही एकमात्र समाधान और प्रक्रिया है जिसके द्वारा भारत के प्रत्येक छात्र को लाभ हो सकता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सफल कार्यान्वयन के लिए एक व्यावहारिक दृष्टिकोण और तर्कसंगत दृष्टिकोण आवश्यक शर्तें हैं। इसके अलावा, भारतीय सरकार को वास्तविक समय, व्यावहारिक मूल्यांकन विधियों और प्रक्रियाओं के विकास और उन्नयन के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए, जो एक छात्र को आवश्यकतानुसार सीखने, पुनः सीखने और अनसीखने की अनुमति दें। प्रत्येक व्यक्ति के सर्वांगीण संज्ञानात्मक और आध्यात्मिक विकास के लिए शैक्षणिक समुदाय द्वारा प्रभावी रणनीतियों का कार्यान्वयन किया जाना चाहिए। इसके लिए आवश्यक होगा कि परामर्श, परामर्शात्मक और अन्य अनुसंधान ढांचों की स्थापना की जाए, जिनका उपयोग बाल मनोविज्ञान, शिक्षण विधि और बच्चों के आध्यात्मिक विकास पर व्यापक और गहन अनुसंधान करने के लिए किया जा सके। भारत की शिक्षा प्रणाली दिन–प्रतिदिन सुधारित हो रही है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली 1986 की शिक्षा नीति में, संस्कृति और भाषाओं को शिक्षा में शामिल किया गया था। लेकिन इसे महत्व नहीं दिया गया। इसलिए, इसका कोई अनुसंधान नहीं किया गया। जैसे–जैसे विदेशी भाषाओं का उपयोग और विदेशों में रोजगार के अवसरों का आकर्षण बढ़ा, भारतीय ज्ञान का अधिग्रहण और अनुसंधान उपेक्षित हो गया। विभिन्न भारतीय भाषाओं और संस्कृतियों की स्थिति उस क्षेत्र तक सीमित रह गई। इस ज्ञान का उपयोग दुनिया भर में किया जा सकता है, यदि ज्ञान की इन शाखाओं को शिक्षा क्षेत्र में शामिल किया जाए, तो आज के छात्रों को अनुसंधान और रोजगार के अवसर मिल सकते हैं। आकर्षण के कारण, विदेशी जाने की प्रवृत्ति कम होगी और छात्रों की कलात्मकता और कौशल को बढ़ावा दिया जाएगा और यह भारतीय ज्ञान की विश्व के सामने महत्वपूर्णता बढ़ाएगा।

विद्यार्थियों में अभिक्षमता कि खोज और योग की आवश्यकता–

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति के सिद्धांतों के अनुसार, हर छात्र की विशेष क्षमताओं को खोजने और उन्हें विकसित करने का प्रयास किया जाना चाहिए।
2. रचनात्मकता और तार्किक सोच का योगिक विकास ।
3. योग के द्वारा नैतिक, मानव और संवैधानिक मूल्य।
4. जीवन के मूल्य जैसे संचार, सहयोग, टीमवर्क और लचीला होना।
5. अपने भारतीय मूल, भारत और भारत की समृद्ध और विविध प्राचीन और आधुनिक संस्कृति, ज्ञान प्रणालियों और परंपराओं पर गर्व करना चाहिए।

योग का अंतरराष्ट्रीयकरण – जब से अंतरराष्ट्रीय योग दिवस शुरू हुआ है, योग का प्रचार और प्रसार भारत और दुनिया भर में शुरू हुआ है। योग में अंतरराष्ट्रीय रुचि बढ़ रही है, इसलिए भारत के बाहर के छात्रों को भारतीय शिक्षा प्रणाली में आसानी से समाहित किया जा सकता है। योग अभ्यास सामाजिक प्रतिबद्धता को बढ़ाता है। इसके अलावा, व्यक्तिगत विकास के साथ–साथ सामाजिक विकास के लिए, योग का पूरा प्रशिक्षण मुख्य शिक्षा में शामिल करना आवश्यक और फायदेमंद होगा। योग एक कौशल है और इसके माध्यम से आत्म–नियोजित अवसर प्राप्त किए जा सकते हैं। इसलिए,

इसे कौशल पाठ्यक्रम में शामिल किया जा सकता है। योग, प्राथमिक चिकित्सा के रूप में, सहायक चिकित्सा की एक शाखा होने के नाते AYUSH मंत्रालय के अंतर्गत आता है, साथ ही यह इम्युनिटी को बढ़ाता है। भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति का प्रचार: योग शाखा को भारतीय ज्ञान संस्कृति में महत्वपूर्ण माना गया है। योग प्रशिक्षण को हर जगह शामिल किया जा सकता है।

शिक्षा प्रणाली को देश की आर्थिक स्थिति और शासकों की नीति के अनुसार माना गया। यह विभिन्न शैक्षिक नीतियों से स्पष्ट है। इस विषय में विभिन्न परिवर्तन भी किए गए। समाज के सभी स्तरों तक शिक्षा पहुँचाने के लिए विभिन्न प्रयास किए गए। हालाँकि, भारतीय ज्ञान प्रणाली पर कोई जोर नहीं दिया गया। इन नीतियों की समीक्षा करते हुए, उनके लिए समितियाँ और उनके कार्यान्वयन, 'नई शिक्षा नीति 2020' में भारतीय ज्ञान पर आधारित विभिन्न ज्ञान शाखाओं के समावेश पर यहाँ प्रकाश डाला गया है। योग एक सार्वभौम विषय है। योग और संस्कृत भाषा से संबंधित शोध विषय हो सकते हैं। योग एक चिकित्सा विधि है, इसलिए इसे स्वास्थ्य अनुशासनों में शामिल किया जा सकता है। यदि हम योग पर विचार करें, तो इसे खेलों में शामिल किया जाएगा। ध्यान की विधि में योग केवल आत्मिक प्रगति का एक चरण नहीं है, बल्कि मानसिक विकारों में भी उपयोगी है, योग का विषय मनोविज्ञान से संबंधित है। इसी कारण से योग को भारतीय मनोविज्ञान भी कहा जाता है। योग शास्त्र में यम-नियम लोगों और समाज के लिए उपयोगी हैं। चूंकि इस क्षेत्र का अंतरराष्ट्रीय दायरा है, योग नौकरी के अवसरों और बाजारों के क्षेत्र में भी उपयोगी है। यही कारण है कि नए शिक्षा नीति में उल्लेखित प्राथमिक शिक्षा से लेकर पीएचडी तक योग का विषय शामिल करना संभव और आवश्यक है।

चुनौतियां:

1. **बुनियादी ढांचे की कमी:** ग्रामीण क्षेत्रों के स्कूलों में योग प्रशिक्षण के लिए स्थान और संसाधनों की कमी हो सकती है।
2. **प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी:** योग को प्रभावी ढंग से पढ़ाने के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता है।
3. **सांस्कृतिक भ्रांतियां:** कुछ समुदायों में योग को धार्मिक प्रथा मानने की गलतफहमी हो सकती है।
4. **समय प्रबंधन:** पहले से ही भारी पाठ्यक्रम में योग को शामिल करना समय प्रबंधन की चुनौती पैदा कर सकता है।

संभावित समाधान:

1. **डिजिटल संसाधन:** ऑनलाइन योग सत्र और ऐप्स के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में योग शिक्षा प्रदान की जा सकती है।
2. **सार्वजनिक-निजी भागीदारी:** योग प्रशिक्षण के लिए गैर-सरकारी संगठनों और निजी संस्थानों के साथ सहयोग किया जा सकता है।
3. **जागरूकता:** योग को वैज्ञानिक और समावेशी दृष्टिकोण से प्रस्तुत कर सांस्कृतिक भ्रांतियों को दूर किया जाए।

निष्कर्ष- नई शिक्षा नीति 2020 और योग का समन्वय भारत की शिक्षा प्रणाली को समग्र, समावेशी, और भविष्योन्मुख बनाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम हो सकता है। योग न केवल विद्यार्थियों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है, बल्कि उनमें नैतिकता, अनुशासन, और आत्म-जागरूकता जैसे गुणों का भी विकास करता है। हालांकि, इसके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए बुनियादी ढांचे, प्रशिक्षण, और जागरूकता जैसे क्षेत्रों में निवेश की आवश्यकता है। यदि इन चुनौतियों का समाधान किया जाए, तो NEP 2020 के माध्यम से योग शिक्षा में एक नए युग की शुरुआत कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय।
2. Telles, S-, et al- (2013)- “Effect of Yoga on Cognitive Functions in School Children” Journal of Alternative and Complementary Medicine.
3. UNESCO (2021)- “Yoga in Education” A Holistic Approach.
4. पतंजलि योग सूत्र, स्वामी विवेकानंद।
5. National Education Policy 2020, Ministry of Human Resource Development, Government of India, https://www.education.gov.in.
6. National Education Policy 2020, WIKIPEDIA, https://en.m.wikipedia.org/wiki/National_Education_Policy_2020.
7. Singh, R. @Ray of thought (2021). New Education Policy: Advantages & Disadvantages, READERS' BLOG, Times of India, India Times, https://timesofindia.indiatimes.com/readersblog/ray-of-thought/new-education-policyadvantages- disadvantages-32468/.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय शिक्षा में आयुर्वेदिक ज्ञान का महत्व

डॉ. मंजुला निंगवाल*

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) भेरूलाल पाटीदार शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – आयुर्वेद हमें स्वस्थ जीवन की दिशा हजारों वर्षों से दिखा रहा है। प्राचीन भारत में आयुर्वेद को स्वस्थ जीवन शैली का सर्वोत्तम मंत्र माना गया है। आधुनिक जीवन शैली में हमें मन और आत्मा का ध्यान रखने के लिए आयुर्वेदिक तौर तरीकों की आवश्यकता है। हम विकसित भारत की कल्पना को साकार तभी कर पाएंगे जब मानसिक रूप से पूर्ण विकसित व स्वस्थ्य होंगे। भारत की आयुर्वेदिक उपचार प्रणालियां वर्षो पुरानी है जो मानसिक स्वास्थ्य के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती है। यह मन ,शरीर और आत्मा का सम्बोधन है। यह मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है, दैनिक तनावों से दूर रखता है, तथा स्वस्थ शरीर प्रदान करता है।

शब्द कुंजी – आयुर्वेद,रोग प्रतिरोधक क्षमता, विकसित भारत, दैनिक तनाव, मानसिक स्वास्थ्य।

प्रस्तावना –आयुष चिकित्सा, पद्धतियां भारत की पारंपरिक और वैकल्पिक स्वास्थ्य प्रणालियों हैं। जिनमें आयुर्वेद, योग, प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी शामिल है। ये प्रणालियां भारत की प्राचीन चिकित्सा परंपराओं और ज्ञान पर आधारित है। आयुष का अर्थ अंग्रेजी AYUSH,A-आयुर्वेद, Y-योग और प्राकृतिक चिकित्सा,U-यूनानी,S-सिद्ध,H-होम्योपैथी है। लगभग 1000 ईसा पूर्व आयुर्वेद के ज्ञान का व्यापक दस्तावेज चरक द्वारा चरक संहिता में और सुश्रुत द्वारा सुश्रुत संहिता में किया गया था। आयुर्वेद का सिद्धांत पांच मूल तत्वों (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) और त्रिदोष(वात,पित्त, कफ) की अवधारणा पर आधारित है। आयुर्वेद में उपचार व्यक्तिगत होता है। 'आयुर्वेद' शब्द संस्कृत के 'आयु' (जीवन) और वेद (विज्ञान/ज्ञान) शब्दों से बना है, जिसका अर्थ है जीवन का विज्ञान। इसका मुख्य उद्देश्य स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम आतुरस्य विकार प्रशमन है। जिसका अर्थ है, स्वास्थ्य का प्रसार करना और रोगों का निवारण करना। आयुर्वेदिक चिकित्सक बीमारी का निदान करने के लिए विभिन्न तरीकों का उपयोग करते हैं जिनमें नाड़ी (नब्ज) मूत्र ,मल, जीभ,वाणी, स्पर्श ,दृष्टि और आकृति(रूप) शामिल है।

आधुनिकीकरण और विकास के दौर में मनुष्य एक मशीन बन गया है तकनीकी क्रांति के बाद से मानवीय आदतों में भारी बदलाव आया है पहले की सक्रिय और गतिशील जिंदगी अब लैपटॉप वाले छोटे से केबिन तक सीमित हो गई है। आधुनिकीकरण के लाभों के लिए मानव जाति ने निश्चित रूप से अपने स्वास्थ्य के मामले में भारी कीमत चुकाई है। इस बड़ी समस्या का व्यापक समाधान आयुर्वेद है। यह प्राचीन पारंपरिक विज्ञान अपने अनुठे दृष्टिकोण के कारण विशिष्ट है।

आयुर्वेद को दुनिया के 24 देश में मान्यता प्राप्त है और आयुर्वेदिक उत्पादों का निर्यात 100 से अधिक देशों में होता है। व्यापार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के माध्यम से आयुर्वेद विश्व स्तर पर फैल गया है पुराणों में धन्वंतरि का उल्लेख आयुर्वेद के देवता के रूप में किया गया है। 2016 में भारत सरकार ने धन्वंतरि की जंयती को राष्ट्रीय दिवस के रूप में घोषित किया गया है। साथ ही 23 सितंबर को आयुर्वेद दिवस के रूप में घोषित करके भारत ने आयुर्वेद को एक वैश्विक कैलेंडर पहचान दी है। 2025 में अंतरराष्ट्रीय आयुर्वेद दिवस की थीम हैश लोगों और ग्रह के लिए आयुर्वेद, जिसमें वैश्विक कल्याण और पर्यावरणीय स्थिरता पर जोर दिया जाएगा।

शोध उद्देश्य:

1. इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना है कि भारतीय शिक्षा प्रणाली में आयुर्वेद को जोड़ने से विद्यार्थियों के स्वास्थ्य पर जो प्रभाव पड़ेगा उससे देश के भावी पीढ़ी के जीवन की गुणवत्ता में सुधार होगा या नहीं।
2. यह जानना कि सरकार द्वारा आयुर्वेद को भारतीय पाठ्यक्रम में लागू करने से विकसित भारत के सपने को साकार किया जा सकेगा या नहीं, व पाठ्यक्रम में आयुर्वेद की नवीन विचारधारा किस प्रकार प्रभावी ढंग से कार्य कर सकेगी।

शोध पद्धति – प्रस्तुत शोध पत्र में शोध अध्ययन हेतु द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से तथ्य एकत्र किए गए हैं। इस हेतु विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं , पुस्तकों, समाचार पत्र, जर्नल्स ,चरक संहिता आदि का प्रयोग किया गया है।

हमारी शिक्षा में आयुर्वेद का महत्व अनेक दृष्टिकोण में बहुत बड़ा है यह न केवल प्राचीन भारतीय चिकित्सा प्रणाली है बल्कि एक जीवन शैली और स्वास्थ्य को संतुलित रखने का विज्ञान भी है शिक्षा के क्षेत्र में आयुर्वेद का महत्व इस प्रकार है:

1. **स्वस्थ्य जीवन शैली –** आयुर्वेद सिर्फ रोगों के इलाज की प्रणाली नहीं है, बल्कि यह हमें सही जीवन शैली,आहार विहार और मानसिक संतुलन बनाए रखने का तरीका सिखाता है।इसे शिक्षा में शामिल करके विधार्थियों को शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूक किया जा सकता है।
2. **गर्वित परंपरा –** आयुर्वेद भारत की प्राचीन धरोहर है इसे शिक्षा का हिस्सा बनाकर विद्यार्थी अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ सकते हैं और भारतीय ज्ञान परंपरा को गर्व के साथ स्वीकार कर सकते हैं।

3. समग्र विकास – आयुर्वेद शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक पहलुओं पर आधारित है, इसे शिक्षा में शामिल करने से विद्यार्थियों का समग्र विकास सुनिश्चित किया जा सकता है।

4. स्वास्थ्य शिक्षा – वर्तमान समय में बढ़ती बीमारियों और तनावपूर्ण जीवन शैली को देखते हुए आयुर्वेद का ज्ञान हर छात्र के लिए उपयोगी है। इससे विद्यार्थी कम उम्र में ही स्वास्थ्य के प्रति सजग हो सकते हैं।

5. रोजगार और उद्यमिता के सुअवसर – आयुर्वेदिक चिकित्सा, दवाईयों का निर्माण, वेलनेस सेंटर और योग– प्रशिक्षण जैसे क्षेत्रों में रोजगार के असीम अवसर है। आयुर्वेद को शिक्षा का हिस्सा बनाने से विद्यार्थियों को इन क्षेत्रों में रोजगार के लिए तैयार किया जा सकता है।

जैसे प्रमुख रोजगार क्षेत्र :

1. आयुर्वेदिक चिकित्सक
2. आयुर्वेदिक फार्मासिस्ट
3. आयुर्वेदिक स्वास्थ्य सलाहकार
4. आयुर्वेदिक शोधकर्ता (हर्बल दवाओं के विकास और उनके प्रभावों पर शोध करना)
5. आयुर्वेदिक शिक्षण कार्य
6. आयुर्वेदिक उद्यमी (स्वयं का आयुर्वेदिक उत्पाद ब्रांड या वैलनेस क्लिनिक शुरू करना)
7. आयुर्वेदिक कल्याण केंद्र चलाना
8. आयुर्वेदिक उत्पाद निर्माण कंपनियों में कार्यरत होना, नवाचार में संलग्न होना।

6. प्राकृतिक चिकित्सा पर बल – आयुर्वेद ,प्रकृति और पर्यावरण के साथ सामंजस्य की शिक्षा देता है। इसे पढ़कर प्राकृतिक चिकित्सा हर्बल मेडिसिन और पर्यावरण संरक्षण के महत्व को समझ सकते हैं।

7. विकसित वैज्ञानिक दृष्टिकोण – आयुर्वेद केवल परंपरागत ज्ञान नहीं है, बल्कि इसमें कई वैज्ञानिक अवधारणाएं छिपी है। इसे आधुनिक शिक्षा के साथ जोड़कर वैज्ञानिक शोध और नवाचार को बढ़ावा दिया जा सकता है।

8. योग और ध्यान का समायोजन – योग और आयुर्वेद एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। शिक्षा ने आयुर्वेद के साथ योग और ध्यान को शामिल करने से विद्यार्थियों का मानसिक– शारीरिक स्वास्थ्य बेहतर हो सकता है ,और उनकी एकाग्रता बढ़ सकती है। आयुर्वेद भारतीय पारंपरिक चिकित्सा पद्धति है जो शारीरिक, मानसिक और आत्मिक संतुलन को बनाए रखने पर जोर देती है। यह न केवल उपचार के लिए बल्कि रोगों की रोकथाम और जीवन शैली सुधार के लिए भी प्रभावी है। आयुर्वेद का प्रभाव आज दुनिया भर में बढ़ रहा है। खासकर जब लोग प्राकृतिक और समग्र स्वास्थ्य उपचार की ओर रूख कर रहे हैं। आयुर्वेद के सिद्धांतों पर आधारित चिकित्सा पद्धतियां और औषधियां आजकल अंतरराष्ट्रीय चिकित्सा संस्थानों में भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रही है। इसके जड़ी– बूटियां और प्राकृतिक उपचारों का उपयोग आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों में भी किया जा रहा है, और इसके प्रभाव को वैश्विक स्तर पर पहचाना जा रहा है।

आयुर्वेद के महत्व को कई महापुरुषों और ज्ञानियों ने अपने विचार व्यक्त किए हैं इन विचारों में प्रसिद्ध उदाहरण इस प्रकार है:

चरक संहिता के अनुसार–आयुर्वेद का कार्य केवल रोग का उपचार नहीं है, बल्कि यह जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने, शरीर को स्वस्थ रखने और लंबी उम्र जीने के उपायों को सिखाता है।

विवेकानंद जी के अनुसार– आयुर्वेद वह अमूल्य धरोहर है जो जीवन के प्रत्येक पहलू को समग्र रूप में देखती है। और हमें स्वस्थ रखने के लिए प्राकृतिक उपचारों की और मार्गदर्शन करती है।

इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि आयुर्वेद न केवल शारीरिक स्वास्थ्य का ध्यान रखता है, बल्कि यह मानसिक और आत्मिक शक्ति के लिए भी एक प्रभावी उपाय है। आयुर्वेद की यह समग्र दृष्टि जीवन को और अधिक संपन्न और संतुलित बनाने में मदद करती है।

निष्कर्ष– इंडियन नॉलेज सिस्टम और आयुर्वेद का योगदान न केवल भारत में बल्कि पूरी दुनिया में महत्वपूर्ण है। भारत को अपनी पारंपरिक ज्ञान प्रणाली को वैश्विक स्तर पर प्रोत्साहित करने और इसे संरक्षण और संवर्धन की दिशा में कार्य करने की आवश्यकता है। आयुर्वेद का प्रभाव आज दुनिया भर में बढ़ रहा है, खासकर जब लोग प्राकृतिक और समग्र स्वास्थ्य उपचार की ओर रुख कर रहे हैं। आयुर्वेद के सिद्धांतों पर आधारित चिकित्सा पद्धतियां और औषधीयां आजकल अंतर्राष्ट्रीय चिकित्सा संस्थानों में भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर रही है। इसकी जड़ी बूटियों और प्राकृतिक उपचारों का उपयोग आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों में भी किया जा रहा है ,और इसके प्रभाव को वैश्विक स्तर पर पहचाना जा रहा है। आयुर्वेदिक पद्धति सस्ती और सुलभ है, इसे शिक्षा में शामिल करके हर वर्ग के लोगों को सरल और प्राकृतिक तरीके से स्वास्थ्य सुधारने का ज्ञान दिया जा सकता है।

इस प्रकार आयुर्वेद स्वास्थ्य पर्यटन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, यह प्राकृतिक चिकित्सा प्रदान कर लोगों को समग्र रूप से स्वस्थ होने में मदद करता है। विद्यार्थी स्वास्थ्य पर्यटन में भी अपना करियर बना सकते हैं। इसके अंतर्गत 12वीं के बाद मेडिकल टूरिज्म में स्नातक किया जा सकता है ,हेल्थ केयर मैनेजमेंट में मास्टर डिग्री प्राप्त कर सकते हैं। इनमें डिप्लोमा कोर्स भी उपलब्ध है।

इस प्रकार आयुर्वेद को हमारी शिक्षा प्रणाली में शामिल करना न केवल छात्रों के स्वास्थ्य और विकास के लिए महत्वपूर्ण है बल्कि यह भारतीय संस्कृति और परंपरा को सहजने और आगे बढ़ाने का भी एक प्रभावी माध्यम है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. रोग चिकित्सा की चमत्कारी औषधियां, आचार्य विद्याधर शुक्ल ,पृ 16
2. आयुर्वेदिक चिकित्सा, वैद्य सुरेश चतुर्वेदी, पृ 9
3. वृहद आयुर्वेदिक चिकित्सा, डॉ. ओम् प्रकाश सक्सेना,पृ 52
4. आयुर्वेद सार संग्रह, श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भरन,पृ 17–18
5. चरक संहिता

****

भारतीय ज्ञान परंपरा और अर्थशास्त्र

डॉ. ममता पंवार*

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस, शास. माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – यह शोध पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित आर्थिक विचारों और सिद्धांतों की पड़ताल करता है। यह तर्क देता है कि आधुनिक अर्थशास्त्र के विपरीत, भारतीय दृष्टिकोण में आर्थिक गतिविधियों को धर्म (नैतिकता), अर्थ (धन), काम (इच्छा), और मोक्ष (मुक्ति) के चौगुटे (चतुर्वर्ग) के व्यापक ढांचे के भीतर देखा गया है। इस पत्र में प्राचीन भारतीय ग्रंथों जैसे वेदों, उपनिषदों, महाभारत, रामायण, और विशेष रूप से कौटिल्य के अर्थशास्त्र में पाए गए आर्थिक सिद्धांतों का विश्लेषण किया गया है। इसका उद्देश्य यह दिखाना है कि प्राचीन भारतीय विचारकों ने न केवल आर्थिक पहलुओं पर गहन चिंतन किया, बल्कि एक ऐसे समावेशी और संतुलित मॉडल का प्रस्ताव भी रखा, जो व्यक्तिगत समृद्धि के साथ-साथ सामाजिक कल्याण और पारिस्थितिक संतुलन पर भी जोर देता है। यह शोध इस बात पर भी प्रकाश डालेगा कि आधुनिक अर्थशास्त्र के समक्ष मौजूद चुनौतियों, जैसे पर्यावरणीय गिरावट, असमानता और नैतिक शून्यता के समाधान के लिए भारतीय ज्ञान परंपरा से क्या सीखा जा सकता है।

अर्थशास्त्र का अध्ययन मानव समाज के लिए उतना ही पुराना है जितना कि सभ्यता। जबकि आधुनिक अर्थशास्त्र को अक्सर एडम स्मिथ के 'द वेल्थ ऑफ नेशंस' (1776) से उत्पन्न माना जाता है, भारतीय उपमहाद्वीप में आर्थिक विचारों का एक समृद्ध और जीवंत इतिहास रहा है, जो सहस्राब्दियों पुराना है। यह ज्ञान परंपरा न केवल धन और राजस्व के प्रबंधन तक सीमित थी, बल्कि इसमें नैतिकता, सामाजिक व्यवस्था और जीवन के अंतिम लक्ष्यों का भी समावेश था। भारतीय चिंतन में अर्थशास्त्र को अर्थ के रूप में जाना जाता है, जो जीवन के चार पुरुषार्थों में से एक है। पुरुषार्थ शब्द का अर्थ है, मानव जीवन के चार परम लक्ष्य। ये चार लक्ष्य हैंरू धर्म (नैतिक और धार्मिक कर्तव्य), अर्थ (आर्थिक समृद्धि), काम (इच्छाओं की पूर्ति), और मोक्ष (आध्यात्मिक मुक्ति)। इस ढांचे में, अर्थ को धर्म के नियमों के भीतर प्राप्त किया जाना चाहिए, जो इसे एक नैतिक और सामाजिक संदर्भ प्रदान करता है।

प्राचीन भारतीय ग्रंथों में आर्थिक विचार – भारतीय ज्ञान परंपरा में, आर्थिक सिद्धांतों को अलग से एक विषय के रूप में नहीं पढ़ाया गया था, बल्कि यह जीवन के अन्य पहलुओं के साथ गहराई से एकीकृत था।

वेदों और उपनिषदों में आर्थिक विचार – ऋग्वेद में व्यापार, कृषि, और पशुपालन से संबंधित संदर्भ मिलते हैं। यह समृद्धि और धन की कामना करता है, लेकिन इसे नैतिक और धार्मिक अनुष्ठानों से जोड़ता है। यजुर्वेद में कृषि पद्धतियों, पशुधन के महत्व और विनिमय के सिद्धांतों का उल्लेख है। अथर्ववेद में समृद्धि और भौतिक कल्याण के लिए प्रार्थनाएं हैं, साथ ही कृषि की उन्नति और व्यापार की सुरक्षा पर भी जोर दिया गया है। उपनिषद भौतिकता की सीमाओं पर बल देते हैं, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि वे धन का तिरस्कार करते हैं, बल्कि वे यह समझाते हैं कि धन को केवल अंतिम लक्ष्य नहीं माना जाना चाहिए। ईश उपनिषद में कहा गया है, 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा:' (त्याग के साथ उपभोग करो)। यह सिद्धांत उपभोग में संयम और धन के संचय में परोपकार की भावना को प्रोत्साहित करता है।

महाभारत और रामायण में राजनैतिक-आर्थिक संरचना – महाभारत के शांति पर्व में, भीष्म पितामह युधिष्ठिर को राजधर्म और अर्थनीति के बारे में विस्तृत उपदेश देते हैं। इसमें कराधान, सार्वजनिक वित्त, और न्यायपूर्ण शासन के सिद्धांतों का वर्णन है। राजा का कर्तव्य प्रजा की संपत्ति की रक्षा करना और उन्हें आर्थिक रूप से समृद्ध बनाना था। रामायण में भी राम राज्य की अवधारणा एक आदर्श आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था का प्रतीक है, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति खुशहाल और समृद्ध था और कोई भी गरीब नहीं था। यह एक ऐसे राज्य की कल्पना है जहाँ धन का वितरण न्यायपूर्ण था और समाज में कोई असमानता नहीं थी।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र: एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण – प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारों का सबसे व्यवस्थित और वैज्ञानिक प्रतिनिधित्व चाणक्य के रूप में भी जाने जाने वाले कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मिलता है। यह ग्रंथ, जो चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के आसपास लिखा गया था, राज्य शिल्प , सैन्य रणनीति, और आर्थिक नीति पर एक व्यापक मैनुअल है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र राजनीति और अर्थनीति के बीच एक गहरा संबंध स्थापित करता है।

मुख्य सिद्धांत

सप्तांग सिद्धांत – कौटिल्य के अनुसार, एक राज्य सात अंगों से मिलकर बनता है: स्वामी (राजा), अमात्य (मंत्री), जनपद (जनसंख्या और क्षेत्र), दुर्ग (किला), कोष (कोषालय), दण्ड (सेना), और मित्र (सहयोगी)। इनमें से, कोष (कोषालय या खजाना) को सबसे महत्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि यह राज्य की स्थिरता और शक्ति का आधार है।

राज्य की भूमिका– कौटिल्य राज्य को केवल कानून और व्यवस्था बनाए रखने वाले के रूप में नहीं देखते थे, बल्कि वे उसे आर्थिक गतिविधियों को नियंत्रित और निर्देशित करने वाले के रूप में भी देखते थे। राज्य को कृषि को बढ़ावा देना चाहिए, सिंचाई की व्यवस्था करनी चाहिए, व्यापार मार्गों को सुरक्षित करना चाहिए, और सार्वजनिक निर्माण कार्यों जैसे सड़कों और

पुलों का निर्माण करना चाहिए।

कराधान– कराधान को एक न्यायसंगत और पारदर्शी प्रणाली के रूप में वर्णित किया गया है। कौटिल्य का मानना था कि कर इस तरह से लगाए जाने चाहिए कि वे उत्पादन को बाधित न करें, ठीक उसी तरह जैसे ष्फूलों से मधु इकट्ठा करने वाली मधुमक्खीष।

व्यापार और वाणिज्य– कौटिल्य ने व्यापार को विनियमित करने और धोखाधड़ी को रोकने के लिए नियमों का सुझाव दिया। उन्होंने माप और तौल के मानकों को मानकीकृत करने, बाजारों का निरीक्षण करने और एकाधिकार को रोकने के महत्व पर बल दिया।

आधुनिक अर्थशास्त्र से तुलना और भारतीय मॉडल की प्रासंगिकता– आधुनिक अर्थशास्त्र अक्सर व्यक्तिवादी दृष्टिकोण पर आधारित होता है, जहाँ उपभोक्ता की अधिकतम उपयोगिता और फर्म की अधिकतम लाभप्रदता प्रमुख लक्ष्य हैं। इसके विपरीत, भारतीय आर्थिक मॉडल सामाजिक कल्याण, नैतिकता, और पर्यावरणीय स्थिरता को केंद्र में रखता है।

भिन्नताएं

उद्देश्य– आधुनिक अर्थशास्त्र का मुख्य उद्देश्य आर्थिक विकास (जीडीपी वृद्धि) और धन सृजन है, जबकि भारतीय परंपरा में उद्देश्य धर्म (नैतिकता) के साथ अर्थ (धन) का सामंजस्य स्थापित करना है।

नैतिकता– आधुनिक अर्थशास्त्र में, नैतिकता अक्सर एक बाहरी कारक होती है, जबकि भारतीय मॉडल में यह अंतर्निहित है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राजा का कर्तव्य न केवल धन कमाना है, बल्कि प्रजा के कल्याण को भी सुनिश्चित करना है।

पारिस्थितिक दृष्टिकोण– आधुनिक आर्थिक मॉडल अक्सर प्राकृतिक संसाधनों को बाहरी कारक के रूप में मानता है, जिससे पर्यावरणीय क्षति होती है। भारतीय परंपरा में, प्रकृति को पूजनीय माना जाता था और इसका सम्मान करना धार्मिक कर्तव्य का हिस्सा था। अथर्ववेद में, भूमि को माता के रूप में संदर्भित किया गया है।

निष्कर्ष – भारतीय ज्ञान परंपरा में अर्थशास्त्र का अध्ययन केवल धन के संचय तक सीमित नहीं था, बल्कि यह एक समग्र और समावेशी दृष्टिकोण था जो मानव जीवन के सभी पहलुओं को छूता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र जैसे ग्रंथ यह दर्शाते हैं कि प्राचीन भारतीय विचारकों ने एक जटिल और परिष्कृत आर्थिक प्रणाली का विकास किया था। यह प्रणाली न केवल व्यावहारिक और कुशल थी, बल्कि नैतिक और सामाजिक रूप से भी जिम्मेदार थी। आधुनिक अर्थशास्त्र, जो अक्सर असमानता, पर्यावरणीय संकट और नैतिक शून्यता जैसी चुनौतियों का सामना कर रहा है, भारतीय ज्ञान परंपरा से महत्वपूर्ण सबक सीख सकता है।

समृद्धि को केवल भौतिक धन से मापने के बजाय, भारतीय मॉडल हमें सिखाता है कि समृद्धि का वास्तविक अर्थ व्यक्तिगत कल्याण, सामाजिक सद्भाव और प्रकृति के साथ संतुलन में निहित है। इस प्रकार, भारतीय ज्ञान परंपरा से प्राप्त अंतर्दृष्टि एक अधिक टिकाऊ, न्यायपूर्ण और मानवीय आर्थिक प्रणाली का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। यह शोध पत्र यह साबित करता है कि भारत के पास आर्थिक विचारों का एक अनमोल खजाना है, जिसे आज के विश्व के लिए प्रासंगिक बनाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कौटिल्य, अर्थशास्त्र।
2. महाभारत, शांति पर्व।
3. उपनिषद।
4. वेद।
5. दासगुप्ता, सुरेंद्रः 'कौटिल्य का अर्थशास्त्रः प्राचीन भारत में राजव्यवस्था और अर्थशास्त्र।'
6. मेहता, एल.के. : 'वैदिक काल में आर्थिक विचार।'

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जनजातीय समुदाय के विकास में संस्थागत बैंकों की भूमिका (अलीराजपुर जिले के जोबट विकासखण्ड के संदर्भ में)

डॉ. एच. डुडवे*

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस क्रांतिकारी शहीद छितुसिंह किराड़ शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अलीराजपुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – विकास के प्रारम्भ से ही कृषि लोगों की आजीविका का प्रमुख साधान रही है। आज भी कृषि विश्व की अधिकांश जनसंख्या का प्रमुख व्यवसाय तथा आय का सबसे बड़ा साधन है। विकासशील देशों में प्रधान व्यवसाय होने के कारण कृषि आय का सबसे बड़ा स्त्रोत, रोजगार एवं जीवनयापन का प्रमुख साधान, औद्योगिक विकास एवं विदेशी व्यापार का आधार है। कृषि इन देशों की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। कृषि विकास के सोपान पर चढ़कर ही विश्व के विकसित राष्ट्र आज आर्थिक विकास के शिखर पर पहुंच सके हैं। इग्लैंड, जर्मनी, रूस तथा जापान आदि देशों के विकास में कृषि ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा तीव्र औद्योगीकरण के लिए सुदृढ़ आधार प्रदान किया। यही कारण है कि प्राचीन काल से लेकर आज तक के विचारकों ने कृषि विकास पर पर्याप्त बल दिया है। आर्थिक विचारों के इतिहास पर यदि ध्यान दिया जाए तो स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय समाज में कृषि की अत्यधिक महत्व प्रदान किया जाता था। भूमि और कृषि प्राचीन आर्य संस्कृति के आधार स्तम्भ है। भारतीय संस्कृति में पृथ्वी को माता के पवित्र सम्बन्ध से सम्बन्धित किया गया है। यहां कृषि फर्म को प्रथम, वाणिज्य को द्वितीय सेवा कार्य को तृतीय स्थान प्रदान किया गया है। प्राचीन यूनानी विचारकों कृषि व्यवसाय को विशेष महत्व प्रदान किया था। प्राकृतिक अवस्था सम्बन्धी खोज के दौरान प्रकृतिवादियों ने ऐसे सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जिनके कारण कृषि की महत्ता पर्याप्त बढ़ गई। उनका विश्वास था कि कृषि ही समाज की सम्पत्ति उत्पन्न करने वाली तथा उत्पादक है और इसके अतिरिक्त समस्त व्यवसाय वाणिज्य, व्यापार तथा यातायात आदि अनुत्पादक है।

साहित्य समीक्षा

कुसुमाकर, अरूणा (मार्च 2015), 'आधुनिक तकनीकी का ग्रामीण कृषि विकास पर प्रभाव' ग्रामीण कृषि विकास में आधुनिक तकनीकी से उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है ग्रामीण कृषकों को कृषि वित्त जैसी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। संस्थागत बैंकों के माध्यम से क्षेत्र के किसानों को कम दर पर आसानी से ऋण उपलब्ध हो जाता है तो उत्पादन एवं उत्पादकता में अत्यधिक वृद्धि होगी ओर देश एवं राज्य के आर्थिक विकास में सहयोग प्राप्त होगा।[1]

साह, दिपक (2008), 'भारत में सहकारी क्रेडिट संस्थानों के मामले में वित्तक्षेत्र के सुधार' ग्रामीण भारत में सहकारिता के माध्यम से क्रेडिट प्रवाह और उनकी स्थिरता, व्यवहारिकता और परिचालन क्षमता वित्त क्षेत्र सुधारों के युग में विभिन्न नीति निर्माताओं के ध्यान का मुख्य केन्द्र बन गया है।[2]

पटेल, अमृत (2004), 'सहकारी बैंकों की उपलब्धियों एवं चुनौतियाँ' स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद की अवधि में ग्रामीण सहकारी संस्थाओं ने निश्चत रूप से कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने और इसे निर्यात बनाने में काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सहकारी संस्थाओं को ग्रामीण क्षेत्रों में अपने सुचारू संचालन में अनेक समस्यओं का सामना करना पड़ा।[3]

शोध का उद्देश्य– कृषकों का आर्थिक स्वरूप किस प्रकार का है तथा उनकी समस्या अलग–अलग स्थान और अलग–अलग परिपेक्ष में किस प्रकार की अलग–अलग है इसकी समीक्षा करना आवश्यक है जिससे शासकीय योजनाओं की प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सके। जिससे समस्या के समाधान खोजने के प्रयास किये जा सके। निम्न उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं। जो इस प्रकार है –

1. जनजातीय क्षेत्रों में बैकिंग सेवाओं की उपलब्धता और उनकी प्रभावशीलता को समझना।
2. शासन और बैंकों द्वारा जनजातीय समुदाय के लिए चलाई जा रही वित्तीय योजनाओं और नीतियों का अध्ययन करना।
3. जनजातीय समुदाय की आर्थिक सशक्तिकरण में बैंकिंग प्रणाली की भूमिका का मूल्यांकन करना।

अध्ययन की परिकल्पना – सामाजिक घटनाओं के वैज्ञानिक अध्ययन में परिकल्पनाओं का निर्माण, उनका प्रयोग, उनकी उपयोगिता, शोध का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष होता है। परिकल्पनाओं को अनेक बार प्राक्कल्पना, उपकल्पना, पूर्व–कल्पना इत्यादि नामों से पुकारा जाता है।[4] कृषि विकास में संस्थागत बैंकों की भूमिका के अध्ययन में निम्नलिखित उपकल्पनाओं की रचना कि गई है जो इस प्रकार है :

1. जनजातीय समुदाय के लोग बैंकिंग सेवाओं का पूरा लाभ नहीं उठा पा रहे है क्योंकि जागरूकता और पहुंच की कमी है।
2. संस्थागत बैकिंग सेवाओं का जनजातीय समुदाय के आर्थिक विकास में सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

अध्ययन का क्षेत्र– प्रस्तुत अध्ययन में अनुसंधान क्षेत्र के रूप में अलीराजपुर जिले के जोबट विकाखण्ड का चयन किया गया है। जिसमें अलीराजपुर जिले में संस्थागत बैंकों द्वारा कृषकों को लाभान्वित किया गया है। उन हितग्राहियों में से दैव निदर्शन पद्धित द्वारा 50 हितग्राहियों का चयन कर उनका अध्ययन किया गया है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व – भारत का विकास सिर्फ वित्त संस्थानों की मदद से किया जा सकता है लेकिन इसके लिए ग्रामीणों को

बैंकों से जोड़ने के अलावा उन्हें वित्त रूप से साक्षर बनाना भी जरूरी है। कृषि ऋण में प्रभावशाली वृद्धि होने के बावजूद अभी भी कई ऐसी चुनौतियां है जिनसे निपटने की जरूरत है। इसके अलावा कुछ अन्य कारण भी है, जैसे तुरन्त ऋण का न मिलना, किसानों के पास उपयुक्त सुरक्षा का अभाव, आगत और निर्गत की अवधि अधिक होना, कृषि व्यवसाय का मौसमी होना, ऋण का उचित अनुमान न लगा पाना, जिससे सरकार एवं अध्ययन क्षेत्रों में कृषि विकास में सहायक सिद्ध होगा, अध्ययन क्षेत्रों के सर्वागीण विकास हेतु कृषि विकास कार्यक्रम बनाने मे मार्गदर्शक होगा।

संमकों का संकलन – अनुसंधान की विश्वसनीय उस शोध में संकलित ऑकड़ों पर निर्भर करती है यदि ऑकड़ों का संकलन सही तरीके से किया गया है तो शोध कार्यो में गुणवत्ता आ जाती है और उसके परिणामों को बेहतर एवं विश्वसनीय तरीके से प्रस्तुत किया जा सकता है। समंको संकलन एक महत्वपूर्ण चरण होता है। शोध कार्य की सम्पुर्ण सफलता शुद्धतम रूप से एकत्र किए गए ऑकड़ों पर ही निर्भर करता है। अध्ययन के दौरान समंक संकलन प्राथमिक और द्वितीयक स्त्रोतों द्वारा किया गया, जो इस प्रकार है–

प्राथमिक समंक – प्राथमिक समंक वे मौलिक सुचनाऐं या तथ्य होते हैं जो कि एक शोधकर्त्ता वास्तविक अध्ययन स्थल में जाकर विषय से सम्बन्धित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अथवा अनुसूची और प्रश्नावली की सहायता से एकत्रित करता है अथवा प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा प्राप्त करता है।

आंकडे का विश्लेषण – जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा से सन्दर्भित प्रमुख बाधाओं के रूप में अवांछित पर्यावरण जिनमें शैक्षिक अनियमितताएँ, अनुपयोगी पाठ्यक्रम, साधनों की कमी एवं जनजातीय क्षेत्रों से जुड़ी अनेक सामाजिक एवं आर्थिक प्रतिकूलताएँ जिम्मेदार है।

अध्ययन क्षेत्र में आदिवासियों केशैक्षणिक स्थिति के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका क्र. 01: शैक्षणिक स्थिति सम्बंधी जानकारी

क्र.	शैक्षणिक स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	साक्षर	4	8.00
2.	प्राथमिक+ माध्यमिक	25	50.00
3.	हाई स्कूल+ हायर स्कूल	15	30.00
4.	उच्च शिक्षा	6	12.00

योग 50 100.0

स्त्रोंत:–सर्वेक्षण के आधार पर

सर्वेक्षित कृषक परिवारों के शैक्षणिक स्थिति से सम्बन्धी जानकारी में 8.00 प्रतिशत उत्तरदाता साक्षर है, 50.00 प्रतिशत उत्तरदाता प्राथमिक + माध्यमिक है, 30.00 प्रतिशत उत्तरदाता हाईस्कूल + हायर स्कूल पास है, 12.0 प्रतिशत उत्तरदाता उच्च शिक्षा पास है, अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक प्राथमिक+माध्यमिक उत्तरदाताओं के ऑकड़े अधिक है।

व्यवसाय के संबंध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका में दर्शाया गया है–

तलिका क्र. 02: कृषक परिवारों का मुख्य व्यवसाय

क्र.	व्यवसाय	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	कृषि और मजदूरी	35	70.00
2.	कृषि और पशुपालन	13	26.00
3.	कृषि और नौकरी	02	4.00
	योग	**50**	**100**

स्त्रोंत:–सर्वेक्षण के आधार पर

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित कृषक परिवारों के व्यावसायिक संरचना से सम्बन्धी जानकारी में 70.00 प्रतिशत परिवार कृषि और मजदूरी कार्य करते हैं, 26.00 प्रतिशत परिवार कृषि और पशुपालन दोनों कार्य करते हैं, 4.00 प्रतिशत परिवार कृषि और नौकरी दोनों कार्य करते हैं।

अध्ययन क्षेत्र में कृषक परिवारों की कुल वार्षिक आय के सम्बन्ध में जो ऑकडे प्राप्त हुए हैं उन्हें तालिकामें दर्शाया गया है –

तालिका क्र. 03: कृषकों की कुल वार्षिक आय सम्बन्धी जानकारी

क्र.	कुल वार्षिक आय	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	50,000 से कम	8	16.00
2.	50,001 से 80,000 तक	26	52.00
3.	80,001 से 1,00,000 तक	12	24.00
4.	1,00,001 से अधिक	4	8.00
	योग	**50**	**100.0**

स्त्रोंत:–सर्वेक्षण के आधार पर

उपरोक्त तालिका क्रमांक के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षित परिवारों में वार्षिक आय सम्बन्धी जानकारी में 50,000 से कम 16.00 प्रतिशत है, 50,001 से 80,000 तक में 52.00 प्रतिशत है, 80,001 से 1,00,000 तक में 24.00 प्रतिशत है, 1,00,001 से अधिक में 8.00 प्रतिशत है।

अध्ययन क्षेत्र में फसलों के उत्पादन सम्बन्धी जानकारी में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका क्र. 04: फसलों के उत्पादन सम्बन्धी जानकारी

क्र.	फसलों का उत्पादन	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	खाद्यान्न फसलें	11	22.00
2.	व्यापारिक फसलें	5	10.00
3.	उक्त दोनों फसलें	34	68.00
	योग	**50**	**100.0**

स्त्रोंत:–सर्वेक्षण के आधार पर

सर्वेक्षित परिवारों में 22.00 प्रतिशत कृषक खाद्यान्न फसलों का उत्पादन करते हैं, 10.00 प्रतिशत परिवार व्यापारिक फसलों का उत्पादन करते हैं, 68.0 प्रतिशत परिवार खाद्यान्न एवं व्यापारिक दोनों फसलों का उत्पादन करते हैं।

अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्य हेतु संस्थागत वित्त की आवश्यकता सम्बन्धी जानकारी में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका में दर्शाया गया है–

तालिका क्र. 05: कृषि कार्य हेतु संस्थागत वित्त की आवश्यकता सम्बन्धी जानकारी

क्र.	संस्थागत वित्त की आवश्यकता	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हॉ	42	84.00
2.	नहीं	8	16.00
	योग	**50**	**100.0**

स्त्रोंत:–सर्वेक्षण के आधार पर

कृषि कार्य हेतु संस्थागत वित्त की आवश्यकता सम्बन्धी जानकारी में सर्वेक्षित परिवारों में 84.00 प्रतिशत कृषक परिवारों को कृषि कार्य हेतु वित्त की आवश्यकता होती है, 16.00 प्रतिशत कृषक परिवार कृषि वित्त की आवश्यकता नहीं होती है।

अध्ययन क्षेत्र में कृषकों का संस्थागत ऋण लेने से परिवार की वार्षिक

आय में वृद्धि सम्बन्धी की जानकारी के सम्बन्ध में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका में दर्शाया गया है

तालिका क्र. 06: संस्थागत ऋण से कृषकों की आय में वृद्धि

क्र.	संस्थागत ऋण से कृषकों की आय में वृद्धि	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हाँ	44	88.00
2.	नहीं	6	12.00
	योग	**50**	**100**

स्त्रोंत:-सर्वेक्षण के आधार पर

उपरोक्त तालिका से विश्लेषण से ज्ञात होता है कृषकों द्वारा संस्थागत ऋण लेने से परिवार की वार्षिक आय में वृद्धि सम्बन्धी जानकारी में सर्वेक्षित परिवारों में 88.00 प्रतिशत कृषक परिवारों आय में वृद्धि होती है, 12.00 प्रतिशत कृषक परिवारों की आय में वृद्धि नहीं होती है।

अध्ययन क्षेत्र में वित्त प्राप्त करने के संस्थागत स्त्रोत सम्बन्धी जानकारी में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उन्हें तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका क्र. 07: वित्त प्राप्त करने के संस्थागत स्त्रोत सम्बन्धी जानकारी

क्र.	संस्थागत स्त्रोत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	भारतीय स्टेट बैंक	16	32.00
2.	नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक	8	16.00
3.	सहकारी बैंक	22	44.00
4.	बैंक ऑफ इण्डिया	4	8.00
	योग	**50**	**100.0**

स्त्रोंत:-सर्वेक्षण के आधार पर

उपरोक्त तालिका से विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वित्त प्राप्त करने के संस्थागत स्त्रोत सम्बन्धी जानकारी में 32.00 प्रतिशत कृषक परिवारों ने भारतीय स्टेट बैंक से वित्त प्राप्त किया, 16.00 प्रतिशत कृषक परिवारों ने नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंकसे वित्त प्राप्त किया, 44.00 प्रतिशत कृषक परिवारों ने सहकारी बैंक से वित्त प्राप्त किया, 8.00 प्रतिशत कृषक परिवारों ने बैंक ऑफ इण्डिया से वित्त प्राप्त किया।

समस्या और सुझाव:

1. जनजातीय समुदाय में कृषक आज भी कीटनाशक का छिड़काव परम्परागत साधनों से करते हैं, जिससे समय एवं धन का अधिक लगता है। अत: नवीन साधनों के उपयोग से समय ओर धन दोनों ही बचेगा ही साथ ही कीटनाषक का अच्छा उपयोग भी हो सकेगा।
2. कृषकों के आर्थिक विकास की एक बड़ी बाधा यह भी है कि वे अपनी उपज को भण्डारण की सुविधाएवं परिवहन के साधनों के अभाव में गाँव के आसपास खुले बाजार में साहूकारों या महाजनों को कम कीमत पर बेच देते हैं। उन्हें अपेक्षित लाभों से वंचित रहना पड़ता है। अत: इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम यह हो सकता है कि जब किसानों को अपनी उपज बेचने का समय आए तो प्रत्येक गाँव में सरकार अपना प्रतिनिधि भेजकर उनकी उपज को वाजिब या न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीदें।
3. जनजातीय समुदाय में कृषकों की आय उतनी नहीं होती है, उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए साहूकारों एवं महाजनों से अधिक ब्याज दर पर ऋण लेना पड़ता है। इस कारण से उनका लंबे समय तक शोषण होता रहता हैं। उनकी सहुलियत के अनुसार निम्न ब्याज दर पर सरकारी संस्थाओं द्वारा ऋण उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इससे उनकों शोषण से बचाया जा सकता है।
4. शासन को भूमि सुधार कार्यक्रम को और अधिक कठोरता से लागु किया जाना चाहिए। ताकिबहुफसलीय एवं फसल चक्रण को अनिवार्य रूप से अपनाया जाना चाहिए। जिससे कृषकों की आमदनी में वृद्धि हो सके।
5. जनजातीय समुदाय कृषकों को कृषि में लगने वाली बीमारीयों को दूर करने के लिए आवश्यक कीटनाशकों के संबंध में व्यापक जानकारी प्रदान की जानी चाहिए।

निष्कर्ष – कृषकों के विकास हेतु नीतियों का निर्माण करे तो निश्चित रूप से कृषि को बढ़ावा मिलगा और संस्थागत बैंक जनजतीय समुदायों के आर्थिक सशक्तिकरण और समग्र विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। वित्तसमावेशन की दिशा में और अधिक प्रयासों की आवश्यकता है ताकि यह जनजातीय समुदाय आत्मनिर्भर बन सके और देश की मुख्यधारा में प्रभावी रूप से भाग ले सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कुसुमाकर, अरूणा (मार्च 2015) 'आधुनिक तकनीकी का ग्रामीण कृषि विकास पर प्रभाव एक अध्ययन' रिसर्च रिवल्युशन इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ सोसियल साइन्स एण्ड मेनजमेन्ट वाल्युम 3 पृ. 57–59
2. साह, दिपक (2008) 'भारत में सहकारी क्रेडिट संस्थानों के मामले में वित्तीय क्षेत्र के सुधार'कुरूक्षेत्र, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
3. पटेल, अमृत (2004) 'सहकारी बैंकों की उपलब्धियों एवं चुनौतियाँ' योजना, नई दिल्ली।
4. त्रिवेदी आर.एन. एवं शुक्ला डी.पी. (2009), 'रिसर्च मैथ्डोलॉजी' कॉलेज बुक डिपो, 83 तिरपोलिया बाजार, जयपुर पृ 178.
5. जेगी, अजीत (1988) 'आदिवासी–अनुसूचित जाति कल्याण कार्यक्रम की समीक्षा के लिए गठित समिति का प्रतिवेदन' मध्यप्रदेश शासन सामान्य प्रकाशन विभाग, भोपाल पृ. 51–58.
6. नागर विष्णुदत्त एवं मेहता वल्लभदास, (1988) 'भारतीय आर्थिक समस्याएँ और नीतियाँ' प्रकाशक मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृ. 105–112.
7. Fabos, Julies (1988) "Land use planning :from Gable to Local Challenge ,Chapmen and Hall, 29,West 35 Street, Publication - New York and London PP. 19-23.
8. शर्मा, ब्रह्मदेव (1986) 'आदिवासी विकास एक सैद्धान्तिक विवेचन' प्रकाशक, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 74–76.

****

Potential of Solanum xanthocarpum as a Source of Natural Therapeutic Agents : A Review

Dr. Shalini Nema*

***Assistant Professor (Botany) Govt. Dr. Shyama Prasad Mukherjee Science & Commerce College, Bhopal (M.P.) INDIA**

Abstract: Solanum xanthocarpum (Indian nightshade or Kantakari) is an important herb in Ayurveda, widely used for respiratory, liver, and inflammatory problems. The plant contains many active compounds, especially steroidal alkaloids like solasodine and solasonine, along with phenolics and triterpenes. These chemicals are responsible for its antioxidant, antimicrobial, hepatoprotective, immunomodulatory, bronchodilator, antifertility, and antidiabetic effects. This review brings together updated information on its chemical composition and medicinal uses, showing its potential for new herbal medicines and useful bioactive compounds. More research can help convert traditional knowledge into effective modern therapies for human health.
Keywords: Solanum xanthocarpum, Pharmacological Significance, solasodine, Herbal formulations.

Introduction - With the increasing concerns over the adverse effects of synthetic drugs and chemical-based therapies, there has been an increasing global interest in exploring ethnomedicinal plants for the prevention and treatment of various health disorders. For centuries, tribal communities and rural populations have relied on local medicinal plants as a primary source of healthcare. Among these valuable medicinal resources, Solanum xanthocarpum Schrad. & Wendl. (Family: Solanaceae) commonly called as Indians nightshade or kantkari , occupies a prominent position due to its wide range of therapeutic applications

Solanum xanthocarpum Schrad. & Wendl (Solanaceae) is annual herb and is found throughout India at every soil, mainly grows as a wild plant rising along the dry wastelands and way sides in different parts in India. It is also referred as Kantakari or Bhatkatiya in the vernacular language. Berries are yellow or in the white green striation and they are covered by expanded calyx. Berries are edible and the many tribal people in India use them as folk medicines.

Taxonomical Classification: Solanum xanthocarpum (Schrad. & Wendl.), belonging to the family Solanaceae , is widely distributed in tropical and subtropical regions of Asia and Australia. In India, it grows abundantly in Uttar Pradesh, West Bengal, Assam, Bihar, Punjab, and Karnataka (Mysore region). Beyond India, its natural occurrence has been reported in Sri Lanka, Malaysia, Malacca, Southeast Asia, tropical Australia, and Polynesia (Fathima et al., 2019).

Classification:

i. **Kingdom:**Plantae
ii. **Division:**Magnoliophyta
iii. **Class:**Magnoliopsida
iv. **Subclass:**Asteridae
v. **Order:**Solanales
vi. **Family:**Solanaceae
vii. **Genus:**Solanum
viii. **Species:**Solanum xanthocarpum
ix. **Binomial name**: Solanum xanthocarpum Schradand Wendl.
x. **Synonym**:Solanum surattense Burm.

Botanical Description: Small, prickly, perennial, and diffusely bright green herb, Solanum xanthocarpum usually reaches a height of two to three meters. There are many strong yellow prickles on the zigzag stems (~1.3 cm). The leaves are elliptic to oval (2.5–5.7 cm), have yellow spines along the midrib, and are covered in stellate hairs. The calyx, which is roughly 1.3 cm long, is heavily coated in tiny, delicate hairs. At the base, it takes the shape of a short tubular structure that is rounded and globular. The tiny, violet flowers have oblong anthers (~8 mm) and linear, hairy lobes. Bound by the inflated calyx, the fruits are globular berries (1.3–2 cm) that are green with white lines while young and turn yellow during ripening. The seeds are glabrous, smooth, yellowish, and 2.5 mm in diameter.

Solanum xanthocarpum has been used in Ayurveda for centuries,three varieties of this plant are recognized, distinguished by their violet, yellow, and white flowers (Rita & Animesh, 2011).In traditional medicine, it has been used for many health problems. This review brings together the traditional knowledge of the plant's healing properties and

highlights the need for further research to develop effective medicines.

Figure 1 (a) & (b): Solanum xanthocarpumSchrad and Wendl. (Kantkari)

Phytochemical Constituents: The main alkaloid found in *Solanum xanthocarpum* is **solasodine**, which is present in almost every part of the plant, including its fruits, leaves, and seeds (Arora & Ansari, 2019). Besides this, the plant contains several other important bioactive compounds. These include steroidal alkaloids such as solanacarpine, solanacarpidine, solasonine, and solamargine; phenolic compounds like caffeic acid, aesculetin, and aesculin; steroidal compounds such as carpesterol, diosgenin, campesterol, and daucosterol; and triterpenes like cycloartenol (Paul & Bhutani, 2008). These natural compounds show medicinal effects such as antioxidant, anti-inflammatory, antimicrobial, liver-protective, larvicidal, and blood sugar–lowering activities (Tupkari et al., 1972; Sato & Latham, 1953).

Ethanobotanical Relevance : Different communities across India use Solanum xanthocarpum in unique ways as part of their traditional practices. In Odisha, the Kondh tribes prepare a fruit decoction to help manage diabetes (Imran, 2022). In Manipur, the fruits are commonly used for throat infections and swelling. The Irula tribes of Tamil Nadu cook the unripe fruits as a vegetable, for meeting purpose such as both food and medicine (Revathi &Parimelazhagan, 2010).In South India, root poultices are applied for piles, while seeds mixed with mustard oil are burned, and the smoke is inhaled to relieve toothache, gum swelling, and other dental problems. The Mukunda tribes of Rajasthan apply root paste to treat hernia (Kumar, 2012). In Kerala's Wayanad region, the Kattunaikka, Paniya, and Kuruma tribes eat the fruits and seeds regularly as food and also use them for treating common ailments (Narayanan et al., 2011). Similarly, in Arunachal Pradesh, local tribes rely on the plant to manage digestive disorders.Owing to its many bioactive chemicals and rich ethnomedicinal value, Solanum xanthocarpumshows its potential for new herbal medicines .

Results and Discussion: The pharmacological significance of Solanum xanthocarpum has been supported by studies on its different plant parts, each expressing unique bioactive compounds and medicinal effects.

1. **Leaves:** Phytochemical studies confirmed the presence of solasodine, flavonoids (rutin, quercetin), and phenolic compounds in the leaves, which help the plant defend against harmful microbes by damaging their cell walls, thereby acting as antimicrobial agents (Pardhi et al., 2010; Kannabiran, 2009). These results validate their traditional use in treating gonorrhea and relieving pain through topical applications (Ghani, 1998). Recent studies also report that the leaves possess antioxidant, antimicrobial, anti-inflammatory, and blood sugar–reducing activities (Jain et al., 2025) supporting the role of leaves in managing infections and metabolic disorders.
2. **Fruit:** Researchers studies shows that fruit extract mainly contain bioactive compounds such as solasodine and other glycoalkaloids, are mainly responsible for their medicinal properties suchas antifertility effects due to its ability to lower testosterone and affects sperm production (Dixit & Gupta, 1982),antiallergic and antimicrobial activity against bacterial and fungal pathogens (Soni et al., 2012; Rahman et al., 2013) , hepatoprotective potential (Mohan et al., 2014),antifertility effect(Dixit,1980)and also act asanti-inflammatory, cytotoxic and antioxidant because of their ability to scavenge free radicals and prevent oxidative stress(Kumar & Pandey, 2014).Experimental studies further demonstrate that the fruits can protect the kidneys, reduce the risk of urinary stone formation (Arora & Ansari, 2019), and may also protect cartilage in arthritis, suggesting benefits for joint health (Shivnath et al., 2021).These results provide a scientific basis for the traditional use of fruits among tribal communities.
3. **Seeds:** Seeds contain alkaloids and glycosides that act as natural expectorants and therefore signifies their traditional use in relieving chest congestion and respiratory infections. Seed extracts have strong antioxidant properties, which reduce oxidative stress and may help protect reproductive health while preventing diseases linked to oxidative damage (Gupta et al., 2011). These findings highlight their relevance in both traditional and modern therapeutics.
4. **Roots:** Roots of S. xanthocarpum contain caffeic acid, oleanolic acid, esculetin, and scopoletin, belonging to phenolic, coumarin, and triterpenoid groups (Suthar &Banavaliker, 2010). These compounds contribute to important biological activities such as reducing oxidative stress, controlling inflammationand tissue-protective activities which signifies their traditional use in managing coughs, asthma, chest pain, and catarrhal fever (Sharma & Singh, 2012).

Clinical Relevance in Ayurvedic preparation : Several important herbal preparations in Ayurveda include Solanum xanthocarpum as a key ingredient. Dashmularishta, a traditional tonic, is widely prescribed to support the health of nursing women (Revathi &Parimelazhagan, 2010). KantkariGhrita, described in the Charaka Samhita, is especially effective for respiratory problems such as cough

and asthma, while Kanakasava is another classical formulation recommended for similar conditions. In modern practice, the polyherbal formulation Jigrine, which contains aqueous extracts of 14 medicinal plants including S. xanthocarpum, is used clinically for treating liver ailments (Chandana et al., 2011). These formulations highlight the extensive use of Solanum xanthocarpum in Ayurvedic medicine, underscoring its importance in treating a variety of illnesses.

Conclusion: In conclusion, Solanum xanthocarpum is a valuable medicinal plant with a wide range of pharmacologically active compounds contributing to its therapeutic effects. This review highlights its ethnomedicinal importance, documenting its traditional and modern uses in treating respiratory disorders, infections, digestive issues, and as antioxidant, anticancer, anti-HIV, anti-inflammatory, anti-allergic, and antifungal agent. The study states that the further research on Isolation and characterization of specific bioactive compounds moieties having potential biological activities may provide an effective therapeutic agent in future.

References :-

1. Arora, P., & Ansari, S. H. (2019). Phyto-pharmacological review of Solanum xanthocarpum Schrad. and Wendl. International Journal of Pharmacognosy and Phytochemical Research, 11(4), 244–249.
2. Chandana, V. R., Gupta, R. K., & Hussain, T. (2011). Hepatoprotective effects of Solanum xanthocarpum fruit extract against CCl_4 -induced acute liver toxicity in experimental animals. Asian Pacific Journal of Tropical Biomedicine, 4(12), 964–968.
3. Dixit, V. P. (1980). Antifertility effects of solasodine obtained from Solanum xanthocarpum berries in male rats and dogs. Department of Zoology, University of Rajasthan, Jaipur, India.
4. Dixit, V. P., & Gupta, R. S. (1982). Antispermatogenic/antiandrogenic properties of solasodine ($C_{27}H_{43}=O_2N$) obtained from Solanum xanthocarpum berries on the male genital tract of dog (Canis familiaris): A histophysiological approach. International Journal of Andrology, 5, 295–307.
5. Fathima, T., Joghee, S., & Akaash, M. (2019). Solanum xanthocarpum: A review. International Journal of Pharmacognosy & Chinese Medicine, 3, 177.
6. Ghani A (1998). Medicinal plants of Bangladesh-chemical constituents and uses. Bangladesh: Asiatic Society of Bangladesh 290.
7. Gupta, R. K., Hussain, T., Panigrahi, G., Das, A., Singh, G. N., Sweety, K., … & [remaining authors]. (2011). Hepatoprotective effect of Solanum xanthocarpum fruit extract against CCl_4 -induced acute liver toxicity in experimental animals. Asian Pacific Journal of Tropical Medicine, 4(12), 964–968.
8. Imran, M., Majid, H., Ali, M., & Qadir, A. (2022). Phytochemical screening of Solanum xanthocarpum and its xanthine oxidase inhibitory activity. Biological Sciences, 2(3).
9. Kannabiran, K. (2009). Evaluation of antimicrobial activity of saponin isolated from Solanum xanthocarpum and Centella asiatica. International Journal of Natural Engineering Sciences.
10. Kumar, S., & Pandey, A. K. (2014). Medicinal attributes of Solanum xanthocarpum fruit consumed by several tribal communities as food: An in vitro antioxidant, anticancer and anti-HIV perspective. BMC Complementary and Alternative Medicine, 14, 112.
11. Kumar, S., Sharma, U. K., Sharma, A. K., & Pandey, A. K. (2012). Protective efficacy of Solanum xanthocarpum root extracts against free radical damage: Phytochemical analysis and antioxidant effect. Cellular and Molecular Biology, 58(1), 174–181.
12. Mohan, V. R., Rajesh, A., & Tresina, P. S. (2014). Hepatoprotective effect of Solanum xanthocarpum fruit extract against carbon tetrachloride-induced liver damage in rats. Asian Pacific Journal of Tropical Biomedicine, 4(5), 341–345.
13. Narayanan, M. K. R., Anilkumar, N., Balakrishnan, V., Sivadasan, M., Alfarhan, H. A., & Alatar, A. A. (2011). Wild edible plants used by the Kattunaikka, Paniya and Kuruma tribes of Wayanad District, Kerala, India. Journal of Medicinal Plants Research, 5(22), 3520–3529.
14. Pardhi, P., Jain, A. P., Ganeshpurkar, A., & Rai, G. (2010). Anti-microbial, anti-oxidant and anthelmintic activity of crude extract of Solanum xanthocarpum. Pharmacognosy Journal, 2(11), 400–404.
15. Paul, A. T., Vir, S., & Bhutani, K. K. (2008). Liquid chromatography-mass spectrometry-based quantification of steroidal glycoalkaloids from Solanum xanthocarpum and effect of different extraction methods on their content. Journal of Chromatography A, 1208(1–2), 141–146.
16. Rahman, M. A., Akhtar, J., & Ali, M. (2013). Phytochemical and pharmacological investigation of Solanum xanthocarpum. Journal of Pharmacy Research, 6(3), 343–348.
17. Revathi, P., & Parimelazhagan, T. (2010). Traditional knowledge on medicinal plants used by the Irula tribe of Hasanur hills, Erode District, Tamil Nadu, India. Ethnobotanical Leaflets, 14, 136–160.
18. Rita, P., & Animesh, D. K. (2011). An updated overview on Solanum xanthocarpum Schrad and Wendl. International Journal of Research in Ayurveda and Pharmacy, 2, 730–735.
19. Sato, Yoshio & Latham, H. George, Jr. (1953). The Isolation of Diosgenin from Solanum xanthocarpum. Journal of the American Chemical Society, 75(23), 6067.
20. Sharma, A., & Singh, R. (2012). Medicinal attributes of Solanum xanthocarpum roots: A review. Journal of Natural Remedies, 12(2), 132–138.

21. Shivnath, N., Siddiqui, S., Rawat, V., Khan, M. S., & Arshad, Md. (2021). Solanum xanthocarpum fruit extract promotes chondrocyte proliferation in vitro and protects cartilage damage in collagenase-induced osteoarthritic rats. Journal of Ethnopharmacology, 274, 114028.
22. Soni, H., Nayak, G., Patel, S. S., & Mishra, A. (2012). Evaluation of antibacterial potential of Solanum xanthocarpum fruit. International Journal of Pharmaceutical Sciences and Research, 3(12), 4655–4660.
23. Suthar, R., & Banavaliker, M. M. (2010). Pharmacognostical and phytochemical evaluation of Solanum xanthocarpum roots. International Journal of Pharmaceutical Sciences Review and Research, 5(1), 146–150.
24. Tupkari, S. V., Saoji, A. N., & Deshmukh, V. K. (1972). Phytochemical study of Solanum xanthocarpum. Planta Medica, 22(6), 184–187.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Voices of Resistance: Exploring Ecofeminist Concerns in Sara Joseph's Works Through Translation

Shema S Palathar* Dr. Anu Saxena**

*** Research Scholar, Ravindranaath Taigore University, Raisen (M.P.) INDIA**
**** Professor, Ravindranaath Taigore University, Raisen (M.P.) INDIA**

Abstract: Ecofeminism is a philosophical and literary approach that interconnects the exploitation of women and the environment, asserting that the domination of nature and the oppression of women stem from the same patriarchal roots. This research paper explores the ecofeminist dimensions in the novels of Sara Joseph, a prominent Malayalam writer and activist, whose works resonate with themes of ecological degradation, women's suffering, and resistance against oppressive structures. The study pays special attention to her translated novels, which act as cultural bridges, making her narratives accessible to a wider readership. Through a detailed analysis of her major works, including *The Scent of the Other Side*, *Gift in Green*, *The Vigil*, and *Budhini*, the paper examines how Joseph portrays the intricate relationship between women and nature, representing both as victims of systemic exploitation yet as sources of resilience and transformation. The research further highlights the challenges and significance of translation in preserving ecofeminist sensibilities. This paper ultimately argues that Joseph's narratives are powerful voices of resistance that challenge environmental destruction and gendered oppression, offering an ethical vision for harmony and sustainability.

Introduction - The interconnectedness of women and nature has been a recurring theme in literature, especially within the framework of ecofeminism. Ecofeminism emerged in the late twentieth century as a critical discourse that links the marginalization of women with the exploitation of the natural environment. Both women and nature have historically been viewed as passive resources to be controlled and dominated, leading to ecological crises and gender inequities. In literary studies, ecofeminism provides a lens through which narratives of environmental degradation and women's struggles can be understood in a holistic manner. Sara Joseph, one of the most significant contemporary voices in Indian literature, is renowned for her socially engaged writings that confront issues of patriarchy, caste oppression, and ecological imbalance. Her novels, deeply rooted in the cultural and environmental realities of Kerala, reflect an acute sensitivity to the suffering of marginalized communities and the natural world.

This research paper focuses on Joseph's translated novels, which allow non-Malayalam readers to access her powerful narratives. Translation plays a vital role in globalizing regional voices and bringing local struggles to international attention. By analyzing works such as *The Scent of the Other Side*, *Gift in Green*, *The Vigil*, and *Budhini*, the paper examines how Joseph's fiction embodies ecofeminist concerns and becomes a voice of resistance against intertwined systems of domination. The study also explores how translation mediates these themes, ensuring their resonance beyond linguistic boundaries.

Ecofeminism: Theoretical Framework

Ecofeminism as a theoretical framework emerged in the 1970s and gained momentum in the 1980s, largely influenced by scholars and activists such as Françoise d'Eaubonne, Vandana Shiva, and Carolyn Merchant. At its core, ecofeminism posits that the logic of domination underlying patriarchy is responsible for both gender oppression and environmental destruction. This framework critiques the dualistic worldview that separates culture from nature, mind from body, and male from female, privileging the former over the latter.

Ecofeminists argue that just as women have been historically relegated to a subordinate status, nature has been commodified and exploited. The metaphorical association of women with the earth—seen in expressions like "Mother Nature"—has often romanticized their relationship while justifying their exploitation. In literature, ecofeminism examines how narratives reflect or challenge these power structures, focusing on themes such as ecological justice, sustainability, and the reclaiming of feminine and natural agency.

Indian ecofeminism has a distinct dimension, deeply intertwined with local traditions, indigenous knowledge, and socio-political movements. Activists like Vandana Shiva have highlighted how rural women, particularly in agrarian communities, bear the brunt of environmental degradation caused by industrialization and globalization. This

perspective resonates strongly with Sara Joseph's works, which depict women and nature as intertwined entities resisting patriarchal and capitalist domination. Her novels embody both the spiritual and material aspects of ecofeminism, offering a critique of modernity's destructive tendencies.

Sara Joseph and Her Literary Contributions

Sara Joseph is a prolific writer whose contributions to Malayalam literature span novels, short stories, and essays. Known for her bold feminist voice, Joseph addresses issues such as gender inequality, religious orthodoxy, and environmental crises. Her activism, particularly in movements related to women's rights and environmental justice, informs her literary vision.

Joseph's narratives are deeply rooted in Kerala's socio-cultural landscape, where lush natural environments coexist with rapid industrial development and socio-political conflicts. Her portrayal of women is nuanced, depicting them not merely as victims but as agents of resistance and transformation. By intertwining ecological imagery with feminist themes, Joseph creates narratives that are both aesthetically rich and politically engaged.

The translation of her works into English and other languages has significantly expanded their reach. Translations like *Gift in Green* (translated by ValsonThampu) and *Budhini* have introduced Joseph's ecofeminist sensibilities to a global readership, enabling cross-cultural dialogues about environmental justice and gender equality. These translations are not merely linguistic transfers but acts of cultural mediation that preserve the spirit of the original while adapting it to new contexts.

Analysis of Selected Translated Novels

The Scent of the Other Side: This novel explores themes of identity, memory, and ecological belonging. Joseph uses nature as a metaphor for women's inner lives, depicting landscapes that reflect emotional and social turmoil. The novel portrays the exploitation of natural resources alongside the exploitation of marginalized women, suggesting a shared history of violence. Through poetic descriptions of rivers, forests, and rural life, Joseph highlights the fragility of ecological and human relationships. The translated version retains the lyrical quality of the original Malayalam text, allowing readers to experience the sensory richness of Kerala's environment.

Gift in Green: Perhaps Joseph's most explicitly ecofeminist work, *Gift in Green* revolves around Aathi, an idyllic island community threatened by capitalist development. The novel depicts the harmonious coexistence of humans and nature, where water bodies are revered and protected. However, this balance is disrupted by external forces seeking to commercialize the land. The narrative parallels the degradation of nature with the subjugation of women, as patriarchal forces impose control over both. Characters like Ponmani embody resistance, fighting to preserve their ecological heritage. The translation captures the spiritual dimensions of the original text, emphasizing the sacredness of the natural world and the urgency of ecological activism.

The Vigil: In *The Vigil*, Joseph examines the psychological dimensions of ecofeminism. The novel portrays women grappling with personal trauma amidst environmental crises. The story suggests that healing requires a reconnection with the natural world, which serves as a source of strength and renewal. The translated version effectively conveys the symbolic associations between women's bodies and landscapes, emphasizing themes of resilience and transformation.

Budhini: *Budhini* is based on the true story of a tribal woman exploited by powerful political forces during the inauguration of a dam project. The novel critiques development narratives that prioritize industrial progress over indigenous rights and ecological sustainability. Budhini's personal suffering mirrors the destruction of her community's environment, illustrating the intertwined oppression of women and nature. The translation brings this poignant story to a wider audience, highlighting the global relevance of local struggles.

The Role of Translation in Conveying Ecofeminist Themes: Translation plays a crucial role in amplifying ecofeminist voices, especially those emerging from regional literatures. In the case of Sara Joseph, translation enables her narratives to transcend linguistic boundaries and engage with global discourses on environmental justice and gender equality. However, translation also poses challenges, particularly in preserving the cultural and ecological specificities of the original texts.

For instance, ecological metaphors rooted in Kerala's landscape may lose some resonance when translated into English. Similarly, idiomatic expressions reflecting local traditions may require adaptation to maintain readability. Despite these challenges, successful translations of Joseph's novels have managed to retain their poetic and political force. Translators act as mediators, bridging gaps between cultures while ensuring that the ecofeminist essence of the narratives remains intact.

Through translation, Joseph's works contribute to a global ecofeminist canon, fostering cross-cultural solidarity among women and environmental activists. Her stories, though rooted in specific local contexts, speak to universal concerns about sustainability, justice, and the interconnectedness of all life.

Conclusion: Sara Joseph's translated novels offer profound insights into the intersections of gender and ecology. Through her powerful storytelling, she exposes the systemic violence inflicted on both women and the environment, while also celebrating their resilience and transformative potential. Works like *The Scent of the Other Side*, *Gift in Green*, *The Vigil*, and *Budhini* demonstrate how literature can serve as a form of resistance, challenging dominant narratives of progress and development.

The translations of these novels play a vital role in

disseminating ecofeminist ideas, allowing readers across the world to engage with the struggles and aspirations of marginalized communities. By foregrounding the voices of women and nature, Joseph's fiction calls for an ethical reimagining of human relationships with the environment. Her works remind us that the liberation of women and the protection of the earth are inseparable goals, essential for creating a sustainable and just future.

In an era marked by ecological crises and social inequalities, Joseph's ecofeminist vision offers both a critique of the present and a hope for renewal. Her novels, as translated texts, become bridges connecting diverse audiences, inspiring collective action towards environmental and gender justice.

References:-

1. Joseph, S. (2009). *The Scent of the Other Side* (Trans. ValsonThampu). New Delhi: HarperCollins.
2. Joseph, S. (2010). *Gift in Green* (Trans. Valson Thampu). New Delhi: HarperCollins.
3. Joseph, S. (2014). *The Vigil* (Trans. J. Devika). New Delhi: Oxford University Press.
4. Joseph, S. (2019). *Budhini* (Trans. Sangeetha Sreenivasan). New Delhi: Harper Perennial.
5. Merchant, C. (1996).*Earthcare: Women and the Environment*. Routledge.
6. Plumwood, V. (2002).*Environmental Culture: The Ecological Crisis of Reason*. Routledge
7. Shiva, V. (1993).*Staying Alive: Women, Ecology and Development*.Zed Books.
8. Warren, K. J. (2000). *Ecofeminist Philosophy: A Western Perspective on What It Is and Why It Matters*. Rowman& Littlefield.
9. Devika, J. (2010). *En-gendering Individuals: The Language of Re-forming in Early Twentieth Century Keralam*. Orient BlackSwan.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Reflections of Modern Youth: A Study of the New Generation Indian in Chetan Bhagat's Novels

Jibi Joseph* Dr. Anu Saxena**

*Research Scholar, Ravindranaath Taigore University, Raisen (M.P.) INDIA
** Professor, Ravindranaath Taigore University, Raisen (M.P.) INDIA

Abstract: Chetan Bhagat has emerged as one of the most widely read contemporary Indian authors whose novels capture the pulse of modern India. His works focus on the aspirations, struggles, and dilemmas of the new generation, reflecting the socio-cultural changes in a rapidly globalizing nation. Bhagat's novels present young Indians navigating the complexities of education, careers, love, marriage, and societal expectations. Through popular works such as *Five Point Someone*, *One Night @ the Call Center*, *2 States*, *The 3 Mistakes of My Life*, and *Revolution 2020*, Bhagat explores the psychological and cultural transformation of Indian youth caught between tradition and modernity. This paper examines how Bhagat portrays the new generation Indian, analyzing their hopes, conflicts, and evolving identities. It also discusses his role in democratizing Indian English literature by appealing to a mass audience and giving voice to contemporary urban youth. The study concludes that Bhagat's novels are cultural documents that reflect the challenges and dreams of modern India's young population.

Introduction - The twenty-first century has witnessed dramatic changes in Indian society due to globalization, liberalization of the economy, and rapid technological advancement. These changes have significantly influenced the younger generation, creating a cultural shift in their values, aspirations, and identities. Literature, as a mirror of society, has always captured these transformations. Among contemporary Indian writers, Chetan Bhagat stands out as a popular voice articulating the dreams and dilemmas of modern youth. His novels are widely read across urban and semi-urban India, making him a representative figure of popular Indian English fiction.

Bhagat's stories often revolve around middle-class youth striving for success in education, careers, and relationships. They grapple with issues like academic pressure, parental expectations, inter-caste marriages, and workplace challenges while navigating a rapidly modernizing society. His language is simple, conversational, and accessible, making his novels relatable to young readers who see their own lives reflected in his characters.

This paper seeks to analyze Bhagat's portrayal of the "new generation Indian"—a term referring to young people living in a globalized India, influenced by modern values yet rooted in traditional culture. By examining selected novels, this study will explore themes such as ambition, love, identity, and rebellion. It will also evaluate Bhagat's contribution to Indian English literature as a chronicler of contemporary youth culture.

Chetan Bhagat: The Voice of Modern Indian Youth: Chetan Bhagat was born in 1974 in New Delhi and educated at prestigious institutions like the Indian Institute of Technology (IIT) and the Indian Institute of Management (IIM). His own experiences as a middle-class youth navigating the competitive academic system and corporate world profoundly shaped his writing. Bhagat's debut novel, *Five Point Someone* (2004), became an instant bestseller, establishing him as a popular writer with mass appeal.

Bhagat's novels are characterized by their focus on relatable characters and contemporary issues. Unlike earlier Indian English writers who often targeted elite, cosmopolitan readers, Bhagat writes for the middle-class youth of India, many of whom are first-generation English readers. His works are accessible and engaging, often blending humor with social commentary.

T hematically, Bhagat's novels explore the tension between tradition and modernity. His characters embody the contradictions of young Indians who desire personal freedom and success but are constrained by family and societal expectations. Through his narratives, Bhagat gives voice to a generation negotiating its place in a rapidly changing nation.

The Concept of the New Generation Indian: The term "new generation Indian" refers to young people shaped by the forces of globalization, technological advancement, and economic liberalization. These individuals are often urban, educated, and connected to global cultures through media and the internet. They value individualism, ambition, and modern lifestyles but are also deeply influenced by

traditional cultural values such as respect for family and community.

This generation faces unique challenges: balancing personal dreams with collective responsibilities, pursuing unconventional careers, and navigating the complexities of love and marriage in a conservative society. Chetan Bhagat's novels vividly depict these struggles, making them cultural texts that document the evolving identity of modern Indian youth.

Analysis of Selected Novels

1. **Five Point Someone (2004): Academic Pressure and Friendship:** Bhagat's debut novel, *Five Point Someone*, is set in the competitive world of the Indian Institute of Technology. It follows three friends—Hari, Ryan, and Alok—who struggle with academic pressure and societal expectations. The novel portrays the rigid education system that prioritizes grades over creativity, reflecting the anxieties of middle-class students burdened by parental ambitions.

The protagonists represent the new generation's desire for freedom and individuality. Ryan's rebellious nature contrasts with Alok's traditional values, while Hari navigates a romantic relationship with his professor's daughter. Through their experiences, Bhagat critiques the obsession with academic success and highlights the importance of friendship and self-discovery.

The novel resonates with readers because it mirrors the real-life pressures faced by India's youth, particularly those pursuing engineering and professional degrees. It captures the disillusionment of a generation seeking meaning beyond standardized achievements.

2. **One Night @ the Call Center (2005): Globalization and Workplace Culture:** This novel explores the lives of six call center employees working in Gurgaon, a hub of India's outsourcing industry. The characters deal with issues such as job insecurity, broken relationships, and the dehumanizing effects of corporate work.

The call center setting symbolizes globalization's impact on Indian youth. These young workers interact with foreign customers, adopt Western names and accents, and work night shifts to serve global markets. While globalization provides economic opportunities, it also creates cultural alienation and emotional strain.

Bhagat uses humor and satire to depict the absurdities of corporate life, while also offering a spiritual dimension through the mysterious phone call from "God" that inspires the characters to take control of their lives. The novel reflects the aspirations and anxieties of a generation navigating global capitalism.

3. **The 3 Mistakes of My Life (2008): Dreams, Politics, and Cricket:** Set in Ahmedabad, this novel follows three friends—Govind, Ishaan, and Omi—as they pursue their dreams of business success while grappling with religious tensions and political unrest. The narrative intertwines themes of entrepreneurship, friendship, and communal harmony.

Cricket, a central motif in the novel, symbolizes the passion and unity of Indian youth. However, the story also exposes the destructive impact of communal violence, particularly during the 2002 Gujarat riots. Govind's "three mistakes" represent the challenges of ambition and the consequences of personal and societal conflicts.

This novel highlights how the new generation Indian must navigate not only personal aspirations but also broader socio-political realities. Bhagat portrays youth as agents of change who can challenge divisive forces through resilience and unity.

4. **2 States (2009): Love and Cultural Identity:** *2 States* is a semi-autobiographical novel based on Bhagat's own experience of marrying across cultural boundaries. The story follows Krish and Ananya, who belong to Punjabi and Tamil families respectively. Their love story becomes a humorous yet insightful exploration of India's cultural diversity and the challenges of inter-caste and inter-state marriages.

The novel reflects the new generation's desire for individual choice in matters of love and marriage. Krish and Ananya represent modern Indians who value romantic love but must negotiate with their families' traditional expectations. Through witty dialogue and relatable situations, Bhagat addresses themes of identity, compromise, and generational conflict.

2 States resonates with young readers because it captures the everyday realities of middle-class life while challenging rigid social boundaries. It suggests that love can bridge cultural divides, reflecting the optimistic spirit of India's youth.

5. **Revolution 2020 (2011): Corruption and Idealism:** Set in Varanasi, this novel explores themes of corruption, ambition, and love. The three main characters—Gopal, Raghav, and Aarti—embody different aspects of youth identity. Gopal's pursuit of wealth leads him into corrupt dealings, while Raghav's idealism drives him to fight for social change as a journalist. Aarti, caught between the two, represents the emotional struggles of young women navigating personal and societal expectations.

The novel critiques the corruption that pervades India's education and political systems. It reflects the frustration of a generation disillusioned with authority yet yearning for transformation. Bhagat suggests that revolution is not merely political but also personal, requiring individuals to challenge their own compromises and limitations.

Themes in Bhagat's Representation of Modern Youth

1. **Ambition and Career Pressure:** Bhagat's characters often grapple with the intense pressure to succeed academically and professionally. This reflects the middle-class obsession with upward mobility in a competitive economy. Whether it is the IIT students in *Five Point Someone* or the call center employees in *One Night @ the Call Center*, Bhagat highlights the mental and emotional

toll of career-oriented lifestyles.

2. Love and Relationships: Romantic love plays a central role in Bhagat's novels, representing the new generation's quest for personal happiness. However, love is often complicated by societal constraints such as caste, religion, and parental expectations. In *2 States*, for example, Krish and Ananya's relationship becomes a battleground between tradition and modernity.

3. Identity and Cultural Conflict: Bhagat's novels explore the complex identities of young Indians who are simultaneously global citizens and bearers of traditional values. His characters navigate cross-cultural relationships, language barriers, and generational divides. This theme is particularly evident in *2 States* and *The 3 Mistakes of My Life*.

4. Rebellion and Resistance: Many of Bhagat's protagonists rebel against authority, whether it is the rigid education system, corrupt politicians, or conservative families. This reflects the growing assertiveness of India's youth, who demand freedom and reform. However, Bhagat also portrays the consequences of rebellion, emphasizing the need for balance and responsibility.

Bhagat's Contribution to Indian English Literature

Chetan Bhagat has been both celebrated and criticized within literary circles. Critics often dismiss his novels as simplistic or "commercial," but his popularity cannot be denied. Bhagat has democratized Indian English literature by reaching readers who were previously excluded from elite literary spaces. His use of simple, colloquial English has made literature accessible to millions of young Indians. Moreover, Bhagat's novels serve as cultural documents, capturing the zeitgeist of contemporary India. They reflect the hopes, fears, and contradictions of a generation living through rapid social change. His focus on relatable characters and everyday struggles has created a new genre of popular fiction that bridges the gap between literature and mass culture.

Conclusion: Chetan Bhagat's novels provide a vivid portrait of the new generation Indian, capturing their aspirations, conflicts, and evolving identities. Through works like *Five Point Someone*, *One Night @ the Call Center*, *The 3 Mistakes of My Life*, *2 States*, and *Revolution 2020*, Bhagat explores themes of ambition, love, identity, and rebellion. His characters navigate a world shaped by globalization, technological change, and enduring traditions.

Bhagat's accessible language and relatable narratives have made him a literary phenomenon, bringing Indian English fiction to a mass audience. While his works may not conform to traditional literary standards, they play a vital role in documenting the cultural shifts of contemporary India. The new generation Indian portrayed in Bhagat's novels is ambitious yet conflicted, modern yet rooted in tradition. Their struggles reflect the broader challenges of a nation in transition. By giving voice to these experiences, Bhagat has established himself as a chronicler of modern Indian youth and a catalyst for conversations about social change.

References :-

1. Bhagat, C. (2004). *Five Point Someone*. Rupa Publications.
2. Bhagat, C. (2005). *One Night @ the Call Center*. Rupa Publications.
3. Bhagat, C. (2008). *The 3 Mistakes of My Life*. Rupa Publications.
4. Bhagat, C. (2009). *2 States: The Story of My Marriage*. Rupa Publications.
5. Bhagat, C. (2011). *Revolution 2020*. Rupa Publications.
6. Nayar, P. K. (2009). *Contemporary Literary and Cultural Theory: From Structuralism to Ecocriticism*. Pearson Education.
7. Mukherjee, M. (2000).*The Perishable Empire: Essays on Indian Writing in English*. Oxford University Press.
8. Prasad, A. (2016). "Globalization and Indian Youth Culture."*Indian Journal of Cultural Studies*, 12(2), 45–56.
9. Rao, K. (2015). "Chetan Bhagat and the Rise of Popular Indian English Fiction."*Literary Quest*, 3(1), 101–109.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बौद्ध धर्म से हिन्दू धर्म को बचाए रखने में ब्राह्मणों की भूमिका

डॉ. श्री कान्त मिश्र*

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शास. महा. मार्तण्ड महाविद्यालय, कोतमा (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना - अभी धर्मों पर पुरातन ब्राह्मण धर्म की स्पष्ट छाप है। दोनों ही धर्मों ने थोड़े-बहुत परिवर्तनों के साथ ब्राह्मण-धर्म के अनेक सिद्धांतों एवं कार्य-प्रणाली को ग्रहण किया है। ब्राह्मण-व्यवस्था के अन्तर्गत भी धर्म की नैतिक व्याख्या की गई थी। जब हम महाभारतकार का यह कथन सुनते हैं कि इन्द्रियों और मन का दमन ही मोक्ष है[1] तो ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे स्वयं महात्मा बुद्ध अथवा महावीर स्वामी ही उपदेश दे रहे हों। 'सत्यं वद, धर्मं चर स्वाध्यायान्मा प्रमद: धर्मात्र प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्, भूत्यै न प्रमदितव्यम्।' इत्यादि तैतिरीय उपनिषद् के शब्द क्या जैन एवं बौद्ध धर्मों के आचार-तत्व के समान ही नहीं हैं? इसमें कोई सन्देह नहीं कि आचारवादी जैन और बौद्ध धर्मावलम्बियों ने इन आचार-तत्वों को अपने जीवन में व्यवहारिक रूप से अधिक प्रयुक्त किया, कम-से-कम कुछ काल के लिए अवश्य ही।

यह कहा जाता है कि बौद्ध धर्म वेद-निन्दक, यज्ञविरोधी और ब्राह्मण विरोधी है। परन्तु वेदों में जो कुछ भी सत्यसम्मत था वह अवश्य उनके लिए ग्राह्य था। उन्होंने स्वयं अपने को 'वेदगू' (वेदज्ञ)[2] कहा था। यही नहीं, ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् उन्होंने कहा कि यमैं ही ब्राह्मण हूँ[3] और इस प्रकार 'ब्रह्मा जानाति इति ब्राह्मण:' परिभाषा सार्थक की। वास्तव में उन्हें ब्राह्मणों की जाति-व्यवस्था मान्य थी, परन्तु जन्म के आधार पर नहीं वरन् कर्म के आधार पर। वे यज्ञ के विरोधी न थे। उन्होंने स्वयं पुरातन ब्राह्मणों से विशुद्ध यज्ञों की प्रशंसा की थी। वे तो एकमात्र हिंसात्मक एवं कर्मकाण्डीय यज्ञों के ही विरोधी थे। ब्राह्मण धर्म के प्रति बिल्कुल यही दृष्टिकोण महावीर स्वामी का भी था। 'पर निन्दा पापकारिणी होती है'[4]-ऐसी घोषणा करने वाले महावीर स्वामी वेद अथवा ब्राह्मणों की निन्दा नहीं कर सकते थे। 'कर्म से ही कोई ब्राह्मण होता है और कर्म से ही क्षत्रिय। कर्म से ही मनुष्य वैश्य होता है और कर्म से ही शूद्र'।[5] जैन धर्म के इस उद्घोष में ब्राह्मणों की जाति-व्यवस्था के ही आमूल उच्छेद का प्रयास है। जैन धर्म की दृष्टि में यजो लोलुप नहीं है, जो पेट के लिए संग्रह नहीं करता, जो घर-बार रहित है, जो अकिंचन हैं और जो गृहस्थों से परिचय नहीं करता, उसे ब्राह्मण कहते हैं।[6] इस परिभाषा के अन्तर्गत नि:स्पृह ब्राह्मण को जो मान्यता दी गई है वह स्पष्ट है। 'तप अग्नि है, जीव ज्योति-स्थान है। मन, वचन और काया का योग कुंड है, शरीर कारिषांग है, कर्म ईंधन है, संयम योग शान्तिपाठ है। ऐसे ही होम से मैं हवन करता हूँ। ऋषियों ने ऐसे ही होम को प्रशस्त कहा है'।[7] 'धर्म मेरा जलाशय है, ब्रह्मचर्य मेरा शान्ति-तीर्थ हैं, आत्मा की प्रसन्नता ही मेरा निर्मल घाट है, जहाँ स्थान की आत्मा विशुद्ध होती है।'[8] जैन धर्म के ऐसे उद्गार औपनिषक मनीषियों के उद्गरों से मेल खाते हैं। इनमें यज्ञ, होम, पवित्र स्नान आदि का खण्डन नहीं वरन् विशुद्ध संवर्धन निहित है। इस प्रकार ब्राह्मण धर्म में प्रख्यात यज्ञादि को ग्रहण कर बौद्ध और जैन दोनों धर्मो ने उन्हें नैतिक आधार पर प्रतिष्ठित किया। इनका सूत्र वैदिक ही है। इसी प्रकार ब्रह्मचर्य की महत्ता भी ब्राह्मण धर्म में प्रतिष्ठित थी। कठोपनिषद् का उल्लेख है कि ब्रह्म-प्राप्ति की कामना करने वाले ब्रह्मचर्य का अनुसरण करते हैं।[9] नवीन धर्मों ने ब्राह्मण-धर्म द्वारा प्रतिपादित तप और ब्रह्मचर्य को ही अपनी-अपनी व्याख्या में डाल कर समाज के समक्ष प्रस्तुत किया था।

ब्राह्मण धर्म के अनुसार व्यक्ति तीनों आश्रमों के जीवन को व्यतीत करने के पश्चात् परिपक्व बुद्धि का हो जाता था और तब वह अन्तिम आश्रम में जाकर अधिक प्रौढ़ता के साथ अध्यात्म-चिन्तन कर सकता था। परन्तु जैन और बौद्ध धर्मो ने इस चतुराश्रम व्यवस्था को अस्वीकार कर दिया और प्रत्येक व्यक्ति को, बिना आयु और काल के विचार के, संसार-त्याग का अधिकार दे दिया। इसका दुष्परिणाम भी सर्वविदित है। बाद में उन्हें संसार-त्याग के अधिकार को नियंत्रित करना पड़ा। उनका यह नियंत्रण परोक्ष रूप से ब्राह्मण व्यस्थाकारों की परिपक्व व्यवस्था की ही मान्यता स्थापित करता है।

ब्राह्मण व्यवस्थाकारों ने चतुराश्रमों में गृहस्थाश्रम को ही सर्वोच्च माना था। परन्तु नवीन धर्मों ने उसे समस्त दु:खों का मूल माना और उसका शीघ्रातिशीघ्र परित्याग कर देने का आदेश दिया। परन्तु फिर दोनों ही धर्मो ने गृहस्थों को भी अपने-अपने धर्म में दीक्षित क्यों किया ? इसीलिए कि एक साथ संसार-त्यागी व्यक्तियों से उनके धर्म नहीं चल सकते थे। पुन:, बौद्ध एवं जैन भिक्षुओं के भरण-पोषण एवं उनके संघों के जीवन-निर्वाह का सम्पूर्ण भार भी गृहस्थों के ऊपर ही था। अत: जिस आश्रम को दोनों धर्मो ने धरासात् करने का प्रयास किया वही उनका त्राता बना। क्या यह ब्राह्मणों के सर्वोच्च आश्रम-गृहस्थाश्रम की मान्यता को स्वीकार करना न था।

बौद्ध धर्म ने ब्राह्मण धर्म द्वारा प्रतिपादित वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमों की जीवन-पद्धति के काया-क्लेश की निन्दा की है। परन्तु स्वयं उसने किया ? बौद्ध भिक्षुओं के लिए जिन यम-नियमों अथवा विधि-विधानों का प्रतिपादन बौद्ध धर्म ने किया है वे वानप्रस्थ अथवा संन्यास आश्रमों के नियमों से कम कठोर नहीं है।[10]

बौद्ध धर्म कर्मप्रधान हैं। इनकी दृष्टि में मनुष्य अपने समस्त कर्मो के लिए उत्तरदायी है। कर्म के अनुरूप ही उसे फल मिलेगा। कर्म के कारण ही उसका पुनर्जन्म होता है और कर्म के कारण ही मोक्ष। परन्तु ये सम्पूर्ण सिद्धांत

ब्राह्मण-धर्म में पहले से ही व्याख्यात हो चुके थे। वृहदारण्यक उपनिषद् का कथन है कि यपुण्य-कर्म से पुण्य और पाप-कर्म से पाप की उत्पत्ति होती है।[11] छान्दोग्य उपनिषद् में उल्लिखित है कि 'पुरूष कर्मप्रधान है। जैसा वह इस लोक में करता है उसी के अनुरूप वह मृत्यु के पश्चात् होता है।'[12] अब मोक्ष को लीजिए। छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार विमुक्त आवागमन के चक्कर से छूट जाता है।[13] कठोपनिषद् के अनुसार, 'ब्रह्मप्राप्त मनुष्य अनासक्त और अमर हो जाता है।'[14] ये भावनाएँ बौद्ध एवं जैन धर्मों की मोक्ष-सम्बन्धी भावनाओं से मेल खाती हैं। जहाँ तक आत्मा, परमात्मा, सृष्टि आदि विषयों का सम्बन्ध है ब्राह्मण ग्रन्थों में इनके विषय में बहुत-कुछ कहा जा चुका था।

1. महात्मा बुद्ध ने जिस धर्म का प्रवर्तन किया था वह सरल, सुबोध और स्वाभाविक था। परंतु धीरे-धीरे उसका रूप बदलने लगा। उसमें आगे चलकर कई ऐसी बातों का भी समावेश हो गया, जिनका बुद्ध ने विरोध किया था, यथा अवतारवाद, मूर्तिपूजा, कर्मकांड तथा मंत्र तंत्र आदि। बौद्ध धर्म के वज्रयानी संप्रदाय के अंतर्गत घोर अनैतिक एवं भ्रष्ट कार्यों का प्रतिपादन होने लगा था जिससे बौद्ध धर्म की प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा था।

2. बौद्धधर्म के द्रुतगति से विस्तार का एक प्रमुख कारण बौद्ध संघ था। किंतु कालांतर में संघ का अध:पतन प्रारंभ हो गया। बौद्ध मठ चरित्रहीनता के गढ़ बन गये थे। उनका संघ धर्मसंघ न होकर भिक्षु भिक्षुणियों के पारस्परिक विवाद और कलह के घर बन गये थे। भिक्षुओं और भिक्षुणियों ने सुख, वैभव बिलासी जीवनयापन करना प्रारंभ कर दिया था। इस चरित्रहीनता के परिणामस्वरूप बौद्ध धर्म पर से लोगों का विश्वास उठने लगा था।

3. बौद्ध धर्म के प्रचार से ब्राह्मणों में चेतना की नई लहर प्रतिक्रिया रूप में दौड़ गई। इस जागृति ने बौद्ध धर्म को पीछे खंदेड़ दिया। शुंग शासन-काल में ब्राह्मण धर्म के पुनरुद्धार की जो प्रतिक्रिया हुई, वह उत्तरोत्तर सबल होती गई। इसके बाद कण्व और सातवाहन राजा भी ब्राह्मण धर्मावलम्बी थे। गुप्त और वाकाटक राजा भी ब्राह्मणवादी थे। इनके शासनकाल में वैष्णव और शैव संप्रदायों के उन्नति की। ब्राह्मणों ने भक्ति मार्ग, अवतारवाद, मूर्तिपूजा, आराधना, उपासना, व्रत-स्नान, तीर्थपूजा, दान दक्षिणा आदि के द्वारा अपने धर्म को आकर्षक बना दिया। शंकराचार्य और कुमारिल भट्ट ने दार्शनिक दृष्टि से बौद्ध धर्म का खंडन करके ब्राह्मण धर्म की प्रतिष्ठा स्थापित की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मस्योपकिषन्मोक्ष:-शान्तिपर्व।
2. सुत्तानिपात 5.1-16.
3. वेरंजक-ब्राह्मण सुत्त (अंगुत्तर निकाय)
4. सूत्रकृतांग 1.13.10.15.
5. उत्तराध्ययन 25.33.
6. उत्तराध्ययन, 25, 88.
7. उत्तराध्ययन, 25.33.
8. उत्तराध्ययन, 12.46.
9. कठ. 1.1.15.
10. 'Though the Buddha condemned morbid ascetic practices it is a supprise to find the discipline demanded of the Buddhistic brethren is more severe in some points than any referred to in the Brahmanical texts.—Radhakrishnan, Indian Philosophy, Vol. I. P. 436.
11. वृहदारण्यक 4.4.5.
12. 'अथ खलु ऋतुमय: पुरूष:। यथा ऋतुरस्मिन् लोके पुरूषो भवति तथेत प्रेत्य भवति'-वृहदारण्यक 3.14.1.
13. 'न सपुररावर्तते-छान्दोग्य' 8.15.1
14. ब्रह्मप्राप्तौ विरजोऽभूद्विमृत्यु:-कठ, 2.3.18.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय राजनीतिक चिंतन में विरोध और शासक पर नियंत्रण : परंपरा, विमर्श और समकालीन प्रासंगिकता

डॉ. शोभा गौतम*

* सह आचार्य (राजनीति विज्ञान) से. मु .मा .राजकीय कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

शोध सारांश – प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन में राजतंत्र की मान्यता को सहमति दिखाई देती है ।भारतीय राजनीतिक चिंतन राजतंत्र को सर्वश्रेष्ठ शासन मानते हुए भी जनता के कल्याण को प्राथमिकता देने के प्रति उदासीन नहीं रहा है, प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन चाहे वह मनुस्मृति हो, कौटिल्य का अर्थशास्त्र या शुक्र का शुक्र नीतिसार सभी में राजतंत्र की प्रधानता होते हुए भी राजतंत्र को धर्म और नीति के अधीन रखा गया है ।प्रस्तुत शोध पत्र में प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन में विरोध और शासन पर नियंत्रण की अवधारणा का समसामयिक परिपेक्ष में विश्लेषण किया गया है।

शब्द कुंजी – राजतंत्र,मनुस्मृति, अर्थशास्त्र, विरोध।

प्रस्तावना – मानव सभ्यता का इतिहास इस बात का साक्षी है कि सत्ता और प्रजा का संबंध केवल आदेश और आज्ञापालन तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें नियंत्रण, संतुलन और विरोध की निरंतर धारा विद्यमान रहती है। राजनीति की यह विशेषता है कि जब शासक निरंकुश हो जाता है और राज्यादेश न्याय, धर्म या नैतिकता से विचलित होता है, तब प्रजा का विरोध एक नैतिक व राजनीतिक आवश्यकता बन जाता है। विरोध को दो स्तरों पर समझा जा सकता है– पहला वैचारिक असहमति (Dissent) और दूसरा व्यावहारिक अवज्ञा (Disobedience)। जब तक नागरिक केवल असहमति व्यक्त करता है, वह वैचारिक विरोध है। किंतु जब वह राज्य के आदेश का पालन न करते हुए उसका उल्लंघन करता है, तब यह विरोध व्यावहारिक और राजनीतिक स्वरूप ग्रहण कर लेता है।

शोध पत्र के उद्देश्य – प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन में उपस्थित विरोध एवं शासक पर नियंत्रण की अवधारणा का समसामयिक परिप्रेक्ष्य मे विश्लेषण करना।

शोध पत्र की परिकल्पना – प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन में राजतंत्र की असीमित शक्तियां होते हुए भी राजतंत्र को निरंकुश नहीं बनाया गया है।

शोध प्रविधि – शोध कार्य हेतु ऐतिहासिक, विवरणात्मक, विश्लेषणात्मक, एवं तुलनात्मक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है। शोध कार्य हेतु तथ्यों एवं आंकड़ों के संकलन हेतु द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक स्त्रोतों के रूप में पुस्तकों एव पत्र- पत्रिकाओं का उपयोग किया गया है।

भारतीय चिंतन में विरोध की परंपरा – जनता द्वारा किसी भी शासन व्यवस्था के प्रति विरोध को दो स्तरों पर समझा जा सकता हैकृपहला वैचारिक असहमति (Dissent) और दूसरा व्यावहारिक अवज्ञा (Disobedience)। जब तक नागरिक केवल असहमति व्यक्त करता है, वह वैचारिक विरोध है। किंतु जब वह राज्य के आदेश का पालन न करते हुए उसका उल्लंघन करता है, तब यह विरोध व्यावहारिक और राजनीतिक स्वरूप ग्रहण कर लेता है।सोक्रेटीज ने एथेंस नगर के अन्यायपूर्ण आदेशों को चुनौती तो दी, किंतु दंड स्वीकार करके यह दिखाया कि राज्य की व्यवस्था का सम्मान भी आवश्यक है (Plato,trans 2002)। वहीं हेनरी डेविड थोरो ने अपनी पुस्तक Civil Disobedience (1849) में यह प्रतिपादित किया कि अन्यायपूर्ण शासन का उल्लंघन करना नागरिक का नैतिक कर्तव्य है। थोरो ने कर देने से इंकार कर जेल जाना स्वीकार किया, क्योंकि वह अमेरिका की गुलामी समर्थक नीति के विरोध में खड़े थे (Thoreau, 1849/1993)। इस विचारधारा ने आगे चलकर गांधीजी और मार्टिन लूथर किंग जूनियर को गहरे प्रभावित किया (King, 1963/1991)।

विरोध की अवधारणा को समझने के लिए इसे समानांतर अवधारणाओं से तुलना करना आवश्यक है।

- **सिविल डिसओबीडियंस –** यह विरोध का सबसे समीपवर्ती रूप है, जिसमें नागरिक कानून तोड़ता है परंतु अहिंसा और नैतिकता को साधन बनाता है। गांधीजी का नमक सत्याग्रह इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है (Gandhi, 1909/1998)।
- **असहमति (Dissent) –** यह विचारों और अभिव्यक्ति तक सीमित है, जबकि विरोध आदेश के उल्लंघन तक जाता है।
- **क्रांति (Revolution) –** विरोध का उग्र रूप, जिसमें राज्य की संपूर्ण व्यवस्था को ही पलट देना लक्ष्य होता है। फ्रांसीसी और रूसी क्रांतियाँ इसके उदाहरण हैं। भारतीय संदर्भ में भगत सिंह और चंद्रशेखर आजाद की गतिविधियाँ इसी श्रेणी में रखी जा सकती हैं (Chandra, 1989)।
- **नॉन–वायलेंट रेजिस्टेंस –** मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने गांधीवादी तरीकों को अपनाकर अमेरिकी नागरिक अधिकार आंदोलन में इसका उपयोग किया। यह भी आदेश के उल्लंघन का ही अहिंसक रूप है (King, 1963/1991)।

भारतीय चिंतन में विरोध की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। वैदिक युग में जहाँ वेदों को सर्वोच्च प्रमाण माना गया, वहीं चार्वाक दर्शन ने प्रत्यक्षवाद

का प्रतिपादन करके वेद की सत्ता का ही खंडन किया। यह वैचारिक विरोध सामाजिक और धार्मिक सत्ता के आदेश का प्रत्यक्ष उल्लंघन था। बौद्ध और जैन आंदोलनों ने पशुबलि और हिंसा पर आधारित यज्ञ-प्रथा को अस्वीकार किया तथा नए नैतिक आदेश स्थापित किए। यह उस समय की राज्य-स्वीकृत व्यवस्था के विरोध के रूप में देखा जा सकता है (Ambedkar, 1936/2014)।

भारतीय चिंतन में शासक पर नियंत्रण की परंपरा- भारतीय राजनीतिक चिंतन की विशेषता यह है कि यहाँ शासक और प्रजा के संबंध केवल विधिक नियमों तक सीमित नहीं रहे, बल्कि वे धर्म, संस्कृति और लोकजीवन की परंपराओं से भी बँधे रहे। इसीलिए भारतीय चिंतन में शासक पर नियंत्रण और अन्यायपूर्ण आदेशों का उल्लंघन, दोनों ही विमर्श के मुख्य अंग रहे हैं।

प्राचीन भारतीय परंपरा में शासक को धर्मपालक और लोककल्याणकारी संरक्षक माना गया। मनुस्मृति में यह स्पष्ट कहा गया है कि राजा यदि धर्म से विचलित हो, तो उसका राज्य अधिक समय तक स्थिर नहीं रह सकता हैं। कौटिल्य का अर्थशास्त्र भी इसी दिशा में शासक की शक्तियों को कठोर अनुशासन में बाँधता है। कौटिल्य के अनुसार राजा प्रजा के सुख और सुरक्षा का रक्षक है और यदि वह अपने दायित्वों का निर्वाह नहीं करता तो उसका शासन नैतिक और राजनीतिक वैधता खो देता हैं।

महाभारत में विदुर नीति यह उद्घोष करती है कि अधर्म को सहना स्वयं अधर्म है। यह दृष्टिकोण केवल धार्मिक नहीं, बल्कि राजनीतिक भी है। यहाँ प्रजा को यह अधिकार और कर्तव्य दोनों दिए गए कि वह अधर्मपूर्ण आदेशों के सामने मौन न रहे। यही विचार बौद्ध और जैन आंदोलनों में और प्रखर हुआ। बुद्ध और महावीर ने हिंसक यज्ञ-प्रथाओं और असमानता का विरोध किया तथा करुणा और समता पर आधारित नए सामाजिक-राजनीतिक आदेश की स्थापना की। अशोक का धम्म शासन इसी नैतिक परंपरा का राजनीतिक रूपांतरण था, जहाँ शासक ने स्वयं को धर्म का प्रतिनिधि बनाकर लोककल्याणकारी नीतियों को अपनाया।

मध्यकालीन संत परंपरा में विरोध ने नया स्वरूप ग्रहण किया। कबीर, गुरु नानक और दादू जैसे संतों ने धार्मिक पाखंड और जातिगत विभाजन के विरुद्ध आवाज उठाई। उनका यह प्रतिरोध सीधे राजसत्ता को चुनौती नहीं देता था, किंतु वह सामाजिक व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न लगाकर अप्रत्यक्ष रूप से शासक के अधिकार को सीमित करता थीं। यह विरोध इस बात का प्रमाण था कि भारतीय समाज में असहमति और प्रतिरोध की परंपरा कभी समाप्त नहीं हुई।

आधुनिक भारत में यह विमर्श स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान चरम पर पहुँचा। महात्मा गांधी ने हेनरी डेविड थोरो के 'सिविल डिसओबीडियंस' के विचारों से प्रेरणा लेकर सत्याग्रह और असहयोग आंदोलन को जन्म दिया। थोरो का यह कथन कि अन्यायपूर्ण कानून का पालन करना ही पाप है, गांधीजी को गहराई से प्रभावित करता हैं। नमक सत्याग्रह इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है, जब उन्होंने ब्रिटिश शासन के कानून को तोड़ते हुए यह दिखाया कि प्रजा अन्यायपूर्ण आदेशों को मानने के लिए बाध्य नहीं है।

डॉ. भीमराव अंबेडकर ने सामाजिक आदेशों का उल्लंघन कर जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता के विरुद्ध महाड़ तालाब सत्याग्रह कियाु। उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि यदि कोई परंपरा शोषणकारी है, तो उसका प्रतिरोध करना ही न्याय है। दूसरी ओर, भगत सिंह और उनके साथियों ने क्रांतिकारी मार्ग अपनाकर औपनिवेशिक सत्ता को सीधी चुनौती दी। उनका यह दृष्टिकोण बताता है कि भारतीय विरोध परंपरा में अहिंसक और हिंसक दोनों ही मार्ग समानांतर मौजूद रहे हैं, जिनका अंतिम लक्ष्य अन्यायपूर्ण सत्ता का प्रतिरोध था।

स्वतंत्र भारत में यह परंपरा संवैधानिक रूप से स्थापित हुई। संविधान का अनुच्छेद 19 नागरिकों को अभिव्यक्ति और शांतिपूर्ण सभा का अधिकार देता है। यह अधिकार न केवल लोकतंत्र की आत्मा है बल्कि शासक पर नियंत्रण का भी औजार है। संसद में विपक्ष इसी विचारधारा का संवैधानिक रूप है, जिसका कार्य है शासन को उत्तरदायी बनाना और प्रजा की आवाज को अभिव्यक्त करना। आपातकाल (1975-77) इसका सबसे बड़ा उदाहरण है जब शासन ने नागरिक स्वतंत्रताओं को सीमित किया और परिणामस्वरूप व्यापक विरोध आंदोलनों ने सत्ता को पुन: संतुलन में लाने का कार्य किया। जयप्रकाश नारायण के सम्पूर्ण क्रांति आंदोलन ने यह सिद्ध किया कि भारतीय लोकतंत्र में विरोध केवल अधिकार नहीं बल्कि सामाजिक-राजनीतिक आवश्यकता भी हैं।

इस प्रकार प्राचीन से आधुनिक काल तक यह स्पष्ट होता है कि भारतीय राजनीतिक चिंतन में विरोध और शासक पर नियंत्रण की अवधारणाएँ सदैव जीवित रही हैं। मनुस्मृति और कौटिल्य से लेकर गांधी और अंबेडकर तक, हर युग में यह बात कही गई कि शासक यदि अन्यायपूर्ण हो जाए तो उसके आदेशों का उल्लंघन ही नैतिकता है। यह विरोध कभी वैचारिक रूप में, कभी धार्मिक आंदोलनों के रूप में और कभी राजनीतिक क्रांतियों के रूप में प्रकट हुआ।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि विरोध और शासक पर नियंत्रण भारतीय राजनीतिक चिंतन की मूल आत्मा है। ये दोनों अवधारणाएँ सत्ता को निरंकुश होने से रोकती हैं और समाज को न्याय और नैतिकता की ओर अग्रसर करती हैं। आधुनिक लोकतंत्र में भी यह परंपरा उतनी ही प्रासंगिक है जितनी प्राचीन काल में थी। जब भी सत्ता न्याय और धर्म से विचलित होगी, तब यह परंपरा उसे संतुलित करने और प्रजा को सशक्त बनाने का कार्य करती रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मनुस्मृति, अध्याय 7।
2. कौटिल्य, अर्थशास्त्र।
3. महाभारत, विदुर नीति।
4. थापर, रोमिला (2015). अशोक और धम्म. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
5. द्विवेदी, हजारीप्रसाद (2002). कबीर. राजकमल प्रकाशन।
6. Thoreau, H. D. (1849). Civil Disobedience. Boston.
7. अंबेडकर, भीमराव (2014). जातिभेद का उन्मूलन. नवयाना।
8. चंद्र, बिपिन (1989). भारत का स्वतंत्रता संग्राम. पेंगुइन।
9. लोहिया, राममनोहर (1963). व्हील ऑफ हिस्ट्री. नव हिन्द।
10. Guha, Ramachandra (2007). India After Gandhi. Picador.

****

Concept of Social Justice in the Bhartiya Nyaya Sanhita (BNS) and Manu Smriti: An Overview

Dr. Lok Narayan Mishra* Dr. Rakesh Prasad Pandey**

***Assistant Professor (Law) Govt. Law College, Rewa (M.P.) INDIA**
**** Dept. of English, Govt. Degree College, Rampur Baghelan, Satna (M.P.) INDIA**

Abstract: The concept of social justice has undergone a profound transformation from the era of the Manusmriti to the contemporary *Bharatiya Nyaya Sanhita* (BNS). *Manu smriti* an ancient Hindu legal text, is primarily known for its endorsement of social hierarchy and differentiation based on caste, gender, and occupation. Its provisions deeply entrenched discrimination by prescribing different rights, duties, and punishments for various social groups, especially favoring the upper castes and men. For instance, the Manusmriti legitimized unequal treatment of Shudras and women, often subjecting them to harsher penalties and restricted rights. Social justice, as understood in *Manu smriti* was less about fairness or equality and more about maintaining the prescribed social order. In this system, laws functioned not to uplift the marginalized but to reinforce the privileges of the dominant classes. Over centuries, such codification of inequality shaped social relations in Indian society, perpetuating exclusion and injustice. In stark contrast, the Bharatiya Nyaya Sanhita, a product of modern legislative reform, draws from constitutional principles that prioritize equality, justice, and human dignity. The BNS deliberately rejects distinctions based on caste, creed, gender, or religion, advocating the application of law uniformly to all citizens. By ensuring equal protection and punishment, the BNS aims to correct historical injustices that have long plagued Indian society. Its framework is designed to empower the vulnerable, promote inclusivity, and safeguard the rights of every individual. Social justice, in the context of the BNS, means providing fair opportunities, remedies, and protections to all, especially those who have been historically disadvantaged. The BNS aligns itself with the vision of the Indian Constitution, particularly Article 14, which guarantees equality before law. Unlike the *Manu smriti* there is no room in the BNS for legal privilege based on birth or social status. This legislative evolution signifies a broader societal commitment to universal human rights and the dismantling of entrenched hierarchies. The transition from *Manu smriti* to BNS marks a decisive shift from a justice system that preserved inequality to one that aspires for fairness and inclusion. It is a journey from codified exclusion to legislated equality, reflecting the changing moral and ethical priorities of Indian society. By embracing the principles of social justice, the BNS seeks to serve as a tool for empowerment, aiming to build a more equitable and harmonious society. This transformation underscores the power of law as an agent of social change, capable of challenging and reshaping age-old structures of discrimination. Ultimately, the concept of social justice in India has evolved from reinforcing social divisions to striving for collective upliftment and dignity for all.
Keywords: Social justice, Empowerment, harmonious society, discrimination, Shudras, marginalized.

Introduction - In Indian civilization, the notion of social justice has experienced a substantial development, transitioning from ancient times to the present. Texts like the Manu smriti functioned as fundamental moral and legal guidelines in ancient India, establishing a complicated system of obligations, privileges, and penalties based mostly on class, race, and social background. Diverse groups of people had different rights and responsibilities as a result of the Manu smriti's reflection of social justice, which was intricately linked to the patriarchal norms and the dominant varna system. Despite establishing order, this strategy frequently served to strengthen systemic injustices and restricted disadvantaged groups' access to fair opportunity and mobility.

The principles of social justice have been reinterpreted in light of the Constitution and progressive laws since the establishment of modern India. As the recently proposed criminal code, the Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS) incorporates these transformational ideals by maintaining non-discrimination, equality, and fairness as fundamental principles of justice. The BNS represents a clear departure from the discriminatory practises of earlier codes like as the Manusmriti, since it draws on constitutional principles to provide equal protection to all people, irrespective of

class, race, gender, or social background.

A unique view into the evolving conceptions and uses of social justice in India may be gained by comparing the Manu smriti and even the Bharatiya Nyaya Sanhita. The BNS aims to create an equal legal framework rooted on inherent liberty and the uniformity of rights, in contrast to the Manu smriti's predefined rules that seem to be dependent on heredity and social hierarchy, frequently limiting the rights of women and marginalised groups. This development shows how India's legal and ethical philosophy has changed and remained consistent over the centuries.

In addition, the change from Manu smriti to BNS reflects broader spiritual and moral changes in Indian culture in addition to being a legal one. The BNS's transition to a more fair, inclusive, and just legal system demonstrates India's dedication to democratic principles and human rights. It represents a deliberate attempt to right past atrocities and break down the barriers in which everyone is uniformly protected and empowered by the legislation.

Philosophical Foundation

Manusmriti:

1. *Manu smriti* is rooted in the ancient Hindu conception of *dharma*, where duties and rights are determined by one's *varna* (caste) and *ashrama* (stage of life).
2. Social justice in *Manu smriti* is not based on equality but on hierarchical order, with different rules and rights for Brahmins, Kshatriyas, Vaishyas, Shudras, and others.
3. The code places collective harmony above individual liberty, and prescribes duties to maintain social order.

***Bharatiya Nyaya Sanhita* (BNS):**

1. BNS is based on constitutional values: equality, justice, liberty, and fraternity as enshrined in the Indian Constitution.
2. The law is secular, egalitarian, and applies uniformly to all citizens, regardless of caste, gender, religion, or background.
3. Social justice here means equal protection and equal punishment before the law.

Protection Against Discrimination: As Indian culture and therefore its statutory bodies having developed, bigotry and the quest for equality always remained recurring issues. Normative religious scriptures like the Manu smriti and also the Bharatiya Nyaya Sanhita clearly show the methods used to overcome prejudice in both classical and contemporary India (BNS). Although they both function as moral standards and righteousness for their respective periods, their theoretical foundations and real-world implementations of discrimination are very different. To appreciate the advancements Indian society has achieved in the areas of social sustainability, it is imperative to comprehend these distinctions.

Perhaps one India's first doctrines of society and legal system is the Manu Smriti, which was written in antiquity. But it is also infamous for creating and upholding a strict caste and gender-based hierarchy. There was systematic discrimination against women and lower castes as a result of the rights, obligations, and punishments being specified with careful consideration for one's place in the social hierarchy. Consequently, the Manu smriti codified stigmatisation itself and made protection against discrimination almost nonexistent in practise, institutionalising inequity.

On the other hand, the Indian Constitution's tenets of equality, fairness, and nondiscrimination form the foundation of the Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS), which is a component of the country's new criminal law system. Regardless of ethnicity, religion, gender, or financial status, the BNS aims to provide equal legal protection for all people. Its fundamental tenets are the aggressive defence of personal liberty against discriminatory practises and the elimination of artificial differences. It really is a significant break from historical discriminatory customs.

The transition from Manu smriti to BNS reflects India's changing social consciousness in addition to being a change in the legal code. The goal of contemporary Indian law is to establish a society in which all people are treated equally before the law, acknowledging the perils of systemic discrimination. By including anti-discrimination measures into all of its provisions and guaranteeing that justice is served impartially, the BNS exemplifies this dedication.

The tremendous transformation of Indian society from a heritage of inequality to one that strives for universal fairness may thus be shown through an analysis of the protection against discrimination found in both the Manu smriti and the Bharatiya Nyaya Sanhita. In addition to highlighting the moral and legal advancements made, comparing these two codes serves as a reminder of the ongoing attention to detail needed to preserve and advance equality in a multicultural and ever-changing society.

Rights of Women: Throughout Indian history, the dominant moral and ethical paradigms of the period have influenced women's position and rights. The recently passed Bharatiya Nyaya Sanhita and the ancient Indian Manu smriti are two important legal writings that demonstrate this development (BNS). In addition to the evolving relevant laws of women's rights, an analysis of such documents reveals larger shifts in society perceptions of gender equality and justice.

A submissive role for women is generally prescribed by the Manu smriti, which was written at a period when society was strongly patriarchal. It places a strong emphasis on male family members as women's guardians and limits their independence in areas like marriage, property, and personal freedom. Because women's duties were mostly restricted to the home and their privileges remained constrained by social hierarchy and custom, the rules described in the Manu smriti mirror the conventions of the time.

On the other hand, the Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS) is the result of a contemporary constitutional vision that

places a higher priority on social justice, individual rights, and gender equality. Equal legal protection for women is guaranteed by the BNS, which maintains the values found in the Indian Constitution. In order to combat violence against women, safeguard their dignity, and advance their rights to property, individual freedom, and public engagement, it offers strong legal safeguards. In order to address past injustices and realise the promise of a fair society, the BNS places a strong focus on women's rights. The shift from Manu smriti to the BNS is evidence of India's continuous fight for gender equity as well as a legal change. This voyage is a reflection of the goals of women and reformers throughout history who have fought against oppressive traditions and called for women to be recognised as equal citizens. The BNS, which aims to empower women and guarantee their proper position in society, is proof of this advancement with its gender-sensitive measures.

For this reason, studying women's rights in either the Manu smriti and the BNS offers valuable insights into how gender relations are changing in India. From a system that limited women's autonomy with one that works to protect and advance it, it emphasises the progress society has made and the continued need for change and vigilant in the quest for complete equality.

Justice for Marginalized Groups: India's changing ethical and practical orientation is achieved through the development of impartiality for oppressed people. Conventional doctrines such as the Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS) and scriptural texts such as Manu smriti illustrate two vastly distinct perspectives on the position and privileges from those who are socially disadvantaged. Comparing and contrasting these writings offers important insight into how Indian society's ideas of righteousness, inclusiveness, and equality have evolved over the ages.

During a period when Indian society seemed highly stratified, the Manu Smriti established a rigorous natural cohesion based on ashrama and varna (caste) (stage of life). Justice was not dispensed equitably under this system; rather, it was based on a person's caste and social standing. The so-called "outcastes" and lower castes sometimes faced harsher penalties and severe limitations, and their enforcement of the law and legal remedy was severely limited. The framework gives excluded populations no security or chance for recourse, codifying stigmatisation and sustaining disparity.

In contrast, the principles of liberty and equality outlined in the Indian Constitution act as a foundation for the Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS). Whilst also ensuring that every society, irrespective of social background, has equal treatment under the law, the BNS seeks to overthrow previous hierarchies. In addition to attempting to guarantee them access to justice and equitable treatment under the law, it contains particular measures for the protection and advancement of disadvantaged populations, including Scheduled Castes, Scheduled Tribes, and other marginalised communities.

The transition from the Manu smriti to the BNS represents a significant movement in the theory of justice itself, not simply a modification of legal laws. The latter aims for inclusivity, dignity, and equal rights, while the former promoted social isolation and division. This shift serves as an example of how Indian society is always moving toward a more fair and just system where the rights and voices of the underprivileged are valued and upheld.

Countries have achieved strides, although there are still issues to be resolved when looking at rights for underprivileged people through into the prisms of the BNS and the Manu smriti. That emphasises how essential to keep working toward access to justice for everyone, particularly to someone who has traditionally been marginalised in society, and how important it is for laws to serve mostly as a manifestation of public ideals as well as an instrument for progressive transformation.

Nature of Punishment: The evolving concepts of justice, social order, and individual rights are reflected in the development of India's legal systems. One of the first legal documents in Indian history, the Manu Smriti, was composed at a period when rigid social structures and religious obligations governed society. These standards had a significant impact on its attitude to punishment, which used a system of incentives and sanctions to maintain the status quo. The Bharatiya Nyaya Sanhita (BNS), on the other hand, is the contemporary criminal code and symbolises a legal theory based on equality, constitutional protections, and human rights, which is a substantial divergence from earlier customs.

Based on the dharma principle, Manu Smriti established penalties, with the kind and severity of the penalty greatly influenced by the victim's and offender's caste, gender, and social standing. While lower castes, especially the Shudras and so-called outcasts, suffered harsher and more degrading types of punishment for the same act, higher castes were often treated more leniently. This was a reflection of the strict social structure of the times, in which the rule of law served to uphold hierarchy rather than guarantee justice for all.

Conversely, the BNS upholds the idea of equality before the law. Regardless of caste, gender, or social standing, it respects every citizen equally. Rather than the identity of the victim or the accused, the circumstances, purpose, and seriousness of the offence decide the kind and extent of punishment. A major departure from the Manusmriti's tiered logic, this egalitarian approach is a pillar of India's constitutional vision.

In Manu smriti, punishments might be as harsh as physical punishment, mutilation, banishment, or even death, or they could be as light as fines and public censure. Many of these physical and public penalties were meant to scare and embarrass others. The idea that suffering would atone for sin and restore cosmic order served as justification for

the use of corporal punishment. In addition, the Manu smriti advocated ceremonial penance, or prayaschitta, in which criminals might make up for their transgressions by participating in religious rites, fasting, or charitable giving.

In contrast, the BNS mostly uses fines, incarceration, and, in some situations, the death sentence as measures of punishment. In compliance with international human rights standards and constitutional safeguards of human dignity, corporal punishment, torture, and public humiliation have all been outlawed. In order to reintegrate convicts into society as law-abiding citizens, BNS places equal emphasis on reformation and rehabilitation as well as deterrence.

According to Manu smriti, the monarch or ruler had the last say over how justice was administered. The monarch was counselled by Brahmin priests or elders who interpreted the law in accordance with tradition and precedent, and the procedure was often opaque. There was a lot of room for arbitrary or prejudiced rulings, particularly in situations involving women or lower castes. This system put group order ahead of individual justice, reflecting the larger societal realities of the time.

Today, the BNS entrusts an impartial, independent court with the duty of administering justice. Every accused person has the right to an appeal, legal counsel, and a fair trial. Because the court is constrained with statutory provisions and set regulations, it is more transparent, consistent, and immune to capricious behaviour. Right to a fair trial, a crucial component was mostly lacking in the old regime, is embodied in the BNS.

In Manusmriti, victims care was not the main priority. Preserving communal peace has been prioritised above personal justice. Victims often had no recourse to justice or restitution, particularly those from disadvantaged communities or lower castes. Inequality was institutionalised and the social hierarchy was strengthened by the harsher punishments meted out for crimes against higher castes than those against lower castes.

The penal structure of the Manusmriti did not prioritise rehabilitation or reintegration. Offenders, particularly those from lower castes, may experience long-term social shame or marginalisation after being punished. Punishment sometimes resulted in the permanent loss of rank or community, and the system seldom permitted a second opportunity.

However, the BNS highlights the possibility of rehabilitation, particularly for young or first-time offenders. In order to reduce recidivism and encourage constructive citizenship, alternatives to jail include community service, probation, and parole. Since criminals are capable of changing, the law aims to facilitate their reintegration into society.

Court procedures are held in courtrooms rather than public squares, and modern justice as it is expressed in the BNS is private and dignified. The goal is to promote respect for the rule of law rather than a fear of authority, and to preserve the dignity of all parties concerned, including the accused. Cruel, inhuman, or humiliating punishment is not acceptable to the BNS.

Religious atonement and ritual played a significant role in the Manu Smriti sentencing procedure. Donations, self-sacrifice, or prescribed penance might all be used to absolve or lessen crimes. Because of this blending of religion and law, the line separating vice and crime was obscured and spiritual factors frequently affected judicial decisions.

The BNS is a secular law that bases punishment on legal, not religious, justifications. Instead of enforcing religious morality, the goal is to safeguard individual rights and social order. A defining feature of India's contemporary legal system, the separation of church and state is crucial to preserving individual liberty and plurality.

In Manu smriti, community members were often in charge of enforcement, with elders or local councils having a big say in what was punished and how it was carried out. In many cases, this approach led to collective or mob justice, when societal norms or the will of the majority might supersede individual rights.

The BNS ensures checks and balances by giving the state and its legal institutions enforcement authority. People who feel that the system has harmed them have recourse, and law enforcement is subject to court scrutiny. This guarantees responsibility and aids in the prevention of abuse.

Due to the dominating impact of caste, gender, and social standing, the principle of proportionality in punishment was implemented inconsistently in Manu Smriti. Social order was often given precedence over individual justice, and punishments for the same violation might vary significantly according on the people involved.

With a distinct gradient of violations and associated sanctions, proportionality serves as a guiding element in the BNS. By striking a balance between retribution, deterrence, and the potential for change, the law seeks to guarantee that punishment is appropriate for the offence. This method avoids both excessive and insufficient fines while promoting justice.

In the end, the transition from Manu smriti to the BNS represents India's transformation from a traditional, hierarchical society to a contemporary, rights-based democracy. From retaliation and social control, penalty has changed to promote equality, justice, and rehabilitation. Even if there are still issues, the BNS is a monument to the continuous development of justice in India and reflects a dedication to protecting the rights and dignity of every person, regardless of ethnicity.

Equality Before Law: In India, the idea of equality before the law has changed dramatically throughout the ages, reflecting changes in social norms, government, and philosophy. One of the first writings on law and social order, the Manu Smriti, offers a worldview based on distinction and hierarchy. Its provisions, which divided individuals into

many social divisions with unique rights, obligations, and responsibilities, were heavily inspired by the varna system. Modern legislative thought, on the other hand, produced the Bharatiya Nyaya Sanhita, which emphasises democratic ideals and constitutional demands that support equality and secularism.

The notion of dharma, which is understood uniquely one per issues of gender, is inextricably linked to the idea of law in the Manu smriti. Brahmins are often given the most compassionate treatment under the Manu smriti, which lays out distinct laws and penalties for Kshatriyas, Vaishyas, Shudras, and Brahmins. A system where social standing determined legal decisions and individual liberties was institutionalised by this segmentation, which also permeated the penal system, heredity, and racial justice.

Thus, a strict social order was mirrored in and upheld by the Manu Smriti's legal system. The victim's and the offender's castes affected the penalties for comparable crimes. For instance, a Shudra who steals could face a much greater punishment than a Brahmin who commits the same offence. Since the law was a tool for upholding hierarchy rather than guaranteeing fairness, this unequal treatment was in direct opposition to the equal justice ideal.

The legal architecture of the Manu smriti was also heavily influenced by gender. Throughout their lives, women were mostly seen as dependents, first by their dads, then by their spouses, and eventually by their sons. Their legal independence was restricted, and women were often seen as having less credibility than males while testifying in court. These clauses denied women equal legal protection and rights and further solidified gender inequality.

The idea of equality before the law gained traction with the adoption of the Indian Constitution and the steady development of the country's judicial system. Moving away from the discriminatory practises rooted in ancient texts, the Bharatiya Nyaya Sanhita represents a deliberate attempt to reflect these constitutional values. Irrespective of race, race, gender, or religious practice, the BNS is specifically intended to be non-discriminatory, implementing its rules consistently to every person.

Article 14 of the Indian Constitution, which ensures that all individuals inside the country's borders have equal protection under the law, provides the BNS with its fundamental strength. This idea is ingrained in the BNS, guaranteeing that the law does not distinguish between people according to their inherited or assigned status. Justice is supposed to be unbiased and unaffected by the victim's or accused's socioeconomic status.

The manner in which the BNS imposes punishment is among the most notable deviations from the Manu smriti. The legal ramifications are determined by the kind and seriousness of the violation, not by the identity of the perpetrator. This strategy aims to increase public trust in the judicial system's impartiality and integrity by reaffirming that everyone is subject to the same legal standards.

Additionally, the BNS takes a more inclusive stance on minority rights and gender concerns. In an effort to address centuries of societal disadvantage, provisions are established to safeguard historically oppressed groups, such as women and Scheduled Castes and Scheduled Tribes. The BNS seeks to be an instrument for social justice rather than sustaining current injustices, and legal remedies are available.

Thus, the transition from Manu smriti to the BNS may be seen as a microcosm of India's larger shift from a rigidly stratified society to one that aspires to social justice, equality, and democratic government. This change emphasises how laws may be adjusted to changing social realities and how crucial it is for a contemporary state to enact laws that uphold equality, dignity, and individual rights.

Overall, the Bharatiya Nyaya Sanhita represents the modern ideal of equal justice for everyone, while the Manu smriti codified inequity before the law as a reflection of the social and religious culture of its period. India's dedication to creating a more fair and equal society for all of its citizens is shown by the journey from ancient writings to current regulations, which represents not just a legal shift but also a significant social and ethical growth.

Conclusion: The Manu smriti and the Bharatiya Nyaya Sanhita represent two vastly different visions of social justice. While Manu smriti reflects the values and norms of an ancient hierarchical society, the BNS embraces the modern ideals of equality, fairness, and individual rights. In today's India, laws are designed to protect the dignity and rights of every citizen, aiming for a just and inclusive society.

In divergence, the Bharatiya Nyaya Sanhita represents a progressive shift toward a more inclusive and egalitarian notion of justice. Drawing from constitutional values, the BNS seeks to create a legal framework where protections and penalties apply equally to all, regardless of their background. By prioritizing equality before law and aiming to safeguard the rights of marginalized groups, the BNS aspires to correct historical wrongs rather than reinforce them.

References: –

1. Bharteey Nyay sanhita 2023
2. Manusmriti
3. Manu-Smrti With Nine Commentaries by Medhatithi, Sarvajnanarayana, Kulluka, Raghavananda, Nandana, Ramacandra, Manirama, Govindaraja and Bharuci (Vol-3, Chapter 5-7)
4. Rmayan By Goswami Tulsidas

****

भारत में किशोर न्याय के संवैधानिक और मानवाधिकार आयाम

श्रीमती प्रीती बुंदेला* डॉ. राम सिंह पटेल**

* शोधार्थी, महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
** सह-प्राध्यापक, पं. मोतीलाल नेहरू विधि महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश –किशोर न्याय, एक प्रगतिशील और मानवीय कानूनी व्यवस्था की आधारशिला के रूप में, बच्चों के कल्याण और संरक्षण के प्रति राष्ट्र की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। भारत में, संवैधानिक दृष्टिकोण और मानवाधिकार दायित्व मिलकर कानून का उल्लंघन करने वाले किशोरों और देखभाल एवं संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों के समाधान हेतु रूपरेखा तैयार करते हैं। यह शोधपत्र भारत में किशोर न्याय के संवैधानिक और मानवाधिकार आयामों का अन्वेषण करता है, और उन कानूनी प्रावधानों, न्यायिक व्याख्याओं और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं का विश्लेषण करता है जिन्होंने किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 के विकास को प्रभावित किया है। यह किशोर अपराधों से निपटने में सुधार और निवारण के बीच संतुलन की भी जाँच करता है, विशेष रूप से 2012 के दिल्ली सामूहिक बलात्कार मामले के बाद, जिसने प्रमुख विधायी सुधारों को जन्म दिया। अध्न का निष्कर्ष है कि जहाँ भारत के संवैधानिक और अंतर्राष्ट्रीय दायित्व पुनर्वास और पुनर्एकीकरण पर आधारित बाल-केंद्रित दृष्टिकोण को अनिवार्य बनाते हैं, वहीं कार्यान्वयन में लगातार आने वाली कमियाँ, सामाजिक-आर्थिक कमजोरियाँ और प्रणालीगत सीमाएँ वास्तविक किशोर न्याय की प्राप्ति को चुनौती देती रहती हैं।

शब्द कुंजी – किशोर न्याय, मानवाधिकार, भारतीय संविधान, पुनर्वास, बाल अधिकार, किशोर न्याय अधिनियम 2015।

प्रस्तावना – कानून, बाल कल्याण और मानवाधिकारों के संगम पर किशोर न्याय एक अद्वितीय स्थान रखता है। यह इस दर्शन को मूर्त रूप देता है कि अपराध करने वाले बच्चों के साथ अपराधी जैसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि उन्हें ऐसे व्यक्ति के रूप में देखा जाना चाहिए जो सुधार और समाज में पुन: एकीकरण के योग्य हों। दुनिया की सबसे बड़ी बाल आबादी वाले देशों में से एक होने के नाते, भारत ने बाल संरक्षण और किशोर न्याय के लिए एक विस्तृत संवैधानिक और वैधानिक ढाँचा विकसित किया है।

भारत का संविधान अनुच्छेद 14, 15(3), 21 और 39 के तहत बच्चों सहित सभी व्यक्तियों को मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है। यह राज्य को बच्चों के विकास के लिए सुरक्षा और अवसर सुनिश्चित करने का अधिकार देता है। ये प्रावधान, संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन (यूएनसीआरसी) जैसे अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दस्तावेजों के भारत द्वारा अनुसमर्थन के साथ, एक मानवीय और पुनर्वासात्मक किशोर न्याय प्रणाली के प्रति प्रतिबद्धता को रेखांकित करते हैं। हालाँकि, भारत की किशोर न्याय व्यवस्था का विकास पुनर्वास और प्रतिशोध के बीच तनाव से चिह्नित रहा है। किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015, जिसने 2000 के अधिनियम का स्थान लिया, ने जघन्य अपराधों के लिए 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों पर वयस्कों की तरह मुकदमा चलाने का विवादास्पद प्रावधान पेश किया। यह बदलाव, हालाँकि राजनीतिक रूप से जन आक्रोश के प्रति उत्तरदायी था, लेकिन इसने भारत के संवैधानिक सिद्धांतों और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों के पालन पर गंभीर प्रश्न खड़े कर दिए।

यह लेख इन आयामों का गहराई से अध्ययन करने का प्रयास करता है, यह मूल्यांकन करते हुए कि भारत का संवैधानिक और मानवाधिकार ढाँचा उसकी किशोर न्याय प्रणाली को कैसे प्रभावित करता है, और क्या वर्तमान व्यवस्था वास्तव में बाल अधिकारों और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप है।

किशोर न्याय के संवैधानिक आयाम – भारत का संविधान बच्चों, जिनमें विधि-विरुद्ध बालक भी शामिल हैं, के संरक्षण, विकास और कल्याण के लिए मानक आधार प्रदान करता है। किशोर न्याय की अवधारणा को संवैधानिक गारंटियों से वैधता और शक्ति प्राप्त होती है जो प्रत्येक बालक की गरिमा और क्षमता की रक्षा करती हैं। भारतीय संवैधानिक ढाँचा मौलिक अधिकारों, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों (DPSP) और मौलिक कर्तव्यों को मिलाकर बाल कल्याण के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जो भारत की किशोर न्याय प्रणाली के लिए नैतिक और कानूनी आधार का काम करता है।

किशोर, एक संवेदनशील सामाजिक समूह के सदस्य होने के नाते, विशेष देखभाल और सुरक्षा के हकदार हैं। संविधान निर्माताओं ने यह परिकल्पना की थी कि बच्चों के साथ, उनकी अपरिपक्वता और संवेदनशीलता के कारण, वयस्कों से अलग व्यवहार किया जाना चाहिए और उन्हें दंड के बजाय सुधार के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए। इस प्रकार, किशोर न्याय के संवैधानिक आयाम समानता के सिद्धांत और सम्मानपूर्वक जीवन के अधिकार, दोनों में निहित हैं, जिन्हें बचपन की रक्षा के लिए राज्य के निर्देश द्वारा बल मिलता है।

1. समानता और विशेष संरक्षण का अधिकार (अनुच्छेद 14 और 15)

अनुच्छेद 14 – विधि के समक्ष समता और विधियों का समान संरक्षण

अनुच्छेद 14 यह सुनिश्चित करता है कि प्रत्येक व्यक्ति विधि के समक्ष

समता और विधियों के समान संरक्षण का हकदार है। हालाँकि, सर्वोच्च न्यायालय ने लगातार यह माना है कि समानता का अर्थ सभी परिस्थितियों में समान व्यवहार नहीं है। राज्य को वास्तविक न्याय प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों को उचित श्रेणियों में वर्गीकृत करने का अधिकार है। किशोर न्याय के संदर्भ में, किशोरों और वयस्कों के बीच वर्गीकरण संवैधानिक रूप से मान्य है क्योंकि यह एक सुबोध अंतर – बच्चों की मानसिक और मनोवैज्ञानिक अपरिपक्वता – पर आधारित है और इस वर्गीकरण का विधि के उद्देश्य, अर्थात् उनके सुधार और पुनर्वास, के साथ एक तर्कसंगत संबंध है। इस प्रकार, किशोर न्याय (बालकों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015, अनुच्छेद 14 से संवैधानिक औचित्य प्राप्त करता है क्योंकि यह मानता है कि बच्चों के साथ वयस्क अपराधियों से भिन्न व्यवहार किया जाना चाहिए। अधिनियम के अंतर्गत पृथक प्रक्रिया, संस्थागत ढाँचा और दण्ड-प्रणाली, उचित वर्गीकरण के इस सिद्धांत का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

अनुच्छेद 15(3) – बच्चों के लिए विशेष प्रावधान – अनुच्छेद 15(3) राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान करने का अधिकार देता है। यह प्रावधान केवल समानता से आगे बढ़कर उनकी सुरक्षा और उन्नति के लिए सकारात्मक कार्रवाई की अनुमति देता है। किशोर न्याय कानून ऐसा ही एक विशेष उपाय है, जिसे यह सुनिश्चित करने के लिए तैयार किया गया है कि बच्चों को उनकी आयु, भेद्यता और विकासात्मक आवश्यकताओं के अनुरूप कानूनी सुरक्षा प्राप्त हो। गौरव जैन बनाम भारत संघ (1997) में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि संविधान न केवल राज्य को बच्चों के सामाजिक और नैतिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रावधान करने की अनुमति देता है, बल्कि उसे ऐसा करने का आदेश भी देता है। इसलिए, विधि का उल्लंघन करने वाले किशोरों के साथ विशेष व्यवहार भेदभावपूर्ण नहीं है, बल्कि अनुच्छेद 15(3) से उत्पन्न एक संवैधानिक दायित्व है।

2. जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 21) – अनुच्छेद 21, जो यह गारंटी देता है कि 'किसी भी व्यक्ति को विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित किया जाएगा,'की व्यापक व्याख्या की गई है और इसमें मानवीय गरिमा, शिक्षा, सुरक्षा और विकास के साथ जीने का अधिकार भी शामिल है। यह प्रावधान किशोर न्याय का संवैधानिक आधार है। शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986) में, सर्वोच्च न्यायालय ने घोषित किया कि बच्चों को जेलों में बंद रखना अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है और अलग रिमांड और संप्रेक्षण गृह स्थापित करने का निर्देश दिया। इसी प्रकार, फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली (1981) में, न्यायालय ने जीवन के अधिकार की व्याख्या गरिमा और मानवीय परिस्थितियों के साथ जीने के अधिकार के रूप में की – ये सिद्धांत राज्य की हिरासत में बच्चों पर भी समान रूप से लागू होते हैं। इसलिए, किशोर न्याय प्रणाली अपना पुनर्वासात्मक और सुधारात्मक स्वरूप अनुच्छेद 21 से प्राप्त करती है। कोई भी कानून या प्रक्रिया जो बच्चों के साथ कठोर, अमानवीय या वयस्कों जैसा दंडात्मक व्यवहार करती है, असंवैधानिक होगी, क्योंकि यह उनके सम्मानपूर्वक जीवन जीने के अधिकार का उल्लंघन करेगी।

3. राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत (अनुच्छेद 39(ई), 39(एफ), 45 और 47)– यद्यपि ये निर्देशक सिद्धांत न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय नहीं हैं, फिर भी ये नीतियाँ और कानून बनाने में राज्य का मार्गदर्शन करते हैं। ये किशोर न्याय की व्याख्या और कार्यान्वयन के लिए नैतिक दिशानिर्देश प्रदान करते हैं।

अनुच्छेद 39(ई) और (एफ): बाल्यावस्था और युवावस्था का संरक्षण अनुच्छेद 39(ई) राज्य को यह सुनिश्चित करने का निर्देश देता है कि 'श्रमिकों, पुरुषों और महिलाओं, तथा बच्चों की कोमल अवस्था के स्वास्थ्य और शक्ति का दुरुपयोग न हो,' जबकि अनुच्छेद 39(एफ) यह अनिवार्य करता है कि 'बच्चों को स्वस्थ तरीके से और स्वतंत्रता एवं गरिमा की परिस्थितियों में विकसित होने के अवसर और सुविधाएँ प्रदान की जाएँ।' यह इस बात पर भी जोर देता है कि बचपन और युवावस्था को शोषण, नैतिक और भौतिक परित्याग से बचाया जाए। ये सिद्धांत स्पष्ट रूप से दुर्व्यवहार, उपेक्षा और अपराध को रोकने के राज्य के कर्तव्य को मान्यता देते हैं, जो किशोर न्याय अधिनियम का दार्शनिक आधार है। स्वस्थ विकास और गरिमा पर जोर कानून का उल्लंघन करने वाले किशोरों के पुनर्वास, परामर्श और पुर्न:कीकरण के प्रावधानों में प्रति/वनित होता है। लक्ष्मी कांत पांडे बनाम भारत संघ (1984) में, सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 39(f) का सहारा लेकर गोद लेने और बाल संरक्षण के मामलों में बच्चे के कल्याण की सर्वोपरिता पर जोर दिया, जिससे प्रत्येक बच्चे के विकास और गरिमा को सुरक्षित रखने के राज्य के कर्तव्य पर बल मिला।

अनुच्छेद 45 – प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा का प्रावधान 86वें संविधान संशोधन द्वारा संशोधित अनुच्छेद 45, राज्य को सभी बच्चों के लिए छह वर्ष की आयु पूरी करने तक प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा प्रदान करने का निर्देश देता है। यह अपराध के विरुद्ध एक महत्वपूर्ण निवारक उपाय है, क्योंकि प्रारंभिक बचपन की शिक्षा और देखभाल बाद के जीवन में भावनात्मक स्थिरता, सामाजिक उत्तरदायित्व और वैध व्यवहार के निर्माण में सहायक होती है।

अनुच्छेद 47 पोषण और सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार के लिए राज्य के दायित्व पर बल देता है।

बाल स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता, यह स्वीकार करते हुए कि गरीबी, कुपोषण और उपेक्षा किशोर अपराध के मूल कारण हैं। सामाजिक-आर्थिक अभाव और किशोर अपराध के बीच संबंध इस बात पर जोर देता है कि किशोर न्याय केवल एक आपराधिक कानून का मुद्दा नहीं है, बल्कि संविधान के तहत एक विकासात्मक और कल्याणकारी चिंता का विषय है।

4. अनुच्छेद 23 और 24: शोषण से सुरक्षा – अनुच्छेद 23 तस्करी, बेगार (जबरन श्रम) और इसी तरह के शोषण का निषेध करता है। कानून का उल्लंघन करने वाले कई किशोर अपराध करने से पहले तस्करी, बाल श्रम या यौन शोषण के शिकार होते हैं। इसे स्वीकार करते हुए, संविधान ऐसे बच्चों को कड़ी सुरक्षा प्रदान करता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि उनके साथ देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले पीड़ितों के रूप में व्यवहार किया जाए, न कि दंडित किए जाने वाले अपराधियों के रूप में।

अनुच्छेद 24 – खतरनाक व्यवसायों में बच्चों के रोजगार का निषेध अनुच्छेद 24 खतरनाक उद्योगों में 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के रोजगार पर प्रतिबंध लगाता है। यह उन सामाजिक-आर्थिक कमजोरियों का समाधान करके किशोर न्याय को पूरक बनाता है जो बच्चों को कानून के साथ टकराव में धकेलती हैं। बाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 और बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009

जैसे कानून इस संवैधानिक अधिदेश को क्रियान्वित करते हैं और किशोर न्याय के व्यापक निवारक ढाँचे में योगदान करते हैं।

5. मौलिक कर्तव्य (अनुच्छेद 51A)–अनुच्छेद 51A(k) माता-पिता या अभिभावकों पर छह से चौदह वर्ष की आयु के अपने बच्चों को शिक्षा के अवसर प्रदान करने का मौलिक कर्तव्य आरोपित करता है। यह प्रावधान बच्चों के पालन-पोषण और शिक्षा को सुनिश्चित करने में राज्य और समाज की साझा जिम्मेदारी को मान्यता देता है, और उन परिस्थितियों को रोकता है जो उन्हें अपराध की ओर ले जा सकती हैं। एक सुशिक्षित और सामाजिक रूप से एकीकृत बच्चे के कानून के साथ टकराव में आने की संभावना कम होती है।

6. न्यायिक व्याख्या और संवैधानिक विकास– भारत के सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने किशोर न्याय के संवैधानिक अर्थ को विस्तारित करने में निर्णायक भूमिका निभाई है। न्यायिक सक्रियता ने यह सुनिश्चित किया है कि बच्चों के अधिकारों को मौलिक अधिकारों और मानवीय गरिमा के व्यापक ढाँचे में शामिल किया जाए।

कुछ ऐतिहासिक निर्णयों में शामिल हैं:

1. **शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986) –** न्यायालय ने कहा कि किशोरों को जेलों में बंद नहीं किया जाना चाहिए और उन्हें अलग सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए।
2. **एम.सी. मेहता बनाम तमिलनाडु राज्य (1996) –** न्यायालय ने बाल श्रम और किशोर न्याय को जोड़ा और शिक्षा को एक संवैधानिक अधिकार के रूप में महत्व दिया।
3. **सलिल बाली बनाम भारत संघ (2013) –** न्यायालय ने किशोर न्याय अधिनियम, 2000 को संवैधानिक मूल्यों और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं के अनुरूप माना और कहा कि 'प्रतिशोधात्मक न्याय की तुलना में सुधारात्मक न्याय को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।'
4. **डॉ. सुब्रमण्यम स्वामी बनाम राजू (2014) –** न्यायालय ने किशोरों के लिए अलग व्यवहार निर्धारित करने की विधायी क्षमता को मान्यता दी, लेकिन आगाह किया कि ऐसे उपाय संवैधानिक सुरक्षा उपायों के अनुरूप होने चाहिए।

इन निर्णयों के माध्यम से, न्यायपालिका ने इस बात की पुष्टि की है कि किशोर न्याय प्रणाली संवैधानिक नैतिकता का एक विस्तार है, जिसका उद्देश्य बच्चों को दंडित करना नहीं, बल्कि उनकी रक्षा करना है।

7. मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच अंतर्संबंध– मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के बीच तालमेल बच्चों के लिए संवैधानिक दृष्टिकोण की आत्मा है। जहाँ मौलिक अधिकार समानता और सम्मान जैसे प्रवर्तनीय अधिकारों की गारंटी देते हैं, वहीं नीति निर्देशक सिद्धांत इन अधिकारों को साकार करने के लिए सामाजिक-आर्थिक संदर्भ प्रदान करते हैं। इसलिए, किशोर न्याय अधिनियम को इस संवैधानिक संश्लेषण के विधायी अवतार के रूप में देखा जा सकता है, जो संरक्षण, शिक्षा और पुनर्वास के मूल्यों को प्रवर्तनीय प्रक्रियाओं और संस्थाओं में रूपांतरित करता है।

भारत में किशोर न्याय के मानवाधिकार आयाम– किशोर न्याय केवल एक घरेलू कानूनी चिंता नहीं हैय यह बच्चों के संरक्षण और कल्याण के व्यापक वैश्विक ढाँचे में अंतर्निहित एक मानवाधिकार अनिवार्यता है। कानून का उल्लंघन करने वाले बच्चों के साथ व्यवहार, मानवाधिकारों और सामाजिक न्याय के प्रति किसी राष्ट्र की प्रतिबद्धता की कसौटी है।

भारत में, किशोर न्याय के मानवाधिकार आयाम दो परस्पर जुड़े आधारों पर आधारित हैं:

1. विभिन्न सम्मेलनों, घोषणाओं और दिशानिर्देशों के तहत भारत के अंतर्राष्ट्रीय दायित्व और
2. संवैधानिक व्याख्या और न्यायिक सक्रियता के माध्यम से विकसित मानवाधिकार न्यायशास्त्र।

ये सिद्धांत मिलकर इस बात पर जोर देते हैं कि प्रत्येक बच्चा, चाहे उसकी पृष्ठभूमि या अपराध कुछ भी हो, सम्मान, निष्पक्ष व्यवहार और सुधार एवं पुन: एकीकरण के अवसर का हकदार है। इस प्रकार, किशोर न्याय, आपराधिक कानून से आगे बढ़कर विकास के अधिकार, सम्मानपूर्वक जीवन के अधिकार, मनमाने ढंग से हिरासत में लिए जाने के विरुद्ध अधिकार और निष्पक्ष एवं मानवीय प्रक्रिया के अधिकार को भी समाहित करता है।

1. भारत में किशोर न्याय को प्रभावित करने वाले अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरण – किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 सहित भारत का किशोर न्याय ढाँचा, अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों से गहराई से प्रभावित है। इन वैश्विक मानदंडों ने भारत की नीति और विधान को बाल-केंद्रित, पुनर्वासात्मक मॉडल की ओर अग्रसर किया है।

(क) संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन (यूएनसीआरसी), 1989

भारत द्वारा 1992 में अनुसमर्थित यूएनसीआरसी, अंतर्राष्ट्रीय बाल अधिकार कानून की आधारशिला है। यह 18 वर्ष से कम आयु के प्रत्येक व्यक्ति को बालक के रूप में परिभाषित करता है और यह अनिवार्य करता है कि कानून तोड़ने के आरोपी प्रत्येक बच्चे के साथ उसकी गरिमा और मूल्य के सम्मान के साथ व्यवहार किया जाना चाहिए।

किशोर न्याय से संबंधित प्रमुख प्रावधानों में शामिल हैं:

1. **अनुच्छेद 37(ख)–** किसी बच्चे को हिरासत में रखना या कारावास देना अंतिम उपाय होगा और कम से कम उचित अवधि के लिए होगा।
2. **अनुच्छेद 40–** यह सुनिश्चित करता है कि किसी अपराध के आरोपी बच्चों के साथ उनके सम्मान, मूल्य और समाज में पुन: एकीकरण की भावना के अनुरूप व्यवहार किया जाए।
3. **अनुच्छेद 3–** बच्चों से संबंधित सभी कार्यों में उनके सर्वोत्तम हितों को प्राथमिकता दी जाएगी।
4. **अनुच्छेद 12–** बच्चों को न्यायिक और प्रशासनिक कार्यवाहियों में सुनवाई का अधिकार है।

किशोर न्याय अधिनियम, 2000 और बाद में 2015 का अधिनियम, भारतीय कानून को इन दायित्वों के अनुरूप बनाने के लिए लागू किया गया था, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि किशोर अपराधियों के साथ करुणा और विकासात्मक संवेदनशीलता के साथ व्यवहार किया जाए।

(ख) किशोर न्याय प्रशासन के लिए संयुक्त राष्ट्र मानक न्यूनतम नियम (बीजिंग नियम), 1985

बीजिंग नियम दुनिया भर में किशोर न्याय प्रणालियों के लिए व्यापक मानक निर्धारित करते हैं। वे इस पर जोर देते हैं:

1. विपथन और समुदाय-आधारित कार्यक्रमों के माध्यम से न्यायिक कार्यवाही से बचना।
2. स्थिति अपराधों (ऐसे कृत्य जो वयस्कों के लिए अपराध नहीं हैं, जैसे

स्कूल से अनुपस्थित रहना या भाग जाना) का गैर-अपराधीकण।

3. सजा में आनुपातिकता और हिरासत के दौरान मानवाधिकारों का सम्मान।

इन सिद्धांतों ने अलग किशोर न्याय बोर्ड बनाने और कारावास की बजाय पुनर्वास को बढ़ावा देने के भारतीय दृष्टिकोण का मार्गदर्शन किया है।

(ग) किशोर अपराध निवारण हेतु संयुक्त राष्ट्र दिशानिर्देश (रियाद दिशानिर्देश), 1990

रियाद दिशानिर्देश किशोर अपराध को जन्म देने वाली सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का समाधान करके किशोर अपराध को रोकने पर केंद्रित हैं। वे निम्नलिखित की वकालत करते हैं:

1. परिवार और समुदाय-आधारित हस्तक्षेपय
2. शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षणय
3. संस्थागतीकरण को न्यूनतम करना।

ये विचार भारतीय संविधान के अंतर्गत राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों और किशोर न्याय अधिनियम के पुनर्वास संबंधी फोकस के अनुरूप हैं।

(घ) स्वतंत्रता से वंचित किशोरों के संरक्षण हेतु संयुक्त राष्ट्र नियम (हवाना नियम), 1990

ये नियम हिरासत में रखे गए किशोरों के लिए मानवीय परिस्थितियों का निर्धारण करते हैं, जिनमें शामिल हैं:

1. वयस्कों से अलगाव।
2. शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और पारिवारिक संपर्क तक पहुँच।
3. क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार का निषेध।

भारतीय न्यायालयों ने, विशेष रूप से शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986) मामले में, किशोरों को वयस्कों के साथ बंदी बनाए रखने और अलग संप्रेक्षण गृहों में रहने का आदेश देने के लिए इसी तरह के सिद्धांतों का हवाला दिया है।

3. किशोर न्याय के आधारभूत मानवाधिकार सिद्धांत – किशोर न्याय का दर्शन उन प्रमुख मानवाधिकार सिद्धांतों पर आधारित है जो प्रत्येक बच्चे के लिए निष्पक्षता, सम्मान और पुनर्वास सुनिश्चित करते हैं।

(क) गरिमा और मूल्य का सिद्धांत – प्रत्येक बच्चे में, चाहे उसके कर्म कुछ भी हों, अंतर्निहित गरिमा होती है। किशोर न्याय का केंद्र दंड नहीं, बल्कि सुधार और सामाजिक पुनर्मिलन है। बीजिंग नियम और यूएनसीआरसी इस बात पर जोर देते हैं कि बच्चों के साथ कभी भी अपराधी जैसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि उन्हें मार्गदर्शन और सहायता की आवश्यकता वाले व्यक्तियों के रूप में माना जाना चाहिए।

(ख) भेदभाव न करने का सिद्धांत – मानवाधिकार कानून सभी बच्चों के लिए समान सुरक्षा का आदेश देता है। भारतीय कानूनी ढांचा संविधान के अनुच्छेद 14 और किशोर न्याय अधिनियम की धारा 3 के माध्यम से इस सिद्धांत को कायम रखता है, जिसके अनुसार धर्म, जाति, लिंग या सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि जैसे आधारों पर कोई भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।

(ग) बाल हित का सिद्धांत – यूएनसीआरसी (अनुच्छेद 3) का मूल सिद्धांत यह है कि बच्चों से संबंधित सभी कार्यों – न्यायिक, प्रशासनिक या विधायी – में उनके सर्वोत्तम हित सर्वोपरि होने चाहिए। भारतीय न्यायालयों ने, एल.के. पांडे बनाम भारत संघ (1984) जैसे मामलों में, बाल-संबंधी निर्णयों के लिए इस सिद्धांत को निरंतर मार्गदर्शक के रूप में स्वीकार किया है।

घ) निष्पक्ष सुनवाई और कानूनी सहायता का अधिकार – यूएनसीआरसी के अनुच्छेद 40 और भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत, कानून का उल्लंघन करने वाले प्रत्येक बच्चे को कानूनी सहायता, भागीदारी और निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार है। अधिनियम के तहत स्थापित किशोर न्याय बोर्ड यह सुनिश्चित करते हैं कि कार्यवाही बाल-अनुकूल, अनौपचारिक हो और आपराधिक प्रक्रिया की कठोरता के बजाय सामाजिक और मनोवैज्ञानिक समझ से निर्देशित हो।

(ङ) पुनर्वास और पुर्न:कीकरण का सिद्धांत – मानवाधिकार न्यायशास्त्र किशोरों के लिए प्रतिशोध को अस्वीकार करता है, और इसके बजाय समाज में उनके पुर्न:कीकरण पर ध्यान केंद्रित करता है। किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की धारा 3(xii) इस बात को स्पष्ट करती है कि पुनर्वास और सामाजिक पुन: एकीकरण, किसी भी बच्चे के संबंध में किसी भी निर्णय का प्राथमिक उद्देश्य होना चाहिए।

बहस: किशोर न्याय अधिनियम, 2015 और मानवाधिकार संबंधी चिंताएँ

किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 ने 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों पर उनकी मानसिक और शारीरिक क्षमता के प्रारंभिक आकलन के आधार पर जघन्य अपराधों के लिए वयस्कों की तरह मुकदमा चलाने की अनुमति देकर, पहले के मॉडलों से एक महत्वपूर्ण बदलाव किया।

यद्यपि इस प्रावधान का उद्देश्य 2012 के दिल्ली सामूहिक बलात्कार मामले के बाद जनाक्रोश को दूर करना था, लेकिन इसने गंभीर मानवाधिकार और संवैधानिक चिंताओं को जन्म दिया।

(क) अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं का उल्लंघन – संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार संरक्षण आयोग (यूएनसीआरसी) स्पष्ट रूप से 18 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों पर वयस्कों की तरह मुकदमा चलाने पर रोक लगाता है। इस भेद को लागू करके, भारत ने 'बच्चों के सर्वोत्ताम हित' सिद्धांत और अंतर्राष्ट्रीय किशोर न्याय मानदंडों के मूल में स्थित पुनर्वास आदर्श के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को कमजोर किया है।

(ख) व्यक्तिपरकता और मनमाने निर्णय लेने का जोखिम – किशोर न्याय बोर्ड द्वारा यह निर्धारित करने के लिए किया जाने वाला 'प्रारंभिक मूल्यांकन' कि क्या किसी बच्चे में वयस्क के रूप में मुकदमा चलाने की परिपक्वता है, अत्यधिक व्यक्तिपरकता का परिचय देता है। उचित मनोवैज्ञानिक विशेषज्ञता और प्रशिक्षण के बिना, ऐसे मूल्यांकन मनमाने या भेदभावपूर्ण परिणामों को जन्म दे सकते हैं, जो अनुच्छेद 21 के तहत निष्पक्ष प्रक्रिया के अधिकार का उल्लंघन करते हैं।

(ग) पुनर्वास दर्शन का क्षरण – मानवाधिकार कानून इस बात की वकालत करता है कि कोई भी बच्चा सुधार से परे नहीं है। हालाँकि, 2015 का संशोधन प्रतिशोध और निवारण पर ध्यान केंद्रित करता है, जिससे बाल संरक्षण और पुनर्स्थापनात्मक न्याय में दशकों की प्रगति कमजोर होती है।

(घ) हाशिए पर पड़े बच्चों पर असमानुपातिक प्रभाव – अध्ययनों से पता चलता है कि कानून का उल्लंघन करने वाले किशोरों का एक बड़ा हिस्सा गरीब या सामाजिक रूप से हाशिए पर रहने वाली पृष्ठभूमि से आता है। वयस्क मुकदमे का प्रावधान इन बच्चों को असमानुपातिक रूप से प्रभावित

करता है, जो समानता और सामाजिक न्याय के मानवाधिकार सिद्धांत का उल्लंघन करता है।

किशोर न्याय में मानवाधिकार मुद्दों पर न्यायिक प्रतिक्रियाएँ – भारतीय न्यायालयों ने न्याय प्रणाली के अंतर्गत बच्चों के मानवाधिकारों की रक्षा के लिए अक्सर हस्तक्षेप किया है।

1. **शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986)-** सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि बच्चों को जेलों में नहीं रखा जाना चाहिए और उनके साथ मानवीय व्यवहार, शिक्षा और पुनर्वास पर जोर दिया।
2. **सलिल बाली बनाम भारत संघ (2013)-** न्यायालय ने 2000 के अधिनियम की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा और इस बात पर जोर दिया कि ध्यान पुनर्वास पर होना चाहिए, न कि प्रतिशोध पर।
3. **डॉ. सुब्रमण्यम स्वामी बनाम राजू (2014)-** आयु सीमा पर कानून बनाने के संसद के अधिकार को बरकरार रखते हुए, न्यायालय ने आग्रह किया कि सभी प्रक्रियाएँ संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग (यूएनसीआरसी) के तहत भारत के दायित्वों के अनुरूप होनी चाहिए।
4. **विषय- अनाथालयों में बच्चों का शोषण (2017)-** सर्वोच्च न्यायालय ने राज्यों को बाल देखभाल संस्थानों की स्थितियों में सुधार करने का निर्देश दिया, और स्वतंत्रता से वंचित बच्चों के मानवाधिकारों को मान्यता दी।

इस प्रकार, न्यायिक व्याख्या ने इस विचार को लगातार पुष्ट किया है कि किशोर न्याय एक मानवाधिकार मुद्दा है, जो गरिमा, करुणा और निष्पक्षता पर आधारित है।

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार निकायों की भूमिका

क) राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एनएचआरसी) – एनएचआरसी किशोर गृहों की निगरानी, मानवीय व्यवहार के लिए दिशानिर्देश जारी करने और बाल न्याय प्रणाली में सुधारों की सिफारिश करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। इसकी आवधिक रिपोर्टों ने संप्रेक्षण गृहों में भीड़भाड़, परामर्श का अभाव और मानवाधिकारों के उल्लंघन जैसी प्रणालीगत समस्याओं का खुलासा किया है।

ख) राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (एनसीपीसीआर) – बाल अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 के तहत स्थापित, एनसीपीसीआर यह सुनिश्चित करता है कि सभी कानून, नीतियाँ और कार्यक्रम यूएनसीआरसी के सिद्धांतों के अनुरूप हों। यह नियमित रूप से बाल देखभाल संस्थानों का निरीक्षण करता है और किशोर न्याय सुधारों पर सलाह देता है।

ग) यूनिसेफ और अंतर्राष्ट्रीय वकालत – यूनिसेफ इंडिया किशोर न्याय तंत्र को मजबूत करने के लिए सरकारी एजेंसियों और गैर-सरकारी संगठनों के साथ सहयोग करता है, जिसमें प्रशिक्षण, बाल-अनुकूल न्यायालयों और डायवर्जन कार्यक्रमों पर ध्यान केंद्रित किया जाता है।

मानवाधिकार चुनौतीव्यवहार में परिवर्तन – एक विस्तृत कानूनी ढाँचे के बावजूद, किशोर न्याय में मानवाधिकारों की प्राप्ति कई व्यावहारिक चुनौतियों का सामना करती है:

1. अतिव्यस्त और संसाधनों से वंचित संप्रेक्षण गृह।
2. किशोरों के लिए अपर्याप्त कानूनी सहायता और मनोवैज्ञानिक समर्थन।
3. सामाजिक-आर्थिक पूर्वाग्रहकृअधिकांश किशोर हाशिए की पृष्ठभूमि से आते हैं।
4. मीडिया सनसनीखेजता, जो किशोर अपराधियों को शैतानी रूप में प्रस्तुत करती है और उनकी निजता और सम्मान के अधिकार को कमजोर करती है।
5. रिहाई के बाद पुनर्वास निगरानी का अभाव, जिसके कारण पुन: अपराध और सामाजिक बहिष्कार होता है।

ये चुनौतियाँ भारत के मानवाधिकार दायित्वों और किशोर न्याय प्रशासन की जमीनी हकीकत के बीच के अंतर को उजागर करती हैं।

मानवाधिकार-आधारित सुझाव

1. **पुनर्वास और विपथन कार्यक्रमों को मजबूत बनाएँ-** कारावास के समुदाय-आधारित विकल्पों का विस्तार करें और शिक्षा एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण पर ध्यान केंद्रित करें।
2. **किशोर न्याय बोर्डों की क्षमता बढ़ाएँ-** बच्चों के प्रति संवेदनशील और सूचित मूल्यांकन सुनिश्चित करने के लिए प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं को शामिल करें।
3. **गोपनीयता और सम्मान की रक्षा करें-** किशोरों की पहचान उजागर होने से रोकने के लिए सख्त मीडिया नियम लागू करें।
4. **पुनर्स्थापनात्मक न्याय मॉडल को बढ़ावा दें-** मानवाधिकार मूल्यों के अनुरूप पीड़ित-अपराधी मध्यस्थता और सुलह कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करें।
5. **आवधिक मानवाधिकार ऑडिट-** एनएचआरसीध्एनसीपीसीआर द्वारा बाल देखभाल गृहों और किशोर सुविधाओं के ऑडिट को संस्थागत रूप दें।
6. **जागरूकता और संवेदनशीलता-** मानवीय व्यवहार सुनिश्चित करने के लिए पुलिस, न्यायपालिका और परिवीक्षा अधिकारियों के लिए निरंतर मानवाधिकार प्रशिक्षण।

कार्यान्वयन में चुनौतियाँ

1. प्रगतिशील कानूनों के बावजूद, भारत में किशोर न्याय प्रणाली गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है:
2. संरक्षण गृहों और बाल कल्याण संस्थानों में अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा।
3. मनोवैज्ञानिकों, परिवीक्षा अधिकारियों और सामाजिक कार्यकर्ताओं सहित प्रशिक्षित कर्मियों की कमी।?
4. बच्चों की सामाजिक-आर्थिक कमजोरी के कारण कानून के साथ टकराव के बार-बार चक्र चलते हैं।
5. विभिन्न हितधारकों - पुलिस, न्यायपालिका और बाल संरक्षण इकाइयों - के बीच खराब समन्वय।
6. जनता की धारणा और मीडिया की सनसनीखेजता, जो अक्सर पुनर्वास के बजाय दंडात्मक न्याय की माँग करती है।

ये चुनौतियाँ संवैधानिक दृष्टिकोण और जमीनी हकीकत के बीच के अंतर को दर्शाती हैं।

आगे की राह:

1. **पुनर्वास को मूल सिद्धांत के रूप में पुन: स्थापित करें –** किशोर न्याय प्रणाली को अनुच्छेद 14, 21 और 39(f) के अनुरूप सुधारात्मक और पुनर्स्थापनात्मक दृष्टिकोणों को प्राथमिकता देनी चाहिए।
2. **संस्थागत क्षमता को मजबूत करें –** संप्रेक्षण गृहों और बाल कल्याण बोर्डों को बेहतर वित्त पोषण, बुनियादी ढाँचे और प्रशिक्षण की

आवश्यकता है।

3. **मनोवैज्ञानिक और सामाजिक पुर्नःकीकरण कार्यक्रम –** पुनरावृत्ति को कम करने के लिए परामर्श, व्यावसायिक प्रशिक्षण और रिहाई के बाद निगरानी आवश्यक है।
4. **कानून प्रवर्तन एजेंसियों का संवेदीकरण –** पुलिस और न्यायिक अधिकारियों को बाल अधिकारों और आघात-सूचित प्रक्रियाओं में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
5. **जन जागरूकता और मीडिया उत्तरदायित्व –** जनधारणा मानवाधिकार सिद्धांतों के अनुरूप होनी चाहिए, जिससे दंडात्मक लोकलुभावनवाद को हतोत्साहित किया जा सके।

निष्कर्ष – भारत में किशोर न्याय के संवैधानिक और मानवाधिकार आयाम करुणा, समानता और मानवीय गरिमा के आदर्शों को मूर्त रूप देते हैं। हालाँकि संवैधानिक ढाँचा बच्चों के लिए विशेष सुरक्षा और पुनर्वास का आदेश देता है, और अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन इन दायित्वों को सुदृढ़ करते हैं, फिर भी इन आदर्शों का व्यावहारिक कार्यान्वयन चुनौतियों से भरा हुआ है। किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015, प्रगति और विरोधाभास दोनों का प्रतिनिधित्व करता है – बाल कल्याण तंत्रों को शामिल करने में प्रगतिशील, फिर भी किशोरों के लिए वयस्क मुकदमों की अनुमति देने में प्रतिगामी। एक सच्चे संवैधानिक और अधिकार-आधारित किशोर न्याय प्रणाली को प्रतिशोध से आगे बढ़कर सुधार, सामाजिक एकीकरण और प्रत्येक बच्चे की अंतर्निहित गरिमा पर ध्यान केंद्रित करना होगा। इन सिद्धांतों का पालन करना न केवल एक कानूनी आदेश है, बल्कि एक मानवीय और न्यायपूर्ण समाज के निर्माण की दिशा में एक नैतिक दायित्व भी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Constitution of India, 1950.
2. Sheela Barse v. Union of India, AIR 1986 SC 1773.
3. M.C. Mehta v. State of Tamil Nadu, AIR 1996 SC 699.
4. Salil Bali v. Union of India, (2013) 7 SCC 705.
5. Dr. Subramanian Swamy v. Raju, (2014) 8 SCC 390.
6. Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015.
7. United Nations Convention on the Rights of the Child, 1989.
8. National Human Rights Commission, Annual Report on Child Rights, 2022.
9. UNICEF India, Children in Conflict with the Law: Policy and Practice Review, 2021.
10. Baxi, Upendra. The Future of Human Rights. Oxford University Press, 2012.
11. Bajpai, Asha. Child Rights in India: Law, Policy, and Practice. Oxford University Press, 2018.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यटन की समभावनाएं जवाई-लूनी बेसिन के विशेष संदर्भ में एक अध्ययन

डॉ. उम्मेद कुमार चौधरी*

* सह आचार्य (भूगोल) राजकीय महाविद्यालय, बाली (राज.) भारत

प्रस्तावना – पर्यटन कई देशों में अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। पर्यटन के आर्थिक प्रभाव से होने वाली आय और रोजगार के प्रभाव महत्वपूर्ण हैं और पर्यटन विकास को बढ़ावा देने और बनाए रखने वाली नीतियां इन आर्थिक लाभों को प्रदान करने में एक आवश्यक भूमिका निभाती हैं। इस क्षेत्र पर नीति निर्माताओं और जनता का बहुत ध्यान जाता है, अधिकांश देशों में पर्यटन के आर्थिक महत्व को लगातार कम आंका गया हैं। लेकिन भारत में पर्यटन अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण क्षेत्रो में से एक है। भारत अपनी भौगोलिक विविधता, समृद्ध इतिहास एवं संस्कृति इसकी सुंदरता हर साल दूनिया के कोने कोने से पर्यटकों को आकर्षित करती है। ऐतिहासिक व आध्यात्मिक पर्यटन के विश्व प्रसिद्ध स्थानों जैसे महलों, मंदिर, दुर्ग, किलों से लेकर गुफाओं और शिल्पकला तक, भारतीयों की विविध संस्कृति परम्पराएं, रिति-रिवाज, मेले त्यौहार आदि दूनियां के लोगों के लिए भारत में पर्यटन की यात्रा का कारण प्रदान करता है। भारत के आर्थिक विकास और समग्र विकास के साथ पर्यटन का मजबूत संबंध है। यह न केवल देश के सकल घरेलू उत्पादन और विदेशी मृद्रा में महत्वपूर्ण योगदान देता है, बल्की देश की आर्थिक सवृद्धि और रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

राजस्थान को पर्यटन के क्षेत्र में न केवल देश में अपितु विश्व पर्यटन मानचित्र पर प्रमुखता से जाना जाता है। राजस्थान को सदियों से अपनी गौरवगाथा, ऐतिहासिक स्थलों, किलों, महलों एवं हवेलियों, ऐतिहासिक एवं कलात्मक बाड़ियों, झीलों, कला एवं संस्कृति, मेलों एवं उत्सवों, शास्त्रीय एवं लोक संगीतों व नृत्यों, हस्तकलाओं, तीर्थस्थलों, प्राकृतिक सौन्दर्य, पशु-पक्षी अभ्यारण्य, पर्वतों एवं मरुस्थलीय घोरों के कारण देश-विदेश में सराहा जाता है। यही कारण है कि राजस्थान आये बिना पर्यटकों की भारत पर्यटन यात्रा अधूरी रहती है।

ग्रामीण पर्यटन एक ऐसा क्षेत्र है या ग्रामीण जीवन से संबंधित क्षेत्र परिलक्षित होते हैं जैसे ग्रामीण जीवन शैली, कला और ग्रामीण संस्कृति आदि, भारत गांवो का देश है जहां लगभग 68.4% जनसंख्या गांवो में निवास करती है। प्रत्येक गांव की अपनी अलग-अलग संस्कृति, भाषा, खान-पान पहनावा आदि होता है, चुकि भारत जैसे देश में जिसमें विविधता और अनेकता का समायोजन दिखाई देता है वहीं गांवो में भी भौगोलिक, सामाजिक एवं संस्कृति विविधता देखने को मिलती है। गांवो में प्रकृति का सौंदर्य बिखरा हुआ पड़ा है, यहां की लोककला हस्तशिल्प व संस्कृति पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए पर्याप्त है।

अध्ययन क्षेत्र– गोडवाड़ क्षेत्र 'गीरीवाड़' (पहाडों का प्रदेश) का अपभ्रंश है, जो अरावली पर्वतमाला से घिरा है। भौगोलिक रूप से इसे मूलत: लूनी बेसिन या लूनी-जवाई बेसिन क्षेत्र के नाम से पहचाना जाता है जो कि अरावली पर्वतमाला से निकले वाली लूनी और उसकी सहायक नदियों जवाई, सुकडी आदि का अपवाह क्षेत्र है।प्रशासनिक दृष्टि से गोड़वाड क्षेत्र में राजस्थान के पाली, जालोर, सिरोही व बालोतरा (आंशिक रूपों) जिला को शामिल किया गया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में पाली जिले के देसूरी, बाली, रानी तथा सुमेरपुर उपखण्ड क्षेत्र के प्रमुख पर्यटक स्थलों को शामिल किया गया है। यह अरावली पर्वत का पहाडी भाग है। जो अपार प्राकृतिक सुन्दरता से घिरा ऐतिहासिक व धार्मिक क्षेत्र है, पर्यटक प्रकृति को निहारने और मन की शांति के लिए प्रतिवर्ष लाखों पर्यटक यहां पहुचते है। यहां प्रमुख स्थलों में रणकपुर, जवाईबांध, परशुराम महादेव, स्वर्ण जैन मन्दिर फालना, सोनाणा खेतलाजी, जूना खेडा व आशापुरा मन्दिर नाडोल, जैकल पर्वत नारलाई, निम्बो का नाथ (साण्डेराव) इसके अलावा राणकपुर व जवाई जंगल सफारी व राणकपुर - जवांई महोत्सव आदि है।

शोध उद्देश्य– प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य अध्ययन क्षेत्र के सबसे संभावित स्थलों की पहचान कर, ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक एवं सामाजिक लाभ प्राप्त कर, रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना एवं राजस्व प्राप्ति के नये अवसरों की तलाश करना है।

1. ग्रामीण पर्यटन स्थलों का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत करना।
2. ग्रामीण पर्यटन की चुनौतिया और समाधान के उपाय।

शोधअन्तराल – साहित्य की समीक्षा करने के बाद शोधकर्ता ने पाया है कि अध्ययन क्षेत्र के ग्रामीण पर्यटन की संम्भावनाओं वाले क्षेत्र में पर्याप्त शोध नही किया गया और अध्ययन क्षेत्र के के विभिन्न पर्यटन विशेष रूप से नाडोल, नारलाई, घाणेराव, जवाई पेन्थर क्षेत्र, राणकपुर एवं उसके समीपवर्ती क्षेत्र में पर्यटन के विकास की पर्याप्त गुंजाइश है। जो शोधकर्ता के अध्ययन क्षेत्र में पर्यटन विकास के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण करने और सुझाव देने का अवसर प्रदान करता है।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोध उद्देश्यों के विश्लेषण करने के लिए विभिन्न स्रोतों से प्राप्त द्वितीयक आंकड़ों का इस्तेमाल किया गया है। जिसमें भारत सरकार व राज्य सरकार के पर्यटन विभाग द्वारा प्रकाशित सरकारी रिपोर्ट, अकादमिक लेख, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा

प्रकाशित आंकड़ों तथा जिला गजेटियर, अकादमिक साहित्य पत्र-पत्रिका, पुस्तक, ग्रन्थ आदि शामिल है।इसके साथ ही ग्रामीण जीवन शैली, गतिविधियों और पर्यटक स्थलों की गहन जानकारी हेतु प्रत्यक्ष अवलोकन तथा स्थानीय निवासियों से प्राप्त जानकारी शामिल है।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन- अंशुमाली पाण्डे (2015) ने अपने शोध पत्र दादर व नगर हवेली के ग्रामीण पर्यटन का विकाश में ग्रामीण पर्यटन का उल्लेख करते हुए बताया है कि यह क्षेत्र अब अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अपनी पहचान प्रदर्शित कर रहा है। उन्होने प्राथमिक व द्वितीयक स्त्रोतों के आधार पर तथ्यों को एकत्र किया। अध्ययन के फलस्वरूप यह ज्ञात हुआ कि उस क्षेत्र के पर्यटन विकास ने वहाँ की आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस अध्ययन में वह ग्रामीण पर्यटन के विकास में स्थायी उपायों की कमी का भी उल्लेख करते हैं।

अजिता कुमारी (2019) ने ग्रामीण पर्यटन के सम्बन्ध में अपने शोध पत्र में भारत में ग्रामीण पर्यटन के सम्बन्ध में बताया है कि ग्रामीण पर्यटन वास्तव में ग्रामीण विकास का मुख्य स्त्रोत साबित हो रहा है। उनके अनुसार आज के सूचना क्रान्ति के युग में संचार तंत्र के बिना पर्यटन सुविधाएँ प्रभावित नहीं कर पाती है। मोबाइल, इन्टरनेट, टेलीविजन जैसी संचार सुविधाओं ने पर्यटकों को गाँवों की ओर आकर्षित किया है।

चौधरी उम्मेद (2020) ने अपने शोध पत्र रणकपुर पर्यटन स्थल के भौगोलिक अध्ययन मे पर्यटन क्षेत्र में पर्यटन की नई संभावनाओं का अध्ययन किया तथा घरेलू में विदेशी पर्यटकों का समाज, संस्कृति अर्थव्यवस्था तथा पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव की चर्चा करते हुए पर्यटन क्षेत्र की समस्या से संबंधित सुझाव प्रस्तुत किये।

उमाकांत इदौलिया(2021)ने अपने शोध पत्रभारत में ग्रामीण पर्यटन की संभावनाओ और प्रभाव विषय पर एक अध्ययन किया गया। जिसमें उन्होने सामोद (जयपुर) के विशेष सन्दर्भ में ग्रामीण पर्यटन का उल्लेख किया। इस अध्ययन के लिए शोधकर्ता ने सांस्कृतिक और ऐतहासिक धरोहर से समृद्ध राजस्थान के सामोद (जयपुर) गांव का चयन किया। जिसमें उन्होनें स्थानीय निवासियों व पर्यटकों से प्रश्नावलियों के आधार पर सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व पर्यावरणीय प्रभाव से सम्बन्धित प्रश्नों के आधार पर तथ्य एकत्र करते हुए ग्रामीण पर्यटन के सस्कृतिक, समाज अर्थव्यवस्था व पर्यावरण पर पड़नें वाले प्रभावो का समीक्षात्मक विवरण प्रस्तुत करते हुए सकारात्मक व नकारात्मक प्रभावों का उल्लेख करते हुए समाधान प्रस्तुत किये। अपने अध्ययन के निष्कर्ष में उन्होनें बताया कि ग्रामीण पर्यटन ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार तो लाता ही है साथ-साथ राष्ट्र की आर्थिक स्थिति जीवन शैली पर सकारात्मक प्रभाव पडता है।

कुमार और कुमावत (2021) बताते हैं कि राजस्थान बहुत लोकप्रिय डेस्टिनेशन है और दुनिया भर में इसकी एक महत्वपूर्ण पहचान है। पर्यटन उद्योग राज्य की अर्थव्यवस्था में योगदान देता है, रोजगार पैदा करता है, हस्तशिल्प उद्योगों का विकास करता है, विदेशी मुद्रा कमाता है, बुनियादी ढांचे का विकास करता है, क्षेत्रीय और सामाजिक विकास पर ध्यान केंद्रित करता है।

शर्मा (2021) बताते हैं कि राजस्थान की राजधानी जयपुर में हर साल घरेलू और अंतरराष्ट्रीय पर्यटक आते हैं। पर्यटन उद्योग बुनियादी आर्थिक ढांचे के विकास में मदद करता है। पर्यटक उस जगह पर आते हैं और स्थानीय उत्पादों और हस्तशिल्प में रुचि दिखाते हैं। शहर में टूरिज्म इंडस्ट्री के लिए बहुत बड़ा मौका है, क्योंकि यहाँ होटलों, रेस्टोरेंट, टूर ऑपरेटरों, सर्विस प्रोवाइडर्स, गाइड वगैरह की बड़ी चेन हैं। पॉलिसी बनाने वालों और स्टेकहोल्डर्स को इकॉनमी और इंडस्ट्री की बेहतरी के लिए पॉलिसी बनानी चाहिए। यह स्टडी सस्टेनेबल डेवलपमेंट और जयपुर शहर के लोकल इकोनॉमिक डेवलपमेंट पर आधारित है।

ग्रामीण पर्यटन स्थलों का परिचयात्मक विवरण

ऐतिहासिकपर्यटन स्थल

देसुरी - देसुरी का अर्थ है स्थानीय राजस्थानी बोली में देवताओं का स्थान जो संस्कृत शब्दों देव (ईश्वर) और सूरी (स्थान) से मिलकर बना है। यह नाम क्षेत्र की समृद्ध धार्मिक विरासत और यहाँ फैले असंख्य प्राचीन मंदिरों और तीर्थस्थलों की उपस्थिति को दर्शाता है। प्राचीन दुर्ग, बावडिया और कलापूर्ण छतरिया भी इसके इतिहास की साक्षी के रूप में विद्यमान है। इसकी व्युत्पत्ति से पता चलता है कि इस क्षेत्र में आध्यात्मिक भक्ति और दैवीय उपस्थिति में विश्वास से जुड़ा एक ऐतिहासिक महत्व है।देसुरीअपने ऐतिहासिक और धार्मिक महत्व के लिए प्रसिद्ध है, विशेष रूप कस्बे का इतिहास सदियों पुराना है, जिसमें प्राचीन बस्तियों के प्रमाण और इसकी रणनीतिक स्थिति शामिल है, जिसने संभवत: इसके विकास में योगदान दिया। देसुरी अपने पारंपरिक गांवों और सांस्कृतिक रीति-रिवाजों के साथ राजस्थान के ग्रामीण जीवन की झलक भी प्रस्तुत करता है।

देसूरी दुर्ग - पाली जिले में सादड़ी नगर से 16 कि.मी दूर मांगलिया राजपूतों द्धारा समुद्रतल से 1587 फीट की ऊँचाई पर देसूरी दुर्ग का निर्माण करवाया गया। यह दुर्ग मूलत: मांगलिया चौहानों और सोलंकियों के अधिकार में रहा इस दुर्ग का निर्माण 11 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में माना जाता है। सौलंकियों के पश्चात् उदयपुर के महाराणाओं और 1826 में विजयसिंह जी ने इस दुर्ग पर अधिकार किया दुर्ग में धनेश्वर शिवालय महत्वपूर्ण दर्शनीय स्थल है हालांकि दुर्ग काफी जर्जर अवस्था मेंहै।

नाडोल - यह प्राचीन ऐतिहासिक शहर भारमल नदी के किनारे बसा हुआ है। नाडोल का नाम संस्कृत के शब्दों नाद (नीचे) और डोल (पहाड़ी) से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है पहाड़ी के नीचे बसा। प्राचीन ग्रंथो में इसे नार्दुलपुर, नंदपुर, नंडूला आदि नाम से संबोधित किया जाता था। जो 10वीं-12वीं शताब्दी के बीच नाडोल के चौहानों (चाहमान) की राजधानी था। शाकंभरी चौहान शाखा के शासक राव लक्ष्मण चौहान (करीब 950 ईसवी) ने इसकी स्थापना की थी। यह एक मजबूत दुर्ग से घिरा नगर था, जो मेद लुटेरों और बाहरी आक्रमणों से सुरक्षित था। 10वीं शताब्दी में निर्मित आशापुरा माता (चौहानों की कुलदेवी), मंदिर नाडोल के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल है। यहाँ के शासक शैव थे लेकिन उन्होंने जैन मंदिरों को भी संरक्षण दिया। यह नगर प्राचीन कला और संस्कृति का केंद्र रहा।सन् 1197 ईस्वी में कुतुबुद्दीन ऐबक के आक्रमण के बाद नाडोल के चौहान कीर्तिपाल के नेतृत्व में जालौर चले गए । नाडोल सन् 1291 ईस्वी तक चौहानों के अधीन रहा ,1311 में अलाउद्दीन खिलजी द्धारा उदयसिंह के वंशज कान्हाददेव को हराने के बाद इस क्षेत्र पर दिल्ली सल्तनत का कब्जा हो गया। राव राजा लक्ष्मण , आल्हणदेव, केल्हण, और जयतसिंह यहाँ के प्रमुख चौहान शासक थे।

नाडोल दुर्ग - नाडोल कस्बे में नीलकण्ड महादेव मंदिर के पृष्ठ भाग में नाडोल दुर्ग के अवशेष मौजूद है। जिसे महमूद गजनवी और कुतुबुद्दीन ऐबक द्धारा नष्ट किया गया था।

जूना खेड़ा – यह प्राचीन ऐतिहासिक स्थल भरमल नदी के किनारे स्थित है जूनाखेड़ा को चौहान वंश के क्षत्रियों की प्राचीन राजधानी होने का गौरव प्राप्त है। यह एक ऐतिहासिक स्थल है, जिसका संबंध महान हिंदू राजा पृथ्वीराज चौहान से है। पृथ्वीराज चौहान के पिता की मृत्यु सोलंकी वंश से युद्ध के दौरान इसी स्थान पर हुई थी।जूनाखेडा पुरातात्विक महत्व का एक संरक्षित स्थान है। जिसका इतिहास 8वीं व 9वीं शताब्दी से सम्बन्ध रखता है। इसके उत्खनन से पुरातत्व महत्व की अनेक दुर्लभ वस्तुएँ प्राप्त हुई है पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग के अनुसार जूना खेड़ा में खुदाई के दौरान सिक्के, विभिन्न प्रकार की लोहे की वस्तुएं, तांबे की अंगूठियां अधूरे मनकों के अलावा, अन्य वस्तुएं भी बरामद की गईं। प्रारंभिक देवनागरी अक्षरों में उत्कीर्ण मुहरें भी मिलीं।खुदाई से पता चला है कि जूना खेड़ा में प्रारंभिक मध्युगीन मनुष्य ईंट और ग्रेनाइट के घरों में रहते थे। जिनमें उस समय बैठक कक्ष, रसोई और भट्टे होते थे, और विभिन्न आकारों के पत्थरों को जोड़ने के लिए लोहे के क्लैंप का उपयोग किया जाता था। जूनाखेडा में प्रवेश के पांच मुख्य द्वार थे। जो क्रमशः कांटा बाव गेट, धुवां बाव गेट, तालाब, दरवाजा, सूरजपोल तथा लोको का दरवाजा कहते हैं। यह जोधपुर और उदयपुर के बीच एक समृद्ध व्यापार केंद्र था।

बाली दुर्ग – बाली दुर्ग का निर्माण जालौर के चौहान राजा वीरमदेव द्वारा अपनी बहन बालादे और उसके पति मेवाड़ के राणा हम्मीर सिंह के निवारा हेतु बनवाया था। क्षेत्र में मान्यता है कि चौहान राजा बलदेव ने वि.सं. 1240 में इस दुर्ग का निर्माण करवाया और बाली नाम का एक नगर बसाया। बाली दुर्ग तीन परकोटों से गिरा है। इन परकोटों का निर्माण क्रमशः वीरमदेव, महाराणा उदयसिंह द्वारा करवाया गया। दुर्ग का खेमली दरवाजा आज भी विद्यमान है जबकि धरू, सेला, सेवाड़ी के द्वार अब समाप्त हो चुके है। किले की दीवारे बुझे दरवाजे बोल माजीसा मंदिरशीतला माता मन्दिर आज भी मौजूद है। यहां दुर्ग में बारुद के भण्डार दबे पड़े है।

घाणेराव – राजस्थान के इतिहास में घाणेराव कस्बा या घाणेराव का ठिकाना सुप्रसिद्ध रहा है। इस ठिकाने की स्थापना सन् 1606 ईस्वी मे मेवाड के महाराणा अमरसिंह प्रथम के काल मेंमेड़तिया राठौड़ ठाकुर गोपालसिंह (गोपालदास) द्वारा की गई थी।रियासती काल में कुम्भलगढ़ की सुरक्षा का महत्त्वपूर्ण भार इसी ठिकाने पर था।प्राचीन दुर्ग बावड़ियाँ कलात्मक छतरियां इसके इतिहास के साक्षी गवाह है घाणेराव धार्मिक और सांस्कृतिक मामले में बड़ा समृद्ध है, इस नगर में सनातन और जैन धर्म के कई बड़े व खुबसुरत मंदिर बने है। यहाँ के शासकों ने मेवाड़ और मारवाड़ राज्य की रक्षार्थ जहाँ बलिदान दिए वहीं जनहित में विभिन्न राणियों, शासकों और महाजनों ने वर्षा जल को संग्रहित कर पेयजल व कृषि को बढ़ावा देने के लिए लगभग 21 बावड़ियाँ बनवाई थी।

घाणेराव चित्र शैली राजस्थान के पाली जिले के गोडवाड़ क्षेत्र में विकसित मारवाड़ स्कूल की एक प्रमुख उप-शैली (ठिकाना कला) है। नारायण, छज्जू और कृपा राम जैसे चित्रकारों द्वारा विकसित यह शैली रामायण, महाभारत, श्री कृष्ण के जीवन से जुड़ी कथाओं के साथ ही सामंती जीवन के दरबारी और व्यक्तिगत चित्रण में ठाकुरों, रानियों, योद्धाओं और शिकार के दृश्यों का अंकन, जिसमें मुगल प्रभाव के साथ राजस्थानी कला की झलक मिलती है।

नारलाई– राजस्थान की पाली जिले में स्थित ऐतिहासिक गांव है जो जैकाल पहाड़ी (हाथी जैसी पहाड़ी) जैन व वैष्णव मंदिर और प्राचीन बावडियो के लिए जाना जाता है। यह गोड़वाड़ की पंच तीर्थी में से एक तीर्थ है। इस स्थान का प्राचीन नाम नन्दकुलवन्ति, नारदपुरी और नाडुलाई (नाडुलाड़गिका) था। ऐसी किवदंती है कि देवर्षि नारद ने इस स्थान पर घनघोर तपस्या की और अपने नाम से एक नगरी बसाई जिसे आज नारलाई के नाम से जाना जाता हैं। एक प्राचीन नगर के अवशेष आज भी जमीन में से निकलते हैं।

पारिस्थितिकी पर्यटन स्थल

जवाई बांध – जवाई बांधपश्चिमी राजस्थान का सबसे बड़ा बांध है। इस बांध को मारवाड़ का अमृत सरोवर, मान सरोवर एवं मारवाड़ की जीवन रेखा भी कहा जाता है। यह बांध अरावली की तलहरी में लूनी नदी की सहायक नदी जवाई नदी का पानी रोककर एरिनपुरा ग्राम के निकट इस बांध का निर्माण किया गयाबेडा नदी जवाई नदी की प्रमुख सहायक नदी है। इस बांध की नींव 12 मई 1946 को जोधपुर के महाराजा उम्मेदसिंह द्वारा रखी गई इस बांध की भराव क्षमता 61.25 फीट है। जवाई बांध किसी पहचान का मोहताज नहीं है अनुकुल वातावरण के चलते अलग-अलग प्रजापियों के पशु पक्षियों का घर है, बड़ी बड़ी पहाड़ियां, प्राकृतिक गुफा, घास व वन क्षेत्र, यहां की आबो-हवा पर्याप्त भोजन व पानी की व्यवस्था वन्य जीवों के फलने-फुलने के लिए उपयुक्त है। यह क्षेत्र पैंथर व मगरमच्छ के लिए ख्यात रहा है। इनके अलावा, भालू धारीदार हाइना, लोमड़ी, नील गाय, भेडिया, चिंकारा, ब्लूबुल व कई स्थानीय व प्रवासी पक्षियों के लिए (आश्रय स्थल) शरण गाह है।

जवाई लेपर्ड्स हिल – पाली जिले में सुमेरपुर के पास स्थित जवाई लेपर्ड क्षेत्र प्राचीन ग्रेनाइट पहाड़ियों और विशाल जवाई बांध के लिए प्रसिद्ध है, इसे 'लेपर्ड्स हिल' के रूप में भी जाना जाता है। यह क्षेत्र अपनी अनूठी पैंथर सफारी ,प्रवासी पक्षियों, मगरमच्छों और अन्य वन्यजीवों के निवास स्थान के लिए पहचाना जाता है। यहाँ पैंथर और स्थानीय समुदाय के बीच अद्भुत सह-अस्तित्व देखने को मिलता है। जहाँ इंसान और तेंदुए बिना किसी संघर्ष के साथ रहते हैं बेरा, पैरवा, सैणा, जीवदा, बिसलपुर, दूदनी, कोठार, लालपुरा, सिवेरा और लुंदाड़ा समेत करीब 20 गांव ऐसे हैं, जहां पैंथर की 50से 60 फैमिली हैं ,जो यहाँ की चट्टानी गुफाओं में स्वतंत्र रूप से विचरण करती हैं। अक्टूबर से मार्च के बीच यहाँ की सैर करना सबसे अच्छा माना जाता है, प्रति वर्ष हजारों देसी व विदेशी पर्यटक भ्रमण हेतु आते है।

रणकपुर बांध – मघाई नदी पर बना रणकपुर बांध (सादडी बांध) पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र है। इस बांध का निर्माण जोधपुर रियासत के महाराजा सर प्रतापसिंह ने वर्ष 1942-48 में अरावली पर्वतमाला की तलहटी में करीब छः महाड़ियों को मिलाकर बनाया था। यह बांध सागरतल से 221 मीटर कि उच्चाई पर बना है, इसकी भराव क्षमता 62.70 फीट (205 MCFT) है। इस बांध पर शाम के समय सूर्यास्त का दृश्य प्राकृतिक सुंदरता के साथ पर्यटकों को आकर्षित करता है।

ठंडी बेरी – घाणेराव – घाणेराव के समीप मारवाड़-मेवाड़ के रियासतकालीन रास्ते मे 600 फीट की ऊंचाई पर तीन नदियों, दो नालों को पार करने पर ठंडी बेरी दिखाई देती है,प्रारंभ में इस मीठा पानी के कुँए को स्थानीय लोग ठंडी बेरी कहते थे।ठंडी बेरी स्थल कोवन विभाग द्वारा 1978 में ठंडी बेरी बांध का रूप दिया। इस बांध की खासियत यह है, कि यह कभी सूखता नहीं। यहां तक कि इस सदी के सबसे भीषण अकाल छप्पनिया काळ में भी बांध से अविरल धाराएं झरनों के रूप में बहती रहीं, पूरे कुंभलगढ़ अभयारण्य में विचरण करने वाले वन्यजीवों की प्यास बुझाने का एकमात्र

स्त्रोत है। मानसून सीजन में अगर आप लेह-लद्दाख और कश्मीर की वादियों जैसा दीदार अगर पाली जिले में ही करना चाहते हैं तो आपको ठंडी बेरी जरूर जाना चाहिए। अरावली की पहाड़ियां के शांत वातावरण में जहाँ आपको हिरण, जंगली सूअर और विदेशी पक्षी देखने को मिल सकते हैं। रास्ते में मगरमच्छ धूप सेंकते देखे जा सकते हैं, और एडवेंचर का अहसास कराने वाली सड़कें और शीतल हवा के झोंके आपको रोमांचित कर देंगे।

हर-हर गंगें बीजापुर – पाली जिले के बीजापुर (बाली तहसील) के निकट स्थित हर-हर गंगे एक प्राचीन और प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है, जिसे 'राजस्थान का मिनी हरिद्वार' भी कहा जाता है। यह स्थल लगभग 500 साल पुराना है और इसमें यहां हर-हर गंगे मां, हिंगलाज माता और नागरेश्वर महादेव के मंदिर स्थित हैं। जहां गौमुख से 24 घंटे निरंतर पानी बहता रहता है। यहाँ 5 चमत्कारी कुंड हैं। यह स्थान पहाड़ियों और जंगलों से घिरा है,यहां विभिन्न जातियों लोग अपने पूर्वजों की अस्थियां विर्सजन के लिए भी आते हैं, इसके साथ ही अठखेलियां करते बंदरों, कल-कल बहते झरने और हरी-भरी वादियां आपका मनमोह लेगी। यह स्थान अरावली की वादियों में स्थित होने के कारण मानसून के दौरान पर्यटकों की भीड़ लगी हुई है। आप प्राचीन मंदिर के दर्शन करने साथ झरने के पानी में नहाने व पहाड़ों में ट्रेकिंग का आनंद भी ले सकते है।

धार्मिक पर्यटन

रणकपुर जैन मंदिर – राजस्थान में अरावली पर्वत की घाटियों के मध्यचारो और जंगलों से घिरे रणकपुर में भगवान ऋषभदेव का चतुर्मुखी जैन मंदिर है। भारत के जैन मंदिरो में शिल्प एवं विशालता की दृष्टि से सम्भवतः इसकी इमारत सबसे भव्य एंव विशाल है। यह गोडवाड़ के जैन पंचतीर्थो में प्रमुख माना जाता है। इसका निर्माण आज से करीब 600 वर्ष पूर्व महाराणा कुम्भा के काल में सेठ धरणशाह ने संवत 1446 ई. में प्रसिद्ध शिल्प विशेषज्ञ श्देपाश् की देखरेख में करवाया था। सेठ धरणशाह ने कुम्भलगढ़ से मालगढ़ जाने वाले रास्ते में माद्रीपर्वत की छाया में बसे मादड़ी गांव को मंदिर निर्माण स्थल हेतु चुना, बाद में धरणशाह ने मादड़ी गांव का नाम बदलकर रणकपुर कर दिया। रणकपुर के इस चौमुखा मंदिर की इमारत का निर्माण लगभग 48000 वर्गफीट जमीन पर किया गया, जिसमें कुल 24 मण्डप, 84 शिखर और 1444 स्तम्भ है। इस मंदिर में चार कलात्मक प्रवेश द्वार है, मंदिर के मुख्य गृह में तीर्थकर आदिनाथ की संगमरमर से बनी चार विशाल मूर्तियां है, करीब 72 इंच ऊंची ये मूर्तियां चार अलग अलग दिशाओं की ओर उन्मुख है। इसी कारण इसे चतुर्मुख मंदिर कहा जाता है। मुख्य मंदिर के चारों तरफ उत्कीर्ण मूर्तियों में जनजीवन की झांकिया दिखाई देती है, ऊंचे तोरणद्वार, सभामंडप गर्भ गृह, देवकुलिकाय, विभिन्न मुद्राओं में उत्कीर्ण नृत्यागनाएं संगीत के विभिन्न वाद्य प्राकृतिक दृश्यावलिया, पौराणिक दृश्य समकालीन वेशभूषा आभूषण आदि अत्यंत सुंदरता के साथ प्रस्तुत किए गए है।

सूर्य मंदिर – यह जैन मंदिर के पास ही स्थित है, जिसे सूर्य नारायण मंदिर के नाम से भी जाना जाता है। इसमें नागर शैली में सफेद चूने पत्थर से सूक्ष्म आभूषणों का काम किया गया है। 13वीं सदी में बने इस मंदिर के ध्वस्त होने के बाद 15वीं शताब्दी में इसका पुर्ननिर्माण किया गया। सूर्य मंदिर का मुख पूर्व दिशा की ओर है, जिसमें भगवान सूर्य की रथ पर सवार मूर्ति दिखाई गई है, मंदिर की दीवारों पर योद्धाओं, घोड़ो और स्वर्गीय पिंडों की अदभुत नक्काशी हुई है, जो विगत युग के लोगों की कलात्मक उत्कृष्टता का प्रतिनिधित्व करती है। मंदिर के गर्भ गृह से पहले एक अष्टकोणीय मण्डप है, जिसमें छः बरामदे है, सूर्य मंदिर का प्रबंधन उदयपुर के शाही परिवार ट्रस्ट द्वारा किया जाता है।

परशुराम महादेव – पाली और राजसमंद जिले की सीमा पर अरावली पर्वत श्रृंखला की एक कन्दरा में स्थित परशुराम मन्दिर मूलतः भगवान शिव को समर्पित है। इसे 'राजस्थान का अमरनाथ तथा मरुस्थल का कैलाश' भी कहते हैं। परशुराम को भगवान विष्णु का छठा अवतार माना जाता है, अपनी तपोस्थली के लिए परशुराम ने अपने फरसे से अरावली पर्वत श्रृंखला में एक कन्दरा (गुफा) का निर्माण किया जो समुद्रतल से लगभग 3500 से 4000 मीटर की ऊंचाई परस्थितहैं। परशुराम गुफा से कुछ धार्मिक मान्यता भी जुड़ी है वही व्यक्ति बद्रीनाथ के कपाट खोलने का अधिकारी है जिसने परशुराम महादेव के दर्शन किए हों। परशुराम महादेव में सबसे पहले कुण्डधाम बना हुआ है। जिसे शिव कुण्ड कहा जाता है। शिव कुण्ड के निकट हनुमान जी का मन्दिर, शिव मन्दिर, गोविन्द स्वामी मन्दिर स्थित है। उक्त मन्दिरों के दर्शनी के पश्चात् 200 सीडियों के साथ परशुराम महादेव की पैदल चढाई प्रारम्भ होती है। यहां से लगभग 3 से 4 कि.मी. पहाड़ी मार्ग से चढ़ना पड़ता है। उक्त दूरी में पर्यटकों को विभिन्न प्रकार के आनंद प्राकृतिक वातावरण के साथ प्राप्त होते हैं।गुफा में प्राकृतिक स्वयंभू शिवलिंग हैं , जिस पर लगातार जल अभिषेक होता रहता है तथा छत पर अनेक गौ-मुख और कमलाकार आकृतियों निर्मित है। स्थानीय लोग प्रतिवर्ष श्रवण सदी छठ और सप्तगी को यहा विशाल मेला भरता है। परशुराम महादेव स्थल का भौगोलिक रूप से विशेष महत्व है महादेव गुफा में चूना निर्मित स्टैलेग्माइट व स्टैलेक्टाइट स्थलाकृतिया देखने को मिलती हैसाथहीपहाड़ों में ट्रेकिंग का आनंद भी ले सकते है।

निम्बो का नाथ (निम्बेश्वर महादेव) – राजस्थान के पाली जिलें में फालना सांडेराव मार्ग के मध्य में अवस्थित निम्बों का नाथ महादेव मन्दिर जिसे निम्बेश्वर महादेव के नाम से भी जाना जाता है। पौराणिक हिन्दू मान्यताओं के अनुसार अपने निर्वासन काल में पांडवों की माता कुन्ती द्वारा यहां भगवान शिव की पूजा की जाती थी। मन्दिर की दीवारें कलात्मक शिल्प और नक्काशी से युक्त थी यह मन्दिर कालान्तर में नष्ट हो गया था जो वि.सं. 1632 में पुनः प्रकाश में आया। यहां पर पाण्डवों द्वारा स्थापित नव दुर्गा मन्दिर और एक बावड़ी के प्रमाण भी प्राप्त हुए। मन्दिर में स्थापित भगवान शिव की प्रतिमा अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक प्रतीत होती है। प्रतिवर्ष शिवरात्री और वैशाखी पूर्णिमा के दिन यहां मेले और उत्सव का आयोजन किया जाता है।

सोनाणा खेतलाजी – देसूरी तहसील के सारंगवास व सोनाणा गाँव में सूकड़ी नदी के तट पर स्थितश्री सोनाणा खेतलाजी मंदिर लगभग 800 वर्ष पूर्व निर्मित हुआ था। यह मंदिर प्राचीन राजपूत स्थापत्य कला की सुंदर कला को दर्शाता है।मारवाड़ क्षेत्र के विभिन्न जाति और धर्म के लोगों के लिए खेतलाजी स्थानीय लोक देवता हैं। श्री खेतलाजी को भगवान भैरव के रूप में पूजा जाता है जिन्हें भगवान शिव का पांचवा अवतार माना जाता है। श्री खेतलाजी को श्री भैरव या श्री क्षेत्रपाल जी के नाम से भी जाना जाता है। मंदिर में स्वयंभू साँप की मूर्ति भी है जिसे श्री खेतलाजी का रूप माना जाता है। श्री खेतलाजी काशी से मंडोर आए थे बाद में, उन्होंने सोनाणा का दौरा किया। ऐसा माना जाता है कि भगवान भैरव ने सोनाणा खेतलाजी में स्थित गुफाओं में अपना निवास बनाया औरअरावली पर्वत श्रृंखला में ध्यान कर रहे ऋषियों की रक्षा करते थे।

मुछाला महावीर मन्दिर – घाणेराव कस्बे में स्थित भगवान महावीर स्वामी

को समर्पित एक जैन मन्दिर है।अरावली की पहाडियों में बने इस मन्दिर का निर्माण काल 10वीं से 12वीं शताब्दी के बीच माना जाता है।मन्दिर के प्रवेश द्वार पर दो हाथियों की प्रतिमा दो पहरेदारों के रूप में बनी है। यहा प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को मेला भरता है।इस मन्दिर से जुड़ी एक कहानी भी क्षेत्र में प्रचलित है, कि मेवाड़ महाराणा ने अपने सरदारों सहित दर्शनार्थ पधारे मन्दिर के पुजारी को महाराणा को प्रसाद दिया जिसमे एक बाल देखकर एक सामन्त ने व्यंग्य किया कि आपके भगवान के मुछे है। पुजारी ने भगवान में श्रद्धा रखने के कारण हाँ कह दिया, तभी महाराणा ने भगवान की मुछे देखने की बात कही इस पर पुजारी ने तीन दिन का समय मागा महाराणा के क्रोध के डरे पुजारी ने बिना अन्न जल ग्रहण किए तीन दिन तक भगवान की गौर तपस्या की तीन दिन पश्चात् महाराणा वापस आये तो मूर्ति पर मुछे देखकर उन्हें विश्वास नहीं हुआ ओर उन्होने मुछ का एक बाल खिचलिया जहा से दूध की धारा फूट पड़ी महाराणा भगवान के सामने नतमस्तक हो गये। राजस्थान के गोड़वाड़ सर्किट में स्थित यह मन्दिर जैन सम्प्रदाय के पँच तीर्थो में सम्मिलित है।

राता महावीर बीजापुर – राता महावीर के नाम से प्रसिद्ध जैन तीर्थ प्राचीन हत्थुन्डी (वर्तमान बीजापुर) नामक गांव मे स्थित है। जैन मुनि जिनविजय जी ने राता महावीर को राजस्थान के 556 जैन जीनालयों में सर्वाधिक प्राचीन स्वीकार किया है। इस मन्दिर का उल्लेख मुनि जानसुन्दर द्वारा रचित पुस्तक ष्श्री पार्श्वनाथ भगवान की परम्परा का इतिहासष में भी मिलता है। पुस्तक के अनुसार जैन धर्म के 24वे तीर्थकर महावीर स्वामी के इस मन्दिर का निर्माण वि.स. 360 में वीर देव श्रेष्ठी द्वारा भगवान पार्श्वनाथ के 30वे पटधर आचार्य सिद्धसुरी के आशीर्वाद से होना बताया गया है। मन्दिर में बनी भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमा ईट और चुने से निर्मित है और इसका रंग लाल होने के कारण इसे राता महावीर के नाम से सम्बोधित किया जाता है। प्रतिमा की मुख्य विशेषता पीछे का आकार सिंह का और मुख हस्ती का (हाथी) होना है। हाथी का मुख होने के कारण ही इस नगरी को हस्तीकुण्ड के नाम से सम्बोधित किया जाता था। जो वर्तमानहत्थुन्डी (वर्तमान बीजापुर)के रूप में पहचाना जाता है। आज जहा मन्दिर बना है। वहां प्राचीन काल में एक वैभवशाली नगर हुआ करता था। 14वीं शताब्दी के एक लेख के अनुसार यहा 8 कुरो, बावड़ियों स्थित भी 160 पणिहारिया पानी भरती थी। वि.स. 2001 में मन्दिर का जीर्णोद्धार कार्य सम्पन्न हुआ और यहा 24 देव कुलिकाएं गुख्य मन्दिर में स्थापित करवाई गई जो मन्दिर द्वार के दोनों और 6-6 एवं अंदर की और दाहिने और बांये भाग में 6-6 के रूप में स्थित है। मन्दिर के गर्भ गृह में मूल नायक श्री महावीर स्वामी प्रभु की पद्मानस्थ रक्तप्रवाल वर्णी एक 135 से.मी. की अत्यन्त प्रभाव शाली प्रतिमा स्थापित है। जिसके गले में मोतियो की माला हाथों में बाहुबन्ध, पांव और हाथ में सुन्दर कड़े पहनाऐ गए है।

आदिनाथ का जैन – नारलाई के जैन मंदिरों में से यहसबसे पुराना मंदिर है जो दसवीं शताब्दी का प्रतीत होता है। यहाँ से प्राप्त शिलालेखों में से सबसे प्राचीन लेख वि.सं. 1187 का है जिसमें चौहान राजा रायपाल द्वारा मंदिर को दान दिये जाने का उल्लेख है। शिलालेखों से ज्ञात होता है कि पहले यह महावीर स्वामी का मंदिर था, बाद में यहाँ आदिनाथ की मूर्ति स्थापित की गई। एक लेख में मंदिर के निर्माणकर्ता का नाम राजा सम्प्रति लिखा हुआ है। विक्रम संवत् 1597 के एक लेख में कहा गया है कि यह मंदिर पहले खेड़ नगर में स्थित था इसे संडेरक गच्छीय यशोभद्र सूरी अपनी मंत्र शक्ति से उड़ा कर लाये थे। योगी तपेश्वरजी भी यशोभद्रजी के समकालिक थे। वे भी एक मंदिर खेड़ नगर से उड़ाकर लाये थे। अब इन दोनों योगियों को जसिया व केशिया कहा जाता है। इन दोनों के स्वर्गारोहण के पश्चात दो स्तूप पास-पास में बनाये गये। बताया जाता है कि ये दोनों स्तूप रोज घटते-बढ़ते रहते हैं। इस मंदिर का स्थापत्य और बनावट सुन्दर है। मंदिर के रंग मण्डप को सुन्दर भित्ति चित्रों से सजाया गया है। इस मंदिर को वीरा देवल भी कहते हैं। मंदिर के मूल गंभारे के ऊपर विशाल शिखर के आसपास देव कुलिकाओं के छोटे-छोटे शिखर बहुत सुंदर दिखाई देते हैं। नारलाई के अन्य जैन मंदिरों में गिरनार तीर्थ बहुत प्रसिद्ध है जिसमें नेमीनाथ की श्यामवर्णी प्राचीन प्रतिमा प्रतिष्ठित है। गिरनार पहाड़ी के दाहिनी ओर सहसावन तीर्थ है यहाँ पर नेमि-राजुल के पद चिन्ह हैं। कहा जाता है कि गिरनार पर्वत पर नेमिनाथ की स्थापना भगवान श्री कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न ने की थी। इस पर्वत को यादव टेकरी भी कहते हैं। इसके सामने की टेकरी को शत्रुञ्जय तीर्थ कहा जाता है। सुपार्श्वनाथजी का मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, गौड़ी पार्श्वनाथ, सोगटिया पार्श्वनाथ तथा श्री वासुपूज्य स्वामी का मंदिर भी कला, शिल्प व स्थापत्य के उत्कृष्ट नमूने हैं।

स्वर्ण मंदिर, फालना – गोडवाड सर्किट के फालना नगर में स्थित जैन स्वर्ण मंदिर (स्वर्ण जैन तीर्थ) अपनी अनूठी वास्तुकला के लिए प्रसिद्ध है, जो मुख्य रूप से भगवान पार्श्वनाथ को समर्पित है। मन्दिर के गर्भगृह में काले ग्रनाईट पत्थर से निर्मित जैन धर्म के 23वें तीर्थकर श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ की प्रतिमा स्थापित है। पास ही श्री नाकौड़ा भैरव की पाषाण प्रतिमा भी विराजमान है। यह देश का पहला जैन स्वर्ण मंदिर माना जाता है, जिसके शिखर और दीवारों पर लगभग 90 किलो सोने की परत चढ़ाई गई है। जो अमृतसर के स्वर्ण मंदिर की याद दिलाता हैं । मंदिर के गुंबद और प्रतिमा को सजाने के लिए जैन समुदाय की महिलाओं ने 90 किलो सोना दान किया था।सन् 2004 में भारत के स्व. उपराष्ट्रपति श्री भैरासिंह शेखावत द्वारा इस मन्दिर का उद्धाटन सम्पन्न किया गया था। पर्यटकों के ठहरने और खाने की व्यवस्था भोजनशाला और धर्मशाला के रूप में उपलब्ध है।

संत शिरोमणि, रघुनाथ पीर धाम, ढालोप – अलख उपासक सिद्ध पुरुष सगसजी महाराज के राजस्थान की धरती पर अनेकानेक शिष्य हुए है, जिन्हें पीर की पदवी से नवाजा गया। दैवभूमि ढालोप मे प्रसिद्ध मेघवंशी समाज के संत शिरोमणि रघुनाथ पीर ने भी समस जी महाराज से दीक्षा लेकर ज्ञान रूपी आध्यात्मिक सिद्धि प्राप्त की थी।श्री रघुनाथ पीर ने अलख उपासना के माध्यम से अपने गुरु के निजारी दावे को आगे बढ़ाया। संत श्री रघुनाथ पीर का समाधि स्थल एवं भक्ति धाम ढालोप गाँव में स्थित है, जहा मारवाड़ क्षेत्र का ब्रह्माजी का एकमात्र मन्दिर है।परम संत श्री रघुनाथ पीर ने नाथ संप्रदाय के सिद्धो जसनाथ एवं लाडूनाथ जी को भी चुनौती दी और कई परचे व चमत्कार देकर उन्हें अंचभित किया। तब से नाथ संप्रदाय द्वारा आपको पीर की पदवी से नवाजा गया। श्री रघुनाथ पीर ने विक्रम संवत् 1385 में वैशाख माह शुक्ल पक्ष तिथि बारस शनिवार के दिन ढालोप में जीवित समाधि धारणकर अपने भक्तों को धर्म पर दृढ़ रहने की शिक्षा दी। प्रतिवर्ष बसंत पंचमी एवं फाल्गुन वदी पंचमी के दिन श्री रघुनाथ पीर की समाधि पर मेले का आयोजन होता है। राजस्थान, गुजरात, मध्यप्रदेश एवं अन्य अंचलों से लाखों लोग नमन करने पहुंचते है एवं पीरजी की कृपा से उनकी मुरादे पूरी होती है।

श्री आशापुरा माताजी मंदिर – नाडोल गाँव में स्थित एक प्रसिद्ध और

पूजनीय मंदिर है। यह मंदिर माँ आशापुरा माताजी को समर्पित है,माँ शाकम्भरी और आशापुरा दोनों एक ही एक स्वरूप है जिन्हें चौहान (चौहान राजपूत) वंश की कुलदेवी माना जाता है और राजस्थान तथा गुजरात में उनकी व्यापक रूप से पूजा की जाती है। श्री आशापुरा माताजी मंदिर के गर्भगृह में माँ आशापुरा माताजी की पवित्र मूर्ति स्थापित है। आशापुरा शब्द का अर्थ है आशाओं और इच्छाओं को पूरा करने वाली देवी। ऐसा माना जाता है कि सच्ची श्रद्धा से आने वाले भक्तों की मनोकामनाएँ देवी पूरी करती हैं। मंदिर का हर कोना आस्था परंपरा और इस भूमि की सुदृढ़ सांस्कृतिक विरासत को दर्शाता है। यह मंदिर पारंपरिक राजस्थानी शैली की हिन्दू वास्तुकला को दर्शाता है, जिसमें सुंदर नक्काशीदार स्तंभ, गर्भगृह और जटिल पत्थर की कलाकृतियाँ हैं। ऐसा माना जाता है कि नाडोल स्थित मंदिर की स्थापना मध्यकाल में, संभवत: चौहान वंश के शासकों द्वारा की गई थी। एक शिलालेख के अनुसार वि.स. 1030 में सिंहराज जो चौहान वंश का प्रथम पुरुष था। सांभर का शासक बना इसी का छोटा भाई लाखणसि चौहान था जो महात्वाकांक्षी वीर पुरुष अरावली पर्वतों को पार करके गोडवाड प्रदेश में पहुंचा।

गोड़वाड़ प्रान्त में उन दिनों पाली, बाली, और नाडोल प्रमुख व्यापारिक केन्द्र थे। नाडोल में सामन्तसिंह चावड़ा नामक गुजरातियों का एक सामन्त शासन करताथा जो अयोग्य होने के कारण प्रजा ने सागत सिंह के स्थान पर राव लक्ष्मण को राजसिंहासन पर आसिन्न किया। इस प्रकार लक्ष्मण नाडोल के महाधिराजाराज बन गये। उन्होंने एक भव्य मन्दिर का निर्माण करवाया और माँ शाकम्भरी देवी को माता आशापुरा के नाम से प्रतिष्ठित किया गया। मन्दिर के समीप ही बावड़ी का निर्माण करवाया जिसे आज महाराव लाखणसिंह बावड़ी के नाम से जाना जाता है। आशापुरा माता धाम में प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में श्रद्धालु आते हैं। लेकिन नवरात्रि में सबसे ज्यादा संख्या में श्रद्धालु आते हैं। इस दौरान विशेष पूजा, आरती और भजन गाए जाते हैं। माता में आस्था रखने वाले कई परिवार विशेष अवसरों, विवाह और अनुष्ठानों के दौरान आशीर्वाद लेने के लिए मंदिर आते हैं।

श्री आई माता मंदिर – नारलाई गांव में सीरवी समाज के आराध्य देवी आई माताजी का प्रसिद्ध मंदिर मौजुद है, वही उत्तर पूर्व एक विशाल हाथीनमा पर्वत जिसका नाम जय एकलिंगजी जैकलजी है,इस पर्वत के शिखर पर 15 फीट उंची हाथी की सफेद प्रतिमा है। साथ ही 200 से 250 फीट की ऊंचाई पर पर्वत की अधर गुफा में एकलिंगजी का एक छोटा मंदिर भी मौजुद है। इसी पहाड़ की तहलटी में भंवर गुफा है, इसके निर्माण के बारे में बताया जाता है कि माताजी ने सोहन सीटीया चलाया और भंवर गुफा का प्रादुर्भाव हुआ तो अंदर शिवजी का शिवलिंग स्थान पाया गया। जो ग्रामीणों की आस्था का केन्द्र बना हुआ है, भंवर गुफा को देखने के लिए बडी संख्या में देशी और विदेशी पर्यटक आते है। इस गुफा में प्रवेश करते ही अलग ही एहसास होता है। जिसकी लम्बाई करीब 500 मीटर से भी अधिक है,साथ ही नारलाई में कई ऐतिहासिक धरोहर आज भी मौजुद है।

अन्य दर्शनीय स्थल – पहाड़ी पर स्थित बैजनाथ महादेव, हिंगलाज माता मंदिर, गांव में स्थित तपेश्वर महादेव, चारभुजा तथा अन्य मंदिर दर्शनीय हैं।

श्री मां चामुण्डा माताजी – सर्वशक्तिमान भगवती माँ चामुण्डा महाशक्ति के रूप में मुण्डारा गाँव में स्थापित है। इस मंदिर के केन्द्र में चामुण्डा माता की दिव्य प्रतिमा स्थापित है। इस प्रतिमा के दाँए हिंगलाज माता तथा मुख्य मंदिर के प्रवेश द्वार के बाएं करणी माता की प्रतिमाए स्थापित है। मंदिर की दीवारो पर देवी के नौ रुपो में प्रथम शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघटा, कुष्णाडा, स्कन्दमाता, कात्यायिनी, कालरात्रि, महागौरी और सिद्धिदात्री के भित्ती चित्र बने हुए।इस प्रसिद्ध मंदिर की उत्पति एवं निर्माण के प्रामाणिक ऐतिहासिक तथ्य तो उपलब्ध नहीं है. लेकिन इसके ऐतिहासिक संदर्भ की कई जनश्रुतिया एवं किंवदन्तिया प्रचलित है। कहा जाता है कि माँ चामुण्डा का जालोर जिले के घुमड़ा (भादाजून) से पाली जिले के रानी गाँव तत्पश्चात वहा से कागडी गाँव एवं कालान्तर में वहा से मुण्डारा गाँव में आगमन हुआ। किंवदन्तियों के अनुसार मुण्डारा निवासी फुआजी रेबारी को माँ चामुण्डा ने स्वप्न में दर्शन दिये। इसके बाद मुण्डारा गांव के पश्चिम में एक किलोमीटर दूर रैबारी फुआजी ने मंदिर के निर्माण कार्य का श्रीगणेश किया। बाद में रेबारी फुआजी इस मंदिर के संस्थापक पुजारी बने। माँ चामुण्डा के इस मंदिर का दूसरा नाम सोदरा माँ हैं इसके पीछे भी कई जनश्रुतिया प्रचलित है। इसी उपलदक्ष में प्रतिवर्ष बसन्त पंचमी के दिन, यहाँ विशाल मेला लगता है जिसमें देश के कई प्रांतोमुख्यत: मध्यप्रदेश, गुजरात, राजस्थान से हजारो श्रद्धालु यहाँ पहुंचते है।

शीतला माताजीभाटून्द – भाटुन्द गाँव ब्राहम्णों की सदियों पुरानी नगरी है, मन्दिर अधिक होने के कारण इसे देव नगरी भी कहते हैं। ब्राहम्णों की नगरी होने के कारण इसे ब्रह्म नगरी भी कहते हैं। भाटुन्द गांव के संथापक श्री आदोरजी महाराज ने अपने 18 परिवार वालों सहित 13 शताब्दी में जौहर किया था। यहां 10वीं व 11वीं सदी का सूर्य मन्दिर है, जिसे महाराजा भोज ने बनाया था। महाराजा भोज ने यहां तालाब भी खुदवाया था। ऐसा माना जाता हैं कि, ब्राहमणो के आव्हान पर शीतला माता ने साक्षात दर्शन देकर यहाँ विराजमान हुई है। वर्ष में दो बार शीतला माताजी का विशाल मेला लगता है। मन्दिर में शीतला माता के सामने एक ऊखली है जो एक फिट गहरी है। पुरा गांव इस ऊखली में घड़ो से पानी डालता है, लेकिन पानी किधर जाता है, इसका रहस्य आज दिन तक किसी को पता नहीं चला है। गाँव वालो का ऐसा मानना है। एक बार सिरोही दरबार ने भी इस एक फुट गहरी ऊखली को दो कुआं का पानी लाकर भरने की निष्फल कोशिश की थी। जिन्हें माँ के प्रकोप का सामना करना पड़ा था। इस गाँव में श्री चेतन बालाजी का भव्य चमत्कारी मंदिर है।

मेले व त्यौहार – जब किसी स्थान पर कई लोग सामाजिक, धार्मिक अथवा व्यापारिक कारणों से एकत्रित होते है। उसे मेला कहते है। भारतीय संस्कृति में मेला व त्यौहारों की अनूठी सांस्कृतिक परम्परा है। हर मेला व त्यौहार गौरवशाली अतीत अनूठी सांस्कृतिक परम्पराओं रीतिरिवाजों और समृद्ध लोक संस्कृति का दर्शन कराते है। मेले यहां के लोक जीवन की किसी किंवदन्ती या ऐतिहासिक कथानक से जुड़ा हुआ हैं यही कारण है कि इन मेलों के आयोजन में सम्पूर्ण लोक जीवन पूरी सक्रियता से जीवन्त हो उठता है। मेलों में भाग लेने के लिए लोग अपनी पारम्पिरिक वेशभूषा में आते हैं, जिसमें महिलाओं की पोशाक व श्रृंगार दर्शनीय होते हैं। मेलों के अपने गीत और अपनी संस्कृति होती हैं, जिनके पीछे जनमानस की गहरी आस्था निहित है। इतने वर्षों के बीत जाने के पश्चात् भी लोक आस्था के ये स्थल अपनी पहचान बनाए हुए हैं और निरन्तर इनमें आगन्तुकों की संख्या बढ़ रही है। मुख्य मेलों का विवरण प्रस्तुत है।

सोनाणा खेतलाजी मेला – यह मेला पाली जिले की देसूरी तहसील के आना पंचायत के सारंगवास गांव में सुकड़ी नदी के किनारे स्तिथ सोनाणा खेतलाजी मन्दिर पर दो दिनों के लिए आयोजित किया जाता है। जिसे लक्खी

मेला भी कहते है। प्रत्येक साल चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को आयोजित इस मेले में हजारों पर्यटक व स्थानीय लोग पारंपरिक वेशभूषा में आते है। मेले का मुख्य आकर्षण राजस्थान के विभिन्न जिलों से आने वाले गैर नर्तक दलों का प्रदर्शन हैं। प्रतिवर्ष 60 से 70 ऐसे दल अपनी परम्परागत वेशभूषा में ढोल, चंग और थाली की थाप पर अपना नृत्य प्रदर्शित करते है।

परशुराम महादेव मेला – पाली, राजसमंद जिले की सीमा पर अरावली पर्वत श्रृंखला की दुर्गम पहाड़ियों में स्थित परशुराम महादेव की प्राकृतिक गुफा पर यह मेला श्रावण शुक्ल षष्ठमी और सप्तमी पर यह मेला भरता है। वर्तमान में यह मेला लगभग दो महीने श्रावण और भाद्रपद में आयोजित होता है। मेले में लाखों श्रद्धालु भगवान परशुराम के प्रति हृदय में आस्था लेकर सम्मिलित होते है। श्रावण माह के प्रत्येक सोमवार को यहां पर श्रद्धालुओं की संख्या बढ़ जाती हैं प्रति वर्ष लगभग पाँच लाख दर्शनार्थी प्राकृतिक का वातावरण आनंद व मन की शांति के लिए भगवान परशुराम के दर्शन करते है।

निम्बेश्वर नाथ मेला – फालना व सांडेराव के मध्य में निम्बों का नाथ महादेव का मन्दिर स्थित है।ऐसी किवदंती है कि पाण्डवों द्वारा यहां पर शक्ति-यज किया गया था। वर्तमान में वैशाख पूर्णिमा और महा शिव-रात्रि के दिन यहां मेले का आयोजन होता है।

अन्य मेले

गौरिया गणगौर मेला – बाली तहसील में आदिवासी संस्कृति का परिचायक गौरिया गणगौर मेला गौरियां गांव में प्रतिवर्ष वैशाख शुक्ल सप्तमी को आयोजित होता है।

वरकाना मेला – रानी स्टेशन के निकट स्थित वरकाना जैन तीर्थ पर जैन मतावलम्बियों का यह मेला प्रतिवर्ष पोश शुक्ल दशमी को प्रतिवर्ष आयोजित किया जाता है।

शीतला माता मेला भाटूड गाँव, आशापुरा माताजी ,नाड़ोल प्रमुख हैं।

महोत्सव

(1) रणकपुर महोत्सव – गोड़वाड़ सर्किट के पाली जिलें में स्थित रणकपुर जैन मन्दिर में आयोजित यह स्थानीय त्योहार, क्षेत्रीय लोक संस्कृति और विरासत का अद्भुत संगम प्रस्तुत करता है। राज्य पर्यटन विभाग द्वारा आयोजित रणकपुर- जवांई महोत्सव पाली जिले के लोकप्रिय पर्वो में से एक माना जाता है। इस महोत्सव में अनेक रोचक गतिविधियां आयोजित की जाती है। जिनमें फॉरेस्ट ट्रैकिंग, जैन मन्दिरों का दर्शन, हॉट एयर बेलून, हॉर्स राइडिंग, रस्साकस्सी, क्षेत्रीय लोक नृत्य क्षेत्रीय और शास्त्रीय गायन, योग गतिविधियां, व दीपदान उल्लेखनीय है। इस महोत्सव का सबसे आकर्षक कार्यक्रम यहां स्थित सूर्य मन्दिर के ऑपन एयर एम्फीथिएटर में आयोजित शास्त्रीय एवं लोक प्रस्तुतीकरण के रूप में होता है। प्राय: यह उत्सव 21 से 23 दिसम्बर के मध्य आयोजित किया जाता है। जिसमें देश के विभिन्न क्षेत्रों से पर्यटक आते है और इस उत्सव के सांस्कृतिक रंगों से सरोबार हो जाते है।

(2)गोडवाड़ महोत्सव – गोड़वाड़ सर्किट के पाली जिले की बाली उपखण्ड मुख्यालय पर गोड़वाड़ अचंल की संस्कृति और धरोहर से देशी-विदेशी पर्यटकों को रूबरू कराने के लिए गोड़वाड़ महोत्सव का आयोजन जिला प्रशासन पर्यटन विभाग के तत्वाधान में आयोजित किया जाता है। मार्च महीने में आयोजित होने वाले इस कार्यक्रम में बाली के ऐतिहासिक दुर्ग में इतिहासकार मण्डल द्वारा 12वीं शताब्दी में निर्मित बाली दुर्ग, इसके नामकरण और शासकों की उपलब्धियों का उल्लेख किया जाता साथ ही राजस्थानी लोक कलाकार भी अपनी प्रस्तुतियों के साथ इस कार्यक्रम का हिस्सा बनते है। इस उत्सव के अन्तर्गत भव्य शोभायात्रा और विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम, ख्याति प्राप्त गैर मण्डलों के कलाकार ढोल की थाप पर गैर नृत्य की प्रस्तुतियों देते है। इस आयोजन के अन्तर्गत गोड़वाड़ श्री, हॉर्स राइडिंग, साइकिल रेस, बालक बालिका दौड़, मटका रेस,ऊट नृत्य, आदि । हॉट बेलून पर बाली महोत्सव का टेग लगाकर छोड़ा जाता है। जो इसका एक मुख्य आकर्षण है।

लोक-नृत्य परम्परा – राजस्थान को विश्व के अनेक भागों में नृत्य के क्षेत्र में प्रसिद्धि दिलाने वाला तेरहताली नृत्य पादरला गाँव, पाली जिले की ही देन है। नृत्यों में सादड़ी की मूसल गैर, काणा गाँव की सोपा गैर मुण्डारा की कच्छीघोड़ी नृत्य, मादा व बाली का डण्डिया गैर-नृत्य, बूसी का राग नृत्य, चौघरियों की लूर भील जाति का घूमर नृत्य व गरासियों का गणगौर नृत्य, अपने-अपने क्षेत्र के साथ पूरे प्रदेश में लोकप्रिय है।

राजस्थान के ग्रामीण पर्यटन की चुनौतियां – ग्रामीण पर्यटन के विकास में कई चुनौतियां भी है। पर्यटकों व स्वयं ग्रामीणों में इसके बारे में जागरूकता की कमी है। किसी भी गांव में अच्छा दर्शनीय स्थल होने के बावजूद भी ग्रामीणों को इसका आभास नही होता। अत: ग्रामीणों के बीच जागरूकता बढाना और देश-विदेश में ग्रामीण पर्यटन की कुशल विपणन रणनीतियां बनाना आवश्यक है। साथ ही हमें अपने गांवों का आधारभूत बुनियादी ढांचा भी विकसित करना होगा ताकि जब पर्यटक जब राजस्थान के गांव में जाये तो उनके लिए पक्की सड़कें हो, ठहरने का साफ-सुंदर स्थान हो, स्थानीय ट्यूरिस्ट गाईड हो, बिजली व तीव्र इंटरनेट की सुविधा हो एवं पर्यटकों की दैनिक वस्तुओं की जरूरत को पूर्ण करने की दूकानें हो। इसके अलावा ग्रामीण युवकों को आचार-व्यवहार के बारे में प्रशिक्षित करना होगा ताकि वे पर्यटकों से प्रभावित संवाद कर सकें। अपने आतिथ्य के लिए मशहूर ग्रामीणों को यह प्रशिक्षण देना होगा कि वे कैसे पर्यटक द्वारा उनके गांव में बिताये गये पलों को यादगार बना सके।

निष्कर्ष – राजस्थान के गांव हमेशा से ग्रामीण जीवन से संबंधित अपनी लोक कलाओं, लोक गीत लोक नृत्य, मेले, त्यौहार, किले ,कलात्मक हवेलियोंबावडियों, एवं रेत के धोरों के साथ हस्तशिल्प,चित्रकलाओं एवं स्थापत्य कला के लिए विख्यात रहे है। यहां की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत, प्रकृति के सान्निध्य में खुला वातावरण पर्यटकों को अपनी ओर खींचने के लिए पर्याप्त है। यही सब कारक राजस्थान में ग्रामीण पर्यटन को विपुल संभावनाओं वाला क्षेत्र बना देते है। ग्रामीण पर्यटन से जहां एक तरफ यह ग्रामीण युवकों के लिए रोजगार का माध्यम बनेगा, वहीं दूसरी ओर विभिन्न संस्कृतियों, भाषाओं और जीवन शैली के लोगों को एक-दूसरे के करीब लाकर हमारी राष्ट्रीय एकता को भी मजबूत करेगा।गांव को सुरक्षित और आनंदमयी पर्यटन स्थल में परिवर्तित करने के लिए वहां के स्थानीय समुदायों की भागीदारी एवं सरकार, एनजीओ, ग्राम पंचायत, सामुदायिक संगठन व पीपीपी भागीदारी और समन्वय को साथ सभी मिलकार काम करना होगा। गांव में स्वयं सहायता समूहों के जरिये भी स्थानीय कलाओं का विकास किया जा सकता है। इस प्रकार से हम कह सकते है कि राजस्थान में ग्रामीण पर्यटन की असीम संभावनायें है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. सुरेश चन्द्र बंसल (2016-17) पर्यटन भूगोल एवं यात्रा प्रबंधन, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।

2. हरीश कुमार खत्री (2015) पर्यटन भूगोल, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
3. डॉ. राजेश कुमार व्यास (2013) पर्यटन उदव एवं विकास, राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
4. डॉ. मोहन लाल गुप्ता (2018) जोधपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर।
5. नीरज जयसिंह, शर्मा भगवती लाल (2025) राजस्थान का इतिहास एवं सांस्कृतिक परम्पराराजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
6. सक्सेना हरिमोहन राजस्थान का भूगोल राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
7. भल्ला एल.आर (2022) राजस्थान का भूगोल, कुलदीप बुक डिपो, अजमेर।
8. कुमार जगदीश (2022)शोध प्रंबन्ध गोड़वाड़ सर्किट का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन पर्यटन के विशेष संदर्भ मे।
9. राठौड़ भंवरसिंह गोडवाड़ विरासत सांस्कृतिक, ऐतिहासिक हिन्दी मासिक पत्रिका।
10. रचना सिंह का लेख, टाइम्स ऑफ इंडिया, जयपुर, 18 मई 2017
11. वार्षिक प्रगति प्रतिवेदन (विभिन्न अंक) पर्यटन विभाग राजस्थान
12. चौधरी उम्मेद (2020) रणकपुर पर्यटन स्थल का भौगोलिक अध्ययन शोध पत्र (NSS , ISSN 2394-3793 JUNE -2020)
13. इंदौलिया उमाकांत ग्रामीण पर्यटन की सभावनाएं एवं प्रभाव अखण्ड ज्योति सितम्बर 2015
14. Gupta B Sharma B – Potential appraisal of Haryana tourism shodha prabha UGC care Journal Issn 0974-8946 vol 47
15. व्यक्गित साक्षात्कार : श्री चम्पालाल सहायक लेखाधिकारी, नारलाई –देसूरी।
16. व्यक्गित साक्षात्कार : श्री कान्तिलाल प्रयोगशाला सहायक भाटून्द – बाली।
17. पाली जिला दर्शन 2014
18. भास्कर व राजस्थान पत्रिका समाचार पत्र।
19. www.tourism.rajasthan.gov.in
20. www.tourism.gov.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Psychological Stress, Trauma and Epigenetic Changes in Fibromyalgia

Dr. Rajesh Yadav*

***Asst. Prof. (Zoology) Ramabai Govt. Women P.G. College, Akbarpur, Ambedkar Nagar (U.P.) INDIA**

Abstract: Fibromyalgia is a chronic multisymptom disorder characterized by widespread pain, fatigue, sleep disturbance, cognitive dysfunction, and high comorbidity with mood disorders. Increasing evidence implicates psychological stress and trauma — particularly early-life adverse experiences — in the onset and severity of fibromyalgia. The pathways linking stress and trauma to fibromyalgia risk and expression are complex and likely involve neuroendocrine dysregulation (notably hypothalamic-pituitary-adrenal [HPA] axis and autonomic nervous system dysfunction), neuroinflammation, altered central pain processing (central sensitization), and epigenetic modifications including DNA methylation, histone modifications, and noncoding RNAs (e.g., microRNAs). Epigenetic changes offer a compelling mechanistic bridge between environmental exposures (stress/trauma) and persistent changes in gene expression relevant to pain, immune function, and stress reactivity. This paper synthesizes contemporary evidence linking psychological stress and trauma to epigenetic alterations observed in fibromyalgia, reviews candidate epigenetic biomarkers and mechanisms, discusses implications for diagnosis and treatment, and suggests priorities for future research.
Keywords: Fibromyalgia; Psychological stress; Trauma; Epigenetics; DNA methylation; Neuroinflammation.

Introduction - Fibromyalgia is a chronic pain disorder characterized by widespread musculoskeletal pain, fatigue, sleep disturbances, cognitive impairment, and heightened sensitivity to sensory stimuli. Although its etiology remains incompletely understood, accumulating evidence supports a multifactorial model involving genetic predisposition, environmental exposures, neuroendocrine dysregulation, and altered central pain processing. Among environmental contributors, psychological stress and trauma have emerged as significant factors influencing both disease onset and symptom severity. Epidemiological studies consistently demonstrate higher rates of adverse childhood experiences,chronic psychosocial stress, and posttraumatic stress disorder among individuals with fibromyalgia compared to healthy controls (Kaleychevaet. al., 2021).

The biological mechanisms linking psychological stress and trauma to persistent pain syndromes are complex and involve dysregulation of stress-responsive systems, including the hypothalamic–pituitary–adrenal (HPA) axis, autonomic nervous system imbalance, and neuroimmune activation (Coppens et.al., 2018). Chronic activation of these systems may contribute to central sensitization, a key feature of fibromyalgia characterized by amplified nociceptive signaling within the central nervous system. However, the persistence of these alterations beyond the immediate stress exposure suggests the involvement of long-term molecular regulatory processes (Agorastoset.al., 2018).

Epigenetic modifications such as DNA methylation, histone modifications, and noncoding RNA regulation provide a plausible mechanistic framework through which environmental stressors may exert enduring effects on gene expression without altering DNA sequence. Studies showed that stress-related epigenetic reprogramming of genes involved in stress responsivity, inflammation, and neurotransmission may predispose individuals to maladaptive pain processing and multisystem symptomatology. Therefore, examining the interplay among psychological stress, trauma, and epigenetic alterations offers critical insights into the pathophysiological mechanisms underlying fibromyalgia and may inform future biomarker development and targeted therapeutic strategies.

Psychosocial Stressors and Their Clinical Impact in Fibromyalgia: Accumulating epidemiological evidence indicates that psychological stress and trauma are significant risk factors in the development and clinical manifestation of fibromyalgia. Population-based and clinical studies consistently report a higher prevalence of adverse childhood experiences (ACEs)—including emotional, physical, and sexual abuse, as well as neglect—among individuals with fibromyalgia compared to healthy and

disease controls (Galvez-Sánchez et.al., 2019). Early-life trauma is associated with increased vulnerability to chronic pain syndromes, potentially through long-term alterations in neuroendocrine, autonomic, and immune regulation (Agorastoset.al., 2018). These findings support a stress-sensitization model in which early adversity primes biological systems for heightened reactivity to subsequent stressors. In adulthood, exposure to chronic psychosocial stress, interpersonal violence, and traumatic events has also been linked to the onset and exacerbation of fibromyalgia symptoms. Comorbid psychiatric conditions, particularly posttraumatic stress disorder (PTSD), major depressive disorder, and anxiety disorders, are observed at elevated rates in fibromyalgia populations (Chandanet.al., 2021). The presence of trauma history is associated with greater symptom severity, including intensified pain, fatigue, cognitive dysfunction, and sleep disturbances. Moreover, trauma-exposed individuals frequently demonstrate maladaptive cognitive and behavioral patterns, such as pain catastrophizing and hypervigilance, which may further amplify central sensitization mechanisms (McKernanet.al., 2019).

Clinically, trauma-related dysregulation of the hypothalamic–pituitary–adrenal (HPA) axis and autonomic nervous system has been proposed as a biological substrate linking psychological adversity to persistent pain. Collectively, epidemiological and clinical data support a biopsychosocial framework in which psychological stress and trauma function as both predisposing and perpetuating factors in fibromyalgia, underscoring the importance of trauma-informed assessment and management strategies (Tidmarsh et.al., 2022).

Epidemiological observations alone cannot establish causality, but prospective cohort data and mechanistic findings support a contributory role of psychological stress/ trauma in disease development via long-term alterations in stress-responsive systems and gene regulatory programs.

Stress-Related Neurobiological Mechanisms in Fibromyalgia: Stress-responsive biological systems are increasingly recognized as central components in the pathophysiology of fibromyalgia. Scientific studies showed that the hypothalamic–pituitary–adrenal (HPA) axis is the primary neuroendocrine pathway mediating the stress response. Activation of the hypothalamus leads to the secretion of corticotropin-releasing hormone (CRH), which stimulates the anterior pituitary to release adrenocorticotropic hormone (ACTH), subsequently promoting cortisol secretion from the adrenal cortex. In individuals with fibromyalgia, alterations in HPA axis functioning have been documented, including blunted cortisol responses to acute stress, flattened diurnal cortisol rhythms, and relative hypocortisolism in certain subgroups (Coppens et.al., 2018). Such dysregulation may impair adaptive stress regulation and contribute to enhanced pain sensitivity, fatigue, and mood disturbances.

In parallel, dysfunction of the autonomic nervous system (ANS) has been widely reported. Fibromyalgia patients frequently exhibit sympathetic predominance and reduced parasympathetic (vagal) tone, as evidenced by decreased heart rate variability and impaired cardiovascular reactivity. Persistent sympathetic activation may facilitate nociceptive transmission and disrupt restorative sleep processes, thereby reinforcing symptom chronicity . Reduced vagal activity may further limit anti-inflammatory signaling, exacerbating systemic stress responses (Siracusaet.al., 2021).

Neuroimmune pathways provide an additional mechanistic link between stress and chronic pain. Chronic psychological stress can promote glial cell activation and increase the release of proinflammatory cytokines, leading to low-grade neuroinflammation. This inflammatory milieu may enhance central sensitization, characterized by amplified pain processing within the central nervous system. Interactions among the HPA axis, ANS, and immune mediators create a bidirectional feedback network in which stress-induced biological alterations sustain pain perception and multisystem symptom expression (Bainset.al., 2023). Collectively, dysregulation across these interconnected systems supports a stress-based neurobiological model of fibromyalgia .

Epigenetic Mechanisms in Fibromyalgia: Epigenetic mechanisms encompass molecular processes that regulate gene expression without altering the underlying DNA sequence. These modifications influence chromatin architecture and transcriptional accessibility, thereby modulating cellular phenotype in response to environmental signals. Epigenetic regulation is dynamic yet potentially stable over time, allowing environmental exposures—such as psychological stress and trauma—to produce sustained biological effects. In the context of fibromyalgia and other chronic stress-related disorders, epigenetic processes are increasingly recognized as key mediators linking environmental factors to persistent alterations in neuroendocrine, immune, and nociceptive pathways (Ovromet. al., 2023).

The most extensively studied epigenetic mechanism is **DNA methylation**, which involves the addition of a methyl group to cytosine residues, typically at CpG dinucleotides (Fig.2). Increased methylation in gene promoter regions is generally associated with transcriptional repression, whereas hypomethylation may enhance gene expression. Environmental stressors such as exposure to childhood trauma and chronic psychological stress, particularly during sensitive developmental windows, can alter DNA methylation patterns in genes regulating the hypothalamic–pituitary–adrenal (HPA) axis, inflammatory pathways, and neurotransmission, potentially leading to long-term dysregulation of stress and pain systems (Gerraet.al., 2021).

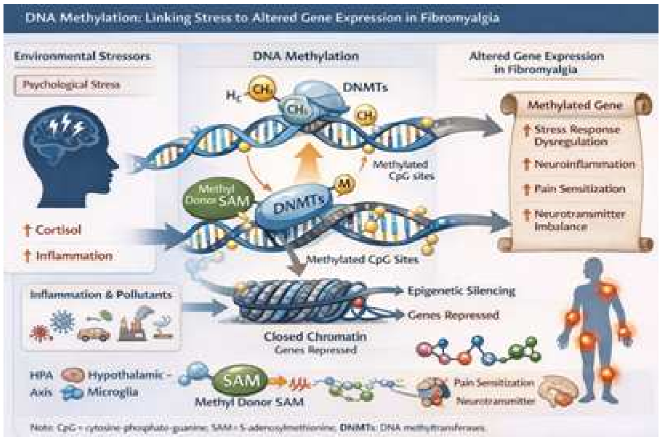

Figure 1: DNA methylation as a key epigenetic mechanism linking environmental stressors to altered gene expression in fibromyalgia.

Another critical mechanism involves **histone modifications**, including acetylation, methylation, phosphorylation, and ubiquitination of histone proteins around which DNA is wrapped. These modifications influence chromatin structure and accessibility of transcriptional machinery (Fig.3). For example, histone acetylation is typically associated with an open chromatin conformation and transcriptional activation, whereas certain methylation patterns may promote chromatin condensation and gene silencing. Stress-induced alterations in histone-modifying enzymes may lead to persistent changes in gene networks regulating neuronal plasticity and immune responses, thereby contributing to central sensitization and chronic inflammation observed in fibromyalgia (Torres-Perez et.al., 2021).

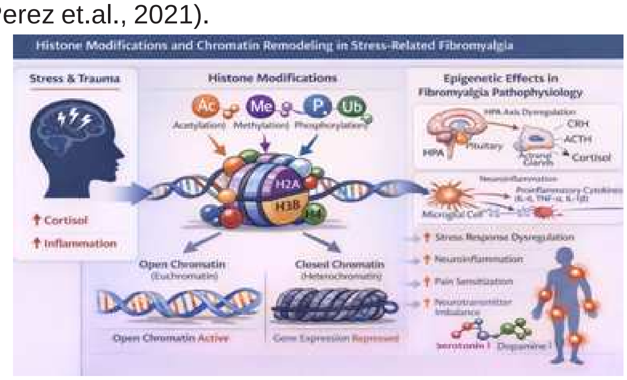

Figure 2: Histone modifications and chromatin remodeling in fibromyalgia

In addition, **noncoding RNAs**, particularly microRNAs (miRNAs), regulate gene expression post-transcriptionally by binding to target messenger RNAs and inhibiting their translation or promoting degradation. Dysregulated miRNA expression in response to psychological stress and trauma may alter inflammatory pathways and nociceptive signaling mechanisms. Such changes are implicated in central sensitization and persistent pain in fibromyalgia pathophysiology (Berg et.al., 2023).

Each mechanism is sensitive to environmental inputs, including psychosocial stress, nutritional status, inflammation, and toxins. Critically, epigenetic marks can be stable over long intervals and may therefore explain how discrete traumatic exposures — particularly during sensitive developmental windows — yield lasting alterations in stress reactivity and pain processing.

Evidences of Epigenetic Alterations in Fibromyalgia: Growing empirical evidence supports the presence of epigenetic alterations in fibromyalgia, suggesting that dysregulated gene expression may contribute to its pathophysiology. Epigenome-wide association studies (EWAS) and candidate-gene analyses have identified differential DNA methylation patterns in individuals with Fibromyalgia compared to healthy controls. Przybylowicz et al. (2023) performed an epigenome-wide screen in blood and described methylation shifts associated with fibromyalgia and chronic fatigue spectrum disorders. These methylation changes frequently involve genes related to stress regulation, immune signaling, neurotransmission, and neuronal plasticity, all of which are central to chronic pain mechanisms. Overall, while interstudy heterogeneity exists (sample size, tissue type, and analytic methods differ), the reproducible finding is that Fibromyalgiais associated with altered DNA methylation signatures that converge on stress-responsive and neuroimmune pathways.

Altered DNA methylation has been reported in genes associated with the hypothalamic–pituitary–adrenal (HPA) axis and glucocorticoid receptor pathways, potentially contributing to abnormal cortisol dynamics observed in Fibromyalgia. Additionally, differential methylation in immune-related genes, including those regulating cytokine production and inflammatory responses, supports the hypothesis of low-grade systemic and neuroinflammation (Penas and Navarro, 2018). These findings align with evidence of glial activation and elevated proinflammatory mediators in affected individuals.

MicroRNA (miRNA) profiling studies further substantiate epigenetic involvement. Several circulating or tissue miRNAs implicated in inflammatory regulation, nociceptive signaling, and synaptic plasticity have been found to be differentially expressed in Fibromyalgia cohorts. Dysregulated miRNA expression may influence post-transcriptional control of target genes, thereby contributing to central sensitization and altered neurotransmitter balance (D'Agnelliet.al., 2019; Akaslanet.al., 2021).

Direct evidence of histone modifications and chromatin remodeling in Fibromyalgia is less numerous than DNA methylation and miRNA studies, but emerging research indicates that chromatin remodeling enzymes and histone marks may be altered in stress-related pain conditions. Preclinical models show stress or trauma can change histone acetylation in brain regions relevant to pain and mood; translational human studies in fibromyalgia are beginning to explore similar marks (Torres-Perezeet.al.,

2021, Ovromet.al., 2023).

Although most studies utilize peripheral tissues such as blood due to limited access to central nervous system samples, consistent patterns across independent cohorts suggest biological relevance. However, heterogeneity in study design, sample size, and analytic methodology necessitates cautious interpretation. Overall, current evidence indicates that epigenetic dysregulation represents a meaningful component of Fibromyalgia pathophysiology and may offer potential biomarkers for diagnosis and therapeutic monitoring (Favrettiet.al., 2023).

Linking Trauma and Stress to Epigenetic Changes: Emerging evidence supports a mechanistic framework in which psychological trauma and chronic stress contribute to persistent epigenetic alterations that influence vulnerability to fibromyalgia. Stress exposure activates neuroendocrine pathways, particularly the hypothalamic–pituitary–adrenal (HPA) axis and sympathetic nervous system, resulting in sustained release of glucocorticoids and catecholamines (Maldonado-Bouchard and Incayawar, 2020). These stress mediators interact with intracellular signaling cascades that regulate epigenetic enzymes, including DNA methyltransferases, histone acetyltransferases, and histone deacetylases, thereby modifying chromatin structure and gene transcription.

During sensitive developmental periods—such as early childhood—epigenetic programming is especially plastic. Exposure to adversity at these stages can induce long-lasting DNA methylation changes in genes involved in stress responsivity (e.g., glucocorticoid receptor–related pathways), inflammatory regulation, and neurotransmission (Alyamani and Murgatroyd, 2018; Boyce et.al., 2021). Such modifications may recalibrate stress thresholds, alter immune signaling, and enhance neuronal excitability, thereby predisposing individuals to maladaptive pain processing later in life.

Chronic stress in adulthood may further reinforce these alterations through cumulative biological burden, often conceptualized as allostatic load. Repeated activation of stress-response systems promotes proinflammatory cytokine release and glial activation, which can interact with epigenetic regulators to sustain transcriptional changes in genes related to nociception and neuroplasticity (Guidiet.al., 2020). Although much of the current evidence is correlational, longitudinal and translational studies increasingly support a causal pathway linking stress exposure to epigenetic remodeling and subsequent symptom persistence. Collectively, trauma- and stress-induced epigenetic modifications provide a plausible biological mechanism connecting environmental adversity to enduring neurobiological dysregulation in fibromyalgia. Empirical work in humans links childhood trauma to altered methylation in stress-related genes, and in fibromyalgia cohorts trauma exposure correlates with both symptom severity and distinct methylation or miRNA profiles. While causal proof from human studies remains challenging, convergent evidence from longitudinal human cohorts and animal models supports the stress'!epigenetic'!phenotype pathway.

Candidate Genes and Pathways Identified in Fibromyalgia Epigenetic Studies: Recent epigenetic investigations in fibromyalgia have identified several candidate genes and molecular pathways that may contribute to altered pain processing, stress responsivity, and immune dysregulation. These findings primarily derive from epigenome-wide association studies (EWAS), candidate-gene methylation analyses, and microRNA (miRNA) profiling studies conducted in peripheral blood or related tissues.

One major category involves genes regulating neurotrophic signaling, particularly brain-derived neurotrophic factor (BDNF). Scientific studies show the epigenetic modifications affecting BDNF expression have been associated with altered neuronal plasticity and central sensitization, mechanisms central to chronic pain amplification (Polliet.al., 2020). Dysregulated methylation patterns in genes involved in monoaminergic neurotransmission—such as serotonergic and dopaminergic pathways—have also been reported. These alterations may contribute to abnormalities in descending pain modulation and explain the frequent coexistence of mood disorders in fibromyalgia (Janssen et.al., 2021).

Immune and inflammatory genes (CD38, cytokine regulators)represent another prominent group of candidates. Differential methylation has been observed in genes regulating cytokine signaling, inflammatory mediators, and immune cell activation. For example, alterations in genes involved in interleukin and tumor necrosis factor pathways suggest that epigenetic modulation may contribute to low-grade systemic and neuroinflammation (Huang et.al., 2023). Such immune dysregulation is consistent with evidence of glial activation and elevated proinflammatory cytokines in fibromyalgia. Additionally, genes associated with stress regulation, including components of the hypothalamic–pituitary–adrenal (HPA) axis and glucocorticoid signaling pathways, have demonstrated epigenetic variability. These changes may influence cortisol responsiveness and stress adaptation (Jovanovicet.al., 2023). Ion channel genes and pathways involved in nociceptor excitability have also been implicated, potentially contributing to heightened pain sensitivity (Œlêczkowskaet.al., 2023).

Collectively, these candidate genes converge on interconnected biological pathways involving neuroplasticity, immune signaling, stress regulation, and nociceptive processing. Although replication and larger cohort studies are required, current evidence supports the role of epigenetic regulation in shaping the molecular landscape underlying fibromyalgia pathophysiology.

Clinical and Translational Implications: One promise of

epigenetic research is the development of objective biomarkers to aid Fibromyalgiadiagnosis and to identify biologically distinct subgroups. Several groups have proposed methylation indices or miRNA panels that differentiate Fibromyalgia from controls with promising sensitivity in initial cohorts (Beiner et.al., 2023) However, these findings require replication in larger, diverse samples and across tissue types before clinical deployment. Nevertheless, epigenetic markers could eventually support earlier diagnosis, prognostic stratification (e.g., trauma-exposed vs non-exposed phenotypes), and personalized treatment selection (D'Agnelliet.al., 2019).

Therapeutic Opportunities: Reversing Maladaptive Epigenetic Programming: The recognition of epigenetic dysregulation as a mechanistic contributor to fibromyalgia has generated interest in therapeutic strategies aimed at reversing maladaptive epigenetic programming. Unlike genetic mutations, epigenetic modifications are dynamic and potentially reversible, rendering them attractive targets for intervention (Davies et.al., 2020). Therapeutic approaches may be broadly categorized into pharmacological, psychological, and lifestyle-based strategies, each with the potential to modulate epigenetic regulation either directly or indirectly.

Pharmacological agents that influence epigenetic machinery—such as DNA methyltransferase (DNMT) inhibitors and histone deacetylase (HDAC) inhibitors—have demonstrated efficacy in oncology and are being explored in neuropsychiatric and pain-related conditions. By altering chromatin accessibility and gene transcription, these agents may theoretically normalize dysregulated expression of genes involved in stress responsivity, inflammation, and nociceptive signaling (D'Agnelliet.al., 2019). However, systemic epigenetic drugs pose challenges related to specificity, off-target effects, and long-term safety, necessitating cautious translational application in fibromyalgia.

Psychological interventions represent a nonpharmacological avenue for epigenetic modulation. Evidence from stress-related disorders suggests that cognitive-behavioral therapy, trauma-focused psychotherapy, and mindfulness-based interventions can influence biological stress markers, including cortisol regulation and inflammatory mediators. Emerging data indicate that psychotherapy may induce measurable epigenetic changes in genes regulating the hypothalamic–pituitary–adrenal axis and immune function, suggesting a potential mechanism through which behavioral interventions exert sustained clinical benefits (Polli et.al., 2019).

Lifestyle factors such as physical activity, sleep optimization, and nutritional modulation also influence epigenetic processes, particularly DNA methylation and histone acetylation pathways. Regular exercise and anti-inflammatory dietary patterns have been associated with favorable epigenetic profiles linked to reduced inflammation and improved neuroplasticity (Ramos-Lopez et.al., 2021). Collectively, integrative therapeutic strategies targeting stress reduction and biological regulation may contribute to the reversal of maladaptive epigenetic programming in fibromyalgia.

Methodological Challenges of Epigenetics Research in Fibromyalgia: Despite growing interest in epigenetic contributions to fibromyalgia, several methodological challenges limit the interpretability and generalizability of current findings. One primary concern is tissue specificity. Most human studies rely on peripheral samples such as whole blood, peripheral blood mononuclear cells, or saliva due to limited accessibility of central nervous system tissue (Favrettiet.al., 2023). However, epigenetic patterns are highly cell-type specific, and peripheral markers may not fully reflect epigenetic alterations within brain regions implicated in pain processing and stress regulation. Advanced approaches, including cell-type deconvolution algorithms and single-cell epigenomic profiling, are necessary to enhance biological precision.

Another critical limitation is clinical heterogeneity. Fibromyalgia is characterized by variable symptom severity, comorbid psychiatric conditions, medication use, and differing trauma histories. Failure to adequately stratify participants may obscure subgroup-specific epigenetic signatures. Standardized diagnostic criteria and detailed phenotyping—including stress exposure assessments—are essential for reproducibility and meaningful subgroup analyses (Sarzi-Puttiniet.al., 2020).

Confounding variables also pose significant challenges. Age, sex, body mass index, smoking status, pharmacotherapy, and circadian influences can independently affect DNA methylation and noncoding RNA expression. Rigorous statistical control and replication in independent cohorts are therefore necessary to reduce bias. Additionally, many existing studies employ cross-sectional designs, limiting causal inference regarding whether epigenetic alterations precede disease onset or arise secondary to chronic pain and stress exposure.

Finally, sample sizes in epigenome-wide association studies (EWAS) are often modest, reducing statistical power and increasing the risk of false-positive findings. Large, longitudinal, multi-omics investigations integrating epigenetics with transcriptomic, proteomic, and clinical data will be critical for clarifying the mechanistic role of epigenetic regulation in fibromyalgia and advancing translational applications.

Future Research Priorities: Advancing the understanding of epigenetic contributions to fibromyalgia requires strategically designed, methodologically rigorous investigations. A primary priority is the implementation of large-scale, longitudinal cohort studies that integrate detailed phenotyping with repeated biological sampling. Such designs would enable examination of temporal relationships between psychological stress, trauma

exposure, epigenetic alterations, and symptom trajectories, thereby improving causal inference. Prospective studies beginning prior to disease onset or during early symptom development would be particularly informative in distinguishing primary epigenetic vulnerabilities from secondary adaptations to chronic pain.

Integration of multi-omics methodologies represents another critical direction. Combining epigenomic data (e.g., DNA methylation, histone modification profiling, microRNA expression) with transcriptomic, proteomic, metabolomic, and neuroimaging datasets may provide a systems-level understanding of fibromyalgia pathophysiology. This integrative approach could identify convergent molecular pathways linking stress biology, immune dysregulation, and central sensitization. Advanced computational modeling and machine learning techniques may further enhance biomarker discovery and patient stratification.

Greater attention to biological heterogeneity is also warranted. Stratification based on trauma history, sex differences, comorbid psychiatric conditions, and autonomic or endocrine phenotypes may reveal biologically distinct fibromyalgia subtypes with unique epigenetic signatures. Additionally, single-cell epigenomic analyses and tissue-specific investigations, when feasible, would refine understanding of cell-type–specific regulatory mechanisms. Finally, translational research evaluating epigenetic changes as treatment-responsive biomarkers should be prioritized. Randomized controlled trials incorporating epigenetic endpoints could determine whether psychological, pharmacological, or lifestyle interventions modify maladaptive epigenetic patterns and whether such modifications correlate with clinical improvement. Collectively, these research priorities aim to bridge mechanistic insight with precision medicine approaches in fibromyalgia. Addressing these priorities will require interdisciplinary collaborations bridging clinical rheumatology, psychiatry, molecular biology, and computational biology.

Conclusion: Fibromyalgia is a multifactorial chronic pain disorder characterized by complex interactions among psychological, neuroendocrine, immune, and molecular mechanisms. Accumulating evidence supports a model in which psychological stress and trauma contribute to dysregulation of the hypothalamic–pituitary–adrenal axis, autonomic imbalance, and neuroimmune activation. Epigenetic mechanisms, including DNA methylation, histone modifications, and microRNA regulation, provide a plausible biological interface linking environmental exposures to sustained alterations in gene expression. Emerging studies demonstrate differential epigenetic signatures in pathways related to stress responsivity, inflammation, neuro-transmission, and neuronal plasticity in individuals with fibromyalgia. Although methodological limitations persist, these findings suggest that maladaptive epigenetic programming may contribute to central sensitization and chronic symptom persistence. Continued integration of longitudinal, multi-omics, and translational research approaches is essential to clarify causal pathways and identify clinically relevant biomarkers. A deeper understanding of stress-related epigenetic regulation may ultimately support the development of mechanism-based, personalized therapeutic strategies for fibromyalgia.a

References:-

1. Agorastos, A., Pervanidou, P., Chrousos, G. P., & Kolaitis, G. (2018). Early life stress and trauma: developmental neuroendocrine aspects of prolonged stress system dysregulation. *Hormones*,*17*(4),507-520.
2. Akaslan, E., Güvener, O., Görür, A., Çelikcan, D. H., Tamer, L., &Biçer, A. (2021). The plasma microRNA levels and their relationship with the general health and functional status in female patients with fibromyalgia syndrome. *Archives of Rheumatology, 36*(4), 482–492.
3. Alyamani, R. A. S., &Murgatroyd, C. (2018). Epigenetic programming by early-life stress. *Progress in Molecular Biology and Translational Science*, *157*, 133-150.
4. Bains, A., Kohrman, S., Punko, D., &Fricchione, G. (2023). A link between inflammatory mechanisms and fibromyalgia. In *Neuroinflammation, Gut-Brain Axis and Immunity in Neuropsychiatric Disorders* (pp. 357-378). Singapore: Springer Nature Singapore.
5. Beiner, E., Lucas, V., Reichert, J., Buhai, D. V., Jesinghaus, M., Vock, S., ...&Tesarz, J. (2023). Stress biomarkers in individuals with fibromyalgia syndrome: a systematic review with meta-analysis. *Pain*, *164*(7), 1416-1427.
6. Berg, F., Moser, D. A., Hagena, V., Streit, F., Mosch, B., Kumsta, R., ...&Diers, M. (2023). MicroRNA-related polymorphism and their association with fibromyalgia. *Genes*, *14*(7), 1312.
7. Boyce, W. T., Levitt, P., Martinez, F. D., McEwen, B. S., &Shonkoff, J. P. (2021). Genes, environments, and time: the biology of adversity and resilience. *Pediatrics*, *147*(2), e20201651.
8. Chandan, J. S., Thomas, T., Raza, K., Bradbury-Jones, C., Taylor, J., Bandyopadhyay, S., &Nirantharakumar, K. (2021). Intimate partner violence and the risk of developing fibromyalgia and chronic fatigue syndrome. *Journal of interpersonal violence*, *36*(21-22), NP12279-NP12298.
9. Coppens, E., Kempke, S., Van Wambeke, P., Claes, S., Morlion, B., Luyten, P., & Van Oudenhove, L. (2018). Cortisol and subjective stress responses to acute psychosocial stress in fibromyalgia patients and control participants. *Biopsychosocial Science and Medicine*, *80*(3), 317-326.
10. D'Agnelli, S., Arendt-Nielsen, L., Gerra, M. C., Zatorri, K., Boggiani, L., Baciarello, M., &Bignami, E. (2019). Fibromyalgia: Genetics and epigenetics insights may provide the basis for the development of diagnostic biomarkers. *Molecular pain*, *15*, 1744806918819944.
11. Davies, A. F., Hill, P., Fay, D., Dee, A., &Locher, C.

(2020). Body reprogramming: reframing the fibromyalgia narrative and providing an integrative therapeutic model. *Health Psychology Open*, *7*(2), 2055102920971494.

12. Favretti, M., Iannuccelli, C., & Di Franco, M. (2023). Pain biomarkers in fibromyalgia syndrome: current understanding and future directions. *International journal of molecular sciences*, *24*(13), 10443.
13. Galvez-Sánchez, C. M., Duschek, S., & Reyes del Paso, G. A. (2019). Psychological impact of fibro - myalgia:current perspectives. *Psychology research and behavior management*, 117-127.
14. Gerra, M. C., Carnevali, D., Pedersen, I. S., Donnini, C., Manfredini, M., González-Villar, A., ...& Carrillo-De-La-Peña, M. T. (2021). DNA methylation changes in genes involved in inflammation and depression in fibromyalgia: A pilot study. *Scandinavian journal of pain*, *21*(2), 372-383.
15. Guidi, J., Lucente, M., Sonino, N.,& Fava, G. A. (2020). Allostatic load and its impact on health: a systematic review. *Psychotherapy & psychosomatics*,*90*(1),11-27.
16. Huang, C., Zhang, N., Wei, M., Pan, Q., Cheng, C., Lu, K. E., ...& Chen, Y. (2023). Methylation factors as biomarkers of fibromyalgia. *Annals of Translational Medicine*, *11*(4), 169.
17. Janssen, L. P., Medeiros, L. F., Souza, A. D., & Silva, J. D. (2021). Fibromyalgia: a review of related polymorphisms & clinical relevance. *Anais da Academia Brasileira de Ciências*, *93*(suppl 4), e20210618.
18. Jovanovic, F., Jovanovic, V., &Knezevic, N. N. (2023). Glucocorticoid hormones as modulators of the kynurenine pathway in chronic pain conditions. *Cells*, *12*(8), 1178.
19. Kaleycheva, N., Cullen, A. E., Evans, R., Harris, T., Nicholson, T., &Chalder, T. (2021). The role of lifetime stressors in adult fibromyalgia: systematic review and meta-analysis of case-control studies. *Psychological medicine*, *51*(2), 177-193.
20. Maldonado-Bouchard, S. I. O. U. I., &Incayawar, M. (2020). The Epigenetic Bridge Between Stress, Chronic Pain, and Psychiatric Disorders. *Overlapping Pain and Psychiatric Syndromes: Global Perspectives*, 63.
21. McKernan, L. C., Johnson, B. N., Crofford, L. J., Lumley, M. A., Bruehl, S., &Cheavens, J. S. (2019). Posttraumatic stress symptoms mediate the effects of trauma exposure on clinical indicators of central sensitization in patients with chronic pain. *The Clinical journal of pain*, *35*(5), 385-393.
22. Ovrom, E. A., Mostert, K. A., Khakhkhar, S., McKee, D. P., Yang, P., & Her, Y. F. (2023). A comprehensive review of the genetic and epigenetic contributions to the development of fibromyalgia. *Biomedicines*, *11*(4), 1119.
23. Penas, C., & Navarro, X. (2018). Epigenetic modifications associated to neuroinflammation and neuropathic pain after neural trauma. *Frontiers in cellular neuroscience*, *12*, 158.
24. Polli, A., Ghosh, M., Bakusic, J., Ickmans, K., Monteyne, D., Velkeniers, B., ...&Nijs, J. (2020). DNA methylation and brain derived neurotrophic factor expression account for symptoms and widespread hyperalgesia in patients with chronic fatigue syndrome and comorbid fibromyalgia. *Arthritis & Rheumatology*, *72*(11), 1936-1944.
25. Polli, A., Ickmans, K., Godderis, L., &Nijs, J. (2019). When environment meets genetics: a clinical review of the epigenetics of pain, psychological factors, and physical activity. *Archives of Physical Medicine and Rehabilitation*, *100*(6), 1153-1161.
26. Przybylowicz, P. K., Sokolowska, K. E., Rola, H., &Wojdacz, T. K. (2023). DNA methylation changes in blood cells of fibromyalgia and chronic fatigue syndrome patients. *Journal of pain research*, 4025-4036.
27. Ramos-Lopez, O., Milagro, F. I., Riezu-Boj, J. I., & Martinez, J. A. (2021). Epigenetic signatures underlying inflammation: An interplay of nutrition, physical activity, metabolic diseases, and environmental factors for personalized nutrition. *Inflammation Research*, *70*(1), 29-49.
28. Sarzi-Puttini, P., Giorgi, V., Marotto, D., &Atzeni, F. (2020). Fibromyalgia: an update on clinical characteristics, aetiopathogenesis and treatment. *Nature Reviews Rheumatology*, *16*(11), 645-660.
29. Siracusa, R., Paola, R. D., Cuzzocrea, S., &Impellizzeri, D. (2021). Fibromyalgia: pathogenesis, mechanisms, diagnosis and treatment options update. *International journal of molecular sciences*, *22*(8), 3891.
30. Œlêczkowska, M., Misra, K., Santoro, S., Gerrits, M. M., &Hoeijmakers, J. G. (2023). Ion channel genes in painful neuropathies. *Biomedicines*, *11*(10), 2680.
31. Tidmarsh, L. V., Harrison, R., Ravindran, D., Matthews, S. L., & Finlay, K. A. (2022). The influence of adverse childhood experiences in pain management: mechanisms, processes, and trauma-informed care. *Frontiers in Pain Research*, *3*, 923866.
32. Torres-Perez, J. V., Irfan, J., Febrianto, M. R., Di Giovanni, S., & Nagy, I. (2021). Histone post-translational modifications as potential therapeutic targets for pain management. *Trends in pharmacological sciences*, *42*(11), 897-911.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Women in Decision Making in India : Why It is Important

Dr. Saba Agwani*

***Associate Professor (Geography) Government College, Gogunda, Udaipur (Raj.) INDIA**

Introduction - "**Women's vision for their societies often differs from men's because they understand clearly the impact of distorted priorities on their families and communities. The vision of women is one of inclusion not exclusion, peace not conflict, integrity not corruption, and consensus not imposition."- Ellen Johnson-Sirleaf**

Ellen Johnson-Sirleaf is a Liberian politician who served as the 24th President of Liberia from 2006 to 2018. Sirleaf was the first elected female head of state in Africa. She was awarded the Nobel Peace Prize for her non-violent efforts to promote peace and her struggle for women's rights.

Almost every class in every culture around the globe has projected an ideal of the woman who endures and sacrifices for her children, her family or her people. But worldwide there are also other visible images of women. In Viet Nam 1,000 years ago, two princesses overthrew Chinese oppression for the first time in that country's history. In seventeenth-century Jamaica, Nanny of the Maroons is reputed to have outwitted the British for three decades. And from contemporary India comes the modern folk heroine Phoolan Devi, the "Bandit Queen". Despite adverse circumstances, she fought for the oppressed and later became a Member of Parliament. When we look at stereotypes of male behavior, exceptions can also be cited. According to a number of experts, the vast outpouring of research since the 1980s has shown fewer differences between men and women based on gender than differences that grow out of disparities in income, household responsibility or access to power.

Despite their diversity, however, there appear to be specific kinds of issues women tend to champion, and they appear to bring distinctive styles to leadership. Arguably, such similarities can be traced to the different positions women hold in society, the ways in which different societies constrain women or enable them to fulfill their human potential and the distinct roles that society expects them to play in relation to men, rather than any supposedly "innate" female or male qualities. In this paper we discuss the female participation in key areas such as: Politics, Adminstration and Judiciary. These are major decision making platform that shape the future of any country or society. Their concerns and styles may vary from one society to another (and within societies), they tend to bring to governance and other public-sector affairs a perspective that in some measure reflects their social and cultural position and the prevailing gendered division of power.

Some differences in women's and men's leadership styles-

Men's Leadership Styles :

1. Maintained a complex network of relationships with people outside their organizations.
2. Identified themselves with their jobs.
3. Have difficulty in sharing information.
4. Biased approach towards women.

Women's Leadership Styles:

1. Maintained a complex network of relationships with people inside and outside their organizations.
2. Saw their own identities as complex and multifaceted.
3. Scheduled time for sharing information.
4. More inclusive approach in decision making.

Participation of women in Political Decision Making: The 2011 UN General Assembly resolution on women's political participation reiterated that:

"***Women in every part of the world continue to be largely marginalized from the political sphere, often as a result of discriminatory laws, practices, attitudes and gender stereotypes, low levels of education, lack of access to health care, and the disproportionate effect of poverty on women."***

India remains a stable, thriving electoral democracy with a 75-year history of constitutional rule, regular elections, and massive voter participation, often described as the "mother of democracy". Our constitution gave equal rights of voting to both the gender from the very first general election that is 1951-52. But unfortunately only 4.9% females were elected in Lok Sabha. There is a very slow increase in the numbers of female representative in India. Among the 543 Member of Parliament in the 18th Lok

Sabha, only 74 (14%) are women. Only national parties and state parties managed to get

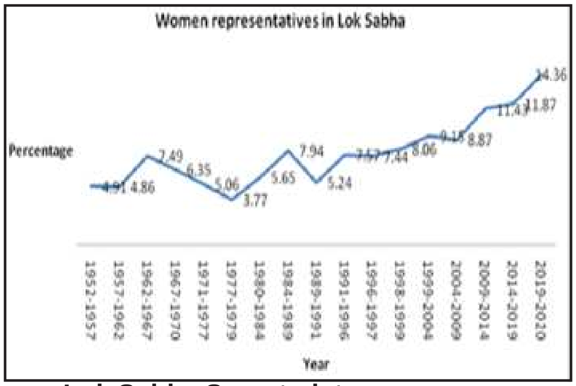

Source: Lok Sabha Secretariat

their women candidates elected. No woman candidate from any unrecognized political party or Independent woman candidate won the elections. Women's participation in the Indian Council of Ministers has historically remained low, typically wavering around 10–15%, with a peak of 17.8% in 2015. While the 18th Lok Sabha (2024) included 7 women in the Union council (approx. 9.7%), women are often concentrated in junior minister roles (MoS) rather than senior Cabinet positions, reflecting a persistent gender gap in political decision-making.

However, since the early 1990's, the 73rd and 74th amendments, which necessitates 33 per cent reservation for women in rural and urban local bodies made it possible for lakhs of women to enter in the political decision making of the country. Since then, there has been a dramatic change in women's representation in local administration. Twenty states have made provision of 50% reservation for women in Panchayati Raj Institutions which is a welcome step. All these states except Punjab and Tripura have achieved this mandate. Further, in Manipur also, 50.7% of the elected representatives are women even though the state has no such legal provision. As on date, the three tier local bodies had more than 1 million women as elected representatives from various facets of social background and become part of the political decision-making process. Women's participation in decision-making is critical for achieving gender equality, as it directly leads to more inclusive, diverse, and effective policies. Including women in leadership—from households to governments—shifts priorities toward social welfare, strengthens democratic governance, reduces conflict, and fosters economic growth, benefiting society as a whole.

1. **Improved Quality of Decisions:** Women in leadership bring different perspectives, fostering creativity and innovation, which leads to better outcomes in corporate and public settings.
2. **Shifting Policy Priorities:** Women in power tend to prioritize education, health, childcare, and social issues, creating policies that reflect the needs of their communities.
3. **Driving Equality and Development:** Active participation in decision-making acts as a catalyst for empowering women, breaking down harmful gender norms, and ensuring women's voices are heard.
4. **Strengthening Democracy & Peace:** Involving women makes governance more legitimate and representative, and in peace negotiations, women's presence results in more durable agreements.
5. **Economic Impact:** Increased participation of women in decision-making roles is associated with better company performance and economic outcomes.

It is the responsibility of the society to ensure that women are given the opportunity to participate equally in all decision making levels and that the institutions have a variety of people and communities that they represent.

Participation of women in Judicial System: No one can deny the fact that more representation of women in the judicial system will tend the women community to seek justice and enforce their rights through the courts. Achieving equality, in terms of representation at all levels of the judiciary should be the goal, not only because it is right for women, but because it is to ensure a more just rule of law. Women judges also live their lives as women, with all the social and cultural norms and obligations of the society.

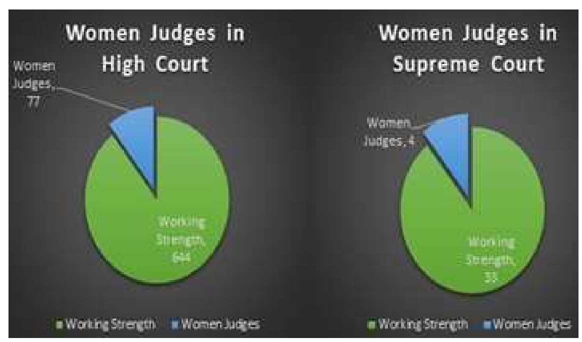

So, women judges are more likely to bring those lived experiences to their judicial actions, experiences that tend toward a more comprehensive and empathetic perspective-one that encompasses not only the legal basis for judicial action, but also awareness of consequences on the people affected.

As per diagram pertaining to the year 2022, in Supreme court of India, out of 29 judges sitting in the office, only 3 are women. In high courts also, only 13% of the judges are women. Such a small representation of women in Judicial decision-making process of the country forces us to think about the need to bring about institutional, social and behavioral change by sensitizing India's population on inclusion of women in every sector. This poor representation of women in judicial systems is a global phenomenon. Noting that a relatively small number of women have been judges including at senior judicial leadership positions at all level, 10th march was proclaimed as the International Day of Women Judges in 2021 by the UN. The UN Resolution was supported by India which is a positive step.

1. **Diverse Perspectives & Better Reasoning:** Women judges bring unique life experiences and viewpoints to the bench, which can lead to different interpretations of the law, particularly in cases involving gender-based issues.
2. **Enhanced Public Trust & Legitimacy:** A judiciary that reflects the gender composition of society increases public confidence in its impartiality.
3. **Gender-Sensitive Justice:** The presence of women ensures that the legal system is more responsive to the specific social contexts and needs of women, aiding in fair trials for victims of crime.
4. **Breaking Stereotypes & Bias:** Women in positions of power help dismantle deeply ingrained gender stereotypes and structural biases within legal institutions.
5. **Role Modeling & Equality:** Increased representation inspires the next generation of women, as highlighted by and, fostering an inclusive legal profession and advancing overall equality.

Participation of women in Management: When women become leaders, they provide a different set of skills and imaginative perspectives. More importantly, female leaders bring structural and cultural differences to the table, which drive effective solutions. This creative standpoint and unique sense of awareness will also allow them to study and uncover the finer details that may go missed by others. As we've established, the working landscape is changing, and the business world is no longer just a man's game. However, competing in this challenging environment is no walk in the park. In case of participation in Management, there are several barriers for women such as lack of education, awareness, criminal and violence, health problems and illnesses, lack of participation, discriminatory treatment, etc.

WOMEN IN ALL INDIA, GROUP 'A' SERVICES

The stream	Year	Female	Male	Total	Percentage
Indian Administrative Service:	2016	838	4,088	4926	Female 17 %
Indian Forest Service	2016	207	2,346	2,553	Female 4 %
Indian Statistical Service	2016	173	556	729	Female 24 %
Indian Police Service	2016	349	3,429	3,778	Female 9 %
Indian Foreign Service	2016	207	2,346	2,553	Female 8 %

Source: Deccan Cronical

As per data of Periodic Labour Force Survey, among the officials working at managerial positions in India, 18.8% were women in 2020 and 18.1% in 2021. In 2021, the highest percentage is seen in Mizoram (41.5%) followed by Sikkim (32.5%), Manipur (31.1%), Meghalaya (30.9%) and Andhra Pradesh (30.3%). The lowest representation of women at managerial position was seen in Dadra & Nagar Haveli and Daman & Diu (1.8%), Uttarakhand (3.4%), Jammu & Kashmir (4.6%), Andaman & Nicobar Islands (7.2%) and Bihar (7.3%).

Ministry of Statistics and Programme Implementation (MoSPI), Government of India, released its publication titled "**Women and Men in India 2023: Selected Indicators and Data**" says. The representation of women in corporate decision-making roles remains inadequate with only 34,879 women holding senior management positions in 2023 as compared to 1,86,946 men. A total of 7,62,712 women were part of the Board of Directors as against 19,75,487 men. Among the workers working as Legislators, Senior officials and Managers in India, 22.2 percent were females in 2022.Among the states, Mizoram, Manipur, Meghalaya and Andhra Pradesh are better off whereas Dadra & Nagar Haveli and Daman &Diu, Uttarakhand, Andaman & Nicobar Islands, Punjab and Nagaland are lagging behind with a wide margin.

Conclusion: Women's participation in decision-making is essential for democratic governance, better organizational performance, and sustainable development. Despite progress, women remain underrepresented in political and corporate leadership. Achieving gender parity in decision-making improves policy outcomes and fosters inclusive growth, requiring the removal of structural barriers and active promotion of women.

References:-

1. Cynthia Epstein, Deceptive Distinctions: Sex, Gender and the Social Order, New Haven, Yale University Press, 1988.
2. https://mospi.gov.in/sites/default/files/publication_ reports/womenmen22/ParticipationDecision Making22.pdf
3. https://www.undp.org/vietnam/publications/promoting-womens-participation-leadership-and-management-positions-viet-nams-political-system-and-public-administration-all
4. Marina Fanning, "Bridging the Gender Gap in Today's Organizations: Understanding the Cultural Differences of Gender", Management Systems International, Washington, D.C., 1995.
5. Ministry of Statistics and Program Implementations (MoSPI) 2023 "Women and Men in India: Selected Indicators and Data".
6. Ministry of Statistics and Program Implementations (MoSPI) 2024 "Women and Men in India: Selected Indicators and Data".
7. V. Spike Peterson and Anne Sisson Runyan, Global Gender Issues, Boulder, Colorado, Westview Press, 1993.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

नव विमर्शों के अंतर्विरोधी द्वंद्व और सामाजिक लोकतांत्रिकरण

डॉ. दत्तात्रय मुरुमकर*

* प्रोफेसर (हिंदी विभाग) मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई (महाराष्ट्र) भारत

प्रस्तावना – साहित्य के लोकतंत्रीकरण की भूमिका एवं राष्ट्र की उन्नति नए विमर्शों के आने के बाद और अधिक तीव्र होती हुई हमें दिखाई देती है। वास्तव में लोकतांत्रिक प्रक्रिया ही अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मूर्त रूप देता है। जिस समाज में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं है उस समाज में साहित्यिक और सामाजिक लोकतंत्र भी प्रस्थापित होता नहीं है। इस मायने से अगर देखा जाए तो विमर्श नए समाज की स्थापना करने के लिए प्रयास करते हुए हमें दिखाई देते हैं। विमर्शों में संघर्ष की भूमिका और किसी भी प्रकार के भेदभाव से रहित समतामूलक समाज की स्थापना यह दो महत्वपूर्ण बिंदु मौजूद हैं। विमर्श उन सत्ता संबंधों की जांच पड़ताल करते हुए अपने आपको, अपने अस्तित्व को, अपने अस्मिता को बेहद शालीन ढंग से प्रस्तुत करते हैं।उन्हें खीझ इस बात पर होती है कि परिधि पर रहे हुए वर्गों, वर्णों को मानवीयता की दृष्टि से देखते नहीं। उन्हें समता और समानता में विश्वास नहीं है।जिन्हें सामाजिक विषमता के कारण ही हजारों वर्षों की परंपरा में विशेषाधिकार के द्वारा विलासी–भोगी या उपभोक्तावादी जीवन जीने की सुविधा, बिना श्रम जीवन जीने की सुविधा प्राप्त हुई और इस प्रकार की व्यवस्थाओं से टक्कर लेने का कार्य लगभग विमर्श करते हैं। इसमें विशेषता स्त्री–विमर्श, दलित–विमर्श और आदिवासी विमर्श की सैद्धांतिकी काफी मजबूत रही है परंतु जिस ढंग से स्त्री–विमर्श केवल पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था को कटघरे में खड़ा करते हुए अपने आपको दैववादी–वर्ण–व्यवस्था से या उसके उत्पीड़न से दूर रखता है वही दलित विमर्श दैववादी–ब्राह्मणवादी, हिंदूवादी, हिंदुत्ववादी– वर्णवादी, विषमतामूलक इन सभी प्रकार की सत्ताओं से टकराता है। जिन्हें लंबे समय तक मनुष्य ही समझा नहीं गया और किसी भी प्रकार के मानवीय अधिकार उन्हें दिए नहीं गए ऐसा यह वर्ग, वर्ण–व्यवस्था और धर्म–व्यवस्था के कारण उत्पीड़न, शोषण, अपमानित, अत्याचारित जीवन जीता रहा। खास करके दलित स्त्री पर इसका काफी बुरा असर पड़ा। शायद इसलिए दलित विमर्श की भूमिका व्यापक पैमाने पर हमें रेखांकित करनी पड़ती है। या वह मूलत: व्यापक पैमाना लेकर ही विकसित हुई है। ठीक यही बात आदिवासी विमर्श के संबंध में भी हमें दिखाई देती है। वस्तुत: आदिवासी विमर्श मातृसत्तात्मक, उदार लोकभूमिका के लोकतांत्रिक स्वरूप पर सदैव से खड़ा है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कहे तो अभिजन के लोक के अतिरिक्त सामाजिक लोक में मान्यताओं के प्रति आग्रह और दुराग्रह कतई दिखाई नहीं देते।रूढ़िवादी संकीर्ण मान्यताओं ने, परंपराओं ने लोक के भीतर जो अलोकतांत्रिक भूमिका विकसित की थी अभिजनों ने उन्हें अछूत मानकर, अशुद्ध मानकर, जंगली मानकर, परिधि पर रखा, उन्हें अपने समाज के साथ किसी भी प्रकार के संपर्क रखने के लिए मनाही की और इसी प्रक्रिया में अछूतपन उनके हिस्से में भी दलितों की तरह आया, लेकिन मूलतरू आदिवासी विमर्श मातृसत्तात्मक भूमिका के प्रति घनिष्ठ रूप से जुड़ा रहा। इसलिए वहाँ शोषण के दैववादी धर्मास्टिक प्रकार, उनके मूल में दिखाई नहीं देते और शायद यही कारण है कि आदिवासी विमर्श में या समाज में विवाह संबंधी किसी भी प्रकार के पवित्रता–अपवित्रता के संबंध में या रक्त संबंधी पवित्रता–अपवित्रता के संदर्भ में संकीर्णता हमें दिखाई नहीं देती।वहाँ बहुविवाह भी है, विधवा विवाह भी है।किंतु संस्थात्मक जकड़न कतई नहीं है। जिस प्रकार स्त्री विमर्श पितृसत्ता और विवाहसंस्था के जंजाल में फंसकर अपनी दुर्गति को अभिव्यक्त करता है, उस प्रकार की स्थितियां आदिवासी विमर्श में दिखाई नहीं देती किंतु दलित विमर्श में यह स्थितियां इस प्रकार स्पष्ट होती हुई हमें दिखाई देती हैं। इसलिए दलित स्त्री का जीवन 'दोहरा अभिशापय लेकर के 'शिकंजी के दर्द' कोलेकर जीती है। यह शिकंजा पुरुषसत्तात्मकतथा विषमतावादी व्यवस्था का रहा है उसे लेकर जीने के लिए विवश होती है।

विमर्शों का संबंध बहुत ही घनिष्ठता के साथ भारतीय ब्राह्मणवादी–हिंदूवादी व्यवस्था से गहरे रूप से जुड़ा हुआ है। इसी परिप्रेक्ष्य में अगर हम यह देखते हैं कि नारीवाद, दलित विमर्श आदिवासी विमर्श और अन्य विमर्श आपनी आस्मितागत आत्मपहचान वाली भूमिका को कैसे देखसकते हैं और अपने इतिहास को, समाज को नए मानवीय मूल्यों के साथ किस प्रकार खड़ा करने की कोशिश करते हैं इसे देखना और समझना आज के समय में बहुत ही चुनौती पूर्ण है। क्योंकि जिस प्रकार देश का माहौल है वह नितांत द्वेषपूर्ण, घृणायुक्त और कट्टरतामूलक बन चुका है। देश के बौद्धिक वर्ग अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का आघोषित रूप से हनन होता हुआ देख रहा है। और पिछले कुछ वर्षों से इसमें निरंतर इजाफा हुआ है। खैर, मुख्य विषय की तरफ आते समय मुझे बहुत ही शिद्दत से नारी विमर्श और दलित विमर्श के साथ–साथ अन्य विमर्शों की नई सामाजिक भूमिका को परखना और उनके चिंतन को सामने रखना जरूरी लग रहा है।

विमर्शों के आरंभिक समय में 'नारीवाद और कुछ नहीं बस एक पश्चिमी मुहावरा और कुछ महिलाओं की अपनी करियरपरस्ती है'(प्रभा खेतान। पितृसत्ता के नए रूप और भूमंडलीकरण, संपादक राजेंद्र यादव, प्रभात खेतान और अभय कुमार दुबे, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण–2003,पृ।22)एक तरह से यह कहकर के नारीवाद को हमेशा खारिज कर दिया गया। ठीक इसी प्रकार दलित साहित्य जातिवाद को फैलाता है यह

कह कर उसे भी नकारा गया। कहा यह भी गया कि यह भारतीय संस्कृति-सभ्यता के साथ जुड़ा हुआ नहीं है। वस्तुत: भारतीय सभ्यता और संस्कृति का संबंध हमारे यहाँ ब्रम्हाणवाद-हिन्दुवाद या हिंदुत्तववाद से ही जोडकर देखा गया है। अन्य अभी अस्तित्वहीन माने गए हैं। यहीं से नव विमर्श निर्मित होते गए। 19 वीं सदी का नवजागरण इसके मूल में रहा और स्वतंत्रता पश्चात इस विमर्शों का उदय एवं विकास अपनी ऐतीहासिक परंपरा से पोषित हुआ।मूल प्रश्न हमारे सामने यह है कि क्या भारतीय सभ्यता संस्कृति वर्णवाद को, जातिवाद को, अस्पृश्यता को, विषमता को,यौनशोषण को, श्रम के शोषण को, या यहां के विषमतामूलक संपूर्ण समाज को आर्थिक, सामाजिक, मानसिक गुलामी में रखना ही भारतीय संस्कृति सभ्यता मानती है? मेरे ख्याल से इस पर हमें गौर से सोचना चाहिए।' साहित्य की दुनिया में समाज विज्ञान के जगत में कुछ कदम रखना आसान नहीं है। आत्मगत और वास्तुगत के समीकरण में जहाँ जोर वास्तुगत पर रहता है और प्राय: यहां साहित्यकार इस दायरे में आकर स्तब्ध रह जाते हैं। सिर्फ संवेदना और अनुभूति से यहां काम नहीं चलता।न ही मात्र भाषा का खेल बहुत दूर तक मदद कर पता है।'(वही, पृ. 22)'तमाम इतिहास और भूगोल की सीमाओं से परे कहीं हम स्त्रियों का दर्द एक ही है। यह हाशिए पर पड़े लोगों का दर्द है। यह उनकी सार्विकता है, उनकी समग्रता है। इतिहास में यह किस वर्ग और जाति का निर्णय रहा है कि परिवार में सब लोग खा चुके तभी औरत को थाली पर बैठने का हक है!...आखिर मुफ्त के श्रम की अपेक्षा स्त्री से ही क्यों?' (वही पृ.21)

यही बात दलित आंदोलन के संदर्भ में भी लागू होती है। सार्वजनिक स्थलों पर त्योहारों में, उत्सव, पर्व में दलित बाद में खाना खाते हैं। दलितों के श्रम का शोषण कैसे होता है इसको प्रेमचंद ने अपनी कई कहानियों में बयां किया हुआ है और हम उसे बहुत अच्छे ढंग से जानते भी हैं।'सद्गति' उसका उत्ताम उदाहरण है।

मृणाल पांडे यह कहती हैंकि,'प्राय: यहां नारीवादी आंदोलन को या तो संपन्न सवर्ण लेखिकाओं का पीड़ा-विलास या दलित और वर्णाश्रम विरोधी आंदोलन का ही एक नन्हा अनुपूरक साबित करने की हड़बड़ी में दिखाई देता है'(वही पृ.29)यहां से निकलकर वह आत्मसंघर्ष-चेतना की स्थिति में पहुँच गया है।जहाँ वह पुरुष को खलनायक और स्वयं को नायक बनाकर के ही प्रस्तुत नहीं करती बल्कि अपने ही अंतर्मन में बैठा 'स्वत्व' नायक के रूप में अपने ही शरीर को छेनी हथौड़ी से तरशाने लगती है। वह पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था के शोषकों को नहीं अपने ही मानोगर्भ में स्थापित व्यवस्था को तोड़ती है।जैसे गगन गिल कहती हैं-

'वह चिढ़ा रही है / मातृदेवी को
वह उकसा रही है / कुल देवों को
वह नरमुंड एक/ गेंद है दु:ख की
गेंद है अ-दु:ख की
अटकना चाहती है इसे वह
भूखे देवों के कंठ में।'

नारीवादी विमर्श के संदर्भ में स्त्री लेखिकाओं में दो प्रकार के दृष्टिकोण पाए जाते हैं एक जो स्त्री को दलित के रूप में देखा है और दूसरा गैर दलित के रूप में। अ-दलित के रूप में देखने वाली सवर्ण स्त्रियाँ स्त्री विमर्श को दलितपन की अवस्था से जोड़कर देखने की हिमायती इसलिए नहीं है क्योंकि छुआछूत संबंधी जो दृष्टिकोण दलितों के संबंध में संपूर्ण सवर्ण समाज के लिए है वह स्त्री के संबंध में उन्हें दिखाई नहीं देता। व्यवस्था के अधीन रहकर सवर्ण स्त्रियाँ स्त्री विमर्श को नया रूपकर देना चाहती है। इसकी अग्रणी लेखिका हम महादेवी वर्मा को मान सकतेहैं। महादेवी वर्मा का संपूर्ण चिंतन स्त्री को आर्थिक पराधीनता से बाहर निकालने के साथ जुड़ा हुआ हमें दिखाई देता है। और वह भी पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था के आर्थिक पहलुओं पर अधिक जोर देती हुई हमें दिखाई देती हैं। लेकिन ऐसा नहीं है इधर एक नया उपन्यास प्रकाशित हुआ है अमरीक सिंह दीप का 'तीर्थाटन के बाद' इस उपन्यास के संदर्भ में हमें यह दिखाई देता है कि दरअसल उपन्यास का मुख्य स्वर है विवाह-संस्था का पुरजोर विरोध करना इसलिए दीप ने उपन्यास के बहुत पहले रचनाकार एंगल्स को उधृत किया है- प्राचीन समय में प्रेम हमेशा औपचारिक समाज के बाहर मिलता था इसका दूसरा नाम था, व्यभिचार। जब तक विवाह-संस्था रहेगी तब तक प्रेम हमेशा वह व्यभिचार के रूप में ही पनपेगा।' (जुलाई 2.24, हंस, पृ. 69) इसका साफ मतलब यह है की प्रेम की परिणिति विवाहसंस्था में स्वतंत्रता की नहीं गुलामी की रही है। विवाहसंस्था को एक सूत्र सोच के रूप में देखती हैं।इजाडोरा डंकन'इजाडोरा डंकन की प्रेमकथा'वह कहती हैं-'मेरी प्यारी माँ मेरे साथ क्यों नहीं रहती थी, इसका कारण था उसका हठ कि मुझे विवाहित होना चाहिए लेकिन खुद उसने विवाह किया था, निभाना मुश्किल पाया और अपने पति से तलाक ले लिया था।फिर वह क्यों उसी जाल में फंसना चाहती थी? मैं अपने अस्तित्व की पूरी ताकत के साथ विवाह के खिलाफ थी। तब मेरा यही विश्वास था और आज भी मैं इसे फिजूल की और गुलाम बनाने वाली संस्था मानती हूँ। खासकर कलाकारों के लिए जिनके विवाह का अंत अमूमन अदालतों में और एक दूसरे पर कीचड़ उछालने वाले मुकदमों में होता है।'(हंस, जुलाई 2024 पृ67)(इजाडोरा डंकन की आत्मकथा बीसवीं सदी की भोर की महान नर्तकी और एक अत्यंत विवादास्पद और उन्मुक्त स्त्री -इजाडोरा डंकन-कीआत्मकथा'माय लाइफ'का हिंदी अनुवाद। एक ऐसी अनूठी स्त्री की शब्दयात्रा जिसने अपने समय से सौ साल आगे जीते हुए प्रेम व जीवन के अद्भुत प्रयोग किए। कला और प्रेम की एक अनूठी भावमय दुनिया। विश्व की श्रेष्ठतम आत्मकथाओं में एक, विश्व की सुंदरतम आत्मकथाओं में सर्वोपरि! है।) (विकिपीडिया) 'सार्त्र और सिमोन द बोउवार तो लिव इन रिलेशनशिप को सर्वोत्तम घोषित करते हैं।' (हंस, जुलाई 2024 पृ 67) हमारे यहाँ लिव इन की अमृता प्रीतम और इमरोज की कहानी सर्वश्रुत है। राधा-कृष्ण प्रेम की मुक्तता का प्रतीक सुर साहित्य एवं भारतीय साहित्य में बिखरा पड़ा है।

वस्तुत: नव विमर्शो का संबंध दैववादी-पितृसत्तात्मक-भोग-उपभोक्तावादी व्यवस्था से घनिष्ठता से जुड़ा हुआ है। जब तक वर्ण-व्यवस्था और विवाह-संस्था जीवित है तब तक यह दोनों, दलित और स्त्रियाँ लगातार इन दोनों व्यवस्थाओं की खिलाफत करती रहेगी क्योंकि इन दोनों का रूप शोषकों, उत्पीडकों, अनाचारियों, अत्याचारियों, बलात्कारियों के रूप में इन्हें दिखाई देता है, और यह वास्तव में है।जिसमें किसी प्रकार की स्वतंत्रता या इच्छित कामनाओं की पूर्ति हेतु प्रचंड धार्मिक रीति-रिवाज कर्मकांडों की नियतिहीनता के बीच दब्बू बनाकर इन्हें जीने के लिए विवश करती है।

यह व्यवस्थाएं इन दोनों का वस्तुकरण और उपभोक्ताकरण ही अधिक करती है।वर्ण व्यवस्था दलित आदिवासियों को सदियों से अपमानित उत्पीड़न करते हुए उनको मानसिक विकलांग या दिव्यांग बना रही है।

भारतीय संदर्भ में नव विमर्श ब्राह्मणवादी-हिंदूवादी विषमतामूलक

व्यवस्था से उपजा है। इसे कोई भी इनकार नहीं कर सकता।

नव विमर्श व्यवस्थागत परिवर्तन की माँग करते हैं। जिस सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व्यवस्था से यह उपजे हैं, उसी के दायरे को तोड़ने का कार्य यह कर रहे हैं। स्त्री विमर्श काफी हद तक इसी व्यवस्था के अधीन रहकर और रेडिकल रूप में उसके दायरे से बाहर आकर उसे संघर्ष करते हुए अपने जेंडर और लैंगिक पहचान के प्रश्नों को सुलझाने का यत्न करते हैं। तो दलित विमर्श इस व्यवस्था को पूरी तरह से नकारकर समतामूलक समाज व्यवस्था की स्थापना चाहता है। स्त्री विमर्श भी अब यह महसूस कर रही है कि भूमंडलीकरण के दौर में नौकरी पेशा स्त्री-पुरुष एक साथ कार्यालयों, उद्योग-केन्द्रों, बहुराष्ट्रीय कंपनियों में समान कार्य रूप में खड़े दिखाई दे रहे हैं किंतु उनके घर-परिवार, समाज की हैसियत में स्थित अभी वही है जैसे पुरातन काल में रही थी।

इसलिए अतीत काल को पुन: वर्तमान में स्थापित करने की इच्छा जहाँ तीव्र होती हुई हमें दिखाई दे रही है वहींउनको पैरों की जूतियाँसमझा गया और पैरों में ही रखने की मंशा, कौंध रही है।

नवपूंजीवाद एवं उपभोक्तावाद ने उसके श्रम एवं शरीर शोषण की नई तरकीबों को खोज निकाला है। निजीकरण ने उसका नौकरी पेशा अस्थिर एवं अस्थाई कर दिया है।ऐसे में उसका यौन शोषण और अधिक बढ़ता जा रहा है। इसे कई चिंतकों तथा संस्थात्मक कई रिपोर्ट ने यह स्पष्ट किया है। साहित्य में इस विषय पर कई कहानियां, उपन्यास प्रकाशित हुए हैं।सभी विमर्शों का आत्मकथा साहित्य इसका सबसे प्रामाणिक स्रोत है। गीत चतुर्वेदी की कहानी 'पिंक स्लिप डैडी', अरुण कुमार असफल की 'कंडोम', सविता पांडे की 'फैशनिष्टा', गीताश्री की 'गोरिल्ला प्यार और उपन्यासों में चित्रा मुद्गल का 'एक जमीन अपनी', अलका सरावगी का 'एक ब्रेक के बाद', प्रदीप सौरभ का 'मुन्नी मोबाइल', सुरेंद्र वर्मा का 'मुझे चांद चाहिए', आदि में इसके चित्र उपस्थित हैं। ब्राह्मणवाद से उपजी दैववादी पितृसत्ता एवं वर्ण-व्यवस्था अपने पौराणिक, ऐतिहासिक संदर्भ में किस प्रकार पिछड़े वर्गों, स्त्रियों का शोषण, दमन, उत्पीड़न किया है यह बार-बार स्पष्ट हुआ है।

दैववादी-पितृसत्ता ने अपने लैंगिक उपभोग के लिए समाज-ऐतिहासिक घृणित देवदासी जैसी प्रथाओं का ईश्वरीय पुरोहित सम्मत अनुमोदन मानकर यौनशोषण अपने-अपने उपभोग सवर्ण समाज ने कैसे किया है इसका इतिहास हमारे सामने है। विवाह संस्था को इसी श्रेणी में रखकर कई पुरुष रचनाकार एवं स्त्री रचनाकारों ने व्याख्यायित किया है।अनामिका का उपन्यास 'दस द्वारे का पिंजरा', मैत्रेयी पुष्पा 'छिन्नमस्ता'प्रभा खेतान की आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' 'कस्तूरी कुंडल बसै' और 'गुडिया भीतर गुडिया' कृष्णा अग्निहोत्री का 'लगता नहीं दिला मेरा' मन्नू भंडारीकी 'एक कहानी यह भी', रमणिका गुप्ता की 'हादसेय, 'आपहुदरी' कौशल्या बैसंत्री- दोहरा अभिशाप, सुशीला टाकभौरे- शिकंजे का दर्द', उर्मिला पवार- 'आयदान', बेबी कांबले- 'जीवन हमारा', अनीता भारती- छूटे पन्नों की उड़ान, कावेरी की टुकड़ा टुकड़ा जीवन, रजनी तिलक-अपनी जमीं अपना आसमाँ, तमिल लेखिका बामा- कोरुक्कू, निर्मला पुतुल, जसिंता केरकट्टा की हरिराम मीणा, अनुज लुगान की कविताएँ, लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी- मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी बदलाव के पदचिह्न, एक किन्नर की आत्मकथा - यशवंत से यशवंती बनने की कहानी, महेंद्र भीष्म- किन्नर कथा, पुरूष तन मेंफांसा, मेरा नारी मनस्थिति मन- मानोबी बांधोपाध्याय, निर्मला भुराडिया-गुलाम मंडी, प्रदीप सौरभ- तीसरी ताली।वैशाली हलदनकर- बारबालाआदि। विपुल साहित्य भंडार विविध पहलुओं पर प्रकाश डालता है। आत्मकथाएं पितृसत्ता के वर्चस्व चले क्षतिग्रस्त इस दुनिया में स्त्री, दलित, आदिवासी, की मुक्ति खोजना चाहता है।

अनामिका का उपन्यास 'दस द्वारे का पिंजरा' पितृसत्ता के वर्चस्व तले निरंतर क्षयग्रस्त इस दुनिया में स्त्री की मुक्ति खोजने का कार्य करता है' (पृष्ठावरन से उधृत) ब्राह्मणवादी-हिंदूवादी संस्कृति की इसी पुल पर सफर करने वाले कई ऐतिहासिक पात्रों से यह उपन्यास पाठकों को अविस्मरणीय मुलाकात कराता है इसमें स्वामी दयानंद, सैनी पावर्स, मैक्समूलर, जस्टिस महादेव गोविंद रानडे, केशवचंद्र सेन, महात्मा ज्योतिबा फुले, सावित्रीबाई फुले, भिखारीठाकुर, महेंद्र मिश्रा, ठेलाबाई, कानन-कुसुम जैसे इतिहास और लोकप्रसिद्ध हस्तियों' के कार्य का परिचय कराकर देता है। इन्हीं के यत्नों में 'हमारी आधुनिकता अपनी मौजूदा शक्ल-सूरत हासिल नहीं कर सकती थी। दिलचस्प बात यह है कि इन किरदारों के साथ-साथ इस पुल पर हिंदू समाज का पतित ब्राह्मणवादी रूढ़िवाद, प्रेम और स्त्री-पुरुष रिश्तों का विमर्श'(पृष्ठावरन से उधृत) भी इसमें उपलब्ध होता है।

वस्तुत:'बीसवीं सदी के मुक्ति-संघर्षों में स्त्री का मुक्तिसंघर्ष सर्वाधिक मूलगामी और सार्वभौमिक तो रहा ही है, वह सर्वाधिक अहिंसक, रक्तहीन और सत्याग्रही भी रहा है। इस संघर्ष की व्यापकता का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि यह जितना बाहरी स्तर पर संघटित और घटित हुआ है, उतना ही आन्तरिक स्तर पर भी वह एक साथ आत्मसंघर्ष, आत्मबोध, आत्मविश्लेषण और आत्माभिव्यक्ति का संघर्ष भी रहा है। दर्शन, मनोविज्ञान, समाजविज्ञान, इतिहास जैसी अनेक विधाएँ इस संघर्ष पर एकाग्र हुई हैं, यह सभी रूप आधुनिक स्त्री विमर्श एवं भारतीय समाज में ऐसे तमाम रूपों की शिनाख्तगी के लिए स्त्री की आत्मकथाओं का अध्'न खास दिलचस्प और महत्वपूर्ण हो जाता है।(अपनीमाटी,वर्ष-3,अंक-24,मार्च,2017, आधी दुनिया रूआत्मकथा और स्त्री - (डॉ.रमाशंकर कुशवाहा)

भारतीय महिला आंदोलन के इतिहास में पंडिता रमाबाई का इतिहास बहुत ही सुनहरा और प्रेरक है।उनका कहना है कि 'धर्म के नाम पर स्त्रियाँ ही निराश्रितों को कुछ देती हैं और धर्म है कि स्त्रियों को कुछ समझता ही नहीं, धर्म की राह पर इनको बाधा मानता है धर्म ग्रंथ पढ़ने की भी सुविधा इनको नहीं देता! और तुर्रा उस पर यह कि विद्या की देवी हो या धन की देवी, साहस की मूर्ति का षोड्स कलाओं की अधिष्ठात्री देवी श्री विद्या सबकी संकल्पना स्त्री-काया में हुई है।' (दस द्वारे का पींजरा, अनामिका, राजकमल प्रकाशन,नयी दिल्ली, पहली आवृत्ति-2..9, पृ. 33)

सभी विमर्श प्रेम के संदर्भ में तथा अनामिका, गीताश्री 'कैद बाहर' के संबंध में रवींद्रनाथ ठाकुर की तरह सोचती हैं। रवींद्रनाथ ने कहा था कि 'प्रेम अधिकार की दवा नहीं करता बल्कि स्वतंत्रता प्रदान करता है।' किंतु प्रेम में जेंडर किस तरह काम करता है यह देखना दिलचस्प है। गीताश्री इन्हीं पर सवाल उठाती हैं- क्यों हमेशा पुरुषों का ही दिल वेश्याओं पर, रानियों पर, वनकन्याओं पर, ऋषिकुमारियों पर आता रहेगा? हम स्त्रियों के पास दिल नहीं होता? हमें पुरुष अच्छे नहीं लग सकते? हम आकर्षित नहीं हो सकती? हम पहल नहीं कर सकती? सदियों से हम इतनी ढीठ नहीं हुई कि च्यवन ऋषि की तरह सुकन्या माँग ले,अगस्त्य ऋषि की तरह लोपामुद्रा माँगले।हमने पसंदीदा पुरुषों से प्रेम तो किया उनका वरन करने की पहल न कर सके।'(हंस जुलाई2.24, पृ. 86)तो अनामिका की रमाबाई कहती है 'मानव मात्र से प्रेम करने की कला है धमरू मनुष्य काला हो या गोरा, पीला हो या लाल, श्वेत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

हो या गुलाबी– आवरणों के पार देखना, देखकर पहचाना सबको जलतत्व, अग्नितत्व, पवनतत्व, आकाशतत्व, महीतत्व से एका – बिठाना यही धर्म है।'(दस द्वारे का पिंजरा, पृ.63)

अनामकुलगोत्र सदाव्रत के साथ पंडिता रमाबाई का विवाह करना संपूर्ण ब्राह्मणवादी परंपराओं का धिक्कार था।इसलिए पूना के ब्राम्हणों ने उनका सामाजिक बहिष्कार किया था।सदाव्रत बार एट लॉ थे, शास्त्रों में पंडित,'पर पुरुष तो उनका एक ही था– वह निष्ठुर सदाव्रत से शादी कर ली वह भी कोर्ट में इस शादी में उनकी अंग्रेजी सहेली फैनी पावर्स और केशवचंद्र सेन का परिवार शामिल हो चुका था....'साल भर बाद जब बच्ची(मनोरमा) हुई: सावित्रीबाई फुले और ज्योतिबा फुले खुद आशीर्वाद देने आए! बच्ची जब तक साल भर की नहीं हो गई– सावित्री बाई साथ ही रही! ज्योतिबा फुले के दाहिने हाथ थे सदाव्रत क्रांतिकारियों की ओर से सारे मुकदमे निरूशुल्क लड़ने वाले सबसे बड़े वकील।' (वही पृ. 67)

'ज्योतिबा फुले ने हंटर कमीशन को जो चिट्ठी लिखी है, उसका मसविदा सदाव्रत ने ही तैयार किया है– और लिखा क्या है–'ब्राह्मणों के पास अक्षर–ज्ञान है और शायद वह भी जिसे वे ब्रह्म–ज्ञान कहते हैं लेकिन उनका यह ब्रह्मज्ञान इतना व्यापक भी नहीं है कि ब्रह्म का विस्तार अब्रह्म में देख पाए!कहने को तो वे कहते हैं–'घट–घट में है राम समाया' पर हाथी के दांत, खाने के और, दिखाने के और। कंजूस का धन है वह उसका ज्ञान भी, उसका छिड़काव मंत्र–जल की तरह वे सिर्फ अपने हित में चाहते हैं। ज्ञान भी एक तंत्र है उनका– राज्यतंत्र साधन लेने का एक टोटका और एक षड्यंत्र कि जो जहाँ है वहाँ बने रहेंस्त्रियाँ,अंत्यज और सारे दबे–कुचले लोग।'(वही पृ. 72)इसके आगे की पंक्तियाँ भी बहुत महत्वपूर्ण हैं।

जब तक रमाबाई भारत में रही ब्रह्मणवादियों द्वारा कोसी गई और उसके बाद भीय 'इसलिए कि एक ब्राह्मण बाला दलित युवक से कोर्ट–मैरिज करके साथ रह रही है।शादी की भी तो निकृष्ट जाति में। ब्राह्मण तो थी, जाति–बहिष्कृत ब्राह्मण ही सही। विश्व भ्रमण पर निकली। तो ईसाई धर्म स्वीकार किया।वहाँ नई धर्म–व्यवस्था में पादरियों की तानाशाही और आदेश उनको हजम नहीं हुए। वहीं मैक्समूलर से मिली और उन्होंने कहा– मैं ईसू के व्यक्तित्व के प्रभाव में ईसाई धर्म से जुड़ी हूँ, पादरियों के प्रभाव में नहीं! उनकी हर बात आँख बंद कर मैं नहीं मान सकती।' (वही, पृ. 95–96)

इधर भारत में रमाबाई का 'धर्मातरण एक राष्ट्रीय मुद्दा' बन गया था! चर्च डर रहा था की झोंकदार औरत का क्या भरोसा! जैसे हिंदुत्व की टोकरी,ईसाईयत पटककर बढ़ जाएगी नयी दिशा में!।'(वही, पृ. 96)हिंदुत्व और ईसाइयत सभी रमाबाई की प्रखर मेधा से खौफ खाते थे। वैचारिक रूप से एक स्वतंत्र स्त्री व्यक्तित्व को हर उस धर्मावलम्बियों के मन में डर रहता है, खासकर उन्हें जिसने शास्त्र भी पढे हो और नई आधुनिक दृष्टि से स्वतंत्र रूप से संपन्न हो।

स्वतंत्र स्त्री और दलित धर्माचारियों, ब्राह्मणवादियों, हिन्दुत्ववादियों को कभी भी रास इसलिए नहीं आए क्योंकि वह उसकी हर सीमाओं, चौखटों, दायरों को तोड़ते हैं।ध्वस्त करते हैं। इन्हें निरीह और बेचारगी और लाचारगी से चुपचाप उनके आदेशों का पालन करने वाली वैचारिक और मानसिक गुलामी के अधीन रहकर केवल और केवल उसका अनुपालन नहीं कर सकते हैं, और वर्चस्ववादी यह व्यवस्था चाहती है कि कोई उनसे तर्क, प्रश्न और जिज्ञासा ना करें। इसी प्रकार से वह अंध मन–मस्तिष्क वाले समाज का निर्माण करते हैं या किया जाता है। यह सब कुछ ईश्वर और धर्म के नाम पर होता है। यह रमाबाई की तरह नई स्त्री समझ चुकी है। इसलिए इन्हीं के नाम पर स्थापित पितृसत्ता, विवाह सत्ता–संस्था और जातिसत्ता–संस्था को नकारकर, उसे तोड़कर वह स्वतंत्र होना चाहती हैं। स्वतंत्रता उसके लिए बहुत बड़े मायने रखती है। व्यक्ति स्वतंत्रता, नया समाज और नए राष्ट्र का निर्माण करती है। यह इतिहास में कई बार सिद्ध हो चुका है।

पंडिता रमाबाई सरीखी असंख्य स्त्री विमर्शकर्ता, स्त्रियों का, लेखिकाओं का, सामाजिक कार्यकर्ताओं का अब यह मानना है कि प्रेम जैसी सर्वोच्च मानवीय भावना का स्वतंत्र भावना का संस्थायन विवाह संस्था में किया गया उससे सत्ता–वर्चस्व की क्रूरता बढ़ी।यही इन्हें मुक्ति की राह दिखाई देती है। विवाह संस्था में मुफ्त बेगार और भोग्या स्त्री पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था को आसानी से नैतिक, सामाजिक बन्धनों के संस्कारों में मिली निरीह स्त्री उन्हें प्राप्त होती है। उन्ही के प्रति अनामिका रमाबाई की ओर से यह सोचती है कि– दोष संस्थायन का ही माना जाएगा! संस्थायन बुरी बला है।आध्यात्मिक मूल्यों का संस्थायन धर्म में होता है तो उसकी नई समस्याएं उभर कर आती हैं।ठीक वैसे ही जैसे प्रेम जैसी सात्विक वृत्ति का संस्थायन 'विवाह' के रूप में होने पर वह शासन–प्रशासन की क्रूर राजनीति और रणनीति से घिरने लगता है।'(वही पृ. 97)

यह संपूर्ण भारतीय स्त्रियों के संदर्भ में सच्चाई है। जिसको इसका बोध होता है वह विद्रोह करती है। जैसे पंडिता रमाबाई, ताराबाई शिंदे, सावित्रीबाई फुले,ढेलाबाई, काननबाला आदिया ने किया।

ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले की प्रेरणा और सहयोग पंडिता रमाबाई को अपने जीवन का सबसे बड़ा संबल मिला।उनसे दुनिया से लड़ना भी सीखा तो बिना किसी जातिगत भेदभाव से लोकसेवा करना भी सीखा 'शारदा सदन' इसका उत्तम उदाहरण है और महर्षि धोंडो केशव कर्वे की पत्नी गोदाबाई भी। कर्वे और गोदाबाई इन दोनों ने मिलकर मुंबई में शारदा सदन के ही मॉडल पर एक और आश्रम खोला था किंतु इसमें केवल ब्राह्मण विधवाओं को प्रवेश दिया जाता था।कर्वे ने कहा था कि – रमाबाई वाला नैतिक साहस और संकल्प उनमें जगन बाकी है अभी उनमे ब्राह्मण समाज से उसे हद तक लोहा लेने की हिम्मत नहीं आई है।'(वही पृ.113)रमाबाई ने अपने जीवन के अंत में अपनी प्यारी पुत्री मनोरमा और होनेवाले दामाद गिरिधर को मात्र ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले के पास इस विचार से छोड़ दिया था कि 'इसके पहले की दोनों विवाह बंधन में बंध जाए ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले के संरक्षण में कुछ दिन रहे! बड़े चरित्र का सानिध्य दृष्टि बड़ी करता है! विराट को देखने वाला विराट से भर जाता है, क्षुद्र को देखने वाला क्षुद्र से, आंखें आत्मा का द्वार है।' (वही पृ. 122)पंडिता रमाबाई को महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, बंगाल, इंग्लैंड, अमेरिका कहीं सुकून नहीं मिला। उसके विवाह से लेकर जीवन के अंतिम समय तक ज्योति–सावित्री का ही आधार मिला। संबल मिला। ज्योतिबा फुले के 'सतसार' नाटक को उन्हीं की बेटी मनोरमा और होने वाले दामाद गिरिधर ने नाट्य रूप में खेला, प्रस्तुत किया। पीढ़ी–दर–पीढ़ी वैचारिक स्वतंत्रता का दायित्व निर्वाहन उन विद्रोही स्त्रियों द्वारा किया गया जो किसी भी प्रकार की गुलामी में बांधने वाली संस्थाओं के व्यक्तित्व को अस्वीकार किया है।

इस मायने में भारतीय स्त्री विमर्श की उद्भाता सावित्रीबाई, विकल विद्रोहीनी पंडिता रमाबाई, ताराबाई शिंदे,ढेलाबाई, कानन–कुसुम जैसी स्त्रियों के बाद हिंदी और भारतीय भाषा साहित्य में अंडाल आदि के बाद महादेवी वर्मा, वर्तमान में स्त्री विमर्श की लेखिकाएं जैसे प्रभा खेतान,

अनामिका,मैत्रेयी पुष्पा, मृदुला गर्ग, गीतांजलि श्री, गीताश्री आदि दैववादी धारणाओं से निर्मित वर्ण-व्यवस्था, जाति-व्यवस्था एवं पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था ने स्त्री एवं दलितों का जीना सदियों से बेहाल कर दिया है। अभी वह मुक्ति का सपना देख ही रही हैं कि पुन: अतीत उन पर तीव्रता से हावी हो रहा है।

ब्राह्मणवाद को मालूम है की जाति-व्यवस्थागत भेदभाव अगर किसी व्यवस्था की आड़ में बचाए जा सकते हैं तो वह है हिंदू धर्म और उसका कठोरता से अमल करने वाले नव-हिंदुत्ववादी क्योंकि वैदिक वर्ण-व्यवस्था के बाद और उसी की तरह खाद-पोस लेकर हिंदू-धर्म बहुसंख्यक जातियों से बना हुआ है। खासकर पिछड़ी जातियों से।इसलिए हिंदू बनाकर ही ब्राह्मणवादी व्यवस्था के अधीन यहाँ की पिछड़ी जातियों को रखा जा सकता है। हिंदू-धर्म, जाति-व्यवस्था की नींव पर खड़ा है।ठीक वैसे ही जैसे कभी अतीत काल में ब्राह्मणवाद वैदिक व्यवस्था, वर्ण-व्यवस्था की नीवपर खड़ी हुई थी।इन दिनों तमाम पिछड़ी जातियों का हिंदुकरण करते हुए ब्राह्मणवाद को बचाया जा रहा है। इस प्रकार की राजनीति का प्रयोग सफल होता दिखाई दे रहा है।1956 के डॉ. बाबासाहब के बौद्ध धम्म स्वीकार के बाद बाद जिन पिछड़ी अस्पृश्य और दलित जातियों ने हिंदुवाद को नकारा उसके बाद अन्य जातियों को उसके साथ जोड़ने की रणनीति बनाई गई।

दलित स्त्री विमर्श दलित कवित्री सरूपारानी लिखती हैं- घर में पुरुष अहंकार एक गाल पर थप्पड़ मारता है तो गली में वर्ण आधिपत्य दूसरी गाल पर।' वही, पृ. 12.) कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा को अगर गौर से पढ़ेंगे 'लगता नहीं दिल मेरा' तो आपको हिंदूवादी मानसिकता के पुरुष को, जो उसके पति के रूप में बैठा है और कई प्रतिष्ठित साहित्यकारों, संपादकों में उसे भोगने की लालसा किस कदर की प्रवृत्ति से उत्प्रेरित है, यह समझा जा सकता है।

पंडिता रमाबाई के बरअक्स आप तमिल लेखिका बामा को देख सकतेहैं। यह एक दलित स्त्री है।जो ईसाई 'नन' बन चुकी थी। 'दलित और अति निर्धन होते हुए भी पढ़ाई करने के लिए संघर्ष करना लगातार अपमान झेलते हुए अध्यापक बनना, नन बनने के लिए कॉन्वेंट जाना, फिर वहाँ पर भी सवर्ण और निचली जाति, अमीर और गरीब के बीच की खाई, सादगी के दावों और असल जीवन के बीच का फर्क देखे हुए कॉन्वेंट व्यवस्था का परित्याग कर वापस समाज में आना।' (पितृसत्ता के नए रूप पृ. 12.) जैसे घटनाक्रम में यह दिखाई देता है कि धर्म चाहे जो भी हो स्त्री को उसकी यातनाओं को भोगना ही पड़ता है, फिर वह स्त्री सवर्ण हो या दलित। कोई विदुषी पंडिता रमाबाई हो या साधारण दलित समाज की बामा हो।

पता नहीं भारत में ऐसे कैसे हो गया कि कोई भी दलित व्यक्ति भारतीय किसी भी धर्म में तथा विदेशी किसी भी धर्म में दलितत्व का अभिशाप झेलने के लिए विवश हो जाता है। जैसे सिख में 'महजबी' सिख अलग से बना दिया गया। जिसका चित्रण जगदीश चंद्र ने अपने उपन्यासों में किया है।लिंगायत में भी दलित अछूत ही है।विदेशी धर्मों में ईसाइयों का उदाहरण बामा के रूप में हमारे सामने है।वैसे इस्लाम और ईसाई धर्म है इनमें भी दलित, दलित ही है। भारतीय इस्लाम में तो साफ-साफ रूप से जातिगत भेदभाव अब भारत में पाया जाने लगा है। यह हिंदू धर्म का प्रभाव नहीं तो और क्या है? बामा ने जातिवाद कैसे बनता है और संस्कारितहोता है इसका जिक्र अपनी आत्मकथा में किया है। बचपन के खेलों को याद करते हुए बामा बताती हैं कि-उनके खेलों में भी जातिगत भेद प्रतिबिंबित होते थे हालांकि लड़के-लड़कियाँ साथ-साथ खेलते लेकिन अक्सर उनमें से कुछ लड़के 'नायकर'(सवर्ण जाति)बन जाते और अन्य बच्चों पर खूब रौब दिखाते, उनका अपमान करते, उन्हें अपशब्द कहते हैं, मानो उसके पास बहुत ताकत आ गई हो। कभी-कभी विवाहित होने का खेल खेलते जिसमें पति शराब पीकर घर आता और अपनी पत्नी को मारता।फिर पुलिस आती और उस पति को खूब पिटती।' (वही, पृ. 124)इससे यह स्पष्ट होता है कि अबोध बच्चों के मन में दलितत्व और स्त्रीत्व के संस्कार तथा उन्हें भोगने का मानस सामाजिक, शैक्षिक दायरे में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में विकसित किया जाता है।भेदभाव पूर्ण पुरुषसत्तात्मक और जातिगत मानस को विकसित किया जाता है।

पंडिता रमाबाई जैसी सवर्ण विदुषी धर्मातरण करती है तो वह जाति बहिष्कृत कर दी जाती है। एक तरह से यह अछूत ही बन जाती है।बामा जैसी दलित स्त्री भी किसी भी धर्म की शरण में जाएं अछूत ही है।अपमानित है, उत्पीड़ित है,शोषित है।सवर्ण स्त्री का शोषण दैववादी पितृसत्ता के द्धारा होता है तो दलित स्त्री का शोषण दैववादी पितृसत्ता भी करती है (देवदासी व्यवस्था के तहत) तथा जाति-व्यवस्थागत शोषण का शिकार हो जाती हैं।

अब यह कैसे हुआ इसे देखना, समझना जरुरी है। भारतीय संदर्भ में दर्शन का प्रयोग धर्म के हित में कैसे किया जाता है इसका उदाहरण आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती के माध्यम से समझा जा सकता है तथा पुनर्जागरण के साथ एनी बेसेंटके मुताबिक 'दासी' रोम की कैथोलिक नन के समक्ष ठहरती थी। ध्यान भक्ति और धार्मिक सेवा उनके जिम्मे था।' (देवदासी या धार्मिक वेश्या? एक पुनर्विचार, प्रियदर्शनी विजयश्री, वाणी प्रकाशन प्र. सं 2.1., पृ 72)के। दामोदरन के द्धारा शैव दर्शन के तत्ववाद का सूक्ष्म अवलोकन करने के पश्चात विवाह-संस्था का आधार और उसमें पति को परमेश्वर मानने की मनो-सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भो को समझा जा सकता है। शैव दर्शन के अनुसार तीन यथार्थ हैं - पशु (जीवात्मा)(यह पत्नी रूप)पाशम (बंधन)(विवाह-संस्था) और पति (विवाह संबंधों में स्वीकृत पति यानी ईश्वर यही पति परमेश्वर के स्थान पर विराजमान होकर पशु रूपी पत्नी को दंडित करता है।) पशु,पाशम के बंधन में जकड़ा रहता है और उसकी मुक्ति पति अर्थात ईश्वर के साक्षात्कार से ही हो सकती है।८(के दामोदरन, भारतीय चिंतन परंपरा, तीसरा संस्करण जून 1982,पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, रानी झांसी रोड नई दिल्ली-55, पृ. 285)

यह आता कहाँ से है? मनुस्मृति से-'मनु के कानून यह मानते हैं कि महिलाएं अपनी प्रकृति में विश्वासघाती होती हैं, उन्हें पुरुषों पर निर्भर होना चाहिए। पति की हर समय भगवान की तरह पूजा होनी चाहिए। यह धारणा सूचित करती है कि पुरुष भगवान है, स्वामी है, मालिक है या अन्नदाता है और शूद्र और महिलाएं उनकीदास हैं।' (भारत में महिला आंदोलन विमर्श और चुनौतियां, सं। साधना आर्य व लता सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 4.) उमा चक्रवर्ती ने एम महत्वपूर्ण मुद्दा उठाया कि - पुराने समय में महिलाओं का स्तर ऊंचा था या नीचा, बल्कि अब समाज में उनके आधिनिकरण का विशिष्ट प्रकार और आधार उनके लिए मुद्दा है।' (वही पृ. 4.)यह आधिनिकरण की प्रक्रिया स्मृतियाँ सुझाती है, महाकाव्य सुझाते हैं, पिता, पति और पुत्र के अधीन ही स्त्रियों को रहना है, वही स्त्री संस्कारी है।'संस्कृता स्त्री पराशक्ति'शीलवान स्त्री परम शक्ति है, ऋषियों ने कहा है। स्त्री शीलता का संबंध उसके शारीरिक अंगों से जोड़कर देखा गया एक पतिव्रता सीता का आदर्श उसके लिए रूढ़ि-दर-रूढ़ि निर्धारित किया गया है। उमा चक्रवर्ती के अनुसार यह आधुनिकीकरण की प्रक्रिया तीन स्तरों पर

कार्य करती है।

पहला जरिया था स्त्री धर्म का पतिव्रत धर्म, जो महिलाओं को स्त्रीत्व की आदर्श कल्पना पर खरा उतरने को प्रेरित करता था, के माध्यम से महिलाओं द्वारा पितृसत्ता का आंतरिकरण, दूसरा जरिया था ब्रह्मणीय सामाजिक नियमावली द्वारा नियत कानून रीति-रिवाज और परंपराएं यह नियम शुद्धता और वफादारी को महिलाओं के परम आदर्श कर्तव्य के रूप में दर्शाकर उन पर सैद्धांतिक नियंत्रण को पुख्ता करते थे। महिलाओं की शुद्धता और जाति की शुद्धता के बीच का संबंध ब्राह्मणीय-पितृसत्ता के केंद्र में था और इसके लिए महत्वपूर्ण भी था। महिलाओं की बहुत ध्यान से रखवाली की जाती थी और निम्न जाति के पुरुषों को उच्च जाति की महिलाओं के साथ लैंगिक संबंध बनाने से रोका जाता था।

चक्रवर्ती का मानना है कि पितृसत्ता परोपकारी पितृसत्तात्मकता की ऐसी पद्धति रही है कि जिसमें आज्ञाकारी महिलाओं को कुछ विशेष अधिकार और सुरक्षा दी जाती थी। यह उनकी अधीनता को अदृश्य कर देती थी और पितृसत्ता में उनकी सहभागिता भी सुनिश्चित करती थी। तीसरा जरिया राज्य का था जो महिलाओं पर पितृसत्तात्मक नियंत्रण को न केवल विचारधारात्मक स्तर पर बल्कि एक वास्तविकता के रूप में बढ़ावा देता था।' (वही, पृ. 4.) ध्यान रहे 'संस्कृता स्त्री पराशक्ति' यह घोषवाक्य देश के एकमात्र महिला विश्वविद्यालय का है जिसकी स्थापना सुधारक महर्षि धोंडो केशव कर्वे जी ने की थी जिन्होंने स्वयं मुंबई में 'विधवा विवाह संघ' की स्थापना की थी। इतना ही नहीं विधवा विवाह के वे पुरस्कर्ता थे। जिन्होंने स्वयं पंडिता रमाबाई के 'शारदा सदन' के आश्रम में पली-बढ़ी गोदाबाई नामक विधवा स्त्री के साथ विवाह किया था।जिसके संबंध में पंडिता रमाबाई लिखती हैं की शारदा सदन के मॉडल पर मुंबई में उन्होंने एक आश्रम खोला था जिसमें बेसहारा स्त्रियाँ अपने पाँव पर खड़ा होने का प्रशिक्षण पाती थी। जिसमें आधुनिक शिक्षा का भी प्रावधान था। सिर्फ एक अंतर था वह यह था कि उसमें सिर्फ ब्राह्मण विधवाओं का ही प्रवेश संभव था। शारदा सदन की तरह हर धर्म जाति की बेसहारा औरतों की खातिर उसके द्वारा खुले नहीं थे और कर्वे इस बात पर शर्मसार हो कहते थे कि- अभी उनमें पंडिता रमाबाई वाला नैतिक साहस और संकल्प जगना बाकी है। अभी उनमे ब्राह्मण समाज से उसे हद तक लोहा लेने की हिम्मत नहीं आई है।' (दस द्वारे का पींजरा, पृ. 113) जाहिर है कि पुरुष ब्राह्मण सुधारक ब्राह्मणवाद से लोहा लेने के लिए असमर्थ थे।कुछ में तो साहस ही नहीं होता था। कुछ तो उस काल में इसे पुख्ता करने के लिए लिख-बोल रहे थे, जी तोड़ कोशिश कर रहे थे, जैसे तिलक आदि।रमाबाई के संगठन ने विवेकानंद जैसे विद्वान से स्त्री स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता के लिए लोहा लिया था।' (दस द्वारे का पिंजरा, पृ. 1.9,11.) भारतीय संदर्भ में ब्रह्मणवाद ने सवर्ण स्त्री की आधीनता और दलित स्त्री की आधीनता को अलग-अलग रूपों में देखा है।सामाजिक दृष्टि से जाति के कारण दलित स्त्री उनके तथा उनके शास्त्रों के लिए हेय है किन्तु काम दृष्टि से वह हे नहीं है। गोपाल गुरु के अनुसार 'जातिव्यवस्था के कारण दलित और जनजातीय औरतें यौनिक हिंसा का ज्यादा शिकार बनती है।' (भारत में महिला आंदोलन, चुनौतियाँ और संभावनाएँ, सं. साधना आर्य, लता सिंह, पृ. 38) और यह तथ्यात्मक विचार है।

जिस वर्ष पंडिता रमाबाई अमेरिका में थी उस वर्ष विवेकानंद भी अमेरिका में थे। रमाबाई ने इसी दौरान 'उच्च वर्ण की हिंदू औरतें' शीर्षक से एक किताब लिखी थी। 'दो वर्ष बाद पूना लौटकर 'शारदा सदन' की स्थापना और विधवाओं के अधिकार- विनियोजन के प्रश्न पर बड़े-बड़े पुरोधाओं से लोहा लेने में जुट गई, अमेरिका का यही 'रमाबाई संगठन' विश्व में विवेकानंद के अनुयायियों से उलझ गया जब 'स्त्रीत्व के आदर्श-हिन्दू, मुस्लिम और ईसाई' नामक अपनेभारत में बेसहारा स्त्रियों के एक सामूहिक घर के लिए आर्थिक सहयोग का अनुरोध वह करती थी। कुछ वर्ष बाद विवेकानंद भी इसी रास्ते पर चले। पर उस वक्त उन्होंने मेरी इस खातिर भरपूर आलोचना की यही वह समय था जब 'उच्च वर्ण की हिंदू औरतों' शीर्षक से एक किताब मैंने लिखी थी 'अमेरिका रमाबाई संगठन' बनाया था अमेरिका का यही 'रमाबाई संगठन' विश्व में विवेकानंद के अनुयायियों से उलझ गया था।' 'भारत में हिंदू मुस्लिम और ईसाई' नामकअपने व्याख्यान में भारतीय स्त्रियों की महिमा में स्थिति का ब्यौरा देकर विवेकानंद भारत गए और उनके व्याख्यान की रपट 'डेली-स्टैंडर्ड यूनियन' में छपी। विवेकानंद के अनुसार आर्य महिलाओं की स्थिति भारत में हमेशा से अच्छी रही थी! हर क्षेत्र में वे पुरुषों कीसधर्मिणी थीं। सेमेटिक जातियों के आक्रमण के बाद यह स्थिति बदली और धीरे-धीरे स्त्री की छवि भारत में 'माता' के रूप में और पश्चिम में 'पत्नी' के रूप में ही रूढ़ होती चली गई! उसके बाद कही गई थी वह बात जिस पर विवाद उठा था। कहा गया था कि 'भारतीय महिलाओं को तो सैकड़ो वर्षों से संपत्ति का अधिकार भी है! पति की मृत्यु के बाद पूरा का पूरा राजपाठतक स्त्रियों के नाम हो जाता है।'

जिस देश में पति की मृत्यु के बाद स्त्री से शांतिपूर्वक जीने का हक भी छीन लिया जाता हो- पति के साथ चिता में ही भस्म नहीं हो गई तो सब छीन-छानकर दर-दर भटकने के लिए मजबूर कर दिया जाता हो, उससे अस्पृश्यता बरती जाती हो- संपत्ति का विशेषाधिकार उसे जोड़ना हास्यापद था! ऐसा भ्रामक प्रचार धर्माधता में विवेकानंद कर सकते हैं- इस बात पर मैक्सम्यूलर भी चकित थे! वह मेरी और से मुखर भी हुए! विवेकानंद की तरफ से राइट डेविड कह रहे थे कि भारत की छवि धूमिल करती फिर रही हैं रमाबाई यह उनका देशद्रोह है, अमेरिकियों के मन में औरतों की खातिर सहानुभूति जताकर संस्था के खातिर पैसा लेना कोई अच्छी बात नहीं है, विधवाएं दुबारा विवाह नहीं कर पाती तो इसलिए भारत में पुरुषों की जनसंख्या कम है, तभी तो बूढ़ों को भी नन्ही लड़कियों से ब्याह करना पड़ता है और अगर बूढ़े धनी हुए तो लड़कियों के लिए यह अच्छा ही है कि बूढ़ा पति जल्दी मरे। भारत-भर घूम कर देख चुका हूँ- भारत की औरतें सबसे ज्यादा सुखी हैं। अगर कहीं अन्य है तो अपवादस्वरूप, वैसा अन्याय और प्राकृतिक दु:ख तो बहुत पुरुष भी झेलते हैं, ऐसा थोड़ी ही है कि स्त्रियाँचंट नहीं होतीं।(दस द्वारे का पिंजरा, पृ. 11.) लगे हाथों इसी संदर्भ में अमेरिकन इतिहासकार मिस कैथरीन मेयो की 'मदर इंडिया' और लाला लाजपतराय का प्रतिवाद अर्थात उत्तर देने हेतु लिखी गयी पुस्तक 'दुखी भारत'(इंडियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग, 1928) को देख सकते हैं।

यहाँ राई डेविड की ओर से विवेकानंद का बचाव और प्रतिवाद बहुत ही विपर्यस्त और पुरुषी खल प्रवृत्ति का निर्देशक है।रमाबाई सोचती हैं 'इतना स्पष्ट था कि स्वामी विवेकानंद के भाषण में स्त्रियाँ एक रेटारिक का हिस्सा थीं, उन्हें 'देश' की उज्जवल छवि पेश करनी थी, फिर वह पढ़े-लिखे 'भद्रलोक' पृष्ठभूमि के पृष्ठभूमि के युवा संन्यासी थे- अपनी 'माँ' के सिवा उन्होंने जाना ही किसको होगा-'भद्रलोक' की सधवा माँएँ तो 'देवी' वगैरह दिखाई देती ही थीं। 'वैष्णव जन तै ने कहिए- पीर पराई जानी रेय एक आदर्श है, तो 'जाकेपैर न फटी बिवाई-सो का जाने पीर पराई' एक यथार्थ

है।

सबसे मजेदार बात तो यह हुई कि युवा संन्यासी ने भारतीय विधवाओं को 'नन' की आध्यात्मिक पदवी दी और कहा की उनका जीवन सधवाओं से ज्यादा पवित्र और सार्थक होता है- ईश्वर की सेवा में सर्वथा समर्पित!चूँकि उन्होंने वकालत पढ़ी थी,'संपत्ति' वाला सवाल जब सीधा उछाला गया तो बात घूमाकर वे (विवेकानंद) बोले- 'भारतीय समाज में माँ की स्थिति इतनी ऊंची होती है और माँ इतनी त्यागमयी होती है कि अलग से उसे संपत्ति दिलाने की बात हिंदू विधेयकों के मन में उठी ही नहीं।' मैं यह बड़े-बड़े बोल सुनती और हँस कर रह जाती! मेरी आंखों के आगे तैर जातीबनारस, वृंदावन, मथुरा की लाखों विधवाएंभगवान की आंखों के आगे- जो लगातार सेठों और पंडों का यौन शोषणध गाली-गलौज और रोटी के लाले झेलती,आधी जिबह मुर्गियों का जीवन जीने को अभिशप्त थी! मैं खुद मिलकर आई थी उन सबसे, तभी तो देव देशवासियों से निवेदन किया थारू- 'विद्वान भाइयों, सुविधासंपन्न मेरी बहनों -

अच्छी तरह देखो-
औरत के जीवन की कविता के पार-
उसके जीवन क रुक्ष गद्य-
खासकर उन औरतों के जीवन का रुक्ष गद्य
जो सड़कों पर पड़ी हैं-
आँखे खोलकर देखो-
अपने उच्चाशय धर्मो ने उनकी
तरफ से कुछ सोचने की
जहमत ही नहीं उठायी!' (वही, पृ. 11.-111)

स्त्रियों को संपत्ति और समानता के अधिकार के मामले में विवेकानंद और उनके अनुयायी गोल मटोल जवाब देते हैं। उस पारंपरिक ढर्रे पर कि 'माँत्यागमयी' को ग्लोरिफाई कर ब्राह्मणवादी उसे ऊंचे आदर्शों पर बिठा देता है। स्त्री देवी है,माँ ऊंचा स्थान रखती है, धर्मशास्त्रों में यह सवाल ही नहीं उठा- इसी जबरदस्त और ऊंची जगह पर स्थापित उच्च वर्ग की भारतीय स्त्री की सच्चा की झूठ का पर्दाफाश रमाबाई कर रही है। कविता में उनकी दुर्दशा के संकेत अनामिका कर रही है।प्रकारांतर से अमेरिकी-सी जैसी संपत्ति कानून में उसके अधिकार माँगों की कोई दिलचस्पी ही नहीं है।क्योंकि स्त्री संबंधी विवेकानंद के आदर्श उनकी 'भद्रलोक' महिलाएं वर्ग से स्थापित होते हैं।भारतीय आम जन की स्त्रियों से नहीं। खासकर के उन सवर्ण विधवा स्त्रियों के यथार्थ से जुड़ा है। हम सोच सकते हैं की पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था अपने ही उच्च वर्ण की स्त्रियों को कोई अधिकार देना नहीं चाहता है तो दलित, आदिवासी, पिछड़ी अवर्ण स्त्रियों के साथ उसका व्यवहार कैसा रहा होगा और आनेवाले समय में कैसा रहेगा। कहीं इतिहास अपने आपको दोहरा न जाएँ?रमाबाई और विवेकानंद के बीच का यह वैचारिक संघर्ष हमें साफ-साफ जतला देता है, बतला देता है कि भारत में स्त्रियों की, स्त्री विमर्श की स्थिति प्राचीन काल से लेकर वर्तमान काल तक किस प्रकार की रही है, वर्तमान में इसमें बहुत सारे परिवर्तन आए हुए हैं लेकिन स्त्री की हैसियत मात्रा सामाजिक, धार्मिक स्तर पर उसी प्रकार की रही है जैसे प्राचीन काल में रही है।

हालांकि वर्तमान में इस प्राचीन अतीत को सुदृढ़ करने की लगातार जी तोड़ कोशिश चलती हुई हमें दिखाई दे रही है।रमाबाई की बेटी मनोरमा कभी-कभी रमाबाई की चुटकी लेकर कहती थी- चार पुरुषार्थों में 'अर्थ' पहले है, उसके बाद आता है धर्म, काम और मोक्ष का,'काश', पुरुषार्थ स्त्रियार्थ भी होते: '(दस द्वारे का पींजरा, पृ. 111)

भारत में स्त्रियों को स्थान ऊंचा दिया गया लेकिन समानता का कोई हक उन्हें कभी भी दिया नहीं गया। आज भी दिया नहीं जाता सामाजिकों ने उनके मानस ही बना दिया गया इसमें भी संपूर्ण स्त्री का की जैसा भी पति परमेश्वर होता है वह नशेड़ी, गंजेड़ी, नालायक, नपुंसक, उत्पीड़नकारी उसका आदर करना चाहिए यह रूढ़िवादी पाखंडी पुरोहितों, धर्माचर्यों, राजाज्ञाओं ने ईश्वरादेशानुसार समस्त स्त्री जाति पर समान रूप से लागू किया।हम सोच भी नहीं सकते कि दर्शन का प्रयोग इस तरह भी किया जा सकता है। के दामोदरन की दृष्टि से इसका उत्तर 'हां' में देना युक्ति युक्त है।उत्तर सामंत काल में (उत्तर ब्राह्मणवाद काल माना जाए) वैदिक अतीत को पुनर्जीवित करके पतनोंमुख धर्म (हिंदू)(ब्राह्मणवादी) को नया जीवन प्रदान करने की व्यग्रतापूर्ण प्रयास (भक्तिकाल)(13वीं 14वीं 15वीं शताब्दी में) किए गए विवाह संस्कार तथा अन्य शुभ अवसरों पर वैदिक मंत्रों का पाठ फिर से जारी किया गया। यज्ञों की प्रथा जीवित की गई। इसके साथ ही, कितने ही लोगों ने तंत्र की शरण ली। तांत्रिक पंथों को पुनर्जीवित करने के नाम पर समाज के रूढ़िवादी तत्वों ने कितने ही भ्रष्ट आचारों को अपनाया' (के. दामोदरन, पृ.326) 'उत्तर सामंत काल के लोगों पर पुराने नियमों को लागू करने के जी-तोड़ प्रयत्न किए गए।' (वही,पृ. 326)इसका नतीजा यह हुआ कि स्त्री एवं दलितों पर कई पाबंदियां लागू कर दी गई। स्त्री पुन: इश्वरादेशों, धर्माचार्यो के आदेशों के कारण स्त्री कठपुतली-सी हो गई तो शूद्रों के गले में पेशवाई का दंड विधान गले में मटका और कमर में झाड़ू लटका दिया गया।एक ओर विवाह संस्था की जकड़न तो दूसरे ओर जाति संस्था की पुन: लागू हुई। इसी मानसिकता का प्रभाव इस कदर होता है कि वह धार्मिक, सामाजिक मान्यताओं की आसानी से शिकार हो जाती हैं। जैसे बामा ने कोरुक्कू में लिखा है - वह लगातार आज्ञाकारिता की प्रतिज्ञा के बारे में बात करते रहते हैं और समर्पण करने के लिए विवश कर देते हैं ताकि हम अपना सिर न उठा सके।हमें अपने बारे में अपनी उम्र के अनुसार सोचने की इजाजत नहीं। वह हमारे लिए और हमारे नाम पर सोचना चाहते हैं।' (पितृसत्ता के नये आयाम, पृ. 127)और किसी भी मनोधार्मिक, पाखंडी संस्थाओं, धर्म-व्यवस्थाओं, व्यक्तियों के चंगुलसे निकलने वाली कोई भी स्त्री बामा हो या पंडिता रमाबाई जैसी असंख्य स्त्रियाँ विद्रोह करती है- वह यह पाती हैं कि 'कान्वेंट के सुरक्षित जीवन ने उनके दृढ़ व्यक्तित्व को भी कमजोर बना दिया था। सात-आठ साल वास्तविक जीवन से अलग-अलग रहने के बाद जीवन के संघर्ष में लौटना सरल नहीं है लेकिन इससे कठिन था एक खोखला आडंबरपूर्ण में जीवन-जिसमें सुविधा तो थी, स्वतंत्रता नहीं, आराम था लेकिन उद्देश्य पूर्ति का कोई अवसर नहींय फिर सारे दर्द के साथ, मेरे मन में कहीं गहरे एक निश्चित खुशी अभी है। मुझमें साहस है, मुझ में स्वाभिमान है।' (वही,पृ. 128-129)

दैववादी- वर्णवादी- ब्राह्मणवादी-पितृसत्तात्मक व्यवस्था को स्वतंत्र और स्वाभिमानी व्यक्तित्व की दरकार सदैव और निसंदेह रहती है, रही है, आगे भी रहेगी। इसलिए उसे कई प्रकार की श्रृंखलाओं। नियमों। कानून, रीति-रिवाज, मान्यताओं, परंपराओं,अंधविश्वासों, व्रत-उपवासों, कर्मकांडों में बांधकर, जकड़कर रखते हैं।यही उनके लिए सभ्य व्यक्ति, व्यक्तित्व, संस्कृति, समाज एवं राष्ट्र आदर्श होता है। इसे जो टकराते हैं वह चरित्रहीन, अशुद्ध, जंगली, पशु, अछूत,दोयम-दर्जे के नागरिक होते हैं।वर्तमान में पुनरू

संकीर्ण धर्म, समाज के क्षेत्र में नागरिकता की यही संकल्पना दृढ़ होती जा रही है, यह बहुत ही दुरूखद है। उसके स्वतंत्र अस्तित्व, दिशा एवं चेतना का अभाव होता है।बामा के शब्दों में कहे तो चर्च हो या मंदिर। गुरुद्धारा हो या मस्जिद किसी भी पूजा-घरों के व्यक्तित्व पुजारी, पंडित, पुरोहित, पादरी, मौलवी यह सवर्ण ही होते हैं। ब्राह्मणवादी मानसिकता के शिकार होते हैं। जैसे बामा कहती है-'यह सभी सवर्ण जातियों के लोग हैं। वे लोग शक्तिशाली पदों पर हैं। कुछ सवर्ण सत्ता हासिल कर लेता है और सर्वहारा तथा गरीबों पर अंधविश्वास एवं अंधभक्ति के माध्यम से काबू पा लेते हैं।दलितों को अब सच का एहसास होने लगा हैकि, उन्हें सीढ़ी बनाकर दूसरों ने स्वयं को ऊपर उठाया है। उन्हें मालूम है कि ईश्वर, ईसाई और चर्च के नाम पर उन्हें गुलाम बनाया गया है। दलितों को समझ आया है कि इन दूसरों ने इंसानों की तरह उन्हें कभी सम्मान नहीं दिया बल्कि अपने मुनाफे के लिए धर्म को इस्तेमाल किया है।' (वही, पृ. 128) लगभग विमर्शों को इसे समझना होगा यही उसकी उपलब्धि रहेगी, उसे नए आयाम मिलेंगे।

जैसे स्त्री होने के नाते स्वयं अपने आपको कटघरे में खड़ा करते हुए रोहिणी अग्रवाल जैसी कथा आलोचक स्वयं से ही यह सटीक सवाल पूछतीं हैं कि- 'हम अपनी शुद्धतावादी- ब्राह्मणवादी संस्कारों का क्या करें जो स्त्री को स्वतंत्र विषय और प्रस्तोता मानने को राजी ही नहीं।' (पितृसत्ता के नये आयाम, वही,पृ. 131)सवर्ण स्त्री आज भी पशोपेश में है कि अपने ही घर, परिवार, समाज में संस्कारों और अपने ही लिङ्गीय भावबोध को लेकर कैसे जिए? उसकी छटपटाहट पिंजरेमें बंद पंछी की तरह है, पंखों में हौसला तो है किंतु उड़ान वह भर नहीं सकती, या कहे उड़ान अभी बाकी है।

कुछ लोग सोचेंगे कि आज दुनिया बहुत बदल गई है। अब वह जमाना नहीं रहा है स्त्री शक्तिशाली एवं स्वतंत्र हो गई है आदि-आदि किंतु अब वह आज का जमाना अभय कुमार दुबे के अनुसार आज का जमाना किस प्रकार का है इसको हम देख समझ सकते हैं। वर्तमान पर यह बहुत ही सटीक बात है। वह कहते हैं- 'भूमंडलीकरण ने पितृसत्ता के कुछ नए रूप रचे। उसने परंपरा और धर्म के अलावा आर्थिक आधुनिकीकरण और वह वैकासिक आग्रहों को भी नई पितृसत्ता का जनक बना दिया जबकि कभी इन दोनों को औरत की आजादी का संभावित जरिया माना जाता था। भूमंडलीकरण के तहत पितृसत्ता और मजबूत हो गई।' (वही, पृ. 63) वह स्वतंत्र अपने देह की नुमाइश करने के लिए होती नजर आ रही है और दैववादी (कामायनी के पुरुषी ही प्रसाद कालीन भोगवादी, वर्तमान में उपभोक्तावादी, उसे खूबसूरत किंतु बिंबो बनाकर भोगने के लिए आतुर है।कई पुरुष एवं महिला कहानीकारों की कहानियों में इसे देखा जा सकता है।मतलब 'कंडम','पिंक स्लिप डैडी', गीताश्री 'कैद बाहर', सविता पांडे, अल्पना मिश्र, प्रत्यक्षा,चित्रा मुद्गल आदि में इनके विविध रूप देखे जा सकतेहैं।

नए उपभोक्तावाद ने उसके सौंदर्य के जरिए बाजार में माल बेचने एवं बाजार का प्रबंध करने अर्थात उपभोक्तावाद को नए सिरे से और अधिक मजबूत बनाने में उसी का सहयोग और विज्ञापनी भाषा में 'पहले इस्तेमाल करो।' के तहत पितृसत्ता, सामंतवाद, पूंजीपतियों ने बहूखूबी भी किया है। ना उनकी चालाकी उभर कर आयी न ही उनका चारित्र।उनका सहयोग स्त्री मुक्ति में रहा उनका विश्व केवल और केवल मुक्ति में रहा है। विकास के नाम पर उनकी निजी अर्थव्यवस्थाओं में उनकी जगह अब तय कर दी गई है।हमाम के इस बाजार में सभी नंगे हैं।

बाजार और बहुराष्ट्रीय कंपनियों, प्रबंधनों का चरित्र अब सामने आ चुका है। पितृसत्ता को समझने का प्रयास सुरंजिता रे किया है- पितृसता का लिंग से नहीं बल्कि जेंडर, जो की एक सामाजिक कल्पना है, से उपन्न होती है।' (भारत में महिला आंदोलन विमर्श और चुनौतियां संपादक साधना आर्य लता सिंह राधा कृष्ण प्रकाशन जगतपुरी दिल्ली 51 प्रथम संस्करण 2023 पृष्ठ 27) एक सामाजिक कल्पना के तौर पर, पितृसत्ताका मतलब केवल पुरुष का प्रभुत्व नहीं है। न ही यह केवल पारंपरिक सोच-मानस है बल्कि यह निरंतरता में पनपती और नए रूपों में ढलती चेतना का प्रवाही रूप है। जिसके अंतर्गत 'लैंगिकता के प्रश्न उनके श्रम, उत्पादकता, प्रजनन क्षमता पर नियंत्रण' (वही, 28)रखते हुए इसको संस्थानिकरण किया जाता है।''इसे इनका संस्थानिकरण और वैधता कई विचारधाराओं, सामाजिक प्रथाओं, ढांचों और संस्थानों जैसे की विवाह, धर्म, वर्ग, जाती, प्रजाती,नस्ल, शिक्षा, मीडिया, कानून, राज्य और समाज से प्राप्त हुई है।' (वही, पृ. 28) इससे उसके आर्दश रूप पत्नी, माता, गृहिणी, देवी, अर्धांगिनी आदि रूप कहदे किये जाते है। 'पितृसत्ता की सूक्ष्म अभिव्यक्तियाँ पौराणिक कथाओं में मिलती हैं। इसमें त्यागमयी। स्वार्थरहित, पवित्र छवि को विशिष्ट रूप से दर्शाया जाता हैं। साथ ही धार्मिक रीतियाँ भी महिलओं की विश्वसनीय पत्नी और निष्ठावान माँ की भूमिकाओं की प्रमुखता पर जोर देती हैं।'(वही, पृ.28)

गौरवमायी अनुभूतियाँ मानवीय संवेदनशीलता को धार्मिक-सांस्कृतिक बायस बनाकर उसका बोध होने नहीं देती।इसी संस्थाओं द्धारा किया जाने वाला उत्पीड़न, अत्याचार, आनाचार, बलात्कार, हत्या,अभाव, दमन, शोषण, हिंसा को सुव्यवस्थित रूप से बंद किया जाता है, ठीक वैसे ही जैसे जिन को बोतल में बंद किया जाता है।सुरंजित रे के अनुसार पितृसत्ता को समझने के लिए कई विचारधाराएं कार्यरत रही हैं- 'उदार नारीवाद' मार्क्सवादी नारीवाद, समाजवादी नारीवाद, रेडिकल नारीवाद आदि किंतु यह सारी स्त्री सत्ता को पितृसत्ता से आजाद करने में या मुक्त करने में इनमे से किसी की कोई भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हुई हमें दिखाई देती है। हाँ, उसकी स्थिति मे परिवर्तन जरूर हुआ क्योंकि यह सभी बीमारी कोई और तथा दवाइयाँ किसी और तरीके से काम करती हैं।

जो स्थिति दलित और स्त्री विमर्श की रही है वही स्थिति लगभग आदिवासी विमर्श के रही है वैसे आदिवासी विमर्श समाज में संस्थात्मक जकड़न न के बराबर है।आदिवासी स्त्री के लिए- विवाह का अर्थ समुदाय के भीतर पुरुष और महिला के बीच एक शिथिल बंधन होता है। शादी के बन्धनों को आसानी से तोड़ा जा सकता है। ऐसा इसलिए कि बच्चों के लालन-पालन की जिम्मेवारी पूरी तरह परिवार की नहीं बल्कि समाज की होती है। बच्चों का लालन-पालन उनकी वैधता साबित करना या संपत्ति के अधिकार की रक्षा किसी के लिए भी परिवार का एक इकाई के रूप में चलते रहना जरूरी नहीं होता और इस कारण वैवाहिक जिंदगी के संबंध में फैसला लेने के लिए महिलाएं अधिक स्वतंत्र होती हैं।कई आदिवासी समूह में जीवनसाथी का चुनाव साप्ताहिक बैठकों में किया जाता है। भागकर शादी करना आम बात है। लड़की के पिता लड़कों को दहेज या बोली के रूप में नकद पैसा, कपड़े, अनाज व दारू इत्यादि देते हैं। दोनों ही जातियाँ(साबरा और जतापू) में एक से अधिक पत्नियाँ रखने का प्रचलन है।जो बेहतर आर्थिक स्थिति का परिचाय होता है।' (पितृसत्ता के नये रूप, पृ. 175) जल, जमीन और जंगल की सुरक्षा आदिवासी समाज इसलिए नहीं करता कि वह उनका संरक्षक है बल्कि इसलिए करता है कि उनकी सभ्यता, संस्कृति जीवित रहे। उनका समृद्ध समतामूलक दृष्टिकोण जीवित रहे। उनकी समतामूलक वैचारिकी

जीवित रहे।स्त्री स्वतंत्रता अबाधित रहे, इसलिए भी वह करता हुआ हमें दिखाई देता है।

लेकिन भूमंडलीकरण और मशीनीकरण ने उनके जनजीवन को ही नहीं बल्कि उनके गाँव-गाँव को भी उजाडा हुआ हमें दिखाई देता है।'ग्लोबल गाँव के देवता होय या 'गायब होता देश' हो या हरिराम मीणा का उपन्यास 'धुनी तपे तीर होय ऐसे कई उपन्यास या कई कविताएं हैं।चाहे अनुज लुगान की कविताएं हो या जसिंता केरकट्टा की कविताएं हो, या 'नगाड़े की तरह बजातेय हैं शब्द' की निर्मला पुतुल हो, इन लगभग आदिवासी रचनाकारों में अपनी सांस्कृतिक अस्मिता और अस्तित्व की चेतना हमें बहुत ही साफ और स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। हम लगभग आदिवासियों को,उसके समाज से नकारा मानते हैं। लेकिन वास्तविक मूल्यात्मक रूप की दृष्टि से अगर सोचें तो यही वह समाज रहा है जो मूल मानवीय चेतना और चिंतन के साथ आज भी अपने आप में जीता हुआ हमें दिखाई देता है। उनकी बदहाली, आर्थिक अवस्था के कारण दिखाई देती है अन्यथा उनकी वैचारिकी मातृसत्ता और स्वतंत्रता मूल्य बहुत ही समृद्ध और सशक्त रही है। अंधविश्वास, कर्मकांड जैसी चीज लगभग सभी धर्मों और समाजों में समान रूप से हमें देखने के लिए मिलती है। इसे अगर छोड़ दिया जाए तो आदिवासी समाज या समूह या विमर्श मेरे ख्याल से समतामूलक दृष्टि से और सामाजिक न्याय की दृष्टि से बेजोड़ रहा है।

पितृसत्ता और वर्ण व्यवस्था के जंजाल से स्त्री और दलितों को मुक्त करने में डॉक्टर बाबासाहेब अंबेडकर की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण रही है।आप अगर ध्यान से देखें तो 19वीं शताब्दी में महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती को छोड़कर के लगभग सुधारक हिंदू धर्म को नए आयाम देने की चेष्टा कर रहे थे। अकेले स्वामी दयानंद सरस्वती थे जिन्होंने 'वेदों की ओर चलोय का नारा दिया और वैदिक व्यवस्था को पुन: आधुनिक पुनर्जागरण के समय में 19वीं शताब्दी की पुनर्जागरण के समय में लागू करने की मंशा रखते हुए आर्य समाज आंदोलन खड़ा किया। मजेदार बात यह है कि स्वयं स्वामी दयानंद सरस्वती वैदिक दीक्षा-शिक्षा प्राप्त कर चुके थे और ईसाई मिशनरियों के स्कूलों के विद्यार्थी थे।डॉ. बाबासाहब ने इसे ही प्रतिक्रान्ति के रूप में देखा है कहा है और 'हिंदू कोड बिल' के जरिए स्त्री मुक्ति की क्रांति कर दी जोसमता मूल्य के कारण दलित समाज को भी सवर्ण के साथ लाकर के खड़ा किया हुआ हमें दिखाई देता है। मेरे ख्याल से सवर्ण समाज के साथ खड़ा किया है ऐसा कहने की वजह समता के मूल्य सवर्ण और दलित और स्त्रियों पर एक साथ लागू किया हुआ हमें दिखाई देता है। इसलिए हमारा संविधान यह कहता है कि हम धर्म, वर्ण,नस्ल, लिंग, रंग, भाषा किसी के भी आधार पर भेदभाव नहीं करेंगे। सभी को समता के तत्वों में उन्होंने पिरोया है।

दुष्यंत के शब्दों में कहें-
वह आदमी नहीं है मुकम्मल बयान है,
माथे पर उसके चोट का गहरा निशान है।
सामान कुछ नहीं हैफटेहाल है मगर,
झोले में उसके पास कोई संविधान है।
उस सरफिरे को एवं नहीं बहला सकोगे आप,
वह आदमी नया है मगर सावधान है।'

आज के वर्तमान के संदर्भ में यूरोपीय जागरण आंदोलन के प्रति जो दृष्टि एंगल्स की है वह यथार्थ है जिसे आज के भारतीय सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जीवन में लागू होते हुए हम देख सकते हैं। एंगेल्स ने कहा था कि- मध्य युग ने धर्म दर्शन के साथ विचारधारा के अन्य सभी रूपों दर्शन राजनीतिक विधि शास्त्र को जोड़ दिया और इन्हें धर्म-दर्शन की उपशाखाएं बना दिया। इस तरह उसने हर सामाजिक और राजनीतिक आंदोलन को धार्मिक जामा पहनाने के लिए विवश किया।आम जनता की भावनाओं को धर्म का चारा देकर और सब चीजों से अलग रखा गया।इसलिए, कोई भी प्रभावशाली आंदोलन आरंभ करने के लिए अपने हितों को धार्मिक जामे में पेश करना आवश्यक था।' (के.दामोदरन, भारतीय चिंतन परंपरा,पृ. 327)यह कथन भारत की 14 वीं और 17वीं शताब्दियों के काल के भारत पर सामान रूप से लागू होती है।' (वही, पृ. 327) और वर्तमान काल की 21वीं शताब्दी के उत्तर आधुनिक, उत्तर औपनिवेशिक भारत पर भी लागू होती हुई दिखाई देती है। दुनिया भर में औपनिवेशिक दासता से मुक्त राष्ट्र अपने स्वतंत्र इतिहास लेखन की ओर प्रेरित हुए हैं। अपने स्वतंत्रता राष्ट्रीय चेतना से परावर्तित होती हुई दिखाई दे रहे है। लेकिन हमें यहां यह ध्यान में रखना चाहिए कि राष्ट्रीय चेतना के साथ धर्म का गठजोड़ बांधना यह राष्ट्रीयता तथा राष्ट्र की अखंडता के लिए बहुत ही घातक होगा।

स्त्री एवं दलित विमर्शों की भूमिका : विचारणीय बिंदु

1. दोनों अपनी इतिहास की खोज में लगे हैं अपने अस्तित्व एवं अस्मिता को तलाश रहे हैं।
2. दोनों मानवीय परिस्थिति का विवरण और वृतांत प्रस्तुत करना चाहते हैं किंतु 'जाति की पारंपरिक प्रवृत्ति' तथा स्त्री पर 'पुरुष आधिपत्य' एवं दलित 'वर्ण व्यवस्था का आधिपत्य' के त्रासद सरातत्वद से उबार नहीं पाते। पिंजरे में कैद पंछी की छटपटाहट दोनों में है।
3. दोनों का विश्लेषण व्यक्तिगत ना होकर सामूहिक है।
4. दोनों दैववादी-पुरुषसत्तात्मक-वर्ण-जाति-व्यवस्था से स्थापित विषमतामूलक, शोषणमूलक उत्पीड़नकारी अमानवीय दकियानूसी, ब्राह्मणवादी-हिंदुत्ववादी, हिंदूवादी परंपरा के खिलाफ संघर्ष करते हैं।
5. दोनों को मुख्य धारा में आने का सत्ता संचालित आरक्षण, संरक्षणवादी कार्य निरंतर अंतर विरोधों से ग्रस्त और सीमांतीय बना रहा है।
6. इस लड़ाई में स्त्री ने 'समर्पण और मुक्ति' को अपनाया है तो दलितों ने 'मुक्ति एवं संघर्ष' को।
7. दोनों साहित्य, सौंदर्यीकरण और भाषा की राजनीति पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं।
8. स्त्री का दैववादी-पुरुषसत्तात्मकदमन और दलित का वर्ण वर्चस्वादी दमन के प्रति साफ एवं स्पष्ट दृष्टिकोण है।
9. दोनों की वैचारिक धारणाएं मुक्ति, स्वतंत्रता, समानता, बंधुता और सामाजिक न्याय की होने के बावजूद स्त्री अधीनस्थता और दलित विलगता के तत्वों का अनुसरण कर रहा है।
10. 'वर्चस्ववादी सत्ता ने दोनों की उपेक्षा, अपमान, अवहेलना, उत्पीड़न, तथा दलित स्त्री मामले में हिंसा, यौनिक शोषण, बलात्कार, हत्या की है। दलित नारीवाद 'अंतर्जातीय विवाह को जाति-मुक्ति' के आंदोलन के रूप में देखता है जबकि सवर्ण स्त्री इसे ही अपनी 'स्वतंत्रता और पुरुषसत्तात्मक गुलामी से मुक्ति' के रूप में पेश करती है। मुक्ति दोनों का उद्देश्य है किंतु उनके अपने-अपने अलग-अलग दृष्टिकोण मौजूद है। इसका परिणाम यह होता है कि सवर्ण स्त्री और दलित स्त्री एकं दूसरे से कभी जुड़ नहीं पाती न ही मुक्ति के लिए कोई सहयोग देने की कोई भूमिका बना पाती है। पुरुषसत्तात्मक

व्यवस्था ने सवर्ण स्त्री की अधिनस्थता में कुछ विशेषाधिकार दे रखे हैं। उसका कहना है कि तू देवी है, वह (दलित स्त्री) कुलटा है। तू सौन्दर्य और कलाकार की उपासक है वह (दलित स्त्री) उच्छृंखल है, उसके भोग (देवदासी या सामान्य रूप में) का सामाजिक सर्वाधिकारी है, तू सिर्फ पति-परमेश्वर की भोग्या है। तू कलाकार है (नाट्यकला और सिनेमा की) वह नाचनेवाली है (छोरा कोल्हाटी का-किशोर शांताबाई काले) आदि।

11. दोनों में ज्ञान का संवेगात्मक बोध कई स्तरों पर समान है।

12. दोनों शोषण की पराकाष्ठा एवं प्रतिक्रिया से उपजे किंतु शोषण का विरोध करने वाले मानवीय विमर्श है।

13. स्त्री विमर्श कर्ता मात्रा अपने आप को अछूत मानने से कतरा जाती है, उसे नकारती है, जबकि वर्ण-जाति-व्यवस्था में उसकी भी वही हैसियत है जैसे दलितों की है। अंतर केवल इतना है सवर्ण-स्त्री को अस्पृश्य समझा नहीं गया, दलित स्त्री को भोगते समय भी अस्पृश्य समझा नहीं गया। वर्ण व्यवस्था काल में भी उससे संतानोत्पत्ति हुई किंतु केवल संपत्ति अधिकार अधिकार से बेदखल करने हेतु उन्हें नीच एवं उनकी संतान को चांडाल की श्रेणी में या अस्पृश्यता की स्थिति में सोच समझकर रखा गया।

14. यहाँ मामला भोग्य-उपभोग का नहीं उसकी सामाजिक स्थिति के निर्धारण का है। दलित पुरुष और स्वर्ण स्त्री से उपजे बच्चे संभवत: सवर्णो के वारिस और संपत्ति के हकदार बिना किसी बवाल के चुपचाप बने होंगे। उस वर्ण या, वर्ग या, जातिगत श्रेणियां बनाई नहीं गई किंतु स्वर्ण पुरुष और दलित स्त्रियों के संदर्भ में या संबंधों में उत्पन्न बच्चों को मात्र संपत्ति के अधिकार से सवर्ण पुरुषसत्ता की व्यवस्था दूर रखती हुई हमें देखने के लिए मिलती है। दलित आत्मकथाओं में सवर्ण स्त्रियों के दलित पुरुषों के साथ के जिस प्रकार की अंतरंगता व्यक्त हुई है उससे इस संभावना का इन्कार नहीं हो पाता है। वैसे पुराणों में एक निषाद कन्या मत्स्यगंधा सत्यवती से हम परिचित हैं। सत्यवती, राजा शांतनु की पत्नी थीं और वेद व्यास की माँ थीं। 'एक युवा महिला के रूप में, सत्यवती की मुलाकात भटकते ऋषि (ऋषि) पराशर से हुई, जिन्होंने बिना विवाह के उसके बेटे व्यास को जन्म दिया। ऋषि ने उसे एक कस्तूरी जैसी सुगंध भी दी, जिसके कारण उसका नाम योजनगंधा ('वह जिसकी सुगंध एक योजन तक फैलती है') और गंधवती ('सुगंधित') पड़ा।

बाद में, राजा शांतनु, उसकी सुगंध और सौंदर्य से मोहित होकर, सत्यवती से प्रेम करने लगे। उसने अपने पिता की इस शर्त पर शांतनु से विवाह किया कि उनके बच्चों को सिंहासन विरासत में मिलेगा, शांतनु के ज्येष्ठ पुत्र और युवराज भीष्म के जन्मसिद्ध अधिकार को नकार दिया। सत्यवती ने शांतनु के दो बच्चों, चित्रांगद और विचित्रवीर्य को जन्म दिया। शांतनु की मृत्यु के बाद, उसने और उसके पुत्रों ने भीष्म की मदद से राज्य पर शासन किया। यद्यपि उसके दोनों पुत्र नि:संतान मर गए, फिर भी उसने अपने सबसे बड़े पुत्र व्यास को नियोग के माध्यम से विचित्रवीर्य की दो विधवाओं की संतानों का पिता बनाने की व्यवस्था की। बच्चे, धृतराष्ट्र और पांडु, क्रमश: कौरवों और पांडवों के पिता बने। पांडु की मृत्यु के बाद, सत्यवती तपस्या में........'

'देवी भागवत पुराण में बताया गया है कि जब सत्यवती ऋषि पराशर को यमुना नदी पार करा रही थी, तो ऋषि सत्यवती से अपनी वासना को संतुष्ट करना चाहते थे और उन्होंने उसका दाहिना हाथ पकड़ लिया। उसने पराशर को रोकने की कोशिश की, लेकिन ऋषि की हताशा और हठ को समझते हुए आखिरकार हार मान ली। सत्यवती सहमत हो गई और उसने पराशर से कहा कि जब तक नाव किनारे पर न पहुँच जाए, तब तक धैर्य रखें। दूसरी तरफ पहुँचने पर ऋषि ने उसे फिर से पकड़ लिया, लेकिन उसने कहा कि उसके शरीर से बदबू आ रही है और संभोग उन दोनों के लिए सुखद होना चाहिए। इन शब्दों पर, मत्स्यगंधा को (ऋषि की शक्तियों द्वारा योजनगंधा ('वह जिसकी सुगंध एक योजन पार से सूँघ सकती है') में बदल दिया गया।', अब उसमें कस्तूरी की गंध थी, और इसलिए उसे कस्तूरी-गंध ('कस्तूरी-सुगंधित') कहा जाता था और पराशर ने मछुआरे में रूपांतरित होकर सत्यवती के साथ संभोग किया ताकि उसकी शुद्धता वापस आ सके।', उसने पराशर से वादा करने के लिए कहा कि संभोग एक रहस्य होगा और उसका कौमार्य बरकरार रहेगाय उनके मिलन से पैदा हुआ पुत्र महान ऋषि जितना ही प्रसिद्ध होगा, और उसकी सुगंध और यौवन शाश्वत होगी। पराशर ने उसे ये इच्छाएँ प्रदान कीं और सुंदर सत्यवती से तृप्त हुए। कृत्य के बाद, ऋषि ने नदी में स्नान किया और चले गए, फिर कभी उससे नहीं मिले। (महाभारत)

उनके आशीर्वाद से प्रसन्न होकर सत्यवती ने उसी दिन यमुना के एक द्वीप पर अपने बच्चे को जन्म दिया। बेटा तुरंत एक युवा के रूप में बड़ा हो गया और उसने अपनी माँ से वादा किया कि जब भी वह उसे बुलाएगी, वह उसकी सहायता के लिए आएगाय फिर वह जंगल में तपस्या करने चला गया। बेटे को उसके रंग के कारण कृष्ण ('काला') या द्वैपायन ('एक द्वीप पर पैदा हुआ') कहा जाता था और बाद में व्यास के रूप में जाना जाता था- वेदों का संकलनकर्ता और पुराणों और महाभारत का लेखक, जिसने पराशर की भविष्यवाणी को पूरा किया।' कुंती और सत्यवती के लेखक प्रदीप भट्टाचार्य रू महाभारत की यौन मुखर महिलाएं, ऋषि पराशर के साथ सत्यवती के मुठभेड़ को संभालने की प्रशंसा करते हैं। वह कहते हैं कि यद्यपि वह युवा है, फिर भी वह जिद्दी ऋषि से बहुत परिपक्वता और सूझबूझ के साथ निपटती है।

प्रदीप भट्टाचार्य टिप्पणी करते हैं, 'इक्कीसवीं सदी में भी हमें आश्चर्यचकित करने वाली परिपक्वता और स्पष्टता के साथ, वह बताती है कि संभोग पारस्परिक रूप से आनंददायक होना चाहिए।' वह इस विश्वास से भ्रमित नहीं है कि ऋषि उससे विवाह करेंगे और समाज में अपनी भविष्य की स्थिति सुनिश्चित करने के लिए कौमार्य माँगती है। भट्टाचार्य उसके अनुरोधों के अनुक्रम पर आगे टिप्पणी करते हैं: दोनों के लिए यौन क्रिया को सुखद बनाने के लिए शारीरिक सुगंध, क्रिया को गुप्त रखने के लिए धुंध का पर्दा, अपने भविष्य के लिए कुंवारी स्थिति और अपने बच्चे के लिए प्रसिद्धि – उसकी प्रसिद्धि को सुरक्षित करना और व्यावहारिक पहलुओं को सुलझाने के बाद, आजीवन युवापन और सुगंध का 'शाश्वत स्त्री' वरदान। भट्टाचार्य कहते हैं: 'आधुनिक समय की महिलाएं चाहती हैं कि वे सत्यवती की तरह आधी भी आत्मविश्वासी, स्पष्ट सोच वाली और अपनी इच्छाओं और लक्ष्यों के प्रति दृढ़ निश्चयी हों।' वे आगे उनकी ष्विशिष्ट दूरदर्शिताष की प्रशंसा करते हैं, जब वह युवराज भीष्म को खत्म करके शांतनु के साथ अपने बच्चों का भविष्य सुनिश्चित करती हैं। वह अपने नाजायज बेटे व्यास को अपने मृत बेटे की विधवाओं के साथ बेटों को जन्म देने के लिए दृश्य पर लाती हैं- प्रसिद्ध 'चंद्र वंश को दास युवती के वंश में बदल देती है'।, (संदर्भ: विकिपीडिया)

15. नारीवाद तब तक चलेगा जब तक पितृसत्ता चलेगी और दलित विमर्श या आंबेडकरिज्म भी तब तक चलेगा जब तक वर्ण-जाति व्यवस्था चलेगी

दोनों एक दूसरे के विलोम नहीं है अनुपूरक हैं। इसे समझना होगा विमर्श वास्तव में लोकतांत्रिकरण की प्रक्रिया एवं भागीदारी का हिस्सा और नाम है। 'मत भिन्नताओं के बावजूद इन्हें संवाद की ओर' (फोरम अगेन्स्ट ऑपरेशन ऑफ वूमेन) बढ़ना होगा। 'अब यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि हाशिये पर पड़ी आवाजों से- इतिहास की शोध जीवनियाँ और साक्षात्कारों के माध्यम से- उजागर हुए ज्ञान ने भेदभाव के खिलाफ भारतीय नारी संघर्षो को इकट्ठा करने में मदद पहुँचाई है। इस प्रकार के शोधों ने नारीवादी राजनीति को दिशा दी है।' (भारत में महिला आंदोलनरू विमर्श और चुनौतियाँ, सं. साधना आर्य, लता सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्र. सं. 2.23, पृ.12.)

16. दलित स्त्री दैववाद- ब्रह्मणवाद एवं पुरुषसत्ता दोनों का प्रतिरोध करती है जबकि अन्य स्त्री रचनाकार, आंदोलन केवल पुरुषसत्ता को नकारती है। किंतु महत्वपूर्ण सवाल पुरुषसत्ता व्यवस्था के निर्माणकर्ता दैववाद-ब्रह्मणवादी व्यवस्था को नकारने का है। केवल पुरुषसत्ता व्यवस्था को न करने से वह नष्ट होने वाली नहीं है। पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था निर्मित के कारकों को नष्ट करने के उपरांत ही स्त्री-पुरुष समानता केवल वैचारिक एवं कागजी धरातल से निकलकर यथार्थ में संभव होगी।

17. इस मायने में दलित स्त्री आत्मकथाओं तथा स्त्री आत्मकथाओं को देखना जरूरी है। उदाहरण के तौर पर देखना हो तो पंडिता रमाबाई को यहाँ पुन: रेखांकित करना आवश्यक है। यह एक प्रचंड वैचारिक विकल विद्रोहिणी है जो महात्मा फुले तथा सावित्रीबाई फुले के जिन ब्राह्मणवादी व्यवस्था को नकारा उनके सानिध्य एवं संपर्क में रहने के बावजूद भी उसे वह नकार नहीं पाई, वह ब्राह्मणवादी-हिंदूवादी मानसिकता की बनी रही। हिंदुत्व के प्रति उनमें एक सॉफ्ट कॉर्नर आजीवन बना रहा। जिसे वह समय-समय पर महसूस कर रही थी। हिंदुत्व को एक जीवन पद्धति मानकर यह कहती है कि- हिंदुत्व अपने मूल अवधारणा में चाहे जितना प्रशस्त मार्ग खोलता हो लेकिन फिलहाल उसके रास्ते में स्त्रियों और शूद्रों के लिए गड्ढे खोदे पड़े हैं। मौका मिला नहीं की बटमार मार-पीटकर गड्ढे में धकेल देते हैं।' (दस द्धारे का पिंजरा, अनामिका, पृ. 94) 'अपने वर्तमान स्वरूप में हिंदुत्व स्त्री विरोधी था' (वही पृ.94) '.....धर्मशास्त्रों को पढ़ाते हुए मैंने जाना कि हिंदुत्व की अगाधता कुछ ज्यादा ही है! (दर्शनशास्त्र के संदर्भ में, अत्याचार के संदर्भ में परखिए इसको) हर बात के दो-दो पहलू मौजूद है वहाँ! अन्तर्विरोध बहुत हैं। एक किताब किसी चीज को वरेण्य मानती है तो उसी पाए की दूसरी किताब उसके विपक्ष में खड़ी होती है। साधारण पाठक व्यर्थ के विवादों में उलझ कर जीवन बिता देता है- लगातार चिंतन या कर्मकांड ही करता रहता है, समाज सेवा का ठोस काम नहीं कर पता।' (वही पृ.94) तत्कालीन समय में रमाबाई को ब्रह्मसमाज भी यंत्रवत लग रहा था। 'उन्होंने (केशवचंद्र सेन के) ब्रह्मसमाज की भी खबर ली है 'आदमी की बनाई मशीन-सा लगता थारू मुक्ति की मशीन! सब धर्मों का यांत्रिक सार...! इतने अंतर्विरोधों के बीच एक बात पर सारे धर्मशास्त्र सहमत है कि स्त्रियां और नीची जाति के लोग हर तरह से अधम हैं और उनकी मुक्ति का मार्ग बस एक है। लाख जूता-लात सहते हुए भी स्वामी-सेवा करते जाना! उसके जीते जीना, उसके साथ मर जाना! जो औरतें पति के साथ सती नहीं होतीं, हिकारत की एक मीठी आँच पर जीवन भर सुलगती रहें- इसका पूरा इंतजाम समाज रखता है। देखिए ना, कितना सीधा तर्क है-

'वेद में मुक्ति के सूत्र हैं-
स्त्रियाँ और शूद्र वेद नहीं पढ़ सकते
इसका सीधा निष्कर्ष क्या है?
कि स्त्रियों और शूद्रों की मुक्ति असंभव है' (वही प्रृ.94-95)

पुरुष स्त्रियों को भोग की सामग्री-भर समझते हैं और मनुजी लिखते हैं कि बलात्कार और भोग की सतायी हुई 'पतित' औरतों की बोटी-बोटी काटकर कुत्तों के आगे डाल देनी चाहियेरू वह भी शहर की सरहद के बाहर! कौन-सी औरत चाहेगी कि बिना प्रेम के उसकी देह का गींजन करे कोई, जो करता है-वह जबरदस्ती ही करता है या प्रेशर-तकनीक के तहत और इसकी 'सजा' भी औरतों को ही मिलती है!' (वाही पृ. 95) इसी तरह का और इतना स्पष्ट विचार रखनेवाली पंडिता रमाबाई 'ईसाईयत के भारतीयकरण' की बात कहती रही हैं। वह कहती हैं कि - प्रतीक ही अपनाने है तो क्रॉस अपनाया जा सकता है लेकिन उसके नीचे खुदा हो- लैटिन में नहीं संस्कृत में हो तो बेहतर- संस्कृत दुनिया की सबसे पुरानी और सबसे लचीली भाषा है- स्मृतियों-अनुगूंजों से भरी हुई है' (वही पृ.112) तात्पर्य यह है कि प्रखर बुद्धिजीविता के बावजूद का संस्कृत धर्म-संस्कृति के प्रति मोहाविष्ट है। यह उनके जीवन का सबसे कमजोर पक्ष लगता है। जिसके विरुद्ध जीवनभर संघर्ष किया है, अंत में क्या उसी का स्वीकार नहीं किया है उन्होंने? तो उत्तर है, 'हां' किंतु जीवन के अंत में बच्ची मनोरमा और होने वाले दामाद गिरधर को मात्र महात्मा फुले और सावित्रीबाई को सौंप दिया। धर्मातरण स्वैच्छिक होना चाहिए, बुद्ध की तरह, धर्मातरण में जबरदस्ती उन्हें 'आत्मिक बलात्कार' (वही, पृ.112) लगता है। कोई भी धर्म पंडिता रमाबाई और तमिल लेखिका बामा को दस द्धारे का पिंजरा लगता है। किसी भी रास्ते से लौटकर पिंजरे में ही आना यह उसकी विवशता है। जिसे धर्म-संस्कृति ने नियति करार दिया है।

उनका साफ कहना था कि- धर्म एक रास्ता ही तो है- मंजिल तो मुक्ति है-'मानव मुक्ति- दोनों अर्थो की मुक्ति- सामाजिक मुक्ति और आध्यात्मिक मुक्ति।' (वही पृ.112) यह उन्ही के धर्मातरण को परखने का विवेक संमत मार्ग था। इसलिए आगे वह यह सवाल उठाती है कि- राह बदलने पर इतना हंगामा क्यों?' (वही पृ.112) हिंदुत्व से उबकर, उसके भीतरी परिवर्तन की संभावनाओं के दिखाई न देने पर, वह ईसाई बन गई थी। यह हम सभी जानते हैं। किंतु उनकी मानसिकता ने इस ईसाईयत्व का पूर्ण रूप से कभी भी स्वीकार नहीं किया था। यह विचार उनके अगले ही कथन में उजागर होता है- 3 बरस बीत गए सितंबर,1883 में मेरी 'बप्तिस्मा' हुआ! मैं 'मेरी राम' बनी और मेरी बेटी मनोरमा बनी 'मनोरमा मेरी'! काया वही, मन वही, आत्मा वही, प्रश्न वही, संधान वही, बेचौनियां वे ही.... मैं यहाँ नया धर्म पहना पर पुराना फेंका नहीं। तह कर सिरहाने रख छोड़ा! एक नए, अपने-से ईश्वर की तलाश मुझे भारत से लिवरपूल ले आई!ष (वही पृ.100) रमाबाई की चेतना से ईश्वर एवं हिंदू धर्म पूरी तरह कभी भी लुप्त नहीं हुआ। आधुनिकता की चेतना ने भी रमाबाई का मन और मत नहीं बदला। हिंदू धर्म में लाख बुराइयां हैं किंतु उसके प्रति उनमें लगाव ही है। हिंदूवाद के हिंदुत्व के प्रत्येक अधार्मिक अमानवीय कृति का संज्ञानात्मक बोध होने के बावजूद रमाबाई मन से उसे कभी छोड़ नहीं पाई यही सत्य है।

मेरे ख्याल से वर्तमान में मृणाल पांडे सरीखी स्त्री-विमर्शकर्ताओं का भी यही दृष्टिकोण रहा है। ईश्वर के संकल्पनात्मक विचार पद्धति एवं अनुभूति ने रमाबाई को आखिर में हिंदू ही रखा। वह मन से कभी ईसाई या क्रिश्चियन नहीं बन पाई और न हीं निर्धर्मी रही। अनाम कुलत्रोत्पन्न पति सदाव्रत से पूर्ण संवेदना, लगन होने के बावजूद उसके मूल्यों में सच्चाई और मानवता

होने के सत्य को जानने के बावजूद भी, उसके रास्ते को वह अपना नहीं पाई। 'कठपुतलियां पुतले में प्राण पडते ही हमारे रिश्ते का एक नया समीकरण उठ खड़ा होता है..... आदि आदि।(वही पृ. 101) प्रार्थना समाज के संस्थापक न्यायमूर्ति महादेव गोविंद रानडे की विधवा बहन दुर्गाबाई की वजह से रानाडे और उनकी पत्नी रमाबाई का घर छोड़कर वह महात्मा ज्योतिबा फुले के सेवा केंद्र में अपने जीवन में अंत में आ जाती है। स्वयं रमाबाई का मानना था कि दुनिया के सारे कानून पुरुष ने बनाए हैं! स्त्री-शिक्षा तब तक सिर्फ सजावट का सामान रहेगी जब तक उसमें निर्णय खुद लेने का विवेक और स्वाभिमान नहीं जगेगा और पुरुष... दोस्त बनकर सामने आएंगे, डिक्टेटर बनकर नहीं!' (वही पृ.118) अपने प्रखर एवं निर्भीक प्रवृत्ति के कारण व विवेकानंद जैसे बुद्धिजीवी को खरी-खरी सुनाती है। उनके मानस को पहचानती है। (अनामिका का पूरा प्रस्तुत पूरा गद्य पढ़ कर देखिए प्रश्न 109, 110 और 111 परिशिष्ट में जोड़ें.)

आत्मा की मुक्ति के लिए भक्ति का मार्ग सुखकर, सुकर हो सकता है किन्तु स्त्री एवं दलित मुक्ति के लिए सामाजिक, धर्मगत संस्थानिकरण, सांस्कृतिक रूढ़िवाद के परंपराकरण के, बन्धनों के पाश को तोड़ना ही समतामूलक सामाजिक जीवन पद्धति के लिए जरुरी है। इसमें ही समाज देश की युगानुरूप विकास की गतिशीलता की संभावनाएँ निहित है। अन्यथा भारत की बहुसंख्यक आबादी जड़वाद के शिकंजें से 'कैद बाहर' होना असंभव है।

नोट: सभी संदर्भ शोधलेख के अंतर्गत ही पृष्ठ क्रम, नामानुक्रम, प्रकाशक, प्रकाशन वर्ष के रूप में समाहित किए गए है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रभा खेतान। पितृसत्ता के नए रूप और भूमंडलीकरण, संपादक राजेंद्र यादव, प्रभात खेतान और अभय कुमार दुबे, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण-2003,
2. हंस, जुलाई 2024, अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली.
3. अपनी माटी,वर्ष-3,अंक-24,मार्च,2017, आधी दुनिया : आत्मकथा और स्त्री - (डॉ. रमाशंकर कुशवाहा)
4. दस द्वारे का पिंजरा, अनामिका, राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली, पहली आवृत्ति-2009.
5. के दामोदरन, भारतीय चिंतन परंपरा, तीसरा संस्करण जून 1982, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, रानी झांसी रोड नई दिल्ली-55,
6. दुखी भारत- लाला लाजपत राय, इंडियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग, 1928.
7. भारत में महिला आंदोलन: विमर्श और चुनौतियाँ, सं. साधना आर्य, लता सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्र. सं. 2.23, पृ.12.
8. महाभारत कालीन समाज, प्रदीप भट्टाचार्य, लोकभारती प्र. पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, प्रयागराज., प्र. सं. 2.23.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054, October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Social Media Influencers' Function as Digital Brand Ambassadors for Destination Branding and Sustainable Tourism Promotion

Dr. Rajesh Kumar Verma*

***Assistant Professor (Commerce) ISBA College, Indore (M.P.) INDIA**

Abstract : Social media content producers now directly influence traveller decisions about where to go and how to act at their destinations. This article focuses on travel influences who function as online marketing spokespeople for eco-friendly locations. We examined how author reputation, genuine post style, and online word-of-mouth influence trip decisions using survey data collected from 250–300 active social media users. The results demonstrate that audiences are far more likely to adopt sustainable travel practices and have a favorable perception of the destination when they perceive an influence as reliable. The report provides useful advice for tourist boards attempting to manage ethical, transparent advertising campaigns while avoiding problems like over tourism.
Keywords: Digital brand ambassadors, destination branding, and sustainable tourism.

Introduction - The destination marketing landscape has changed dramatically over the last decade due to the explosive growth of digital channels. Travel content producers and social media influences who build close intimate relationships with their audiences are gradually replacing traditional tourist marketing and traditional promotional methods. When such producers share their actual travel experiences, they profoundly influence potential travelers' evaluation and selection of their new destinations as they offer candid critique and unfiltered perspectives. These digital personalities are more than beautiful landscapes and stunning images, they are crucial instructors. They are uniquely placed to promote waste reduction, to educate tourists about local ecological systems and to foster culturally sensitive interaction within host communities. The shift in consumer trust and media consumption is so great that destination management companies are partnering with popular digital artists with large followings to sway public opinion and encourage responsible and environmentally-conscious travel.

Statement of the Problem: An explanation of the issue:

1. **Theoretical Gap:** There are no clear frameworks in the literature that demonstrate how online content producers especially serve as brand representatives for eco-friendly travel.
2. **Empirical Gap:** Research has not adequately assessed the relationship between creative outreach and long-term destination value or real eco-friendly decisions.
3. **Commercialization and Trust:** When postings are heavily sponsored, viewers become sceptical and fear green washing and phone advice.
4. **Uncontrolled Crowding:** Localized overpopulation and environmental harm often result from an area becoming viral without regulations.

Objectives of study Goal :

1. To evaluate the effectiveness of travel content producers to promote eco-friendly travel to their audience.
2. Assess the effect of creative marketing on traveler booking choices and local perception.
3. Explore how creator postings increase public awareness of environmental conservation in tourism.
4. Evaluating the cumulative impact of influence activities on the evolution of a destination's reputation over time.

Research Methodology: This project relies on a quantitative approach to test specific ideas about how social media figures affect travel decisions. Data was gathered through structured surveys to gather objective statistics from active online users.

Table 1

Methodological Element	Details & Specifications
Research Philosophy	Positivist framework focusing on observable empirical trends
Research Approach	Deductive method testing structured research questions
Research Design	Quantitative, cross-sectional descriptive survey design
Data Collection Tool	Standardized survey (5-point

	Liker Scale) with secondary literature review
Sampling Method	Purposive sampling focused on active social media travel followers
Sample Size & Target	250–300 survey participants following travel channels
Statistical Methods	SPSS tools: Cranach's Alpha, Mean/SD, Pearson Correlation, Regression

Ethical Standards: Participant data was kept private and anonymous, with explicit voluntary consent gathered prior to survey completion.

Data Analysis and Interpretation: Survey responses were processed in SPSS to calculate standard averages, correlations, and regression models. The numerical results show a clear positive link between a creator's honesty, audience connection, and audience willingness to travel responsibly. In addition, destination reputation scores were consistently higher among users who regularly engage with transparent travel accounts, confirming that creators work effectively as representative figures for eco-conscious tourism.

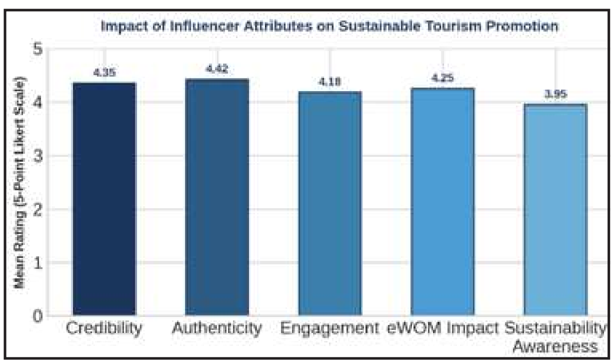

Figure 1: Mean Ratings of Creator Traits Impacting Eco-Friendly Behavior

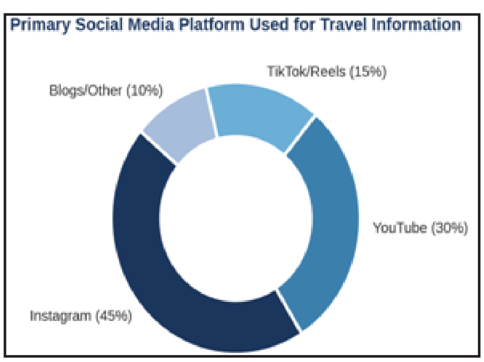

Figure 2: Preferred Platforms for Gathering Travel Insights

Key Roles in Sustainable Promotion: The Key Functions of Sustainable Marketing

1. **Digital Campaigns:** To create awareness about the less explored eco-friendly destinations across the globe.
2. **Travel and ethical travel first-hand accounts:** Real Travel Stories
3. **Peer Sharing:** Foster valuable online discussion that leads to actionable recommendations.
4. **Environmentally Friendly:** Emphasize local conservation, waste reduction and endangered habitats.
5. **Destination Image:** Developing a strong and sustainable image of the destination for destinations committed to sustainable development. Communicating in a transparent and truthful way can generate visitors' trust, and that will generate curiosity and trust among travelers. It is recommended to cooperate with local tourism boards to attract younger, more tech-savvy visitors.

Discussion and Significant Results

Results of the survey:

1. **Source credibility matters:** Real experience and authentic communication inspire more confidence than conventional promotional advertisements.
2. **Awareness vs. Action Gap:** Travelers often say they like the idea of eco-friendly travel but cost or convenience can get in the way of them actually doing it. Micro-producers' Impact: Concentrated, smaller producers build closer ties to niche audiences interested in eco-friendly travel. Environmental pressure could be generated by fostering vulnerable places with no clearly established limits on visitors.

Discussion of practice

1. **Long Term Partnerships:** Destination marketing organizations should be looking to partner with established creators for multiple years and not a one off paid post.
2. **Clear Messaging:** Campaigns must combine appealing destination imagery with actionable information on low-impact travel.
3. **Transparency Standards:** Transparent sponsorship build audience trust, and reduce claims of green washing.

Core Frameworks & Recommendations :

1. **Trust & Personal Connection:** Content from real experiences builds trust and motivates followers to make responsible trips
2. **Integrated Communications:** Creators need to be integrated directly into wider regional tourist marketing strategies.
3. **Triple Bottom Line Focus:** Success of a campaign should be measured in social, economic and environmental results and not just views.
4. **Deep and surface engagement:** Educational movies of longer duration lead to higher levels of environmental engagement compared to shorter video posts.
5. **No Green washing:** Clearly label compensation for collaborations to maintain creative integrity and audience trust.
6. **Visitor Limit Awareness:** Campaigns to reduce congestion in natural areas need to include a visitor limit

awareness component.

Conclusion: Within the realms of destination branding and the promotion of environmentally responsible travel, the utilization of social media influences as primary digital brand representatives is becoming an increasingly commonplace practice. Additionally, they are being utilized to encourage travel that is conscious of the environment. By utilizing a combination of personal travel narratives, visual storytelling, direct engagement, and communication that is comparable to that of peers, they have the ability to influence the beliefs that audiences have regarding destinations as well as the travel choices that they make. This means that they have the ability to influence the choices that audiences make. For example, genuine communication, the credibility of the source, and a strong rapport with followers are all factors that can contribute to an increase in trust in information related to travel, which in turn can lead to more responsible decisions regarding travel. The findings of this research indicate that these factors can all contribute to an increase in trust in travel-related information. This is because genuine experiences enable audiences to connect with the creator's lived experiences and insights, which makes them significantly more persuasive than traditional advertising. The reason for this is that visitors are able to form a connection with the person who was responsible for creating the experience. Additionally, the report highlights the ways in which influence marketing can enhance the reputation of a destination by highlighting the social, cultural, and environmental characteristics of the location. This is done in order to raise awareness about the destination. This action is taken in order to entice a greater number of individuals to visit the location. In the event that the content places an emphasis on low-impact travel, waste minimization, conservation efforts, and cultural practices that are respectful, tourism marketing has the potential to go beyond simple location promotion and cultivate awareness regarding the significance of environmentally responsible behavior among tourists. This happens when the content places an emphasis on these things. According to the findings of the research, even tho tourists claim that they are in favor of sustainable tourism, it may be difficult for them to consistently engage in sustainable practices due to factors such as convenience and expense. This is the case despite the fact that tourists have expressed their support for sustainable tourism. This demonstrates that there is a significant gap between the level of comprehension and the level of implementation with regard to the topic. In order for influence marketing initiatives to be successful, it is not sufficient for them to simply showcase polished images of locations; rather, they must provide guidance that is both practical and implementable in order to be successful. It is particularly micro-influences who have the ability to effectively bring attention to issues that are associated with environmentally responsible travel. This is due to the fact that micro-influences have a propensity to cultivate close relationships with particular audiences. Rather than relying on fleeting sponsored posts, the findings suggest that destination marketing companies should place a higher priority on the formation of long-term partnerships with artists who can be relied upon. This would be a more effective strategy. Using this approach would be a more successful strategy. Additionally, there is the possibility that this will result in an increase in transparency, which is of the utmost importance due to the fact that transparency in sponsorship disclosures significantly strengthens audience trust and alleviates concerns regarding greenwashing. Therefore, it is of the utmost importance for travel agencies and influences to collaborate in order to guaranty that marketing messages are genuine, informative, and in accordance with the goals of sustainable tourism. In light of the fact that this is the situation, this is the reason. When it comes to determining whether or not travel initiatives undertaken by influences are successful, it is essential to acknowledge that the metrics of views, likes, and follower counts should not be the only elements taken into consideration. This is due to the fact that the metrics of total views, number of likes, and number of followers are also significant. During the process of carrying out a comprehensive evaluation, it is of the utmost importance to take into consideration the effects that the evaluation will have on society, the economy, and the environment. In this collection of findings, a number of different aspects are taken into consideration. These aspects include the perception of the destination, the awareness of tourists, responsible travel behaviors, assistance for local communities, and pressure on vulnerable locations. Campaigns for ecologically sensitive areas should include discussions on restrictions on visitors and concerns about traffic. The social media influences can greatly contribute to the relationship between destination branding and sustainable tourism by emphasizing authenticity, transparency, responsible communication, and the long-term interests of destinations in their social media promotional activities. But that is provided they also attach a high degree of importance to these aspects in their promotional efforts.

References:-

1. Google. (2024). Think with Google: Travel Trends. https://www.thinkwithgoogle.com
2. Gretzel, U. (2018). Influence Marketing in Travel and Tourism. Advances in Social Media for Travel and Tourism, Rutledge.
3. Leung, D., Law, R., Van Hoof, H., & Buhalis, D. (2013). Social Media in Tourism and Hospitality: A Literature Review. Journal of Travel & Tourism Marketing, 30(1-2), 3-22.
4. Morgan, N., Pritchard, A., & Pride, R. (2011). Destination Branding: Managing Place Reputation. Routledge.

5. Statista. (2024). Global Social Media and Travel Insights. https://www.statista.com
6. United Nations Environment Programmed (UNEP). (2023). Sustainable Tourism Strategies. https://www.unep.org
7. World Tourism Organization (UN Tourism). (2022). Sustainable Development Guidelines. https://www.unwto.org
8. World Travel & Tourism Council (WTTC). (2023). Travel Impact Report. https://wttc.org

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय समाज पर वैश्वीकरण के प्रभाव का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. हरिचरण मीना*

*प्रोफेसर (समाजशास्त्र) श.कै.रि.सि.राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – भारतीय समाज सांस्कृतिक विविधता मे एकता एवं सांस्कृतिक समृद्धि वाला समाज हैं। भारत मे कश्मीर से कन्याकुमारी एवं कच्छ से अरूणाचल तक विभिन्न धर्म, सम्प्रदाय, जाति, मजहब एवं संस्कृति के लोग निवास करते हैं एवं उनके रहन सहन खान पान वेशभूषा बोलचाल भाषा रीतिरिवाज मे विविधता के होते हुए सभी भारतीय समाज का अभिन्न अंग हैं। वैश्वीकरण एक प्रक्रिया हैं जिसके द्वारा पूरे विश्व की सामाजिक इकाई उनकी संस्कृतियां और अर्थव्यवस्थाएं परस्पर जुड जाती हैं। यह एक ऐसी सतत प्रक्रिया हैं जो संचार व प्रोधोगिकी प्रचार प्रसार के कारण अनवरत चलती रहती हैं। यह पूरे विश्व के आधुनिक समाज को नियंत्रित करती हैं एवं पूरे विश्व मे आवश्यकता की सभी वस्तुए मांग के अनुरूप उपलब्ध होने मे सहूलियत प्रदान करती हैं। वैश्वीकरण मे विचार, विचारधारा, भूमिका, सांस्कृतिक मान्यताओ का अद्यतित आदान प्रदान होता हैं। यह सामाजिक मुद्दो को नए एवं अनूठे तरीको से हल करने की अनुमति देता हैं। वैश्वीकरण संस्कृति, समाज, राजनीति, पर्यावरण, अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने वाली प्रक्रिया हैं।

वैश्वीकरण का भारतीय समाज की संस्कृति, संगीत, फिल्म, परिवार, विवाह, जाति व्यवस्था, धर्म, परम्परा, भाषा, व्यापार, अर्थव्यवस्था,रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कार इत्यादि पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनो प्रकार से देखा जा सकता हैं। वैश्वीकरण को भारतीय समाज मे संस्कृति का सजातीयकरण एवं ग्लोकलाइजेशन के रूप मे देखा जा सकता हैं। महिलाओ पर वैश्वीकरण के प्रभाव को अधिकार, स्वतंत्रता, न्याय के प्रति जागरूकता, महिला सशक्तिकरण, तकनीकी शिक्षा, वैश्विक मंचो पर पहुंचना, रहन सहन इत्यादि मे सकारात्मक प्रभाव के रूप मे देखा जा सकता हैं दूसरी ओर एकल परिवार, तलाक होना, विवाह संस्था पर बढता खतरा, कुटीर उद्योगों पर खतरा, दोहरी जिम्मेदारी इत्यादि को नकारात्मक प्रभाव के रूप मे देखा जा सकता हैं। युवाओं पर भी वैश्वीकरण के प्रभाव को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, उच्च पैकेज सैलरी, स्टार्टअप्स, पश्चिमी एवं भारतीय मूल्यो का सम्मिश्रण के रूप में सकारात्मक प्रभाव के रूप मे देखा जा सकता हैं वही दूसरी ओर युवाओं का विदेश की ओर पलायन, परम्परागत भारतीय मूल्यों की अवहेलना इत्यादि को नकारात्मक प्रभाव के रूप मे देखा जा सकता हैं।

शब्द कुंजी – सांस्कृतिक विविधता, सांस्कृतिक समृद्धि,सतत प्रक्रिया, प्रौद्योगिकी, सहूलियत, अद्यतित आदान प्रदान, सजातीयकरण एवं ग्लोबलाइजेशन।

प्रस्तावना – भारतीय समाज सांस्कृतिक विविधता मे एकता एवं सांस्कृतिक समृद्धि वाला समाज हैं। वैश्वीकरण वह प्रक्रिया हैं जिसके द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और प्रौद्योगिकी में प्रगति ने विश्व को अत्यधिक परस्पर सम्बन्धित एवं अन्योन्याश्रित बनाया हैं। वैश्वीकरण को भूमण्डलीकरण और ग्लोबलाइजेशन के नाम से भी जाना जाता हैं। वैश्वीकरण ने विश्व के सभी देशों को विभिन्न प्रकार से अन्तर्सम्बन्धित एवं प्रभावित किया हैं। विश्व के सभी देशो में आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक बदलाव भी वैश्वीकरण की महत्वपूर्ण उपज मानी जा सकती हैं। वर्तमान में दुनिया मे उपभोक्ताओं के पास उनके खरीदे जाने वाले उत्पादों और सेवाओं दोनो के लिए विविध प्रकार के विकल्प उपलब्ध हैं। वैश्वीकरण विभिन्न देशों के लोगों, कम्पनियों और सरकारों के बीच बातचीत और एकीकरण की एक प्रक्रिया हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और निवेश द्वारा संचालित और सूचना प्रोद्योगिकी द्वारा सहायता प्राप्त प्रक्रिया हैं। विश्व में आधुनिक वैश्वीकरण की शुरूआत शीतयुद्ध की समाप्ति और 1991 के सोवियत संघ के विघटन के साथ हुई हैं। भारत में 1991 के एलपीजी सुधार के बाद उदारीकरण और निजीकरण के साथ वैश्वीकरण एक क्रांतिकारी शक्ति के रूप मे आया और उसने भारत की आत्मा को बदल दिया। वैश्वीकरण मुख्यत: एक आर्थिक प्रक्रिया है लेकिन इसके स्पष्टत: गहरे सामाजिक निहितार्थ हैं। दुनिया के बहुत सारे देशों मे वैश्वीकरण का विरोध भी हुआ हैं उन्होने इसे संस्कृति के उजाडने के रूप मे इसे माना हैं।

भारतीय समाज में वैश्वीकरण के प्रभाव को विभिन्न क्षेत्रों मे विभिन्न रूपों में देखा जा सकता हैं। जिसके कारण अनेक नवीन अवधारणाओं का जन्म हुआ हैं। वैश्वीकरण का भारतीय समाज की संस्कृति, संगीत, फिल्म, परिवार, विवाह, जाति व्यवस्था, धर्म, परम्परा, भाषा, व्यापार, अर्थव्यवस्था, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कार इत्यादि पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनो प्रकार से देखा जा सकता हैं। वैश्वीकरण को भारतीय समाज मे संस्कृति का सजातीयकरण एवं ग्लोकलाइजेशन के रूप मे देखा जा सकता हैं। सजातीयकरण से अभिप्राय विभिन्न जातियों मे सामाजिक रूप से समानता

का होना हैं। भारतीय समाज जाति व्यवस्था पर आधारित समाज हैं यहां पर हजारो की संख्या में जातियां हैं सभी जातियों के रहन सहन खान पान वेश भूषा मे विभिन्नता रही हैं। व्यक्तियों के पहनावें को देख कर उसकी जाति का अंदाजा लगाया जा सकता था। वैश्वीकरण के प्रभाव उनके रहन सहन खान पान पहनावे पर पड़ा है। सभी जातियो के पुरूष एक पेंट शर्ट एवं महिलाएं साड़ी पहनने लगे है। सभी एक जैसा खान पान एवं रहन सहन करने लगे हैं। यही सजातीयकरण की अवधारणा हैं।

वैश्वीकरण के कारण धार्मिक कट्टरता का उदय एवं कॉस्मोपॉलिटन स्थानीयता का उदय हुआ हैं। जिसके कारण ग्लोबलाइजेशन की अवधारणा अस्तित्व में आयी हैं। ग्लोबलाइजेशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें वैश्वीकरण और स्थानीयकरण जैसे शब्दो का समावेश हैं। यह समकालीन सामावए राजनैतिक और आर्थिक प्रणालियों मे सार्वभौमिक और विशिष्टीकरण दोनों प्रवृतियो की एक साथ होने वाली घटना की ओर इशारा करता हैं। उदाहरण के रूप मे भारत मे देशी चीनी का लोकप्रियकरण मैकडोनाल्ड भारत में आलू टिक्की बर्गर आदि खुब बिक रहे हैं।

भारतीय समाज के युवाओं को वैश्वीकरण ने सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रकार से प्रभावित किया हैं। देश के युवा वैश्वीकरण और असमानता की दुनिया मे बड़े हो रहे हैं एवं एक ऐसी विकास प्रक्रिया मे भाग ले रहे हैं जो लोगों को एक दूसरे के करीब ला रही हैं और उनके बीच खाई को चौड़ा कर रही हैं। वैश्वीकरण के कारण देश के युवाओं के स्वास्थ्य एवं शिक्षा मे सुधार हुआ हैं। आज के युवा आधुनिकता एवं परम्पराओ का समन्वय कर रहे हैं। युवा एक अनौपचारिक समारोह के लिए जींस पहनना पसन्द कर रहे है लेकिन औपचारिक अवसरों पर पारम्परिक पौशाक पहनना पसन्द कर रहे हैं। युवा अपनी पसन्द से प्रेम विवाह का फैसला कर सकते है तो दूसरे ओर अपने माता पिता से अपने साथी की पसन्द को स्वीकार करने और विवाह पर अपना आशीर्वाद देने के लिए भी उत्सुक रहते हैं। वैश्वीकरण का ही प्रभाव हैं कि आज युवा अधिक जागरूक एवं अधिक स्वतंत्र हो रहे हैं और जीवन के विभिन्न महत्वपूर्ण निर्णयो शिक्षा, व्यवसाय इत्यादि के मामले मे स्वयं की भूमिका माता पिता से ज्यादा हैं। जहां एक ओर युवाओं को वैश्वीकरण ने सकारात्मक रूप से प्रभावित किया है वही दूसरी ओर नकारात्मक रूप से भी प्रभावित किया हैं। वैश्वीकरण से भारत मे उपभोक्तावाद का विकास हुआ है। वर्तमान मे युवा बढती व्यवसायिकता की संस्कृति से दृढतापूर्वक जुड़ रहे हैं जिसने समकालीन भारतीय समाज के ताने बाने को बदल दिया हैं जिसे युवाओं द्वारा पश्चिमी खाद्य पदार्थो और पेय पदार्थो, पौशाकों, सौन्दर्य प्रसादनों, अलंकरणों, संगीत, नृत्य आदि को स्वीकार करने मे देखा जा सकता हैं। वैश्वीकरण के कारण युवाओं मे पारम्परिक भारतीय सामाजिक मूल्य कमजांर हुए हैं। सूचना प्रोद्योगिकी के युग मे इंटरनेट पर अश्लील सामाग्री एवं पोनोग्राफी के कारण रिश्तों एवं विवाह संस्था को गहरा झटका लग रहा हैं। वैश्वीकरण युवाओं में बहिष्कार को जन्म दिया हैं। वैश्वीकरण ने अभिजात वर्ग और सर्वहारा वर्ग के बीच पहले से मौजूद असमानताओं को सक्रिय रूप से बढाया हैं।

वैसे तो युवा और वयस्क वैश्वीकरण की प्रक्रिया के मुख्य वाहक हैं लेकिन निक्रिय कारक के रूप में बच्चे भी विभिन्न रूप मे प्रभावित हुए हैं। वैश्वीकरण के कारण बहुसंस्कृतिवाद का समावेश हुआ हैं। विभिन्न संस्कृतियों एवं जातीयताओं के प्रति सम्मान और सहिष्णुता में वृद्धि हुई है। वैश्वीकरण से बच्चों में सीखने के उन्नत अवसर उपलब्ध हुए हैं। विद्यार्थी विनिमय कार्यक्रमों ने विद्यार्थियों की जानकारी को व्यापक बना दिया हैं। सूचना प्रोद्योगिकी के युग में इंटरनेट ने सभी समाजो के बच्चो के लिए अवसरो की सुविधा बढी हैं। वैश्वीकरण ने बच्चों को सकारात्मक के साथ साथ नकारात्मक रूप से भी प्रभावित किया हैं। वैश्वीकरण के ई कचरे के कारण बच्चों को जहरीली हवा और पानी की समस्या के साथ साथ अनेक पर्यावरणीय समस्याओं का सामना करना पड़ रहा हैं। वैश्वीकरण के कारण बच्चों में फास्ट फूड संस्कृति एवं मैकडोनाल्डीकरण की संस्कृति पनप रही है जो कि बच्चों के स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक हैं। सोशल नेटवर्किंग और पबजी जैसे ऑनलाइन गेमिंग भी बच्चों के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डाल रही हैं। वैश्वीकरण के कारण समाज मे बाल श्रम की समस्या बढ रही हैं।

वैश्वीकरण ने जाति व्यवस्था के कठोर बन्धन, मेलजोल और अंतरजातीय विवाह के मानदंडों को शिथिल कर दिया हैं। आर्थिक अवसरों के विस्तार और श्रम के पारंपरिक विभाजन के टूटने से सामाजिक गतिशीलना को बढावा मिला हैं। वैश्वीकरण मे प्रवास के माध्यम से धार्मिक विचारों के प्रसार ने पश्चिमी देशों में आध्यात्मिक संबद्धता को बढावा दिया हैं। वैश्वीकरण ने भारतीय समाज में सदियों से चली आ रही देव दासी प्रथा और तीन तलाक जैसी शोषणकारी परम्पराओं पर सवाल उठाए हैं। विवाह व परिवार नामक संस्थाओं में भी आमूलचूल परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। संस्कृति का एकरूपीकरण हुआ हैं। बढती वैश्विक अंतर्संबंधता और अन्योन्याश्रितता की प्रक्रिया ने दुनिया भर में संस्कृति के एकरूपीकरण को जन्म दिया हैं। वैश्वीकरण ने भारतीय खाद्य संस्कृति एवं वस्त्र संस्कृति को नकारात्मक रूप से भी प्रभावित किया हैं। वैश्वीकरण के कारण भारतीय समाज में सयुक्त परिवार की प्रथा में कमी एवं एकाकी परिवारो का प्रभुत्व बढा हैं। लिव–इन–संस्कृति जैसे आधुनिक विचारों को भी समाज मे अपवादस्वरूप में स्वीकार किया जाने लगा हैं। वैश्वीकरण ने क्षेत्रीय और अल्पसंख्यक भाषाओं पर अंग्रेजी भाषा को हावी कर दिया हैं। शहरी परिवार दैनिक बोलचाल में भी अंग्रेजी का उपयोग करने लगे हैं। जिसके कारण हमारी मातृ भाषा हिन्दी एवं क्षेत्रीय भाषाएं कमजोर हो रही हैं।

महिलाओ पर वैश्वीकरण के प्रभाव को अधिकार, स्वतंत्रता, न्याय के प्रति जागरूकता, महिला सशक्तिकरण, तकनीकी शिक्षा, वैश्विक मंचो पर पहुंचना, रहन सहन इत्यादि मे सकारात्मक प्रभाव के रूप मे देखा जा सकता हैं दूसरी ओर एकल परिवार, तलाक होना, विवाह संस्था पर बढता खतरा, कुटीर उद्योगों पर खतरा, दोहरी जिम्मेदारी इत्यादि को नकारात्मक प्रभाव के रूप मे देखा जा सकता हैं। युवाओं पर भी वैश्वीकरण के प्रभाव को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, उच्च पैकेज सैलरी, स्टार्टअप्स, पश्चिमी एवं भारतीय मूल्यो का सम्मिश्रण के रूप में सकारात्मक प्रभाव के रूप मे देखा जा सकता हैं वही दूसरी ओर युवाओं का विदेश की ओर पलायन, परम्परागत भारतीय मूल्यों की अवहेलना इत्यादि को नकारात्मक प्रभाव के रूप मे देखा जा सकता हैं।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता हैं कि वैश्वीकरण का भारतीय समाज की संस्कृति, संगीत, फिल्म, परिवार, विवाह, जाति व्यवस्था, धर्म, परम्परा, भाषा, व्यापार, अर्थव्यवस्था, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कार इत्यादि सभी क्षेत्रों मे सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही प्रकार का प्रभाव देखा जा सकता हैं। एक ओर समाज आर्थिक उन्नति कर रहा हैं दूसरी ओर नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों का पतन हो रहा है। वैश्वीकरण के कारण बहुसंस्कृतिवाद का समावेश हुआ हैं। विभिन्न संस्कृतियों एवं जातीयताओं

के प्रति सम्मान और सहिष्णुता में वृद्धि हुई है। वैश्वीकरण से बच्चों में सीखने के उन्नत अवसर उपलब्ध हुए हैं। भारतीय समाज की भौतिक एवं अभौतिक दोनों ही संस्कृति पर वैश्वीकरण का प्रभाव देखा जा सकता हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. आहूजा राम, 'भारतीय सामाजिक व्यवस्था' 2005
2. सिंह योगेन्द्र, 'भारतीय परम्परा का आधुनिकीकरण' 2006
3. सिंह जे.पी., 'आधुनिक भारत का समाज' 2019
4 श्रीनिवास एम.एन., 'आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन' 2019
5. दैनिक समाचार पत्र

****

उदयपुर के आधुनिकीकरण में पर्यटन की भूमिका : सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक विरासत के संदर्भ में एक अध्ययन

मोनिका चौधरी* डॉ. नरेंद्र सिंह राणावत**

* शोधार्थी, भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** सहायक आचार्य (इतिहास) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – मेवाड़ की राजधानी के रूप में विकसित उदयपुर शहर की स्थापना सन 1559 ईस्वी में महाराणा उदय सिंह द्वारा की गई थी यह स्थल जिलों राजमहलों पौराणिक मंदिरों राजा महाराजा की छतरियां जैसे अनेक सांस्कृतिक स्थलों से समृद्ध रहा है यही विरासत आगे चलकर पर्यटन का आधार स्तंभ बनी आज पर्यटन के कारण ही उदयपुर ने अपना नाम राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर स्थापित किया है परिणाम स्वरुप परिवहन आवास हस्तशिल्प बाजार सेवा तथा स्थानीय रोजगार के क्षेत्र को विस्तार मिला प्रस्तुत शोध पत्र में पर्यटन और आधुनिकीकरण के अंतर संबंध को सांस्कृतिक व ऐतिहासिक विरासत के संदर्भ में विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है इस अध्ययन में उदयपुर की जेलों महलों उद्यानों सहित चावंड गोगुंदा कानोड़ बदला भिंडर तथा बथड बथड पाठक जैसे ऐतिहासिक स्थलों पर भी प्रकाश डाला गया है इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि पर्यटन के कारण ही हमारी विरासत आर्थिक व सामाजिक उपयोगिता से जोड़ सखी इस ऐतिहासिक विरासत नहीं आज के उदयपुर को सांस्कृतिक पहचान दिलाई इसके साथ ही विरासत संरक्षण की अपेक्षा ए नियोजित पर्यटन तथा इसके व्यवसायीकरण की चुनौतियां भी सामने आई अत: उदयपुर के आधुनिकीकरण के लिए पर्यटन के विकास और ऐतिहासिक विरासतों के संरक्षण में संतुलन अत्यावश्यक है।

शब्द कुंजी – उदयपुर मेवाड़ आधुनिकीकरण पर्यटन ऐतिहासिक विरासत सांस्कृतिक विरासत।

प्रस्तावना – परिवर्तन समाज का अनिवार्य व शाश्वत तत्व है। यह एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जिसका प्रभाव सर्व व्याप्त है। आधुनिकीकरण केवल समाज में आधुनिक भवनों, सड़कों,तकनीकी सुविधाओं के विकास का नाम ही नहीं है बल्कि यह सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में उदयपुर के आधुनिकीकरण में भारतीय पारंपरिक ज्ञान, स्थानीय तकनीक, जल संरक्षण, नगर नियोजन के साथ-साथ यहां की प्राकृतिक व सांस्कृतिक विरासत की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

उदयपुर का इतिहास मेवाड़ की राजनीतिक व सांस्कृतिक विरासत का एक अभिन्न अंग रहा है। यहां की झीलें,महल, दुर्ग, मंदिर,छतरियां आदि आज भी सामाजिक व आर्थिक गतिविधियों के केंद्र बने हुए हैं। पर्यटन के कारण ही यह ऐतिहासिक स्थल उदयपुर की आधुनिक अर्थव्यवस्था से जुड़ सके। इसी के कारण उदयपुर, एक प्रमुख पर्यटन नगर के रूप में विकसित हुआ। पर्यटन की मूल अवधारणा प्राचीन भारत में तीर्थाटन, ज्ञानार्जन तथा देशाटन जैसी यात्राओं से जुड़ी हुई है। आधुनिक युग में इसका स्वरूप और भी अधिक विस्तृत हो गया तथा मनोरंजन के साथ-साथ सांस्कृतिक अनुभव, विरासत दर्शन तथा ऐतिहासिक अध्ययन भी इसके प्रमुख उद्देश्य बने। इस प्रकार यहां की ऐतिहासिक विरासत आधुनिक पर्यटन के लिए एक मजबूत आधार तैयार करती है।

इस शोध का उद्देश्य उदयपुर के आधुनिकीकरण में पर्यटन की भूमिका का ऐतिहासिक अध्ययन करना तथा इसका यहां की सांस्कृतिक व ऐतिहासिक विरासत के साथ-साथ संबंध को स्पष्ट करना है। यह शोध आर्थिक व सामाजिक गतिविधियों पर पर्यटन के प्रभाव तथा विरासत संरक्षण की चुनौतियां तथा संतुलित पर्यटन विकास की संभावनाओं को भी रेखांकित करता है। यह शोध मुख्यत: ऐतिहासिक व विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इस शोध के लिए उदयपुर राज्य एवं मेवाड़ के इतिहास से संबंधित प्रकाशित ग्रंथों,पर्यटन संबंधी साहित्य, ऐतिहासिक व सांस्कृतिक सामग्री का उपयोग किया गया है। इस अध्ययन में प्राथमिक तथा द्वितीयक स्रोतों के आधार पर पर्यटन स्थलों के ऐतिहासिक महत्व को भी विश्लेषित किया गया है।

झीलों की नगरी, पूर्व का वेनिस, राजस्थान का कश्मीर जैसे उपनामों से उदयपुर शहर विश्व प्रसिद्ध है। यहां की पिछोला झील की सुंदरता देखते ही बनती है। इस झील के मध्य स्थित जग मंदिर तथा जग निवास तथा इसके किनारे स्थित घाट और हवेलियां इसकी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान बनाते हैं। यहां के गणगौर घाट जैसे स्थल परंपरागत उत्सवों और धार्मिक क्रियाकलापों को पर्यटन से जोड़ते हैं। यहां की उदय सागर झील जल संरचना की दृष्टि से ही नहीं बल्कि पर्यटन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। इसका निर्माण महाराणा उदय सिंह के काल में हुआ था। इन सभी ऐतिहासिक जल संरचनाओं का वर्तमान पर्यटन में उपयोग, उदयपुर की पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक आर्थिक गतिविधियों के बीच समन्वय स्थापित करता है।

उदयपुर के आसपास के क्षेत्र में अनेक धार्मिक व स्थापत्य स्मारक भी हैं जैसे चावंड। यह महाराणा प्रताप के संघर्ष व मेवाड़ की राजनीतिक परंपरा से संबंधित एक महत्वपूर्ण स्थल है। यहां के राजमहल, चामुंडा माता मंदिर और महाराणा प्रताप की छतरी ऐतिहासिक महत्व रखते हैं। इसी प्रकार गोगुंदा

भी इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यहां पर महाराणा प्रताप का राजतिलक हुआ था। कानोड़ में गोपाल राय तथा मुरलीधर मंदिर, बेदला के परकोटे, महल और धार्मिक स्थल अद्भुत सांस्कृतिक संरचना को प्रदर्शित करते हैं। इसी प्रकार भींडर के महल,परकोटे और मंदिर तथा बाठरडा के ऐतिहासिक गढ़ मेवाड़ के क्षेत्रीय इतिहास को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन स्थलों के कारण यहां का स्थानीय इतिहास भी व्यापक समाज तक पहुंचा है। इस प्रकार पर्यटक ने ऐतिहासिक इमारत को वर्तमान सामाजिक जीवन से जोड़ दिया।

उदयपुर के आधुनिकीकरण में पर्यटन की भूमिका को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और नगरीय स्तर पर समझा जा सकता है। आर्थिक स्तर पर देखा जाए तो पर्यटन ने आवास, भोजन, परिवहन, हस्तशिल्प, मार्गदर्शन और अन्य सेवाओं के विस्तार को भी प्रोत्साहित किया। इन स्थलों के आसपास विकसित पर्यटन गतिविधियों ने स्थानीय लोगों के लिए रोजगार के अवसर उत्पन्न किए। इसी प्रकार सामाजिक स्तर पर पर्यटन के द्वारा लोगों का बाहरी क्षेत्र के लोगों से संपर्क स्थापित हुआ। इसके कारण यहां के खान-पान,सेवा-व्यवहार तथा व्यावसायिक गतिविधियों में परिवर्तन आया। इस प्रकार यहां की स्थानीय संस्कृति पर्यटकों के माध्यम से व्यापक स्तर तक पहुंच गई। सांस्कृतिक स्तर पर भी मेवाड़ी स्थापत्य परंपरा, धार्मिक उत्सवों ने पहचान प्रदान की। तीज,गणगौर जैसे पारंपरिक आयोजन और ऐतिहासिक मंदिर, सांस्कृतिक अनुभव का माध्यम बन गए। इस प्रक्रिया में इन स्थानीय विरासत को संरक्षित व प्रदर्शित करने की आवश्यकता भी पड़ी।इसी प्रकार नगरीय स्तर पर पर्यटन की बढ़ती आवश्यकताओं ने परिवहन, आवास, बाजार तथा नागरिक सुविधाओं में वृद्धि की। इस प्रकार पर्यटन, आधुनिक उदयपुर के भौतिक विस्तार और सेवा आधारित अर्थव्यवस्था के विकास से भी जुड़ गया।

उदयपुर का आधुनिकीकरण अपनी ऐतिहासिक पहचान से अलग होकर नहीं बल्कि उसके साथ-साथ ही हुआ है। यहां के महल, झीले, मंदिर, छतरियां और गढ़, अर्थव्यवस्था में सांस्कृतिक संसाधन की तरह प्रयुक्त होते हैं। अत: उदयपुर का आधुनिकीकरण केवल पश्चिमी या आधुनिक संरचनाओं के विकास की प्रक्रिया नहीं है बल्कि यह तो ऐतिहासिक, आर्थिक व सामाजिक आवश्यकताओं के साथ-साथ नए रूप में जुड़ी हुई प्रक्रिया है।

दूसरी और पर्यटन विकास के कारण कुछ चुनौतियां भी सामने आई है।जैसे ऐतिहासिक स्मारकों पर अत्यधिक पर्यटन दबाव, अतिक्रमण, अनियोजित निर्माण, प्रदूषण तथा रखरखाव की कमी से विरासत को नुकसान पहुंचा है। अत: पर्यटन की उपयोगिता तभी स्थाई हो सकती है जब संरक्षण को प्राथमिकता दी जाए। इन ऐतिहासिक स्मारकों का नियमित वैज्ञानिक संरक्षण किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त एक सीमा से अधिक व्यवसायीकरण से सांस्कृतिक प्रदूषण का खतरा भी उत्पन्न हो सकता है। इसलिए पर्यटन विकास में स्थानीय समुदाय की भागीदारी तथा ऐतिहासिक प्रमाणों पर आधारित प्रस्तुतीकरण नितांत आवश्यक है। प्रत्येक प्रमुख विरासत स्थल का प्रामाणिक इतिहास, स्थापत्य विशेषताएं और सांस्कृतिक महत्व डिजिटल माध्यमों से उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इतिहासकारों, पुरातत्व विशेषज्ञों तथा स्थानीय समुदाय की भागीदारी से विरासत पर्यटन की योजनाएं विकसित की जानी चाहिए।

इस प्रकार पर्यटन ने उदयपुर को आधुनिक सेवाओं, रोजगार, बाजार और बाह्य संपर्कों से जोड़ा। वही उदयपुर की ऐतिहासिक विरासत में पर्यटन को सांस्कृतिक आधार प्रदान किया। यदि भविष्य में पर्यटन विकास को स्थानीय सहभागिता, वैज्ञानिक संरक्षण, सांस्कृतिक प्रामाणिकता के साथ जोड़ा जाए तो उदयपुर का आधुनिकीकरण अधिक संतुलित व सतत रूप प्राप्त कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यास राजेश कुमार. पर्यटन उद्भव एवं विकास. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी 2008.
2. राठौड़ भूपेंद्र सिंह. मध्यकालीन राजस्थान के प्रमुख पर्यटन स्थल.
3. प्रतिभा. भारत में पर्यटन उत्पाद एवं सांस्कृतिक ऐतिहासिक विरासत.
4. सिंह दीपक कुमार. भारतीय पर्यटन उद्योग नई संभावनाओं की ओर. योजना. 2001.
5. सिसोदिया अनीता. मेवाड़ की ऐतिहासिक धरोहर का सांस्कृतिक पर्यटन के विकास में योगदान.
6. चंद्र सतीश. मध्यकालीन भारत.
7. वर्मा हरिश्चंद्र. मध्यकालीन भारत. भाग 1.
8. दोरियाल के.एस. पर्यटन विकास एवं प्रभाव.
9. पंवार ललित के. भारतीय रेगिस्तान में पर्यावरणीय पर्यटन.
10. नेगी जगमोहन. पर्यटन एवं यात्रा के सिद्धांत.
11. गुप्ता एम.एल. उदयपुर संभाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन. जोधपुर: राजस्थानी ग्रंथागार 2016.
12. ओझा गौरीशंकर हीराचंद. उदयपुर राज्य का इतिहास. भाग 1. अजमेर: वैदिक यंत्रालय.
13. श्यामलदास कविराज. वीर विनोद. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास 1986.
14. व्यास राजशेखर. मेवाड़ की कला व स्थापत्य.
15. जोशी राधेश्याम. राजस्थान दर्शन. भीलवाड़ा: प्राइम पब्लिकेशन 2000.
16. जुगनू श्रीकृष्ण. मेवाड़ का प्रारंभिक इतिहास. उदयपुर: अंकुर प्रकाशन 2009.
17. नीरज जयसिंह, शर्मा बी.एल. राजस्थान की सांस्कृतिक परंपरा. जयपुर: हिंदी ग्रंथ अकादमी 1989.
18. वशिष्ठ नीलिमा. राजस्थान की मूर्तिकला परंपरा. जोधपुर: राजस्थानी ग्रंथागार 2008.
19. Brown Percy. Indian Architecture.
20. राणावत पुष्पेंद्र सिंह. वाह उदयपुर वाह।

****